CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गोम्मटसार कर्मकांड।

(उत्तरार्द्ध)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर प्रकृतियोंके जघन्य स्थिति बंधका निरूपण	१४०	१७
मूल प्रकृतियोंमें ९१ प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका त्रैराशिक द्वारा विधान	१४३	१
जघन्य स्थितिबंधके विशेषका निरूपण	१४६	१६
स्थितिबन्धके साधनकरनेवाले करण सूत्रका उल्लेख	१४८	१७
चौदह जीव समासोंके जघन्य उत्कृष्ट स्थिति बन्धका विभागपूर्वक निरूपण	१५९	८
शलाकाके ज्ञापक सूत्रका उल्लेख	१७४	६
बादर पर्याप्त आदिकी उत्कृष्ट जघन्य आदि स्थितिका यंत्र	१७६	१
संज्ञी पंचेंद्रियमें पर्याप्त अपर्याप्तके उत्कृष्ट जघन्यरूप बंध भेदोंका विशेष निरूपण	१८०	१३
अजघन्य आदि स्थितिके भेदोंमें सादि आदि भेदोंका संभव निरूपण	१८६	१५
उत्तर प्रकृतियोंका विशेष	१८७	८
आबाधाका लक्षण	१८८	१३
मूल प्रकृतियोंमें आबाधाका उल्लेख	१८९	१०
अंतः कोटि कोटि सागर प्रमाण स्थितिकी आबाधा	१९०	१२
आयु कर्मकी आबाधाका उल्लेख	१९१	१३
उदीरणाकी अपेक्षा आबाधाका उल्लेख	१९३	३
निषेकका स्वरूप	१९५	१
नाना गुणहानि निषेक रचनाका यंत्र	१९७	१
आयुःकर्मनिषेक स्थितिका यंत्र	१९७	१

इति स्थितिबंध प्रकरण।

अथ अनुभागबंधप्रकरण।

तीव्र अनुभाग बंधका विवेचन	१९९	१
जघन्य अनुभागबंधका विवेचन	२०३	४
मूल प्रकृतियोंमें जो उत्कृष्ट आदि भेद हैं उनमें सादि अनादि ध्रुव अध्रुवादि भेद संभवै हैं वा असंभवै इस बातका उल्लेख	२०६	५
ध्रुव प्रकृतियोंमें प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृति और अध्रुव प्रकृतियोंमें जघन्यादि चार, इनमें होनेवाले अनुभाग बंधके साद्यादिक भेदोंका निरूपण	२१०	४
घातिया कर्मोंकी अपेक्षा अनुभागका स्वरूप	२११	५
उत्तर प्रकृतियोंमें मिथ्यात्वका विशेष निरूपण	२१२	७
मिथ्यात्व मिश्र आदि प्रकृतियोंका यंत्र	२१३	१
देशघाती मतिज्ञानावरण आदि १७ प्रकृतियोंमें लता दारु आदि चारो भावोंका उल्लेखक यंत्र	२१४	७
घाती अघाती समस्त प्रकृतियोंमें शैल आदि तीन भावोंका उल्लेखक यंत्र, नो कषायोंका यंत्र	२१४	१०
अघातिकर्मोंकी प्रकृतियोंका उल्लेख	२१५	१४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रशस्त अप्रशस्त अघातिया कर्मोंके स्पर्धकोंके गुड खंड आदि नामांतर	२१९	७
प्रशस्त अप्रशस्त स्पर्धकोंके गुड खंड आदि नामोंका उद्योतक यंत्र	२१६	१४
इत्यनुभागबंध।		
अथ प्रदेशबंध।		
प्रदेश बंधका विवरण	२१७	१०
एक अनेक क्षेत्र संबंधी पुद्गल द्रव्य	२१८	१
एक अनेक वा योग्य अयोग्यकी अपेक्षा पुद्गलोंके भेद	२१९	९
एक क्षेत्र स्थिति अयोग्य आदि पुद्गल भेदोंके प्रमाणका निरूपण	२२०	१०
एक क्षेत्र स्थिति अयोग्य आदि भेदोंमें सादि द्रव्यका प्रमाण	२२१	९
अनादि द्रव्यका प्रमाण	२२३	१
समय प्रबद्धका प्रमाण	२२४	७
आठ मूल प्रकृति रूप परिणत समय प्रबद्धका एक २ मूल प्रकृति अपेक्षा किस प्रकार बटवारा होता है इसबातका निरूपण	२२५	१
वेदनीय कर्ममें समय प्रबद्धके अधिक भाग कहनेका कारण	२२६	३
अन्य कर्मोंके हीनाधिक भाव कहनेका कारण	२२६	१२
विभागका अनुक्रम	२२७	८
मूल प्रकृतियोंमें कहे हुए पिंड द्रव्यका अपनी अपनी उत्तर प्रकृतियोंमें किसप्रकार बटवारा होता है? यह निरूपण	२२९	७
घातिया कर्मोंमें सर्वघाती देश घाती द्रव्यका बटवारा	२३०	६
सर्वघाती द्रव्यके परिमाणके लिये प्रतिभाग-हारका प्रमाण	२३१	१०
द्रव्य स्थिति आदिका यंत्र	२३३	१७
मतिज्ञान श्रुतज्ञान आदिके बटवारेका निदर्शक यंत्र	२३४	१
सर्वघाती देश घाती द्रव्यके विशेष विभागोंके अनुक्रमका निरूपण	२३६	१६
उत्तर प्रकृतियोंके विभागका निरूपण	२३७	८
मोहनीय कर्मके विशेषका कथन	२४२	६
मोहनीय कर्म भेदोंके विभागका कथन	२४२	१८
नो कषायरूप पिंड प्रकृतिनिके द्रव्यका विशेष	२४६	१२
बंधको प्राप्त नोकषायके निरंतर बंध होनेके कालका कथन	२४७	२१
अंतराय कर्मकी पांच प्रकृति और नामके बंध स्थानमें क्रमका उल्लेख	२५०	१०
उत्कृष्ट आदि बंधोंके सादि आदि विशेषोंका मूल प्रकृतियोंमें संयोजन	२५४	५
उत्तर प्रकृतियोंमें सादि अनादिका उल्लेख	२५५	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

इस प्रकरणकी तेतीस प्रकृतियोंका उल्लेख	२५५	११
उत्कृष्ट प्रदेश बंध होनेकी सामग्री	२५६	८
गुणस्थानोंकी अपेक्षा मूल प्रकृतियोंके स्वामित्वका उल्लेख	२५६	१८
गुणस्थानोंकी अपेक्षा उत्तर प्रकृतियोंके स्वामित्वका उल्लेख	२५७	१२
मूल प्रकृतियोंमें प्रदेश बंधका स्वामित्व	२५८	६
उत्तर प्रकृतियोंमें प्रदेश बंधका स्वामित्व	२५९	१५
मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें एक जीव एक कालमें कितनी प्रकृति बांधता है ? इसका निदर्शक यंत्र और उसका भाव	२६३	१
योग स्थानोंके भेद	२६५	३
उपपाद योग स्थाननिका स्वरूप कथन	२६६	१
उपपादके सामान्य आदि भेदोंका निदर्शक यंत्र	२६७	१
परिणाम योगस्थानोंका स्वरूप	२६८	१२
एकांतानुवृद्धि योगस्थानोंका स्वरूप	२६९	१८
योग स्थानोंके अवयवोंका उल्लेख	२७०	१४
अविभागप्रतिच्छेद वर्ग आदिके स्वरूपका कथन	२७१	४
एक स्थानमें यंत्रोंके साथ सर्व स्पर्धकोंके प्रमाणका कथन		
जघन्य योग स्थानोंका स्वरूप	२७६	१६
जघन्य स्पर्धकोंकी वृद्धिका उल्लेख	३१६	१२
छह अंतरोंको छोड जघन्य स्थानसे लगाय उत्कृष्ट पर्यंत जीवोंके योगस्थानोंके होनेसे क्या होता है ? इसबातका उल्लेख	३१७	१२
संज्ञिपर्याप्त जीवोंके सर्वोत्कृष्ट योगस्थानोंका यंत्र	३१९	१
योगस्थानोंमें अल्पबहुत्वका निरूपण	३२३	१७
उपपाद योगस्थान आदि तीनो योगस्थान जबतक एक योगस्थानसे अन्य योगस्थान न हों इसप्रकार निरंतर कितने काल प्रवर्तते हैं इसबातका उल्लेख	३३२	१४
निरंतर योगस्थानोंमें यवाकार रचनाका स्वरूप	३३३	८
यवाकार यंत्र रचना	३३६	१
निरंतर योगस्थानोंका प्रमाण	३३७	७
पर्याप्त त्रसजीवोंके परिणाम योग स्थानोंमें जो जीवोंका प्रमाण है उसकी यवाकार रचनाका स्वरूप	३३८	८
इसी यवाकार रचनामें नीचली गुणहानि शलाकासे ऊपरली गुणहानि शलाकामें कुछ विशेष है इसबातका निरूपण	३३९	३
विशेषका प्रमाण आदि बतलाने वाला यंत्र	३४५	१
योग स्थानोंकी अपेक्षा द्रव्यादिके प्रमाणका विस्तारसे उल्लेख	३४५	११
योगस्थानोंमें समय प्रबद्धकी वृद्धिका प्रमाण	३५९	१
समय प्रबद्धकी वृद्धिके क्रमका उल्लेख	३६०	४
योगस्थानोंके आदि अंत स्थानोंका उल्लेख	३६४	६

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योगस्थान प्रकृति संग्रह आदिमें अल्प बहुत्वका उल्लेख	३६५	१४
चय आदिके प्रमाणका यंत्र	३८६	३
इस प्रकरणमें त्रिकोण यंत्र और उसका अर्थ	३८८	७
इति प्रदेश बंध ।		

अथ उदय प्रकरण ।

गुणस्थानोंकी अपेक्षा प्रकृतियोंके उदयका उल्लेख	३९२	१७
आनुपूर्वीके उदयका कुछ विशेष निरूपण	३९३	११
श्रीयतिवृषभाचार्यके मतानुसार गुणस्थानोंमें व्युच्छित्तिका उल्लेख	३९४	१३
श्रीभूतबलि आचार्यके मतानुसार व्युच्छित्ति-का निरूपण	३९७	७
मिथ्यात्व सासादन मिश्र गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	३९८	४
असंयत गुणस्थानमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	३९८	१६
देशसंयत और प्रमत्त गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	३९९	८
अप्रमत्त अपूर्व करण गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	३९९	१८
अनिवृत्ति करण सूक्ष्मसांपराय और उपशांत कषाय गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४००	६
क्षीण कषाय गुणस्थानमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४०१	१
सयोगकेवलि गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४०१	९
अयोग केवलि गुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४०२	१
पहिले गुणस्थानके समान साता असाताका सयोगकेवली गुणस्थानमें भी उदय होगा इस शंकाका समाधान	४०२	१६
केवलीके साता असाताके उदयमें विशेष कारणका उल्लेख	४०३	१४
गुणस्थानोंमें उदय अनुदय प्रकृतियोंका उल्लेख	४०६	३
उदय प्रकृतियोंकी उदीरणाका उल्लेख	४०७	३
उदय प्रकृतियोंकी उदीरणामें विशेषताका निरूपण	४०७	११
गुणस्थानोंकी अपेक्षा उदीरणाकी व्युच्छित्ति का कथन	४०८	१३
उदीरणा और अनुदीरणा रूप प्रकृतियोंकी संख्याका निरूपण	४११	१
गति आदिके उदयका अनुक्रम	४१२	१
प्रकृतियोंके उदयके द्योतक पांच परिभाषा सूत्रोंका वर्णन	४१२	१०
नरक गतिमें उदय योग्य प्रकृतियोंका कथन	४१५	६
घर्मा नामक प्रथम नरकमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४१५	१३
द्वितीयादि नरकोंमें उदय व्युच्छित्तिका कथन	४१७	११

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिर्यंच गतिमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका उल्लेख	४१८	१२
पंचेंद्रिय तिर्यंच वा पर्याप्त तिर्यंचोंमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४२०	४
मनुष्य गतिमें प्रकृतियोंके उदयका निरूपण	४२३	१३
मिथ्यात्व आदि गुणस्थानोंकी अपेक्षा मनुष्य गतिमें व्युच्छित्तिका विधान	४२४	५
भोग भूमि मनुष्य वा तिर्यंचोंमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४२९	१३
देवगतिमें उदय व्युच्छित्तिका विधान	४३१	१७
अनुदिश आदिकोंमें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का विधान	४३३	९
इंद्रिय मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४३४	१६
काय मार्गणामें स्थावर कायमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४३८	१
त्रसकाय मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का निरूपण	४४०	३
अनुभय वचन और औदारिक काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४४२	१५
औदारिक मिश्रकाययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४४५	१०
वैक्रियिक काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४४७	१७
वैक्रियिक मिश्र योगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४४८	१८
आहार काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का उल्लेख	४४९	२
कार्माण काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का निरूपण	४५१	७
वेद मार्गणामें पुंवेदमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४५४	१
स्त्री वेद और नपुंसकवेदमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४५५	१७
कषायमार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिकाकथन	४५८	१८
ज्ञान मार्गणा संयममार्गणा और दर्शन मार्गणा में उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४६२	६
लेश्या मार्गणामें तीनों अशुभ लेश्याओंमे उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४६६	११
पीत आदि तीनों शुभ लेश्याओंमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४७२	६
भव्य मार्गणा और सम्यक्त्व मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छिरतिका कथन	४७४	१३
संज्ञि मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४८०	७
आहार मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४८१	४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

अथ सत्ताप्रकरण।

मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानोंमें प्रकृतियोंका सत्त्वासत्त्व निरूपण	४८४	२०
अनिवृत्ति करणादिविषैं क्षययोग्य प्रकृतियोंका अनुक्रम	४८६	३
उपशमश्रेणीवालोंके इकईस प्रकृतियोंके उपशमावनेका विधान	४९४	१६
नरक आदि गतियोंमें सत्त्वके स्वामित्वका उल्लेख	४९६	१२
नरक और तिर्यंचगतिमें सत्त्वका कथन	४९७	१६
मनुष्यगतिमें सत्त्वका निरूपण	४९९	६
देवगतिमें प्रकृतियोंके सत्त्वका निरूपण	५०१	१
इंद्रिय और कायमार्गणामें प्रकृतियोंका सत्त्व निरूपण	५०२	७
उद्वेलन प्रकृतियोंके नाम	५०३	१३
कौन जीव किस प्रकृतिकी उद्वेलना करता है इस बातका उल्लेख	५०४	४
योगमर्गणामें प्रकृतियों के सत्त्वका उल्लेख	५०६	४
औदारिक मिश्रयोगमें प्रकृतियोंके सत्त्व का उल्लेख	५०७	८
वेद मार्गणासे आहार मार्गणा पर्यंत प्रकृतियोंके सत्त्वका उल्लेख	५०८	५
ग्रंथकारकी प्रार्थना	५१४	१३

इति बंधोदयसत्त्व निरूपण।

अथ सत्त्वस्थान भंगाधिकार।

नमस्कारपूर्वक भंगविशिष्ट सत्त्वस्थानाधिकारकी प्रतिज्ञा	५१५	२
भंग शब्दका अर्थ	५१६	३
गुणस्थानोंमें स्थान और भंग कहनेका विधान	५१६	१८
आयुके बंध अबंध विशेष विना जो सामान्य वर्णन उसमें कैसे सत्ता पाई जाती है इसबातका उल्लेख	५१७	९
आयुके बंध और अबन्धके भेदोंके साथ जो विशेष वर्णन उसमें स्थान और संख्याका उल्लेख	५१९	७
सत्त्वस्थानोंके भंगोंकी संख्याका उल्लेख	५२०	७
आयुके बंध वा अबंधकी विवक्षासे मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमें अठारह स्थानकी प्रकृतियोंकी संख्याका उल्लेख	५२१	९
अठारह स्थानोंमें घटाई हुई प्रकृतियोंके नाम	५२२	३
पुनरुक्त और समभंगोंके विना अठारह स्थानोंमें प्रतिपादित भंगोंकी संख्याका निरूपण	५३५	४
सासादन और मिश्र गुणस्थानमें स्थान और भंगोंकी संख्याका निरूपण	५३५	१६
असंयत गुणस्थानमें चालीस स्थानोंका		

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकार और उनके एकसौ वीस भंगोंका निरूपण	५३९	१८
बद्धायु और अबद्धायुका यंत्रस्थान	५४१	३
यंत्रकी चारों पंक्तियोंमें तीर्थंकर और आहारक की अपेक्षा विशेषका निरूपण	५४१	९
एक पंक्तिमें जो दो छह आदि प्रकृतियां घटाई उनका निरूपण	५४२	८
असंयत गुणस्थानके चालीस सत्त्व स्थानोंके भंगोंका निरूपण	५४३	७
अपूर्वकरण गुणस्थानके स्थान और भंगोंका निरूपण	५५०	१०
उपशमक अपूर्वकरण उपशमक सूक्ष्मसांपराय और उपशांत मोह गुणस्थानोंमें स्थान और भंगोंका निरूपण	५५३	४
क्षपक अनिवृत्ति करणके छत्तीस स्थानोंका निरूपण	५५४	१
छत्तीस स्थानोंके भंगोंका निरूपण	५५४	१५
सूक्ष्मसांपराय और क्षीण कषायके स्थानोंका निरूपण	५५६	३
सयोगी और अयोगीके स्थानोंका निरूपण	५५६	१७
उपशमश्रेणीवालोंके स्थानोंमें मतभेदका निरूपण और उन स्थानोंके भंग	५५८	१
सत्त्वस्थानके अभ्यासका फल	४६१	२
ग्रंथकारके सिद्धांत चक्रवर्ती होनेमें कारण	५६२	१

इति सत्त्वस्थानभंगप्ररूपण ।

अथ त्रिचूलिका अधिकार ।

नव प्रश्न चूलिकाओंके नाम	५६३	११
पहिले तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां	५६४	१२
दूसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां	५६६	८
तीसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां	५६७	१८
आशीर्वादात्मक मंगलाचरण	५७२	१
पंचभागहार चूलिकाओंके नाम संक्रमणका स्वरूप	५७३	१
किन किन प्रकृतियोंका संक्रमण होता है इस बातका कुछ उल्लेख और पंचप्रकार संक्रमणका स्वरूप	५७४	१२
सर्व संक्रमण प्रकृतियोंमें तिर्यंच गतिमें ही उदय होनेवाली प्रकृतियोंका निरूपण	५७७	५
उद्वेलना रूप प्रकृतियां	५७७	१३
सर्वसंक्रमण प्रकृतियोंका निरूपण	५७९	१
प्रकृतियोंके संक्रमणका नियम	५७९	१०
नियमित प्रकृतियां और उनके संक्रमणों का विधान	५८०	२
विध्यात संक्रमण और अधःप्रवृत्त संक्रमणसंयुक्त प्रकृतियोंका निरूपण	५८४	२
स्थिति अनुभाग और प्रदेशबन्धोंके संक्र-		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मार्गणाओंके गुणस्थानोंकी संख्या	५८५	१०
पंचभागहारोंका अल्पबहुत्व	५८६	४
दशकरणोंके नाम	५९१	३
बंध आदि दश करणोंके अर्थ	५९१	१०
प्रकृति और गुणस्थानोंमें दशकरणोंका निरूपण	५९३	११
इति त्रिचूलिकाधिकार ।		
·अथ स्थानसमुत्कीर्तनाधिकार ।		
नमस्कारपूर्वक स्थान समुत्कीर्तन अधिकारकी प्रतिज्ञा	६००	७
मूल प्रकृतियोंके बंध उदय उदीरणा सत्त्वरूप भेदविशिष्ट प्रकृतिसमुत्कीर्तनका गुणस्थानोंमें निरूपण	६०१	३
उत्तरप्रकृतियोंमें स्थान समुत्कीर्तनका कथन	६०५	१८
कहां कहां ध्रुवबंधी प्रकृति हैं इस बातका निरूपण	६१०	१२
ध्रुवबंधी प्रकृतियोंमें भंगोंका निरूपण	६११	४
भंगोंकी संख्याका निरूपण	६१४	१३
भुजाकारादि भंगोंके लक्षण	६१५	११
सामान्य अवक्तव्यबंधोंकी संख्याका निरूपण	६१६	६
विशेषभुजाकारादि भंगोंकी संख्याका निरूपण	६१९	२
अल्पतरबंधोंका निरूपण	६२१	१६
भंगविवक्षासे विशेष रूपसे अवक्तव्य बंधका निरूपण	६२३	१६
मोहनीयके उदयस्थानोंका निरूपण	६२४	११
मिथ्यादृष्टि और असंयतादि चार गुणस्थानोंमें मोहनीयके उदयस्थान और कूटोंका विशेष	६३२	१
कूटोंमें अपुनरुक्त स्थानोंका निरूपण	६३६	४
अनिवृत्तिकरणमें उदयस्थानोंका कुछ विशेष	६३८	१३
द्वादशपुरुषसंबंधिनी रचना	६४०	१
सर्व उदयस्थान और उनकी प्रकृतियोंकी संख्याका निरूपण	६४२	९
अपुनरुक्त स्थानोंकी संख्या और प्रकृतियोंका उल्लेख	६४३	१७
उपयोगकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें मोहके उदयरूप स्थान और प्रकृतियोंका निरूपण	६४६	१
योगकी अपेक्षा उदयरूपस्थान और प्रकृतियोंका उल्लेख	६५०	१४
मिश्रयोग और केवल पर्याप्त योगयुक्त गुण स्थानोंका विशेष रूपसे निरूपण	६५१	६
जुदे राखेहुए योगोंका विशेष निरूपण	६५४	२०
अपनीतवेदका कुछ विवरण	६५६	१६
संयमकी अपेक्षा उदयरूप स्थान और प्रकृतियोंका निरूपण	६५९	६
गुणस्थानोंमें होने वाली लेश्याओंका कथन	६६०	१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लेश्याकी अपेक्षा मोहके स्थान और प्रकृतियोंकी संख्या	६६१	७
सम्यक्त्वकी अपेक्षा मोहनीयके स्थान और प्रकृतियोंकी संख्या	६६४	४
मोहनीयकर्मके सत्त्वका निरूपण	६६७	३
क्षपक अनिवृत्ति करणके सत्त्वस्थाननिका यंत्र	६७६	१
मोहनीयके बंध स्थानोंमें सत्वस्थानोंका उल्लेख	६७७	१३
नामकर्मके स्थानोंके आश्रय इकतालीस पदोंका उल्लेख	६७९	८
नामकर्मके बंधस्थानोंका उल्लेख	६८१	७
नामकर्मके बंधस्थान किन किन कर्मपदोंके साथ बंधको प्राप्त होते हैं, इस बातका निरूपण	६८१	१७
आतप और उद्योत नामक प्रशस्त प्रकृतियां किस कर्मपदके साथ बंधती हैं ? इस बातका उल्लेख	६८३	१
नामकर्मके तेईस आदि बंध स्थानोंमें प्रकृतियोंके जाननेके लिये पाठका अनुक्रम	६८४	१५
तेईसके बंधस्थानमें यथायोग्य प्रकृति मिलाने पर स्थान और प्रकृतियोंकी संख्याका उल्लेख	६८६	१५
नामकर्मके बंधस्थानोंका यंत्र	६९१	१
नामकर्मके बंध स्थानोंके भंग	६९१	३
तिर्यंच पंचेंद्री पर्याप्ति युक्त संज्ञीके और मनुष्य गति पर्याप्ति युक्त मनुष्यके कर्मपदोंमें उनतीस और तीसके स्थानोंमें गुणस्थानोंकी अपेक्षा भंगोंका विभाग	६९१	१७
नरक आदि गतियोंमें मरण उत्पत्तिका विधान	६९७	८
गतिमार्गणामें नामकर्मके बंध स्थानोंका उल्लेख	७०२	१
इंद्रिय काय योग मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका निरूपण	७०३	१४
योग वेद और कषाय मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका उल्लेख	७०७	३
अनंतानुबंधी आदि चारो कषायोंके भावोंका निरूपण यंत्र	७०९	३
ज्ञान संयम और दर्शन मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका उल्लेख	७१३	१०
लेश्या मार्गणामें नामकर्मके बंधस्थानोंका कथन	७२५	५
लेश्याओंमें शिला आदि भेदोंका निदर्शक यंत्र	७२७	१
नरक आदिमें उपजने योग्य जीवोंका कथन	७३०	१४
लेश्याओंके संक्रमणका निरूपण	७३४	८
प्रासंगिक गाथाओंका निरूपण	७३९	६
भव्य सम्यक्त्व संज्ञी और आहार मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका निरूपण और सम्यक्त्व का विशेष	७४१	१५
अपुनरुक्त भंगोंका निरूपण	७५९	१२
मिथ्यादृष्ट्यादिके बंधोंमें भुजाकारादिका विधान और उनमें अपने २ भंगों सहित स्वस्थान		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

आदि संज्ञाओंका निरूपण	७५९	५
स्वस्थान आदिका लक्षण	७५९	१४
अपने अपने २ गुणस्थानोंके छूट जाने पर कौन २ गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं इस बातका निरूपण	७६०	७
उपशम श्रेणीमें कहां २ मरण होता है इसबातका उल्लेख	७६२	९
कृतकृत्य वेदककालमें उपजनेका विधान	७६४	१
नामकर्मके बंधस्थानोंका निरूपण	७६४	१०
भुजाकारादिके अविरुद्ध बंधस्थानोंकी उत्पत्तिका भंग पूर्वक क्रम निरूपण	७६५	११
नाम कर्मके स्थाननिका भुजाकार बंध स्थावनेकौं त्रैराशिक यंत्र	७६९	१२
भुजाकार बंधका कुछ निरूपण	७७०	१
अल्पतर भंगोंका निरूपण	७७०	१
अल्पतर भंगोंका यंत्र	७७५	१
लघुकरणकी अपेक्षा अल्पतर भंगोंका कथन	७७७	११
असंयतमें भुजाकार यंत्रोंका विधान	७७८	१४
असंयतमें अल्पतर भंगोंका निरूपण	७८०	११
अप्रमत्त आदि गुणस्थानोंमें भुजाकार बंधोंका निरूपण	७८१	१०
अप्रमत्तगुणस्थानमें अल्पतर भंगोंका कथन	७८४	३
नामकर्मके समस्त भुजाकारोंका निरूपण	७८५	१२
सर्व नामबंधस्थानोंका यंत्र	७८६	९
भुजाकारादिभंगोंकी प्राप्तिका साधारण उपाय	७८७	१
अवक्तव्यभंगोंका निरूपण	७८८	७
नामकर्मके उदयस्थानसंबंधी पांच कालोंका निरूपण	७८९	४
पांचोंकालोंका जीवसमासोंमें निरूपण	७९०	११
नाम कर्मके उदय स्थानोंकी उत्पत्तिका क्रम	७९२	६
नाना जीवोंकी अपेक्षा नाम कर्मके उदयस्थानोंका निरूपण	७९४	१०
नामकर्मके उदय स्थानोंका यंत्र	८०१	५
नाम कर्मके उदय स्थान जैसे संभवैं तिनका यंत्र	८०२	५
अयोगी गुणस्थानके दोनों स्थानोंका स्वरूप	८०२	१३
नाम कर्मके उदय स्थानोंमें भंगोंका निरूपण		
नारकादि इकतालीस जीव पदोंमें संभवते भंगोंका निरूपण	८०४	६
पुनरुक्त भंगोंका निरूपण	८११	६
गुणस्थानोंकी अपेक्षा भंगोंका निरूपण	८११	१५
नामकर्मके सत्वस्थानोंका उल्लेख	८१६	४
सत्वस्थानोंका विधान	८१६	१२
नाम कर्मके सत्वस्थानोंका यंत्र	८१७	६
नामकर्मके दशवें और नौवें स्थानोंमें प्रकृतियोंका निरूपण	८१८	४
उद्वेलनाके स्थानोंका विशेष	८१८	१०

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमें होनेवाली उद्वेलनाका अनुक्रम	८१९	१
उद्वेलनाके अवसरका काल	८१६	१०
उद्वेलनाके कालोंका लक्षण	८२०	१
तेज और वात कायिकोंमें उद्वेलन प्रकृतियोंका निरूपण	८२०	११
सम्यक्त्व आदिकी विराधना कितनी बार होती है इस बातका निरूपण	८२२	७
चारो गतियोंकी विवक्षासे गुणस्थानोंमें नाम कर्मका सत्त्वोल्लेख	८२४	५
इकतालीस जीवपदोंमें सत्त्वस्थानोंका कथन	८२५	१८
मूल प्रकृतियोंमें बंध उदय सत्त्वरूप त्रिसंयोगका नियम निरूपण	८२८	५
उत्तर प्रकृतियोंमें बंध उदय सत्त्वका कथन	८३०	१
गोत्रकर्मका बंध उदय सत्त्व निरूपण	८३३	१०
आयु कर्ममें बंधका निरूपण	८३५	१७
आयु कर्मके उदय और सत्त्वका निरूपण	८३६	१५
आयु कर्मके अपुनरुक्त भंगोंका उल्लेख	८३९	४
गुणस्थानोंमें आयुकर्मके भंगोंका निरूपण	८४२	१५
वेदनीय गोत्र आयु इन तीनों कर्मोंके मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें कितने कितने भंग होते हैं ? इसबातका निरूपण	८४३	७
वेदनीय गोत्र आयुके मूलभंगोंकी संख्याका निरूपण	८४३	१६
मोहनीयके त्रिसंयोगरूप भंगोंका उल्लेख	८४४	६
गुणस्थानोंकी अपेक्षा मोहनीयके स्थानोंकी संख्या	८४४	१३
मोहनीयके बंध उदय सत्त्व स्थानके त्रिसंगोंमें विशेष	८४८	९
उदयस्थान तो अधिकरण और बंध सत्त्व आधेय इसरूपसे भंगोंका निरूपण	८५१	१६
सत्त्व अधिकरण और बंध उदय आधेयरूप भंगोंका निरूपण	८५४	४
मोहनीयके बंध उदय सत्त्वोंमें दो आधार और एक आधेय इसरूपसे तीन भंगोंका कथन	८५६	१८
तीनोंमें पहले भेदका निरूपण	८५७	१३
दूसरे भेदका निरूपण	८६४	७
तीसरे भेदका निरूपण	८६७	१७
नाम कर्मके स्थानोंका गुणस्थानोंमें त्रिसंयोगी निरूपण	८७२	६
जीवस्थानोंमें नामकर्मके स्थानोंका त्रिसंयोग निरूपण	८७८	१
चौदह मार्गणाओंमें त्रिसंयोगका निरूपण	८८०	१४
त्रिसंयोगमें बंध आधार उदय सत्त्व आधेयका निरूपण	८९५	११
त्रिसंयोगमें उदय आधार बंध सत्त्व आधेय		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रूप दूसरे भेदका निरूपण	९०१	११
सत्त्वस्थान आधार बंध उदय आधेयरूप तीसरे भेदका निरूपण	९२४	१४
बंध उदय सत्त्वोंमें विशेष	९३६	५

इति त्रिचूलिकाधिकार।

अथ आस्रवाधिकार।

नमस्कारपूर्वक अधिकारकी प्रतिज्ञा	९४९	१४
आस्रवके मूलकारणोंका उल्लेख	९५०	४
गुणस्थानोंकी अपेक्षा मूल कारणोंका विवरण	९५१	१
आस्रवके कारणोंकी व्युच्छित्ति और अनुदयका वर्णन	९५४	१
आस्रवके कारणोंके भेद	९५६	१३
स्थानरूप प्रकार (भेद) का निरूपण	९५७	३
स्थान प्रकारोंके जाननेकेलिये कूट प्रकारोंका निरूपण	९६०	३
अनंतानुबंधीसहित मिथ्यादृष्टिके कूटोंका यंत्र	९६६	५
कूटोच्चारणका प्रकार	९६८	८
भंगानयन प्रकार	९७२	१८
द्विसंयोगी आदि भंगोंके साधनेका उपाय	९७६	१७
ज्ञानावरणादि कर्मोंके बंधमें कारण जीवोंके परिणामोंका उल्लेख	९७९	४

इति आस्रवाधिकार।

अथ भावचूलिकाधिकार।

नमस्कार पूर्वक भावचूलिका अधिकारकी प्रतिज्ञा	९८६	७
जीवोंके औपशमिक आदि भावोंका उल्लेख और उनके लक्षण	९८७	५
औपशमिक और क्षायिक भावोंके भेद	९८८	१५
क्षायोपशमिक भावोंके भेद	९८९	६
औदयिक भावोंके भेद	९८९	१६
पारिणामिक भावके भेद	९९०	९
भावोंका गुणस्थानोंकी अपेक्षा निरूपण	९९२	३
मूल भावोंकी संख्याका निरूपण	९९५	७
गुणस्थानोंकी अपेक्षा उत्तरभावोंका निरूपण	९९६	५
भावोंमें गुण्य गुणकारका दिग्दर्शन	१००४	७
पद भंगोंका निरूपण	१०१८	८
सर्व पदोंकी अपेक्षा मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानोंमें पद भंगोंका निरूपण	१०३०	८
भंगोंके मिलावनेका निरूपक सूत्र	१०३७	१
मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें प्रत्येक पद पिंडपदकी रचना	१०४६	६
गुणस्थानोंकी अपेक्षा प्रत्येकपद आदिका निरूपण	१०४७	२
एकांत मतोंके भेदोंका निरूपण	१०६२	११
क्रियावादियोंके मूल भंगोंका उल्लेख	१०६३	१
कालवादका अर्थ	१०६४	१८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ईश्वरवादका अर्थ	१०६५	९
आत्मवादका अर्थ	,,	१७
नियतिवादका अर्थ	१०६६	८
स्वभाववादका अर्थ	,,	१५
अक्रिया वादियोंके मूलभंग	१०६७	६
अज्ञानवादके भेद	१०६९	१
वैनयिक वादियोंके मूलभंग	१०७०	८
पौरुष वादियोंका उल्लेख	१०७१	८
दैव वादियोंका उल्लेख	,,	१६
संयोग वादियोंका निरूपण	१०७२	५
लोक वादियोंका उल्लेख	,,	१५
मिथ्यामतियोंके वचन क्यों असत्य हैं ? इस बातका उल्लेख	१०७३	१६

इति भावचूलिकाधिकार ।

अथ त्रिकरण चूलिका ।

नमस्कारात्मक मंगल	१०७५	४
तीन करणोंमें अधः प्रवृत्त करणके स्वामी जीवका उल्लेख	,,	१६
अधः प्रवृत्त करणका लक्षण	१०७६	९
अधः करणके चय प्रचयधन आदिका निरूपण	१०७७	१०
अनुकृष्टि प्रथमखंडका प्रमाण	१०८२	४
अंक संदृष्टि अपेक्षा अधःकरण रचना	१०९०	१
अपूर्वकरण कालका उल्लेख	१०९३	५
अनिवृत्ति करणका निरूपण	१०९८	१

इति त्रिकरणचूलिका ।

अथ कर्मस्थिति रचना ।

नमस्कार पूर्वक कर्मस्थिति रचनाधिकार प्रतिज्ञा	१०९९	
आबाधाकालका कुछ स्वरूप निरूपण	२०००	३
आयुभिन्न सात मूल प्रकृतियोंकी आबाधा और विशेष	,,	११
आयु कर्मकी आबाधाका उल्लेख	२००२	७
आयु विना सात कर्मोंकी उदीरणाकी अपेक्षा आबाधा निषेक आदिका उल्लेख	२००३	५
गुणहानि आयामका प्रमाण	२०१०	८
दो गुणहानिका प्रमाण और उसका प्रयोजन	२०११	६
अंत गुणहानि आदिके द्रव्यका उल्लेख	२०११	१८
सात कर्मोंकी स्थिति निषेक रचना	२०१८	१
अंक संदृष्टि अपेक्षा निषेकोंका यंत्र	२०१९	१३
अन्योन्याभ्यस्त राशिका उल्लेख	२०३७	१६
एक गुणहानि आदिके जाननेका प्रयोजन	२०३९	१४
स्थितिकी अधिकताका उल्लेख	२०४०	८
समय प्रबद्ध प्रमाण द्रव्य वर्तमान समयमें बंधता है वा उदय होता है इस बातका उल्लेख	२०४१	११
बंध उदय सत्वमें कुछ विशेष उल्लेख	२०४३	६
त्रिकोण यंत्र	२०४३ (क)	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रिकोण यंत्रका अर्थ	२०४४	१
त्रिकोण यंत्रके जोड देनेका विधान	२०४५	५
आयु बिना सात कर्मोंकी स्थितिके भेद	२०५३	१८
सांतर स्थितिके भेदोंका उल्लेख	२०५४	१७
मूल प्रकृतियोंके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानोंका निरूपण	२०५६	११
जघन्य चयके महत्त्वपनाका उल्लेख	२०६३	१२
आयु कर्मके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानोंमें विशेष	२०६४	४
अनुकृष्टि विधानका उल्लेख	२०७४	१५
स्थितिबंधाध्यवसाय रचना	२०८४	१
जघन्य संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थान	२०८८	१८
जघन्य संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थानोंका यंत्र	२०९१ (क)	१
ग्रंथकर्ताका संदेश	२०९२	१२
संस्कृतटीकाकार केशववर्णीका संदेश	२०९६	१७

इति कर्मकांड।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर्मकांडके अधिकारोंकी सूची।

प्रकृति समुत्कीर्तनाधिकार	१	१	आस्रवाधिकार	९४९	९
बंधोदय सत्त्वाधिकार	७५	१	भावचूलिकाधिकार	९८६	१
सत्त्वस्थानभंगाधिकार	५१५	८	त्रिकरणचूलिकाधिकार	१०७५	१
त्रिचूलिकाधिकार	५६३	१	कर्मस्थितिरचनासद्भावाधिकार	१०११	७

इति कर्मकांड।

शुद्ध्यशुद्धि पत्र।

कर्मकांड।

अशुद्धि	शुद्धि	पत्र संख्या	पंक्ति संख्या
गामं ठवणा दवियं	णामं ठवणा दवियं	५२ (कर्म)	१३
णोआगभावो पुण	णोआगमभावो पुण	७२	३
७४-७६-७२-७५	७०-७१-७२ ७३	७० से	
७३-७४-७५-७६	७४-७५-७६-७७	७७ तक	३
तत्थासत्थ एदि हु	तत्थासत्था	६९२	१
पुनरुक्त	अपुनरुक्त	७५७	१०
१०५ से १३०	९०५-से९३०	९०५	३
इट्ठपदे रुऊणो	इट्ठपदे रूऊणे	१०३७	१
२००० से २१००		११०० से १२००	२०००

इति शुद्ध्यशुद्धि सूची।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थसंदृष्टि अधिकारकी

विषय सूची।

(कर्मकांड)

कर्म प्रकृति समुत्कीर्तन अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	१९५	४
बंध उदय सत्ताधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	१९७	१०
विशेषसत्ता अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२६६	८
त्रिचूलिका अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	,,	१६
स्थानसमुत्कीर्तन अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२६८	१०
आस्रव अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२७१	८
त्रिकरण चूलिकाधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२७५	३

इति।

कर्मकांडके अर्थसंदृष्टि अधिकारके

फुटकर यंत्रोंकी सूची।

चालीसियादिके त्रैराशिक दिखावनेकी रचनाका यंत्र	२०७
द्वींद्रियादिकी कर्मस्थितिका यंत्र	२०६
अपर्याप्तका अपनी स्थितिके प्रथम समयमें उत्कृष्ट मध्य जघन्यरूप अपनी स्थिति पर्यंत रचनाका यंत्र	२२१
८४ स्थानोंमें योगस्थानोंका यंत्र	२२९
काल यवमध्य रचना का यंत्र	२४२
सर्वगुण हानियोंके द्रव्यका यंत्र	२५०
गुणहानियोंकी रचनाका यंत्र	३०२ (क)
प्रथमादि अंतपर्यंत निषेकोंकी रचनाका यंत्र	३०७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गांधी-हरीभाईदेवकरण जैनग्रंथमाला ।

४

आचार्यप्रवर श्रीमन्नेमिचंद्रसैद्धांतिकचक्रवर्तिविरचित-

गोम्मटसार ।

(कर्मकांड पूर्वार्द्ध)

श्रीमत्केशववर्णिकृत जीवतत्त्वप्रदीपिका नामकी संस्कृत टीका
तथा स्वर्गीय पंडित टोडरमलजी कृत सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामकी हिंदीभाषाटीकासहित ।

जिसको
भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्थाके महामंत्री पन्नालाल बाकलीवालने
संस्थाके जैनसिद्धांतप्रकाशक (पवित्र) प्रेसमें छपाकर
प्रकाशित किया ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संपादक—

पं० गजाधरलाल जैन न्यायतीर्थ,

और

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ।

मुद्रक—

श्रीलाल जैन काव्यतीर्थ,

जैनसिद्धांतप्रकाशक (पवित्र) प्रेस,

नं० ८ महेंद्रबोस लेन, श्यामबाजार कलकत्ता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर्मकांड प्रकरण।

मंगलाचरण	२	१
प्रकृति शब्दका अर्थ निरूपण	२	१७
संसारी जीवोंके कर्म नोकर्मका ग्रहण कैसे होता है ? इसबातका निरूपण	३	१८
प्रतिसमय कितने २ परमाणुओंको बांधता है इसबातका निरूपण	४	१४
प्रतिसमय होनेवाले उदय और सत्वके परिमाणका निरूपण	५	७
कर्मके सामान्य और विशेष भेदोंका निरूपण	६	४
कर्मके आठ भेद,और उनमें घातिया और अघातिया भेदोंका उल्लेख	७	६
केवलज्ञानादि गुणोंका उल्लेख	८	४
आयु कर्मके कार्यका निरूपण	८	१३
नाम कर्मके कार्यका निरूपण	९	५
गोत्र कर्मके कार्यका निरूपण	९	१५
वेदनीय कर्मके कार्यका निरूपण	१०	६
केवल ज्ञानादि गुणोंके आवरणका अनुक्रम	११	५
अंतराय कर्मका कुछ विशेष निरूपण	११	१६
नाम कर्मसे पहिले गोत्रकर्मके कहनेमें हेतु	१२	७
मोहनीय कर्मसे पहिले वेदनीय कर्मके कहनेमें हेतु	१२	१६
ज्ञानावरणादि कर्मोंका अनुक्रमसे पाठ और उनकी व्युत्पत्ति	१३	८
ज्ञानावरणादिके दृष्टांतोंका उल्लेख	१४	१६
उत्तर प्रकृतियोंकी संख्यामात्र	१५	८
स्त्यान गृद्धि, निद्रा और निद्रा निद्राका कार्य	१६	४
प्रचलाप्रचला दर्शनावरणका कार्य	१६	१३
प्रचलादर्शनावरणका कार्य	१७	३
मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व और सम्यक्त्व ए तीन भेद कैसे होगये ? इस बातका निरूपण	१८	१
मिथ्यात्व आदि तीनोंके स्वरूपका निदर्शक यंत्र	१९	१
औदारिक पांच शरीरोंके भागोंका निरूपण	२१	१७
आठ अंग और उपांगोंका उल्लेख	२३	१२
स्फाटिका आदि संहननोंके धारक जीव ऊपर स्वर्ग आदिमें कहां २ उत्पन्न होते हैं इस बातका		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निरूपण	२४	४
स्फाटिका आदि संहननोंके धारक कौन २ नरकमें उत्पन्न होते हैं इसवातका निरूपण	२५	४
स्त्रियोंमें संहननके नियमका विधान	२५	१३
उद्योत नामक नामकर्मका विशेष निरूपण	२६	१६
उत्तर प्रकृतियोंका व्युत्पत्ति पूर्वक स्पष्ट अर्थ	२७	६
नाम कर्मकी उत्तर प्रकृतियोंमें अभेद विवक्षासे गर्भित प्रकृतियोंका निरूपण	३९	१७
बंध प्रकृतियोंका उल्लेख	४०	१३
उदय प्रकृतियोंका उल्लेख	४१	५
बंध वा उदयरूप प्रकृतियोंकी भेद विवक्षा वा अभेद विवक्षा करि संख्याका निरूपण	४१	१४
सत्व प्रकृतियोंका उल्लेख	४२	६
सर्वघाती प्रकृतियोंका उल्लेख	४२	१५
देशघाती प्रकृतियोंका उल्लेख	४३	९
अघाती कर्मोंमें प्रशस्त प्रकृतियोंका उल्लेख	४४	३
अप्रशस्त प्रकृतियोंका उल्लेख	४५	४
कषायोंका कार्य निरूपण	४६	६
संज्वलनादि चार कषायोंका वासना काल	४७	६
पुद्गलविपाकी प्रकृतियोंका उल्लेख	४७	१८
भवविपाकी क्षेत्र विपाकी जीव विपाकी प्रकृतियोंका उल्लेख	४८	१२
जीव विपाकी प्रकृति कौन २ हैं इसवातका कथन	४९	४
नामकर्मकी जीवविपाकी २७ प्रकृतियोंका उल्लेख	४९	१२
नाम कर्मकी जीव विपाकी २७ प्रकृतियोंका अनुक्रमसे उल्लेख	५०	१
तीन प्रकारके श्रोताओंके नाम और लक्षण तथा नामादि निक्षेपोंका कुछ स्वरूप	५१	१
कर्म सामान्यको द्रव्यादि चारो निक्षेप स्वरूप कहकर नामनिक्षेप रूप कर्मका निरूपण	५२	१३
स्थापना निक्षेपरूप कर्मका निरूपण	५३	१
आगम द्रव्यरूप कर्मका निरूपण	५३	९
नो आगम द्रव्य निक्षेपरूप कर्मका कथन	५४	१
भूत शरीरका विशेष निरूपण	५४	१४
कदली घातका लक्षण	५५	६
च्यावित और त्यक्तका स्वरूप	५५	१३
त्यक्त शरीरके भक्त प्रतिज्ञा आदि भेदोंका उल्लेख	५६	५
भक्त प्रतिज्ञाके कालका निरूपण	५६	१४
इंगिनी और प्रायोपगमन मरणके लक्षण	५७	५
नो आगम द्रव्यके दूसरे भेद भाविका स्वरूप	५७	१७
कर्म तद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्य कर्मका स्वरूप निरूपण	५८	६
नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्यका स्वरूप कथन	५८	१८
आगम भाव कर्मका स्वरूप कथन	५९	८
नो आगम भावकर्मका स्वरूप कथन	५९	१६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मूल और उत्तर प्रकृतियोंमें नामादि निक्षेपोंका उल्लेख	६०	८
मूल और उत्तर प्रकृतियोंमें होनेवाले नामादि निक्षेपोंका कुछ विशेष	६०	१८
मूल प्रकृतियोंमें नोकर्मकी योजना	६१	१७
उत्तरप्रकृतियोंमें मतिज्ञान श्रुतज्ञानके नोकर्मोंका उल्लेख	६२	१९
अवधिज्ञान और मनःपर्यय ज्ञानके नो कर्मोंका उल्लेख	६३	८
पांच निद्रा और चक्षु अचक्षुके नोकर्मोंका उल्लेख		
अवधि दर्शनावरण और केवल दर्शनावरणके नोकर्मोंका उल्लेख	६४	१०
सम्यक्त्व मिथ्यात्व और सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतियोंके नोकर्म	६६	१
कषायोंके नोकर्मोंका उल्लेख	,,	१३
स्त्रीवेद आदि नव नोकषायोंके नोकर्मोंका उल्लेख	६७	४
नरकायु आदि चारोके और गति सामान्य कर्मके नोकर्मोंका उल्लेख	६८	४
नरक आदि चारो गतियोंके और जाति सामान्यके नोकर्म	,,	१३
एकेंद्रिय आदि पांचों जातियोंके और शरीर सामान्यके नोकर्म	६९	४
औदारिक आदि पांचों शरीरोंके नोकर्म	,,	११
बंधन आदि नाम कर्मोंके नो कर्मोंका उल्लेख	७४	१
उच्चगोत्र नीच गोत्र और अंतराय कर्मके दानादिक चारि भेदोंका नोकर्म	७६	३
वीर्य नाम कर्मके नोकर्मोंका उल्लेख	,,	१२
नो आगम भाव कर्मका स्वरूप	७२	३

इति प्रकृतिसमुत्कीर्तनाधिकारः ।

अथ बंधोदयसत्त्वाधिकारः ।

नमस्कार पूर्वक बंधोदय सत्त्वाधिकारकी प्रतिज्ञा	७५	४
स्तवका स्वरूप	७३	३
बंध सामान्यके भेद और प्रकृति आदि प्रत्येक बंधके उत्कृष्ट आदि भेद	७३	१५
उत्कृष्ट आदिके सादि अनादि भेद	७४	११
बंधोंका विशेष	७५	८
गुणस्थानोंमें प्रकृति बंधके नियमका निरूपण	७७	८
तीर्थंकर प्रकृतिके बंधका विशेष नियम	७८	३
गुणस्थानोंमें व्युच्छित्तिका उल्लेख	७९	१५
व्युच्छित्तिके कथनमें उत्पादानुच्छेद आदि नयोंका निरूपण	८०	२०
मिथ्यात्व गुणस्थानके अंत समयमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियोंका उल्लेख	८१	१९
सासादन और मिश्र गुणस्थानकी व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	८२	१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

असंयत और देशसंयत गुणस्थानकी व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	८३	७
प्रमत्त और स्वस्थान अप्रमत्त गुणस्थानोंमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	८३	१८
अपूर्वकरणके सातभागोंके तीन भागोंमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	८४	१२
अनिवृत्तिकरणके पांच भागोंमें और सूक्ष्मसांपरायमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	८५	१४
उपशांत आदि गुणस्थानोंमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियोंका उल्लेख	८६	७
गुणस्थानोंकी अपेक्षा प्रकृतियोंके बंधका उल्लेख	८६	१८
गुणस्थानोंकी अपेक्षा प्रकृतियोंके अबंधका उल्लेख	८८	३
खुलासारूपसे गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति बंध अबंधका उल्लेख	८९	७
नरक गतिमें व्युच्छित्ति बंध और अबंध रूप प्रकृतियोंका उल्लेख	८९	११
तिर्यंच गतिमें व्युच्छित्ति बंध और अबंध रूप प्रकृतियोंका निरूपण	९२	१८
मनुष्य गतिमें व्युच्छित्ति बंध अबंध रूप प्रकृतियोंका उल्लेख	९५	१३
देव गतिमें व्युच्छित्ति बंध और अबंध रूप प्रकृतियोंका निरूपण	९७	१८
इंद्रिय मार्गणासे लेकर आहार मार्गणा पर्यंत मार्गणाओंमें व्युच्छित्ति बंध और अबन्धका निरूपण	१०१	१८
मूल प्रकृतियोंमें सादि अनादि आदि बंध विशेषोंका निरूपण	१२३	१६
सादि अनादि आदि बंधोंके लक्षण	१२४	११
उत्तर प्रकृतियोंमें सादि अनादि आदि बंधोंका संभव निरूपण	१२५	१७
ध्रुव आदि प्रकृतियोंमें सप्रतिपक्ष अप्रतिपक्षका निरूपण	१२६	१९
अध्रुव प्रकृतियोंमें सादि और अध्रुव ही बंध क्यों होते हैं ? इस विषयमें हेतु	१२८	३
इति प्रकृतिबंधः ।		
अथ स्थितिबंधः ।		
ज्ञानावरणादि मूल प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका निरूपण	१२८	१५
उत्तर प्रकृतियोंकी उत्कृष्ट स्थितिका निरूपण	१२९	६
उत्कृष्ट स्थितिबंध कौन २ के होता है इस बातका एवं कुछ विशेष निरूपण	१३३	४
उत्कृष्ट स्थितिबन्ध बांधनेवाले मिथ्यादृष्टियोंका निरूपण	१३४	१४
ज्ञानावरणादि मूल प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका निरूपण	१४०	८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तर प्रकृतियोंके जघन्य स्थिति बंधका निरूपण	१४०	१७
मूल प्रकृतियोंमें ९१ प्रकृतियोंकी जघन्य स्थितिका त्रैराशिक द्वारा विधान	१४३	१
जघन्य स्थितिबंधके विशेषका निरूपण	१४६	१६
स्थितिबन्धके साधनकरनेवाले करण सूत्रका उल्लेख	१४८	१७
चौदह जीव समासोंके जघन्य उत्कृष्ट स्थिति बन्धका विभागपूर्वक निरूपण	१५६	८
शलाकाके ज्ञापक सूत्रका उल्लेख	१७४	६
बादर पर्याप्त आदिकी उत्कृष्ट जघन्य आदि स्थितिका यंत्र	१७६	१
संज्ञी पंचेंद्रियमें पर्याप्त अपर्याप्तके उत्कृष्ट जघन्यरूप बंध भेदोंका विशेष निरूपण	१८०	१३
अजघन्य आदि स्थितिके भेदोंमें सादि आदि भेदोंका संभव निरूपण	१८६	१५
उत्तर प्रकृतियोंका विशेष	१८७	८
आबाधाका लक्षण	१८८	१३
मूल प्रकृतियोंमें आबाधाका उल्लेख	१८९	१०
अंतः कोटि कोटि सागर प्रमाण स्थितिकी आबाधा	१९०	१२
आयु कर्मकी आबाधाका उल्लेख	१९१	१३
उदीरणाकी अपेक्षा आबाधाका उल्लेख	१९३	३
निषेकका स्वरूप	१९५	१
नाना गुणहानि निषेक रचनाका यंत्र	१९७	१
आयुःकर्मनिषेक स्थितिका यंत्र	१९७	१
इति स्थितिबंध प्रकरण ।		
अथ अनुभागबंधप्रकरण ।		
तीव्र अनुभाग बंधका विवेचन	१९९	१
जघन्य अनुभागबंधका विवेचन	२०३	४
मूल प्रकृतियोंमें जो उत्कृष्ट आदि भेद हैं उनमें सादि अनादि ध्रुव अध्रुवादि भेद संभवै हैं वा असंभवै इस बातका उल्लेख	२०६	५
ध्रुव प्रकृतियोंमें प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृति और अध्रुव प्रकृतियोंमें जघन्यादि चार, इनमें होनेवाले अनुभाग बंधके साद्यादिक भेदोंका निरूपण	२१०	४
घातिया कर्मोंकी अपेक्षा अनुभागका स्वरूप	२११	५
उत्तर प्रकृतियोंमें मिथ्यात्वका विशेष निरूपण	२१२	७
मिथ्यात्व मिश्र आदि प्रकृतियोंका यंत्र	२१३	१
देशघाती मतिज्ञानावरण आदि १७ प्रकृतियोंमें लता दारु आदि चारो भावोंका उल्लेखक यंत्र	२१४	७
घाती अघाती समस्त प्रकृतियोंमें शैल आदि तीन भावोंका उल्लेखक यंत्र, नो कषायोंका यंत्र	२१४	१०
अघातिकर्मोंकी प्रकृतियोंका उल्लेख	२१५	१४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रशस्त अप्रशस्त अघातिया कर्मोंके स्पर्धकोंके गुड खंड आदि नामांतर	२१६	७
प्रशस्त अप्रशस्त स्पर्धकोंके गुड खंड आदि नामोंका उद्योतक यंत्र	२१६	१४
इत्यनुभागबंध ।		
अथ प्रदेशबंध ।		
प्रदेश बंधका विवरण	२१७	१०
एक अनेक क्षेत्र संबंधी पुद्गल द्रव्य	२१८	१
एक अनेक वा योग्य अयोग्यकी अपेक्षा पुद्गलोंके भेद	२१९	९
एक क्षेत्र स्थिति अयोग्य आदि पुद्गल भेदोंके प्रमाणका निरूपण	२२०	१०
एक क्षेत्र स्थिति अयोग्य आदि भेदोंमें सादि द्रव्यका प्रमाण	२२१	९
अनादि द्रव्यका प्रमाण	२२३	१
समय प्रबद्धका प्रमाण	२२४	७
आठ मूल प्रकृति रूप परिणत समय प्रबद्धका एक २ मूल प्रकृति अपेक्षा किस प्रकार बटवारा होता है इसबातका निरूपण	२२५	१
वेदनीय कर्ममें समय प्रबद्धके अधिक भाग कहनेका कारण	२२६	३
अन्य कर्मोंके हीनाधिक भाव कहनेका कारण	२२६	१२
विभागका अनुक्रम	२२७	८
मूल प्रकृतियोंमें कहे हुए पिंड द्रव्यका अपनी अपनी उत्तर प्रकृतियोंमें किसप्रकार बटवारा होता है ? यह निरूपण	२२९	७
घातिया कर्मोंमें सर्वघाती देश घाती द्रव्यका बटवारा	२३०	६
सर्वघाती द्रव्यके परिमाणके लिये प्रतिभागहारका प्रमाण	२३२	१०
द्रव्य स्थिति आदिका यंत्र	२३३	१७
मतिज्ञान श्रुतज्ञान आदिके बटवारेका निदर्शक यंत्र	२३४	१
सर्वघाती देश घाती द्रव्यके विशेष विभागोंके अनुक्रमका निरूपण	२३६	१६
उत्तर प्रकृतियोंके विभागका निरूपण	२३७	८
मोहनीय कर्मके विशेषका कथन	२४२	६
मोहनीय कर्म भेदोंके विभागका कथन	२४२	१८
नो कषायरूप पिंड प्रकृतिनिके द्रव्यका विशेष	२४६	१२
बंधको प्राप्त नोकषायके निरंतर बंध होनेके कालका कथन	२४७	२१
अंतराय कर्मकी पांच प्रकृति और नामके बंध स्थानमें क्रमका उल्लेख	२५०	१०
उत्कृष्ट आदि बंधोंके सादि आदि विशेषोंका मूल प्रकृतियोंमें संयोजन	२५४	५
उत्तर प्रकृतियोंमें सादि अनादिका उल्लेख	२५५	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

इस प्रकरणकी तेतीस प्रकृतियोंका उल्लेख	२५५	११
उत्कृष्ट प्रदेश बंध होनेकी सामग्री	२५६	८
गुणस्थानोंकी अपेक्षा मूल प्रकृतियोंके स्वामित्वका उल्लेख	२५६	१८
गुणस्थानोंकी अपेक्षा उत्तर प्रकृतियोंके स्वामित्वका उल्लेख	२५७	१२
मूल प्रकृतियोंमें प्रदेश बंधका स्वामित्व	२५९	६
उत्तर प्रकृतियोंमें प्रदेश बंधका स्वामित्व	२५९	१५
मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें एक जीव एक कालमें कितनी प्रकृति बांधता है ? इसका निदर्शक यंत्र और उसका भाव	२६३	१
योग स्थानोंके भेद	२६५	३
उपपाद योग स्थाननिका स्वरूप कथन	२६६	१
उपपादके सामान्य आदि भेदोंका निदर्शक यंत्र	२६७	१
परिणाम योगस्थानोंका स्वरूप	२६८	१२
एकांतानुवृद्धि योगस्थानोंका स्वरूप	२६९	१८
योग स्थानोंके अवयवोंका उल्लेख	२७०	१४
अविभाग प्रतिच्छेद वर्ग आदिके स्वरूपका कथन	२७१	४
एक स्थानमें यंत्रोंके साथ सर्व स्पर्धकोंके प्रमाणका कथन		
जघन्य योग स्थानोंका स्वरूप	२७६	१६
जघन्य स्पर्धकोंकी वृद्धिका उल्लेख	३१६	१२
छह अंतरोंको छोड जघन्य स्थानसे लगाय उत्कृष्ट पर्यंत जीवोंके योगस्थानोंके होनेसे क्या होता है ? इसबातका उल्लेख	३१७	१२
संज्ञिपर्याप्त जीवोंके सर्वोत्कृष्ट योगस्थानोंका यंत्र	३१९	१
योगस्थानोंमें अल्पबहुत्वका निरूपण	३२३	१७
उपपाद योगस्थान आदि तीनो योगस्थान जबतक एक योगस्थानसे अन्य योगस्थान न हों इसप्रकार निरंतर कितने काल प्रवर्तते हैं इसबातका उल्लेख	३३२	१४
निरंतर योगस्थानोंमें यवाकार रचनाका स्वरूप	३३३	८
यवाकार यंत्र रचना	३३६	१
निरंतर योगस्थानोंका प्रमाण	३३७	७
पर्याप्त त्रसजीवोंके परिणाम योग स्थानोंमें जो जीवोंका प्रमाण है उसकी यवाकार रचनाका स्वरूप	३३८	८
इसी यवाकार रचनामें नीचली गुणहानि शलाकासे ऊपरली गुणहानि शलाकामें कुछ विशेष है इसबातका निरूपण	३३९	३
विशेषका प्रमाण आदि वतलाने वाला यंत्र	३४५	१
योग स्थानोंकी अपेक्षा द्रव्यादिके प्रमाणका विस्तारसे उल्लेख	३४५	११
योगस्थानोंमें समय प्रबद्धकी वृद्धिका प्रमाण	३५९	१
समय प्रबद्धकी वृद्धिके क्रमका उल्लेख	३६०	४
योगस्थानोंके आदि अंत स्थानोंका उल्लेख	३६४	६

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योगस्थान प्रकृति संग्रह आदिमें अल्प बहुत्वका उल्लेख	३६५	१४
चय आदिके प्रमाणका यंत्र	३८६	३
इस प्रकरणमें त्रिकोण यंत्र और उसका अर्थ	३८८	७

इति प्रदेश बंध।

अथ उदय प्रकरण।

गुणस्थानोंकी अपेक्षा प्रकृतियोंके उदयका उल्लेख	३९२	१७
आनुपूर्वीके उदयका कुछ विशेष निरूपण	३९३	११
श्रीयतिवृषभाचार्यके मतानुसार गुणस्थानोंमें व्युच्छित्तिका उल्लेख	३९४	१३
श्रीभूतबलि आचार्यके मतानुसार व्युच्छित्तिका निरूपण	३९७	७
मिथ्यात्व सासादन मिश्र गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	३९८	४
असंयत गुणस्थानमें व्युच्छित्तिरूप प्रकृतियां	३९८	१६
देशसंयत और प्रमत्त गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	३९९	८
अप्रमत्त अपूर्व करण गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	३९९	१८
अनिवृत्ति करण सूक्ष्मसांपराय और उपशांत कषाय गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४००	६
क्षीण कषाय गुणस्थानमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४०१	१
सयोगकेवलि गुणस्थानोंमें व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४०१	९
अयोग केवलि गुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति रूप प्रकृतियां	४०२	१
पहिले गुणस्थानके समान साता असाताका सयोगकेवली गुणस्थानमें भी उदय होगा इस शंकाका समाधान	४०२	१६
केवलीके साता असाताके उदयमें विशेष कारणका उल्लेख	४०३	१४
गुणस्थानोंमें उदय अनुदय प्रकृतियोंका उल्लेख	४०६	३
उदय प्रकृतियोंकी उदीरणाका उल्लेख	४०७	३
उदय प्रकृतियोंकी उदीरणामें विशेषताका निरूपण	४०७	११
गुणस्थानोंकी अपेक्षा उदीरणाकी व्युच्छित्तिका कथन	४०८	१३
उदीरणा और अनुदीरणा रूप प्रकृतियोंकी संख्याका निरूपण	४११	१
गति आदिके उदयका अनुक्रम	४१२	१
प्रकृतियोंके उदयके द्योतक पांच परिभाषा सूत्रोंका वर्णन	४१२	१०
नरक गतिमें उदय योग्य प्रकृतियोंका कथन	४१५	६
घर्मा नामक प्रथम नरकमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४१५	१३
द्वितीयादि नरकोंमें उदय व्युच्छित्तिका कथन	४१७	११

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिर्यंच गतिमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका उल्लेख	४१८	१२
पंचेंद्रिय तिर्यंच वा पर्याप्त तिर्यंचोंमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४२०	४
मनुष्य गतिमें प्रकृतियोंके उदयका निरूपण	४२३	१३
मिथ्यात्व आदि गुणस्थानोंकी अपेक्षा मनुष्य गतिमें व्युच्छित्तिका विधान	४२४	५
भोग भूमि मनुष्य वा तिर्यंचोंमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४२९	१३
देवगतिमें उदय व्युच्छित्तिका विधान	४३१	१७
अनुदिश आदिकोंमें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का विधान	४३३	९
इंद्रिय मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४३४	१६
काय मार्गणामें स्थावर कायमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४३८	१
त्रसकाय मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का निरूपण	४४०	३
अनुभय वचन और औदारिक काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४४२	१५
औदारिक मिश्रकाययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४४५	१०
वैक्रियिक काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका विधान	४४७	१७
वैक्रियिक मिश्र योगमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४४८	१८
आहार काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का उल्लेख	४४६	२
कार्माण काययोगमें उदय अनुदय व्युच्छित्ति का निरूपण	४५१	७
वेद मार्गणामें पुंवेदमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४५४	१
स्त्री वेद और नपुंसकवेदमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४५५	१७
कषायमार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिकाकथन	४५८	१८
ज्ञान मार्गणा संयममार्गणा और दर्शन मार्गणा में उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४६२	६
लेश्या मार्गणामें तीनों अशुभ लेश्याओंमे उदय अनुदय व्युच्छित्तिका निरूपण	४६६	१५
पीत आदि तीनों शुभ लेश्याओंमें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४७२	६
भव्य मार्गणा और सम्यक्त्व मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४७४	१३
संज्ञि मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४८०	७
आहार मार्गणामें उदय अनुदय व्युच्छित्तिका कथन	४८१	४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ सत्ताप्रकरण।

मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानोंमें प्रकृतियोंका सत्त्वासत्त्व निरूपण	४८४	२०
अनिवृत्ति करणादिविषैं क्षययोग्य प्रकृतियोंका अनुक्रम	४८६	३
उपशमश्रेणीवालोंके इकईस प्रकृतियोंके उपशमावनेका विधान	४९४	१६
नरक आदि गतियोंमें सत्त्वके स्वामित्वका उल्लेख	४९६	१२
नरक और तिर्यंचगतिमें सत्त्वका कथन	४९७	१६
मनुष्यगतिमें सत्त्वका निरूपण	४९९	६
देवगतिमें प्रकृतियोंके सत्त्वका निरूपण	५०१	१
इंद्रिय और कायमार्गणामें प्रकृतियोंका सत्त्व निरूपण	५०२	७
उद्वेलन प्रकृतियोंके नाम	५०३	१३
कौन जीव किस प्रकृतिकी उद्वेलना करता है इस बातका उल्लेख	५०४	४
योगमर्गणामें प्रकृतियों के सत्त्वका उल्लेख	५०६	४
औदारिक मिश्रयोगमें प्रकृतियोंके सत्त्व का उल्लेख	५०७	८
वेद मार्गणासे आहार मार्गणा पर्यंत प्रकृतियोंके सत्त्वका उल्लेख	५०८	५
ग्रंथकारकी प्रार्थना	५१४	१३

इति बंधोदयसत्त्व निरूपण।

अथ सत्त्वस्थान भंगाधिकार।

नमस्कारपूर्वक भंगविशिष्ट सत्त्वस्थानाधिकारकी प्रतिज्ञा	५१५	१
भंग शब्दका अर्थ	५१६	१
गुणस्थानोंमें स्थान और भंग कहनेका विधान	५१६	१८
आयुके बंध अबंध विशेष विना जो सामान्य वर्णन उसमें कैसे सत्ता पाई जाती है इसबातका उल्लेख	५१७	९
आयुके बंध और अबन्धके भेदोंके साथ जो विशेष वर्णन उसमें स्थान और संख्याका उल्लेख	५१९	७
सत्त्वस्थानोंके भंगोंकी संख्याका उल्लेख	५२०	७
आयुके बंध वा अबंधकी विवक्षासे मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमें अठारह स्थानकी प्रकृतियोंकी संख्याका उल्लेख	५२१	९
अठारह स्थानोंमें घटाई हुई प्रकृतियोंके नाम	५२२	३
पुनरुक्त और समभंगोंके विना अठारह स्थानोंमें प्रतिपादित भंगोंकी संख्याका निरूपण	५२५	४
सासादन और मिश्र गुणस्थानमें स्थान और भंगोंकी संख्याका निरूपण	५२५	१६
असंयत गुणस्थानमें चालीस स्थानोंका		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकार और उनके एकसौ वीस भंगोंका निरूपण	५३९	१८
बद्धायु और अबद्धायुका यंत्रस्थान	५४१	३
यंत्रकी चारों पंक्तियोंमें तीर्थंकर और आहारक की अपेक्षा विशेषका निरूपण	५४१	९
एक पंक्तिमें जो दो छह आदि प्रकृतियां घटाईं उनका निरूपण	५४२	८
असंयत गुणस्थानके चालीस सत्ता स्थानोंके भंगोंका निरूपण	५४३	७
अपूर्वकरण गुणस्थानके स्थान और भंगोंका निरूपण	५५०	१०
उपशमक अपूर्वकरण उपशमक सूक्ष्मसांपराय और उपशांत मोह गुणस्थानोंमें स्थान और भंगोंका निरूपण	५५३	४
क्षपक अनिवृत्ति करणके छत्तीस स्थानोंका निरूपण	५५४	१
छत्तीस स्थानोंके भंगोंका निरूपण	५५४	१५
सूक्ष्मसांपराय और क्षीण कषायके स्थानोंका निरूपण	५५६	३
सयोगी और अयोगीके स्थानोंका निरूपण	५५६	१७
उपशमश्रेणीवालोंके स्थानोंमें मतभेदका निरूपण और उन स्थानोंके भंग	५५८	१
सत्त्वस्थानके अभ्यासका फल	५६१	३
ग्रंथकारके सिद्धांत चक्रवर्ती होनेमें कारण	५६२	१

इति सत्त्वस्थानभंगप्ररूपण ।

अथ त्रिचूलिका अधिकार ।

नव प्रश्न चूलिकाओंके नाम	५६३	११
पहिले तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां	५६४	१२
दूसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां	५६६	८
तीसरे तीन प्रश्नोंकी प्रकृतियां	५६७	१८
आशीर्वादात्मक मंगलाचरण	५७२	६
पंचभागहार चूलिकाओंके नाम संक्रमणका स्वरूप	५७३	१
किन किन प्रकृतियोंका संक्रमण होता है इस बातका कुछ उल्लेख और पंचप्रकार संक्रमणका स्वरूप	५७४	१२
सर्व संक्रमण प्रकृतियोंमें तिर्यंच गतिमें ही उदय होनेवाली प्रकृतियोंका निरूपण	५७७	५
उद्वेलना रूप प्रकृतियां	५७७	१३
सर्वसंक्रमण प्रकृतियोंका निरूपण	५७९	१
प्रकृतियोंके संक्रमणका नियम	५७९	१०
नियमित प्रकृतियां और उनके संक्रमणों का विधान	५८०	२
विध्यात संक्रमण और अधःप्रवृत्त संक्रमणसंयुक्त प्रकृतियोंका निरूपण	५८४	१
स्थिति अनुभाग और प्रदेशबन्धोंके संक्र-		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मणोंके गुणस्थानोंकी संख्या	५८५	१०
पंचभागहारोंका अल्पबहुत्व	५८६	४
दशकरणोंके नाम	५९१	३
बंध आदि दश करणोंके अर्थ	५९१	१०
प्रकृति और गुणस्थानोंमें दशकरणोंका निरूपण	५९३	११
इति त्रिचूलिकाधिकार ।		
अथ स्थानसमुत्कीर्तनाधिकार ।		
नमस्कारपूर्वक स्थान समुत्कीर्तन अधिकारकी प्रतिज्ञा	६००	७
मूल प्रकृतियोंके बंध उदय उदीरणा सत्त्वरूप भेदविशिष्ट प्रकृतिसमुत्कीर्तनका गुणस्थानोंमें निरूपण	६०१	३
उत्तरप्रकृतियोंमें स्थान समुत्कीर्तनका कथन	६०५	१८
कहां कहां ध्रुवबंधी प्रकृति हैं इस बातका निरूपण	६१०	१२
ध्रुवबंधी प्रकृतियोंमें भंगोंका निरूपण	६११	४
भंगोंकी संख्याका निरूपण	६१४	१३
भुजाकारादि भंगोंके लक्षण	६१५	११
सामान्य अवक्तव्यबंधोंकी संख्याका निरूपण	६१६	६
विशेषभुजाकारादि भंगोंकी संख्याका निरूपण	६१९	३
अल्पतरबंधोंका निरूपण	६२१	१६
भंगविवक्षासे विशेष रूपसे अवक्तव्य बंधका निरूपण	६२३	१६
मोहनीयके उदयस्थानोंका निरूपण	६२४	११
मिथ्यादृष्टि और असंयतादि चार गुणस्थानोंमें मोहनीयके उदयस्थान और कूटोंका विशेष	६३२	१
कूटोंमें अपुनरुक्त स्थानोंका निरूपण	६३६	४
अनिवृत्तिकरणमें उदयस्थानोंका कुछ विशेष	६३८	१३
द्वादशपुरुषसंबंधिनी रचना	६४०	१
सर्व उदयस्थान और उनकी प्रकृतियोंकी संख्याका निरूपण	६४२	१
अपुनरुक्त स्थानोंकी संख्या और प्रकृतियोंका उल्लेख	६४३	१७
उपयोगकी अपेक्षा गुणस्थानोंमें मोहके उदयरूप स्थान और प्रकृतियोंका निरूपण	६४६	१
योगकी अपेक्षा उदयरूपस्थान और प्रकृतियोंका उल्लेख	६५०	१४
मिश्रयोग और केवल पर्याप्त योगयुक्त गुणस्थानोंका विशेष रूपसे निरूपण	६५१	६
जुदे राखेहुए योगोंका विशेष निरूपण	६५४	१०
अपनीतवेदका कुछ विवरण	६५६	१६
संयमकी अपेक्षा उदयरूप स्थान और प्रकृतियोंका निरूपण	६५९	६
गुणस्थानोंमें होने वाली लेश्याओंका कथन	६६०	१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लेश्याकी अपेक्षा मोहके स्थान और प्रकृतियोंकी संख्या	६६१	७
सम्यक्त्वकी अपेक्षा मोहनीयके स्थान और प्रकृतियोंकी संख्या	६६४	४
मोहनीयकर्मके सत्त्वका निरूपण	६६७	३
क्षपक अनिवृत्ति करणके सत्त्वस्थाननिका यंत्र	६७६	१
मोहनीयके बंध स्थानोंमें सत्वस्थानोंका उल्लेख	६७७	१३
नामकर्मके स्थानोंके आश्रय इकतालीस पदोंका उल्लेख	६७९	८
नामकर्मके बंधस्थानोंका उल्लेख	६८१	७
नामकर्मके बंधस्थान किन किन कर्मपदोंके साथ बंधको प्राप्त होते हैं, इस वातका निरूपण	६८१	१७
आतप और उद्योत नामक प्रशस्त प्रकृतियां किस कर्मपदके साथ बंधती हैं ? इस वातका उल्लेख	६८३	१
नामकर्मके तेईस आदि बंध स्थानोंमें प्रकृतियोंके जाननेके लिये पाठका अनुक्रम	६८४	१५
तेईसके बंधस्थानमें यथायोग्य प्रकृति मिलाने पर स्थान और प्रकृतियोंकी संख्याका उल्लेख	६८६	१५
नामकर्मके बंधस्थानोंका यंत्र	६९१	१
नामकर्मके बंध स्थानोंके भंग	६९१	३
तिर्यंच पंचेंद्री पर्याप्ति युक्त संज्ञीके और मनुष्य गति पर्याप्ति युक्त मनुष्यके कर्मपदोंमें उनतीस और तीसके स्थानोंमें गुणस्थानोंकी अपेक्षा भंगोंका विभाग	६९१	१७
नरक आदि गतियोंमें मरण उत्पत्तिका विधान	६९७	८
गतिमार्गणामें नामकर्मके बंध स्थानोंका उल्लेख	७०२	१
इंद्रिय काय योग मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका निरूपण	७०३	१४
योग वेद और कषाय मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका उल्लेख	७०७	२
अनंतानुबंधी आदि चारो कषायोंके भावोंका निरूपण यंत्र	७०९	३
ज्ञान संयम और दर्शन मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका उल्लेख	७१३	१०
लेश्या मार्गणामें नामकर्मके बंधस्थानोंका कथन	७२५	५
लेश्याओंमें शिला आदि भेदोंका निदर्शक यंत्र	७२७	१
नरक आदिमें उपजने योग्य जीवोंका कथन	७३०	१४
लेश्याओंके संक्रमणका निरूपण	७३४	८
प्रासंगिक गाथाओंका निरूपण	७३९	६
भव्य सम्यक्त्व संज्ञी और आहार मार्गणाओंमें नामकर्मके बंधस्थानोंका निरूपण और सम्यक्त्वका विशेष	७४१	१५
अपुनरुक्त भंगोंका निरूपण	७५९	१२
मिथ्यादृष्ट्यादिके बंधोंमें भुजाकारादिका विधान और उनमें अपने २ भंगों सहित स्वस्थान		

५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदि संज्ञाओंका निरूपण	७५९	५
स्वस्थान आदिका लक्षण	७५९	१४
अपने अपने २ गुणस्थानोंके छूट जाने पर कौन २ गुणस्थानोंको प्राप्त होते हैं इस बातका निरूपण	७६०	७
उपशम श्रेणीमें कहां २ मरण होता है इसबातका उल्लेख	७६२	९
कृतकृत्य वेदककालमें उपजनेका विधान	७६४	१
नामकर्मके बंधस्थानोंका निरूपण	७६४	१०
भुजाकारादिके अविरुद्ध बंधस्थानोंकी उत्पत्तिका भंग पूर्वक क्रम निरूपण	७६५	११
नाम कर्मके स्थाननिका भुजाकार बंध ल्यावनेकौं त्रैराशिक यंत्र	७६९	१२
भुजाकार बंधका कुछ निरूपण	७७०	१
अल्पतर भंगोंका निरूपण	७७०	१
अल्पतर भंगोंका यंत्र	७७५	१
लघुकरणकी अपेक्षा अल्पतर भंगोंका कथन	७७७	११
असंयतमें भुजाकार यंत्रोंका विधान	७७८	१४
असंयतमें अल्पतर भंगोंका निरूपण	७८०	११
अप्रमत्त आदि गुणस्थानोंमें भुजाकार बंधोंका निरूपण	७८१	१०
अप्रमत्तगुणस्थानमें अल्पतर भंगोंका कथन	७८४	३
नामकर्मके समस्त भुजाकारोंका निरूपण	७८५	१२
सर्व नामबंधस्थानोंका यंत्र	७८६	९
भुजाकारादिभंगोंकी प्राप्तिका साधारण उपाय	७८७	१
अवक्तव्यभंगोंका निरूपण	७८८	७
नामकर्मके उदयस्थानसंबंधी पांच कालोंका निरूपण	७८९	४
पांचोंकालोंका जीवसमासोंमें निरूपण	७९०	११
नाम कर्मके उदय स्थानोंकी उत्पत्तिका क्रम	७९२	६
नाना जीवोंकी अपेक्षा नाम कर्मके उदयस्थानोंका निरूपण	७९४	१०
नामकर्मके उदय स्थानोंका यंत्र	८०१	५
नाम कर्मके उदय स्थान जैसे संभवैं तिनका यंत्र	८०२	५
अयोगी गुणस्थानके दोनों स्थानोंका स्वरूप	८०२	१३
नाम कर्मके उदय स्थानोंमें भंगोंका निरूपण		
नारकादि इकतालीस जीव पदोंमें संभवते भंगोंका निरूपण	८०४	६
पुनरुक्त भंगोंका निरूपण	८११	६
गुणस्थानोंकी अपेक्षा भंगोंका निरूपण	८११	१५
नामकर्मके सत्त्वस्थानोंका उल्लेख	८१६	४
सत्त्वस्थानोंका विधान	८१६	१२
नाम कर्मके सत्त्वस्थानोंका यंत्र	८१७	६
नामकर्मके दशवें और नौवें स्थानोंमें प्रकृतियोंका निरूपण	८१८	४
उद्वेलनाके स्थानोंका विशेष	८१८	१०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमें होनेवाली उद्वेलनाका अनुक्रम	८१९	१
उद्वेलनाके अवसरका काल	८१६	१०
उद्वेलनाके कालोंका लक्षण	८२०	१
तेज और वात कायिकोंमें उद्वेलन प्रकृतियोंका निरूपण	८२०	११
सम्यक्त्व आदिकी विराधना कितनी वार होती है इस बातका निरूपण	८२२	७
चारो गतियोंकी विवक्षासे गुणस्थानोंमें नाम कर्मका सत्त्वोल्लेख	८२४	५
इकतालीस जीवपदोंमें सत्त्वस्थानोंका कथन	८२५	१८
मूल प्रकृतियोंमें बंध उदय सत्त्वरूप त्रिसंयोगका नियम निरूपण	८२८	५
उत्तर प्रकृतियोंमें बंध उदय सत्त्वका कथन	८३०	१
गोत्रकर्मका बंध उदय सत्त्व निरूपण	८३३	१०
आयु कर्ममें बंधका निरूपण	८३५	१७
आयु कर्मके उदय और सत्त्वका निरूपण	८३६	१५
आयु कर्मके अपुनरुक्त भंगोंका उल्लेख	८३९	४
गुणस्थानोंमें आयुकर्मके भंगोंका निरूपण	८४२	१५
वेदनीय गोत्र आयु इन तीनों कर्मोंके मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानोंमें कितने कितने भंग होते हैं ? इसबातका निरूपण	८४३	७
वेदनीय गोत्र आयुके मूलभंगोंकी संख्याका निरूपण	८४३	१६
मोहनीयके त्रिसंयोगरूप भंगोंका उल्लेख	८४५	६
गुणस्थानोंकी अपेक्षा मोहनीयके स्थानोंकी संख्या	८४४	१३
मोहनीयके बंध उदय सत्त्व स्थानके त्रिसंगोंमें विशेष	८४८	९
उदयस्थान तो अधिकरण और बंध सत्त्व आधेय इसरूपसे भंगोंका निरूपण	८५१	१६
सत्त्व अधिकरण और बंध उदय आधेयरूप भंगोंका निरूपण	८५४	४
मोहनीयके बंध उदय सत्त्वोंमें दो आधार और एक आधेय इसरूपसे तीन भंगोंका कथन	८५६	१८
तीनोंमें पहले भेदका निरूपण	८५७	१३
दूसरे भेदका निरूपण	८६४	७
तीसरे भेदका निरूपण	८६७	१७
नाम कर्मके स्थानोंका गुणस्थानोंमें त्रिसंयोगी निरूपण	८७२	६
जीवस्थानोंमें नामकर्मके स्थानोंका त्रिसंयोग निरूपण	८७८	१
चौदह मार्गणाओंमें त्रिसंयोगका निरूपण	८८०	१४
त्रिसंयोगमें बंध आधार उदय सत्त्व आधेयका निरूपण	८९५	११
त्रिसंयोगमें उदय आधार बंध सत्त्व आधेय		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रूप दूसरे भेदका निरूपण	९०६	११
सत्त्वस्थान आधार बंध उदय आधेयरूप तीसरे भेदका निरूपण	९२४	१४
बंध उदय सत्त्वोंमें विशेष	९३६	५
इति त्रिचूलिकाधिकार ।		

अथ आस्रवाधिकार ।

नमस्कारपूर्वक अधिकारकी प्रतिज्ञा	९४९	१४
आस्रवके मूलकारणोंका उल्लेख	९५०	४
गुणस्थानोंकी अपेक्षा मूल कारणोंका विवरण	९५१	१
आस्रवके कारणोंकी व्युच्छित्ति और अनुदयका वर्णन	९५४	१
आस्रवके कारणोंके भेद	९५६	१३
स्थानरूप प्रकार (भेद) का निरूपण	९५७	३
स्थान प्रकारोंके जाननेकेलिये कूट प्रकारोंका निरूपण	९६०	३
अनंतानुबंधीरहित मिथ्यादृष्टिके कूटोंका यंत्र	९६६	५
कूटोच्चारणका प्रकार	९६८	८
भंगानयन प्रकार	९७२	१८
द्विसंयोगी आदि भंगोंके साधनेका उपाय	९७६	१७
ज्ञानावरणादि कर्मोंके बंधमें कारण जीवोंके परिणामोंका उल्लेख	९७९	४
इति आस्रवाधिकार ।		

अथ भावचूलिकाधिकार ।

नमस्कार पूर्वक भावचूलिका अधिकारकी प्रतिज्ञा	९८६	७
जीवोंके औपशमिक आदि भावोंका उल्लेख और उनके लक्षण	९८७	५
औपशमिक और क्षायिक भावोंके भेद	९८८	१५
क्षायोपशमिक भावोंके भेद	९८९	६
औदयिक भावोंके भेद	९८९	१६
पारिणामिक भावके भेद	९९०	९
भावोंका गुणस्थानोंकी अपेक्षा निरूपण	९९२	३
मूल भावोंकी संख्याका निरूपण	९९५	७
गुणस्थानोंकी अपेक्षा उत्तरभावोंका निरूपण	९९६	५
भावोंमें गुण्य गुणकारका दिग्दर्शन	१००४	७
पद भंगोंका निरूपण	१०१८	८
सर्व पदोंकी अपेक्षा मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थानोंमें पद भंगोंका निरूपण	१०३०	८
भंगोंके मिलावनेका निरूपक सूत्र	१०३७	१
मिथ्यादृष्टि गुणस्थानमें प्रत्येक पद पिंडपदकी रचना	१०४६	६
गुणस्थानोंकी अपेक्षा प्रत्येकपद आदिका निरूपण	१०४७	२
एकांत मतोंके भेदोंका निरूपण	१०६२	११
क्रियावादियोंके मूल भंगोंका उल्लेख	१०६३	१
कालवादका अर्थ	१०६४	१८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ईश्वरवादका अर्थ १०६५ ९
आत्मवादका अर्थ ,, १७
नियतिवादका अर्थ १०६६ ८
स्वभाववादका अर्थ ,, १५
अक्रिया वादियोंके मूलभंग १०६७ ६
अज्ञानवादके भेद १०६६ १
वैनयिक वादियोंके मूलभंग १०७० ८
पौरुष वादियोंका उल्लेख १०७१ ८
दैव वादियोंका उल्लेख ,, १६
संयोग वादियोंका निरूपण १०७२ ५
लोक वादियोंका उल्लेख ,, १५
मिथ्यामतियोंके वचन क्यों असत्य हैं ? इस
वातका उल्लेख १०७३ १६

इति भावचूलिकाधिकार।

अथ त्रिकरण चूलिका।

नमस्कारात्मक मंगल १०७५ ४
तीन करणोंमें अधः प्रवृत्त करणके
स्वामी जीवका उल्लेख ,, १६
अधः प्रवृत्त करणका लक्षण १०७६ ९
अधः करणके चय प्रचयचन आदिका निरूपण १०७७ १०
अनुकृष्टि प्रथमखंडका प्रमाण १०८२ ४
अंक संदृष्टि अपेक्षा अधःकरण रचना १०९० १
अपूर्वकरण कालका उल्लेख १०९३ ५
अनिवृत्ति करणका निरूपण १०९८ १

इति त्रिकरणचूलिका।

अथ कर्मस्थिति रचना।

नमस्कार पूर्वक कर्मस्थिति रचनाधिकार प्रतिज्ञा १०९९
आबाधाकालका कुछ स्वरूप निरूपण २००० ३
आयुभिन्न सात मूल प्रकृतियोंकी आबाधा
और विशेष ,, ११
आयु कर्मकी आबाधाका उल्लेख २००२ ७
आयु विना सात कर्मोंकी उदीरणाकी अपेक्षा
आबाधा निषेक आदिका उल्लेख २००३ ५
गुणहानि आयामका प्रमाण २०१० ८
दो गुणहानिका प्रमाण और उसका प्रयोजन २०११ ६
अंत गुणहानि आदिके द्रव्यका उल्लेख २०११ १८
सात कर्मोंकी स्थिति निषेक रचना २०१८ १
अंक संदृष्टि अपेक्षा निषेकोंका यंत्र २०१९ १३
अन्योन्याभ्यस्त राशिका उल्लेख २०३७ १६
एक गुणहानि आदिके जाननेका प्रयोजन २०३६ १४
स्थितिकी अधिकताका उल्लेख २०४० ८
समय प्रबद्ध प्रमाण द्रव्य वर्तमान समयमें
बंधता है वा उदय होता है इस वातका
उल्लेख २०४१ ११
बंध उदय सत्वमें कुछ विशेष उल्लेख २०४३ ६
त्रिकोण यंत्र २०४३ (क) १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रिकोण यंत्रका अर्थ	२०४४	१
त्रिकोण यंत्रके जोड देनेका विधान	२०४५	५
आयु विना सात कर्मोंकी स्थितिके भेद	२०५३	१८
सांतर स्थितिके भेदोंका उल्लेख	२०५४	१७
मूल प्रकृतियोंके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानोंका निरूपण	२०५६	११
जघन्य चयके महत्त्वपनाका उल्लेख	२०६३	१२
आयु कर्मके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानोंमें विशेष	२०६४	४
अनुकृष्टि विधानका उल्लेख	२०७४	१५
स्थितिबंधाध्यवसाय रचना	२०८४	१
जघन्य संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थान	२०८८	१८
जघन्य संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थानोंका यंत्र	२०९१ (क)	१
ग्रंथकर्ताका संदेश	२०९२	११
संस्कृतटीकाकार केशववर्णीका संदेश	२०९६	१७

इति कर्मकांड।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कर्मकांडके अधिकारोंकी सूची।

प्रकृति समुत्कीर्तनाधिकार	१	१	आस्रवाधिकार	९४९	९
बंधोदय सत्त्वाधिकार	७५	१	भावचूलिकाधिकार	९८६	१०
सत्त्वस्थानभंगाधिकार	५१५	८	त्रिकरणचूलिकाधिकार	१०७५	१
त्रिचूलिकाधिकार	५६३	१	कर्मस्थितिरचनासद्भावाधिकार	१०११	७

इति कर्मकांड।

शुद्ध्यशुद्धि पत्र।

कर्मकांड।

अशुद्धि	शुद्धि	पत्र संख्या	पंक्ति संख्या
णामं ठवाणा दवियं	णामं ठवणा दवियं	५२ (कर्म)	१३
णोआगभावो पुण	णोआगमभावो पुण	७२	३
७४-७६-७२-७५	७०-७१-७२ ७३	७० से	
७३-७४-७५-७६	७४-७५-७६-७७	७७ तक	३
तत्थासत्थ एदि हु	तत्थासत्था	६९३	१
पुनरुक्त	अपुनरुक्त	७५७	१०
१०५ से १३०	९०५-से९३०	९०५	३
इह्वदे रुऊणो	इहपदे रुऊणो	१०३७	१
२००० से २१००		११०० से १२००	२०००

इति शुद्ध्यशुद्धि सूची।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थसंदृष्टि अधिकारकी

विषय सूची।

(कर्मकांड)

कर्म प्रकृति समुत्कीर्तन अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	१९५	४
बंध उदय सत्त्वाधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	१९७	१०
विशेषसत्ता अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२६६	८
त्रिचूलिका अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	,,	१६
स्थानसमुत्कीर्तन अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२६८	१०
आस्रव अधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२७०	८
त्रिकरण चूलिकाधिकारमें संदृष्टियोंका निरूपण	२७१	३

इति।

कर्मकांडके अर्थसंदृष्टि अधिकारके

फुटकर यंत्रोंकी सूची।

चालीसियादिके त्रैराशिक दिखावनेकी रचनाका यंत्र	२०७
द्वींद्रियादिकी कर्मस्थितिका यंत्र	२०६
अपर्याप्तका अपनी स्थितिके प्रथम समयमें उत्कृष्ट मध्य जघन्यरूप अपनी स्थिति पर्यंत रचनाका यंत्र	२३१
८४ स्थानोंमें योगस्थानोंका यंत्र	२३९
काल यवमध्य रचना का यंत्र	२४२
सर्वगुण हानियोंके द्रव्यका यंत्र	२५०
गुणहानियोंकी रचनाका यंत्र	३०२ (क)
प्रथमादि अंतपर्यंत निषेकोंकी रचनाका यंत्र	३०७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ॐ

गांधी-हरीभाईदेवकरणजैनग्रंथमाला ।

४

आचार्यप्रवरश्रीमन्नेमिचंद्रसैद्धांतचक्रवर्तिविरचित

गोम्मटसार ।

(द्वितीयनाम पंचसंग्रह)

जीवतत्त्वप्रदीपिका संकृतटीका तथा सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामकी हिंदी-भाषाटीका सहित ।

कर्मकांड

परमभए सव खंडिकैं करमकांडसमुदाय ।
सहज अखंडित ज्ञानमय जयवंते जिनराय ॥ १ ॥
विघनहरन मंगलकरन नमौं सिद्ध सुखकार ।
नेमिचंद जिन जगतपति साधुवचन गुनधार ॥ २ ॥

अथ श्रीमत् गोम्मटसार द्वितीयनाम पंचसंग्रहविषैं कर्मकांड महा अधिकारकी रचना करनेको उद्यम करिए है तहां प्रथम ही आचार्य अपने इष्टकौं नमस्कार पूर्वक प्रतिज्ञा करैं हैं— १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पणमिय सिरसा णेमिं गुणरयणविभूसणं महावीरं।
सम्मत्तरयणणिलयं पयडिसमुक्कित्तणं वोच्छं ॥ १ ॥

प्रणम्य शिरसा नेमिं गुणरत्नविभूषणं महावीरम्।
सम्यक्त्वरत्ननिलयं प्रकृतिसमुत्कीर्तनं वक्ष्यामि ॥ १ ॥

जी० प्र०—वक्ष्यामि। कं? प्रकृतिसमुत्कीर्तनं—प्रकृतीनां ज्ञानावरणादिमूलोत्तरभेदभिन्नानां समुत्कीर्तनमस्मिन्निति प्रकृतिसमुत्कीर्तनो ग्रंथः तं। आदौ किं कृत्वा? प्रणम्य—नमस्कृत्य। कं? नेमिं—नेमितीर्थंकरपरमदेवं। केन? शिरसा—उत्तमांगेन। कथंभूतं? गुणरत्नविभूषणं—गुणा एव रत्नानि तान्येव भूषणानि यस्यासौ गुणरत्नविभूषणस्तं। पुनरपि कथंभूतं? महावीरं—विशिष्टां ई—लक्ष्मीं राति ददातीति वीरः महांश्चासौ वीरश्च महावीरः तं। भूयः किंभूतं। सम्यक्त्वरत्ननिलयं आत्मस्वरूपोपलब्धिलक्षणः सम्यग्भावः सम्यक्त्वं क्षायिकसम्यक्त्वं वा तदेव रत्नं तस्य निलय आश्रयः तं। एवं विशिष्टेष्टदेवतानमस्कारपूर्विका प्रकृतिसमुत्कीर्तनकथनप्रतिज्ञा आचार्यस्य ज्ञातव्या ॥ १ ॥ प्रकृतिः का? इति चेदाह—

स० चं०—श्रीनेमिनाथ तीर्थंकर परमदेव ताहि मस्तकनमाय नमस्कारकरि ज्ञानावरणादिक कर्मनिकी मूलप्रकृति वा उत्तर प्रकृतिका है समुत्कीर्तन कहिए व्याख्यान जाविषैं ऐसा प्रकृतिसमुत्कीर्तन नामा ग्रंथ ताहि मैं कहोंगा। कैसा है नेमितीर्थंकर? 'गुणरत्नविभूषणं' कहिए गुण ज्ञानादिक तेई भए रत्न तेई हैं आभूषण जाके ऐसा है। बहुरि कैसा है? 'महावीर' कहिए विशिष्ट जो ई कहिए लक्ष्मी ताहि राति कहिए देवै सो वीर, महान् जो वीर सो महावीर कहिए सो ऐसा है। बहुरि कैसा है? 'सम्यक्त्वरत्ननिलयं' कहिए आत्मस्वरूपकी उपलब्धिरूप जो सम्यक्स्वरूप भाव सो सम्यक्त्व अथवा क्षायिकसम्यक्त्व सोई भया रत्न ताका आश्रय स्थान है ऐसैं अपने विशेषरूप इष्टदेवकौं नमस्कार पूर्वक प्रकृति समुत्कीर्तन करनेकी आचार्यकैं प्रतिज्ञा जाननी ॥१॥ प्रकृति कहा? सो कहैं हैं—

पयडी सील सहावो जीवंगाणं अणाइसंबंधो।
कणयोवले मलं वा ताणत्थित्तं सयं सिद्धं ॥ २ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृतिः शीलं स्वभावः, जीवाङ्गयोरनादिसम्बन्धः ।
कनकोपले मलं वा तयोरस्तित्वं स्वयं सिद्धम् ॥ २ ॥

जी० प्र०—प्रकृतिः–शीलं स्वभाव इत्यर्थः । सोऽपि कारणांतरनिरपेक्षता अग्निवायुजलानां ऊर्ध्वतिर्यग्निम्नगमनवत् । सहि स्वभाववंतमपेक्षते इति । कयोः सः ? जीवांगयोः–जीवकर्मणोः । तत्र रागादिपरिणमनमात्मनः स्वभावः रागाद्युत्पादकत्वं तु कर्मणः तदेतरेतराश्रयदोषः तत्परिहारार्थं तयोः जीवकर्मणोः संबंध अनादिरित्युक्तं । क इव ? कनकोपले मलमिव स्वर्णपाषाणो स्वर्णपाषाणयोः संबंधस्य अनादिरिव । अनेन अमूर्तो जीवः मूर्तेन कर्मणा कथं बध्यते ? इत्यप्यपास्तं । तयोरस्तित्वं कुतः सिद्धं ? स्वतः सिद्धं । अहंप्रत्ययवेद्यत्वेन आत्मनः दरिद्रश्रीमदादिविचित्रपरिणामात् कर्मणश्च तत्सिद्धेः ॥ २ ॥ संसारिणां कर्मनोकर्मग्रहणप्रकारमाह—

स० चं०—जो अन्य कारण विना वस्तुका सहज स्वभाव होइ जैसैं अग्निका ऊर्ध्वगमन, पवनका तिर्यग्गमन, जलका अधोगमन स्वभाव है ताकौं प्रकृति कहिए वा शील कहिए वा स्वभाव कहिए ए सब एकार्थ हैं सो स्वभाव स्वभाववान् वस्तुकी अपेक्षा लीए हैं तातैं यहु स्वभाव कौनका है सो कहैं है-'जीवांगयोः, कहिए जीव अर कर्म इनिका स्वभाव है। तहां रागादिरूप परिणमना आत्माका स्वभाव है। रागादिककौं उपजावना कर्मका स्वभाव है। इहां और द्रव्य और द्रव्यके आश्रय भया सो इस दोषके दूरि करनेकौं कहै हैं—जीवकर्मका अनादिसंबंध है जैसैं कनकोपल कहिए सुवर्ण सहित पाषाण तिसविषैं मल पाइए है॥ सुवर्ण पाषाण यद्यपि भिन्न भिन्न वस्तु हैं तथापि तिनका अनादिसंबंध है नए मिले नाहीं तैसैं जीवकर्मका अनादिसंबंध है नए मिले नाहीं। ऐसा भी कोऊ कहैं हैं कि अमूर्तिक जीवसहित मूर्तिक कर्मका संबंध कैसें भया? तहां भी यही समाधान है जो नवीन संबंध भया नाहीं अनादिहीतैं संबंध है तहां तर्क कहा?। बहुरि तिनिका अस्तित्व स्वयं सिद्ध है जातैं 'अहं, इत्यादिक मानना जीव विना नाही संभवै है। दरिद्री लक्ष्मीवान इत्यादिक विचित्रता कर्म विना नाहीं संभवै है तातैं जीव भी है अर कर्म भी है ऐसैं अस्तित्व स्वयंसिद्ध है ॥ २ ॥ संसारी जीवनिकैं कर्म नोकर्मका ग्रहण कैसें हो है ? सो कहैं हैं—

देहोदयेण सहिओ जीवो आहरदि कम्म णोकम्मं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिसमयं सव्वंगं तत्तायसपिंडओव्व जलं ॥ ३ ॥

देहोदयेन सहितो जीव आहरति कर्म नोकर्म ।
प्रतिसमयं सर्वाङ्गं तप्तायःपिंडमिव जलम् ॥ ३ ॥

जी० प्र०—देहाः—औदारिक—वैक्रियिका—हारक—तैजस—कार्मणनामकर्माणि। तत्र कार्मणनामोदयजनितयोगेन सहितो जीवः ज्ञानावरणाद्य-ष्टविधं कर्म आहरति । शेषोदयेन सहितः तत्तत्संज्ञं नोकर्म आहरति । कदा ? इति चेत् प्रतिसमयं तदुदयकाले समयं समयं प्रति । कथं ? सर्वांग—सर्वात्मप्रदेशैः तप्तायसपिंडं जलमिव—यथा तप्तं अयोमयं पिंडं सर्वप्रदेशैर्जलमाहरति तथा शरीरनामोदयसहितजीवः प्रतिसमयं कर्म नोकर्म आहर-तीत्यर्थः ॥ ३ ॥ कति तत्परमाणूनाहरति ? इति चेत्—

स० चं०—देह जे औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस कार्मणरूप शरीर नामा नामकर्म तहां कार्मण नामकर्मके उदयतैं योग सहित जीव ज्ञानावरणादिक आठप्रकार कर्मकौं ग्रहै है । अवशेष शरीरनिके उदयतैं औदारिकादिक नोकर्मको ग्रहै है सो तिनके उदय कालविषैं समय समयप्रति वर्गणानिकौं ग्रहण करै है । कैसैं ? सर्वांग कहिए सर्वही आत्माके प्रदेशनिकरि ग्रहण करै है । कौंन दृष्टांत ? तप्तायसपिंडं जलमिव कहिए जैसैं अग्नितैं बहुत तप्तायमान भया लोहका पिंड सो जलमें तिष्ठ्या जलकौं सर्वांगपनैं शोषै है तैसैं शरीर नामकर्मके उदयसंयुक्त जीव समय समय कर्म वा नोकर्मकौं ग्रहै है ॥ ३ ॥

सिद्धाणंतिमभागं अभव्वसिद्धादणंतगुणमेव ।
समयपबद्धं बंधदि जोगवसादो दु विसरित्थं ॥ ४ ॥

सिद्धानन्तिमभागं अभव्यसिद्धादनन्तगुणमेव ।
समयप्रबद्धं वध्नाति योगवशात्तु विसदृशम् ॥ ४ ॥

जी० प्र०—सिद्धराश्यनंतैकभागं । अभव्यसिद्धेभ्यो ऽनंतगुणं तु—पुनः योगवशाद् विसदृशं समयप्रबद्धं बध्नाति । समये समये प्रबध्यते इति समयप्रबद्धः ॥ ४ ॥ अथ प्रतिसमयभवं बंधं प्रमाणयित्वा उदयसत्त्वे प्रमाणयति—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—सिद्धराशिके अनंतवे भागि अभव्यराशितैं अनंतगुणा जो समयप्रबद्ध ताकौं बांधे है। समय समय प्रति बाधिए ताको समयप्रबद्ध कहिए, सो अभव्यराशितैं अनंतगुणा ऐसा जो सिद्धराशिका अनंतवां भाग तीहि प्रमाण परमाणूनिका समूहरूप जो वर्गणा तितनी ही वर्गणानिका समूहरूप जो समयप्रबद्ध ताकौं समय समय प्रति बांधै है। बहुरि योगनिके वशतैं विसदृशबंध हो है कबहूं बहुत परमाणूनिका बंध हो है कबहूं थोरे परमाणूनिका बंध हो है सामान्यपनैं पूर्वोक्त प्रमाण ही कहिए है ॥ ४ ॥ आगैं समय समय प्रति बंधका प्रमाणकरि उदयका वा सत्त्वका परिमाण कहैं हैं—

जीरदि समयपबद्धं पओगदो णेगसमयबद्धं वा ।
गुणहाणीण दिवड्ढं समयपबद्धं हवे सत्तं ॥ ५ ॥

जीर्यते समयप्रबद्धं प्रयोगतः अनेकसमयबद्धं वा ।
गुणहानीनां द्व्यर्द्धं समयप्रबद्धं भवेत् सत्त्वम् ॥ ५ ॥

जी० प्र०—प्रतिसमयमेकः कार्मणसमयप्रबद्धः जीर्यते उदेति, वा अथवा सातिशयक्रियोपेतस्य आत्मनः सम्यक्त्वादिप्रकृतिलक्षणप्रयोगेण हेतुना एकादशनिर्जराविवक्षया अनेकसमयप्रबद्धो जीर्यते। द्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धः प्रतिसमयं सत्त्वं भवति। ननु प्रतिक्षणमेकः समयप्रबद्धो बध्नाति एको गलति तदा सत्त्वेऽप्येक एव स्यात् कथं द्व्यर्धगुणहानिमात्रः? तन्न प्रागुत्तरत्रापि त्रिकोणरचनायां व्यक्तप्रतिपादनात् ॥ ५ ॥ कर्मणः सामान्यादिभेदप्रभेदान् गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—समय समयप्रति एक एक कार्मणका समयप्रबद्ध निर्जरै है। उदयरूप हो है। अथवा सातिशय क्रियासंयुक्त जो आत्मा ताकैं सम्यक्त्वादिककी प्रकृतिरूप प्रयोग तीहिकरि ग्यारह स्थान निर्जराके गुणस्थानाधिकारमें कहे हैं तिनकी विवक्षाकरि एक समयविषैं अनेक समयप्रबद्ध निर्जरैं है। बहुरि ड्योढ गुणहानिका प्रमाणकरि समयप्रबद्धकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितना परमाणू समय समय प्रति सत्तारूप रहै है। इहां प्रश्न-जो समय समय प्रति एक समयप्रबद्धका बंध कह्या एक समयप्रबद्धकी निर्जरा कही तौ सत्त्व ड्योढ गुणहानिकरि गुणित

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समयप्रबद्ध प्रमाण कैसै कहो हो ? ताका समाधान-जो योगमार्गणाविषैं पूर्वै व्याख्यान कीया था आगैं भी कथन दिखाइयेगा तहां त्रिकोण रचनाविषैं बंध निर्जरा सत्वका प्रमाण जो इहां कह्या है तितना ही व्यक्तपनें संभवै है ॥ ५ ॥ आगैं कर्मनिके सामान्यादिक भेदनिके भेद दोय गाथानिकरि कहैं हैं--

कम्मत्तणेण एक्कं दव्वं भावोत्ति होदि दुविहं तु ।
पोग्गलपिंडो दव्वं तस्सत्ती भावकम्मं तु ॥ ६ ॥

कर्मत्वेन एकं द्रव्यं भाव इति भवति द्विविधं तु ।
पुद्गलपिण्डो द्रव्यं तच्छक्तिः भावकर्म तु ॥ ६ ॥

जी० प्र०—प्रागुक्तं सामान्यकर्म कर्मत्वेन एकं । तु—पुनः द्रव्यभावभेदाद्द्विविधं । तत्र द्रव्यकर्म पुद्गलपिंडो भवति । पिंडगतशक्तिः कार्ये कारणोपचारात् शक्तिजनिताज्ञानादिर्वा भावकर्म भवति ॥ ६ ॥

स० चं०—सो कर्म सामान्यभावरूप कर्मत्वकरि एक प्रकार है। बहुरि सोई कर्म द्रव्यभावके भेदतैं दोयप्रकार है । तहां ज्ञानावरणादिकरूप पुद्गल द्रव्यका पिंड सो द्रव्यकर्म है बहुरि तिस पिंडविषैं फल देनेकी शक्ति है सो भावकर्म है । अथवा कार्यविषैं कारणके उपचारतैं तिस शक्तितैं उत्पन्न भए अज्ञानादिक वा क्रोधादिक सो भी भावकर्म कहिए ॥ ६ ॥

तं पुण अट्ठविहं वा अडदालसयं असंखलोगं वा ।
ताणं पुण घादित्ति अ-घादित्ति य होंति सण्णाओ ॥ ७ ॥

तत् पुनरष्टविधं वा अष्टचत्वारिंशच्छतमसंख्यलोकं वा ।
तेषां पुनः घातीति अघातीति च भवतः संज्ञे ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तत्पुनः सामान्यं कर्म अष्टविधं वा अष्टचत्वारिंशच्छतविधं वा असंख्यातलोकविधं भवति तेषां च अष्टविधादीनां पृथक् पृथक् घात्यघातीति संज्ञे स्तः ॥ ७ ॥ यथोद्देशस्तथा निर्देश इति न्यायात् प्रथमोद्दिष्टाष्टविधं तद्घात्यघातिभेदौ च गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—बहुरि सो सामान्यकर्म आठप्रकार है, वा एकसौ अडतालीस प्रकार है, वा असंख्यात लोकप्रमाण प्रकार है तिनकी पृथक् पृथक् घातिया वा अघातिया ऐसी संज्ञा है ॥ ७ ॥ सो जैसैं नाम कहना तैसैं ही विशेष कहना यातैं प्रथम आठप्रकार कर्मके घातिया अघातिया भेद दोय गाथानिकरि दिखावै हैं—

णाणस्स दंसणस्स य आवरणं वेयणीयमोहणियं ।
आउगणामं गोदंतरायमिदि अट्ठ पयडीओ ॥ ८ ॥

ज्ञानस्य दर्शनस्य च आवरणं वेदनीयमोहनीयम् ।
आयुष्कनाम गोत्रान्तरायमिति अष्ट प्रकृतयः ॥ ८ ॥

जी० प्र०—ज्ञानावरणं दर्शनावरणं वेदनीयं मोहनीयमायुर्नाम गोत्रमंतरायं चेति मूलप्रकृतयोऽष्टौ ॥ ८ ॥

स० चं०—ज्ञानावरण १ दर्शनावरण २ वेदनीय ३ मोहनीय ४ आयु ५ नाम ६ गोत्र ७ अंतराय ८ ए आठ कर्मनिकी मूलप्रकृति है ॥ ८ ॥

आवरणमोहविग्घं घादी जीवगुणघादणत्तादो ।
आउगणामं गोदं वेयणियं तह अघादित्ति ॥ ९ ॥

आवरणमोहविघ्नं घाति जीवगुणघातनत्वात् ।
आयुष्कनाम गोत्रं वेदनीयं तथा अघातीति ॥ ९ ॥

जी० प्र०—ज्ञानावरणं दर्शनावरणं मोहनीयं अंतरायश्चेति चत्वारि घातिसंज्ञानि स्युः, कुतः ? जीवगुणघातकत्वात् । आयुष्यं नाम गोत्रं वेदनीयं चेति चत्वारि तथा जीवगुणघातकप्रकारेण न इत्यघातिसंज्ञानि स्युः ॥ ९ ॥ तत्र जीवगुणानाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—ज्ञानावरण १ दर्शनावरण २ मोहनीय ३ अंतराय ४ ए च्यारि घातिया हैं, जातैं ए जीवके गुणनिकौं घातैं हैं। बहुरि आयु १ नाम २ गोत्र ३ वेदनीय ४ ए तैसैं जीवनिके गुणनिकौं नाही घातैं हैं तातैं ए अघातिया हैं ॥ ९ ॥ तिन जीवनिके गुणनिकौं कहैं हैं—

केवलणाणं दंसणमणंतविरियं च खयियसम्मं च ।
खयियगुणे मदियादी खयोवसमिए य घादी दु ॥ १० ॥

केवलज्ञानं दर्शनमनन्तवीर्यं च क्षायिकसम्यक्त्वं च ।
क्षायिकगुणान् मत्यादीन् क्षायोपशमिकांश्च घातीनि तु ॥ १० ॥

जी० प्र०—केवलज्ञानं केवलदर्शनं अनंतवीर्यं क्षायिकसम्यक्त्वं चशब्दात्क्षायिकचारित्रं द्वितीयचशब्दात् क्षायिकदानादींश्च क्षायिकान्। तु-पुनः मतिश्रुतावधिमनःपर्ययाख्यान् क्षयोपशमकांश्च गुणान् घ्नंतीति घातीनि ॥ १० ॥ आयुःकर्मकार्यमाह—

स० चं०—केवलज्ञान केवलदर्शन अनंतवीर्य क्षायिकसम्यक्त्व चकारतैं क्षायिक चारित्र दूसरे चकारतैं क्षायिक दानादिक ५ ए तौ क्षायिकभाव, बहुरि मति श्रुत अवधि मनःपर्यय ज्ञानादिक क्षयोपशमिक ए जीवके गुण हैं। इनिकौं ज्ञानावरणादिक घातैं हैं तातैं तिनकौं घातिया कहिए ॥ १० ॥ आयुकर्मका कार्य कहैं हैं—

कम्मकयमोहवड्ढियसंसारम्हि य अणादिजुत्तम्हि ।
जीवस्स अवट्ठाणं करोदि आऊ हलिव्व णरं ॥ ११ ॥

कर्मकृतमोहवर्धितसंसारे च अनादियुक्ते ।
जीवस्यावस्थानं करोति आयुः हलीव नरं ॥ ११ ॥

जी० प्र०—आयुष्कर्मोदयः कर्मकृते अज्ञानासंयममिथ्यात्ववर्धिते अनादौ संसारे चतुर्गतिषु स्वच्छिद्रनियंत्रिततत्पादकाष्ठविशेष इव जीवस्यावस्थानं करोति ॥ ११ ॥ नामकर्मकार्यमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—आयुकर्मका उदय है सो कर्मकरि कीया अर अज्ञान असंयम मिथ्यात्वकरि वृद्धिको प्राप्त भया ऐसा अनादि संसार ताकेविषैं च्यारि गतिनिमें जीवका अवस्थानकौं करै है। जैसें काष्ठका खोडा अपने छिद्रमें जाका पग आया होय ताकी तहां ही स्थिति करावै तैसें आयुकर्म जिस गतिसंबंधी उदयरूप होइ तिस ही गतिविषैं जीवकी स्थिति करावै है ॥ ११ ॥ आगैं नामकर्मका कार्य कहै हैं—

गदिआदि जीवभेदं देहादी पोग्गलाण भेदं च।
गदियंतरपरिणमनं करेदि णामं अणेयविहं ॥ १२ ॥

गत्यादिजीवभेदं देहादि पुद्गलानां भेदं च।
गत्यंतरपरिणमनं करोति नाम अनेकविधं ॥ १२ ॥

जी० प्र०—गत्याद्यनेकविधं नामकर्म नारकादिर्जीवपर्यायभेदं औदारिकादिशरीरपुद्गलभेदं गत्यंतरपरिणमनं च करोति तेन तत् जीवपुद्गलक्षेत्रविपाकि भवति। चशब्दाद्भवविपाकि च ॥ १२ ॥ गोत्रकर्मकार्यमाह—

स० चं०—गति आदि अनेकप्रकार नामकर्म सो नारकादिक जीवके पर्यायनिके भेदकौं वा औदारिक शरीर आदिरूप पुद्गलके भेदकौं वा गतितैं अन्यगतिरूप परिणमनेको अनेकप्रकार करै है तातैं सो नाम कर्म जीवविपाकी वा पुद्गलविपाकी वा क्षेत्रविपाकी चकारतैं भवविपाकी जानना ॥ १२ ॥ आगैं गोत्रकर्मके कार्यकौं कहैं हैं—

संताणकमेणागयजीवायरणस्स गोदमिदि सण्णा।
उच्चं णीचं चरणं उच्चं णीचं हवे गोदं ॥ १३ ॥

संतानक्रमेणागतजीवाचरणस्य गोत्रमिति संज्ञा।
उच्चं नीचं चरणं उच्चैर्नीचैर्भवेत् गोत्रं ॥ १३ ॥

२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी॰ प्र॰—संतानक्रमेण आगतजीवाचरणस्य गोत्रमिति संज्ञा भवति । तत्र उच्चाचरणं उच्चैर्गोत्रं । नीचाचरणं नीचैर्गोत्रं ॥ १३ ॥ वेदनीयकर्मकार्यमाह—

स॰ चं॰—अनुक्रम परिपाटीतैं चल्या आया जो आचरण ताकौं गोत्र अैसी संज्ञा कहिए सो जहां ऊंचा उत्कृष्ट आचरण होइ सो उच्चगोत्र है। जहां नीचा निकृष्ट आचरण होइ सो नीच गोत्र है ॥ १३ ॥ आगैं वेदनीय कर्मके कार्यकौं कहैं हैं—

अक्खाणं अणुभवणं वेयणियं सुहसरूवयं सादं ।
दुक्खसरूवमसादं तं वेदयदीदि वेदणियं ॥ १४ ॥

अक्षाणामनुभवनं वेदनीयं सुखस्वरूपं सातं ।
दुःखस्वरूपमसातं तद्वेदयतीति वेदनीयं ॥ १४ ॥

जी॰ प्र॰—इंद्रियाणां अनुभवनं विषयावबोधनं वेदनीयं । तच्च सुखस्वरूपं सातं दुःखस्वरूपमसातं। वेदयति-ज्ञापयति इति वेदनीयं ॥ १४ ॥

स॰ चं॰—इंद्रियनिकैं अपने विषयनिका अनुभवन जानना सो वेदनीय है। तहां सुखस्वरूप साता है दुःखस्वरूप असाता है तिन सुख दुःखनिकौं 'वेदयाति, कहिए अनुभवन करावै सो वेदनीय कर्म है ॥ १४ ॥

अत्थं देक्खिय जाणदि पच्छा सद्दहदि सत्तभंगीहिं ।
इदि दंसणं च णाणं सम्मत्तं होंति जीवगुणा ॥ १५ ॥

अर्थं दृष्ट्वा जानाति पश्चात् श्रद्दधाति सप्तभंगीभिः ।
इति दर्शनं च ज्ञानं सम्यक्त्वं भवंति जीवगुणाः ॥ १५ ॥

जी॰ प्र॰—संसारी जीवः अर्थं दृष्ट्वा जानाति। तमेव पुनः सप्तभंगीभिर्निश्चित्य पश्चात् श्रद्दधाति इत्यनेन प्रकारेण दर्शनं ज्ञानं सम्यक्त्वं जीवगुणा भवंति ॥ १५ ॥ तदावरणानां पाठक्रममुपपत्तिपूर्वकमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—संसारी जीव पहिलैं पदार्थकौं देखकरि पीछैं जाने। बहुरि तिस पदार्थकौं अस्ति नास्ति इत्यादिक सप्तभंगीनिकरि निश्चयकरि पीछैं श्रद्धान करै है। सो इसप्रकार देखना सो दर्शन जानना सो ज्ञान श्रद्धान करना सो सम्यक्त्व ए जीवके गुण हो हैं ॥ १५ ॥ आगैं तिन गुणनिके आवरणका शास्त्रविषैं अनुक्रम कैसैं कह्या है? सो कहैं हैं—

अब्भरहिदादु पुव्वं णाणं तत्तो हि दंसणं होदि।
सम्मत्तमदो विरिमं जीवाजीवगदमिदि चरिमे॥ १६॥

अभ्यर्हितात् पूर्वं ज्ञानं ततो हि दर्शनं भवति।
सम्यक्त्वमतो वीर्यं जीवाजीवगतमिति चरमे॥ १६॥

जी० प्र०—अभ्यर्हितात् पूज्यात् ज्ञानं पूर्वं पठितं हि तथाहि–'लघुध्यजादल्पाजर्च्यं' इति सूत्रसद्भावात्। ततो दर्शनं भवति। अतः सम्यक्त्वं। वीर्यं तु जीवाजीवगतमिति चरमे पठितं॥ १६॥

स० चं०—आत्माके सर्वगुणनिविषैं ज्ञान अभ्यर्हित है पूज्य है प्रधान है तातैं पहिलैं कह्या है। व्याकरणविषैं भी कह्या है-'अल्पादर्च्यं, थोरे अक्षर जाकैं होइ तातैं भी प्रधानकौं पहिलै कहिए। बहुरि ताके पीछै दर्शन कह्या। ताकैं पीछैं सम्यक्त्व कह्या। बहुरि वीर्य है सो ज्ञानादिककी शक्तिरूप जीवविषैं पाइए है अर शरीरादिककी शक्तिरूप पुद्गलविषैं पाइए है तातैं सर्वके पीछैं अंतविषैं कह्या है। ऐसैं इनके आवरण ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय इनका अनुक्रम जानना॥ १६॥

घादीवि अघादिं वा णिस्सेसं घादणे असक्कादो।
णामतियाणिमित्तादो विग्घं पडिदं अघादिचरिमम्हि॥ १७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घात्यपि अघातीव निःशेषं घातने अशक्यात् ।
नामत्रयनिमित्ताद् विघ्नं पठितमघातिचरमे ॥ १७ ॥

जी० प्र०—अंतरायकर्म घात्यपि अघातिवत् निश्शेषजीवगुणघातेऽशक्यात् नामगोत्रवेदनीयनिमित्ताच्च अघातिनां चरमे पठितं ॥ १७ ॥

स० चं०—अंतराय नामा कर्म घातिया है तथापि अघातिया कर्मवत् है। समस्त जीवके गुण घातनेको समर्थ नाहीं है। नाम गोत्र वेदनीय इनि तीन कर्मनिके निमित्ततैं यहु है तातैं अघातियानिके पीछैं अंतविषैं अंतराय कर्म कह्या है ॥ १७ ॥

आउबलेण अवट्ठिदि भवस्स इदि णाममाउपुव्वं तु ।
भवमस्सिय णीचुच्चं इदि गोदं णामपुव्वं तु ॥ १८ ॥

आयुर्बलेन अवस्थितिः भवस्य इति नाम आयुःपूर्वं तु ।
भवमाश्रित्य नीचोच्चमिति गोत्रं नामपूर्वं तु ॥ १८ ॥

जी० प्र०—तु--पुनः--आयुर्बलाधानेन अवस्थितिः नामकार्यागतलक्षणभवस्येति हेतोः नामकर्म आयुष्कर्मपूर्वकं भवति । तु--पुनः भवमाश्रित्य नीचत्वमुच्चत्वं चेति हेतोः गोत्रकर्म नामकर्मपूर्वकं ॥ १८ ॥

स० चं०—बहुरि आयु नामा कर्मका बलकरि नामकर्मका कार्यभूत जो चतुर्गति रूप भव ताकी अवस्थिति है तातैं आयु कर्म पहिलैं कहि नाम कर्म कह्या। बहुरि चतुर्गतिरूप भवहीका आश्रयकरि नीचपणा वा उच्चपणा है तातैं पहिलैं नामकर्म कहि गोत्रकर्म कह्या है ॥ १८ ॥

घादिंव वेयणीयं मोहस्स बलेण घाददे जीवं ।
इदि घादीणं मज्झे मोहस्सादिम्हि पढिदं तु ॥ १९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घातिवत् वेदनीयं मोहस्य बलेन घातयति जीवं ।
इति घातिनां मध्ये मोहस्यादौ पठितं तु ॥ १९ ॥

जी० प्र०—घतिकर्मवत् वेदनीयं कर्म मोहनीयविशेषरत्यरत्युदयबलेनैव जीवं घातयति सुखदुःखरूपसातासातनिमित्तेंद्रियविषयानुभवने न हंतीति घातिनां मध्ये मोहनीयस्य आदौ पठितं ॥ १९ ॥

स० चं०—वेदनीय नामा कर्म सो घातिया कर्मवत् मोहनीय कर्मका भेद जो रति अरति तिनके उदयकालकरि ही जीवकौं घातैं है। सुख दुःखस्वरूप साता असाताकौं कारण इंद्रियनिका विषय तिनका अनुभवन कराइ घात करै हैं तातैं घातिया कर्मनिके वीचि मोहनीय कर्मके पहिलैं वेदनीय कर्म कह्या है ॥ १९ ॥

णाणस्स दंसणस्स य आवरणं वेयणियमोहणियं ।
आउगणामं गोदंतरायमिदि पढिदमिदि सिद्धं ॥ २० ॥

ज्ञानस्य दर्शनस्य चावरणं वेदनीयमोहनीयम् ।
आयुष्कनाम गोत्रांतरायमिति पाठितमिति सिद्धं ॥ २० ॥

जी० प्र०—ज्ञानावरणीयं दर्शनावरणीयं वेदनीयं मोहनीयं आयुः नाम गोत्रं अंतरायः इति प्रागुक्तपाठक्रम एवं सिद्धः तेषां निरुक्तिरुच्यते—ज्ञानमावृणोतीति ज्ञानावरणीयं तस्य का प्रकृतिः ? ज्ञानप्रच्छादनता । किंवत् ? देवतामुखवस्त्रवत् । दर्शनमावृणोतीति दर्शनावरणीयं । तस्य का प्रकृतिः ? दर्शनप्रच्छादनता । किंवत् ? राजद्वारप्रतिनियुक्तप्रतीहारवत् । वेदयतीति वेदनीयं । तस्य का प्रकृतिः ? सुखदुःखोत्पादनता । किंवत् ? मधुलिप्तासिधारावत् । मोहयतीति मोहनीयं । तस्य का प्रकृतिः ? मोहोत्पादनता । किंवत् मद्यधत्तूरमदनकोद्रववत् । भवधारणाय एति गच्छतीति आयुः तस्य का प्रकृतिः भवधारणता । किंवत् ? हलिवत् । नाना मिनोतीति नाम । तस्य का प्रकृतिः ? नरनारकादि नानाविधिकरणता । किंवत् ? चित्रकवत् । उच्चनींचं गमयतीति गोत्रं । तस्य का प्रकृतिः उच्चनीचत्वप्रापकता । किंवत् ? कुंभकारवत् । दातृपात्रयोरंतरमेतीति अंतरायः । तस्य का प्रकृतिः ? विघ्नकरणता । किंवत् ? भांडागारिकवत् ॥ २० ॥ उक्तदृष्टांतानाह—

स० चं०—ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय वेदनीय मोहनीय आयु नाम गोत्र अंतराय ऐसैं अनुक्रमतैं पाठ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कह्या सो पूर्वोक्तप्रकार सिद्ध भया अब इनिकी निरुक्ति कहिए है—

ज्ञानं आवृणोति कहिए ज्ञानकौं आवरै आच्छादै सो ज्ञानावरणीय है। याकी यहु प्रकृति है जो जैसें देवताका मुखके ऊपरि वस्त्र देवताके विशेष ज्ञानकौं होने दे नाही तैसें ज्ञानावरण ज्ञानकौं अच्छादै है। बहुरि दर्शनं आवृणोति कहिए दर्शनको आवरै सो दर्शनावरणीय है याकी यहु प्रकृति है जैसें राजद्वारविषैं तिष्ठता द्वारपाल सो राजाकौं देखने दे नाही तैसें दर्शनावरण दर्शनकौं आच्छादै है। बहुरि वेदयति कहिए सुख दुःखका अनुभव करावै सो वेदनीय है याकी यहु प्रकृति है जैसें सहततैं लपेटी खड्गकी धारा सुख दुःखकौ कारण है तैसें वेदनीय सुख दुःखकौं उपजावै है। बहुरि मोहयाति कहिए मोह-असावधान करै सो मोहनीय है याकी यहु प्रकृति है जैसें मादिरा वा धत्तूरा वा मादक कोदौ ए भक्षण कीए हूए असावधान करैं है तैसें मोह आत्माको मोहित करै है। बहुरि एति कहिए पर्याय धारनेके निमित्ति प्राप्त होइ सो आयु है याकी प्रकृति यहु है जो जैसें मांकल वा खोडा पुरुषकौं स्थानविषैं स्थित राखै तैसें आयु पर्यायविषैं स्थित राखै है। बहुरि नाना मिनोति कहिए नाना प्रकार कार्य निष्पादन करै सो नाम है। याकी यहु प्रकृति है जैसे चतेरा अनेक चित्राम वनावै तैसें नाम नर नारकादिक अनेक रूप करै है। बहुरि 'गमयति' कहिए उच्च नीच पणांकौ प्राप्त करै सो गोत्र है याकी यहु प्रकृति है जैसे कुमार मृतिकाका ऊंचा नीचा वासण करै तैसे गोत्र आत्माकौं उच्च नीच दशाकौं प्राप्त करै है। बहुरि अंतरं एति कहिए दाता पात्र इत्यादिकविषैं परस्पर अंतरकौ प्राप्त करै सो अंतराय है याकी यहु प्रकृति है जैसें भंडारी देनेविषैं विघन करै तैसें अंतराय दानादिकविषैं विघन करै है॥ २०॥ अब जे दृष्टांत कहे तिनहीकौं कहै हैं—

पडपडिहारसिमज्जाहलिचित्तकुलालभंडयारीणं।
जह एदेसिं भावा तहवि य कम्मा मुणेयव्वा॥ २१॥ १४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पटप्रतीहारासिमद्यहलिचित्रकुलालभांडागारिकाणां ।
यथा एतेषां भावा तथैव च कर्माणि मंतव्यानि ॥ २१ ॥

जी० प्र०—देवतामुखवस्त्र-राजद्वारप्रतिनियुक्तप्रतीहार-मधुलिप्तासिधारा-मद्य-हलि-चित्रक-कुलाल-भांडागारिकाणां एतेषां भावा यथा तथैव कर्माणि मंतव्यानि ॥ २१ ॥ उत्तरप्रकृत्युत्पत्तिक्रममाह—

स चं०—देवताका मुख ऊपरि वस्त्र, राज द्वारविषैं तिष्ठता द्वारपाल, सहत लपेटी खड्गकी धारा, मदिरा, खोडा, चतेरा, कुमार, भंडारी, जैसे इनिके भाव हैं तैसें कर्मनिके स्वभाव जानने ॥ २१ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिकी उत्पत्तिका अनुक्रम कहैं हैं—

पंच णव दोण्णि अट्ठावीसं चउरो कमेण तेणउदी ।
तेउत्तरं सयं वा दुगपणगं उत्तरा होंति ॥ २२ ॥

पंच नव द्वौ अष्टाविंशतिः चत्वारः क्रमेण त्रिनवतिः ।
त्र्युत्तरं शतं वा द्विकपंचकमुत्तरा भवंति ॥ २२ ॥

जी० प्र०—ज्ञानावरणादीनां यथासंख्यमुत्तरभेदाः पंच नव द्वौ अष्टाविंशतिः चत्वारः त्रिनवतिः त्र्युत्तरशतं वा द्वौ पंच भवंति। तद्यथा—ज्ञानावरणीयं पंचविधं-अभिनिबोधिकश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानावरणीये केवलज्ञानावरणीयं चेति । दर्शनावरणीयं नवविधं स्त्यानगृद्धि-निद्रा-निद्रानिद्रा-प्रचला-प्रचलाप्रचलाचक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणीयं केवलदर्शनावरणीयं चेति ॥ २२ ॥

ज्ञानावरणादिक कर्मनिकी उत्तर प्रकृति अनुक्रमतैं पांच ५ नव ९ दोय २ अट्ठाईस २८ च्यारि ४ त्रेणवै ९३ अथवा एकसौ तीन १०३ दोय २ पांच ५ जाननी सोई कहै हैं—

स चं०—ज्ञानावरणीय दर्शनावरणीय वेदनीय मोहनीय आयु नाम गोत्र अंतराय ए आठ मूल प्रकृति है। तहां ज्ञानावरणीय पांच प्रकार है मतिज्ञानावरणीय श्रुतज्ञानावरणीय अवधि ज्ञानावरणीय मनः पर्ययज्ञानावर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णीय च्यारि ए अर एक केवलज्ञानावरणीय ऐसैं पांच भेद हैं। बहुरि दर्शनावरणीय नव प्रकार है स्त्यानगृद्धि निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला निद्रा प्रचला ए पंच निद्रा अर चक्षुदर्शनावरणीय अचक्षुदर्शनावरणीय अवधि दर्शनावरणीय ए तीन अर केवल दर्शनावरणीय ऐसैं नव भेद जानने ॥ २२ ॥

थीणुदयेणुट्ठविदे सोवदि कम्मं करेदि जप्पदि य।
णिद्दाणिद्दुदयेण य ण दिट्ठिमुग्घादिदुं सक्को ॥ २३ ॥

स्त्यानगृद्ध्युदयेन उत्थापिते स्वपिते कर्म करोति जल्पति च।
निद्रानिद्रोदयेन च न दृष्टिमुद्घाटयितुं शक्यः ॥ २३ ॥

जी० प्र०—स्त्यानगृद्धिदर्शनावरणीयोदयेनोपस्थापितेऽपि स्वपिति। निद्रायां कर्म करोति। जल्पति च। निद्रानिद्रोदयेन बहुधा सावधानीक्रियमाणोऽपि दृष्टिमुद्घाटितुं न शक्नोति ॥ २३ ॥

स्त्यानगृद्धि दर्शनावरणीयके उदयकरि उठाया हुवा भी सूता रहैं उस निद्रा ही विषैं अनेक कार्य करै बोलै किछू सावधानी न होइ। बहुरि निद्रानिद्राके उदयकरि बहुत प्रकार सावधानी करै परन्तु नेत्र उघाड़नेकौं समर्थ न होइ ॥ २३ ॥

पयलापयलुदयेण य वहेदि लाला चलंति अंगाइं।
णिद्दुदये गच्छंतो ठाइ पुणो वइसइ पडेई ॥ २४ ॥

प्रचलाप्रचलोदयेन च वहति लाला चलन्ति आङ्गानि।
निद्रोदये गच्छन् तिष्ठति पुनः विशति पतति ॥ २४ ॥

जी० प्र०–प्रचलाप्रचलोदयेन मुखात् लाला वहंति। अंगानि चलंति। निद्रोदयेन गच्छन् तिष्ठति। स्थितः पुनरुपविशति। पतति च ॥२४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स चं०—प्रचलाप्रचलाके उदयकरि मुखतैं लाल वहै हस्त पादादिक अंग चलरूप होंइ । बहुरि निद्राके उदयकरि चालता थका खड़ा रहिजाय, खड़ा वैठि जाइ, गिर पड़े ऐसैं होइ ॥ २४ ॥

पयलुदयेण य जीवो ईसुम्मीलिय सुवेइ सुत्तोवि।
ईसं ईसं जाणदि मुहुं मुहुं सोवदे मंदं॥ २५ ॥

प्रचलोदयेन च जीव ईषदुन्मील्य स्वपिति सुप्तोपि।
ईषदीषज्जानाति मुहुर्मुहुः स्वपिति मन्दम् ॥ २५ ॥

जी० प्र०—प्रचलोदयेन जीवः ईषदुन्मील्य स्वपिति । सुप्तोऽपि ईषदीषज्जानाति । मुहुर्मुहुर्मंदं स्वपिति । वेदनीयं द्विविधं-सातवेदनीयमसातवेदनीयं चेति । तत्र रतिमोहनीयोदयबलेन जीवस्य सुखकारणेंद्रियविषयानुभवनं कारयति तत्सातवेदनीयं । दुःखकारणेंद्रियविषयानुभवनं कारयति अरति मोहनीयोदयबलेन तदसातवेदनीयं। मोहनीयं द्विविधं दर्शनमोहनीयं चारित्रमोहनीयं चेति । तत्र दर्शनमोहनीयं बंधविवक्षया मिथ्यात्वमेकविधं उदयं सत्त्वं प्रतीत्य मिथ्यात्वं सम्यग्मिथ्यात्वं सम्यक्त्वप्रकृतिश्चेति त्रिविधं ॥ २५ ॥ तस्योपपत्तिमाह-—

स चं०—प्रचलाके उदयकरि जीव किछू एक नेत्रकौं उघारि करि सोवै। सूता हुवा भी ईषत् ईषत् किछू किछू जान्या करै। मुहुर्मुहुः बारंबार मंद सोवै। सूता अर जाग्या ऐसै वारंबार सोवै।

बहुरि वेदनीय दोय-प्रकार साता वेदनीय असातावेदनीय तहां साता मोहनीय कर्मका उदयके बल करि जीवकौं सुखका कारण जो इंद्रियनिका विषय ताका अनुभवनकौं करावैं सो साता वेदनीय है। बहुरि अरति मोहनीयके उदयके वलकरि दुःखका कारण जो इंद्रियनिका विषय ताका अनुभवन करावै सो असाता वेदनीय है। बहुरि मोहनीय दोय प्रकार है—दर्शन मोहनीय १ चारित्र मोहनीय २। तहां दर्शनमोहनीय बंधकी अपेक्षा मिथ्यात्वरूप एक प्रकार है। उदय सत्वकी अपेक्षा मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व प्रकृति ऐसे तीन प्रकार है सो ए तीन भेद कैसे हो हैं ? सो कहैं हैं—॥ २५ ॥ १७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जंतेण कोद्दवं वा पढमुवसमसम्मभावजंतेण ।
मिच्छं दव्वं तु तिधा असंखगुणहीणदव्वकमा ॥ २६ ॥

यन्त्रेण कोद्रवं वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वभावयन्त्रेण ।
मिथ्यात्वं द्रव्यं तु त्रिधा असंख्यगुणहीनद्रव्यक्रमात् ॥ २६ ॥

जी० प्र०—यंत्रेण घरट्टेन कोद्रवो दलितो यथा तुषतंडुलकणिकारूपेण त्रिधा भवति तथा प्रथमोपशमसम्यक्त्वभावयंत्रेण मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतिस्वरूपेण असंख्यातगुणहीनद्रव्यक्रमेण त्रिधा भवति । तद्यथा—

आयुर्वर्जितसप्तकर्मद्रव्यं किंचिदूनद्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं स ३ १२–/७ तत्सप्तभिर्भक्तं मोहनीयस्य स्यात् स ३ १२–/७ । तत्रानंतबहुभागो देशघातिनः इत्येकभागः सर्वघातिनः स ३ १२–/७ ख तच्च मिथ्यात्वषोडशकषायाणां दातुं सप्तदशभिर्भक्तं मिथ्यात्वस्यैतावत् स ३ १२–/७ ख १७ । इदं प्रथमोपशमसम्यक्त्वकालांतर्मुहूर्तस्य प्रथमसमयात्प्रभृतिचरमसमयपर्यंतं प्रतिसमयं गुणसंक्रमभागहारेण अपकृष्यापकृष्य असंख्यातगुणहीनक्रमेण मिथ्यात्वसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण त्रिपुंजीकरोति तथासति तच्चरमसमयेप्येवं तिष्ठति—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

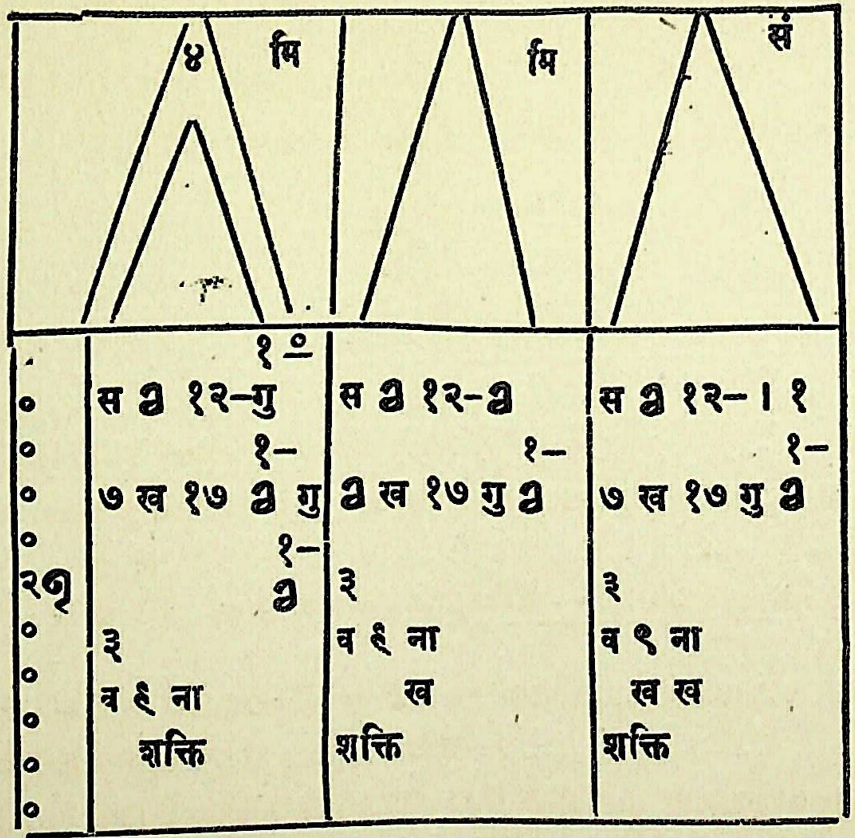

मिथ्यात्वस्य मिथ्यात्वकरणं तु अतिस्थापनावलिमात्रं पूर्वस्थितावूनितमित्यर्थः । एतद्विधानं मनसि कृत्वा असंख्यातगुणहीनद्रव्यक्रमेण

मिथ्यात्वद्रव्यं त्रिधा स्यात् इति आचार्येणोक्तं ।

चारित्रमोहनीयं द्विविधं—कषायवेदनीयं नोकषायवेदनीयं चेति । तत्र कषायवेदनीयं षोडशविधं क्षपणां प्रतीत्य अनंतानुबंधिक्रोधमानमायालोभं,

अप्रत्याख्यानक्रोधमानमायालोभं, प्रत्याख्यानक्रोधमानमायालोभं, क्रोधसंज्वलनं मानसंज्वलनं मायासंज्वलनं लोभसंज्वलनं चेति । प्रक्रमद्रव्यं विभं-

जनद्रव्यं प्रतीत्य अनंतानुबंधिलोभमायाक्रोधमानं संज्वलनलोभमायाक्रोधमानं प्रत्याख्यानलोभमायाक्रोधमानं अप्रत्याख्यानलोभमायाक्रोधमानं

चेति । नोकषायवेदनीयं नवविधं पुरुषस्त्रीनपुंसकवेदं रत्यरतिहास्यशोकभयजुगुप्साश्चेति । आयुष्यं चतुर्विधं नरकायुष्यं तिर्यग्मनुष्यदेवायुष्कं चेति । १९

नामकर्म द्वाचत्वारिंशद्विधं पिंडापिंडप्रकृतिभेदेन गतिजातिशरीरबंधनसंघातसंस्थानांगोपांगसंहननवर्णगंधरसस्पर्शानुपूर्व्यागुरुलघुकोपघातपरघातोच्छ्वा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सातपोद्योतविहायोगतित्रसस्थावरबादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तप्रत्येकसाधारणशरीरस्थिरास्थिरशुभाशुभसुभगदुर्भगसुस्वरदुःस्वरादेयानादेययशोऽयशस्कीर्ति-निर्माणतीर्थंकरनामेति ।

तत्र गतिनाम चतुर्विधं—नारकतिर्यग्गतिनाम मनुष्यदेवगतिनाम चेति । जातिनाम पंचविधं—एकेंद्रियद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियजातिनाम पंचेंद्रियजाति नाम चेति । शरीरनामपंचविधं—औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणशरीरनामेति ॥ २६ ॥ एषां पंचशरीराणां भंगानाह—

स चं०—यंत्र कहिए घरटी ताकरि दले हूए कोदों जैसे तुस तंदुल कणी इनि तीनि अवस्थाको प्राप्त हो हैं तैसें प्रथमोपशम सम्यक्त्व रूप भाव यंत्रकरि एक मिथ्यात्व प्रकृतिका द्रव्य जो परमाणूनिका समूह सो मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व प्रकृति इनि तीन प्रकृतिरूप होइ असंख्यात गुणां घाटि द्रव्यका अनुक्रमकरि तीन प्रकार हो है सोई कहिए हैं—

आयु विना सात कर्मनिकी परमाणूनिका प्रमाण किंचित् ऊन ड्योढ गुण हानिकरि समय प्रवद्धकौ गुणें जो प्रमाण होइ तितना है ताकौं सातका भाग दीएं जो प्रमाण आवै तितने मोहनीयके परमाणू है। याकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण सर्व घाती प्रकृतिनिके परमाणू हैं। अवशेष देश घातिया प्रकृतिनिके परमाणू हैं। बहुरि तिस एक भागकौं एक मिथ्यात्व अर सोलह कषाय इनिका भाग करनेकौं सतरहका भाग दीए जो प्रमाण आवैं तितने मिथ्यात्व प्रकृतिके परमाणू है। सो इहां प्रथमोपशमसम्यक्त्वका अंतर्मुहूतकाल ताके प्रथम समयतैं लगाइ अंतके समय पर्यंत गुण संक्रम भागहार करि तिस मिथ्यात्वके परमाणूनिके प्रमाणकौं अपकर्षण करि करि ताके तीन पुंज करै। तहां मिथ्यात्वके जितने परमाणू हैं इनतैं असंख्यात गुणे घाटि सम्याग्मिथ्यात्वके परमाणू हैं। इनितैं असंख्यात गुणे घाटि सम्यक्त्व प्रकृतिके परमाणू है ऐसे होतैं ताके अंतके समयविषैं भी ऐसे ही तिष्ठैं है ऐसे एक मिथ्यात्वके परमाणू तीन पुंजरूप भए। इहां मिथ्यात्व तो था ही ताकौं मिथ्यात्व रूप कहा कीया ? ताका समाधान—पूर्वें जो स्थिति थी तामैं स्यों अतिस्थापनावली प्रमाण घटाइ दीया ऐसैं विधान मनमें धारि आचार्य कह्या जो असख्यात गुणां घाटि द्रव्यका अनुक्रम करि मिथ्यात्व द्रव्य तीन प्रकार है।

बहुरि चारित्र मोहनयि दोय प्रकार-कषायवेदनीय १ नोकषायवेदनीय २। तहां कषायवेदनीय सोलह प्रकार

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो इनिका क्षय होनेका अनुक्रमकरि कहिए तो अनुक्रमतैं ऐसें कहिए—अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ, अप्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, प्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ, क्रोध संज्वलन मान संज्वलन माया संज्वलन लोभ सज्वलन, ए सोलह भेद जानने। बहुरि प्रदेश बंधविषैं परमाणूनिका वटवारा है ताका अपेक्षा कहिए तौ इस अनुक्रमतैं कहिए अनंतानुबंधी लोभ माया क्रोध मान, संज्वलन लोभ माया क्रोध मान, प्रत्याख्यान लोभ माया क्रोध मान, अप्रत्याख्यान लोभ माया क्रोध मान ऐसै अनुक्रमतैं कहिए सो ए सोलह भेद तौ कषायवेदनीयके हैं। बहुरि नोकषाय वेदनीय नवप्रकार पुरुष स्त्री नपुंसक वेद ३ रति अरति हास्य शोक भय जुगुप्सा ६ ए नव जानने। बहुरि आयुकर्म च्यारि प्रकार है नरकायु १ तिर्यंच २ मनुष्य ३ देव आयु ४। बहुरि नामकर्म वियालीस प्रकार पिंड अपिंड भेदकरि है। गति १ जाति २ शरीर ३ बंधन ४ संघात ५ संस्थान ६ अंगोपांग ७ संहनन ८ बर्ण ९ गंध १० रस ११ स्पर्श १२ आनुपूर्वी १३ अगुरु लघुक १४ उपघात १५ परघात १६ उश्वास १७ आतप १८ उद्योत १९ विहायो गति २० त्रस २१ स्थावर २२ वादर २३ सूक्ष्म २४ पर्याप्त २५ अपर्याप्त २६ प्रत्येक शरीर २७ साधारण शरीर २८ स्थिर २९ अस्थिर ३० शुभ ३१ अशुभ ३२ सुभग ३३ दुर्भग ३४ सुस्वर ३५ दुःस्वर ३६ आदेय ३७ अनादेय ३८ यशः कीर्ति ३९ अयशः कीर्ति ४० निर्माण ४१ तीर्थंकर ४२ ए वियालीस भेद हैं। तहां चौदह पिंड प्रकृति है तिनिके भेद कहिए है—

गति नाम च्यारि प्रकार-नरकगति १ तिर्यंचगति २ मनुष्यगति ३ देवगति ४। जातिनाम पांच प्रकार-एकेंद्री बे इंद्री तेइंद्री चौइंद्री ४ पचेंद्री ५ जाति शरीर नाम पांचप्रकार—औदारिक शरीर १ वैक्रियिक शरीर २ आहारक शरीर ३ तैजस शरीर ४ कार्माण शरीर ५। २६। इनि पंच शरीरनिके भंग कहैं हैं—

तेजाकम्मेहिं तिए तेजा कम्मेण कम्मणा कम्मं।
कयसंजोगे चदुचदुचदुदुग एक्कं च पयडीओ॥ २७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तैजसकार्म्मणाभ्यां त्रये तैजसं कार्म्मणेन कार्म्मणेन कार्म्मणं ।
कृतसंयोगे चतुश्चतुश्चतुर्द्विकमेकं च प्रकृतयः ॥ २७॥

जी॰ प्र॰—औदारिकवैक्रियिकाहारकत्रये तैजसकार्मणाभ्यां संयोगे कृते चतस्रश्चतस्रश्चतस्रः प्रकृतयः । तद्यथा—औदारिकौदारिक—औदारिकतैजस—औदारिककार्मण—औदारिकतैजसकार्मणाः । एवं वैक्रियिकाहारकेऽपि ज्ञातव्याः । पुनः तैजसे कार्मणेन संयोगे कृते तदा तैजसतैजस-तैजसकार्मणेति द्वे प्रकृती । पुनः कार्मणं कार्मणेन तदा कार्मणकार्मणेत्येका । एवं पंचदश भवंति । एतासु औदारिकौदारिकादयः कार्मणकार्मणांताः सदृशद्विसंयोगाः पंच पुनरुक्ता इति त्यक्त्वा शेषदशसु त्रिनवत्यां निक्षिप्तासु त्र्युत्तरं शतं नामकर्मोत्तरप्रकृतयो भवंति ।

शरीरबंधननामपंचविधं-औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजकार्मणशरीरबंधननामेति । शरीरसंघातनाम पंचविधं-औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसकार्मणशरीरसंघातनामेति । शरीरसंस्थानं नाम षड्विधं—समचतुरस्रसंस्थानं नाम न्यग्रोधपरिमंडलस्वातिकुब्जवामनहुंडशरीरसंस्थाननाम चेति । शरीरांगोपांगनामत्रिविधं—औदारिकवैक्रियिकाहारकशरीरांगोपांगनामेति ॥ २७ ॥

स चं॰—औदारिक वैक्रियिक आहारक इनि तीनों विषैं तैजस कार्माण सहित संयोग कीए च्यारि च्यारि भंग भए ते कहिए हैं। औदारिक औदारिक १ औदारिक तैजस २ औदारिक कार्माण ३ औदारिक तैजस कर्माण ४ ए च्यारि भए। बहुरि वैक्रियिक वैक्रियिक १ वैक्रियिक तैजस २ वैक्रियिक कार्माण ३ वैक्रियिक तैजस कार्माण ४ ए च्यारि भए। बहुरि आहारक आहारक १ आहारक तैजस २ आहारक कार्माण ३ आहारक तैजस कार्माण ए च्यारि भए। बहुरि तैजस कार्माणके संयोगतें दोय भंग हो हैं—तैजस तैजस १ तैजस कार्माण २ ए दोय भये। बहुरि कार्माण कर्माणके संयोगते एक भंग हो है कार्माणकार्माण १ यहु एक भया। ऐसैं सब मिले हुवे पंद्रह भेद भये इहां शरीरनिकै परस्पर संयोगतें भेद कहे हैं जैसैं चक्रवर्त्यादिकके औदारिक शरीर था उससे और औदारिक भए तहां

१	औ	औ औ	औ तै	औ का	औ तै का	४
	वै	वै वै	वै तै	आ का	वै तौ का	४
	आ	आ आ	आ तै		आ तै का	४
	तै	तै तै	तै का	२		
	का	का	का	१		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

औदारिक औदारिक कहिए ऐसैं ही यथासंभव और भी भेद जानने। इनिविषैं औदारिक औदारिक वैक्रियिक वैक्रियिक आहारक आहारक तैजस तैजस कार्माण कार्माण ए पंच भेद, ऊपरि औदारिकादिक शरीर कहे थे तहां गर्भित भए जैसे औदारिकतैं औदारिकका संयोग कह्या तहां दोऊ सदृश हैं ताते ऊपरि शरीर प्रकृतिके भेदनिविषैं औदारिक शरीर कह्या तहां गर्भित भया। ऐसै ही और ग्यारिका गर्भितपनां जानना। तातैं पद्रहमैस्यों पांच घटाए दश रहे सो नाम कर्मकी त्रैणवै प्रकृतिनिविषैं ए दश प्रकृति मिलाइए तव नाम कर्मकी एकसौ तीन १०३ प्रकृति हो हैं। बहुरि शरीर बंधन नाम पांच प्रकार–औदारिक शरीर बंधन १ वैक्रियिक शरीर बंधन २ आहारक शरीर बंधन ३ तैंजस शरीर बंधन ४ कार्माण शरीर बंधन ५ बहुरि शरीरसंघात नाम पांच प्रकार औदारिक शरीर संघात १ वैक्रियिक शरीर संघात २ आहारक शरीर संघात ३ तैजस शरीर संघात ४ कार्माण शरीर संघात ५। बहुरि शरीर संस्थान नाम छह प्रकार– समचतुरस्र संस्थान १ न्यग्रोध परिमंडल २ कुब्ज ३ स्वाति ४ वामन ५ हुंडसंस्थान ६। बहुरि शरीर अंगोपांग नाम तीनप्रकार–औदारिक शरीर अंगोपांग १ वैक्रियिक शरीर अंगोपांग आहारक शरीर अंगोपांग तैजस कार्माणके अंगोपांगका अभाव है॥ २७॥

णलया बाहू य तहा णियंबपुट्ठी उरो य सीसो य।

अट्ठेव दु अंगाइं देहे सेसा उवंगाई॥ २८॥

नलकौ बाहू च तथा नितम्बपृष्ठे उरश्च शीर्षं च।

अष्टैव तु अङ्गानि देहे शेषाणि उपाङ्गानि॥ २८॥

जी० प्र०—नलकौ पादौ तथा बाहू हस्तौ नितंबः परभागः उरः शीर्षं चेत्यष्टौ चांगानि। शेषाणि देहे उपांगानि भवंति। संहनननाम षड्विधं वज्रर्षभनाराचशरीरसंहननाम वज्रनाराचार्धनाराचकीलितासंप्राप्तसृपाटिकाशरीरसंहनननाम चेति॥ २८॥

स चं०– नलकौ कहिए दोय पग अर बाहू कहिए दोय हाथ अर नितंब कहिए एक दूगो परभाग कहिए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक पीठ उरः कहिए एक हृदय शीर्ष कहिए एक मस्तक ए शरीरविषैं आठ अंग हैं। इनि विना और सर्व उपांग जानने। बहुरि संहनन नाम छह प्रकार— वज्र वृषभ नाराच शरीर संहनन १ वज्र नाराच २ नाराच ३ अर्धनाराच ४ कीलित ५ असंप्राप्तासृपाटिका शरीरसंहनन ॥ २८ ॥

सेवट्टेण य गम्मइ आदीदो चदुसु कप्पजुगलोत्ति।
तत्तो दुजुगलजुगले खीलियणारायणद्धोत्ति ॥ २९ ॥

सृपाटेन च गम्यते आदितः चतुर्षु कल्पयुगल इति।
ततः द्वियुगलयुगले कीलितनाराचार्द्ध इति॥ २९ ॥

जी० प्र०—सृपाटिकासंहननेन सौधर्मद्वयाल्लांतवद्वयपर्यंतं चतुर्षु युगलेषु उत्पद्यते। तत उपरि युग्मद्वये युग्मद्वये क्रमेण कीलितार्धनाराच संहननाभ्यामुत्पद्यते ॥ २९ ॥

स चं०—सृपाटिका संहननकरि संयुक्त जीव स्वर्गविषैं उपजैं तो सौधर्म युगलतै लांतव युगलपर्यंत च्यारि युगलनिविषैं उपजैं। बहुरि ताके ऊपरि दोय युगलनिविषैं शतार युगलपर्यंत कीलित संहनन युक्त जीव उपजैं। बहुरि ताके ऊपरि दोय युगलनिविषैं आरण अच्युत पर्यंत अर्धनाराच संहननयुक्त जीव उपजै हैं॥ २९ ॥

णवगेविज्जाणुद्दिसणुत्तरवासीसु जांति ते णियमा।
तिदुगेगे संघडणे णारायणमादिगे कमसो ॥ ३० ॥

नवग्रैवेयिकानुदिशानुत्तरवासिषु यान्ति ते नियमात्।
त्रिद्विकैकेन संहननेन नाराचादिकेन क्रमशः ॥ ३० ॥

जी० प्र०—नाराचादिना संहननत्रयेण वज्रनाराचादिना द्वयेन वज्रर्षभनाराचैकेन चोपलक्षिताः ते जीवाः क्रमशः नवग्रैवेयकनवानुदिशपंचानुत्तरविमानवासिषु उत्पद्यंते ॥ ३० ॥ २४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स चं०—नाराच वज्रनाराच वज्रवृषभ नाराच इन तीन संहननवाले जीव नवग्रैवेयक पर्यंत उपजैं। बहुरि वज्रनाराच वज्रवृषभनाराच इन दोऊ संहनवाले जीव नव अनुदिशविमान पर्यंत उपजे। बहुरि वज्रवृषभनाराच एक सहननवाला जीव पंच अनुत्तर वासी देवनिपर्यंत उपजै नियमकरि ऐसैं जानना ॥ ३० ॥

सण्णी छस्संहडणो वज्जदि मेघं तदो परं चापि।
सेवट्टादीरहिदो पण पणचदुरेगसंहडणो ॥ ३१ ॥

संज्ञी षट्संहननो व्रजति मेघां ततः परं चापि।
सृपाटाविरहितः पञ्चमीं पञ्चचतुरेकसंहननः ॥ ३१ ॥

जी० प्र०—संज्ञीजीवः षट्संहननः मेघां व्रजति–तृतीयपृथ्वीपर्यंतमुत्पद्यते इत्यर्थः। ततः परं चापि असृपाटिकादिरहितः कीलितांतपंचसंहननः अरिष्टांतपंचपृथिवीषु उत्पद्यते। अर्धनाराचांतचतुःसंहननः मघव्यंतषट्पृथ्वीषु उत्पद्यते। वज्रर्षभनाराचसंहननः माघव्यंतसप्तपृथ्वीषु उत्पद्यते ॥३१॥

स चं०—छह संहननयुक्त सैनी जीव नरकविषैं उपजै तो मेघा नाम तीसरी पृथ्वीपर्यंत उपजे। सृपाटिक विना पंच संहनवाले जीव अरिष्टा नामा पांचमी पृथ्वीपर्यंत उपजै। सृपाटिका कीलित विना च्यारि संहनवाले जीव मघवी नाम छठी पृथ्वीपर्यंत उपजैं। एक वज्रवृषभ नाराचवाले जीव माघवी नामा सातवी पृथ्वी पर्यंत उपजै हैं॥३१॥

अंतिमतियसंहडणस्सुदओ पुण कम्मभूमिमहिलाणं।
आदिमतिगसंहडणं णत्थित्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥ ३२ ॥

अन्तिमत्रयसंहननस्योदयः पुनः कर्मभूमिमहिलानां।
आदिमत्रिकसहननं नास्तीति जिनैर्निर्दिष्टम् ॥ ३२ ॥

जी० प्र०—कर्मभूमिस्त्रीणां अर्धनाराचाद्यंत्यत्रिसंहननोदय एव नाद्यसंहननत्रयोऽस्तीति जिनैर्निर्दिष्टं ॥ ३२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्णनाम पंचविधं-कृष्णनीलरुधिरपीतशुक्लवर्णनामेति। गंधनाम द्विविधं सुगंधदुर्गंधनामेति। रसनामपंचविधं-तिक्तकटुकषायाम्लमधुरनामेति। स्पर्शनामाष्टविधं कर्कशमृदुकगुरुलघुरूक्षस्निग्धशीतोष्णस्पर्शनामेति। आनुपूर्वीनामचतुर्विधं नरकतिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्वीनाम मनुष्यदेवगतिप्रायोग्यानुपूर्वीनामेति च। अगुरुकलघुकोपघातपरघातोच्छ्वासातपोद्योतनामेति। विहायोगतिनामद्विविधं प्रशस्तविहायोगतिनाम अप्रशस्तविहायोगतिनाम चेति। त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकशरीरस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तिनिर्माणतीर्थकरनामेति। स्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणशरीरास्थिराशुभदुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्तिनामेति नामकर्मोत्तरप्रकृतयस्त्रिनवतिस्त्र्युत्तरशतं वा भवंति।

स चं०—कर्मभूमिविषैं महिला जे स्त्री तिनके अर्धनाराच कीलित सृपाटिका इनि तीन संहनन ही का उदय है। आदिके वज्रवृषभ नाराचादिक तीन संहनन न होइ हैं ऐसा जिनदेवने कह्या है॥३२॥ बहुरि वर्णनाम पांचप्रकार—कृष्ण १ नील २ रक्त ३ पीत ४ श्वेत ५। बहुरि गंधनाम दोय प्रकार—सुगंध १ दुर्गंध २। बहुरि रस नाम पांच प्रकार—तिक्त १ कटुक २ कषाय ३ आम्ल ४ मधुर ५। बहुरि स्पर्श नाम आठ प्रकार—कठोर १ कोमल २ गुरु ३ लघु ४ रूखा ५ चिकना ६ शीत ७ उष्ण ८। बहुरि आनुपूर्वी नाम च्यारि प्रकार—नरक तिर्यंच गति प्रायोग्य आनुपूर्वी २ मनुष्य देवगति प्रायोग्य आनुपूर्वी ४। बहुरि अगुरुलघुक १ उपघात १ परघात १ उच्छ्वास १ आतप १ उद्योतन ए एक एक। बहुरि विहायो गति दोय प्रकार—प्रशस्त विहायो गति १ अप्रशस्त विहायो गति २। बहुरि त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक शरीर १ स्थिर १ शुभ १ सुभग १ सुस्वर १ आदेय १ यशस्कीर्ति १ निर्माण १ तीर्थंकर ए एक एक। बहुरि स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण शरीर १ अस्थिर १ अशुभ १ दुर्भग १ दुःस्वर १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति ए एक एक ऐसैं सर्व मिली हुई नामकर्मकी प्रकृति त्रेणवै ९३, वा एकसौ तीन १०३ हैं।

मूलुण्हपहा अग्गी आदावो होदि उण्हसहियपहा।
आइच्चे तेरिच्छे उण्हूणपहा हु उज्जोओ॥ ३३॥

मूलोष्णप्रभा अग्निः आतापो भवति उष्णसहितप्रभा।
आदित्ये तिरश्चि उष्णोनप्रभा हि उद्योतः॥ ३३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—मूले उष्णप्रभः अग्निः, उष्णासहितप्रभः आतापः स च आदित्यबिम्बोत्पन्नबादरपर्याप्तपृथ्वीकायतिरश्चि भवति। उष्णरहितप्रभः उद्योतः स्फुटं। गोत्रकर्म द्विविधं उच्चनीचगोत्रभेदात्। अंतरायकर्म पंचविधं-दानलाभभोगोपभोगवीर्यांतरायभेदात्। आत्मप्रदेशस्थितानां कर्मभावयोग्यानां कार्मणवर्गणानां अविभागेन उपश्लेषः बंधः। यथा भाजनविशेषप्रक्षिप्तविविधरसबीजपुष्पफलानां मदिराभावः स्यात् तथा कार्मणपुद्गलानां योगकषायनिमित्तेन कर्मभावो ज्ञातव्यः। एकेनैव आत्मपरिणामेन स्वीक्रियमाणपुद्गलाः ज्ञानावरणाद्यनेकभेदाः स्युः सकृदुपयुक्तस्यान्नस्य एकस्यैव रसरुधिरादिपरिणामवत्। इदानीमुत्तरप्रकृतीनां निरुक्तिरुच्यते—

मतिज्ञानमावृणोति आव्रियतेऽनेनेति मतिज्ञानावरणं। श्रुतज्ञानमावृणोति आव्रियतेऽनेनेति श्रुतज्ञानावरणं। अवधिज्ञानमावृणोति आव्रियतेऽनेनेति अवधिज्ञानावरणं। मनःपर्ययज्ञानमावृणोति आव्रियतेऽनेनेति मनःपर्ययज्ञानावरणं। केवलज्ञानमावृणोति आव्रियतेऽनेनेति केवलज्ञानावरणं। ननु अभव्यस्य मनःपर्ययकेवलज्ञानशक्तिरस्ति न वा यद्यस्ति तदा तस्याभव्यत्वं न स्यात्। यदि नास्ति तदा तत्रावरणद्वयकल्पनावैयर्थ्यमिति ? तन्न। द्रव्यार्थादेशेन तच्छक्तिसद्भावात् पर्यायार्थादेशेन व्यक्त्यसंभवात्तदुक्तदोषानवकाशात्। अंधपाषाणे स्वर्णवत्।

आवृणोति अव्रियतेऽनेनेति आवरणं चक्षुर्दर्शनावरणं अचक्षुर्दर्शनावरणं अवधिदर्शनावरणं केवलदर्शनावरणं चेति। स्वप्ने यया वीर्यविशेषाविर्भावः सा स्त्यानगृद्धिः। स्त्यायतेरनेकार्थत्वात् स्वप्नोऽर्थ इह गृह्यते। गृद्धेरपि दीप्तिर्गृह्यते। स्त्याने-स्वप्ने गृध्यते दीप्यते यदुदयादात्मा रौद्रं च बहु च कर्मकरणं सा स्त्यानगृद्धिः। इह स्त्यानगृद्ध्यादिभिर्दर्शनावरणं सामानाधिकरण्येनाभिसंबध्यते इति स्त्यानगृद्धिदर्शनावरणमिति। यदुदयान्निद्राया उपर्युपरिवृत्तिः तन्निद्रानिद्रादर्शनावरणं। यदुदयात् या क्रिया आत्मानं पुनः पुनः प्रचलयति तत्प्रचलाप्रचलादर्शनावरणं। शोकश्रममदादिप्रभवा आसीनस्यापि नेत्रगात्रविक्रियासूचिका सैव पुनः पुनरावर्तमाना प्रचलाप्रचलेत्यर्थः। यदुदयात् मदखेदक्लमव्यपनोदार्थं स्वापः तन्निद्रादर्शनावरणं। यदुदयात् या क्रिया आत्मानं प्रचलयति तत्प्रचलादर्शनावरणमिति।

यदुदयाद्देवादिगतिषु शारीरमानससुखप्राप्तिः तत्सातं; तद्वेदयति वेद्यते इति सातवेदनीयं। यदुदयफलं दुःखमनेकविधं तदसातं तद्वेदयति वेद्यते इत्यसातवेदनीयमिति।

दर्शनमोहनीयं चारित्रमोहनीयं कषायवेदनीयं नोकषायवेदनीयं इति मोहनीयं चतुर्विधं। तत्र दर्शनमोहनीयं—सम्यक्त्वं—मिथ्यात्वं—सम्यग्मिथ्यात्वमिति त्रिविधं। तद्बंधं प्रति एकविधं सत् उदयसत्कर्मापेक्षया त्रिविधमवतिष्ठते। यस्योदयात् सर्वज्ञप्रणीतमार्गपराङ्मुखः तत्त्वार्थश्रद्धाननिरुत्सुकः हिताहितविचारासमर्थो मिथ्यादृष्टिर्भवति तन्मिथ्यात्वं। तदेव मिथ्यात्वं सम्यक्त्वं शुभपरिणामनिरुद्धरसं यदा औदासीन्येनावस्थितमात्मानं श्रद्धानं न निरुणद्धि तद्वेदयमानः सन् पुरुषः सम्यग्दृष्टिरभिधीयते। तदेव मिथ्यात्वं प्रक्षालनविशेषात् क्षीणाक्षीणमदशक्तिकोद्रववत्समीषच्छुद्धरसं स्वशक्तियुतं तदुभयमित्याख्यायते-सम्यग्मिथ्यात्वमिति यावत्। यस्योदयात् आत्मनः अशुद्धशुद्धमदनकोद्रवौदनोपयोगापादितमिश्रपरिणामवदुभयात्मको भवति। २८

चारित्रमोहनीयं द्विविधं चरति चर्यतेऽनेनेति चरणमात्रं वा चारित्रं तन्मोहयति मुह्यतेऽनेनेति चारित्रमोहनीयं। तद्द्विविधं कषायवेदनीयनोकषा-

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यवेदनीयभेदात्। कषंति हिंसंतीति कषायाः। ईषत्कषाया नोकषाया इति। तत्र कषायवेदनीयं षोडशविधं। कुतः? अनंतानुबंध्यादिविकल्पात्। तद्यथा—कषायाः क्रोधमानमायालोभाः, तेषां चतस्रोऽवस्थाःअनंतानुबंधिनः क्रोधमानमायालोभाः अप्रत्याख्यानावरणाःप्रत्याख्यानावरणाः क्रोधसंज्वलनं मानसंज्वलनं मायासंज्वलनं लोभसंज्वलनं चेति। तत्र अनंतसंसारकारणत्वात् मिथ्यात्वमनंतं तदनुबंधिनः—अनंतानुबंधिनः क्रोधमानमायालोभाः। यदुदयात् देशविरतिं संयमासंयमाख्यामल्पामपि कर्तुं न शक्नोति तदप्रत्याख्यानावरणं तद्भेदाः क्रोधमानमायालोभाः। प्रत्याख्यानं सकलसंयमः तमावृण्वंतीति प्रत्याख्यानावरणाः क्रोधमानमायालोभाः। सम् शब्दः, एकीभावे वर्तते संयमेन सहानवस्थानात् एकीभूत्वा ज्वलंति संयमो वा ज्वलति एषु सत्स्वपीति संज्वलनाः क्रोधमानमायालोभाः त एते समुदिताः षोडश कषाया भवंति।

ईषत्कषाया नोकषायाः तान् वेदयंति वेद्यंते एभिरिति नोकषायवेदनीयानि नवविधानि। तत्र यस्योदयात् हास्याविर्भावः तद्धास्यं। यदुदयाद्देशादिषु औत्सुक्यं सा रतिः। अरतिस्तद्विपरीताः। यद्विपाकात् शोचनं स शोकः। यदुदयादुद्वेगस्तद्भयं। यदुदयात् आत्मदोषसंवरणं अन्यदोषस्य धारणं सा जुगुप्सा। यदुदयात् स्त्रैणान् भावान् प्रतिपद्यते स स्त्रीवेदः। यस्योदयात् पौंसान् भावान् आस्कंदति स पुंवेदः। यदुदयात् नपुंसकान् भावान् उपव्रजति स नपुंसकवेदः।

नारकादिभवधारणाय एतीत्यायुः तन्नारकादिभेदाच्चतुर्विधं। तत्र नरकादिषु भवसंबंधेन आयुषोऽव्यपदेशः क्रियते, वा नरकेषु भवं नारकमायुः। तिर्यग्योनिषु भवं तैर्यग्योनं। मनुष्ययोनिषु भवं मानुष्यं। देवेषु भवं दैवमिति। नरकेषु तीव्रशीतोष्णवेदनेषु दीर्घजीवनं नारकमायुरित्येवं शेषेष्वपि।

पिंडापिंडभेदाद्द्विचत्वारिंशद्विधं नाम। तत्र यदुदयादात्मा भवांतरं गच्छति सा गतिः। सा चतुर्विधा—नरकगतिः तिर्यग्गतिः मनुष्यगतिः देवगतिरिति। तत्र यन्निमित्तमात्मनो नारकपर्यायः तन्नारकगतिनाम। यन्निमित्तं आत्मनः तिर्यग्भवः तत्तिर्यग्गतिनाम। यन्निमित्तमात्मनो मनुष्यपर्यायस्तन्मनुष्यगतिनाम। यन्निमित्तमात्मनो देवपर्यायः तद्देवगतिनाम।

तासु नरकादिगतिषु अव्यभिचारिणा सादृश्येन एकीकृतार्थात्मा जातिः तन्निमित्तं जातिनाम। तत्पंचविधं एकेंद्रियजातिनाम द्वींद्रियजातिनाम त्रींद्रियजातिनाम चतुरिंद्रियजातिनाम पंचेंद्रियजातिनाम चेति। यदुदयात् आत्मा एकेंद्रिय इति शब्द्यते तदेकेंद्रियजातिनाम। यदुदयात् आत्मा द्वींद्रिय इत्युच्यते तद्द्वींद्रियजातिनाम। यदुदयफलं त्रींद्रियत्वं तत्त्रींद्रियजातिनाम। यस्योदयाज्जीवश्चतुरिंद्रिय इति वर्ण्यते तच्चतुरिंद्रियजातिनाम यदुदयात् आत्मा पंचेंद्रिय इत्युच्यते तत् पंचेंद्रियजातिनाम।

यदुदयादात्मनः शरीरनिर्वृत्तिः तच्छरीरनाम। तत्पंचविधं औदारिकशरीरनाम—वैक्रियिकशरीरनाम—आहारकशरीरनाम—तैजसशरीरनाम—कार्मणशरीरनाम चेति। यदुदयादात्मनः औदारिकशरीरनिर्वृत्तिः तदौदारिकशरीरनाम। यदुदयाद्वैक्रियिकशरीरनिर्वृत्तिः तद्वैक्रियिकशरीरनाम। यदुदयादाहारकशरीरनिर्वृत्तिस्तदाहारकशरीरनाम। यस्योदयात्तैजसशरीरनिर्वृत्तिः तत्तैजसशरीरनाम। यदुदयादात्मनः कार्मणशरीरनिर्वृत्तिः तत्कार्मणशरीरनाम। २८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शरीरनामकर्मोदयवशात् उपात्तानामाहारवर्गणायातपुद्गलस्कंधानां अन्योन्यप्रदेशसंश्लेषणं यतो भवति तद्बंधनं नाम।

यदुदयात् औदारिकादिशरीराणां विवरविरहितानां अन्योन्यप्रदेशानुप्रवेशेन एकत्वापादनं भवति। तत्संघातनाम।

यदुदयात् औदारिकादिशरीराकृतिर्निर्वृत्तिर्भवति तत्संस्थानंनाम। तत् षोढा विभज्यते–समचतुरस्रसंस्थाननाम न्यग्रोधपरिमंडलसंस्थाननाम स्वातिसंस्थाननाम कुब्जसंस्थाननाम वामनसंस्थाननाम हुंडकसंस्थाननाम चेति।

यदुदयादंगोपांगविवेकस्तदंगोपांगनाम। तत् त्रिविधं औदारिकशरीरांगोपांगनाम वैक्रियिकशरीरांगोपांगनाम आहारकशरीरांगोपांगनाम चेति।

यस्योदयादस्थिबंधनविशेषो भवति तत्संहनननाम। तत् षड्विधं–वज्रर्षभनाराचसंहनननाम। वज्रनाराचसंहनननाम। नाराचसंहनननाम। अर्धनाराचसंहनननाम। कीलितसंहनननाम। असंप्राप्तसृपाटिकासंहनननाम। संहननं–अस्थिसंचयः। ऋषभो वेष्टनं वज्रवदभेद्यत्वात् वज्रर्षभः। वज्रवन्नाराचो वज्रनाराचः तौ द्वावपि यस्मिन् वज्रशरीरे संहनने तत् वज्रर्षभनाराचसंहनननाम। एष एव वज्रास्थिबंधः वज्रर्षभवर्जितः सामान्यर्षभवेष्टितः यस्योदयेन भवति तद्वज्रनाराचशरीरसंहनननाम। यस्य कर्मण उदयेन वज्रविशेषणेन रहितनाराचकीलिता अस्थिसंधयो भवंति तन्नाराचशरीरसंहनननाम। यस्य कर्मण उदयेन अस्थिसंधयो नाराचार्धकीलिता भवंति तदर्धनाराचशरीरसंहनननाम। यस्योदयादवज्रास्थीनि कीलितानि भवंति तत्कीलितशरीरसंहनननाम। यस्योदयेन अन्योन्यासंप्राप्तानि सरीसृपसंहननवत्सिराबंधानि अस्थीनि भवंति तदसंप्राप्तसृपाटिकाशरीरसंहनननाम।

यद्धेतुको वर्णविकारः तद्वर्णनाम। तत्पंचविधं-कृष्णवर्णनाम नीलवर्णनाम रक्तवर्णनाम हरिद्रवर्णनाम शुक्लवर्णनाम चेति। यदुदयात्प्रभवो गंधः तद्गंधनाम। तद्द्विविधं सुरभिगंधनाम असुरभिगंधनाम चेति। यन्निमित्तोरसविकल्पः तद्रसनाम। तत्पंचविधं-तिक्तनाम कटुकनाम कषायनाम आम्लनाम मधुरनाम चेति। यस्योदयात्स्पर्शप्रादुर्भावः तत्स्पर्शनाम। तदष्टविधं कर्कशनाम मृदुनाम गुरुनाम लघुनाम शीतनाम उष्णनाम स्निग्धनाम रूक्षनाम चेति।

पूर्वशरीराकाराविनाशो यस्योदयाद्भवति तदानुपूर्व्यनाम। तच्चतुर्विधं नारकगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यनाम तिर्यग्गतिप्रायोग्यानुपूर्व्यनाम मनुष्यगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यनाम देवगतिप्रायोग्यानुपूर्व्यनाम चेति।

यस्योदयादयःपिंडवत् गुरुत्वान्न च पतति। नर्चाकतूलवत् लघुत्वादूर्ध्वं गच्छति तदगुरुलघुनाम। उपेत्य घात इत्युपघात आत्मघात इत्यर्थः। यस्योदयादात्मघातावयवाः महाशृंगलंबस्तनतुंदोदरादयो भवंति तदुपघातनाम। परेषां घातः परघातः यदुदयात्तीक्ष्णशृंगनखसर्पदाढादयो भवंति अवयवा तत्परघातनाम।

यद्धेतुरुच्छ्वासः तदुच्छ्वासनाम। यदुदयान्निर्वृत्तमातपनं तदातपनाम तदपि आदित्यबिंबोत्पन्नबादरपर्याप्तपृथिवीकायिकजीवेषु एव वर्तते। यस्योदयादुद्योतनं तदुद्योतनाम तच्चंद्रखद्योतादिषु च वर्तते। विहायः आकाशं तत्र गतिनिर्वर्तकं तद्विहायोगति नाम। तद्द्विविधं प्रशस्ताप्रशस्तभेदात्। यदुदयात् द्वींद्रियादिषु जन्म तत् त्रसनाम। यदुदयादन्यबाधाकरशरीरं भवति तद्बादरनाम।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यदुदयादाहारादिपर्याप्तिनिर्वृत्तिस्तत्पर्याप्तिनाम । तत् षड्विधं-आहारपर्याप्तिनाम शरीरपर्याप्तिनाम इंद्रियपर्याप्तिनाम प्राणापानपर्याप्तिनाम भाषापर्याप्तिनाम मनःपर्याप्तिनाम चेति । शरीरनामकर्मोदयान्निर्वर्त्यमानशरीरं एकात्मोपभोगकारणं यतो भवति तत्प्रत्येकशरीरनाम । यस्योदयात् रसादिधातूपधातूनां स्वस्वस्थाने स्थिरभावनिर्वर्तनं भवति तत्स्थिरनाम—

रसाद्रक्तं ततोमांसं मांसान्मेदः प्रवर्तते ।
मेदतोऽस्थि ततो मज्जं मज्जाच्छुक्रं ततः प्रजाः ॥ १ ॥
वातः पित्तं तथा श्लेष्मा सिरा स्नायुश्च चर्म च ।
जठराग्निरिति प्राज्ञैः प्रोक्ताः सप्तोपधातवः ॥ २ ॥

धातु प्र ७ । फ दि ३० । इच्छा धातुः १ लब्धदि ४ । २ ।
७

यदुदयात् रमणीया मस्तकादिप्रशस्तावयवा भवंति तच्छुभनाम । यदुदयादन्यप्रीतिप्रभवः तत्सुभगनाम । यस्मान्निमित्तात् मनोज्ञस्वरनिर्वर्तनं भवति तत्सुस्वरनाम । प्रभोपेतशरीरकारणं आदेयनाम । पुण्यगुणख्यापनकारणं यशस्कीर्तिनाम ।

यस्मान्निमित्तात् परिनिष्पत्तिः तन्निर्माणनाम । तद्द्विविधं स्थाननिर्माणं प्रमाणनिर्माणं चेति । तत्र जातिनामोदयापेक्षं चक्षुरादीनां स्थानं प्रमाणं च निर्वर्तयति निर्मीयते अनेनेति वा निर्माणं । आर्हंत्यकारणं तीर्थकरत्वनाम ।

यन्निमित्तादेकेंद्रियेषु प्रादुर्भावः तत्स्थावरनाम । सूक्ष्मशरीरनिर्वर्तकं सूक्ष्मनाम । षड्विधपर्याप्त्यभावहेतुरपर्याप्तिनाम । बहूनामात्मनां उपभोगहेतुत्वेन साधारणं भवति शरीरं यतः तत्साधारणशरीरनाम । धातूपधातूनां स्थिरभावेनानिर्वर्तनं यतः तदस्थिरनाम । यदुदयेन अरमणीयमस्तकाद्यवयवनिर्वर्तनं भवति तदशुभनाम । यदुदयात् रूपादिगुणोपेतेऽपि अप्रीतिं विदधाति जनः तद्दुर्भगनाम । यदुदयात् अमनोज्ञस्वरनिर्वर्तनं भवति तद्दुःस्वरनाम । निष्प्रभशरीरकारणं अनादेयनाम । पुण्ययशसः प्रत्यनीकफलं अयशस्कीर्तिनाम ।

यस्योदयाल्लोकपूजितेषु कुलेषु जन्म भवति तदुच्चैर्गोत्रं । यदुदये तद्विपरीतेषु गर्हितेषु कुलेषु जन्म भवतितन्नीचैर्गोत्रं ।

यदुदयाद्दातुकामोऽपि न प्रयच्छति लब्धुकामोऽपि न लभते भोक्तुमिच्छन्नपि न भुंक्ते उपभोक्तुमिच्छन्नपि नोपभुंक्ते तत्सहितुकामोऽपि न तत्सहते ते एते पंचांतरायभेदाः । अंतरायापेक्षया भेदनिर्देशः क्रियते । दानस्य अंतरायः, लाभस्य अंतरायः, भोगस्यांतरायः उपभोगस्यांतरायः, वीर्यस्य अंतराय इति दानादिपरिणामस्य व्याघातहेतुत्वात् ॥ ३३ ॥ अथ नामोत्तरप्रकृतिषु अभेदविवक्षया अंतर्भावं दर्शयति—

स च०—इहां कोऊ भ्रम करेगा कि आताप प्रकृतिका उदय अग्निकायविषैं होगा तातैं कहैं हैं—अग्नि है सो मूल ही उष्ण प्रभासहित है तातैं वाके स्पर्शका भेद उष्णताका उदय जानना । बहुरि जाकी प्रभा ही उष्ण होइ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताकैं आताप प्रकृतिका उदय जाननां सो सूर्यका बिंबविषैं उपजैं ऐसे बादर पर्याप्त पृथ्वीकायके तिर्यंच जीव तिन हीकैं आताप प्रकृतिका उदय है। बहुरि उष्ण रहित जो प्रभा होइ तहां उद्योत जानना।

बहुरि गोत्र कर्म दोयप्रकार–उच्च गोत्र १ नीच गोत्र। बहुरि अंतरायकर्म पांचप्रकार–दानांतराय १ लाभांतराय २ भोगांतराय ३ उपभोगांतराय ४ वीर्यांतराय ५। ऐसैं उत्तर प्रकृति कहीं सो आत्माके प्रदेशनिविषैं एक क्षेत्रावगाही तिष्ठते जे कर्मरूप होने योग्य कार्माण वर्गणा तिनिका अविभाग एकत्वपनैंकरि युक्त होना सो बंध कहिए जैसैं यथायोग्य भाजनविषैं धर्या हूवा नानाप्रकार रस बीज फूल फल ते मदिरा भावकौं प्राप्त हों है तैसे कार्मण वर्गणारूप पुद्गल योग कषायके निमित्ततैं कर्मभावकौं प्राप्त हो हैं। बहुरि जैसैं एकबार ही भक्षण कीया हूवा एक अन्न सो रस रुधिर मांसादिक अनेकरूप होइ परिणमैं हैं तैसैं एकही आत्माके परिणामकरि ग्रहे हूवे पुद्गल ज्ञानावरणादिक अनेक भेदरूप होइ परिणमैं है। अब जे उत्तर प्रकृति कहीं तिनकी निरुक्ति कहिए है–

मति ज्ञानकौं आवरैं वा मतिज्ञान याकरि आवरिये सो मतिज्ञानावरण है। बहुरि श्रुतज्ञानकौं आवरै वा श्रुतज्ञान याकरि आवरिये सो श्रुतज्ञानावरण है। बहुरि अवधि ज्ञानकौं आवरै वा अवधिज्ञान याकरि आवरिये सो अवधि ज्ञानावरण है। बहुरि मनः पर्यय ज्ञानकौं आवरै वा मनःपर्ययज्ञान याकरि आवरिये सो मनः पर्यय ज्ञानावरण है। बहुरि केवल ज्ञानकौं आवृणोति कहिए आवरे वा केवल ज्ञान याकरि आव्रियते कहिए अवरिए सो केवल ज्ञानावरण है। इहां प्रश्न–जो अभव्यके मनःपर्यय केवलज्ञानकी शक्ति है कि नाहीं है जो है तौ भव्य अभव्यका भेद न होइ। जो न है तो वाके दोऊ ज्ञानके आवरण कहना निरर्थक हैं? ताका सामाधान–जो द्रव्यार्थिकनयकरि वाके तिनि दोऊ ज्ञाननिकी शक्ति पाइए है पर्यायार्थिक नयकरि सो शक्ति व्यक्त रूप होइ कबहूं प्रगट न परिनमै तातैं दोष कहे ते लगते नाहीं। जैसे अंध पाषाण विषैं सौनेकी शक्ति कहिए तैसे जानना।

बहुरि आवृणोति आव्रियते अनेन इति आवरणं जो आवरै वा याकरि आवरिये सो आवरण कहिए सो चक्षुदर्शनावरण १ अचक्षुदर्शनावरण २ अवधिदर्शनावरण ३ केवलदर्शनावरण ए च्यारि प्रकार दर्शनके आवर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णरूप च्यारि दर्शनावरण जानने। बहुरि पांच निद्रा–तहां जाकरि सोवनेविषैं वीर्य विशेष प्रगट होइ सो स्त्यान गृद्धि है 'स्त्यायति' इस धातुके अनेक अर्थ हैं इहां सोवनेका अर्थ लीजिये। बहुरि गृद्धि धातुका इहां दीप्ति अर्थ लीजिए सो स्त्यान कहिए सोवना तिसविषैं गृध्यते कहिए दिपे जाके उदयविषै आर्त रौद्र लीए उठना बैठना उठावना धरना इत्यादि अनेक कार्यकरै सो स्त्यानगृद्धि है सो स्त्यानगृद्ध्यादिककरि दर्शनावरणका सामान्याधिकरण जानना। स्त्यानगृद्धि सो दर्शनावरण, निद्रा निद्रा सो दर्शना वरण इत्यादिक जानना। भावार्थ–चक्षुर्दर्शनावरणादिक विषैं तो षष्ठी तत्पुरुष समास है स्त्यानगृद्धि दर्शनावरणादिक विषैं कर्मधारय समास जानना। बहुरि जाके उदयतैं निद्राके ऊपरी ऊपरी प्रवृत्ति होइ सो निद्रानिद्रा दर्शनावरण है। बहुरि जाके उदयतैं क्रिया आत्माको वारंवार चलावै सो प्रचला प्रचला दर्शनावरण है सो शोक वा खेद वा मदादिकतैं उपजे तिष्ठता हूआ भी नेत्र शरीरादिककका हलावना चलावना इत्यादि विक्रिया करै सो वारंवार ऐसैं जहां होइ सो प्रचलाप्रचला है। बहुरि जाके उदयतैं मद खेदादिक मिटावनेके निमित्ति सोइए सो निद्रा दर्शनावरण है। बहुरि जाके उदयतैं क्रिया आत्माको चलावै किछू सावधानी रहै सो प्रचलादर्शनावरण है।

बहुरि जाके उदयतैं देवादिक गतिनिविषैं शारीरिक मानसिक सुखकी प्राप्ति सो साता तिसकौं भोगवावै बहुरि याकरि साता वेदिए भोगिए सो सातावेदनीय है। बहुरि जाके उदयका फल अनेक प्रकार दुःख सो असाता ताकौं विदवावै भोगवावै वा याकरि असाता भोगिए सो असाता वेदनीय है।

बहुरि दर्शन मोहनीय १ चारित्र मोहनीय २ कषाय वेदनीय ३ नोकषायवेदनीय ४ ऐसैं मोहनीयकर्म च्यारि प्रकार है। तहां दर्शन मोहनीय तीनप्रकार–मिथ्यात्व १ सम्यग्मिथ्यात्व २ सम्यक्त्वप्रकृति ३ सो बंधकी अपेक्षा एकप्रकार है। उदय वा सत्ताकी अपेक्षा तीन प्रकार है। तहां जाके उदयतैं सर्वज्ञ प्रणीत मार्गस्यों परांमुख होइ तत्त्वार्थ श्रद्धानका उद्यमी न होइ हिताहित विचार करनेकौं समर्थ न होइ ऐसैं मिथ्यादृष्टि होइ सो मिथ्यात्व है। बहुरि सोई मिथ्यात्व शुभपरिणामनिकरि अनुभाग रसके रुकनेतैं उदासीन रूप तिष्ठता आत्माके श्रद्धानकौं रोकै नाहीं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिसके उदयकौं भोगवता जीव सम्यग्दृष्टी ही कहिए सो सम्यक्त्व प्रकृति जानना। बहुरि जैसैं मादक कोदौं विषैं प्रक्षालनेके विशेषकरि किछू मद शक्ति रहै किछू क्षीण होइ तैसैं किछू अनुभाग क्षीण भया होइ किछू रह्या होइ ऐसा सोई मिथ्यात्व भया ताकौं सम्यग्मिथ्यात्व कहिए याके उदयतैं जैसैं शुद्धमादक कोदौं खानेते किछू मदवान होइ किछू स्याना रहै तैसैं सम्यक् रूप वा मिथ्यारूप मिश्रपरिणाम आत्माके हो है।

बहुरि चारित्र मोहनीय दोयप्रकार है आचरै वा याकरि आचरियै वा आचरण मात्र होइ सो चारित्र कहिए तिसकरि मोहै वा चारित्र याकरि मोहिए सो चारित्र मोहनीय है सो दोय प्रकार है–एक कषायवेदनीय एक नोकषायवेदनीय तहां कषंति कहिए आत्माके चारित्रको हिंसै घातै ते कषाय कहिए। बहुरि नो कहिए ईषत् किंचिन्मात्र जे कषाय तिनिकौं नोकषाय कहिए। तहां कषायवेदनीय सोलह प्रकार है सो कहिए है–कषाय क्रोध मान माया लोभ, सो इनिकी च्यारि अवस्था हैं–अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभ, अप्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, प्रत्याख्यानावरण क्रोध मान माया लोभ, क्रोध संज्वलन मानसंज्वलन माया संज्वलन लोभसंज्वलन, तहां अनंत कहिए अनंत संसारकौं कारण मिथ्यात्व ताहि अनुबध्नंति कहिए संबंध रूप करैं ते अनंतानुबंधी जानने। बहुरि अ कहिए ईषत् किंचिन्मात्र प्रत्याख्यान कहिए संयम सो तिस देशसंयमकौं आवरै अल्पमात्र भी न होने दें ते अप्रत्याख्यानावरण है। बहुरि प्रत्याख्यान कहिए सकल संयम ताहि आवृण्वंति कहिए आवरै न होने दे ते प्रत्याख्यानावरण हैं। बहुरि सं कहिए एकीभूत होइ ज्वलंति कहिए संयम सहित अपने प्रकाशकौं करै अथवा इनिकौ होतसंतै भी संयम है सो ज्वलति कहिए प्रकाशरूप रहै ते संज्वलन कहिए सो ए सब मिले हुए सोलह कषाय भए।

बहुरि नो कहिए ईषत् किंचिन्मात्र क्रोधादिक सारिखे प्रबल नाही ऐसे जु कषाय हैं तिनिकौं वेदै वा इनिकरि वेदिए नोकषायरूप अनुभवन कीजिए ते नोकषायवेदनीय है ते नव प्रकार है–तहां जाके उदयतैं हास्य प्रकट होइ सो हास्य है। बहुरि जाके उदयतैं क्षेत्रादिकविषैं उत्सुकता प्रीति होइ सो रति है। बहुरि जाके उदयतैं क्षेत्रादिकविषैं निरुत्सुकता अप्रीति होइ सो अरति है। बहुरि जाके उदयतैं इष्टवियोग होते क्लेश होइ सो शोक है। बहुरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाके उदयतें उद्वेग उचाटन होइ सो भय है। बहुरि जाके उदयतें अपने दोषकौं संवरै अन्यवस्तुके दोष को धारै सो जुगुप्सा है। बहुरि जाके उदयतें स्त्रीसंबंधी भावनिकौं प्राप्त होइ सो स्त्रीवेद है। बहुरि जाके उदयतें पुरुष संबंधी भावनिकौं प्राप्त होइ सो पुरुषवेद है। बहुरि जाके उदयतें नपुंसक संबंधी भावनिकौं प्राप्त होइ सो नपुंसकवेद है।

बहुरि पर्यायधारनेके निमिंत्ति एति कहिए प्राप्त होइ सो आयु है सो नारकादिक पर्यायनिविषैं प्राप्त होनेका सबंधकरि आयुके भेद करिए है। तहां जो नरकविषैं प्राप्त सो नरकायु हैं। तिर्यग् योनिविषै प्राप्त सो तिर्यग्योनि आयु है। मनुष्यविषैं प्राप्त सो मनुष्य आयु है। देवविषैं प्राप्त सो देव आयु है। सो तीव्र शीत उष्ण वेदनासहित नारकविषै बहुतकाल जीवना सो नारक आयु है ऐसैं ही और तीनौंका स्वरूप जानना।

बहुरि नामकर्म पिंड अपिंड प्रकृतिके भेदकरि बियालीस प्रकार हैं तहां जाके उदयते आत्मा पर्यायतैं पर्यायांतरको गच्छति कहिए प्राप्त होइ सो गति कहिए। सो गति च्यारि प्रकार—तहां जाके निमित्ततैं आत्माकैं नारक पर्याय होइ सो नरकगति नाम हैं। जाके उदयतैं आत्माकैं तिर्यक् पर्याय होइ सो तिर्यग्गति नाम है। जाके उदयतैं आत्माकैं मनुष्य पर्याय होइ सो मनुष्यगतिनाम है। जाके उदयतैं आत्माके देव पर्याय होइ सो देवगति नाम कर्म है।

बहुरि तिन गतिनिविषैं अव्यभिचारी सादृश्यभाव तीहिकरि एकठेकीए जीव सो जाति है। जैसें एकेंद्री वे इंद्रियादिक समानरूप होंइ मिलैं नहि। तातैं अव्यभिचारी हैं अर एकेंद्री जेते जीव हैं तिनकैं एकेंद्रिय अस्तित्वकी अपेक्षा समान है सो यह सादृश्यभाव है। सो याकरि जिस एक अव्यभिचारी सादृश्यभावविषैं जीव एकठे करिए सो जाति है। सो जाति नाम पांच प्रकार है तहां जाके उदयतैं आत्मा एकेंद्रिय ऐसा कहिए सो एकेंद्रिय जाति नाम है। जाके उदयतैं आत्मा वेंद्री है ऐसा कहिए सो वेंद्री जाति नाम है। जाके उदयतैं आत्मा तेंद्री ऐसा कहिए सो तेंद्री जाति नाम है। जाके उदयतैं आत्मा चौंद्री ऐसा कहिए सो चौंद्री जाति नाम है। जाके उदयतैं आत्मा पंचेंद्री ऐसा कहिए सो पंचेंद्री जाति नाम है।

बहुरि जाके उदयतैं शरीर निपजै सो शरीर नाम है सो पंच प्रकार है। तहां जाके उदयतैं औदारिक शरीर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निपजै सो औदारिक शरीर नाम है जाके उदयतैं वैक्रियिक शरीर निपजै सो वैक्रियिक शरीर नाम हैं। जाके उदयतैं आहारक शरीर निपजै सो आहारक शरीर नाम है। जाके उदयतै तैजस शरीर निपजै सो तैजस शरीर नाम है। बहुरि जाके उदयतैं आत्माकैं कार्माण शरीर निपजै सो कार्माण शरीर नाम है।

बहुरि शरीर नामकर्मके उदयके वशतैं जे आहारवर्गणारूप पुद्गलस्कंध ग्रहण कीए तिनकैं परस्पर प्रदेशनिका संश्लेष संबंध जाके उदयतैं होइ सो बंधन नाम है सो औदारिकादि शरीरनिकी अपेक्षा पांच प्रकार है। बहुरि जाके उदयतैं औदारिकादि शरीर छिद्ररहित तिनिका परस्पर प्रदेशनिका एक क्षेत्रावगाह करि एकत्वपनाकौं प्राप्त होना होइ सो संघातनाम है सो औदारिकादि शरीरनिकी अपेक्षा पांच प्रकार है।

बहुरि जाके उदयतैं औदारिकादिक शरीरनिका आकार निपजै सो संस्थान नाम है सो छह प्रकार है। तहां जातैं समान चौकोर आकार होइ सो समचतुरस्र संस्थान नाम है। न्यग्रोध जो वड तीहिं सारिखा ऊपरितैं मोटा नीचैतैं पतला ऐसा आकार जातैं होइ सो न्यग्रोध परिमंडल संस्थान नाम है। स्वाति जो बंवइ तीहि सारिखा ऊपरितैं पतला नीचैतैं मोटा ऐसा आकार जातैं होइ सो स्वाति संस्थान नाम है। कूबरा आकार जातैं होइ सो कुब्ज संस्थान है। ठींगना आकार जातैं होइ सो वामन संस्थान नाम है। अनेक अवक्तव्य आकार जातैं होइ सो हुंडक संस्थान नाम है।

बहुरि जाके उदयतै अंगोपांगका भेद होइ सो अंगोपांग नाम है सो तीन प्रकार है—औदारिक अंगोपांग १ वैक्रियिक अंगोपांग २ आहारक अंगोपांग ३।

बहुरि जाके उदयतैं हाडनिके बंधनका विशेष होइ सो संहनन नाम है। सो छह प्रकार है—वज्रवृषभनाराच संहनन १ वज्रनाराच २ नाराच ३ अर्धनाराच ४ कीलित ५ असंप्राप्तासृपाटिका ६। तहां संहनन नाम तौ हाडानका समूहका है। ऋषभ नाम जाकरि वेठिए बांधिए जैसैं जेवरेकरि वठ दीजिए है ताका जानना। अर नाराच नाम कीलेका है जैसैं लोहेका कीला काष्ठादिकविषैं ठोकिए है। बहुरि जो वज्रवत् भेद्या न जाय ऐसा होइ ताकौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वज्र कहिए। सो जिस वज्रसंहनन युक्त शरीरविषैं वज्रका ऋषभ वज्रका नाराच ए दोऊ जहां होइ ऐसा शरीर जाके उदयतैं होइ सो वज्रवृषभ नाराच शरीर सहनन नाम है। बहुरि जहां वज्रके ऋषभ नाही सामान्य ऋषभ करि बेढ्या होइ ऐसा शरीर जाके उदयतैं होइ सो वज्रनाराच शरीर संहनन नाम है। बहुरि वज्र विशेषण रहित साधारण नाराचकरि कीलित हाडनिकी संधि होइ ऐसा शरीर जाके उदयतैं होइ सो नाराच शरीर संहनन नाम है। वहुरि जहां हाडानिकी संधि नाराचकरि अर्धकीलित होइ ऐसा शरीर जाके उदयतैं होइ सो अर्धनाराच शरीर संहनन नाम है। बहुरि जहां वज्रके हाड नाही ते परस्पर कीलित होंइ ऐसा शरीर जाके उदयतैं होइ सो कीलित शरीर संहनन नाम है। बहुरि जहां परस्पर प्राप्त नाही जुदे जुदे सरीसृपके हाड़की ज्यों नसकरि बंध्या हूवा हाड होइ ऐसा शरीर जाके उदयतैं होइ सो असंप्राप्तसृपाटिका शरीर संहनन नाम है।

बहुरि जाके निमित्ततैं शरीरका वर्ण होइ सो वर्णनाम है सो पांच प्रकार है–कृष्णवर्ण नाम १ नीलवर्ण नाम २ रक्तवर्ण नाम ३ पीतवर्ण नाम ४ श्वेतवर्ण नाम ५।

बहुरि जाके उदयतैं शरीर विषै गंध होइ सो गंध नाम है सो दोय प्रकार है–सुरभि गंध नाम १ दुरभि गंध नाम।

बहुरि जाके उदय तैं शरीर विषै रस होइ सो रस नाम है सो पांच प्रकार तिक्त नाम १ कटु नाम २ कषाय नाम ३ अम्ल नाम ४ मधुर नाम ५।

बहुरि जाके उदयतैं शरीर विषैं स्पर्श होइ सो स्पर्श नाम है। सो आठ प्रकार–कर्कश नाम १ मृदुनाम गुरुनाम ३ लघुनाम ४ शीत नाम ५ उष्ण नाम ६ स्निग्ध नाम ७ रूक्ष नाम ८।

बहुरि जाके उदयतैं पूर्व जो शरीर था ताके आकारका नाश न होइ सो आनुपूर्व्य नाम है सो च्यारि प्रकार है–नरकगतिप्रायोग्यानुपूर्व्य नाम १ देवगति प्रायोग्यानुपूर्व्य नाम २ मनुष्यगति प्रायोग्यानुपूर्व्य नाम ३ तिर्यंच गति प्रायोग्यानुपूर्व्य नाम ४। नरकगति प्राप्त होनेकौं योग्य ऐसा पंचेंद्री पर्याप्त जीवकैं विग्रहगति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain, Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं पंचेंद्री पर्याप्त शरीरका आकार जाके उदयतैं रहे सो नरकगति प्रायोग्यानुपूर्व्य नाम है ऐसैं ही सब जानने।

बहुरि जाके उदयतै भाऱ्या न होइ तातै लोहका पिंडकी ज्यों नीचेकौं न पडै। हलका न होइ तातै आकका फूंफदाकी ज्यों ऊचेको न जाइ ऐसा शरीर होइ सो अगुरुलघु नाम है।

बहुरि 'उपेत्य घातः उपघातः' अपने घातका नाम है सो जाके उदयतैं अपने अंगनितैं अपना घात होइ वड़े सींग वा लांवे स्तन वा मोटा उदर ऐसैं अंग होंइ सो उपघात नाम है।

बहुरि जाके उदयतैं औरनिका घात करै ऐसे तीखे सींग वा नख वा सांप आदिककै डाढ इत्यादिक अवयव होंहि सो परघात नाम है।

बहुरि जाके उदयतै आतापरूप शरीर निपजै सो आतप नाम है सो याका उदय सूर्यके विषैं उपजै वादर पर्याय पृथ्वी कायिक जीव तिनहीके पाइए है। बहुरि जाके उदयतैं उद्योतरूप शरीर निपजै सो उद्योत नाम है याका उदय चंद्रमाका बिंब वा आग्या जीव इत्यादिककैं हैं। बहुरि विहाय कहिय आकाश तिसविषैं गमन करने को कारण सो विहायोगतिनाम है सो मनोज्ञरूप प्रशस्त अप्रशस्तके भेदतैं दोय प्रकार है। बहुरि जाके उदयतैं वे इंद्रियादिक विषैं जन्म होइ सो त्रस नाम है। बहुरि जाके उदयतैं औरकौं रोकै आप औरनिकरि रुकै ऐसा शरीर निपजै सो वादर नाम है।

बहुरि जाके उदयतैं आहार आदि पर्याप्ति निपजै सो पर्याप्ति नाम है सो पर्याप्ति छह प्रकार है—आहार १ शरीर २ इंद्रिय ३ श्वासोसास ४ भाषा ५ मन ६।

बहुरि शरीर नामकर्मके उदयतैं निपज्या शरीर सो जाके उदयतैं एक शरीर एक आत्माके उपभोगका कारण होइ एक शरीरविषैं एकही आत्मा हो सो प्रत्येक नाम है।

बहुरि जाके उदयतैं रसादिक धातु अर उपधातु अपने २ ठिकाने स्थिर रहैं सो स्थिर नाम है। उक्तं च—

रसाद्रक्तं ततो मासं मासान्मेदः प्रवर्तते।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेदतोऽस्थि ततो मज्जं मज्जाच्छुक्रं ततः प्रजाः ॥ १ ॥
वातः पित्तं तथा श्लेष्मा सिरा स्नायुश्च चर्म च ।
जठराग्निरिति प्राज्ञैः प्रोक्ताः सप्तोपधातवः ॥ २ ॥

अर्थ—रसतैं तो लोही हो है। लोहीतैं मांस हो है। मांसतैं मेद हो है। मेदतैं हाड़ हो है। हाडतैं मींजी हो है मींजीतैं शुक्र हो है। शुक्रतैं प्रसूतिरूप प्रजाकी प्रवृत्ति है। ए सात धातु ऐसैं अनुक्रमतैं परिणवैं हैं। ए सात धातु तीस दिनमें होइ तो एक धातु च्यारि दिन अर दोय दिनका सातवां भागविषैं होइ ऐसे जानना। बहुरि वात १ पित्त २ श्लेष्म ३ सिरा ४ स्नायु ५ चर्म ६ उदराग्नि ७ ए सात उपधातु हैं। सो इनिका शरीरविषैं जहां ठिकाना है तहां ही स्थिर रहैं सो स्थिर प्रकृतिके उदयतैं रहे हैं।

बहुरि जाके उदयतै मनोज्ञ रमणिय प्रशस्त मस्तकादिक शरीरके अवयव होंइ सो शुभ नाम है। बहुरि जाके उदयतैं अन्यजीव आपतैं प्रीतिकरैं सो सुभग नाम है। बहुरि जाके उदयतैं मनोज्ञ सुहावना स्वर शब्द निपजै सो सुस्वर नाम है। बहुरि जाके उदयतैं प्रभा कांति सहित शरीर निपजै सो आदेय नाम है। बहुरि जाके उदयतैं अपना पुण्यरूप पवित्र गुण जगतविषैं प्रकट होइ जस होइ सो यशस्कीर्ति नाम है।

बहुरि जाके उदयतैं यथायोग्य निपजै सो निर्माण नाम है सो दोय प्रकार है—स्थान निर्माण १ प्रमाणनिर्माण २। तहां जाति नामकर्मके उदयकी सापेक्षकौं लीएं नेत्रादिक जिस ठिकाने चाहिए तिसही ठिकाने निपजावै सो स्थान निर्माण है। जो नेत्रादिकका प्रमाण चाहिऐ तितनेही निपजावै सो प्रमाणनिर्माण है। बहुरि श्रीमत अर्हंत पदको कारण सो तीर्थंकर नाम है।

बहुरि जाके उदयतै एकेंद्रियविषैं उपजै सो स्थावरनाम है। बहुरि जाके उदयकरि काहूकरिरुकै नाहीं काहूकौं रोकै नाहीं ऐसा सूक्ष्म शरीर होइ सो सूक्ष्म नाम है। बहुरि छह पर्याप्तिका अभावकौं कारण ऐसा अपर्याप्ति नाम है पर्याप्ति नाम पूर्ण होनेका है सो पूर्ण होने न देवै। बहुरि एक शरीरविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुत अनंत आत्मा पाइए सो एक शरीर अनंत जीवनिके उपभोगकौं कारण सो साधारण नाम है। याका उदय निगोद जीवनिहीकैं है। बहुरि धातु वा उपधातु अपने ठिकाने स्थिर न रहै चलायमान जाके उदयतैं होइ सो अस्थिर नाम है। बहुरि जाके उदयतैं अमनोज्ञ अप्रशस्त बुरे मस्तकादि अवयव निपजै सो अशुभ नाम है। बहुरि जाके उदयतैं रूपादिक गुण संयुक्त होत संते भी अन्य जन अप्रीतिकरैं प्रीति न करैं सो दुर्भग नाम। बहुरि जाके उदयतैं अमनोज्ञ असुहावना स्वर शब्द निपजै सो दुःस्वर नाम है। बहुरि जाके उदयतैं प्रभा कांति करि रहित शरीर निपजै सो अनादेय नाम है। बहुरि जाके उदयतैं पुण्य गुणतैं उलटा अपजस जगतविषैं प्रगट होइ सो अयशस्कीर्ति नाम है।

बहुरि जाके उदयतैं लोकपूजित कुलविषैं जन्म होइ सो उच्च गोत्र है। बहुरि जाके उदय तैं लोक निंदित कुलविषैं जन्म होइ सो नीच गोत्र हैं।

बहुरि जाके उदयतैं दीया चाहैं परि देवे नाहीं सो दानांतराय है। बहुरि जाके उदयतैं लाभको चाहैं परंतु लाभ होइ नाहीं सो लाभांतराय है। बहुरि जाके उदयतैं पुष्पादिकके भोगनेको चाहै परंतु भोगवै नाहीं सो भोगांतराय है। बहुरि जाके उदयतैं स्त्र्यादिकको बारंबार भोगनेको चाहै परंतु उपभोग होइ नाही सो भोगांतराय है। बहुरि जाके उदयतैं अपनी शक्ति प्रकट करनेको चाहैं परंतु शक्ति प्रकट न होइ सो वीर्यांतराय है सो 'दानस्य अंतरायः, इत्यादिकविषैं षष्ठी तत्पुरुष समास जानना। जातैं दानादिक परिणमनका विघ्नकौं करण अंतराय कर्म है ऐसैं उत्तर प्रकृतिनिकी निरुक्ति कही ॥ ३३ ॥ आगैं नाम कर्मकी उत्तर प्रकृतिनिविषैं अभेद विवक्षाकरि जे प्रकृति गर्भित हो है तिनकौं दिखावै है।

देहे अविणाभावी बंधणसंघाद इदि अबंधुदया।
वण्णचउक्केऽभिण्णे गहिदे चत्तारि बंधुदये ॥ ३४ ॥ ३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देहे अविनाभाविनौ बंधनसंघातौ इति अबंधोदयौ ।
वर्णचतुष्केऽभिन्ने गृहीते चतस्रः बंधोदययोः ॥ ३४ ॥

जी० प्र०—देहे पंचविधशरीरनामकर्मणि स्वस्वबंधनसंघातौ अविनाभाविनौ इति कारणात् अबंधोदयौ-बंधोदयप्रकृती न भवतः । तत्र पृथग्नोक्तावित्यर्थः । वर्णचतुष्के वर्णगंधरसस्पर्शसामान्यचतुष्के अभिन्ने अभेदविवक्षया एकैकस्मिन्नेव गृहीते सत्त्वादन्यत्र बंधोदययोश्चतस्र एव प्रकृतयो भवंति । शेषषोडशानां पृथक् कथनं नास्तीत्यर्थः ॥ ३४ ॥ तथा सति ता बंधोदयसत्त्वप्रकृतयः कति ? इति चेत् चतुर्भिर्गाथाभिराह—

देह जो पंच प्रकार शरीर नामा नामकर्म तिसविषैं अपना अपना बंधन अर अपना अपना संघात अविनाभाव है उस बिना वह न होइ सो अविनाभावी कहिए इस कारणतैं पंच बंधन अर पंच संघात ए दश प्रकृति बंधरूप वा उदयरूप नाहीं हैं भावार्थ—बंध और उदयविषैं ए दशौ जुदे न कहे शरीर प्रकृतिविषैं ही गर्भित कीए हैं । बहुरि वर्णादिक च्यारि वर्ण गध रस स्पर्श इनविषैं अभेदविवक्षा करि इनके वीस भेद ग्रहण कीए ए मूल च्यारि ही प्रकृति बंध अर उदयविषैं कहिए । तिनके वीस भेद मूल च्यारिभेद विषैं गर्भित कीए तातैं सोलह प्रकृति बंध अर उदयमें जुदी न कही ॥ ३४ ॥ ऐसैं होते बंधरूप वा उदयरूप वा सत्तारूप प्रकृति केती केती है ? सो च्यारि गाथानिकरि कहैं हैं ।

पंच णव दोण्णि छव्वीसमवि य चउरो कमेण सत्तट्ठी ।
दोण्णि य पंच य भणिया एदाओ बंधपयडीओ ॥ ३५ ॥

पंच नव द्वौ षड्विंशतिरपि च चतस्रः क्रमेण सप्तषष्टिः ।
द्वौ च पंच च भणिता एता बंधप्रकृतयः ॥ ३५ ॥

जी० प्र०—पंच ज्ञानावरणानि नव दर्शनावरणानि द्वे वेदनीये षड्विंशतिर्मोहनीयानि । कुतः ? मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योरुदयसत्त्वयोरेव कथनात् । चत्वारि आयूंषि । सप्तषष्टिर्नामानि कुतः ? दशबंधनसंघातषोडशवर्णादीनामंतर्भावात् । द्वे गोत्रे । पंचांतराया इत्येता विंशत्युत्तरशतबंधयोग्या भणिताः सर्वज्ञैः ॥ ३५ ॥ उदयप्रकृतीराह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—पांच ज्ञानावरण, नव दर्शनवरण, दोय वेदनीय, छब्बीस मोहनीय, जातैं मिश्र प्रकृति अर सम्यक्त्व प्रकृति ए दोऊ बंधविषैं नाहीं है उदय अर सत्त्व ही विषैं पाइए हैं। च्यारि आयु, सतसठि नाम जातैं तरेणवैं-मैंस्यो दश बंधन संघात अर सोलह वर्णादिक ए छब्बीस गर्भितकरि घटाइए। दोय गोत्र, पांच अंतराय ए सर्व एकसौ वीस प्रकृति बंध योग्य सर्वज्ञदेव कही है ॥ ३५ ॥ आगें उदय प्रकृतिनिकौं कहै हैं—

पंच णव दोण्णि अट्ठावीसं चउरो कमेण सत्तट्ठी।
दोण्णि य पंच य भणिया एदाओ उदयपयडीओ ॥ ३६॥

पंच नव द्वौ अष्टाविंशतिः चतस्रः क्रमेण सप्तषष्टिः।
द्वौ च पंच च भणिता एता उदयप्रकृतयः ॥ ३६ ॥

जी० प्र०—उदयप्रकृतयो ज्ञानावरणादीनां क्रमेण पंच नव द्वे अष्टाविंशतिः चतस्रः सप्तषष्टिः द्वे पंच मिलित्वा द्वाविंशत्युत्तरशतं भणिताः ॥३६॥ ता एवं बंधोदयप्रकृतीर्भेदाभेदविवक्षया संख्याति—

स० चं०—ज्ञाना वरणादिक कर्मनिकी अनुक्रमतैं पांच नव दोय अठाईस च्यारि सतसठि दोय पांच प्रकृति मिलिकरि एकसौ बाईस उदय होने योग्य प्रकृति कही है ॥ ३६ ॥ आगैं ते बंधरूप वा उदयरूप प्रकृतिनिकी भेद विवक्षा करि वा अभेदविवक्षा करि संख्या कहैं हैं—

भेदे छादालसयं इदरे बंधे हवंति वीससयं।
भेदे सव्वे उदये बावीससयं अभेदम्हि ॥ ३७॥

भेदे षट्चत्वारिंशच्छतमितरे बंधे भवंति विंशशतं।
भेदे सर्वे उदये द्वाविंशशतमभेदे ॥ ३७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—बंधे भेदविवक्षायां षट्चत्वारिंशच्छतं प्रकृतयो भवंति। अभेदविवक्षायां विंशत्युत्तरशतं। उदये भेदविवक्षायां सर्वा अष्टचत्वारिंशच्छतं अभेदविवक्षायां द्वाविंशत्युत्तरशतं ॥ ३७ ॥ सत्त्वप्रकृतीराह—

स० चं०—बंधविषैं भेदविवक्षा गर्भित किए तो मिश्र अर सम्यक्त्व प्रकृति विना एकसौ छियालीस प्रकृति हैं। अभेद विवक्षाकरि गर्भित कीजिए तौ एकसौ वीस प्रकृति हैं। बहुरि उदयविषैं भेदविवक्षाकरि सर्व एकसौ अठतालीस प्रकृति हैं। अभेद विवक्षाकरि एकसौ वाईस प्रकृति हैं ॥ ३७ ॥ आगैं सत्त्व प्रकृतिनिकौं कहैं हैं—

पंच णव दोण्णि अट्ठावीसं चउरो कमेण तेणउदी।
दोण्णि य पंच य भणिया एदाओ सत्तपयडीओ ॥ ३८ ॥

पंच नव द्वौ अष्टाविंशतिः चत्वारः क्रमेण त्रिनवतिः।
द्वौ च पंच च भणिताः एताः सत्त्वप्रकृतयः ॥ ३८ ॥

जी० प्र—पंच नव द्वे अष्टविंशतिः चतस्रः त्रिनवतिः द्वे पंच एताः क्रमेण ज्ञानावरणादीनां सत्त्वप्रकृतयोऽष्टचत्वारिंशच्छतं सर्वज्ञैर्भणिताः ॥ ३८ ॥ घातिकर्माणि सर्वघातीनि देशघातीनि च। तत्र सर्वघातीन्याह—

स० चं०—ज्ञानावरणादिक कर्मनिकी अनुक्रमतैं पांच नव दोय अठाईस च्यारि तरेणवै दोय पांच ए सर्व प्रकृति मिलिकरि एकसो अठतालीस सत्त्वरूप प्रकृति सर्वज्ञ देवनिकरि कही हैं ॥ ३८ ॥ पूर्वे जे घाति कर्म कहे थे तिनके दोय भेद—सर्वघाती १ अर देशघाती २ तहां सर्वघाति प्रकृतनिकौं कहैं हैं—

केवलणाणावरणं दंसणछक्कं कसायबारसयं।
मिच्छं च सव्वघादी सम्मामिच्छं अबंधह्मि ॥ ३९ ॥

केवलज्ञानावरणं दर्शनषट्कं कषायद्वादशकं।
मिथ्यात्वं च सर्वघातीनि सम्यग्मिथ्यात्वमबंधे ॥ ३९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी॰ प्र॰—केवलज्ञानावरणं केवलदर्शनावरणं स्त्यानगृद्ध्यादिपंचकं अनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानक्रोधमानमायालोभाः, मिथ्यात्वकर्मेति विंशतिः सर्वघातीनि भवंति । सम्यग्मिथ्यात्वं तु बंधप्रकृतिर्नेत्युदयसत्त्वयोरेव जात्यंतरसर्वघाति भवति ॥ ३९ ॥ देशघातीन्याह—

स॰ चं॰—केवल ज्ञानवरण १ केवल दर्शनावरण १ स्त्यानगृद्धिकौं आदि देकरि पांच निद्रा ५ अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान क्रोध मान माया लोभ १२ मिथ्यात्व १ ए सर्व वीस प्रकृति सर्वघाती है। बहुरि सम्यग्मिथ्यात्व बंध विषै नाहीं हैं। उदय अर सत्वविषैं ही जुदी ही जातिका सर्वघाती है तातैं बंधविषैं वीस प्रकृति सर्वघाती हैं। उदय सत्वविषैं इकईस प्रकृति सर्वघाती हैं। जिनके उदय होतैं जीवका गुण सर्वथा प्रगट न होइ जैसें केवलज्ञानावरणका उदय होतैं केवलज्ञान प्रगट न होइ सो ऐसी सर्वघाती प्रकृति जाननी ॥ ३९ ॥ आगैं देशघाती प्रकृतिनिकौं कहैं हैं—

णाणावरणचउक्कं तिदंसणं सम्मगं च संजलणं ।
णव णोकसाय विग्घं छव्वीसा देसघादीओ ॥ ४० ॥

ज्ञानावरणचतुष्कं त्रिदर्शनं सम्यक्त्वं च संज्वलनं ।
नव नोकषाया विघ्नं षड्विंशतिः देशघातीनि ॥ ४० ॥

जी॰ प्र॰—मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानावरणानि । चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणानि । सम्यक्त्वप्रकृतिः । संज्वलनक्रोधमानमायालोभाः । हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्सास्त्रीपुंनपुंसकानि । दानलाभभोगोपभोगवीर्यांतरायाश्चेति षड्विंशतिर्देशघातीनि ॥ ४० ॥ घातिनां सर्वदेशघातिभेदौ प्ररूप्य अघातिनां प्रशस्ताप्रशस्तभेदप्ररूपणो प्रशस्तप्रकृतीर्गाथाद्वयेन आह—

स॰ चं॰—मति श्रुत अवधि मनःपर्यय ज्ञानावरण च्यारि ४ चक्षु अचक्षु अवधिदर्शनावरण ३ सम्यक्त्व प्रकृति १ संज्वलन क्रोध मान माया लोभ ४ हास्य रति अरति शोक भय जुगुप्सा स्त्रीवेद पुरुषवेद नपुंसकवेद ए नव ९ । दान लाभ भोग उपभोग वीर्य अंतराय पांच ५ । ए छव्वीस देशघाती प्रकृति हैं। जिनकें उदय होत संतैं भी जीवका गुण प्रगट होइ जैसैं वारह्वां गुणस्थान पर्यंत मतिज्ञावरणादिकका उदय भी पाइए अर मतिज्ञा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नादिक भी पाइए सो देशघाती जानना ।॥ ४० ॥ ऐसैं घाति कर्मनिका देशघाती अर सर्वघाती भेद कहिकरि आगैं अघाति कर्मनिके प्रशस्त अप्रशस्त दोय भेद हैं तिनिविषैं प्रशस्त प्रकृतनिकौं दोय गाथानि करि कहैं हैं—

सादं तिण्णेवाऊ उच्चं णरसुरदुगं च पंचिंदी ।
देहा बंधणसंघादंगोवंगाइं वण्णचओ ॥ ४१ ॥
समचउरवज्जरिसहं उवघादूणगुरुछक्क सग्गमणं ।
तसबारसट्ठसट्ठी बादालमभेददो सत्था ॥ ४२ ॥ जुम्मं ।

सातं त्रीण्येवायूंषि उच्चं नरसुरद्विकं च पंचेंद्रियं ।
देहा बंधनसघातांगोपांगानि वर्णचतुष्कं ॥ ४१ ॥
समचतुरस्रवर्षभमुपघातोनागुरुषटकं सद्गमनं ।
त्रसद्वादशाष्टषाष्टिः द्वाचत्वारिंशदभेदतः शस्ताः ॥ ४२ ॥

जी० प्र०—सातवेदनीयं तिर्यग्मनुष्यदेवायूंषि उच्चैर्गोत्रं मनुष्यगतितदानुपूर्व्ये देवगतितदानुपूर्व्ये पंचेंद्रियं पंचशरीराणि पंचबंधनानि पंचसंघाताः त्रीण्यंगोपांगानि शुभवर्णगंधरसस्पर्शाः समचतुरस्रसंस्थानं वज्रर्षभनाराचसंहननं अगुरुलघुपरघातोच्छ्वासातपोद्योताः प्रशस्तविहायोगतिः त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकशरीरस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तिनिर्माणतीर्थकराणि । एवमष्टषष्टिर्भेदविवक्षया प्रशस्ताः अभेदविवक्षया द्विचत्वारिंशत् । सद्वेद्यशुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यमित्युक्ता एवेत्यर्थः ॥ ४१–४२ ॥ अप्रशस्तप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—साता वेदनीय १ तिर्यंच मनुष्य देव आयु ३ उच्चगोत्र १ मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी २ देवगति देवगत्यानुपूर्वी २ पंचेंद्री जाति १ पंच शरीर ५ पंच बंधन ५ पंच संघात ५ तीन अंगोपांग ३ शुभवर्ण गंध रस स्पर्श वीस २० समचतुरस्र संस्थान १ वज्रवृषभ नाराच संहनन १ अगुरुलघु १ परघात १ उच्छ्वास १ आतप १ उद्योत १ प्रशस्त विहायोगति १ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक शरीर १ स्थिर । शुभ १ सुभग १ सुस्वर १ आदेय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१ यशस्कीर्ति १ निर्माण १ तीर्थंकर १ ए अडसठि ६८ प्रकृति भेद अपेक्षा करि प्रशस्त पुण्यरूप हैं। अभेद विवक्षा करि पांच बंधन पांच संघात सोला वर्णादिक घटाए बियालीस प्रकृति प्रशस्त हैं सूत्रविषैं भी कह्या है–'सद्वेद्य शुभायुर्नामगोत्राणि पुण्यं' ॥ ४१–४२ ॥ आगैं अप्रशस्त प्रकृतिनिकों दोय गाथानि करि कहैं हैं–

घादी णीचमसादं णिरयाऊ णिरयतिरियदुग जादी।
संठाणसंहदीणं चदुपणपणगं च वण्णचओ ॥ ४३ ॥
उवघादमसग्गमणं थावरदसयं च अप्पसत्था हु।
बंधुदयं पडि भेदे अडणउदि सयं दुचदुरसीदिदरे ॥ ४४ ॥ जुम्मं।

घातीनि नीचमसातं निरयायुः निरयतिर्यग्द्विकं जाति–।
संस्थानसंहतीनां चतुःपंचपंचक च वर्णचतुष्कं ॥ ४३ ॥
उपघातमसद्गमनं स्थावरदशकं च अप्रशस्ता हि।
बंधोदयं प्रति भेदे अष्टनवतिः शतं द्विचतुरशीतिरितरे ॥ ४४ ॥

जी० प्र०—घातीनि सर्वाण्यप्रशस्तान्येवेति तानि सप्तचत्वारिंशत् नीचैर्गोत्रं असातवेदनीयं नरकायुष्यं नरकगतितदानुपूर्व्ये तिर्यग्गतितदानुपूर्व्ये
एकेंद्रियादिचतुर्जातयः न्यग्रोधपरिमंडलादिपंचसंस्थानानि वज्रनाराचादिपंचसंहननानि अशुभवर्णगंधरसस्पर्शाः उपघातः अप्रशस्तविहायोगतिः स्थाव-
रसूक्ष्मपर्याप्तसाधारणास्थिराशुभदुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्तयः इत्येता अप्रशस्ताः बंधोदयौ प्रति क्रमेण भेदविवक्षायामष्टनवतिः शतं च भवंति।
अभेदविवक्षायां द्व्यशीतिश्चतुरशीतिश्च भवंति ॥ ४३–४४ ॥ कषायकार्यमाह—

स० चं०—घातिकर्म सर्व अप्रशस्त ही हैं सो तिनकी सैतालीस प्रकृति ४७ अर नीच गोत्र १ असाता
वेदनीय १ नरक आयु १ नरक गति नरकगत्यानुपूर्वी २ तिर्यंचगति तिर्यंचगत्यानुपूर्वी २ एकेंद्रियादिक च्यारि
जाति ४ न्यग्रोध परिमंडलादिक पांच संस्थान ४ वज्रनाराचादिक पंच संहनन ५ अशुभ वर्ण गंध रस स्पर्श वीस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथवा च्यारि २०–४ । उपघात १ अप्रशस्त विहायोगति १ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ अस्थिर अशुभ १ दुर्भग १ दुःस्वर १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ ए अप्रशस्त प्रकृति हैं। ते भेदविवक्षाकरि संबंधरूप अठ्याणवे प्रकृति हैं ९८ । उदयरूप एकशत प्रकृति है १०० । अभेद विवक्षाकरि वर्णादि विषैं सोलह घटाए बंधरूप वियालीस प्रकृति हैं । उदयरूप चौरासी प्रकृति हैं ॥ ८४ । बहुरि सातारूप सौ १०० प्रकृति हैं ॥ ४३–४४ ॥ आगैं कषायनिका कार्य कहैं हैं—

पढमादिया कसाया सम्मत्तं देससयलचारित्तं ।
जहखादं घादंति य गुणणामा होंति सेसावि ॥ ४५ ॥

प्रथमादिकाः कषायाः सम्यक्त्वं देशसकलचारित्रं ।
यथाख्यातं घातयंति च गुणनामानो भवंति शेषा अपि ॥ ४५ ॥

जी० प्र०—अनंतानुबंधिनः सम्यक्त्वं घ्नंति । अप्रत्याख्यानकषायाः देशचारित्रं, प्रत्याख्यानकषायाः सकलचारित्रं, संज्वलना यथाख्यातचारित्रं तेन गुणनामानो भवंति । तथाहि—

अनंतसंसारकारणत्वात् मिथ्यात्वमनंतं तद्बंध्नंतीत्यनंतानुबंधिनः । अप्रत्याख्यानं-ईषत्संयमः देशसंयमः तं कषंतीति अप्रत्याख्यानकषायाः । प्रत्याख्यानं सकलसंयमः तं कषंतीति प्रत्याख्यानकषायाः। सम् एकीभूत्वा ज्वलंति संयमेन सहानवस्थानात् संयमो वा ज्वलत्येषु सत्स्वपीति संज्वलनाः तएव यथाख्यातं कषंतीति संज्वलनकषायाः । एवं शेषनोकषायज्ञानावरणादीन्यप्यन्वर्थसंज्ञानि भवंति ॥ ४५ ॥ संज्वलनादिचतुःकषायाणां वासनाकालमाह—

स चं –अनंतानुबंधी कषाय सम्यक्त्वकौं घातै हैं । अप्रत्याख्यान कषाय देशचारित्रकौं घातै है । प्रत्याख्यान कषाय सकल चारित्रको घाते हैं । संज्वलन कषाय यथाख्यात चारित्रकौं घाते हैं । ताते ए सार्थक गुणसहित नाम के धारक हैं सोई कहिए है—

अनंत संसारकौ कारण है तातैं अनंत कहिए मिथ्यात्व ताहि अनुबध्नंति कहिए संबधरूप करैं ते अनंता-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नुबंधी हैं। बहुरि अप्रत्याख्यान कहिए ईषत् देशचारित्र ताहि कषंति कहिए घातैं ते अप्रत्याख्यान कषाय हैं। बहुरि प्रत्याख्यान कहिए सकल संयम ताहि कषंति कहिए घातैं ते प्रत्याख्यान कषाय हैं। सं कहिए एकीभूत होइ संयमकी साथि ज्वलंति कहिए प्रकाशरूप रहै अथवा जिनकौं होतसंते भी संयम ज्वलति कहिए प्रगट रहै ते संज्वलन कषाय हैं। ऐसैं ही अवशेष रही नोकषाय वा ज्ञानावरणादिक ते भी सार्थक नामके धारक हैं सो पूर्व निरुक्ति करि कहे ही है ॥ ४५ ॥ आगैं संज्वलनादिक च्यारि कषायनिका वासनाकाल कहैं हैं—

अंतोमुहुत्त पक्खं छम्मासं संखऽसंखणंतभवं।
संजलणमादियाणं वासणकालो दु णियमेण ॥ ४६ ॥

अंतर्मुहूर्तः पक्षः षण्मासाः संख्यासंख्यानंतभवाः।
संज्वलनाद्यानां वासनाकालः तु नियमेन ॥ ४६ ॥

जी० प्र०—उदयाभावेऽपि तत्संस्कारकालो वासनाकालः स च संज्वलनानामंतर्मुहूर्तः। प्रत्याख्यानावरणानामेकपक्षः। अप्रत्याख्यानावरणानां षण्मासाः। अनंतानुबंधिनां संख्यातभवाः, असंख्यातभवाः, अनंतभवा वा भवंति नियमेन ॥ ४६ ॥ अथ पुद्गलविपाकीन्याह—

स चं०—उदयका अभाव होत संतै भी जो कषायनिका संस्कार जितने काल रहै ताका नाम वासनाकाल है सो संज्वलन कषायनिका वासनाकाल अंतर्मुहूर्तमात्र। प्रत्याख्यानकषायनिका एक पक्ष है। अप्रत्याख्यान कषायनिका छह महिना है। अनंतानुबंधी कषायनिका संख्यातभव असंख्यातभव अनंतभव पर्यंत वासनाकाल है। जैसैं काहू पुरुषने क्रोध कीया पीछे क्रोध मिटि और कार्यविषैं लग्या तहां क्रोधका उदयतौ नाहीं परंतु वासनाकाल रहै तेतैं जीहस्यों क्रोध कीया था तीहस्यों क्षमारूप भी न प्रवर्तै सो ऐसैं वासनाकाल पूर्वोक्त प्रमाण सब कषायनिका नियमकरि जानना ॥ ४६ ॥ आगैं पुद्गलविपाकी प्रकृतिनिका कहैं हैं—

देहादी फासंता पण्णासा णिमिणतावजुगलं च।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थिरसुहपत्तेयदुगं अगुरुतियं पोग्गलविवाई ॥ ४७ ॥

देहादयः स्पर्शांताः पंचाशत् निर्माणातपयुगलं च।
स्थिरशुभप्रत्येकद्विकमगुरुत्रयं पुद्गलविपाकिन्यः ॥ ४७ ॥

जी० प्र०—पंचशरीरपंचबंधनपंचसंघातषट्संस्थानत्रयंगोपांगषट्संहननपंचवर्णद्विगंधपंचरसाष्टस्पर्शाइकमिति पंचाशत् । निर्माणं आतपोद्योतौ स्थिरास्थिरशुभाशुभप्रत्येकसाधारणानि अगुरुलघूपघातपरघाताश्चेतिद्वाषष्ठिः पुद्गलविपाकीनि भवंति । पुद्गले एव एषां विपाकित्वात् ॥ ४७ ॥ भवक्षेत्रजीवविपाकीन्याह—

स चं०—पांच शरीर ५ पांच बंधन ५ पांच संघात ५ छह संस्थान ६ तीन अंगोपांग ३ छह संहनन ६ पंच वर्ण ५ दोयगंध २ पांच रस ५ आठ स्पर्श ८ ए पंचास अर निर्माण १ आतप १ उद्योत १ स्थिर १ अस्थिर १ शुभ १ अशुभ १ प्रत्येक १ साधारण १ अगुरुलगु १ उपघात १ परघात १ ए बारह ऐसैं सर्व बासठि प्रकृति पुद्गल विपाकी है पुद्गलहीविषैं इनिका उदय है। जैसैं शरीर प्रकृतिके उदयतैं पुद्गलही शरीर रूप होइ परिणवै ऐसैं सब प्रकृतिनिका स्वरूप जाननां ॥ ४७ ॥ आगैं भवविपाकी क्षेत्रविपाकी जीवविपाकी प्रकृतिनिकौं कहैं हैं—

आऊणि भवविवाई खेत्तविवाई य आणुपुव्वीओ।
अट्ठत्तरि अवसेसा जीवविवाई मुणेयव्वा ॥ ४८ ॥

आयूंषि भवविपाकीनि क्षेत्रविपाकीनि च आनुपूर्व्याणि।
अष्टसप्ततिरवशिष्टा जीवविपाकिन्यः मंतव्याः ॥ ४८ ॥

जी० प्र०—चत्वारि आयूंषि भवविपाकीनि । चत्वारि आनूपूर्व्याणि क्षेत्रविपाकीनि अवशिष्टाष्टसप्ततिः जीवविपाकीनि नरकादिजीवपर्यायनिर्वर्तनहेतुत्वात् । एवं प्रकृतिकार्यविशेषाः ज्ञातव्याः ॥ ४८ ॥ तानि जीवविपाकीनि कानि ? इति चेदाह—

स चं०—च्यारि आयु कर्मकी प्रकृति भवविपाकी है जातैं मनुष्यादिक पर्याय ही विषैं इनिका उदय है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि च्यारि आनुपूर्वी क्षेत्रविपाकी हैं जातैं जीवकौं परलोकका गमन करतैं आकार रूप क्षेत्रहीविषैं इनिका उदय है। बहुरि अवशेष रहीं अठहत्तर प्रकृति ते जीव विपाकी है जातैं नरकादिक जीवके पर्याय तिनकौं उपजावनेकौं कारण हैं तातैं जीवविपाकी कहिए ॥ ४८ ॥ ते जीव विपाकी कौन प्रकृति हैं ? सो कहिए—

वेदणियगोदघादीणेकावण्णं तु णामपयडीणं ।
सत्तावीसं चेदे अट्ठत्तरि जीवविवाई (ओ) ॥ ४९ ॥

वेदनीयगोत्रघातिनामेकपंचाशत्तु नामप्रकृतीनां ।
सप्तविंशतिश्चैता अष्टसप्ततिः जीवविपाकिन्यः ॥ ४९ ॥

जी० प्र०—वेदनीयद्वयं गोत्रद्वयं घातिसप्तचत्वारिंशत् नामसप्तविंशतिश्चेति अष्टसप्ततिर्जीवविपाकीनि भवंति ॥४९॥ तत्सप्तविंशतिं गाथाद्वयेनाह—

स चं०—वेदनीय दोय २ गोत्र दोय २ घाति कर्मनिकी प्रकृति सैतालीस ४७ इक्यावन तौ ए भई, सत्ताईस नामकी प्रकृति २७ ए सर्व अठहत्तर प्रकृति जीव विपाकी हैं ॥ ४९ ॥ ते सत्ताईस नामकर्मकी प्रकृति कौन ? सो कहैं हैं—

तित्थयरं उस्सासं बादरपज्जत्तसुस्सरादेज्जं ।
जसतसविहायसुभगदु चउगइ पणजाइ सगवीसं ॥ ५० ॥

तीर्थंकरमुच्छ्वासं वादरपर्याप्तसुस्वरादेयं ।
यशस्त्रसविहायस्सुभगद्वयं चतुर्गतयः पंचजातयः सप्तविंशतिः ॥ ५० ॥

जी० प्र०—तीर्थंकरं, उच्छ्वासः वादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तसुस्वरदुःस्वरादेयानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्तित्रसस्थावरप्रशस्ताप्रशस्तविहायोगतिसुभगदुर्भगचतुर्गतयः पंचजातयश्चेति नामकर्म सप्तविंशतिः ॥ ५० ॥

स चं०—तीर्थंकर १ उच्छ्वास १ वादर १ सूक्ष्म १ पर्याप्त १ अपर्याप्त १ सुस्वर १ दुःस्वर १ आदेय १ अनादेय १ यश- ४९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्कीर्ति १ अयशस्कीर्ति १ त्रस १ स्थावर १ प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति २ सुभग १ दुर्भग १ च्यारि गति ४ पंच जानि ५ ए नामकर्मकी सत्ताईस प्रकृति जीवविपाकी हैं ॥ ५० ॥ इनहीकौं और अनुक्रमतैं कहैं हैं—

गदि जादी उस्सासं विहायगदि तसतियाण जुगलं च।
सुभगादिचउज्जुगलं तित्थयरं चेदि सगवीसं ॥ ५१ ॥

गतिः जातिरुच्छ्वासं विहायोगतिस्त्रसत्रयाणां युगलं च।
सुभगादिचतुर्युगलं तीर्थकरं चेति सप्तविंशतिः ॥ ५१ ॥

जी० प्र०—चतुर्गतयः पंचजातयः उच्छ्वासः विहायोगतित्रसवादरपर्याप्तयुगलानि सुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तियुगलानि तीर्थकरं चेत्यथवा नाम सप्तविंशतिः।

ननु श्रोतारस्त्रिविधाः--अव्युत्पन्नः अवगताशेषविवक्षितपदार्थः एकदेशतोऽवगतविवक्षितपदार्थश्चेति। तत्र प्रथमः--अव्युत्पन्नत्वात् विवक्षितपदार्थं नाध्यवस्यति इदमित्थमेवेति याथात्म्यप्रतिपत्त्यनुत्पत्तेः। गच्छतस्तृणस्पर्शवत्। द्वितीयः-कोर्थोऽस्य ? इति संशेते। सामान्यप्रत्यक्षात् विशेषाप्रत्यक्षात् उभयविशेषस्मृतेश्च संशयस्य दुर्निवारत्वात्। स्थाणुर्वा पुरुषो वेति। अथवा प्रकृतार्थादन्यमर्थमादाय विपर्येति। सामान्यप्रत्यक्षात् विशेषाप्रत्यक्षात् विपरीतस्मृतेश्च विपर्यासस्यावश्यंभावात् शुक्तिकाशकले रजतमिति। तथा तृतीयोऽपि द्वितीयवत् संशेते विपर्येति च तत एवाप्रकृतार्थनिवारणार्थं प्रकृतार्थप्ररूपणार्थं संशयविनाशार्थं तत्त्वावधारणार्थं च यावत्सामान्यादिभेदप्रभेदं कर्म, नामादिचतुर्विधनिक्षेपाश्रयेण नोच्यते तावत् तेषां श्रोतॄणां मनः संशयादिभ्यो न निवर्तते इति तल्लक्षणमुच्यते—

अतद्गुणेषु भावेषु व्यवहारप्रसिद्धये। यत्संज्ञाकर्म तन्नाम नरेच्छावशवर्तनात् ॥ १ ॥
साकारे वा निराकारे काष्ठादौ यन्निवेशनं। सोऽयमित्यवधानेन स्थापना सा निगद्यते ॥ २ ॥
आगामिगुणयोग्योर्थो द्रव्यन्यासस्य गोचरः। तत्कालपर्ययाक्रांतं वस्तु भावोऽभिधीयते ॥ ३ ॥

॥ ५१ ॥ अथ नामादिषु सामान्यकर्म मूलोत्तरप्रकृतीश्च चतुस्त्रिंशद्गाथासूत्रैर्न्यस्यति—

स चं०—च्यारि गति ४ पांचजाति ५ उच्छ्वास १ विहायोगति त्रस वादर पर्याप्त इनिका युगल तिनकी आठ प्रकृति ८ सुभग सुस्वर आदेय यशस्कीर्ति इनकै युगल तिनकी प्रकृति आठ ८ तीर्थकर १ ऐसैं नामकर्मकी सत्ताईस प्रकृति जीवविपाकी जाननी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इहां सुननेवाले श्रोता तीन प्रकार हैं—अव्युत्पन्न १ अवगताशेषविवक्षितपदार्थ २ एकदेशतोऽवगतविवक्षितपदार्थ ३ तहां पहिला अव्युत्पन्न है सो तौ मूर्खपनैतैं विवक्षित पदार्थकौं विचारै ही नाहीं—यहु ऐसैं ही है ऐसी यथार्थ प्रतीतिकी वाकै अप्राप्ति है जैसैं गमन करता पुरुषकैं तृणोंका स्पर्श भया तहां किछू वाकैं तृणोंका विचार नाही तैसैं अव्युत्पन्न श्रोता सुनै है परि वाकैं विचार नाही । सो वाकैं तो अनध्यवसाय पाइए है । बहुरि जीहिं अपनी बुद्धितैं सर्व कह्या अर्थ जान्या ऐसा दूसरा श्रोता सो संशय उपजावै है जैसैं काहूनै खेतविषैं दूरितैं पुरुषाकार देखि संदेह कीया जो यहु माटीका स्थाणु है कि पुरुष है तैसैं जो यहु अर्थ सुनै है तहां याकै सामान्य भाव तौ प्रत्यक्ष है । विशेष भाव अतिशय ज्ञानके अभावतैं प्रत्यक्ष नाहीं है अर यहु दोऊका विचार करै तहां ऐसैं है कि ऐसैं है ऐसा संशयकौं उपजावै ही उपजावै । अथवा कह्या अर्थ और ही ताकौ और प्रकार ग्रहण करि विपर्यय रूप प्रवर्तै है जैसैं सीपका खंडविषै रूपा है ऐसा मानना तैसैं याकै सामान्य तौ प्रत्यक्ष है विशेष प्रत्यक्ष नाहीं अर याकैं विपरीत विचार हो है तातैं कहे अर्थकौं और प्रकार निश्चय करै है । ऐसे इस दूसरा श्रोताकै संशय अर विपर्यय ए दोऊ पाइए हैं । बहुरि जीहिं एकोदेशपनैं कह्या अर्थकौं जान्या ऐसा तीसरा श्रोता सो भी दूसरेकी ज्यौं संशय अर विपर्यय रूप प्रवर्तै हैं ताते अयथार्थ निवारनेके निमित्ति, यथार्थ प्ररूपणाके निमित्ति, संशयके नाश होने निमित्त तत्त्वके अवधारनेके निमित्त सामान्यादिक भेदनिके भेदरूप कर्म कहे तिनिकौं नाम स्थापना द्रव्य भाव निक्षेपनिकरि कहिए है जो न कहिए तौ तिनिका मन संशयादिक रहित न होइ तातैं कहिए है सो प्रथम ही नामादि निक्षेपनिका स्वरूप कहिए है—

अतद्गुणेषु भावेषु व्यवहारप्रसिद्धये । यत्संज्ञाकर्म तन्नाम नरेच्छावशवर्तनात् ॥ १ ॥
साकारे वा निराकारे काष्ठादौ यन्निवेशनं । सोयमित्यवधानेन स्थापना सा निगद्यते ॥ २ ॥
आगामि गुणयोग्योऽर्थो द्रव्यं न्यासस्य गोचरः । तत्कालपर्ययाक्रांतं वस्तुभावोऽभिधीयते ॥ ३ ॥ ५१

जामैं तद्गुण नाहीं ऐसा जो पदार्थ ता विषैं जो व्यवहारकी सिद्धिके निमित्त मनुष्य अपनी इच्छाके बश

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तैं संज्ञा करै तहां नाम निक्षेप है। बहुरि तदाकार वा अतदाकार काष्ठादिक विषैं सो पदार्थ यहु है ऐसा अपना परिणाम करि स्थापन करै तहां स्थापनानिक्षेप है। बहुरि जामैं आगामि कालविषैं गुण प्रगट होइगा ऐसा पदार्थ द्रव्य निक्षेपके गोचर है। बहुरि जाके विषैं वर्तमान काल विषैं तद्गुणरूप पर्याय पाइए हैं सो वस्तु भाव ऐसा कहिए। इहां उदाहरण कहिए है—जैसैं जहां पृथ्वीका स्वामी राजा सो विवक्षित है तहां मनुष्योंने अपनी इच्छाके वशतैं व्यवहारकी सिद्धिके निमित्त किसी एक पुरुषका नाम राजा धर्‍या सो तिसकौं जो राजा कहिए सो नाम निक्षेप है। बहुरि काष्ठ चित्रादिका तदाकार वा अतदाकार विषैं यहु राजा है ऐसा स्थापि चित्र काष्ठादिका वन्या आकारकौं राजा कहिए तहां स्थापना निक्षेप है तहां तदाकार स्थापना राजाकासा आकार होइ तहां जाननी। अतदाकार स्थापना जहां राजाकासा आकार नाहीं अर राजा स्थापिए तहां जाननी। बहुरि जो अगामि कालविषैं राजा होइगा ताकौं राजा कहिए। तहां द्रव्य निक्षेप है। बहुरि वर्तमानमें जो पृथ्वीका स्वामी है ताकौं राजा कहिए तहां भाव निक्षेप है ऐसैं ही जो विवाक्षित होइ ताके नाम स्थापना द्रव्य भाव निक्षेप जानने। सो इहां कर्म विवक्षित है सो याके चौंतीस गाथानि करि च्यारि निक्षेप कहिए है। सो प्रथम ही सर्व ज्ञानावरणादिक समुदाय रूप सामान्य कर्म ताका नाम स्थापना द्रव्य भाव कहिए है—

णामं ठवाणा दवियं भावोत्ति चउव्विहं हवे कम्मं।
पयडी पावं कम्मं मलंति सण्णा हु णाममलं॥ ५२॥

नाम स्थापना द्रव्यं भाव इति चतुर्विधं भवेत्कर्म।
प्रकृतिः पापं कर्म मलमिति संज्ञा हि नाममल॥ ५२॥

जी० प्र०—कर्मसामान्यं नामस्थापनाद्रव्यभावभेदाच्चतुर्विधं। तत्र नाममलं नामकर्म। प्रकृतिरिति-पापमिति-कर्मेति-मलमितिसंज्ञं स्यात्॥५२॥

स० चं०—सामान्य कर्म सो नाम स्थापना द्रव्य भाव भेदतैं च्यारि प्रकार है। तहां प्रकृति वा पाप वा कर्म वा मल ऐसा जो नाम सो नाममलं कहिए नाम निक्षेप रूप कर्म जानना॥ ५२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सरिसासरिसे दव्वे मदिणा जीवट्ठियं खु जं कम्मं ।
तं एदत्ति पदिट्ठा ठवणा तं ठावणाकम्मं ॥ ५३ ॥

सदृशासदृशे द्रव्ये मतिना जीवस्थितं खलु यत्कर्म ।
तदेतादिति प्रतिष्ठा स्थापना तत्स्थापनाकर्म ॥ ५३ ॥

जी० प्र०—सदृशे असदृशे वा वस्तुनि मत्या जीवाशेषप्रदेशप्रचयस्थितं यत्सामान्यकर्म तदिदमिति प्रतिष्ठा स्थापनाकर्मेत्युच्यते ॥ ५३ ॥

सं० च०—बहुरि सदृश कहिए कर्म सरीखा असदृश कहिए कर्म सरीखा नाही ऐसा कोई द्रव्य ताके विषैं बुद्धिकरि ऐसी प्रतिष्ठा स्थापना कीजिए जो जीवके समस्त प्रदेशनिका समूह विषैं है जो सामान्य कर्म सो यहु है तहां स्थापना निक्षेप रूप कर्म कहिए है ॥ ५३ ॥

दव्वे कम्मं दुविहं आगमणोआगमंति तप्पढमं ।
कम्मागमपरिजाणुगजीवो उवजोगपरिहीणो ॥ ५४ ॥

द्रव्ये कर्म द्विविधमागमनोआगममिति तत्प्रथमं ।
कर्मागमपरिज्ञायकजीव उपयोगपरिहीनः ॥ ५४ ॥

जी० प्र०—द्रव्ये कर्म द्विविधं आगमनोआगमभेदात् । तत्र कर्मस्वरूपप्रतिपादकागमस्य वाच्यवाचकज्ञातृज्ञेयसंबंधपरिज्ञायकजीवो यः तदर्थावधारणचिंतनव्यापाररूपोपयोगरहितः स आगमद्रव्यकर्म भवति ॥ ५४ ॥

स० चं०—बहुरि द्रव्य निक्षेप रूप कर्म दोय प्रकार है एक आगम द्रव्यकर्म १ एक नोआगम द्रव्यकर्म २ तहां कर्मका स्वरूप जिस आगम अर्थ शब्दका संबंध करि वा ज्ञाता ज्ञेयका संबंधकरि जाननहारा जो जीव होइ अर वर्तमान कालविषैं तिस आगमका अर्थका अवधारण वा चितवन इत्यादि परिणमन रूप उपयोग रहित होइ अन्यत्र उपयोग युक्त होइ तहां सो जीव अगम द्रव्य कर्म है ॥ ५४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाणुगसरीर भवियं तव्वदिरित्तं तु होदि जं विदियं ।
तत्थ सरीरं तिविहं तियकालगयंति दो सुगमा ॥ ५५ ॥

ज्ञायकशरीरं भावि तद्व्यतिरिक्तं तु भवति यद्द्वितीयं ।
तत्र शरीरं त्रिविधं त्रयकालागतमिति द्वे सुगमे ॥ ५५ ॥

जी० प्र०—तु-पुनः यद्द्वितीयं नो-आगमद्रव्यकर्म तत्त्रिविधं भवति-ज्ञायकशरीरं भावि तद्व्यतिरिक्तमिति । तत्र ज्ञायकशरीरं त्रिविधं त्रिकालागतमिति । तत्र वर्तमानभाविशरीरे द्वे सुगमे तत्तत्कालवर्तित्वात् ॥ ५५ ॥ भूतशरीरस्याह—

स० चं०—बहुरि दूसरा नोआगम द्रव्य कर्म है सो तीन प्रकार है ज्ञायक शरीर १ भावि २ तद्व्यतिरिक्त ३ ए तीन भेद हैं। तहां ज्ञायक जो कर्मस्वरूपका जाननहारा जीव ताका जो शरीर ताकौं ज्ञायकशरीर नोआगम द्रव्य कर्म कहिए तहां ज्ञायक शरीर तीन प्रकार है भूत १ वर्तमान २ भावी ३ ऐसैं त्रिकालगत हैं। तहां जिस शरीर सहित जीव कर्म स्वरूपका जानन हारा है सो वर्तमान शरीर है। याके पहिली शरीर छोड आया सो भूत शरीर है। आगामि जो शरीर धरैगा सो भावि शरीर हैं। तहां वर्तमान शरीर अर भावि शरीर ए दोऊ सुगम हैं। वर्तमान शरीरकौं धारैं है ही। भावी शरीर आगामि कालविषैं धरैगा ही ॥ ५५॥ भूत शरीर छोडकर आया सो कौंन कौंन प्रकार शरीरका त्यजन हो है सो इस अपेक्षाकरि भूत शरीरके विशेष कहैं हैं—

भुदं तु चुदं चइदं चदंति तेधा चुदं सपाकेण ।
पडिदं कदलीघादपरिच्चागेणूणयं होदि ॥ ५६ ॥

भूतं तु च्युतं च्यावितं त्यक्तमिति त्रेधा च्युतं स्वपाकेन ।
पतितं कदलीघातपरित्यागेनोनं भवति ॥ ५६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—ज्ञायकस्य भूतशरीरं तु पुनः च्युतं च्यावितं त्यक्तं चेति त्रिधा । तत्र च्युतं स्वपाकेन पतितमपि कदलीघातसन्यासभ्याम्ऊनं भवति ॥ ५६ ॥ कदलीघातस्य लक्षणमाह—

स चं०—ज्ञायकका जो भूत शरीर है सो तीन प्रकार है च्युत १ च्यावित २ त्यक्त ३ तहां अन्य कारण विनां अपने उदय हीतैं जो शरीर पड़ै विनशै सो च्युत कहिए सो यहु शरीर कदली घात वा सन्यास इनकरि ऊनः कहिए रहित जानना ॥ ५६ ॥ तहां कदली घातका लक्षण कहैं हैं—

बिसवेयणरत्तक्खयभयसत्थग्गहणसंकिलेसेहिं ।

उस्सासाहाराणं णिरोहदो छिज्जदे आऊ ॥ ५७ ॥

विषवेदनारक्तक्षयभयशस्त्रघातसंक्लेशैः ।

उच्छ्वासाहारयोर्निरोधतः छिद्यते आयुः ॥ ५७ ॥

जी० प्र०—विषवेदनारक्तक्षयभयशस्त्रघातसंक्लेशोच्छ्वासनिरोधाहारनिरोधैर्हेतुभिरायुः छिद्यते स कदलीघातः ॥ ५७ ॥

स चं०—विष वा तीव्र वेदना वा लोहीका क्षय वा तीव्र भय वा शस्त्रका घात वा क्रोधादिक रूप तीव्र संक्लेश वा उस्वासका रुकना वा आहारका रुकना इन कारणनिकरि जो आयु छिदै विनशै सो कदलीघात कहिए ॥ ५७ ॥

कदलीघादसमेदं चागविहीणं तु चइदमिदि होदि ।

घादेण अघादेण व पडिदं चागेण चत्तमिदि ॥ ५८ ॥

कदलीघातसमेतं त्यागविहीनं तु त्यक्तमिति भवति ।

घातेन अघातेन वा पतितं त्यागेन त्यक्तमिति ॥ ५८ ॥

जी० प्र०—तु—पुनः ज्ञायकस्य यद्भूतशरीरं कदलीघातसमेतं सत् पतितं । त्यागेन सन्यासेनोनं तदा तच्च्यावितमिति भवति । कदलीघातेन तद्विना वा त्यागेन पतितं त्यक्तमिति ॥ ५८ ॥ तस्यैव मरणविधानेन त्रैविध्यमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स चं०—बहुरि ज्ञायकका जो भूत शरीर सो कदली घातकरि संयुक्त पड्या होइ नष्ट भया होइ सन्यासकरि रहित होइ तहां सो शरीर अन्य कारणतैं छुट्या तातैं च्यावित कहिए। बहुरि कदली घातकरि वा कदली घात विना जो सन्यासकरि सहित शरीर नष्ट होइ सो त्यक्त कहिए अपने परिणामनितैं सन्यास धारि शरीर छोडा तातैं त्यक्त कहिए ॥ ५८ ॥ सो सन्यास मरणका तीन विधान कहैं हैं—

भत्तपइण्णाइंगिणिपाउग्गविधीहिं चत्तमिदि तिविहं।
भत्तपइण्णा तिविहा जहण्णमज्झिमवरा य तहा ॥ ५९ ॥

भक्तप्रतिज्ञेंगिनीप्रायोग्यविधिभिः त्यक्तमिति त्रिविधं।
भक्तप्रतिज्ञा त्रिविधा जघन्यमध्यमवरा च तथा ॥ ५९ ॥

जी० प्र०—तत् त्यक्तशरीरं भक्तप्रतिज्ञा-इंगिनी-प्रायोपगमनमरणविधिभिस्त्यक्तमिति त्रिविधं। तत्र भक्तप्रतिज्ञापि तथा ज्ञायकभूतत्यक्तशरीरवत् त्रिधा जघन्या मध्यमोत्कृष्टेति ॥ ५९ ॥ तज्जघन्यादेः कालप्रमाणमाह—

स चं०—सो त्यक्त शरीर तीन प्रकार है जातैं भक्त प्रतिज्ञा १ इंगिनी २ प्रायोपगमन ३ ए तीन सन्यास मरणके विधान हैं तहां जैसैं ज्ञायकका भूत त्यक्त शरीर तीन प्रकार कह्या तैसैं भक्त प्रतिज्ञाके तीन भेद जानने जघन्य १ मध्यम २ उत्कृष्ट ३ ॥ ५९ ॥ तहां इनिके काल का प्रमाण कहैं हैं—

भत्तपइण्णाइविही जहण्णमंतोमुहुत्तयं होदि।
बारसवरिसा जेट्ठा तम्मज्झे होदि मज्झिमया ॥ ६० ॥

भक्तप्रतिज्ञादिविधिः जघन्योऽतर्मुहूर्तको भवति।
द्वादशवर्षा ज्येष्ठः तन्मध्ये भवति मध्यमकः ॥ ६० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—भक्तप्रतिज्ञामरणविधानकालः जघन्योंतर्मुहूर्तो भवति । २ ७ । उत्कृष्टो द्वादशवर्षमात्रो भवति । २ ७ १ ७ । तन्मध्यवर्ती समयोत्तरविकल्पः स सर्वोऽपि मध्यमो भवति ॥ ६० ॥ इंगिनीप्रायोपगमनमरणे लक्षयति—

स चं०—भक्त जो भोजन ताकी प्रतिज्ञाकरि सन्यास मरण होइ सो भक्त प्रतिज्ञा कहिए तिसके कालका प्रमाण जघन्य तौ अंतर्मुहूर्त मात्र है उत्कृष्ट बारह वर्ष प्रमाण है । तिनके मध्यवर्ती एक एक समय बंधता सर्व मध्य कालका प्रमाण जानना ऐसैं कालके भेदतैं तीन भेद कहैं है ॥ ६० ॥ इंगिनी प्रायोपगमन मरणके लक्षण कहैं हैं—

अप्पोवयारवेक्खं परोवयारूणमिंगिणीमरणं ।
सपरोवयारहीणं मरणं पाओवगमणमिदि ॥ ६१ ॥

आत्मोपकारापेक्षं परोपकारोनमिंगिनीमरणं ।
स्वपरोपकारहीनं मरणं प्रायोपगमनामिति ॥ ६१ ॥

जी० प्र०—स्वकृतोपचारापेक्षं परोपचारनिरपेक्षं तदिंगिनीमरणं । स्वपरोपचाररहितं तन्मरणं प्रायोपगमनमिति ॥ ६१ ॥ ज्ञायकशरीरभेदमुक्त्वा भाविज्ञातृशरीरमाह—

स चं०—अपने शरीरका अपने अंगनितैं उपचार करै अन्य किसी जीवकरि उपचार वैयावृत्त्य न करावै इस विधानकरि सन्यास धारि मरै सो इंगिनी मरण है । भक्त प्रतिज्ञावाला अन्यकरि भी उपचार करावै था यहु न करावै है । बहुरि अन्य जीवकरि भी उपचार न करावै अर आपभी अपने हस्तादिक अंगनितैं उपचार न करै इस विधान करि सन्यास धारि मरै सो प्रायोपगमन मरण है । ऐसैं ज्ञायक शरीरके तीन भेद कहे ॥ ६१ ॥ आगैं नोआगम द्रव्य कर्मका दूसरा भेद भावी ताकौं कहे हैं—

भवियंति भवियकाले कम्मागमजाणगो स जो जीवो ।
जाणुगसरीरभावियं एवं होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥ ६२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भविष्यति भाविकाले कर्मागमज्ञायकः स यो जीवः।
ज्ञायकशरीरभावि एवं भवतीति निर्दिष्टं ॥ ६२ ॥

जी० प्र०—यः कर्मागमज्ञायको भाविकाले भविष्यति स जीवो ज्ञायकभाविशरीरं स्यात्। एवं भावीत्युक्तज्ञायकशरीरं भवति इति निर्दिष्टं ॥ ६२ ॥ अथ तद्व्यतिरिक्तमाह—

स चं०—जो कर्मस्वरूपका प्रतिपादक आगम ताका जानन हारा भावि जो अनागत काल तींहि विषैं होइगा अनागत कालविषैं कर्म स्वरूपका प्रतिपादक आगमकौं जानैंगा सो जीव ज्ञायकभावी शरीर है। ऐसैं भावी ऐसा कह्या हूवा ज्ञायक शरीर जिनदेवनिकरि कह्या है ॥ ६२ ॥ आगैं नो आगमद्रव्यकर्मका तीसरा भेद तद्व्यतिरिक्त ताकौं कहैं हैं—

तव्वदिरित्तं दुविहं कम्मं णोकम्ममिदि तहिं कम्मं।
कम्मसरूवेणागय कम्मं दव्वं हवे णियमा ॥ ६३ ॥

तद्व्यतिरिक्तं द्विविधं कर्म नोकर्मेति तस्मिन् कर्म।
कर्मस्वरूपेणागतं कर्म द्रव्यं भवेन्नियमात् ॥ ६३ ॥

जी० प्र०—तद्व्यतिरिक्तं द्विविधं कर्मनोकर्मेति। तत्र मूलोत्तरप्रकृतिस्वरूपेण परिणतं कर्म द्रव्यकर्म भवति नियमात् ॥ ६३ ॥ नोकर्मरूपतद्व्यतिरिक्तनोआगमद्रव्यमाह—

स चं०—तद्व्यातिरिक्त नो आगम द्रव्यकर्म दोय प्रकार है एक कर्म १ एक नो कर्म २। तहां ज्ञानावरणादिक मूल प्रकृति वा तिनिकी उत्तर प्रकृति रूप होइ परिणया जो पुद्गल द्रव्य सो कर्मतद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्य कर्म जानना नियम करि ॥ ६३ ॥

कम्मदव्वादण्णं दव्वं णोकम्मदव्वमिदि होदि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावे कम्मं दुविहं आगमणोआगमंति हवे ॥ ६४ ॥

कर्मद्रव्यादन्यद्द्रव्यं नोकर्मद्रव्यमिति भवति ।
भावे कर्म द्विविधमागमनोआगममिति भवेत् ॥ ६४ ॥

जी० प्र०—कर्मस्वरूपादन्यद्द्रव्यं नोकर्मेत्युच्यते । भावे कर्म द्विविधं आगमभावकर्म नोआगमभावकर्मेति ॥ ६४ ॥

स चं०—कर्मस्वरूपतैं अन्य जो कर्म करि कार्य होइ तिस कार्यकौ बाह्य कारण भूत ऐसा जो वस्तु सो नोकर्मरूप तद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्यकर्म जानना । नो कहिए किंचिन्मात्र कर्मका ज्यों कारण होइ तातैं नो कर्म कहिए । बहुरि भाव निक्षेप कर्म दोय प्रकार है एक आगम भावकर्म १ एक नो आगम भाव कर्म २ ॥६४॥

कम्मागमपरिजाणगजीवो कम्मागमम्हि उवजुत्तो ।
भावागमकम्मोत्ति य तस्स य सण्णा हवे णियमा ॥ ६५ ॥

कर्मागमपरिज्ञायकजीवः कर्मागमे उपयुक्तः ।
भावागमकर्मेति च तस्य च संज्ञा भवेन्नियमात् ॥ ६५ ॥

जी० प्र०—तत्र कर्मस्वरूपप्रतिपादकागमपरिज्ञायकः कर्मागमे उपयुक्तः तस्य भावागमकर्मसंज्ञा नियमेन भवति ॥ ६५ ॥

स चं०—तहां जो कर्मस्वरूपका प्रतिपादक आगम शास्त्र ताका जानन हारा होइ बहुरि वर्तमान काल विषैं तिस आगम हीका विचार रूप चितवनरूप उपयोग करि संयुक्त होइ सो जीव आगम भाव कर्म ऐसा संज्ञा का धारक नियम करि जानना ॥ ६५ ॥

णोआगमभावो पुण कम्मफलं भुंजमाणगो जीवो ।
इदि सामण्णं कम्मं चउव्विहं होदि णियमेण ॥ ६६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नो आगमभावः पुनः कर्मफलं भुंजमानको जीवः ।
इति सामान्यं कर्म चतुर्विधं भवति नियमेन ॥ ६६ ॥

जी० प्र०—नोआगमभावकर्म पुनः कर्मफलमनुभवन् जीवो भवति एवं सामान्यकर्म चतुर्विधं भवति नियमेन ॥ ६६ ॥ अथ मूलोत्तरप्रकृतीनां नामादिभेदानाह—

स० चं०—बहुरि कर्मका जो उदय फल ताकौं जो भोगवै है ऐसा जो जीव सो नोआगम भावकर्म जानना । ऐसे अभेद रूप सामान्य कर्म सो च्यारि प्रकार है नियमकरि ॥ ६६ ॥ आगें मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति तिनके नामादिक भेदनिकौं कहै हैं—

मूलुत्तरपयडीणं णामादी एवमेव णवरिं तु ।
सगणामेण य णामं ठवणा दवियं हवे भावो ॥ ६७ ॥

मूलोत्तरप्रकृतीनां नामादय एवमेव नवरि तु ।
स्वकनाम्ना च नाम स्थापना द्रव्यं भवेत् भावः ॥ ६७ ॥

जी० प्र०—मूलप्रकृतीनां उत्तरप्रकृतीनां च नामस्थापनाद्रव्यभावाः सामान्यकर्मोक्तरीत्यैव भवंति । तु—पुनः विशेषः । स कः ? स्वस्वनाम्नैव नाम स्थापना द्रव्यं भावो भवति ॥ ६७ ॥ पुनः तत्र विशेषमाह—

स० चं०—मूल प्रकृति आठ उत्तर प्रकृति एकसो अठतालीस इनिका नाम स्थापना द्रव्य भाव जैसै सामान्य कर्मका वर्णन कीया तैसैं ही जानना । बहुरि विशेष इतना है तहां सामान्य कर्मकी अपेक्षा कहे थे इहां जिस जिस प्रकृतिका जो जो नामादिक होइ तिस तिस प्रकृतिका तिस तिस अपने नामादिककी अपेक्षा नाम स्थापना द्रव्य भाव जानने ॥ ६७ ॥ बहुरि और भी विशेष कहै हैं—

मूलुत्तरपयडीणं णामादि चउव्विहं हवे सुगमं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वज्जित्ता णोकम्मं णोआगमभावकम्मं च ॥ ६८ ॥

मूलोत्तरप्रकृतीनां नामादि चतुर्विधं भवेत्सुगमं ।
वर्जयित्वा नोकर्म नोआगमभावकर्म च ॥ ६८ ॥

जी० प्र०—मूलप्रकृतीनां उत्तरप्रकृतीनां च नामादिचतुर्विधं सुगमं भवति तत्र नोकर्म नो आगमभावकर्मेति द्वयं वर्जित्वा शेषस्य सामान्यवत् कथनात् ॥ ६८ ॥ तन्नोकर्मनोआगमभावकर्मणी मूलोत्तरप्रकृतीषु योजयति—

स चं०—मूलप्रकृति वा उत्तर प्रकृति तिनके नामादिक च्यारि प्रकार निक्षेप सुगम हैं परंतु नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्यकर्म अर नो आगम भाव कर्म इनि दोऊनिविषै विशेष है ताते इनि विना और सर्व निक्षेपनिका व्याख्यान जैसा सामान्य कर्मका कीया तैसा ही अपने नामके अनुसारि मूलप्रकृति वा उत्तर प्रकृतिनिका जानना।

आगैं नोकर्म द्रव्यकर्म अर नो आगम भावकर्म इनि दोऊनिकौं मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिनिविषैं जोड़े हैं। तहां प्रथम ही नोकर्म द्रव्यकर्मकौं जोड़ैं हैं। तहां इतना अर्थ जानना—पूर्वै द्रव्य निक्षेपके दोय भेद कीए आगम १ नो आगम २। तहां नो आगम द्रव्यके तीन भेद कहे ज्ञायक शरीर १ भावि २ तद्व्यतिरिक्त ३। तहां तद्व्यतिरिक्तके दोय भेद कीए कर्म १ नोकर्म २। सो इहां नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्य कर्म तिसका वर्णन सर्व प्रकृतिनिविषैं कीजिए है सो नोकर्म द्रव्यकर्म ऐसैं शब्दकरि नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्यकर्म जानना बहुरि जिस जिस प्रकृतिका जो जो उदय फलरूप कार्य है तिस तिस कार्यको जो बाह्यवस्तु कारण भूत होइ सो सो वस्तु तिस प्रकृतिका नोकर्म द्रव्यकर्म जानना ॥ ६८ ॥ तहां प्रथम ही मूल प्रकृतिनि विषैं कहैं हैं—

पडपडिहारसिमज्जा आहारं देह उच्चणीचंगं ।
भंडारी मूलाणं णोकम्मं दवियकम्मं तु ॥ ६९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पटप्रतीहारासिमद्यानि आहारं देह उच्चनीचांगं ।
भांडारी मूलानां नोकर्म द्रव्यकर्म तु ॥ ६९ ॥

जी० प्र०—तत्र ज्ञानावरणस्य नोकर्मद्रव्यकर्म श्लक्ष्णकांडपटो भवति विशेषग्रहणप्रतिबंधकत्वात् । दर्शनावरणस्य द्वारनियुक्तप्रतीहारः सामान्यग्रहणाविराधकत्वात् । वेदनीयस्य मधुलिप्तासिधारा सुखदुःखकारणत्वात् । मोहनीयस्य मद्यं सम्यग्दर्शनादिजीवगुणघातकत्वात् । आयुषः चतुर्विधाहारः धृतशरीरस्य बलाधानकारणत्वेन स्थितिहेतुत्वात् । नामकर्मण औदारिकादिदेहः योग्योत्पादकत्वेन औदारिकादिदेहनिर्वर्तकत्वात् । गोत्रस्य उच्चनीचांगं उच्चनीचकुलाविर्भावकत्वात् । अंतरायस्य भांडगारिकः भोगोपभोगादिवस्तूनां अंतरायकरणात् ॥६९॥ तु-पुनः अंतरमुत्तरप्रकृतीनामाह—

स चं०—तहां ज्ञानावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म सपीठवस्त्र है जातैं जैसैं ज्ञानावरण विशेष ग्रहण रूप ज्ञानकौं रोकै है तैसैं आडा सपीठवस्त्र वस्तुके विशेष ग्रहणको रोकै है । बहुरि दर्शनावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म द्वारविषै तिष्ठता द्वारपाल जानना यहु दर्शनावरणवत् राजादिकके सामान्य अवलोकनकौं रोकै हैं । बहुरि वेदनीय कर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म मधुकरि लपेटी खड्गकी धारा जाननी जातैं वेदनीयवत सुख दुःखकौं कारण है । बहुरि मोहनीयकर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म मदिरा है जातैं मोहनीयकी ज्यौं सम्यग्दर्शनादिक जीवके गुणनिकौं घातैं हैं । बहुरि आयुकर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म च्यारि प्रकार आहार है जातैं आयुवत् शरीरके बलकौं कारण होनेकरि शरीरकी स्थितिकौं कारण है । बहुरि नामकर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म औदारिकादिक शरीर है जातै औदारिकादिक शरीर योगनिकै उपजावन हारे हैं । योग नामकर्मकी ज्यौं औदारिक आदि शरीरनिके निपजावन हारे हैं । बहुरि गोत्रकर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म ऊंचा नीचा शरीर है जातैं गोत्र कर्मकी ज्यौं ऊंचा नीचा कुलनैं प्रकट करै है । बहुरि अंतराय कर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म भंडारी है जातै अंतरायवत् भोग उपभोग रूप वस्तुके विघन करनेमैं कारण है । इहां एक एक वस्तु करनेतैं तैसैं ही अन्य वस्तु जानि लेने । उदाहरण मात्र एक एक वस्तुका कथन कीया है ॥ ६९ ॥
आगैं उत्तर प्रकृतिनिविषैं कहैं हैं—

पडविसयपहुदि दव्वं मदिसुदवाघादकरणसंजुत्तं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मदिसुदबोहाणं पुण णोकम्मं दवियकम्मं तु ॥ ७० ॥

पटविषयप्रभृतिद्रव्यं मतिश्रुतव्याघातकरणसंयुक्तं ।
मतिश्रुतबोधयोः पुनः नोकर्म द्रव्यकर्म तु ॥ ७० ॥

जी० प्र०—पटप्रभृतिद्रव्यं मतिज्ञानस्य विषयप्रभृतिद्रव्यं श्रुतज्ञानस्य च व्याघातकरणसंयुक्तं तदावरणयोर्नोकर्म द्रव्यकर्म भवति तु-पुनः इति ७०

स चं०—पट जो वस्त्र तीहितैं आदि देकरि मतिज्ञानके रोकनेकौं कारणभूत वस्तु सो मतिज्ञानावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि इंद्रिय विषयनैं आदि देकरि श्रुतज्ञानके रोकनेकौं कारणभूत वस्तु सो श्रुतज्ञानावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म है ॥ ७० ॥

ओहिमणपज्जवाणं पडिघादणिमित्तसंकिलेसयरं ।
जं वज्झट्ठं तं खलु णोकम्मं केवले णत्थि ॥ ७१ ॥

अवधिमनःपर्ययो प्रतिघातिनिमित्तसंक्लेशकरः ।
यो वाह्यार्थः स खलु नोकर्म केवले नास्ति ॥ ७१ ॥

जी० प्र०—अवधिमनःपर्ययोः प्रतिघातनिमित्तसंक्लेशकरं यद्बाह्यं वस्तु तत् तदावरणयोर्नोकर्मद्रव्यकर्म स्यात्। केवलज्ञानावरणस्य नोकर्मद्रव्यकर्म नास्ति क्षायिकत्वेन तत्प्रतिबंधकसंक्लेशकारिवस्तुनोऽसंभवात्। अवधिमनःपर्ययोः क्षायोपशमिकत्वात् संभवतीत्यर्थः ॥ ७१ ॥

स चं०—अवधिज्ञान अर मनःपर्यय ज्ञान इनिके घात करनेकौं कारण संक्लेश परिणाम सो संक्लेश परिणाम जातै होइ ऐसा जो वाह्य पदार्थ सो अवधि ज्ञानावरण वा मनःपर्यय ज्ञानावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म जानना। बहुरि केवलज्ञानावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म नाही है जातैं केवल ज्ञान क्षायिक है तातैं वाके घात करनेकौं कारण संक्लेश परिणामनिकौं उपजावन हारा वस्तु कोऊ नाही। अवधिज्ञान मनः पर्ययज्ञान क्षायोपशमिक हैं। तातैं तहां संभवै है ॥७१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचण्हं णिद्दाणं माहिसदहिपहुदि होदि णोकम्मं ।
वाघादकरपडादी चक्खुअचक्खूण णोकम्मं ॥ ७२ ॥

पंचानां निद्राणां माहिषदधिप्रभृति भवति नोकर्म ।
व्याघातकरपटादि चक्षुरचक्षुषोर्नोकर्म ॥ ७२ ॥

जी० प्र०—पंचनिद्रादर्शनावरणानां माहिषदधिलशुनखलादिद्रव्याणि नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । व्याघातहेतुपटादिवस्तूनि चक्षुरचक्षुर्दर्शनावरणयोर्नोकर्मद्रव्यकर्म भवति ॥ ७२ ॥

स० चं०—पंच निद्रारूप दर्शनावरण तिनिका माहिषदधि कहिए भैंसिका दहीनैं आदि देकरि लशुन खलि इत्यादि वस्तु सो नोकर्म द्रव्यकर्म है । जातैं ए वस्तु निद्राकौं कारण हैं बहुरि चक्षु अचक्षु दर्शनके रोकनेवाले व स्त्रादिक वस्तु सो चक्षु अचक्षु दर्शनावरणका नोकर्म द्रव्य कर्म है ॥ ७२ ॥

ओहीकेवलदंसणणोकम्मं ताण णाणभंगो व ।
सादेदरणोकम्मं इट्ठाणिट्ठण्णपाणादी ॥ ७३ ॥

अवधिकेवलदर्शननोकर्म तयोर्ज्ञानभंगो वा ।
सातेतरनोकर्म इष्टानिष्टान्नपानादि ॥ ७३ ॥

जी० प्र०—अवधिदर्शनावरणस्य केवलदर्शनावरणस्य च नोकर्मद्रव्यकर्म तज्ज्ञानोक्तभंगवत् भवति । सातवेदनीयस्य इष्टान्नपानादयः असातवेदनीयस्यानिष्टान्नपानादयः ॥ ७३ ॥

स० चं०—अवधि दर्शनावरण अर केवल दर्शनावरणका नोकर्म द्रव्यकर्म अवधिज्ञान वा केवलज्ञानवत् जानना । बहुरि सातावेदनीयका इष्ट सुहावते अन्न पानादिक वस्तु अर असाता वेदनीयका अनिष्ट न सुहावते अन्नपानादिक वस्तु नोकर्म द्रव्यकर्म जानना ॥ ७३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आयदणाणायदणं सम्मे मिच्छे य होदि णोकम्मं ।
उभयं सम्मामिच्छे णोकम्मं होदि णियमेण ॥ ७४ ॥

आयतनानायतनं सम्यक्त्वे मिथ्यात्वे च भवति नोकर्म ।
उभयं सम्यग्मिथ्यात्वे नोकर्म भवति नियमेन ॥ ७४ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वप्रकृतौ आयतनानि आप्ततदालयागमतद्धरतपस्तद्धराख्यानि नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । सम्यक्त्वस्य चलमलिनागाढहेतुत्वात् । मिथ्यात्वप्रकृतेः मिथ्यात्वतदालयश्रुततद्धरतपस्तपस्विनो नोकर्मद्रव्यकर्म भवति सम्यक्त्वस्य घातकत्वात् । सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतावुभयं आयतनानायतनद्वयं संयुक्तमेव नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । अत्र नियमशब्दोऽवधारणार्थः ॥ ७४ ॥

स० चं०—आयतन कहिए जिन १ जिनमंदिर २ जिनागम ३ जिनागमके धारक ४ तप ५ तपके धारक ६ ए सम्यक्त्व प्रकृतिके नोकर्म द्रव्यकर्म हैं । जातैं ए सम्यक्त्वके चल मलिन अगाढपनेंकौं कारण हैं । बहुरि अनायतन कुदेव १ कुदेवका मंदिर २ कुशास्त्र ३ कुशास्त्रके धारक ४ कुतप ५ कुतपके धारक ६ । ए मिथ्यात्व प्रकृतिके नोकर्म द्रव्यकर्म हैं जातैं ए सम्यक्त्वके घातक हैं । बहुरि आयतन अर अनायतन दोऊनिका मिश्रपनां सो सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिके नोकर्म द्रव्यकर्म हैं ऐसा नियम करि अवधारन करना ॥ ७४ ॥

अणणोकम्मं मिच्छत्तायदणादी हु होदि सेसाणं ।
सगसगजोग्गं सत्थं सहायपहुदी हवे णियमा ॥ ७५ ॥

अननोकर्म मिथ्यात्वायतनादि हि भवति शेषाणां ।
स्वकस्वकयोग्यं शास्त्रं सहायप्रभृति भवेन्नियमात् ॥ ७५ ॥

जी० प्र०—अनंतानुबंधिनां मिथ्यात्वायतनादिर्नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । तु—पुनः शेषद्वादशकषायाणां देशसकलयथाख्यातचारित्रघातककाव्यनाटककोकादिग्रंथाः विटजनादिसहायश्च नियमेन ॥ ७५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—अनंतानुबंधी कषायनिका मिथ्यात्व आयतन जे कुदेवादिक ते नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि अवशेष बारह कषायनिका नोकर्म द्रव्यकर्म अनुक्रमतैं देश चारित्र सकल चारित्र यथाख्यात चारित्रके घातक काव्य ग्रंथ नाटक ग्रंथ कोकादि ग्रंथ वा पापी पुरुषनिका सहाय इत्यादिक नोकर्म द्रव्यकर्म जानना नियम करि ॥७५॥

थीपुंसंढसरीरं ताणं णोकम्म दव्वकम्मं तु।
वेलंबको सुपुत्तो हस्सरदीणं च णोकम्मं ॥ ७६ ॥

स्त्रीपुंषंढशरीरं तेषां नोकर्मद्रव्यकर्म तु।
विडंबकः सुपुत्रः हास्यरत्योश्च नोकर्म ॥ ७६ ॥

जी० प्र०—स्त्रीपुंवेदयोः स्त्रीपुंशरीरे नोकर्मद्रव्यकर्म भवति। नपुंसकवेदस्य तद्द्वयं नपुंसकशरीरं च। हास्यस्य विडंबकभूतबहुरूपिप्रहसनपात्राणि। रतेः सुपुत्रः ॥ ७६ ॥

स० चं०—स्त्री वेद वा पुरुषवेदका नोकर्म द्रव्यकर्म स्त्री वा पुरुषका शरीर है। बहुरि नपुंसक वेदका नोकर्म द्रव्यकर्म स्त्रीपुरुषका शरीर वा नपुंसकका शरीर है। बहुरि हास्यका नोकर्म द्रव्यकर्म विटंवरूप भूत वा वहुरूपिया वा हसनेके पात्र इत्यादिक हैं। बहुरि रतिका भले पुत्रादिक नोकर्म द्रव्यकर्म जानना ॥ ७६ ॥

इट्ठाणिट्ठविजोगं जोगं अरदिस्स मुदसुपुत्तादी।
सोगस्स य सिंहादी णिंदिददव्वं च भयजुगले ॥ ७७ ॥

इष्टानिष्टवियोगोयोगः अरतेर्मृतसुपुत्रादयः।
शोकस्य च सिंहादयः निंदितद्रव्यं च भययुगले ॥ ७७ ॥

जी० प्र०—अरतेः इष्टवियोगोऽनिष्टसंयोगश्च। शोकस्य मृतसुपुत्रादयः। भयस्य सिंहादयः। जुगुप्साया निंदितद्रव्यादयः ॥ ७७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—बहुरि इष्टवियोग अनिष्ट संयोग अरतिका नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि सुपुत्रादिकका मरना इत्यादिक शोककर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि सिंहादिक भयकारी वस्तु भयका नोकर्म द्रव्यकर्म है। बहुरि निंदित वस्तु इत्यादिक जुगुप्साका नोकर्म द्रव्यकर्म है ॥ ७७ ॥

णिरयायुस्स अणिट्ठाहारो सेसाणमिट्ठमण्णादी ।
गदिणोकम्मं दव्वं चउग्गदीणं हवे खेत्तं ॥ ७८ ॥

नरकायुषोऽनिष्टाहारः शेषाणामिष्टमन्नादयः ।
गतिनोकर्म द्रव्यं चतुर्गतीनां भवेत् क्षेत्रं ॥ ७८ ॥

जी० प्र०—नरकायुषोऽनिष्टाहारः तद्विषमृत्तिका नोकर्मद्रव्यकर्म। शेषायुषामिष्टान्नादयः नारकादिशरीरस्थितिकारणत्वात् । सामान्यगतेः चतुर्गतिक्षेत्रमात्रं ॥ ७८ ॥

स० चं०—नरकायुका अनिष्ट आहार नरकका विषरूप माटी सोई द्रव्यकर्म नोकर्म है। अवशेष तीन आयुका इष्ट अन्नादिक वस्तु सोई द्रव्यकर्म नोकर्म है। आहार, शरीरकी स्थितिकौं कारण है तातैं आयुका नोकर्म द्रव्य कर्म आहार कह्या। बहुरि सामान्यपनैं गति नामकर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म चतुर्गतिका क्षेत्र जानना ॥ ७८ ॥

णिरयादीण गदीणं णिरयादी खेत्तयं हवे णियमा ।
जाईए णोकम्मं दव्विंदियपोग्गलं होदि ॥ ७९ ॥

निरयादीनां गतीनां निरयादिक्षेत्रकं भवेन्नियमात् ।
जातेर्नोकर्म द्रव्येंद्रियपुद्गलो भवति ॥ ७९ ॥

जी० प्र०—नारकादिगतीनां स्वस्वनरकादिगतिक्षेत्रं नोकर्मद्रव्यकर्म नियमेन भवति। गत्युदयानां नारकादिपर्यायनिमित्तत्वेऽपि तत्पर्यायाणामन्यत्राभावात्। तत्तत्क्षेत्रेष्वेव भाव्यमित्यवधारणार्थो नियमशब्दः। जातिनाम्नः द्रव्येंद्रियपुद्गलः ॥ ७९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—नरकादि गतिनिका नोकर्म द्रव्यकर्म नियम करि अपनी अपनी गतिका क्षेत्र जानना । गतिके उदयतै भए नारकादिक पर्याय तिनिका तिस क्षेत्र विना अन्यत्र अभाव है तातैं क्षेत्रका नोकर्म द्रव्यकर्म कह्या । बहुरि जाति नाम कर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म द्रव्योंद्रियरूप पुद्गल है ॥ ७९ ॥

एइंदियमादीणं सगसगदव्विंदियाणि णोकम्मं ।
देहस्स य णोकम्मं देहुदयजदेहखंधाणि ॥ ८० ॥

एकेंद्रियादीनां स्वकस्वकद्रव्येंद्रियाणि नोकर्म ।
देहस्य च नोकर्म देहोदयजदेहस्कंधाः ॥ ८० ॥

जी० प्र०—एकेंद्रियादिपंचजातीनां स्वस्वद्रव्येंद्रियाणि नोकर्मद्रव्यकर्म । शरीरनाम्नः स्वोदयजदेहस्कंधाः नोकर्मद्रव्यकर्म ॥ ८० ॥

स चं०—एकेंद्रियादिक जाति तिनिका नोकर्म द्रव्यकर्म अपना अपना द्रव्येंद्रिय जानने । बहुरि शरीर नाम कर्मका नोकर्म द्रव्यकर्म अपना अपना उदयतैं भया शरीर स्कंधरूप पुद्गल सो जानना ॥ ८० ॥

ओरालियवेगुव्वियआहारयतेजकम्मणोकम्मं ।
ताणुदयजचउदेहा कम्मे विस्ससंचयं णियमा ॥ ८१ ॥

औदारिकवैगूर्विकाहारकतेजःकर्मनोकर्म ।
तेषामुदयजचतुर्देहाः कर्माणि विस्रसोपचयो नियमात् ॥ ८१ ॥

जी० प्र०—औदारिकवैक्रियिकाहारकतैजसशरीरनामकर्मणां उदयजतच्छरीरवर्गणाः तत्तन्नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । कार्मणस्य विस्रसोपचय एव॥८१॥

स चं०—औदारिक वैक्रियिक आहारक तैजस शरीर नामकर्म इनिका अपने अपने उदयतैं प्राप्त भई शरीर वर्गणा सोइ नोकर्म द्रव्यकर्म है जातैं वर्गणा शरीरकौं कारण है । बहुरि कार्माणका नोकर्म द्रव्यकर्म विस्रसोपचय है जातैं विस्रसोपचयरूप परमाण कर्मकौं कारण हैं ॥ ८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जानना। ऐसैं उत्तर प्रकृतिनिका नोकर्म तद्व्यतिरिक्त नोआगम द्रव्यकर्म कह्या है॥ ८५॥ आगैं नो आगम भावकर्म कहैं हैं—

णोआगमभावो पुण सगसगकम्मफलसंजुदो जीवो।
पोग्गलविवाइयाणं णत्थि खु णोआगमो भावो॥ ८६॥

नो आगमभावः पुनः स्वकस्वककर्मफलसंयुतो जीवः।
पुद्गलविपाकिनां नास्ति खलु नोआगमो भावः॥ ८६॥

जी॰ प्र॰—नोआगमभावः पुनः स्वस्वकर्मफलसयुतजीवो भवति। पुद्गलविपाकिनां खलु नोआगमभावकर्म नास्ति। तदुदये जीवविपाकिसहायं विना साक्षात्सुखाद्यनुत्पत्तेः॥ ८६॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ तत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे प्रकृतिसमुत्कीर्तननाम प्रथमोऽधिकारः॥ १॥

स चं॰—बहुरि जिस जिस प्रकृतिका जो जो फल है तिस तिस अपने अपने फलकौं भोगवता जीव सो तिस तिस प्रकृतिका नो आगम भावकर्म जानना। बहुरि जे पुद्गलविपाकी प्रकृति हैं तिनिका नो आगम भाव कर्म नाहीं है तातैं तिनिके उदय होतसंतैं जीवविपाकी प्रकृतिनिका सहाय विना साक्षात् सुखादिककी उत्पत्ति न हो है ऐसैं सामान्य कर्म मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति तिनिविषैं नाम स्थापना द्रव्य भाव च्यारि निक्षेप कहि यथार्थ स्वरूप दिखाया है॥ ८६॥

इति आचार्य श्री नेमिचन्द्र सिद्धांत चक्रवर्ति विरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पंचसंग्रह ग्रंथकी तत्त्व प्रदीपिका नाम संस्कृत टीकाके अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषा टीका विषै कर्मकांड विषै प्रकृति समुत्कीर्तन नामा पहिला अधिकार संपूर्ण भया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ बंधोदयसत्त्वाधिकारः ॥ २ ॥

बंध उदय सत्ता सहित अहित कर्मकरि नाश।
भए ज्ञान परकाशमय नमौं तासु हुइ दास ॥ २ ॥

**णमिऊण णेमिचंदं असहायपरक्कमं महावीरं।
बंधुदयसत्तजुत्तं ओघादेसे थवं वोच्छं ॥ ८७ ॥**

नत्वा नेमिचंद्रमसहायपराक्रमं महावीरं।
बंधोदयसत्त्वयुक्तमोघादेशे स्तवं वक्ष्यामि ॥ ८७ ॥

जी० प्र०—वक्ष्यामि-वदिष्ये करिष्ये वा कं ? स्तवं-सकलांगार्थविषयं शास्त्रं। कथंभूतं ? बंधोदयसत्त्वयुक्तं-बंधोदयसत्त्वप्रतिपादकं। कस्मिन् ? ओघादेशे-गुणस्थानमार्गणास्थाने। किं कृत्वा ? नमस्कृत्य। कं ? नेमिचंद्रं नेमितीर्थंकरपरमदेवं। कथंभूतं ? महावीरं-वंदारुवृंदस्य अभिलषितार्थप्रदायकं। भूयः किंभूतं ? असहायपराक्रमं न विद्यते सहायो यस्यासौ असहायः, असहायः पराक्रमो यस्यासौ असहायपराक्रमः तमिति। कर्मवैरिविलजये सहायनिरपेक्षाभेदरत्नत्रयात्मकात्मस्वरूपभावनास्वसामर्थ्यरूपपराक्रमं वंदारुवृंदसमभिलषितार्थप्रदायकत्वेन महावीरं नेमितीर्थंकरपरमदेवं नत्वा बंधोदयसत्त्वप्रतिपादकं स्तवं वक्ष्यामीत्याचार्यप्रतिज्ञा ॥ ८७ ॥ स्तवः कः ? इति चेदाह—

स चं०—अहं कहिए मैं ग्रंथकर्ता सो नेमिचंद्रं कहिए नेमिनाथ नामा तीर्थंकर परम देव सोई भया चंद्रमा ताहि नत्वा कहिए नमस्कार करि 'ओघादेशेषु' कहिए गुणस्थान वा मार्गणा स्थाननिविषैं 'बंधोदयसत्त्वयुक्तं' कहिए कर्मनिका बंध उदय सत्त्वका प्रतिपादक जो स्तवं कहिए सकल अंग संबंधी अर्थ जामैं पाइए ऐसा स्तव रूप ग्रंथ ताहि 'वदिष्ये' कहिए कहोंगा वा करौंगा। कैसा है नेमिचंद्र। महावीरं कहिए वंदनेवालोंका जो समूह ताकौं मनवंछित अर्थका दाता है। बहुरि कैसा है ? 'असहायपराक्रमं' कहिए नाही है कर्मवैरीके जीतने विषैं अन्य कोऊ सहाय जाकैं ऐसा जो अभेद रत्नत्रय स्वरूप निजभावनाकी सामर्थ्यरूप पराक्रम सो ऐसा असहाय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधणपहुदिसमण्णियसेसाणं देहमेव णोकम्मं ।
णवरि विसेसं जाणे सगखेत्तं आणुपुव्वीणं ॥ ८२ ॥

बंधनप्रभृतिसमन्वितशेषाणां देहमेव नोकर्म ।
नवरि विशेषं जानीहि स्वकक्षेत्रमानुपूर्वीणां ॥ ८२ ॥

जी० प्र०—बंधनप्रभृतिपुद्गलविपाकिसमन्वितशेषजीवविपाकिनां देह एव नोकर्मद्रव्यकर्म । तत्तत्क्रियमाणस्य पुद्गलरूपस्य जीवभावस्य सुखादि-रूपस्य कार्यस्य शरीरवर्गणानामेवोपादाननिमित्तत्वप्रसिद्धेः । क्षेत्रविपाक्यानुपूर्व्याणां स्वस्वक्षेत्रमेव नोकर्मद्रव्यकर्मेति नवीनं विशेषं जानीहि ॥८२॥

स चं०—बंधनतैं आदि देकरि पुद्गलविपाकी तिनिकरि संयुक्त पूर्वोक्ततैं अवशेष रहीं जे जीव विपाकी नाम कर्मकी प्रकृति तिनिका नोकर्म द्रव्यकर्म शरीर है जातैं तिनि प्रकृतिनिकरि कीया जीवका वा पुद्गलका भाव सुखादिरूप कार्य तिनिका उपादान कारण शरीर संबंधी वर्गणा ही हैं। बहुरि क्षेत्र विपाकी आनुपूर्वी प्रकृति तिनिका नोकर्म द्रव्यकर्म अपना अपना क्षेत्र ही है। इतना नवीन विशेष जानना ॥ ८२ ॥

थिरजुम्मस्स थिराथिररसरुहिरादीणि सुहजुगस्स सुहं ।
असुहं देहावयवं सरपरिणदपोग्गलाणि सरे ॥ ८३ ॥

स्थिरयुग्मस्य स्थिरास्थिररसरुधिरादयः शुभयुगस्य शुभः ।
अशुभो देहावयवः स्वरपरिणतपुद्गलाः स्वरे ॥ ८३ ॥

जी० प्र०—स्थिरस्य स्थिररसरुधिरादयो नोकर्मद्रव्यकर्म । अस्थिरस्य अस्थिररसरुधिरादयः । शुभस्य शुभशरीरावयवाः । अशुभस्य अशुभश-रीरावयवाः । स्वरस्य सुस्वरदुःस्वरपरिणतपुद्गलाः ॥ ८३ ॥

स चं०—बहुरि स्थिरका स्थिर रस रुधिरादिक बहुरि अस्थिरका अस्थिर रस रुधिरादिक, शुभ प्रकृतिका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुभ शरीरका अवयय, अशुभका अशुभ शरीरका अवयव, स्वर प्रकृतिका सुस्वर दुःस्वर रूप परिणए पुद्गल स्कंध द्रव्यकर्म नोकर्म जानने ॥ ८३ ॥

उच्चस्सुच्चं देहं णीचं णीचस्स होदि णोकम्मं ।
दाणाणिचउक्काणं विग्घगणगपुरिसपहुदी हु ॥ ८४ ॥

उच्चस्योच्चं देहं नीचं नीचस्य भवति नोकर्म ।
दानादिचतुर्णां विघ्नकनगपुरुषप्रभृतयो हि ॥ ८४ ॥

जी० प्र०—उच्चैर्गोत्रस्य उच्चः-लोकपूजितकुलोत्पन्नो देहः नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । नीचैर्गोत्रस्य नीचकुलोत्पन्नोदेहः । दानादिचतुरंतरायाणां विघ्नकरपर्वतनदीपुरुषप्रभृतयः । खलु स्फुटं ॥ ८४ ॥

स चं०—उच्चगोत्रका नोकर्म द्रव्यकर्म ऊचो लोकपूजित कुलविषैं उपज्या शरीर सो जानना । नीचगोत्रका नीचकुलविषैं उपज्या शरीर नोकर्म द्रव्यकर्म है । बहुरि दानादिक च्यारि अंतराय तिनके नोकर्म द्रव्यकर्म दानादिकके विघन करनेवाले पर्वत नदी पुरुष स्त्री इत्यादिक जानने ॥ ८४ ॥

विरियस्स य णोकम्मं रुक्खाहारादि बलहरं दव्वं ।
इदि उत्तरपयडीणं णोकम्मं दव्वकम्मं तु ॥ ८५ ॥

वीर्यस्य च नोकर्म रूक्षाहारादिवलहरं द्रव्यं ।
इत्युत्तरप्रकृतीनां नोकर्म द्रव्यकर्म तु ॥ ८५ ॥

जी० प्र०—तु-पुनः वीर्यांतरायस्य रूक्षाहारपानद्रव्याणि नोकर्मद्रव्यकर्म भवति । एवमुत्तरप्रकृतीनां नोकर्मद्रव्यकर्मोक्तं ॥ ८५ ॥

स चं०—बहुरि वीर्यांतरायका नोकर्मद्रव्यकर्म रूखा आहारनैं आदि देकरि बलका नाश करनेवाला वस्तु सो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पराक्रम जाकैं पाइए है ऐसा नेमिनाथ तीर्थंकर परमदेव ताकौं नमस्कार करि बंध उदय सत्ताका प्रतिपादक स्तव ताहि मैं कहोंगा ऐसी आचार्य प्रतिज्ञा करी है ॥ ८७ ॥ स्तव कहा ? सो कहैं हैं।

सयलंगेक्कंगेक्कंगहियार सवित्थरं ससंखेवं ।
वण्णणसत्थं थयथुइधम्मकहा होइ णियमेण ॥ ८८ ॥

सकलांगैकांगैकांगमधिकारं सविस्तरं ससंक्षेपं ।
वर्णनशास्त्रं स्तवस्तुतिधर्मकथा भवति नियमेन ॥ ८८ ॥

जी० प्र०—सकलांगार्थसविस्तरससंक्षेपविषयशास्त्रं स्तवः एकांगार्थसविस्तरससंक्षेपविषयशास्त्रं स्तुतिः । एकांगाधिकारार्थसविस्तरससंक्षेपविषयशास्त्रं च वस्त्वनुयोगादिधर्मकथा च भवति नियमेन ॥ ८८ ॥ अथ बंधभेदानाह—

स चं०—सकल अंग सबंधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए जामैं पाइए ऐसा जु शास्त्र सो स्तव कहिए। बहुरि एक अंग संबधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए जामैं पाईए ऐसा जु शास्त्र सो स्तुति कहिए। बहुरि एक अंगका अधिकार संबंधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए जामैं पाइए ऐसा जु शास्त्र सो वस्तु कहिए। बहुरि प्रथमानुयोगादिक रूप शास्त्र सो धर्मकथा कहिए है नियमकरि। सो इहां बंध उदय सत्तारूप कर्मका कथनविषै सकल अंगसंबंधी अर्थ विस्तार लीए वा संक्षेपता लीए कहिएगा तातैं स्तव कहिए है ॥८८॥ तहां प्रथम ही बंधका कथन करै हैं। तहां बंधके भेदनिकौं कहैं हैं—

पयडिट्ठिदिअणुभागप्पदेसबंधोत्ति चदुविहो बंधो ।
उक्कस्समणुक्कस्सं जहण्णमजहण्णगंत्ति पुधं ॥ ८९ ॥ ७३

प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशबंध इति चतुर्विधोबंधः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्कृष्टोऽनुत्कृष्टः जघन्योऽजघन्यक इति पृथक् ॥ ८९ ॥

जी० प्र०—प्रकृतिबंधः स्थितिबंधः अनुभागबंधः प्रदेशबंधश्चेति बंधश्चतुर्विधः। स चतुर्विधोऽपि पृथक् प्रत्येकं उत्कृष्टोऽनुत्कृष्टोजघन्योऽजघन्यश्चेति चतुर्विधः ॥ ८९ ॥ तानुत्कृष्टादीनपि भिनत्ति—

स चं०—बंध च्यारि प्रकार है प्रकृतिबंध १ स्थितिबंध २ अनुभागबंध ३ प्रदेशबंध ४। तहां मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृतिनिका यथायोग्य जीव सहित संबंध होना सो प्रकृतिबंध है। तिन प्रकृतिनिका जीवसहित संबंध रूप रहनेका काल प्रमाण सो स्थिति बंध है। तिन प्रकृतिनिविषैं फल देने की शक्ति सो अनुभाग बंध है तिन प्रकृतिनरूप परिणए पुद्गल तिनिका प्रमाण सो प्रदेश बंध है। बहुरि पृथक् कहिए एक एक बंध च्यारि प्रकार हैं—उत्कृष्ट १ अनुत्कृष्ट २ अजघन्य ३ जघन्य ४। तहां सर्वतैं बहुत होइ सो उत्कृष्ट कहिए। बहुरि तिस उत्कृष्टतै हीन होइ सो अनुत्कृष्ट कहिए। बहुरि जघन्यतैं अधिक होइ सो अजघन्य कहिए। बहुरि सर्वतैं थोरा होइ सो जघन्य कहिए ॥ ८९ ॥ आगैं उत्कृष्टादिकके भी भेद करैं हैं—

सादिअणादी धुव अद्धुवो य बंधो दु जेट्ठमादीसु।
णाणेगं जीवं पडि ओघादेसे जहाजोग्गं ॥ ९० ॥

सायनादी ध्रुवोऽध्रुवश्च बंधस्तु ज्येष्ठादिषु।
नानैकं जीवं प्रति ओघादेशे यथायोग्यं ॥ ९० ॥

१

प्र	स्थि	अ	प्र
उ ४	उ ४	उ ४	उ ४
अ ४	अ ४	अ ४	अ ४
अ ४	अ ४	अ ४	अ ४
ज ४	ज ४	ज ४	ज ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तेषु उत्कृष्टादिबंधेषु तु-पुनः सादिबंधोऽनादिबंधोध्रुवबंधोऽध्रुवबंधश्च नानाजीवं एकजीवं च प्रतीत्य गुणस्थाने मार्गणास्थाने च यथायोग्यं भवति ॥ ९० ॥

स० चं०—बहुरि तिनि उत्कृष्टादिकनिविषैं च्यारि प्रकार हैं-सादिबंध १ अनादिबंध २ ध्रुवबंध ३ अध्रुवबंध ४ तहां विवक्षितबंधका वीचिमें अभाव होइ बहुरि जो बंध होइ सो सादिबंध है। बहुरि कदाचित् अनादितैं बंधका अभाव न हूवा होइ तहां अनादि बंध है। बहुरि निरंतर बंध हूवा करै सो ध्रुव बंध है। बहुरि अंतर सहित बंध होइ सो अध्रुवबंध है। सो ऐसा बंध सर्व नाना जीवनिकी अपेक्षा वा एक जीवकी अपेक्षा गुणस्थान अर मार्गणस्थाननिविषैं यथायोग्य जानना ॥ ९० ॥

ठिदिअणुभागपदेसा गुणपडिवण्णेसु जेसिमुक्कस्सा।
तेसिमणुक्कस्सो चउव्विहोऽजहण्णेवि एमेव ॥ ९१ ॥

स्थित्यनुभागप्रदेशा गुणप्रतिपन्नेषु येषामुत्कृष्टाः।
तेषामनुत्कृष्टश्चतुर्विधोऽजघन्येषु एवमेव ॥ ९१ ॥

जी० प्र०—स्थित्यनुभागप्रदेशाः गुणप्रतिपन्नेषु मिथ्यादृष्टिसासादनाद्युपरितनोपरितनगुणस्थानवर्तिषु येषां कर्मणामुत्कृष्टाः तेषामेव कर्मणां अनुत्कृष्टः स्थित्यनुभागप्रदेशः साद्यादिभेदाच्चतुर्विधो भवति। अजघन्येऽप्येवमेव चतुर्विधः। तेषां लक्षणमग्रे वक्ष्यति तथापि अत्रोदाहरणमात्रं किंचित्प्रदर्श्यते तद्यथा—

उपशमश्रेण्यारोहकः सूक्ष्मसांपरायः उच्चैर्गोत्रानुभागं उत्कृष्टं बद्ध्वा उपशांतकषायो जातः। पुनरवरोहणे सूक्ष्मसांपरायो भूत्वा तदनुभागमनुत्कृष्टं बध्नाति तदास्य सादित्वं। तत्सूक्ष्मसांपरायचरमादधोऽनादित्वं। अभव्ये ध्रुवत्वं यदा अनुत्कृष्टं त्यक्त्वा उत्कृष्टं बध्नाति तदा अध्रुवत्वमिति। अजघऽन्येप्येव मेव चतुर्विधः तद्यथा—

सप्तमपृथिव्यां प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखो मिथ्यादृष्टिश्चरमसमये नीचैर्गोत्रानुभागं जघन्यं बद्ध्वा सम्यग्दृष्टिर्भूत्वा मिथ्यात्वोदयेन मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा तदनुभागमजघन्यं बध्नाति तदास्य सादित्वं द्वितीयादिसमयेषु अनादित्वमिति चतुर्विधत्वं यथासंभवं द्रष्टव्यं। प्रकृतिबंधस्य उत्कृष्टादिर्नास्ति शेषाणां संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थिति उ १ । अनु । अज । ज १ ।   अनुभाग उ १ । अनु । अज । ज १ ।

प्रदेश उ१ । अनु । अज । ज १ ।

स उ २ । ० ० ० ० ० ० ० ० ० स १ ॥ ९१ ॥ अथ प्रकृतिबंधस्य गुणस्थानेषु नियममाह—

स० चं०—'गुणप्रतिपन्नेषु' कहिए मिथ्यादृष्टि सासादनादिक ऊपरि ऊपरिके गुणस्थानवर्ती जीव तिनविषैं जिन कर्मनिका उत्कृष्ट स्थिति अनुभाग प्रदेश बंध पाईए है तिनही कर्मनिका अनुत्कृष्टस्थिति अनुभाग प्रदेशबंध सादि अनादि ध्रुव अध्रुव भेदतैं च्यारि प्रकार हो है । बहुरि अजघन्य भी ऐसैं ही अनुत्कृष्टवत् च्यारि प्रकार हो है। जिनि कर्म प्रकृतिनिका स्थिति अनुभाग प्रदेशबंध ऊपरिके गुण स्थाननिविषैं जघन्य पाईए है तिनिका ही अजघन्य बंध च्यारि प्रकार हो है सो इनिका लक्षण आगै कहैंगे तथापि इहां भी उदाहरण मात्र किंचित् कहिए है— उपशम श्रेणी चढनेवाला जीव सूक्ष्म सांपराय गुणस्थानवर्ती भया तहां उत्कृष्ट उच्च गोत्रका अनुभाग बंधकरि पीछैं उपशांत कषाय गुणस्थानवर्ती भया । बहुरि तहांतैं उतरिकरि सूक्ष्म सांपराय गुणस्थानवर्ती भया तहां अनुत्कृष्ट उच्चगोत्रका अनुभाग बंध कीया तहां इस अनुत्कृष्ट उच्चगोत्रके अनुभागकौं सादि कहिए है जातैं अनुत्कृष्ट उच्चगोत्र अनुभाग बंधका अभाव होइ बहुरि सद्भाव भया तातैं सादि कहिए है । बहुरि सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानतैं नीचेके गुणस्थानवर्ती जीव हैं तिनकैं सो बंध अनादि है। बहुरि अभव्य जीवविषैं सो बंध ध्रुव हैं। बहुरि उपशम श्रेणीवालेके जहां अनुत्कृष्टको छोडि उत्कृष्ट बंध हो है तहां सो बंध अध्रुव है ऐसैं अनुत्कृष्ट उच्चगोत्रके अनुभाग बंधविषैं सादि अनादि ध्रुव अध्रुव च्यारि प्रकार कहे। ऐसैं ही अजघन्य भी च्यारि प्रकार है सो कहिए है—

सप्तम नरक पृथ्वीविषैं प्रथमोपशमसम्यक्त्वका सन्मुख भया मिथ्यादृष्टि जीव तहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थानका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंतसमयविषैं जघन्य नीचगोत्रके अनुभागकौं बांधे है। बहुरि सो जीव सम्यग्दृष्टी होइ पीछे मिथ्यात्वके उदयकरि मिथ्यादृष्टी भया तहां अजघन्य नीचगोत्रके अनुभागकौं बांधैं है तहां इस अजघन्य नीच गोत्रके अनुभागकौं सादि कहिए। बहुरि तिस मिथ्यादृष्टिकैं तिस अंतसमयतैं पहिले सो बंध अनादि है। अभव्य जीवकैं सो बंध ध्रुव है। जहां अजघन्यकौं छोडि जघन्य प्राप्त भया तहां सो बंध अध्रुव है। ऐसैं अजघन्य नीचगोत्रके अनुभागविषैं सादि अनादि ध्रुव अध्रुव च्यारि प्रकार कहे ऐसैं ही यथा संभव और भी बंधविषैं सादि अनादि ध्रुव अध्रुव च्यारि प्रकार जानने। बहुरि प्रकृतिबंधविषैं उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट अजघन्य जघन्य ऐसैं भेद नाहीं है, स्थिति अनुभाग प्रदेश बंधनिविषैं वे भेद यथा योग्य जानने ॥ ९१ ॥ आगैं गुणस्थाननिविषैं प्रकृति बंधका नियम कहै हैं—

सम्मेव तित्थबंधो आहारदुगं पमादरहिदेसु।
मिस्सूणे आउस्स य मिच्छादिसु सेसबंधो दु ॥९२॥

सम्यक्त्वे एव तीर्थबंध आहारद्विकं प्रमादरहितेषु।
मिश्रोने आयुषश्च मिथ्यात्वादिषु शेषबंधस्तु ॥ ९२ ॥

जी० प्र०—तीर्थबंधः असंयताद्यपूर्वकरणषष्ठभागांतसम्यग्दृष्टिष्वेव। आहारकतदंगोपांगबंधः अप्रमत्ताद्यपूर्वकरणषष्ठभागांतेष्वेव। प्रमादरहितेषु न प्रमत्तावसानेषु। आयुर्बंधः मिश्रगुणस्थानमिश्रकाययोगवर्जितेषु अप्रमत्तांतेष्वेव नापूर्वकरणादिषु। शेषप्रकृतिबंधः तु—पुनः मिथ्यादृष्ट्यादिषु स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्यंतेष्वेव ॥ ९२ ॥ तीर्थबंधस्य विशेषनियममाह—

स चं०—तीर्थंकर प्रकृतिका बंध असंयमतैं लगाइ अपूर्वकरणका छठा भाग पर्यंत सम्यग्दृष्टि विषैं ही हो है। बहुरि आहारक, आहारक अंगोपांगका बंध अप्रमत्ततैं लगाइ अपूर्वकरणका छठा भाग पर्यंत प्रमाद रहित गुणस्थाननिविषैं ही है। बहुरि आयुकर्मका बंध मिश्र गुणस्थान अर निवृत्ति अपर्याप्त अवस्थाकौं प्राप्त मिश्रकाययोग इनकरि रहित अवशेष मिथ्यादृष्टितैं लगाय अप्रमत्त पर्यंत गुणस्थाननिविषैं हो है, अपूर्व करणादिक विषैं आयुका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंध नाहीं है। बहुरि इनि विना अवशेष प्रकृतिनिका बंध मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननिविषैं अपनी अपनी बंधकी व्युच्छित्ति पर्यंत जानना ॥ ९२ ॥ तहां तीर्थंकर प्रकृतिके बंधका विशेष नियम कहैं हैं—

पढमुवसमिये सम्मे सेसतिये अविरदादिचत्तारि।
तित्थयरबंधपारंभया णरा केवलिदुगंते ॥ ९३ ॥

प्रथमोपशमे सम्यक्त्वे शेषत्रये अविरतादिचत्वारः।
तीर्थंकरबंधप्रारंभका नराः केवलिद्विकांते ॥ ९३ ॥

जी० प्र०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वे शेषद्वितीयोपशमक्षायोपशमिकक्षायिकसम्यक्त्वेषु च असंयताद्यप्रमत्तांतमनुष्या एव तीर्थंकरबंधं प्रारंभंते तेऽपि प्रत्यक्षकेवलिश्रुतकेवलिश्रीपादोपांत एव। अत्र प्रथमोपशमसम्यक्त्वे इति भिन्नविभक्तिकरणं तत्सम्यक्त्वे स्तोकांतर्मुहूर्तकालत्वात् षोडशभावनासमृद्ध्यभावात् तद्बंधप्रारंभो न इति केषांचित्पक्षं ज्ञापयति—

नरा इति विशेषणं शेषगतिज्ञानमपाकरोति विशिष्टप्रणिधानक्षयोपशमादिसामग्रीविशेषाभावात्। न च तिर्यग्वर्जितगतित्रये तीर्थबंधाभावोऽस्ति तद्बंधकालस्य उत्कृष्टेन अंतर्मुहूर्ताधिकाष्टवर्षोनपूर्वकोटिद्वयाधिकत्रयस्त्रिंशत्सागरोपममात्रत्वात् केवलिद्वयांते एवेतिनियमः तदन्यत्र तादृग्विशुद्धिविशेषासंभावात् ॥ ९३ ॥ अथ गुणस्थानेषु व्युच्छित्तिमाह—

सं चं०—प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषैं वा अवशेष द्वितीयोपशम क्षायोपशमिक क्षायिक सम्यक्त्वनिविषैं असंयततैं लगाइ अप्रमत्त गुण स्थान पर्यंत मनुष्य ही तीर्थंकर प्रकृतिके बंधकौं प्रारंभ करै हैं ते पणि प्रत्यक्ष केवली वा श्रुतकेवलीके चरणांके निकटि करै है। इहां प्रथमोपशम सम्यक्त्वका जुदा कहनेका अभिप्राय ऐसा है जो कोई आचार्यनिका ऐसा मत है जो प्रथमोपशम सम्यक्त्वका काल थोरा अंतर्मुहूर्त मात्र है तातैं तहा षोडश भावना भाई जा इ नाहीं तातैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषैं तीर्थंकर प्रकृतिके बधका प्रारंभ नाहीं है इस अभिप्रायकौं विचारि जुदा कह्या है। बहुरि मनुष्य कहनेका अभिप्राय यहु है जो और गति वाले जीव तीर्थंकर बंधका प्रारंभ न करैं जातैं और गतिवाले जीवनिकैं विशिष्ट विचार क्षयोपशमादि सामग्रीका अभाव है सो प्रारंभ तौ मनुष्य विषैं ही है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर तीर्थंकरका बंध तिर्यंच बिना तीनगतिविषैं पाइए है जातैं पहिले तीर्थंकर प्रकृतिका बंध होइ ताकौं प्रारंभ कहिए तिस समयतैं लगाइ समय समय विषैं समय प्रबद्धरूप बंध विषैं तीर्थंकर प्रकृतिका भी बंध हूवा करै सो उत्कृष्टपनैं अंतर्मुहूर्त अधिक आठवर्ष घाटि दोय कोडि पूर्व अधिक तेतीस सागर प्रमाण काल पर्यंत बंध हो है तातैं तिर्यंच गतिबिना तीनों गति विषैं तीर्थंकरका बंध है। बहुरि केवलीका निकट कहनेका अभिप्राय यह है जो और ठिकानैं ऐसी विशुद्धता होइ नाहीं जिसतैं तीर्थंकर बंधका प्रारंभ होइ। आगैं गुणस्थानादिकनिविषैं बंधकी व्युच्छित्ति वा बंध वा अबंध कहै हैं।

तहां जिस गुणस्थानविषैं जेती प्रकृतनिकी व्युच्छित्ति कही होइ तिनि प्रकृतनिका तिस गुणस्थानका अंतसमयपर्यंत बंध जानना। बहुरि ताके ऊपरिवर्ती जे गुणस्थान है तिनविषैं तिन प्रकृतिनिका बंध न जानना। बहुरि जिस गुणस्थान विषै जेती प्रकृतिनिका बंध कह्या होइ तेती प्रकृतनिका तहां बंध जानना। सो पहिले पहिले गुणस्थानविषैं जेता बंध कह्या होइ तिनमेंस्यों तहां ही जितनी व्युच्छित्ति कही होइ सो घटाइए तब अगले अगले गुणस्थाननिविषैं बंधका प्रमाण होइ तहां विशेष जो कोइ प्रकृति अगलें गुणस्थाननि विषैं बंध योग्य होइ भी तिनि प्रकृतिनिकौं पहिले गुणस्थाननिका बंध विषैं घटाइ दीजिए। अर पीछैं जहां आनि मिलैं तहां बंधविषैं बधाइ दीजिए। बहुरि जेती प्रकृति बंध होने योग्य होंइ तितनी प्रकृतिनिमै जेती प्रकृतिनिका बंध कह्या होइ तितनी प्रकृति घटाएं अवशेष जितनी प्रकृति रहैं तितनी प्रकृति अबंधरूप जाननी॥९३॥सो इहां प्रथम ही गुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति कहिए है

सोलस पणवीस णभं दस चउ छक्केक्क बंधवोछिण्णा।
दुग तीस चदुरपुव्वे पण सोलस जोगिणो एक्को ॥ ९४ ॥

षोडश पंचविंशतिः नभः दश चतस्रः षडेकैकं बंधव्युच्छिन्नाः।
द्विके त्रिंशत् चतस्रः अपूर्वे पंच षोडश योगिन एका ॥ ९४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ षोडशप्रकृतयो बंधव्युच्छिन्नाः तासामुपरि बंधो नास्तीत्यर्थः। सासादने पंचविंशतिः। मिश्रे शून्यं व्युच्छित्त्यभाव इत्यर्थः। असंयते दश। देशसंयते चतस्रः। प्रमत्ते षट्। अप्रमत्ते एका। अपूर्वकरणस्य सप्तभागेषु प्रथमे द्वे। षष्ठे त्रिंशत्। सप्तमे चतस्रः। अनिवृत्तिकरणे पंच। सूक्ष्मसांपराये षोडश। उपशांतक्षीणकषाययोः शून्यं। सयोगकेवलिनि एका। अयोगकेवलिनि बंधो व्युच्छित्तिरपि न। तत्र बंधव्युच्छित्तौ द्वौ नयौ इच्छंति—

उत्पादानुच्छेदोऽनुत्पादानुच्छेदश्चेति। तत्र उत्पादानुच्छेदो नाम द्रव्यार्थिकः तेन सत्त्वावस्थायामेव विनाशमिच्छति। असत्त्वे बुद्धिविषयातिक्रांतभावेन वचनगोचरातिक्रांते सति अभावव्यवहारानुत्पत्तेः। न च अभावोनामास्ति तत्परिच्छेदकप्रमाणाभावात्। सत्त्वविषयाणां प्रमाणानां असत्वे व्यापारविरोधात्। अविरोधे वा गर्दभशृंगमपि प्रमाणविषयं भवेत्। नचैवं। अनुपलंभात्। तस्मात् भाव एव अभाव इति सिद्धं। अनुत्पादानुच्छेदो नाम पर्यायार्थिकः तेन असत्त्वावस्थायामभावव्यपदेशमिच्छति। भावे उपलभ्यमाने अभावत्वविरोधात्। न च प्रतिषेधाविषयोभावोऽभावत्वमाश्रयति प्रतिषेधस्य फलाभावप्रसंगात्। न च विनाशो नास्ति घात्यघातिनां सर्वत्रावस्थानानुपलंभात्। न च भावः अभावो भवति भावाभावयोरन्योन्यविरुद्धयोरेकत्वविरोधात् इति। अत्र पुनः सूत्रे द्रव्यार्थिकनयः उत्पादानुच्छेदोऽवलंबितः उत्पादस्य विद्यमानस्य अनुच्छेदः-अविनाशः यस्मिन् असौ उत्पादानुच्छेदो नयः, इति द्रव्यार्थिकनयापेक्षया स्वस्वगुणस्थानचरमसमये बंधव्युच्छित्तिः-बंधविनाशः। पर्यायार्थिकनयेन तु अनंतरसमये बंधनाशः ॥ ९४ ॥ अथ ताः षोडशादिप्रकृतीर्गाथाष्टकेनाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं सोलह प्रकृति बंधतैं व्युच्छित्ति रूप भई। मिथ्यादृष्टि विषैं तौ इनिका बंध है सासादनादिक ऊपरिके गुणस्थान तिनिविषैं इनका बंध नाहीं ऐसैं ही व्युच्छित्तिका स्वरूप सर्वत्र जानना। सासादनविषैं पचीस प्रकृति व्युच्छित्ति रूप भई मिश्रविषैं शून्य कहिए व्युच्छित्तिका अभाव है। असयंत विषैं दश, देशसंयतविषैं च्यारि, प्रमत्तविषैं छह, अप्रमत्तविषैं एक, अपूर्व करणके सात भाग तिनविषैं पहिले भागमें दोय, द्वितीयादि पंचमभागपर्यंत विषैं शून्य, छठा भागविषैं तीस, सातवां भागविषैं च्यारि, बहुरि अनिवृत्ति करण विषैं पंच, सूक्ष्मसांपरायविषैं सोलह, उपशांतकषाय क्षीणकषाय विषैं शून्य नास्ति, सयोग केवलीविषैं एक, अयोगकेवलीविषैं बंध भी नाहीं अर व्युच्छित्ति भी नाहीं, तहां व्युच्छित्तिके कथनविषैं दोय नय हैं—

एक उत्पादानुच्छेद १ एक अनुत्पादानुच्छेद २ तहां उत्पादानुच्छेद नाम द्रव्यार्थिक नयका है सो इस नयका अभिप्राय करि तौ जहां अस्तित्व पाइए तहां ही विनाश कहिए जातैं जहां अस्तित्व ही नाहीं तहां बुद्धिविषैं कैसैं आवै? जब

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बुद्धिविषैं न आवै तव वचनस्यों अगोचर भए अभाव है असा व्यवहार कैसै कीया जाइ ? अभाव कोई पदार्थ नाही जातैं अभावका जाननहारा सम्यग्ज्ञान प्रमाण नाहीं है प्रमाण हैं ते अस्तित्वरूप वस्तु हींकौं जानैं तिनकैं नास्तित्वरूप वस्तुविषै कैसैं प्रवृत्ति होइ ? अर जो नास्तित्व रूप वस्तुविषैं भी प्रवृत्ति होइ तौ गर्दभका सींग नास्तित्वरूप है तिसविषैं भी सम्यग्ज्ञानकी प्रवृत्ति होइ सो वनै नाही तातैं जहां आस्तित्व पाइए तहा ही नास्तित्व कहना योग्य हैं। बहुरि अनुत्पादानुच्छेद नाम पर्यायार्थिक नयका है सो इस नयके अभिप्राय करि जहां सत्त्व न होइ तहां ही अभाव कहिए जातैं सद्भावके होत संतैं अभावका विरोध हैं। बहुरि सद्भावका निषेध विना अभाव होइ नाही बहुरि ऐसा भी नाही जो कर्मनिका नाश नाही है जातैं घातिया अघातिया कर्म सर्वत्र न पाइए हैं। बहुरि सद्भाव है सो अभाव रूप नाहीं है जातैं सद्भावके अर अभावकैं परस्पर विरोध है तातैं जहां नास्तित्व पाइए तहां ही नास्तित्व कहना योग्य है। स्याद्वादमतविषैं दोऊ नय अविरोधी हैं सो इहां व्युच्छित्ति कथनविषैं द्रव्यार्थिक नयरूप उत्पादानुच्छेदकी अपेक्षा कथन है। उत्पाद कहिए विद्यमान आस्तित्व ताका अनुच्छेद कहिए दूरि होना जाके विषैं नाहीं सो असा द्रव्यार्थिक नय है सो इस नयकी अपेक्षा अपने अपने गुणस्थानका अंतके समय व्युच्छित्ति कही। बहुरि जो पर्यायार्थिक नयकरि कहिए तो उस अंतके समय पीछे जो अनंतर समय होइ तहा तिन प्रकृतिनिका नाश कहिए जैसै लोकविषैं भी कोऊ दोय पुरुष एक नगरविषैं थे तिनविषैं एक पुरुष कोऊ और नगर गया तहां ताकौं बूझा तुम कहां विछुरे थे तव वाने कह्या मै अमुकके नगरविषैं विछुऱ्या था सो जहा उनका संयोग था तहां ही विछुरना कह्या तैसैं इहां भी व्युच्छित्तिका स्वरूप जानना। सो यहु तौ द्रव्यार्थिक नयका अभिप्राय है बहुरि तिसही पुरुषके बूझा थका असा कह्या कि हम अमुके नगरकौं छोडि अमुके नगर ठिकाने आए तव वासौं विछुरे सो इहां जहां उसके संयोगका अभाव भया तहां ही विछुरना कह्या तैसैं अबंधविषैं बंधका अभाव जानना इहां पर्यायार्थिक नयका अभिप्राय हैं ॥ ९४ ॥ आगैं तिनि व्युच्छित्ति रूप प्रकृतिनिके नाम आठ गाथानिकरि कहैं हैं—

मिच्छत्तहुंडसंढाऽसंपत्तेयक्खथावरादावं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

.CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुहुमतियं वियलिंदी णिरयदुणिरयाउगं मिच्छे ॥ ९५ ॥

मिथ्यात्वहुंडषंढासंप्राप्तैकाक्षस्थावरातपः ।
सूक्ष्मत्रयं विकलेंद्रियं निरयद्विनिरयायुष्कं मिथ्यात्वे ॥ ९५ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वं हुंडसंस्थानं षंढवेदः असंप्राप्तसृपाटिकासंहननं एकेंद्रियं स्थावरं आतपः सूक्ष्मापर्याप्तसाधरणानि द्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियाणि नरकगतितदानुपूर्व्ये नरकायुश्चेति षोडश केवलमिथ्यात्वोदयहेतुबंधत्वात् मिथ्य दृष्टिगुणस्थानचरमसमये एव व्युच्छिद्यंते ॥ ९५ ॥

स चं०—मिथ्यात्व १ हुंड संस्थान २ नपुंसकवेद ३ असंप्राप्तासृपाटिका संहनन ४ एकेंद्रिय ५ स्थावर ६ आताप ७ सूक्ष्म ८ अपर्याप्त ९ साधारण १० ए, विकल त्रय तीन बेंद्री तेंद्री चौंद्री ३ नरक गति नरकगत्यानुपूर्वी ए नरक द्विक २ अर नरक आयु ए सोलह प्रकृति तिनके बंधका कारण मिथ्यात्व हीका उदय है तातैं ए प्रकृति मिथ्यात्वका अंतसमयविषै व्युच्छित्ति रूप भई ॥ ९५ ॥

विदियगुणे अणथीणतिदुभगतिसंठाणसंहदिचउक्कं ।
दुग्गमणित्थीणीचं तिरियदुगुज्जोवतिरियाऊ ॥ ९६ ॥

द्वितीयगुणे अनस्त्यानत्रयदुर्भगत्रयसंस्थानसंहतिचतुष्कं ।
दुर्गमनस्त्रीनीचं तिर्यग्द्विकोद्योतातिर्यगायुः ॥ ९६ ॥

जी० प्र०—सासादनगुणस्थानचरमसमये अनंतानुवंधिचतुष्टयं स्त्यानगृद्धिनिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाः दुर्भगदुःस्वरानादेयानि न्यग्रोधपरिमंडलस्वातिकुब्जवामनसंस्थानानि वज्रनाराचार्धनाराचकीलितसंहननानि अप्रशस्तविहायोगतिः स्त्रीवेदः नीचैर्गोत्रं तिर्यग्गतितदानुपूर्व्ये उद्योतः तिर्यगायुश्चेति पंचविंशतिः व्युच्छिद्यंते । अमूः पंचविंशतिः अनंतानुवंध्युदयरहितमिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वोदयरहितसासादने च बंधादुभयोदयहेतुका भवंति । मिश्रगुणस्थाने बंधव्युच्छित्तिः शून्यं च ॥ ९६ ॥

स चं०—दूसरा सासादन गुणस्थानका अंतका समयविषैं अंनतानुबंधी ४ स्त्यानगृद्धि निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला ८२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ए तीन ३ दुर्भग दुःस्वर अनादेय ए तीन ३ न्यग्रोध परिमंडल स्वाति कुब्ज वामन ए च्यारि संस्थान ४ वज्रनाराच नाराच अर्धनाराच कीलित ए च्यारि संहनन ४ अप्रशस्तविहायोगति १ स्त्रीवेद १ नीचगोत्र १ तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी ए तिर्यंच द्विक २ उद्योत १ तिर्यंच आयु १ ए पचीस प्रकृति व्युच्छित्ति रूप भई सो ए अनंतानुबंधीके उदयबिना मिथ्यादृष्टिविषैं केवल मिथ्यात्व तैं भी बंधै अर मिथ्यात्वके उदयबिना सासादनविषैं केवल अनंतानुबंधीतैं भी बंधै तातैं इनका कारण मिथ्यात्व अर अनंतानुबंधी दोऊ जानने । मिश्र गुणस्थानविषैं बंधकी व्युच्छित्ति शून्य है किसी ही प्रकृतिकी व्युच्छित्ति नाहीं ॥ ९६ ॥

अयदे बिदियकसाया वज्जं ओरालमणुदुमणुवाऊ ।
देसे तदियकसाया णियमेणिह बंधवोच्छिण्णा ॥ ९७ ॥

अयते द्वितीयकषाया वज्रमोरालमनुष्यद्विमानवायुः ।
देशे तृतीयकषाया नियमेनेह बंधव्युच्छिन्नाः ॥ ९७ ॥

जी० प्र०—असंयतगुणस्थानचरमसमये द्वितीयकषायचतुष्कं वज्रवृषभनारासंहननं ओदारिकशरीरतदंगोपांगे मनुष्यगतितदानुपूर्व्यें मनुष्यायुश्चेति दश अप्रत्याख्यानकषायोदयहेतुवंधत्वाद्व्युच्छिद्यंते । देशव्रतगुणस्थानचरमसमये स्वोदयहेतुबंधत्वात् प्रत्याख्यानावरणा व्युच्छिद्यंते नियमेन ।९७।

स० चं०—असंयत गुणस्थानका अंतसमयविषैं दूसरा अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ वज्रवृषभनाराच संहनन १ औदारिक शरीर औदारिक अंगोपांग ए दोय २ मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी ए दोय २ मनुष्यायुः १ ए दश प्रकृति वंधतैं व्युच्छित्ति रूप भई जातैं ए अप्रत्याख्यान कषायके उदयके निमित्ततैं बंधैं है। बहुरि देशव्रत गुणस्थानका चरम समयविषैं प्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ व्युच्छित्ति भई नियमकरि जातैं ए अपने उदयके निमित्ततैं बंधै है ॥ ९७ ॥

छट्ठे अथिरं असुहं असादमजसं च अरदिसोगं च ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपमत्ते देवाऊणिट्ठवणं चेव अत्थित्ति ॥ ९८ ॥

षष्ठे अस्थिरमशुभमसातमयशश्च अरतिशोकं च ।
अप्रमत्ते देवायुर्निष्ठापनं चैव अस्तीति ॥ ९८ ॥

जी० प्र०—प्रमत्तसंयतगुणस्थानचरमसमये अस्थिरं अशुभं असातवेदनीयं अयशस्कीर्तिः शोकश्चेति षट् व्युच्छिद्यंते प्रमादहेतुकबंधत्वात् । स्वस्थानाप्रमत्तगुणस्थानचरमसमये देवायुर्बंधव्युच्छित्तिः । स्वस्थानविशेषणं तु सातिशयाप्रमत्तादिषु विशिष्टविशुद्धिकेषु तद्बंधनिबंधनमध्यमविशुद्धिसंज्वलनपरिणामासंभवात् ॥ ९८ ॥ अथापूर्वकरणस्य सप्तभागान् त्रिधाकृत्वा तत्र बंधव्युच्छित्तिं गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—छठा प्रमत्तगुणस्थानका अंतसमयविषैं अस्थिर १ अशुभ १ असातावेदनीय १ अयशस्कीर्ति १ अरति १ शोक १ ए छह व्युच्छित्ति रूप भई जातैं ए प्रमादके निमित्ततैं बंधैं है । बहुरि श्रणी चढनेकौं अधःकरणादिरूप न भया ऐसा स्वस्थान अप्रमत्तका अंतसमय विषैं देवायु व्युच्छित्ति रूप भई जातैं अधःकरणादिक रूप भया ऐसा सातिशय अप्रमत्तादिक विषैं देवायुके बंधकौं कारण मध्यमविशुद्धता रूप संज्वलनके परिणाम न संभवै है ॥ ९८ ॥ आगैं अपूर्वकरणके सप्त भागनिविषैं तीन भागनिकौं अंगीकार करि बंधकी व्युच्छित्ति कहै हैं—

मरणूणम्हि णियट्टीपढमे णिद्दा तहेव पयला य ।
छट्ठे भागे तित्थं णिमिणं सग्गमणपंचिंदी ॥ ९९ ॥
तेजदुहारदुसमचउसुरवण्णगुरुगचउक्कतसणवयं ।
चरमे हस्सं च रदी भयं जुगुच्छा य बंधवोच्छिण्णा ॥१००॥ जुम्मं ।

मरणोने निवृत्तिप्रथमे निद्रा तथैव प्रचला च ।
षष्ठे भागे तीर्थं निर्माणं सद्गमनपंचेंद्रियं ॥ ९९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेजोद्विकाहारद्विसमचतुरस्रसुरवर्णागुरुकचतुष्कत्रसनवकं ।
चरमे हास्यं च रतिः भयं जुगुप्सा च बंधव्युच्छिन्ना ॥ १०० ॥

जी० प्र०—निवृत्तिः अर्थादपूर्वकरणपरिणामः तस्य प्रथमभागे मरणोने आरोहणावसरे मरणरहिते निद्राप्रचले व्युच्छिन्ने । तथैव तेनैव प्रकारेण षष्ठभागचरमसमये तीर्थं निर्माणं सद्गमनं पचेंद्रियं तैजसकार्मणे आहारकतदंगोपांगे समचतुरस्रं देवगतितदानुपूर्व्ये वैक्रियिकतदंगोपांगानि वर्णगंधरसस्पर्शाः अगुरुलघूपघातपरघातोच्छ्वासाः त्रसवादरपर्याप्तकप्रत्येकस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेयानि चेति त्रिंशद्बंधव्युच्छिन्नाः । सप्तमभागे हास्यं रतिः भयं जुगुप्सा चेति चतुष्कं व्युच्छिन्नं ॥ ९९–१०० ॥

स० चं०—निवृत्ति कहिए अपूर्वकरण गुणस्थान ताका चढ़नेके अवसरविषैं मरणकरि रहित ऐसा प्रथम भाग ताके विषैं निद्रा अर प्रचला ए दोय व्युच्छित्ति भई। तैसैं ही छठा भागका अंत समयविषैं तीर्थंकर १ निर्माण १ शुभविहायोगति १ पंचेंद्रिय १ तैजस कार्माण ए दोय २ आहारक आहारक अंगोपांग ए दोय २ समचतुरस्र देवगति देवगत्यानुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग ए च्यारि ४ वर्ण गंध रस स्पर्श ए च्यारि अगुरु लघु उपघात परघात उच्छ्वास ए च्यारि ४ त्रस वादर पर्याप्त प्रत्येक स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय ए नव ऐसैं तीस प्रकृति व्युच्छित्ति भई। बहुरि सातवां भागविषैं हास्य राति भय जुगुप्सा ए च्यारि प्रकृति बंध विषैं व्युच्छित्ति रूप भई हैं ॥ ९९–१०० ॥

पुरिसं चदुसंजलणं कमेण अणियट्टिपंचभागेसु ।
पढमं विग्घं दंसणचउजसउच्चं च सुहुमंते ॥ १०१ ॥

पुरुषः चतुःसंज्वलनः क्रमेण अनिवृत्तिपंचभागेषु ।
प्रथमं विघ्नः दर्शनचतुर्यशउच्चं च सूक्ष्मांते ॥ १०१ ॥

जी० प्र०—पुंवेदः क्रोधादयश्चतुःसंज्वलनाश्च अनिवृत्तिकरणगुणस्थानपंचभागेषु क्रमेण उपर्युपरि व्युच्छिद्यंते । सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानचरमसमये मत्यावरणादीनि पंच दानांतरादयः पंच चक्षुर्दर्शनावरणानि चत्वारि यशस्कीर्तिः उच्चैर्गोत्रं चेति षोडश व्युच्छिद्यंते । अंते इत्यंतदीपकत्वात् सर्वत्रोक्तव्युच्छित्तयः तच्चरमसमये एव ज्ञातव्याः ॥ १०१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स चं०—अनिवृत्ति करणके पंच भाग तिनिविषैं पहिले भागमें पुरुष वेद द्वितीयभागमें संज्वलन क्रोध तीसरा भागमें संज्वलन मान चौथाभागमें संज्वलनमाया पांचवां भागविषैं संज्वलन लोभ ऐसैं क्रमतैं व्युच्छित्ति भई है। बहुरि सूक्ष्म सांपरायका अंतसमयविषै मति आवरणादिक पंच ज्ञानावरण जैसै दानांतरायादि पंच अंतराय ५ चक्षुर्दर्शना वरणादिक च्यारि दर्शन ४ यशस्कीर्ति १ उच्चगोत्र १ ए सोलह प्रकृति बंधविषैं व्युच्छित्ति भई। इहां गाथाविषैं अंत ऐसा कह्या है सो अंतके विषैं धरया हूवा दीपक जैसैं माही सर्वत्र प्रकाश करै तैसैं यहु जेती व्युच्छित्ति कही तेती अंतके समयविषैं जाननी ऐसा दिखावै हैं—

उवसंतखीणमोहे जोगिम्हि य समयियट्ठिदी सादं।
णायव्वो पयडीणं बंधस्संतो अणंतो य ॥ १०२ ॥

उपशांतक्षीणमोहे योगिनि च समयिकस्थितिः सातं।
ज्ञातव्यः प्रकृतीनां बंधस्यांतः, अनंतश्च ॥ १०२ ॥

जी० प्र०—उपशांतकषाये क्षीणमोहे सयोगकेवलिनि च एकं समयस्थितिकं सातवेदनीयमेव बध्नाति। तत्र योगहेतुकबंधकषायोदयस्य तेष्वभावात्। अयोगे योगोऽपि बंधोऽपि च नास्ति। एवं प्रकृतीनां बंधस्यांतः बंधव्युच्छित्तिः उक्तो ज्ञातव्यः। बंधस्यानंतः बंध इत्यर्थः। चशब्दादबंधश्चेति ॥ १०२ ॥ तद्द्वयं गुणस्थानेषु अग्रतनसूत्रद्वयेन आह—

स० चं—उपशांत मोह क्षीणमोह सयोगी इनिविषैं एक समयकी स्थितिलीएं एक सातावेदनीयका बंध है सो योगनिके निमित्ततैं है जातै कषायनिका तहां अभाव है। बहुरि अयोगीविषैं योग भी नाही बंध भी नाही ऐसैं प्रकृतिनिकी बधस्यांतः कहिए बंधकी व्युच्छित्ति कही है सो जाननी ॥ १०२ ॥ आगै बंधस्य अनंतः कहिए बंध अर चकारतैं अबंध दोय गाथनिकरि काहिए है ते जानने—

सत्तरसेकग्गसयं चउसत्ततरि सगट्ठि तेवट्ठी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधा णवदृवण्णा दुवीस सत्तारसेकोघे ॥ १०३ ॥

सप्तदशैकाग्रशतं चतुःसप्तसप्ततिः सप्तषष्टिः त्रिषष्ठिः ।
बंधा नवाष्टपंचाशत् द्वाविंशतिः सप्तदश एकोघे ॥ १०३ ॥

जी॰ प्र॰—अभेदविवक्षया बंधो विंशत्यग्रशतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ सप्तदशोत्तरशतमेव 'सम्मेव तित्थबंधो आहारदुगं पमादरहिदेसु' इति । तत्र-यस्य बंधाभावात् । सासादने एकोत्तरशतं मिथ्यादृष्टिव्युच्छित्तेरुपरि अबंधात् । मिश्रे चतुःसप्ततिः सासादनव्युच्छित्तेः नृसुरायुषोश्च बंधे अप्रक्षे-पात् । असंयते सप्तसप्ततिः नृदेवायुस्तीर्थानामबंधात् बंधे निक्षेपात् । देशसंयते सप्तषष्टिः असंयतछेदस्याभावात् । प्रमत्ते त्रिषष्टिः देशसंयतव्यु-च्छित्तेरभावात् । अप्रमत्ते एकान्नषष्टिः प्रमत्तव्युच्छित्तेरभावात् आहारकद्वयस्य च बंधे पतनात् । अपूर्वकरणेऽष्टपंचाशत् देवायुषोऽप्रमत्ते छेदात् । अनिवृत्तिकरणे द्वाविंशतिः षट्त्रिंशतो बंधाभावात् । सूक्ष्मसांपराये सप्तदश पंचानामनिवृत्तिकरणे व्युछेदात् । उपशांतक्षीणकषाययोः सयोगे च ए-कैका अयोगे शून्यं ॥ १०३ ॥

सं॰ च—अभेद विवक्षाकरि बंधरूप एकसौ बीस प्रकृति हैं तहां मिथ्यादृष्टिविषैं एकसौ सतरा प्रकृतिबंध हैं जातै सम्मेव तित्थबंधो आहार दुगं पमादरहिदेसु, ऐसा कह्या है तातैं इहां तीर्थंकर प्रकृति आहारक द्विक २ इन तीनका बंध नाही इनमेंस्यों मिथ्यादृष्टिविषै व्युच्छित्ति भई सोलह घटाइए तब सासादनविषैं एकसौ एकका बंध है। बहुरि इनमेंस्यों इहां पचीस तौ व्युच्छित्ति भई अर देवायु मनुष्यायुका मिश्रविषैं बंध नाही ऐसे सत्ताईस घटाएं मिश्रविषै चौहत्तरिका बंध है । बहुरि मिश्रविषैं व्युच्छित्तिका तौ अभाव है बंधविषैं देवायु मनुष्यायु तीर्थंकर ए तीन मिली तातैं असंयतविषैं सतहत्तरिका बंध है बहुरि इहां दश व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाए देशसंयतविषैं सतसठिका बंध है। बहुरि इहां चारि व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाए प्रमत्तविषैं त्रेसठिका बंध है । बहुरि इहां छह व्युच्छित्ति भई ति-नकौं घटाएं अर आहारद्विकको मिलाएं अप्रमत्तविषैं गुणसठिका बंध है। बहुरि इहां देवायुकी व्युच्छित्ति भई ताकौं घटाएं अपूर्वकरणविषैं अठावनका बंध है । बहुरि इहां तीन भागनिकरि छत्तीसकी व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाये अनिवृत्तिकरणविषैं बाइसका बंध है। बहुरि इहां पंच भागनिकरि पांचकी व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाएं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूक्ष्मसांपराय विषैं सत्तरका बंध है। बहुरि इहां सोलहकी व्युच्छित्ति भई तिनकौं घटाएं एक साता वेदनीय रही तिसका बंध उपशांत कषाय क्षीणकषाय सयोगी विषैं जानना। अयोगीविषैं बंधका अभाव है॥ १०३॥

तिय उणवीसं छत्तियतालं तेवण्ण सत्तवण्णं च।
इगिदुगसट्ठी बिरहिय सय तियउणवीससहिय वीससयं॥१०४॥

त्रयमेकोनविंशतिः षट्त्रिकचत्वारिंशत् त्रिपंचाशत् सप्तपंचाशच्च।
एकद्वाषष्टिः द्विरहितं शतं त्र्येकोनविंशतिसहितं विंशतिशतं॥ १०४॥

प्र० जी०—अबंधो मिथ्यादृष्टौ तीर्थकृदाहारकद्वयं चेति त्रयं। सासादने तदेव षोडशयुतमित्येकान्नविंशतिः। मिश्रे सापि पंचविंशत्या नृदेवायुस्तीर्थकृदबंधात् त्रिचत्वारिंशत्। देशसंयते सा दशयुतेति त्रिपंचाशत्। प्रमत्ते चतुर्युतेति सप्तपंचाशत्। अप्रमत्ते प्रमत्तषड्युतापि आहारकद्वयबंधादेकषष्टिः। अपूर्वकरणप्रथमभागे देवायुर्युतेति द्वाषष्टिः। द्वितीयभागे निद्राप्रचलाभ्यां चतुःषष्टिः। सप्तमभागे षष्ठभागत्रिंशता चतुर्नवतिः। अनिवृत्तिकरणे सप्तमभागचतुर्भिरष्टानवतिः। सूक्ष्मसांपरायेऽनिवृत्तिकरणपंचभागानां एकैकव्युच्छित्त्या त्र्युत्तरशतं। उपशांतक्षीणकषायसयोगेषु षोडशयुतमित्येकान्नविंशत्यग्रशतं। अयोगे सातस्याप्यबंधाद् विंशत्यग्रशतं॥ १०४॥ अथ मार्गणासु तत्त्रयं प्ररूपयंस्तावन्नरकगतौ गाथात्रयेणाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं तीर्थंकर अहारक द्विक ए तीन प्रकृति अबंध हैं। तिनिविषैं सोलह मिलाएं सासादनविषैं उगणीस अबंध हैं। तिनिविषैं पचीस व्युच्छित्ति अर मनुष्य आयु देवायु मिलाएं मिश्रविषैं छियालीस

१

	मि०	सा०	मि०	अ०	दे०	प्र०	अ०	अ०	अ०	सू०	उ	क्षी०	स०	अ०
बंधव्यु०	१६	२५	०	१०	४	६	१	३६	५	१६	१	०	१	०
बंधः	११७	१०१	७४	७७	६७	६३	५९	५८	२२	१७	१	१	१	०
अबंधः	३	१९	४६	४३	५३	५७	६१	६२	९८	१०३	११९	११९	११९	१२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अबंध हैं। इनिविषैं मनुष्यायु देवायु तीर्थंकर घटाएं असयंतविषैं तियालीस अबंध हैं। इस विषैं दश मिलाएं देशसंयतविषैं तरेपन अबंध हैं। इनविषैं च्यारि मिलाएं प्रमत्तविषैं सत्तावन अबंध हैं। इन विषैं छह व्युच्छित्ति मिलाएं अर आहारक द्विक घटाएं अप्रमत्तविषैं इकसठि अबंध हैं। यामैं देवायु मिलैं अपूर्वकरणविषैं वासठि अबंध है। इनविषैं छत्तीस मिलाए अनिवृत्तिकरणविषैं अठ्याणवै अबंध है। इनिविषैं पांच मिलाएं सूक्ष्मसांपरायविषैं एकसौ तीन अबंध हैं। इनविषैं सोलह मिलाएं उपशांत मोह क्षीणमोह सयोगीविषैं एकसौ उगणीस अबंध हैं इनविषैं सातावेदनीय मिलाएं अयोगीविषैं एकसौ वीस प्रकृति अबंध है।

गुणस्थानविषैं अनुक्रमतैं व्युच्छित्ति–१६ । २५ । ० । १० । ४ । ६ । १ । ३६ । ५ । १६ । १ । ० । १ । ० बंध ११७ । १०१ । ७४ । ७७ । ६७ । ६३ । ५९ । ५८ । २२ । १७ । १ । १ । १ । ० अबंध । ३ । १९ । ४६ । ४३ । ५३ । ५७ । ६१ । ६२ । ९८ । १०३ । ११९ । ११९ । ११९ । १२० । ऐसैं जानना १०४ । आगैं मार्गणानिविषैं व्युच्छित्ति बंध अबंध कहैं हैं। तहां प्रथम ही नरकगतिविषैं तीन गाथानि करि कहैं हैं–

ओघे वा आदेसे णारयमिच्छम्हि चारि वोच्छिण्णा ।
उवरिम बारस सुरचउ सुराउ आहारयमबंधा ॥ १०५ ॥

ओघ इव आदेशे नारकमिथ्यात्वे चतस्रो व्युच्छिन्नाः ।
उपरितना द्वादश सुरचतुष्कं सुरायुराहारकमबंधाः ॥ १०५ ॥

जी० प्र०–मार्गणायां गुणस्थानवज्ज्ञातव्यं किंतु नरकगतौ मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वादीनां चतुर्णामेव व्युच्छित्तिः । तदुपरितनैकेंद्रियादिद्वादशानां देवगतितदानुपूर्व्यवैक्रियिकतदंगोपांगानां देवायुराहारकद्वययोश्च बंधो नास्ति तेन धर्मादित्रये बंधयोग्यमेकोत्तरशतं १०१ । अंजनादित्रये तीर्थंकरत्वं विना शतं । माघव्यां मनुष्यायुर्विना एकोनशतं। अपर्याप्तकाले तु मिश्रकाययोगित्वात् नरतिर्यगायुषी विना धर्मायामेकोनशतं। वंशादिषु सम्यग्दृष्ट्यनुत्पत्तेः तीर्थकरत्वं विना अष्टानवतिः । माघव्यां मनुष्यगतितदानुपूर्व्योच्चैर्गोत्रैर्विना पंचनवतिः ॥ १०५ ॥ इदं जानंतं प्रति गुणस्थानेषु व्युच्छित्त्यादित्रयं योजयति ॥ १०५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मार्गणानिविषैं व्युच्छित्ति वंध अबंध गुणस्थानवत् जानना। विशेष है सो कहै हैं—नरकगतिविषैं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानविषैं मिथ्यात्वादि आदिकी च्यारि प्रकृतिनिहीकी व्युच्छित्ति है । मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं सोलह प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति कही थी तिनविषैं आदि की च्यारि बिना ऊपरिकी वारह तिनिका बंध नरकगतिविषैं नाहीं है एकेंद्री १ स्थावर २ आतप ३ सूक्ष्म ४ अपर्याप्त ५ साधारण ६ वेंद्री ७ तेंद्री ८ चौंद्री ९ नरकगति १० नरकगत्यानुपूर्वी ११ नरक आयु १२ ए बारह जाननी। बहुरि देवगति देवगत्यानुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग ए च्यारि देवायु आहार द्विक २ इन उगणीस प्रकृतानिका बंध नरकगतिविषैं नाहीं तातैं घर्मादिक तीन पृथ्वीविषैं बंधयोग्य एकसौ एक प्रकृति हैं । अंजनादिक तीन पृथ्वीविषैं तीर्थंकर बिना सौ प्रकृति बंधयोग्य हैं । माघवी सातवी पृथ्वीविषैं मनुष्यायु विना निन्यानवैं प्रकृति वंधयोग्य है वहुरि अपर्याप्त कालविषैं घर्मा पहिली पृथ्विविषैं तौ एकसौ एक विषैं मनुष्यायु तिर्यंचायु विना निन्यानवे प्रकृति बंध योग्य हैं जातैं मिश्रयोग विषैं आयुका बंध होइ नाहीं । वंशादिक पंच पृथ्वीनिविषैं सम्यग्दृष्टी नाहीं उपजै तातै तीर्थंकर विना अठ्याणवै प्रकृति बंधयोग्य है। माघवी सातवी पृथ्वीविषै मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी ऊंचगोत्र इन तीन विना पिच्याणवै प्रकृति वंध योग्य है। ऐसैं जानि गुणस्थाननिविषैं व्युच्छित्यादिक कहे हैं ॥ १०५ ॥

घम्मे तित्थं बंधदि वंसामेघाण पुण्णगो चेव ।
छट्ठोत्ति य मणुवाऊ चरिमे मिच्छेव तिरियाऊ ॥ १०६ ॥

धर्मे तीर्थं बध्नाति वंशामेघयोः पूर्णकश्चैव ।
षष्ठ इति च मानवायुः चरमे मिथ्यात्वे एव तिर्यगायुः ॥ १०६ ॥

जी० प्र०—धर्मायां तीर्थकरत्वं च बध्नाति । वंशामेघयोः पर्याप्त एव बध्नाति नापर्याप्तः । मघवीं यावन्मनुष्यायुर्बध्नाति नाधः । माघव्यां मिथ्यादृष्टावेवैकं तिर्यगायुर्बध्नात एतत्सूत्राभिप्रायेण धर्मादित्रयपर्याप्तस्य एकोत्तरशते मिथ्यादृष्टौ अबंधः तीर्थकरत्वं, बंधः शतं, व्युच्छित्तिः तदेवाद्यच-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुष्कं। सासादने अबंधः पंच, बंधः षण्णवतिः, व्युच्छित्तिः प्रागुक्तैव पंचविंशतिः। मिश्रे बंधः मनुष्यायुर्नेति सप्ततिः, अबंधः एकत्रिंशत्, व्युच्छित्तिः शून्यं। असंयते बंधः मनुष्यायुस्तीर्थकरत्वाभ्यां द्वासप्ततिः, अबंधः एकान्नत्रिंशत्, व्युच्छित्तिर्दश। नारकापर्याप्तानां सासादनत्वं नेति धर्मायां मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः तिर्यगायूरहितसासादनव्युच्छित्त्या युता इत्यष्टाविंशतिः, बंधोऽष्टानवतिः, अबंधः तीर्थकरत्वं। असंयते व्युच्छित्तिः मनुष्यायुर्विना नव, बंधस्तीर्थकरत्वेन एकसप्ततिः। अबंधोऽष्टाविंशतिः। अंजनादित्रयपर्याप्तानां तीर्थकरत्वं विना धर्मादित्रयवत् ज्ञातव्यं। वंशादिपंचापर्याप्ता मिथ्यादृष्टय एवेति बंध एव ॥ १०६ ॥

स चं०—धर्मा पृथ्वीविषैं पर्याप्त अपर्याप्त दोऊ कालविषैं तीर्थंकर प्रकृतिकौं बाधैं हैं। वंशा मेघाविषैं पर्याप्त कालविषैं ही तीर्थंकर प्रकृतिकौं बाधैं हैं अपर्याप्त न बाधे है। मघवी छठी पृथ्वीपर्यंत मनुष्यायुका बंध है माघवी विषैं नाहीं है। अब रचना कहैं हैं—

धर्मादिक तीन पृथ्वीकी रचना—बंधयोग्य प्रकृति एकसौ एक, गुणस्थान च्यारि, तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति ४ मिथ्यात्व हुंडसंस्थान नपुंसकवेद सृपाटिका संहनन ए च्यारि ४, अर बंध सौ १००, तीर्थंकरविना, अर अबंध एक १। बहुरि सासादनविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त पचीस २५, बंध छिनवै ९६, अबंध पांच ५। बहुरि मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ०, बंध मनुष्यायुविना सत्तरि ७०, अबंध इकतीस ३१। बहुरि असंयतविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त दश १०, बंध मनुष्य आयु तीर्थंकर मिलै बहत्तरि ७२, अबंध गुणतीस २९। बहुरि नारक अपर्याप्त तिनकी रचना—

तहां धर्मादि पृथ्वीविषैं बंध योग्य प्रकृति निन्याणवै ९९, गुणस्थान दोय मिथ्यादृष्टि १ असंयत २। जातैं नारक अपर्याप्त सासादन होइ नाहीं। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यादृष्टीकी च्यारि अर तिर्यंच आयुविना सासादनविषैं कही थीं सो चौईस इनि अट्ठाईस प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति है। बंध तीर्थंकर विना अठ्याणवै ९८, अबंध एक १, असंयतविषैं व्युच्छित्ति मनुष्यायुविना पूर्वोक्त नव ९, बंध तीर्थंकर सहित इकहत्तरि ७१ अबंध अट्ठाईस २८, बहुरि अंजनादिक तीन पृथ्वीनिविषैं तीर्थंकर विना सर्व रचना धर्मादिवत् जाननी। बंध योग्य प्रकृति सौ १०० तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति चारि ४, बंध सौ १०० अबंध नास्ति। सासादनविषैं व्युच्छिति पचीस २५, बंध छिनवै ९६, अबंध च्यारि, मिश्रविषैं व्युच्छिति शून्य ० बंध मनुष्यायु विना सत्तरि ७०, अबंध तीस ३०। असंयतविषैं व्युच्छित्ति दश १०,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंध मनुष्यायु सहित इकहत्तरि ७१, अबंध गुणतीस २९। बहुरि बंशानें आदि देकरि पांच पृथ्वीनिविषैं अपर्याप्त विषैं एक मिथ्यादृष्टी गुण स्थान ही है तहां अठ्याणवै प्रकृतिनिका बंध जानना ॥ १०६ ॥

मिस्साविरदे उच्चं मणुवदुगं सत्तमे हवे बंधो।
मिच्छा सासणसम्मा मणुवदुगुच्चं ण बंधंति ॥ १०७ ॥

मिश्राविरते उच्चं मनुष्यद्वयं सप्तमे भवेद्बंधः।
मिथ्यात्विनः सासादनसम्यक्त्वा मनुष्यद्विकोच्चं न बध्नंति ॥ १०७ ॥

जी० प्र०——सप्तमपृथिव्यां मिश्रासंयतयोरुच्चैर्गोत्रं मनुष्यद्वयं च बध्नाति। मिथ्यादृष्टिसासादनौ न बध्नतः इति तत्त्रयं तत्पर्याप्ते मिथ्यादृष्टावबंधः। बंधः षरणवतिः। व्युच्छित्तिस्तिर्यगायुषोऽत्रैव बंधात् पंच। सासादने अबंधोष्टौ, बंधः एकनवतिः, व्युच्छित्तिः चतुर्विंशतिः। मिश्रेऽबंधः तत्त्रयबंधादेकान्नत्रिंशत्, बंधः सप्ततिः, व्युच्छित्तिः शून्यं। असंयते अबंधबंधौ मिश्रवत्। व्युच्छित्तिर्मनुष्यायुर्वर्जनान्नव ॥ १०७ ॥ एवं नरकगतौ बंधव्युच्छित्तिबंधाबंधप्रकृतीः प्ररूप्य अनंतरं तिर्यग्गतौ प्ररूपयति—

स चं०——सातवी पृथ्वीविषैं मिश्र अर असंयत ही विषैं उच्चगोत्र अर मनुष्यद्विकका बंध है। सो सातवी पृथ्वीविषैं पर्याप्त रचना बंधयोग्य निन्याणवै ९९, गुणस्थान च्यारि ४ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं च्यारि पूर्वोक्त अर एक तिर्यंच आयुका इहां ही बंध है तातैं व्युच्छित्ति पांच बंध उच्चगोत्र मनुष्यद्विक विना छिनवैं ९६, अबंध तीन ३ सासादनविषैं व्युच्छित्ति तिर्यंचायुविना पूर्वोक्त चौईस २४, बंध इक्याणवै ९१, अबंध आठ ८ मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ०, बंध उच्च गोत्र मनुष्यद्विक मिलैं सत्तरि ७०, अबंध गुणतीत २९, असंयतविषैं व्युच्छित्ति मनुष्यायुविना पूर्वोक्त नव ९, बंध सत्तरि ७०, अबंध उनतीस २९, मिश्रवत्। सातवी पृथ्वीविषैं अपर्याप्तविषैं एक मिथ्यादृष्टि गुणस्थान है तहां पिच्याणवै प्रकृतिनिका बंध है ॥ १०७ ॥ आगे तिर्यंच गतिविषैं व्युच्छित्त्यादिक कहैं हैं—

तिरिये ओघो तित्थाहारूणो अविरदे छिदी चउरो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मे हवे णियमा ॥ १०८ ॥

तिरश्चि ओघस्तीर्थाहारो न अविरते छित्तिश्चत्वारः ।
उपरिमषण्णां च छित्तिः सासादनसम्यक्त्वे भवेन्नियमात् ॥ १०८ ॥

जी० प्र०—तिर्यग्गतौ ओघः गुणस्थाननिरूपणमेव भवति किंतु तीर्थाहारोनः तीर्थंकरत्वाहारकद्वयाभ्यां रहितो भवति तेन बंधयोग्यप्रकृतयः सप्तदशोत्तरशतं । व्युच्छित्तिबंधाबंधभेदाः तत्प्रकृतित्रयं विना गुणस्थानवज्ज्ञातव्याः । तत्रापि अविरते असंयतसम्यग्दृष्टौ व्युच्छित्तिः अप्रत्याख्यानकषाया एव चत्वारः तदुपरितनानां वज्रवृषभनाराचादीनां षण्णां व्युच्छित्तिः तिर्यग्मनुष्यगत्योः सासादनसम्यग्दृष्टावेव भवति नियमात् ॥ १०८ ॥ तथासति—

स चं०—तिर्यंच गतिविषैं ओघः कहिए गुणस्थानवत् रचना जानना विशेष इतना जो तीर्थंकर आहारक द्विक इनि तीन प्रकृतिनिका बंध नाहीं तातैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ सतरह ११७ इनिविना व्युच्छित्ति बंध अबंध गुणस्थानवत् जानना तहां भी इतना विशेष है—जो अविरतविषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि तिनहीकी व्युच्छित्ति जाननी ऊपर वज्रवृषभ नाराच आदि छह प्रकृति रही तिनकी व्युच्छित्ति सासादन गुणस्थान ही विषैं जाननी जातैं इहां मिश्रादिकविषैं तिर्यंच मनुष्यगति संबंधी प्रकृतिनिका बंध नाहीं है ॥ १०८ ॥

सामण्णतिरियपंचिंदियपुण्णगजोणिणीसु एमेव ।
सुरणिरयाउ अपुण्णे वेगुव्वियछक्कमवि णत्थि ॥ १०९ ॥

सामान्यतिर्यक्पंचेंद्रियपूर्णकयोनिनीषु एवमेव ।
सुरनिरयायुरपूर्णे वैगूर्विकषट्कमपि नास्ति ॥ १०९ ॥

जी० प्र०—सामान्यतिर्यंचः पर्याप्ततिर्यंचः योनिमत्तिर्यंचश्चेति चतुर्विधतिर्यक्षु एवमेव भवति। अपूर्णे लब्ध्यपर्याप्तकतिरश्चि सुरनारकायुषी वैक्रियिकषट्कमपि बंधो नास्ति उत्तरभवे उदयायोग्यानां बंधाभावात् । तत्सामान्यादिचतुर्विधतिरश्चां मिथ्यादृष्टौ बंधप्रकृतयः सप्तदशोत्तरशतं । अत्र मिथ्यात्वादि षोडशव्युच्छित्तिमपनीय शेषाः ॥ १०१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सासादनस्य बंधः अपतीतास्ताः, १६ अबंधः, व्युच्छित्तिरेकत्रिंशत् । कुतः ? असंयतव्युच्छित्तेरुपरितनषण्णामत्रैव छेदात् । मिश्रे बंधः एकान्नसप्ततिः सासादनबंधे तद्व्युच्छित्तेर्देवायुषश्च अपनयनात् । अबंधः अष्टचत्वारिंशत् सासादनव्युच्छित्त्यबंधयोर्देवायुर्मेलनात् । व्युच्छित्तिः शून्यं । असंयतस्य बंधः सप्ततिः देवायुषोऽत्र बंधसंभवात् । अबंधः सप्तचत्वारिंशत् देवायुषोऽपनीतत्वात् । व्युच्छित्तिः अप्रत्याख्यानकषाया एव चत्वारः वज्रवृषभनाराचादीनां षण्णां प्राक् सासादन एव बंधच्छेदात् । देशसंयतस्य बंधः षट्षष्टिः असंयतव्युच्छित्तिचतुष्कस्य तद्बंधेऽपनीतत्वात् । अबंधः एकपंचाशत् असंयतव्युच्छित्तेरत्र पतितत्वात् । व्युच्छित्तिः स्वस्य चतुष्कं तच्चतुर्विधतिर्यग्निर्वृत्त्यपर्याप्तानां बंधयोग्यप्रकृतयः एकादशोत्तरशतमेव । मिश्रकाययोगित्वादायुश्चतुष्कनरकद्विकयोर्बंधाभावात् तेषां च गुणस्थानत्रयमेव । तत्र मिथ्यादृष्टौ बंधः सप्तोत्तरशतं निर्वृत्त्यपर्याप्तकाले मिथ्यादृष्टिसासादनयोः सुरचतुष्कस्याबंधात् । व्युच्छित्तिः त्रयोदश नरकायुर्नरकद्विकयोरभावात् । सासादनस्य बंधः चतुर्नवतिः मिथ्यादृष्टिव्युच्छित्तित्रयोदशानामपनयनात् । व्युच्छित्तिः एकान्नत्रिंशत् तिर्यग्मनुष्यायुषोरभावात् । अबंधः सप्तदश मिथ्यादृष्टिव्युच्छित्त्यबंधयोर्मेलनात् । असंयतस्य बंधः एकान्नसप्ततिः सासादनबंधे तद्व्युच्छित्त्येकान्नत्रिंशतमपनीय सुरचतुष्कस्य मेलनात् । अबंधः द्वाचत्वारिंशत् सासादनव्युच्छित्त्यबंधौ एकीकृत्य तस्मात् सुरचतुष्कस्य बंधे निक्षेपात् । व्युच्छित्तिः अप्रत्याख्यानकषाया एव चत्वारः तिर्यग्लब्ध्यपर्याप्तकमिथ्यादृष्टौ तिर्यग्मनुष्यायुर्बंधसद्भावात् शेषसुरनारकायुषी वैक्रियिकषट्कमपि बंधो नास्तीति तदष्टके तिर्यग्गतिबंधेऽपनीते शेषं नवोत्तरशतमेव बंधयोग्यं भवति ॥ १०९ ॥ अथ मनुष्यगतौ बंधव्युच्छित्तिबंधाबंधप्रकृतीर्गुणस्थानेषु प्ररूपयति—

स चं०—सर्वभेदका समुदाय रूप सामान्य तिर्यंच पंचेंद्री तिर्यंच पर्याप्त तिर्यंच स्त्रीवेदरूप योनिमत् तिर्यंच इनि च्यारि प्रकार तिर्यंचनिविषैं ऐसैं ही है । बहुरि लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंचविषैं देवायु नरकायु अर देवगति देवगत्यानुपूर्वी नरगति नरकगत्यानुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग ए वैक्रियिकयकषट्क ऐसैं आठ प्रकृति बंध योग्य नाहीं । तहां सामान्यादिक च्यारिप्रकार तिर्यंचनिकी रचना—

मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त सोलह १६, बंध एकसौ सतरह ११७ अबंध नास्ति ० । सासादनविषैं गुणस्थानोक्त पचीस २५, अर असंयतविषैं व्युच्छित्ति कही थी वज्रवृषभ नाराच १ औदारिक २ औदारिक अंगोपांग ३ मनुष्यगति ४ मनुष्य गत्यानुपूर्वी ५ मनुष्यआयु ६ इन छहोंकी इहांही व्युच्छित्ति भई तातैं व्युच्छित्ति इकतीस ३१, बंध एकसौ एक १०१, अबंध सोलह १६, मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ०, बंध पूर्वोक्त देवायु विना गुणहत्तरि ६९, अबंध अठतालीस ४८ । असंयैतविषैं व्युच्छित्ति अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ बंध देवायु-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिलैं सत्तरि ७० अबंध सैतालीस ४७। देशसंयतविषैं व्युच्छिति प्रत्याख्यान च्यारि ४, बंध छासठि ६६, अबंध इक्यावन ५१। बहुरि सामान्यादिक च्यारि प्रकार निर्वृति अपर्याप्त तिर्यंच तिनकी रचना–

तहां बंध योग्य प्रकृति एकसौ ग्यारह १११ मिश्रकाय योगी है, तातै इहां च्यारि आयु अर नरक द्विकका बंध नाही गुणस्थान तीन तहां मिथ्यादृष्टि विषैं सोलहमैंस्यौ नरक आयु नरक द्विक बिना व्युच्छित्ति तेरह १३, बंध एकसौ सात १०७ जातैं मिथ्यादृष्टि सासादन अपर्याप्त विषैं देवगति देवगत्यानुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग इस सुरचतुष्कका बंध नाहीं अर अबंध एई प्रकृति च्यारि ४ सासादनविषैं पूर्वोक्त इकतीस मैस्यों तिर्यंचायु म ष्यायुबिना व्युच्छित्ति गुणतीस २९ बंध मिथ्यादृष्टिकी व्युच्छित्तिकौं घटाएं चौराणवै ९४ अबंध सतरह १७। असयंत विषैं व्युच्छित्ति अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ बंध पूर्वोक्त व्युच्छिति घटाएं अर सुरचतुष्क मिलाएं गुणहत्तरि ६९ अबंध वियालीस ४२ बहुरि लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंचविषैं गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि तहां तिर्यंचायु मनुष्यायुका बंध हो है तातैं तिर्यंच गति संबंधी बंधयोग्य एकसौ सतरहमें देवायु अर नरकायु अर वैक्रियिक षट्क इनि आठ प्रकृतनिका बंध नाहीं तातैं बंधयोग्य एकसौ नव १०९ प्रकृति जाननी ॥ १०९ ॥

आगैं मनुष्यगति विषैं कहै हैं–

तिरयेव णरे णवरि हु तित्थाहारं च अत्थि एमेव।
सामण्णपुण्णमणुसिणिणरे अपुण्णे अपुण्णेव ॥ ११० ॥

तिर्यगिव नरे नवरि हि तीर्थाहारं चास्ति एवमेव।
सामान्यपूर्णमनुष्यणीनरे अपूर्णे अपूर्ण एव ॥ ११० ॥

तिर्यग्गतिवन्मनुष्यगतौ भवति। अविरते व्युच्छित्तिश्चत्वारः। तदुपरितनानां षण्णां व्युच्छित्तिः सासादनसम्यग्दृष्टावेव इति विशेषश्च उभयत्र समानत्वात्। पुनः नवीनमस्ति। तत् किं। तीर्थकरत्वमाहारकद्वयं च बंधोऽस्ति खलु–स्फुटं। सामान्यमनुष्यपर्याप्तमनुष्यमानुषीमनुष्येषु त्रिविधेष्वपि ९५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवमेव तेन बंधयोग्यं विंशत्युत्तरशतं । सासादनव्युच्छित्तिरेकत्रिंशत् । असंयतव्युच्छित्तिश्चत्वारश्चेति ज्ञातव्यं । गुणस्थानानानि चतुर्दश तेष्वधस्तन-व्युच्छित्तौ बंधादपनीतायां विशेषकथनपूर्वकमबंधे च युतायामुपरितनबंधाबंधौ स्यातां । तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः १६ । बंधः ११७ । अबंधः तीर्थमाहारकद्वयं चेति त्रयं । सासादने बंधव्युच्छित्तिः ३१ । तिरिएव णरे इत्यसंयतस्योक्तबंधव्युच्छित्तौ उपरितनषण्णामत्रैव छेदात् बंधः १०१ । अबंधः १९ । मिश्रे बंधव्युच्छित्तिः शून्यं । बंधः ६९ । देवायुष्यमपनीय अबंधप्रकृतिषु क्षेपात् । बंधः १०१ । अबंधः ५१ । असंयते बंधव्यु-च्छित्तिः ४ । वज्रवृषभनाराचादिषट्प्रकृतीनां सासादने व्युच्छि न्नत्वात् । बंधः ७१ । देवायुस्तीर्थंकरयोरत्र बंधे मिलितत्वात् । अबंधः ४९ । तत्प्र-त्तिप्रकृतिद्वयस्यापनयनात् । देशव्रते बंधव्युच्छित्तिः स्वस्य प्रत्याख्यानकषायचतुष्कमेव ४ । बंधः ६७ । अबंधः ५३ । प्रमत्तसंयते बंधव्युच्छित्तिः अस्थिरादयः ६ । बंधः ६३ अबंधः ५७ । अप्रमत्तगुणस्थाने देवायुर्व्युच्छित्तिः १ । बंध ५९ । आहारद्वयस्य प्रमादरहितेषु बंधप्रतिपादनात् । अबंधः ६१ । तद्द्वयस्यापनयनात् । उपर्यपूर्वकरणादिषु सर्वत्र गुणस्थानसामान्यवत् । व्युच्छित्तिबंधाबंधप्रकृतयोभवंतीति नेतव्यं । तत्त्रिविधमनुष्य-निर्वृत्त्यपर्याप्तकानां बंधाबंधयोग्यं द्वादशोत्तरशतमेव मिश्रकाययोगित्वादायुश्चतुष्कं नरकद्विकं आहारद्विकं चेत्यष्टानां बंधाभावात् । गुणस्थानानि मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतप्रमत्तसयोगाख्यानि पंच । तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः १३ । नरकायुर्नरकद्विकापनयनात् बंधः १०७ सुरचतुष्कतीर्थयो-रबंधात् । अबन्धः ५ । सासादने व्युच्छित्तिः २९ । नरतिर्यगायुषोरपनयनात् । बंधः ९४ । अबन्धः १८ । मिश्रगुणस्थानं न संभवति । असंयते व्युच्छित्तिः ८ अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानकषायाष्टकस्य अत्रैव छेदात् । बंधः ७० । सुरचतुष्कतीर्थयोरस्य बंधात् । अबंधः ४२ । प्रमत्तसंयते व्यु-च्छित्तिः ६१ । कुतः स्वस्य षट्कं अप्रमत्तस्य देवायुराशात्वपनीतमिति तत्त्यक्त्वा अपूर्वकरणस्य आहारद्वयं बिना चतुस्त्रिंशत्, अनिवृत्तेः पंच, सूक्ष्म-सांपरायस्य षोडश चेत्येषां मिलितत्वात् बंधः ६२ । अबंधः ५० । सयोगे व्युच्छित्तिः सातवेदनीयं । बंधोऽपि तदेव । अबंधः १११ । 'णरे अपुण्णे अपुण्णेव' मनुष्यलब्ध्यपर्याप्तकमिथ्यादृष्टौ तिर्यग्गतिलब्ध्यपर्याप्तकवत् तीर्थमाहारद्वयं देव नरकायुषी वैक्रियिकषट्कं चेत्येकादशानामबन्धात् । बन्धयोग्यं नवोत्तरशतमिति १०९ ॥ ११० ॥ देवगतौ बन्धयोग्यप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह ॥ १११ ॥

स० चं०—तिर्यंचगतिवत् मनुष्यगतिविषैं रचना है जातैं इहां भी अविरतिविषैं व्युच्छित्ति च्यारि है ऊपरिके वज्रवृषभनाराचादिक छह तिनकी व्युच्छित्ति सासादनविषैं ही भई यहु विशेष समान है बहुरि इतना नवीन विशेष है तीर्थंकर अर आहारक द्विकका बंध इहां पाइए है सो सर्वभेदका समुदायरूप सामान्य मनुष्य अपर्याप्त मनुष्य अर स्त्रीवेदरूप मनुष्यणी मनुष्य इन तीनोंकी रचना तौ ऐसैं ही जाननी । तहां बंधयोग्य प्रकृति एकसौ वीस १२० गुणस्थान चौदह तिनिविषैं नीचली व्युच्छित्ति बंधविषैं घंटाएं विशेष कथन पूर्वक अबंध हो है सो जोडें ऊपरिके गुणस्थाननि विषैं बंध अबंध हो है सो मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति सोलह १६, बंध तीर्थंकर आहारक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्विक विना एकसौ सतरह ११७, अबंध तीन ३, सासादन विषैं तिर्यंचवत् व्युच्छित्ति इकतीस ३१, बंध एकसौ एक अबंध उगणीस १९, मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ०, बंध देवायु विना गुणहत्तरि ६९, अबंध इक्यावन ५१, असंयतविषैं अप्रत्याख्यान च्यारि व्युच्छित्ति ४, बंध देवायु अर तीर्थंकरके मिलनतैं इकहत्तर ७१, अबंध उनचास ४९, देशव्रतविषैं व्युच्छित्ति प्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४, बंध सतसठि ६७, अबंध तरेपन ५३। आगे प्रमत्तादिकविषैं व्युच्छित्ति बंध अबंध मूल गुणस्थान रचनावत् जानने, विशेष किछू नाहीं, बहुरि सामान्य मनुष्य पर्याप्त मनुष्य मनुष्यणी मनुष्य इनि तीनों निर्वृत्ति अपर्याप्तकनिकैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ बारह ११२ जातैं मिश्रकाययोगी हैं तातैं इहां च्यारि आयु नरकद्विक २ इनि आठनिका बंध नाहीं। गुणस्थान मिथ्यादृष्टि सासादन अविरत प्रमत्त सयोगी ए पांच ५ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं सोलहमेंस्यों नरकद्विक नरकायुविना व्युच्छित्ति तेरह १३। बंध देवगति देवगत्यानुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग तीर्थंकर इन पंच विना एकसौं सात १०७। अबंध पांच ५। सासादनविषैं इकतीसमैंस्यों मनुष्य आयु तिर्यंच आयु विना व्युच्छित्ति गुणतीस २९, बंध चौराणवै ९४, अबंध अठारह १८, असंयतविषैं अप्रत्याख्यान, प्रत्याख्यान कषाय आठ व्युच्छित्ति ८, बंध सुरचतुष्क अर तीर्थंकरके मिलनेतें सत्तरि ७०, अबंध वियालीस ४२, प्रमत्तसंयतविषैं प्रमत्तकी छह अप्रमत्तकी देवायु थी सो बंधहीमें नाहीं तातैं न गिनी। अपूर्व करणकी आहारक द्विक विना चौतीस ३४ अनिवृत्ति करणकी पांच ५, सूक्ष्म सांपरायकी सोलह १६, सब मिलाएं व्युच्छित्ति प्रकृति इकसठि ६१ बंध वासठि ६२ अबंध पचास ५० संयोगीविषैं व्युच्छित्ति एक साता वेदनीय १ बंध एक सातावेदनीय १ अबंध एकसौ ग्यारह ११। बहुरि लब्धि अपर्याप्तक मनुष्यकी रचना लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंचवत् जाननी देवायु नरकायु वैक्रियिक षट्क तीर्थंकर आहारकद्विक इन ग्यारह विना बंधयोग्य प्रकृति एकसो नव १०९। गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि जानना ॥ ११० ॥ आगैं देवगतिविषैं कहैं हैं—

णिरयेव होदि देवे आईसाणोत्ति सत्त वाम छिदी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोलस चेव अबंधा भवणतिए णत्थि तित्थयरं ॥ १११ ॥

निरय इव भवति देवे आ ईशान इति सप्त वामे छित्तिः ।
षोडश चैव अबंधा भवनत्रये नास्ति तीर्थकरं ॥ १११ ॥

जी० प्र०—नरकगतिवत् देवगतौ स्यात्। किंतु आ ईशानपर्यंतं सप्तप्रकृतयः मिथ्यात्वहुंडसंस्थानादयः मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिर्भवंति। तदुपरितनसूक्ष्म-त्रयादयो नव सुरचतुष्कं सुरायुष्यं आहारकद्वयं चेति षोडश प्रकृतयो देवगतौ अबंधः-बंधयोग्या न भवंति तेन चतुरुत्तरशतमेव बंधयोग्याः। तत्रापि भवनत्रये कल्पस्त्रीषु च तीर्थबंधाभावात् बंधयोग्यास्त्र्युत्तरशतमेव। तत्र भवनत्रयकल्पस्त्रीमिथ्यादृष्टेर्बंधः त्र्युत्तरशतं। व्युच्छित्तिः मिथ्यात्वाद्यसप्तकं। अबंधः शून्यं। तत्सासादनस्य बंधः षण्णवतिः तत्सप्तकस्य मिथ्यादृष्टेरेव बंधात्। व्युच्छित्तिः सैव पंचविंशतिः। अबंधः तदेव सप्तक। मिश्रगुणस्थानस्य बंधः सप्ततिः, मनुष्यायुरबंधात्। अबंधः त्रायस्त्रिंशत्, सासादनव्युच्छित्त्यबंधयोर्मनुष्यायुर्मेलनात्। असंयतस्य बंधः एकसप्ततिः, मनुष्यायुषोऽत्र बंधात्। अबंधः द्वात्रिं-शत्। व्युच्छित्तिः स्वस्य दश। सौधर्मेशानद्वये बंधयोग्याश्चतुरुत्तरशतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ अबंधः तीर्थकरत्वं। बंधः त्र्युत्तरशतं। व्युच्छित्तिः ते एव सप्त। सासादने अबंधः ८। बंधः ९६। व्युच्छित्तिः २५। मिश्रेऽबंधः ३४ मनुष्यायुःक्षेपात्। बंधः ७०। व्युच्छित्तिः शून्यं ०। असंयते अबंधः ३२ तीर्थकरत्वमनुष्यायुषोर्बंधात्। बंधः ७२। व्युच्छित्तिः १०॥ १११ ॥

स चं०—देवगतिविषैं रचना नरकगतिवत् जाननी इतना विशेष जो मिथ्यादृष्टि गुणस्थान संबंधी व्युच्छित्ति रूप सोलह प्रकृतिनिविषैं ईशान स्वर्ग पर्यंत मिथ्यात्व अर हुंड संस्थानादिक छह इनि सात प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं है बहुरि अवशेष नव प्रकृति इहां बंधयोग्य नाहीं सो सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण ए तीन बेंद्री तेंद्री चौंद्री ए तीन नरकद्विक नरकायु ए नव ९ अर देवगति देवगत्यानुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग ए सुरचतुष्क अर देवायु अर आहारद्विक ए सोलह प्रकृति देवगतिविषै बंध योग्य नाहीं तातैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ च्यारि १०४ हैं। बहुरि भवनवासी व्यंतर ज्योतिषी ए भवनत्रिक अर कल्पवासिनी देवांगना इनकै तीर्थंकर प्रकृतिका भी बंध नाहीं तातैं इनकैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ तीन १०३ है। तहां भवनत्रिक कल्पवासीनिकी रचना—

बंध योग्य प्रकृति एकसौं तीन १०३ गुणस्थान च्यारि ४ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व १ हुंडसंस्थान २ नपुंसक वेद ३ सृपाटिका संहनन ४ एकेंद्री ५ स्थावर ६ आतप ७ ए सात प्रकृति व्युच्छित्ति है। बंध एकसौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीन १०३ अबंध शून्य ० सासादनविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त पचीस २५ बंध छिनवैं ९६ अबंध सात ७ मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ० बंध मनुष्यायु विना सत्तरि ७०, अबंध तेतीस ३३, असंयतविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश १०, बंध मनुष्यायुके मिलनेतैं इकहत्तरि ७१, अबंध वत्तीस ३२, बहुरि सौधर्म ईशानकी रचना—

बंधयोग्य प्रकृति एकसौ च्यारि १०४ गुणस्थान च्यारि ४ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्वादिक पूर्वोक्त सात ७। बंध तीर्थंकर विना एकसौ तीन १०३। अबंध एक १। सासादनविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त पचीस २५। बंध छिनवै ९६। अबंध आठ ८। मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ० बंध मनुष्यायु विना सत्तरि ७० अबंध चौतीस ३४ असंयतविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश १० बंध मनुष्यायु तीर्थंकरके मिलनेतैं बहत्तरि ७२। अबंध वत्तीस ३२ ॥ १११ ॥

कप्पित्थीसु ण तित्थं सदरसहस्सारगोत्ति तिरियदुगं।
तिरियाऊ उज्जोवो अत्थि तदो णत्थि सदरचऊ ॥ ११२ ॥

कल्पस्त्रीषु न तीर्थं शतारसहस्रारक इति तिर्यग्द्विकं।
तिर्यगायुरुद्योतः अस्ति ततोनास्ति शतारचतुष्कं ॥ ११२ ॥

जी० प्र०—कल्पस्त्रीषु तीर्थकरत्वं न बध्नातीति ततः कारणात् तद्रचना भवनत्रयरचनायामेवोक्ता उभयत्र गुणस्थानेषु बंधाबंधव्युच्छित्तिनिर्विशेषाभावात्। सानत्कुमारादिदशकल्पेषु नरकगतिवदिति बंधयोग्यमेकोत्तरशतं। मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिश्चत्वारि सप्तानां तु ईशानपर्यंतमेवोक्तत्वात्। बंधः १००। अबंधः तीर्थकरत्वं। सासादने व्युच्छित्तिः २५। बंधः ९६। अबंधः ५। मिश्रे व्युच्छित्तिः शून्यं। बंधः ७०। मनुष्यायुषोऽप्यपनीतत्वात्। अबंधः ३१। असंयते व्युच्छित्तिः १०। बंधः ७२ तीर्थमनुष्यायुषोर्बंधात्। अबंधः २९ शतारसहस्रारपर्यंतमेव तिर्यग्द्विकं तिर्यगायुरुद्योतश्चेति सदरचउक्कं बंधयोग्यमस्ति तत उपरि नास्तीति नियमादानतादिषु कल्पेषु नवग्रैवेयकेषु च बंधयोग्याः ९७। तत्र मिथ्यादृष्टौ बंधः ९६ तीर्थकरत्वस्याबंधात्। व्युच्छित्तिः ४। सासादने व्युच्छित्तिः २१ सदरचउकस्य राश्यभावात्। बंधः ९२। अबंधः ५। मिश्रे व्युच्छित्तिः शून्यं। बंधः ७० मनुष्यायुर्बंधात्। अबंधः २२। असंयते व्युच्छित्तिः दश। बंधः ७२। अबन्धः २५। अनुदिशानुत्तराः असंयतसम्यग्दृष्टय एव तेषां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वंधयोग्यप्रकृतयः ७२। निर्वृत्त्यपर्याप्तानां तु भवनत्रयकल्पस्त्रीषु बंधयोग्यं मिश्रयोगिस्त्यात्तिर्यग्मनुष्यायुषी न इत्येकोत्तरशतं। १०१। गुणस्थाने द्वे एव असंयतानां तत्रोत्पत्त्यभावात्। तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्त्यादित्रयं ७। १०१। ०। सासादने २४। ९४। ७। सौधर्मैशानयोर्बंधयोग्यं तीर्थं कृता सह द्व्युत्तरशतं १०२। तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्त्यादित्रयं ७। १०१। १। सासादने २४। ९४। ८। असंयते ९। ७१। ३१। सानत्कुमारादिदशकल्पेषु बंधयोग्या नवनवतिः ९९। व्युच्छित्त्यादित्रयं मिथ्यादृष्टौ ४। ९८। १। सासादने २४। ९४। ५। असंयते ९। ७१। २८। आनतादिचतुःकल्पनवग्रैवेयकेषु बंधयोग्याः षण्णवतिः ९६। तत्र व्युच्छित्त्यादित्रयं मिथ्यादृष्टौ ४। ९५। १। सासादने २१। ९१। ५। असंयते ९। ७१। २५। अनुदिशानुत्तराणामसंयतसम्यग्दृष्टित्वात् तेषां बंध एव ७१॥ ११२॥

स चं०—कल्पवासिनी स्त्रीनिविषैं तीर्थंकर प्रकृति बंधै नाहीं तातैं कल्पवासिनीनिकी रचना भवनत्रिककी रचना विषैं ही कही जातै दोऊ जायगा गुणस्थान व्युच्छित्ति बंध अबंधविषैं किछू विशेष नाहीं है। बहुरि सनत्कुमारादि दश स्वर्गनिविषैं नरकवत् रचना है ही तातैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ एक गुणस्थान च्यारि ४ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व १ हुंड संस्थान २ नपुंसके वेद ३ सृपाटिका संहनन ४ ए च्यारि जातैं सात प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति ईशान पर्यंत ही कही तातैं इहां नरकवत् च्यारि प्रकृति हीकी व्युच्छित्ति जाननी बंध तीर्थंकर विना सौ १०० अबंध एक १। सासादनविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त पचीस २५। बंध छिनवै ९६। अबंध पांच ५। मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ०। बंध मनुष्यायु विना सत्तरि ७०। अबंध इकतीस ३१। असंयतविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश १०। बंध मनुष्यायु तीर्थंकरके मिलनेतैं वहत्तारि ७२। अबंध गुणतीस २९। बहुरि तिर्यंचगति तिर्यंच गत्यानुपूर्वी ए तिर्यंच द्विक अर तिर्यंच आयु अर उद्योत इन च्यारि प्रकृतिनिकौं सदरचउक कहिए। सो इस सदरचउकका बंध शतार सहस्रार पर्यंत ही है ऊपरि नाहीं तातैं आनतादिक च्यारि स्वर्ग अर नव ग्रैवेयक इनिविषैं बंध योग्य प्रकृति सत्याणवै ९७ हैं। गुणस्थान च्यारि ४ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति च्यारि मिथ्यात्वादिक ४। बंध तीर्थंकर विना छिनवै ९६। अबंध एक १। सासादनविषै सदरचउक विना व्युच्छित्ति इकईस २१। बंध वाणवै ९२। अबंध पांच ५। मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ०। बंध मनुष्यायु विना सत्तरि ७०। अबंध सत्ताईस २७। असंयतविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानोक्त दश १०। बंध तीर्थंकर मनुष्यायुके मिलनेतैं बहत्तरि ७२। अबंध पचीस २५। बहुरि अनुदिश

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुत्तर विमानवासी अहमिंद्र ते सर्व सम्यग्दृष्टी ही है तिनकैं बंध योग्य पूर्वे असंयतोक्त बहत्तरि ७२। गुणस्थान एक १ असंयत जानना। बहुरि निर्वृत्ति अपर्याप्तक रचना—

तहां भवनत्रिक अर कल्पबासिनी इनिकै बंधयोग्य प्रकृति एकसौ एक १०१ जातैं मिश्रकषाय योगीपनैं तैं तिर्यंचायु मनुष्यायुका बंध नाहीं। गुणस्थान दोय जातैं असंयत मरिकरि इनिविषैं उपजैं नाहीं। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त सात ७। बंध एकसौ एक १०१। अबंध शून्य ०। सासादनविषैं व्युच्छित्ति तिर्यंचायु विना चौइस २४। बंध चौराणवै ९४। अबंध सात। बहुरि सौधर्म ईशानविषैं तीर्थंकर मिलनेतैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ दोय १०२। गुणस्थान तीन ३। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त सात ७। बंध तीर्थंकर विना एकसौ एक १०१। अबंध एक १। सासादन विषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त चौईस २४। बंध चौराणवे ९४। अबंध ८। असयंत विषैं व्युच्छित्ति मनुष्यायुविना नव ९। बंध तीर्थंकर मिलै इकहत्तरि ७१। अबंध इकतीस ३१। बहुरि सनत्कुमारादि दश स्वर्गनिविषैं पर्याप्त संबंधी एकसौ एकमेस्यों तिर्यंचायु मनुष्यायु घटाए बंध योग्य प्रकृति निन्याणवे ३९। गुणस्थान तीन ३। तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्वादिक च्यारि ४। बंध तीर्थंकर विना अठ्याणवे ९८। अबंध एक १। सासादन विषैं व्युच्छित्ति चौईस २४। बंध चौराणवे ९४। अबंध ५। असंयतविषैं व्युच्छित्ति नव ९। बंध तीर्थंकर मिलैं इकहत्तर ७१। अबंध अठाईस २८। बहुरि आनतादिक च्यारि स्वर्ग अर नवग्रैवेयकनिविषैं तिर्यंच द्विक अर उद्योत विना बंध योग्य प्रकृति छिनवे ९६। गुणस्थान तीन ३। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति च्यारि ४। बंध पिच्याणवे ९५। अबंध एक १। सासादनविषैं व्युच्छित्ति सदरचउक्कविना इकईस २१। बंध इक्याणवे ९१। अबंध पांच ५। असंयतविषै व्युच्छित्ति नव ९। बंध इकहत्तरि ७१। अबंध पचीस २५। बहुरि अनुदिश अनुत्तरवासी देव सर्व असंयत हो हैं। तहां बंध इकहत्तरि प्रकृतिनिका जानना॥ ११२॥

पुण्णिदरं विगिविगले तत्थुप्पण्णो हु सासणो देहे।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पज्जत्तिं णवि पावदि इदि णरतिरियाउगं णत्थि ॥ ११३ ॥

पूर्णेतरमिवैकविकले तत्रोत्पन्नो हि सासादनो देहे।
पर्याप्तिं नापि प्राप्नोति इति नरतिर्यगायुष्कं नास्ति ॥ ११३ ॥

जी० प्र०—इंद्रियमार्गणायां एकमेव विकलेंद्रियेषु लब्ध्यपर्याप्तकवत्तीर्थंकरत्वाहारकद्वयसुरनारकायुर्वैक्रियिकषट्कत्रयाभावात् बंधयोग्यं नवोत्तरशतं। गुणस्थाने द्वे। तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः पंचदश। १५। तत्षोडशके नरकद्विकनरकायुषोरभावे नरतिर्यगायुषोः क्षेपात् तन्क्षेपोऽत्र कृतः। तत्र तेषु एकविकलेंद्रियेषु उत्पन्नः खलु सासादनः स्वकीयकालस्य निर्वृत्त्यपर्याप्तकालात् स्तोकत्वात् सासादनत्वे शरीरपर्याप्तिं न प्राप्नोतीति रणात् बंधः १०९। अबंधः शून्यं ०। सासादने व्युच्छितिरेकान्नत्रिंशत् २९। बंधः चतुर्नवतिः ९४। अबंधः पंचदश १५ ॥ ११३ ॥ अथ पंचेंद्रिये पृथ्व्यादिपंचकायेषु चाह—

स० चं–इंद्रिय मार्गणाविषै एकेंद्री बेंद्री तेंद्री चौंद्री इनविषैं लब्धि अपर्याप्तवत् बंध योग्य प्रकृति एकसौ नव १०९। जातैं तीर्थंकर आहारद्विक देवायु नरकायु वैक्रियिक षट्क इनिका बंध नाही है। गुण स्थान दोय २ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छत्ति पंद्रह १५ गुणस्थान रचनाविषैं सोलह कही थी तिनविषैं नरकद्विक अर नरकायु ए तीन घटाइए अर मनुष्यायु अर तिर्यंच आयु मिलाइए तब पंद्रह होइ। मनुष्यायु तिर्यंचायुकी व्युच्छित्ति इहां ही कही ताका हेतु यह है जो सासादनका तहां काल थोरा अर निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्थाका काल बहुत तातैं सासादनविषैं शरीर पर्याप्ति पूर्ण न करै तातैं इहां सासादनविषैं मनुष्यायु तिर्यंचायुका बंध नाही इहां ही व्युच्छित्ति कही। बंध एकसौं नव १०९। अबंध शून्य। सासादनविषैं व्युच्छित्ति पूर्वै कही थी तेई गुणतीस २९। बंध चौराणवैं ९४। अबंध पंद्रह ॥ १५ ॥ ११३ ॥

पंचेंदियसु ओघं एयक्खे वा वणप्फदीयंते।
मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं ण हि तेउवाउम्हि ॥ ११४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचेंद्रियेषु ओघः एकाक्ष इववनस्पत्यंते ।
मनुष्यद्वयं मनुष्यायुरुच्चं नहि तेजोवायौ ॥ ११४ ॥

जी० प्र०—पंचेंद्रियेषु ओघः चतुर्दशगुणस्थानवद् भवति विशेषाभावात् । बंधयोग्याः १२० । व्युच्छित्तयः—मि १६ । सा २५ । मि ० । अ १० । दे ४ । प्र ६ । अ १ । अ ३६ । अ ५ । सू १६ । उ ० । क्षी ० । स १ । अ ० । बंधः—मि ११७ । सा १०१ । मि ७४ । अ ७७ । दे ६७ । प्र ६३ । अ ५९ । अ ५८ । अ २२ । सू १७ । उ १ । क्षी १ । स १ । अ ० । अबंधाः—मि ३ । सा १९ । मि ४६ । अ ४३ । दे ५३ । प्र ५७ । अ ६१ । अ ६२ । अ ९८ । सू १०३ । उ ११९ । क्षी ११९ । स ११९ । अ १२० । तन्निर्वृत्त्यपर्याप्तके तु बंधयोग्यं ११२ । गुणस्थानानि । ५ । चतुर्गतिसाधारणत्वात् । अपनीतप्रकृतयः आहारकद्वयं नरकद्विकमायुष्यचतुष्कं चेति रचनेयं सुगमा—

पंचेद्रियनिर्वृत्त्यपर्याप्त रचना ।

स	१	१	१११
प	६१	६२	५०
अ	१३	७५	३७
सा	२४	६४	१८
मि	१३	१०७	५

असंयते तीर्थसुरचतुष्कबंधः । इत्येतावतएव विशेषाभावात् । तल्लब्ध्यपर्याप्तके बंधयोग्यप्रकृतयः १०९ । मिथ्यादृष्टि–गुणस्थानं । अपनीतप्रकृतयः १०९ । तीर्थमाहारद्वयं सुरनारकायुषी वैक्रियिकषट्कं चेति ११ ।

कायमार्गणायां वनस्पत्यंतपंचानां एकेंद्रियवत् तीर्थमाहारद्वयं सुरनारकायुषी वैक्रियिकषट्कं च न इति बंधयोग्यं नवोत्तरशतं । १०९ । तत्र पृथ्व्यव्वनस्पतिकायेषु उत्पन्नस्य सासादनत्वे शरीरपर्याप्त्यसंभवात् । तिर्यग्मनुष्यायुर्बंधो मिथ्यादृष्टावेवेति तत्र व्युच्छित्तिः १५ । बंधः १०९ । अबंधः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शून्यं । सासादने व्युच्छितिः २९ । बंधः ९४ । अबंधः १५ । तेजोवातकायिकयोः पुनः मनुष्यद्वयं मनुष्यायुः उच्चैर्गोत्रमपि न बध्नाति बंधयं... पंचोत्तरशतमेव । ११५ । तौ तु मिथ्यादृष्टी एव न सासादनौ ॥ ११४ ॥ कुतः ?—

स० चं०—पंचेंद्रियविषैं ओघः कहिए गुणस्थान रचनावत् रचना जानना । किछू विशेष नाहीं बंध योग्य प्रकृति एकसौ वीस १२० । गुणस्थान चौदह १४ । सोलह पचीसनै आदि देकरि । व्युच्छित्ति एकसौ सतरह एकसौ एकने आदि देकरि । बंध तीन उगणीसने आदि देकरि । अबंध गुण स्थानवत् सर्व जाननां । बहुरि निवृत्ति अपर्याप्तक पंचेंद्रीविषैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ वारह गुणस्थान पांच । तिनकी रचना सुगम है । जातैं तीर्थंकर सुर चतुष्कका बंध एक असंयत गुणस्थानविषैं ही है तातैं निवृत्ति अपर्याप्त मनुष्यरचनावत् जानना । विशेष इतना जो औदारिकद्विक मनुष्यद्विक वज्रवृषभ नाराच इन पंच प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति तहां दूसरे गुणस्थानविषैं कही थी इहां चौथे गुणस्थान तिनकी व्युच्छित्ति जानना । और किछू विशेष नाहीं । तहां मिथ्यादृष्टिविषै व्युच्छित्ति तेरह १३ । बंध एकसौ सात १०७ । अबंध पांच ५ सासादनविषैं व्युच्छित्ति चौईस २४ । बंध चौराणवै ९४ । अबंध अठारह १८ । अविरतविषैं व्युच्छित्ति तेरह १३ बंध पिचहत्तरि ७५ । अबंध सैतीस ३७ । प्रमत्तविषैं व्युच्छित्ति इकसाठि ६१ । बंध वासठि ६२ । अबंध पचास ५० । सयोगीविषैं व्युच्छित्ति एक १ । बंध एक १ । अबंध एकसौ ग्यारह १११ इहां च्यार्यो गतिसंबंधी निवृत्ति अपर्याप्तनिकी अपेक्षा कथन जानना । वहुरि पंचेंद्रिय लब्धि अपर्याप्तकविषैं बंध योग्य प्रकृति एक सौ नव १०९, तीर्थंकर आहारद्विक देवायु नरकायु वैक्रियिकषट्क इनि ग्यारह प्रकृतिनिका बंध नाहीं गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है । बहुरि कायमार्गणाविषैं पृथ्विकायादिक वनस्पती पर्यंत पंच स्थावर तिनकी रचना एकेंद्रिय रचनावत् जाननी । तहां तीर्थंकर आहार द्विक देवायु नरकायु वैक्रियिकषट्क इन ग्यारह विना बंध योग्य

१

पृथ्वादि त्रिकायिक रचना ।

सा	२९	९४	१५
मि	१५	१०९	०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृति एकसौ नव १०९। तहां पृथ्वीकाय अपकाय वनस्पती कायनिविषैं उत्पन्न भया जीवकैं सासादनकौं होतसंतै शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ तातैं तिर्यंचायु मनुष्यायुका बंध मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं ही है। तातैं मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति पंद्रह १५। बंध एकसौ नव १०९। अबंध शून्य ०। सासादनविषैं व्युच्छित्ति गुणतीस २९। बंध चौराणवै ९४। अबंध पंद्रह १५। बहुरि तेजस्कायिक वातकायिकविषैं मनुष्यद्विक मनुष्यायु उच्चगोत्र इन च्यारि प्रकृतीनिका भी वंध नाहीं तातैं बंध योग्य प्रकृति १०५ गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टिही है सासादन नाहीं॥ ११४ काहेतैं? सो कहे हैं—

ण हि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे।
ओघं तस मणवयणे ओराले मणुवगइभंगो॥ ११५॥

नहि सासादनोऽपूर्णे साधारणसूक्ष्मके च तेजोद्वये।
ओघः त्रसे मनोवचने औराले मनुष्यगतिभंगः॥ ११५॥

जी० प्र०—हि यस्मात्सर्वलब्ध्यपर्याप्तेषु साधारणशरीरेषु सर्वसूक्ष्मेषु तेजोवायुकायिकेषु च सासादनो न विद्यते। नरकगतौ च नोत्पद्यते। त्रसकायिकेषु योगमार्गणायां मनोवाग्योगिषु च ओघः सामान्यगुणस्थानवत् तेन तेषु वंधयोग्यं १२०। व्युच्छित्तयः—मि १६। सा २५। मि ०। अ १०। दे ४। प्र ६। अ १। अ ३६। अ ५। सू १६। उ ०। क्षी ०। स १। अ ०। वंधाः—मि ११७। सा १०१। मि ७४। अ ७७। दे ६७। प्र ६३। अ ५९। अ ५८। अ २२। सू १७। उ १। क्षी १। स १। अ ०। अवंधाः—मि ३। सा १९। मि ४६। अ ४३। दे ५३। प्र ५७। अ ६१। अ ६२। अ ९८। सू १०३। उ ११९। क्षी ११९। स ११९। अ १२०। त्रसनिर्वृत्त्यपर्याप्तके पंचेंद्रियनिर्वृत्त्यपर्याप्तकवत्। औदारिककाययोगिषु मानवगतिभंगः तेन वंधयोग्यं १२०। व्युच्छित्तयः—मि १६। सा ३१। मि ०। अ ४। दे ४। प्र ६। अ १। अ ३६। अ ५। सू १६। उ ०। क्षी ०। स १। अ ०। वंधाः—मि ११७। सा १०१। मि ६९। अ ७१। दे ६७। प्र ६३। अ ५९। अ ५८। अ २२। सू १७। उ १। क्षी १। स १। अ ०। अवंधाः—मि ३। सा १९। मि ५१। अ ४९। दे ५३। प्र ५७। अ ६१। अ ६२। अ ९८। सू १०३। उ ११९। क्षी ११९। स ११९। अ १२०॥ ११५॥ औदारिक मिश्रकाययोगिश्वाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स चं०—हि कहिए जातैं लब्धि अपर्याप्तकविषैं साधारण शरीरयुक्त जीवनिविषैं सर्व सूक्ष्म जीवनिविषैं तेजस्कायिक वातकायिक जीवनिविषैं सासादन गुणस्थान न पाइए है। नरकविषैं अपर्याप्त दशामैं सासादन न पाइए है तातैं तेजस्काय वातकायविषैं एक ही गुणस्थान कह्या। बहुरि त्रसकायविषैं रचना गुणस्थान रचनावत् जाननी विशेष किछू नाहीं। बंधयोग्य प्रकृति एकसौ वीस गुणस्थान चौदह सोलह पचीस इत्यादिक, व्युच्छित्ति एकसौ सतरह एकसौ एक इत्यादिक, बंध तीन उगणीस इत्यादिक, अबंध गुणस्थान रचनावत् सर्व जानना। बहुरि त्रस निर्वृत्ति अपर्याप्तक की रचना पंचेंद्रियनिर्वृत्ति अपर्याप्तककी रचनावत् जाननी। विशेष किछू नाहीं। बंधयोग्य प्रकृति एकसौ बारह ११२ गुणस्थान पांच ५। बहुरि योगमार्गणाविषैं मनोयोग वचनयोगकी रचना ओघः कहिए गुणस्थान रचनावत् जाननी। बंधयोग्य प्रकृति एकसौ वीस १२० गुणस्थान सत्य अनुभय मन वा वचनविषैं तो सयोगी पर्यंत तेरह अर असत्य उभय मन वा वचनविषैं क्षीणकषाय पर्यंत बारह सो इन विषैं गुणस्थानवत् व्युच्छित्ति बंध अबंध जानना। बहुरि औदारिक काययोगकी रचना मनुष्यगति रचनावत् जाननी। बंध योग्य प्रकृति एकसौ बीस १२०। गुणस्थान तेरह तहां सोलह इकतीसतैं आदि देकरि व्युच्छित्ति अर एकसौ सतरह एकसौ एकने आदि देकरि बंध अर तीन उगणीसने आदि देकरि अबंध क्रमतैं गुणस्थाननिविषैं जानना ॥ ११५॥

ओराले वा मिस्से ण हि सुरणिरयाउहारणिरयदुगं।
मिच्छदुगे देवचओ तित्थं ण हि अविरदे अत्थि ॥ ११६॥

ओराल इव मिश्रे नहि सुरनिरयायुराहारनिरयद्वयं।
मिथ्यात्वद्वये देवचतुष्कं तीर्थं नहि अविरतेऽस्ति ॥ ११६ ॥

जी० प्र०—औदारिकमिश्रकाययोगिषु औदारिककाययोगिवद्बंधप्रकृतयो व्युच्छित्त्यादयश्च ज्ञातव्याः। औदारिकमिश्रकाययोगिनो हि लब्ध्यपर्याप्ताः निर्वृत्त्यपर्याप्ताश्च तेन देवनारकायुषी आहारकद्वयं नरकद्वयं तत्र बंधयोग्यं नेति चतुर्दशोत्तरशतं। तत्रापि सुरचतुष्कं तीर्थं च मिथ्यादृष्टिसासादनयोर्न बध्नाति। अविरते च बध्नाति ॥ ११६ ॥ तस्य गुणस्थानेषु व्युच्छित्ति संख्याति—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—औदारिक मिश्रविषैं रचना औदारिक काययोगवत् जाननी विशेष कहै हैं—औदारिक मिश्रयोगी दोय प्रकार लब्धि अपर्याप्तक निर्वृत्ति अपर्याप्तक। तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तककों बंधयोग्य एकसौ बारह तिनविषैं मनुष्यायु तिर्यंचायु मिलाइए जातैं लब्धि अपर्याप्तककैं मनुष्य आयु तिर्यंच आयुका बंध हो है ऐसैं औदारिक मिश्र योगविषैं देवायु नरकायु आहारद्विक नरक बिना बंधयोग्य प्रकृति एकसौ चौदह ११४। तहां सुर चतुष्क अर तीर्थंकर ए पंच प्रकृति मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं बंधै नाहीं है। अविरत विषैं बंधै है॥ ११६॥

पण्णारसमुनतीसं मिच्छदुगे अविरदे छिदी चउरो।
उवरिमपणसट्ठीवि य एक्कं सादं सजोगिम्हि॥ ११७॥

पंचदशैकोनत्रिंशत् मिथ्यात्वद्विके अविरते छित्तयश्चतस्रः।
उपरिमपंचषष्टिरपि च एकं सातं सयोगिनि॥ ११७॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टिद्वये व्युच्छित्तिः क्रमेण मिथ्यादृष्टौ पंचदश १५। नरकायुर्नरकद्वयं चापनीय तिर्यग्मनुष्यायुःक्षेपात् पंचदश १५। सासादने एकान्नत्रिंशत्। २९। मिश्रकाययोगकाले लब्ध्यपर्याप्तकादन्यस्य आयुर्बंधासंभवात् नरतिर्यगायुषोरपनयात्। अविरते व्युच्छित्तिः वज्रर्षभनाराचादीनां षण्णां सासाने छेदात् अप्रत्याख्यानकषायचतुष्कं, देशसंयतचतुष्कं प्रमत्तषट्कं अप्रमत्तस्य देवायूराशौ न अपूर्वकरणस्य आहारकद्वयं

१ औ— मिश्र—

स	१	१	११३
अ	६६	७०	४४
सा	२८	६४	२०
मि	१५	१०६	५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विना शेषचतुस्त्रिंशत् ३४ अनिवृत्तिकरणपंचकं सूक्ष्मसांपरायषोडशकमित्येकान्नसप्ततिः ६९। सयोगे एकं सातं १। बंधाबंधौ च मिथ्यादृष्टौ १०९। ५। सासादने ९४। २०। असंयते ७०। ४४ तीर्थसुरचतुष्कयोर्बंधात्। सयोगे १। ११३॥ ११७॥ वैक्रियिकाहारकयोस्तन्मिश्रयोश्चाह—

स० चं०—औदारिक मिश्रविषैं गुणस्थान च्यारि, मिथ्यादृष्टि द्विकविषैं पंद्रह गुणतीस, अविरतविषैं च्यारि, ऊपरिकी पैसठि, ऐसै गुणहत्तरि। सयोगीविषैं एक साता व्युच्छित्ति प्रकृति है। मिथ्या दृष्टिविषैं सोलहमैं नरकायु नरक द्विक घटाइए तिर्यंचायु मनुष्यायु मिलाइए ऐसैं व्युच्छित्ति पंद्रह १५। बंध सुरचतुष्क अर तीर्थंकर विना एकसौ नव १०९। अबंध ५। सासादनविषैं मिश्र अवस्थामें लब्धि अपर्याप्तक विना औरकैं आयुका बंध नाही तातैं इकतीसमैंस्यों मनुष्यायु तिर्यंचायु घटाएं व्युच्छित्ति गुणतीस २९। बंध चौराणवै ९४। अबंध वीस। असयंतविषैं वज्र वृषभ नाराचादिक छह प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति सासादन ही मैं भई तातैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि अर देश संयत संबंधी प्रत्याख्यान कषाय च्यारि प्रमत्तसंबंधी छह अप्रमत्त सबंधी देवायु बंध योग्य ही नाहीं तातैं न गिनी। अपूर्व करणकी आहारद्विक विना चौतीस ३४ अनिवृत्ति करणकी पांच ५ सूक्ष्म सांपरायकी सोलह ए सव मिलाएं गुणहत्तरि प्रकृति व्युच्छित्ति है। बंध सुर चतुष्क अर तीर्थंकरके मिलनेतैं सत्तरि ७०। अबंध चवालीस ४४। बहुरि सयोगीविषैं व्युच्छित्ति एक साता १ बंध एक साता अबंध एकसौ तेरह ११३॥ ११७॥

देवे वा वेगुव्वे मिस्से णरतिरियआउगं णत्थि।
छट्ठगुणं वाहारे तम्मिस्से णत्थि देवाऊ॥ ११८॥

देव इव वैगूर्वे मिश्रे नरतिर्यगायुष्कं नास्ति।
षष्ठगुणमिवाहारे तन्मिश्रे नास्ति देवायुः॥ ११८॥ १०५

जी० प्र०—वैक्रियिककाययोगिनां बंधप्रकृतयः देवगतिवत्। १०४। सूक्ष्मत्रयविकलत्रयनरकद्विकनरकायुःसुरचतुष्कसुरायुराहारकद्वयानाम-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधात् । अत्र मिथ्यादृष्टौ सूक्ष्मत्रयादिनवानामभावाद्व्युच्छित्तिः ७ । बंधः १०३ । अबंधः तीर्थं । सासादने व्युच्छित्तिः २५ । बंधः ९६ । अबंधः ८ । मिश्रे व्युच्छित्तिः शून्यं । बंधः ७० मनुष्यायुरभावात् । अबंधः ३४ । असंयते व्युच्छित्तिः १० । बंधः तीर्थमनुष्यायुः सहिततया ७२ । अबंधः तद्विना ३२ ।

वैक्रियिकमिश्रकाययोगिनां बंधप्रकृतयः द्व्युत्तरशतमेव १०२ । कुतः ? तत्र नरतिर्यगायुषो बंधो नास्तीतितद्द्वयापनयनात् । अत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः ७ । बंधः १०१ । अबंधः तीर्थं । सासादने व्युच्छित्तिस्तिर्यगायुर्विना २४ । बंधः ९४ । अबंधः ८ । असंयते मनुष्यायुर्विना व्युच्छित्तिः ९ । बंधः तीर्थसहिततया ७१ । अबंधः तीर्थं विना ३१ । आहारककाययोगिनां प्रमत्तगुणस्थानवत् व्युच्छित्तिः ६ । बंधः ६३ । अबंधः ५७ । तन्मिश्रकाययोगिनां व्युच्छित्तिः ६ । बंधः ६२ 'तम्मिस्सेसाच्छिदेवाऊ' इति वचनात् । अबंधः ५८ ॥ ११८ ॥ कार्मणकाययोगिनामाह—

स चं०—वैक्रीयिक काययोगकी रचना सौधर्म ईशान संबंधी देवनिकी रचना समान जाननी । बंधयोग्य प्रकृति एकसौ च्यारि गुणस्थान च्यारि मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति सात बंध एकसौ तीन १०३ । अबंध एक १ । सासादनविषैं व्युच्छित्ति पचीस २५ । बंध छिनवै ९६ । अबंध आठ ८ । मिश्रविषैं व्युच्छित्ति शून्य ० । बंध सत्तरि ७०, अबंध चौतीस ३४ । असंयतविषैं व्युच्छित्ति दश १०, बंध वहत्तरि ७२, अबंध वत्तीस ३२ । बहुरि वैक्रियिक मिश्र काययोगिनिकी रचना सौधर्म ईशान संबंधी अपर्याप्त देवनिकी रचना समान जाननी तहां मनुष्यायु तिर्यंचायुका भी बंध नाहीं तातैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ दोय १०२ गुणस्थान तीन ३ मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति सात ७ । बंध एकसौ एक १०१ । अबंध एक १ । सासादनविषैं चौईस २४ । बंध चौराणवै ९४ । अबंध आठ ८ । असंयतविषैं व्युच्छित्ति नव ९ । बंध इकहत्तरि ७१ । अबंध इकतीस ३१ । बहुरि आहारक काययोगीकी रचना प्रमत्त

१ वैक्रियिक काययोगिनां—१०४ ।

अ	१०	७२	३२
मि	०	७०	३४
सा	२५	९६	८
मि	७	१०३	१

२ वै=मिश्रकाय १०२ ।

अ	९	७१	३१
सा	२४	९४	८
मि	७	१०१	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थान रचनावत् जाननी। व्युच्छित्ति छह ६। बंध तरेसठि ६३। अबंध सत्तावन ५७। बहुरि आहारक मिश्र काययोगीकी रचना देवायुका बंध तहां न होइ तातैं व्युच्छित्ति छह ६ बंध वासठि ६२ अबंध अठावन ५८ ।११८।

कम्मे उरालमिस्सं वा णाउदुगंपि णव छिदी अयदे।
वेदादाहारोत्ति य सगुणट्ठाणाणमोघं तु ॥ ११९ ॥

कर्मणि औरालिकमिश्रं वा नायुर्द्विकमपि नव छित्तिरयते।
वेदादाहार इति च स्वगुणस्थानानामोघस्तु ॥ ११९ ॥

जी० प्र०—कार्मणकाययोगिनां औदारिकमिश्रकाययोगिवद्भवति। तत्रापि विग्रहगतावायुर्बंधो नेति तिर्यग्मनुष्यायुषी विना बंधयोग्यं द्वादशोत्तरशतमेव। गुणस्थानचतुष्कं। तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः १३ नरकद्विकनरकायुरभावात्। बंधः १०७। मिच्छदुगेदेवचऊ तित्थं णहि अविरदे अत्थीति पंचानामबंधात्। सासादने व्युच्छित्तिः तिर्यगायुर्विना २४। बंधः ९४। अबंधः १८। असंयते व्युच्छित्तिः मनुष्यायुर्विना स्वस्य ९। देशसंयतस्य ४। प्रमत्तस्य ६। अप्रमत्तस्य देवायूराशौ न। अपूर्वकरणस्य आहारकद्वयं विना ३४। अनिवृत्तिकरणस्य ५। सूक्ष्मसांपरायस्य १६। एवं ७४। बंधः ७५ सुरचतुष्कतीर्थबंधात्। अबंधः ३७। सयोगे व्युच्छित्तिः १। बंधः १। अबंधः १११। तु पुनः अग्रे वेदाद्याहारपर्यंतदशमार्गणासु स्वस्वगुणस्थानोक्तसाधारणकथनमेव। तत्र स्त्रीवेदिनां बंधयोग्यं १२०। गुणस्थानानि ९। व्युच्छित्तयः—मि १६ सा २५। मि ०। अ १०। दे ४। प्र ६। अ १। अ ३६ क्षपकानिवृत्तिकरणप्रथमसवेदभागद्विचरमसमये पुंवेदः १। चरमसमये शून्यं ०। बंधाः—मि ११७। सा १०१। मि ७४। अ ७७। दे ६७। प्र ६३। अ ५९। अ ५८। तत्सवेदभागद्विचरमसमये २२। चरमसमये २१। अबंधाः—मि ३। सा १९। मि ४६। अ ४३। दे ५३। प्र ५७। अ ६१। अ ६२। सवेदभागद्विचरमसमये ९८। चरमसमये ९९। तन्निर्वृत्त्यपर्याप्तानां बंधयोग्यं १०७। कुतः ? आयुश्चतुष्कतीर्थाहारद्वयवैक्रियिकषट्कानामबंधात्। संदृष्टिः—

स्त्रीनिर्वृत्त्यपर्याप्त ११७

सा	२४	९४	१३
मि	१३	१०७	०

अत्रासंयते न संभवति।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

षंढवेदिनां बंधयोग्यं १२० । गुणस्थानानि गमनिका च स्त्रीवेदिवत् । तन्निर्वृत्त्यपर्याप्ते तु बंधयोग्यमष्टोत्तरशतं । १०८ । तल्लब्ध्यपर्याप्तकबंधाच्चि-र्यग्मनुष्यायुषी अपनीय नारकासंयतापेक्षया तीर्थबंधस्यात्र क्षेपात् गुणस्थानानि ३ । संदृष्टिः—

षंढनिर्वृत्त्यपर्याप्त० ।

अ	९	७१	३७
सा	२४	९४	१४
मि	१३	१०७	१तीर्थ

पुंवेदिनां बंधयोग्यं १२० । व्युच्छित्तयः—मि १६ । सा २५ । मि ० । अ १० । दे ४ । प्र ६ । अ १ । अ ३६ । क्षपकानिवृत्तिकरण-प्रथमभागचरमसमये पुंवेदः १ । बंधाः—मि ११७ । सा १०१ । मि ७४ । अ ७७ । दे ६७ । प्र ६३ । अ ५९ । अ ५८ । तत्प्रथमभागचरम-समयपर्यंतं २२ । अबंधाः—मि ३ । सा १९ । मि ४६ । अ ४३ । दे ५३ । प्र ५७ । अ ६१ । अ ६२ । तत्प्रथमभागचरमसमयपर्यंतं ९८ । त-न्निर्वृत्त्यपर्याप्तानां नारकं विना त्रिगतिजानायेव बंधयोग्यं ११२ । गुणस्थानत्रयं । संदृष्टिः—

पुंनिर्वृत्त्यपर्याप्त० ।

अ	९	७५	३७
सा	२४	९४	१८
मि	१३	१०७	५

अत्रासंयते तीर्थसुरचतुष्कयोर्बंधोऽस्तीति ज्ञातव्यं । स्त्रीषंढवेदयोरपि तीर्थाहारकबंधो न विरुध्यते उदयस्यैव पुंवेदिषु नियमात् ।

कषायमार्गणायां बंधयोग्यं १२० । गुणस्थानानि क्षपकानिवृत्तिकरणद्वितीयतृतीयचतुर्थपंचमभागपर्यंतानि क्रोधमानमायाबादरलोभानां गमनिका च सामान्यगुणस्थानोक्तैव । सूक्ष्मलोभस्य सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानमेव । ज्ञानमार्गणायां कुमतिकुश्रुतविभंगानां बंधयोग्यं ११७ । गुणस्थानद्वयं । सं—

कु–कु–विभंगाः ।

सा	२५	१०१	१६
मि	१६	११७	०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मतिश्रुतावधिज्ञानिनां बंधयोग्याः ७९ । मिथ्यादृष्टिसासादनव्युच्छित्ति ४१—प्रकृत्यभावात् । गुणस्थानानि संयतादीनि ९ तत्र व्युच्छित्तयः— अ १० । दे ४ । प्र ६ । अ १ । अ ३६ । अ ५ । सू १६ । उ ० । क्षी ० । बंधाबंधौ च—अ ७७ । २ । दे ६७ । १२ । प्र ६३ । १६ । अ ५९ । २० । अ ५८ । २१ । अ २२ । ५७ । सू १७ । ६२ । उ १ । ७८ । क्षी १ । ७८ । मनःपर्ययज्ञानिनां बंधयोग्याः ६५ । प्रमत्तादिसप्तगुणस्थानानि । सं—

मनःपर्यय ।

क्षी	०	१	६४
उ	०	१	६४
सू	१६	१७	४८
अ	५	२२	४३
अ	३६	५८	७
अ	१	५६	६
प्र	६	६३	२

अत्राहारकद्वयोदय एव विरुध्यते नाप्रमत्तापूर्वककरणयोस्तद्बंधः केवलज्ञानिषु सातस्यैव बंधः । सयोगायोगगुणस्थानद्वयं सिद्धाश्च संति । संयममार्गणायां असंयमस्य बंधयोग्यं ११८ गुणस्थानानि आद्यान्येव चत्वारि । सं—

असंयमस्य रचना ।

अ	१०	७७	४१
मि	०	७४	४४
सा	२५	१०१	१७
मि	१६	११७	१

अत्र तीर्थदेवमनुष्यायूंषि मिश्रस्य अबंधादसंयते निक्षिप्तानीति ज्ञातव्यं । देशसंयमस्य देशसंयतगुणस्थानवत् व्युच्छित्तिः ४ । बंधः ६७ । अबंधः ५३ । सामायिकछेदोपस्थापनयोर्बंधयोग्याः ६५ अत्र तीर्थाहारद्विकबंधो गुणस्थानचतुष्कं । सं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सा छे ६५

अ	५	२२	४३
अ	३६	५८	७
अ	१	५६	६
अ	६	६२	-

परिहारविशुद्धिसंयये बंधयोग्याः ६५ । अत्र तीर्थाहारकद्विकबंधोऽस्ति नाहारकर्धिः । गुणस्थानद्वयं—

परिहारविशुद्धि ६५ ।

अ	१	५९	६
अ	६	६३	२

सूक्ष्मसांपरायसंयमे सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानवत् व्यु–१६ । बं १७ । अ १०२ । यथाख्यातसंयमे बंधयोग्यं सातमेव गुणस्थानचतुष्कं । सं—

यथाख्यात ।

अ	०	०	१
स	१	१	०
क्षा	०	१	०
उ	०	१	०

दर्शनमार्गणायां चक्षुरचक्षुर्दर्शनयोर्बंधयोग्यं १२० । मिथ्यादृष्ट्यादिद्वादशगुणस्थानोक्तबंधबंधव्युच्छित्तयो ज्ञातव्याः । अवधिदर्शने अवधिज्ञानवद्बंधयोग्याः ७९ । गुणस्थानानि असंयतादीनि ९ । केवलदर्शने केवलज्ञानवत् । लेश्यामार्गणायां कृष्णनीलकपोतानां बंधयोग्यं ११८ आहारकद्विकाभावात् । गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि चत्वारि बंधाबंधव्युच्छित्तयस्तद्वत् ॥ ११९ ॥ शुभलेश्यानां गाथाद्वयेनाह— ११३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स चं०—कार्माण काययोगकी रचना औदारिक मिश्ररचनावत् जाननी तहां भी विशेष जो विग्रहगतिविषैं आयुका बंध नाहीं तातैं मनुष्यायु तिर्यंचायु विना बंध योग्य प्रकृति एकसौ वारह गुणस्थान च्यारि तहां मिथ्यादृष्टिविषैं सोलहमैंस्यौं नरकद्विक नरकायु विना व्युच्छित्ति तेरह १३ वंध सुरचतुष्क तीर्थंकर विना एकसौ सात १०७ अबंध पांच ५। सासादनविषैं व्युच्छित्ति तिर्यंचायु विना चौईस २४ वंध चौराणवै ९४ अबंध अठारह १८। असंयतविषैं मनुष्यायु विना असंयतकी नव ९ देश संयतकी च्यारि ४ प्रमत्तकी छह ६। अप्रमत्तकी देवायु गिनी नाहीं अपूर्वकरणकी आहारक द्विक विना चौतीस अनिवृत्तिकरणकी पांच सूक्ष्म सांपरायकी सोलह सब मिलाएं व्युच्छित्ति चहोत्तरि ७४ बंध सुरचतुष्क तीर्थंकरके मिलने पिचहतरि ७५ अबंध सैतीस ३७। सयोगी विषैं व्युच्छित्ति एक साता १ बंध एक साता १ अबंध एकसौ ग्यारह १११। बहुरि आगैं वेदमार्गणाकौं आदि देकरि आहार मार्गणा पर्यंत अपने अपने गुणस्थाननिविषैं साधारण कथन जानना। तहां वेदमार्गणा स्त्रीवेदीनिकैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ वीस १२० गुणस्थान नव ९ तहां आठवां अपूर्वकरणका गुणस्थान पर्यंत तौ व्युच्छित्ति बंध अवंध गुणस्थान रचनाविषैं कह्या है तैसैं ही जानना। बहुरि क्षपक श्रेणी रूप अनिवृत्ति करणका पहिला वेदसहित भागका द्विचरम समयविषैं व्युच्छित्ति एक पुरुषवेद बंध वाईस अबंध अठ्याणवै ९८ बहुरि तिसहीका चरम अंतसमय विषैं व्युच्छित्ति शून्य ० बंध इकईस २१ अबंध निन्याणवै ९९। बहुरि निवृत्ति अपर्याप्तक स्त्रीवेदी तिनकी रचना—

बंध योग्य प्रकृति एकसौ सात १०७ च्यारि आयु तीर्थंकर आहारक द्विक वैक्रियिक षट्क इन तेरह प्रकृतिनिका बंध नाही। गुणस्थान दोय २ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति नरकद्विक नरकायु विना तेरह बंध एकसौ सात १०७। अबंध शून्य ०। सासादनविषैं व्युच्छित्ति तिर्यंच आयु विना चौईस २४ अबंध तेरह १३ बंध चौराणवै ९४ इहां असंयत न संभवै है। बहुरि नपुंसक वेदीनिकै बंध योग्य प्रकृति एकसौ बीस १२० गुणस्थान नव ९ रचना सर्व स्त्रीवेदीनिकी रचनावत् जाननी। बहुरि निर्वृत्ति अपर्याप्त नपुंसकवेदी तिनकी रचना बंध योग्य प्रकृति एकसौ आठ १०८ पूर्वोक्त एकसौ सातमैं नारक असंयतकी अपेक्षा एक तीर्थंकर प्रकृति मिली। बहुरि तिर्यंच

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आयु मनुष्यायुका बंध लब्धि अपर्याप्तक हीकैं होहै इहां कथन निर्वृत्ति अपर्याप्तकका है तातैं गिनी नाहीं। गुणस्थान तीन ३ तातैं मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त तेरह १३ बंध तीर्थकर विना एकसौ सात १०७ अबंध एक। सासादनविषै व्युच्छित्ति पूर्वोक्त चौईस २४ बंध चौराणवै ९४ अबंध चौदह १४। अविरतविषैं व्युच्छित्ति मनुष्यायुविना नव ९ बंध तीर्थकरके मिलनेतैं इहकत्तरि ७१ अबंध सैंतीस ३७। बहुरि पुरुषवेदी तिनकै बंध योग्य प्रकृति एकसौ बीस १२० गुणस्थान नव ९। तहां आठवां अपूर्व करण गुणस्थानपर्यंत तौ रचना गुणस्थानरचनावत् जाननी। क्षपक अनिवृत्ति करणका प्रथमभाग का अंत समयविषैं व्युच्छित्ति एक पुरुषवेद १ तहां पर्यंत बंध बाइस २२ अबंध अठ्याणवै ९८। बहुरि पुरुषवेदी निर्वृत्ति अपर्याप्तक तिनकी रचना—

नरक बिना तीन गतिवाले जीव तिनकैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ बारह, च्यारि आयु नरकद्विक आहारद्विकका बंध नाही। गुणस्थान तीन ३ इहां मिथ्यादृष्टिविषै व्युच्छित्ति पूर्वोक्त तेरह १३। बंध सुरचतुष्क तीर्थकर बिना एकसौ सात १०७। अबंध ५। सासादनविषै व्युच्छित्ति पूर्वोक्त चौईस २४। बंध चौराणवै ९४। अबंध अठारह १८। अविरतविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त नव। बंध सुरचतुष्क तीर्थकरके मिलनेतै पिचहत्तरि ७५। अबंध सैतीस ३७। स्त्रीवेदी अर नपुंसकवेदीकैं तीर्थकर आहारद्विकका उदय तौ न होइ पुरुषवेदी हीकैं होइ अर बंध होनेविषैं किछू विरोध नाही। तीनौं वेदवालोंकैं होइ। बहुरि कषाय मार्गणाविषैं च्यार्‍यो कषायनिविषैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ वीस १२० गुणस्थान क्रोधविषैं क्षपक अनिवृत्ति करणका दूसरा भाग पर्यंत मानविषै तीसरा भागपर्यंत मायाविषैं चौथा भाग पर्यंत बादर लोभविषै पाचवां भागपर्यंत है। तिनकी रचना गुणस्थान रचनावत् जाननी। सूक्ष्मलोभविषैं एक सूक्ष्म सांपराय ही गुणस्थान है सो बाकी रचना सूक्ष्म सांपरायवत जाननी। बहुरि ज्ञानमार्गणाविषैं कुमति कुश्रुत विभंग इनके बंध योग्य प्रकृति एकसौ सतरह ११७ तीर्थकर आहार द्विकका बंध नाही। गुणस्थान दोय २ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति सोलह १६। बंध एकसौ सतरह। अबंध शून्य। सासादनविषैं व्युच्छित्ति पचीस २५ बंध एकसौ एक १०१। अबंध सोलह १६। बहुरि मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञान इनके मिथ्यादृष्टि अर सासा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दनविषैं व्युच्छित्ति गईं इकतालीस तिन बिना बंधयोग्य प्रकृति गुण्यासी ८९ गुणस्थान नव ९ असंयतादिक क्षीणकषाय पर्यंत। तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थानवत् जानने। अबंध असंयतादिकविषै क्रमतै दोय २ वारा १२ सोलह १६ वीस २० इकईस २१ सत्तावन ५७ वासठि ६२ अठहत्तरि अठहत्तरि ७८ जानने। बहुरि मनःपर्ययज्ञानविषैं वंध योग्य प्रमत्त गुणस्थानविषै जिनिका बंध पाइए ते प्रकृति तरेसठि अर आहारकद्विक ऐसैं पैसठि ६५। इहां आहारकद्विकका उदय विरुद्ध रूप है बंध होनेका अप्रमत्त अपूर्व करणविषै विरुद्ध नाही। गुणस्थान प्रमत्तादि क्षीणकषाय पर्यंत सात तिनविषैं व्युच्छित्ति अर वंध तौ गुणस्थान रचनाविषै कह्या सोई जानना। अवंध अनुक्रमतैं दोय २ छह ६ सात ७ तियालीस ४३ अडतालीस ४८ चौसटि चौसटि ६४ जानना। बहुरि केवलज्ञानविषै वंधयोग्य प्रकृति एक साता वेदनीय १ गुणस्थान दोय तहां सयोगीविषै व्युच्छित्ति एक १ बंध एक अवंध नास्ति। अयोगीविषै व्युच्छिति वंध नास्ति। अबंध एक १।

बहुरि संयम मार्गणाविषैं असंयमविषैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ अठारह ११८। आहारद्विक विना गुणस्थान च्यारि असंयत पर्यंत, तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तो गुणस्थान रचनावत् जानना। अबंध क्रमतैं एक सतरह चवालीस इकतालसि जानना। देश संयतकी रचना देशसंयत गुणस्थानरचनावत् जाननी। 'व्युच्छित्ति च्यारि ४। बंध सतसठि ६७। अबंध तरेपन ५३। बहुरि सामायिक छेदोपस्थापनविषैं बंधयोग्य प्रकृति पैसठि ६५। प्रमत्त गुणस्थानबिषैं जिनका बंध पाइए ते तरेसठि अर आहारक द्विक न जानना। गुणस्थान प्रमत्तादिक च्यारि तिनिबिषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानना। अबंध अनुक्रतैं दोय छह सात तियालीस जानना। बहुरि परिहारविशुद्धिविषैं बंध योग्य प्रकृति तेई पैसठि ६५। इहां तीर्थंकर आहारद्विकका बंध बिरुद्ध नाहीं। आहारकका उदय विरुद्ध रूप है। गुणस्थान दोय प्रमत्त अप्रमत्त व्युच्छित्ति छह एक ६। १। बंध तरेसठि गुणसठि ६३ ५९। अबंध दोय छह २। ६। क्रमतैं जाननां। सूक्ष्मसांपरायकी रचना सूक्ष्मसांपरायवत् जाननी। व्युच्छिति सोलह १६। बंध सतरह १७। अबंध एकसौ तीन १०३। बहुरि यथाख्यात संयमविषैं बंध योग्य एक सातावेदनीय।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थान च्यारि उपशांत कषायादिक, तहां व्युच्छित्ति अर बंध तो गुणस्थानवत् जानना। अबंध अयोगीविषैं एक और तीन गुणस्थाननिविषैं नास्ति ०।

बहुरि दर्शन मार्गणाविषैं चक्षु अचक्षु दर्शनविषैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ वीस १२०। गुणस्थान क्षीणकषाय पर्यंत बारह तिनकी रचना सर्व गुणस्थान रचनावत् जाननी। अवधि दर्शनकी रचना अवधि ज्ञानवत् जाननी। बंध योग्य गुण्यासी ७९ गुणस्थान असंयत आदि नव ९। केवल दर्शनकी रचना केवल ज्ञानवत् जाननी। बंध योग्य एक १ गुणस्थान दोय २।

बहुरि लेश्या मार्गणाविषैं कृष्ण नील कपोत इन तीनोंविषैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौ अठारह ११८ आहारकद्विक बिना, गुणस्थान च्यारि ४ असंयत पर्यंत। तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तो गुणस्थानवत् जानने अबंध एक सतरह चवालीस इकतालीस जानने॥ ११९॥ आगैं शुभलेश्यानिविषैं कहैं हैं—

णवरि य सव्वुवसम्मे णरसुरआऊणि णत्थि णियमेण।
मिच्छस्संतिम णवयं बारं णहि तेउपम्मेसु॥ १२०॥
सुक्के सदरचउक्कं वामंतिमबारसं च ण व अत्थि।
कम्मेव अणाहारे बंधस्संतो अणंतो य॥ १२१॥ जुम्मं।

नवरि च सर्वोपशमे नरसुरायुषी नास्ति नियमेन।
मिथ्यात्वस्यांतिमं नवकं द्वादश न हि तेजःपद्मयोः॥ १२०॥
शुक्लायां शतारचतुष्कं वामांतिमद्वादश च न वा अस्ति।
कर्म्म इव अनाहारे बंधस्यांतोऽनंतश्च॥ १२१॥ युग्मम्॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तेजोलेश्यायां बंधयोग्यं १११ मिथ्यादृष्टेश्वरयसूक्ष्मत्रयादिनवानामभावात् । गुणस्थानानि आद्यान्येव सप्त । मि व्यु–७ । बं १०८ । अ ३ । सा—व्यु २५ । बं १०१ अ १० । मि व्यु–० । बं ७४ । अ ३७ । अ व्यु–१० । बं ७७ । अ ३४ । दे व्यु–४ । बं ६७ । अ ४४ । प्र व्यु–६ । बं ६३ । अ ४८ । अ व्यु–१ । बं ५९ । अ ५२ । पद्मलेश्यां बंधयोग्यं १०८, वामस्थांतद्वादशानामभावात् । गुणस्थानानि ७ । मि व्यु–४ । बं १०५ । अ ३ । सा—व्यु २५ । बं १०१ । अ ७ । मि व्यु–० । बं ७४ । अ ३४ । अ व्यु १० । बं ७७ । अ ३१ । दे व्यु–४ बं ६७ । अ ४१ । प्र व्यु–६ । बं ६३ । अ ४५ । अ व्यु–१ । बं ५९ । अ ४९ । शुक्ललेश्यायां बंधयोग्यं १०४ । सदरचउक्कं मिथ्यादृष्टयेकेंद्रियाद्यंत्यद्वादश च नहि । गुणस्थानानि १३ । तत्र मि व्यु–४ । बं १०१ । अ ३ । सा व्यु–२१ । बं ९७ । अ ७ । मि व्यु–० । बं ७४ । अ ३० । अ व्यु १० । बं ७७ । अ २७ । दे व्यु–४ बं ६७ । अ ३७ । प्र व्यु ६ । बं ६३ । अ ४१ । अ व्यु–१ । बं ५९ । अ ४५ । अ व्यु–३६ । बं ५८ । अ ४६ । अ व्यु ५ । बं २२ । अ ८२ । सू व्यु १६ । बं १७ । अ ८७ । उ व्यु ० । बं १ । अ १०३ । क्षी व्यु ० । बं १ । अ १०३ । स व्यु १ । बं १ । अ १०३ । भव्यमार्गणायां बंधयोग्यं १२० । गुणस्थानानि १४ । तद्रचनासामान्यगुणस्थानोक्तवज्ज्ञातव्या । अभव्यमार्गणायां बंधयोग्यप्रकृतयः ११७, मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं । सम्यक्त्वमार्गणायां प्रथमोपशमसम्यक्त्वे बंधयोग्याः ७७ । मिथ्यादृष्टिसासादनव्युच्छित्तेः ४१ । तथा णवरिय सव्वुवसम्मे णरसुरआऊणि णत्थि णियमेणेति उपशमसम्यग्दृष्टीनां तिर्यग्मनुष्यगत्योर्देवायुषोर्नरकदेवगत्योर्मनुष्यायुषश्चाबंधादुभयोपशमसम्यक्त्वे तद्द्वयस्याप्यभावात् । गुणस्थानानि असंयतादीनि चत्वारि ।

प्रथम० सम्यक्त्वं

अ	०	५८	१९
प्र	६	६२	१५
द	४	६६	११
अ	६	७५	२

अत्र तीर्थाहारकद्विकबंधपक्षे असंयतादित्रये तीर्थस्य बंधः, अप्रमत्ते तीर्थाहारकद्विकयोश्च बंधोऽस्ति । द्वितीयोपशमसम्यक्त्वेऽपि बंधयोग्याः ७७ । गुणस्थानानि ८ । तत्र श्रेण्यवरोहकाऽसंयते व्यु ९ । बं ७५ । अबंधः आहारकद्वयं । देशसंयते व्यु ४ । बं ६६ । अ ११ । प्रमत्ते व्यु ६ । बं ६२ । अ १५ । आरोहकावरोहकाऽप्रमत्ते व्यु ० । बं ५८ । अ १९ । अपूर्वकरणे व्यु ३६ । बं ५८ । अ १९ । अनिवृत्तिकरणे व्यु ५ । बं २२ अ ५५ । सूक्ष्मसांपराये व्यु १६ । बं १७ । अ ६० । उपशांतकषाये व्यु १० । बं १ । अ ७६ । अत्र प्रथमद्वितीयोपशमसम्यक्त्वयोरायुरबंधात्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आरोहकापूर्वकरणप्रथमभागे मरणोन इति विशेषोऽनर्थकः ? इति न वाच्यं आग्बद्धदेवायुष्कस्यापि सातिशयाप्रमत्तस्य श्रेण्यारोहणासंभवात् । सम्यक्त्वे तु भाग्बद्धायुष्कस्यापि तत्कालांतर्मुहूर्ते मरणासंभवात् । क्षायोपशमिकसम्यक्त्वे मिथ्यादृष्टिसासादनव्युच्छित्त्यभावात् बंधयोग्याः ७९ गुणस्थानानि असंयतादीनि चत्वारि एव । कुतः ? उपशमश्रेण्यां औपशमिकं क्षायिकं च, क्षपकश्रेण्यां क्षायिकमेव सम्यक्त्वमिति नियमात् ।

वेदकसम्यक्त्वं ७९

अ	१	५९	२०
प्र	६	६३	१६
दे	४	६७	१२
अ	१	७७	२ आ

अत्राप्रमत्ते तीर्थाहारकद्विकयोर्बंधोऽस्ति क्षायिकसम्यक्त्वेऽपि सैव ७९ । बंधयोग्यगुणस्थानानि असंयताद्ययोगांतानि ११ । सिद्धा अपि । अ व्यु १० । वं ७७ । अ २ आहारकद्वयं । दे व्यु ४ । वं ६७ । अ १२ । प्र व्यु ६ । वं ६३ । अ १६ । अ व्यु १ । वं ५९ । अ २० । आहारकद्वयस्य वंधे मिलितत्वात् अपूर्वकरणस्य व्यु ३६ । वं ५८ । अ २१ । अ व्यु ५ । वं २२ । अ ५७ । सू व्यु १६ । वं १७ । अ ६२ । उ व्यु ० । वं १ । अ ७८ । क्षी व्यु ० । वं १ । अ ७८ । स व्यु १ । वं १ । अ ७८ । अव्यु ० । वं ० । अ ७९ । मिथ्यारुचीनां व्यु १६ । वं ११७ । अ ३ । सासादनरुचीनां व्यु २५ । वं १०१ । अ १९ । मिश्ररुचीनां व्यु ० । वं ७४ । अ ४६ । संज्ञिमार्गणायां बंधयोग्यं १२० गुणस्थानानि १२ बंधाबंधव्युच्छित्तयः सामान्यवत् असंज्ञिमार्गणायां बंधयोग्यं ११७ । गुणस्थानद्वयं । तत्र सासादने मिश्रकाययोगित्वात् मिथ्यादृष्टावेव आयुश्चतुष्कस्य व्युच्छित्तिः ।

असंज्ञिनः ११७

सा	२९	९८	१९
मि	१९	११७	०

आहारमार्गणायां बंधयोग्याः १२० । गुणस्थानानि १३ । बंधाबंधव्युच्छित्तयः साधारणवत् । अनाहारमार्गणायां बंधयोग्या ११२ । कुतः ? 'कम्मेव अणाहारे' कार्मणे च औदारिकमिश्रवदिति तिर्यग्मनुष्यायुषी न । 'ओराले वा मिस्से णहिसुरणिरयाउहारणिरयदुगं' इत्यष्टानामभावात् । गुणस्थानानि ५ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनाहारमा०—११२

अ	०	०	११२
स	१	१	१११
अ	६-६५	७५	३७
सा	२४	९४	१८
मि	१३	१०७	५

इयं रचना सुगमा। कुतः ? मिथ्यादृष्टौ अबंधस्थिततीर्थसुरचतुष्कयोरसंयते बंधः, इत्येतावत एव विशेषात्। व्युच्छित्तिः 'णवच्छिदी अयदे' इति नव। तथा 'उवरिमपणसट्ठीविय' एवं ७९। 'एक्कं सादं सजोगिम्हि' बध्यते व्युच्छिद्यते च। अबंधः—१११। अयोगे व्युच्छित्तिः बंधश्च शून्यं। अबंधः ११२। एवं वेदमार्गणाद्याहारमार्गणापर्यंतं बंधस्यांतो व्युच्छित्तिः। अनंतः—बंधः। चशब्दादबंधश्चोक्तः॥ १२०–१२१॥ अथ मूलप्रकृतीनां साद्यादिबंधभेदान् विशेषयति—

स० चं—तेजोलेश्याविषैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ ग्यारह मिथ्यादृष्टिविषैं सोलह प्रकृतिकी व्युच्छित्ति कही थी तिनविषैं आदिकी सात प्रकृतिका इहां बंध है। अंतकी सूक्ष्म अपर्याप्तादिक नव प्रकृतिनिका बंध नाहीं। गुणस्थान आदिके सात ७ तहां प्रथमगुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति सात ७ बंध एकसौ आठ १०८ अबंध तीन ३। सासादनादिक अप्रमत्त पर्यंतविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानना अबंध दश १० सैंतीस ३७ चौंतीस ३४ चवालीस ४४ अठतालीस ४८ बावन क्रमतैं जानना। बहुरि पद्मलेश्याविषैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ आठ १०८ मिथ्यादृष्टिकी व्युच्छित्तिरूप सोलह प्रकृति तिनविषैं एकेंद्रियादिक अंतकी बारह प्रकृति इहां बंधयोग्य नाहीं गुणस्थान सात ७ आदिके तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति च्यारि ४ बंध एकसौ पांच १०५ अबंध तीन ३ ऊपरि सासादनादिक अप्रमत्तपर्यंतविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थानवत् जानना अबंध सात ७ चौंतीस ३४ इकतीस ३१ इकतालीस ४१ पैंतालीस ४५ गुणचास ४९ क्रमतैं जानना। बहुरि शुक्ललेश्याविषैं बंधयोग्य प्रकृति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकसौ च्यारि १०४ पूर्वोक्त एकसौ आठ मध्ये तिर्यंचद्विक तिर्यंच आयु उद्योत इस सदर चउक बिना बंध जानना। गुणस्थान तेरह आदिके तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति च्यारि ४ बंध एकसौ एक १०१ अबंध तीन ३ सासादनविषैं सदर चउक बिना व्युच्छित्ति इकईस २१ बंध सत्याणवे ९७ अबंध सात ७ ऊपरि मिश्रादिक सयोगीपर्यंतविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थानरचनावत् जानना। अबंध तीस ३० सत्ताईस २७ सैंतीस ३७ इकतालीस ४१ पैंतालीस ४५ छियालीस ४६ वियासी ८२ सत्यासी ८७ एकसौ तीन १०३ एकसौ तीन १०३ एकसौ तीन १०३ अनुक्रमतैं जानना।

बहुरि भव्य मार्गणाविषै–भव्यकैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ बीस १२० गुणस्थान चौदह १४ तिनविषैं रचना सर्वगुणस्थानरचनावत् जाननी। अभव्यविषैं आहारकाद्विक तीर्थंकर बिना बंधयोग्य प्रकृति एकसौ सतरा ११७ गुणस्थान एक १ मिथ्यादृष्टि ही है।

बहुरि सम्यक्त्वमार्गणाविषैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषैं बंधयोग्य प्रकृति सतहत्तरि ७७ मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं व्युच्छित्ति गई एकतालीस ४१ अर 'णवरिय सव्वुव सम्मे णरसुरआऊण णत्थि णियमेण' इस वचनतैं दोय आयुकी तौ पहिले व्युच्छित्ति भई थी अर सम्यग्दृष्टिकैं तिर्यंच मनुष्यगतिविषैं तौ देवायुका बंध होइ अर नरक देवगतिविषैं मनुष्यका बंध होइ सो प्रथम वा द्वितीय उपशम सम्यग्दृष्टिकैं इन दोऊ आयुका भी बंध नाहीं तातैं बंधयोग्य सतहत्तरि ही कही। ताकी रचना–असंयतविषैं व्युच्छित्ति नव ९ मनुष्यायुबिना बंध पचहत्तरि ७५ आहारकाद्विक बिना अबंध दोय २ देशसंयतविषैं व्युच्छित्ति च्यारि बंध छ्यासठि ६६ अबंध ग्यारह ११ प्रमत्तविषैं व्युच्छित्ति छह ६ बंध बासठि ६२ अबंध पन्द्रह १५ प्रमत्तविषैं व्युच्छित्ति शून्य ० बंध आहारद्विक मिलैं अट्ठावन ५८ अबंध उगणीस १९। इस रचनाविषैं तीर्थंकर अर आहारकका बंधकी विवक्षा जाननी। उपशम सम्यक्त्वीके केई आचार्य तीर्थंकर प्रकृतिका बंध न मानैं हैं सो इहां विवक्षा नाहीं अर आहार द्विकका उदय विरुद्ध है बंध विरुद्ध नाहीं। बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व असंयत देश संयत प्रमत्तविषैं श्रेणीतैं उतरिकरि नीचैं आया ताकी अपेक्षा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही है अर प्रमत्तादिकविषैं श्रेणी चढनेकी वा उतरनेकी अपेक्षा पाइए है तातैं इहां गुणस्थान असंयतादिक उपशांत कषायपर्यंत आठ जानने। बंधयोग्य इहां भी सतहत्तरि प्रकृति ही जाननी। तहां असयंत देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्तविषैं तौ रचना प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी रचना समान जाननी। अपूर्वकरणविषैं व्युच्छित्ति छत्तीस ३६ बंध अट्ठावन ५८ अबंध उगणीस १९ अनिवृत्ति करण विषैं व्युच्छित्ति पांच ५ बंध बाईस २२ अबंध पचावन ५५ सूक्ष्मसांपराय विषैं व्युच्छित्ति सोलह १६ बंध सतरा १७ अबंध साठि ६० उपशांत कषाय विषैं व्युच्छित्ति शून्य ० बंध १ अबंध छिहत्तरि ७६।

इहां प्रश्न—जो प्रथम द्वितीय उपशम सम्यक्त्वविषैं आयुका बंध न कह्या तौ पूर्वें चढता अपूर्वकरणका प्रथम भागविषैं मरणकरि रहित ऐसा विशेषण निरर्थक कीया था? ताका समाधान—जो पूर्वें मिथ्यादृष्टि आदिविषैं जाकैं देवायुका बंध भया होइ ऐसा जो सातिशय अप्रमत्त ताकैं श्रेणी चढना संभवै है तहां प्रथमोपशम सम्यक्त्व विषैं अर श्रेणी चढतैं अपूर्वकरणका पहिला भाग अंतर्मुहूर्त प्रमाण तीहिं विषैं मरण न होहै अन्यत्र उपशम श्रेणीविषैं मरण हो है बहुरि देवायुका बंध सर्वत्र उपशम श्रेणीविषै न हो है ऐसा तहां भावार्थ जानना। बहुरि क्षयोपशम सम्यक्त्वविषैं बंध योग्य प्रकृति गुण्यासी ७९ जातैं इकतालीस प्रकृति मिथ्यादृष्टि सासादनविषै व्युच्छित्ति भई। तहां गुणस्थान असंयतादिक च्यारि ४ जातैं अपूर्वकरणादिकविषैं उपशम श्रेणीविषैं उपशम सम्यक्त्व वा क्षायिक सम्यक्त्व पाइए क्षपकश्रेणीविषै क्षायिक सम्यक्त्व ही पाइए तहां तिन असंयतादिकविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानने। अबंध दो २ बारह १२ सोलह १६ वीस २० अनुक्रमतैं जानने। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वविषैं भी बंधयोग्य प्रकृति उन्यासी ७९ इकतालीस प्रकृति मिथ्यादृष्टि सासादनविषै व्युच्छित्ति भई तिनविना जाननी। गुणस्थान असंयतादिक अयोगी पर्यंत ग्यारह वा सिद्ध जानने तिनविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ गुणस्थान रचनावत् जानने अबंध अनुक्रमतैं दोय २ बारह १२ सोलह १६ बीस २० इकईस २१ सत्तावन ५७ बासठि ६२ अठहत्तरि ७८ अठहत्तरि ७८ अठहत्तरि ७८ गुन्यासी ७९ जानने। मिथ्याश्रद्धानकी रचना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवत् तहां व्युच्छित्ति सोलह १६ बंध एकसौ सतरह ११७ अबंध तीन ३ सासादन सम्यक्त्वकी रचना सासादन गुणस्थानवत्। तहां व्युच्छित्ति पचीस २५ बंध एकसौ एक १०१ अबंध उगणीस १९ मिश्र सम्यक्त्वकी रचना मिश्र गुणस्थानवत्। तहां व्युच्छित्ति शून्य ० बंध चहोत्तरि ७४ अबंध छियालीस ४६।

बहुरि संज्ञीमार्गणाविषै संज्ञीविषैं तौ बंधयोग्य प्रकृति एकसौवीस १२० गुणस्थान बारह १२ आदिके, तहां सर्व रचना गुणस्थान रचनावत् जानना। बहुरि असंज्ञीविषैं बंधयोग्य प्रकृति आहारक तीर्थंकर द्विक बिना एकसौ सतरह ११७ गुणस्थान दोय २ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति उगणीस १९। सासादनविषैं असंज्ञी मिश्रयोगी ही होइ तातैं तहां च्यारि आयुका बंध नाही सो नरकआयु तौ सोलहमैं आइ गई तातैं और बंधी बहुरि बंध एकसौ सतरह ११७ अबंध शून्य ०। सासादनविषैं व्युच्छित्ति गुणतीस २९ विकलेंद्रियवत् बंध अठ्याणवै९८अबंध उगणीस १९।

बहुरि आहारमार्गणाविषैं आहारविषैं बंधयोग्य प्रकृति एकसौवीस गुणस्थान तेरह सयोगी पर्यंत १३। तहां व्युच्छित्ति बंध अबंध गुणस्थान रचनावत् जानना। अनाहारविषैं बंध योग्य प्रकृति एकसौ बारह ११२ कार्माण-योगविषैं बंधयोग्य कहीं थी तेई इहां जानना। गुणस्थान पांच तहां मिथ्यादृष्टि सासादन अविरत सयोगी इन च्यारिविषैं तो रचना कार्माणयोगकी रचना समान जानना किछू विशेष नाहीं, अयोगीविषैं व्युच्छित्ति अर बंध तौ शून्य ० अर अबंध एकसौ बारह ११२ ऐसैं वेदमार्गणातैं आहारमार्गणा पर्यंत बंधका अंत कहिए व्युच्छित्ति अनंत काहिए बंध च कहिए बहुरि अबंध कहे ते जानने ॥१२०-१२१॥ आगैं मूल प्रकृतिनिके सादि अनादि बंध के विशेष कहैं हैं—

सादि अणादी धुव अद्धुवो य बंधो दु कम्मछक्कस्स।
तदियो सादियसेसो अणादिधुवसेसगो आऊ ॥ १२२॥

सादिरनादिः ध्रुवोऽध्रुवश्च बंधस्तु कर्मषट्कस्य।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तृतीयः सादिकशेषोऽनादिध्रुवशेषक आयुः ॥ १२२ ॥

जी० प्र०—सादिः अनादिः ध्रुवः अध्रुवश्चेति प्रकृतिबंधश्चतुर्धा। तत्र ज्ञानदर्शनावरणमोहनीयनामगोत्रांतरायाणां प्रत्येकं चतुर्धा बंधो भवति। वेदनीयं सादितः शेषत्रिविधो बंधो भवति। सातापेक्षया तस्य गुणप्रतिपन्नेषु उपशमश्रेण्यादिरोहणावरोहणे च निरंतरबंधेन सादित्वासंभवात्। आयुः अनादिध्रुवाभ्यां शेषद्विविधबंधो भवति एकवारादिना बंधेन सादित्वात् अंतर्मुहूर्तावसाने च अध्रुवत्वात् ॥१२२॥ अथ तान् बंधान् लक्षयति—

सं० च—सादिबंध अनादि बंध ध्रुव बंध अध्रुव बंध ऐसैं प्रकृति बंध च्यारि प्रकार है। तहां ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय नाम गोत्र अंतराय इनकैं तौ च्यारि च्यारि प्रकार बंध है। वेदनीयकर्मके सादिबंध नाहीं और तीन प्रकार बंध हैं जातै उपशम श्रेणीका चढने उतरनेविषैं साताकी अपेक्षा निरंतर वेदनीयका बंध है तातैं सादिपणा संभवै नाही। आयुकर्मका अनादि अर ध्रुवबंध नाहीं सादि अर अध्रुव बंध ही है जातैं एक पर्यायविषै एकवार वा दोयबार उत्कृष्ट आठवार बंधै तातैं सादि है। अंतर्मुहूर्त पर्यंत ही बंधै तातैं अध्रुव है ॥ १२२ ॥ आगे इनि बंधनिके लक्षण कहैं हैं—

सादी अबंधबंधे सेढिअणारूढगे अणादी हु।
अभव्वसिद्धम्हि धुवो भवसिद्धे अद्धुवो बंधो ॥ १२३ ॥

सादिरबंधबंधे श्रेण्यनारोहके अनादिर्हि।
अभव्यसिद्धे ध्रुवो भव्यसिद्धेऽध्रुवो बंधः ॥ १२३ ॥

१

णा	द	वे	मो	आ	ना	गो	अं
३	४	०	४	१	४	४	४
		३		०			
				०			
				१			

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—सादिबंधः अबंधपतितस्य कर्मणः पुनर्बंधे सति स्यात्, यथा ज्ञानावरणपंचकस्य उपशांतकषायादवतरतः सूक्ष्मसांपराये। यत्कर्म यस्मिन् गुणस्थाने व्युच्छिद्यते तदनंतरोपरितनगुणस्थानं श्रेणिः तत्रानारूढे अनादिबंधः स्यात्, यथा सूक्ष्मसांपरायचरमसमयादधस्तत्पंचकस्य। तु-पुनः अभव्यसिद्धे ध्रुवबंधो भवति निष्प्रतिपक्षाणां बंधस्य तत्रानाद्यनंतत्वात्। भव्यसिद्धे अध्रुवबंधो भवति। सूक्ष्मसांपराये बंधस्य व्युच्छित्त्या तत्पंचकादीनामिव ॥ १२३ ॥ अथोत्तरप्रकृतिष्वाह—

सं० चं—जिस कर्मके बंधका अभाव होइ करि बहुरि बंध होइ तहां तिस कर्मके बंधकौं सादि कहिए। जैसैं ज्ञानावरणकी पांच प्रकृति तिनका बंध सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानपर्यंत जीवकैं था पीछैं सोई जीव जब उपशांतकषाय गुणस्थानकौं प्राप्तभया तब ज्ञानावरणके बंधका अभाव भया पीछैं सोई जीव उतरिकरि सूक्ष्म सांपरायकौं प्राप्त भया तहां बहुरि वाकैं ज्ञानावरणका बंध भया तहां तिस बंधकौं सादि कहिए ऐसैंही और प्रकृतिनिका जानना। बहुरि जिस गुणस्थानविषैं जिस कर्मकी व्युच्छित्ति होइ तिस गुणस्थानके अंनतरि ऊपरि जो गुणस्थान ताकौं श्रेणी कहिए सो तहां अनारूढ कहिए अप्राप्त भया ऐसा जो जीव ताके तिस कर्मका अनादि बंध जानना। जैसैं ज्ञानावरणकी व्युच्छित्ति सूक्ष्मसांपरायका अंत समयविषैं है ताके अनंतरि ऊपरि उपशांत कषाय गुणस्थान ताकौं जो जीव प्राप्त भया ताकैं ज्ञानावरणका अनादि बंध है ऐसैं ही और प्रकृतिनिका जानना। बहुरि अभव्यसिद्ध जो अभव्यजीव तीहिविषैं ध्रुवबंध जानना जातैं निःप्रतिपक्ष जे निरंतर बंधी कर्मप्रकृति तिनिका बंध अभव्य जीवकैं अनादि अनंत पाइए है। बहुरि भव्य सिद्धविषैं अध्रुव बंध है जातैं भव्य जीवकैं बंधका अभाव भी पाइए वा बंध पाइए। जैसैं ज्ञानावरणपंचककी सूक्ष्मसांपराय विषैं बंधकी व्युच्छित्ति भई ऐसैं इनका स्वरूप जानना ॥ १२३ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिविषैं कहैं हैं—

घादितिमिच्छकसाया भयतेजगुरुदुगणिमिणवण्णचओ।
सत्तेत्तालधुवाणं चदुधा सेसाणयं तु दुधा ॥ १२४ ॥ १२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घातितिमिथ्यात्वकषाया भयतेजोऽगुरुद्विकनिर्माणवर्णचतुष्कं ।
सप्तचत्वारिंशदध्रुवाणां चतुर्धा शेषाणां तु द्विधा ॥ १२४ ॥

जी० प्र०—ज्ञानदर्शनावरणांतरायाणामेकान्नविंशतिः, मिथ्यात्वं, षोडशकषायाः, भयजुगुप्से तैजसकार्मणे अगुरुलघूपघातौ निर्माणं वर्णचतुष्कं चेति सप्तचत्वारिंशद्ध्रुवाणां चतुर्धा बंधो भवति। शेषाणां वेदनीयद्वयमोहनीयसप्तकायुश्चतुष्कगतिचतुष्कजातिपंचकौदारिकद्वयवैक्रियिकद्वयाहारकद्वयसंस्थानषट्कसंहननषट्कानुपूर्व्यचतुष्कपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतिद्वयत्रसद्वयबादरद्वयपर्याप्तद्वयप्रत्येकद्वयस्थिरद्वयशुभद्वयसुभगद्वयसुस्वरद्वयादेयद्वययशस्कीर्तिद्वयतीर्थकरगोत्रद्वयानां त्रिसप्तत्यध्रुवाणां साद्यध्रुवबंधौ भवतः ॥ १२४ ॥ एतासु अप्रतिपक्षाः सप्रतिपक्षाश्चेति भिनत्ति—

स० चं०—ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय इनकी प्रकृति उगणीस १९ मिथ्यात्व १ सोलह कषाय १६ भय जुगुप्सा २ तैजस अर कार्माण २ अगुरुलघु अर उपघातक २ निर्माण १ वर्णादिक च्यारि ४ ए सैंतालिस प्रकृति ध्रुव हैं सो इनका तौ च्यारि प्रकार बंध पाइए है यावत् बंधविषैं व्युच्छित्ति न होइ तावत् इन प्रकृतिनिका समयप्रबद्धविषैं समय समय प्रति बंध होइ ही होइ यातैं इन प्रकृतिनिकौं ध्रुव कहिए है। बहुरि इन बिना अवशेष रहीं ज प्रकृति वेदनीय दोय २ मोहनीयकी सात ७ च्यारि आयु ४ च्यारि गति ४ पांच जाति ५ औदारिक वैक्रियिक आहारककी शरीर अर अंगोपांग करि दोय दोय दोय २ २ २ छह संस्थान ६ छह संहनन ६ च्यारि आनुपूर्वी ४ परघात आतप उद्योत उच्छ्वास ए च्यारि ४ विहायोगति दोय २ त्रस स्थावर दोय २ वादर सूक्ष्म दोय २ पर्याप्त अपर्याप्त दोय २ प्रत्येक साधारण दोय २ स्थिर अस्थिर दोय २ सुभग दुर्भग दोय २ शुभ अशुभ दोय २ सुस्वर दुःस्वर दोय २ आदेय अनादेय दोय २ यशःकीर्ति अयशःकीर्ति दोय २ तीर्थंकर १ गोत्रकर्मकी दोय २ ए तेहत्तरि अध्रुव हैं। इन प्रकृतिनिके सादि बंध अर अध्रुव बंध दोय ही पाइए हैं। इनि प्रकृतिनिका किसी समय बंध होइ किसी समय बंध न होइ तातैं इनकौं अध्रुव कहिए ॥ १२४ ॥ आगैं इनिविषैं अप्रतिपक्ष वा सप्रतिपक्ष भेद कहैं है—

सेसे तित्थाहारं परघादचउक्क सव्वआऊणि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अप्पडिवक्खा सेसा सप्पडिवक्खा हु बासट्ठी ॥ १२५ ॥

शेषासु तीर्थाहारं परघातचतुष्कं सर्वायूंषि ।
अप्रतिपक्षाः शेषाः प्रतिपक्षा हि द्वाषष्टिः ॥ १२५ ॥

जी० प्र०—ध्रुवेभ्यः शेषत्रिसप्तत्या तीर्थमाहारद्वयं परघातचतुष्कं आयुश्चतुष्कं चेत्येकादश अप्रतिपक्षा भवंति शेषाः द्वाषष्टिः सप्रतिपक्षा भवंति । प्रकृतिप्रदेशबंधनिबंधनयोगस्थानानां चतसृभिः स्थित्यनुभागबंधनिबंधनतदध्यवसायानां षड्भिश्च वृद्धिहानिभिः परिवर्तनेन सातद्वयस्येव वेदत्रयादीनामपि परस्परं तथात्वसंभवात् ॥ १२५ ॥ अध्रुवाणां साद्यध्रुवबंधयोरुपपत्तिमाह—

स० च०—सैंतालिस ध्रुव प्रकृति बिना अवशेष रही तिहत्तरि प्रकृति तिनविषैं तीर्थंकर १ आहारक द्विक २ परघातादिक च्यारि ४ आयु च्यारि ए ग्यारह प्रकृति अप्रतिपक्ष हैं इनिकैं कोई प्रतिपक्ष नाहीं तातैं इन प्रकृतिनिका जिस कालविषैं बंध होइ तिस कालविषैं अपना अपना बंध होइ। जिस कालविषैं न होइ तिसकालविषैं न होइ। जैसैं तीर्थंकरका बंध जिस कालविषैं होइ तिस कालविषैं तीर्थंकरका बंध होइ, न होइ तब न होइ। बहुरि अवशेष रही वासठि प्रकृति ते सब सप्रतिपक्ष हैं इनके प्रतिपक्षी पाइए हैं तातैं परस्पर प्रतिपक्षीनिविषैं एक समय विषैं एकही का बंध होइ जैसैं सातावेदनीय असातावेदनीय परस्पर प्रतिपक्षी हैं तहां एक समयविषैं कै तौ साताका बंध होइ कै असाताका बंध होइ दोऊनिका न होइ। मोहनीयविषैं रति अरति प्रतिपक्षी हैं हास्य शोक प्रतिपक्षी हैं, तीन वेद परस्पर प्रतिपक्षी हैं इन विषैं एक एकहीका बंध होइ। नामविषैं च्यारिगति परस्पर प्रतिपक्षी हैं पांच जाति परस्पर प्रतिपक्षी हैं इत्यादिक त्रस स्थावर परस्पर प्रतिपक्षी हैं इत्यादिक विषैं एक एक हीका बंध जानना। दोयगोत्रविषैं एकहीका बंध एक समय विषैं जानना ऐसैं सप्रतिपक्षनिका बंध जानना। प्रकृति बंध प्रदेशबंधकौं कारण योग स्थान तिनकी चतुःस्थान पतित वृद्धि हानिकरि अर स्थिति अनुभाग बंधकौं कारण अध्यवसाय स्थान तिनकी षट् स्थानपतित वृद्धि हानिकरि पलटनि हो है तातैं साता असाताकी ज्यौं तीन वेद

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इत्यादिक विषैं भी सप्रतिपक्षपना जानना कदाचित् किसी प्रकृतिका बंध होइ कदाचित् किसीका बंध होइ ॥ १२५ ॥ आगैं इन अध्रुव प्रकृतिनिके सादि अर अध्रुव बंध ही कह्या सो कौन कारण? सो कहैं हैं—

अवरो भिण्णमुहुत्तो तित्थाहाराण सव्वआऊणं ।
समओ छावट्ठीणं बंधो तम्हा दुधा सेसा ॥ १२६ ॥

अवरो भिन्नमुहूर्तः तीर्थाहाराणां सर्वायुषां ।
समयः षट्षष्टीनां बंधः तस्मात् द्विधा शेषाः ॥ १२६ ॥

जी० प्र०—तीर्थस्य आहारकद्वयस्य सर्वायुषां च जघन्येन निरंतरबंधकालोंऽतर्मुहूर्तः २७। शेषषट्षष्टेश्च एकसमयः, ततः कारणात् तासामध्रुवाणां साद्यध्रुवबंधौ सिद्धौ ॥ १२६ ॥ इति प्रकृतिबंधः समाप्तः । अथ स्थितिबंधमुपक्रमन्नादौ मूलप्रकृतीनामुत्कृष्टस्थितिमाह—

स० चं०—तीर्थंकर १ आहारद्विक २ च्यारि आयु ४ इन सात प्रकृतिनिका निरंतर बंधका काल जघन्यपनैं अंतर्मुहूर्त प्रमाण है । समय समय कर्मनिका बंध है सो इन सात प्रकृतिनिका बंध जब होने लगै तब जघन्यपनैं निरंतर अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत बंध होइ । बहुरि अवशेष रही छ्यासठि प्रकृति तिनका निरंतर बंधका काल एक समय है जिसका एक किसी समयविषैं बंध भया द्वितीयादिक समयविषैं तिस प्रकृतिका बंध होइ वा न होइ इस कारणतैं तेहत्तरि अध्रुव प्रकृतिनिकै सादि बंध अर अध्रुव बंध सिद्ध भया । ऐसैं प्रकृति बंधका स्वरूप जानना । ॥१२६॥ इति प्रकृतिबंधः समाप्तः । आगै स्थिति बंधकौं कहैं हैं तहां प्रथमही मूल प्रकृतिनिकी उत्कृष्ट स्थिति कहैहैं-

तीसं कोडाकोडी तिघादितदियेसु वीस णामदुगे ।
सत्तरि मोहे सुद्धं उवही आउस्स तेतीसं ॥ १२७ ॥

त्रिंशत् कोटिकोट्यः त्रिघातितृतीयेषु विंशतिर्नामद्वये ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सप्ततिर्मोहे शुद्ध उदधिः आयुषः त्रयस्त्रिंशत् ॥ १२७ ॥

जी० प्र०—उत्कृष्टः स्थितिबंधः कोटीकोटिसागरोपमाणि। ज्ञानदर्शनावरणांतरायवेदनीयेषु त्रिंशत्। नामगोत्रयोः विंशतिः। मोहनीये सप्ततिः। आयुषि शुद्धानि कोटीकोटिविशेषणरहितानि सागरोपमाण्येव त्रयस्त्रिंशत्। अत्र शुद्धविशेषणं कोटीकोटिव्यवच्छेदार्थं ॥ १२७ ॥ अथोत्तरप्रकृतीनां गाथाषट्केनाह—

स.चं.—उत्कृष्ट स्थितिबंध ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय वेदनीय इनविषै तीस कोडा कोडी सागर प्रमाण है। नाम गोत्रविषै वीस कोड़ा कोड़ी सागर प्रमाण है। मोहनीय विषैं सत्तरि कोड़ाकोड़ी सागर प्रमाण है। आयुविषैं शुद्ध कोडाकोडी विशेष रहित केवल तेतीस सागर प्रमाण है ॥ १२७ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिविषैं छह गाथानिकरि कहैं हैं—

दुक्खतिघादीणोघं सादिच्छीमणुदुगे तदद्धं तु।
सत्तरि दंसणमोहे चरित्तमोहे य चत्तालं ॥ १२८ ॥
संठाणसंहदीणं चरिमस्सोघं दुहीणमादित्ति।
अट्ठरसकोडकोडी वियलाणं सुहुमतिण्हं च ॥ १२९ ॥
अरदीसोगे संढे तिरिक्खभयणिरयतेजुरालदुगे।
वेगुव्वादावदुगे णीचे तसवण्णअगुरुति चउक्के ॥ १३० ॥
इगिपंचेंदियथावरणिमिणासग्गमणअथिरछक्काणं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीसं कोडाकोडीसागर णामाणमुक्कस्सं ॥ १३१ ॥
हस्सरदिउच्चपुरिसे थिरछक्के सत्थगमणदेवदुगे ।
तस्सद्धमंतकोडाकोडी आहारतित्थयरे ॥ १३२ ॥
सुरणिरयाऊणोघं णरतिरियाऊण तिण्णि पल्लाणि ।
उक्कस्सट्ठिदिबंधो सण्णीपज्जत्तगे जोगे ॥ १३३ ॥ कुलयं ।

दुःखत्रिघातिनामोघः सातस्त्रीमनुष्यद्विके तदर्धं तु ।
सप्ततिः दर्शनमोहे चारित्रमोहे च चत्वारिंशत् ॥ १२८ ॥
संस्थानसंहतीनां चरमस्यौघः द्विहीनमादीति ।
अष्टादशकोटीकोटिः विकलानां सूक्ष्मत्रयाणां च ॥ १२९ ॥
अरतिशोके षण्ढे तिर्यग्भयनिरयतेजऔरालद्वये ।
वैगूर्विकातपद्विके त्रसवर्णागुर्विति चतुष्के ॥ १३० ॥
एकपंचेंद्रियस्थावरनिर्माणासद्गमनास्थिरषट्कानां ।
विंशं कोटीकोटिसागरः नाम्नामुत्कृष्टं ॥ १३१ ॥
हास्यरत्युच्चपुरुषे स्थिरषट्के शस्तगमनदेवद्विके ।
तस्यार्धमंतःकोटीकोटिः आहारतीर्थकरे ॥ १३२ ॥
सुरनिरयायुषोरोघः नरतिर्यगायुषोः त्रीणि पल्यानि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्कृष्टस्थितिबंधः संज्ञिपर्याप्तके योग्ये ॥ १३३ ॥ कुलकम् ।

जी० प्र०—उत्कृष्टस्थितिबंधः असातवेदनीयज्ञानदर्शनावरणांतरायविंशतेः ओघः मूलप्रकृतिवत् त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमाणि । सातवेदनीयस्त्रीवेदमनुष्यद्विकेषु तदर्धं पंचदशकोटीकोटिसागरोपमाणि । दर्शनमोहे मिथ्यात्वे बंधे एकविधत्वात् तत्र सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणि ७० । चारित्रमोहनीयषोडशकषायेषु चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमाणि । संस्थानसंहननानां चरमसंस्थानसंहननस्य मूलप्रकृतिवद् विंशतिकोटीकोटिसागरोपमाणि । शेषसंस्थानसंहननानां समचतुरस्रसंस्थानवज्रवृषभनाराचसंहननपर्यंतं द्विद्विकोटीकोटिसागरोपमविहीन ओघः । विकलत्रयाणां चाष्टादशकोटीकोटिसागरोपमाणि । अरतिशोकषंढवेदतिर्यग्द्विकभयद्विकनरकद्विकतैजसद्विकौदारिकद्विकवैक्रियिकद्विकातपद्विकनीचैर्गोत्रत्रसचतुष्कवर्णचतुष्कागुरुलघुचतुष्केंद्रियपंचेंद्रियस्थावरनिर्माणासद्गमनास्थिरषट्कानां विंशतिकोटीकोटिसागरोपमाणि हास्यरत्युच्चैर्गोत्रपुंवेदस्थिरषट्कप्रशस्तगमनदेवद्विकानां तस्यार्धं--दशकोटीकोटिसागरोपमाणि । आहारकद्वयतीर्थकृतोः अंतःकोटीकोटिसागरोपमाणि । सुरनरकायुषोः ओघः त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणि । तिर्यग्मनुष्यायुषोः त्रीणि पल्यानि । अयमुत्कृष्टस्थितिबंधः संज्ञिपर्याप्तस्यैव अस्यंयंतानामग्रे प्ररूपणात् । योग्ये इत्यनेन अयं संसारकारणत्वात् अशुभत्वात् शुभाशुभकर्मणां चातुर्गतिकसंक्लिष्टैरेव बध्यते इत्यर्थः ॥ १२८–१३३ ॥ आयुस्त्रयवर्जितशुभाशुभप्रकृतीनां उत्कृष्टस्थितिकारणं संक्लेश एवेत्याह—

स चं०—उत्कृष्ट स्थिति बंध कहैं हैं—सो असातावेदनीय अर ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय इनका उगणीस प्रकृति इनि वीस प्रकृतिनिका ओघं कहिए मूल प्रकृतिवत् तीस कोडाकोडी सागर प्रमाण है। सातावेदनीय स्त्री वेद मनुष्यगति मनुष्यगत्यानुपूर्वी इन च्यारिनिका तदर्ध कहिए पंद्रह कोडाकोडी सागर प्रमाण है। दर्शन मोह बंधविषै एक प्रकार ही है मिथ्यात्व, तिस मिथ्यात्वका सत्तरि कोडाकोड़ी सागर प्रमाण है। चारित्र मोहनीय रूप सोलह कषायनिका चालीस कोडाकोडी सागर प्रमाण है। संस्थान संहनन तिनविषैं अंतका हुंडक संस्थान सृपाटिका संहनन इनिका मूल प्रकृतिवत् वीस कोडा कोडी सागर प्रमाण है। अवशेष विषैं दोय दोय घाटि है। तहां वामन संस्थान कीलित संहननका अठारा कुब्ज संस्थान अर्धनाराच संहननका सोलह स्वातिसंस्थान नाराच संहननका चौदह न्यग्रोध परिमंडल संस्थान वज्रनाराचसंहननका वारा समचतुरस्रसंस्थान वज्रवृषभ नाराच संहननका दश कोडाकोडी सागर प्रमाण है। वेंद्री तेंद्री चौंद्री सूक्ष्म साधारण अपर्याप्त इन छहका अठारह कोडा कोडी सागर प्रमाण है। बहुरि अरति १ शोक १ नपुंसक वेद १ तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी २ भय अर जुगुप्सा २ नरकगति वा आनुपूर्वी २ तैजस अर कार्माण २ औदारिक शरीर वा अंगोपांग २ वैंक्रियिक शरीर वा अंगोपांग

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२ आतप अर उद्योत २ नीचगोत्र १ त्रस वादर पर्याप्त प्रत्येक ए च्यारि ४ वर्णादिक च्यारि ४ अगुरुलघु उपघात परघात उच्छ्वास ए च्यारि ४ एकेंद्री १ पंचेंद्री १ स्थावर १ निर्माण १ अप्रशस्त विहायोगति १ अस्थिर अशुभ दुर्भग दुःस्वर अनादेय अयशः कीर्ति ए छह इन इकतालीस प्रकृतिनिका वीस कोडाकोडी सागर प्रमाण है। बहुरि हास्य रति उच्चगोत्र पुरुष वेद स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय यशस्कीर्ति ए छह ६ प्रशस्तविहायोगति १ देवगति आनुपूर्वी २ इन तेरहका तदर्ध कहिए दश कोडाकोडी सागर प्रमाण है। आहारक शरीर वा अंगोपांग अर तीर्थंकर इन तीनोंका अंतःकोटाकोटी कहिए कोडिके ऊपर कोडाकोडीके नीचैं इतने सागर प्रमाण है। देवायु नरकायुका ओघः कहिए मूलप्रकृतिवत् तेतीस सागर प्रमाण है। तिर्यंचायु मनुष्यायुका तीन पल्य प्रमाण हैं ऐसें इनि प्रकृतिनिका उत्कृष्ट स्थिति बंध कह्या सो ऐसा उत्कृष्ट स्थिति बंध संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त जीवनिकैं हो है असंज्ञी वा अपर्याप्तके संभवता उत्कृष्ट स्थिति बंध आगैं वर्णन करैंगे सोभी योग्य जीवकैं होइ। योग्य कहनेकरि सर्व ही कर्म संसारकौं कारण हैं तातैं शुभाशुभ कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थिति च्यारि गतिवाले उत्कृष्ट संक्लेश परिणामके धारक जीवनिकरि ही बांधिए है ऐसा भावार्थ जानना ॥ १२८—१३३ ॥

सव्वट्ठिदीणमुक्कस्सओ दु उक्कस्ससंकिलेसेण।
विवरीदेण जहण्णो आउगतियवज्जियाणं तु ॥ १३४ ॥

सर्वस्थितीनामुत्कृष्टकस्तु उत्कृष्टसंक्लेशेन।
विपरीतेन जघन्य आयुष्कत्रयवर्जितानां तु ॥ १३४ ॥

जी० प्र०—तु—पुनः तिर्यग्मनुष्यदेवायुर्वर्जितसर्वप्रकृतिस्थितीनां उत्कृष्ट उत्कृष्टसंक्लेशेन भवति। तु—पुनः तासां जघन्यं उत्कृष्टविशुद्धपरिणामेन भवति। तत्त्रयस्य तु उत्कृष्टं उत्कृष्टविशुद्धपरिणामेन जघन्यं तद्विपरीतेन भवति ॥ १३४ ॥ उत्कृष्टस्थितिबंधमाह—

सं० चं— बहुरि तिर्यंचायु मनुष्यायु देवायु विना और सर्व एकसौ सतरह प्रकृति तिनका उत्कृष्ट स्थितिबंध १३२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यथासंभव उत्कृष्ट संक्लेश परिणाम करि हो है। बहुरि जघन्य स्थिति बंध उत्कृष्ट विशुद्ध परिणामकरि हो है। बहुरि तिन तीनू आयुनिका उत्कृष्ट स्थिति बंध उत्कृष्ट विशुद्ध परिणाम करि हो है जघन्य स्थिति बंध तींहिसों विपरीत रूप परिणामकरि हो है॥ १३४॥ उत्कृष्ट स्थिति बंध कौनकै हो है ? सो कहैं है—

सव्वुक्कस्सठिदीणं मिच्छाइट्ठी दु बंधगो भणिदो।
आहारं तित्थयरं देवाउं वा विमोत्तूणं॥ १३५॥

सर्वोत्कृष्टस्थितीनां मिथ्यादृष्टिस्तु बंधको भणितः।
आहारं तीर्थंकरं देवायुषं वा विमुच्य॥ १३५॥

जी० प्र०—आहारकद्विकं तीर्थं देवायुश्चेति चत्वारि मुक्त्वा शेष ११६ प्रकृतिसर्वोत्कृष्टस्थितीनां मिथ्यादृष्टिरेव बंधको भणितः. तच्चतुर्णां तु सम्यग्दृष्टिरेव॥ १३५॥ तत्रापि विशेषमाह—

सं० च—आहारक द्विक २ तीर्थंकर १ देवायु १ इन च्यारि प्रकृतिनि विना अवशेष एकसौ सोलह प्रकृतिनिकी उत्कृष्ट स्थितिकौं मिथ्यादृष्टि जीव ही बांधै है बहुरि तिन च्यारि प्रकृतिनिकी उत्कृष्ट स्थितिकौं सम्यग्दृष्टी ही बांधै है॥ १३५॥ तहां भी विशेष कहै हैं—

देवाउगं पमत्तो आहारयमप्पमत्तविरदो दु।
तित्थयरं च मणुस्सो अविरदसम्मो समज्जेइ॥१३६॥

देवायुषं प्रमत्त आहारकमप्रमत्तविरतस्तु।
तीर्थंकरं च मनुष्यः अविरतसम्यक् समर्जयति॥ १३६॥

जी० प्र०—देवायुः उत्कृष्टस्थितिकं प्रमत्त एवाप्रमत्तगुणस्थानाभिमुखो बध्नाति। अप्रमत्ते तद्व्युच्छित्तावपि तत्र सातिशये तीव्रविशुद्धत्वेन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तस्बंधात्, निरतिशये च तदुत्कृष्टासंभवात् । तु—पुनः आहारकद्वयं उत्कृष्टस्थितिकं अप्रमत्तः प्रमत्तगुणस्थानाभिमुखः संक्लिष्ट एव बध्नाति आयुस्त्रय-वर्जितानां उत्कृष्टस्थितेः उत्कृष्टसंक्लेशेन इत्युक्तत्वात् । तीर्थकरं उत्कृष्टस्थितिकं नरकगतिगमनाभिमुखमनुष्यासंयतसम्यग्दृष्टिरेव बध्नाति ॥ १३६ ॥ शेषाणां ११६ उत्कृष्टस्थितिबंधकमिथ्यादृष्टीनां गाथाद्वयेनाह—

सं० च—देवायुकी उत्कृष्ट स्थितिकौं अप्रमत्त गुणस्थान चढनेकौं सन्मुख भया ऐसा प्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव बांधै है । यद्यपि अप्रमत्त गुणस्थानविषै भी देवायुका बंध है तथापि तहां सातिशय अप्रमत्तविषैं तौ तीव्र विशुद्ध परिणाम पाइए है तातैं तहां तौ देवायुका बंध ही नाहीं अर निरतिशय अप्रमत्तविषैं बंध है तथापि उत्कृष्ट स्थिति बंध होइ नाहीं तातैं तहां न कह्या । बहुरि आहारकद्विक उत्कृष्ट स्थितिसहित ताकौं प्रमत्त गुणस्थानकौं सन्मुख भया ऐसा अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती संक्लेशपरिणामी जीव बांधै है जातैं तीन आयुविना और प्रकृतिनिकी उत्कृष्ट स्थिति उत्कृष्ट संक्लेशकरि बंधै है सो आहारकद्विकका बंध करनेवाले जीवनिविषैं जो प्रमत्तकौं सन्मुख भया अप्रमत्त ताहीकैं उत्कृष्ट संक्लेश है । तातैं तिसहीकै उत्कृष्ट स्थितिसहित आहारकद्विकका बंध कह्या बहुरि उत्कृष्ट स्थिति सहित तीर्थकर प्रकृतिकौं नरकगति जानेकौं सन्मुख भया ऐसा असंयत सम्यग्दृष्टी मनुष्य सोई बांधै है । जातैं तीर्थकर प्रकृति बंध करनेवाले जीवनिविषैं वाकैं तीव्र संक्लेश पाइए है ॥ १३६ ॥ अवशेष एकसौ सोलह प्रकृति तिनिकौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मिथ्यादृष्टी ही बांधै हैं तिनिका कथन दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

णरतिरिया सेसाउं वेगुव्वियछक्कवियलसुहुमतियं ।
सुरणिरया ओरालियतिरियदुगुज्जोवसंपत्तं ॥ १३७ ॥
देवा पुण एइंदियआदावं थावरं च सेसाणं ।
उक्कस्ससंकिलिट्ठा चदुगदिया ईसिमज्झिमया ॥१३८॥जुम्मं । १३४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नरतिर्यंचः शेषायुषं वैगूर्विकषट्कविकलसूक्ष्मत्रयं ।
सुरनिरयाः औदारिकितिर्यग्द्वयोद्योतासंप्राप्तं ॥ १३७ ॥
देवाः पुनरेकेंद्रियातपं स्थावरं च शेषाणां ।
उत्कृष्टसंक्लिष्टाः चातुर्गतिका ईषन्मध्यमकाः ॥ १३८ ॥

जी० प्र०——नरकतिर्यग्मनुष्यायूंषि वैक्रियिकषट्कं विकलत्रयं सूक्ष्मत्रयं चोत्कृष्टस्थितिकानि नराः तिर्यंचश्च बध्नंति औदारिकद्वयं तिर्यग्द्वयोद्योतासंप्राप्तसृपाटिकसंहननानि सुरनारका एव। एकेंद्रियातपस्थावराणि पुनः देवाः। शेषद्वानवति उत्कृष्टसंक्लिष्टा ईषन्मध्यमसंक्लिष्टाश्च चातुर्गतिकाः। अत्रोत्कृष्टेषन्मध्यमसंक्लेशपरिणामोपपत्तिमाह——

उक्कस्स—उत्कृष्टसंक्लिष्टमिथ्यादृष्टेः, ईसिमज्झिमपरिणामस्स-वा ईषन्मध्यमपरिणाममिथ्यादृष्टेर्वा, उक्कसट्ठिदिबंधो होदि—उत्कृष्टस्थितिबंधो भवति उक्कस्सट्ठिदिबंधपाउग्गअसंखेज्जलोगपरिमाणं—उत्कृष्टस्थितिबंधप्रायोग्यासंख्येयलोकपरिमाणानां, पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागमेत्तखंडाणि कादूण-पलितोपमासंख्येयभागमात्रखंडानि कृत्वा, तत्थ—तेषु खंडेषु, चरमखंडस्स-चरमखंडस्य, उक्कस्स संकिलेसो णाम--उत्कृष्टसंक्लेशव्यपदेशो भवति। पढमखंडस्स--प्रथमखंडस्य, ईसिसंकिलेसोणाम—ईषत्संक्लेशव्यपदेशो भवति। दोण्हं, विच्चालखंडाणं—द्वयोरंतरालखंडानां मज्झिमसंकिलेसो णामेत्ति उच्चदि—मध्यमसंक्लेशव्यपदेश इत्युच्यते। एवं सेससव्वट्ठिदिवियप्पेसु वत्तव्वं--एवं शेषसर्वस्थितिविकल्पेषु वक्तव्यं। एत्थ सव्वपयडीसु—अत्र सर्वप्रकृतिषु, सगसगट्ठिदिवियप्पो-स्वस्वस्थितिविकल्पः, उड्ढगच्छो होदि ऊर्ध्वगच्छो भवति। तिरियगच्छो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो होदि——तिर्यग्गच्छः पलितोपमासंख्येयभागो भवति। गुणहाणि आयमो गुणहान्यायामः पलितोपमस्सासंखेज्जदिभागो होदि—पलितोपमासंख्येयभागो भवति। एट्ठ अणुकट्ठिरयणाविहाणं अधापवत्तकरणं व वत्तव्वं—अत्रानुत्कृष्टिरचनाविधानं अधःप्रवृत्तकरणवद्वक्तव्यं। तद्यथा—

अंकसंदृष्टौ स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि द्वासप्तत्यधिकत्रिसहस्री ३०७२ स्थितिविकल्पाः षोडश १६ पदकृत्या २५६ संख्यातेन च ३ सर्वधने भक्ते—३०७२/२५६।३ चयो भवति ४। व्येकपदार्ध १५/२ घ्नचयः १५/२। ४ गुणो गच्छः १५/२। ४। १६। ४८० चयधनं भवति। अनेन सर्वधनं ३०७२ ऊनयित्वा २५९२ पदेन १६ भक्तं सत् जघन्यस्थितिकारणपरिणामसंख्या भवति १६२। अत्रैकचये ४ वृद्धे सति एकैकसमयाधिकद्वितीयादिस्थितिकारणपरिणामप्रमाणानि भवंति। पुनः अनुत्कृष्टिपदेन ४ ऊर्ध्वचये ४ भक्ते तिर्यक्चयो भवति १। व्येकपदार्ध ३/२ घ्नचयः ३/२। १ गुणो गच्छः ३/२। १। ४ चयधनं ६ भवति। अनेन जघन्यस्थितिकारणपरिणामप्रमाणं १६२ हीनं कृत्वा कृत्वा अनुत्कृष्टिगच्छेन भक्तं सत् प्रथमखंडप्रमाणं स्यात् ३९। अत्रैकैकतिर्यक्चये वृद्धे द्वितीयादिखंडानि स्युः ४०। ४१। ४२। एवं शेषद्वितीयादिचरमपर्यंतस्थितिपरिणामा अपि तिर्यग्रचयितव्याः। एवमर्थसंदृष्टावपि रचनां कृत्वा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अधःप्रवृत्तकरणवदुपरितनस्थितिपरिणामखंडानां अधस्तनस्थितिपरिणामखंडैः सह संख्यया संक्लेशविशुद्धिभ्यां च सादृश्यादिकं वक्तव्यमित्यर्थः ॥ १३७–१३८ ॥ अथ मूलप्रकृतीनां जघन्यस्थितिबंधमाह—

सं० च—नरकायु मनुष्यायु तिर्यंचायु अर नरकगति वा आनुपूर्वी देवगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग यह वैक्रियिक षट्क ६ अर बेंद्री तेंद्री चौंद्री यह विकलत्रय ३ अर सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण यह सूक्ष्मत्रय ३ इन पंद्रह प्रकृतिनिकौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मनुष्य वा तिर्यंच मिथ्यादृष्टि बांधै है। बहुरि औदारिक

१ प ७ृ ७ृ	२२२	५४	५५	५६	५७	≡a
१ प ७ृ ७ृ	२१८	५३	५४	५५	५६	≡a
२ प ७ृ ७ृ	२१४	५२	५३	५४	५५	≡a
	२१०	५१	५२	५३	५४	०
०	२०६	५०	५१	५२	५३	०
०	२०२	४९	५०	५१	५२	०
०	२९८	४८	४९	५०	५१	०
० १	१९४	४७	४८	४९	५०	०
१ प ७ृ ७ृ	१९०	४६	४७	४८	४९	०
०	१८६	४५	४६	४७	४८	०
०	१८२	४४	४५	४६	४७	०
०	१७८	४३	४४	४५	४६	०
०	१७४	४२	४३	४४	४५	०
२ प ७ृ	१७०	४१	४२	४३	४४	≡a
१ प ७ृ	१६६	४०	४१	४२	४३	≡a
प ७	१६२	३९	४०	४१	४२	≡a
सिति		ज	प्र	य	उ	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शरीर वा अंगोपांग २ तिर्यंच गति १ आनुपूर्वी २ उद्योत १ सृपाटिका संहनन १ इनकौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मिथ्यादृष्टी देव वा नारक जीव बांधे हैं। बहुरि एकेंद्रिय १ आतप १ स्थावर इन तीनोंकौं उत्कृष्ट स्थिति सहित मिथ्यादृष्टी देव बांधे है। अवशेष रही वाणवै प्रकृति तिनकौं उत्कृष्ट संक्लेशी वा ईषत् मध्यम संक्लेशी च्यार्यो गतिके जीव बांधे हैं इहां उत्कृष्ट ईषत् मध्यम संक्लेश परिणामनिका स्वरूप कहैं हैं—

उक्कस्ससंकिलिट्ठस्स ईसिमज्झिमपरिणामस्स वा उक्कस्सट्ठिदिबंधो होदि। उत्कृष्ट संक्लेश परिणामनिका धारक वा ईषत् मध्यम परिणामनिका धारक मिथ्यादृष्टी जीव ताकैं उत्कृष्ट स्थितिबंध हो है।

उक्कस्सट्ठिदिबंधपाउग्गअसंखेज्जलोगपरिणामाणं पलिदोवमस्स असंखेज्जभागमेत्ताणि खंडाणि कादूण तत्थ चरमखंडस्स उक्कस्ससंकिलेसो णाम, पढमखंडस्स ईसिसंकिलेसो णाम दोण्हं विच्चालखंडाणं मज्झिमसंकिलेसो णामेत्ति उच्चदि। स्थितिबंधकौं कारण तीव्रमंदादिक रूप स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान तिनविषैं उत्कृष्टस्थिति बंधकौं कारण असंख्यात लोक प्रमाण परिणाम हैं। तिनके पल्यके असंख्यातवे भागप्रमाण खंड कीजिए तिनविषैं जो अंतके खंडविषैं जेते परिणाम पाइए बहुत कषाय रूप तिनकौं उत्कृष्ट संक्लेश ऐसा नाम कहिए। बहुरि प्रथम खंडविषैं जेते परिणाम पाइए थोरे कषायरूप, तिनकौं ईषत् संक्लेश ऐसा नाम कहिए। दोऊ खंडनिके वीचि जे खंड हैं तिनविषैं जे परिणाम पाइए यथासंभव कषायरूप तिनकौं मध्य संक्लेश ऐसा नाम कहिए है।

एवं सेससव्वट्ठिदिवियप्पेसु वत्तव्वं। ऐसैं ही उत्कृष्ट तैं लगाइ एक एक समय घटता जघन्य स्थिति पर्यंत जेते स्थितिके भेद हैं तिन सवनिविषैं ऐसैं ही कहना।

एत्थ सव्वपयडीसु सगसगट्ठिदिवियप्पो उड्ढगच्छो होदि तिरियगच्छो पलिदोवमस्स असंखेज्जदिभागो होदि। गुणहाणी आयामो पलिदोवमस्स असंखेज्जदि भागो होदि। एत्थ अणुकट्ठिरयणाविहाणं अधापवत्तकरणं वं वत्तव्वं। इनसर्व प्रकृतिनिविषैं अपनी अपनी स्थितिके भेदानिका प्रमाण सो ऊर्ध्व गच्छ हो है। तिर्यक् गच्छ पल्योपमके असंख्यातवे भाग प्रमाण हो है। गुण हानिका आयाम पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण हो है इहां अनुकृष्टि रचनाका विधान अधःप्रवृत्त करणवत् कहना। सो कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जैमें जीवकांडविषै गुणस्थान प्ररूपणाविषैं सातिशय अप्रमत्तकैं अधःप्रवृत्त करणका स्वरूप कह्या है तहां अंक संदृष्टि करि कथन दिखाया है तैसें ही इहां अंकसंदृष्टि करि कथन स्वरूप जानना। जैसें अंक संदृष्टिविषैं सर्व धनका प्रमाण तीन हजार वहत्तरि ३०७२ है तैसें इहां सर्व स्थितिबंधाध्यवसाय स्थाननिका जितना प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण है तितना सर्व धनका प्रमाण जानना। बहुरि जैसें ऊर्ध्वगच्छका प्रमाण सोलह कहे तैसें इहां विवक्षित कर्मकी जघन्य स्थितिस्यों लगाइ एक एक समय बधता उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत जेते स्थितिके भेद होंहि तितना ऊर्ध्वगच्छ जानना। बहुरि जैसें गच्छका वर्ग दोयसै छप्पन अर संख्यातकी सहनानी तीन इनका सर्व धनकौं भाग दीए च्यारि पाए सो चयका प्रमाण च्यारि है। तैसें इहां जो ऊर्ध्वगच्छका प्रमाण कह्या ताका वर्गकरि ताकौं संख्यातगुणा कीजे पीछे वाका भाग सर्व धनकौं दीए जो प्रमाण होइ तितना चय जानना। एक एक ऊर्ध्व रचनाविषैं इतना इतना बधता जानना। बहुरि जैसें एक घाटि गच्छ पंद्रहका आधाकरि ताकौं चयका प्रमाण च्यारिकरि गुणिए जो प्रमाण तीस होइ ताकौं गच्छ सोलाकरि गुणें च्यारिसै असी होइ सो चयधनका प्रमाण जानना। याकौं सर्व धनमेंस्यों घटाए दोय हजार पांचसै वाणवै २५९२ रहै इनकौं गच्छ सोलहका भाग दीए एकसौ वासठि १६ पाए सो आदिविषैं जानना। तैसें इहां जो गच्छका प्रमाण कह्या तामैं एक घटाय वाके आधे करि ताकौं जो चयका प्रमाण कह्या ताकरि गुणें जो प्रमाण होइ ताकौं गच्छकरि गुणे जो प्रमाण होय सो चयधन जानना इस चयधनकौं सर्व धनमेंस्यों घटाए जो प्रमाण रहे ताकौं गच्छके प्रमाणका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितने अध्यवसाय स्थान जघन्य स्थिति बंधकौं कारण हैं बहुरि जैसें आदिविषै एक चय च्यारि मिलाएं दूसरे स्थानक एकसौ छ्यासठि होंइ तैसें इहां जघन्यस्थितिबंधकौं कारण अध्यवसाय स्थाननिका जो प्रमाण कह्या तामैं पूर्वोक्त चयका प्रमाण मिलाए जो प्रमाण होइ तितने अध्यवसाय स्थान जघन्य स्थितिस्यों एक समय बधती दूसरी स्थिति ताका बंधके कारण जानने। यामैं एक चय मिलें जघन्यतैं दोय समय बंधती तीसरी स्थितिके बंधकौं कारण अध्यवसाय स्थान जानने। ऐसें उत्कृष्टस्थितिपर्यंत एक एक चय बधावना। अंक संदृष्टिविषैं जैसें १६२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१६६ १७० १७४ १७८ १८२ १८६ १९० १९४ १९८ २०२ २०६ २१० २१४ २१८ २२२ रचना हैं तैसैं इहां भी जानने। बहुरि जैसैं अंकसंदृष्टिविषै तिर्यक् गच्छका प्रमाण च्यारि है तैसैं इहां तिर्यक् गच्छका प्रमाण पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण जानने। इस तिर्यक् गच्छकौं अनुकृष्टि गच्छभी कहिए है। सो जैसैं अनुकृष्टि गच्छ जो च्यारि ताका भाग ऊर्ध्व रचनाविषैं चयका प्रमाण च्यारि कह्या था ताकौं दीजिए तब एक पाया सो एक अनुकृष्टिविषैं चय जानना। तैसैं इहां तिर्यगगच्छका पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण कह्या ताका भाग पूर्वोक्त चयके प्रमाणकौं दीए जो प्रमाण आवै तितना अनुकृष्टिविषै चय जानना। बहुरि जैसैं अनुकृष्टिका गच्छ च्यारिमैंस्यों एक घटाय ताकौं आधाकरि चयकरि अर गच्छकरि गुणैं छह होइ सो अनुकृष्टिविषैं चय धन जानना। याकौं अनुकृष्टिका सर्वधन एकसौ बासठमैंस्यों घटाय एकसौ छप्पन्न रहे ताकौं अनुकृष्टि गच्छ जो च्यारि ताका भाग दीए गुणतालीस पाए सो तिस प्रथम स्थानकका प्रथम खंड जानना तैसैं इहां अनुकृष्टि गच्छमैंस्यों एक घटाय आधा करि ताकौं अनुकृष्टि गच्छका चयकरि वा गच्छ करि गुणैं जो प्रमाण होइ सो अनुकृष्टीविषैं चयधन जानना। याकौं जघन्य स्थितिबंधकौं कारण अध्यवसायस्थाननिका प्रमाण तिनमैंस्यों घटाए जो प्रमाण रहे ताकौं अनुकृष्टि गच्छका भाग दीए जो प्रमाण होइ सो जघन्य स्थिति बंधकौं कारण अध्यवसाय स्थान तिनका प्रथम खंड जानना। सो इनकौं ईषत् संज्ञा है। बहुरि जैसैं गुणतालीसविषैं अनुकृष्टिका एक चय मिलाए चालीस भया सो दूसरा खंड यामैं एक चय मिलाए इकतालीस भए सो तीसरा खंड तैसैंही प्रथम खंडविषैं अनुकृष्टिका चय मिलाए दूसरा खंड होइ यामैं एक चय मिलाए तीसरा खंड होइ ऐसैं एक घाटि अंतका खंड पर्यंत जेते खंड होंइ तिनकौं मध्यम संज्ञा है बहुरि जैसैं अंतके खंडविषैं बियालीस हो हैं तैसैं इहां एक एक चय मिलावतैं अंतके खंड विषैं जो प्रमाण होइ ताकौं उत्कृष्ट संज्ञा है ऐसैं जघन्य स्थिति संबंधी परिणामनिविषैं खंड कहे। बहुरि जैसैं दूसरे स्थानकि एकसौ छ्यासठि ताके च्यारि खंडनिविषैं चालीस इकतालीस बियालीस तियालीस ऐसा प्रमाण है तैसैं इहां भी जघन्यस्यों एकसमय बंधती दूसरी स्थितिकौं कारण अध्यवसाय तिनके खंडनिविषैं पूर्वोक्त विधानकरि प्रमाण जानना। ऐसैं ही वि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घान करते जैसें अंतके स्थानविषैं दोयसै वाईस प्रमाण होइ तिसके खंडनिका चौवन पचावन छप्पन सत्तावन ५४ ५५ ५६ ५७ प्रमाण होइ। तैसें इहां एक एक ऊर्ध्वचयका बंधावता उत्कृष्ट स्थितिबंधकौं कारण अध्यवसाय स्थानकनिका जो प्रमाण होइ ताके पूर्वोक्त विधानकरि खंड कीए प्रथम खंडकौ ईषत् संक्लेश संज्ञा है मध्यके खंडनिकौं मध्य संक्लेश संज्ञा है। अंतके खंडकौं उत्कृष्ट संक्लेश संज्ञा है सो अधःकरणवत् इहां भी नीचली स्थितिकौं कारण अध्यवसाय तिनकैं ऊपरली स्थितिकौं कारण अध्यवसायनि सहित संख्याकरि वा संक्लेश विशुद्धताकरि समान पना जानना। इस समानपनेहीकौं अनुकृष्टि कहिए है सो यंत्र वा विशेष कथन जैसें अधःकरण विषैं कीया है तैसें इहां भी जान अर्थका निश्चय करना॥ १३७॥ १३८॥ आगैं मूल प्रकृतिनिका जघन्य स्थिति बंधकौं कहैं हैं—

बारस य वेयणीये णामागोदे य अट्ठ य मुहुत्ता।
भिण्णमुहुत्तं तु ठिदी जहण्णयं सेसपंचण्हं॥ १३९॥

द्वादश च वेदनीये नामगोत्रे अष्ट च मुहूर्ताः।
भिन्नमुहूर्तस्तु स्थितिः जघन्या शेषपंचानां॥ १३९॥

जी० प्र०—जघन्यस्थितिबंधो वेदनीये द्वादश मुहूर्ताः, नामगोत्रयोरष्टौ, शेषपंचानां तु पुनः एकैकोऽन्तर्मुहूर्तः॥ १३९॥ अथोत्तरप्रकृतीनां गाथाचतुष्टयेनाह—

सं० च०—जघन्यस्थितिबंध वेदनीयविषैं बारह मुहूर्त है। नाम अर गोत्रविषैं आठ मुहूर्त है। अवशेष पंचकर्मनिका जघन्य स्थिति बंध एक एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण है॥ १३९॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिका जघन्य स्थितिबंध च्यारि गाथानिकरि कहैं हैं—

लोहस्स सुहुमसत्तरसाणं ओघं दुगेकदलमासं। १४०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोहतिये पुरिसस्स य अट्ठ य वस्सा जहण्णठिदी ॥१४०॥

लोभस्य सूक्ष्मसप्तदशानामोघः द्विकैकदलमासः ।
क्रोधत्रये पुरुषस्य च अष्ट च वर्षाणि जघन्यस्थितिः ॥ १४० ॥

जी॰ प्र॰—लोभस्य सूक्ष्मसांपरायबंधसप्तदशानां च जघन्यस्थितिबंधः मूलप्रकृतिवद्भवति, क्रोधस्य द्वौ मासौ, मानस्य एकमासः, मायाया अर्धमासः, पुंवेदस्य अष्टवर्षाणि ॥ १४० ॥

स चं॰—लोभ अर सूक्ष्म सांपराय गुणस्थानविषैं जिनिका बंध पाइए ऐसी सतरह प्रकृति तिनका जघन्य स्थिति बंध मूल प्रकृतिवत् जानना । तहां यशस्कीर्ति अर उच्चगोत्रका तौ आठ आठ मुहूर्त साता वेदनीयका बारह मुहूर्त अवशेष पंच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पंच अंतराय सूक्ष्म लोभ इनिका एक एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण जघन्य स्थितिबंध जानना । बहुरि क्रोधका दोय मास मानका एक मास मायाका आधा मास पुरुष वेदका आठ वर्ष प्रमाण जघन्य स्थिति बंध है ॥ १४० ॥

तित्थाहाराणंतोकोडाकोडी जहण्णठिदिबंधो ।
खवगे सगसगबंधच्छेदणकाले हवे णियमा ॥ १४१ ॥

तीर्थाहाराणामंतःकोटीकोटिः जघन्यस्थितिबंधः ।
क्षपके स्वकस्वकबंधच्छेदनकाले भवेन्नियमात् ॥ १४१ ॥

जी॰ प्र॰—तीर्थंकराहारकद्विकयोरंतःकोटीकोटिसागरोपमाणि । अयं जघन्यस्थितिबंधः सर्वोऽपि क्षपकेषु स्वस्वबंधव्युच्छित्तिकाले एव नियमाद् भवति ॥ १४१ ॥

स चं॰—तीर्थंकर आहारक द्विक इन तीन प्रकृतिनिका जघन्य स्थितिबंध अंतः कोटाकोटी प्रमाण है । अंतः कोटाकोटीके भेद घने हैं तातैं जघन्य भी इतना ही कह्या । बहुरि यहु कह्या जो जघन्य स्थितिबंध सो सर्व क्षपक श्रेणी वालेकैं अपनी अपनी बंधकी व्युच्छित्तिका जो समय तिसविषैं हो है नियमकरि ॥ १४१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिण्णमुहुत्तो णरतिरियाऊणं वासदससहस्साणि ।
सुरणिरयआउगाणं जहण्णओ होदि ठिदिबंधो ॥१४२॥

भिन्नमुहूर्तो नरतिर्यगायुषोर्वर्षदशसहस्राणि ।
सुरनिरयायुषोः जघन्यको भवति स्थितिबंधः ॥ १४२ ॥

जी० प्र०—नरतिर्यगायुषोर्जघन्यस्थितिबंधोऽन्तर्मुहूर्तो भवति, सुरनारकायुषोः दशसहस्रवर्षा वा ॥ १४२ ॥

स चं०—मनुष्यायु तिर्यंचायुका जघन्य स्थितिबंध अंतर्मुहूर्त प्रमाण है देवायु नरकायुका दश हजार वर्ष प्रमाण है ॥

सेसाणं पज्जत्तो बादरएइंदियो विसुद्धो य ।
बंधादि सव्वजहण्णं सगसगउक्कस्सपडिभागे ॥१४३॥

शेषाणां पर्याप्तो बादरैकेंद्रियो विशुद्धश्च ।
बध्नाति सर्वजघन्यं स्वकस्वकोत्कृष्टप्रतिभागे ॥ १४३ ॥

जी० प्र०—उक्ताभ्यः २९ शेषप्रकृतीनां ९१ मध्ये वैक्रियिकषट्कमिथ्यात्वरहितानां ८४ जघन्यस्थितिं बादरैकेंद्रियपर्याप्तः तद्योग्यविशुद्ध एव बध्नाति स्वस्वोत्कृष्टप्रतिभागेन त्रैराशिकविधानेनेत्यर्थः ॥ १४३ ॥ तद्यथा—

स चं०—गुणतीस प्रकृतिनिका तो जघन्य स्थितिबंध ऊपर कह्या अवशेष इक्याणवैका रह्या तिनविषैं वैक्रियिक षट्क अर एक मिथ्यात्व इन सात विना चउरासी प्रकृतिनिका जघन्यस्थितिबंध बादर एकेंद्री पर्याप्त यथा योग्य विशुद्धताका धारक जीव करै है सो अपनी २ उत्कृष्ट स्थितिका प्रतिभाग करि त्रैराशिक विधानतैं जो जो प्रमाण होइ सो सो जघन्यस्थितिका प्रमाण जानना ॥ १४३ ॥ सोई कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एयं पणकदि पण्णं सयं सहस्सं च मिच्छवरबंधो।
इगिविगलाणं अवरं पल्लासंखूणसंखूणं ॥ १४४ ॥

एकं पंचकृतिः पंचाशत् शतं सहस्रं च मिथ्यात्ववरबंधः।
एकविकलानामवरः पल्यासंख्योनसंख्योनं ॥ १४४ ॥

जी० प्र०—एकेंद्रिया मिथ्यात्वोत्कृष्टस्थितिमेकसागरोपमां बध्नंति, द्वींद्रियाः पंचविंशतिसागरोपमाणि, त्रींद्रियाः पंचाशत्सागरोपमाणि, चतुरिंद्रियाः शतसागरोपमाणि, असंज्ञिनः सहस्रसागरोपमाणि, संज्ञिनः पर्याप्ता एव सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणि। तज्जघन्यस्तु एकेंद्रियद्वींद्रियादीनां स्वस्वोत्कृष्टात्पल्यासंख्येयपल्यसंख्येयभागोनक्रमो भवति ॥ १४४ ॥ तत्संज्ञ्युत्कृष्टेन एकेंद्रियादीनामुत्कृष्टजघन्यावाह—

स चं०—मिथ्यात्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट स्थिति एकेंद्री जीव एक सागर प्रमाण बांधै है। वेंद्री पंचकृति कहिए पचीस सागर प्रमाण बांधै है। तेंद्री जीव पचीस सागर प्रमाण बांधै है। चौंद्री जीव सौ सागर प्रमाण बांधै है। असंज्ञी पंचेंद्री जीव एक हजार सागर प्रमाण बांधै है। बहुरि संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त जीव ही सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण बांधै हैं। बहुरि मिथ्यात्वकी जघन्य स्थिति एकेंद्री जीव तौ अपनी उत्कृष्ट स्थितितैं पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण घाटि बांधै है। अर वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्री अपनी अपनी उत्कृष्ट स्थितितैं पल्यके संख्यातवे भाग प्रमाण बांधै हैं ॥ १४४ ॥ सो संज्ञी पंचेंद्रीकै उत्कृष्ट स्थितिबंध है तीहिकी अपेक्षा करि एकेंद्रियादिक जीवनिकैं उत्कृष्ट वा जघन्य स्थिति बंधका प्रमाण कहैं हैं—

		एकें	द्वीं	त्रीं	चतुः	असं	संज्ञि
(१)	उ	सा १	सा २५	सा ५०	सा १००	सा १०००	सा ७० को २
	ज	सा १) १ ꣿ/प a	सा २५) १ ꣿ/प ᪁।४	सा ५०) १ ꣿ/प ᪁।३	सा १००) १ ꣿ/प ᪁।२	सा १०००) १ ꣿ/प ᪁	सा अंतः को २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जदि सत्तरिस्स एत्तियमेत्तं किं होदि तीसियादीणं।
इदि संपाते सेसाणं इगिविगलेसु उभयठिदी ॥ १४५ ॥

यदि सप्ततेः एतावन्मात्रं किं भवति त्रिंशदादीनां।
इति संपाते शेषाणामेकाविकलेषूभयास्थितिः ॥ १४५ ॥

जी० प्र०—सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमोत्कृष्टस्थितिकमिथ्यात्वस्य यद्येकसागरोपममात्रं बध्नाति तदा तीसियादीनां किं भवति ? इति लब्धः एकेंद्रियस्य उत्कृष्टस्थितिबंधः चालीसियानां षोडशकषायाणां एकसागरोपमचतुःसप्तभागः सा ४/७। अनेन त्रैराशिकक्रमेण तीसियानामसातवेदनीयैकान्नविंशतिघातिनां एकसागरोपमत्रिसप्तभागः सा ३/७ वीसियानां हुंडासंप्राप्तसृपाटिकाऽरतिरतिशोकषंढवेदतिर्यग्द्विकभयद्विकतैजसद्विकौदारिकद्विकातपद्विकनीचैर्गोत्रत्रसचतुष्कवर्णचतुष्कागुरुलघूपघातपरघातोच्छ्वासैकेंद्रियपंचेंद्रियस्थावरनिर्माणासद्गमनास्थिरषट्कानां २९ एकसागरोपमद्विसप्तभागो भवति। सा २/७ पुनः अनेन संपातत्रैराशिकक्रमेण शेषाणां सागरपंचदशकोटीकोटिस्थितिसातस्त्रीवेदमनुष्ययुग्मानां सागराष्टादशकोटीकोटिस्थितिवामनकीलितविकलत्रयसूक्ष्मत्रयाणां सागरषोडशकोटीकोटिस्थितिकुब्जार्धनाराचयोः सागरचतुर्दशकोटीकोटिस्थितिस्वातिनाराचयोः सागरद्वादशकोटीकोटिस्थितिन्यग्रोधवज्रनाराचयोः सागरदशकोटीस्थितिसमचतुरस्रवज्रर्षभनाराचहास्यरत्युच्चैर्गोत्रपुंवेदस्थिरषट्कसद्गमनानां च उत्कृष्टस्थितिबंधं एकेंद्रियस्य साधयेत्। एवं पंचविंशतिं पंचाशतं सहस्रं सागरोपमाणि चतुरः फलराशीन् कृत्वा चालीसियादीनि पृथक् पृथक् इच्छाराशीन् कृत्वा प्रमाणराशिं शक्तनमेव

(१)

		एकें	द्वीं	त्रीं	चतु	असं
उ	चाली	सा ४/७	सा २५ ४/७	सा ५० ४/७	सा १०० ४/७	सा १००० ४/७
उ	तीसि	सा ३/७	सा २५ ३/७	सा ५० ३/७	सा १०० ३/७	सा १००० ३/७
उ	वीसि	सा २/७	सा २५ २/७	सा ५० २/७	सा १०० २/७	सा १००० २/७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृत्वा लब्धानि द्वींद्रियादीनां चालीसियादिगतोत्कृष्टस्थितिबंधप्रमाणानि भवंति । एवं जघन्यस्थितिबंधमप्येकेंद्रियादीनां साधयेत् ॥ १४५ ॥
तत्र संभवद्विशेषमाह—

स चं०—सत्तर कोडा कोडी सागर उत्कृष्ट स्थितिका धारी मिथ्यात्वनामा कर्म जो एकेंद्री जीवकैं एक सागर प्रमाण स्थिति लीएं बंधे तौ तीस इत्यादिक कोडा कोडी सागरकी स्थितिके धारी कर्म एकेंद्री जीवकैं कितने प्रमाण स्थिति लीएं बंधे ऐसैं त्रैराशिक करना। इहां प्रमाण राशि सत्तरि कोडा कोडी सागर फल राशि एक कोडा कोडि सागर इच्छाराशि विवक्षित कर्मकी तीस वा चालीस वा वीस इत्यादि कोडाकोडी सागर प्रमाण जितनी उत्कृष्ट स्थिति होइ सो जानना। तहां फलराशिकौं इच्छा राशिकरि गुणें प्रमाणका भाग दीए जो जो प्रमाण आवै तितनी तितनी उत्कृष्ट स्थिति एकेंद्री जीवकैं बंधै है। तहां सोलह कषायनिकी उत्कृष्ट स्थिति चालीस कोडाकोडी सागरकी है सो याकौं इच्छाराशिकरि पूर्वोक्त प्रकार कीजिये तब सोलह कषायनिकी एकेंद्री जीवकैं एक सागरका सात भाग कीजिए तिनमें च्यारि भाग प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति बंधै है। बहुरि तैसैं ही तीस कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थितिके धारक असातावेदनीय वा ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायकी उगणीस प्रकृति इनकी एकेंद्री जीवकै उत्कृष्ट स्थिति एक सागरका सात भाग कीजए तिनमें तीन भाग प्रमाण बंधै है। बहुरि ऐसैं ही जिनकी संज्ञी पंचेंद्रीकै वीस कोडाकोडी सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति कही थी तिनकी एक सागरका सात भागमें दोय भाग प्रमाण बंधै है। बहुरि पंद्रह कोडाकोडी सागर प्रमाण जिनकी उत्कृष्ट स्थिति कही थी तिनकी एक सागरका सत्तरि भाग में पंद्रह भाग प्रमाण बंधै हैं। जिनकी अठारह कोडाकोडी प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति कही थी तिनकी एक सागरका सत्तरि भागमें अठारह भाग प्रमाण बंधै हैं। ऐसैंही सोलह चौदह वारह दश कोडाकोडी सागर प्रमाण जिनकी स्थिति कही थी तिनकी एकेंद्री जीवकै एक सागरके सत्तरि भागमें सोलह चौदह वारह दश भाग प्रमाण क्रमतैं उत्कृष्ट स्थिति बंध जानना। बहुरि वेंद्री जीवकैं सत्तरि कोडाकोडी सागर उत्कृष्ट स्थितिका धारी मिथ्यात्वकी पचीस सागर उत्कृष्ट स्थिति बंध भया तौ तीस इत्यादिक कोडाकोडी सागर स्थितिके धारी कर्म ते वेंद्री जीवकैं कितने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाण स्थिति बंध लीए बंधै ऐसें त्रैराशिक करिए तहां प्रमाण राशि सत्तरि कोडाकोडी सागर फलराशि पचीस सागर प्रमाण इच्छाराशि विवक्षित कर्मकी उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण सो फलकरि इच्छाकौं गुणं प्रमाणका भाग दीएं जो जो प्रमाण आवै तितना तितना उत्कृष्ट स्थिति वेंद्री जीवकैं बंधै है सो जिनकी चालीस कोडाकोडी सागर की स्थि ति थी तिनकौं सौ सागरका सातवां भाग प्रमाण उत्कृष्ट स्थिति बंधै हैं। जिनकी तीस कोडाकोडी सागर की स्थिति थी तिनकी पिचहत्तरि सागरका सातवां भाग प्रमाण बंधै है। ऐसें ही सर्व कर्मनिकी एकेंद्रीतैं पचीस गुणी स्थिति वेंद्रीकी जाननी। बहुरि तेंद्रीकैं तैसैंही प्रमाण राशि अर इच्छाराशि तौ पूर्वोक्त प्रकार अर याके मिथ्यात्वकी स्थिति पचास सागरकी उत्कृष्ट बंधै है तातैं फलराशि पचास सागर प्रमाण कीएं जो जो प्रमाण आवै तितनी तितनी उत्कृष्ट स्थिति बंधै है। सो फलराशि पूर्व फलराशितैं दूणी है तातैं वेंद्रीकैं स्थिति बंधतै तेंद्रीके स्थिति बंध सर्व कर्मनिका दूणा दूणा जानना। बहुरि चौंद्रीकैं प्रमाणराशि अर इच्छाराशि तौ पूर्वोक्तप्रकार अर याकैं मिथ्यात्वकी स्थिति सौ सागर प्रमाण बंधै है तातैं फलराशि सौ सागर प्रमाण सो इहां फलराशि पूर्वोक्त फलराशितैं दूणी है तातैं तेंद्रीके स्थितिबंधतैं चौंद्रीकैं स्थितिबंध सर्व कर्मनिका दूणा दूणा जानना। बहुरि असंज्ञी पंचेंद्रीकैं प्रमाणराशि अर इच्छाराशि तौ पूर्वोक्त प्रमाण ही अर याकैं मिथ्यात्वकी हजार सागर प्रमाण बंधै है तातैं फलराशि हजार सागर, सो इहां फलराशि पूर्व फलराशितैं दशगुणी है तातैं चौंद्रीकैं स्थितिबंधतैं असंज्ञी पंचेंद्रीकैं स्थितिबंध सर्व कर्मनिका दश दशगुणा जानना। ऐसैं ही जघन्य स्थितिबंध भी एकेंद्रियादिक जीवनिकैं त्रैराशिक विधानकरि साधना ॥ १४५ ॥ तहां जघन्यास्थिति बंधविषैं किछू विशेष संभवै है सो कहैं हैं—

सण्णि असण्णिचउक्के एगे अंतोमुहुत्तमाबाहा।
जेट्ठे संखेज्जगुणा आवलिसंखं असंखभागहियं ॥१४६॥

संज्ञिनि असंज्ञिचतुष्के एके अंतर्मुहूर्त आबाधा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्येष्ठे संख्येयगुणा आवलिसंख्यमसंख्यभागाधिकं ॥ १४६ ॥

जी० प्र०—संज्ञिजीवे जघन्याबाधांऽन्तर्मुहूर्ता २ ७ ७ तज्जघन्यस्थितेरंतःकोटीकोटिसागरोपममात्रत्वेन तदाबाधाया अग्रे तत्प्रमाणप्ररूपणात् । असंज्ञिजीवे चतुरिंद्रिये त्रींद्रिये द्वींद्रिये एकेंद्रियेऽपि जघन्याबाधांतर्मुहूर्ता । एयं पणकदिपयरणं सयं सहस्समिति स्वस्वोत्कृष्टगुणाकारगुणितत्वे संज्ञि-जघन्याबाधातः संख्यातगुणहीनक्रमत्वे च तदालापस्यात्यजनात् । उत्कृष्टाबाधा तु स्वस्वजघन्यतः संज्ञिजीवे संख्यातगुणा । असंज्ञिचतुष्के संख्यात-गुणहीनक्रमा आवलिसंख्येयभागाधिका । एकेंद्रिये आवल्यसंख्येयभागाधिका च भवंति ।

आबाधाविकल्पास्तु एकेंद्रिये—आदी २ ७ अंते $\frac{२}{a}$ सुद्धे $\frac{२}{a}$ वड्ढि १ हिदे रूवसंजुदे $\frac{१-}{२ \; a}$ ठाणा । एवं द्वीद्रियादावप्यानेतव्याः—

२ ७

द्वीं	त्रींद्रिय	चतुरिंद्रिय	असं	संज्ञि
१–	१–	१–	१–	१–
२	२	२	२	१ ⌢
७ । ४	७ । ३	७ । २	७ । १	२ ७ ७ ४

॥ १४६ ॥ अथैतत्सर्वं मनसि धृत्वा जघन्यस्थितिबंधसाधनकरणसूत्रमाह—

स० चं०—संज्ञी पंचेंद्री जीवनिविषैं जघन्य आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है जातैं संज्ञी पंचेंद्री जीवकैं जघन्य स्थितिबंध कर्मनिका अंतःकोटाकोटी सागर प्रमाण है सो इतनी स्थितिकी आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही आगैं कहैंगे । कर्मबंध भए पीछैं यावत् काल उदयरूप वा उदीरणारूप न प्रवर्तै ताकौं आबाधा कहिए । बहुरि एकेंद्रि-यादिककी स्थितितैं बेंद्रियादिककी स्थिति संख्यात गुणी है तातैं इस संज्ञी पंचेंद्री जीवकी आबाधातैं असंज्ञी पंचेंद्री

(१)	संज्ञि	अ	चतु	त्रीं	द्वीं	ए
	२ ७ ७ । ४	२ ७ २ ७ १०००	२ ७ ७ २ ७ । १००	२ ७ ७ ७ २ ७ ५०	२ ७ ७ ७ ७ २ ७ २५	२ a २ ७ १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौंद्री तेंद्री वेंद्री एकेंद्री जीवनिकैं आबाधा संख्यात गुणी घाटि संख्यातगुणी घाटि अनुक्रमतैं जानना। परंतु सबका प्रमाण अंतर्मुहूर्त ही कहिए जातैं अंतर्मुहूर्तके भेद घने हैं। जातैं एकेंद्रीकी जघन्य आबाधातैं वेंद्रियादिककी जघन्य आबाधा क्रमतैं पचीस पचास सौ हजार गुणी है जातैं उलटा क्रम लीएं संख्यातगुणी घाटि जाननी। बहुरि उत्कृष्ट आबाधा जघन्य आबाधाके प्रमाणतैं संज्ञी जीवविषैं तौ संख्यात गुणी है। असंज्ञी पंचेंद्री चौंद्री तेंद्री वेंद्रीविषैं अपनी अपनी जघन्य आबाधातैं आवलीका संख्यातवां भाग प्रमाण अधिक उत्कृष्ट आबाधा है। सो यहु उत्कृष्ट आबाधा भी क्रमतैं संख्यातगुणी घाटि संख्यातगुणी घाटि जाननी। बहुरि एकेंद्रिय जीवविषैं अपनी जघन्य आबाधातैं आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण अधिक उत्कृष्ट आबाधा जाननी। तहां एकेंद्रिय जीवकैं उत्कृष्ट आबाधाका प्रमाणमेंस्यों जघन्य आबाधाका प्रमाण घटाएं जो प्रमाण रहै तामैं एक और मिलाएं जो प्रमाण होइ तितने आबाधाके भेद एकेंद्री जीवके जानने। ऐसैं ही वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी संज्ञीकैं अपनी अपनी उत्कृष्ट आबाधाके प्रमाणमेंस्यों अपनी अपनी जघन्य आबाधाका प्रमाण घटाएं तामैं एक और मिलाएं आबाधाके भेदनिका प्रमाण हो है। इहां कारण सूत्र—

'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा' आदिकौं अंतमैंस्यों घटाइ वृद्धिका भाग देइ एक और मिलाएं स्थानकौंका प्रमाण होइ। सो इहां आदि जघन्य आबाधा ताकौं अंत जो उत्कृष्ट आबाधा तामेंस्यों घटाइ बहुरि इहां जघन्यतैं एक एक समय बधतैं उत्कृष्ट भेद हो है तातैं वृद्धिका प्रमाण एक ताका भाग दीएं तितने ही रहैं तिनमैं एक मिलाएं आबाधाके भेदरूप स्थाननिका प्रमाण हो है॥ १४६॥ ऐसैं सर्व मनमें धारि जघन्य स्थितिबंधका साधनभूत करण सूत्र कहैं हैं—

जेट्ठाबाहोवट्टियजेट्ठं आवाहकंडयं तेण।
आबाहवियप्पहदेणेगूणेणूणजेट्ठमवरठिदी॥ १४७॥ १४८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्येष्ठाबाधोद्वर्तितज्येष्ठमाबाधाकांडकं तेन ।
आबाधाविकल्पहतेन एकोनेन ऊनज्येष्ठमवरास्थितिः ॥ १४७ ॥

जी० प्र०—एकेंद्रियादीनां स्वस्वोत्कृष्टाबाधया भक्तस्वस्वोत्कृष्टस्थितिः आबाधाकांडकप्रमाणं भवति तेन कांडकेन आबाधाविकल्पैर्गुणितेन एकरूपोनेन ऊना उत्कृष्टस्थितिः जघन्यस्थितिर्भवति । तथाहि—

एकेंद्रियस्य मिथ्यात्वोत्कृष्टाबाधेयं २ ३ २ १ आवलेरावलिं प्रदर्श्य रूपासंख्येयभागेन संख्यातगुणकारं साधिकं २ १ कृत्वा अनेन तस्यैकसागर-

मिथ्यात्वोत्कृष्टस्थितिः संख्यातपल्यमात्री भक्ता सती प १ १ । २ १ आबाधाकांडकं भवति । तच्च तस्याबाधाविकल्पैः १– २ ३ गुणयित्वा प १ १ । २ १ । १– २ ३ अ-

पवर्त्य प ३ रूपेण ऊनयित्वा उत्कृष्टस्थितावपनीतं तदा तस्य मिथ्यात्वजघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा, १ ^ प ३ इमां स्थितिं उत्कृष्टस्थितावपनीय शेषे १ ^ प ३ १ ^ एकेन भक्त्वा प ३ १ रूपाधिकीकृते

तस्य मिथ्यात्वसर्वस्थितिविकल्पा भवंति प ३ । द्वींद्रियस्य मिथ्यात्वोत्कृष्टाबाधा साधिकपंचविंशत्यंतर्मुहूर्ता २ १ १ १ १ । २ १ । २५ अपवर्त्य २ १ २५ तया भक्ता उत्कृष्ट-

स्थितिः आबाधाकांडकं भवति सा २५ । २ १ २५ तेन अपवर्तितेन सा २ १ आबाधाविकल्प १– २ १ १ १ १ गुणितेन सा १– २ २ १ १ ४ अपवर्तितेन—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प / ७७७७ रूपोनेन प १ॱ / ७७७७ उत्कृष्टस्थितिः मिथ्यात्वजघन्यस्थितिः सा २५ (प १ॱ / ७७७७) भवति। तां च उत्कृष्टस्थितावपनीय शेषे प १ॱ / ७७७७

रूपाधिकीकृते तस्य मिथ्यात्वसर्वस्थितिविकल्पा भवंति प / ७७७७ त्रींद्रियस्य मिथ्यात्वोत्कृष्टाबाधा २ / ७७७ / २७५०

संख्यातत्रितयभक्तावल्यधिक-पंचाशदंतर्मुहूर्ता। तया भक्ता उत्कृष्टस्थितिः आबाधाकांडकं भवति सा / २७५० तेन अपवर्तितेन सा / २७ आबाधाविकल्पगुणितेन सा २ १ / २७७७७

अपवर्तितेन प / ७७७ रूपोनेन प १ॱ / ७७७ ऊना उत्कृष्टस्थितिः तस्य त्रींद्रियस्य मिथ्यात्वजघन्यस्थितिर्भवति सा ५० (प १ॱ / ७७७) तां च उत्कृष्टस्थितौ

अपनीय रूपे निक्षिप्ते मिथ्यात्वसर्वस्थितिबंधविकल्पा भवंति ७७७। चतुरिंद्रियस्य मिथ्यात्वोत्कृष्टाबाधया २ / ७७ / २७१००। १-

संख्यातद्वयभक्तावल्यधिक-शतांतर्मुहूर्तया भक्ता उत्कृष्टस्थितिः आबाधाकांडकं भवति सा / २७१०० तेन अपवर्तितेन सा / २७ आबाधाविकल्पगुणितेन २ / २७।७७ अपवर्त्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

प रूपोनेनोत्कृष्टस्थितिस्तस्य मिथ्यात्वस्य जघन्यस्थितिर्भवति सा १०० (१ ^ / प / ७ ७) इमामुत्कृष्टस्थितावपनीय रूपे निक्षिप्ते मिथ्यात्वसर्वस्थितिविकल्पा भ-
७ ७

वंति प असंज्ञिनो मिथ्यात्वोत्कृष्टाबाधया २ / ७ । / २ ७ । १००० आवलिसंख्येयभागाधिकसहस्रांतर्मुहूर्तैर्भक्ता उत्कृष्टस्थितिः आबाधाकांडकं स्यात्—
७ ७

सा १००० / । / २ ७ १००० तेन अपवर्तितेन सा । / २ ७ आबाधाविकल्पगुणितेन सा १— / २ / । / २ ७ । ७ अपवर्तितेन प / ७ रूपोनोनोत्कृष्टस्थितिः तस्य मिथ्यात्वस्य जघन्यस्थितिर्भ-

वति सा १००० (१ ^ / प / ७) तां च उत्कृष्टस्थितौ सा १००० न्यूनयित्वा रूपे निक्षिप्ते मिथ्यात्वसर्वस्थितिविकल्पा भवंति प / ७ । इयमर्थसंदृष्टिः सुव्यक्तापि

पुनरंकसंदृष्ट्या प्रदर्श्यते—

ज्येष्ठा स्थितिः चतुःषष्टिसमया रूपोनक्रमेण मध्यमविकल्पानतीत्य जघन्या स्थितिः पंचचत्वारिंशत्समया । ज्येष्ठाबाधा षोडशसमया तया भक्तज्ये-ष्ठस्थितिः ६४ / १६ आबाधाकांडकं भवति । ४ । एतावत्सु स्थितिविकल्पेषु एतादृशी आबाधेत्यर्थः । तेन आबाधाचतुःषष्टितः एकषष्ट्यंतं षोडशषोडशसमयैव । षष्टितः सप्तपंचाशदंतं पंचदश पंचदशसमयैव । षट्पंचाशतः त्रिपंचाशदंतं चतुर्दश चतुर्दशसमयैव । द्वापंचाशतः एकान्नपंचाशदंतं त्रयोदशत्रयोदशसमयैव ।

१—६४	६३	६२	६१	६०	५९	५८	५७	५६	५५	५४	५३.	५२	५१	५०	४९	४८	४७	४६	४५
४८	४७	४६	४५	४५	४४	४३	४२	४:	४१	४०	३९	३९	३८	३७	३६	३६	३५	३:	३३
१६	१६	१६	१६	१५	१५	१५	१५	१४	१४	१४	१४	१३	१३	१३	१३	१	१२	१२	:२

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अष्टचत्वारिंशत्तः।पंचचत्वारिंशदंतं द्वादशद्वादशसमयैव। तच्च कांडकं ४। आदी १२ अंते १६ सुद्धे ४ वड्ढिहिदे ४/१ रूवसंजुदे १-इत्यानीताबाधाविकल्पैर्गुणितं सर्वस्थितिविकल्पप्रमाणं भवति २०। तत्र प्रथमे हानिर्वा वृद्धिर्वा न इत्येकं त्यक्त्वा शेषे १९ उत्कृष्टस्थितावपनीते जघन्यस्थितिः ४५ वा जघन्यस्थितौ युते उत्कृष्टस्थितिः ६४ भवति। एवमेकेंद्रियादीनां सर्वप्रकृतीनां जघन्यस्थितिबंधं साधयेत्। इदानीं त्रैराशिकैः कृत्वा साध्यते तद्यथा—

सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमस्थितिकमिथ्यात्वस्य यद्येकेंद्रियः जघन्यस्थितिबंधं रूपोनपल्यासंख्यातैकभागोनसागरोपमात्रं बध्नाति तदा चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितिकानां किमिति? प्र–स ७० को २। फ–ज। सा
१ ᐱ)
प
a
इ–सा ४० को २। लब्धं सा १। ४ तस्य चालीसि-
१ ᐱ) ७
प
a

यानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति। तथा प्र ७० को २। फ ज सा १
१ ᐱ)
प
a
इ सा ३० को २ लब्धं तस्य तीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति

सा १ ३ पुनस्तथा प्र–सा ७० को २। फ ज सा १
१ ᐱ) ७
प
a
इ सा २० को २ लब्धं तस्य वीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा १ २ पु-
१ ᐱ) ७
प
a

नस्तथा प्र–सा ७० को २। फ सा २५
१ ᐱ)
प
वृ ४
इ–सा ४० को २ लब्धं द्वींद्रियस्य चालीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति। सा २५ ४ पुन-
१ ᐱ) ७
प
वृ। ४

स्तथा प्र–सा ७० को २। फ–ज सा २५
१ ᐱ)
प
वृ। ४
इ–सा ३० को २ लब्धं तस्य तीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा २५ ३ पुनस्तथा
१ ᐱ) ७
प
वृ। ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प–सा ७० को २ फ ज सा २५ इ सा २० को २ लब्धं तस्य वीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा २५ २ पुनस्तथा प–सा ७० को २ । फ ज–
१ ≏)   १ ≏) ७
प   प
ृ । ४   ृ । ४

सा ५० इ सा ४० को २ लब्धं त्रींद्रियस्य चालीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा ५० ४ पुनस्तथा प–सा ७० को २ । फ ज–
१ ≏)   १ ≏) ७
प   प
ृ । ३   ृ । ३

सा ५० इ सा ३० को २ लब्धं त्रींद्रियस्य तीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा ५० ३ पुनस्तथा प–सा ७० को २ फ–ज–
१ ≏)   १ ≏) ७
प   प
ृ । ३   ृ । ३

सा ५० इ सा २० को २ लब्धं तस्य वीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा ५० २ पुनस्तथा प-सा ७० को २ । फ-ज स १००
१ ≏)   १ ≏) ७   १ ≏)
प   प   प
ृ । ३   ृ । ३   ृ २

इ सा ४० को २ लब्धं चतुरिंद्रियस्य चालीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा १०० ४ पुनस्तथा प सा ७० को २ फ ज सा १००
१ ≏) ७   १ ≏)
प   प
ृ । २   ृ २

इ–सा ३० को २ लब्धं तस्य तीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति । सा १०० ३ पुनस्तथा प–सा ७० को २ । फ–ज सा १०० इ सा
१ ≏) ७   १ ≏)
प   प
ृ । २   ृ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२०को२लब्धं तस्य वीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा १००) २ पुनस्तथा प्र सा ७० को २। फ–ज सा १०००) इ सा ४० को २
१ ^ ७ १ ^
प प
७। २ ७

लब्धं असंज्ञिनः चालीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा १०००) ४ पुनस्तथा प्र–सा ७० को २। फ–ज सा १०००) इ सा ३०
१ ^ ७ १ ^
प प
७ ७

को २ लब्धं असंज्ञिनः तीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा १०००) ३ पुनस्तथा प्र-सा ७० को २। फ-ज सा १०००) इ सा २०
१ ^ ७ १ ^
प प
७ ७

लब्धं असंज्ञिनः वीसियानां जघन्यस्थितिबंधप्रमाणं भवति सा १०००) २ एवं शेषाष्टादशषोडशपंचदशचतुर्दशद्वादशदशकोटीसागरोपमस्थितिकानां
१ ^ ७
प
७

अपि साधयेत् ॥ १४७ ॥ उक्तैकेंद्रियादिस्थितिविकल्पान् संस्थाप्य—

एकें	द्वीं	त्रीं	चतु	असं	संज्ञि
प a	प ७। ४	प ७। ३	प ७। २	प ७। १	१– १ ^ प ७ ७

तेषु बादरसूक्ष्मैकद्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञिनां पर्याप्तापर्याप्तभेदेन चतुर्दशानां उत्कृष्टजघन्यस्थितिबंधौ विभज्य दर्शयति—

स॰ चं॰—एकेंद्रियादिक जीव तिनकैं अपनी अपनी उत्कृष्ट आबाधाका जो प्रमाण कह्या ताका भाग अपनी अपनी कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थितिकौं दीए जो जो प्रमाण आवै सो सो आबाधा कांडकका प्रमाण जानना। इतने इतने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थिति भेदनिविषैं एकरूप आबाधाका प्रमाण पाइए है। तिस अपने अपने आबाधा कांडकके प्रमाणकरि पूर्वैं कह्या जो अपना अपना आबाधाके भेदनिका प्रमाण ताकौं गुणै जो जो प्रमाण होइ तामैं स्यों एक एक घटाए जो जो प्रमाण रहै तितना तितना अपनी अपनी उत्कृष्टस्थितिमेंस्यों घटाएं जो जो प्रमाण रहै तितना तितना जघन्य स्थिति बंधका प्रमाण जानना। सोई दिखाइए है–

एकेंद्री जीवकें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधाका प्रमाण आवलीका असंख्यातवां भागकरि अधिक अंतर्मुहूर्त प्रमाण कह्या ताकाभाग मिथ्यात्वकी उत्कृष्टस्थिति एक सागर प्रमाण ताकौं दीजिए जो प्रमाण आवै तितना आबाधा कांडकका प्रमाण जानना। इस आबाधाकांडकके प्रमाणकौं पूर्वैं जो एकेंद्रियके आबाधाके भेदनिका प्रमाण कह्या था तींहिकरि गुणिए जो प्रमाण होइ तामेंस्यों एक घटाएं जो प्रमाण रहै तितनी मिथ्यात्वकी उत्कृष्टस्थिति एक सागर प्रमाण तामेंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै सो एकेंद्रीजीवकें मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। सो एक सागर प्रमाण उत्कृष्ट स्थितिमेंस्यों इस जघन्यस्थितिका प्रमाण घटाय अवशेष रहै ताकौं एकका भाग दीए तेताही रह्या। याकौं एक अधिक कीए एकेंद्री जीवकें मिथ्यात्वकी स्थितिके भेदनिका प्रमाण हो है। जघन्यतैं लगाइ एक एक समय बंधता उत्कृष्ट पर्यंत एकेंद्रीके मिथ्यात्वकी स्थितिके भेद इतने जानने। बहुरि ऐसैं ही बेंद्री जीवकें मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधाका प्रमाण च्यारि वार संख्यातका भाग जाकौं दीजिये ऐसी आवली मात्रकरि अधिक पचीस अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। यद्यपि यहु आबाधा एक अंतर्मुहूर्त प्रमाण ही है तथापि एकेंद्री जीवकें आबाधाका जैसा अंतर्मुहूर्त है तैसा पचीस अंतर्मुहूर्त जानना जातैं एकेंद्रीतैं बेंद्रीकैं पचीसगुणा कर्मनिका स्थिति बंध है सो इहां एकेंद्रीकी अपेक्षा पचीस अंतर्मुहूर्त कहे हैं ऐसैं ही आगैं भी जानना। सो इस आबाधा कालका भाग बेंद्रीकैं उत्कृष्ट मिथ्यात्वकी स्थिति पचीस सागर प्रमाण है ताकौं दीए आबाधा कांडकका प्रमाण होइ। याकरि बेंद्री संबंधी आबाधाके भेदनिका प्रमाणकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तामैं एक घटाइ अवशेष रहै तिनकौं उत्कृष्ट पचीस सागर प्रमाण स्थितिमेंस्यों घटाए जो अवशेष रहै तितना बेंद्रीकैं मिथ्यात्वका जघन्य स्थितिबंध जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस जघन्यकौं उत्कृष्टमेंस्यौं घटाइ अवशेषकौं एक अधिक कीए वेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी सर्व स्थितिके भेदनिका प्रमाण हो है। बहुरि तेंद्री जीवकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधा तीन वार संख्यातका भाग जाकौं दीजिए ऐसी आवलीकरि अधिक पचास अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। ताका उत्कृष्ट मिथ्यात्वकी पचास सागर स्थितिकौं भाग दीए जो प्रमाण होइ सो आबाधा कांडकका प्रमाण है। याकरि तेंद्री संबंधी आबाधाके भेदनिका प्रमाणकौं गुणें जो प्रमाण होइ तामैं एक घटाएं अवशेष रहै तिनकौं उत्कृष्ट पचास सागर मिथ्यात्वकी स्थिति तामैं घटाए जो प्रमाण रहै सो तेंद्रीके मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। इस जघन्य स्थितिकौं उत्कृष्ट स्थितिमैंस्यौं घटाए अवशेषकौं एक अधिक कीए तेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्व भेदनिका प्रमाण हो है। बहुरि चौंद्री जीवकैं दोयवार संख्यातका भाग जाकौं दीजिए ऐसी आवलिकरि अधिक सौ अंतर्मुहूर्त प्रमाण मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधा है, याका मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सौ सागर प्रमाण ताकौं भाग दीए जो प्रमाण होइ सो आबाधा कांडकका प्रमाण है। याकरि चौंद्री संबंधी आबाधाके भेदनिका प्रमाणकौं गुणें जो प्रमाण होइ तामैं एक घटाए अवशेष रहै तिनकौं उत्कृष्ट सौ सागरकी स्थितिमैंस्यौं घटाए जो प्रमाण रहै सो चौंद्रीकैं जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। इस जघन्य स्थितिकौं उत्कृष्ट स्थितिमैं स्यौं घटाए अवशेषकौं एक अधिक कीए चौंद्रीकैं मिथ्यात्वकी सर्व स्थितिके भेदनिका प्रमाण हो है। बहुरि असंज्ञी पंचेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधा आवलीका संख्यातवां भागकरि अधिक हजार अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। याका मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति हजार सागर प्रमाण ताकौं भाग दीए जो प्रमाण होइ सो आबाधा कांडकका प्रमाण जानना। याकरि असंज्ञी संबंधी आबाधाके भेदनिका प्रमाणकौं गुणे जो प्रमाण होइ तामैं एक घटाए अवशेष रहे तिनकौं उत्कृष्ट हजार सागरकी स्थितिमैंस्यौं घटाए अवशेष प्रमाण रहै सो असंज्ञीके मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। इस जघन्य स्थितिकौं उत्कृष्ट स्थितिमैं स्यौं घटाए अवशेष रहे तिनमें एक मिलाए असंज्ञीके मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्व भेदनिका प्रमाण हो है। ऐसैं यहु अर्थ प्रगट जाननेमें आवै है तथापि बहुरि अंक संदृष्टिकरि दिखाइए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्कृष्ट स्थितिका प्रमाण चौसठि ६४ समय अर तेरेसठि समयस्यों लगाइ छियालीस समय पर्यंत मध्य स्थितिका प्रमाण अर जघन्य स्थितिका प्रमाण पैंतालीस समय अर उत्कृष्ट आबाधाका प्रमाण सोलह समय सो इस आबाधाका भाग उत्कृष्ट स्थितिकौं दीजिए तब च्यारि पाए सो च्यारि आबाधा कांडकका प्रमाण जानना। आबाधा कांडक कहा कहिए?—जितने स्थितिके भेदनिविषैं एक प्रमाणकौं लीएं आबाधा होई सोई आबाधा कांडकका प्रमाण जानना। सोई दिखाइए है—चौसठि तरेसठि वासठि एकसठि समयकी स्थितिरूप च्यारि स्थितिके भेद तिनविषैं तौ सोलह सोलह समय प्रमाण आबाधा पाइए बहुरि साठिसौं सतावन पर्यंत च्यारि स्थितिके भेदनिविषैं पंद्रह पंद्रह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि छप्पनतैं तरेपन पर्यंत च्यारि स्थितिके भेदनिविषैं चौदह चौदह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि वावनतैं गुणचास पर्यंत च्यारि स्थितिके भेदनिविषैं तेरह तेरह समय प्रमाण आबाधा पाइए। बहुरि अठतालीसतैं पैंतालीस पर्यंत च्यारि स्थितिके भेदनिविषैं बारह समय प्रमाण आबाधा पाइए ऐसैं आबाधा कांडकका प्रमाण च्यारि जानना। बहुरि आबाधाके भेदनिका प्रमाण कहिए है—

जघन्य आबाधा बारह समय प्रमाण उत्कृष्ट आबाधा सोलह समय प्रमाण तहां 'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा' इस सूत्रकरि तहां आदि जघन्य आबाधा सो उत्कृष्ट आबाधामैं घटाए अवशेष च्यारि रहे ताकौं भेदनिविषैं वृद्धिका प्रमाण एक समय सो एकका भाग दीए तितनेही रहे यामैं एक मिलाए पंच भये सो पंच आबाधाके भेदनिका प्रमाण जानना। याकरि आबाधा कांडककौं गुणैं बीस सर्व स्थितिके भेदनिका प्रमाण भया। सो प्रथम भेदमैं किछू हानि वृद्धि है नाहीं तातैं एक घटाए अवशेष उगणीस रहे सो उगणीस उत्कृष्ट स्थिति चौंसठिमैंस्यों घटाए अवशेष पैंतालीस रहे सोई जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। अथवा जघन्य स्थितिविषैं उगणीस मिलाएं चौंसठि चौंसठि भए सोई उत्कृष्ट स्थितिका प्रमाण जानना। सो जैसैं अंकनिकी सहनानी करि कथन दिखाया है तैसैं ही पूर्वोक्त कथनका अर्थ नीके जानना। स्थितिका प्रमाण वा आबाधा कांडकका प्रमाण तहां कह्या है सो जानना। स्वरूप ऐसा ही जानना। जितने स्थितिके भेदनिविषैं एक प्रमाणकौं लीएं आबाधा होइ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोई आबाधा कांडकका प्रमाण जानना । आबाधाके भेद जघन्यतैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत जितने होहिं तितने ही जानने और सर्वप्रकार जैसैं कह्या तैसैं जानना । या प्रकार एकेंद्रियादिक जीवनिकैं सर्व प्रकृतिनिका स्थितिबंध जानना । अब त्रैराशिक करि अन्य प्रकृतिनिका जघन्य स्थितिबंध दिखाइए है–

सत्तरकोडाकोडी सागर प्रमाण स्थितिका धारक मिथ्यात्व नामा कर्मकी एकेंद्री जीव एक घाटि पल्यका असंख्यातवां भाग जामैं घटाइए ऐसा एक सागर प्रमाण जघन्य स्थितिकौं जो बांधै तो चालीस तीस वीस अठारह सोलह पंद्रह चौदह बारह दश कोडाकोडी सागर प्रमाण स्थितिके धारक कर्मनिकी जघन्य स्थितिकौं एकेंद्री जीव कितनी बांधै ? सो प्रमाण राशि तौ सत्तरि कोडाकोडी सागर फल राशि एकेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण, इच्छाराशि चालीस तीस कोडाकोडी सागर आदि देकरि जिस जिस कर्मकी जघन्य स्थिति एकेंद्रीकैं जाननी होइ तिस तिस कर्मकी संज्ञी संबंधी उत्कृष्ट स्थितिका प्रमाण सो ऐसैं फलराशिकरि इच्छा राशिकौं गुणैं प्रमाणराशिका भागदीए जितना जितना लब्धि राशिविषैं प्रमाण आवै तितना तितना तिस २ कर्मनिका जघन्य स्थिति बंध एकेंद्री जीवकैं जानना । तहां प्रमाण राशि सत्तरि कोडाकोडी सागर फलराशि एकेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण इच्छाराशि चालीस कोडाकोडी सागर प्रमाण तहां फलकौं इच्छाकरि गुणैं प्रमाणका भाग दीए जो प्रमाण लब्धि राशिका भया सो प्रमाण जिनकी चालीस कोडाकोडीकी स्थिति उत्कृष्ट है ऐसे सोलह कषाय तिनकी जघन्य स्थितिका प्रमाण एकेंद्री जीवकैं जानना । ऐसैं ही तीस वीस अठारह सोलह पंद्रह चौदह दश कोडाकोडी सागर प्रमाण कीए जो जो प्रमाण आवै सो सो तिस तिस स्थितिके धारक कर्मनिकी जघन्य स्थितिका प्रमाण एकेंद्री जीवकैं जानना । ऐसैं ही वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्री जीवविषैं कर्मनिका जघन्य स्थितिबंध जानना । विशेष इतना जो एकेंद्रीका कथनविषैं फलराशिका प्रमाण एकेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण कह्या था वेंद्रीका कथन विषैं फलराशिका प्रमाण वेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना । तेंद्रीका कथनविषैं फलराशिका प्रमाण तेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जानना। चौंद्रीका कथनविषैं फलराशिका प्रमाण चौंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। असंज्ञी पंचेंद्री का कथनविषैं फलराशिका प्रमाण असंज्ञी संबंधी मिथ्यात्वकी जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना। बहुरि वेंद्रियादिकका कथनविषैं प्रमाणराशिका प्रमाण अर इच्छाराशिका प्रमाण एकेंद्रीवत् सर्व जानना। ऐसैं त्रैराशिक कीए जो जो लब्धराशिका प्रमाण आवै सो सो वेंद्रियादिक जीवनिकैं कर्मनिका जघन्य स्थितिका प्रमाण जानना ऐसैं एकेंद्रियादिक जीवनिकैं स्थिति कही तिसके जघन्यतैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत जेते जेते भेद होंहि तिनका स्थापन करि तिनविषैं वादर सूक्ष्म तौ एकेंद्री अर वेंद्री अर तेंद्री अर चौंद्री अर संज्ञी असंज्ञी पंचेंद्री इनकैं पर्याप्त अपर्याप्तके भेदतैं चौदह जीव समास भए तिनकैं जघन्य वा उत्कृष्ट स्थिति बंधकौं भागकरि दिखावै हैं—

बासूप-बासूअ-वरट्ठिदीओ सूबाअ-सूबाप-जहण्णकालो।
बीबीवरो बीबिजहण्णकालो सेसाणमेवं वयणीयमेदं॥१४८॥

वासूप—बासूअ—वरास्थितिः सूवाअ—सूवाप—जघन्यकालः।
बीबीवरः बीबिजघन्यकालः शेषाणामेवं वक्तव्यमेतत्॥ १४८॥

जी० प्र०—बा-वादरश्च सू-सूक्ष्मश्च वादरसूक्ष्मौ, तयोः प-पर्याप्तकौ वादरसूक्ष्मपर्याप्तकौ। बा-वादरश्च सू-सूक्ष्मश्च वादरसूक्ष्मौ तयोः, अ-अपर्याप्तकौ वादरसूक्ष्मापर्याप्तकौ। वादरसूक्ष्मपर्याप्तकौ च वादरसूक्ष्मापर्याप्तकौ च वादरसूक्ष्मपर्याप्तक-वादरसूक्ष्मापर्याप्तकाः तेषां वरस्थितयः तास्तथोक्ताः। सू-सूक्ष्मश्च बा-वादरश्च सूक्ष्मवादरौ तयोः अ-अपर्याप्तकौ सूक्ष्मवादरापर्याप्तकौ। सू-सूक्ष्मश्च वा-वादरश्च सूक्ष्मवादरौ तयोः प-पर्याप्तकौ सूक्ष्मवादरपर्याप्तकौ। सूक्ष्मवादरापर्याप्तकौ च सूक्ष्मवादरपर्याप्तकौ च सूक्ष्मवादरापर्याप्तक-सूक्ष्मवादरपर्याप्तकाः तेषां जघन्यकालः सूक्ष्मवादरापर्याप्तकसूक्ष्मवादरपर्याप्तकजघन्यकालो जघन्यस्थितिरित्यर्थः। अनेन वादरपर्याप्तोत्कृष्टः सूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टः वादरापर्याप्तकोत्कृष्टः सूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टः, सूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यः वादरापर्याप्तकजघन्यः सूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यः वादरपर्याप्तकजघन्यश्चेत्येकेंद्रियस्य अष्टौ स्थितिबंधविकल्पा उक्ता भवंति। बी—द्वींद्रियपर्याप्तकश्च बी-द्वींद्रियापर्याप्तकश्च द्वींद्रियपर्याप्तद्वींद्रियापर्याप्तकौ तयोर्वरः, बी—द्वींद्रियापर्याप्तकश्च बि-द्वींद्रियपर्याप्तकश्च द्वींद्रियापर्याप्तकद्वींद्रियपर्याप्तकौ तयोः जघन्यकालः द्वींद्रियापर्याप्तकद्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यकालः। अनेन द्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टः द्वींद्रियापर्याप्तकोत्कृष्टः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वींद्रियापर्याप्तकजघन्यः द्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यश्चेति द्वींद्रियस्य चत्वारः स्थितिबंधविकल्पा उक्ता भवंति । 'एसालावेदं वणसदियभेदं' एवं द्वींद्रियोक्तरीत्या एतत्पर्याप्तकापर्याप्तकाभ्यां उत्कृष्टजघन्यभेदेन निजनिजविकल्पचतुष्टयं शेषाणां त्रींद्रियादिसंज्ञिपंचेंद्रियपर्यंतानामपि वचनीयं—कथनीयं । तद्यथा—

त्रींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टः त्रींद्रियापर्याप्तकोत्कृष्टः त्रींद्रियापर्याप्तकजघन्यः त्रींद्रियपर्याप्तकजघन्यश्चेति त्रींद्रियस्य चत्वारः । चतुरिंद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टः चतुरिंद्रियापर्याप्तकोत्कृष्टः चतुरिंद्रियापर्याप्तकजघन्यः चतुरिंद्रियपर्याप्तकजघन्यश्चेति चतुरिंद्रियस्य चत्वारः । असंज्ञिपर्याप्तकोत्कृष्टः असंज्ञ्यपर्याप्तकोत्कृष्टः असंज्ञ्यपर्याप्तकजघन्यः असंज्ञिपर्याप्तकजघन्यश्चेति असंज्ञिपंचेंद्रियस्य चत्वारः । संज्ञिपर्याप्तकोत्कृष्टः, संज्ञ्यपर्याप्तकोत्कृष्टः, संज्ञ्यपर्याप्तकजघन्यः, संज्ञिपर्याप्तकजघन्यश्चेति संज्ञिपंचेंद्रियस्य चत्वारः । अमीषु अष्टाविंशतिस्थितिबंधविकल्पेषु अंत्यानां चतुर्णां पृथक्कथनमस्ति इति आदौ आद्यानामायाममानेतुं अंतरालविकल्पान् त्रैराशिकैर्विभजति—

तत्रैकेंद्रियस्य यथा मिथ्यात्वस्थितिरुत्कृष्टा एकसागरोपममात्री सा १ । जघन्या च रूपोनपल्यासंख्येयभागोनतदुत्कृष्टमात्री सा
१~)
प
a
'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे' इत्यानीतसमयोत्तरतत्स्थितिविकल्पाः एतावंतः प
a
। तत्र एकद्विचतुश्चतुर्दशाष्टाविंशत्यष्टानवतिषण्णवत्यग्रशतशलाकानां मिलितत्वात् त्रिचत्वारिंशदग्रत्रिशतसंख्यानां प्र श ३४३ यद्येतावंतः फ बि प
a
तदा षण्णवत्यग्रशतशलाकानां इ श १९६ कति ? इति बादरपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतं विकल्पा लब्धा भवंति प १९६
a ३४३
एतेषु चरमस्य सूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधस्य आयामः रूपोनैरेतावन्मात्रसमयैर्न्यूनबादरपर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्यायाममात्रो भवति सा
१——^——)
प १९६
a ३४३
पुनः प्र–श ३४३ फ बि प
a
इ–श २८ । इति सूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प २८
a ३४३
एतेषु चरमस्य बादरापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधस्य आयामः एतावद्भिरेव समयैः न्यूनसूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्यायाममात्रो भवति सा
१——^——)
प २२४
a ३४३
पुनः प्र–श ३४३ । फ बि प
a
इ श ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इति बादरापर्याप्तकोत्कृष्टानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प ४ / a ३४३ एतेषु चरमस्य सूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधस्य आयाम एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनबादरापर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्यायाममात्रो भवति। सा १—०— / प २२८ / a ३४३) पुनः प्र—श ३४३। फ वि प इ श १ / a

इति सूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प १ / a ३४३ एतेषु चरमस्य सूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधस्यायामः, एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनसूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्यायाममात्रो भवति सा १—०— / प २२९ / a ३४३) पुनः प्र—श ३४३। फ वि प इ श२ / a इति सूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरापर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प २ / a ३४३ एतेषु चरमस्य बादरापर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधस्यायामः एतावद्भिरेव समयैः न्यूनसूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यस्थित्यायाममात्रो भवति। सा १—०— / प २३१ / a ३४३) पुनः प्र श ३४३ फ वि प इ श १४ / a इति

बादरापर्याप्तजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति—प १४ / a ३४३ एतेषु चरमस्य सूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधस्यायामः एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनबादरापर्याप्तकजघन्यस्थित्यायाममात्रो भवति सा १—०— / प २४५ / a ३४३) पुनः प्र श ३४३ फ वि प इ श ९८ / a इति

सूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प ९८ / a ३४३ एतेषु चरमस्य बादरपर्याप्तकजघन्यस्थि- १६१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिबंधस्यायामः एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनसूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यस्थित्यायाममात्रः—गा (१ ⁀ / प ३४३ / a ३४३) अपवर्तितः स चेदृश एव भवति सा (१ ⁀ / प / a) तथा एकेंद्रि-

यस्य मिथ्यात्वाबाधा आवल्यसंख्येयभागाधिकसंख्यातावलिमात्री (२ / a) जघन्या च तदाधिक्योनतन्मात्री (२ ९ / २९) तथानीतसमयोत्तराबाधाविकल्पा एता-

वंतः (१ / २ / a) एतानेव उक्तसप्तत्रैराशिकानां स्थितिबंधविकल्पान् अपहाय फलराशीन् कृत्वा तत्तल्लब्धं स्वस्वस्थितिविकल्पानामधः संस्थाप्य तदिष्टविक-

ल्पाबाधायामानां प्रथमे रूपोनतल्लब्धमात्रान् परेषु संपूर्णतत्तल्लब्धमात्रानेव समयानपनीयापनीय परंपरमाबाधायामं साधयेत् । तत्संदृष्टिः[१]—

बा प उ	सू प उ	बा अ उ	सू अ उ	सू अ ज	बा अ ज	सू प ज	बा प ज
२	२	२	२	२	२	२	२
a	a २९	a २ ९	a २ ९	a २ ९	a २ ९	a २९	a
२९	२ १९६	२ २२४	२ २२८	२ २२९	२ २३१	२ २४५	२ २९
	a ३४३	a ३४३	a ३४३	a ३४३	a ३४३	a ३४३	a ३४३
							३४३

अथ द्वींद्रियस्य यथा तन्मिथ्यात्वस्थितिरुत्कृष्टा पंचविंशतिसागरोपममात्री सा २५ जघन्या च चतुःसंख्यातभक्तरूपोनपल्योनतदुत्कृष्टमात्री

सा २५ (१ ⁀ / प / ९ ९ ९ ९) तथानीतसमयोत्तरस्थितिविकल्पा एतावंतः (प / ९ ९ ९ ९) तत्र एकद्विचतुःशलाकानां मिलित्वा सप्तसंख्यानां प्र-श ७ यद्येतावंतः—

(फ-वि प / ९ ९ ९ ९) तदा चतसृणां शलाकानां इ श ४ कति ! इति द्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधमादिंकृत्वा द्वींद्रियापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतं वि-

---

१ एतस्याः संदृष्टेराकारः श्रीपंडितटोडरमल्लजीकैः, अपरथैव प्रतिपादितः तत्र रचनायां वैलक्षण्येऽपि नार्थे वैलक्षण्यं । स चाकार अत्र १४९ तम संख्याकितगाथायाष्टिप्पण्याः आबाधारचनेत्यंशे, कर्मकांडसंदृष्टौ च लिखितः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कल्पा लब्धा भवंति प ४ एतेषु चरमस्य द्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधस्यायामो रूपोनैरेतावद्भिः समयैर्न्यूनद्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्या-
१ १ १ १ ७
याममात्रो भवति सा २५ ४ पुनः प्र—श ७ फ—वि प इ श १ इति द्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा द्वींद्रियपर्या-
१ ०) ७ १ १ १ १
प
१ १ १ १
प्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प १ एतेषु चरमस्य द्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधस्यायामः एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनद्वीं-
१ १ १ १ ७
द्रियापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितित्यायाममात्रो भवति सा २५ ५ पुनः प्र—श ७ फ—वि प इ श २ इति द्वींद्रियापर्याप्तजघन्यानंतरस्थितिबंध-
१ ०) ७ १ १ १ १
प
१ १ १ १
मादिंकृत्वा द्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पा लब्धा भवंति प २एतेषु चरमस्य द्वींद्रियपर्याप्तजघन्यस्थितिबंधस्यायाम एतावद्भिरेव स-
१ १ १ १ ७
मयैर्न्यूनद्वींद्रियापर्याप्तकजघन्यस्थित्यायाममात्रः सा २५ ७ स च ईदृश एव भवति सा २५ तथा द्वींद्रियस्य मिथ्यात्वाबाधा उत्कृष्टा चतुःसं-
१ ०) ७ १ ०)
प प
१ १ १ १ १ १ १ १
ख्यातभक्तावल्यधिकपंचविंशतिगुणितसंख्याताबलिमात्री २ जघन्या च तदाधिक्योनतन्मात्री २ १ २५ तथानीतसमयोत्तराबाधाविकल्पा
१ १ १ १
२ । १ २५
१ ——
एतावंतः २ एतानेव उक्तत्रैराशिकानां स्थितिबंधविकल्पानपहाय फलराशीन् कृत्वा तल्लब्धं स्वस्वस्थितिविकल्पानामधः संस्थाप्य तच्चतु-
१ १ १ १
विकल्पाबाधायामानां प्रथमे रूपोनलब्धमात्रान् परेषु संपूर्णतल्लब्धमात्रानेव समयानपनीयापनीय तं तमाबाधायामं साधयेत्, एवमेव त्रींद्रियस्य मिथ्या- १६३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्वस्थितिः उत्कृष्टा पंचाशत्सागरोपममात्री सा ५० जघन्या च त्रिसंख्यातभक्तरूपोनपल्योनतदुत्कृष्टमात्री सा ५० तथानीतसमयोत्तरतत्स्थितिवि-
१ ॒)
प
७ ३

कल्पानिमान् प तन्मिथ्यात्वाबाधा उत्कृष्टा त्रिसंख्यातभक्तावल्यधिकपंचाशद्गुणितसंख्यातावलिमात्री २ जघन्या च तदाधिक्योनतन्मात्री २ ७ ५०
७ । ३   ७ ३
२ ७ ५०

तथानीतसमयोत्तराबाधाविकल्पानिमान् १ पुनः चतुरिंद्रियस्य मिथ्यात्वस्थितिरुत्कृष्टा शतसागरोपममात्री सा १०० जघन्या च द्विसंख्यातभक्त-
२
७ । ३

रूपोनपल्योनतदुत्कृष्टमात्री सा १०० तथानीतसमयोत्तरतद्विकल्पानिमान् प तन्मिथ्यात्वाबाधा उत्कृष्टा द्विसंख्यातभक्तावल्यधिकशतगुणितसं-
१ ॒)   ७ । २
प
७ । २

ख्यातावलिमात्री २ जघन्या च तदाधिक्योनोत्कृष्टमात्री २ ७ १०० तथानीतसमयोत्तरतद्विकल्पानिमान् २ पुनः असंज्ञिपंचेंद्रियस्य
७ । २   १—
२ ७ । १००   ७ । २

मिथ्यात्वस्थितिः उत्कृष्टा सहस्रसागरोपममात्री सा १००० जघन्या च रूपोनपल्यसंख्येयभागोनतदुत्कृष्टमात्री सा १००० तथानीतसमयोत्तरतत्स्थि-
१ ॒)
प
७

तिविकल्पानिमान् प तन्मिथ्यात्वाबाधा उत्कृष्टा आवलिसंख्येयभागाधिकसहस्रगुणितसंख्यातावलिमात्री २ जघन्या च तदाधिक्योनतदुत्कृष्टमात्री
७   ७
२ ७ । १०००

२ ७ १००० तथानीतसमयोत्तराबाधाविकल्पान् इमांश्च १ द्वींद्रियोक्तरीत्या त्रैराशिकत्रयस्य पृथक् पृथक् फलराशीन् कृत्वा तत्रस्थितिविकल्पल-
२
७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ब्धानि तत्त्रिषु अंतरालेषु संस्थाप्य आबाधाविकल्पलब्धानि तेषामधः संस्थाप्य प्रागुक्तचतुश्चतुर्विकल्पानां प्रथमप्रथमस्य स्थित्यायामाबाधायामयोः रूपोनतल्लब्धमात्रान् द्वितीयतृतीयस्य तयोः संपूर्णतत्तल्लब्धमात्रानेव समयानपनीयापनीय परंपरं स्थित्यायाममाबाधायामं च साधयेत् ॥ १४८ ॥
एतत्सर्वं मनसिधृत्वाग्रतनसूत्रमाह—

स चं०—बा कहिए वादर सू कहिए सूक्ष्म ए दोऊ पर्याप्त बहुरि बा कहिए वादर सू कहिए सूक्ष्म अ कहिए ए दोऊ अपर्याप्त इनिकैं कर्मनिकी वरस्थिति कहिए कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थिति बहुरि सू कहिए सूक्ष्म बा कहिए वादर अ कहिए ए दोऊ अपर्याप्त बहुरि सू कहिए सूक्ष्म बा कहिए वादर प कहिए ए दोऊ पर्याप्त इनकैं जघन्यकालः कहिए कर्मनिकी जघन्यस्थिति सो ऐसैं वादर पर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति १ सूक्ष्म पर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति १ वादर अपर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति ३ सूक्ष्म अपर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति ४ सूक्ष्म अपर्याप्तकैं जघन्यास्थिति ५ वादर अपर्याप्तकैं जघन्य स्थिति ६ सूक्ष्म पर्याप्तकैं जघन्यास्थिति ७ वादर पर्याप्तकैं जघन्य स्थिति ८ ऐसैं एकेंद्री जीवकैं कर्मनिकी स्थितिविषैं आठ भेद भए। बहुरि बी कहिए बेंद्री पर्याप्त बहुरि बी कहिए बेंद्री अपर्याप्त इनकी वरः कहिए कर्मनिकी उत्कृष्ट स्थिति बहुरि बी कहिए बेंद्री अपर्याप्त बहुरि बी कहिए बेंद्री पर्याप्त इनके जघन्यः कहिए कर्मनिकी जघन्य स्थिति ऐसैं बेंद्री पर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति बेंद्री अपर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति बेंद्री अपर्याप्तकैं जघन्यस्थिति बेंद्री पर्याप्तकैं जघन्य स्थिति करि बेंद्री जीवनिकैं कर्मनिकी स्थिति विषैं च्यारि भेद भए। शेषाणां एवं वचनीयं कहिए अवशेष त्रींद्रियादिक जीवकैं पर्याप्तक अपर्याप्तक जघन्य उत्कृष्टतैं ऐसैं च्यारि च्यारि भेद कहने। सो कहिए है—

तेंद्री पर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति तेंद्री अपर्याप्तकैं उत्कृष्ट स्थिति तेंद्री अपर्याप्तकैं जघन्य स्थिति तेंद्री पर्याप्तकैं जघन्य स्थिति ऐसैं तेंद्रीकै कर्मनिकी स्थितिविषैं च्यारि भेद भए। बहुरि चौंद्री पर्याप्तकैं उत्कृष्टस्थिति चौंद्री अपर्याप्तकैं उत्कृष्टस्थिति चौंद्री अपर्याप्तकैं जघन्य स्थिति चौंद्री पर्याप्तकैं जघन्यस्थिति ऐसैं चौंद्रीकैं कर्मनिकी स्थितिविषैं च्यारि भेद जानने। बहुरि असंज्ञी पर्याप्तकैं उत्कृष्टस्थिति असंज्ञी अपर्याप्तकैं उत्कृष्टस्थिति असंज्ञी अपर्याप्तकैं जघन्य स्थिति असंज्ञी पर्याप्तकैं जघन्यस्थिति ऐसैं असंज्ञी पंचेंद्रियके कर्मनिकी स्थितिविषैं च्यारि भेद जानने। बहुरि संज्ञी पर्याप्तकैं उत्कृष्टस्थिति संज्ञी अपर्याप्तकैं उत्कृष्टस्थिति संज्ञी अपर्याप्तकैं जघन्यस्थिति संज्ञी पर्याप्तकैं जघन्यस्थिति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसैं संज्ञी पंचेंद्रियकैं कर्मनिकी स्थितिविषैं च्यारि भेद जानने। ऐसैं ही ए सर्व स्थितिबंधविषैं अठाईस भेद भए तिनविषैं अंतके संज्ञी पंचेंद्री संबंधी च्यारि भेदनिका तौ जुदा कथन आगैं कीजिएगा। अवशेष चौईस भेदनिकी स्थितिका आयाम जाननेकौं अंतरालके भेद तिनकौं त्रैराशिककरि विभाग रूप कहैं हैं---

स्थितिबंधविषैं जो समयानिका प्रमाण ताकौं आयाम कहिए आयाम नाम लंबाईका है सो समय लंबाईकी ज्यों एक एक अनुक्रमतैं होइ चौडाईकी ज्यों युगपत् अनेक समय न होइ तातैं कालका प्रमाणविषैं आयाम ऐसी संज्ञा कहिए है। तहां एकेंद्री जीवकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति एक सागर प्रमाण है जघन्य स्थिति एक घाटि पल्यका असंख्यातवां भाग सागरमैं घटाएं जो रहै तीह प्रमाण है सो इहां 'आदी अंते सुद्धे वाड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणे' इस सूत्रकरि आदि जघन्य स्थितिकौं अंत उत्कृष्ट स्थितिमैंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै ताकौं एक एक स्थितिके भेदविषैं एक एक समय वधता है तातैं वृद्धिका प्रमाण एक ताका भाग दीएं जेतेके तेते रहैं तामैं एक अधिक कीएं एकेंद्री जीवकैं मिथ्यात्वकी स्थितिके भेद पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण भए तातैं इस गाथाके अनंतरही जो आगैं गाथा है ताका अर्थविषैं एकेंद्री जीवकैं स्थितिका अंतरालनिविषैं अंकनिकी सहनानीकी अपेक्षा एक १ दोय २ च्यारि ४ चौदह १४ अठाईस २८ अठ्याणवै ९८ एकसौ छिनवै १९६ ऐसैं प्रमाणकौं धरैं शलाका कहैंगे सो तिन सर्व शलाकानिका जोड दीएं तीनसै तियालीस शलाका भई। जैसैं प्रवृत्तिविषैं सीरका कार्यमें विसवा कहिए है तैसैं इहां शलाका जाननी। सो एकेंद्री जीवकैं जितने पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण स्थितिके भेद कहे तिनकौं तीनसै तियालीसका भाग दीएं जो प्रमाण आवै तितना एक शलाकाविषैं स्थितिके भेदनिका प्रमाण जानना। सो इसकौं अपना अपना शलाका प्रमाणतैं गुणैं अपने अपने ठिकानैं स्थितिके भेदनिका प्रमाण आवै है सोई त्रैराशिक करि दिखाइए है--

जो तीनसौ तियालीस शलाकानिविषैं एकेंद्री जीवसंबंधी मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्व भेद पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण पाइये तो एक सौ छिनवै शलाकानिविषैं केते पाइये ? इहां प्रमाण राशि तीनसौ तिया- १६६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लीस ३४३ फल राशि एकेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी स्थितिके भेदनिका प्रमाण पल्यके असंख्यातवां भाग मात्र, इच्छा राशि एकसौ छिनवे १९६ तहां फल राशितैं इच्छा राशिकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्ध राशिविषैं प्रमाण आया तितने वादर पर्याप्तके उत्कृष्ट स्थिति बंधतैं लगाइ सूक्ष्म पर्याप्तके उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने वादर पर्याप्तका उत्कृष्ट स्थितिबंध अर सूक्ष्म पर्याप्तका उत्कृष्ट स्थितिबंधका अंतरालविषैं जितने स्थितिके भेद पाइए तिनका यहु प्रमाण जानना। इस अंतरालकी एकसौ छिनवे शलाका जाननी। बहुरि जितना इहां अंतरालविषै स्थितिके भेदनिका प्रमाण कह्या तामैं एक घटाएं जो प्रमाण होइ तितना समय एक सागर प्रमाण वादरपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंधमैंस्यों घटाइए तब अंतविषै कह्या जो सूक्ष्म पर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंध ताका प्रमाण हो है। बहुरि प्रमाण राशि शलाका तीनसै तियालीस ३४३ फल राशि एकेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी स्थितिके भेदनिका प्रमाण इच्छा राशि शलाका अट्ठाईस सो फलतैं इच्छाकौ गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्ध राशिका प्रमाण भया तितने सूक्ष्म पर्याप्तकके उत्कृष्टतैं एक समय घाटि अनंतरवर्ती भेद तैं लगाइ वादर अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेदनिका प्रमाण हो है। दोऊके अंतरालमें इतने भेद पाइये है। इस अंतरालकी अठाईस शलाका जाननी सो ए जितने भेद पाइये तितने समय सूक्ष्म पर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थितिमैंस्यों घटाइ दीजै तब अंतविषै कही जो वादर अपर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थिति ताका प्रमाण हो है। बहुरि प्रमाण राशि तीनसै तियालीस फल राशि एकेंद्रीके मिथ्यात्वकी सर्व स्थितिके भेदनिका प्रमाण इच्छाराशि शलाका च्यारि सो फलकौं इच्छातैं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्ध राशिका प्रमाण आया तितने वादर अपर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थितिबंधतैं एक समयहीन अनंतर स्थिति बंधतैं लगाय सूक्ष्म अपर्याप्तका उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने। इन दोऊके अंतरालसंबंधी च्यारि शलाका जाननी सो ए जितने भेद भए तितने समय वादर अपर्याप्तकका उत्कृष्टस्थिति बंधमैंस्यों घटाय दीजै तव सूक्ष्म अपर्याप्तका उत्कृष्टस्थिति बंधका प्रमाण हो है। बहुरि प्रमाणराशि शलाका तीनसै तियालीस ३४३ फलराशि एकेंद्रीके मिथ्यात्वकी सर्व स्थितिके भेद

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निका प्रमाण, इच्छाराशि शलाका एक १ सो फलकौं इच्छातैं गुणें प्रमाणका भाग दीएं जो लब्धराशिका प्रमाण आया तितने सूक्ष्म अपर्याप्तकका उत्कृष्टतैं एक समय घाटि अनंतर स्थिति बंधतैं लगाइ सूक्ष्म अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद हो हैं। इन दोऊके अंतरालकी एक शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने समय सूक्ष्म अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थिति बंधमेंस्यों घटाइ दीजै तब सूक्ष्म अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंधका प्रमाण हो है। बहुरि पूमाण राशि शलाका तीनसै तियालीस फलराशि एकेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी सर्व स्थितिके भेदनिका पूमाण इच्छाराशि शलाका दोय सो फलकौं इच्छातैं गुणै प्रमाणका भाग दीएं जो लब्धराशि पूमाण आया तितने सूक्ष्म अपर्याप्तकके जघन्य स्थिति बंधतैं एक समय हीन अनंतर स्थिति बंधतैं लगाइ वादर अपर्याप्त के जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने। इन दोऊके अंतराल संबंधी दोय शलाका जाननी सो ए जितने भेद भए तितने समय सूक्ष्म अपर्याप्तककी जघन्य स्थितिबंधमेंस्यों घटाइ दीजै तब वादर अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंधका पूमाण हो है। बहुरि प्रमाण राशि तीनसै तियालीस ३४३ फल राशि एकेंद्रियके मिथ्यात्वकी सर्वस्थितिके भेदनिका प्रमाण इच्छाराशि शलाका चौदह सो फलकौं इच्छातैं गुणें प्रमाण का भाग दीए जो लब्ध राशिका प्रमाण आया तितने वादर अपर्याप्तके जघन्य स्थितिबंधतैं एक समय घाटि अनंतर स्थिति बंधके भेदतैं लगाय सूक्ष्म पर्याप्तके जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद हैं। इन दोऊनिके अंतराल संबंधी चौदह शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने समय वादर अपर्याप्तका जघन्यस्थिति बंधमेंस्यों घटाइए तब सूक्ष्मपर्याप्तका जघन्य स्थिति बंधका प्रमाण होइ बहुरि प्रमाण राशि तीनसै तियालीस शलाका फलराशि एकेंद्रीके मिथ्यात्वकी सर्वस्थितिके भेदनिका प्रमाण इच्छाराशि शलाका अठ्याणवै सौ फलकौं इच्छातैं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्धराशिका प्रमाण होइ तितने सूक्ष्मपर्याप्तकके जघन्यस्थिति बंधतैं एक समय घाटि अनंतर स्थितितैं लगाय वादर पर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने। इनि दोऊनिके अंतराल संबंधी अठ्याणवै शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने समय सूक्ष्मपर्याप्तका जघन्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थितिबंधमैंस्यों घटाइए तब वादर पर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध हो है सो यहु जघन्य स्थितिबंध एकेंद्री जीवकैं जघन्य स्थितिबंध कह्या था सोई जानना। ऐसैं चौदह जीवसमासनिविषैं एकेंद्रीके सूक्ष्मवादरके पर्याप्त अपर्याप्त तैं च्यारि जीवसमास हैं तिनके जघन्यस्थितिबंध अर उत्कृष्ट स्थितिबंधके भेदतैं आठ स्थानक भए सो आठ स्थानकनिविषैं स्थितिबंधका प्रमाण कह्या। इन आठो विषैं अंतराल सात पाइए सो अंतरालके विषैं स्थिति भेदनिके प्रमाण जाननेके निमित्त सात त्रैराशिककरि कथन दिखाया सो जानना। अब आबाधाकालका प्रमाण दिखाइए है—

एकेंद्री जीवकै मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधा आवलीका असंख्यातवां भागकरि अधिक संख्यात आवली मात्र जो अंतर्मुहूर्त तीह प्रमाण है। बहुरि जघन्य आबाधा तीहि अधिक बिना केवल अंतर्मुहूर्त मात्र ही है। तहां उत्कृष्टमैंस्यों जघन्य घटाएं एक एक विषैं एक एक समय बंधती है तातैं एकका भागदीएं जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं एकेंद्री जीवके मिथ्यात्वकी आबाधाका सर्व भेदनिका प्रमाण हो है सो जैसैं स्थिति बंधका कथन विषैं आठ स्थानक कहे अर सात अंतरालनिविषैं भेदनिका प्रमाण जाननेके निमित्त सात त्रैराशिक कीएं तैसैं इस आबाधाका कथन विषैं भी आठ स्थानक जानने। सात अंतरालनिविषैं आबाधाके भेदनिका प्रमाण जानने के निमित्त सात त्रैराशिक करने। तहां प्रमाण राशि तौ पूर्वोक्त प्रकार सातौ त्रैराशिक विषैं तीनसै तियालीस शलाका प्रमाण जानना अर फलराशि तहां तौ स्थितिके भेदनिका प्रमाण कह्या था इहां जघन्यतैं लगाय उत्कृष्ट पर्यंत जितना एकेंद्री जीवकैं मिथ्यात्वकी आबाधाके भेदनिका प्रमाण होइ तितना फलराशीका प्रमाण जानना अर इच्छाराशि एकसौ छिनवै अठाईस च्यारि एक दोय चौदह अठ्याणवै शलाका प्रमाण अनुक्रमतैं जानना। तहां सर्वत्र फलकौं इच्छाकरि गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो जो प्रमाण आवै सो सो तहां तहां अंतरालविषैं आबाधाके भेदनिका प्रमाण जानना। तहां प्रथम त्रैराशिक विषैं जितने भेदनिका प्रमाण आया तीहिमैं एक घटाएं जितना रहै तितना समय वादर पर्याप्तक संबंधी उत्कृष्टस्थिति संबंधी उत्कृष्ट आबाधामैंस्यों घटाएं सूक्ष्म पर्याप्तक उत्कृष्ट स्थितिबंधसंबंधी आबाधाकालका प्रमाण हो है। यामैंस्यों द्वितीय त्रैराशिक विषैं जितना भेदनिका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाण आया तितना समय घटाएं वादर अपर्याप्त उत्कृष्ट स्थितिबंध संबंधी आबाधाका प्रमाण हो है। ऐसैं ही तृतीयादिक त्रैराशिक विषै जितने भेद होंहि तितने समय घटाइ घटाइ तहां तहां जो स्थितिबंधका प्रमाण कह्या होइ तिस तिस बंध संबंधी आबाधाका प्रमाण जानना। ऐसैं एकेंद्री जीवकैं स्थितिबंधका वा आबाधाके भेदनिका वा कालका प्रमाण कह्या। अब बेंद्री जीवकैं कहैं हैं—

बेंद्री जीवकै मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति पचीस सागर प्रमाण है। जघन्य स्थिति च्यारि वार संख्यातका जाकौं भाग दीजिए ऐसा एक एक घाटि पल्यका प्रमाणकौं उत्कृष्ट स्थितिमें घटाएं जितना अवशेष रहै तीहि प्रमाण है तहां उत्कृष्टमैंस्यों जघन्यकौं घटाएं एक एक भेदविषैं एक एक समय बंधै है तातैं वृद्धिका प्रमाण एक ताका भाग दीएं बहुरि अवशेषविषैं एक मिलाएं जितने होंहि तितने बेंद्री जीवकैं मिथ्यात्व की सर्वस्थितिके भेद जानने। तहां बेंद्री के च्यारि स्थाननिका तीन अंतराल तिन संबंधी अंकनिकी सहनानी करि एक दोय च्यारि शलाका प्रमाण है ऐसा आगिली गाथाका अर्थविषैं कहियेगा सो इन सब शलाकानिका जोड दीएं सात शलाका भई तहां जो सात शलाकानिविषैं बेंद्री जीवकैं जघन्यतैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्वभेद च्यारि वार संख्यातका जाकौं भाग दीजिए ऐसा पल्य प्रमाण पाइए तौ च्यारि शलाकानिविषैं केते भेद पाइए? ऐसैं त्रैराशिक करना। तहां प्रमाण राशि शलाका सात ७ फलराशि बेंद्रीके मिथ्यात्वकी स्थितिके भेदनिका प्रमाण इच्छाराशि शलाका च्यारि तहां फलकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीए जो लब्धराशिका प्रमाण आया तितने बेंद्री पर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंधस्यों लगाय बेंद्री अपर्याप्तकका उत्कृष्टस्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने। इस अंतराल संबंधी च्यारि शलाका जाननी सो ए जितने भेद भए तितनेमैं एक घटाएं जो रहै तितने समय पर्याप्तक बेंद्रीकी उत्कृष्टस्थिति पचीस सागर प्रमाण तामैंस्यों घटाएं अंतविषैं कह्या जो बेंद्री अपर्याप्तकका उत्कृष्टस्थितिबंध ताका प्रमाण जानना। बहुरि प्रमाण राशि सात शलाका, फलराशि बेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्व भेदनिका प्रमाण, इच्छाराशि शलाका एक सो फलकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्ध राशिका प्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माण आया तितने वेंद्री अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थितिबंधतैं एक समय हीन अनंतर भेदतैं लगाय वेंद्री अपर्याप्तकके जघन्यस्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने। इस अंतराल संबंधी एक शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने समय वेंद्री अपर्याप्तकका उत्कृष्टस्थिति बंधमेंस्यों घटाएं वेंद्री अपर्याप्तककैं जघन्यस्थितिका प्रमाण हो है। वहुरि प्रमाण राशि शलाका सात, फलराशि वेंद्रीके मिथ्यात्वकी सर्वस्थितिके भेदनिका प्रमाण, इच्छाराशि शलाका दोय तहां फलराशिकरि इच्छाराशिकौं गुणै प्रमाणका भाग दीएं जो लब्धराशिका प्रमाण आया तितने वेंद्री अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंधतैं एक समय घाटि अनंतर स्थितिबंधतैं लगाइ वेंद्री पर्याप्तकका जघन्यस्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद जानने। इस अंतराल संबंधी दोय शलाका जाननी। सो ए जितने भेद भए तितने समय वेंद्री अपर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंधमैंस्यों घटाइए तब वेंद्री पर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंधका प्रमाण होइ। सो वेंद्रीके जघन्यस्थिति बंधका प्रमाण कह्या था सो यहु जानना अैसैं वेंद्रीके जघन्यस्थिति बंधके भेदनिका प्रमाण वा कालका प्रमाण कह्या। अब आबाधाका प्रमाण कहिए हैं—

वेंद्री जीवकैं उत्कृष्ट मिथ्यात्वकी स्थिति संबंधी उत्कृष्ट आबाधा च्यारिवार संख्यातका जाकौं भाग दीजिए अैसी आवली करि अधिक संख्यात आवलीमात्र अंतर्मुहूर्त पचीस प्रमाण है। जघन्य आबाधा उस अधिक विना केवल पचीस अंतर्मुहूर्त प्रमाण है। तहां उत्कृष्टमैस्यों जघन्य घटाए एक एक भेदविषैं एक एक समय बंधती है तातैं एकका भाग दीए जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं सर्व आबाधाके भेदनिका प्रमाण जानना। तहां पूर्वैं स्थिति बंधका कथनविषै जैसैं तीन त्रैराशिक कीए तैसैंही आबाधाके कथनविषैं तीन त्रैराशिक करने तहां प्रमाण राशि अर इच्छाराशि तौ स्थिति बंधका कथनविषैं अैसैं कहे तैसैं ही जानने अर फलराशि इहां वेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी आबाधाके जितने भेद हैं सो जानना। सो तहां फलकरि इच्छाकौं गुणै प्रमाणका भाग दीए जो जो प्रमाण आवै तितने तितने तहां आबाधाके भेदनिका प्रमाण जानना। सो प्रथम त्रैराशिक विषैं तौ जितना जितना भेदनिका प्रमाण होइ तामैं एक घटाए जो प्रमाण रहै तितने समय वेंद्री पर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थिति संबंधी उत्कृष्ट आबाधामेंस्यौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घटाएं जो प्रमाण रहै तितना वेंद्री अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंध संबंधी आबाधा कालकौं प्रमाण जानना। यामैं स्यौं द्वितीय त्रैराशिक विषैं जितने भेद भए तितने समय घटाए वेंद्री अपर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंध संबंधी आबाधा कालका प्रमाण हो है। यामैंस्यों तीसरा त्रैराशिकविषैं जितने भेद भए तितने समय घटाएं वेंद्री पर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंधसंबंधी आबाधा कालका प्रमाण हो है सो यहु जघन्य आबाधा है। ऐसैं वेंद्री विषैं दोय जवि समास तिनके जघन्य उत्कृष्टतैं च्यारि प्रकार स्थितिबंध वा आबाधाका प्रमाण कह्या अर च्यारिके तीन अंतराल तिनिविषैं भेदनिका प्रमाण कह्या। बहुरि जैसैं वेंद्रीका कथन कीया तैसैं ही तेंद्री वा चौंद्री वा असंज्ञी पंचेंद्रीका कथन जानना विशेष इतना जो इहां स्थितिके वा आबाधाके भेदनिका प्रमाण और है तातैं फलराशिका प्रमाण और और जानना। वा जघन्य उत्कृष्ट स्थितिका वा आबाधाका प्रमाण और और जानना। बहुरि जहां वेंद्री कह्या है तहां तेंद्रियादिक कहने। इतना विशेष है और सर्व कथन वेंद्रीवत् जानना। तहां स्थितिके वा आबाधाके भेदनिका प्रमाण कहिए है—

तहां तेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्टस्थिति पचास सागर प्रमाण है। जघन्य स्थिति यामैंस्यौं तीनवार संख्यातका जाकौं भाग दीजिए ऐसा एक घाटि पल्यका प्रमाणकौं घटाए अवशेष रहै तितना है। तहां उत्कृष्टमैंस्यौं जघन्य कौं घटाए एक एक भेदविषैं एक एक समय बंधती है तातैं एकका भाग दीएं जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाए तेंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्वभेदनिका प्रमाण पल्यकौं तीनवार संख्यातका भाग दीजिए इतनां हो है सोई तेंद्रीका स्थितिबंध कथन विषैं तीनों त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना। बहुरि तेंद्रीकै उत्कृष्ट मिथ्यात्वकी स्थितिविषैं आबाधा तीनवार संख्यातका जाकौ भाग दीजिए ऐसी आवलीकरि अधिक संख्यात आवलीप्रमाण अंतर्मुहूर्त पचास अर जघन्य आबाधा उस अधिक विना केवल पचास अंतर्मुहूर्त प्रमाण सो उत्कृष्टमैंस्यौं जघन्यकौं घटाएं एक एक समय बंधती भेदनिविषै है तातैं एकका भाग दीएं जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं आबाधाके सर्वभेदनिका प्रमाण हो है सोई तेंद्रीका आबाधाका कथनविषैं तीनों त्रैराशिकविषैं फलराशि जानना। बहुरि चौंद्रीकैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति सौ सागर प्रमाण है। जघन्य स्थिति इस उत्कृष्ट स्थितिमैंस्यौं दोयवार संख्यातका भाग जाकौं दीजिए ऐसा एक घाटि पल्यका प्रमाणकौं घटाए अवशेष रहै तितनी है। तहां उत्कृष्टमैंस्यों जघन्यकौं घटाए भेदनिविषै एक एक समय बंधती पाइए तातैं एकका भाग दीए जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं चौंद्री संबंधी मिथ्यात्वकी स्थितिके सर्वभेदनिका प्रमाण पल्यकौं दोय वार संख्यातका भाग दीजिए इतना है सोई चौंद्रीका स्थिति बंधका कथनविषै तीनों त्रैराशिकविषैं फलराशि जानना। बहुरि चौंद्रीकैं मिथ्यात्वकी स्थितिकी उत्कृष्ट आबाधा दोयवार संख्यातका जाकौं भाग दीजिए ऐसी आवलिकरि अधिक संख्यात आवलीप्रमाण अंतर्मुहूर्त सौ १०० अर जघन्य आबाधा उस अधिक विना केवल सौ अंतर्मुहूर्त प्रमाण सो उत्कृष्टमैंस्यों जघन्यकौं घटाए एक एक समय भेदनिविषैं बंधै है तातैं एकका भाग दीएं जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं आबाधाके सर्व भेदनिका प्रमाण चौंद्रीकै हो है। सोई चौंद्रीका आबाधाका कथन विषैं तीनों त्रैराशिकविषैं फलराशी जानना। बहुरि असंज्ञी पंचेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट स्थिति एक हजार सागर प्रमाण है यामैं एक घाटि पल्यका संख्यातवां भाग घटाएं जघन्य स्थिति हो है सो उत्कृष्टमैंस्यौं जघन्यकौं घटाएं एक एक भेदविषैं एक एक बंधै है तातैं एकहीका भाग दीए जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाए असंज्ञीकैं मिथ्यात्वकी सर्वस्थितिके भेदनिका प्रमाण एकवार संख्यातका भाग जाकौं दीजिए ऐसा पल्यमात्र है सोई असैनी पंचेंद्रीका स्थिति कथनविषैं तीनों त्रैराशिक विषैं फलराशि जानना। बहुरि असैंनी पंचेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधा आवलीका संख्यातवां भागकरि अधिक संख्यात आवली प्रमाण अंतर्मुहूर्त हजार जानना अर जघन्य आबाधा उस अधिक विना केवल हजार अंतर्मुहूर्त प्रमाण जाननी सो उत्कृष्टमैंस्यौं जघन्यकौं घटाए एक एक भेदविषैं एक एक समय बंधती है तातैं एकका भाग दीएं जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाए असैनी पंचेंद्रीकैं मिथ्यात्वकी आबाधाके सर्वभेदनिका प्रमाण हो है सोई असैनी पंचेंद्रीका आबाधाका कथनविषैं तीन त्रैराशिकविषैं फलराशि जानना। ऐसैं जो विशेष कथन कीया सो तौ विशेष जानना। अवशेष सर्व कथन वेंद्रीका कथनवत् तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्रीका जानना। सो जैसैं यहु मिथ्यात्वकी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्कृष्ट जघन्य स्थिति वा उत्कृष्ट जघन्य आबाधाके अनुसारि स्थिति बंधका वा आबाधाका कथन कीया तैसैं ही सर्व प्रकृतिनिका अपनी अपनी उत्कृष्ट जघन्य स्थिति वा उत्कृष्ट जघन्य आबाधाके अनुसारि स्थिति बंधका वा आबाधाका कथन जानि लेना। बहुरि इहां जो शलाकानिका प्रमाण कह्या है सो यथायोग्य संख्यातकी सहनानी दोयका अंक कल्पि करि शलाकानिका प्रमाण कह्या है। अर्थकरि जैसा संभवै तैसा जानना ॥ १४८ ॥ ऐसैं सर्व मनमें धारि शलाकानिकौं जाननेके निमित्त सूत्र कहैं है—

मज्झे थोवसलागा हेट्ठा उवरिं च संखगुणिदकमा।
सव्वजुदी संखगुणा हेट्ठुवरिं संखगुणमसण्णित्ति ॥१४९ ॥

मध्ये स्तोकशलाका अधस्तनमुपरि च संख्यगुणितक्रमाः।
सर्वयुतिः संख्यगुणा अधस्तनोपरि संख्यगुणा असंज्ञी तु ॥ १४९ ॥

जी० प्र०—मज्झे थोवसलागा–बादरपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतेषु एकेंद्रियस्य मिथ्यात्वसर्वस्थितिविकल्पेषु मध्ये ये सूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतमध्यमविकल्पाः स्तोकाः ते एका शलाका ज्ञातव्या—

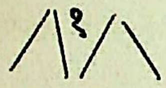

हेट्ठा सूक्ष्मापर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्योऽधस्तनशलाकाः। उवरिं च सूक्ष्मापर्याप्तकोत्कृष्टानंतरोपरितनस्थितिबंधमाद्यं कृत्वा बादरपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्य उपरितनशलाकाश्च संखगुणिदकमा–संख्यातेन अंकसंदृष्ट्या द्व्यंकेन गुणितक्रमा भवंति

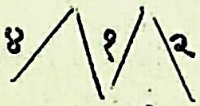

सव्वजुदी–सर्वयुतैः तदुक्तैकद्विचतुःशलाकायुतैः सप्तभ्यः ७ सकाशात् हेट्ठा बादरपर्याप्तकजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्योऽधस्तनशलाकाः उवरिं बादरापर्याप्तकोत्कृष्टानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा सूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्य उपरितनशलाकाश्च प्राग्वत् संख्यातगुणितक्रमा भवंति

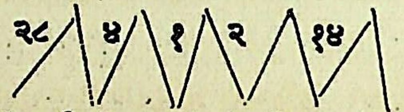

चशब्दात् पुनरपि सव्वजुदी तदुक्तैकद्विचतुश्चतुर्दशाष्टाविंशतिशलाकायुतैः एकान्नपंचाशतः ४९ सकाशात् हेट्ठा सूक्ष्मपर्याप्तकजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्योऽधस्तनशलाकाः उवरिं सूक्ष्मपर्याप्तकोत्कृष्टानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा बादरपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतवि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कल्पसंबंधिन्य उपरितनशलाकाश्च संखगुणं संख्यातगुणितक्रमा भवंति | वा प उ 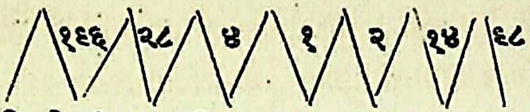

वा प ज |

पुनरपि 'मज्झे थोवसलागा हेट्ठा उवरिं च संखगुणिदकमा' एतावत्सूत्रं द्वींद्रियं प्रत्यपि योज्यं । तथाहि—

मज्झे थोवसलागा द्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधमादिं कृत्वा द्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतेषु मध्ये ये द्वींद्रियापर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधमादिं कृत्वा द्वींद्रियापर्याप्तजघन्यस्थितिबंधपर्यंता विकल्पाः स्तोकाः ते एका शलाका ज्ञातव्या । हेट्ठा द्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा द्वींद्रियपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्योऽधस्तनशलाकाः उवरिं च द्वींद्रियापर्याप्तकोत्कृष्टानंतरं स्थितिबंधमादिं कृत्वा द्वींद्रियपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतविकल्पसंबंधिन्य उपरितनशलाकाश्च संखगुणिदकमा संख्यातगुणिक्रमा भवंति 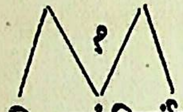

एवमेव असण्णित्ति असंज्ञिपर्यंतं त्रींद्रियचतुरिंद्रियाऽसंज्ञिपंचेंद्रियाणां 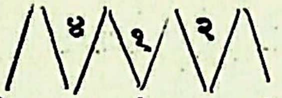

स्वस्वस्थितिबंधविकल्पेषु अपि व्याख्यातव्यं ॥ १४९ ॥

अथ संज्ञिपंचेंद्रियस्य तत्प्रागुक्तपर्याप्तकोत्कृष्टापर्याप्तकोत्कृष्टापर्याप्तकजघन्यपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधविकल्पेषु विशेषमाह—

---

१ अत्र तात्पर्यार्थो अंकसंदृष्ट्या अर्थसंदृष्ट्या च उच्यते तत्रांकसंदृष्ट्या यथा वादरपर्याप्तोत्कृष्टतः एकैकसमयोनक्रमेण गत्वा षण्णवतिशततमः स सूक्ष्मपर्याप्तोत्कृष्टः स्यात् । ततः तथैव गत्वा अष्टाविंशतितमः स वादरापर्याप्तोत्कृष्टः । ततः चतुर्थः स सूक्ष्मपर्याप्तोत्कृष्टः । ततः एककः स सूक्ष्मापर्याप्तजघन्यः । ततो द्वितीयः स वादरापर्याप्तजघन्यः । ततः चतुर्दश स सूक्ष्मपर्याप्तजघन्यः । ततः अष्टानवतितमः स वादरपर्याप्तजघन्यो भवति । अर्थसंदृष्ट्या यथा—उत्कृष्टः एकसागरोपमस्थितिकः सा १ । जघन्यः रूपोनपल्यासंख्येयभागोनः सागरोपममात्रः सा (१ ^ / प / a) आदी अंते सुद्धे (१ ^ / प / a) वड्ढिहिदे (१ ^ / प / a १) रूवसंजुदे ठाणेति वादरैकेंद्रियपर्याप्तस्य मिथ्यात्वसर्वस्थितिबंधविकल्पाः पल्यासंख्यातैकभागमात्राः भवंति (प / a) । यदि एतावत्स्वपयोगशलाकानां पल्यासंख्यातैकभागस्तदा स्वस्वमध्यादिशलाकानां कति ? इति लब्धं स्वस्वस्थितिबंधविकल्पा भवंति । असण्णित्ति अनेन क्रमेण द्वींद्रियादारभ्यासंज्ञिपर्यंतानां पर्याप्तापर्याप्तोत्कृष्टस्थितिबंधविकल्पान्, आबाधाविकल्पांश्च भावयित्वा स्थापयेत् ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

	वा प उ	सू प उ	वा अ उ	सू अ उ	सू अ ज	वा अ ज	सू प ज	वा प ज
सा १	प a१९६ ३४३	प a२८ ३४३	प a ४ ३४३	प a १ ३४३	प a २ ३४३	प a १४ ३४३	प a९८ ३४३	सा १ १ ^) प a
२ a आ बा २ ऋ	१— २ । १९६ a ३४३	१— २ । २८ a ३४३	१— २ । ४ a ३४३	१— २ । १ a ३४३	१— २ । २ a ३४३	१— २ । १४ a ३४३	१— २ । ९८ a ३४३	२ ऋ
सा १ स्थित्यायाम	सा १ १ ^) प १९६ a ३४३	सा १ १ ^) प २२४ a ३४३	सा १ १ ^) प २२८ a ३४३	सा १ १ ^) प २२९ a ३४३	सा १ १ ^) प २३१ a ३४३	सा १ १ ^) प २४५ a ३४३	सा १ १ ^) प ३४३ a ३४३	अपवर्तितं सा १ १ ^) प a

	बी प उ	बी अ उ	बी अ ज	बी प ज
सा २५	प ४ ऋऋऋऋ।७	प १ ऋऋऋऋ।७	प २ ऋऋऋऋ।७	सा २५ १ ^) प ऋऋऋऋ
२ ऋऋऋऋ २ ऋ। २५	१— २ ४ ऋऋऋऋ।७	१— २ १ ऋऋऋऋ।।७	१— २ २ ऋऋऋऋ।७	२ ऋ। २५
सा २५	सा २५ १ ^) प ४ ऋऋऋऋ ७	सा २५ १ ^) प ५ ऋऋऋऋ ७	सा २५ १ ^) प ७ ऋऋऋऋ ७	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

	ती प उ	ती अ उ	ती अ ज	ती प ज
सा ५०	प ४ गृ गृ गृ । ७	प १ गृ गृ गृ । ७	प २ गृ गृ गृ । ७	सा ५० १ ⌒) प गृ गृ गृ
२ गृ गृ गृ २ गृ । ५०	१— २ ४ गृ गृ गृ । ७	१— २ १ गृ गृ गृ । ७	१— २ २ गृ गृ गृ । ७	२ गृ । ५०
सा ५०	सा ५० १ ⌒) प ४ गृ गृ गृ ७	सा ५० १ ⌒) प ५ गृ गृ गृ ७	सा ५० १ ⌒) प ७ गृ गृ गृ ७	

	च प उ	च अ उ	च अ ज	च प ज
सा १००	प ४ गृ गृ । ७	प १ गृ गृ । ७	प २ गृ गृ । ७	सा १०० १ ⌒) प गृ गृ
२ गृ । गृ २ गृ । १००	१— २ ४ गृ गृ । ७	१— २ १ गृ गृ । ७	१— २ २ गृ गृ । ७	२ गृ । १००
सा १००	सा १०० १ ⌒) प ४ गृ गृ ७	सा १०० १ ⌒) प ५ गृ गृ ७	सा १०० १ ⌒) प ७ गृ गृ ७	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

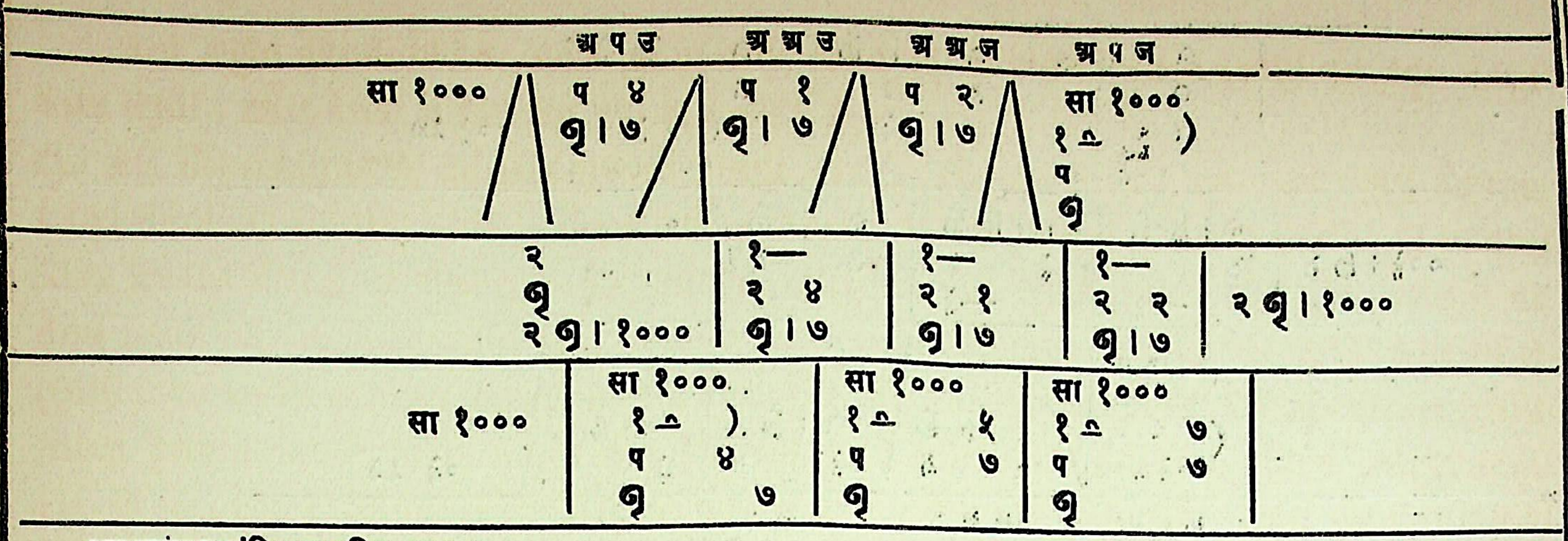

इत्यभयचंद्रनामांकितायामाधिकः पाठः ।

स०चं०—जो विवक्षित विभाग करनेके अर्थि किछू प्रमाण कल्पना कीजिए ताका नाम इहां शलाका जानना सो मध्ये कहिए वादरपर्याप्तककी उत्कृष्ट स्थितितैं लगाय वादरपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध पर्यंत जे एकेंद्रीके सर्वस्थितिके भेद हैं तिनके विषैं जे सूक्ष्म अपर्याप्तककी उत्कृष्टस्थितितैं लगाय एक एक समय घटता सूक्ष्म अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध पर्यंत जेते स्थितिके भेद पाइए ते अ.गैं जिनिका कथन कीजिए है तिन सवनितैं स्तोक हैं थोरे हैं तातैं तहां एक शलाका जाननी ⩘ १ ⩘ यहां त्रिकूट रचनाका अभिप्राय यह है जो जहां ऐसी △ त्रिकूटी सहनानी होइ तहां स्थितिका कथन जानना। बहुरि हेट्ठा कहिए याके नीचे सूक्ष्म अपर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंधतैं अनंतर स्थितिबंधस्यों लगाय एक एक समय घटता वादर अपर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी अधस्तन शलाका सो उन शलाकानितैं संख्यातगुणी हैं अर ऊपरि सूक्ष्म अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिके अनंतर स्थिति बंधतैं लगाय एक एक समय बंधती वादर अपर्याप्तकके उत्कृष्ट १७८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी उपरितन शलाका तिनतैं संख्यात गुणी हैं । ऐसैं संख्यात गुणा अनुक्रम कह्या सो संख्यातका प्रमाण तो यथायोग्य है परंतु इहां समझनेके अर्थि संख्यातकी सहनानी दोयका अंक जानना सो एकतैं दूणा दोय सो नीचैं दोय शलाका अर यातैं दुगुणा च्यारि सो ऊपरि च्यारि शलाका जाननी △४△१△२△ बहुरि सर्वयुतिः कहिए पूर्वैं शलाका कहीं तिनका जोड दीएं जो प्रमाण होइ तिसतैं हेट्ठा कहिए नीचैं वादर अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंधके अनंतर भेदतैं लगाय एक एक समय घटता सूक्ष्म पर्याप्तकके जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी अधस्तन शलाका संख्यातगुणी जानना अर ऊपरि कहिए वादर अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थिति बंधके अनंतरतैं लगाय एक एक समय बंधता सूक्ष्म पर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी उपरितन शलाका तिसतैं संख्यात गुणी जाननी सो पहिले शलाका च्यारि एक दोय इनिका जोड दीए सात भया ताकौं संख्यातकी सहनानी दोयकरि गुणैं नीचै तो चौदह शलाका भईं इसकौं संख्यातकी सहनानी दोयकरि गुणैं ऊपरि अठाईस शलाका भईं △२८△४△१△२△१४ बहुरि चकारतैं फेरि भी सर्वयुतिः कहिए पहिली शलाकानिका जोड दीए जो प्रमाण होइ तिसतैं हेट्ठा कहिए सूक्ष्म पर्याप्तकका जघन्य स्थितिके अनंतर स्थिति बंधतैं लगाय एक एक समय घटता वादर पर्याप्तकके जघन्य स्थितिबंधपर्यंत स्थितिके भेद संबंधी अधस्तन शलाका संख्यात गुणी हैं । अर ऊपरि सूक्ष्मपर्याप्तकके उत्कृष्टके अनंतरि स्थितिबंधतैं लगाय एक एक समय बंधता बादर पर्याप्तक उत्कृष्ट स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी उपरितन शलाका संख्यात गुणी हैं सो अगिली शलाका अठाईस च्यारि एक दोय चौदह तिनका जोड दीए गुणचास भए इनकौं संख्यातकी सहनानी दोयकरि गुणैं अठ्याणबै अधस्तन शलाका जाननी । इनकौं संख्यात की सहनानी दोय करि गुणैं एकसौ छिनवै उपरितन शलाका जाननी △१९६△२८△४△२△१△१४△९८△ ऐसैं एकेंद्रीका कथन कीया । बहुरि इसही सूत्रका अर्थ वेंद्री प्रति कहिए हैं—

मध्य कहिए वेंद्री पर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थिति बंधतैं लगाय वेंद्री पर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंध पर्यंत भेदनि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं जे वेंद्री अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंधतैं लगाय एक एक समय घटता वेंद्री अपर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंध पर्यंत जे स्थितिके भेद हैं ते थोरे हैं तातैं ते एक शलाका जानने △ १ △ बहुरि हेट्ठा कहिए नीचैं वेंद्री अपर्याप्तकका जघन्यतैं अनंतर स्थितिबंधतैं लगाय एक एक समय घटता वेंद्री पर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी अधस्तन शलाका संख्यातगुणी हैं अर ऊपरि वेंद्री अपर्याप्तकका उत्कृष्टके अनंतर स्थिति बंधतैं लगाय वेंद्री पर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेद संबंधी उपरितन शलाका तिसतैं भी संख्यात गुणी हैं सो एककौं संख्यातकी सहनानी दोयकरि गुणैं अधस्तन शलाका दोय हैं याकौं संख्यातकी सहनानी दोय करि गुणैं उपरितन शलाका च्यारि हैं △ ४ △ १ △ २ △ बहुरि जैसैं ए वेंद्रीकैं शलाका कहीं तैसैंही तेंद्रीके वा चौंद्रीकैं वा असंज्ञी पंचेंद्रीकैं शलाका जानना। विशेष इतना-जहां वेंद्रीका नाम कह्या है तहां तेंद्री वा चौंद्री वा असंज्ञी पंचेंद्रीका नाम कहना और किछू विशेष नाहीं। ऐसैं शलाका अपनी अपनी स्थितिके भेद विषैं जाननी। इनकी स्थितिके भेदनिका प्रमाण वा स्थितिका प्रमाण वा आबाधाके भेदनिका प्रमाण वा आबाधा कालका प्रमाण यथासंभव जानना ॥ १४९ ॥ आगैं संज्ञी पंचेंद्रियविषैं पर्याप्तकके उत्कृष्ट अपर्याप्तकके उत्कृष्ट अपर्याप्तकके जघन्य पर्याप्तकके जघन्य स्थितिबंधके भेद तिनविषैं विशेष है सो कहै हैं—

सण्णिस्स हु हेट्ठादो ठिदिठाणं संखगुणिदमुवरुवरिं।
ठिदिआयामोवि तहा सगठिदिठाणं व आबाहा ॥१५०॥

संज्ञिनो हि अधस्तनात् स्थितिस्थानं संख्यगुणितमुपर्युपरि।
स्थित्यायामोऽपि तथा स्वकस्थितिस्थानं व आबाधा ॥ १५० ॥

जी० प्र०—संज्ञिपंचेंद्रियस्य तत्पागुक्तचतुःस्थितिविकल्पेषु तु पूर्वोक्तैकेंद्रियाद्यसंज्ञ्यंतानां उक्ततदष्टचतुश्चतुर्भ्यो विशेषः। स कथ्यते—

अधस्तात्संज्ञिपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधविकल्पमादिं कृत्वा उपर्युपरि तच्चतुर्विकल्पांतरालेषु स्थितिस्थानं स्थितिविकल्पप्रमाणं संख्यगुणितं संख्यातगुणितक्रमं भवति। स्थित्यायामोऽपि तथा तच्चतुःस्थितिविकल्पानां आयामोऽपि तथा उपर्युपरि संख्यातगुणितक्रमो भवति। तद्यथा— १८०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संज्ञिनो मिथ्यात्वस्थितिः उत्कृष्टा सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणि इति द्विसंख्यातगुणितपल्यमात्री प १ १ जघन्या च अंतःकोटाकोटिसागरोपमा-
१— १ ^
णीति संख्यातपल्यमात्री प १ प्राग्वदानीतसमयोत्तरतत्स्थितिविकल्पा एतावंतः प १ १ एतेषु संख्यातभक्तबहुभागः संज्ञिपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंध-
१———
१ ^
मादिं कृत्वा संज्ञ्यपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधपर्यंतलब्धविकल्पप्रमाणं भवति प १ १ ४ एतेषु चरमस्य संज्ञिपर्याप्तकोत्कृष्टस्थितिबंधस्यायामो रूपोनाती-
५
तविकल्पमात्रसमयैर्न्यूनसंज्ञिपर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्यायाममात्रो भवति सा ७० को २ पुनस्तदेकभागस्य संख्यातभक्तबहुभागः संज्ञिपर्याप्तकोत्कृष्टानंतर-
१———)
१ ^
प १ १ ४
५

१———
१ ^
स्थितिबंधमादिं कृत्वा संज्ञ्यपर्याप्तजघन्यस्थितिबंधपर्यंतलब्धविकल्पप्रमाणं भवति प १ १ ४ एतेषु चरमस्य संज्ञ्यपर्याप्तजघन्यस्थितिबंधस्यायामः
५ ५
एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनसंज्ञ्यपर्याप्तकोत्कृष्टस्थित्यायामो भवति सा ७० को २ शेषतदेकभागः संज्ञ्यपर्याप्तकजघन्यानंतरस्थितिबंधमादिं कृत्वा संज्ञिपर्याप्त-
१———)
१ ^
प १ १ ४।
५ ५

१———
१ ^
कजघन्यस्थितिबंधपर्यंतलब्धविकल्पप्रमाणं भवति प १ १ १ एतेषु चरमस्य संज्ञिपर्याप्तकजघन्यस्थितिबंधस्यायामः एतावद्भिरेव समयैर्न्यूनसंज्ञ्य-
५ ५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर्याप्तकजघन्यस्थित्यायाममात्रो भवति सा ७० को २ स तु अंतःकोटाकोटिसागरोपममात्र एव सा अंतः को २।
१——)
१ ⌒
प १ १ १
५।५

तथा 'सगठिदिठाणं व आबाहा' संज्ञिनो मिथ्यात्वाबाधाविकल्पा अपि 'सगठिदिठाणं व' निजस्थितिविकल्पवद्वर्धते। तद्यथा—तन्मिथ्यात्वाबाधा उत्कृष्टा सप्तसहस्रवर्षाणि इति त्रिसंख्यातगुणितावलिमात्री २ १ १ १ जघन्या च समयोनमुहूर्तः इति द्विसंख्यातगुणितावलिमात्रः २ १ १
१— १⌒
तथानीतसमयोत्तरतद्विकल्पा एतावंतः—२ १ १ १। एतान् स्थितिविकल्पवत् संख्यातेन भक्त्वा भक्त्वा बहुभागं बहुभागं एकभागं स्वस्वस्थितिविकल्पानामधः संस्थाप्य तत्तल्लघ्वस्य चरमं चरममाबाधायामं निजस्थितिविकल्पायामवत् साधयेत् ॥ १५० ॥ अथ जघन्यस्थितिबंधस्वामिभेदानाह—

सं० च०—संज्ञी पंचेंद्रियकैं पूर्वोक्त च्यारि भेदनिविषैं पूर्वोक्त एकेंद्रियादिकके भेदनितैं विशेष है सो कहिए है—हेट्ठादो कहिए नीचेंतैं संज्ञी पर्याप्तकके जघन्य स्थिति बंधतैं लगाय तिन च्यारि भेदनिका अंतरालनिविषैं स्थितिके भेदनिका प्रमाण संख्यात गुणा अनुक्रमतैं जानना। बहुरि स्थितिका आयाम कहिए समयनिका प्रमाण सो भी ऊपरि ऊपरि संख्यात गुणा अनुक्रमतैं जानना सोई कहिए है—

---

१५० तमाया गाथायाः श्रीमदभयचंद्रनामांकित पुस्तकेयं टकापाठः। तद्यथा—

संज्ञिपर्याप्तोत्कृष्टस्थितिबंधविकल्पः सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमप्रमाणः सा ७० को २। तज्जघन्योंतःकोटीकोटिसागरोपमप्रमाणः सा अंतः को २ आदी
१———
१⌒ १⌒ १⌒
अंते सुद्धे प १ १ वड्ढिहिदे प १ १ रूवसंजुदे ठाणे प १ १ इति मिथ्यात्वस्थितिबंधविकल्पा भवंति। तु—पुनः अधस्तात् संज्ञिपर्याप्तजघन्य-
१
स्थितिबंधादारभ्य उपर्युपरि संज्ञ्यपर्याप्तजघन्यसंज्ञ्यपर्याप्तोत्कृष्टसंज्ञिपर्याप्तोत्कृष्टानां अंतरालसंभविस्थितिबंधविकल्पाः संख्यातगुणितक्रमा भवंति। स्थित्याया-मोऽपि तथा तत्स्थितिबंधविकल्पवत् उपर्युपरि संख्यातगुणितक्रमो भवति। स्वस्थितिस्थानामिवाबाधा स्वस्वस्थितिस्थानवत् आबाधाविकल्पा भवंति इत्यत्रापि उपर्युपरि संख्यातगुणितक्रमा भवंति तेषां चतुर्णां स्थानानां संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संज्ञी जीवकैं मिथ्यात्वकी उत्कृष्टस्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण है। सा दोयवार संख्यातकरि पल्यकौं गुणिए तीहिं प्रमाण है। बहुरि जघन्य स्थिति मिथ्यादृष्टिकी अपेक्षा कोडिके ऊपरि कोडाकोडीके नीचैं अैसैं अंतः कोटाकोटी सागर प्रमाण हैं सो एकवार संख्यातकरि पल्यकौं गुणिये तीहि प्रमाण है सो उत्कृष्टमैंस्यों जघन्यकौं घटाएं एक एक भेदविषैं एक एक समय बधै है तातैं एकका भाग दीए जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं संज्ञीकैं मिथ्यात्वकी सर्व स्थितिके भेदनिका प्रमाण हो है। सो याकौं संख्यातका भाग दीजिये तहां एक भाग विना अवशेष बहु भाग मात्र संज्ञी पर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थिति बंधतैं लगाय संज्ञी अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेदनिका प्रमाण है सो इनमैं एक घटाएं जो प्रमाण रहै तितने समय संज्ञी पर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंध सत्तरि कोडाकोडी सागर प्रमाणमैंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै सो संज्ञी अपर्याप्तकका उत्कृष्ट स्थितिबंधका प्रमाण जान-

	स प उ	सं अ उ	सं अ ज	सं प ज
सा ७० को २	प १ १ १ १ ४/५	प १ १ १ १ ४/५।५	प १ १ १ १।१/५।५	प १
आवाधा व ७००० २ १ १ १	१— १⌢४ २ १ १ १।५	१— १⌢४ २१ १ १।५५	१— १⌢ १ २१ १ १।५५	२ १ १

अत्र स्थितिबंधविषये वादरैकेंद्रियपर्याप्तः मिथ्यात्वोत्कृष्टस्थितिमेकसागरोपमां बध्नाति। जघन्यां च समयोनक्रमेण रूपोनपल्यासंख्यातैकभागोनैकसागरोपमां बध्नाति, ततः कारणात् ते विकल्पाः पल्यासंख्यातैकभागप्रमिता भवंति $\frac{प}{a}$ तेषामावाधाविकल्पा रूपाधिकावल्यसंख्यातैकभागप्रमिता भवंति $\frac{१}{२ \; a}$ तन्मध्ये

पतितसूक्ष्मपर्याप्तोत्कृष्टवादरापर्याप्तोत्कृष्टसूक्ष्मपर्याप्तोत्कृष्टसूक्ष्मापर्याप्तजघन्यवादरापर्याप्तजघन्यसूक्ष्मपर्याप्तजघन्यवादरपर्याप्तजघन्यस्थितिबंधविकल्पानां स्थित्यायामप्रमाणावाधाविशेषश्च आनीयते। तद्यथा—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ना बहुरि वह जो एक भाग रह्या था ताकौं संख्यातका भाग दीजिये तहां एक भाग विना अवशेष बहुभाग मात्र संज्ञी अपर्याप्तकके उत्कृष्टतैं एक समय घाटि स्थितिबंध तैं लगाय संज्ञी अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध पर्यंत स्थितिके भेदानिका प्रमाण हो है सो इतने समय संज्ञी अपर्याप्तकके उत्कृष्ट स्थिति बंधमैंस्यौं घटाएं संज्ञी अपर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंधका प्रमाण हो है बहुरि जो वह एक भाग रह्या था तीहिं प्रमाण मात्र संज्ञी अपर्याप्तकका जघन्यतैं एक समय घाटि अनंतर स्थितिबंधतैं लगाय संज्ञी पर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंध पर्यंत स्थितिके भेदनिका प्रमाण है। सो इस प्रमाणकौं संज्ञी अपर्याप्तकका जघन्य स्थिति बंधमैंस्यौं घटाएं संज्ञी पर्याप्तकका जघन्य स्थितिबंध हो है सो यहु प्रमाण अंतःकोटाकोटी सागर प्रमाण जानना। ऐसैं स्थितिका कथन किया। आबाधाका कथन कहिए है—

सो स्वकस्थितिस्थानवत् आबाधा कहिए अपनी स्थिति स्थानकवत् आबाधाका कथन जानना। सो संज्ञीकैं

ज्येष्ठाबाधया भक्तज्येष्ठस्थितिः आबाधाकांडकं भवति तेन स्वस्वाबाधाविकल्पगुणितेन एकरूपं नेनोना उत्कृष्टस्थितिः स्वस्वस्थित्यायामप्रमाणं भवति। तत्र बादरैकेंद्रियपर्याप्तोत्कृष्टस्थित्यायामे एकसागरोपमे स्वोत्कृष्टाबाधया २ भक्ते आबाधाकांडकं भवति प ७ ७ तच्च उत्कृष्टस्थितिविकल्पादारभ्य सूक्ष्मपर्या-

a २ ७
२ ७ |

१— १—
प्तोत्कृष्टपर्यंतानामाबाधाविकल्पैरेतावद्भिः २ १९६ गुणयित्वा प ७ ७। २ १९६ भाज्यभागहारावपवर्त्य प १९६ एकरूपमपनीय उत्कृष्टस्थितिविकल्पे-
a ३४३ | a ३४३ a ३४३
a ७

ऽपनीते सूक्ष्मैकेंद्रियपर्याप्तोत्कृष्टास्थित्यायामप्रमाणं भवति सा तस्याबाधायामस्तु रूपोनाबाधाविकल्पेषु उत्कृष्टाबाधायामपनीतेषु भवति २ ७
१ ⌃) १ ⌃
प १९६ १—
a ३४३ २ १९६
a ३४३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यात्वकी उत्कृष्ट आबाधा सात हजार वर्ष प्रमाण सो तीनवार संख्यातकरि गुणिए ऐसी आवली प्रमाण अर जघन्य आबाधा एक समय घाटि एक मुहूर्त प्रमाण सो दोयवार संख्यातकरि गुणिए ऐसी आवली प्रमाण सो उत्कृष्टमैं जघन्यकौं घटाएं एक एक भेदविषैं एक एक समय बंधै है तातैं एकका भाग दीए जो प्रमाण होइ तामैं एक मिलाएं आबाधाके सर्व भेदनिका प्रमाण हो है सो जैसैं स्थितिके भेदनिकौं संख्यातका भाग देय देय बहुभाग बहुभाग एक भाग प्रमाण भेद कहे तैसैं आबाधाके भेदनिकौं संख्यातका भाग देय देय बहुभाग बहुभाग एक भाग प्रमाण तीनों अंतरालनिविषैं भेदनिका प्रमाण जानना। बहुरि जैसैं स्थितिके भेदनिकरि समय घटाइ २ स्थितिका प्रमाण कह्या तैसैं इहां आबाधाके भेदनिकरि समय घटाय घटाय तिस स्थिति संबंधी आबाधाका प्रमाण जानना। ऐसैं पंचेंद्रिय संज्ञिविषैं विशेष कथन कह्या ॥ १५० ॥ आगैं जघन्य स्थितिबंध कौन जीवनिके होइ सो कहै हैं—

एवमग्रेऽपि स्वस्वाबाधायामो ज्ञातव्यः। पुनः उत्कृष्टस्थितिबंधायामे उत्कृष्टाबाधायामेन भक्ते आबाधाकांडकमिदं प ७ ७ उत्कृष्टादारभ्य बादरापर्याप्तोत्कृष्ट-
 २७

 १— १—
पर्यंतानां आबाधाविकल्पैः २ २२४ गुणयित्वा—प ७ ७। २ २२४ भाज्यभागहारावावलिद्वयमपवर्त्य—प २२४ एकरूपमपनीय उत्कृष्टस्थितिबंधविक-
 a २ ७ a ३४३ a ३४३

ल्पेऽपनीते बादरैकेंद्रियापर्याप्तोत्कृष्टस्थितिबंधायामो भवति सा १ एवं शेषसूक्ष्मापर्याप्तोत्कृष्टजघन्यौ बादरापर्याप्तसूक्ष्मपर्याप्तबादरपर्याप्तजघन्याश्च क्रमेणैते—
 १ ^)
 प २२४
 a ३४३

सा १	सा १	सा १	सा १	सा १	अपवर्तिते सा १
१ ^)	१ ^)	१ ^)	१ ^)	१ ^)	१ ^)
प २२८	प २२६	प २३१	प २४५	प ३४३	प
a ३४३	a ३४३	a ३४३	a ३४३	a ३४३	a

एवं शेषद्वींद्रियादिपर्याप्तापर्याप्तोत्कृष्टजघन्यस्थित्याबाधायामास्तदाबाधायामाश्चानेतव्याः ॥ १५० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्तरसपंचतित्थाहाराणं सुहुमबादरापुव्वो ।
छव्वेगुव्वमसण्णी जहण्णमाऊण सण्णी वा ॥ १५१ ॥

सप्तदशपंचतीर्थाहाराणां सूक्ष्मवादरापूर्वः ।
षड्वैगूर्वमसंज्ञी जघन्यमायुषां संज्ञी वा ॥ १५१ ॥

जी० प्र—पंचज्ञानावरणचतुर्दर्शनावरणपंचांतराययशस्कीर्त्युच्चैर्गोत्रसातवेदनीयानां जघन्यस्थितिं सूक्ष्मसांपराय एव बध्नाति पुंवेदचतुःसंज्वलनानां अनिवृत्तिकरण एव। तीर्थकृत्वाहारकद्वययोरपूर्वकरण एव। वैक्रियिकषट्कस्य असंज्ञ्येव आयुषः संज्ञी वा असंज्ञी वा ॥१५१॥ अथाजघन्यादीनां संभवत्साद्यादिभेदानाह—

स० चं०—पांच ज्ञानावरण ५ च्यारि दर्शनावरण ४ पांच अंतराय ५ यशस्कीर्ति १ उच्चगोत्र १ सातावेदनीय १ इन सतरह प्रकृतानिका जघन्यस्थितिबंध सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती जीव करै हैं । बहुरि पुरुषवेद १ संज्वलन कषाय च्यारि ४ इनि पंचनिका जघन्य स्थितिबंध अनिवृत्ति करण गुणस्थानवर्ती जीव करै है। बहुरि तीर्थंकर आहारकद्विक इनका जघन्यस्थितिबंध अपूर्वकरण गुणस्थानवर्ती जीव करै है। बहुरि देवगति वा आनुपूर्वी नरकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक वैक्रियिक अंगोपांग इस वैक्रियिक षट्कका जघन्य स्थितिबंध असंज्ञी पंचेंद्री जीव करै है। आयुकर्मकी प्रकृतिनिका जघन्य स्थितिबंध संज्ञी वा असंज्ञी जवि करै है ॥ १५१ ॥ आगे अजघन्यादिक स्थितिके भेदनिविषैं संभवैं हैं जे साद्यादिक भेद तिनिकौ कहैं है—

अजहण्णट्ठिदिबंधो चउव्विहो सत्तमूलपयडीणं ।
सेसतिये दुवियप्पो आउचउक्केवि दुवियप्पो ॥ १५२ ॥

अजघन्यस्थितिबंधः चतुर्विधः सप्तमूलप्रकृतीनां ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शेषत्रये द्विविकल्पः आयुश्चतुष्केऽपि द्विविकल्पः ॥ १५२ ॥

जी० प्र—आयुर्वर्जितसप्तविधमूलप्रकृतीनां अजघन्यस्थितिबंधः साद्यनादिध्रुवाध्रुवभेदेन चतुर्विधो भवति शेषजघन्यानुत्कृष्टोत्कृष्टत्रितये साद्यध्रुवौ द्वावेव । आयुष्कर्मणः अजघन्यादिबंधचतुष्केऽपि तावेव द्वौ । अपवादविनिर्मुक्तोऽस्य विषयो भवति ॥ १५२ ॥ अत्र विशेषमाह—

स० चं०—आयु विना सात मूल प्रकृतिनिका अजघन्य स्थितिबंध तो सादि अनादि ध्रुव अध्रुव भेदतैं च्यारि प्रकार है । बहुरि आयुविना सात मूल प्रकृतिनिका उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट जघन्य स्थिति बंध सादि अध्रुव दोय ही प्रकार है । आयु कर्मका च्यार्‍योही प्रकारका स्थितिबंध सादि अध्रुव दोय प्रकार ही है सो यहु कथन किछू संदेह रूप नाही नीकैं संभवै है तातैं विशेष न कह्या है ॥ १५२ ॥ इहां उत्तर प्रकृतिनिविषैं विशेष है सो कहे हैं—

संजलणसुहुमचोद्दस-घादीणं चदुविधो दु अजहण्णो ।
सेसतिया पुण दुविहा सेसाणं चदुविधावि दुधा ॥ १५३ ॥

संज्वलनसूक्ष्मचतुर्दशघातिनां चतुर्विधस्तु अजघन्यः ।
शेषत्रयः पुनर्द्विविधाः शेषाणां चतुर्विधापि द्विधा ॥ १५३ ॥

जी० प्र—चतुःसंज्वलनानां सूक्ष्मसांपरायबंधचतुर्दशघातिनां च अजघन्यस्थितिबंधः तु-पुनः चतुर्विधो भवति। शेषजघन्यानुत्कृष्टोत्कृष्टत्रयमपि साद्यध्रुवभेदात् द्वेधैव । शेषप्रकृतीनां अजघन्यजघन्यानुत्कृष्टोत्कृष्टाश्चत्वारोऽपि तथा द्विधा ॥ १५३ ॥

स० चं०—च्यारि संज्वलन सूक्ष्मसांपरायविषैं जिनका बंध पाइए ऐसे पांच ज्ञानावरण ५ च्यारि दर्शना-

(१)

ज्ञा	द	वे	मो	आ	ना	गो	अं	१८	१०२
उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २
अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २
ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २
अ ४	अ ४	अ ४	अ ४	अ २	अ ४	अ ४	अ ४	अ ४	अ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बरण४ पांच अंतराय ५ ए घातिया चौदह १४ इन अठारह प्रकृतिनिका अजघन्य स्थिति बंध तौ सादि अनादि ध्रुव अध्रुव च्यारि प्रकार है बहुरि जघन्य अनुत्कृष्ट उत्कृष्ट ए तीन स्थिति बंध सादि अर अध्रुव दोय ही प्रकार हैं इनि विना अवशेष सर्व प्रकृतिनिका अजघन्य जघन्य अनुत्कृष्ट उत्कृष्ट च्यार्यो ही प्रकार स्थितिबंध है सो सादि अर अध्रुव दोय प्रकार ही है। अजघन्यादिकका स्वरूप वा सादि इत्यादिकका स्वरूप पूर्वै कह्या था सो जानना १५३

सव्वाओ दु ठिदीओ सुहासुहाणंपि होंति असुहाओ।
माणुसतिरिक्खदेवाउगं च मोत्तूण सेसाणं ॥ १५४ ॥

सर्वास्तु स्थितयः शुभाशुभानामपि भवंति अशुभाः।
मनुष्यतिर्यग्देवायुष्कं च मुक्त्वा शेषाणां ॥ १५४ ॥

जी० प्र—मानुष्यतिर्यग्देवायूंषि मुक्त्वा शेषसर्वशुभाशुभप्रकृतीनां सर्वाः स्थितयः संसारहेतुत्वादशुभा एवेति ज्ञातव्यं ॥१५४॥ अथाबाधां लक्षयति—

स० चं०—मनुष्यायु तिर्यंचायु देवायु विना अवशेष सर्व शुभ प्रकृति वा अशुभ प्रकृतिनिकी स्थिति सो अशुभ ही है जातैं संसारकौं कारण है याहीतैं तीन प्रकृतिनिविना अवशेष सर्व प्रकृतिनिका बहुत कषायी संक्लेशी जीवकैं स्थिति बंध बहुत प्रमाण लीए हो है। स्तोक कषायी विशुद्ध जीवकैं थोरा प्रमाण लीए हो है ॥ १५४ ॥
आगैं आबाधाका लक्षण कहै हैं—

कम्मसरूवेणागयदव्वं ण य एदिउदयरूवेण।
रूवेणुदीरणस्स व आबाहा जाव ताव हवे ॥ १५५ ॥

कर्मस्वरूपेणागतद्रव्यं न चैति उदयरूपेण।
रूपेणोदीरणाया वा आबाधा यावत्तावद्भवेत् ॥ १५५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—कार्मणशरीरनामकर्मोदयापादितजीवप्रदेशपरिस्पंदलक्षणयोगहेतुना कार्मणवर्गणायातपुद्गलस्कंधाः मूलोत्तरोत्तरोत्तरप्रकृतिरूपेण आत्मप्रदेशेषु अन्योन्यप्रदेशानुप्रवेशलक्षणबंधरूपेणावस्थिताः फलदानपरिणतिलक्षणोदयरूपेण अपक्वपाचनलक्षणोदीरणारूपेण वा यावन्नायांति तावान् काल आवाधेत्युच्यते ॥ १५५ ॥ अथ तां मूलप्रकृतिष्वाह—

स० चं०—कार्मण शरीर नामा नामकर्मके उदयतें अर जीवके प्रदेशनिका जो चंचलपना सोई योग तिसके निमित्तिकरि कार्माणवर्गणारूप पुद्गलस्कंध मूल प्रकृति वा उत्तरप्रकृति रूप होइ आत्माके प्रदेशनिविषै परस्पर प्रवेश है लक्षण जाका ऐसे बंधरूप करि जे तिष्ठैं हैं ते यावत उदयरूप वा उदीरणारूप करि न प्राप्त होंइ तावत् काल आबाधा कहिए। भावार्थ—कर्म प्रकृतिका बंध भए पीछे यावत् काल उदयरूप उदीरणारूप न प्रवर्तें तिस कालकौं आबाधा काल कहिए है। तहां फल देने रूप परिणमना सो तौ उदय कहिए। विनाही काल आए अपक्व कर्मका पचना सो उदीरणा कहिए॥ १५५ ॥ आगैं तिस आबाधाकौं मूल प्रकृतिनिविषैं कहैं हैं—

उदयं पडि सत्तण्हं आबाहा कोडकोडि उवहीणं।
वाससयं तप्पडिभागेण य सेसट्ठिदीणं च ॥ १५६ ॥

उदयं प्रति सप्तानामाबाधा कोटीकोटिरुदधीनां।
वर्षशतं तत्प्रतिभागेन च शेषस्थितीनां च ॥ १५६ ॥

जी० प्र०—आयुर्वर्जितसप्तकर्मणां उदयं प्रति आबाधा कोटीकोटिसागरोपमाणां शतवर्षमात्री भवति तथा सति शेषस्थितीनां तत्प्रतिभागेनैव ज्ञातव्या। तद्यथा—

कोटीकोटिसागरोपमस्य शतवर्षं तदा सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमस्य किमिति ? त्रैराशिके कृते प्र-सा १ को २ । फ-व १०० । इ सा ७० को २ लब्धं मिथ्यात्वोत्कृष्टाबाधा सप्तसहस्री भवति ७००० । एवं शेषचालीसियतीसियवीसियादीनामप्यानेतव्या । 'सण्णिअसण्णिचउक्के एगे अंतोमुहुत्तमाबाहा' इत्यादि प्र-सा २५ । फ २ इ सा २५ ४ लब्धा २ इत्यादि अर्थातः कोटीकोटिसागरोपमस्याह—

७ ४
१ १ १ १ १ १ १ १
२ १ २५ २ १ । २५ । ७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—आयु विना सात कर्मनिकी उदयकी अपेक्षा आबाधा एक कोडाकोडी सागर स्थितिका एकसौ वर्ष जानने। अवशेष स्थितिकी इस ही प्रतिभागकरि आबाधा जाननी। सो कहिए है—एक कोडाकोडी सागर स्थितिकी सौ वर्ष आबाधा होइ तौ सत्तरि कोडाकोडी सागरस्थितिकी आबाधा केती होइ? ऐसैं त्रैराशिक करिए। तहां प्रमाण राशी एक कोडाकोडी सागर, फलराशि सौ वर्ष, इच्छाराशि सत्तरि कोडाकोडी सागर, तहां फल राशीकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीए लब्ध राशिका प्रमाण सात हजार वर्ष आए सोई मिथ्यात्व प्रकृतिकी उत्कृष्ट आबाधा जाननी। ऐसैं ही अपनी अपनी स्थिति प्रमाण इच्छा राशि कीएं अपना अपना आबाधा कालका प्रमाण आवै है। जिनकी चालीस कोडाकोडी सागर की स्थिति है तिनका च्यारि हजार वर्ष प्रमाण आबाधा काल है। जिनकी तीस कोडाकोडी सागरकी स्थिति है तिनका तीन हजार वर्ष प्रमाण आबाधा का काल है। ऐसैं और भी प्रकृतिनिका आबाधा काल जानना। बहुरि 'सण्णिअसण्णि चउक्के एगे अंतोमुहुत्तमाबाहा' इस सूत्रकरि पूर्वें वेंद्रियादिककैं स्थितिसंबंधी आबाधा कहि आए हैं सो जाननी ॥ १५६ ॥ आगें अंतः—कोटाकोटी सागरप्रमाण स्थितिकी आबाधाका प्रमाण कहिए है—

अंतोकोडाकोडिट्ठिदिस्स अंतोमुहुत्तमाबाहा।
संखेज्जगुणविहीणं सव्वजहण्णट्ठिदिस्स हवे ॥१५७॥

अंतःकोटीकोटिस्थितेः अंतर्मूहूर्त आबाधा।
संख्यातगुणविहीनः सर्वजघन्यस्थितेर्भवेत् ॥ १५७ ॥

जी० प्र०—अंतःकोटीकोटिसागरोपमस्थितेराबाधा अंतर्मुहूर्तो भवति २ १ सर्वजघन्यस्थितेस्तु ततः संख्यातगुणहीना भवति २ १ प्र— ४
१०,८०००० । फ सा १ को २ । इ मु १ लब्धस्थितिः ९,२५,९२,५९२ । ६४ प्र—सा १ को २ । फ—मु १०८०००० । इ ९२५९२५९२ । ६४
१०८ १०८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लब्धो मुहूर्तः १ । प्र–सा ७० को २ । फ आबाधा ७००० । इ सा १ लब्धं आबाधा उच्छ्वासः १ ॥ १५७ ॥ आयुष आह—

१

सं० च०—अंतःकोटाकोटी सागर प्रमाण स्थितिका आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है बहुरि सर्व कर्मनिकी जघन्यस्थितितैं ताकी आबाधा तींहिस्यों संख्यातगुणी घाटि है तहां सौ वर्षके दश लाख असी हजार मुहूर्त होंइ सो इतने प्रमाण आबाधा एक कोडाकोडी सागर स्थितिकी होइ तौ एक मुहूर्त आबाधा कितनी स्थितिकी होइ ऐसैं त्रैराशिक करिए तहां प्रमाणराशि मुहूर्त दशलाख असी हजार, फलराशि एक कोडाकोडी सागर, इच्छाराशि एक मुहूर्त सो फलकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं नवकोडि पचीस लाख वाणवै हजार पांचसै वाणवै सागर अर एक सागरका एकसौ आठ भाग कीजिए तामैं चौंसठि भाग इतनी स्थिति कीएं एक मुहूर्त आबाधा भई । बहुरि प्रमाणराशि एक कोडाकोडी सागर, फलराशि दशलाख असी हजार मुहूर्त, इच्छा नवकोडि पचीस लाख वाणवै हजार पांचसै बाणवै अर चौंसठि एकसौ आठवां भाग प्रमाण सागर कीए तिस स्थितिकी आबाधा एक मुहूर्त हो है । बहुरि प्रमाण राशि सत्तर कोडाकोडी सागर, फलराशि आबाधाका प्रमाण सात हजार वर्ष, इच्छा एक सागर, सो फलकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्ध प्रमाण साधिक संख्यात उच्छ्वास मात्र आया सो एक सागरकी आबाधा जाननी ॥ १५७ ॥ आयु कर्मकी आबाधा कहै हैं—

पुव्वाणं कोडितिभागादासंखेयअद्धवोत्ति हवे ।
आउस्स य आबाहा ण ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ॥१५८॥

पूर्वाणां कोटित्रिभागादसंक्षेपाद्धा वा इति भवेत् ।
आयुषश्च आबाधा न स्थितिप्रतिभाग आयुषः ॥ १५८ ॥ १९१

जी० प्र०—आयुःकर्मणा उत्कृष्टाबाधा पूर्वकोटिवर्षत्रिभागो भवति जघन्योऽन्तर्मुहूर्तोः वा पक्षांतरेण असंक्षेपाद्धा वा भवति । न विद्यते अस्मादन्यः संक्षेपः असंक्षेपः, स चासौ अद्धा च असंक्षेपाद्धा आवल्यसंख्येयभागमात्रत्वात् । आयुःकर्मणा एवमेव भवति न च स्थितिप्रतिभागेन । तर्हि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असंख्यातवर्षायुष्काणां त्रिभागे उत्कृष्टा कथं नोक्ता ? इति तन्न, देवनारकाणां स्वस्थितौ षण्मासेषु भोगभूमिजानां नवमासेषु च अवशिष्टेषु त्रिभागेन आयुर्बंधसंभवात् । यद्यष्टापकर्षेषु क्वचिन्नायुर्बद्धं तदावल्यसंख्येयभागमात्रायाः समयोनमुहूर्तमात्राया वा असंक्षेपाद्धायाः प्रागेवोत्तरभवायुरंतर्मुहूर्तमात्रसमयप्रबद्धान् बद्ध्वा निष्ठापयति । एतौ द्वावपि पक्षौ प्रवाह्योपदेशत्वात् अंगीकृतौ ॥ १५८ ॥ उदीरणां प्रत्याह—

स० चं०—आयुकर्मकी उत्कृष्ट आबाधा कोडि पूर्व वर्षका तीसरा भाग प्रमाण जाननी । बहुरि जघन्य आबाधा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है अथवा कोई आचार्यकी पक्षतैं असंक्षेपाद्धा प्रमाण है । नाहीं है संक्षेप कहिए थोरा अद्धा कहिए काल जातैं सो असंक्षेपाद्धा कहिए सो यहु काल आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण है सो आयु कर्मकी आबाधा ऐसैं ही है । अन्य कर्मनिकी ज्यों स्थितिके समान आबाधा नाहीं है । तहां प्रश्न—जो असंख्यात वर्षका जिनका आयु है तिनका त्रिभाग प्रमाण आबाधा क्यों न कही ? ताका समाधान—जो देव नारकी तिनकैं तो छह महीना आयुका अवशेष रहै अर भोगभूमियांकै नव महीना आयुका अवशेष रहै तब त्रिभाग करि आयु बंधै है अर कर्मभूमिया मनुष्य तिर्यंचकै अपनी सर्व आयुका त्रिभाग करि आयु बंधै है सो कर्मभूमियाकी उत्कृष्ट स्थिति कोडि पूर्ववर्ष प्रमाण है तातैं तिसहीका त्रिभाग उत्कृष्ट आबाधा काल कह्या सो त्रिभाग करि आठ अपकर्षनिविषैं आयु बंधैं अर जो कदाचित् किसीही अपकर्षमें आयु न बंधै तो कोई आचार्यके मत तौ एक समय आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण अर कोई आचार्यके मत एक समय घाटि मुहूर्त प्रमाण आयुका अवशेष रहै तींहिके पहिले ही उत्तर भवकी आयुकर्मकौं अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण समयप्रबद्धनिविषैं बंधकरि निष्ठापन करै

१

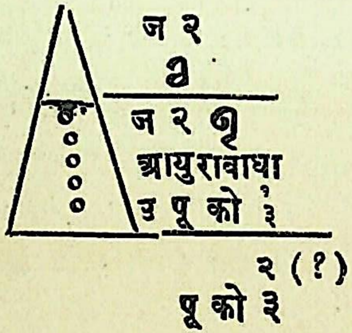

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं ए दोऊ पक्ष आचार्यनिका परंपरा उपदेश करि अंगीकार कीए हैं ॥ १५८ ॥ आगैं उदीरणाकी अपेक्षा आबाधाकौं कहे हैं—

आवलियं आबाहा उदिरणमासिज्ज सत्तकम्माणं ।
परभवियआउगस्स य उदीरणा णत्थि णियमेण ॥१५९॥

आवलिकमाबाधा उदीरणामाश्रित्य सप्तकर्मणां ।
परभवीयायुष्कस्य च उदीरणा नास्ति नियमेन ॥ १५९ ॥

जी० प्र०—उदीरणामाश्रित्य आयुर्वर्जितसप्तमूलप्रकृतीनां आबाधा आवलिकैव भवति, स चावलिः अचलावलिरित्युच्यते, तां त्यक्त्वा अपकृष्टद्रव्यं उदयावल्यां उपरितनस्थितौ तु चरमे अतिस्थापनावलीं त्यक्त्वा नानागुणहानिषु च सर्वनिषेकेषु, "अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयभागहारेण मज्झिमधणमवहरिदे पचयं तं दोगुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेयं तत्तो विसेसहीणकमं" इति निक्षिपेत् उदीरणाविधाने इति ज्ञातव्यं ।

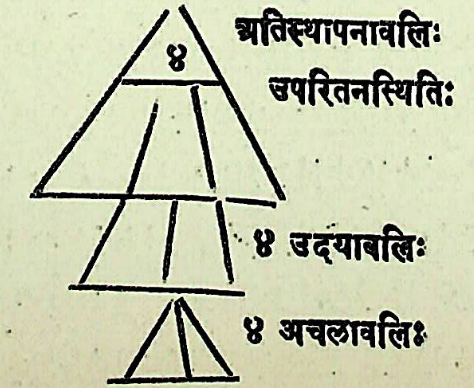

॥ १५९ ॥ निषेकस्वरूपमाह—

स० चं०—उदीरणाकौं आश्रयकरि आयु विना सात मूल प्रकृतिनिकी आबाधा एक आवलीकाल प्रमाण है
भावार्थ—जो कर्म उदय आवै तौ बंधे पीछै पूर्वै कह्या था आबाधाकालका प्रमाण सो व्यतीत भए पीछै उदय आ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वे। बहुरि जो कर्म उदीरणारूप प्रवर्तें तौ बंधे पीछैं एक आवली प्रमाण काल गए पीछैं भी उदारणा रूप होइ तातैं उदीरणाकी अपेक्षा आबाधा एक आवली प्रमाण कही। बहुरि आयुकर्मकी उदीरणा जिस आयुकौं भोगवै है तिस ही आयुकी उदीरणा होइ अर बध्यमान जो आगामी उत्तर भवका आयु ताकी उदीरणा न होइ नियमकरि। बहुरि कर्म है सो आवलीकाल प्रमाण तौ जैसें बंधे है तैसें ही रहै, उदयरूप वा उदीरणा रूप न होई तातैं इस आवलीकौं अचलावली कहिए है। तिस अचलावलीकौं छोड़िकरि पीछे कर्म परमाणूनिका समुदायमैंस्यों केतकि कर्मपरमाणूनिका अपकर्षण करि जे उदयावलीविषैं प्राप्त करीं तेतौ आवलीकालविषैं उदय देकरि खिरैं। अर जे उपरितन स्थितिविषैं प्राप्त करीं ते उदयावलीतैं ऊपरि की स्थितिके अनुसार खिरैं। ते अंतकेविषैं आवलीका प्रमाण अतिस्थापनावलीकौं छोडि अैसैं जे परमाणू प्राप्त करीं ते नानागुण हानिकरि सर्व निषेकनिविषैं खिरैं है तहा उदयावलीविषैं दीया उदीरणा द्रव्य कैसें खिरै है? सो कहिए है—

"अद्धाणेण सव्वधणे खंडिदे मज्झिमधणमागच्छादि तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयभागहारेण मज्झिमधणमवहरदे पचयं तं दोगुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेयं तत्तो विसेसहीणकमं।" अध्वान कहिए विवक्षित कालके समयनिका प्रमाण सो गच्छ ताकरि सर्व धन कहिए विवक्षित सर्वपरमाणूनिका प्रमाणकौं खंडिते कहिए भाग दीएं मध्यमधन कहिए वीचिका समयविषैं जेती खिरैं तिसका प्रमाण आवै है। तिस मध्यम धनकौं एक घाटि गच्छका आधा प्रमाण सो निषेक भागहार जो दोगुणहानि तामैंस्यों घटाएं जो प्रमाण होइ ताका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सो चयका प्रमाण जानना। तिस चयकौं, दोगुणहानि कहिए गुणहानिके प्रमाणतैं दूणा प्रमाण ताकरि गुणें आदि निषेक कहिए पहिला समयविषैं जेती परमाणू खिरैं तिनका प्रमाण जानना। बहुरि द्वितीयादिक समयसंबंधी निषेकनिविषैं विशेष कहिए एक एक चय घाटि परमाणूनिका खिरणा जानना। इनि सबनिका विशेष स्वरूप पूर्वें कहि आए हैं तथा आगे कहैंगे सो जानना। अैसैं विना ही काल आए जैसैं पालकरि अंब पकाइए है तैसैं अपक्व कर्मकौं उदीरणाकरि उदयावलीविषैं प्राप्त कीया। तिस कर्मके खिरनेका अैसा विधान जानना॥ १५१॥ आगैं निषेकका स्वरूप कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आबाहूणियकम्मट्ठिदी णिसेगो दु सत्तकम्माणं ।
आउस्स णिसेगो पुण सगट्ठिदी होदि णियमेण ॥ १६० ॥

आबाधोनितकर्मस्थितिः निषेकस्तु सप्तकर्मणां ।
आयुषो निषेकः पुनः स्वकास्थितिर्भवति नियमेन ॥ १६० ॥

जी० प्र०—आयुर्वर्जितसप्तमूलप्रकृतीनां आबाधोनितकर्मस्थितिः तु—पुनः निषेकः स्यात् । आयुषः पुनः स्वस्थितिः सर्वैव निषेको भवति नियमेन ॥ १६० ॥

स० चं०—आयुविना सात कर्मनिका निषेक आबाधाकरि हीन कर्मस्थिति प्रमाण जानना, समय समय प्रति विषैं कर्म परमाणू खिरैं तिनके समूहका नाम निषेक जानना । सो विवक्षित कर्मकी जेती स्थिति बंधी होइ तिसमैंस्यों आबाधा कालविषैं तौ कोई परमाणू खिरै नाहीं, पीछे समय समयप्रति विवक्षित कर्म परमाणू अनुक्रमतैं खिरैं तातैं जो कर्मकी स्थिति होइ तामैंस्यों आबाधा काल घटाएं जो काल रहै ताके समयनिका जो प्रमाण सोई निषेकनिका प्रमाण जानना सो सात कर्मका निषेक तौ ऐसैं जानना बहुरि आयु कर्मकी जेती स्थिति होइ सोई निषेकनिका प्रमाण जानना । इहां आबाधा नाहिं घटावनी जातैं आयु कर्मकी आबाधा तौ पहला भवहीमें होय गई पीछैं जो पर्याय धरया तहां आयु कर्मकी स्थितिके जेते समय हैं तिन सर्व समयनिविषैं प्रथम समयस्यों लगाय अंत समय पर्यंत समय समय प्रति परमाणू क्रमतैं खिरैं हैं तातैं आयु कर्मकी जेती स्थिति होइ तेते समयनिका जो परिमाण सोई आयु कर्मके निषेकनिका प्रमाण जानना ॥ १६० ॥

आबाहं बोलाविय पढमणिसेगम्मि देय बहुगं तु ।
तत्तो विसेसहीणं बिदियस्सादिमणिसेओत्ति ॥ १६१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आबाधां वा अपलाप्य प्रथमनिषेके देयं बहुकं तु।
ततो विशेषहीनं द्वितीयस्यादिमनिषेक इति ॥ १६१ ॥

जी० प्र०—कर्मस्थिताबाधां त्यक्त्वा प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके बहुद्रव्यं ददाति। तु पुनः तत उपरि द्वितीयादिनिषेकेषु द्वितीयगुणहानिप्रथमनिषेकपर्यंतेषु विशेषहीनक्रमेण ददाति ॥ १६१ ॥

स० चं०—सो कर्मकी जेती स्थिति बंधी होइ तामैं जिस समय बंध भया हो तीहिंका प्रथम समयमैस्यों लगाय आबाधा काल पर्यंत तौ कोई परमाणू खिरै नाही तातैं तिस आबाधाकालकौं छोडिकरि जो अनंतर समय है तहां प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक है सो इसविषैं और निषेकानितैं बहुत द्रव्य दीजिए है, बहुत परमाणू खिरै हैं बहुरि प्रथम गुणहानिका द्वितीयादि निषेकनिविषैं द्वितीय गुण हानिका प्रथम निषेक पर्यंत एक एक विशेष कहिए चय ताकौं घटाएं जो जो प्रमाण आवै तितना तितना द्रव्य दीजिए है तितनी २ परमाणूं खिरै हैं ॥ १६१ ॥

बिदिये बिदियणिसेगे हाणी पुव्विल्लहाणिअद्धं तु।
एवं गुणहाणिं पडि हाणी अद्धद्धयं होदि ॥ १६२ ॥

द्वितीये द्वितीयनिषेके हानिः पूर्वहान्यर्धं तु।
एवं गुणहानिं प्रति हानिरर्धार्धं भवति ॥ १६२ ॥

जी० प्र०—तु-पुनः द्वितीयगुणहानौ द्वितीयनिषेके हानिः पूर्वहानेरर्धं भवति। एवं गुणहानिं गुणहानिं प्रति हानिः अर्धार्धक्रमा भवति। १।२।४।८।१६।३२ द्रव्यं ६३००। गुणहानिः ८। नानागुणहानिः ६। स्थितिः ४८। अन्योन्याभ्यस्तराशिः ६४।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0:In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चरम	१००
	२००
	४००
	८००
	१६००
प्रथम	३२००

नानागुणहानिनिषेकरचना

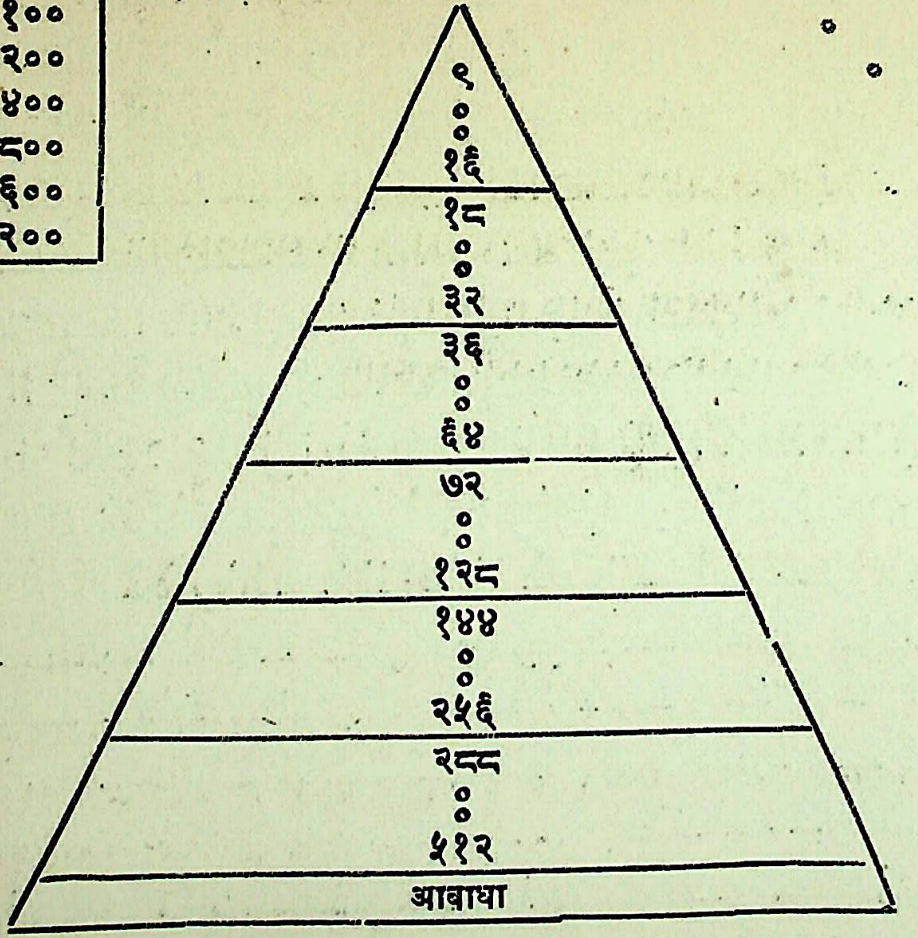

आयुःकर्मनिषेकस्थितिः ॥ १६२ ॥

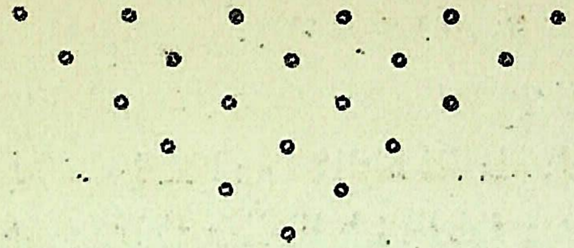

आयुषो यावती स्थितिस्तावान् निषेको भवति।

इति स्थितिबंधप्रकरणं समाप्तं। अथानुभागबंधं त्रयोविंशतिगाथाभिराह—

सं० च०—बहुरि दूसरी गुण हानिविषैं जो जो दूसरा निषेक ताके विषैं प्रथम निषेकतैं पूर्वे निषेक निषेक प्रति जितना घटाया था तिसतैं आधा घटाएं जो प्रमाण रहै तितना द्रव्य देना। ऐसैं ही तृतीयादि निषेकनिविषैं तृतीय गुण हानिका प्रथम निषेक पर्यंत इतने इतने ही घटावने। बहुरि ऐसैं ही गुणहानि गुणहानि प्रति आधा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आधा अनुक्रम जानना सो इस सर्व कथनकौं पूर्व कहि आए हैं वा आगे विशेषकरि कहैंगे सामान्यसा इहां अंक संदृष्टिकरि कहिए है—

विवक्षित कर्मकी परमाणू तरेसाठिसै ६३०० आबाधा विना स्थितिका प्रमाण अठतालीस समय ४८ गुणहानि एक आठ समय प्रमाण ८, तहां सर्वस्थितिविषैं गुणहानि छह ६ दोगुणहानि सोलह १६ अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि ६४ तहां प्रथम गुणहानिविषैं परमाणू वत्तीससै खिरै द्वितीयादिक गुणहानिविषैं आधे आधे खिरैं ३२०० १६००,८००,४००,२००,१००, एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशिका सर्व द्रव्यकौं भाग दीएं अंतकी गुण हानिविषैं परिमाण आवै है यातैं दूणा दूणा द्रव्य आदिकी गुणहानि पर्यंत जानना। बहुरि प्रथम गुणहानिका सर्व द्रव्य वत्तीससै याकौं प्रथम गुणहानिका गच्छका प्रमाण आठ ताका भाग दीए मध्यधन च्यारिसै याकौं एक घाटि गच्छका आबाधा प्रमाण साढा तीन सो निषेक भागहार जो सोला तामैस्यौं घटाएं साढा बारह रहे ताका भाग दीएं बत्तीस पाए सो चय जानना। याकौं दोगुणाहानि सोलाकरि गुणैं पांचसै बारह भए सो प्रथम निषेकसंबंधी द्रव्य जानना यातैं एक एक चय घटाएं द्वितीयादि निषेकसंबंधी द्रव्य होइ ५१२,४८०,४४८,४१६,३८४,३५२,३२०,२८८ बहुरि इस दोयसै अठ्यासीमैं एक चय घट्या तब दोयसै छप्पन्न भया सो प्रथम गुणहानिके प्रथम निषेकतैं आधा परिमाण भया सो यहु द्वितीय गुणहानिका प्रथम निषेक जानना। इहां हानिरूप चयका प्रमाण पूर्वतैं आधा सोला सो तीसरी गुणहानिका प्रथम निषेक पर्यंत सोला सोला घटावना २५६,२४०,२२४,२०८,१९२,१७६,१६०,१४४यामैं एक चय घटाए एकसौ अठाईस सो दूसरी गुणहानिके प्रथम निषेकतैं आधा भया सो यहु तीसरी गुणहानिका प्रथम निषेक है इहां चयका प्रमाण तिसतैं आधा आठ जानना ऐसैं अंतकी छठी गुण हानिपर्यंत सर्व धनका वा निषेक निविषैं द्रव्यका वा चयका आधा आधा प्रमाण जानना। इस अनुक्रमतैं सर्व तरेसाठिसै परमाणू निजस्थितिविषैं खिरै हैं। इस दृष्टांतकरि यथायोग्य सर्व कर्मनिविषैं कथन जानना॥ इति स्थितिबंधप्रकरणं समाप्तं ॥१६२॥ आगैं अनुभाग बंध तेईस गाथानिकरि कहै हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुहपयडीण विसोही तिव्वो असुहाण संकिलेसेण।
विवरीदेण जहण्णो अणुभागो सव्वपयडीणं ॥ १६३ ॥

शुभप्रकृतीनां विशुद्ध्या तीव्रोऽशुभानां संक्लेशेन।
विपरीतेन जघन्योऽनुभागः सर्वप्रकृतीनां ॥ १६३ ॥

जी० प्र०—शुभप्रकृतीनां सातादीनां प्रशस्तानां विशुद्धिपरिणामेन, असाताद्यप्रशस्तानां संक्लेशपरिणामेन च तीव्रानुभागो भवति। विपरीतेन संक्लेशपरिणामेन प्रशस्तानां विशुद्धपरिणामेन च अप्रशस्तानां च जघन्यानुभागो भवति ॥ १६३ ॥

स० च०—शुभ प्रकृति जो साता वेदनीयादिक प्रशस्त प्रकृति तिनका विशुद्धि परिणामनिकरि तीव्र कहिए उत्कृष्ट अनुभाग बंध हो है बहुरि अशुभ प्रकृति जे असातावेदनीयादिक अप्रशस्त प्रकृति तिनका संक्लेश परिणाम करि तीव्र अनुभाग बंध हो है। बहुरि विपरीतेन कहिए शुभ प्रकृतिनिका संक्लेश परिणाम करि अर अशुभ प्रकृतिनिका विशुद्ध परिणाम करि जघन्य अनुभाग बंध हो है। सर्व प्रकृतिनिका ऐसैं अनुभाग बंध जानना। मंदकषाय रूप विशुद्ध परिणाम जानने। तीव्र कषाय रूप संक्लेश परिणाम जानने ॥ १६३ ॥

बादालं तु पसत्था विसोहिगुणमुक्कडस्स तिव्वाओ।
बासीदि अपसत्था मिच्छुक्कडसंकिलिट्ठस्स ॥ १६४ ॥

द्वाचत्वारिंशत्तु प्रशस्ता विशुद्धिगुणोत्कटस्य तीव्राः।
द्व्यशीतिरप्रशस्ताः मिथ्योत्कटसंक्लिष्टस्य ॥ १६४ ॥

जी० प्र०—सातादिप्रशस्ताः द्वाचत्वारिंशद्विशुद्धिगुणेनोत्कटस्य, असातादिचतुर्वर्णोपेताप्रशस्ताः द्व्यशीतिः मिथ्यादृष्ट्युत्कटस्य संक्लिष्टस्य च तीव्रानुभागा भवंति ॥ १६४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० च०—सातावेदनीयादिक वियालीस ४२ प्रशस्त प्रकृति हैं ते विशुद्धता गुणकी उत्कृष्टता तीव्रता जाकैं पाइए तिस जीवकैं तीव्र अनुभाग लीएं बंधे हैं बहुरि असातादिक बियासी ८२ अप्रशस्त प्रकृति ते मिथ्यादृष्टी उत्कृष्ट संक्लेश परिणामका धारी ताकैं तीव्र अनुभागसहित बंधैं हैं। इहां वर्णादि च्यारि प्रकृति शुभ रूप तौ प्रशस्त प्रकृतिनिमैं गिनी और अशुभरूप अप्रशस्त प्रकृतिनिमैं गिनी दोऊ जायगा इनिका ग्रहण कीया है ॥ १६४ ॥

आदाओ उज्जोओ मणुवतिरिक्खाउगं पसत्थासु।
मिच्छस्स होंति तिव्वा सम्माइट्ठिस्स सेसाओ ॥ १६५ ॥

आतप उद्योतो मानवतिर्यगायुष्कं प्रशस्तासु।
मिथ्यस्य भवंति तीव्राः सम्यग्दृष्टेः शेषाः ॥ १६५ ॥

जी० प्र०—प्रशस्तप्रकृतिषु आतपः उद्योतः मानवतिर्यगायुषी चेति चतस्रः विशुद्धमिथ्यादृष्टेः, शेषाः साताद्यष्टत्रिंशद्विशुद्धसम्यग्दृष्टेश्च तीव्रानुभागा भवंति ॥ १६५ ॥

स० च०—तिन वियालीस प्रशस्त प्रकृतिनिविषैं आतप उद्योत मनुष्यायु तिर्यंचायु इन च्यारि प्रकृतिनिका तौ विशुद्ध मिथ्यादृष्टीकैं तीव्र अनुभाग बंध हो है। बहुरि अवशेष अठतीस प्रकृतिनिका विशुद्ध सम्यग्दृष्टीकैं तीव्र अनुभाग बंध हो है ॥ १६५ ॥

मणुओरालदुवज्जं विसुद्धसुरणिरयअविरदे तिव्वा।
देवाउ अप्पमत्ते खवगे अवसेसबत्तीसा ॥ १६६ ॥

मनुष्यौदारिकद्विवज्रं विशुद्धसुरनिरयाविरते तीव्राः।
देवायुरप्रमत्ते क्षपके अवशेषद्वात्रिंशत् ॥ १६६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—सम्यग्दृष्टिषु उक्ताष्टात्रिंशन्मध्ये मनुष्यद्विकं औदारिकद्विकं च वज्रवृषभनाराचसंहननं चेति पंचकं अनंतानुबंधिविसंयोजकानिवृत्तिकरणचरमसमयविशुद्धसुरनारकासंयतसम्यग्दृष्टौ तीव्रानुभागं भवति । देवायुः अप्रमत्ते भवति । अवशिष्टा द्वात्रिंशत् क्षपके एव ॥ १६६ ॥

स० च०—सम्यग्दृष्टीकैं अठतीसका तीव्र अनुभाग बंध कह्या था तिनविषैं मनुष्य गति वा आनुपूर्वी औदारिक शरीर वा अंगोपांग वज्रवृषभ नाराच संहनन इन पंचनिकौं तीव्र अनुभागसहित जो जीव अनंतानुबंधीका विसंयोजनविषै तीन करण करै है तहां अनिवृत्तिकरणका अंतके समय विशुद्ध देव नारकी असंयत सम्यग्दृष्टी है सो बांधै है बहुरि देवायुकौं तीव्र अनुभाग सहित अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव बांधै है । अवशेष बत्तीस प्रकृति तीव्र अनुभाग सहित क्षपक श्रेणीवाला जीव बांधै है ॥ १६६ ॥

उवघादहीणतीसे अपुव्वकरणस्स उच्चजससादे ।
संमेलिदे हवंति हु खवगस्सऽवसेसबत्तीसा ॥ १६७ ॥

उपघातहीनत्रिंशति अपूर्वकरणस्य उच्चयशःसातं ।
संमेलिते भवंति हि क्षपकस्यावशेषद्वात्रिंशत् ॥ १६७ ॥

जी० प्र०—अपूर्वकरणक्षपकस्य उपघातवर्जितषष्ठभागव्युच्छित्तित्रिंशति सूक्ष्मसांपरायस्य उच्चैर्गोत्रयशस्कीर्तिसातवेदनीयेषु मिलितेषु ताः अवशेषद्वात्रिंशत्प्रकृतयो भवंति ॥ १६७ ॥

स० च०—अपूर्व करणका छठा भागमैं तीस व्युच्छित्ति गईं तिनविषैं उपघात विना गुणतीस अर उच्चगोत्र यशस्कीर्ति सातावेदनीय ए सर्व मिली हुई अवशेष बत्तीस प्रकृति कहीं थीं ते जाननी ॥ १६७ ॥

मिच्छस्संतिमणवयं णरतिरियाऊणि वामणरतिरिये ।
एइंदियआदावं थावरणामं च सुरमिच्छे ॥ १६८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यात्वस्यांतिमनवकं नरतिर्यगायुषी वामनरतिरश्चि ।
एकेंद्रियमातापं स्थावरनाम च सुरमिथ्यात्वे ॥ १६८ ॥

जी० प्र०—अप्रशस्तद्व्यशीतिः आतपादयश्चतस्रश्च मिथ्यादृष्टावेव तीव्रानुभागा उक्ताः । तत्र सूक्ष्मत्रयादिमिथ्यादृष्ट्यंतिमनवकं नरतिरश्चोः संक्लिष्टयोः नरतिर्यगायुषी च विशुद्धयोर्भवंति । एकेंद्रियं स्थावरं च संक्लिष्टे आतपस्तु विशुद्धे स्वस्थितिषण्मासावशेषे सुरमिथ्यादृष्टौ भवंति ॥१६८॥

स० च०—बियासी अप्रशस्त अर आताप उद्योत मनुष्यायु तिर्यंचायु इन छियासीका मिथ्यादृष्टिहीकैं तीव्र अनुभाग सहित बंध है तिनविषैं जे मिथ्यादृष्टिविषैं सोलह प्रकृतिकी व्युच्छित्ति कही थी तिनमें सूक्ष्म अपर्याप्त साधारणादिक अंतकी नव प्रकृति तिनकौं तौ संक्लेश परिणामयुक्त मनुष्य वा तिर्यंच, अर मनुष्यायु तिर्यंचायुकौं विशुद्ध परिणामाका धारी देव मनुष्य वा तिर्यंच है सो तीव्र अनुभागसहित बांधै है। बहुरि एकेंद्री स्थावर इन दोऊका तौ संक्लेश परिणामनिका धारी अर आतपका विशुद्ध परिणामांका धारी देव है सो अपना आयुका छह महीना अवशेष रहे तीव्र अनुभाग बांधै हैं ॥ १६८ ॥

उज्जोवो तमतमगे सुरणारयमिच्छगे असंपत्तं ।
तिरियदुगं सेसा पुण चदुगदिमिच्छे किलिट्ठे य ॥ १६९ ॥

उद्योतः तमस्तमके सुरनारकमिथ्यके असंप्राप्तं ।
तिर्यग्द्विकं शेषाः पुनः चतुर्गतिमिथ्ये क्लिष्टे च ॥ १६९ ॥

जी० प्र०—तमस्तमके सप्तमनरके उपशमसम्यक्त्वाभिमुखमिथ्यादृष्टिविशुद्धनारके उद्योतः तीव्रानुभागो भवति अतिविशुद्धस्य तदबंधात् । पुनः सुरनारकमिथ्यादृष्टौ असंप्राप्तसृपाटिकासंहननं तिर्यग्द्विकं च । शेषाः अष्टषष्टिः ६८ पुनः संक्लिष्टचातुर्गतिकमिथ्यादृष्टौ ॥ १६९ ॥ अथ जघन्यानुभागबंधकानाह—

स० चं०—तमस्तमक सातवां नरक तिसविषैं उपशम सम्यक्त्वकौं सन्मुख भया ऐसा विशुद्ध मिथ्यादृष्टि जीव सो उद्योत प्रकृतिकौं तीव्र अनुभाग सहित बांधै है जातैं अतिविशुद्धकैं उद्योत प्रकृतिका बंध न हो है। बहुरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असंप्राप्तसृपाटिकासंहनन अर तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी इनकौं तीव्र अनुभाग सहित देव वा नारकी मिथ्यादृष्टि बांधै है। बहुरि अवशेष रहीं अडसठि ६८ प्रकृतिनिकौं तीव्र अनुभाग सहित च्यार्यो गतिके संक्लेश परिणामनिके धारी मिथ्यादृष्टी जीव बांधै हैं ॥ १६९ ॥ आगैं जघन्य अनुभाग बंध जिनकैं हो है तिनकौं कहैं हैं—

वण्णचउक्कमसत्थं उवघादो खवगघादि पणवीसं।
तीसाणमवरबंधो सगसगवोच्छेदठाणम्हि ॥ १७० ॥

वर्णचतुष्कमशस्तमुपघातः क्षपकघाति पंचविंशतिः।
त्रिंशतामवरबंधः स्वकस्वकव्युच्छेदस्थाने ॥ १७० ॥

जी० प्र०—अप्रशस्तवर्णचतुष्कं उपघातः पंचज्ञानावरणपंचांतरायचतुर्दर्शनावरणनिद्राप्रचलाहास्यरतिभयजुगुप्सापुंवेदचतुःसंज्वलनाश्चेति त्रिंशतः जघन्यानुभागः स्वस्वबंधव्युच्छित्तिस्थाने भवति ॥ १७० ॥

स० चं०—अप्रशस्त वर्णादिक च्यारि ४ उपघात १ ज्ञानावरण पांच ५ अंतराय पांच ५ दर्शनावरण च्यारि ४ निद्रा प्रचला २ हास्य रति भय जुगुप्सा पुरुषवेद ५ संज्वलन कषाय च्यारि ४ इन तीस प्रकृतिनिकी अपनी अपनी जहां बंधविषैं व्युच्छित्ति भई है तहां इनका जघन्य अनुभाग बंध हो है ॥ १७० ॥

अणथीणतियं मिच्छं मिच्छे अयदे हु बिदियकोधादी।
देसे तदियकसाया संजमगुणपच्छिदे सोलं॥ १७१ ॥

अन-स्थानत्रयं मिथ्यात्वं मिथ्ये अयते हि द्वितीयक्रोधादयः।
देशे तृतीयकषायाः संयमगुणप्रस्थिते षोडश ॥ १७१ ॥

जी० प्र०—अनंतानुबंधिनः स्त्यानगृद्धित्रयं मिथ्यात्वं च मिथ्यादृष्टौ, अप्रत्याख्यानकषायाः असंयते, प्रत्याख्यानकषायाः देशसंयते इतीमाः षोडशप्रकृतयः तत्र तत्र संयमगुणाभिमुखे एव विशुद्धजीवे जघन्यानुभागा भवंति ॥ १७१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—अनंतानुबंधी कषाय च्यारि ४ स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन ३ मिथ्यात्व १ ए आठ मिथ्यादृष्टिविषैं, अर अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि असंयत विषैं, प्रत्याख्यान च्यारि कषाय देश संयतविषैं ए सोला प्रकृति इन गुणस्थानविषैं जो जीव संयम गुण धरनेकौं सन्मुख भया ऐसा विशुद्ध जीव ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधे हैं ॥ १७१ ॥

आहारमप्पमत्ते पमत्तसुद्धे य अरदिसोगाणं ।
णरातिरिये सुहुमतियं वियलं वेगुव्वछक्काओ ॥ १७२ ॥

आहारमप्रमत्ते प्रमत्तशुद्धे च अरतिशोकयोः ।
नरतिराश्चि सूक्ष्मत्रयं विकलं वैगूर्वषट्कं ॥ १७२ ॥

जी० प्र०—आहारकद्वयं प्रशस्तत्वात् प्रमत्तगुणाभिमुखसंक्लिष्टाप्रमत्ते जघन्यानुभागं भवति । अरतिशोकौ अप्रशस्तत्वात् अप्रमत्तगुणाभिमुखविशुद्धप्रमत्ते एव । सूक्ष्मत्रयं विकलत्रयं वैक्रियिकषट्कं आयुश्चतुष्कं च नरतिरश्चोरेव ॥ १७२ ॥

स० चं०—आहार द्विक प्रशस्त प्रकृति है तातैं प्रमत्तगुणस्थानकौं सन्मुख भया ऐसा संक्लेशी अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीव ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है। बहुरि अरति अर शोक ए अप्रशस्त हैं तातैं अप्रमत्त गुणस्थानकौं सन्मुख भया ऐसा विशुद्ध प्रमत्तगुणस्थानवर्ती जीव ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है। बहुरि सूक्ष्म अपर्याप्ति साधारण ए तीन अर बेंद्री तेंद्री चौंद्री तीन, देवद्विक नरकद्विक वैक्रियिकद्विक ए छह ६ आयु च्यारि ४ ए सोला प्रकृति मनुष्य वा तिर्यंचकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है ॥ १७२ ॥

सुरणिरये उज्जोवोरालदुगं तमतमम्हि तिरियदुगं ।
णीचं च तिगदिमज्झिमपरिणामे थावरेयक्खं ॥ १७३ ॥

सुरनिरये उद्योतौरालद्विकं तमस्तमसि तिर्यग्द्विकं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीचं च त्रिगतिमध्यमपरिणामे स्थावरैकाक्षं ॥ १७३ ॥

जी० प्र०—उद्योतः औदारिकद्विकं च सुरनारके जघन्यानुभागं लभते। तत्र उद्योतः अतिविशुद्धदेवे बंधाभावात् प्रशस्तत्वात् संक्लिष्टे एव लभते। तिर्यग्द्विकं नीचैर्गोत्रं च सप्तमपृथ्वीनारके विशुद्धे, स्थावरमेकेंद्रियं च नारकाद्विना शेषत्रिगतिजे तीव्रविशुद्धसंक्लेशरहिते मध्यमपरिणामे एव ॥ १७३॥

स० चं०—उद्योत अर औदारिक द्विक ए देव अर नारकीकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है। तहां उद्योत प्रकृति अतिविशुद्ध परिणामी देव ताकैं तौ बंधै नाहीं तातैं संक्लेश परिणामीकैं जघन्य अनुभाग लीएं बंधै है जातैं उद्योत प्रकृति प्रशस्त है। बहुरि तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी नीचगोत्र ए तमस्तमक सांतवां नरकविषैं विशुद्ध जीवकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है। बहुरि स्थावर एकेंद्री ए दोय प्रकृति नारकी विना तीन गतिवाले जीव उत्कृष्ट संक्लेश वा विशुद्ध परिणामकरि राहित जो जीव मध्यम परिणामी होइ ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं।

सोहम्मोत्ति य तावं तित्थयरं अविरदे मणुस्सम्हि।
चदुगदिवामकिलिट्ठे पण्णरस दुवे विसोहीये ॥ १७४ ॥

सौधर्म इति च आतपं तीर्थकरमविरते मनुष्ये।
चतुर्गतिवामक्लिष्टे पंचदश द्वे विशुद्धे ॥ १७४ ॥

जी० प्र०—आतपनामकर्म भवनत्रये सौधर्मद्वये च संक्लिष्टे जघन्यानुभागं भवति तीर्थकृत्त्वं नरकगमनाभिमुखासंयतमनुष्ये एव। उत्तरसूत्रोक्तपंचदशप्रकृतयः चतुर्गतिकमिथ्यादृष्टौ संक्लिष्टे एव, द्वे प्रकृती विशुद्धे एव ॥ १७४ ॥ अमुमुत्तरार्धमेव स्पष्टयति—

स० च०—आतप प्रकृति, भवनत्रिक अर सौधर्म द्विक देव संक्लेश परिणामी होइ ताकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है। बहुरि तीर्थकर प्रकृति जो नरक जानेकौं सन्मुख भया ऐसा असंयत गुणस्थानवर्ती मनुष्य ताकैं जघन्य अनुभागयुक्त बंधै है। बहुरि पंद्रह प्रकृति च्यारयो गतिका संक्लेशी जीवनिकैं अर दोय प्रकृति च्यारयो गतिका विशुद्ध जीवनिकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं ॥१७४॥ तिन पंद्रह अर दोय प्रकृतिनिके नाम कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परघाददुगं तेजदु तसवण्णचउक्क णिमिणपंचिंदी।
अगुरुलहुं च किलिट्ठे इत्थिणउंसं विसोहीये ॥ १७५॥

परघातद्विकं तेजोद्वि त्रसवर्णचतुष्कं निर्माणपंचेंद्रियं।
अगुरुलघु च क्लिष्टे स्त्रीनपुंसकं विशुद्धे ॥ १७५॥

जी० प्र०—परघातोच्छ्वासौ तैजसकार्मणे त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकानि शुभवर्णचतुष्कं निर्माणं पंचेंद्रियं अगुरुलघु चेति पंचदशप्रकृतयः चतुर्गतिमिथ्यादृष्टौ संक्लिष्टे जघन्यानुभागा भवंति प्रशस्तत्वात्। स्त्रीषंढवेदौ तस्मिन् विशुद्धे एव अप्रशस्तत्वात् ॥ १७५॥

स० चं०—परघात उच्छ्वास ए दोय २ तैजस कार्मांण ए दोय २ त्रस बादर पर्याप्तक प्रत्येक ए च्यारि ४ शुभरूप वर्णादिक च्यारि ४ निर्माण १ पंचेंद्री १ अगुरुलघु १ ये पंद्रह प्रकृति च्यार्‍यो गतिका संक्लेशी जीवाकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं जातैं ए प्रकृति प्रशस्त हैं। बहुरि स्त्रीवेद अर नपुसंक वेद ए दोऊ अप्रशस्त हैं तातैं च्यार्‍यो गतिका विशुद्ध जीवकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै है ॥ १७५॥

सम्मो वा मिच्छो वा अट्ठ अपरियत्तमज्झिमो य जादि।
परियत्तमाणमज्झिममिच्छाइट्ठी दु तेवीसं ॥ १७६॥

सम्यग्वा मिथ्यो वा अष्ट अपरिवर्तनमध्यमश्च यदि।
परिवर्तमानमध्यममिथ्यादृष्टिस्तु त्रयोविंशतिः ॥ १७६॥

जी० प्र०—सम्यग्दृष्टिर्वा मिथ्यादृष्टिर्वा वक्ष्यमाणसूत्रोक्तैकत्रिंशत्प्रकृतिषु प्रथमोक्ताष्टानां यद्यपरिवर्तमानमध्यमपरिणामस्तदा जघन्यानुभागं करोति, शेषत्रयोविंशतेस्तु पुनः परिवर्तमानमध्यमपरिणाममिथ्यादृष्टिरेव करोति ॥ १७६॥ ताः काः ? इत्याह—

स० चं०—आगिली गाथाविषैं इकतीस प्रकृति कहिए हैं तिनविषैं पहिली आठ प्रकृति तौ अपरिवर्तमान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मध्यम परिणामी सम्यग्दृष्टी वा मिथ्यादृष्टी जीव जो होइ सो जघन्य अनुभागसहित बांधै है। बहुरि अवशेष तेईस प्रकृति परिवर्तमान मध्यमपरिणामी मिथ्यादृष्टि जीव ही जघन्य अनुभाग सहित बांधै हैं ॥ १७६॥ ते प्रकृति कौंन ? सो कहैं है—

थिरसुहजससाददुगं उभये मिच्छेव उच्चसंठाणं।
संहदिगमणं णरसुरसुभगादेज्जाण जुम्मं च॥ ७७॥

स्थिरशुभयशस्सातद्विकमुभयस्मिन् मिथ्ये एव उच्चसंस्थानं।
संहतिगमनं नरसुरसुभगादेयानां युग्मं च ॥ १७७॥

जी० प्र०—स्थिरास्थिरशुभाशुभयशोऽयशःसातासातान्यष्टौ उभयस्मिन् सम्यग्दृष्टौ वा मिथ्यादृष्टौ वा जघन्यानुभागानि यद्यपरिवर्तमानमध्यमपरिणामाः संति, मिथ्यादृष्टावेव परिवर्तमानमध्यमपरिणामे उच्चैर्गोत्रं संस्थानषट्कं संहननषट्कं प्रशस्ताप्रशस्तगमने नरसुरसुभगादेययुग्मानीति त्रयोविंशतेर्जघन्यानुभागो भवति ॥ १७७॥ तौ अपरिवर्तमानपरिवर्तमानमध्यमपरिणामौ लक्षयति—

अणुसमयं—अनुसमयं केवलं वड्ढमाणा हीयमाणा च—केवलं वर्धमाना हीयमानाश्च जे संकिलेस्सविसोहिपरिणामा—ये संक्लेशविशुद्धिपरिणामाः ते अपरियत्तमाणा णाम—ते अपरिवर्तमाना नाम। जेत्थ पुण—यत्र पुनः ठाइदूण—स्थित्वा परिणामांतरं गंतूणं—परिणामंतरं गत्वा एगदो—एकतः आदिसमए हि—आदिसमये हि स्फुटं आगमणं संभवदि—आगमनं संभवति ते परिणाम—ते परिणामाः परियत्तमाणा णाम—परिवर्तमाना नाम। तत्थ—तत्र उक्कस्सा मज्झिमा जहण्णा त्ति—उत्कृष्टा मध्यमा जघन्या इति तिविहा परिणामा—त्रिविधाः परिणामाः ण—न। तत्थ—तत्र सव्वविसुद्धपरिणामेहिं—सर्वविशुद्धपरिणामैः जहण्णो अणुभागो होदि—जघन्योऽनुभागो भवति। अप्पसत्थपयडीअणुभागदो—अप्रशस्तप्रकृत्यनुभागात् अणंतगुणपसत्थपयडीअणुभागस्स अणंतगुणवड्ढिप्पसंगादो-अनंतगुणप्रशस्तप्रकृत्यनुभागस्य अनंतगुणवृद्धिप्रसंगात् ण—न सव्वसंकिलिट्ठपरिणामेहिं य-सर्वसंक्लिष्टपरिणामैश्च तिव्वसंकिलिस्सेण—तीव्रसंक्लेशेन असुहाणं पयडीणं—अशुभानां प्रकृतीनां अणुभागवड्ढिप्पसंगादो—अनुभागवृद्धिप्रसंगात् तम्हा--तस्मात् जहण्णुक्कस्सपरिणामणिराकरट्ठं-जघन्योत्कृष्टपरिणामनिराकरणार्थं, परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेहिंचि उत्तं-परिवर्तमानमध्यमपरिणामैरित्युक्तं ॥ १७७॥

अथ मूलप्रकृतीनां उत्कृष्टाद्यनुभागानां साद्यादिसंभवासंभवावाह—

स० चं०—स्थिर अस्थिर २ शुभ अशुभ २ यशः अयशः २ साता असाता २ ए आठ अपरिवर्तमान मध्य-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

म परिणामी सम्यग्दृष्टी वा मिथ्यादृष्टी दोऊकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं। बहुरि उच्चगोत्र संस्थान छह ६ संहनन छह ६ प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति २ मनुष्यगति वा आनुपूर्वी २ देवगति व आनुपूर्वी २ सुभग दुर्भग २ आदेय अनादेय २ ए तेईस प्रकृति परिवर्तमान मध्यम पारिणामी मिथ्यादृष्टी जीवहीकैं जघन्य अनुभाग सहित बंधै हैं। इहां अपरिवर्तमान मध्यम परिणाम अर परिवर्तमान मध्यम परिणाम का लक्षण कहिए है—

अणुसमयं केवलं वढ्ढमाणा हीयमाणा च जे संकिलेस्सविसोहिपरिणामा ते अपरियत्तमाणा णाम। जेत्थ पुण ठाविदूण परिणामंतरं गंतूणं एगदोहि आगमणं संभवदि ते परियत्तमाण णाम। तत्थ उक्कस्सा मज्झिमा जहण्णा तिविहा परिणामा ण। तत्थ सव्व बिसुद्धपरिणामेहि य जहण्णो अणुभागो होदि अप्पसत्थपयडीणं अणुभागादो अणंतगुणपसत्थपयडी अणुभागस्स अणंतगुणबड्ढिप्पसंगादो ण सव्व संकिलेट्ठपरिणामेहि य तिव्वसंकिलिस्सेण असुहाणं पयडीणं अणुभागबड्ढिप्पसंगादो तम्हा जहण्णुक्कस्स परिणामणिराकरणट्ठं परियत्तमाणमज्झिमपरिणामेहि ति उत्तं।

अणुसमयं कहिए समय समय प्रति केवल वर्धमान कहिए बधते ही जाय वा हीयमान कहिए घटतेही जाय असे जे संक्लेश रूप वा विशुद्ध रूप परिणाम ते अपरिवर्तमान असे नाम कहिए जातैं इहां परिणाम पलटि उलटा न आया बहुरि जिस परिणामविषैं तिष्ठकरि और परिणामांतरकौं प्राप्त होइ एक परिणाम थकी पलटि तिसही परिणामविषैं प्राप्त होना संभवै ते परिणाम परिवर्तमान असे नाम कहिए जातैं इहां परिणाम पलटि उलटा आया तहां उतकृष्ट मध्यम जघन्य अैसैं परिणाम तीन प्रकार हैं तहां माहीं सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध परिणामनिकरि जघन्य अनुभाग बंध हो है जातैं अप्रशस्त प्रकृतिनिके अनुभागतैं अनंतगुणां प्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग है। तहां अनंतगुणवृद्धिका प्रसंग है। भावार्थ—सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध परिणामनितैं तौ शुभ प्रकृतिनिका उत्कृष्ट अनुभाग बंध हो है इहां जघन्य अनुभागका कथन है तातैं सर्वोत्कृष्ट विशुद्ध परिणामका ग्रहण न करना। बहुरि सर्वोत्कृष्ट संक्लेश परिणामनिकरि भी जघन्य अनुभागबंध न होइ जातैं तीव्र संक्लेशकरि अशुभ प्रकृतिनिका अनुभाग वृद्धि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रूप बहुत होइ इहां जघन्य अनुभागका कथन है तातैं सर्वोत्कृष्ट संक्लेश परिणामका भी ग्रहण न करना तातैं जघन्य वा उत्कृष्ट परिणामनिके निराकरणके अर्थि परिवर्तमान मध्यम परिणामनिकरि पूर्वोक्त प्रकृतिनिका जघन्य अनुभाग बंध हो है। ऐसैं कह्या ॥१७७॥ आगैं मूल प्रकृतिनिके उत्कृष्टादिके अनुभाग तिनके सादि अनादि ध्रुव अध्रुव भेद संभवे हैं वा न संभवे हैं? सो कहै हैं—

घादीणं अजहण्णोऽणुक्कस्सो वेयणीयणामाणं।
अजहण्णमणुक्कस्सो गोदे चदुधा दुधा सेसा॥ ७८॥

घातिनामजघन्योऽनुत्कृष्टो वदेनीयनाम्नोः।
अजघन्योऽनुत्कृष्टो गोत्रे चतुर्धा द्विधा शेषाः ॥ १७८॥

जी० प्र०—घातिनां चतुर्णां अजघन्यः, वेदनीयनामकर्मणोरनुत्कृष्टः गोत्रस्याजघन्यानुत्कृष्टौ च साद्यनादिध्रुवाध्रुवभेदाच्चतुर्धा भवंति। शेषाः जघन्याजघन्यानुत्कृष्टोत्कृष्टाः साद्यध्रुवभेदाद् द्वेधैव ॥ १७८॥ अथ ध्रुवासु प्रशस्ताप्रशस्तानां अध्रुवाणां च जघन्याजघन्यानुत्कृष्टोत्कृष्टानां संभवत्साद्यादिभेदानाह—

सं० च०—च्यार्‍यो घाति कर्मनिका अजघन्य अनुभागबंध, वेदनीय अर नामकर्मका अनुत्कृष्ट अनुभागबंध, गोत्रकर्मका अजघन्य अर अनुत्कृष्ट बंध ए तौ सादि अनादि ध्रुव अध्रुव भेदतैं च्यार्‍यो प्रकार हैं। बहुरि अवशेष च्यारो घाति कर्मनिका अजघन्य बिना तीनप्रकार, वेदनीय नामका अनुत्कृष्ट विना तीनप्रकार, गोत्रका अजघन्य

(१)

ज्ञा	द	वे	मो	आ	ना	गो	अं
उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २
अ २	अ २	अ ४	अ २	अ २	अ ४	अ ४	अ २
अ ४	अ ४	अ २	अ ४	अ २	अ २	अ ४	अ ४
ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २

२७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुत्कृष्टबिना दोय प्रकार, आयुकर्मका जघन्य अजघन्य उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट च्यार्‍यो प्रकार अनुभागबंध सो सादि अर अध्रुवके भेदतैं दोय ही प्रकार है ॥ १७८ ॥ आगैं ध्रुव प्रकृतिनिविषैं तौ प्रशस्त वा अप्रशस्त प्रकृति अर अध्रुव प्रकृति तिनकैं जघन्य अजघन्य अनुत्कृष्ट उत्कृष्ट अनुभागबंध संभवै है तहां साद्यादिक भेद कहैं हैं—

सत्थाणं धुवियाणमणुक्कस्समसत्थगाण धुवियाणं ।
अजहण्णं च य चदुधा सेसा सेसाणयं च दुधा ॥ १७९ ॥

शस्तानां ध्रुवाणामनुत्कृष्टोऽशस्तकानां ध्रुवाणां ।
अजघन्यश्च च चतुर्धा शेषाः शेषाणां च द्वेधा ॥१७९॥

जी० प्र०—तैजसकार्मणागुरुलघुनिर्माणवर्णगंधरसस्पर्शध्रुवप्रशस्तानां अनुत्कृष्ट एकान्नविंशतिज्ञानदर्शनावरणांतरायमिथ्यात्वषोडशकषायभयद्विवर्णचतुष्कोपघातध्रुवाप्रशस्तानां अजघन्यश्च साद्यादिभेदाच्चतुर्धा भवति, शेषाः तासां जघन्यादयः अध्रुवत्रिसप्ततेर्जघन्यादयश्च साद्यध्रुवभेदाद् द्विधैव ॥ १७९ ॥ अनुभागः किमिति प्रश्ने तत्स्वरूपं प्रथमतः घातिष्वाह—

स० चं०—तैजस १ कार्माण १ अगुरुलघु १ निर्माण १ प्रशस्तवर्णादिक च्यारि ४ ए ध्रुव बंधी प्रशस्त प्रकृति हैं सो इनका तौ अनुत्कृष्ट अनुभाग बंध और ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायके उगणीस १९ मिथ्यात्व एक १ सोलह १६ कषाय, भय जुगुप्सा अप्रशस्त वर्णादिक च्यारि उपघात ए ध्रुवबंधी अप्रशस्त प्रकृति हैं सो इनिका अजघन्य अनुभाग बंध सादि अनादि ध्रुव अध्रुवके भेदतैं च्यारि प्रकार है बहुरि निरंतर जिनका

(२)

ध्रु ८ प्र	ध्रु ४३ अ प्र	अध्रु ७३ प्र
उ २	उ २	उ २
अ ४	अ २	अ २
अ २	अ ४	अ २
ज २	ज २	ज २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंध पाइए अैसी कहीं जे ध्रुवबंध प्रकृति तिनिका तौ इनि विना जघन्यादिक तीन प्रकार अनुभागबंध अर अध्रुव बंधी तेहत्तरि ७३ प्रकृति तिनका जघन्यादिक च्यारि प्रकार सर्व अनुभाग बंध है सो सादि अर अध्रुवके भेदतैं दोय ही प्रकार है॥ १७९॥ अनुभाग कहा कहिए ? अैसा प्रश्न करतैं तिस अनुभागका स्वरूप प्रथम घाति कर्मनिविषैं कहैं हैं—

सत्ती य लदादारूअट्ठीसेलोवमाहु घादीणं।
दारुअणंतिमभागोत्ति देसघादी तदो सव्वं॥ १८०॥

शक्तिश्च लतादार्वस्थिशैलोपमा आहुः घातिनां।
दार्वनंतिमभागः इति देशघाति ततः सर्वं॥ १८०॥

जी० प्र०—घातिनां ज्ञानदर्शनावरणमोहनीयांतरायाणां शक्तयः स्पर्धकानि लतादार्वस्थिशैलोपमचतुर्विभागेन तिष्ठंति खलु स्फुटं। तत्र लताभागमादिं कृत्वा दार्वनंतैकभागपर्यंतं देशघातिन्यो भवंति। तत उपरि दार्वनंतबहुभागमादिं कृत्वा अस्थिशैलभागेषु सर्वत्र सर्वघातिन्यो भवंति॥१८०॥ तासामुत्तरप्रकृतिषु मिथ्यात्वस्य विशेषमाह—

स० चं०—घातिया जे ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय अंतराय कर्म तिनकी शक्ति कहिए स्पर्धक ते लता दारु आस्थि शैलकी उपमाकौं धरैं च्यारि भागनिकरि तिष्ठै हैं। तहां लता कहिए बेलि दारु कहिए काष्ठ अस्थि कहिए हाड शैल कहिए पाषाण पर्वत ए जैसैं आधिक २ कठोरताकौं अनुक्रमतैं धरैं हैं तैसैं स्पर्धक कहिए वर्गणानिका समूह ते लताभाग दारुभाग अस्थिभाग शैलभागकरि च्यारि प्रकार है तिनविषैं अनुक्रमतैं अपने फल देनेकी शक्तिरूप अनुभाग अधिक अधिक जानना। तहां लता भागतैं आदि देकरि दारु भागका अनंतवां भागपर्यंत जे स्पर्धक हैं ते देशघाति जानने। इनके उदय होत संतैं भी आत्माका गुण प्रगट रहै है। बहुरि दारु भागका अनंत भाग २११

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मैंस्यों एक भाग विना अवशेष बहुभागकौं आदि देकरि अस्थिभाग शैलभागविषैं जे स्पर्धक हैं ते सर्वघाती हैं इनके उदय होत संतैं आत्माके गुणका अंश भी प्रगट न होइ। तहां उदाहरण कहिए—

जहां अवधिज्ञानका अंश भी न पाइए तहां अवधिज्ञानावरणका सर्व घातिया स्पर्धकानिका उदय जानना। जहां अवधि ज्ञान पाइए अर अवधिज्ञानावरण भी पाइए तहां अवधिज्ञानावरणके देशघातिया स्पर्धकनिका उदय जानना। ऐसैं और भी प्रकृतिनिविषैं जानना ॥ १८० ॥ तहां उत्तर प्रकृतिनिविषैं मिथ्यात्वप्रकृतिविषैं विशेष हैं सो कहैं हैं—

देसोत्ति हवे सम्मं तत्तो दारूअणंतिमे मिस्सं।
सेसा अणंतभागा अट्ठिसिलाफड्ड्या मिच्छे ॥८१॥

देश इति भवेत् सम्यक्त्वं ततः दार्वनंतिमे मिश्रं।
शेषा अनंतभागा अस्थिशिलास्पर्द्धका मिथ्यात्वे ॥ १८१ ॥

जी० प्र०—लताभागमादिं कृत्वा दार्वनंतैकभागपर्यंतानि देशघातिस्पर्धकानि सर्वाणि सम्यक्त्वप्रकृतिर्भवति, शेषदार्वनंतबहुभागेषु दा १ख^/ख अनंतखंडीकृतेषु एकखंडं दा १ख^/ख ख १ जात्यंतरसर्वघातिमिश्रप्रकृतिर्भवति। शेषदार्वनंतबहुभागभागाः अस्थिशिलास्पर्धकानि च सर्वघातिमिथ्यात्वप्रकृतिर्भवति दा १ख^/ख ख^/ख अ शै ॥ १८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

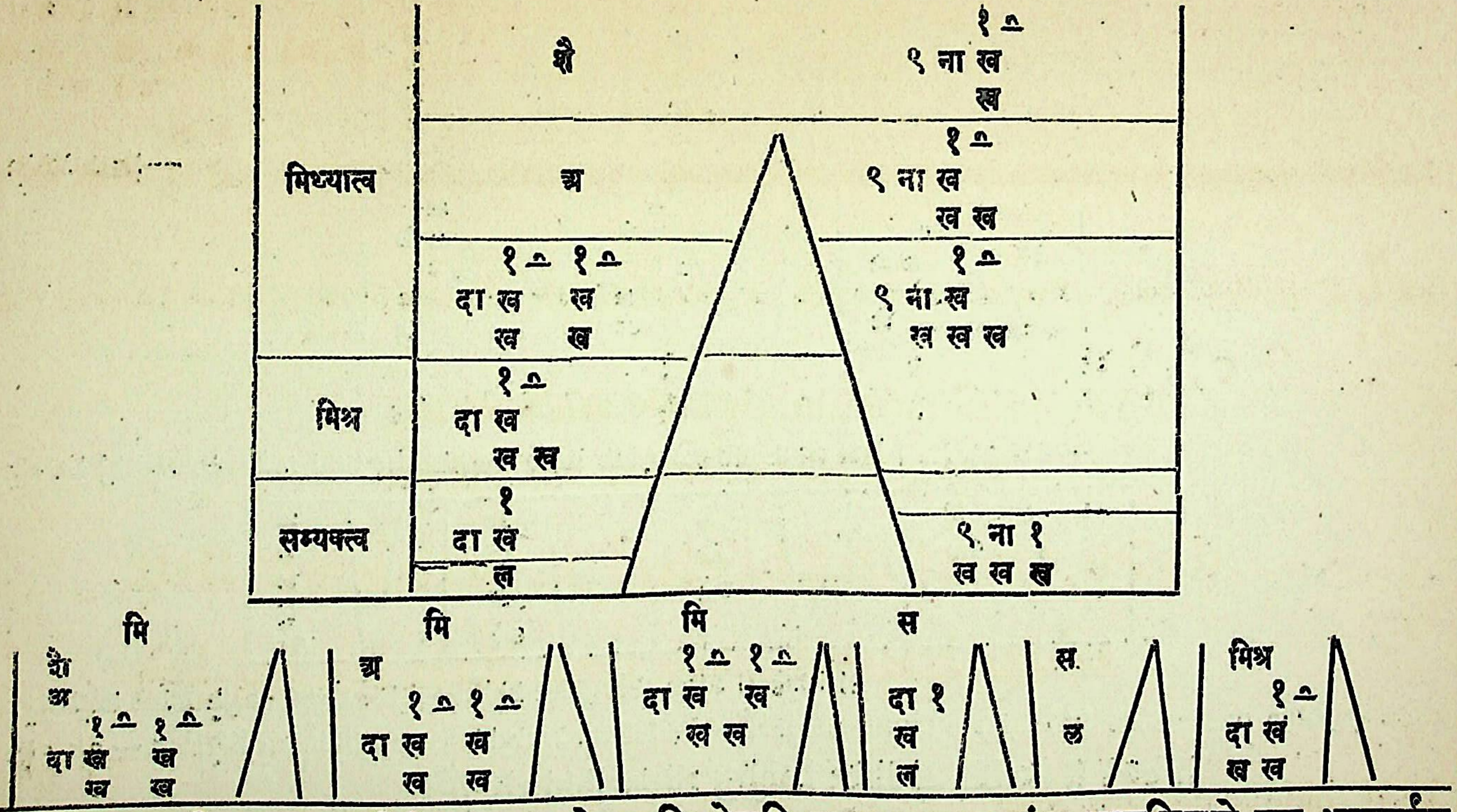

स० च०—मिथ्यात्व प्रकृतिके लताभागने आदि देकरि दारुभागका अनंत भागनिमध्ये एक भागपर्यंत देश घातिया स्पर्धक हैं ते सर्व सम्यक् प्रकृतिरूप हैं। बहुरि दारु भागके एक भाग विना जे अवशेष बहुभाग रहे तिनके प्रमाणका अनंत खंड कीजिए तहां एक खंड प्रमाण जुदी ही जातिका सर्वघातिया स्पर्धक हैं ते मिश्र प्रकृतिरूप जानने। बहुरि अवशेष दारुभागका जो बहुभाग ताका एक भाग विना बहुभाग रहे तिनकौं आदि देकरि अस्थिभाग शैलभागरूप जे स्पर्धक हैं ते सर्वघाति मिथ्यात्व प्रकृतिरूप जानने ॥ १८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आवरणदेसघादंतरायसंजलणपुरिससत्तरसं ।
चउविधभावपरिणदा तिविधा भावा हु सेसाणं ॥ १८२ ॥

आवरणदेशघात्यंतरायसंज्वलनपुरुषसप्तदश ।
चतुर्विधभावपरिणताः त्रिविधा भावा हि शेषाणां ॥ १८२ ॥

जी० प्र०—आवरणेषु देशघातीनि मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानचक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणानि पंचांतरायाः चतुःसंज्वलनाः पुंवेदश्चेति सप्तदश लतादार्वस्थिशैल-लतादार्वस्थि-लतादारु-लतेतिचतुर्विधभावपरिणता भवंति ॥ १८२ ॥

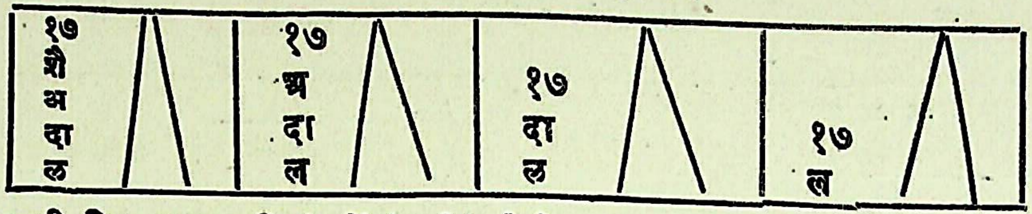

शेषाणां मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती विना घात्यघातिनां सर्वेषां प्रत्येकं त्रिविधा भावाः खलु । तत्र घातिनां—

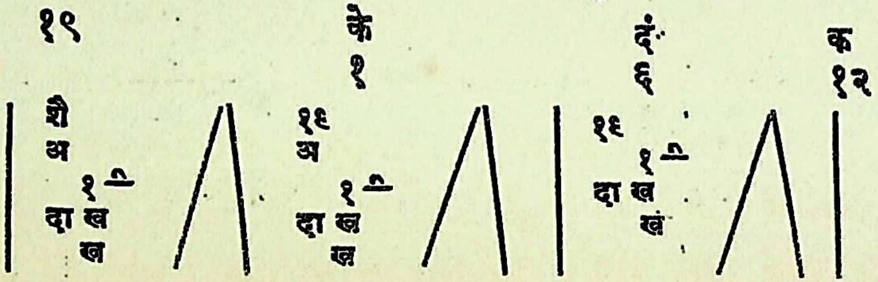

नोकषायाणां—

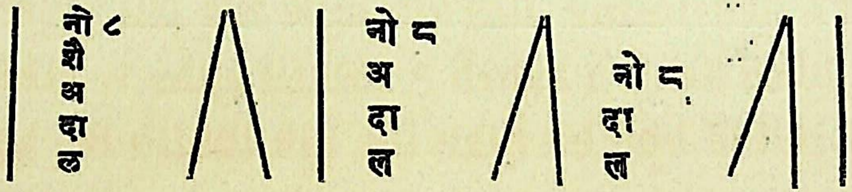

॥ १८२ ॥ शेषाघातिनामाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—आवरणनिविषैं देश घातिया मति श्रुत अवधि मनःपर्यय ज्ञानावरण अर चक्षु अचक्षु अवधि दर्शनावरण ए सात ७ पांच अंतराय ५ च्यारि संज्वलन ४ पुरुषवेद ए सतरह प्रकृति शैल अस्थि दारु लता भाग रूप च्यारि प्रकार भाव लीएं प्रवर्तें हैं तहां शैल अस्थि दारु लता भागरूप प्रवर्तें। बहुरि जहां शैल भाग न होइ तहां अस्थि दारु लता भाग रूप ही प्रवर्तें। जहां अस्थिभाग भी न होइ तहां दारु लता भागरूप ही प्रवर्तें हैं। बहुरि जहां दारुभाग भी न पाइए तहां केवल लता भागरूप ही प्रवर्तें हैं ऐसे सतरह प्रकृति च्यारि प्रकार भाव रूप प्रवर्तें हैं। बहुरि इन सतरह विना अवशेष प्रकृति रहीं तिनविषैं सम्यक्त्व प्रकृति मिश्रप्रकृति विना समस्त घातिया कर्मनिकी प्रकृति तिनके तीन प्रकार ही भाव जानना। तहां केवलज्ञानावरण केवल दर्शनावरण पंच निद्रा अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान बारह कषाय इन उगणीस प्रकृतिनिकैं स्पर्धक सर्वघाती ही हैं देश घाती नाहीं तातैं शैल भाग अर अस्थिभाग अर दारु भागका अनंत बहुभाग रूप स्पर्धक पाइए तहां ए तीनों प्रकार पाइए वा शैलभाग विना दोय प्रकार पाइए वा अस्थिभाग विना भी एक प्रकार ही पाइए है ऐसैं तीनों प्रकार भाव हैं। बहुरि पुरुष वेद विना नोकषाय आठ ते शैल अस्थि दारु लता च्यारि प्रकार अनुभाग धरैं हैं। तहां ए शैल अस्थि दारु लतारूप वा अस्थि दारु लता रूप वा दारु लतारूप ऐसे तीन प्रकार भावकौं धरैं हैं कदाचित् केवल लता भागरूप न प्रवर्तें हैं ॥ १८३ ॥ बहुरि अघाति कर्मकी प्रकृतिनिकौं कहैं हैं—

अवसेसा पयडीओ अघादिया घादियाण पडिभागा।
ता एव पुण्णपावा सेसा पावा मुणेयव्वा ॥ ८३ ॥

अवशेषाः प्रकृतयः अघातिकाः घातिकानां प्रतिभागाः।
ता एव पुण्यपापाः शेषाः पापा मंतव्याः ॥ १८३ ॥

जी० प्र०—शेषाः अघातिप्रकृतयः घातिकर्मोक्तप्रतिभागा भवंति त्रिविधशक्तयो भवंतीत्यर्थः। ता अघातिप्रकृतय एवं पुण्यप्रकृतयः पापप्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृतयश्च भवंति, शेषघातिप्रकृतयः सर्वा अपि पापान्येवेति मंतव्यं ॥१८३॥ घातिनां सर्वेषां स्पर्धकानि लतादार्वस्थिशैलनामानीत्युक्तानि । इदानीं अघातिनां तानि प्रशस्ताप्रशस्तानां नामांतरेणाह—

स० चं०—अवशेष अघातिया कर्मनिकी प्रकृति घातियाकर्मवत् प्रतिभाग युक्त जाननी । इनके स्पर्धक भी तीन भावरूप ही प्रवर्तें हैं । ते अघातिया कर्मनिकी प्रकृति पुण्य प्रकृति वा पाप रूप प्रकृति हैं । अवशेष घातिया कर्मनिकी सर्व प्रकृति पापरूप ही जाननी ॥ १८३ ॥ तहां घातिया कर्मनिके स्पर्धक तिनके तो लता दारु अस्थि शैल ऐसें नाम कहे । अब प्रशस्त अप्रशस्त अघातिया कर्मनिके स्पर्धक तिनकौं और नाम करि कहिए है—

गुडखंडसक्करामियसरिसा सत्था हु णिंबकंजीरा ।
विसहालाहलसरिसाऽसत्था हु अघादिपडिभागा ॥ ८४ ॥

गुडखंडशर्करामृतसदृशाः शस्ता हि निंबकांजीराः ।
विषहालाहलसदृशाः अशस्ता हि अघातिप्रतिभागाः ॥ १८४ ॥

जी० प्र०—अघातिनां प्रतिभागाः शक्तिविकल्पाः प्रशस्तानां गुडखंडशर्करामृतसदृशाः खलु स्फुटं, अप्रशस्तानां निंबकांजीरविषहलाहलसदृशाः खलु स्फुटं । सर्वप्रकृतयः १२२, तासु घातिन्यः ४७, अघातिन्यः ७५ । एतासु प्रशस्ताः ४२ अप्रशस्ताः ३३, अप्रशस्तवर्णचतुष्कमस्तीति तन्मिलिते ३७ ।

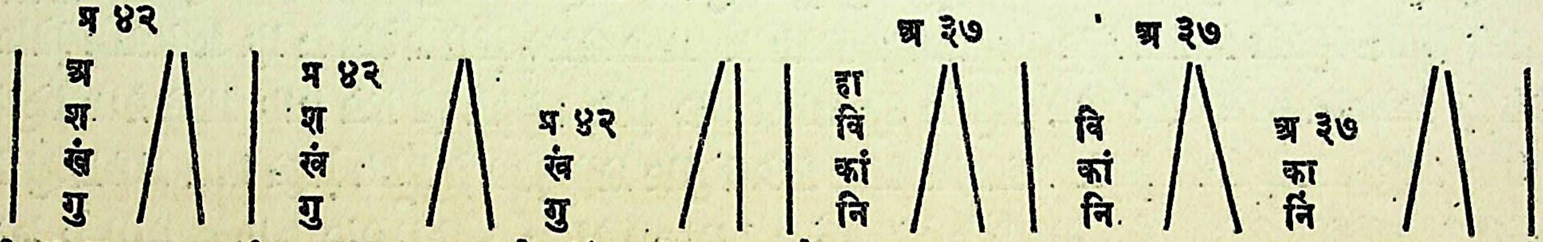

॥ १८४ ॥ इत्यनुभागबंधः समाप्तः । अथ प्रदेशबंधं त्रयस्त्रिंशद्गाथासूत्रैराह—

स० चं०—अघातिया कर्मनिके प्रतिभाग कहिए शक्तिके भेद प्रशस्तानिके तौ गुड खंड शर्करा अमृत समान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जानने जैसैं गुड अर शर्करा, मिश्री अर अमृत ए अधिक अधिक सुखकौं कारण मिष्ट हैं तैसैं गुडभाग खंडभाग शर्कराभाग अमृतभाग रूप प्रशस्त प्रकृतिनिकैं स्पर्धक अधिक अधिक संसारीक सुखकौं कारण हैं। बहुरि अप्रशस्त प्रकृतिके निंब कांजीर विष हलाहल समान जानने। जैसैं नीब कांजीर विष हलाहल अधिक अधिक दुःखका कारण कटुक हैं तैसैं निंबभाग कंजीरभाग विषभाग हलाहलभाग रूप अप्रशस्त प्रकृतीनिके स्पर्धक क्रमतैं अधिक २ दुःखकौं कारण जानने। तहां प्रशस्त प्रकृति बियालीस ४२ हैं अप्रशस्त सैंतीस ३७ हैं। इहां वर्णादिक च्यारि प्रकृति प्रशस्तविषैं वा अप्रशस्तविषैं दोऊ जायगा गिनी हैं। तहां प्रशस्त प्रकृति गुड खंड शर्करा अमृतरूप वा गुड खंड शर्करा रूप वा गुड खंड रूप ऐसैं तीन प्रकार भावरूप प्रवर्तैं हैं। बहुरि अप्रशस्त प्रकृति निंब कांजीर विष हलाहल रूप वा निंब कांजीर विषरूप वा निंब कांजीर रूप तीनप्रकार भावरूप प्रवर्तैं हैं ॥ १८४ ॥ इति अनुभागबंधः समाप्तः ॥ आगैं प्रदेश बंधकौं तेतीस गाथानिकरि कहैं हैं—

एयक्खेत्तोगाढं सव्वपदेसेहिं कम्मणो जोग्गं।
बंधदि सगहेदूहिं य अणादियं सादियं उभयं ॥ ८५ ॥

एकक्षेत्रावगाढं सर्वप्रदेशैः कर्मणो योग्यं।
बध्नाति स्वकहेतुभिश्च अनादिकं सादिकमुभयं ॥ १८५ ॥

जी० प्र०—सूक्ष्मनिगोदशरीरं घनांगुलासंख्येयभागं जघन्यावगाहक्षेत्रं एकक्षेत्रं, तेनावगाहितं कर्मस्वरूपपरिणमनयोग्यं अनादिकं सादिकं उभयं च पुद्गलद्रव्यं जीवः सर्वात्मप्रदेशैः मिथ्यादर्शनादिहेतुभिर्बध्नाति ॥ १८५ ॥

स० चं०—सूक्ष्म निगोदियाका शरीर घनांगुलके असंख्यातवे भागमात्र जघन्य अवगाहनारूप क्षेत्र है ताकौं एक क्षेत्र कहिए। तिस एक क्षेत्रविषैं अवगाहरूप तिष्ठता जो कर्मरूप परिणमनेकौं योग्य अनादिक वा सादिक वा उभयरूप पुद्गलद्रव्य ताकौं जीव नामा पदार्थ अपने सर्व प्रदेशानिकरि मिथ्यात्वादिकके निमित्ततैं बांधै है ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एयसरीरोगाहियमेयक्खेत्तं अणेयखेत्तं तु।
अवसेसलोयखेत्तं खेत्तणुसारिट्ठियं रूवी ॥ १८६ ॥

एकशरीरावगाहितमेकक्षेत्रमनेकक्षेत्रं तु।
अवशेषलोकक्षेत्रं क्षेत्रानुसारिस्थितं रूपि ॥ १८६ ॥

जी० प्र०—एकशरीरेणावष्टब्धाकाशप्रदेशं एकक्षेत्रं, तेन घनांगुलासंख्यातैकभागं उपलक्षयां ६/प/a तद्विकल्पाः आदी ६/प/a अंते ≡ सुद्धे ≡ ६/प/a वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा इत्येतावंतः ≡ १–/६/प/a विवक्षया अनेकक्षेत्रमप्येकक्षेत्रं भवतीत्यर्थः। तु पुनः तेनैकक्षेत्रेण ऊनं अवशेषलोकक्षेत्रं अनेकक्षेत्रं ≡ ६/प/a तत्तत्क्षेत्रानुसारितया स्थितं रूपि पुद्गलद्रव्यमेवं सिद्ध्यति तत्र प्र ≡ फ १६ ख इ ६/प/a लब्धं एकक्षेत्रस्य द्रव्यं १६ ख/≡ ६/प/a प्र। ≡ फ १६ ख इ ≡ ६/प/a लब्धं अनेकक्षेत्रस्य द्रव्यं १६ ख/≡ ≡ ६/प/a ॥ १८६ ॥

स० चं०—एक शरीरकी अवगाहनाकरि रुक्या ऐसा जो आकाश सो एक क्षेत्र कहिए सो घनांगुलके असंख्यातवे भाग प्रमाण एक क्षेत्र जानना। यद्यपि शरीरकी अवगाहना जघन्य आवगाहनातैं लगाइ उत्कृष्ट पर्यंत वा समुद्घात अपेक्षा लोक पर्यंत है। तहां जघन्य अवगाहना के आदि भेद सो तौ घनांगुलकौं पल्यके असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तीहि प्रमाण अर अंतभेद लोक प्रमाण तहां अंतविषै आदिकौं घटाय एक मिलाएं समस्त अवगाहनाके भेद हो हैं तथापि बहुत जीव घनांगुलके असंख्यातवे भाग प्रमाण शरीर की अवगाहना के

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धारक हैं तातैं मुख्यता करि एक क्षेत्रका प्रमाण घनांगुल के असंख्यातवे भागमात्र कह्या है सो इतने क्षेत्रके बहुत प्रदेश हैं तातैं प्रदेशनिकी अपेक्षा यहु अनेक क्षेत्र है तथापि विवक्षाकरि इहां इस क्षेत्रकौं एक क्षेत्र कह्या है। बहुरि इस क्षेत्रका परिमाण करि हीन अवशेष लोकाकाशका क्षेत्र ताकौं अनेक क्षेत्र कहिए है सो तिस तिस क्षेत्रके अनुसारि तिष्ठता रूपी जो पुद्गल द्रव्य ताका परिमाण ऐसैं जानना–जो समस्त लोकविषैं सर्व पुद्गल द्रव्य पाइए तो एक क्षेत्रविषैं कितना पुद्गल द्रव्य पाइए ऐसा त्रैराशिक करना तहां प्रमाणराशि समस्त लोक फलराशि पुद्गलद्रव्यका परिमाण इच्छाराशि एक क्षेत्रका परिमाण तहां फलकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्धराशिका प्रमाण आया तितने एक क्षेत्र संबंधी पुद्गल द्रव्य जानने। बहुरि इच्छाराशि अनेक क्षेत्र करि पूर्वोक्त सर्व विधान कीएं जो लब्धराशिका प्रमाण आया तितने अनेक क्षेत्रसंबंधी पुद्गल द्रव्य जानने ॥१८६॥

एयाणेयक्खेत्तट्ठियरूविअणंतिमं हवे जोग्गं।
अवसेसं तु अजोग्गं सादि अणादी हवे तत्थ॥ १८७॥

एकानेकक्षेत्रस्थितरूप्यनंतिमं भवेत् योग्यं।
अवशेषं तु अयोग्यं सादि अनादि भवेत्तत्र ॥ १८७ ॥

जी० प्र०—तयोरेकानेकक्षेत्रस्थितरूपिद्रव्ययोरनंतैकभागः स्वस्वयोग्यरूपिद्रव्यं भवति– एक = योग्यं १६ ख ६ । ≡ प १ a ख १ ᐱ अनेक = योग्यं १६ ख ≡ ६ ≡ प १ a ख १ ᐱ तेन विहीनं स्वस्वावशेषमयोग्यरूपिद्रव्यं भवति। तत्रैकक्षेत्रस्य १६ ख ६ ख ≡ प ख a १ ᐱ अनेकक्षेत्रस्य १६ ख ≡ । ६ । ख ≡ प ख a १ ᐱ तेष्वेकानेकक्षेत्रस्थितयोग्यायोग्यरूपिद्रव्येषु प्रत्येकं सादिरूपिद्रव्यं अनादिरूपिद्रव्यं च भवति ॥ १८७ ॥ तत्र साद्यनादियोग्यायोग्यद्रव्यप्रमाणानामुपपत्तिमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं—तिन एक अनेक क्षेत्रविषैं तिष्ठता रूपी पुद्गल द्रव्यका परिमाण ताके अनंतवे भाग प्रमाण तौ अपना २ योग्य पुद्गल द्रव्य है अवशेष अयोग्य पुद्गल द्रव्य है। तहां एक क्षेत्रसंबंधी पुद्गल द्रव्यका परिमाण ताकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण तौ कर्मरूप परिणमनेकौं योग्य ऐसे पुद्गलनिका प्रमाण है, अवशेष भाग प्रमाण जे कर्मरूप परिणमनेकौं योग्य नाहीं ऐसे पुद्गलनिका प्रमाण है। बहुरि अनेक क्षेत्र संबंधी पुद्गल परिमाणकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण कर्मरूप होनेकौं योग्य पुद्गलनिका प्रमाण है। अवशेष भाग प्रमाण कर्मरूप होनेकौं अयोग्य पुद्गलनिका प्रमाण है। ऐसैं एक क्षेत्र स्थितियोग्य १ एक क्षेत्र स्थिति अयोग्य २ अनेकक्षेत्रस्थितियोग्य ३ अनेक क्षेत्रस्थितिअयोग्य ४ ए च्यारि भेद भए। तहां एक एक भेदविषैं सादि द्रव्य अर अनादि द्रव्य जानना। जो अतीत कालविषैं जीवकरि ग्रहण कीया होइ सो सादि द्रव्य कहिये। अनादितैं लगाय कबहूं जीवकरि न ग्रह्या होइ ऐसा पुद्गल द्रव्य सो अनादि द्रव्य कहिए ॥१८७॥

अब इनके प्रमाण जाननेके अर्थि कथन करैं हैं—

जेट्ठे समयपबद्धे अतीदकाले हदेण सव्वेण।
जीवेण हदे सव्वं सादी होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥ १८८॥

ज्येष्ठे समयप्रबद्धे अतीतकालेन हतेन सर्वेण।
जीवेन हते सर्वं सादि भवतीति निर्दिष्टं ॥ १८८ ॥

जी० प्र०—उत्कृष्टयोगार्जितोत्कृष्टसमयप्रबद्धे अतीतकालगुणितसर्वजीवराशिना गुणिते सति सर्वजीवसंबंधि सादिद्रव्यं भवति। तत्रैकसमये यदुत्कृष्टसमयप्रबद्धद्रव्यं गृह्णाति तदा संख्यातावलिहतसिद्धराशिमात्रातीतकाले कियदिति प्र—स १ फ—स ३२ इ अ, लब्धमेकजीवसंबंधि सादिद्रव्यं भवति। स ३२ अ। इदं पुनः सर्वजीवराशिना गुणितं सर्वजीवसंबंधि भवतीति जिनैर्निर्दिष्टं स ३२ अ १६ ॥ १८८ ॥ अथैकानेकक्षेत्रस्थितकर्मयोग्यायोग्यद्रव्येषु स्थितयोग्यायोग्यसादिद्रव्यप्रमाणमाह—

स० चं०— उत्कृष्ट योगके परिणामनिकरि निपजै ऐसा उत्कृष्ट समयप्रबद्धका प्रमाण ताकौं अतीत काल-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करि गुणीए जो प्रमाण होइ ताकौं सर्व जीवराशिका प्रमाण करि गुणै सर्व जीवसंबंधी सादि द्रव्यका प्रमाण हो हैं। तहां जो एक समयविषैं उत्कृष्ट समय प्रबद्ध प्रमाण पुद्गल द्रव्यकौं ग्रहैं तौ संख्यात आवलीकरि सिद्धराशिकौं गुणै जो प्रमाण होइ तितना अतीतकालका समयनिविषैं केते पुद्गलकौं ग्रहै ऐसैं त्रैराशिक करना। तहां प्रमाण राशि एक समय फल राशि उत्कृष्ट समय प्रबद्ध इच्छाराशि अतीतकालके समयनिका प्रमाण। तहां फलकरि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीए जो प्रमाण होइ तितना एक जीवसंबंधी सादि पुद्गल द्रव्य जानना। याकौं सर्व जीव राशिका प्रमाण करि गुणैं जो प्रमाण होइ तितना सर्वजीव संबंधी सादि पुद्गल द्रव्य जानना। इस प्रमाणकौं सर्व पुद्गलराशिका प्रमाणमैंस्यौं घटाएं जो प्रमाण अवशेष रहै तितना अनादि पुद्गल द्रव्य जानना। ॥ १८८ ॥ आगैं पूर्वोक्त भेदनिविषैं सादि द्रव्यका प्रमाण कहैं हैं—

सगसगखेत्तगयस्स य अणंतिमं जोग्गदव्वगयसादी।
सेसं अजोग्गसंगयसादी होदित्ति णिद्दिट्ठं॥ १८९॥

स्वकस्वकक्षेत्रगतस्य च अनंतिमं योग्यद्रव्यगतसादि।
शेषमयोग्यसंगतसादि भवतीति निर्दिष्टं॥ १८९॥

जी० प्र०—एकानेकक्षेत्रस्थितसादिद्रव्यस्य जिनदृष्टानंतभक्तैकभागः स्वस्वयोग्यद्रव्यस्थितसादिद्रव्यं भवति शेषं स्वस्वायोग्यसंगतसादिद्रव्यं भवतीति प्रणीतं। यदि घनलोकसर्वप्रदेशेषु सर्वजीवसंबंधिसादिद्रव्यं एतावत् तदा एकजीवावगाहितघनांगुलासंख्यातैकभागमात्रैकक्षेत्रे घनांगुलासंख्यातैकभागोनलोकमात्रानेकक्षेत्रे च कियत् स्यात्? इति त्रैराशिके कृते प्र— ≡, फ स ३२ ख १६, इ ६ प a। प्र ≡, फ स ३२ ख १६, इ ≡ ६ प a

लब्धं एकानेकक्षेत्रस्थितसादिद्रव्यं भवति एकक्षेत्रसादि = स ३२ ख १६ ६ प ≡ a अनेकक्षेत्रसादि = स ३२ ख १६ ≡ ६ प ≡ a तयोर्द्रव्ययोरनंतैकभागौ योग्यसादिद्रव्ये भवतः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकक्षेत्रयोग्यसादि =
स ३२ अ १६ । ६ / प १ / ३ ख
≡

अनेकक्षेत्रयोग्यसादि =
स ३२ अ १६ । ≡ ६ / प १ / ३ ख
≡

शेषौ अनंतबहुभागौ एकानेकक्षेत्रगतायोग्यसादिद्रव्ये भवतः ॥ १८९ ॥ अ-

एकक्षेत्रायोग्यसादि
स ३२ अ १६ ६ / प / ३ · १ ख / ख
≡

अनेकक्षेत्रायोग्यसादि
स ३२ अ १६ ≡ ६ / प / ३ · १ ख / ख
≡

थैकानेकक्षेत्रस्थितयोग्यायोग्यानादिद्रव्यप्रमाणान्याह—

स० चं०—एक अनेक क्षेत्रविषैं तिष्ठता सादि द्रव्यकौं जैसा जिनदेवने देख्या होइ तैसैं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण तो अपना अपना योग्य सादि द्रव्य है अवशेष अयोग्य सादि द्रव्य है ऐसा कह्या है सोई कहिए है—

जो सर्वलोकके प्रदेशनिविषैं सर्व जीव संबंधी सादि द्रव्य पूर्वोक्त प्रमाण पाइए तौ एक जीवकी अवगाहना रूप घनांगुलका असंख्यातवां भागप्रमाण एक क्षेत्र ताके विषैं कितना पाइए वा एक क्षेत्रका परिमाण करि हीन लोक प्रमाण अनक क्षेत्रविषैं कितना पाइए ऐसे दोय त्रैराशिक करना। तहां प्रमाण सर्वलोक फल सादि द्रव्यका प्रमाण इच्छा एक क्षेत्र,फलकौं इच्छाकरि गुणैं प्रमाणका भाग दीए जो लब्ध राशिका प्रमाण भया तितना एक क्षेत्र संबंधी सादि द्रव्य जानना। बहुरि प्रमाण सर्वलोक फल सादि द्रव्यका प्रमाण इच्छा अनेक क्षेत्र फलकौं इच्छाकरि गुणै प्रमाणका भाग दीएं जो लब्ध राशिका प्रमाण भया तितना अनेक क्षेत्रसबंधी सादि द्रव्य जानना। तहां एक क्षेत्र संबंधी सादि द्रव्यकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण एक क्षेत्र संबंधी कर्मरूप होनेका योग्य सादि द्रव्य जानना। अवशेष भाग प्रमाण एक क्षेत्र संबंधी अयोग्य सादि द्रव्य जानने। ऐसै ही अनेक क्षेत्र संबंधी सादि द्रव्यकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भागप्रमाण अनेक क्षेत्र स्थित योग्य सादि द्रव्य जानना। अवशेष भाग प्रमाण अनेक क्षेत्र स्थित अयोग्य सादि द्रव्य जानना॥१८९॥ आगै अनादि द्रव्यका प्रमाण कहैं हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सगसगसादिविहीणे जोग्गाजोग्गे य होदि णियमेण ।
जोग्गाजोग्गाणं पुण अणादिदव्वाण परिमाणं ॥ १९० ॥

स्वकस्वकसादिविहीने योग्यायोग्ये च भवति नियमेन ।
योग्यायोग्यानां पुनः अनादिद्रव्याणां परिमाणं ॥ १९० ॥

जी० प्र०—एकानेकक्षेत्रगतयोग्यायोग्यद्रव्येषु यथाक्रमं स्वस्वयोग्यायोग्यसादिद्रव्येष्वपनीतेषु एकानेकक्षेत्रस्थितयोग्यायोग्यद्रव्याणां अनादिद्रव्यप्रमाणानि भवंति, तस्माद्योग्यसादिद्रव्यात् वा योग्यानादिद्रव्यात् वा योग्योभयद्रव्यात् वा एकसमयप्रबद्धप्रमितं मूलोत्तरोत्तरप्रकृतिरूपेण प्रतिसमयं प्रदेशबंधं करोति ।

एकक्षेत्र यो = अनादि
१६ ख ६ १
≡ ख प)
a)
स ३२ अ १६ । ६ १
≡ प ख
a

अनेकक्षेत्रयोग्य अनादि
१६ ख ≡ ६ १
≡ ख प)
a)
स ३२ अ १६ । ≡ ६ १
प ख
≡ a

एकक्षेत्रअयो = अनादि
१ ^
१६ ख ६ । ख
≡ प)
a ख)
१ ^
स ३२ अ १६ । ६ ख
≡ प ख
a

अनेकक्षेत्र अयो– अनादि
१ ^
१६ ख ≡ ६ ख
प ख)
≡ a
१ ^)
स ३२ अ १६ । ≡ ६ ख
प ख
≡ a

॥ १९० ॥ तत्प्रमाणमाह—

स० चं०—एक क्षेत्रस्थित योग्य द्रव्य वा अयोग्य द्रव्य बहुरि अनेक क्षेत्रस्थित योग्य द्रव्य वा अयोग्य द्रव्यका जो परिमाण कह्या तामैंस्यौं अपना अपना सादि द्रव्यका परिमाण घटाएं जो किछू अवशेष प्रमाण रहे तितना२ अनुक्रमतैं एक क्षेत्र स्थित योग्य अनादि द्रव्यका वा एक क्षेत्र स्थित अयोग्य अनादि द्रव्यका वा अनेक क्षेत्रस्थित योग्य अनादि द्रव्यका वा अनेक क्षेत्रस्थित अयोग्य अनादि द्रव्यका प्रमाण जानना। ऐसैं ए भेद भए तिनविषैं योग्य सादि द्रव्यतैं वा अयोग्य अनादि द्रव्यतैं वा अयोग्य उभय द्रव्यतैं एक समयविषैं समय प्रबद्ध प्र-

२२३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माण मूल प्रकृति उत्तरप्रकृति उत्तरोत्तर प्रकृतिरूप करि समय २ प्रति प्रदेश बध करै है। भावार्थ—मिथ्यात्वादिकके निमित्ततैं जीव समय समय प्रति कर्मरूप परिणमनकौं योग्य ऐसे समय प्रबद्ध प्रमाण परमाणूनिका समूहकौं ग्रहण करि कर्मरूप परिणमावै है तहां कोई समयविषैं तो जीवकरि पूर्वै ग्रहणेमैं आए ऐसे सादि द्रव्यरूप परमाणू तिनका ही ग्रहण करै है। कोई समय विषैं किसी जीवकरि अतीतकालमैं ग्रहणेमैं न आए ऐसे अनादि द्रव्यरूप परमाणू तिनहीका ग्रहण करै है। कोई समयविषैं केई सादि द्रव्यरूप परमाणू केई अनादि द्रव्यरूप परमाणू तिनका ग्रहण करै है ॥ १९० ॥ तिस समयप्रबद्धका प्रमाण कहै हैं—

सयलरसरूवगंधेहिं परिणदं चरमचदुहिं फासेहिं ।
सिद्धादोऽभव्वादोऽणंतिमभागं गुणं दव्वं ॥ १९१ ॥

सकलरसरूपगंधैः परिणतं चरमचतुर्भिः स्पर्शैः ।
सिद्धादभव्यादनंतिमभागं गुणं द्रव्यं ॥ १९१ ॥

जी० प्र०—सर्वरसरूपगंधैश्चरमशीतोष्णस्निग्धरूक्षचतुःस्पर्शैश्च परिणतं सिद्धराश्यनंतैकभागं अभव्यराश्यनंतगुणं समयप्रबद्धद्रव्यं भवति ॥१९१॥ तन्मूलप्रकृतिषु कथं विभज्यते ? इति चेदाह—

स० चं०—सो समय प्रबद्धरूप परमाणूनिका समूह सर्व पांच प्रकार रस पांच प्रकार वर्ण दोय प्रकार गंधकरि है। बहुरि स्पर्शका आठ भेदनिविषैं अंतका च्यारि भेद शीत उष्ण स्निग्ध रूक्ष तिनहीकरि संयुक्त परिणम्या है गुरु लघु मृदु कठिन ए च्यारि न पाइए है। सो समय प्रबद्ध सिद्धराशिके अनंतवे भाग वा अभव्य राशितैं अनंत गुणा जानना। इतनी परमाणूनिका समूहरूप वर्गणानिकौं समय समय ग्रहण करि कर्मरूप परिणमावैं है। ॥ १९१ ॥ सो समयप्रबद्ध एक समयविषैं ग्रह्या हूवा आठ मूल प्रकृति रूप परिणमैं तहां एक एक मूल प्रकृतिका कैसे वट होइ सो कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आउगभागो थोवो णामागोदे समो तदो अहियो ।
घादितियेवि य तत्तो मोहे तत्तो तदो तदिये ॥ १९२ ॥

आयुष्कभागः स्तोकः नामगोत्रे समः ततोऽधिकः ।
घातित्रयेऽपि च ततो मोहे ततस्ततस्तृतीये ॥ १९२ ॥

जी० प्र०—आयुःकर्मणो भागः स्तोकः । नामगोत्रयोः परस्परं समानोऽपि ततोधिकः । अंतरायदर्शनज्ञानावरणेषु तथा समानोऽपि ततोऽधिकः । ततो मोहनीयेऽधिकः ततो वेदनीयेऽधिकः । एवं भक्त्वा दत्ते सति मिथ्यादृष्टौ आयुश्चतुर्विधं । सासादने नारकं नेति त्रिविधं । असंयते तैरश्चमपि नेति द्विविधं । देशसंयतादित्रये एकं देवायुरेव । उपर्यनिवृत्तिकरणांतेषु सप्तविधमूलप्रकृतीनां प्रदेशबंधः सूक्ष्मसांपराये षरणां उपशांतादित्रये एकाया उदयात्मिकायाः ॥ १९२ ॥ अथ वेदनीयस्य सर्वत आधिक्ये कारणमाह—

स० चं०—सर्व मूल प्रकृतिनिविषैं आयुकर्मका भाग कहिए वट सो थोरा है बहुरि नाम कर्म अर गोत्र कर्म इन दोन्याका भाग परस्पर समान है तथापि आयुकर्मके भागतैं अधिक है अंतराय ज्ञानावरण दर्शनावरण इन तीनोंका भाग परस्पर समान है तथापि नाम गोत्रके भागतैं अधिक है । बहुरि यातैं मोहनीयका भाग अधिक है बहुरि यातैं तीसरा कर्म वेदनीय ताका अधिक भाग है । तहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं च्यारि आयुका बंध है । सासादन विषैं नरकविना तीन आयुका बंध है । असंयत विषैं नरक तिर्यंच विना दोय आयुहीका बंध है । देश संयत प्रमत्त अप्रमत्त विषैं एक देवायुहीका बंध है । ऊपरि अनिवृत्ति करण पर्यंतविषैं आयु विना सात कर्महीका बंध है । सूक्ष्मसांपरायविषैं आयु मोहनीय विना छह कर्मका बंध है । ऊपरि तीन गुणस्थाननिविषैं एक वेदनीयका

१	वे स a ८ ९ ८	मो स a ८ ९ ८	ज्ञा स a ८ ९ ८	द स a ८ ९ ८	अं स a ८ ९ ८	गो सा a ८ ९ ८	ना स a ८ ९ ८	आ स a ८ ९ ८
	स a ८ ९ ९	स a ८ ९ ९ ९	स a ८ ९ ९ ९ ९ ३	स a ८ ९ ९ ९ ९ ३	स a ८ ९ ९ ९ ९ ३	स a ८ ९ ९ ९ ९ ९ २	स a ८ ९ ९ ९ ९ ९ २	स a १ ९ ९ ९ ९ ९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंध है सो उदयरूप ही है तहां जितने कर्मनिका जहां बंध होइ तहां समय प्रबद्धविषैं तितनेही कर्मका वटवारा जानना ॥ १९२ ॥ आगैं वेदनीय कर्मकैं सर्वतैं अधिक भाग कह्या था सो कारण कहिए है—

सुहदुक्खणिमित्तादो बहुणिज्जरगोत्ति वेयणीयस्स।
सव्वेहिंतो बहुगं दव्वं होदित्ति णिद्दिट्ठं ॥ १९३ ॥

सुखदुःखनिमित्तात् बहुनिर्जरक इति वेदनीयस्य।
सर्वेभ्यो बहुकं द्रव्यं भवतीति निर्दिष्टं ॥ १९३ ॥

जी० प्र०—वेदनीयस्य सुखदुःखनिमित्तत्वात् बहुकं निर्जरयति इति हेतोः सर्वप्रकृतिभागद्रव्यात् बहुकं द्रव्यं भवतीति परमागमे निर्दिष्टं ॥१९३॥ अथ शेषाणां स्थित्यनुसारि द्रव्यविभंजनमित्याह—

स० चं०—वेदनीय कर्म सुख दुःखकौं कारण है तातैं सुख दुःखकौं होत संतैं याकी निर्जरा बहुत हो है तातैं अन्य मूल प्रकृतिनिके भागरूप द्रव्य प्रमाणतैं वेदनीयके बहुत द्रव्य है ऐसा परमागमविषैं कह्या है ॥ १९३ ॥ आगैं और कर्मनिका हीनाधिक भागका कारण कहैं हैं—

सेसाणं पयडीणं ठिदिपडिभागेण होदि दव्वं तु।
आवलिअसंखभागो पडिभागो होदि णियमेण ॥ १९४ ॥

शेषाणां प्रकृतीनां स्थितिप्रतिभागेन भवति द्रव्यं तु।
आवल्यसंख्यभागः प्रतिभागो भवति नियमेन ॥ १९४ ॥

जी० प्र०—शेषसर्वमूलप्रकृतीनां स्थितिप्रतिभागेन द्रव्यं भवति। तु—पुनः तत्राधिकागमननिमित्तं प्रतिभागहारः आवल्यसंख्येयभागो नियमेन। भागहारांतरनिवृत्त्यर्थं नियमवचनं। तत्संदृष्टिर्नवांकः ९ ॥ १९४ ॥ अनेन विभागक्रमं दर्शयति—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—वेदनीय विना अवशेष मूल सर्व प्रकृतिनिका स्थिति प्रतिभागकरि द्रव्य हो है जिस कर्मकी स्थिति बहुत है ताके अधिक द्रव्य है जिसकी स्थिति परस्पर समान है तिसका द्रव्य परस्पर समान जानना। जिसकी स्थिति हीन है तिसका द्रव्य थोरा जानना। तहां अधिक कितना है? ऐसा प्रमाण ल्यावनेके निमित्त प्रतिभागहार आवलीका असंख्यातवां भाग जानना नियमकरि और प्रतिभागहार नाहीं। ताकी संदृष्टि नवका अंक जानना। सो इस प्रतिभागहारका भाग दीएं जो एक भागका प्रमाण होइ सो एक भाग जानना। एक भागका प्रमाण विना अवशेष सर्व भागनिका प्रमाण सो बहुभाग जानना। बहुरि जिस कर्मका जितना द्रव्य कहिए है तितना तिस कर्मके परमाणूनिका प्रमाण जानना ॥ १९४ ॥ आगे विभागका अनुक्रम दिखावै हैं—

बहुभागे समभागो अट्ठण्हं होदि एक्कभागम्हि।
उत्तकमो तत्थवि बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥ १९५ ॥

बहुभागे समभागः अष्टानां भवति एकभागे।
उक्तक्रमः तत्रापि बहुभागो बहुकस्य देयस्तु ॥ १९५ ॥

जी० प्र०—मूलप्रकृतीनामष्टानां बहुभागे समभागो देयः। तत्रैकभागे उक्तक्रमो भवति। तत्र तु पुनः बहुभागः बहुकस्य देयः। तद्यथा—कार्मणसमयप्रबद्धद्रव्यमिदं स a तत् आवल्यसंख्यातेन भक्त्वा बहुभागः (स a ८)/(९) अष्टभिर्भक्त्वा (स a ८)/(९ ८) अष्टसु स्थानेषु प्रत्येकं स्थाप्यः, शेषैकभागे (स a १)/(९) आवल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागः (स a ८)/(९ ९) बहुकस्य वेदनीयस्य देयः। शेषैकभागे (स a १)/(९ ९) पुनरावल्यसंख्यातभक्तबहुभागः मोहनीयस्य देयः (स a ८)/(९ ९ ९) शेषैकभागे (स a १)/(९ ९ ९) पुनरावल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागः (स a ८)/(९ ९ ९ ९) त्रिभिर्भक्त्वा (स a ८)/(९ ९ ९ ९ ३) ज्ञानदर्शनावरणांतरायेषु प्रत्येकं देयः। शेषैकभागे (स a ८ १)/(९ ९ ९ ९) पुनारावल्यसंख्यातेन भक्ते बहुभागः द्वाभ्यां भक्त्वा (स a ८)/(९ ९ ९ ९ ९ २) प्रत्येकं नामगोत्रयोर्देयः। शेषैकभागं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स a १ / ९ ९ ९ ९ ९ आयुषि दद्यात् । एवं दत्ते आउगभागो थोवो इति गाथोक्तक्रमः सिद्धः ॥ १९५ ॥ अथ मूलप्रकृतीनां उक्तपिंडद्रव्यं स्वस्वोत्तरप्रकृतिषु भक्त्वा दानक्रममाह—

स० चं०—मूल प्रकृति आठ तिनकौं बहुभाग तौ समान देना । बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं जैसैं अनुक्रम कह्या है तैसैं देना । बहुरि तहां भी बहुभाग जाका बहुत द्रव्य होइ ताकौं देना । सोई कहिए है—

एक समयविषैं कार्माण संबंधी समय प्रबद्ध प्रमाण परमाणू अहै तिन परमाणूनिका जो प्रमाण सो कार्माण समय प्रबद्ध द्रव्य है । ताकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एकभागकौं जुदा राखि बहुभाग के आठ भाग कीजिए तहां एक एक समान भाग आठ स्थानकनिविषैं जुदा जुदा स्थापना । बहुरि जो एक भाग जुदा रह्या ताकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदा राखि अवशेष बहुभाग है सो 'बहुकस्य' कहिए जाका बहुत द्रव्य कह्या है ऐसा वेदनीय नामाकर्म ताकौं देना सो पूर्वोक्त आठ भागनिविषैं एक समान भागका प्रमाणमें इस प्रमाणकौं मिलाए जो प्रमाण होइ तितनी परमाणू समय प्रबद्धविषैं वेदनीय कर्मरूप परिणमैं है । बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदाराखि बहुभाग मोहनीय कर्मकौं देना सो उन आठ भागनिविषैं एक समान भागका प्रमाणमैं इस प्रमाणकौं मिलाए जो प्रमाण होइ तितनी परमाणु मोहनीय कर्मरूप परिणमैं हैं । बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदा राखि अवशेष बहुभागके तीन भाग कीजिए सो एक एक भाग ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायकौं देना सो उन आठ भागनिविषैं एक एक समान भागका प्रमाण इस एक एकभागकौं मिलाएं जो जो प्रमाण होइ तितने तितने परमाणु अनुक्रमतैं ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतराय रूप होइ परिणमैं हैं इनि तीनौं कर्मनिका द्रव्य परस्पर समान जानना । बहुरि जो वह एक भाग रह्या ताकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदाराखि बहुभागके दोय भाग कीजिए सो एक एक भाग नाम गोत्रकौं देना सो उन आठ भागनिविषैं एक एक समान भागका प्रमाणमैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस एक एक भागकौं मिलाएं जो प्रमाण होइ तितने तितने परमाणू अनुक्रमतैं नाम वा गोत्ररूप होइ परिणमै हैं। इन दोऊ कर्मनिका द्रव्य परस्पर समान जानना। बहुरि जो वह एक भाग रह्या सो आयुकर्मकौं देना सो उन आठ भागनिविषैं एक समान भागका प्रमाणमैं इस एक भागका प्रमाणकौं मिलाएं जो प्रमाण होइ तितने परमाणू आयुकर्मरूप परिणमै है। ऐसैं 'आउग भागो थोवो' ऐसा गाथाविषैं अनुक्रम कह्या सो सिद्ध भया। इसप्रकार एक समयविषैं समय समयप्रबद्ध प्रमाण पुद्गलद्रव्य आठकर्मरूप होइ परिणमै है ॥१९५॥ आगै मूलप्रकृतिनिविषैं जो पिंड रूप द्रव्य कह्या ताका अपनी अपनी उत्तर प्रकृतिनिविषैं कैसै वटवारा हो है? सो अनुक्रम कहै हैं—

उत्तरपयडीसु पुणो मोहावरणा हवंति हीणकमा।
अहियकमा पुण णामाविग्घा य ण भंजणं सेसे ॥ १९६ ॥

उत्तरप्रकृतिषु पुनः मोहावरणाः भवंति हीनक्रमाः।
अधिकक्रमाः पुनः नामविघ्नाश्च न भंजनं शेषे ॥ १९६ ॥

जी० प्र०—उत्तरप्रकृतिषु पुनः मोहनीयज्ञानदर्शनावरणानि हीनक्रमाणि भवंति। नामांतरायौ पुनः अधिकक्रमौ भवतः। शेषवेदनीयगोत्रायुस्सु द्रव्यविभजनं नास्ति, तेषां एकैकस्या एव तदुत्तरप्रकृतेर्बंधात् तेन तन्मूलप्रकृत्युक्तद्रव्यं सर्वमेव स्यात् इत्यर्थः ॥ १९६ ॥ अथ घातिकर्मसु सर्वघातिदेशघातिद्रव्यविभंजनक्रममाह—

स० चं०—बहुरि उत्तर प्रकृतिनिविषैं मोहनीय ज्ञानावरण दर्शनावरण ए तौ हीनक्रम कहिए अनुक्रमतैं घाटि घाटि जानना जैसै ज्ञानावरणविषै मतिज्ञानावरणके द्रव्यतैं श्रुतज्ञानावरणका द्रव्य थोरा है। यातैं अवधिज्ञानावरण थोरा है ऐसैं ही अनुक्रम जानना। बहुरि नामकर्म अर अंतराय कर्म ए दोऊ अधिक क्रम कहिए अनुक्रमतैं अधिक अधिक हैं। जैसैं अंतराय कर्मविषैं दानांतरायके द्रव्यतैं लाभांतरायका द्रव्य अधिक है यातैं भोगांतरायका द्रव्य अधिक है ऐसैं अधिक क्रम जानना। बहुरि अवशेष वेदनीय गोत्र आयु इनविषैं वटवारा नाही है जातैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इनकी एक एकही प्रकृति एकै काल बंधै है। वेदनीय कर्मविषैं कै साताका बंध होइ, कै असाताका बंध होइ, दोऊनिका एक कालविषैं बंध न होइ। गोत्रविषैं कै नीचगोत्रका बंध होइ कै उच्चगोत्रका बंध होइ। आयुविषैं एकही आयुका बंध होइ। तातैं इन तीनो कर्मनिका उत्तरप्रकृतिनिविषैं बटवारा नाही। जिसकाल जिस उत्तर प्रकृतिका बंध होइ तिसकाल जो मूल प्रकृतिके द्रव्यका प्रमाण है सोई सर्व तिस उत्तर प्रकृतिका बंध जानना ॥ १९६ ॥

आगे घातिकर्मनिविषैं सर्वघाती देशघाती द्रव्यका बटवारा कहैं हैं—

सव्वावरणं दव्वं अणंतभागो दु मूलपयडीणं।
सेसा अणंतभागा देसावरणं हवे दव्वे ॥ १९७ ॥

सर्वावरणं द्रव्यमनंतभागस्तु मूलप्रकृतीनां।
शेषा अनंतभागा देशावरणं भवेद् द्रव्यं ॥ १९७ ॥

जी० प्र०—ज्ञानदर्शनावरणमोहनीयमूलप्रकृतीनां स्वस्वद्रव्येषु सर्वावरणद्रव्यं अनंतैकभागो भवति। तु—पुनः शेषा अनंता भागाः देशघातिद्रव्यं भवति। यथा ज्ञानावरणस्य इदं स ə ८ / ९ ८ अधस्तनावल्यसंख्यातैकभागे साधिकीकृते स ə ८ / ९ ८ (।) गुणाकारस्य एकरूपहीनत्वमवगणय्य अपवर्त्य

श्रीमदभयचंद्रनामांकितायां टीकायां-१९७ तमायां गाथायां—

दर्शनावरणद्रव्यमिदं स ə / ८ (।) अनंतेन भक्तैकभागः स ə १ / ८ ख (।) तत्सर्वघातिषट्कद्रव्यं भवति। शेषबहुभागाः चक्षुर्दर्शनादिदेशघातित्रयद्रव्यं भवति—

स ə ख / ८ ख (। १ ⌒) मोहनीयस्य द्रव्यमिदं स ə / ८ (।) अनंतेन भक्तैकभागः स ə १ / ८ ख (।) मिथ्यात्वद्वादशकषायसर्वघातिद्रव्यं भवति शेषबहुभागाः संज्वलननोकषायत्रयोदशदे-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स ə/८ जिनदृष्टानंतभागहारेण भक्त्वा एकभागः स ə १/८ ख तत्सर्वघातिप्रकृतिसंबंधी भवति शेषबहुभागः तद्देशघातिसंबंधी भवति—

स ə १ ख/८ ख तथा दर्शनावरणमोहनीययोरपि ज्ञातव्यं ॥ १९७ ॥ उक्तसर्वघातिद्रव्येषु तद्देशघातिप्रकृतिभागस्य वक्ष्यमाणत्वात् तत्सहितघाति-द्रव्येषु सर्वावरणधनार्थं प्रतिभागहारप्रमाणमाह—

स॰ चं॰—ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय इन तीन मूल प्रकृतिनिका जो जो अपना अपना द्रव्य है ताकौं जैसा जिनदेव देख्या तैसा यथायोग्य अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण तौ सर्वावरण कहिए सर्वघाती संबंधी द्रव्य है अवशेष अनंत भाग रहे तिन प्रमाण देशावरण कहिए देशघातीसंबंधी द्रव्य है जैसैं ज्ञानावरणका जो पूर्वैं परमाणूनिका प्रमाण कह्या ताकौं अनंतका भाग दीजिये तहां एक भाग प्रमाण परमाणू तौ सर्व-घाती संबंधी है। अवशेष सर्वभाग प्रमाण परमाणू देशघाती संबंधी हैं ऐसैं ही दर्शनावरण वा मोहनीय विषैं भी जानना ॥ १९७ ॥ कह्या जो सर्वघातिया द्रव्यका परिमाण तीहि विषैं आगे वटवारा करैंगे तहां देशघाती प्रकृति वा सर्वघाती प्रकृतिनिका वटवारा करैंगे सो देशघाती मतिज्ञानावरणादिक तिनकैं द्रव्यका जो परिमाण तिनविषैं सर्वघाती परमाणूनिका प्रमाणके अर्थि प्रतिभागहारका प्रमाण कहिए है। इहां कोऊ

शघातिद्रव्यं भवति स ə १ ख/८ ख। अपवर्त्य स ə/८ आवल्यसंख्यातेन भक्त्वा एकभागः स ə १/८ ९ बहुभागार्धं च स ə ८/८ ९ २ संज्वलनद्रव्यं भवति स ə ८/८ ९ २। शेष-बहुभागार्धं अकषायनवकद्रव्यं भवति स ə ८/८ ९ २ अंतरायद्रव्यं देशघात्येव तेन सर्वं ग्राह्यं म ə/८ उक्तदेशघातिद्रव्याणामुक्तान्योन्याभ्यस्तराशिरेव सर्वावरणधनार्थं

मिति अधिकः पाठः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहै कि देशघाती प्रकृतिनिविषैं सर्वघाती परमाणू कैसैं कहो हौ ? ताका समाधान—जो पूर्वैं अनुभाग विषैं कहि-आए हैं जो मतिज्ञानावरणादिकका अनुभाग शैल अस्थि दारु लताभागकरि च्यारि प्रकार है। तहां दारु भागका तौ अनंतवां भाग अर समस्त लताभाग ए तौ देशघाती हैं सो ऐसैं अनुभागकौं धरैं जे परमाणू ते देशघाती द्रव्य जानने। बहुरि शैल भाग अर अस्थिभाग अर दारुभागके बहुभाग ए सर्वघाती हैं सो ऐसैं अनुभागकौं धरैं जे परमाणू ते सर्वघाती द्रव्य जानने। सो सर्वघातिनिका उदय होत संतै किंचिन्मात्र भी आत्मगुण प्रकट न होइ। जैसैं एकेंद्रियादिक जीवनिके चक्षु दर्शनका सर्वघातियाका भी उदय पाइए है तहां किंचिन्मात्र भी चक्षु दर्शन न होहै। बहुरि देशघातीनिका उदय होतें भी आत्मगुण प्रगट हो है जैसैं चतुरिंद्रियादिक जीवनिके चक्षु दर्शनके देशघातिनिका ही उदय पाइए हैं तहां चक्षुदर्शन भी पाइए है। सो ऐसैं देशघातीनिविषैं सर्वघाती देशघाती द्रव्य है। तहां सर्वघाती द्रव्यका परिमाणके अर्थि प्रतिभागहारका प्रमाण कहिए हैं—

देसावरणण्णोण्णब्भत्थं तु अणंतसंखमेत्तं खु।
सव्वावरणधणट्ठं पडिभागो होदि घादीणं ॥ १९८ ॥

देशावरणान्योन्याभ्यस्तं तु अनंतसंख्यामात्रं खलु।
सर्वावरणधनार्थं प्रतिभागो भवति घातिनां ॥ १९८ ॥

जी० प्र०—चतुर्ज्ञानावरणत्रिदर्शनावरणपंचांतरायचतुःसंज्वलननवनोकषायद्रव्याणां नानागुणहानिशलाकाः अनंता इति तन्मात्रद्विकसंवर्गजनितोऽन्योन्याभ्यस्तराशिरपि अनंतसंख्यो भवति। स खलु तेषां सर्वघातिद्रव्यस्य गुणसंकलितधनप्रमाणावधारणार्थं प्रतिभागो भवति। तद्यथा—

मतिज्ञानावरणादीनां चतुर्णां देशघातिद्रव्यं केवलज्ञानावरणभाग स ∂ । ८ १ / ८ ख ९ ५ न्यूनस्वकीयसर्वघातिद्रव्य स ∂ । ८ ५ १ / ८ ख ९ ५ युतं तत्साधिकसमयप्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वद्धाष्टमभागमात्रं ∂/८ रूपोनान्योन्याभ्यस्तराशिना भक्तं स ∂ / (८ ख ख) (१ –) शैलभागचरमगुणहानिद्रव्यं भवति । ततोऽधः गुणहानिं गुणहानिं प्रति द्विगुणं

द्विगुणं भूत्वा दारुबहुभागप्रथमगुणहानौ तच्चयोग्यानंतार्द्धगुणितं भवति स ∂ ख / (८ ख ख २) (१ –) रूपोनगच्छमात्रानंतद्विकानां तद्गुणकारत्वात् । अतः सर्व-

घातिद्रव्यं समाप्तं तत एवान्योन्याभ्यस्तराशिः सर्वावरणधनार्थं प्रतिभाग इत्युक्तं तत् दारुबहुभागप्रथमगुणहानिद्रव्यादधस्तनदार्वनंतैकभागचरमगु-

णहानिद्रव्यं द्विगुणं भवति स ∂ ख २ / (८ ख ख २) (१ –) तदधः द्विगुणद्विगुणक्रमेण गत्वा लताभागप्रथमगुणहानौ द्रव्यं रूपोनसर्वनानागुणहानिमात्रद्विकसंवर्गसं-

जातान्योन्याभ्यस्तराश्यर्धगुणितचरमगुणहानिद्रव्यमात्रं भवति स ∂ ख ख / (८ ख ख २) (१ –)। एवं त्रिदर्शनावरणादिद्रव्याणामपि ज्ञातव्यं । अत्र द्रव्य--स्थिति--गुण-

हानि--दोगुणहानि--नानागुणहानि--अन्योन्याभ्यस्तराशीनामंकसंदृष्ट्यर्थं संदृष्टिः--

द्र ३१००	स्थि ४०	गु ८	दो १६	ना ५	अन्योन्या ३२
स ∂ / ८	ख ख ख	ख ख	ख ख २	ख	ख ख

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

॥ १९८ ॥ अथ प्रागुक्तसर्वघातिदेशघातिद्रव्ययोर्विशेषविभजनक्रममाह—

(१)

										शै		। स ठ १ ≏ । ८ ख ख स ठ २ १ ≏ ८ ख ख
म		श्रु		अ		म		के		अ		। स ठ २ । २ १ ≏ ८ ख ख
										१ ≏ दा ख ख		० । ० स ठ ख १ ≏ ८ ख ख २
										दा ख		। स ठ ख २ १ ≏ । ८ ख ख
म		श्रु		अ		म				ल		स ठ ख २ । २ १ ≏ ८ ख ख २ ० ० । ० स ठ ख ख १ ≏ ८ ख ख २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—च्यारि ज्ञानावरण तीन दर्शनावरण पांच अंतराय च्यारि संज्वलन नव नोकषाय इनके परमाणूनिका प्रमाण तिनकी नाना गुणहानि शलाका अनंत है अर जितनी नाना गुणहानि है तितना दूवा माडि परस्पर गुणीए तव अन्योन्याभ्यस्त राशि होइ सो भी अनंत संख्यामात्र है । अंक संदृष्टिकरि जैसें द्रव्य इकतीससै ३१०० स्थिति स्थान चालीस ४० एक एक गुणहानिका प्रमाण आठ ८ इसतैं दूणा दोगुणहानिका प्रमाण १६ नाना गुणहानि पांच ५, नानागुणहानि प्रमाण दूवा माडि परस्पर गुणन कीजिए तव अन्योन्याभ्यस्त राशि ३२ सो इनकी रचना जैसें तरेसाठिसै ६३०० द्रव्य अर स्थान अठतालीसका दृष्टांत पूर्वें कह्या है तथा आगें कहेंगे तैसैं ही जानना । विशेष-इहां छठी नाना गुणहानिकी रचना न करनी द्रव्यादिकका प्रमाण इहां कह्या है सो जानना । अर्थसंदृष्टिकरि तैसैं जेता तिन पूर्वोक्त प्रकृतिका परमाणूनिका प्रमाण सो द्रव्य जानना । स्थितिस्थान तीनवार अनंतकौं परस्पर गुणिए तितना जानना । गुणहानि दोयवार अनंतकौं परस्पर गुणिए तितनी जाननी । इसतैं दूणी दोगुणहानि जाननी । नानागुणहानि अनंत जाननी । नानागुणहानि प्रमाण दूवे माडि परस्पर गुणन कीजिए तितनी अन्योन्याभ्यस्त राशि जाननी । सो इहां जो अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण सोई सर्वघाती द्रव्यका परिमाण अवधारनेके निमित्त प्रतिभाग जानना । सोई कहिए हैं—

मतिज्ञानावरणादिक च्यारि तिनका द्रव्य केवल ज्ञानका वट विना अपना सर्वघातीनिका द्रव्य सहित देशघातीनिका द्रव्य प्रमाण है सो किछू अधिक समय प्रबद्धके आठवैं भाग प्रमाण है । याकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग दीजिए तव शैलभागकी अनंतगुण हानिविषैं द्रव्यका परिमाण हो है । पीछैं नीचैं एक एक गुणहानि प्रति दूणा दूणा द्रव्य होइ करि दारु भागका अनंत भागनिविषैं एक भाग विना अवशेष बहुभाग संबंधी द्रव्य तिनकी प्रथम गुणहानि विषैं शैलभागका अंतकी गुणहानिके द्रव्यकौं यथायोग्य आधा अनंतकरि गुणे जो प्रमाण होइ तितना द्रव्य जानना । जातैं इहां पर्यंत जेती गुणहानि भई सोई गच्छ जानना । सो एक घाटि गच्छमात्र दोयके अंकनिकौं गुणे सर्वघाती संबंधी अन्योन्याभ्यस्त राशी अनंत प्रमाण हो है ताका जो आधा प्रमाण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोई इहां गुणकार जानना। इहां सर्व घाती द्रव्य पूर्ण हूवा। इन सर्व गुणहानिनिका द्रव्यकौं जोड़ें जो प्रमाण होइ तितने परमाणू सर्वघाती संबंधी जानने ताहीतैं सर्व घातीनिका द्रव्यके अर्थि अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रतिभाग कह्या है। अब आगैं देशघातीका द्रव्य कहैं हैं—

दारु भागका बहुभागकी प्रथम गुणहानिका द्रव्यतैं नीचैं दारु भागका अनंत भागनिविषैं एक भागकी अंत गुणहानिका द्रव्य दूणां है। बहुरि नीचे गुणहानि गुणहानि प्रति दूणां दूणां द्रव्य होइ लताभागकी प्रथम गुणहानिविषैं एक घाटि सर्व नाना गुणहानिका जो प्रमाण तितना दूवा माडि परस्पर गुणन कीए जो प्रमाण होइ सोई अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण ताका आधा प्रमाणकरि शैल भागकी अंत गुण हानिका द्रव्यकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितना द्रव्य जानना। इन गुण हानिनिका जोड दीएं जो प्रमाण होइ तितने परमाणू देशघाती संबंधी जानने अंकसंदृष्टिकरि जैसैं सर्व द्रव्य इकतीससै ३१०० याकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशि इकतीस ३१ का भाग दीएं सौ १०० पाया सो शैलभागकी अंतगुण हानिका द्रव्य जानना। पीछैं गुणहानि गुणहानि प्रति दूणां होइ २००,४००,८०० एक घाटि नानागुणहानि च्यारि ४ तितना दूवा मडि २।२।२।२। परस्पर गुणन कीजे तब सोला भए सोई अन्योन्याभ्यस्तराशि बत्तीसका आधा प्रमाण है। याकरि शैलभागकी अंत गुणहानि द्रव्य सौ १०० ताकौं गुणिए तब सोलहसौ १६०० भए सो लताभागकी प्रथम गुण हानिका द्रव्य जानना। ऐसैं ही तीन दर्शनावरणादिकके द्रव्यनिविषैं भी सर्वघाती देशघाती द्रव्यका प्रमाण जानना ॥ १९८॥ आगैं पूर्वैं कह्या सर्वघाती देश घाती द्रव्य तिनका विशेष विभागका अनुक्रम कहैं है—

सव्वावरणं दव्वं विभंजणिज्जं तु उभयपयडीसु।
देसावरणं दव्वं देसावरणेसु णेविदरे॥ १९९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सर्वावरणं द्रव्यं विभंजनीयं तु उभयप्रकृतिषु ।
देशावरणं द्रव्यं देशावरणेषु नैवेतरोस्मिन् ॥ १९९ ॥

जी० प्र०—घातिकर्मणां स्वस्वसमस्तद्रव्यस्यानंतैकभागः सर्वघातिद्रव्याणि बहुभागो देशघातिद्रव्याणि इति प्रागुक्तानि । तत्र सर्वावरणद्रव्यं सर्वघातिषु देशघातिषु च हीनक्रमेण भक्त्वा देयं देशावरणद्रव्यं तु देशावरणेष्वेव न सर्वघातिषु ॥ १९९ ॥ अथोत्तरप्रकृतिषु आह—

स० चं०—घातिया कर्मनिकैं अपने अपने द्रव्यकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाती द्रव्य है । बहुभाग प्रमाण देशघाती द्रव्य है । तहां सर्वघाती द्रव्य तौ सर्वघाती वा देशघाती प्रकृति तिनविषैं विभागकरि देना अर देशघाती द्रव्य है सो देशघाती प्रकृतिनिविषैं ही देना केवलज्ञानावरणादिक सर्वघातीनिविषैं न देना ॥ १९९ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिविषैं विभाग कहैं हैं—

बहुभागे समभागोबंधाणं होदि एक्कभागम्हि ।
उत्तकमो तत्थवि बहुभागो बहुगस्स देओ दु ॥ २०० ॥

बहुभागे समभागो बंधानां भवति एकभागे ।
उत्क्रमस्तत्रापि बहुभागः बहुकस्य देयस्तु ॥ २०० ॥

जी० प्र०—सहसंभवद्बंधोत्तरप्रकृतीनां आवल्यसंख्यातैकभागभक्तस्वस्वद्रव्यस्य बहुभागे समभागो देयः । एकभागे मोहावरणानि हीनक्रमाणि नामांतरायौ अधिकक्रमौ इत्युक्तक्रमः कार्यः । तत्र बहुभागः तु—पुनः बहुकस्य देयः ॥ २०० ॥ तद्यथा—

स० चं०—युगपत् जिनका बंध संभवै है ऐसी जे उत्तर प्रकृति तिनकौं अपना अपना पिंडरूप द्रव्यकौं आ-

१	णा । स a १ ८ ख	दं । स a १ ८ ख	मोह । स a १ ८ ख	अंतराय । स a ८	२	णाणा । १ ^ स a ख ८ ख	दंसण । १ ^ स a ख ८ ख	मोह । १ ^ स a ख ८ ख	अंतराय । स a ८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां बहुभागका तो बरोबरि बटकरि अपनी अपनी उत्तर प्रकृतिनि-विषैं समान द्रव्य देना अर एक भाग विषैं मोहनीय ज्ञानावरण दर्शनावरण इनकी प्रकृतिनिकौं तौ अनुक्रमतैं घटता घटता अर नामकर्म अंतराय कर्म इनकी प्रकृतिनिकौं अनुक्रमतैं अधिक अधिक द्रव्य देना ऐसा अनुक्रम कह्या है सो करना। तहां भी जाका बहुत द्रव्य कह्या होइ ताकौं बहुभाग देना ॥ २०० ॥ सोई कहिए हैं—

घादितियाणं सगसगसव्वावरणीयसव्वदव्वं तु।
उत्तकमेण य देयं विवरीयं णामविग्घाणं ॥ २०१ ॥

घातित्रयाणां स्वकस्वकसर्वावरणीयसर्वद्रव्यं तु।
उत्क्रमेण च देयं विपरीतं नामविघ्नानां ॥ २०१ ॥

जी० प्र०—ज्ञानदर्शनावरणमोहनीयानां स्वस्वसर्वघातिद्रव्यं उत्क्रमेण देयं, नामविघ्नप्रकृतीनां च विपरीतं। तद्यथा—

ज्ञानावरणीयसर्वद्रव्यमिदं $\frac{\text{स a}}{\text{८}}$ जिनदृष्टानंतेन भक्त्वैकभागः सर्वघातिद्रव्यं $\frac{\text{स a}}{\text{८ ख}}$ इदमावल्यसंख्यातेन भक्त्वा बहुभागः $\frac{\text{स a ८}}{\text{८ ख ९}}$ ज्ञानावरणपंचकस्य पंचभिर्भक्त्वा प्रत्येकं $\frac{\text{स a ८}}{\text{८ ख ९ । ५}}$ देयः। शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः $\frac{\text{स a ८}}{\text{८ ख ९ । ९}}$ मत्यावरणस्य देयः। शेषैकभागे पुनः प्रतिभागभक्तबहुभागः $\frac{\text{स a ८}}{\text{८ ख ९९९}}$ श्रुतावरणस्य देयः। शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः $\frac{\text{स a ८}}{\text{८ ख ९९९९}}$ अवधिज्ञानावरणस्य देयः। शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः $\frac{\text{स a ८}}{\text{८ ख ९९९९९}}$ मनःपर्ययज्ञानावरणस्य देयः। शेषैकभागं केवलज्ञानावरणस्य $\frac{\text{स a १}}{\text{८ ख ९९९९९}}$ दद्यात्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुनर्देशघातिप्रतिबद्धानंतबहुभागे स ∂ ख / ८ ख (। १ ^) पूर्वोक्तक्रमेण प्रतिभागभक्तबहुभागः स ∂ ख ८ / ८ ख ९ (। १ ^) चतुर्भिर्भक्त्वा स ∂ ख ८ / ८ ख ९ । ४ (। १ ^) मत्यावरणादिचतुष्कस्य प्रत्येकं देयः । शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः स ∂ ख ८ / ८ ख ९ । ९ (। १ ^) मत्यावरणस्य देयः । शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः स ∂ ख ८ / ८ ख ९९९ (१ ^) श्रुतावरणस्य देयः । शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः स ∂ ख ८ / ८ ख ९९९९ (। १ ^) अवधिज्ञानावरणस्य देयः । शेषैकभागं स ∂ ख १ / ८ ख ९९९९ (। १ ^) मनःपर्ययज्ञानावरणस्य दद्यात् । एवं दर्शनावरणद्रव्यमपि सर्वघातिदेशघातिविभागनिमित्तं अनंतेन भक्त्वा एकभागस्य स ∂ / ८ ख (।) प्रतिभागभक्तबहुभागो नवभिर्भक्त्वा स्त्यानगृद्धिनिद्रानिद्राप्रचलाप्रचलानिद्राप्रचलाचक्षुरचक्षुरवधिकेवलदर्शनावरणानां प्रत्येकं देयः स ∂ ८ / ८ ख ९ । ९ (।) शेषैकभागः ज्ञानावरणपंचकवत्प्रतिभागभक्तबहुभागबहुभागान् हीनक्रमेण दत्त्वा चरमे शेषैकभागं दद्यात् । तद्देशघातिप्रतिबद्धानंतबहुभागस्य स ∂ ख / ८ ख (। १ ^) प्रतिभागभक्तबहुभागः— स ∂ ख ८ / ८ ख ९ (। १ ^) त्रिभिर्भक्त्वा स ∂ ख ८ / ८ ख ९ । ३ (। १ ^) चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनावरणानां प्रत्येकं देयः । शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागं २ चक्षुरचक्षुर्दर्शनावरणयोः दत्वा शेषैकभागं अवधिदर्शनावरणस्य दद्यात् । अंतरायपंचकस्य स ∂ / ८ (।) प्रतिभागभक्तबहुभागद्रव्यं पंचभिर्भक्त्वा प्रत्येकं देयं । शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागं बहुभागं अधिकक्रमेण दत्त्वा शेषैकभागं दानांतराये दद्यात् । एवं दत्ते सति अधिकक्रमा भवंति ॥ २०१ ॥ अथ मोहनीयस्य विशेषमाह—

स० चं०—ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय इन तीन कर्मनिका अपना अपना सर्व घाती द्रव्य जैसैं प्रकृति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निका अनुक्रम है तैसैं आदि प्रकृतितैं लगाय अंत प्रकृति पर्यंत द्रव्य देना। बहुरि नाम कर्म अंतराय कर्म इनका विपरीत कहिए अंत प्रकृतितैं लगाय आदि प्रकृति पर्यंत अनुक्रमतैं द्रव्य देना। सोई दिखाइए है—

ज्ञानावरणीय कर्मका सर्वद्रव्य पूर्वे कह्या था ताकौं जैसा जिनदेवने देख्या तैसा यथायोग्य अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाती द्रव्य है सो इस सर्वघाती द्रव्यका विभाग कीजिए है—इस सर्व घाती द्रव्यकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभागके पांच भाग कीजिए ते एक २ समान भाग पांचौं प्रकृतिनिकौं दीजिए बहुरि एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभाग जो आवलीका असंख्यातवां भाग ताका भाग दीजिए तहां बहुभाग मतिज्ञानावरणकौं दीजिए। बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं तिसही प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग श्रुतज्ञानावरणकौं दीजिए। बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं तिसही प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग अवधि ज्ञानावरणकौं दीजिए बहुरि जो अवशेष एक भाग रह्या ताकौं तिस प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग मनःपर्यय ज्ञानावरणकौं दीजिए। बहुरि जो अवशेष एक भाग रह्या सो केवलज्ञानावरणकौं दीजिए है ऐसैं पहिली जे समान भाग कहे थे तिन एक एकमैं पीछैं जो जो प्रमाण कह्या सो मिलाएं अनुक्रमतैं मतिज्ञानावरणादिकनिका सर्वघाती द्रव्यका परिमाण हो है। बहुरि ज्ञानावरण द्रव्यका अनंत भागनिविषैं एक भाग विना अवशेष बहुभाग प्रमाण देशघाती द्रव्य है ताकौं पूर्वोक्त अनुक्रमकरि तिसही आवलीका असंख्यातवां भाग मात्र प्रतिभागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभागके च्यारि भाग कीजिए तव एक एक समान भाग मतिज्ञानावरणादिक च्यारि प्रकृतिनिकौं देना बहुरि अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग मतिज्ञानावरणकौं देना। अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग श्रुतज्ञानावरणकौं देना। बहुरि अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग अवधिज्ञानावरणकौं देना बहुरि अवशेष एक भाग रह्या सो मनःपर्यय ज्ञानावरणकौं देना ऐसैं पहिली जे समान च्यारि भेद कहे थे तिन एक एकमैं पीछे जो जो प्रमाण कह्या सो सो मिलाए अनुक्रमतैं मतिज्ञानावर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णादिकका देशघाती द्रव्यका परिमाण हो है। बहुरि अपना २ देशघाती वा सर्वघाती द्रव्य मिलाएं अपना अपना ज्ञानावरणकी उत्तर प्रकृतिनिका सर्व द्रव्यका परिमाण हो है। इहां इतना जानना—

प्रकृतिनिके द्रव्यका विभागविषैं सर्वत्र जहां प्रतिभागका भाग कहे तहां आवलीका असंख्यातवां भागका भाग जानना। बहुरि ऐसैं ही दर्शनावरणीकर्मका पूर्वोक्त सर्वद्रव्यका परिमाण ताकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक एक भाग प्रमाण सर्वघाती द्रव्य है। तिस सर्वघाती द्रव्यका प्रतिभागका भाग दीजिए तहां एक भागविना बहुभागके नव भाग करने सो एक एक समान भाग नवौ प्रकृतिनिकौं देना बहुरि अवशेष एक भागका प्रतिभागकौं भाग देय बहुभाग स्त्यानगृद्धिकौं देना। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देय बहुभाग निद्रानिद्राकौं देना ऐसैंही ज्ञानावरणका पंचककी ज्यों प्रतिभागका भाग देइ देइ बहुभाग २ अनुक्रमतैं प्रचलाप्रचलाकौं निद्राकौं प्रचलाकौं चक्षुदर्शनावरणकौं अचक्षुदर्शनावरणकौं अवधिदर्शनावरणकौं हीनअनुक्रमतैं देना। अवशेष एक एक भाग केवल दर्शनावरणकौं देना। सो पहिले कहे समान भाग तिन एक एक भागविषैं पीछैं कह्या प्रमाण मिलाएं अपना अपना समान स्त्यानगृद्ध्यादिकका सर्वघाती द्रव्यका प्रमाण हो है। बहुरि दर्शनावरण द्रव्यका अनंत भागनिविषैं एक भाग विना बहुभाग प्रमाण देशघाती द्रव्य है ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां एक भागविना बहुभागके तीन भाग कीजिए सो एक एक समान भाग चक्षु अचक्षु अवधि दर्शनावरणकौं देना। बहुरि एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग चक्षुर्दर्शनावरणकौं देना अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग अचक्षुर्दर्शनावरणकौं देना अवशेष एक भाग अवधि दर्शनावरणकौं देना। सो पहिलै कह्या तीन समान भागनिविषैं एक समान भागमैं पीछैं कह्या प्रमाण मिलाएं अपना अपना चक्षुर्दर्शनावरणादिका देशघाती द्रव्य हो है। चक्षु अचक्षु अवधि दर्शनावरणका सर्वघाती देशघाती द्रव्य मिलाएं तिनका सर्वद्रव्यका प्रमाण हो है। अवशेष छहो (निद्रापंचकं केवलदर्शनावरणं चेति षट्) प्रकृतिनिका सर्वघाती ही सर्वद्रव्य जानना। बहुरि अंतराय कर्मका सर्वद्रव्यका जो प्रमाण ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां एक भागविना बहुभागके पंच भाग करि एक एक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समान भाग एक एक प्रकृतिकौं देना। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग वीर्यांतरायकौं देना बहुरि अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग उपभोगांतरायकौं देना। ऐसैं ही जो जो अवशेष एक एक भाग रहै ताकौं प्रतिभागका भाग देइ देइ बहुभाग बहुभाग भोगांतरायकौं लाभांतरायकौं देना। अवशेष एक भाग दानांतरायकौं देना सो पहिलैं पंच समान भाग कहे तिन एक एकमैं पीछैं कह्या प्रमाण मिलाएं अपना अपना द्रव्य प्रमाण हो है ऐसैं अंतराय अधिक अनुक्रमरूप जानना॥२०१॥ आगै मोहनीयविषैं विशेष है सो कहैं है—

मोहे मिच्छत्तादीसत्तरसण्हं तु दिज्जदे हीणं।
संजलणाणं भागेव होदि पणणोकसायाणं॥ २०२॥

मोहे मिथ्यात्वादिसप्तदशानां तु दीयते हीनं।
संज्वलनानां भाग इव भवति पंचनोकषायाणां॥ २०२॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वानंतानुबंधिसंज्वलनप्रत्याख्यानाप्रत्याख्यानलोभमायाक्रोधमानानां सप्तदशानां हीनक्रमेण दीयते। संज्वलनानां भागे इव वेदत्रयरत्यरतिहास्यशोकभयजुगुप्सानां देयक्रमो भवति॥ २०२॥ तद्यथा—

स० चं०—मोहनीय कर्मविषैं मिथ्यात्व १ अनंतानुबंधी संज्वलन प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यान लोभ माया क्रोध मान १६ इन सतरह प्रकृतिनिकौं हीनक्रम कहिए अनुक्रमतैं घाटि द्रव्य देना। बहुरि पंच नोकषायनिका भाग संज्वलनका भागवत् जानना। नोकषाय नव हैं तिनविषैं एक समय युगपत पंचहीका बंध होइ तातैं इहां पंच नोकषाय कहे। तीन वेद विषैं एकही वेदका बंध होइ। रति अरतिविषैं एकहीका बंध होइ, हास्य शोक विषैं एकहीका बंध होइ। भय जुगुप्सा इन दोऊका बंध होइ ऐसैं युगपत् पंच नोकषाय बंधैं हैं॥ २०२॥ अब इनका विभाग कैसैं हो है सो कहैं है—

संजलणभागबहुभागद्धं अकसायसंगयं दव्वं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इगिभागसहियबहुभागद्धं संजलणपडिबद्धं ॥ २०३ ॥

संज्वलनभागबहुभागार्धमकषायसंगतं द्रव्यं ।
एकभागसहितबहुभागार्धं संज्वलनप्रतिबद्धं ॥ २०३ ॥

जी० प्र०—अत्र मोहनीयसर्वद्रव्यमिदं स a/८ अनंतेन भक्त्वा एकभागः स a १/८ ख सर्वघातिप्रतिबद्धं भवति । शेषबहुभागो देशघातिप्रतिबद्धं भवति स a ख १-/८ ख । अत्र गुणकारे एकोनतामवगणय्य भाज्यभागहारभूतानंतयोरपवर्तने स a/८ समयप्रबद्धाष्टमभागः । तमावल्यसंख्यातेन भक्त्वा बहुभागः स a ८/८ ९ द्वाभ्यां भक्त्वा स a ८/८ ९ । २ अकषायाणां देयः । शेषबहुभागार्द्धमेकभागं संज्वलनदेशघातिप्रतिबद्धं भवति स a ८/८ ९ । २ उक्तत्रिविधद्रव्येषु सर्वघातीदं स a १/८ ख आवल्यसंख्यातेन भक्त्वा एकभागं स a १/८ ख ९ पृथक् संस्थाप्य बहुभागः स a ८/८ ख ९ सप्तदशभिर्भक्त्वा स a ८/८ ख ९ । १७ प्रत्येकं सप्तदशसु स्थानेषु देयः शेषैकभागे स a १/८ ख ९ प्रतिभागभक्तबहुभागं बहुभागं मिथ्यात्वादिषु षोडशसु क्रमेण दत्वा एकभागं स a १/८ ख ९ । १७ अप्रत्याख्यानमाने दद्यात् । द्वितीयसंज्वलनदेशघातिद्रव्यं स a ८/८ ९ २ संस्थाप्य अधस्तनमेकभागद्रव्यं द्वाभ्यां समुच्छिद्य स a २/८ ९ २ अत्रैकरूपं गृहीत्वा स a १/८ ९ २ बहुभागार्धे निक्षिप्य स a ८ १-/८ ९ । २

स a १/८ ९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आवल्यसंख्यातं आवल्यसंख्यातेन अपवर्त्य स a/(८ २) शेषैकभागार्धं स a १/(८।२) असंख्यातैकभागं साधिकं कृत्वा स a।१/(८ २) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९) चतुर्भिर्भक्त्वा स a ८/(८ २ ९ ४) चतुर्षु स्थानेषु प्रत्येकं देयः। शेषैकभागे स a १/(८ ९ २) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९) संज्वलनलोभे देयः। शेषैकभागे स a १/(८ २ ९ ९) प्रतिभागबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९ ९) संज्वलनमायायां देयः। शेषैकभागे स a १/(८ २ ९ ९ ९) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९ ९ ९) संज्वलनक्रोधे देयः। शेषैकभागं स a १/(८ २ ९ ९ ९ ९) संज्वलनमाने दद्यात्। एवं दत्ते सति हीनक्रमेण दत्तं भवति। पुनः तृतीयं नोकषायप्रतिबद्धद्रव्यमिदं स a ८/(८ २ ९) गुणकारे एकरूपहीनतामवगणय्य भाज्यभागहारौ आवल्यसंख्यातौ अपवर्त्य स a/(८ २) प्रतिभागेन भक्त्वा बहुभागस्य स a ८/(८ २ ९) पंचशः पंचसु स्थानेषु प्रत्येकं स a ८/(८ २ ९ ५) देयः। शेषैकभागे स a १/(८ २ ९) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९) वेदत्रये देयः। शेषैकभागे स a १/(८ २ ९ ९) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९ ९) रत्यरत्योर्देयः। शेषैकभागे स a १/(८ २ ९ ९ ९) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९ ९ ९) हास्यशोकयोर्देयः। शेषैकभागे स a १/(८ २ ९ ९ ९ ९) प्रतिभागभक्तबहुभागः स a ८/(८ २ ९ ९ ९ ९ ९) भये देयः। शेषैकभागं स a १/(८ २ ९ ९ ९ ९ ९) जुगुप्सायां दद्यात् ॥ २०३ ॥ एवं दत्ते नोकषायपिंडप्रकृतिद्रव्यस्य विशेषमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मोहनीय कर्मका सर्वद्रव्यका प्रमाण पूर्वै कह्या ताकौं अनंतका भाग दीजिए तहां एक भाग प्रमाण सर्वघाती द्रव्य है। अवशेष बहुभागप्रमाण देशघाती द्रव्य है तहां देशघाती द्रव्यकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां बहुभागका आधा तौ नोकषायनिकौं देना। बहुरि बहुभागका आधा अर एकभाग अवशेष रह्या सो सर्व संज्वलनका देशघाती संबंधी द्रव्य जानना। ऐसैं ए तीन प्रकार द्रव्य भए। तिनविषैं सर्वघाती द्रव्यका विभाग कीजिए है—

सर्वघाती द्रव्यकौं आवलीका असख्यातवां भाग प्रमाण जो प्रतिभाग ताका भाग दीजिए। तहां एक भागकौं जुदा राखि अवशेष बहुभागके सतरह भाग कीजिए सो एक एक समान भाग एक एक प्रकृतिकौं दीजिए वहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग मिथ्यात्वकौं देना। अवशेष एकभागकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग अनंतानुबंधी लोभकौं देना। अवशेष एकभागकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग वहुभाग अनंतानुबंधी मायाकौं देना इसही अनुक्रमतैं जो जो एकभाग अवशेष रहता जाइ ताकौं तिसही प्रतिभागका भाग देइ देइ वहुभाग वहुभाग अनंतानुबंधी क्रोधकौं अनंतानुबंधी मानकौं संज्वलन लोभकौं, संज्वलन मायाकौं संज्वलन क्रोधकौं संज्वलन मानकौं प्रत्याख्यान लोभकौं प्रत्याख्यान मायाकौं प्रत्याख्यान क्रोधकौं प्रत्याख्यान मानकौं, अप्रत्याख्यान लोभकौं अप्रत्याख्यान मायाकौं अप्रत्याख्यान क्रोधकौं देना अवशेष एकभाग रहै सो अप्रत्याख्यान मानकौं देना। सो पहिलैं सतरह समान भाग कहे थे तिनका एक एक भागमैं पीछैं कह्या अपना अपना प्रमाणकौं मिलाएं अपना अपना प्रकृतिनिका सर्वघाती द्रव्यका प्रमाण हो है। वहुरि दूसरा संज्वलनका देशघाती संबंधी द्रव्यका जो प्रमाण कह्या ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदा राखि अवशेष बहुभागके च्यारि भाग करि एक एक समान भाग च्यार्यौंकौं देना अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग संज्वलन लोभकौं देना अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग संज्वलन मायाकौं देना। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग संज्वलन क्रोधकौं देना। अवशेष एक भाग संज्वलन मानकौं देना सो पहिलैं च्यारि समान भाग २४५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहे तिन एक एक भागमैं पीछे कह्या अपना अपना प्रमाण मिलाये अपना अपना देशघाती द्रव्य हो है सो संज्वलन च्यारि प्रकृतिनिका देशघाती सर्व घाती द्रव्य मिलाएं सर्व द्रव्य हो है। मिथ्यात्व, बारह कषाय इनका सर्वघाती ही द्रव्य है अर नोकषायका सर्व द्रव्य अघाती ही है सो नोकषायका वटवारा कहिए है— पूर्वं जो तीसरा नोकषायसंबंधी द्रव्य कह्या ताकौं प्रतिभागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदा राखि बहुभागके पंच भाग कीजिए सो एक एक समान भाग पांचौ प्रकृतिनिकौं दीजिए। वहुरि अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग तीनौं वेदनिविषै जिसका बंध होइ ताकौं दीजिए। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग रति अरतिविषैं जाका बंध होइ ताकौं दीजिए। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ वहुभाग हास्य शोकविषै जाका बंध होइ ताकौं दीजिये। अवशेष एकभागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग भयकौं देना। अवशेष एक भाग जुगुप्सा कौं देना सो पहिले समान पंच भाग कहे तिन एक एकमैं पीछैं कह्या अपना अपना प्रमाण मिलाएं अपना अपना प्रकृतिनिका द्रव्य हो है ॥ २०३ ॥ इहां नोकषायरूप पिंड प्रकृतिनिका द्रव्य विषै विशेष है सो कहैं हैं—

तण्णोकसायभागो सबंधपणणोकसायपयडीसु।
हीणकमो होदि तहा देसे देसावरणदव्वं ॥ २०४ ॥

तन्नोकषायभागः सबंधपंचनोकषायप्रकृतिषु।
हीनक्रमो भवति तथा देशे देशावरणद्रव्यं ॥ २०४ ॥

जी॰ प्र॰—तन्नोकषायप्रतिबद्धद्रव्यं स a ८ / ८ २ ९ सबंधपंचकनोकषायप्रकृतिषु पुंवेदरतिहास्यभयजुगुप्सासु अपूर्वकरणांतानां वा पुंवेदारतिशोकभयजुगुप्सासु प्रमत्तांतानां स्त्रीवेदरतिहास्यभयजुगुप्सासु स्त्रीवेद-अरति-शोकभय-जुगुप्सासु मिथ्यादृष्टिसासादनयोः नपुंसकवेदरतिहास्यभयजुगुप्सासु वा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नपुंसकवेदारतिशोकभयजुगुप्सासु मिथ्यादृष्टेश्च हीनक्रमेण देयं । अनिवृत्तिकरणे एकः पुंवेद एव बध्यते, तेन अकषायप्रतिबद्धद्रव्यं सर्वं सवेदभाग-पर्यंतं तत्रैव देयं इति विशेषो ज्ञातव्यः । देशघातिसंज्वलनकषाये देशावरणद्रव्यं स ∂ | ८२ सबंधप्रकृतिषु हीनक्रमेण देयं । तद्यथा—

मिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणक्रोधबंधभागपर्यंतं सहबंधसंज्वलनचतुष्टये क्रोधबंधोपरतानिवृत्तितृतीयभागे सहबंधसंज्वलनत्रये मानबंधोपरतानिवृत्तिकरणचतुर्थभागे संज्वलनद्वये च हीनक्रमेण देयं । मायाबंधोपरतानिवृत्तिपंचमभागे संज्वलनदेशघातिप्रतिबद्धद्रव्यं सर्वं लोभसंज्वलन एव देयं ॥२०४॥

अथ सबंधनोकषायाणां निरंतरं बंधाद्धां प्रमाणयति—

स० चं०—सो नोकषाय संबंधी द्रव्य है सो युगपत् बंधकौं प्राप्त होइ ऐसैं जो पंच नोकषाय तिनविषैं हीन क्रम करि देना सो मिथ्यादृष्टीतैं लगाइ पुरुषवेद रति हास्य भय जुगुप्सा इन पंचनिका अपूर्वकरण पर्यंत अथवा पुरुषवेद अरति शोक भय जुगुप्सा इन पंचनिका प्रमत्तपर्यंत युगपत् बंध होइ । बहुरि स्त्रीवेद रति हास्य भय जुगुप्सा इन पंचनिका अथवा स्त्रीवेद अरति शोक भय जुगुप्सा इन पंचनिका मिथ्यादृष्टि सासादन विषैं युगपत् बंध होइ । बहुरि नपुंसकवेद रति हास्य भय जुगुप्सा इन पंचनिका अथवा नपुंसक वेद अरति शोक भय जुगुप्सा इन पंचनिका मिथ्यादृष्टिविषैं युगपत् बंध होइ सो नोकषायसंबंधी द्रव्यका जैसैं पूर्वैं वटवारा कह्या तैसैं जिन पंच प्रकृतिनिका बंध होइ तिनकौं अनुक्रमतैं घाटि घाटि द्रव्य देना । बहुरि अनिवृत्तिकरणविषैं एक पुरुषवेदहीका बंध है तातैं तहां सवेदभागपर्यंत नोकषायसंबंधी सर्व ही द्रव्य एक पुरुषवेदकौं देना । बहुरि देशघाती जो संज्वलन कषाय ताका देशघाती संबंधी द्रव्य सो युगपत जेती प्रकृति बंधै तिनकौं हीन क्रमकरि देना सो मिथ्यादृष्टितैं लगाय अनिवृत्तिकरणका दूसरा क्रोधबंध भागपर्यंत तौ च्यार्योंका वटवारा करना तीसरा भागविषैं जहां क्रोधका बंध नहीं तहां तीनही प्रकृतिका वटवारा करना चौथा भागमैं जहां मानका भी बंध नाहीं तहां दोयही प्रकृतिका वट करना । पांचवां भागविषैं जहां मायाका भी बंध नाहीं तहां संज्वलनका देशघाती संबंधी सर्व द्रव्य एक लोभहीकौं देना । वट पूर्वोक्त रीतिकरि अनुक्रमतैं घाटि घाटि जानना ॥२०४॥ आगैं बंधकौं प्राप्त होइ जे नोकषाय तिनका निरंतर बंध होइ तौ कितने काल होइ ? सो कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुंबंधऽद्धा अंतोमुहुत्त इत्थिम्हि हस्सजुगले य ।
अरदिदुगे संखगुणा णपुंसकऽद्धा विसेसहिया ॥ २०५ ॥

पुंबंधाद्धा अंतर्मुहूर्तः स्त्रियां हास्ययुगले च ।
अरतिद्वये संख्यगुणा नपुंसकाद्धा विशेषाधिकः ॥ २०५ ॥

जी० प्र०—पुंवेदस्य निरंतरबंधाद्धा जिनदृष्टांतर्मुहूर्तः २ ७ । २ स च संख्यातावलिमात्रः । स्त्रीवेदे ततः संख्यातगुणाः २ ७ । ४ । अतो हास्यरत्योः संख्यातगुणाः २ ७ । १६ । अतः अरतिशोकयोः संख्यातगुणाः २ ७ । ३२ । ततः नपुंसकवेदे विशेषाधिकः २ ७ । ४२ । अत्र वेदत्रयस्य मिलित्वा अंतर्मुहूर्तशलाकाः अष्टचत्वारिंशत् २ ७ । ४८ । हास्यद्विकारतिद्विकयोरपि तावत्यः २ ७ । ४८ । यदि वेदत्रयस्य तावतीनां एतावद्द्रव्यं तदा एतावतीनां कियत् ? इति प्र मु २ ७ । ४८ । फ । स ə / ८ । १० इ मु २ ७ । २ लब्धं पुंवेदप्रतिबद्धद्रव्यं स्तोकं स ə / ८ । १० । ४८ । २ तथा प्र मु २ ७ । ४८ फ—स ə / ८ १० इ मु २ ७ ४ लब्धं स्त्रीवेदस्य संख्यातगुणं स ə / ८ १० ४८ ४ तथा प्र मु २ ७ । ४८ । फ स ə / ८ १० इ मु २ ७ । ४२ लब्धं नपुंसकवेदस्य संख्यातगुणं स ə / ८ १० ४८ । ४२ एवं प्र मु २ ७ ४८ । फ स ə / ८ १० मु इ २ ७ १६ । लब्धं रतिकषायस्य स्तोकं स ə / ८ १० ४८ १६ तथा प्र मु २ ७ ४८ । फ-स ə– / ८ १० इ मु २ ७ ३२ लब्धं अरतिनोकषायस्य संख्यातगुणं स ə– / ८ १० ४८ ३२ एवं प्र मु २ ७ ४८ फ स ə= / ८ १० इ मु २ ७ १६ लब्धं हास्यनोकषायस्य संख्यातगुणाहीनं स ə= / ८ । १० ४८ १६ तथा प्र मु २ ७ । ४८ फ स ə≡ / ८ १० इ मु २ ७ । ३२ लब्धं शोकनोकषायस्य संख्यातगुणं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स ३ ≡ । ३२ सवंधपंचनोकषायाः विशेषहीनक्रमा अपि पिंडानां परस्परं कालसंचयमाश्रित्य उक्तप्रकारेण द्रव्यविभंजनस्वस्वबंधकाले भवति
८ १० ४८
॥ २०५ ॥ अथ विघ्नपंचके नामबंधस्थानेषु चाह—

स० चं०—पुरुष वेदनिका निरंतर बंध होइ वीचि और कोइ वेदका बंध न होइ तीहिं निरंतर बंधका अद्धा कहिए काल जैसा जिनदेव देख्या तैसा अंतर्मुहूर्त प्रमाण है सो संख्यातगुणा संख्यात आवली प्रमाण है। ताकी सहनानी दोयगुणा अंतर्मुहूर्त बहुरि स्त्रीवेदका निरंतर बंधका काल तीहिस्यौं संख्यात गुणा है ताकी सहनानी च्यारिगुणा अंतर्मुहूर्त ४ हास्य अर रतिका तीहिस्यों भी संख्यात गुणा है ताकी सहनानी सोलह गुणा अंतर्मुहूर्त बहुरि अरति शोकका तीहिस्योंभी संख्यात गुणा है ताकी सहनानी वत्तीसगुणा अंतर्मुहूर्त बहुरि नपुंसक वेदका तीहिस्यों किछू अधिक है ताकी सहननी बियालीस गुणां अंतर्मुहूर्त ४२ तहां तीनौं वेदका काल मिलाए सहनानी-की अपेक्षा अंतर्मुहूर्त अठतालीस ४८ अर हास्य शोकका वा रति अरतिका मिलाएं अंतर्मुहूर्त अठतालीस ४८ तहां मिल्या हूवा कालकौं प्रमाण राशि कीए पिंडरूप द्रव्यकौं फलराशि कीए अपना अपना कालकौं इच्छा राशी कीए लब्ध राशिविषैं अपना २ द्रव्यका प्रमाण त्रैराशिक करि आवै है। तहां तीनौं वेदका द्रव्यका जो सत्ताविषै प्रमाण ताकौं तिस मिल्याहूवा कालकी सहनानी रूप अंतर्मुहूर्त अठतालीसका भाग दीएं जो प्रमाण होइ ताकौं पुरुष वेदका कालकी सहनानी अंतर्मुहूत दोयकरि गुणें जो प्रमाण होइ तितना पुरुषवेद संबंधी द्रव्य जानना। सो सबतैं थोरा है। बहुरि स्त्रीवेदका कालकी सहनानी अंतर्मुहूर्त च्यारिकरि गुणें जो प्रमाण होइ तितनी स्त्रीवेद संबंधी द्रव्य है सो पुरुषवेदके द्रव्यतैं संख्यात गुणा है। बहुरि नपुंसक वेदका कालकी सहनानी अंतर्मुहूर्त बियालीस करि गुणे जो होइ सो नपुंसक वेद संबंधी द्रव्य है सो स्त्रीवेदके द्रव्यतैं संख्यातगुणा है। बहुरि रति अरति संबंधी द्रव्यकौं सहनानीकी अपेक्षा अंतर्मुहूर्त अठतालीसका भाग दीए जो प्रमाण होइ ताकौ सहनानीकी अपेक्षा रति का काल अंतर्मुहूर्त सोलह करि गुणै जो प्रमाण होइ सो रति नोकषायसंबंधी द्रव्य जानना सो स्तोक है। बहुरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अरतिका काल अंतर्मुहूर्त बत्तीसकरि गुणै जो प्रमाण होइ सो अरति नोकषाय संबंधी द्रव्य जानना सो रतिके द्रव्यतैं संख्यात गुणा है। बहुरि हास्य शोक संबंधी जो द्रव्य ताकौं सहनानीकी अपेक्षा अंतर्मुहूर्त अठतालीसका भाग दीए जो प्रमाण होइ ताकौं सहनानीकी अपेक्षा हास्यका काल अंतर्मुहूर्त सोलहकरि गुणैं जो प्रमाण होइ सो हास्यनोकषाय संबंधी द्रव्य है सो शोकके द्रव्यतैं संख्यातगुणा घाटि है। बहुरि शोकका काल अंतर्मुहूर्त बत्तीसकरि गुणै जो प्रमाण होइ सो शोक संबंधी द्रव्य है सो हास्यके द्रव्यतैं संख्यात गुणा है सो युगपत् जिनका बंध होइ ऐसे पंच नोकषाय पूर्वोक्त प्रकार अनुक्रमतैं घाटि घाटि द्रव्यरूप कहे तथापि पिंडविषैं परस्पर नानाकाल विषैं एकठे होनेकी अपेक्षा इस प्रकारकरि द्रव्यका वटवारा अपने अपने बंधकालविषैं हो है। तीन वेदनिका एक पिंड जानना। रति अरतिका एक पिंड जानना। हास्य शोकका एक पिंड जानना। सो पूर्वोक्त पिंडका द्रव्य इस प्रकार बंधै है ॥ २०५ ॥ आगैं अंतरायकी पांच प्रकृति अर नामके बंध स्थान तिनविषैं कहैं हैं—

पणविग्घे विवरीयं सबंधपिंडिदरणामठाणेवि।
पिंडं दव्वं च पुणो सबंधसगपिंडपयडीसु ॥ २०६ ॥

पंचविघ्ने विपरीतं सबंधपिंडेतरनामस्थानेऽपि।
पिंडं द्रव्यं च पुनः सबंधस्वकपिंडप्रतिषु ॥ २०६ ॥

जी० प्र०—पंचदानाद्यंतरायेषु प्रागुक्तक्रमाद्विपरीतोऽधिकक्रमो भवति पुनः सबंधपिंडेतरनामस्थानेऽपि विपरीतः। तद्यथा—

नामकर्मसर्वद्रव्यमिदं स a ८ / ८ ९ अधस्तनासंख्यातैकभागं साधिकं कृत्वा स a ८ / ८ ९ अत्रैकरूपहीनतामवगणय्य भाज्यभागहारावपवर्त्येदं स a / ८ त्रयो-

स a / ९ ९ ९ ९ ९ । २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विंशतिकस्थानस्य सहबंधपिंडप्रकृतिषु तिर्यग्गत्येकेंद्रियौदारिकतैजसकार्मणहुंडसंस्थानवर्णगंधरसस्पर्शतिर्यगानुपूर्व्यागुरुलघूपघा—

तस्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधरणास्थिराशुभदुर्भगानादेयायशस्कीर्तिनिर्माणनाम्नीषु दातुं आवल्यसंख्यातेन भक्त्वा बहुभागः स ३ ८ / ८ ९ एकविंशत्या भक्त्वा

स ३ ८ / ८ ९ २१ प्रत्येकं देयः। शेषैकभागे स ३ १ / ८ ९ प्रतिभागभक्तबहुभागः स ३ ८ / ८ ९ ९ निर्माणे देयः। शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः अयशस्कीर्तौ देयः

स ३ ८ / ८ ९ ९ । २ शेषैकभागे प्रतिभागभक्तबहुभागः स ३ ८ / ८ ९ ९ । ३ अनादेये देयः। एवं प्रतिभागभक्तबहुभागं बहुभागं दुर्भगाद्येकेंद्रियांतेषु दत्त्वा चरमशे-

षैकभागं स ३ १ / ८ ९ ९ २० तिर्यग्गतौ दद्यात्। इदमुपलक्षणं, तेन शेषनामबंधस्थानेषु अपि ज्ञातव्यं। इदं त्रयोविंशतिकं साधारणसूक्ष्मैकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्त-

कभवोदयोचितं नरतिर्यग्मिथ्यादृष्टिरेव बध्नाति। पिंडद्रव्यं च पुनः शरीरनामपिंडप्रकृतिप्रतिबद्धद्रव्यं पुनः सहबंधौदारिकतैजसकार्मणेषु औदारिक तोऽ-

धिकक्रमेण देयं। एवं वक्ष्यमाणशेष २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । १ । स्थानेष्वप्येकचत्वारिंशज्जीवपदेषु वक्तव्यं इति अत्र प्रदेशबंधप्रक-

रणे द्रव्यविभंजनक्रमः सूचितः ॥ २०६ ॥ अथ उत्कृष्टादीनां साद्यादिविशेषं मूलप्रकृतिष्वाह—

स० चं०—दानांतरायादिक पंच अंतराय तिनविषैं विपरीत कहिए पूर्वोक्त क्रमस्यों विपरीत अंतसौं लगाय आदिपर्यंत क्रम जानना। सो ऊपरि कथन करही आए हैं। बहुरि नामकर्मके स्थानकनिविषैं युगपत् बंधकौं प्राप्त होंइ ऐसी जो नामकर्मकी प्रकृति गत्यादिक पिंडरूप अर अगुरुलघु आदिक अपिंड रूप तिनविषैं भी विपरीतं कहिए अंततैं लगाय आदि पर्यंत क्रम जानना। सोई कहिए है—

युगपत् जाका बंध होइ ऐसा नामकर्मका त्रयोविंशतिक स्थान है सो तिर्यंच गति १ एकेंद्री जाति १ औ- दारिक तैजस कार्माण ए तीन शरीर ३ हुंड संस्थान १ वर्ण १ गंध १ रस १ स्पर्श १ तिर्यंचानुपूर्वी १ अगुरुलघु- १ उपघात १ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ अस्थिर १ अशुभ १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१ निर्माण १ इन तेईस प्रकृतिनिका युगपत् बंध मनुष्य वा तिर्यंच मिथ्यादृष्टि जीव करै है सो यहु त्रयोविंशतिक स्थान साधारण सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक भवकौं प्राप्त करनेकौं योग्य है। अब इनका वटवारा दिखाइए है–

पूर्वै मूल प्रकृतिनिका वटवारामें जो नामकर्मका द्रव्य कह्या ताकौं आवलीका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदाराखि बहुभागके इकईस भाग कीजिए सो एक एक समान भाग एक एक प्रकृतिकौं देना। तेईस प्रकृतिनिका बंध था तिन विषैं औदारिक तैजस कार्माण ए तीनौं प्रकृति एक शरीर नामा पिंड प्रकृतिविषैं आय गईं अर और पिंड प्रकृतिनिविषैं एक एक प्रकृतिहीका बंध है तातैं इहां इकईस ही भाग कीए। बहुरि जो एक भाग रह्या ताकौं आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण प्रतिभागका भाग दीजिए तहां बहुभाग अंतविषैं कही जो निर्माण प्रकृति ताकौं देना अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग अयशस्कीर्तिका देना, अवशेष एक भाग रह्या ताकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग अनादेयकौं देना ऐसैं ही जो जो एक भाग अवशेष रहता जाय ताकौं प्रतिभागका भाग देइ देइ बहुभाग बहुभाग दुर्भगकौं अशुभकौं अस्थिरकौं साधारणकौं अपर्याप्तकौं सूक्ष्मकौं स्थावरकौं उपघातकौं अगुरुलघुकौं तिर्यंचानुपूर्वीकौं स्पर्शकौं रसकौं गंधकौं वर्णकौं हुंड संस्थानकौं शरीरपिंड प्रकृतिनिकौं एकेंद्रियजातिकौं देना। अवशेष एक भाग रह्या सो आदिविषैं कही जो तिर्यंचगति प्रकृति ताकौं देना सो पूर्वै इकईस समान भाग कहे थे तिन एक एक भागमैं अपना अपना पीछैं कह्या प्रमाण मिलाए अपना अपना प्रकृतिका द्रव्य हो है। सो जैसैं तेईसका बंधका उदाहरण दिखाया तैसैं ही जहां पचीसका युगपत् बंध होइ तहां ऐसैं ही पचीसका वटवारा जानना। ऐसैं ही छवीस अठाईस गुणतीस इकतीस प्रकृतिनिका बंधविषैं भी बटवारा जानना। बहुरि जहां ऊपरले एक यशस्कीर्ति ही का बंध है तहां सर्व ही नाम कर्मका द्रव्य तिस एक प्रकृति ही कौं देना बहुरि इन स्थानकौंविषैं जिनका युगपत् बंध होइ तिन पिंड प्रकृतिके भेदनिका बटवारा एक पिंड प्रकृतिनिका द्रव्यविषैं आधिक अनुक्रमकरि ही जानना। जैसैं त्रयोविंशतिक स्थानकविषैं एक शरीरनामा पिंड प्रकृतिके तीन भेद पाइए तो तहां जो शरीर प्रकृतिका बटवारा विषैं जो द्रव्य आया

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताकौं प्रतिभागका भाग देइ बहु भागके तीन भागकरि एक एक समान भाग तीनोंकों देना अवशेष एकभागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहुभाग कार्माणकौं देना। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग देइ बहु भाग तैजसकौं देना। अवशेष एक भाग औदारिककौं देना। पूर्वोक्त समान भागनिविषैं इनकौं मिलाए अपना अपना द्रव्य होइ ऐसैं ही और ठिकानैं भी जानना। बहुरि जहां पिंड प्रकृतिविषैं एक ही प्रकृतिका बंध होइ तहां पिंड प्रकृतिका सर्व ही द्रव्य तिस एक प्रकृतिकौं देना। इकतालीस जीव पदनिविषैं नामकर्मके स्थाननिका जैसैं बंध होइ सो कथन आगैं स्थान समुत्कीर्तन अधिकारविषैं कहैंगे तहां जानने। ऐसैं प्रदेशबंधका कथनविषैं द्रव्यका बटवारा कह्या सो एक एक समयविषैं जो एक एक समयप्रबद्ध बंधै है तहां समय प्रबद्ध प्रमाण परमाणूनिविषैं जिस जिस प्रकृतिका जितना २ द्रव्य कह्या तितना तितना परमाणू तिस तिस प्रकृतिरूप होइ परिणमैं हैं ऐसा भावार्थ जानना। कोऊ बहुभाग समभागादिकविषैं न समझैं ताकौं एक दृष्टांत दिखाइए है—

जैसैं सर्व द्रव्य च्यारि हजार छिनवै ४०९६ तिनका बटवारा च्यारि जायगा करना प्रतिभागका प्रमाण आठ तहां च्यारि हजार छिनवैकौं आठका भाग दीजिये तहां एक भाग विना अवशेष बहु भाग पैंतींससै चौरासी ३५८४ ताके च्यारि भागकरि समान देने तहां एक एक भागमें आठसै छिनवै आए अवशेष एक भागका प्रमाण पांचसै वारा ताकौं प्रतिभाग आठका भाग दीए चौसठि पाए सो जुदा राखि अवशेष बहुभाग च्यारिसै अठतालीस बहु द्रव्य वालेकौं देना। अवशेष एक भाग चौंसठिकौं प्रतिभागका भाग दीए आठ पाए सो जुदा राखि अवशेष बहुभाग छप्पन तिसतैं हीन द्रव्यवालेकौं देना। अवशेष एक भागकौं प्रतिभागका भाग दीए एक पाया सो जुदा राखि अवशेष बहुभाग सात तिसतैं हीन द्रव्य वालेकौं देना। अवशेष एक भाग एक सो तिसतैं हीन द्रव्यवालेकौं देना सो समान भागनिविषैं इनकौं मिलाए क्रमतैं तेरासै चवालीस नौसै बावन नौसै तीन आठसै सत्याणव प्रमाण द्रव्य आया १३४४ ९५२ ९०३ ८९७ ऐसैं च्यारि हजार छिनवै द्रव्यका बटवारा भया सो ऐसैंही पूर्वोक्त प्रकृतिनिका बटवारा जानना। बहुरि ज्ञानावरण दर्शनावरण मोहनीय इनकी प्रकृतिनिविषैं अनुक्रमतैं घटती

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्रव्य जानना। अंतराय अर नाम कर्मकी प्रकृतिनिविषैं अनुक्रमतैं अधिक अधिक द्रव्य जानना। वेदनीय आयु गोत्र इनकी उत्तर प्रकृति एक समयविषैं एक ही बंधै हैं तातैं मूल प्रकृतिवत् इनका द्रव्य जानना ॥ २०६ ॥ ऐसैं प्रदेश कहिए परमाणू तिनके बंधका विधान कह्या आगैं उत्कृष्टादिक प्रदेश बंधनिके साद्यादिक विशेष मूल प्रकृतिनि विषैं कहै हैं—

छण्हंपि अणुक्कस्सो पदेसबंधो दु चदुवियप्पो दु।
सेसतिये दुवियप्पो मोहाऊणं च दुवियप्पो ॥ २०७ ॥

षण्णामपि अनुत्कृष्टः प्रदेशबंधस्तु चतुर्विकल्पस्तु।
शेषत्रये द्विविकल्पः मोहायुषोश्च द्विविकल्पः ॥ २०७ ॥

जी० प्र०—षण्णां ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयनामगोत्रांतरायाणामनुत्कृष्टः प्रदेशबंधः साद्यनादिध्रुवाध्रुवभेदाच्चतुर्विधो भवति। तु—पुनः शेषोत्कृष्टाजघन्यजघन्येषु साद्यध्रुवभेदाद् द्विविध एव। तु—पुनः मोहायुषोः उत्कृष्टादिचतुर्विधोऽपि साद्यध्रुवभेदाद्द्विविधः ॥ २०७ ॥ अथोत्तरप्रकृतीनामाह—

सं० च०—ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय नाम गोत्र अंतराय इन छहौंका अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध तौ सादि अनादि ध्रुव अध्रुव भेदतैं च्यारि प्रकार है बहुरि इनही छहौंका अवशेष उत्कृष्ट अजघन्य जघन्य प्रदेशबंध सादि अध्रुव भेदतैं दोय ही प्रकार है। बहुरि मोहनीय आयु इनका उत्कृष्टादिक च्यार्यो ही प्रकारका प्रदेशबंध सादि अध्रुवके भेदतैं दोय प्रकार है ॥ २०७ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिकौं कहै हैं—

१

णा	दे	वे	मो	आ	ना	गो	अं
उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २	उ २
अ ४	अ ४	अ ४	अ २	अ २	अ ४	अ ४	अ ४
अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २	अ २
ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २	ज २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीसण्हमणुक्कस्सो उत्तरपयडीसु चउविहो बंधो ।
सेसतिये दुवियप्पो सेसचउक्केवि दुवियप्पो ॥ २०८ ॥

त्रिंशतामनुत्कृष्टः उत्तरप्रकृतिषु चतुर्विधो बंधः ।
शेषत्रये द्विविकल्पः शेषचतुष्केऽपि द्विविकल्पः ॥ २०८ ॥

जी० प्र०—उत्तरप्रकृतिषु त्रिंशतोऽनुत्कृष्टप्रदेशबंधः, चतुर्विधः शेषोत्कृष्टादित्रयेऽपि साद्यध्रुवभेदाद्द्विविकल्पः । शेषनवतिप्रकृतीनां उत्कृष्टादिबंधचतुष्केऽपि साद्यध्रुवभेदाद् द्विविकल्प एवं ॥ २०८ ॥ तां त्रिंशतमाह—

सं० च०—उत्तर प्रकृतिनिविषैं तीस प्रकृतिनिका अनुत्कृष्ट प्रदेश बंध तौ सादि अनादि ध्रुव अध्रुवके भेदतैं च्यारि प्रकार है । अवशेष उत्कृष्ट अजघन्य जघन्य प्रदेश बंध सादि अध्रुवके भेदतैं दोय प्रकार है । अवशेष निवै प्रकृतिनिका उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट अजघन्य जघन्य च्यारयो प्रकारका प्रदेशबंध सादि अध्रुवके भेदतैं दोय प्रकार ही है ॥ २०८ ॥ तेतीस प्रकृति कौंन ? सो कहै हैं—

णाणंतरायदसयं दंसणछक्कं च मोहचोद्दसयं ।
तीसण्हमणुक्कस्सो पदेसबंधो चदुवियप्पो ॥ २०९ ॥

ज्ञानांतरायदशकं दर्शनषट्कं च मोहचतुर्दशकं ।

१

३०	९०
उ २	उ २
अ ४	अ २
अ २	अ २
ज २	ज २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रिंशतामनुत्कृष्टः प्रदेशबंधः चतुर्विकल्पः ॥ २०९ ॥

जी० प्र०—पंचज्ञानावरणपंचांतरायाः निद्राप्रचलाचक्षुरचक्षुरवधिकेवलदर्शनावरणानि अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानसंज्वलनक्रोधमानमायालोभभयजुगुप्साश्चेति त्रिंशतोऽनुत्कृष्टप्रदेशबंधश्चतुर्विकल्पो भवति ॥ २०९ ॥ अथोत्कृष्टबंधस्य सामग्रीविशेषमाह—

सं० च०—पांच ज्ञानावरण ५ पांच अंतराय ५ निद्रा प्रचला चक्षु अचक्षु अवधि केवलदर्शनावरणीय छह ६ अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान संज्वलन क्रोध मान माया लोभ ए अर भय जुगुप्सा ए चौदह इन तीसनिका अनुत्कृष्ट प्रदेशबंध सादि इत्यादिक च्यारि प्रकार है। सादि अनादि ध्रुव अध्रुवका स्वरूप पूर्वें कह्या है सो जानना ॥ २०९ ॥ आगें उत्कृष्ट प्रदेश बंध होनेकी सामग्री कहै हैं—

उक्कडजोगो सण्णी पज्जत्तो पयडिबंधमप्पदरो।
कुणदि पदेसुक्कस्सं जहण्णये जाण विवरीयं ॥ २१० ॥

उत्कृष्टयोगः संज्ञी पर्याप्तः प्रकृतिबंधाल्पतरः।
करोति प्रदेशोत्कृष्टं जघन्यके जानीहि विपरीतं ॥ २१० ॥

जी० प्र०—प्रदेशोत्कृष्टं उत्कृष्टयोगः संज्ञिपर्याप्त एव प्रकृतिबंधाल्पतरः करोति। जघन्ये विपरीतं जानीहि। जघन्ययोगासंज्ञ्यपर्याप्तप्रकृतिबंधबहुतर एव जघन्यप्रदेशे बंधं करोतीत्यर्थः ॥ २१० ॥ अथ मूलप्रकृतीनां उत्कृष्टप्रदेशबंधस्य गुणस्थाने स्वामित्वमाह—

सं० च०—जो जीव उत्कृष्ट योगकरि संयुक्त होइ सैनी होइ पर्याप्त होइ जाकै थोरी प्रकृतिनिकौ बंध होइ ऐसा जीव उत्कृष्ट प्रदेश बंधकौं करै। बहुरि जघन्य प्रदेश बंधविषैं विपरीत कहिए अन्यथा जानहु सो जो जीव जघन्य योगकरि संयुक्त असैनी अपर्याप्त बहुत प्रकृतिनिका बांधनेवाला होइ सो जघन्य प्रदेश बंधकौं करै है ॥ २१० ॥ आगें मूल प्रकृतिनिके उत्कृष्ट बंधका स्वामीपना गुणस्थाननिविषैं कहैं हैं—

आउक्कस्स पदेसं छक्कं मोहस्स णव दु ठाणाणि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सेसाण तणुकसाओ बंधादि उक्कस्सजोगेण ॥ २११ ॥

आयुष्कस्य प्रदेशं षट्कं मोहस्य नव तु स्थानानि ।
शेषाणां तनुकषायो बध्नाति उत्कृष्टयोगेन ॥ २११ ॥

जी० प्र०—आयुष उत्कृष्टप्रदेशं षड्गुणस्थानान्यतीत्य अप्रमत्तो भूत्वा बध्नाति, मोहस्यतु पुनः नवमं गुणस्थानं प्राप्य अनिवृत्तिकरणो बध्नाति । शेषज्ञानदर्शनावरणवेदनीयनामगोत्रांतरायाणां सूक्ष्मसांपराय एव। अत्रापि स्थानत्रये उत्कृष्टयोगः प्रकृतिबंधाल्पतरः इति विशेषणद्वयं ज्ञातव्यं ॥२११॥ अथोत्तरप्रकृतीनां गाथात्रयेणाह—

सं० च०—आयु कर्मके उत्कृष्ट प्रदेश बंधकों छह गुणस्थान उलंघि अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती होइ करै है । बहुरि मोहनीयका उत्कृष्ट प्रदेश बंध नवमा गुणस्थानकौं पाइ अनिवृत्ति करण गुणस्थानवर्ती करै है । बहुरि अवशेष ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनिय नाम गोत्र अंतराय इनका उत्कृष्ट प्रदेश बंध सूक्ष्मसांपराय गुणस्थानवर्ती जीव करै है इन तीनों स्थानकानिविषैं उत्कृष्ट योगका धारक अर थोरी प्रकृतिका बांधनेवाला जीव पूर्वोक्त प्रकृतिनिका उत्कृष्ट प्रदेश बंध करै है ॥ २११ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिकौं कहैं हैं—

सत्तर सुहुमसरागे पंचऽणियट्टिम्हि देसगे तदियं ।
अयदे बिदियकसायं होदि हु उक्कस्सदव्वं तु ॥ २१२ ॥
छण्णोकसायणिद्दापयलातित्थं च सम्मगो य जदी ।
सम्मो वामो तेरं णरसुरआऊ असादं तु ॥ २१३ ॥
देवचउक्कं वज्जं समचउरं सत्थगमणसुभगातियं ।
आहारमप्पमत्तो सेसपदेसुक्कडो मिच्छो ॥२१४॥ विसेसयं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सप्तदश सूक्ष्मसरागे पंचानिवृत्तौ देशके तृतीयं।
अयते द्वितीयकषायं भवति हि उत्कृष्टद्रव्यं तु ॥ २१२ ॥
षट्नोकषायनिद्राप्रचलातीर्थं च सम्यक् च यदि।
सम्यग्वामः त्रयोदश नरसुरायुरसातं तु ॥ २१३ ॥
देवचतुष्कं वज्रं समचतुरस्रं शस्तगमनसुभगत्रयं।
आहारमप्रमत्तः शेषप्रदेशोत्कटो मिथ्यः ॥ २१४ ॥ (विशेषकं)

जी० प्र०—पंचचतुःपंचज्ञानदर्शनावरणांतराययशस्कीर्त्युच्चैर्गोत्रसातवेदनीयानां उत्कृष्टद्रव्यं सूक्ष्मसांपराये भवति। तु—पुनः पुंवेदसंज्वलनानां अनिवृत्तिकरणे भवति। प्रत्याख्यानकषायाणां देशसंयते, अप्रत्याख्यानकषायाणामसंयते खलु स्फुटं। षण्णोकषायनिद्राप्रचलातीर्थानां उत्कृष्टप्रदेशबंधं सम्यग्दृष्टिः करोति। वक्ष्यमाणत्रयोदशानां सम्यग्दृष्टिः मिथ्यादृष्टिर्वा यदि। तानि त्रयोदश तु—पुनः नरसुरायुषी असातं देवगतितदानुपूर्व्यवैक्रियिकशरीरतदंगोपांगानि वज्रर्षभनाराचसंहननं समचतुरस्रसंस्थानं प्रशस्तविहायोगतिः सुभगसुस्वरादेयानि भवंति। आहारद्वयस्य अप्रमत्तः उत्कृष्टप्रदेशबंधं करोति। उक्तचतुःपंचाशतः शेषाणां स्त्यानगृद्धित्रयमिथ्यात्वानंतानुबंधिस्त्रीनपुंसकवेदनरकतिर्यगायुर्नरकतिर्यग्मनुष्यगतिपंचजात्यौदारिकतैजसकार्मणन्यग्रोधपरिमंडलस्वातिकुब्जवामनहुंडौदारिकांगोपांगवज्रनाराचनाराचार्धनाराचकीलितासंप्राप्तसृपाटिकाचतुर्वर्णनरकतिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्यागुरुलघूपघातपरघातोच्छ्वासातपोद्योताप्रशस्तविहायोगतित्रसस्थावरबादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तप्रत्येकसाधारणस्थिरास्थिरशुभाशुभदुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्तिनिर्माणनीचैर्गोत्राणां षट्चत्वारिंशतः(?) मिथ्यादृष्टिरेव करोति। एवमुक्तानुक्त १२० प्रकृतीनां उत्कृष्टप्रदेशबंधकारणं उत्कृष्टयोगादिप्रागुक्तमेवावसेयं। अत्र मिथ्यात्वस्य मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिद्रव्यमुत्कृष्टमुक्तं, तथानंतानुबंधिनः सासादने किमिति नोच्यते? तन्न, मिथ्यात्वद्रव्यस्य देशघातिनामेव स्वामित्वात् ॥ २१२–२१४ ॥ अथ पूर्वं 'जहण्णये जाण विवरीयं' इत्युक्तं तत्सामग्रीविशेषमाह—

सं० च०—पांच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पांच अंतराय यशस्कीर्ति उच्चगोत्र साता वेदनीय इन सतरहौ प्रकृतिनिका उत्कृष्ट प्रदेश बंध सूक्ष्म सांपरायविषैं हो है। बहुरि पुरुष वेद १ संज्वलन च्यारि ४ इन पंचनिका अनिवृत्ति करणविषैं हो है। बहुरि प्रत्याख्यान च्यारि कषायनिका देशविरतविषैं हो है। बहुरि अप्रत्याख्यान च्यारि कषायनिका असंयतविषैं हो है। बहुरि हास्यादिक छह नोकषाय ६ निद्रा १ प्रचला १ तीर्थंकर १ इन नवौंका उत्कृष्ट प्रदेश बंध सम्यग्दृष्टि करै है। बहुरि मनुष्यायु १ देवायु १ असातावेदनीय १ देवगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक श-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रीर वा अंगोपांग ए च्यारि ४ वज्रवृषभ नाराच संहनन १ समचतुरस्रसंस्थान १ प्रशस्तविहायोगति १ सुभग १ सुस्वर १ आदेय १ इन तेरह प्रकृतिनिका उत्कृष्ट प्रदेशबंध सम्यग्दृष्टि वा मिथ्यादृष्टि दोऊ करैं हैं। आहारकद्विक का उत्कृष्ट प्रदेश बंध अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती करै हैं इन चौवन विना अवशेष छ्यासठि प्रकृतिनिका उत्कृष्ट प्रदेश बंध मिथ्यादृष्टी करै है। सर्वत्र उत्कृष्ट योगादिक सामग्री होत संतै ही प्रकृतिनिका उत्कृष्ट प्रदेश बंध जानना॥२१२-२१४॥ आगैं जघन्य प्रदेशबंधका स्वामित्वपना मूलप्रकृतिनिविषैं कहैं हैं—

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स पढमे जहण्णये जोगे।
सत्तण्हं तु जहण्णं आउगबंधेवि आउस्स॥ २१५॥

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य प्रथमे जघन्यके योगे।
सप्तानां तु जघन्यमायुष्कबंधेऽपि आयुषः॥ २१५॥

जी० प्र०—सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकः स्वभवप्रथमसमये जघन्ययोगेन सप्तमूलप्रकृतीनां जघन्यं प्रदेशबंधं करोति। आयुर्बंधे च आयुषोऽपि ॥२१५॥ अथोत्तरप्रकृतीनामाह—

स० चं०—सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जीव अपना पर्यायका पहला समयविषैं जघन्य योगकरि सात मूल प्रकृतिनिका जघन्य प्रदेश बंध करै है। अर तिस जीवकैं आयुका बंध होतैं आयुका भी जघन्य प्रदेश बंध हो है॥ २१५॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिविषैं कहैं हैं—

घोडणजोगोऽसण्णी णिरयदुसुरणिरयआउगजहण्णं।
अपमत्तो आहारं अयदो तित्थं च देवचऊ॥ २१६॥

घोटमानयोगः असंज्ञी निरयद्विसुरनिरयायुष्कजघन्यं।
अप्रमत्तः आहारमयतः तीर्थं च देवचतुः॥ २१६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—येषां योगस्थानानां वृद्धिः हानिः अवस्थानं च संभवति तानि घोटमानयोगस्थानानि—परिणामयोगस्थानानीति भणितं भवति। तद्योगोऽसंज्ञिनरकद्वयसुरनारकायुषां जघन्यप्रदेशबंधं करोति। आहारकद्वयस्य अप्रमत्तः करोति, कुतः? अपूर्वकरणात्तस्य बहुप्रकृतिबंधसंभवात्। असंयतोः भवग्रहणप्रथमसमयजघन्योपपादयोगः तीर्थंकरत्वस्य सुरचतुष्कस्य च ॥ २१६ ॥ उक्तैकादशभ्यः शेषाणां विशेषमाह—

स० चं०—जिनि योग स्थानकनिकी वृद्धि भी होइ वा हानि भी होइ वा जैसै के तैसैं भी रहै तिन योगस्थानकनिकौं घोटमान योगस्थान कहिए अथवा परिणामयोगस्थान कहिए सो असैा योगका धारी असैनी जीव सो नरक गति वा आनुपूर्वी २ देवायु नरकायु २ इन च्यार्योंका जघन्य प्रदेश बंध करै हैं। बहुरि आहारक द्विकका अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जघन्य प्रदेश बंध करै हैं जातैं याके अपूर्वकरणतैं बहुत प्रकृतिनिका बंध है। बहुरि पर्यायका पहिला समयविषैं जघन्य उपपाद योगका धारी असंयत सम्यग्दृष्टी जीव सो तीर्थंकर, देवगति वा आनुपूर्वी, वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग इन पंचनिका जघन्य प्रदेश बंध करै है ॥ २१६ ॥

चरिमअपुण्णभवत्थो तिविग्गहे पढमविग्गम्हि ठिओ।
सुहमणिगोदो बंधादि सेसाणं अवरबंधं तु ॥ २१७ ॥

चरमापूर्णभवस्थः त्रिविग्रहे प्रथमविग्रहे स्थितः।
सूक्ष्मनिगोदो बध्नाति शेषाणामवरबंधं तु ॥ २१७ ॥

जी० प्र०—तु—पुनः द्वादशोत्तरषट्सहस्रापर्याप्तभावानां चरमभवस्थो विग्रहगतित्रिवक्रेषु प्रथमवक्रे स्थितः सूक्ष्मनिगोदः शेषनवोत्तरशतप्रकृतीनां जघन्यप्रदेशबंधं बध्नाति। अत्र चतुर्षु बंधेषु प्रथमोक्तप्रकृतिबंधे मूलोत्तरप्रकृतीनामेकजीवस्य एकसमये सबंधप्रकृतिजघन्यादिस्थानानां बंधकाले तद्गतप्रकृतीनां स्थित्यनुभागप्रदेशबंधभेदा भवंति इति मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानेषु रचनाविशेषः वृत्तिकारेण दर्श्यते—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अ	०	०	०	०	०	०	०	०	०
स	०	०	१	०	०	०	०	०	१
क्षी	०	०	१	०	०	०	०	०	१
उ	०	०	१	०	०	०	०	०	१
सू	५	४	१	०	०	१	१	५	१७
अ	५	४	१	५।४।३।२।१	०	१	१	५	२२।२१।२०।१९।१८
अ	५	६।४	१	६	०	२८।२९।३०।३१।१	१	५	५५।५६।५७।५८।२६
अ	५	६	१	६	१	२८।२९।३०।३१	१	५	५६।५७।५८।५६
प्र	५	६	१	६	१	२८।२९	१	५	५६।५७
दे	५	६	१	१३	१	२८।२९	१	५	६०।६१
अ	५	६	१	१७	१	२८।२९।३०	१	५	६४।६५।६६
मि	५	६	१	१७	०	२८।२९	१	५	६३।६४
सा	५	६	१	२१	१	२८।२९।३०	१	५	७१।७२।७३
मि	५	६	१	२२	१	२३।२५।२६।२८।२९।३०	१	५	६७।६९।७०।७२।७३।७४
	णा५	द ९।६।४	वे २	मो२६।२२।२१।१७।१३।९।५।४।३।२।१	आ४	ना २३।२५।२६।२८।२९।३०।३१।१।	गो २	अं५	

अत्र गुणस्थानेषु स्थानविकल्पानां प्रकृतिभेदेन भंगा उत्पद्यंते तत्र मिथ्यादृष्टौ ६७ स्थाने एको भंगः। पुनः ६९ स्थाने नवभंगाः पुनः ७०
१ ९ ८
स्थानेऽष्टौ। पुनः ७२ स्थाने नव। पुनः ७३ स्थाने नवसहस्रद्विशतषोडश। पुनः ७४ स्थाने ४६०८। सासादनस्य ७१ स्थाने अष्टौ। २६१
९ ९२१६ ४६०८ ८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुनः ७२/६४०० स्थाने ६४०० । पुनः ७३/३२०० स्थाने ३२०० । मिश्रस्य ६३/८ स्थानेऽष्टौ । पुनः ६४/८ स्थाने अष्टौ । असंयतस्य ६४/८ स्थानेऽष्टौ । पुनः ६५/१६ स्थाने १६ । पुनः ६६/८ स्थानेऽष्टौ । देशसंयतस्य ६०/८ । ६१/८ अष्टावष्टौ । प्रमत्तस्य ५६/८ । ५७/८ अष्टावष्टौ अप्रमत्तस्य ५६/१ ५७/१ ५८/१ ५९/१ एकैकः । अपूर्वकरणस्य ५५/१ ५६/१ ५७/१ ५८/१ २६/१ एकैकः अनिवृत्तिकरणस्य २२/१ । २१/१ । २०/१ । १९/१ । १८/१ एकैकः । सूक्ष्मसांपरायस्य १७/१ स्थाने एकः ।

एते भंगा अग्रे नामस्थानकथने सुव्यक्तं संति ॥२१७॥ अथ प्रकृतिप्रदेशबंधकारणयोगस्थानानां स्वरूपसंख्यास्वामिनो द्विचत्वारिंशद्गाथाभिराह–

स० चं०––बहुरि छह हजार बारह क्षुद्रभवनिका अंतका क्षुद्रभवविषैं तिष्ठता विग्रहगतिका तीन वक्र मुडना तीहिमैं पहिला वक्रविषै तिष्ठता ऐसा सूक्ष्म निगोद जीव सो पूर्वोक्त ग्यारहतैं अवशेष रही एकसौ नव प्रकृति तिनका जघन्य प्रदेश बंध करै है । ऐसैं उत्कृष्ट जघन्य प्रदेश बंधका स्वामित्वपना कह्या सो जहां उत्कृष्ट घणा परमाणू बंधै तहां उत्कृष्ट प्रदेशबंध कहिये, जहां जघन्य थोरा परमाणु बंधै तहां जघन्य प्रदेश बंध कहिए सो पूर्वोक्त प्रकार जानना । बहुरि इहां च्यारि प्रकार बंधविषैं पहिलै कह्या जो प्रकृतिबंध तिस मूल प्रकृति वा उत्तर प्रकृति तिनविषैं एक जीवकै एक समयविषैं युगपत् बंधकौं जे प्राप्त होंइ तिन प्रकृतिनिका जघन्यादिक भेदरूप स्थिति अनुभाग प्रदेशरूप बंधके भेद हों हैं । तहां एक जीवकै एक कालविषैं कितनी कितनी प्रकृतिनिका बंध होइ सो मिथ्यादृष्टी आदिक गुणस्थाननिविषैं टीकाकार रचना दिखावैं हैं–

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुण स्थान	ज्ञाना वरण	दर्शनावरण	वेद नीय	मोहनीय	आयु	नामकर्म	गोत्र	अंत राय	सर्वप्रकृतिनिका एकजीव कै एकै काल बंधका प्रमाण
अ	०	०	०	०	०	०	०	०	०
स	०	०	१	०	०	०	०	०	१
क्षी	०	०	१	०	०	०	०	०	१
उ	०	०	१	०	०	०	०	०	१
सू	५	४	१	०	०	१	१	५	१७
अ	५	४	१	५।४।३।२।१	०	१	१	५	२२।२१।२०।१९।१८
अ	५	६।४	१	९	०	२८।२९।३०।३१।१	१	५	५५।५६।५७।५८।२६
अ	५	६	१	९	१	।३०।२८।२९।२।३१	१	५	५६।५७।५८।५९
प्र	५	६	१	९	१	२८।२९	१	५	५६।५७
दे	५	६	१	१३	१	२८।२९	१	५	६०।६१
अ	५	६	१	१७	१	२८।२९।३०	१	५	६४।६५।६६
मि	५	६	१	१७	०	२८।२९	१	५	६३।६४
सा	५	९	१	२१	१	२८।२९।३०	१	५	७१।७२।७३
मि	५	९	१	२२	१	२३।२५।२६।२८।२९।३०	१	५	६७।६९।७०।७२।७३।७४
सव गुण स्थान	ज्ञा५	द ९।६।४	वेद१	मो२६मध्येर२।२१।१७।१३।९।५।४।३।२।१	मैं१ आ४	ना २३।२५।२६।२८।२९।३०।३१।१।	गोर मैं१	अं५	ज्ञानावरणादिककीप्रकृतिजोर्डे।५द९वे१मोर।आ१नार३गो१ अं५सर्द्ध६७एवंसर्वत्रज्ञेयं ॥

इस यंत्रका अर्थ लिखिए है—एक जीवकै एक कालविषैं ज्ञानावरण पांचका ही बंध होइ। दर्शनावरण न-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वका वा छहका वा च्यारिका बंध होइ। वेदनीय दोयमैं एकका बंध होइ। मोहनीयकी छब्बीसमैं वाईस वा इकईस वा सतरह वा तेरह वा नव वा पांच च्यारि दोय एकका बंध होइ। आयु चारिमैं एकका बंध होइ। नाम कर्मकी तेईस वा पचीस वा छब्बीस वा अठाईस वा गुणतीस वा तीस वा इकतीस वा एक प्रकृतिका बंध होइ। गोत्र दोयमैं एकका बंध होइ। अंतराय पांचका बंध होइ। तहां मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं ज्ञानावरण पांचका दर्शनावरण नवका वेदनीय एकका मोहनीय वाईसका आयु एकका नाम तेईस वा पचीस वा छवीस वा अठाईस वा गुणतीस वा तीसका, गोत्र एकका, अंतराय पांचका बंध होइ तहां सर्व प्रकृति जोडैं सडसठि वा गुणहत्तरि वा सत्तरि वा बहत्तरि वा तेहत्तरि वा चोहोत्तरिका बंध होइ ऐसैं ही सासादनादिक गुणस्थाननिविषैं जैसैं यंत्रविषैं कह्या है तैसैं प्रकृतिनिका बंध जानना। तहां प्रकृतिनिके बदलनेतैं भंग उपजै है जैसैं चहोत्तरिका बंधविषैं बेदनीय कर्मका एकका बंध तहां साताका वा असाताका बंधकी अपेक्षा भंग दोय भया ऐसैं प्रकृतिनिका प्रमाणके घटने बंधनेतैं स्थान भेद हो हैं। एक ही स्थानविषैं प्रकृतिनिके बदलनेतैं भंग हो हैं सो कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषैं सतसठिका स्थानमें एक भंग है। गुणहत्तरिका स्थानमें नव भंग सत्तरिका स्थानमें आठ भंग बहत्तरिका स्थानमें नव भंग तेहत्तरिका स्थानमें वाणवैसै सोला भंग चौहत्तरिका स्थानमें छियालीससै आठ भंग बहुरि सासादनविषैं एकहत्तरिका स्थानमैं आठ भंग बहत्तरिका स्थानमें चौसाठिसै भंग, तेहत्तरिका स्थानमें वत्तीससै भंग। मिश्रविषैं तरेसठि चौंसठिका दोऊ स्थानकनिमैं आठ आठ भंग। असंयत विषैं चौसठि पैंसठि छ्यासठिके स्थाननिविषैं आठ आठ भंग, देश संयतविषैं साठि इकसठिका स्थानकनिमैं आठ आठ भंग प्रमत्तका छप्पन सतावनका स्थानकनिमैं आठ आठ भंग, अप्रमत्तविषैं छप्पन सतावन अट्ठावन गुणसठिका स्थानकनिविषैं एक एक भंग। अपूर्वकरणका पचावन छप्पन सतावन अठावन छब्बीसका स्थानकां विषैं एक एक भंग। अनिवृत्तिकरणका वाईस इकईस वीस उगणीस अठारहका स्थानकां विषैं एक एक भंग। सूक्ष्म सांपरायका सतरहका स्थानविषैं एक भंग। सो इन भंगनिका वा प्रकृतिनिका कथन स्थानसमुत्कीर्तन अधिकार विषैं आगैं नामकर्मके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थानक कहैंगे तहां प्रगट जानि लेना ॥ २१७ ॥ आगैं प्रकृति प्रदेश बंधका कारण योग स्थान तिनका स्वरूप वा संख्या वा स्वामी वियालीस गाथानिकरि कहैं हैं—

जोगट्ठाणा तिविहा उववादेयंतवड्ढिपरिणामा ।
भेदाएक्केक्कंपि य चोद्दसभेदा पुणो तिविहा ॥ २१८ ॥

योगस्थानानि त्रिविधानि उपपादैकांतवृद्धिपरिणामानि ।
भेदादेकैकमपि च चतुर्दशभेदाः पुनः त्रिविधाः ॥ २१८ ॥

जी० प्र०—योगस्थानानि उपपादैकांतवृद्धिपरिणामभेदात्त्रिविधानि । च—पुनः तेषामेकैकमपि प्रत्येकं चतुर्दशभेदं भवति । तेऽपि भेदाः पुनः सामान्यजघन्योत्कृष्टभेदात्त्रिविधा भवंति ॥ २१८ ॥ अथ सामान्यजघन्यसामान्यजघन्योत्कृष्टभेदेन १४ । २८ । ४२ चतुर्दशाष्टाविंशतिद्वाचत्वारिंशदुपपादयोगस्थानानामुत्पत्तिमाह—

स० चं०—योगस्थान तीन प्रकार है उपपादयोगस्थान १ एकांतवृद्धियोगस्थान २ परिणामयोगस्थान ३ । बहुरि एक एक भेदके चौदह जीव समासनिकी अपेक्षा चौदह चौदह भेद हो हैं । सूक्ष्म एकेंद्री अपर्याप्तका उपपाद योगस्थान १ सूक्ष्म एकेंद्री पर्याप्तका योगस्थान १ ऐसैं ही बादर एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैंनी पंचेंद्री सैनी पंचेंद्री पर्याप्त अपर्याप्तके उपपाद योग स्थान जानने । एक उपपाद योग स्थानके चौदह भेद भए, ऐसैं ही एकांतवृद्धि वा परिणाम योगस्थानके चौदह चौदह भेद जानने । बहुरि ये एक एकके चौदह भेद सामान्य जघन्य उत्कृष्टकी अपेक्षा तीन प्रकार हैं तहां सामान्यकी अपेक्षा चौदह भेद, सामान्य अर जघन्यकी अपेक्षा अठाईस भेद सामान्य अर जघन्य अर उत्कृष्टकी अपेक्षा वियालीस भेद हो हैं ॥ २१८ ॥ आगैं उपपाद योग स्थानकनिका स्वरूप कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उववादजोगठाणा भवादिसमयट्ठियस्स अवरवरा ।
विग्गहइजुगइगमणे जीवसमासे मुणेयव्वा ॥२१९॥

उपपादयोगस्थानानि भवादिसमयस्थितस्यावरवराणि ।
विग्रहर्जुगतिगमने जीवसमासे मंतव्यानि ॥ २१९ ॥

जी० प्र०—उपपादयोगस्थानानि उत्तरभवस्य आदिसमये स्थितस्य, विग्रहगत्योत्तरभंगगमने जघन्यानि, ऋजुगत्यात्रोत्कृष्टानि भवंति । तानि जीवसमासे चतुर्दशसूक्तरचनाविशेषे ज्ञातव्यानि । उपपाद्यते प्राप्यते भवप्रथमसमये जंतुना इत्युपपादः । तस्य सामान्यादिभेदाः सर्वेऽपि भवप्रथमसमये एव संभवंतीत्यर्थः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थिति । प । सू । प परि । उ०००ज ० उ २७ृ ० ० इं २७ृ परि । उ ०००ज श २७ृ परि । उ ०००ज परि । उ ०००ज	स्थिति । ए सू अप परि । उ० ०० ज ० ० १ । १ ० १८ । ३ परि । उ०० ज	स्थिति । ए । बा । प परि । उ ०० ज उ ० इं ० ० ० ० श २७ृ परि । उ०० ज	स्थिति । ए । बा । अप परि । उ००० ज १। १। ० १८।३ ० ० परि उ ००० ज	स्थिति । द्वीं । प भा परि । उ ००० ज उ ० इं ० ० ० शर२७ृ परि । उ ००० ज	स्थिति । द्वींद्रि । अप परि । उ ००० ज १ । १ ० १८।३ ० ० परि । उ ००० ज	स्थिति । त्रीं प भा परि । उ००० ज उ ० ० इं ० ० शर२७ृ परि उ ००० ज
१ ≏ शरीरप २७ृ एकां । उ ० ० १ एकांतानुवृद्धि । ज	एकांतानु उ १।२ ० १८।३ ० १ । एकांतानुवृद्धि ज	१ ≏ शर२७ृ एकांतानुवृ उ ० ० १ एकांनुवृद्धि ज	एकांता उ १।२। ० १८ ३ ० १ एकांता ज	१ ≏ शर२७ृ एकांत उ ० १ एकांता ० ज	एकांता उ १।२ ० १८।३। ० ० १। एकांता ज	१ ≏ श २ ७ृ एकांता उ ० १ । एकांतानु ० ज
विग्रह १ ।ज।उप = ० ऋ उ । ०	१ । ज । उप = ० ऋ उ । ०	१ । ज । उपपा = ० ऋ उ । ०	१ ज उप = ० ऋ उ । ०	१ । ज । उपपा ० ऋ उ । ०	१ । ज उपपा ० ऋ उ । ०	१ । ज ।उपपा ० ऋ उ । ०
पूर्व्वंभवशरीर	पूर्व्वंभवशरीर	पूर्व्वंभवशरीर	पूर्व्वंभवशरीर	पूर्व्वंभवशरीर	पूर्व्वंभवशरीर	पूर्व्वंभवशरीर
स्थिति । त्रीं । अप परि । उ ००० ज १।१। ० १८।३ ० ० ० परि । उ ०००ज	स्थिति । चप परि । उ०००ज ० भा ० उ ० इं ० शर२ ७ परि । उ०००ज	स्थिति । च । अप परिणा उ०००ज १। १। ० १८।३ ० ० ० परि । उ०००ज	स्थिति । असं । प भा परि । उ०००ज ० उ ० इं ० ० शर२ ७ परि । उ०००ज	स्थिति । असं । अप परि । उ०००ज १।१। ० १८।३ ० ० परि । उ०००ज	स्थिति । सं । प म परि । उ०००ज ० भा ० उ ० इं ० शर२ ७ परि । उ०००ज	स्थिति । सं । अप परि । उ०००ज १। १। ० १८।३ ० ० परि । उ०००ज
उ १।२ एकांता ० १८।३ ० ० १। एकांतानुवृद्धि ज	१ ≏ शर२७ृ एकांतानु उ ० १ एकांतानु ० ज	१।२ एकांतानु उ १८।३ ० ० ० १ एकांतानु ज	१ ≏ शर२७ृ एकांतानुवृ उ ० १ । एकांतानु ० ज	एकांतानु उ १।२। ० १८।३ ० ० १ । एकांतानु ज	१ ≏ शर२७ृ एकांतानु उ ० १ एकांतानु ० ज	एकांतानु उ १।२। ० १८।३ ० ० १। एकांतानुवृद्धि ज
१ जउपपा ० ऋ । उ । ०	१ । ज। उपपा ० ऋ।उ । ०	१। ज । उपपा ० ऋ । उ । ०	१। ज । उपपा ० ऋ । उ । ०	१। ज । उपपा ० ऋ उ । ०	१। ज। उपपा ० ऋ उ । ०	१। ज । उपपा ० ऋ।उ । ०

॥ २१९ ॥ अथ परिणामयोगस्याह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—उपपाद योग स्थान है सो जो पर्याय धरै ताका पहिला समयविषैं तिष्ठता जीवकैं हो है तहां जो जीव विग्रहगति कहिए वक्रगति करि वीचिमैं मुडिकरि जाय अर नवीन पर्यायकौं प्राप्त होइ ताकैं जघन्य उपपाद योग स्थान हो है। बहुरि जो जीव ऋजुगति कहिए सूधा वीचिमैं मुड़े नाहीं ऐसी गतिकरि नवीन पर्यायकौं धरै ताकैं उत्कृष्ट उपपाद योग स्थान हो है। ते उपपाद योगस्थान चौदह जीव समासनिविषैं जानने। इहां प्रश्न—जो पर्याय का पहिला समयविषैं तौ अपर्याप्त अवस्था ही है तहां पर्याप्त जीव समासनिविषैं उपपाद योग स्थान कैसे कहिए है? ताका सामाधान—जो निर्वृत्ति अपर्याप्त जीवकैं पर्यायका पहिला समयविषैं योग स्थान हो हैं ते तौ पर्याप्त जीव समासनिविषैं उपपाद योग स्थान जानने। अर जे लब्धि अपर्याप्तक जीवकैं पर्यायका पहिला समयविषैं योग स्थान हो हैं ते अपर्याप्त जीव समासनिविषैं उपपाद योग स्थान जानने। जातैं निर्वृति अपर्याप्त अवस्थाविषै भी पर्याप्त नामकर्मका ही उदय है। उपपद्यते कहिए जीवकरि पर्यायका पहिला समयविषै प्राप्त करिए सो उपपाद कहिए सो इस उपपाद योग स्थानके सर्व सामान्यकौं आदि देकरि भेद, जो जीव नवीन पर्याय धरैं ताका पहिला समयविषै ही संभवैं हैं ॥ २१९ ॥ आगैं परिणामयोगस्थानका स्वरूप कहैं हैं—

परिणामजोगठाणा सरीरपज्जत्तगादु चरिमोत्ति।
लद्धिअपज्जत्ताणं चरिमतिभागम्हि बोधव्वा ॥ २२० ॥

परिणामयोगस्थानानि शरीरपर्याप्तकात् चरम इति।
लब्ध्यपर्याप्तकानां चरमत्रिभागे बोद्धव्यानि ॥ २२० ॥

जी० प्र०—परिणामयोगस्थानानि तु—पुनः पूर्णशरीरपर्याप्तिप्रथमसमयादारभ्य स्वस्थितिचरमसमयपर्यंतं ज्ञातव्यानि। लब्ध्यपर्याप्तकानां च स्वस्थितेरुच्छ्वासाष्टादशैकभागस्य चरमत्रिभागप्रथमसमयमादिं कृत्वा चरमसमयपर्यंतं ज्ञातव्यानि ॥ २२० ॥

स० चं०—बहुरि परिणाम योगस्थान शरीर पर्याप्तिकौं पूर्ण होते संतैं पहिला समयस्यौं लगाय अपनी आयु-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेलका अंत समय पर्यंत जानने। बहुरि लब्धि अपर्याप्तक जीवके अपनी स्थिति सांसके अठारहै भाग प्रमाण ताका त्रिभाग करतैं अंतका जो त्रिभाग ताका पहिला समयस्यों लगाय अंतका समय पर्यंत परिणाम योग स्थान जानने ॥ २२० ॥

सगपज्जत्तीपुण्णे उवरिं सव्वत्थ जोगमुक्कस्सं ।
सव्वत्थ होदि अवरं लद्धिअपुण्णस्स जेट्ठंपि ॥ २२१ ॥

स्वकपर्याप्तिपूर्णे उपरि सर्वत्र योगोत्कृष्टं ।
सर्वत्र भवत्यवरं लब्ध्यपर्याप्तस्य ज्येष्ठमपि ॥ २२१ ॥

जी० प्र०—स्वस्वशरीरपर्याप्तौ पूर्णायां तत्प्रथमसमयात्प्रभृति उपरि सर्वस्थितिसमयेषु परिणामयोगस्य उत्कृष्टमपि सर्वस्थितिसमयेषु जघन्यमपि भवति । लब्ध्यपर्याप्तस्वस्वस्थितेरुच्छ्वासाष्टादशैकभागस्य चरमत्रिभागप्रथमसमयमादिं कृत्वा चरमपर्यंतं सर्वस्थितिविकल्पेषु उत्कृष्टपरिणामयोगोपि जघन्यपरिणामयोगोऽपि भवति । उभयजीवानां तानि योगस्थानानि सर्वाण्यपि घोटमानयोगा एव स्युः, हानिवृद्ध्यवस्थानरूपेण परिणमनात् ॥२२१॥
अथैकांतानुवृद्धियोगस्याह—

स० चं०—अपना २ शरीर नामा पर्याप्तिकौं संपूर्ण होत संतैं तीहि शरीर पर्याप्तिका पूर्ण होनेका समयस्यों लगाय ऊपरि सर्व अपनी आयुर्वेलका समयनिविषैं परिणाम योगस्थान उत्कृष्ट भी अर जघन्य भी संभवै है। बहुरि लब्धि अपर्याप्तकका अपनी स्थिति सांसका अठारहवां भाग प्रमाण ताका अंतका त्रिभागका पहिला समयस्यों लगाय अंतका समय पर्यंत सर्व स्थितिके भेदनिविषैं उत्कृष्ट परिणाम योग भी अर जघन्य परिणाम योग भी संभवै हैं। सो दोन्यो ही जीवांके ते सर्व परिणामयोगस्थान घोटमानयोग जानने। जातैं ए योगस्थान घटै भी हैं वा वधै भी हैं वा जैसैके तैसैंभी रहैं हैं ॥ २२१ ॥ आगैं एकांतानुवृद्धियोगस्थाननिका स्वरूप कहैं हैं—

एयंतवड्ढिठाणा उभयट्ठाणाणमंतरे होंति ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवरवरट्ठाणाओ सगकालादिम्हि अंतम्हि ॥ २२२ ॥

एकांतवृद्धिस्थानानि उभयस्थानानामंतरे भवंति ।
अवरवरस्थानानि स्वककालादौ अंते ॥ २२२ ॥

जी० प्र०—एकांतानुवृद्धियोगस्थानानि पर्याप्तजीवानां रूपोनशरीरपर्याप्तिकालस्य अंतर्मुहूर्तचरमसमयपर्यंतं उपपादपरिणामयोगयोः अंतराले भवंति । तस्य जघन्यस्थानानि स्वकालस्य आदौ उत्कृष्टानि च अंते भवंति तत एवैकांतेन नियमेन स्वकालप्रथमसमयाच्चरमसमयपर्यंतं प्रतिसमयमसंख्यातगुणितक्रमेण तद्योग्याविभागप्रतिच्छेदवृद्धिर्यस्मिन् स एकांतानुवृद्धिरित्युच्यते। एवमुक्तयोगविशेषाः सर्वेऽपि पूर्वस्थापितचतुर्दशजीवसमासरचनाविशेषेऽतिव्यक्तं संभवंतीति संभावयितव्याः ॥ २२२ ॥ अथ योगस्थानस्यावयवानाह—

स० चं– एकांतानुवृद्धि योगस्थान पर्याय धरनेका दूसरा समयस्यों लगाय एक समय घाटि शरीर पर्याप्तिके अंतर्मुहूर्त कालका अंत समय पर्यंत उपपाद योग अर परिणामयोगका अंतरालविषैं हो हैं । तीहि एकांत वृद्धिका जघन्य स्थान तो अपने कालका आदि समयविषैं हो है अर उत्कृष्ट स्थान अंतके समयविषैं हो है। ताहीतैं एकांत कहिए नियमकरि अपने कालका पहिला समस्यों लगाय अंतका समय पर्यंत समय समय प्रति असंख्यात असंख्यात गुणा अविभाग प्रतिच्छेदनिकी वृद्धि जिसविषैं होइ सो एकांतानुवृद्धि योगस्थान कहिए है। ऐसैं कहे योगनिके विशेष ते सर्व चौदह जीवसमासनिविषै जानने ॥ २२२ ॥ आगें योगस्थानकनिके अवयव कहैं हैं—

अविभागपडिच्छेदो वग्गो पुण वग्गणा य फड्डयगं ।
गुणहाणीवि य जाणे ठाणं पडि होदि णियमेण ॥ २२३ ॥

अविभागप्रतिच्छेदो वर्गः पुनः वर्गणा च स्पर्धकं ।
गुणहानिरपि च जानीहि स्थानं प्रति भवति नियमेन ॥ २२३ ॥

जी० प्र०—समस्तयोगस्थानानि श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्राणि। तेषु अविभागप्रतिच्छेदः, वर्गः पुनः वर्गणा स्पर्धकं गुणहानिरपि च स्थानं प्रति भवतीति नियमेन जानीहि ॥ २२३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—समस्त योगस्थान जगच्छ्रेणीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं तिनविषैं एक एक स्थानके प्रति अविभाग प्रतिच्छेद १ वर्ग १ वर्गणा १ स्पर्धक १ गुणहानि १ इतने भेद हो हैं नियमकरि ऐसा जानहु ॥ २२३ ॥
इनका स्वरूप आगैं कहैं हैं—

पल्लासंखेज्जदिमा गुणहाणिसला हवंति इगिठाणे।
गुणहाणिफड्डयाओ असंखभागं तु सेढीये ॥ २२४ ॥

पल्यासंख्येयमिमा गुणहानिशला भवंति एकस्थाने।
गुणहानिस्पर्धकानि असंख्यभागं तु श्रेण्याः ॥ २२४ ॥

जी० प्र०—एकस्मिन् स्थाने गुणहानिशलाकाः पल्यासंख्यातैकभागमात्र्यो भवंति प a a नानागुणहानिशलाका इत्यर्थः। एकैकगुणहानिस्पर्धकानि तु पुनः श्रेण्यसंख्यातैकभागप्रमितानि a a ॥ २२४ ॥

स० चं०—एक स्थानकविषैं गुण हानि शलाका पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं सो यहु नाना गुण हानिका प्रमाण है। बहुरि एक गुण हानिविषै स्पर्धक जगच्छ्रेणीके असंख्यातवैं भाग प्रमाण हैं॥ २२४ ॥

फड्डयगे एक्केक्के वग्गणसंखा हु तत्तियालावा।
एक्केक्कवग्गणाए असंखपदरा हु वग्गाओ ॥ २२५ ॥

स्पर्धके एकैके वर्गणासंख्या हि तावदालापाः।
एकैकवर्गणायामसंख्यप्रतरा हि वर्गाः ॥ २२५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—एकैकस्मिन् स्पर्धके वर्गणासंख्या खलु स्फुटं तावन्मात्रालापाः श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्रालापा भवंति $\bar{a}$ एकैकस्यां वर्गणायां पुनः वर्गाः असंख्यातजगत्प्रतरप्रमिता भवंति = a ॥ २२५ ॥

स० चं०—एक एक स्पर्धक विषैं वर्गणानिकी संख्या तावन्मात्रालापाः कहिए तितनी ही जगच्छ्रेणीके असंख्यातवैं भाग प्रमाण ही आलापकरि कहिए है। बहुरि एक एक वर्गणाविषैं वर्ग असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण है २२५

एक्केक्के पुण वग्गे असंखलोगा हवंति अविभागा।
अविभागस्स पमाणं जहण्णउड्ढी पदेसाणं ॥२२६ ॥

एकैके पुनर्वर्गे असंख्यलोका भवंति अविभागाः।
अविभागस्य प्रमाणं जघन्यवृद्धिः प्रदेशानां ॥ २२६ ॥

जी० प्र०—पुनरेकैकस्मिन् वर्गे असंख्यातलोका अविभागा भवंति ≡ a अविभागस्य प्रमाणं पुनः आत्मप्रदेशानां सर्वजघन्यवृद्धिः अविभागशक्त्यंशः परमार्थतः इत्यर्थः। एवं विलोममत्योक्तं। तेन अविभागप्रतिच्छेदसमूहो वर्गः। वर्गसमूहो वर्गणा। वर्गणासमूहः स्पर्धकं। स्पर्धकसमूहो गुणहानिः। गुणहानिसमूहः स्थानमिति ज्ञातव्यं ॥ २२६ ॥ अथैकयोगस्थानगतसर्वस्पर्धकादीनि प्रमाणयति—

स० चं०—बहुरि एक एक वर्गविषैं असंख्यात लोक प्रमाण अविभाग प्रतिच्छेद हैं। तहां अविभागका प्रमाण प्रदेशनिविषैं जघन्य वृद्धिरूप जानना। जाका दूसरा भाग न होइ ऐसा जु शक्तिका अंश ताकों अविभाग प्रतिच्छेद कहिए है। इहां उलटीगति करि कह्या है तातैं अविभाग प्रतिच्छेदका समूह सो वर्ग अर वर्गका समूह सो वर्गणा अर वर्गणाका समूह सो स्पर्धक अर स्पर्धकका समूह सो गुणहानि अर गुणहानिका समूह सो स्थान है ऐसैं सूधा मार्गकरि जानना ॥ २२६ ॥ आगैं एक स्थानविषैं सर्व स्पर्धकादिकनिका प्रमाण कहैं हैं—

इगिठाणफड्ढयाओ वग्गणसंखा पदेसगुणहाणी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सेढिअसंखेज्जदिमा असंखलोगा हु अविभागा ॥२२७॥

एकस्थानस्पर्धकानि वर्गणासंख्या प्रदेशगुणहानिः ।
श्रेण्यसंख्यातिमा असंख्यलोका हि अविभागाः ॥ २२७ ॥

जी० प्र०—एकयोगस्थानस्य सर्वस्पर्धकानि सर्ववर्गणासंख्यातप्रदेशगुणहान्यायामश्च प्रत्येकं श्रेण्यसंख्येयभागः सामान्यालापेन भवति। वस्तुवृत्त्या तु हीनाधिक्यं भवति । तद्यथा—

प्र गु १ फ स्प a a इ गु प / a a लब्धमेकस्थानगतस्य स्पर्धकानि भवंति — प / a a a a पुनः प्र स्प १ फ व a इ स्प — प / a a a a लब्धं एकस्थानगतसर्ववर्गणाप्रमाणं भवति — — प / a a a a a पुनः प्र स्प १ फ व a इ स्प a a लब्धं एकगुणहानिगतवर्गणा भवंति a । a a अत्र गुणकारो भागहाराद्धीनोऽधिकः समो वा असंख्यातगुणहीनो ज्ञातव्यः, कुतः? श्रेण्यसंख्येयभागस्य अन्यथानुपपत्तेः। एकस्थानगतसमस्ताविभागप्रतिच्छेदाः खलु असंख्यातलोकप्रमिता एव, न कर्मपरमाणुवत् सर्वनिकृष्टज्ञानवद्वा अनंता भवंति । एकजीवगतसर्वप्रदेशाः ≡ नानागु प / a a अन्योन्याभ्यस्त प / a एकगुणहानिस्पर्धकानि a a एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाः a एकगुणहानिगतसर्ववर्गणा a a । a एकस्थानगतसर्ववर्गणा— — प / a a । a a a एते नानागुणहानिशलाकाद्याः उत्तरोत्तरे असंख्यातगुणितक्रमा भवंति ॥ २२७ ॥

१	अवि	वर्ग	वर्गणा	स्पर्धक	गुण	स्थान
	≡ a	= a	a	a a	प / a a	१
	व	२५६	४	६	५	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०---एक योग स्थानविषैं सर्व स्पर्धक अर सर्व वर्गणानिकी संख्या अर असंख्यात प्रदेशनिविषैं गुणहानि आयामका प्रमाण ए सामान्यपनै करि जगच्छ्रेणीके असंख्यातवै भागमात्र हैं। तारतम्यकरि ए परस्पर हीन अधिक हैं तहां एक गुणहानि विषैं जो स्पर्धकनिका प्रमाण है ताकौं एक स्थानविषैं जो गुणहानिका प्रमाण तीहिकरि गुणैं जो प्रमाण होइ तितनां तौ एक योगस्थानविषैं स्पर्धक जानने। बहुरि जो एक स्पर्धकविषैं वर्गणानिका प्रमाण कह्या ताकौं एक योग स्थानविषैं जो स्पर्धकनिका प्रमाण कह्या ताकरि गुणैं जो प्रमाण होइ तितना एक योगस्थानविषैं वर्गणानिका प्रमाण जानना बहुरि एक स्पर्धकविषैं जो वर्गणानिका प्रमाण जगच्छ्रेणीके असंख्यातवे भागमात्र कह्या ताकौं एक गुणहानिविषैं जो स्पर्धकनिका प्रमाण कह्या ताकरि गुणैं जो प्रमाण होइ तितना एक गुणहानिविषैं वर्गणानिका प्रमाण जानना। इहां गुणकारका प्रमाण है सो तिस जगच्छ्रेणीका भागहारके प्रमाणतैं असंख्यातगुणा घाटि जानना। अन्यथा श्रेणीका असंख्यातवां भागकी सिद्धि न होइ सो इसहीकौं गुणहानिका आयाम कहिए है। सो इन सवनिकौं सामान्यपनैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागमात्र कहिए जातैं असंख्यातके भेद बहुत हैं। बहुरि एक योग स्थानविषैं समस्त अविभाग प्रतिच्छेद असंख्यात लोक प्रमाण ही है कर्मपरमाणूनिका प्रमाणवत् वा जघन्य ज्ञानका अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाणवत् अनंत नाहीं है। बहुरि जीवके प्रदेश लोक प्रमाण हैं। बहुरि एकस्थानविषैं नाना गुणहानि पल्यकौं दोयवार असंख्यातका भाग दीजिए तीहि प्रमाण है। बहुरि नाना गुण हानिका जो प्रमाण तितना दूवा माडि परस्पर गुणैं जो प्रमाण होइ सो अन्योन्याभ्यस्त राशि है। सो पल्यकौं एकवार असंख्यातका भाग दीजिए तीहिं प्रमाण है। बहुरि एक गुणहानिविषैं स्पर्धक जगच्छ्रेणीकौं दोयवार असंख्यातका भाग दीजिए तीहिं प्रमाण है। बहुरि एक स्पर्धकविषैं वर्गणा जगच्छ्रेणीकौं एकवार असंख्यातका भाग दीजिए तीहिं प्रमाण है। बहुरि एक गुणहानिविषैं जो स्पर्धकनिका प्रमाण ताकौं एक स्पर्धकविषैं जो वर्गणानिका प्रमाण ताकरि गुणैं एक गुणहानिविषैं सर्व वर्गणानिका प्रमाण हो है। याकौं एक योग स्थानविषैं जो नाना गुणहानिका प्रमाण ताकरि गुणैं एक योग स्थानविषैं सर्ववर्गणानिका प्रमाण हो है सो ए नानागुणहानिनै आदि देकरि अनुक्रमतैं असंख्यात असंख्यात गुणा जानना॥ २२७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सव्वे जीवपदेसे दिवड्ढगुणहाणिभाजिदे पढमा ।
उवरिं उत्तरहीणं गुणहाणिं पडि तदद्धकमं ॥ २२८ ॥

सर्वस्मिन् जीवप्रदेशे द्व्यर्धगुणहानिभाजिते प्रथमा ।
उपरि उत्तरहीनं गुणहानिं प्रति तदर्धक्रमः ॥ २२८ ॥

जी० प्र०—सर्वस्मिन् लोकमात्रैकजीवप्रदेशे द्व्यर्धगुणहान्या भक्ते सति प्रथमवर्गणा भवति $\frac{\equiv}{\overline{\text{a a 2}}}$ ३ अपवर्तिते एवं = a a $\frac{2}{3}$ उपर्युत्तरहीना यथा भवति तथा गत्वा गुणहानिं गुणहानिं प्रति अर्धार्धक्रमा भवति । सा च अंकसंदृष्टौ यथा—

सर्वद्रव्ये ३१०० रूपोनान्योन्याभ्यस्तराशिना भक्ते चरमगुणहानिद्रव्यं भवति $\frac{३१००}{३१}$ ततोऽधोऽधः प्रथमगुणहानिपर्यंतं द्विगुणद्विगुणक्रमं भवति १००। २००। ४००। ८००। १६००। एवं प्रतिगुणहानिद्रव्याणि अर्धार्धक्रमेण सिद्धानि । पुनः सर्वजीवप्रदेशे शताधिकत्रिसहस्रे ३१०० साधिकद्व्यर्धगुणहान्या भाजिते प्रथमवर्गणा भवति । यद्येतावतः प्र २५६ एका शलाका फ श १ तदैतावतः इ ३१०० किमिति ? लब्धं साधिकद्व्यर्धगुणहानिप्रमाणं $\frac{१२।७}{६४}$ अनेन $\frac{७७५}{६४}$ द्रव्ये भक्ते $\frac{३१००।६४}{७७५}$ प्रथमगुणहानिस्पर्धकप्रथमवर्गणाप्रमाणं भवति २५६ । उपर्युत्तरहीनं भूत्वा प्रथमगुणहानिचरमस्पर्धकचरमवर्गणायां रूपोनगच्छमात्रविशेषैर्हीयते—१४४

१६०
१७६
१९२
२०८
२२४
२४०
२५६

१

द्रव्य	स्थिति	गुण	नाना	दोगु	अन्योन्या
≡	$\frac{-}{\text{a}}$	$\frac{—}{\text{a a}}$	$\frac{\text{प}}{\text{a a}}$	$\frac{—}{\text{a a}}$ २	$\frac{\text{प}}{\text{a}}$
३१००	४०	८	५	१६	३२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अत्र विशेषप्रमाणं तु प्रथमवर्गणायां दोगुणहानिभक्तायां २५६/१६ भवति १६ । तथा सर्वगुणहानीनामपि ज्ञातव्यं १ २ ४ ८ १६ तत एव दोगुणहानिनिषेकहार इत्युच्यते । एवं गुणहानिं गुणहानिं प्रति द्रव्याणि वर्गणाः विशेषाश्च अर्धार्धक्रमा भवंति ।

७२	३६	१८	९
८०	४०	२०	१०
८८	४४	२२	११
९६	४८	२४	१२
१०४	५२	२६	१३
११२	५६	२८	१४
१२०	६०	३०	१५
१२८	६४	३२	१६

॥ २२८ ॥ एवं सामान्येन अंकसंदृष्टया गमनिकां प्रदर्श्य विशेषनिर्णयं अर्थसंदृष्टया आह—

स० चं०—सर्वही लोक प्रमाण जे जीवके प्रदेश तिनकौं द्व्यर्धगुणहानिका भाग दीएं प्रथम गुण हानिका प्रथम स्पर्धककी प्रथमवर्गणा हो है पर्युत्तर कहिए एक एक विशेष घटाए एक एक वर्गणा हो है । बहुरि गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा प्रमाण अनुक्रम करि जानना । बहुरि प्रथम वर्गणाकौं दोगुणहानिका भाग दीएं जो प्रमाण होइ तितना विशेषका प्रमाण जानना ॥ २२८ ॥

फड्ढयसंखाहि गुणं जहण्णवग्गं तु तत्थ तत्थादी ।
बिदियादिवग्गणाणं वग्गा अविभाग अहियकमा ॥२२९॥

स्पर्धकसंख्याभिः गुणो जघन्यवर्गस्तु तत्र तत्रादिः ।
द्वितीयादिवर्गणानां वर्गा अविभागाधिकक्रमाः ॥ २२९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—प्रथमगुणहानिमादिं कृत्वा चरमगुणहानिपर्यंतं सर्वस्पर्धकेषु तत्र तत्र प्रथमवर्गणावर्गः स्पर्धकसंख्याभिर्गुणितो भवति । तु—पुनः द्वितीयादिवर्गणानां वर्गाः अविभागाधिकक्रमा भवंति । अत्र सर्वजघन्ययोगस्थानस्य सर्वयोगाविभागप्रतिच्छेदमेलापनविधानमुच्यते—

तत्र तावत् प्रथमगुणहानिस्पर्धकानां धनसंयोजनक्रमो जघन्यस्पर्धकादिवर्गणा २५६ प्रदेशसमूहेऽस्मिन् वि १६ जघन्यवर्गेण गुणयित्वा व वि १६ एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाभिर्गुणिते स्थूलरूपेण जघन्यस्पर्धकं भवति व वि १६ । ४ । इदमेवाद्युत्तरं कृत्वा एकगुणहानिस्पर्धकशलाकागच्छं
१ ८
कृत्वा संकलिते सति ऋणसहितप्रथमगुणहानिद्रव्यं भवति व वि १६ ४ ९ ९ अत्रत्यं ऋणमानीयते—
२ १

जघन्यवर्गगुणैकविशेषाद्युत्तररूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनं प्रथमस्पर्धकऋणं भवति व वि ३ । ४ अत्र नवीनमस्ति रूपोनैकस्पर्धकव-
२ १
र्गणाशलाकागच्छसंकलनमात्र वि ३ । ४ विशेषाधिकं ।
२ १

३ वि ३	१ वि ३	२ वि ३
२ वि २	१ वि २	१ वि २
१ वि १	१ वि १	०
०	०	०
अधिकधनस्य	वि ३ । ४	वि २ २ ३ ४
ऋणन्यासः	२ १	३ २ १

एकविशेषाद्युत्तरद्विरूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छद्विगुणद्विकवारसंकलनमिदं—वि २ । २ । ३ । ४ धनस्य ऋणं धनराशेः ऋणमिति
३ २ १
तद्राश्यूनिता द्विवर्गणाप्रदेशमात्रा द्व्युत्तररूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छ ३ वि १६
२ वि १६
१ वि १६
०
संकलनधनमात्राः वि १६ । ३ । ४ एकाद्येकोत्तरक-
२ १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मेव स्थिताविभागप्रतिच्छेदा अधिकाः संति । ते जघन्यवर्गस्यासंख्यातैकभागत्वान्न विवक्षिताः । तथैव द्वितीयादिस्पर्धकेष्वपि ज्ञातव्यं । इदानीं द्वितीयस्पर्धकक्रमृणमानीयते—

जघन्यवर्गगुणितविशेषाद्युत्तररूपोनस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनं—

३ ‍ ‍ ३	३	३
व २ वि ४	व २ वि ३	व २ वि ४।
२ ‍ ‍ २	२	२
व २ वि ४	व २ वि २	व २ वि ४।
१ ‍ ‍ १	१	१
व २ वि ४	व २ वि १	व २ वि ४।
व २ वि ४	०	व २ वि ४।

आनीय द्विगुणितं व वि ३ । ४ । २ पुनः जघन्यवर्गमात्रविशेषः एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण रूपोनस्पर्धकसंख्या २ गच्छसंकलनेन
२ १ (१ ᴖ)

१ । २ द्विगुणोन च १ । २ । गुणितः व वि ४ । ४ । १ । २ । एतद्राशिद्वयं द्वितीयस्पर्धकक्रमृणं । पुनः जघन्यवर्गमात्रविशेषाणां--
२ । १

३ ‍ ‍ ३	३	३
व ३ वि ४ २	व ३ वि ३	व ३ वि ४। २
२ ‍ ‍ २	२	२
व ३ वि ४ २	व ३ वि २	व ३ वि ४। २
१ ‍ ‍ १	१	१
व ३ वि ४ २	व ३ वि १	व ३ वि ४। २
व ३ वि ४ २	०	व ३ वि ४। २

रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनं त्रिगुणितं व वि ३ । ४ । ३ पुनर्जघन्यवर्गमात्रविशेषः--एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण रूपोनगच्छ-
२ । १

संकलनेन ३ (१ ᴖ) ३ द्विगुणोन च २ । ३ । २ गुणितः व वि ४ । ४ । ३ । २ । एतौ द्वौ राशी तृतीयस्पर्धकक्रमृणं । एवं प्रथमगुणहानौ प्रति-
२ ‍ १ ‍ ‍ २ । १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्पर्धकं रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकासंकलनगुणितजघन्यमात्रविशेषाणां गुणकारा गच्छमात्राः प्रथमपंक्तौ गच्छंति। द्वितीयपंक्तौ च स्पर्धकवर्गणाश-लाकावर्गगुणितजघन्यवर्गमात्रविशेषाणां रूपोनगच्छद्विगुणैकवारसंकलनमात्रा गच्छंति ।

व वि ३ ४ ९ २	व वि ४ ४ २ ३६
व वि ३ ४ ८ २	व वि ४ ४ २ २८
व वि ३ ४ ७ २	व वि ४ ४ २ २१
व वि ३ ४ ६ २	व वि ४ ४ २ १५
व वि ३ ४ ५ २	व वि ४ ४ २ १०
व वि ३ ४ ४ २	व वि ४ ४ २ ६
व वि ३ ४ ३ २	व वि ४ ४ २ ३
व वि ३ ४ २ २	व वि ४ ४ २ १
व वि ३ ४ १	
प्रथमपंक्ति २ ऋणं ।	द्वितीयपंक्तिऋणं ।

रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकानां द्विगुणद्विकवारसंकलनेन स्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गगुणितजघन्यवर्गमात्रविशेषेषु द्वितीयपंक्तिसर्व-ऋणसमासोयं

१ – १--

व वि ४ । ४ २ ९ ९ ९ पुनः गुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलेन रूपोनस्पर्धकवर्गणाशलाकासंकलेन च गुणितजघन्यमात्रवर्गविशेषः प्रथमपंक्तिऋण-

३ २ १

१--

समासोयं व वि ३ ४ ९ ९ अस्य मेलनं कर्तुं द्वितीयपंक्तिसर्वऋणसमासच समगुणकारे एकरूपचतुर्थभागे प्रक्षिप्ते उभयपंक्तिसर्वऋणसंयोगो भवति

२ १ २ १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व वि ४४९९ $\overset{१-}{\underset{३}{९}}$ । अस्मिन् भागानीतप्रथमगुणहानिद्रव्ये व वि १६ ४ $\underset{२}{९}$ $\overset{१-}{\underset{१}{९}}$ अपनीते प्रथमगुणहानि—

३ ३	३ ३	३ ३
व ३ वि १६—४ २	व ६ वि १६—४ ५	व ९ वि १६—४ ८
२ २	२ २	२ २
व ३ वि १६—४ २	व ६ वि १६—४ ५	व ९ वि १६—४ ८
१ १	१ १	१ १
व ३ वि १६—४ २	व ६ वि १६—४ ५	व ९ वि १६—४ ८
व ३ वि १६—४ २	व ६ वि १६—४ ५	व ९ वि १६—४ ८
३ ३	३ ३	३ ३
व २ वि १६—४	व ५ वि १६—४ ४	व ८ वि १६—४ ७
२ २	२ २	२ २
व २ वि १६—४	व ५ वि १६—४ ४	व ८ वि १६—४ ७
१ १	१ १	१ १
व २ वि १६—४	व ५ वि १६—४ ४	व ८ वि १६—४ ७
व २ वि १६—४	व ५ वि १६—४ ४	व ८ वि १६—४ ७
३	३ ३	३ ३
व १ वि १६—३	व ४ वि १६—४ ३	व ७ वि १६—४ ६
२	२ २	२ २
व १ वि १६—२	व ४ वि १६—४ ३	व ७ वि १६—४ ६
१	१ १	१ १
व १ वि १६—१	व ४ वि १६—४ ३	व ७ वि १६—४ ६
व १ वि १६	व ४ वि १६—४ ३	व ७ वि १६—४ ६

प्रथमगुणहानिरचना ।

सर्वयोगाविभागप्रतिच्छेदा यथास्वरूपेण आयंति । व वि ४ ४ ६ ६ $\overset{१ ᐱ ७}{९}$ ६ इदमादिधनं । उत्तरधनं नास्ति । इदानीं द्वितीयगुणहानिद्रव्यमुच्यते— २८०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रथमगुणहानिप्रथमवर्गणार्धे एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाभिः रूपाधिकगुणहानिप्रथमस्पर्धकं स्यात् व वि १६ ४ ९ (१— ; वि / २) एतावन्मात्रं सर्वत्रापनीय पृथक् संस्थाप्य—

३ २ ३ व ९ वि १६—४ २ २ २ २ व ९ वि १६—४ १ २ २ १ व ९ वि १६—४ २ २ व ९ वि १६—४ २	३ ४ ३ व ९ वि १६—४ ३ २ ४ २ २ व ९ वि १६—४ ३ १ ४ २ १ व ९ वि १६—४ ३ ४ २ व ९ वि १६—४ ३ २	३ ६ ३ व ९ वि १६—४ ५ २ ६ २ २ व ९ वि १६—४ ५ १ ६ २ १ व ९ वि १६—४ ५ ६ २ व ९ वि १६—४ ५ २	३ ८ ३ व ९ वि १६—४ ७ २ ८ २ २ व ९ वि १६—४ ७ १ ८ २ १ व ९ वि १६—४ ७ ८ २ व ९ वि १६—४ ७ २
३ १ व ९ वि १६—३ २ १ २ व ९ वि १६—२ १ १ २ व ९ वि १६—१ १ २ व ९ वि १६— २	३ ३ ३ व ९ वि १६—४ २ २ ३ २ २ व ९ वि १६—४ २ १ ३ २ १ व ९ वि १६—४ २ ३ २ व ९ वि १६—४ २ २	३ ५ ३ व ९ वि १६—४ ४ २ ५ २ २ व ९ वि १६—४ ४ १ ५ २ १ व ९ वि १६—४ ४ ५ २ व ९ वि १६—४ ४ २	३ ७ ३ व ९ वि १६—४ ६ २ ७ २ २ व ९ वि १६—४ ६ १ ७ २ १ व ९ वि १६—४ ६ ७ २ व ९ वि १६—४ ६ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

<table>
<tr><th>द्वितीयगुणहानिः</th><th>मूलधनं</th><th>संकलितधनं</th></tr>
<tr>
<td>३ ९   ३
व ९ वि १६—४ ८
      २
२ ९   २
व ९ वि १६—४ ८
      २
१ ९   १
व ९ वि १६—४ ८
      २
   ९
व ९ वि १६—४ ८
      २</td>
<td>१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २
१—
व वि १६—४ ९
   २</td>
<td>व वि १६—४ ८
   २
व वि १६—४ ७
   २
व वि १६—४ ६
   २
व वि १६—४ ५
   २
व वि १६—४ ४
   २
व वि १६—४ ३
   २
व वि १६—४ २
   २
व वि १६—४ १
   २</td>
</tr>
</table>

अत्र प्रथमराशौ गुणहानिस्पर्धकशलाकाभिर्गुणिते सर्वसमासः स्यात् व वि/२ १६ ४ ९ ९ (१— ऊपर) अस्य मूलधनमिति संज्ञा। पुनः प्रथमगुणहानिजघन्यस्पर्धकाद् गुत्तरक्रमेण द्वितीयादिस्पर्धकस्थितशेषे रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनेन गुणिते एतावत् व वि/२ १६ ४ ९/२ ९/१ (१ ८ ऊपर) अस्य संकलितधनमिति संज्ञा। अत्रतनऋणं व वि/२ १६ ४ १/२ ९ मूलधनस्याधिकरूपे व वि/२ १६ ४ १ ९ अपनीय शेषं व वि/२ १६ ४ १/२ ९ मूलधने प्रक्षेप्यं व वि/२ १६ ४ ९ ९ एतौ द्वौ राशी द्वितीयगुणहानौ स्थूलधनं स्तः। अत्रत्यं ऋणमानीयते—

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जघन्यवर्गगुणस्वविशेषाद्युत्तररूपोनस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनं व वि ३ / २ व वि २ / २ व वि १ / २ ; व वि ३ ४ / २ २ १ रूपाधिकगुणहानिस्पर्धकशलाकाराशिना

संगुण्य व वि ३ ४ ६ (१ —) / २ २ १ अधिकरूपेऽपनीय पृथक्संस्थापिते प्रथमद्वितीयपंक्तिक्रमेण स्तः व वि ३ ४ ६ / २ २ १ व वि ३ ४ १ / २ २ १ एते द्वे प्रथमस्पर्धकक्रमेणं

पुनः पूर्वोक्तविशेषाद्युत्तरगच्छसंकलनं

द्वितीयस्पर्धकाधिकक्रमेणान्यासः

	२		
व	९	वि	३
	२	२	
व	६	वि	२
	२	२	
व	९	वि	१
	०	२	

				२
व	वि	३	४	६
	२	२		१

द्विरूपाधिकगुणहानिस्पर्धकशलाकाराशिना संगुण्य अधिकरूपद्विकेऽपनीय पृथक्स्थापिते क्रमेण प्रथमद्वितीयपंक्तिक्रमेण भवतः व वि ३ ४ ६ / २ २

व वि ३ ४ २ / २ २ पुनरेकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गगुणजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषान् द्विरूपाधिकगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिः संगुण्य -

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्पिताधिकरणन्यासो द्वितीयस्पर्धकस्य—

२
व ९ वि ४
२ २
व ९ वि ४
२ २
व ९ वि ४
२ २
व ९ वि ४
२

२
व ९ वि ४ ४
२

अधिकरूपद्विकेऽपनीय पृथक् स्थापिते क्रमेण तृतीयचतुर्थपंक्तिऋणे भवतः व वि ४ ४ ९ व वि ४ ४ २ १ एते चत्वारो द्वितीयस्पर्धकऋणं पुनः
३ ३ २ २
पूर्वोक्ताद्युत्तरगच्छसंकलनं व ९ वि ३ व ९ वि ३ ४ त्रिरूपाधिकगुणहानिस्पर्धकशलाकाराशिना संगुणय रूपत्रयेऽपनीय पृथक् स्थापिते
३ २ २ २

तृतीयस्पर्धकाधिक ऋणन्यासः
व ९ वि २
३ २
व ९ वि १
२

प्रथमद्वितीयपंक्तिऋणे भवतः—व वि ३ ४ ९ । व वि ३ ४ ३ पुनः जघन्यमात्रविशेषान्—

तृतीयस्पर्धकार्पिताधिकऋणन्यासः

३	३
व ९ वि ४ २	व ९ वि ४ ४ २
३ २	२
व ९ वि ४ २	
३ २	
व ९ वि ४ २	
३ २	
व ९ वि ४ २	
२	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण द्विगुणत्रिगुणरूपाधिकगुणहानिस्पर्धकशलाकामिश्र संगुण्य अधिकरूपत्रयेऽपनीय पृथक्स्थापिते तृतीयचतुर्थपंक्तिऋणे भवतः व वि ४ ४ ९ २ व वि ४ ४ २ ३ एते चत्वारः तृतीयस्पर्धकऋणं । एवं प्रथमपंक्तिऋणान्यवस्थितक्रमेण द्वितीयपंक्तिगुणकाराः पदमात्र-
(वि के नीचे २ २)
क्रमेण तृतीयपंक्तिगुणकाराः रूपोनपदमात्रक्रमेण चतुर्थपंक्तिगुणकाराः रूपोनपदसंकलनक्रमेण च गच्छंति ।

प्रथमपंक्तिः	द्वितीयपंक्तिः	तृतीयपंक्तिः	चतुर्थपंक्तिः
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । ८ २	व । वि । ४ । ४ । २ । ३६ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ८ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । ७ २	व । वि । ४ । ४ । २ । २८ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ७ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । ६ २	व । वि । ४ । ४ । २ । २१ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ६ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । ५ २	व । वि । ४ । ४ । २ । १५ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ५ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । ४ २	व । वि । ४ । ४ । २ । १० २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ४ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । ३ २	व । वि । ४ । ४ । २ । ६ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । ३ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २ २	व । वि । ४ । ४ । २ । ३ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । २ २ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । १ २	व । वि । ४ । ४ । २ । १ २
व । वि । ३ । ४ । ९ २ २	व । वि । ३ । ४ । १ २ २	०	०

अत्र प्रथमपंक्तिप्रथमराशौ गुणहानिस्पर्धकशलाकाराशिना गुणिते प्रथमपंक्तिसर्वऋणसमासो भवति व । वि । ३ । ४ । ९ । ९ पुनर्द्वि-
२ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीयपंक्तिप्रथमराशौ गुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनेन गुणिते द्वितीयपंक्तिऋणसमासो भवति व । वि/२ । ३/२ । ४ । ६[१−]/२ ६ । पुनस्तृतीयपंक्तिप्रथम-राशौ रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनेन गुणिते तृतीयपंक्तिऋणसमासो भवति व । वि/२ । ४ । ४ । ९ । ९[१^]/२ । ९/१ पुनश्चतुर्थपंक्तिप्रथमराशौ रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकाद्विकवारसंकलनेन गुणिते चतुर्थपंक्तिऋणसमासो भवति व । वि/२ । ४ । ४ । २ । ९[१^]/३ । ९[१−]/२ । ९/१ । अथापवर्तितः

व । वि/२ । ४ । ४ । ९[१^]/३ ९[१−]/२ ९/१ । अस्य चरमगुणकारे द्वितीयपंक्तिसर्वऋणं निक्षेप्तुं एकरूपचतुर्थभागं प्रक्षिप्येदं व । वि/२ । ४ । ४ । ९ ९ ९[१−]/३ प्राक्स्थूलरूपानीतसंकलितधन व । वि/२ । १६ । ४ । ९ । ९/२ । गतदोगुणहानिः संभेद्य संस्थाप्य व । वि/२ । ४ । ४ । ६ । ९/२ । ९ । २ शोध्यते तदा द्वितीयगुणहानौ शुद्धमादिधनं भवति व । वि/२ । ४ । ४ । ९ । ६ । ६ । ४/६ पुनः प्रथमपंक्तिसर्वऋणसंयोगार्थं तृतीयपंक्तिसर्वऋणचरमगुणकारे एकरूपं प्रक्षिप्येदं व । वि/२ । ४ । ४ । ६ । ६ । ६/२ पूर्वं स्थूलरूपानीतमूलधने व । वि/२ । १६ । ४ । ९ । ९ । अपवर्तितेऽस्मिन्—

व । वि/२ । ४ । ४ । ६ । ९ । ६ । २ अपनीय शेषे व । वि/२ । ४ । ४ । ९ । ९ । ९ । ३/२ समच्छेदनिमित्तं उपर्यधस्त्रिभिर्गुणिते द्वितीयगुणहानिशुद्धमुत्तरधनं भवति व । वि/२ । ४ । ४ । ९ । ९ । ९ । ९/६ एतौ द्वौ राशी द्वितीयगुणहानिसर्वधनं । इतस्तृतीयगुणहानिधनमुच्यते तद्रचनेयं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३ २ ३– व ९ । २ वि १६—४ २ २ २२ २– व ६ । २ वि १६—४ १ २ २२ १– व ९ । २ वि १६—४ २ २२ व ९ । २ वि १६—४ २२	३ ४ ३ व ९ । २ त्रि १६—४ । ३ २ ४ २२ २ व ९ । २ त्रि १६—४ । ३ १ ४ २२ १ व ९ । २ वि १६—४ । ३ ४ २२ व ९ । २ वि १६—४ । ३ २२	३ ६ ३– व ६ । २ त्रि १६—४ । ५ २ ६ २२ २– व ९ । २ त्रि १६—४ । ५ १ ६ २२ १– व ६ । २ त्रि १६—४ । ५ ६ २२ व ६ । २ वि १६—४ । ५ २२	३ ८ ३– व ६ । २ वि १६—४ । ७ २ ८ २२ २– व ९ । २ वि १६—४ । ७ १ ८ २२ १– व ६ । २ वि १६—४ । ७ ८ २२ व ६ । २ वि १६—४ । ७ २२
३ १ व ६ २ वि १६—३ २ १ २२ व ९ २ वि १६—२ १ १ २२ व ९ २ त्रि १६—१ १ २२ व ६ २ त्रि १६— २२	३ ३ ३ व ६ २ वि १६—४ २ २ ३ २२ २ व ९ २ वि १६—४ २ १ ३ २२ १ व ९ २ वि १६—४ २ ३ २२ व ६ २ वि १६—४ २ २२	३ ५ ३ व ९ २ वि १६—४ ४ २ ५ २२ २ व ६ २ वि १६—४ ४ १ ५ २२ १ व ६ २ वि १६—४ ४ ५ २२ व ९ २ वि १६—४ ४ २२	३ ७ ३ व ६ २ त्रि १६—४ ६ २ ७ २२ २ व ६ २ वि १६—४ ६ १ ७ २२ १ व ९ २ वि १६—४ ६ ७ २२ व ६ २ वि १६—४ ६ २२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तृतीयगुणहानिः	मूलधनं	संकलितधनं
३ ९ ३– व ९ । २ वि १६—४ । ८ २२	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । ८ ४
२ ९ २– व ९ । २ वि १६—४ । ८ २२	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । ७ ४
१ ९ १– व ९ । २ वि १६—४ । ८ ९ २२	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । ६ ४
व ९ । २ वि १६—४ । ८ २२	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । ५ ४
	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । ४ ४
	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । ३ ४
	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । २ ४
	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	व । वि । १६ । ४ । १ ४
	१– व । वि । १६ । ४ । ९ । २ । १ ४	

प्रथमगुणहानिजघन्यस्पर्धकचतुर्भागे व वि १६ । ४ रूपाधिकद्विगुणगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिर्गुणिते स्थूलरूपेण तृतीयगुणहानिप्रथमस्पर्धक-
१— ४ १--
मिदं व वि १६ । ४ । ९ । २ गुणहानिस्पर्धकशलाकाभिर्गुणितं मूलधनं स्यात् व वि १६ । ४ । ९ । २ । ९ पुनः प्रथमगुणहानिजघन्यस्पर्धक-
४ ४

१ ^
चतुर्भागादुत्तररूपोन गुणहानिस्पर्धकशलाकागच्छसंकलनमिदं व वि १६ । ४ । ९ । २ । ९ एते द्वे तृतीयगुणहानिऋणसहितधनं भवतः ।
४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तद्धनमानीयते---जघन्यवर्गगुणरूपोनस्पर्धकवर्गणाशलाकासंकलनमात्रविशेष---

	१----			
व	९	२	वि	३
	१---		४	
व	९	२	वि	२
	१---		४	
व	९	२	वि	१
			४	

चतुर्भागे रूपाधिकद्विगुणगुणहानि-

स्पर्धकशलाकागुणिते व वि ३ । ४ ९ २ (१---; ४ २) अधिकरूपे च पृथक् स्थापिते प्रथमद्वितीयपंक्तिऋणे भवतः व वि ३ ४ ९ २ (४ २) व वि ३ ४ १ (४ २) पुन-

द्वितीयस्पर्धकसर्वऋणमिदं

	२			३
व	९	२	वि	४
	२		४	२
व	९	२	वि	४
	२		४	१
व	९	२	वि	४
	२		४	
व	९	२	वि	४
			४	

प्रथमद्वितीयपंक्तिसंबंधि ऋणमिदं

	२			
व	९	२	वि	३
	२		४	
व	९	२	वि	२
	२		४	
व	९	२	वि	१
			४	

सकलय्य व वि ३ ४ ९ २ (२; ४ २)

अधिकरूपद्वये पृथक् स्थापिते प्रथमस्पर्धकप्रथमपंक्तिसमानं प्रथमपंक्तिऋणं भवति व वि ३ ४ ९ २ (४ २) प्रथमस्पर्धकद्वितीयपंक्तिऋणादिदं द्वितीयस्पर्धक-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

द्वितीयपंक्तिऋणं रूपाधिककगुणकारगुणं व वि ३ ४ २ शेषतृतीयचतुर्थपंक्तिप्रतिबद्धऋणमिदं
४ २

२
व ६ २ वि ४
२ ४
व ६ २ वि ४
२ ४
व ९ २ वि ४
२ ४
व ६ २ वि ४
४

जघन्यवर्गमात्रस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्ग-

२—
गुणस्वविशेषद्विरूपाधिकद्विगुणहानिस्पर्धकशलाकागुणिते व वि ४ ४ ६ २ अधिकद्वये च पृथक्स्थापिते द्वितीयस्पर्धकतृतीयचतुर्थपंक्तिऋणे भवतः।
४

व वि ४ ४ ९ २   व वि ४ ४ २।
४   ४

पुनस्तृतीयस्पर्धकसर्वऋणमिदं

३ ३
व ९ २ वि ४ २
३ ४ २
व ६ २ वि ४ २
३ ४ १
व ६ २ वि ४ २
३ ४
व ९ २ वि ४ २
४

अत्र प्रथमद्वितीयपंक्तिप्रतिबद्धऋणमिदं

३
व ६ २ वि ३
३ ४
व ६ २ वि २
३ ४
व ६ २ वि १
४

३—
संकलय्य व वि ३ ४ ६ २ अधिकरूपत्रये पृथक्स्थापिते तृतीयस्पर्धकप्रथमद्वितीयपंक्तिऋणो भवतः व वि ३ ४ ६ २। व वि ३ ४ ३ शेषतृतीय-
४ २ १   ४ २ १   ४ २ १

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चतुर्थपंक्तिसंबंधिऋणमिदं

३
व ९ २ वि ४ २
३ ४
व ९ २ वि ४ २
३ ४
व ९ २ वि ४ २
३ ४
व ९ २ वि ४ २
४

एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाभिः संगुण्य व वि ४ ४ २ ९ २ (३ / ४) अधिकरूपत्रये पृथक्स्थापिते तृतीयस्पर्धकतृतीयचतुर्थपंक्तिऋणे भवतः व वि ४ ४ २ ९ २ (४) व वि ४ ४ २ ३ (४) एवं प्रतिस्पर्धकं प्रथमपंक्त्योऽवस्थितक्रमेण द्वितीयपंक्त्यः पदमात्ररूपगुणितक्रमेण तृतीयपंक्त्यो रूपोनपदमात्ररूपगुणितक्रमेण चतुर्थपंक्त्यो रूपोनगच्छसंकलनगुणितक्रमेण च गच्छंति । ताः संस्थाप्य–

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रथमपंक्तिः	द्वितीयपंक्तिः	तृतीयपंक्तिः	चतुर्थपंक्तिः
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ९ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २८ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । ३६ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ८ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २७ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । २८ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ७ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २६ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । २१ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ६ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २५ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । १५ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ५ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २४ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । १० ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ४ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २३ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । ६ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । ३ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २२ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । ३ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । २ ४ २	व । वि । ४ । ४ । ९ । २१ ४	व । वि । ४ । ४ । २ । १ ४
व । वि । ३ । ४ । ९ । २ ४ २	व । वि । ३ । ४ । १ ४ २	०	०

अत्र प्रथमपंक्तिप्रथमराशौ व वि ३ ४ ९ २ गुणहानिस्पर्धकशलाकाभिर्गुणिते प्रथमपंक्तिसर्वऋणसंयोगो भवति व वि ३ ४ ९ २ ९ पुन-
४ २ १   १–४ २ १
र्द्वितीयपंक्तिप्रथमराशौ व वि ३ ४ १ गुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनेन गुणिते द्वितीयपंक्तिऋणसंयोगो भवति व वि ३ ४ ९ ९ | पुनस्तृतीयपंक्तिप्रथम-
४ २ १   ४ २ १ २ १ | १ ०
राशौ व वि ४ ४ ९ २ १ रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनेन गुणिते तृतीयपंक्तिऋणसंयोगो भवति व वि ४ ४ ९ २ ९ ९ पुनश्चतुर्थपंक्ति-
४   ४ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रथमराशौ व वि ४ ४ २ १ / ४ रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकाद्विकवारसंकलनेन गुणिते चतुर्थपंक्तिऋणं भवति व वि ४ ४ २ ९ १~/३ १-/२ १ अस्य गुणकारे द्वितीयपंक्तिसर्वऋणमेलापनार्थं एकरूपचतुर्थभागं प्रक्षिप्य प्राक्स्थूलरूपापनीतसंकलितधने शोधिते तृतीयगुणहानिशुद्धमादिधनमायाति—
व वि ४ ४ ९ १ १ ४ / ६ २ २ पुनः प्रथमपंक्तिसर्वऋणसंयोगार्थं तृतीयपंक्तिसर्वर्णचरमगुणकारे एकरूपं प्रक्षिप्य इदं प्राक्स्थूलरूपानीतमूलधने संशोध्य उपर्यधश्च त्रिभिः संगुण्य तृतीयगुणहानौ शुद्धमुत्तरधनं स्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ ९ २ / ६ २ २ एते तृतीयगुणहानिसर्वधनं भवतः। एवं प्रतिगुणहानि आदिधनं अर्धार्धक्रमं उत्तरधनं अर्धार्धक्रममपि रूपोनगच्छगुणं, तेन चरमगुणहानौ धनद्वये भागहारो रूपोननानागुणहानिमात्रद्विकः। उत्तरधनगुणकारो रूपोननानागुणहानिमात्रः।

आदिधनं	उत्तरधनं
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ० ६ प २ ० a ०	१~ व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ ना ० ६ प २ ० a ०
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ २ २ २ २ २ २ २ २ ६	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ ८ २ २ २ २ २ २ २ २ ६
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ २ २ २ २ २ २ २ ६ ० ० ०	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ ७ २ २ २ २ २ २ २ ६ ० ० ०
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६ २ २ २	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ ३ ६ २ २ २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६ २ २	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ २ ६ २ २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६ २	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ १ ६ २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६	०

३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अत्र सर्वत्र धनद्वये गुणहानिस्पर्धकशलाकाघनस्पर्धकवर्गणाशलाकाकृतिगुणजघन्यवर्गमात्रविशेषो गुणयं समानं गुणकारः आदिघने चतुःषड्भागादिर्द्विगुणहीनः। उत्तरघने नवषड्भागार्धादिर्द्विगुणहीनोऽपि रूपोनपदगुणितो भवति। एवं गुणहीनाधिकरूपस्थितसर्वगुणहानिधनसंकलनसूत्रं—

'पदमात्रगुणान्योन्याभ्यासं व्येकं सहोत्तराद्यंशगुणं विपदघ्नचयं विभजेत् व्येकपदान्योन्यगुणहताद्यच्छिदिना।' अस्यार्थः— विपदघ्नचयं पदेन घ्नः पदघ्नः गच्छेन हतः इत्यर्थः, स चासौ चयश्च पदघ्नचयः, विगतः पदघ्नचयो यस्मात्तं विपदघ्नचयं। व्येकपदान्योन्यगुणहताद्यच्छिदिना विगतं एकेन व्येकं तच्च तत्पदं च व्येकपदं तन्मात्रगुणकाराणामन्योन्याभ्यासः तेन हतेन आद्यच्छिदिना विभजेदिति संबंधः। पदमात्रगुणान्योन्याभ्यासं

नानागुणहानिमात्रद्विकानां परस्परगुणनं प / ꣸ व्येकं—एकरूपोनं (प / ꣸, १ᐱ) सहोत्तराद्यंशगुणं उत्तरधनांशसहितादिधनांशैर्हतं (१३ प / ꣸, १ᐱ) विपदघ्नचयं पदघ्नोत्तरधनचयः ऋणमस्तीति तं पृथग् न्यसेत् ९ प / ꣸ ꣸ तौ राशी व्येकपदान्योन्यगुणहताद्यच्छिदिना रूपोननानागुणहानिमात्रद्विकसंवर्गसंजनितान्योन्याभ्यस्तराश्यर्धगुणिताद्यच्छेदषट्केन विभजेत् इत्युभयधनऋणे स्यातां। व वि ४ ४ ९ ९ ९ १३ प / ꣸ (१ᐱ) / ६ प / ꣸ २ व वि ४ ४ ९ ९ ९ ९ प / ꣸ ꣸ / ६ प / ꣸ २ तद्धनस्यऋणं

पृथक् कृत्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ १३ (०) / ६ प / ꣸ २ ऋणऋणयोरैक्यमिति ऋणराशौ प्रक्षिप्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ ९ १३ प (०) / ꣸ ꣸ / ६ प / ꣸ २ अपवर्तिते रूपासंख्यातैकभागः

१ / ꣸ अपवर्तितधने १३ / ३ अपनीतस्तदा किंचिदूनत्रिभागाधिकरूपचतुष्टयं गुणकारो भवति तत्संदृष्टिः व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ १— / ३ पुनः सूत्राभिप्रायप्रकटनार्थं प्रथमाद्यष्टगुणहानीनां धनमानीयते—

अंतधनं गुणगुणियं आदिविहीणमिति गुणसंकलनसूत्रानीतादिधनं। संदृष्टिः— व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ / ६ (१ᐱ) २५६ / २५६ / २ उत्तरधनसमासे तु तत्र तत्रतनगुणकारेषु पृथक् पृथक् स्थापितेषु—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२२
६।१ ६।२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२	६।१ ६।२२२२२२	
०	०	६।१ ६।२२२२२	६।१ ६।२२२२२	६।१ ६।२२२२२	६।१ ६।२२२२२		
०	०	६।१ ६।२२२२	६।१ ६।२२२२	६।१ ६।२२२२			
६।१ ६।२२२	६।१ ६।२२२	६।१ ६।२२२	६।१ ६।२२२				
६।१ ६।२२	६।१ ६।२२	६।१ ६।२२					
६।१ ६।२	६।१ ६।२						
६।१ ६।१							

सप्त पंक्तयः स्युः। तासु षडर्धरूपेण संकलय्य सप्तम्यां तत्प्रमाणाग्रायां प्रक्षिप्य पश्चात्तिर्यक्संकलनार्थं अष्टमस्थाने एतावदृशं

९।१
६।२२२२२२२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निक्षिप्य संकलय्य अष्टमस्थाननिक्षिप्तऋणे अपनीते उत्तरधनसमासोयं व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ २५६ आदिविहीनमिति सर्वत्र व्याप्यतया अवस्थितऋण-
१ ^
६ २५६
२

समासः अष्टस्थानानामेतावान् व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ ८ एवं त्रयाणामपि सिद्धराशीनां विषये गुणहीनाधिकसंकलनसूत्रं प्रवर्तत इति सूत्राभिप्रायः
६ २५६
२

सम्यग्दर्शितः। उभयधनयोगोयं– व वि ४ ४ ९ ९ ९ १३ २५६ अत्रतनहीन १३ १ रूपमपनीय ऋणार्णयोरैक्यमिति युक्तोऽष्टषष्टिसप्तशतहतपं-
१ ^ ०
६ २५६ ६ २५६
२ २

चाशीतिगुणाकारः स्यात् तत्संदृष्टिः— व वि ४ ४ ६ ६ ६ ८५ पुनः धनगुणाकारभागहारावपवर्त्य ४ ऋणेऽपनीते किंचिदूनत्रिभागाधिकचतुरू-
७६८
१
३

पाणि गुणकारः स्यात्। तत्संदृष्टिः— व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ पुनरेतत्करणसूत्राभिप्रायेण अष्टगुणहानिधनमानीयते—
१७१
२५६ ३

पदमात्रगुणा २ २ २ २ २ २ २ २ न्योन्याभ्यासं २५६ व्येकं २५६ सहोत्तराद्यंशगुणं १३ २५६ विपदप्रचयं पदप्रचयेन ६ ८ रहितं
१ ^ १ ^
६ २५६
२

३२४३ व्येकपदान्योन्यगुणहताद्यच्छिदिना विभजेत् ३२४३ इत्यष्टगुणहानिशुद्धधनं ४ भाग १७१ किंचिदूनत्रिभागार्धकरूपचतु-
७६८ २५६। ३

ष्टयं गुणकारो भवति व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ शेषगुणहानिधनानयने नवमगुणहानौ आदिधनं वेसदछप्पणहतषट्कभक्तषट्कसप्ततिः—
१–
३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व वि ४ ४ ९ ९ ९ ७६ / ६ । २५६ कुतः ? तत्रतना ४ / ६ । २५६ | ९ ८ / ६ २५६ युत्तरधनयोरादावेव संक्रांतत्वात् तत्रोत्तरधनं नास्ति। दशमगुणहानौ उभयधनच्छेदः द्विगुणवेसदछप्पणणहतषट्कं उपरि द्विगुणद्विगुणो भूत्वा चरमे द्विगुणवेसदछप्पणणभक्तान्योन्याभ्यस्तगुणितादिच्छेदः स्यात्। उत्तरधनगुणकारः एकादेकोत्तरक्रमेण गच्छँश्चरमे नवो नानागुणहानिमात्रो भवति। अत्रापि उक्तकरणसूत्रलदभिप्रायाभ्यां धनमानेतव्यं। तत्र करणसूत्रेण यथा—

७६ / ६ प / ३ २५६ । २	९ प–९ / ६ प ३ ३ / ३ २५६ । २
० ० ०	० ० ०
७६ / ६ । २५६ । २	९ । ९ / ६ । २५६ । २
७६ / ६ । २५६	०

पदमात्रगुणान्योन्याभ्यासं प / ३ २५६ व्येकं प १ ० / ३ २५६ सहोत्तराद्यंशगुणं ८५ प १ ० / ३ २५६ विपदघ्नचयं पदघ्नोत्तरधनचयः ९ प–८ / ३ ३ / १ ० अपनेतव्योऽस्तीति तं पृथक् संस्थाप्य तौ राशी व्येकपदान्योन्याभ्यस्त प / ३ २५६ । २ हतादिच्छिदिना विभजेत् इति धनं— ८५ प / ६ । २५६ प ३ । २५६ / ३ २ । २५६ ऋणं—

९ प–८ / ३ / ६ । २५६ प ३ ३ / ३ २ । २५६ धनस्थं ऋणं पृथक् संस्थाप्य ८५ १ ० / ६ । २५६ प / ३ २५६ । २ ऋणस्य ऋणं राशेर्धनं भवतीति द्विसप्तति ७२ / ६ । २५६ प / ३ २५६ । २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचाशीत्यामपनीय शेषत्रयोदशसु ऋणे निक्षिप्तेषु इदं— १३ / ८५ ... निरीक्ष्य धनऋणे अपवर्तयितव्ये। तत्र धने अन्योन्याभ्यस्तेन वेस-

a a
६ । २५६ ५
a २५६ । २

दछप्पण्णं वेसदछप्पण्णोन द्विकं षड्रूपस्थद्विकेन चापवर्त्य शेषं ८५ / २५६ । ३ अपवर्तितऋणेन एकरूपासंख्यातैकभागेन १ / a ऊनिते अष्टषष्टिसप्तशतभक्त-

किंचिदूनपंचाशीतिः अवस्थितगुणयस्य गुणाकारः स्यात्। व वि ४ ४ ९ ९ ९ ८५ / २५६ । ३ अस्मिन् अष्टषष्टिसप्तशतभक्तैकसप्ततिशते अष्टगुणहानिद्र-

व्यगुणाकारे भक्षिप्ते २५६— / ७६८ किंचिदूनत्रिभागः। अनेन अधिकरूपचतुष्टये अवस्थितगुणयस्य गुणाकारे कृते सर्वगुणहानिद्रव्यमेतावद्भवति—

व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ / १— / ३ अथवा व्यतिरेकमुखेन शेषगुणहानिद्रव्यमानीयते—

तत्राष्टगुणहानिद्रव्ये व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ सर्वगुणहानिद्रव्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ / १— / ३ अपनीते अष्टषष्टिसप्तशतभक्तैकरूपासंख्यातैकभागो-

१७१ / ७६८

नपंचाशीतिर्गुणाकारः स्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ ८५ / ७६८ तज्जघन्ययोगस्थानरचनासर्वद्रव्यमिदं संस्थाप्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ / १— / ३ अत्र संदृष्टिनिमित्तं

चारिणवगा अट्ठ इति गुणहानिप्रमुत्पाद्य गुणाकारभूतचतुष्कं संभेद्य द्विकद्वयं कृत्वा २ । २ । एकद्विकेन तां संगुणय्य दोगुणहानौ उत्पादितायां १६ त-

द्विन्यासोयं— व वि १६ ४ ९ ९ २ शेषत्रिभागेन संदृष्टिनिमित्तमुपर्यधो द्विगुणितेन व वि १६ ४ ९ ९ १— / ३ । २ अनेनैकरूपषड्भागेन व वि १६ ४ ९ ९ १— / ६

साधिकीकृत्य व वि १६ ४ ९ ९ २ जघन्यस्पर्धकेन प्रमाणितः किंचिदूनषड्भागाधिकद्विरूपगुणितैकगुणहानिस्पर्धकशलाकावर्गमात्रजघन्यस्पर्धकमात्रो

भवति। तत्संदृष्टिः—९ ९ २ (— — ।) अयं श्रेण्यसंख्येयभागवर्गः a । a । २ प्रतरासंख्येय इव दृश्यते तथापि श्रेण्यसंख्येयभाग एव अन्यथा इगिठाणफट्टयाओ-

सेढिअसंखेज्जदिमा' इति सूत्रं विरुध्यते तथात्वेऽपि तावत एव लब्धाददोषः ? तन्न, तत्रासंख्यातश्रेणीनामपि प्रसंगात् तेन तद्भागहारभूतासंख्या-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तद्वयं गुणितमसंख्यातश्रेणिप्रमितं =ə अपवर्तिते श्रेण्यसंख्यातैकभाग एवेत्यर्थः ə । अथ प्रागुक्तमेव

"अविभागपडिच्छेदो वग्गो पुण वग्गणा य फड्डयगं । गुणहाणीवियजाणो ठाणं पडि होदि णियमेण ॥" इति सूत्रार्थं पुनर्विशदयति–

किं स्थानं ? एकसमये एकस्य जीवस्य संभवद्गुणहानिसमूहः । का गुणहानिः ? स्पर्धकसमूहः । किं स्पर्धकं ? क्रमवृद्धिहानिवर्गणासमूहः । का वर्गणा ? वर्गसमूहः । को वर्गः ? अविभागप्रतिच्छेदसमूहः । कोऽविभागप्रतिच्छेदः ? जीवप्रदेशस्य कर्मादानशक्तौ जघन्यवृद्धिः योगस्याधिकृतत्वात् । किं तज्जघन्यवृद्धिप्रमाणं ? लोकमात्रजीवप्रदेशान् संस्थाप्य ≡ एषु सर्वजघन्यशक्तिकमेकं प्रदेशं स्वीकृत्य १ तद्गतशक्तिं बुद्ध्या प्रसार्य पुनः ततोऽविभागप्रतिच्छेदोत्तरप्रदेशं स्वीकृत्य १ तद्गतशक्तिं पूर्वप्रसारितशक्तेरुपरि प्रसार्य अधिकप्रमाणेन प्रथमप्रसारितप्रदेशशक्तौ खंडितायां असंख्यातलोकमात्राविभागप्रतिच्छेदा भवंति |||||||||| ≡ ə तत्समूहो वर्गः । स व इति संदृष्ट्या लिखितव्यः । तदग्रे तत्सदृशधनिकाः यावंतस्तावंतो लिखितव्याः । ते च असंख्यातलोकप्रतरमात्राः, श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्र्या द्व्यर्धगुणहान्या लोकमात्रजीवप्रदेशेषु भक्तेषु ≡ ३ / ə ə २ आदिवर्गणाजीवप्रदेशागमनात् = ə ə २ / ३ तद्वर्गणाविभागप्रतिच्छेदाः पृथक्पृथक्वर्गसंज्ञाः प्राक्तनपार्श्वे रचयितव्याः । एवं रचिताऽसंख्यातप्रतरमात्रः वर्गसमूहस्य वर्गणेति संज्ञा स्यात्

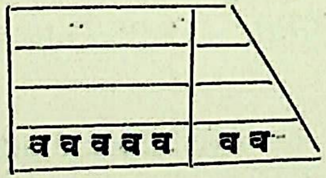

इयं प्रथमा वर्गणा । पुनरेषां वर्गणानामुपर्यविभागप्रतिच्छेदोत्तरा अपि पूर्ववर्गेभ्यः एकविशेषहीनसंख्याका वर्गा लिखितव्याः

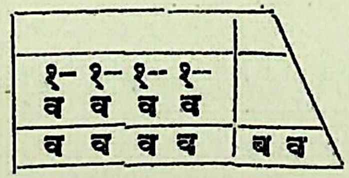

इयं द्वितीया वर्गणा । एवमविभागोत्तरविशेषहीनक्रमेण श्रेण्यसंख्येयभागमात्रवर्गणासमूहः एकं स्पर्धकं । पुनः द्विगुणादादिवर्गणात्वर्गात् स्तोकशक्तिकाः प्रदेशा न संति ततस्तेषां द्विगुणानामेव

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

सदृशधनिकानां प्रथमस्पर्धकचरमवर्गणाया उपरि रचना कर्तव्या तस्या

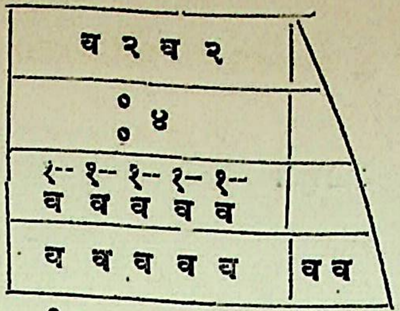

उपरि पुनः प्राग्वदविभागो-त्तरविशेषहीनक्रमेण श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्रीषु वर्गणासु रचितासु द्वितीयं स्पर्धकं । एवमुपर्युपरि फड्डयसंखाहि गुणं जहण्णवग्गं तु तत्थतत्थादीत्युक्तक्रमेण श्रेण्यसंख्येयभागस्पर्धकानि प्रथमगुणहानौ रचितव्यानि । तत उपरि द्वितीयगुणहान्यादिवर्गणा प्रथमगुणहान्यादिवर्गणार्धमात्री उपरि विशेषहीनक्रमेण गच्छति । अयं विशेषोऽपि पूर्वविशेषार्धमात्रः । एवं पलितोपमासंख्यातैकभागमात्रगुणहानिषु गच्छंतीषु एकं योगस्थानं । इदं सर्वजघन्यं शक्तिप्राधान्येनोक्तं । पुनः तदेव प्रदेशप्राधान्येन संकलयति—

प्रथमगुणहानिप्रथमस्पर्धकप्रथमवर्गणाप्रदेशकलापे = ə ə २/३ दोगुणहान्या ə ə (÷ २) भक्ते विशेषः स्यात् – ə ə ə ə/३ स एव पुनः लघुसंदृष्टिनिमित्तं वि इति कृत्वा दोगुणहान्या गुणितः प्रथमगुणहानौ प्रथमस्पर्धकादिवर्गणा स्यात् वि १६ । इयं तदवस्थैव न च हीनाधिकेत्यर्थः । पुनर्जघन्यवर्गमात्रशक्तिं प्रति सदृशधनिकत्वात् त्रैराशिकविधानेन प्र १ फ व इ वि १६ लब्धं प्रथमगुणहानौ प्रथमस्पर्धकादिवर्गणा भवति व वि १६ एवमुपर्युपरि सर्वत्राविभागोत्तरादिजघन्यवर्गः त्रैराशिकोत्पन्नगुणाकारः सुगमः, किंतु गुणहानिं गुणहानिं प्रति आदितः आदिः अर्धार्धक्रमः । कुतः ? पूर्वगुणहान्यादिवर्गणायाः गुणहानिमात्रस्वविशेषैर्हीनायाः उत्तरगुणहान्यादिवर्गणात्मात् । तथा विशेषोऽप्यर्धार्धक्रमः स्वस्वादेः दोगुणहानिभक्तस्य तत्प्रमाणत्वात् । तासु सर्वगुणहानिषु तावत् प्रथमगुणहानिचरमवर्गणेयं व ९ वि १६–४ ८ (३, ३–) द्वितीयगुणहानिप्रथमवर्गणेयं व ९ वि १६–४ ९ (१—) अत्रस्थमृणमिदं वि ४ ९ चारिनवगा अट्ठ इति गुणहानिमुत्पाद्य वि ८ दोगुणहानौ विशेषमात्रगुणहानीनां विशेषमात्रगुणहानीः प्रदर्श्य तत्रस्थद्विके आत्मप्रमाणैकरूपेऽपनीते शेषमेकगुणहानिमात्रविशेषमिति तस्मिन् वि ८ १ संदृष्टिनिमित्तमुपर्यधो द्वाभ्यां गुणिते प्रथमगुणहानिप्रथमस्पर्धकवर्गणाप्रदेशेभ्यो द्वितीयगुणहानिप्रथमस्पर्धकप्रथमवर्गणाप्रदेशा द्विगुणहीनाः स्फुटं दृश्यंते व ९ वि ८ (१—/२) २ गुणिते तन्न्यासोऽयं व ९ वि १६ (१—/२) एवं स-

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेत्र नेतव्यं। इतः परं सर्वाविभागप्रतिच्छेदान् संकलयति—

तत्र जघन्यस्पर्धकस्यादिवर्गणायां एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाभिः गुणितायां स्थूलरूपेण जघन्यस्पर्धकं स्यात्। व वि १६।४। एतदाद्युत्तरैक-
१–
गुणहानिस्पर्धकशलाकागच्छसंकलनायां ऋणसहितं प्रथमगुणहानिद्रव्यमिदं व वि १६ ४ ९ ९ अत्र प्रथमस्पर्धके ऋणमानीयते—
२

तत्र तावद् द्वितीयादिवर्गणासु जघन्यवर्गस्योपरि एकाद्येकोत्तराविभागप्रतिच्छेदधनं पृथक् संस्थाप्यं, तत्संदृष्टिः—

वि १६–३	३
वि १६–२	२
वि १६–१	१

अत्रस्थं ऋणमपि पृथक् संस्थाप्यं, तत्संदृष्टिः

वि ३	३
वि २	२
वि १	१

अत्र संकलनानिमित्तं प्रथमपंक्तेर्गुणकारेष्वेकैकरूपे सर्वत्र पृथक्स्थापिते ऋणद्वयं—

वि २	३
वि १	२
०	
०	

वि १	३
वि १	२
वि १	१
०	

धनं

वि १६	३
वि १६	२
वि १६	१

अत्र ऋणद्वये चरमराशेरेकविशेषाद्युत्तररूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनमात्रं वि ३।४ द्वि-
२।१

रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छद्विगुणद्विकवारसंकलनमात्रविशेषु वि २ ३ ४ २ साधिकं कृत्वा वि २ २ ३ ४ अनेन रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशला-
३ २ १ ३ २ १

कासंकलनमात्रादिवर्गणाप्रदेशेषु किंचिदूनितेषु शेषधनमिदं वि १६ ३ ४ पुनरपनीताधिकाविभागप्रतिच्छेदशेषजघन्यस्पर्धकरचनेयं—
२

व वि	१६-३
व वि	१६-२
व वि	१६-१
व वि	१६

अत्र द्वितीयादिवर्गणास्थं ऋणं पृथक् स्थाप्यं। तत्संदृष्टिः—

व वि	३
व वि	२
व वि	१

अस्य संकलनं रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकाग-
च्छसंकलनगुणितजघन्यवर्गमात्रविशेषः व वि ३ ४ तच्च प्रागानीताधिकाविभागप्रतिच्छेदाधिकधनमिदं वि १६ ३ ४ जघन्यवर्गमात्रासंख्यातलोक-
२ १ २ १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मात्रगुणकाराभावान्न विवक्षितं तत एव द्वितीयादिस्पर्धकानां द्वितीयादिवर्गणासु अपि एकाद्येकोत्तरक्रमस्थिता विभागप्रतिच्छेदधनानि न विवक्षितानि।

संप्रति द्वितीयस्पर्धकऋणानयने अविभागोत्तररहितद्वितीयस्पर्धकमिदं

३–
व २ वि १६–४
२–
व २ वि १६–४
१–
व २ वि १६–४
व २ वि १६–४

अत्रस्थमृणं पृथक्संस्थाप्य

३–
व २ वि ४
२–
व २ वि ४
१–
व २ वि ४
व २ वि ४

अधिकरूपरचनेयं–

व २ वि ३
व २ वि २
व २ वि १

अस्याः संकलनाज्जघन्यवर्गमात्रविशेषाद्युत्तररूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनं द्विगुणितं स्यात् ।

व वि ३ ४ २ (२) इदं प्रथमस्पर्धकऋणस्योपरि स्थाप्यं । शेषमिदं

व २ वि ४
व २ वि ४
व २ वि ४
व २ वि ४

त्रैराशिकसिद्धप्रमाणं जघन्यवर्गमात्रविशेषः एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण द्विगुणरूपोनगच्छसंकलनेन च गुणितः द्वितीयपंक्तिऋणमिदं व वि ४ ४ १ २ स्वकीयपूर्वऋणपार्श्वे स्थापयेत् । एते द्वे द्वितीयस्पर्धकऋणे स्यातां । पुनरविभागप्रतिच्छेदोत्तररहिततृतीयस्पर्धकमिदं

३—
व ३ वि १६—४ २
२—
व ३ वि १६—४ २
१—
व ३ वि १६—४ २
व ३ वि १६—४ २

अत्रस्थमृणं पृथक् संस्थाप्य

३–
व ३ वि ४ २
२–
व ३ वि ४ २
१–
व ३ वि ४ २
व ३ वि ४ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अस्याधिकरूपस्थापनेयं

व	३	वि	३
व	३	वि	२
व	३	वि	१

अस्याः संकलनाजघन्यवर्गमात्रविशेषाद्युत्तररूपोनस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनं त्रिगुणितं स्यात्—

व वि ३ । ४ । ३ (३ के नीचे २) इदं द्वितीयस्पर्धकप्रथमऋणस्योपरि स्थाप्यं । शेषमिदं

व	३	वि	४ ।	२
व	३	वि	४ ।	२
व	३	वि	४ ।	२
व	३	वि	५ ।	०

त्रैराशिकोत्पन्नराशिप्रमाणं जघन्यवर्गमात्रविशेषः एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण द्विगुणरूपोनगच्छसंकलनेन च गुणितः व वि ४ ४ ३ २ । इदं द्वितीयस्पर्धकद्वितीयऋणपंक्तेरुपरि स्थाप्यं । एते द्वे तृतीयस्पर्धकऋणे भवतः । एवं प्रथमगुणहानौ प्रतिस्पर्धकं प्रथमपंक्तौ रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकासंकलनागुणितजघन्यवर्गमात्रविशेषाणां गच्छमात्राः गुणकारा भूत्वा प्रथमपंक्तिऋणानि, द्वितीयपंक्तौ तु स्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गगुणितजघन्यवर्गमात्रविशेषाणां रूपोनगच्छद्विगुणसंकलनमात्राश्च गुणकारा द्वितीयपंक्तिऋणानि भवंति—

प्रथमपंक्तिऋणं

व	वि	३/२	४	९
व	वि	३/२	४	८
		०		
		०		
		०		
व	वि	३/२	४	३
व	वि	३/२	४	२
व	वि	३/२	४	१

द्वितीयपंक्तिऋणं

व	वि	४	४	८/२	९	२
व	वि	४	४	७/२	८	२
			०			
			०			
			०			
व	वि	४	४	२/२	३	२
व	वि	४	४	१/२	२	२
				०		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एषां संकलनायां रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकागच्छद्विगुणद्विकवारसंकलनगुणितस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गगुणितजघन्यवर्गमात्रविशेषाः द्वितीयपंक्तिसर्वऋणं भवति व वि ४।४।९।९।९ (१, १—, ३) पुनर्गुणहानिस्पर्धकशलाकागच्छसंकलनेन रूपोनस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनेन च गुणिते जघन्यवर्गमात्रविशेषाः प्रथमपंक्तिसर्वऋणं स्यात् व वि ३ ४ ९ ९ (२, २, १—) इदं मेलापयितुं द्वितीयपंक्तिसर्वऋणसमासचरमगुणकारे एकरूपचतुर्थांशे प्रक्षिप्ते उभयपंक्तिऋणं स्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ (३, १—) इदं प्रथमगुणहानिऋणं संदृष्टिनिमित्तं द्विकेन उपर्यधो गुणितं व वि ४ ४ ९ ९ ९ २ (६, १—) प्राक् सामान्यानीतप्रथमगुणहानिद्रव्य व वि १६ ४ ९ ९ (२, १—) स्थं दोगुणहानिं द्विकेन संभेद्य द्विकमग्रे संस्थाप्य गुणहानिं संभेद्य एकगुणहानिस्पर्धकशलाकागुणितस्पर्धकवर्गणाशलाकाः कृत्वा ४ । ९ । चतुष्कं चतुष्कस्य नवकं नवकस्य च पार्श्वे संस्थाप्य त्रिभिः समच्छेदीकृते व त्रि ४ ४ ९ ९ ९ ६ ६ (६, १—) तस्मिन् धनराशावपनीते तदा प्रथमगुणहानिविशुद्धसर्वविभागप्रतिच्छेदप्रमाणं स्यात् व वि ४ ४ ९ ६ ६ ४ (६) इदं प्रथमगुणहानावादिधनं, उत्तरधनं नास्ति । अथ द्वितीयगुणहानिद्रव्यमानीयते—

तत्र प्रथमादिस्पर्धकप्रथमादिवर्गणानां एकगुणहानिस्पर्धकशलाकोपरि स्थिताधिकरूपाणि पृथक्कृत्य तेषु पूर्वं संकलितेषु प्रथमगुणहानिद्रव्यस्यार्धं स्यात् । व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ (६ २) इदमादिधनसंज्ञितं प्राक्तनप्रथमगुणहानिद्रव्यस्योपरि स्थाप्यं प्रथमगुणहानिप्रथमवर्गणार्धं एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाभिरेकगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिश्च संगुणितं द्वितीयगुणहानिप्रथमस्पर्धकं स्यात् ।
व वि १६ ४ ९ (२) अयं राशिः प्रतिस्पर्धकं गच्छमात्रमत्रस्थितरूपेण तिष्ठतीति त्रैराशिकक्रमेण गुणहानिस्पर्धकशलाकागुणितो द्वितीयगुणहानौ ऋणसहितमुत्तरधनं भवति व वि १६ ४ ९ ९ (२) अस्य ऋणमानीयते—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उत्तरधनप्रथमस्पर्धकसंस्थानमिदं व ९ वि/२ १६—३ अत्र द्वितीयादिवर्गणास्थितमृणं पृथक् संस्थाप्य व ९ वि/२ ३

व ९ वि/२ १६—२ व ९ वि/२ २

व ९ वि/२ १६—१ व ९ वि/२ १

व ९ वि/२ १६

संकलितं रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनगुणितजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषं एकगुणहानिस्पर्धकशलाकागुणितं स्यात्—व वि/२ ३/२ ४/३ ९ पुनरुत्तरधनस्य

द्वितीयस्पर्धकमिदं— व ६ वि/२ १६—४/२ अत्रस्थमृणं पृथक् संस्थाप्य व ६ वि/२ ४/२ अत्रतनाधिकरूपस्थापनेयं व ६ वि/२ ३

व ९ वि/२ १६—४/१ व ९ वि/२ ४/१ व ९ वि/२ २

व ९ वि/२ १६—४ व ९ वि/२ ४ व ९ वि/२ १

व ६ वि/२ १६—४ व ९ वि/२ ४

संकलिता रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनगुणितजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषा एकगुणहानिस्पर्धकशलाकागुणिता व वि/२ ३/२ ४/१ ६

प्रथमस्पर्धकऋणस्योपरि स्थाप्या। शेषमिदं व ६ वि/२ ४ त्रैराशिकोत्पन्नप्रमाणमेकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण एकगुणहानिस्पर्धकशलाका-

व ६ वि/२ ४

व ९ वि/२ ४

व ९ वि/२ ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भिश्च गुणितजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषं द्वितीयस्पर्धकद्वितीयपंक्तिऋणं स्यात् व वि ४ ४ ९ ३ स्वपूर्वऋणपार्श्वे स्थाप्यं। एतौ द्वौ राशी द्वितीयस्प-
                                                                                                                  २

धंकऋणं भवतः। पुनरुत्तरधनतृतीयस्पर्धकरचनेयं—

व	९	वि / २	३ / १६–४ / २	। २
व	६	वि / २	१६–४ / १	२
व	६	वि / २	१६–४	२
व	९	वि / २	१६–४	२

अत्रतनमृणं पृथक्संस्थाप्य—

व	६	वि / २	३ / ४ / २	। २
व	९	वि / २	४ / १	। २
व	९	वि / २	४	। २
व	९	वि / २	४	। २

अत्रस्थाधिकरूपऋणविन्यासोयं—

व	६	वि / २	३
व	९	वि / २	२
व	९	वि / २ / ०	१

संकलितो रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलनेन एकगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिश्च

गुणितजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषः व वि ३ ४ ६ द्वितीयस्पर्धकप्रथमपंक्तिऋणस्योपरि स्थाप्यः शेषमिदं—
                                                              २ २

व	९	वि / २	४	२
व	९	वि / २	४	२
व	९	वि / २	४	२
व	६	वि / २	४	२

त्रैराशिकेनो-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्पन्नप्रमाणं जघन्यवर्गमात्रस्वविशेषं एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण द्विगुणितैकगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिश्च गुणितं व वि/२ ४ ४ ९ २ द्वितीयस्पर्धक द्वितीयऋणस्योपरि स्थाप्यं। उभौ राशी तृतीयस्पर्धकऋणं भवतः। अग्रे चतुर्थादिस्पर्धकेषु उत्तरधनस्य ऋणानयनं तु प्रथमपंक्तावव-स्थितत्वेन——

व	वि/२	३/२	४	९
व	वि/२	३/२	४	९
		० ०		
व	वि/२	३/२	४	९
व	वि/२	३/२	४	९
व	वि/२	३/२	४	९
प्रथमपंक्तिऋणं				

व	वि/२	४	४	९	८
व	वि/२	४	४	९	७
	० ०				
व	वि/२	४	४	९	२
व	वि/२	४	४	९	१
		०			
द्वितीयपंक्तिऋणं					

द्वितीयपंक्तौ रूपोनगच्छगुणितत्वेन च गमनदर्शनात्। सुगमं। ततो रूपोनगुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनया एकगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिः एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण च गुणितजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषः द्वितीयपंक्तिसर्वऋणं स्यात्। व वि/२ ४ ४ ९ ६/२ ९ (१८) पुनरेकगुणहानि-स्पर्धकशलाकाभिः रूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकासंकलनेन च गुणितजघन्यवर्गमात्रस्वविशेषः सर्वत्रावस्थितरूपेण तिष्ठति इति त्रैराशिकक्रमेण एकगुणहानिस्पर्धकशलाकागुणितः प्रथमपंक्तिऋणं स्यात्। व वि/२ ३/२ ४ ६ ९ इदं मेलापयितुं द्वितीयपंक्तिसर्वऋणस्य ऋणसहितस्थितगुण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कारे एकरूपे प्रक्षिप्ते उभयपंक्तिसर्वऋणं स्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ (२, २) इदं पुनः पूर्वं स्थूलरूपानीतोत्तरधने व वि १६ ४ ९ ९ (२) संशोध्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४—१ (२, २) उपर्यंत्रत्रिभिर्गुणितं द्वितीयगुणहानौ शुद्धमुत्तरधनं स्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ ९ (९।२) पुन-स्तृतीयगुणहानिद्रव्यमुच्यते—

तत्र प्रथमादिवर्गणासु द्विगुणगुणहानिस्पर्धकशलाकानामुपरिस्थिताधिकरूपाणि स्वीकृत्य प्राक् संकलितानि द्वितीयगुणहान्यादिधनार्धं स्यात् व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ (६ २ २) इदं द्वितीयगुणहान्यादिधनस्योपरि स्थाप्यं । पुनरुत्तरधनमानीयते—

प्रथमगुणहानिप्रथमवर्गणाचतुर्भागः एकस्पर्धकवर्गणाशलाकाभिः द्विगुणगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिश्च गुणितः तृतीयगुणहानिप्रथमस्पर्धकं स्यात् व वि १६ ४ ९ २ (४) एतावत्प्रतिस्पर्धकमस्तीति गुणहानिस्पर्धकशलाकागुणितं ऋणसहितोत्तरधनं स्यात् व वि १६ ४ ९ ९ २ (४)

अत्रत्यमृणमानीयते—

जघन्यवर्गगुणस्वविशेषाद्युत्तररूपोनैकस्पर्धकवर्गणाशलाकागच्छसंकलना द्विगुणगुणहानिस्पर्धकशलाकागुणिता प्रथमस्पर्धकऋणं स्यात्— व वि ३ ४ ९ २ (४ २) एतावत्प्रतिस्पर्धकमस्तीति गुणहानिस्पर्धकशलाकागुणिते प्रथमपंक्तिसर्वऋणं स्यात् व वि ३ ४ ९ २ ९ (४ २) पुनर्जघन्यवर्गगुणस्वविशेषः एकस्पर्धकवर्गणाशलाकावर्गेण द्विगुणगुणहानिस्पर्धकशलाकाभिश्च गुणितो द्वितीयस्पर्धकद्वितीयपंक्तिऋणं स्यात् व वि ४ ४ ९ २ (४)

एवं तृतीयादिस्पर्धकेषु द्विगुणत्रिगुणादिक्रमेण रूपोनगच्छमात्रमस्तीति रूपोनैकगुणहानिस्पर्धकशलाकासंकलनेन गुणने द्वितीयपंक्तिसर्वऋणं स्यात् । व वि ४ ४ ९ २ ९ ९ (४, २) अस्मिन् प्रथमपंक्तिसर्वऋणं निक्षेप्तुं द्वितीयपंक्तिसर्वऋणे ऋणसहितस्थितैकगुणकारे एकरूपे प्रक्षिप्ते उभयपंक्तिसर्वऋणं स्यात् । व वि ४ ४ ९ ९ ९ २ (४, २) इदं प्राक्स्थूलरूपानीतोत्तरधने व वि १६ ४ ९ ९ २ (४) संशोध्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ २ । ३ (४, २)

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपर्यधस्त्रिभिर्गुणिते तृतीयगुणहानौ शुद्धमुत्तरधनं स्यात्-- व वि ४ ४ ९ ९ ६ ६ २ एवं चतुर्थादिगुणहानिषु चरमगुणहानिपर्यंतासु उभयध-
४ ६ २ २

नानि अर्धार्धक्रमाण्यपि उत्तरधनानि रूपोनपदगुणितानि स्युः। संदृष्टिः---

आदिधनं	उत्तरधनं
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ० ६ प २ ० a ०	१ – व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ प ० a ० ६ प a a ० a २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६ २ २ २	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ ३ ६ २ २ २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६ २ २	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ २ ६ २ २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६ २	व वि ४ ४ ६ ६ ६ ६ १ ६ २
व वि ४ ४ ६ ६ ६ ४ ६	०

१ – १ – १ –
संकलनसूत्रं पदमात्र प गुणान्योन्याभ्यासं प व्येकं प सहोत्तराद्यंशगुणं १३ प विपदब्नचयं १३ प---९ प व्येकपदा
a a a a a a a a

१ – १ –
प न्योन्यगुण प हताद्यच्छिदिना प ६ विभजेत् इति भक्तराशिं स्वावस्थितगुणस्य गुणाकारं कृत्वा व वि ४ ४ ६ ९ ९ १३ प--- ९ प
a a a २ a २ a a a
६ प २
a

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऋणे पृथक्स्थापिते धन ऋणे एतावती स्यातां व वि ४ ४ ९ ९ ९ १२ प १ ० ६ प a a २ व वि ४ ४ ९ ९ ९ ९ प ऋण ऋणार्णयोरैक्यमिति धनस्थं a a ६ प a २

उभयधनगुणकारांशमात्रं ऋणं पृथक्कृत्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ १२ १ ० ६ प a २ ऋणे प्रक्षिप्य व वि ४ ४ ९ ९ ९ १२ प a a ६ प a २ अपवर्तितं रूपासं-

ख्यातैकभागः स्यात् १ a धनस्य गुणाकारभागहारावपवर्त्य भक्त्वा तृतीयभागे तद्रूपासंख्यातैकभागेऽपनीते किंचिदूनत्रिभागाधिकरूपचतुष्टय गुणकारः स्यात्। व वि ४ ४ ९ ९ ९ ४ १— ३ अमी सर्वजघन्योपपादयोगस्थानस्याविभागप्रतिच्छेदाः प्राग्वत् चारिनवगा अट्ठ इति गुणहानिमुत्पाद्य च-

तुर्गुणकारे एकद्विकं स्वीकृत्य दोगुणहानिं कृत्वा चतुष्केन संगुण्य जघन्यस्पर्धकमुत्पाद्य द्विगुणैकगुणहानिस्पर्धकशलाकावर्गेण संगुणय व वि १६ ४ ९ ९ २ चरमगुणकारद्विकं प्राग्वत् किंचिदूनषड्भागेन व वि १६ ४ ९ ९ १—२ २२ साधिकं कृत्वा प्र व वि १६ ४। फ १। इ व वि १६ ४ ९ ९ २ — —।

लब्धमेतावंति स्पर्धकानि ९ ९ २। साधिकद्विगुणगुणगुणहानिस्पर्धकशलाकावर्गमात्राणि a — a २। इमानि प्रतरासंख्येयभाग इति नाशंक-

नीयं 'इगि ठाणफड्डयाओ' इति सूत्रेण श्रेण्यसंख्यातैकभागप्रतिपादनात्। a ॥ २३० ॥ तज्जघन्ययोगस्थानस्योपरि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रजघन्यस्पर्धकानि वर्धित्वा वर्धित्वा एकैकमपूर्वस्पर्धकं, एवं गत्वोत्कृष्टस्थानमुत्पद्यते इत्यग्रतनसूत्रद्वयेन आह—

स० चं०—प्रथम गुणहानितैं लगाय अंत गुण हानिपर्यंत सर्व स्पर्धकनिविषैं तहां तहां प्रथम वर्गणा तौ जघन्य वर्गकौं स्पर्धकनिकी संख्याकरि गुणैं हो है। बहुरि द्वितीयादि वर्गणा अनुक्रमतैं एक एक अविभाग प्रतिच्छेद बधाएं हो है। अब 'अविभागपडिच्छेदो' इत्यादिक इन गाथानिका अर्थ स्पष्ट दिखाइए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अविभाग प्रतिच्छेद १ वर्ग १ वर्गणा १ स्पर्धक १ गुणहानि १ स्थान १ इतने भेद कहे। तहां एक जीवकैं एक समयविषैं संभवै है ऐसा जो गुणहानिका समूह सो स्थान कहिए। बहुरि स्पर्धकनिका समूह सो गुणहानि कहिए। बहुरि अनुक्रमतैं वृद्धि हानिरूप जो वर्गणा तिनिका समूह सो स्पर्धक कहिए। बहुरि वर्गका समूह सो वर्गणा कहिए। बहुरि अविभाग प्रतिच्छेदनिका समूह सो वर्ग कहिए। बहुरि जीवका प्रदेशकैं कर्मके ग्रहण करनेकी शक्तिविषैं जघन्य वृद्धि सो अविभाग प्रतिच्छेद कहिए। इहां योगका अधिकार है तातैं योगरूप शक्तिका विभाग रहित अंशका ग्रहण कीया। जघन्यवृद्धिका प्रमाण कहा? सो कहिए है—

लोक प्रमाण जीवके प्रदेश हैं तिनिका स्थापन करि इन सर्व प्रदेशनिविषैं जिस प्रदेशमैं योगकी जघन्य शक्ति पाइए तिस प्रदेशकौं जुदा ग्रहण करि तीहि प्रदेशविषैं जितनी योग शक्ति पाइए है ताकौं अपनी बुद्धिकारि फैलावनी। बहुरि तिस जघन्य शक्तितैं अधिक अर अन्य शक्तितैं हीन ऐसी शक्ति जामैं पाइए ऐसा कोई अन्य प्रदेश ताका ग्रहण करि तिसमाही जितनी योगशक्ति पाइए है ताकौं जो पहिले जघन्य शक्ति फैलाई थी ताके ऊपरि बुद्धि ही करि फैलावनी सो तिस जघन्य शक्तितैं ऊपरि स्थापन करी जो शक्ति जितनी बंधती होइ तिस बंधती प्रमाणका नाम योगनिका अविभाग प्रतिच्छेद है। भावार्थ—जो जघन्य शक्ति लीए प्रदेश हैं तिसतैं एक अविभाग अंशकरि अधिक शक्तिका धारी दूसरा प्रदेश तिसविषैं तिस जघन्य शक्तितैं जितनी शक्ति बधती होइ सो तिस बधती प्रमाणका नाम योगनिका अविभाग प्रतिच्छेद है। तिस अविभाग प्रतिच्छेदका प्रमाणकरि पहिलैं फैलाई थी जो प्रदेशकी जघन्य शक्ति ताका खंड कीजिए तब असंख्यात लोकप्रमाण खंड हो हैं। भावार्थ-एक एक खंड अविभाग प्रतिच्छेदका प्रमाणके समान कीजिए तौ जिस प्रदेशमैं जघन्य शक्ति कही थी तिस प्रदेशकी जघन्य शक्तिका असंख्यात लोक प्रमाण खंड हो है तातैं असंख्यात लोक प्रमाण अविभाग प्रतिच्छेदनिका समूह जघन्य शक्ति है ताकौं वर्ग कहिए। ताहीतैं एकवर्गविषैं असंख्यात लोक प्रमाण अविभाग प्रतिच्छेद कहे हैं तिस वर्गकी सहनानी 'व' ऐसा अक्षर जानना। बहुरि ताके आगैं जिन प्रदेशनिविषैं जिनिविषैं जघन्य शक्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाण पाइए ऐसे जितने प्रदेश होंहि तितने लिखने सो ऐसैं जघन्य शक्ति प्रमाण शक्तिके धारक जीवके प्रदेश असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण हैं। काहेतैं? लोक प्रमाण जीवके प्रदेशनिकौं द्व्यर्धगुण हानिका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितने जघन्य शक्ति प्रमाण शक्तिके धारक प्रदेश हैं सो एक गुण हानिविषैं जितना वर्गणाका प्रमाण कह्या है तिस प्रमाणका ड्योढा कीजिए सो द्व्यर्ध गुण हानिका प्रमाण है। सो जगच्छ्रेणीके असंख्यातवे भाग मात्र ही है सो याका भाग जीवके प्रदेशनिकौं दीएं असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण प्रदेशनिका प्रमाण हो है सो इतने प्रदेशनिका समूहकौं प्रथम वर्गणा कहिए। एक प्रदेश संबंधी शक्तिका नाम वर्ग कह्या था इहां असंख्यात जगत्प्रतरप्रमाण प्रदेशनिका समूहका नाम वर्गणा है ताहीतैं एक वर्गणाविषैं असंख्यात जगत्प्रतर प्रमाण वर्ग कहे हैं। बहुरि तिस जघन्य शक्तिरूप वर्गविषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण कह्या तिसतैं एक अधिक अविभाग प्रतिच्छेद जिनमैं पाइए ऐसी शक्तिके धारक जितने प्रदेश होंहि तितने प्रदेश ताके ऊपरि लिखने। ते प्रदेश प्रथम वर्गणाविषैं जितने प्रदेश कहे थे तिनतैं एक विशेष घाटि जानने सो प्रथमवर्गणाविषैं जो प्रदेशनिका प्रमाण है ताकौं दोगुण हानिका भाग दीए जो प्रमाण होइ सोई विशेषका प्रमाण जानना सो विशेषकी सहनानी 'वि' ऐसा अक्षर जानना। जो एक गुण हानिविषैं वर्गणानिका प्रमाण ताकौं दूणा कीजिए सो दोगुणहानिका प्रमाण जानना। सो प्रथम वर्गणाका प्रदेशनिका प्रमाणमैंस्यौं विशेषका प्रमाण घटाए जो प्रमाण रहे तितने प्रदेशनिका समूहकौं द्वितीय वर्गणा कहिए। इहां पूर्वोक्त जघन्य शक्तितैं एक अविभाग प्रतिच्छेदकरि अधिक शक्तिका धारक जो प्रदेश ताकौं वर्ग कहिए इनका समूह सो द्वितीय वर्गणा जाननी। बहुरि द्वितीय वर्गणासंबंधी वर्गविषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं तातैं एक अविभाग प्रतिच्छेद जिनमैं बंधता होइ ऐसी शक्तिके धारक जितने प्रदेश होंइ तितने ताके ऊपरि लिखने। ते प्रदेश द्वितीय वर्गणाविषैं जितने कहे थे तिनमैंस्यौं विशेषका प्रमाण घटाएं जितना प्रमाण रहै तितने जानने। इहां द्वितीय वर्गणा संबंधी वर्गके अविभाग प्रतिच्छेदनितैं एक अविभाग प्रतिच्छेद अधिक शक्तिका धारक प्रदेशकौं वर्ग कहिए तिनका समूह तृतीय वर्गणा जाननी। इसही अनुक्रमतैं एक एक अविभाग प्रतिच्छे-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दकरि अधिक शक्तिकौं लीऐं एक एक विशेषकरि घटते घटते प्रमाणकौं लीएं जो वर्ग तिनका समूहरूप एक एक वर्गणा हो है सो ऐसैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा होइ तब प्रथम स्पर्धक होइ ताहीतैं एक स्पर्धक विषैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागप्रमाण वर्गणा कही है ताकी सहनानी च्यारिका अंक है ४। इस प्रथम स्पर्धक हीकौं जघन्य स्पर्धक कहिए है। बहुरि इस प्रथम स्पर्धककी अंतकी वर्गणाका वर्गविषैं अविभाग प्रतिच्छेदनिका जो प्रमाण भया ताके ऊपर प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणासंबंधी जघन्य वर्गणाविषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं तीहिस्यौं दूणा अविभाग प्रतिच्छेद जिनिके होंइ ऐसे शक्तिके धारक पाइये। तिसतैं घाटि शक्तिका धारक कोई प्रदेश न पाइये। तातैं जिन विषैं जघन्य वर्गतैं दूणा अविभाग प्रतिच्छेद पाइये ऐसी शक्तिके धारक जितने प्रदेश होंइ तिनकी रचना प्रथम स्पर्धककी अंतकी वर्गणाके ऊपरि करनी ते प्रदेश प्रथम स्पर्धककी अंतकी वर्गणाका प्रदेशनिके प्रमाणमैंस्यौं पूर्वोक्त एक विशेषका प्रमाण घटाएं जो प्रमाण रहै तितने जानने। इहां जघन्य वर्गतैं दूणां अविभाग प्रतिच्छेदरूप शक्तिका धारक जो प्रदेश सो वर्ग जानना। तिनका जो समूह सो द्वितीय स्पर्धककी प्रथमवर्गणा जाननी। बहुरि इस प्रथम वर्गणाके वर्गतैं एक अविभाग प्रतिच्छेद जामैं अधिक होइ ऐसी शक्तिके धारक जे प्रदेश तेई भए वर्ग तिन द्वितीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका प्रदेशनिका प्रमाणतैं एक विशेषके प्रमाणकरि हीन जे प्रदेशरूप वर्ग तिनिका जो समूह सो द्वितीय स्पर्धककी द्वितीयवर्गणा है। ऐसैं ही अनुक्रमतैं एक एक अविभाग प्रतिच्छेदकरि अधिक शक्तिकौं लीएं एक एक विशेषकरि घटते प्रमाणकौं लीएं जे वर्ग तिनका समूहरूप एक एक वर्गणाकौं होत संतैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा होइ। तिन वर्गणानिका समूह द्वितीय स्पर्धक जानना।

बहुरि तिस द्वितीय स्पर्धककी अंतकी वर्गणाके ऊपरि प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणासंबंधी जघन्यवर्गके अविभाग प्रतिच्छेदनितैं तिगुणा अविभाग प्रतिच्छेद जाविषैं पाइए ऐसी शक्तिके धारक प्रदेश पाइए, घाटि शक्तिके धारक नाहीं। तातैं जघन्य वर्गतैं तिगुणा अविभाग प्रतिच्छेद रूप शक्तिके धारक जे प्रदेश, तेई वर्ग तिन द्वितीय

४२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्पर्धककी अंतकी वर्गणाका प्रदेशनितैं एकविशेषकरि हीन प्रदेशरूप वर्गनिका जो समूह सो तृतीय स्पर्धककी प्रथम वर्गणा है। यातैं ऊपरि पूर्ववत् एक एक अविभाग प्रतिच्छेद करि अधिक शक्तिकौं लीएं एक एक विशेष करि हीन प्रमाणकौं लीएं वर्गनिका समूहरूप एक एक वर्गणाकौं होतैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणा होइ। तिन वर्गणानिका समूह तृतीय स्पर्धक है। ऐसैं ही अनुक्रमतैं—'फड्डयसंखाहिगुणं जहण्णवग्गं तु तत्थ तत्थादी' इत्यादि सूत्रोक्त अनुक्रमकरि जघन्य वर्गकौं स्पर्धकनिकी संख्याकरि गुणैं प्रथम वर्गणा होइ। प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणा संबंधी जघन्य वर्गके अविभाग प्रतिच्छेदनिके प्रमाणकौं चौगुणा कीएं चौथा स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके वर्गका अविभाग प्रतिच्छेदानिका प्रमाण होइ। पांच गुणा कीएं पांचवां स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका होइ। छह गुणा कीए छठा स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका होइ। ऐसैं जेथवां स्पर्धककी प्रथम वर्गणा विवक्षित होइ तितना गुणां जघन्य वर्गकौं कीए तिस स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका वर्गका अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण आवै। बहुरि प्रथम वर्गणाका वर्गतैं एक एक अविभाग प्रतिच्छेद बधाएं द्वितीयादिक वर्गणानिके वर्गनिका अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है अर वर्गणा वर्गणानिविषैं एक एक विशेषकरि हीन वर्गनिका प्रमाण अनुक्रमतैं जानना। जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण वर्गणानिका समूह एक स्पर्धक जानना। सो ऐसैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्पर्धक भएं एक गुणहानि हो है। ताहीतैं एक गुणहानिविषैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्पर्धक कहे हैं। याकी सहनानी नवका अंक जानना। बहुरि याके ऊपर द्वितीय गुणहानिका प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाके प्रदेश रूप वर्ग हैं ते प्रथम गुण हानिका प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणातैं आधा जानने। इस वर्गणाके वर्गनिविषैं अविभाग प्रतिच्छेदानिका प्रमाण एक अधिक एक गुणहानिके स्पर्धकनिका प्रमाणकरि जघन्य वर्गके अविभाग प्रतिच्छेदनिकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितना जानना सो अविभाग प्रतिच्छेदनिका अनुक्रम तौ पूर्वोक्त ही जानना। अर प्रदेशरूप वर्गनिका प्रमाण प्रथम गुणहानिका प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणाका प्रमाण तैं द्वितीय गुणहानिका प्रथमस्पर्धककी प्रथमवर्गणाका प्रमाण आधा जानना। यामैं एक विशेष घटाएं द्वितीय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्गणाका प्रमाण हो है सो इस द्वितीय गुणहानिविषैं विशेषका प्रमाण प्रथम गुणहानिके विशेषके प्रमाणत आधा जानना। ऐसैं ही एक एक विशेष घटाएं तृतीयादि वर्गणानिका प्रमाण जानना। इसही प्रकार दूसरी गुणहानितैं तीसरी गुणहानिकी वर्गणानिविषैं वर्गनिका प्रमाण वा विशेषका प्रमाण आधा आधा जानना। ऐसैं ही गुणहानि गुणहानि प्रति आधा २ प्रमाण जानना सो इस प्रकार पल्यका असंख्यातवें भाग प्रमाण गुणहानि होइ तब एक योगस्थान होइ ताहीतैं एकस्थानकविषैं पल्यके असंख्यातवें भाग प्रमाण गुणहानि कही है। सो यहु सर्व कथन जघन्य योगस्थानका जानना। ऐसैं यहु कथन शक्तिकी प्रधानताकरि कीया है। अब प्रदेशनिकी प्रधानताकरि दिखाइए है तहां अंक संदृष्टिकरि कथन दिखाइए है—

सर्व जीवके प्रदेश इकतीससै ३१०० नानागुणहानि पांच ५, एक गुण हानिविषैं वर्गणाका प्रमाणरूप गुणहानि आयाम आठ ८, नाना गुण हानि प्रमाण दूवामाडि परस्पर गुणन कीएं अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण बत्तीस ३२ सो एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशि इकतीसका भाग सर्व द्रव्य इकतीससैकौं दीएं सौ १०० पाया। सो अंतकी गुणहानिका प्रमाण है। यातैं आदिकी गुणहानिपर्यंत दूणा दूणा प्रमाण है— १००,२००,४००,८००,१६०० याहीतैं आदिकी गुणहानितैं गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा द्रव्य कह्या है। तहां सर्व द्रव्य इकतीससैकौं किछू अधिक द्व्यर्धगुणहानिका भाग दीजिए सो गुणहानिका आयाम आठ ताका ड्योढा बारह अर किछू अधिक कहनेतैं एकका चौसठिभागमें भाग सात अधिक १२ $\frac{७}{६४}$ इसका भाग दीएं दोयसै छप्पन पाए सो प्रथमगुणहानिका प्रथम स्पर्धककी प्रथम वर्गणा जाननी। याकौं दूणा गुणहानिका आयामरूप जो दोगुणहानि सोलह ताका भाग प्रथम वर्गणाकौं दीए जो प्रमाण सोलह आया सोई विशेषका प्रमाण जानना। विशेषकौं दोगुण हानि करि गुणैं प्रथम वर्गणाका प्रमाण हो है। सो प्रथम वर्गणातैं एक एक विशेष घटाए द्वितियादिक वर्गणा हो हैं। ऐसैं एक घाटि गुणहानिका आयाम सात सो इतना विशेष घटाए गुणहानिका अंतका स्पर्धककी अंतकी वर्गणा हो है। बहुरि गुणहानि गुणहानि प्रति आदि वर्गणातैं आदि वर्गणाका प्रमाण आधा आधा जानना अर विशेषका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भी प्रमाण आधा आधा जानना। जातैं प्रथम वर्गणाकौं दोगुणहानिका भाग दीएं विशेषका प्रमाण हो है। याही तैं दोगुणहानिकौं निषेकहार कहिए है। ऐसैं अंक संदृष्टिकरि कथन दिखाया।

प्रथमादिक गुणहानिसंबंधी आठ २ वर्गणानिविषैं वर्गनिका प्रमाण रूप यंत्र।

१४४	७२	३६	१८	९
१६०	८०	४०	२०	१०
१७६	८८	४४	२२	११
१९२	९६	४८	२४	१२
२०८	१०४	५२	२६	१३
२२४	११२	५६	२८	१४
२४०	१२०	६०	३०	१५
२५६	१२८	६४	३२	१६

याही प्रकार अर्थसंदृष्टिकरि कथन जानना। सव जीवके प्रदेश लोकप्रमाण नाना गुणहानि पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण एक गुणहानिका आयाम जगच्छेणी के असंख्यातवे भाग प्रमाण सो इनविषैं यथायोग्य कथन जानि लेना। ऊपरि कथन करि आए हैं तातैं इहां विशेष न कह्या है। बहुरि वर्ग वा वर्गणा वा स्पर्धक वा नाना गुणहानि वा जघन्य स्थानविषैं अविभाग प्रतिच्छेद मिलावनेका विधान इसही ग्रंथकी संस्कृत टीकाविषैं कह्या है सो मेरे बुद्धिकी मंदतातैं नीकैं समझनेमें न आया अर प्रयोजन तौ इतना ही है जो अविभागप्रतिच्छेदनिका जोड दिया अर कठिन कथन भएं मंद बुद्धीनिकी बुद्धि भ्रमरूप होइ तातैं इस बालबोधटीकाविषैं नाहीं लिख्या है। ऐसैं जघन्य योगस्थानकका कथन जानना॥ २२९॥

अंगुलअसंखभागप्पमाणमेत्तऽवरफड्ढयावड्ढी।
अंतरछक्कं मुच्चा अवरट्ठाणादु उक्कस्सं॥ २३०॥

अंगुलासंख्यभागप्रमाणमात्रावरस्पर्धकवृद्धिः।
अतरषट्कं मुक्त्वा अवरस्थानादुत्कृष्टं॥ २३०॥

जी० प्र०—तस्मात् सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य सर्वजघन्योपपादयोगस्थानादनंतरस्थानमादिं कृत्वा सर्वोत्कृष्टयोगस्थानोत्पत्तिपर्यंतं सांतरेषु निरंतरेषु सांतरनिरंतरेषु च अमीषु योगस्थानेषु निरंतरं सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि जघन्यस्पर्धकानि युगपत्प्रतिस्थानं वर्धंते तदा एकैकमुत्तरोत्तरस्थानमुत्पद्यते॥ २३०॥ तथा सति—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—सूक्ष्म निगोद लब्धि अपर्याप्तक जीवकैं पूर्वोक्त सर्वतैं जघन्य उपपाद योगस्थान पाइए है। तिसतैं अनंतर स्थानकौं आदि देकरि सर्वोत्कृष्ट योगस्थान पर्यंत सांतर वा निरंतर वा सांतर निरंतर सर्वही जे ए योगस्थान तिनविषैं एक एक योगस्थान प्रति निरंतर सूच्यंगुलका असंख्यातवे भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक युगपत् बंधै है तब उत्तरोत्तर स्थान हो है। प्रथम जघन्य स्थानतैं सूच्यंगुलका असंख्यातवैं भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक दूसरे स्थानविषैं बधती है। भावार्थ—जघन्य स्थानविषैं प्रथम गुणहानिका प्रथमस्पर्धकविषैं जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं तिनतैं सूच्यंगुलके असंख्यातवे भाग गुणै अविभाग प्रतिच्छेद जघन्य स्थानकके अविभाग प्रतिच्छेदनितैं ताके ऊपरि दूसरा योगस्थानविषैं बधती जानने। ऐसें ही दूसरे स्थानकतैं तीसरा स्थानकविषैं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बधती जानने। तीसरेतैं चौथाविषैं, चौथेतैं पंचमविषैं ऐसैंही सर्वोत्कृष्ट परिणाम योगस्थान पर्यंत एक एक स्थानविषैं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बधते जानने ॥ २३० ॥ बहुरि आगे कहिए है छह अंतर तिनकौं छोड़ जघन्य स्थानतैं लगाय उत्कृष्टपर्यंत जीवनिके योग स्थान हो हैं ऐसें होतैं कहा ? सो कहैं हैं—

सरिसायामेणुवरिं सेढिअसंखेज्जभागठाणाणि।
चडिदेक्केक्कमपुव्वं फड्ढयमिह जायदे चयदो ॥२३१॥

सदृशायामेनोपरि श्रेण्यसंख्येयभागस्थानानि।
चटितैकैकमपूर्वं स्पर्धकमिह जायते चयतः ॥ २३१ ॥

जी० प्र०—तत्सर्वजघन्ययोगस्थानस्य समानायामस्योपरि उक्तप्रमाणचयेन एकमपूर्वस्पर्धकमुत्पद्यते। कति स्थानानि गत्वा गत्वा ? इति चेत् १— यद्येतावत्सु अविभागप्रतिच्छेदेषु प्र—व वि १६ ४ २ a वर्धितेषु एकस्थानं फ स्था १ तदैतावत्सु इ व वि १६ ४ ९ ना a वर्धितेषु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

कति स्थानानि ? इति त्रैराशिकेन लब्धमात्राणि

				१—	
व	वि	१६	४	९	ना
व	वि	१६	४	२	अ
					a

अपवर्तितानि

१	—
६	ना
अ	२
	a

श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्राणि भवंति

—
a तथा तदनंतरं सदृशायामं द्वितीयस्थानमादिं कृत्वा श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्रतद्योग्ययोगस्थानानि सवृद्धिकानि गत्वा पुनरेकं द्वितीयमपूर्वस्पर्धक-मुत्पद्यते। एवमेकहानिगुणाकारशलाकामात्रे —a a ष्वपूर्वस्पर्धकेषु वर्धितेषु जघन्ययोगस्थानं द्विगुणं स्यात्। एवं द्विगुणद्विगुणक्रमेण गत्वा संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तजीवस्य सर्वोत्कृष्टयोगस्थानमुत्पद्यते। अस्य संदृष्टिः—

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

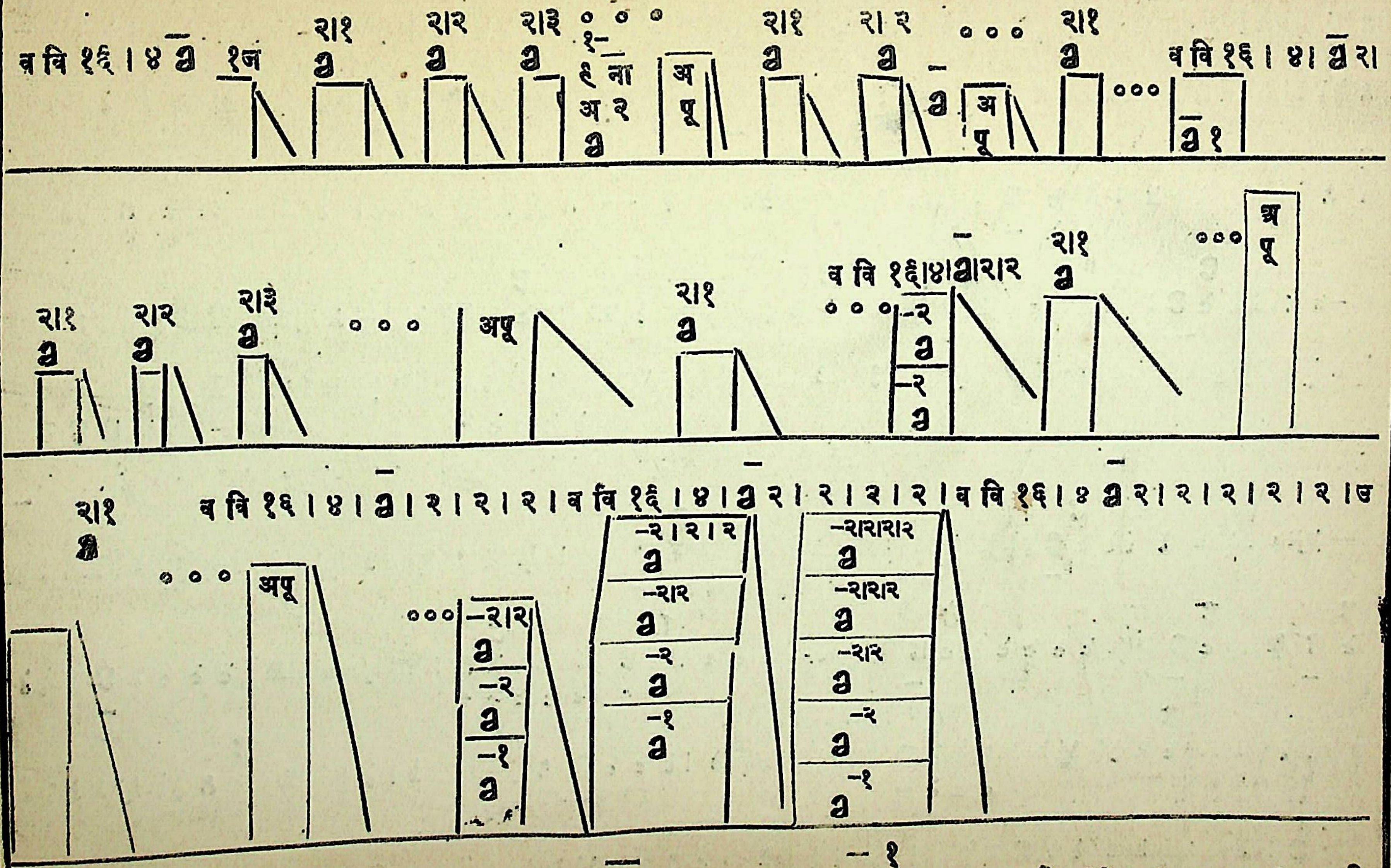

प्र—व वि १६ ४ २/व फ—स्था १ । इ—व वि १६ ४ व लब्धस्थानविकल्पाः व २/व पुनः प्र—व वि १६ ४ २/व फ—स्था १ ३ ५ वि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१६ ४ ä २ । लब्धस्थानविकल्पाः ä २ २ पुनः प्र—व वि १६ ४ २ फ—स्था १ । इ व वि १६ ४ ä २ २ लब्धस्थानविकल्पाः ä २ २ २ पुनः प्र व वि १६ ४ २ । फ—स्था १ । इ व वि १६ ४ ä २ २ २ । लब्धस्थानविकल्पाः ä २ २ २ १ पुनः प्र—व वि १६ ४ २ । फ—स्था १ इ व वि १६ ४ ä २ २ २ २ २ । लब्धस्थानविकल्पाः ä २ २ २ २ २ अंतधणं ä २ २ २ २ २ २ गुणगुणियं ä २ २ २ २ २ २ आदि ä २ विहीणं ä २ २१ रूऊणुत्तरभजियं इतीदं सर्वयोगस्थानविकल्पप्रमाणं भवति ä २ २१ इदं पुनः रूपोनगुणेन हतं गुणितं ä २ ३१ १ प्रभवेन भाजितं— ä २ — २ सैकं ३२ । यतिकृत्वो गुणभक्तं ३२ रूपं स्यात् तति भवेद् गच्छः, इत्यन्योन्याभ्यस्तगुणकारशलाकाः स्युः । जघन्यात् स्थानादुत्कृष्टं २ २ २ २ २

सर्वयोगस्थानविकल्पेषु यत्र यत्र जघन्यं द्विगुणं स्यात् तत्र तत्र कति कति विकल्पाः स्युः ? इति चेत् उच्यंते—एतावदविभागप्रतिच्छेदवृद्धौ एको विकल्पः तदा एतावद्वृद्धौ कति प्र—व वि १६ ४ २ फ—स्था १ इ व वि १६ ४ — । लब्धाः स्थानविकल्पाः एतावंतः ä २ १ पुनः प्र— व वि १६ ४ २ फ—स्था १ । इ व वि १६ ४ — २ लब्धस्थानविकल्पा एतावंतः ä २ २ पुनः प्र—व वि १६ ४ २ फ—स्था १ इ व वि १६ ४ — २ २ । लब्धस्थानविकल्पाः एतावंतः ä २ २ २ पुनः प्र—व वि १६ ४ २ । फ—स्था १ । इ व वि १६ ४ — २ २ २ । लब्धस्थानविकल्पाः एतावंतः ä २ २ २ २ एवं गत्वा सर्वोत्कृष्टयोगस्थाने इच्छाराशौ कृते प्र—व वि १६ ४ २ फ—स्था १ इ व वि १६ ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

— a छे a २ लब्धस्थानविकल्पाः एतावंतः — २ छे a a a २ एते च अंतधणं गुणगुणियं — a २ छे a a २ आदिविहीणं १ — २ छे a a a रूऊणुत्तरभजियं इति सर्वयोगस्थानविकल्पाः स्युः। त एव पुनः रूपोनगुणेन एकेन हताः — a २ छे १ a a प्रभवेन आदिस्थानविकल्पैर्भाजिताः — a २ छे १ २ a a – a a अपवर्तिताः छे १ a एकरूपसहिताः छे a यावतो वारान् गुणेन द्विकात्मकेन भक्ताः संतो रूपं जायंते ते वाराः तिर्यग्रूपेण नानागुणहानिशलाकाः स्युः ताश्च असंख्यातरूपैर्हीनपल्यवर्गशालाकामात्र्यो भवंति व — a कुतः पल्यवर्गशालाकाप्रमितद्विकसंवर्गोत्पन्नपल्यच्छेदराशेर्हीनरूपासंख्यातमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नासंख्यातस्य हारत्वसंभवात् ॥ २३१ ॥ अथानंतरं अभिधेयस्य प्रतिज्ञासूत्रमाह—

स० चं०—तीहि सर्वतैं जघन्य योग स्थानका समान आयामके ऊपरि पूर्वोक्त प्रमाण स्थानक स्थानकविषैं वृद्धिरूप चयकरि एक एक अपूर्व स्पर्धक उपजै है। सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धकनिके जेते अविभाग प्रतिच्छेद होंहि तिनकौं बधतैं एकस्थान होइ तो जघन्य स्थानका सर्व अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाणविषैं एक गुणहानिसंबंधी स्पर्धकनिकी संख्याकौं नाना गुणहानिकरि गुणित ताकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका भाग दीए जो प्रमाण होइ तितने जघन्यस्पर्धक वधैं कितने स्थानक होंहि ? ऐसैं त्रैराशिक कीएं लब्धराशिका प्रमाण जगच्छ्रेणीके असंख्यातवे भाग प्रमाण आया। बहुरि तैसैं ही ताके अनंतर समान आयामकौं लीए द्वितिय स्थानकतैं लगाय सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक एक स्थानकविषैं बधै ऐसैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक भएं एक दूसरा अपूर्व स्पर्धक उपजै है। बहुरि ताके ऊपरि जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थानक भएं तीसरा अपूर्व स्पर्धक हो हैं। ऐसैं ही एक गुण हानिविषैं जितना स्पर्धकनिका प्रमाण कह्या था तितने अपूर्व स्पर्धक भए जघन्य योग स्थान दूणा हो है। इहां अपूर्व स्पर्धक होनेका विधान मेरे समझनेमैं नीकैं न आया तातैं स्पष्ट नाहीं लिख्या है। भावार्थ—एक गुण हानिविषैं स्पर्धकनिका प्रमाण जगच्छ्रे-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णीकौं दोयवार असंख्यातका भाग दीजिये इतना कह्या था सो तितने ही अपूर्व स्पर्धक भएं जो योग स्थान होइ ताके जितने अविभाग प्रतिच्छेद हैं ते जघन्य योग स्थानकके अविभाग प्रतिच्छेदनितैं दूणे हैं। बहुरि याके ऊपरि तितने ही अपूर्व स्पर्धक गएं जो योग स्थान होइ सो तिस योगस्थानतैं भी दूणा हो है। ऐसैं दूणा दूणा क्रमतैं होतैं संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्तक जीवका सर्वोत्कृष्ट परिणाम योग स्थान हो है। इहां स्थान भेद ल्यावनेकौं त्रैराशिक करने। तहां सर्वत्र प्रमाण राशि सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग मात्र जघन्य स्पर्धक, फलराशि एक स्थान, इच्छाराशि जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागमात्र जघन्य स्पर्धकनिकौं अनुक्रमतैं एक दोय च्यारि आठ सोलह बत्तीस गुणा कीए जो होइ तींह प्रमाण जानना। इहां फलकरि इच्छाकौं गुणें प्रमाणका भाग दीएं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागकौं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागका भाग दीए जो प्रमाण होइ ताकौं अनुक्रमतैं एक गुणा दो गुणा च्यारिगुणा आठगुणा सोलह गुणा कीएं जो जो प्रमाण होइ तितने स्थान भेद हो हैं। इहां अंक संदृष्टि अपेक्षा सोलह पर्यंत ही गुणकार कह्या है। अंक इनका जोड दीजिए हैं--

'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' इस करणसूत्रकरि अंतका धन जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागकौं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागकरि गुणें जो प्रमाण होइ तातैं सोलहगुणा है। ताकौं गुणकार दोयकरि गुणिए तामैं आदिका प्रमाण जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागकौं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागकरि भाग दीजिए तीहि प्रमाण है सो घटाए जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागकौं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागकरि गुणि इकतीस गुणा कीजिए इतना हो है। बहुरि एक घाटि उत्तर एक ताका भाग दीए भी इतने ही रहैं सो इतना सब योगस्थाननिके भेदनिका प्रमाण है। बहुरि याकौं एक घाटि गुणकार एक ताका भाग दीएं भी इतना ही रहै है। सो याकौं प्रभव जो आदि ताका भाग दीए इकतीस पाए तामैं एक मिलाएं बत्तीस भए सो जेतीबार गुणकार जो दोय ताका भाग दीएं एक रहै तीहि प्रमाण गच्छ जानना सो पांचबार दोयका भाग बत्तीसकौं दीएं एक रहै तातैं अन्योन्याभ्यस्त राशिकी गुणकार शलाका पांच है। पांच जायगा दोय दोय मांडि परस्पर गुणें ३२२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण बत्तीस आवै है ऐसा अर्थ जानना बहुरि ऐसैं ही जघन्य स्थानतैं लगाय उत्कृष्ट स्थानपर्यंत सर्व योग स्थानके जघन्य भेदनिविषैं जघन्य योगस्थान जहां जहां दूणा होइ तहां तहां केते केते योग स्थाननिके भेद होंहि ? सो कहिए है—

तहां पूर्वोक्त प्रकार प्रमाण फल इच्छाराशि अनुक्रमतैं करने। विशेष इतना इहां यथार्थ अपेक्षा कथन है तातैं पूर्वैं जैसैं अंतविषैं सोलहका गुणकार कह्या तैसैं इहां क्रमतैं दूणा दूणा अंतविषैं पल्यके अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भागका आधा प्रमाण मात्र गुणकार जानना। तहां 'अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादि सूत्रकरि जोडैं सर्वयोग स्थाननिके भेदनिका प्रमाण हो है। ताकौं एक घाटि गुणकार एक ताकरि गुणि प्रभव जो आदिस्थान ताका भाग तामैं एक मिलाएं पल्यके अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भागमात्र प्रमाण हो है। ताकौं जेतीवार गुणकार दोयका भाग दीए एक रहै तेतीबार प्रमाण नानागुणहानि शलाका हैं सो असंख्यात घाटि पल्यकी वर्गशलाका प्रमाण हैं जातैं पल्यकी वर्ग शलाकाप्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणैं तो पल्यका अर्धच्छेद मात्र प्रमाण होइ अर घटाएं असंख्यात, सो तितने दूवे मांड परस्पर गुणै ताकौं असंख्यातका भागहार हो है। भावार्थ—असंख्यात घाटि पल्यकी वर्ग शलाकाका जो प्रमाण तेतीबार जघन्य योग स्थान दूणां दूणां भए उत्कृष्ट योग स्थान हो है। तातैं याकौं नानागुणहानि शलाका कहिए। बहुरि इस नानागुणहानि प्रमाण दूवे मांडि परस्पर गुणैं पल्यके अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भाग मात्र अन्योन्याभ्यस्त राशी हो है। याकरि जघन्यकौं गुणैं उत्कृष्ट योग स्थाननिके अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण हो है। बहुरि पूर्वोक्त प्रकार कीए योग स्थाननिका प्रमाण हो है॥२३१॥

आगैं जो अब कथन कीजियेगा ताकी प्रतिज्ञा करै हैं—

एदेसिं ठाणाणं जीवसमासाण अवरवरविसयं।
चउरासीदिपदेहिं अप्पाबहुगं परूवेमो ॥२३२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एतेषां स्थानानां जीवसमासानामवरवरविषयं ।
चतुरशीतिपदैः अल्पबहुकं प्ररूपयामः ॥ २३२ ॥

जी० प्र–एतेषामुक्तयोगस्थानानां मध्ये चतुर्दशजीवसमासानां जघन्योत्कृष्टविषयमल्पबहुत्वं चशब्दात् उपपादादियोगत्रयमाश्रित्य चतुरशीतिपदैः प्ररूपयामः ॥ २३२ ॥ तद्यथा—

सं० च–ए कहे जे योग स्थान तिनिविषैं चौदह जीव समासानिके जघन्य उत्कृष्टकी अपेक्षा अर चकारतैं उपपादादिक तीन प्रकार योगनिकी अपेक्षा चौरासी ठिकानानिकरि हम अल्प बहुत्व प्ररूपण करै हैं–थोरा इहां है बहुत इहां है ऐसा कथन करै हैं सोई कहिए है—

सुहुमगलद्धिजहण्णं तण्णिव्वत्तीजहण्णयं तत्तो ।
लद्धिअपुण्णुक्कस्सं बादरलद्धिस्स अवरमदो ॥ २३३ ॥

सूक्ष्मकलब्धिजघन्यं तन्निर्वृत्तिजघन्यकं ततः ।
लब्ध्यपूर्णोत्कृष्टं वादरलब्धेरवरमतः ॥ २३३ ॥

जी० प्र–अत्र सूक्ष्मवादरैकेंद्रियद्वित्रिचतुरसंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियाणां संदृष्टिः—

सू	वा	वि	ति	च	अ	सं
०१	०१	०२	०३	०४	०५	०६
		०	०	०	०	०
			०	०	०	०
				०	०	०
					०	०
						०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूक्ष्मनिगोदलब्ध्यपर्याप्तकस्य उपपादकजघन्यं स्थानं सर्वतः स्तोकं १ । ततः तन्निर्वृत्त्यपर्याप्तजघन्यं पल्यासंख्यातगुणं २ । ततः सूक्ष्मलब्ध्य-पर्याप्तस्य तदुत्कृष्टं पल्यासंख्यातगुणं ३ । ततः वादरलब्ध्यपर्याप्तस्य तज्जघन्यं पल्यासंख्यातगुणं ॥ ४ ॥ २३३ ॥

सं० च०—सूक्ष्म वादर एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैनी पंचेंद्री सैनी पंचेंद्री इनकी सहनानी ऐसी जाननी—

सू	वा	वि	ति	च	अ	सै
०१	०१	०२	०३	०४	०५	०६
		०	०	०	०	०
			०	०	०	०
				०	०	०
					०	०
						०

इन संदृष्टीनिकरि संदृष्टि कथन करतैं रचना आगैं लिखैंगे। तहां सूक्ष्म निगोदिया लब्धि अपर्याप्तक जीवका जघन्य उपपाद योगस्थान सबतैं स्तोक थोरा है। १। तातैं सूक्ष्म निगोदिया निर्वृत्ति अपर्याप्त जीवका जघन्य उपपाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा है ! पल्यका असंख्यात भागनिमध्ये एक भाग करि पूर्व योगस्थानके अविभाग प्रतिच्छेदनके प्रमाणकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितने अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण लीएं द्वितीय स्थान है। ऐसैं ही आगैं भी समझना २। बहुरि तातैं सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तकका उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा है ३। बहुरि तिसतैं वादर लब्धि अपर्याप्तकका जघन्य उप-पाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा है ४ ॥ २३३ ॥

णिव्वत्तिसुहुमजेट्ठं बादरणिव्वत्तियस्स अवरं तु ।
बादरलद्धिस्स वरं बीइंदियलद्धिगजहण्णं ॥ २३४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निर्वृत्तिसूक्ष्मज्येष्ठं वादरनिर्वृत्तिकस्थावरं तु ।
वादरलब्धेर्वरं द्वींद्रियलब्धिकजघन्यं ॥ २३४ ॥

जी० प्र०—ततः सूक्ष्मनिर्वृत्त्यपर्याप्तस्य तदुत्कृष्टं पल्यासंख्यातगुणं । ५ । तु-पुनः ततो वादरनिर्वृत्त्यपर्याप्तस्य तज्जघन्यं पल्यासंख्यातगुणं ६ । ततः वादरलब्ध्यपर्याप्तस्य तदुत्कृष्टं पल्यासंख्यातगुणं ७ । ततः द्वींद्रियलब्ध्यपर्याप्तस्य तज्जघन्यं पल्यासंख्यातगुणं ८ ॥ २३४ ॥

स० चं०—बहुरि तिसतैं सूक्ष्म निर्वृति अपर्याप्तकका उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्यके असंख्यातवें भाग गुणा है ५ बहुरि तातैं वादर निर्वृत्ति अपर्याप्तकका जघन्य उपपाद योगस्थान पल्यके असंख्यातवें भाग गुणा है ६ बहुरि तातैं वादर लब्धि अपर्याप्तकका उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्यके असंख्यातवें भाग गुणा है ७ । बहुरि तातैं वेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका जघन्य उपपाद योगस्थान पल्यके असंख्यातवें भाग गुणा है ८ ॥ २३४ ॥

बादरणिव्वत्तिवरं णिव्वत्तिबिइंदियस्स अवरमदो ।
एवं बितिबितितिचातिचचउविमणो होदि चउविमणो ॥ ३५ ॥

वादरनिर्वृत्तिवरं निर्वृत्तिद्वींद्रियस्यावरमतः ।
एवं द्वित्रिद्वित्रित्रिचात्रिचचतुर्विमनो भवति चतुर्विमनः ॥ २३५ ॥

जी० प्र०—ततो वादरैकेंद्रियनिर्वृत्त्यपर्याप्तस्य तदुत्कृष्टं पल्यासंख्यातगुणं ९ । अतः द्वींद्रियनिर्वृत्त्यपर्याप्तस्य तज्जघन्यं पल्यासंख्यातगुणं १० । एवं लब्ध्यपर्याप्तद्वित्रींद्रिययोर्यथासंख्यं तदुत्कृष्टजघन्योपपादयोगस्थाने पल्यासंख्यातगुणे भवतः । ११ । १२ । ततः निर्वृत्त्यपर्याप्तद्वित्रींद्रिययोर्यथासंख्यं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे । १३ । १४ । ततः लब्ध्यपर्याप्तत्रिचतुरिंद्रिययोर्यथासंख्यं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे । १५ । १६ । पुनः निर्वृत्त्यपर्याप्तत्रिचतुरींद्रिययोर्यथासंख्यं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे । १७ । १८ । तथा लब्ध्यपर्याप्तचतुरसंज्ञिपंचेंद्रिययोर्यथासंख्यं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे । १९ । २० । ततः निर्वृत्त्यपर्याप्तचतुरसंज्ञिपंचेंद्रिययोर्यथाक्रमं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे । २१ । २२ ॥ २३५ ॥

स० चं०—बहुरि तातैं वादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तकका उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा है । ९ । बहुरि तातैं वेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तकका जघन्य उपपाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणा है । १० । बहुरि ऐसैं ही तातैं वेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका उत्कृष्ट अर तेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा है । ११ । १२ । अनुक्रमतैं ऐसैं शब्दकरि एक एक विषैं पल्यका असंख्यातवां भागका गुणकार जानना । बहुरि तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्त वेंद्रीका उत्कृष्ट अर निर्वृत्ति अपर्याप्त तेंद्रीका जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं । १३ । १४ । बहुरि तातैं लब्धि अपर्याप्तक तेंद्रीका उत्कृष्ट अर लब्धि अपर्याप्तक चौंद्रीका जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं । १५ । १६ । बहुरि तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तक तेंद्रीका उत्कृष्ट अर निर्वृत्ति अपर्याप्तक चौंद्रीका जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यके असंख्यातवे भाग गुणे हैं । १७ । १८ । बहुरि तातैं लब्धि अपर्याप्तक चौंद्रीका तौ उत्कृष्ट अर लब्धि अपर्याप्तक असंज्ञी पंचेंद्रीका जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं । १९ । २० । बहुरि तातैं निर्वृत्ति अपर्याप्तक चौंद्रीका तौ उत्कृष्ट अर निर्वृत्ति अपर्याप्तक असंज्ञी पंचेंद्रीका जघन्य उपपाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवे भाग गुणे हैं । २१।२२॥२३५॥

तह य असण्णीसण्णी असण्णिसण्णिस्स सण्णिउववादं ।
सुहुमेइंदियलद्धिगअवरं एयंतवड्डिस्स ॥ ३६ ॥

तथा च असंज्ञिसंज्ञी असंज्ञिसंज्ञिनः संज्ञ्युपपादः ।
सूक्ष्मैकेंद्रियलब्धिकावरं एकांतवृद्धेः ॥ २३६ ॥

जी० प्र०—तथा च असंज्ञिसंज्ञिलब्ध्यपर्याप्तयोर्यथाक्रमं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे २३ । २४ । पुनस्तथा असंज्ञिसंज्ञिनिर्वृत्त्यपर्याप्तयोर्यथाक्रमं तदुत्कृष्टजघन्ये पल्यासंख्यातगुणे । २५ । २६ । ततः लब्ध्यपर्याप्तसंज्ञिनस्तदुत्कृष्टं पल्यासंख्यातगुणं २७ । ततः सूक्ष्मैकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तस्य एकांतानुवृद्धिजघन्यं पल्यासंख्यातगुणं । २८ । ततः—

स० चं०—बहुरि तैसैं ही तातैं असंज्ञी लब्धि अपर्याप्तकका उत्कृष्ट अर संज्ञी लब्धि अपर्याप्तका जघन्य उपपाद

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योग स्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भागगुणे हैं । २३ । २४ । बहुरि तातैं असंज्ञी निर्वृत्ति अपर्याप्तका उत्कृष्ट अर संज्ञी निर्वृत्ति अपर्याप्तका जघन्य उपपाद योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं। २५ । २६ । बहुरि तातैं संज्ञी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तका उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा हैं । २७ । बहुरि तातैं सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तका जघन्य एकांतानुवृद्धि योगस्थान पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा है । २८ ॥ २३६ ॥

सण्णिस्सुववादवरं णिव्वत्तिगदस्स सुहुमजीवस्स ।
एयंतवड्ढिअवरं लद्धिदरे थूलथूले य ॥ २३७ ॥

संज्ञिन उपपादवरं निर्वृत्तिगतस्य सूक्ष्मजीवस्य ।
एकांतवृद्ध्यवरं लब्धीतरस्मिन् स्थूलस्थूले च ॥ २३७ ॥

जी० प्र०—संज्ञिनिर्वृत्त्यपर्याप्तस्योपपादोत्कृष्टं पल्यासंख्यातगुणं २९ । ततः सूक्ष्मकेंद्रियनिर्वृत्त्यपर्याप्तस्य एकांतानुवृद्धिजघन्यं पल्यासंख्यातगुणं ३० । ततः बादरैकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तयोरेकांतानुवृद्धिजघन्ये पल्यासंख्यातगुणितक्रमे । ३१ । ३२ ॥ २३७ ॥

स चं०—बहुरि तातैं संज्ञी पंचेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तकका उत्कृष्ट उपपाद योगस्थान पल्यके असंख्यातवें भाग गुणा है २९ । बहुरि तातैं सूक्ष्म एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तका जघन्य एकांतानुवृद्धि योगस्थान पल्यके असंख्यातवे भाग गुणा है । ३० । बहुरि तातैं वादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका अर वादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तकका जघन्य एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं। ३१ । ३२ ॥ २३७ ॥

तह सुहुमसुहुमजेट्ठं तो बादरबादरे वरं होदि ।
अंतरमवरं लद्धिगसुहमिदरवरंपि परिणामे ॥ २३८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथा सूक्ष्मसूक्ष्मज्येष्ठं ततो वादरवादरे वरं भवति ।
अंतरमवरं लब्धिकसूक्ष्मेतरवरमपि परिणामे ॥ २३८ ॥

जी० प्र०—तथा सूक्ष्मैकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तयोः एकांतानुवृद्ध्युत्कृष्टे पल्यासंख्यातगुणक्रमे ३३ । ३४ । ततः वादरैकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तयोरेकांतानुवृद्ध्युत्कृष्टे पल्यासंख्यातगुणितक्रमे । ३५ । ३६ । ततः अंतरमिति वादरैकेंद्रियनिर्वृत्त्यपर्याप्तैकांतानुवृद्ध्युत्कृष्टसूक्ष्मैकेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तपरिणामयोगजघन्ययोरंतराले श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्रयोगस्थानानि निःस्वामिकानि तानि चातीत्य सूक्ष्मवादरलब्ध्यपर्याप्तयोः परिणामयोगस्य जघन्योत्कृष्टानि पल्यासंख्यातगुणक्रमाणि ॥ ३७ । ३८ । ३९ । ४० ॥ २३८ ॥

स चं०—बहुरि तैसैंही तातैं सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक अर सूक्ष्म एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक इनके उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योग स्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं । ३३ । ३४ । बहुरि तातैं वादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक अर वादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक इनके उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यके असंख्यातवैं भाग गुणे हैं । ३५ । ३६ । ततः अंतरं कहिए वादर एकेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तका उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अर सूक्ष्म एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका जघन्य परिणाम योगस्थान इन दोऊनिके वीचि जगच्छ्रेणीके असंख्यातवे भाग प्रमाण योगस्थान ऐसे हैं जिनका कोऊ स्वामी नाही । ए योगस्थान किसी जीवकैं न पाइए तातैं यहु अंतर पड्या सो इन स्थानकानिकौं उलंघिकरि छोडि करि सूक्ष्म एकेंद्री वा वादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तक इनके जघन्य वा उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवा भाग गुणे हैं । इहां सूक्ष्मका जघन्य वादरका जघन्य सूक्ष्मका उत्कृष्ट वादरका उत्कृष्ट ऐसैं क्रम जानना । ऐसैं ही आगैं जानना । ३७ । ३८ । ३९ । ४० ॥ २३८ ॥

अंतरमुवरीवि पुणो तप्पुण्णाणं च उवरि अंतरियं ।
एयंतवड्ढिठाणा तसपणलद्धिस्स अवरवरा ॥ २३९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंतरमुपर्यपि पुनः तत्पूर्णानां च उपर्यंतारितं ।
एकांतवृद्धिस्थानानि त्रसपंचलब्धेरवरवराः ॥ २३९ ॥

जी० प्र०—तत उपरि श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्रयोगस्थानानि द्वितीयमंतरं । तदतीत्य पुनः तत्सूक्ष्मबादरैकेंद्रियपर्याप्तयोः परिणामयोगस्य जघन्योत्कृष्टानि पल्यासंख्यातगुणक्रमाणि ४१ । ४२ । ४३ । ४४ । उपरि तृतीयांतरं श्रेण्यसंख्यातैकभागस्थानान्यतीत्य द्वित्रिचतुरसंज्ञिपंचेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तानामेकांतानुवृद्धेर्जघन्योत्कृष्टानि दशपल्यासंख्यातगुणक्रमाणि ४५ । ४६ । ४७ । ४८ । ४९ । ५० । ५१ । ५२ । ५३ । ५४ ॥ २३९ ॥

स० चं०—बहुरि अंतरं कहिए इहां दूसरा अंतर है । वादर एकेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका उत्कृष्ट परिणाम योगके पीछे जगच्छ्रेणीके असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान ऐसे हैं जिनका कोऊ स्वामी नाहीं सो इनकौं छोडिकरि बहुरि सूक्ष्म एकेंद्री वा वादर एकेंद्री पर्याप्तक तिनका जघन्य वा उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अनुक्रमतैं ए च्यारि पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं ४१ । ४२ । ४३ । ४४ बहुरि याके ऊपरि तीसरा अंतर है सो वादर एकेंद्री पर्याप्तका उत्कृष्ट योगस्थान पीछैं जगच्छ्रेणिके असंख्यातवे भागमात्र योगस्थान ऐसे हैं जिनका कोऊ स्वामी नाहीं तिनकौं छोडकर वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैनी पंचेंद्री संज्ञी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्त तिनका जघन्य वा उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान अनुक्रमतैं ए दश पल्यका असंख्यातवां भाग गुणे हैं । ४५, ४६, ४७, ४८, ४९, ५०, ५१, ५२, ५३, ५४ ॥ २३९ ॥

लद्धीणिव्वत्तीणं परिणामेयंतवड्ढिठाणाओ ।
परिणामट्ठाणाओ अंतरअंतरिय उवरुवरिं ॥ २४० ॥

लब्धिनिर्वृत्तीनां परिणामैकांतवृद्धिस्थानानि ।
परिणामस्थानानि अंतरांतरितान्युपर्युपरि ॥ २४० ॥

जी० प्र—पुनः तत्संज्ञिलब्ध्यपर्याप्तैकांतानुवृद्धियोगोत्कृष्टद्वींद्रियलब्ध्यपर्याप्तपरिणामयोगजघन्ययोरंतरगतं पुनः चतुर्थांतरं श्रेण्यसंख्यातैकभागस्थानान्यतीत्य द्वित्रिचतुरसंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तानां परिणामयोगस्य जघन्योत्कृष्टानि पल्यासंख्यातैकभागगुणितक्रमाणि ५५ । ५६ । ५७ । ५८ । ३३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

५९ । ६० । ६१ । ६२ । ६३ । ६४ । पुनः तल्लब्ध्यपर्याप्तसंज्ञिपरिणामोत्कृष्टनिर्वृत्त्यपर्याप्तद्वींद्रियैकांतानुवृद्धियोगजघन्ययोरंतरगतश्रेण्यसंख्यातैक-भागस्थानानि पंचमांतरमतीत्य द्वित्रिचतुरसंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रि निर्वृत्त्यपर्याप्तानां एकांतानुवृद्धेर्जघन्योत्कृष्टानि पल्यासंख्यातैकभागगुणक्रमाणि । ६५ । ६६ । ६७ । ६८ । ६९ । ७० । ७१ । ७२ । ७३ । ७४ । पुनः तत्संज्ञिनिर्वृत्त्यपर्याप्तैकांतानुवृद्धियोगोत्कृष्टपर्याप्तद्वींद्रियपरिणामयोगजघन्ययोरंतरगतश्रेण्यसंख्यातैकभागस्थानानि षष्ठांतरमतीत्य द्वित्रिचतुरसंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तानां परिणामयोगस्य जघन्योत्कृष्टानि पल्यासंख्यातगुणक्रमाणि । ७५ । ७६ । ७७ । ७८ । ७९ । ८० । ८१ । ८२ । ८३ । ८४ ॥ २४० ॥ इममुक्तगुणकारं ग्रंथकारः प्राह—

स० चं०—बहुरि इहां चौथा अंतर है सैनी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तकका उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान पीछैं जगच्छ्रेणीके असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान ऐसे हैं जिनका कोऊ स्वामी नाही सो इनकौं उलंघिकरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैनी पंचेंद्री सैनी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तक जीव तिनका जघन्य अर उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अनुक्रमतैं ए दश पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा जानना । ५५ ५६ ५७ ५८ ५९ ६० ६१ ६२ ६३ ६४ । बहुरि इहां पांचवां अंतर है सो सैनी पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तक जीवका उत्कृष्ट परिणाम योगस्थानके पीछैं जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण योग स्थान ऐसे हैं जिनिका कोऊ स्वामी नहीं तिनकौं छोड़िकरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैनी पंचेंद्री सैनी पंचेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक जीव तिनका जघन्य अर उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योगस्थान सो ए दश अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा जानना ६५ ६६ ६७ ६८ ६९ ७० ७१ ७२ ७३ ७४ । बहुरि इहां छठा अंतर है सैनी पंचेंद्री निर्वृत्ति अपर्याप्तक जीवका उत्कृष्ट एकांतानुवृद्धि योग स्थान पीछे जगच्छ्रेणीके असंख्यातवें भाग प्रमाण योगस्थान ऐसे हैं जिनका कोऊ स्वामी नाही सो इनकौं उलंघिकरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैनी पंचेंद्री सैनी पंचेंद्री पर्याप्तक जीव तिनका जघन्य अर उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान ए दश अनुक्रमतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा जानना । ७५ ७६ ७७ ७८ ७९ ८० ८१ ८२ ८३ ८४ । ऐसैं ए चौरासी ठिकाने योगोंके कहे सो इहां ऐसा भावार्थ जानना—जे योगस्थान कहे तिनविषैं प्रथम योगस्थान सूक्ष्म लब्धि अपर्याप्तकका जघन्य उपपाद योग स्थान है ताके अविभाग प्रतिच्छेद सवनितैं थोरे हैं । बहुरि तिनतैं सूक्ष्म निर्वृत्ति अपर्याप्तका जघन्य उपपाद योगस्थानके अविभाग प्रतिच्छेद पल्यके असंख्यातवां भाग गुणा है । ऐसैं ही अनुक्रमतैं जानना ॥२४०॥

आगैं इस कहे गुणकारकौं ग्रंथकर्ता कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एदेसिं ठाणाओ पल्लासंखेज्जभागगुणिदकमा।
हेट्ठिमगुणहाणिसला अण्णोण्णब्भत्थमेत्तं तु ॥ २४१ ॥

एतेषां स्थानानि पल्यासंख्येयभागगुणितक्रमाणि।
अधस्तनगुणहानिशला अन्योन्याभ्यस्तमात्रं तु। २४१ ॥

जी०प्र०—एतेषां चतुर्दशजीवसमासानामुपपादादियोगत्रयस्य जघन्योत्कृष्टचतुरशीतिस्थानानि पल्यासंख्यातगुणितक्रमाण्यपि सर्वोत्कृष्टं जघन्यात् पल्यच्छेदासंख्यातैकभागगुणमेव। तयोर्जघन्योत्कृष्टयोरंतरालस्था अधस्तनगुणहानिशलाकाः कति? पूर्वोक्ता असंख्यातरूपोनपल्यवर्गशलाकामात्र्यः व-a ता एव अन्योन्याभ्यस्तस्य गुणकारशलाका नाम ॥ २४१ ॥ अथोपपादादीनां जघन्योत्कृष्टेन निरंतरप्रवृत्तिकालप्रमाणमाह—

सं०—चौदह जीव समासनिका उपपादादिक तीन योगनिकी अपेक्षा जघन्य उत्कृष्ट भेदतैं चौरासी जे ए स्थान भए ते अनुक्रमतैं पहिले स्थानकतैं पिछला स्थानक पल्यका असंख्यातवां भागगुणा क्रमतैं हैं तथापि जघन्य योग स्थानतैं सर्वोत्कृष्ट योगस्थान पल्यके अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भाग गुणा है। तीहि जघन्य योग स्थान अर उत्कृष्ट योगस्थान इन दोऊनिके वीच तिष्ठती अधस्तन गुणहानिशलाका असंख्यात रूप घाटि पल्यकी वर्गशलाका प्रमाण है तेई अन्योन्याभ्यस्त राशिकी गुणकार शलका कहिए सो पूर्वै कथन कीया है। ४१। आगैं ए तीनो योग हैं ते वीचमें एक योगस्थानतैं अन्य योगस्थान न होइ ऐसैं निरंतर कितने काल प्रवर्तै? सो कहै हैं—

अवरुक्कस्सेण हवे उववादेयंतवड्ढिठाणाणं।
एक्कसमयं हवे पुण इदरेसिं जाव अट्ठोत्ति ॥ २४२ ॥

अवरोत्कृष्टेन भवेत् उपपादैकांतवृद्धिस्थानानां।
एकसमयो भवेत्पुनः इतरेषां यावदष्ट इति ॥ २४२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—उपपादैकांतानुवृद्धियोगद्वयस्थानानां प्रवृत्तिकालो जघन्येन उत्कृष्टेन च एकसमय एव स्यात् । इतरेषां परिणामयोगस्थानानां द्विसमयाद्यष्टसमयपर्यंतं स्यात् ॥ २४२ ॥ उक्तार्थोपयोगिनी योगस्तंभरचनेयं—

सं०—उपपाद योगस्थान अर एकांतानुवृद्धि योग इनके प्रवर्तनेका काल जघन्य वा उत्कृष्ट एक समय ही है। जातैं उपपाद योग स्थान जन्मके प्रथम समयमैं हो है। एकांतानुवृद्धि योगस्थान समय समय वृद्धिरूप अन्य अन्य हो है बहुरि इतर जे परिणाम योगस्थान तिनके प्रवर्तनेका काल दोय समयतैं लगाय आठ समय पर्यंत है। भावार्थ—एक परिणाम योगस्थान दोय समयतैं लगाय आठ समय पर्यंत रहै अधिक न रहै पीछैं अन्य योगस्थान हो है ॥ २४२ ॥

अट्ठसमयस्स थोवा उभयदिसासुवि असंखसंगुणिदा ।
चउसमयोत्ति तहेव य उवरिं तिदुसमयजोग्गाओ ॥ २४३ ॥

अष्टसमयस्य स्तोका उभयदिशयोरपि असंख्यसंगुणिताः ।
चतुःसमय इति तथैव च उपरि त्रिद्विसमययोगाः ॥ २४३ ॥

जीप्र०—द्वींद्रियपर्याप्तपरिणामयोगस्थानादारभ्य संज्ञिपर्याप्तपरिणामयोगोत्कृष्टस्थानपर्यंतं सर्वेषु निरन्तरयोगस्थानेषु $\frac{१}{a२ a a}$ छे $\frac{१}{a}$ पल्यासंख्यातभाजितबहुभागः $\frac{१}{a२ a}$ छे $\frac{१}{a}$ प $\frac{१}{a प a}$ द्विसमयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः, शेषैकभागस्य पल्यासंख्यातबहुभागस्त्रिसमय—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः—

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— छे प
a २ a a
a प प
a a

शेषैकभागस्य पल्यासंख्यातबहुभागार्धमधस्तनचतुःसमयनिरंतरप्र-

वृत्तिस्थानविकल्पाः

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— २ छे प
a a a a
प प प २
a a a

शेषार्धमुपरितनचतुःसमयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— २ छे प २
a a a प प प a
a a a

शेषैकभागपल्यासंख्यातबहुभा-

गार्धमधस्तनपंचसमयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः अर्धं चोपरितनपंचसमयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— २ छे प २
a a a प प प प a
a a a a

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— २ छे प २
a a a प प प प a
a a a a

शेषैकभागपल्यासंख्यातबहुभागार्धमधस्तनोपरितनषट्समयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— २ छे प २
a a a प प प प प a
a a a a a

१——
१ ᐱ १ ᐱ
— २ छे प २
a a a प प प प प a
a a a a a

शेषैकभागपल्यासंख्यातभागार्धमधस्तनोपरितनसप्तसमयनिरंतर-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१——
१ ॒ १ ॒ | १ ॒ १ ॒
प्रवृत्तिस्थानविकल्पा— – २ छे प २ | – २ छे प २
a a a प प प प प प a | a a a प प प प प प a
a a a a a a | a a a a a a

१——
१ ॒
शेषैकभागोष्टसमयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पाः – २ छे प प प प प प १
a a a a a a a a a

अत एव अष्टसमयस्य स्तोका इत्युक्तं। उभयदिशासु च असंख्यातगुणिताः। तत्र चतुःसमयनिरंतरप्रवृत्तिस्थानविकल्पपर्यंतमुभयदिशासु असंख्यातगुणितक्रमाः त्रिसमयनिरंतरप्रवृत्तियोग्या द्विसमयनिरंतरप्रवृत्तियोग्याश्च उपर्युपर्येव असंख्यातगुणितक्रमा भवंति। अत्र कालो विवक्षितोऽस्तीति यवाकाररचना। तत्संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

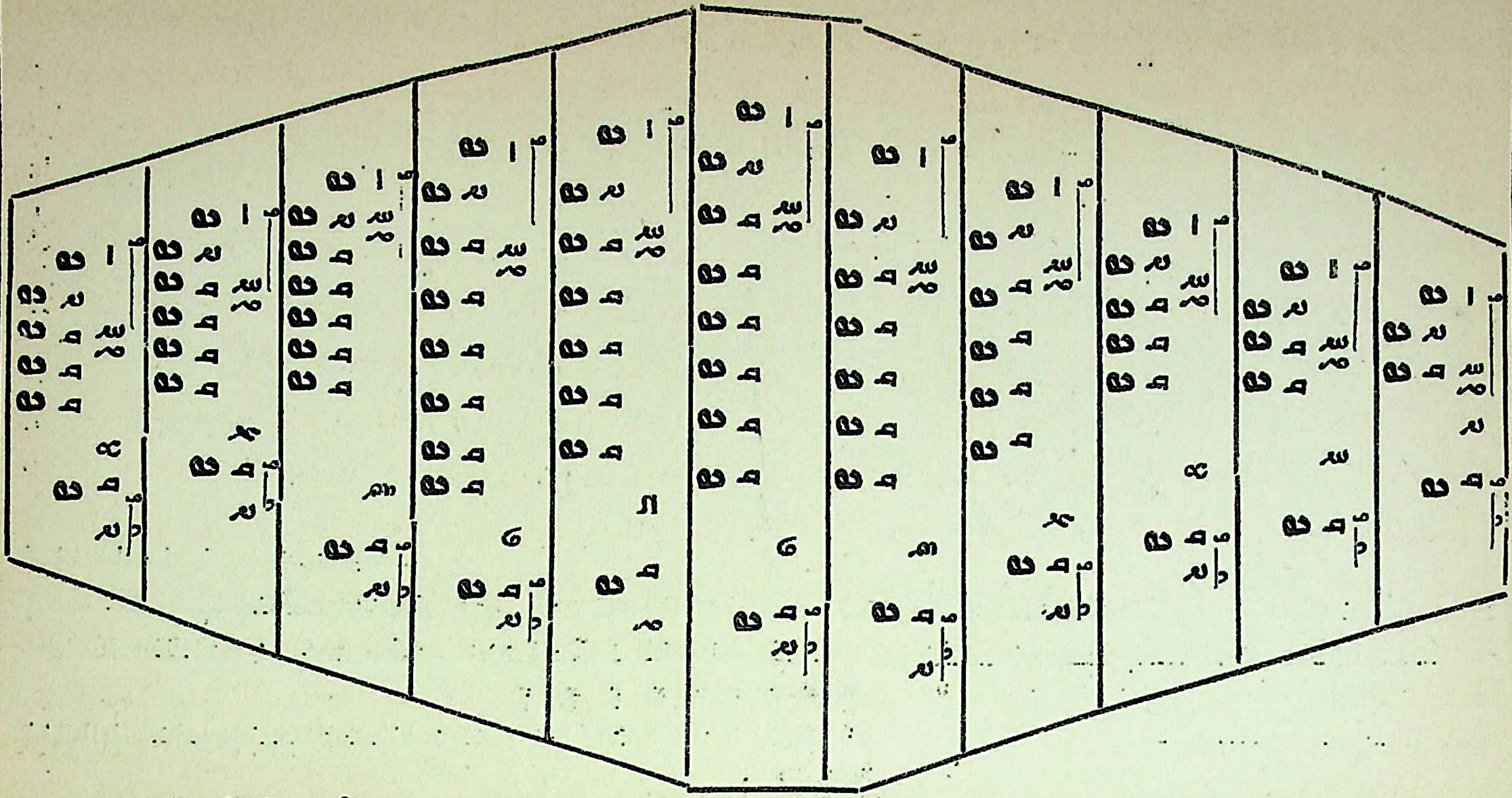

स० चं०—वेंद्री पर्याप्त जीव तीहिंका जघन्य परिणाम योगस्थानतें लगाय संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त जीवकैं उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान पर्यंत अंतर रूप जे योगस्थान कहे थे तिन विना जेते निरंतर योगस्थान हैं तिनकी यव नामा अन्नके आकार रचना कालकी अपेक्षा जाननी। तहां निरंतर आठ समय विषैं प्रवर्तें ऐसे योगस्थान ते मध्यविषैं लिखने अर जे योगस्थान निरंतर सात समय विषैं प्रवर्तें ते आधे तो आठ समय वालोंके ऊपरि लिखने आधे नीचैं लिखने। बहुरि जे योगस्थान छह समयविषैं निरंतर प्रवर्तैं ते तिनहूके आधे तो नीचैं अर आधे ऊपरि लिखने।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि जे योगस्थान पंच समयनिविषैं निरंतर प्रवर्तैं ते तिनहूके आधे तौ नीचे अर आधे ऊपर लिखने। बहुरि जे योगस्थान च्यारि समयनिविषैं निरंतर प्रवर्तैं तिनहूके आधे तौ नीचैं अर आधे ऊपरि लिखने बहुरि जे योगस्थान तीन समयनिविषैं निरंतर प्रवर्तैं ते च्यारि समयवालोंके ऊपर ही लिखने। बहुरि जे योगस्थान दोय समयविषैं निरंतर प्रवर्तैं ते तीन समयवालोंके ऊपरि लिखने। इहां त्रसजीवसंबंधी परिणाम योगस्थाननिविषैं मध्यविषैं लीए हैं तिनतैं पहिले स्थान वा पिछले स्थान तिनके ऊपरि वा नीचैं लिखिए है ऐसा अर्थ जानना। अब इन स्थाननिका प्रमाण कहिए हैं—

पर्याप्त वेंद्रीका जघन्य परिणाम योगतैं लगाय संज्ञी पर्याप्तका उत्कृष्ट परिणाम योगपर्यंत योगस्थान जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागकौं एक घाटि पल्यके अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भागकरि गुणिए सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागका भाग दीजिए जो प्रमाण होइ तामें एक मिलाइए इतने प्रमाण है ताकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभाग प्रमाण तौ दोय समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान हैं। बहुरि तिस एक भागकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभाग प्रमाण तीन समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान हैं। बहुरि तिस एक भागकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना अवशेष बहुभागका आधा तौ नीचले च्यारि समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान हैं। आधा ऊपरिले च्यारि समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान है। बहुरि तिस एक भागकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभागका आधा तौ नीचले पांच समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान हैं। आधा ऊपरले पांच समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान हैं। बहुरि तिस एक भागकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभागका आधा भाग तौ नीचले छह समय निरंतर प्रवर्तैं ऐसे योगस्थान हैं आधा ऊपरले छह समय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान हैं। बहुरि तिस एक भागकौं पल्यका असंख्यातवां भागका भाग दीजिए तहां एक भाग विना बहुभागका आधा तौ नीचले सात समय निरं-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तर प्रवर्तनेवाले योगस्थान हैं आधा ऊपरले सातसमय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान हैं। अवशेष एक भाग रह्या तीहिं प्रमाण आठ समय निरंतर प्रवर्तनेवाले योगस्थान जानने। याहीतैं गाथाविषैं ऐसा कह्या जो आठ समयवालोंका थोरा प्रमाण है अर ऊपर वा नीचैं असंख्यात असंख्यात गुणा है। तहां च्यारि समयवालें पर्यंत नीचैं वा ऊपरि दोऊ दिशाविषै जानने। तीन वा दोय समयवाले स्थानक ऊपरि ही जानने। ऐसैं इहां कालकी अपेक्षा यव आकार रचना है। जैसैं यव वीचिमैं मोटा हो है ऊपरि नीचैं पतला हो है तैसैं वीचिमैं आठ समयवाले लिखे अर ऊपरि नीचैं घाटि समयवाले लिखे ऐसैं यव आकार रचना है ॥२४३॥ आगैं पर्याप्त त्रस जीवनिका पारिणाम योगस्थानविषैं जीवनिका प्रमाण कहै हैं ताकी यव नामा अन्नके आकारि रचना कहैं हैं—

मज्झे जीवा बहुगा उभयत्थ विसेसहीणकमजुत्ता।
हेट्ठिमगुणहाणिसलादुवरि सलागा विसेसऽहिया॥ २४४॥

मध्ये जीवा बहुका उभयत्र विशेषहीनक्रमयुक्ताः।
अधस्तनगुणहानिशलाया उपरिशलाका विशेषाधिकाः॥ २४४॥

जी० प्र०—जीवयवमध्ये जीवा बहुकाः अध उपरि च विशेषहीनक्रमयुक्ताः अधस्तनगुणहानिशलाकाभ्यः उपरितनगुणहानिशलाका विशेषाधिकाः॥ २४४॥ तद्यथा—

स० चं०—जीवनिका प्रमाणरूप यवरचनाविषैं वीचिमैं जीव बहुत हैं ऊपरि वा नीचैं अनुक्रमतैं विशेषकरि घाटि घाटि जीव हैं। भावार्थ—जैसैं यव नामा अन्न वीचिमैं मोटा हो है अर ऊपरि नीचैं क्रमतैं घटता घटता हो है तैसैं त्रस पर्याप्त संबंधी परिणाम योगस्थानकनिविषैं यव आकारमैं जो वीचिका स्थानक है तहां जीवनिका प्रमाण बहुत है वीचिका स्थानकके धारक जीव बहुत हैं। बहुरि तिस बीचिके स्थानकतैं ऊपरिके स्थानकनिविषैं वा नीचेके स्थानकनिविषैं अनुक्रमतैं जीवनिका प्रमाण घटता घटता है। तिन स्थानकनिके धारक जीव अनुक्रमतैं घटते घटते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाइए है ऐसैं यहु यव आकार रचना है। तहां नीचली गुणहानिशलाकातैं ऊपरिकी गुणहानि शलाकाका प्रमाण किछू अधिक है सोई कहिए है—

दव्वातियं हेट्ठुवरिमदलवारा दुगुणमुभयमण्णोण्णं ॥
जीवजवे चोद्दससयबावीसं होदि बत्तीसं ॥ २४५ ॥
चत्तारि तिण्णि कमसो पण अड अट्ठं तदो य बत्तीसं ।
किंचूणतिगुणहाणिविभजिद दव्वे दु जवमज्झं ॥२४६॥

द्रव्यत्रयमध उपरिमदलवारा द्विगुणमुभयमन्योन्यं ।
जीवयवे चतुर्दशशतद्वाविंशतिः भवति द्वात्रिंशत् ॥ २४५ ॥
चत्वारि त्रीणि क्रमशः पंच अष्ट अष्ट ततश्च द्वात्रिंशत् ।
किंचिदूनत्रिगुणहानिविभाजिते द्रव्ये तु यवमध्यं ॥ २४६ ॥

जी.प्र.—यवाकारजीवसंख्यारचनायां तावदंकसंदृष्टया प्रतीत्युत्पादनार्थं द्रव्यं चतुर्दशशतद्वाविंशतिः १४२२, स्थितिः द्वात्रिंशत् ३२, गुणहान्यायामश्चत्वारः ४। अधस्तनोपरितननानागुणहानिशलाकाः क्रमेण तिस्रः पंच । ३ । ५ । दोगुणहानिः अष्टौ ८ । अधस्तनोपरितनान्योन्याभ्यस्तराशी क्रमेण अष्टौ द्वात्रिंशत् ८ । ३२ । तु—पुनः त्रिगुणगुणहान्या १२ सप्तपंचाशच्चतुःषष्टिभागैः किंचिदूनया ७११/६४ द्रव्ये भक्ते १४२२ । ६४/७११ जीवयवमध्यं स्यात् । १२८ । तन्मध्ये जीवा बहुकाः इत्युक्तं । उभयत्थविसेसहीणकमजुत्ता । तेभ्यः यवमध्यजीवेभ्यः तन्मध्यात् अधस्तनोपरितनगुणहानिनिषेकेषु जीवाः तत्तद्गुणहानिविशेषेण हीनक्रमयुक्ता भवंति । तत्तद्विशेषप्रमाणं तु तत्तद्गुणहानेरादिनिषेके दोगुणहान्या भक्ते, चरमनिषेके वा रूपाधिकगुणहान्या भक्ते भवति । तेन अधस्तनोपरितनगुणहानीनां द्रव्याणि विशेषाश्च अर्धार्धक्रमेण भवंति । तद्यथा—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain, Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपरि प्रथमगुणहानौ मुख ८० भूमि १२८ योग २०८ दले १०४ पद ४ गुणिते ४१६ इदं संदृष्टिनिमित्तं चतुर्भिरध उपरि संगुण्य ४१६।४ / ४ द्वात्रिंशता संभेद्य ३२। १३ / ४ । ४ गुणयित्वा १२८ / ४ । १३ गुणकारभूतत्रयोदशसु रूपाधिकत्रिगुणगुणहानिकृतेषु १२८ / ४ । ४ । ३ (१—) प्रथमगुणहानिद्रव्यं स्यात् । इदं उपरि प्रतिगुणहान्यर्धार्धक्रमेण गच्छत् चरमगुणहानौ रूपोनोपरितननानागुणहानिमात्रद्विकैर्भक्तं स्यात् १२८।४।३। (१—) / ४।२।२।२।२ अधस्तनगुणहानावप्येवं । यवमध्ये १२८ एकस्वविशेषेऽपनीते १२८-१६ (१ ∩) । अधस्तनप्रथमगुणहान्यादिनिषेकः भूमिः ११२ । अत्र रूपोनगुणहानिमात्रस्वविशेषेषु १६ ४ । अपनीतेषु चरमनिषेकः ६४ । मुखभूमियोग १७६ दले ८८ पदगुणिते ८८।४ । अधस्तनप्रथमगुणहानिद्रव्यं स्यात् । इदं संदृष्टिनिमित्तं उपर्यधश्चतुर्भिः संगुण्य ८८ / ४ । ४ । ४ अष्टाशीति गुणकारचतुष्केन संगुण्य षोडशभिर्भित्वा १६ । २२ / ४ । ४ द्वाविंशतिं द्विकेन भित्वा तेन चतुष्कं संगुण्य अष्टभिः षोडशके गुणिते एकादशगुणितयवमध्यचतुर्भागः स्यात् १२८ / ४ । ११ अत्रैतावति ऋणे १२८ / ४ । २ निक्षिप्ते रूपाधिकत्रिगुणगुणहानिगुणितयवमध्यचतुर्भागः स्यात् १२८ / ४ । ४ । ३ (१——) । अधोऽधोऽर्धार्धक्रमेण चरमगुणहानौ रूपोनाधस्तननानागुणहानिमात्रद्विकैर्भक्तः स्यात् १२८।४।३ (१—) / ४।२।२ ऋणमपि प्रथमगुणहानिनिक्षिप्तात् प्रतिगुणहान्यर्धार्धं स्यात् । १२८ / ४ । २ । १२८ / ४ । २ । १२८ / ४।२।२ । २ संकलिते अंतधनं गुणगुणितं १२८ / ४ । २ । २ आदिविहीनमिति १२८ / १६ । १६—२ इदं सर्वऋणं गुणहानिगुणितचरमाधस्तनगुणहानिविशेषेण हीनयवमध्यराशिमात्रं स्यात्—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

१	५ ६ ७ ८	१— १२८।४।३ ४२२२२
२	१० १२ १४ १६	१— १२८।४।३ ४।२।२।२
४	२० २४ २८ ३२	१— १२८।४।३ ४।२।२
८	४० ४८ ५६ ६४	१— १२८।४।३ ४।२
१६	८० ९६ ११२ १२८	१— १२८।४।३ ४
१६	ऋ १६ ११२ ऋ १६ ९६ ऋ १६ ८० ऋ १६ ६४	धन १— १२८।४।३ ४ ऋ ६४
८	ऋ ८ ५६ ऋ ८ ४८ ऋ ८ ४० ऋ ८ ३२	धन १— १२८।४।३ ४।२ ऋ ३२
४	ऋ ४ २८ ऋ ४ २४ ऋ ४ २० ऋ ४ १६	धन १— १२८।४।३ ४।२।२ ऋण १६

एतानि अधस्तनोपरितनगुणहानिद्रव्याणि पृथग्गतधनमित्यादिना संकलय्य मेलयित्वा तत्र तद्दृणोऽपनीते शुद्धद्रव्यं तावन्मात्रमेव स्यात् । तदानीयते—अंतधणं गुणगुणियं १२८।१३।२ चतुर्भिः समच्छेद्य संगुणयादिविहीणं ७२८ अधस्तनगुणहानिसर्वद्रव्यं स्यात् । पुनः अंतधणं १२८।१३
४
गुण २ गुणियं १२८।१३।२ षोडशभिः समच्छेद्यादिविहीणं ८०६ उपरितनगुणहानिसमस्तधनं स्यात् । मिलित्वा उभयधनमिदं १५
४
१—
३५ । अत्राधस्तनगुणहानिऋणशिष्टऋणं १२ अपनीते शुद्धद्रव्यं स्यात् । १४२२ ॥ २४५–२४६ ॥ अथार्थसंदृष्ट्या आह—

स० चं०—यवके आकारि जीवनिकी संख्याकी रचनाविषैं प्रथम अंकनिकी सहनानीकरि कथन दिखाइए है—तहां द्रव्य तौ त्रसपर्याप्त जीवनिका प्रमाण सो चौदहसै वाईस १४२२ अर स्थिति त्रसपर्याप्त जीवसंबंधी परिणाम योगस्थानकनिका प्रमाण सो बत्तीस ३२ बहुरि गुणहानि आयाम जो एक गुणहानिविषैं तिन स्थानकनिका प्रमाण सो च्यारि ४ बहुरि ऐसी सर्व गुणहानि आठ ८ इनकौं नानागुणहानि कहिए । तहां नीचली नानागुणहानिका प्रमाण तीन ३ अर ऊपरिकी गुणहानिका प्रमाण पांच ५ ऐसैं आठ नानागुणहानि जाननी । बहुरि ना-

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नागुणहानि प्रमाण दूवा माडि परस्पर गुणे जो प्रमाण होइ तितनी अन्योन्याभ्यस्तराशि है। तहां नीचली अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण आठ ८ ऊपरिकी अन्योन्याभ्यस्तराशिका प्रमाण बत्तीस ३२ ऐसैं सर्व चालीस ४० हैं तहां तिगुणी गुणहानि किछू घाटिका भाग द्रव्यकौं दीएं जीवनिकी संख्या यव आकारके मध्य होइ सो गुणहानिका आयामका प्रमाण च्यारि ४ ताकौं तिगुणा कीएं बारह भए। किंचिदून कहनेकरि यामैंस्यों एकका चौसठिभागनिमैं जे सत्तावन भाग ते घटाइए इहां समच्छेद विधानकरतैं सातसै ग्यारहका चौसठिवां भाग भया। याका भाग सर्वद्रव्य चौदहसै बाईसकौं दीजिए तब एकसौ अठाईस पाया सो जीव यव आकार रचनाविषैं मध्य प्रमाण जानना तातैं मध्यविषैं जीव बहुत हैं ऐसैं कह्या। बहुरि तीहिं मध्यतैं ऊपरि वा नीचैं गुणहानिके जे निषेक तिनविषैं अपनी अपनी गुणहानिविषैं जो विशेषका प्रमाण तितना घाटि क्रमतैं जानना। सो विशेषका प्रमाण कितना है? अपनी अपनी गुणहानिका पहिला निषेककौं दूणा गुणहानिका आयाम प्रमाण जो दोगुणहानि ताका भाग दीएं जो प्रमाण होइ अथवा अंतका निषेककौं एक अधिक गुणहानिका आयामका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सो विशेषका प्रमाण जानना। तातैं नीचली वा ऊपरली गुणहानिका द्रव्य वा विशेष आधा आधा अनुक्रमतैं जानना। सोई दिखाइए है-ऊपरकी पांच गुणहानि तिनविषैं पहली गुणहानिविषैं पहिला निषेकका प्रमाण एकसौ अठाईस १२८ याकौं दोगुणहानि आठ ताका भाग दीजिए तब सोला पाए सो विशेष जानना सो एक एक निषेकविषैं सोला सोला घटावना। अंतका निषेकविषैं एक घाटि गुणहानि आयामका जो प्रमाण तितना विशेष घटाइए तब आदि निषेक एकसौ अठाईस मध्य एकसौ बारा अर छिनवै अर अंत निषेक अस्सी ऐसा प्रमाण भया १२८ ११२ ९६ ८० इन सबनिका जोड दीजिए 'मुहभूमी जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि' मुख कहिए अंत अर भूमि कहिए आदि सो अंत तौ असी ८० अर आदि एकसौ अठाईस इनका जोग कहिए जोड दोयसै आठ दले कहिए आधा एकसौ च्यारि भए पद कहिए गच्छ आयाम ताकरि गुणिए सो च्यारिकरि गुणिए तब पद धन च्यारिसै सोलह भये ऐसैं ऊपरकी प्रथम गुणहानिका सर्वधन च्यारसै सोलह जानना। सो यवमध्यके प्रमाणकौं एक अधिक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिगुणा गुणहानि आयामकरि गुणिये गुणहानि आयामका भाग दीजिए सोई प्रथम गुणहानिका द्रव्य जानना। यवमध्यका प्रमाण एकसो अठाईस ताकों तिगुणी गुणहानि वारा, एक अधिक भएं तेरा ताकरि गुणिए गुणहानि आयाम च्यारिका भाग दीएं जो च्यारिसै सोला पाए सोई प्रथम गुणहानिका द्रव्य है। बहुरि ऊपरि एक एक गुणहानि विषैं द्रव्यका प्रमाण वा विशेषका प्रमाण आधा आधा जानना। बहुरि एक घाटि नाना गुणहानिका जो प्रमाण तितना दूवा माडि परस्पर गुणै जो प्रमाण होइ ताका भाग प्रथम गुणहानिके द्रव्यकौं दीएं अंतकी गुणहानिविषैं द्रव्यका प्रमाण हो है। तहां ऊपरिकी गुणहानि पांच तामैं एक घटाएं च्यारि सो च्यारि दूवा माडि २। २। २। २। परस्पर गुणन कीएं सोला १६ याका भाग प्रथम गुणहानि द्रव्य च्यारिसै सोलाकों दीएं छबीस पाया सोई अंत गुणहानिका द्रव्य जानना। बहुरि नीचली गुणहानि तीन तिन विषैं पहिली गुणहानिविषैं जवमध्य विषैं जो प्रमाण तामैंस्यौं एक विशेष घटाएं प्रथम निषेक होइ सो यवमध्य एकसौ अठाईस १२८ यामैं विशेषका प्रमाण सोला सो घटाएं एक सौ वारा रह्या सोई आदि निषेकका प्रमाण जानना। बहुरि यामैं एक एक निषेक में एक एक विशेष घटावतां अंतका निषेकविषैं एक घाटि गुणहानिका आयाम प्रमाण विशेष घटाएं चौंसठि हो है सो मुख चौंसठि ६४ भूमि एकसौ वारा ११२ इनका जोड एकसौ छिहंतरि आधा अठ्यासी पद जो च्यारि ताकरि गुणै तनिसौं वावन हुवा सोई नीचली प्रथम गुणहानिका सर्व द्रव्य जानना। सो यव मध्य जो एकसौ अठाईस ताकौं ग्यारह करि गुणिए च्यारिका भाग दीजिए इतने प्रमाण हो है सो ऊपरिका प्रथम गुणहानिके द्रव्यतैं इहां यवमध्यकौं दूणांकरि च्यारिका भाग दीजिए इतना ऋण जानना। सो यव मध्य एकसौ अठाईस ताकौं दूणाकरि च्यारिका भाग दीएं चौसठि पाया सो ऋण जानना। इतने ऊपरिकी प्रथम गुणहानिके द्रव्य मैंस्यौं घटाए नीचली प्रथम गुणहानिका द्रव्य हो है। बहुरि ऊपरिकी गुणहानिका निषेकनितैं नीचली गुणहानिका निषेकनिविषैं ऊपरिली गुणहानिका चय प्रमाण ऋण जानना। जैसैं ऊपरिकी गुणहानिका प्रथम निषेक एकसौ अठाईस तहां चयका प्रमाण सोला घटाए नीचली गुणहानिका प्रथम निषेकका प्रमाण हो है ऐसैं सर्वत्र जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वहुरि गुणहानि गुणहानि प्रति द्रव्य आधा आधा जानना तहां एक घाटि नीचली गुणहानि मात्र दूवानिका भाग आदि गुणहानिके द्रव्यकौं दीएं अंतकी गुणहानिविषैं द्रव्य हो है। वहुरि ऋणभी जो प्रथम गुणहानि विषैं कह्या सो गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा हो है ६४। ३२।१६। तहां अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं इस सूत्रकरि अंत धन चौसठिकौं गुणकार दोयकरि गुणे आदि सोलह घटाएं सर्व नीचली गुणहानिनि विषैं ऋणका प्रमाण होइ है सो गुण हानि आयामका प्रमाणकरि नीचली अंतकी गुणहानि विषैं जो विशेषका प्रमाण ताकौं गुणें जो प्रमाण होइ तितना यव मध्यके प्रमाणमैंस्यौं घटाए जो प्रमाण होइ तितना जानना । सो गुणहानि आयाम च्यारि ४ याकरि नीचली अंतकी गुणहानिका विशेष च्यारिकौं गुणें सोलह पाए सो यव मध्यमेंस्यौं घटाए एकसौ वारह रहे सो सर्व ऋण जानना चौंसठि वत्तीस सोला इनकौं मिलाएं एकसौ वारा हो है वहुरि नीचली वा ऊपरली सर्व गुण हानिका सर्व द्रव्य अंतधणं गुणगुणिये इत्यादि सूत्रकरि जोडि तामैं तिस ऋणकौं घटाएं शुद्ध द्रव्य चौदहसौ बाईस १४२२। हो है वहुरि इहां गुणहानि विषैं जितने जितने निषेकनिविषैं घटै हैं ऐसा विशेष प्रमाण वहुरि योगानिका स्थानक तेई निषेक तिनविषैं जीवनिका प्रमाण वहुरि गुणहानिविषैं सर्व द्रव्यका प्रमाण वहुरि नीचली गुणहानिविषैं ऊपरकी गुणहानितैं जो प्रमाण घाटि होइ सोई ऋण ताका प्रमाण इन सर्व प्रमाणनिके दिखानेकौं यंत्र लिखिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाम	विशेषका प्रमाण	निषेकनिविषै जीवनिका प्रमाण	गुणहानि विषैं सर्व द्रव्यका प्रमाण
ऊपरिकी पंचम गुणहानि	१	५ ६ ७ ८	२६
ऊपरिकी चौथी गुणहानि	२	१० १२ १४ १६	५२
ऊपरिकी तीजी गुणहानि	४	२० २४ २८ ३२	१०४
ऊपरिकी दूजी गुणहानि	८	४० ४८ ५६ ६४	२०८
उपरिकी प्रथम गुणहानि	१६	८० ९६ ११२ १२८	४१६
नीचैकी प्रथम गुणहानि	१६	उपरिकी प्रथमगुणहानिकै निषेकनितैं ऋण १६ ११२ ९६ ८० ६४	ऊपरकीप्रथम गुणहानिकेसव द्रव्य ऋण ६४ अव शेष ३५२
नीचैकी दूजी गुणहानि	८	उपरिकी द्वितीय गुणहानिकेनिषेकनितैंऋण ८ ५६ ४८ ४० ३२	उपरिकी द्वितीयगुणहानिके सर्व द्रव्यतैंऋण ३२ अव शेष १७६
नीचैकी तीजी गुणहानि	४	उपरिकी तृतीय गुणहानिकेनिषेकनितैंऋण ४ २८ २४ २० १६	उपरिकी तृतीयगुणहानिके सर्व द्रव्यतैंऋण १६ अव शेष ८८

इस यंत्रका ऐसा भावार्थ जानना—जेते त्रस पर्याप्त संबंधी परिणाम योगस्थान वत्तीस कहे तिनविषैं ऊपरली गुणहानिका प्रथम निषेक रूप जो योगस्थान ताके धारक एकसौ अठाईस जीव हैं। याकौं यव मध्य कहिए। वहुरि तिस स्थानकतैं पाहिला वा पिछला दोय स्थानक तिनके धारक एकसौ बारा एकसौ वारा जीव हैं ऐसैंही सर्व योग स्थानकनिविषैं जीवनिका प्रमाण जानना। ऐसैं जैसैं अंकनिकी सहनानीकरि कथन दिखाया तैसैंही यथार्थ कथन जानना। विशेष इतना जो द्रव्यादिका प्रमाण जैसा होइ तैसा जानना। और सर्व विधान अंक संदृष्टिविषैं कह्या तैसैंही जानना ॥ २४५–२४६ ॥ सो यथार्थ कथन दिखावनके निमित्त सूत्र कहैं हैं—

पुण्णतसजोगठाणं छेदाऽसंखस्सऽसंखबहुभागे।
दलमिगिभागं च दलं दव्वदुगं उभयदलवारा ॥२४७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्णत्रसयोगस्थानं छेदासंख्यस्यासंख्यबहुभागे ।
दलमेकभागं च दलं द्रव्यद्विकमुभयदलवाराः ॥ २४७ ॥

जी० प्र०—द्रव्यं संख्यातभाजितप्रतरांगुलभक्तजगत्प्रतरप्रमितपर्याप्तत्रसराशिः = ४/५ द्वींद्रियपर्याप्तपरिणामयोगजघन्यात् – a १ / a a ५ अपवर्तितात् – / a
अनंतरस्थानमिदं २ / a / – / a आदिं कृत्वा भागुक्तवृद्ध्या वर्धितानि संज्ञिपर्याप्तपरिणामयोगोत्कृष्टपर्यंतानि ८४ व वि १६ । ४ । – / a । छे व / a ० आदी – १ / a अंते

१— / सर्व – २ ३१ / a a / ७५ व वि १६ । ४ । – / a ० ० ० ० ० ज

– / a ३२ सुद्धे – / a ३१ वड्ढिहिदे – / a २ ३१ / a रूवसंजुदे १—— / – / a २ ३१ / a इत्यानीतविकल्पानि योगस्थानानि स्थितिः, पर्याप्तत्रसराशेः तेषु स्वामित्वेन भक्त्वा

दीयमानत्वात् । पल्यच्छेदासंख्यातैकभागस्य छे / a असंख्यातेन उपर्यधोगुणितस्य छे a / a a एकभागं पृथक्संस्थाप्य छे १ / a a शेषबहुभागान् छे १ ^ a / a a द्वाभ्यां

भक्त्वा तत्रैकार्धं छे १ ^ a / a a २ अधस्तनगुणहानिशलाका भवंति । पृथक्स्थापितैकभागयुतमपरार्धं छे १ ^ a / a a २ उपरितननानागुणहानिशलाका भवंति २४७

स० च०—जैसैं द्रव्यका प्रमाण चौदासै वाईस कह्या तैसैं संख्यातका भाग प्रतरांगुलकौं दीएं जो प्रमाण होइ ताका भाग जगत्प्रतरकौं दीएं जो प्रमाण होइ तितने पर्याप्त त्रस जीव हैं सो जो यहु पर्याप्त त्रस जीवनिका प्रमाण सो द्रव्य जानना। बहुरि जैसैं स्थितिका प्रमाण बत्तीस कह्या तैसैं बेंद्री पर्याप्तका जघन्य परिणाम योग-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थानतैं लगाय संज्ञी पर्याप्तकका उत्कृष्ट परिणाम योग पर्यंत जितने योगस्थान होंइ तितना स्थितिका प्रमाण जानना। सो चौरासी ठिकाने कहे तहां द्वींद्रिय पर्याप्तका जघन्य परिणाम योगकैं ठिकानें जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागकौं पिचहत्तरवार पल्यका असंख्यातवां भाग करि गुणें प्रमाण हो है। ताका अपवर्तन कीएं जगछ्रेणीका असंख्यातवां भागमात्रही भया। बहुरि यामैं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग मात्र मिलैं अनंतर स्थान भया ताकौं आदि देकरि संज्ञी पर्याप्तका उत्कृष्ट योगस्थान संदृष्टि अपेक्षा जघन्यतैं वतीसगुणा यथार्थ अपेक्षा पल्य के अर्धच्छेदिनिका असंख्यातवां भाग गुणा है। तहां पर्यंत स्थाननिका प्रमाण कहिए है—

तहां वेंद्री पर्याप्तका जघन्य परिणाम योगस्थानतैं अनंतर स्थान तौ आदि जानना अर संज्ञी पर्याप्तका उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान अंत जानना। सो 'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणो' इस सूत्रकरि अंतमैंस्यों आदिका प्रमाण घटाइ दीजै बहुरि एक एक स्थानविषैं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण अविभाग प्रतिच्छेद वंधैं हैं तातैं तिनका भाग दीजिए जो प्रमाण होइ तामे एक और मिलाए त्रस पर्याप्त संबधी परिणाम योगस्थानकनिका प्रमाण आवे है सोई स्थितिका प्रमाण जानना। इहां भाज्य वा भागहार विषैं जघन्य स्पर्धककौं गुण्य कहि अपवर्तन करि देना। बहुरि इन स्थानकनिके धारक केते केते जीव पाइए ऐसा भेद कहनेके अर्थि विधान कहिए है—

जैसैं आठ नाना गुणहानिविषैं तीन नीचली कही थीं पांच ऊपरिली कही थीं तैसैं पल्यका अर्धछेदनिका असंख्यातवां भाग प्रमाण सर्व नाना गुणहानि ताकौं असंख्यात का भाग दीजिए तहां एक भागकौं जुदाराखि अअवशेष बहुभागनिका जो प्रमाण ताका आधा तौ नीचली नाना गुणहानिका प्रमाण जानना अर बहुभागका तौ आधा अर एक भाग जुदा राख्या सो मिलाए जो प्रमाण होइ तितना ऊपरली नाना गुणहानिका प्रमाण जानना।

णाणागुणहाणिसला छेदासंखेज्जभागमेत्ताओ।
गुणहाणीणद्धाणं सव्वत्थवि होदि सरिसं तु ॥२४८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नानागुणहानिशलाः छेदासंख्येयभागमात्राः ।
गुणहानीनामद्धानां सर्वत्रापि भवति सदृशं तु ॥ २४८ ॥

जी० प्र०—ता उभयनानागुणहानिशलाका मिलिताश्च्छेदासंख्यातैकभागमात्र्यः । ताभिः स्थितौ भक्तायां प्र छे. फ १— / a — a २ ३१ / a इ १ लब्धगुण-हान्यायामः स्यात् १— / a a a — २ छे ३१ स च अधस्तनोपरितननानागुणहानिषु सदृशः समानः तु-नियमेन ॥ २४८ ॥

सं० च—सो नीचली वा ऊपरली गुणहानिकों मिलाएं पल्यका अर्धच्छेदनका जो प्रमाण ताके असंख्यातवें भाग नाना गुण हानि भई ताका भाग पूर्वोक्त स्थितिके प्रमाणकों दीएं जो प्रमाण आवे तितना एक गुण हानिका आयामका प्रमाण जानना । जैसें स्थिति वत्तीस ३२ ताकों सर्व नाना गुण हानि आठ ८ ताका भाग दीएं च्यारि पाया ४ सोई एक गुण हानिका आयामका प्रमाण है । तैसे इहां भी जानना । सो गुण हानिका आयामका प्रमाण ऊपरिली गुणाहानि वा नीचली गुण हानिविषै समान है एक एक गुण हानिविषैं इतना स्थान पाइए है । बहुरि इस गुणहानि आयामका दूणा प्रमाण सोई दोगुण हानिका प्रमाण जानना ॥२४८॥

अण्णोण्णगुणिदरासी पल्लासंखेज्जभागमेत्तं तु ।
हेट्ठिमरासीदो पुण उवरिल्लमसंखसंगुणिदं ॥२४९॥

अन्योन्यगुणितराशिः पल्यासंख्येयभागमात्रं तु ।
अधस्तनराशितः पुनः उपरिममसंख्यातसंगुणितं ॥ २४९ ॥

जी० प्र०—अन्योन्याभ्यस्तराशिः पल्यासंख्यातैकभागमात्रः सामान्येन भवेत् प / a तु—पुनः विशेषेण अधस्तनान्योन्याभ्यस्तराशितः प / a a a

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपरितनान्योन्याभ्यस्तराशिरसंख्यातगुणितः स्यात् प / ३ ३ । अथ जघन्यपरिणामयोगस्थानमादिं कृत्वा उत्कृष्टपरिणामयोगस्थानपर्यंतेषु स्थितिविकल्पेषु पर्याप्तत्रसराशिर्विभज्यते तद्यथा—

किंचिन्न्यूनत्रिगुणगुणहान्या द्रव्ये भक्ते यवमध्यं स्यात् == / ४ गु ३– / ५ तच्च दोगुणहान्या भक्तं प्रचयः स्यात् == / ४ गु ३– गु २ / ५ स एव पुनः दोगुणहान्या गुणितः यवमध्यं स्यात् == गु २ / ४ गु ३– गु २ / ५ उपरि द्वितीयपुंजमादिं कृत्वा तत्प्रथमगुणहानिचरमपर्यंतं एकैकविशेषहीनक्रमेण गत्वा चरमे रूपोनगुणहानिमात्रचया हीनाः स्युः = १– / गु / ४ गु ३– गु २ / ५ तस्मिन् पुनः एकविशेषेऽपनीते उपरितनद्वितीयगुणहानिप्रथमजीवराशिप्रमाणं स्यात्— = गु / ४ गु ३– गु २ / ५ । इदं संदृष्टिनिमित्तं उपर्यधोद्विकेन गुणिते जीवयवमध्यार्धं स्यात् = गु २ / ४ गु ३– गु २ २ / ५ उपरि द्वितीयगुणहानिचरमपर्यंतं स्वविशेषहीनक्रमेण गत्वा चरमे रूपोनगुणहानिमात्रचयहीनाः स्युः === १— / गु / ४ गु ३– गु २ २ / ५ तस्मिन् पुनः एकविशेषेऽपनीते उपरितनतृतीयगुणहानिप्रथमजीवराशिप्रमाणं स्यात् = गु / ४ गु ३– गु २ २ / ५ तच्च उपर्यधो द्वाभ्यां गुणितं स्फुटं द्वितीयगुणहानिमात्रप्रथमद्रव्यार्धं दृश्यते = गु २ / ४ गु ३– गु २ २ २ / ५ उपरि चयहीनक्रमेण गत्वा चरमे रूपोनगुणहानिमात्रस्वविशेषा हीनाः स्युः = १— / गु / ४ गु ३– गु २ २ २ / ५ अत्रैकविशेषेऽपनीते चतुर्थगुणहानिप्रथमद्रव्यं स्यात्—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

= गु / ४ गु ३– गु २ २ २ / ५ तच्च उपर्यधो द्विकेन गुणितं तृतीयगुणहानिप्रथमद्रव्यार्धं स्फुटं स्यात् = गु २ / ४ गु ३– गु २ २ २ २ / ५ उपरि चयहीनं सत् चरमे रूपोनगुणहानिमात्रस्वविशेषहीनं स्यात् = १— गु / ४ गु ३– गु २ २ २ २ / ५ एवं पंचमादिगुणहानिषु तत्तद्गुणहानिप्रथमजीवद्रव्याणि अर्धार्धक्रमेण गत्वा चरमगुणहानौ चरमजीवद्रव्ये रूपोनोपरितननानागुणहानिमात्रद्विकानि हारा भवंति तेषामभ्यासे उपरितनान्योन्याभ्यस्तराश्यर्धं स्यात् । गुणकारो रूपाधिकगुणहानिः स्यात् = १— गु / ४ गु ३– गु २ प / ५ a a २ पुनरधस्तनगुणहानिषु यवमध्याधस्तनानंतरप्रथमगुणहानिप्रथमजीवद्रव्यमादिं कृत्वा गुणहानिं गुणहानिं प्रति समस्तस्थितिद्रव्येषु चरमगुणहनिचरमस्थितिद्रव्यपर्यंतेषु एकैकस्वस्वगुणहानिप्रचयप्रमितऋणे निक्षिप्ते अधस्तननानागुणहानिशलाकाप्रमितोपरितननानागुणहानिस्थितिद्रव्येण समानं स्यात् तेन अधस्तनप्रथमगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यं उपरितनप्रथमगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यं च समानं = गु २ / ४ गु ३– गु २ / ५

इतोऽधः एकैकविशेषहीनक्रमेण गत्वा चरमस्थितिद्रव्ये रूपोनगुणहानिमात्रस्वविशेषा हीयंते = १— गु / ४ गु ३– गु २ / ५ पुनरेकविशेषेऽपनीते अधस्तनद्वितीयगुणहानौ प्रथमस्थितिद्रव्यमुपरितनद्वितीयगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यं समानं स्यात् = गु / ४ गु ३– गु २ / ५ इदं संदृष्टिनिमित्तं उपर्यधो द्वाभ्यां गुणितं जीवयवमध्यप्रमाणार्धं स्यात् = गु २ / ४ गु ३– गु २ २ / ५ इतोधः विशेषहीनक्रमेण गत्वा चरमस्थितिद्रव्ये रूपोनगुणहानिमात्रस्वविशेषा हीयंते= १— गु / ४ गु ३– गु २ २ / ५ अ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रैकविशेषहीने तृतीयाधस्तनगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यं भवेत् = गु
४ गु ३ – गु २ २
५
इदमपि संदृष्टिनिमित्तमुपर्यधो द्वाभ्यां गुणितं उपरितनद्वि-

तीयगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यार्धसमानं अधस्तनद्वितीयगुणहानिद्रव्यार्धमात्रं तृतीयाधस्तनगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यं स्यात् = गु २
४ गु ३ – गु २ २ २
५

अधः एकैकस्वविशेषहीनक्रमेण गत्वा चरमस्थितिद्रव्ये रूपोनगुणहानिप्रमितस्वविशेषा हीयंते = १—
गु
४ गु ३ – गु २ २ २
५
अत्रैकविशेषे हीने चतुर्थगुणहानि-

प्रथमस्थितिद्रव्यं स्यात् = गु
४ गु ३ – गु २ २ २
५
इदमपि संदृष्टिनिमित्तं उपर्यधोद्विकेन गुणितं चतुर्थगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यं उपरितनतृतीयगुणहानि-

प्रथमस्थितिद्रव्यार्धसमानं अधस्तनतृतीयगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यार्धमात्रं स्यात् = गु २
४ गु ३ – गु २ २ २ २
५
इतोधः एकैकस्वविशेषहीनक्रमेण गत्वा चरम-

स्थितिद्रव्ये रूपोनगुणहानिमात्रस्वविशेषा हीयंते = १—
गु
४ गु ३ – गु २ २ २ २
५
एवं पंचमाद्यधस्तनगुणहानिषु तत्तद्गुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्याणि अर्धा-

र्धक्रमेण गत्वा अधस्तनचरमगुणहानौ चरमस्थितिद्रव्ये रूपोनाधस्तननानागुणहानिमात्रद्विकानि हाराः स्युः। तेषामभ्यासे अधस्तनान्योन्याभ्यस्तार्धं

स्यात्। गुणकारो रूपाधिकगुणहानिः स्यात् = १—
गु
४ गु ३ – गु २ प
५ a a a २
अयं राशिः अधस्तननानागुणहानिशलाकाप्रमितोपरितनगुणहानिचरमगु-

णहानिचरमस्थितिद्रव्यसमः। उक्ताधस्तनगुणहानीनां तद्गुणानामुपरितनगुणहानीनां क्रमेण विन्यासोयं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अधस्तनप्रथमगुणहानिः	मुखभूमीत्यादिनानीताधस्तनप्रथमगुणहानिद्रव्यं	ऋणं उपरि	उपरितनचरमगुणहानिः	मुखभूमीत्यादि
= गु २ ४ गु ३— गु २ ५ ० ० १— = गु ४ गु ३— गु २ ५	१— = गु ३ गु ४ गु ३— गु २ २ ५	= गु १ ४ गु ३— गु २ ५	१— = गु ४ गु ३— गु २ प ५ ० ० २ ० ० = गु २ ४ गु ३— गु २ प ५ ० ० २	१— = गु ३ गु ४ गु ३— गु ३ प २ ५ ० ० २
० ०	० ०	० ०	० ०	० ०
अधस्तनचरमगुण० = गु २ ४ गु ३— गु २ प ५ ० ० ० २ ० ० १— = गु ४ गु ३— गु २ प ५ ० ० ० २	मुखभूमीत्यादि १— = गु ३ गु ४ गु ३— गु २ प २ ५ ० ० ० २	ऋणं चरमगुण = गु १ ४ गु ३— गु २ प ५ ० ० ० २	उपरितनप्रथमगुणहानिः १— = गु ४ गु ३— गु २ ५ ० ० = गु २ ४ गु ३— गु २ ५	मुखभूमीत्यादि १— = गु ३ गु ४ गु ३— गु २ । २ ५

तेषां संकलनोच्यते—अधस्तनप्रथमगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यमिदं $=\dfrac{\text{गु २}}{\text{४ गु ३— गु २}}$ ($\frac{}{५}$) तच्चरमस्थितिद्रव्यमिदं $=\dfrac{\text{गु}}{\text{४ गु ३— गु २}}$ (१—, ५) मुहभूमीजोगदले—

$=\dfrac{\text{गु २}}{\text{४ गु ३— गु २ । २}}$ (१—, ५) पदगुणिदे $=\dfrac{\text{गु ३ गु}}{\text{४ गु ३— गु २ २}}$ (१—, ५) पदधणं होदि इति तदधस्तनप्रथमगुणहानिद्रव्यं स्यात् । अधस्तनचरमगुणहानिप्रथमस्थि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१—
तिद्रव्यमिदं = गु २ तच्चरमस्थितिद्रव्यमिदं = गु मुहभूमीजोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि इत्यधस्त-
४ गु ३— गु २ प ४ गु ३— गु २ प
५ a a a २ ५ a a a २

१— १— १—
नचरमगुणहानिद्रव्यं भवति = गु ३ गु अंतधणं गुणगुणियं = गु ३ गु २ अपवर्तितं = गु ३ आदिविहीणं रूऊणु-
४ गु ३— गु २ प २ ४ गु ३— गु २ । २ ४ गु ३— २
५ a a a २ ५ ५

१— १ ^
त्तरभजियं = गु ३ प प इत्यधस्तनगुणहानिसर्वधनं स्यात्। अत्रस्थं ऋणं तु प्रथमाधस्तनगुणहानौ गच्छमात्रस्वविशेषाः स्युः—
४ गु ३— २ a a a a a a
५

= गु चरमाधस्तनगुणहानावपि तावंतः स्युः = गु अंतधणं गुणगणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियमित्यध-
४ गु ३— गु २ ४ गु ३— २ गु प
५ ५ a a a २

१ ^
स्तनसर्वगुणहानिऋणं स्यात्— = प प उपरितनप्रथमगुणहानिप्रथमस्थितिद्रव्यमिदं = गु २ तच्चरमस्थितिद्रव्यमिदं—
४ गु ३— a a a a a a ४ गु ३— गु २
५ ५

१— १—
= गु मुहभूमीजोगदले पदगुणिदे पदधणं होदीति उपरितनप्रथमगुणहानिद्रव्यमिदं = गु ३ गु उपरितनचरमगुणहानिप्रथ-
४ गु ३— गु २ ४ गु ३— गु २ । २ ।
५ ५

१— १—
मस्थितिद्रव्यमिदं = गु २ तच्चरमस्थितिद्रव्यमिदं = गु मुहभूमीजोगदले = गु ३ पदगुणिदे
४ गु ३— गु २ प ४ गु ३— गु प २ ४ गु ३— गु २ प २
५ a a २ ५ a a २ ५ a a २

४७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पदधणं =
१—
गु ३ गु १ इत्युपरितनचरमगुणहानिद्रव्यं भवति। पुनः अंतधणं गुणगुणियं = १— गु ३ गु २ अपवर्तितं = १— गु ३
४ गु ३ - गु २ । २ प ४ गु ३ - गु २ । २ ४ गु ३ - २
५ a a २ ५ ५

आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं = १— गु ३ १ प a a इत्युपरितनगुणहानिसर्वधनं स्यात् । उत्तरराशित्रयं क्रमेणेदं—उपरितनधनं—
४ गु ३ - २ प a a
५ a a

= १— गु ३ १ प a a अधस्तनधनं— = १— गु ३ १ प a a a ऋणं = १ प a a a स्वस्वऋणरूपे स्वस्वाधःस्थापिते एवं—
४ गु ३ - २ प a a ४ गु ३ - २ प a a a ४ गु - ३ प a a a
५ a a ५ a a a ५ a a a

उपरि	अधस्त	ऋणं
प / a a १— = गु ३ ४ गु ३ - २ प ५ a a	प / a a a १— = गु ३ ४ गु ३ - २ प ५ a a a	प / a a a = ४ गु ३ - प ५ a a a
१— ० = गु ३ १ ४ गु ३ - २ प ५ a a	१— ० = गु ३ १ ४ गु ३ - २ प ५ a a a	० = १ ४ गु ३ - प ५ a a a

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपवर्तिते एवं

१— = गु ३ १ ४ गु ३– २ ५	१— = गु ३ १ ४ गु ३– २ ५	ऋणं = ४ ३– ५
१— ० = गु ३ १ ४ गु ३– २ प ५ a a	१— ० = गु ३ १ ४ गु ३– २ प ५ a a a	० = १ ४ गु ३– प ५ a a a

उभयधने संयोज्य अपवर्तिते अधिकरूपमधः संस्थाप्य (१— / = गु ३ / ४ गु ३– / ५) | (= १— / ४ गु ३– / ५) तेन प्रथमऋणं समानमिति देयं पुनः ऋणस्य ऋणं राशेर्ध-

नमिति प्रथमऋणस्य ऋणं द्वाभ्यां समच्छिद्य (= २ / ४ गु – प २ / ५ a a a) अधस्तनगुणहानिद्वितीयऋणरूपे संशोध्यं (१ ^ / = गु ३ / ४ गु ३– २ प / ५ a a a) इदं पुनः उपरि-

तनगुणहानिऋणेन स्वासंख्यातैकभागेन साधिकीकृत्य (१— / = गु ३ १ / ४ गु ३– प २ / ५ a a a) उभयधने गुणकारभूतत्रिगुणगुणहानौ किंचिदूनयित्वा (= गु ३– / ४ गु ३– / ५)

अपवर्तिते सर्वद्रव्यं पर्याप्तत्रसराशिः स्यात् । (= / ४ / ५) अत्र ग्रंथकारेण अधस्तनगुणहानिषु संकलनार्थं अधस्तनप्रथमगुणहानिप्रथमस्थितद्रव्यभूतयवम-

ध्यप्रमितमृणं युगदेव निक्षिप्य । १२८ । चरमाधस्तनगुणहानिचरमस्थितिद्रव्यमिदं । १६ । धनं कृत्वा संकलितं ततोधस्तनप्रथमादिगुणहानीनां प्र- ३५५

थमस्थितिद्रव्याणि रूपोनानि चरमस्थितिद्रव्याणि गुणहानिमात्रगुणकाराणि ऋणरहितानि सूचितानि—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

= १ ∩ गु २ ४ गु ३ - गु २ ५	= ०००४ गु गु ३ - गु २ ५	= १ ∩ गु २ ४ गु ३ - गु २ । २ ५	= ०००४ गु गु ३ - गु २ । २ ५	=गु ०००४ गु ३ - गु २ प ५ ‌ ‌ ३३३२ ० ० ० ० ०
				= ∩ गु ४ गु ३ - गु २ प ५ ‌ ‌ ३३३२

तदर्थेनेन वृत्तिकारोक्तसंकलना विरुध्यते तन्न । धनर्णयोर्हीनाधिक्याभावात् ॥ २४९ ॥ अथोक्तं द्वींद्रियपर्याप्तपरिणामयोगोत्कृष्टपर्यंतेषु निरंतरं सूच्यंगुलासंख्येयभागमात्रजघन्यस्पर्धकवृद्ध्या वर्धितेषु समस्तयोगस्थानेषु जघन्यादेकैकस्थानस्वामिनः यवाकाररचनारूपेण स्वस्थाने चयाधिकाः परस्थाने द्विगुणहीनाश्च भूत्वा सर्वोत्कृष्टयोगस्थाने सर्वतः स्तोकाः ते रचिता जीवाः स्वस्वयोगस्थानेन कियंतं प्रदेशबंधं कुर्वंतीति प्रश्ने तद्वृद्धिप्रमाणमाह—

नानागुणहानिप्रमाण दूवा माडि परस्पर गुणिए सो अन्योन्याभ्यस्त राशि है। सो जैसें नीचली आठ अर ऊपरली वत्तीस अन्योन्याभ्यस्त राशि कह्या तैसें ही सामान्यपनैं पल्यके असंख्यातवै भाग प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि है तथापि नीचली अन्योन्याभ्यस्तराशितैं ऊपरली अन्योन्याभ्यस्तराशि असंख्यात गुणां है । अव तहां जघन्य परिणाम योगतैं लगाय उत्कृष्ट परिणाम योग पर्यंत योगस्थानकविषैं जीवनिका विभाग अंकसंदृष्टिवत् असैं जानना । किंचित् उन तिगुणी गुणहानि आयामका भाग सर्वद्रव्यकौं दीएं यव मध्यका प्रमाण होइ। याकौं दोगुणहानिका भाग दीएं चयका प्रमाण होइ । चय कहौ वा विशेष कहौ दोऊ एकार्थ हैं । इस चयकौं दोगुणा हानिकरि गुणैं यव मध्य हो है। बहुरि तीहिं ऊपरकी गुणहानिविषैं प्रथम निषेक यव मध्य प्रमाण ऊपरि द्वितीयादि निषेक एक एक चय घाटि जानना। सो एक घाटि गुणहानिका आयाम प्रमाण चय यवमध्यमैंस्यों घटैं प्रथम गुणहानिका अंत निषेक विषैं प्रमाण हो है । यामै एक विशेष घटाएं यव मध्यतैं आधा प्रमाण होइ सोई द्वि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीय गुणहानिका प्रथम निषेक जानना। यातैं ऊपरि एक विशेष घटाएं द्वितीयादिक निषेक होंइ सो एक घाटि गुणहानिका आयाम प्रमाण विशेष घटैं अंत निषेक होइ इहां प्रथम गुणहानिविर्षे विशेषका प्रमाण था तींहस्यों आधा द्वितीय गुणहानिविषैं विशेषका प्रमाण जानना। बहुरि द्वितीय गुणहानिका अंत निषेकमैंस्यौं एक घटाएं द्वितीय गुणहानिका प्रथम निषेकतैं आधा प्रमाण होइ सोई तृतीय गुणहानिका प्रथम निषेक जानना। यातैं द्वितीय गुणहानिका विशेषतैं आधा प्रमाण लिएं जो विशेष सो एक एक विशेष घटाएं द्वितीयादिक निषेक होइ ऐसै अंतकी गुण हानि पर्यंत जानना। गुणहानि गुणहानि प्रति जीव द्रव्य आधे आधे जानने। बहुरि नीचली गुणहानिविषैं यव मध्यके नीचे प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेकतैं लगाय अंतकी गुणहानिका अंतनिषेक पर्यंत गुणहानि गुणहानि प्रति समस्त निषेकनिविषैं जो जो ऊपरली गुणहानिका निषेकनिविषैं प्रमाण कह्या तिनमैंस्यौं अपनी अपनी गुणहानिविषैं जितना जितना विशेषका प्रमाण कह्या तितना तितना निषेक विषैं ऋण कीएं निषेकनिका प्रमाण हो है। सोई कहिए है—

ऊपरिकी प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक यवमध्य प्रमाण है तामैंस्यों प्रथम गुणहानिविषैं जितना विशेषका प्रमाण कह्या है तितना घटाएं नीचली प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेकका प्रमाण हो है। बहुरि ऊपरकी प्रथम गुणहानिका द्वितीय निषेकविषैं जो प्रमाण कह्या है तामैंस्यों प्रथम गुणहानिका विशेष प्रमाण ऋण घटाएं नीचली प्रथम गुणहानिके द्वितीय निषेकका प्रमाण होहै। ऐसे प्रथम गुणहानिका अंत विषेक पर्यंत जानना। बहुरि ऊपरकी द्वितीय गुणहानिविषैं जो प्रथम निषेकका प्रमाण था तामैस्यों द्वितीय गुणहानिविषैं जो विशेषका प्रमाण कह्या है तितना घटाएं नीचला द्वितीय गुणहानिविषैं प्रथम निषेकका प्रमाण जानना। ताका द्वितीय निषेकमैस्यौं तितना ही घटाएं याका द्वितीय निषेकका प्रमाण जानना ऐसैं अंत निषेक पर्यंत जानना ऐसैंही तृतीयादिक गुणहानि विषैं भी ऋणका प्रमाण अपना अपना विशेषके समान जानि निषेकनिका प्रमाण जानना। नीचली गुणहानिकी रचनाविषैं ऋणकौं मिलाएं नीचली गुणहानिका प्रमाण ऊपरिकी गुणहानि रचनाके समान सर्व रचना हो है ऐसै

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिस जिस निषेकविषैं जितना जितना प्रमाण होइ तिस तिस योगस्थानविषैं तितना तितना जीवनिका प्रमाण जानना। बहुरि गुणहानिविषैं सर्वद्रव्य जोडनेके अर्थि 'मुहभूमी जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदी' इस सूत्रकरि मुख तौ अंत निषेक अर भूमि आदि निषेक इनकौं मिलायकरि आधा कीजिए पीछैं गुण हानिका आयामका प्रमाण करि गुणीएं जो जो प्रमाण होइ तितना तितना अपनी अपनी गुणहानि विषैं सर्वद्रव्यका प्रमाण जानना। सो प्रथम गुणहानिके सर्वद्रव्यतैं द्वितीयगुणहानिका द्रव्य आधा है। ऐसैं गुणहानि गुणहानि प्रति द्रव्य आधा आधा जानना सर्व गुणहानिनिके द्रव्य जोडनेके अर्थि 'अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादि सूत्रकरि प्रथमगुणहानि का द्रव्य अंतधन ताकौं दोय गुणकार करि गुणि तामैं अंत गुणहानि का द्रव्य आदि धन सो घटाएं एक घाटि उत्तर एक ताका भागदीजिए ऊपरि वा नीचैं सर्व गुणहानिका द्रव्य प्रमाण हो है। बहुरि नीचली गुणहानिविषैं जो ऋण कह्या सो अपना अपना विशेष प्रमाण जो ऋण ताकौं गुणहानिका आयाम करि गुण अपनी अपनी गुणहानिविषैं ऋणका प्रमाण हो है। सर्व ऋण जोडनेकौं अंतधणं गुणगुणियं इत्यादि सूत्रकरि प्रथम गुणहानिका ऋणको गुणकार दोयकरि गुणि तामैं अंत गुणहानिका ऋणकौ घटाइ एक घाटि उत्तर एक का भाग दीएं जो प्रमाण होइ तिस ऋणके प्रमाणकौं ऊपरिके गुणहानि द्रव्यमें घटाएं अथवा नीचली गुणहानिका द्रव्यमें मिलाएं नीचली ऊपरली गुणहानिविषैं द्रव्य समान हो है। बहुरि ऊपरली वा नीचली सर्व गुणहानि संबंधी सर्व द्रव्यका जोड दीए पर्याप्त त्रस जीवनिका प्रमाण हो है ऐसैं पर्याप्त त्रस संबंधी पारिणाम योगस्थानकानिविषैं पर्याप्त त्रस जीवनिका प्रमाण जानना। अंकनिकी सहनानी पूर्वै कही है ताकरि कथनकौं नीके समझ लेना। ऊपरिकी गुणहानिका प्रथम निषेक रूप जो योगस्थान ताके धारक जीव बहुत हैं। ताके नीचै वा ऊपरि जे योगस्थान है तिनके धारक पूर्वोक्त अनुक्रम लीए थोरे जीव है। याहीतैं यव आकार रचना कही है। २४९। आगैं इन योग स्थानिकके धारक जीव कितना कितना प्रदेश बंध करे है इस प्रश्नकौं करते समयप्रबद्धकी वृद्धिका प्रमाण कहे हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इगिठाणफड्ढयाओ समयपबद्धं च जोगवड्ढी य।
समयपबद्धचयट्ठं एदे हु पमाणफलइच्छा ॥२५०॥

एकस्थानस्पर्धकानि समयप्रबद्धं च योगवृद्धिश्च।
समयप्रबद्धचयार्थमेते हि प्रमाणफलेच्छाः ॥ २५० ॥

जी० प्र०—तद्द्वींद्रियपर्याप्तस्य जगन्यपरिणामयोगस्थानस्पर्धकानि समयप्रबद्धः योगवृद्धिश्चामी त्रयः समयप्रबद्धचयनिमित्तं क्रमेण प्रमाणफलेच्छाराशयो भवंति। प्र= व वि १६ ४ – । फ–स। इ व वि १६ ४ २ इति लब्धसमयप्रमाणेन स २ जघन्यसमयप्रबद्धो निरंतरं वर्धित्वा व-
a a – a a

र्धित्वा यत्र योगस्थानं द्विगुणं तत्र द्विगुणः, यत्र चतुर्गुणं तत्र चतुर्गुणः एवं गत्वा चरमे छेदासंख्यातगुणः ॥ २५० ॥ इतीमं क्रमं गाथापंचकेनाह—

सं० च०—तीहिं वेंद्री पर्याप्तका जघन्य परिणाम योगस्थान संबंधी स्पर्धक अर समय प्रवद्ध अर योगनिकी वृद्धि ए तीन समय प्रवद्ध एक एक योगस्थानविषैं बंधनेका प्रमाण ल्यावनेके अर्थि प्रमाण फल इच्छा इन तीन राशिरूप हो है। जहां जघन्य योगस्थानविषैं श्रेणीका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक पाइए है सो तौ प्रमाण राशि अर तिस जघन्य योगस्थान करि जघन्य समय प्रबद्ध प्रमाण प्रदेशनिका बंध हो है सो फलराशि वहुरि एक एक योगस्थानविषैं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बंधती पाइए है तातै सो इच्छा राशि तहां फल करि इच्छाकौं गुणैं प्रमाणका भाग दीएं जो लब्धि राशिका प्रमाण आया तितना तितना प्रदेशनिकी अधिकताने लीयां एक एक ऊपरिके योगस्थाननिकरि समय प्रवद्ध बंधैं हैं। जघन्य योगस्थान करि जघन्य समय प्रबद्ध बंधे हैं ताके अनंतर योगस्थान करि इतना प्रमाण करि बंधता समय प्रवद्ध बंधे है ऐसैं निरंतर बंधिकरि जहां जघन्य योगस्थान दूणां है तहां जघन्य समय प्रवद्ध दूणा बंधै है जहां चौगुणा है तहां चौगुणा बंधै है ऐसैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संज्ञी पर्याप्तका उत्कृष्ट योगस्थानविषैं जघन्य योगस्थान पल्यका अर्धच्छेदनिकैं असंख्यातवां भाग गुणा हो है। तहां जघन्य समय प्रबद्धकौं पल्य का अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भाग करि गुणीए ऐसा समय प्रबद्ध बंधै है। २५०। आगैं इस कथनका अर्थ पांच गाथा निकरि कहै हैं—

बीइंदियपज्जत्तजहण्णट्ठाणादु सण्णिपुण्णस्स।
उक्कस्सट्ठाणोत्ति य जोगट्ठाणा कमे उड्ढा ॥२५१॥

द्वींद्रियपर्याप्तजघन्यस्थानात् संज्ञिपूर्णस्य।
उत्कृष्टस्थानमिति च योगस्थानानि क्रमेण वृद्धानि ॥ २५१ ॥

जी० प्र०—द्वींद्रियपर्याप्तजीवपरिणामयोगजघन्यस्थानात् संज्ञिपर्याप्ततदुत्कृष्टस्थानपर्यंतं परिणामयोगस्थानानि अवस्थितवृद्धिक्रमेण वृद्धानि संति।

सं० च—वेंद्री पर्याप्त जीवका जघन्य परिणाम योगस्थानतैं लगाय संज्ञी पर्याप्त जीवका उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान पर्यंत परिणाम योगस्थान अनुक्रमतैं एक एक स्थानविषैं समानवृद्धि प्रमाणकरि बधती जानने ॥२५१॥

सेढियसंखेज्जादिमा तस्स जहण्णस्स फड्ढया होंति।
अंगुलअसंखभागा ठाणं पडि फड्ढया उड्ढा ॥२५२॥

श्रेण्यसंख्येयिमानि तस्य जघन्यस्य स्पर्धकानि भवंति।
अंगुलासंख्यभागानि स्थानं प्रति स्पर्धकानि वृद्धानि ॥ २५२ ॥

जी० प्र०—तेषु द्वींद्रियपर्याप्तजघन्यपरिणामयोगस्थानं श्रेण्यसंख्येयभागमात्रस्पर्धकं। व वि १६ ४ — / a। तदनंतरविकल्पमादिं कृत्वा प्रतिस्थानं सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्रजघन्यस्पर्धकानि वर्धंते ॥ २५२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं० च—तिनविषैं जो वेंद्री पर्याप्तकका जघन्य परिणाम योगस्थान है सो जगच्छ्रेणीका असंख्यातवां भागमात्र स्पर्धकनिका समूहरूप बहुरि याके अनंतर स्थानतें लगाय एक एक स्थान प्रति सूच्यगुंलका असंख्यातवां भाग प्रमाण जघन्य स्पर्धक बंधती जानने। जघन्य स्पर्धकके जेते अविभाग प्रतिच्छेद हैं तिनकों सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागकरि गुणें जो प्रमाण होइ तितने तितने अविभाग प्रतिच्छेद एक एक योगस्थानविषैं बंधती जानने।२५२।

धुववड्ढीवड्ढंतो दुगुणं दुगुणं कमेण जायंते।
चरिमे पल्लच्छेदाऽसंखेज्जदिमो गुणो होदि ॥२५३

ध्रुववृद्धिवर्धमानानि द्विगुणं द्विगुणं क्रमेण जायंते।
चरमे पल्यच्छेदासंख्येयिमो गुणो भवति ॥ २५३ ॥

जी० प्र०—ध्रुववृद्ध्या वर्धमानयोगस्थानानि द्विगुणद्विगुणानि भूत्वा चरमे संज्ञिपर्याप्तोत्कृष्टपरिणामयोगस्थाने पल्यच्छेदासंख्यातैकभागमात्रो गुणाकारः स्यात्। संदृष्टिः—

योगस्थान	व वि १६ ४ — a	२ १ a — a	२।२ a — २ — a a०००	२।१ a — a।२	२।२ — a २०००a२।२ — a	२।१ a —२२ a	२।२ a —२२००० a	—२२२ a ० ० ०	०००—छे००००—छे aa२ aa
समय प्रबद्ध	स	स २ — a a स	स २।२ — a a स०००स२	स २।१ a — a स २	स २।२ — a a स २०००स२२	स२।१ — a a स२।२	स २।२ — a a स २।२।०००	स२।२।२	०००स छे००००स छे a २ a

॥ २५३ ॥ ते स्थानविकल्पाः कति ? इति चेदाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

स० चं०–ऐसे ध्रुव कहिए एकरूप स्थानक स्थानक प्रति वृद्धि ताकरि बंधता जघन्य स्थान दूणा है। बहुरि तैसैं हीं बंधता बंधता तिसतैं भी दूणा हो है। ऐसैं अनुक्रमतैं दूणा दूणा होतैं अंतका संज्ञी पर्याप्त जीवका उत्कृष्ट परिणाम योगस्थानविषैं पल्यका अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भागप्रमाण गुणकार होहै। जघन्य योगस्थानके अविभाग प्रतिच्छेदनिके प्रमाणकौं पल्यका अर्धच्छेदनिका असंख्यातवां भागकरि गुणैं जो प्रमाण होइ तितने सर्वोत्कृष्ट योगस्थानकका अविभाग प्रतिच्छेद जानने ॥ २५३ ॥ ते भेद कितने हैं ? सो कहिए–

आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा।
सेढिअसंखेज्जदिमा जोगट्ठाणा णिरंतरगा ॥२५४॥

आदौ अंते शुद्धे वृद्धिहते रूपसंयुते स्थानानि।
श्रेण्यसंख्येयिमानि योगस्थानानि निरंतरकानि ॥ २५४ ॥

जी० प्र०—आदौ जघन्यस्थाने व वि १६ ४ – (a) । अंते उत्कृष्टस्थाने व वि १६ ४ – (a a) छे शुद्धे शोधिते सति शेषे व वि १६ ४ – (a a) छे (१ ^ / १——) सूच्यंगुलासंख्येभागजघन्यस्पर्धकवृद्धया भक्ते सवृद्धिकस्थानानि। अत्र जघन्यस्थाने निक्षिप्ते समस्तनिरंतरयोगस्थानानि – २ (a a a) छे (१ ^) एतानि श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्राण्येव – (a) ॥ २५४ ॥

स० चं०–आदि तो जघन्य स्थान अर अंत उत्कृष्ट स्थान इनकौं शोधिए अंतका उत्कृष्ट स्थानकके जेते अविभाग प्रतिच्छेद है तिनमैंस्यो जघन्य स्थानकके अविभाग प्रतिच्छेद घटाइ दीएं जो प्रमाण आवै ताकौ वृद्धिका ३६२

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाग दीजिये सो एक एक स्थानकविषै सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागप्रमाण जघन्यस्पर्धकनिके जेते अविभाग प्रतिच्छेद होंहि तितने बंधे हैं तातैं इनका भाग दीजिए जो प्रमाण आवै तितना वृद्धि सहित स्थानक जानना। इनविषैं एक जघन्य योगस्थान मिलाइए जो प्रमाण होइ तितने सर्व निरंतर योगस्थान जानने। ते ए स्थान जगच्छ्रेणीके असंख्यातवें भाग प्रमाण हैं ॥ २५४ ॥

अंतरगा तदसंखेज्जादिमा सेढी असंखभागा हु।
सांतरणिरंतराणिवि सव्वाणिवि जोगठाणाणि ॥२५५॥

अंतरगाणि तदसंख्येयिमानि श्रेण्यसंख्येयभागानि हि।
सांतरनिरंतराण्यपि सर्वाण्यपि योगस्थानानि ॥ २५५ ॥

जी० प्र०—अंतरगतयोगस्थानानि निरंतरयोगस्थानानामसंख्यातैकभागोपि — २ छे (१ ⌒ / ० ० ० ०; १——) श्रेण्यसंख्यातैकभाग एव। सांतरनिरंतराण्यपि अंतरगतानामसंख्यातैकभागोपि — छे (१ ⌒ / ० २ ० ० ०, ०; १——) श्रेण्यसंख्यातैकभाग एव। तानि त्रिविधानि मिलित्वापि सर्वाणि श्रेण्यसंख्यातैकभागमात्राण्येव— — छे (१ ⌒ / ० २ ० , ०; १——) ० (१— / ०) ॥ २५५ ॥ एतेषु आयंतस्थाने आह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं० चं–बहुरि अंतरगत योगस्थान ते निरंतर योगस्थाननिके असंख्यातवे भागि प्रमाण है ते भी जगच्छ्रेणीके असंख्यातवै भाग ही हैं। बहुरि सांतर निरंतर मिश्ररूप योगस्थान ते अंतरगत योगस्थाननिके असंख्यातवै भाग प्रमाण हैं ते परि जगच्छ्रेणीकै असंख्यातवै भाग हैं। बहुरि इन तीनों योगस्थानकनिकौं मिलाए जो सर्व योगस्थान हैं तेभी जगच्छ्रेणीकैं असंख्यातवैं भाग प्रमाण है जातैं असंख्यातके भेद बहुत हैं सो यथायोग्य असंख्यातका भाग जानना ॥ २५५ ॥ इन योगस्थानकनिविषैं आदि अंतस्थान कहैं हैं—

सुहुमणिगोदअपज्जत्तयस्स पढमे जहण्णओ जोगो ॥
पज्जत्तसण्णिपंचिंदियस्स उक्कस्सओ होदि ॥२५६

सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तकस्य प्रथमे जघन्यको योगः ।
पर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियस्योत्कृष्टको भवति ॥ २५६ ॥

जी० प्र०—उक्तविशेषणविशिष्टं सूक्ष्मनिगोदापर्याप्तस्य चरमभवप्रथमसमये यदुपपादयोगजघन्यस्थानं तदाद्यं भवति । पर्याप्तसंज्ञिपंचेंद्रियस्य परिणामयोगोत्कृष्टस्थानं तदंत्यं भवति ॥ २५६ ॥ उक्तचतुर्विधबंधानां कारणान्याह—

सं० च–इन सर्व योगस्थाननिविषैं सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि अपर्याप्तककैं अंतका क्षुद्रभवका पहिला समयविषैं जो उपपाद जघन्य योगस्थान हो हैं सो आदि स्थान जानना। बहुरि सैनी पंचेंद्री पर्याप्तजीवकैं जो उत्कृष्ट परिणाम योगस्थान है सो अंतस्थान जानना ॥ २५६ ॥ कहे च्यारि प्रकारके बंध तिनके कारण कहैं हैं—

जोगा पयडिपदेसा ठिदिअणुभागा कसायदो होंति ।
अपरिणदुच्छिण्णेसु य बंधाट्ठिदिकारणं णत्थि ॥ २५७॥

योगात्प्रकृतिप्रदेशौ स्थित्यनुभागौ कषायतो भवतः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपरिणतोच्छिन्नेषु च बंधः स्थितिकारणं नास्ति ॥ २५७ ॥

जी० प्र०—प्रकृतिप्रदेशबंधौ योगाद्भवतः। स्थित्यनुभागबंधौ कषायतो भवतः। जघन्यतः एकसमयं उत्कृष्टत अंतर्मुहूर्तं अपरिणतकषायस्थानोदयोपशांतकषाये क्षपितकषायक्षीणकषायसयोगयोश्च तात्कालिकबंधस्य स्थितिबंधकारणं नास्ति । चशब्दादयोगकेवलिनि प्रकृतिप्रदेशबंधकारणं योगः स्थित्यनुबंधकारणं कषायस्थानोदयश्च नास्ति ॥ २५७ ॥ अथ योगस्थानप्रकृतिसंग्रहस्थितिविकल्पस्थितिबंधाध्यवसायानुभागबंधाध्यवसायकर्मप्रदेशानामल्पबहुत्वं गाथात्रयेणाह—

सं० च०—प्रकृति बंध अर प्रदेश बंध ए दोऊ तौ योगानिके निमित्ततैं होहैं। जैसा शुभ वा अशुभ योग होइ तैसा प्रकृति बंध वा जैसा योगस्थान होइ तैसाही समय प्रवद्ध बंध तातैं इनकौं निमित्त योग है। बहुरि स्थितिबंध अर अनुभाग बंध कषायनिके निमित्ततैं हो हैं जैसा कषाय होहै तैसीही यथायोग्य स्थिति बंधै अर जैसा कषाय होइ तैसा यथा योग्य अनुभाग बंध तातैं इनका निमित्त कषाय है। बहुरि जघन्य एक समय उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त काल प्रमाण जाके कषाय स्थान उदय रूप नाही ऐसा उपशांत कषाय, बहुरि कषाय रहित क्षीण कषाय सयोगी जिन इनकें तत्काल बंध है ताका स्थिति बंधका कारण नाही। चकारतैं अयोगी केवलीविषैं च्यार्यौं बंधका कारण योग अर कषाय नाही है।२५७। आगैं योगस्थान अर प्रकृति संग्रह अर स्थितिभेदअर स्थिति बंधावसायस्थान अर अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थान अर कर्मनके प्रदेश इनका अल्पबहुत्व तीन गाथानिकरि कहे हैं।

सेढिअसंखेज्जदिमा जोगट्ठाणाणि होंति सव्वाणि।
तेहिं असंखेज्जगुणो पयडीणं संगहो सव्वो॥ २५८॥

श्रेण्यसंख्येयिमानि योगस्थानानि भवंति सर्वाणि।
तैरसंख्येयगुणः प्रकृतीनां संग्रहः सर्वः ॥ २५८ ॥

जी० प्र०—निरंतरसांतरतदुभयभेदभिन्नसर्वयोगस्थानानि श्रेण्यसंख्येयभागमात्राणि $\bar{a}$ $\frac{2}{a}$ ३१ $\frac{\overset{1-}{a}}{a}$ एभ्योऽसंख्यातलोकगुणः सर्वप्रकृतिसं-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

ग्रहः । ≡ a = a २ तद्यथा–ज्ञानावरणीयस्य उत्तरप्रकृतयः पंच तत्र श्रुतावरणानि पर्यायज्ञानस्य निरावरणत्वात् असंख्यातलोकषट्स्थानवृद्धिधितपर्यायसमासादिभेदमात्राणीत्येतावंति ≡ a ≡ a 'श्रुतं मतिपूर्वं' इति मत्यावरणान्यपि तावंति ≡ a ≡ a देशावध्यावरणानि घनांगुलासंख्येयभागोने लोके सूच्यंगुलासंख्येयभागगुणिते सैके सति यत्प्रमाणं तावंति– ≡ ६ । २ परमावध्यावरणानि स्वावगाहविकल्पहततेजस्कायिकराशिमात्राणि ≡ a ६ a सर्वावध्यावरणमेकं १ । मनःपर्ययज्ञानावरणान्यसंख्यातकल्पमात्राणि । क a । केवलज्ञानावरणमेकं १ मिलित्वा सर्वज्ञानावरणानि अवधिमनःपर्ययकेवलज्ञानावरणाधिकश्रुतावरणयुतमत्यावरणमात्राणि स्युः ≡ a ≡ a २ सर्वाः प्रकृतयो नामकर्मप्रत्ययाः इति नारकानुपूर्व्यं नरकक्षेत्रविपाकित्वात्तत्क्षेत्रमेकरज्जुप्रतरमुष्ट्रादिमुखाकारेभ्योऽन्यत्रोत्पत्त्यभावात् प्रमाणसूच्यंगुलासंख्यातैकभागायामगुणितं तिर्यग्मनुष्यपंचेंद्रियपर्याप्तानां तत्र गमनकाले नरकानुपूर्व्योदयेन पूर्वाकाराविनाशाज्जघन्यावगाहघनांगुलसंख्यातैकभागेन गुणिते प्रथमविकल्पः = २ ६ ४९ a ९ संख्यातघनांगुलैर्गुणिते चरमः = २ ६ ९ ४९ a आदी अंते सुद्धे इत्यादिना एतावद्विकल्पं स्यात् । = २ ६ । ९ । ९ ४९ a ९ तिर्यगानुपूर्व्यं तिर्यक्क्षेत्रविपाकीति तत्क्षेत्रं सर्वलोकः । नारकत्रसस्थावरकर्मभूमिमनुष्यसहस्रारपर्यंतदेवानां तत्र गमनकाले आयुर्गतिसहचरिततिर्यगानुपूर्व्योदयात् सूक्ष्मनिगोद लब्ध्यपर्याप्तजघन्यावगाहनेन गुणिते प्रथमविकल्पः ≡ ६ a उत्कृष्टावगाहनेन गुणिते चरमः ≡ ६ ९ 'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहिदे रूवसंजुदे ठाणा ; इत्येतावद्विकल्पं स्यात् ≡ ६ ९ a a । मनुष्यानुपूर्व्यं मनुष्यक्षेत्रविपाकित्वात् तत्क्षेत्रं तेषां त्रसपर्याप्तापर्याप्तपंचेंद्रियत्वात् उत्पत्तियोग्यमनुष्यक्षेत्रवृत्तविष्कंभगुणितत्रसनालीप्रतरप्रमितं = ४५ ल ४९ । तत्समचतुरस्रं कुतो न गृह्यते मानुषोत्तराद्बहिश्चतुःकोणेषु मनुष्याणामनुत्पत्तेः । आद्यषट्पृथ्वीनारकत्रसस्थावरकर्मभूमितिर्यग्मनुष्यदेवानां तत्र गमनसमये तदायुर्गतिसहचरितानुपूर्व्योदयाज्जघन्यावगाहनेन गुणिते प्रथमविकल्पः = ४५ ल ६ ४९ a उत्कृष्टावगाहनेन गुणिते

चरमः = ४५ ल ६ ७ृ / ४९ आदी अंते सुद्धे इत्यादिना एतावद्विकल्पं = १— ४५ ल ६ ७ृ ३ १ ८ / १— ४९ ३ देवानुपूर्व्यं देवगतिक्षेत्रविपाकित्वात्तत्क्षेत्रं तेषां च सत्वाद्विवत्तितज्योतिर्लोकावसाननवशतयोजनगुणितत्रसनालीप्रतरं = ९०० / ४९ शेषदेवोत्पत्तिक्षेत्रं स्तोकत्वान्न विवक्षितं पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्याणामेव तत्र गमनकाले देवायुर्गतिसहचरितानुपूर्व्योदयेन घनांगुलसंख्येभागेन गुणिते प्रथमविकल्पः = ९०० । ६ / ४९ ७ृ संख्यातघनांगुलैर्गुणिते चरमः— १——— = ९०० । ६ ७ृ / ४९ आदी अंते सुद्धे इत्यादिनानीतैतावद्विकल्पं स्यात् = ९०० । ६ ७ृ ७ृ १ ८ / । ४९ ७ृ अमीभिरानुपूर्व्योत्तरोत्तरभेदैः प्रागानीतज्ञानावरणोत्तरभेदेषु साधिकीकृतेषु प्रकृतिसंग्रहः एतावान् स्यात् ≡ ३ ≡ ३ २ शेषोत्तरप्रकृत्युत्तरोत्तरभेदानामुपदेशो नास्ति। इत्ययं संग्रहो रचनानुसारेण व्याख्यातो बहुश्रुतैः शोधितव्यः ॥ २५८ ॥

सं० च०—निरंतर वा सांतर वां सांतर निरंतर भेदकौं लीएं सर्व योगस्थान जगच्छ्रेणीके असंख्यातवै भाग प्रमाण हैं। वहुरि तिनतैं असंख्यात लोक गुणा सर्व प्रकृति संग्रह है। सर्व योगस्थानके प्रमाणकौं लोकतैं असंख्यात गुणा प्रमाणकरि गुणैं सर्व उत्तरोत्तर कर्म प्रकृतिनिका प्रमाण हो है। सो कहिए है—

ज्ञानावरणीय कर्मकी उत्तर प्रकृति पांच तहां श्रुतज्ञानावरणविषैं पर्याय ज्ञान तौ निरावरण है तातैं असंख्यातलोकवार षट् स्थान वृद्धिकरि वंधतै ऐसैं जे पर्याय समास ज्ञानके भेद तिनके आवरणकी अपेक्षा असंख्यात लोककौं असंख्यात लोक करि गुणीए इतने श्रुतज्ञानावरणके भेद हैं। वहुरि श्रुतज्ञान है सो मति पूर्वक है तातैं तितने ही मतिज्ञानावरणके भेद हैं। वहुरि अवधिज्ञानावरण विषैं घनांगुलका असंख्यात भाग जामैं घटाइए ऐसा जो लोक ताकौं सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग करि गुणीएं जो प्रमाण होइ तामैं एक और मिलाइए एते देशावधिके भेद हैं तातैं देशावधि आवरणके भी इतने ही भेद हैं। वहुरि अग्नि कायके जीवनिके प्रमाणकौं अग्नि कायका

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शरीरकी अवगाहनाके भेदनिका प्रमाण करि गुणें जो प्रमाण होइ तितने परमावधिके भेद हैं तातैं परमावधि आवरणके भी इतने ही भेद हैं। बहुरि सर्वावधि एकही प्रकार है तातैं सर्वावधि आवरणका भी एकही भेद है। बहुरि वीस कोडाकोडी सागरका समय प्रमाण कल्पकालकौं असंख्यात गुणा कीजिए इतने मनः पर्यय ज्ञानके भेद है तातैं मनः पर्यय ज्ञानावरणके भी इतने ही भेद हैं। बहुरि केवलज्ञान अभेद है तातै केवलज्ञानावरणका एक भेद है। ऐसैं सर्व मिलिकरि अवधि मनः पर्यय केवल ज्ञानावरण करि अधिक श्रुतज्ञानावरण युक्त मति ज्ञानावरण प्रमाण ज्ञानावरणकी उत्तरोत्तर प्रकृतिनिके भेद हो हैं। बहुरि सर्व प्रकृति नामकर्मके निमित्ततैं हैं तातै नाम कर्म की प्रकृतिनिविषैं आनुपूर्वी प्रकृतिके उत्तरोत्तर भेद कहिए है। आनुपूर्वी क्षेत्रविपाकी है तातैं क्षेत्रकी अपेक्षा याके भेद जानने तहां नारकानुपूर्वी नरकक्षेत्रविपाकी है सो नरक क्षेत्र एक राजू प्रतर प्रमाण है। बहुरि तहां उष्ट्रादि मुखके आकार जे योगस्थान तिन विना अन्यत्र नाहीं उपजै है तातैं तीन अंगुलनिके भेदनि विषैं प्रमाण रूप सूच्यंगुलका असंख्यातवां भाग प्रमाण आयाम करि तिस क्षेत्रकौं गुणिए इतना है। बहुरि पर्याप्त पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य जब नरककौं गमन करै तब नारकानुपूर्वीका उदय होइ तीहि करि पूर्वै तिर्यंच मनुष्य पर्यायविषैं आकार था ताका नाश न होइ तातैं तहां पर्याप्त पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्यकी जघन्य अवगाहना तौ घनांगुलके संख्यातवे भाग प्रमाण है तिस करि पूर्वोक्त क्षेत्रकौं गुणे जो क्षेत्रका प्रमाण होइ सो तौ नारकानुपूर्वीका पहिला भेद है। बहुरि तिनहीका उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण है तिस करि पूर्वोक्त क्षेत्र गुणें जो प्रमाण होइ सो नारकानुपूर्वीका अंतका भेद है 'आदी अंते सुद्धे वड्ढिहदे रूवसंजुदे ठाणा' इस सूत्र करि अंतका भेद विषैं जितना क्षेत्रके प्रदेशनिका प्रमाण होइ तामैं पहिला भेदके क्षेत्रका प्रदेशनिका प्रमाण घटाएं अवशेष रहै ताकौं एक एक भेद विषैं एक एक प्रदेश बंधती है तातैं एकका भाग दीएं जेतेके तेते रहैं तामैं एक मिलाए जो प्रमाण होइ तितना नारकानुपूर्वीका उत्तरोत्तर भेद जानने। बहुरि ऐसैंही तिर्यंचानुपूर्वी तिर्यंच क्षेत्र विपाकी है सो तिर्यंचका क्षेत्र सर्व लोक है बहुरि भोगभूमि बिना नारकी अर त्रस स्थावर तिर्यंच अर कर्मभूमिया मनुष्य अर सहस्रार पर्यंतदेव ए तिर्यंच

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गतिविषैं उपजैं हैं सो आनुपूर्वीके उदयतैं पूर्व शरीरके आकारकौं न छांडे है तातैं जघन्य अवगाहना सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि अपर्याप्तककी घनांगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण ताकरि पूर्वोक्त क्षेत्रकौं गुणैं तिर्यंचानुपूर्वीका प्रथम भेद होइ है। बहुरि उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण ताकरि गुणैं अंतका भेद होइ सो आदी अंते सुद्धे इत्यादि सुत्रकरि अंतमैंस्यौं आदिकौं घटाएं एकका भाग दीएं एक मिलाएं जो प्रमाण होइ तितने भेद तिर्यंचानुपूर्वीके जानने। बहुरि मनुष्यगत्यानुपूर्वी मनुष्यक्षेत्रविपाकी है सो मनुष्य क्षेत्र तिन मनुष्यनिकैं पर्याप्त अपर्याप्त पंचेंद्रियपना है तातैं तिनकी उत्पत्तियोग पैंतालीस लाख योजनप्रमाण गोल विष्कंभकरि गुणित त्रसनाली एक राजू ताका प्रतर प्रमाण है। इहां मानुषोत्तर परैं च्यार्‍यो कोणविषैं भी मनुष्य न उपजै तातैं चौकोर क्षेत्र न कह्या सो आदिकी छह पृथ्वीका नारकी वा त्रस स्थावर कर्मभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य ए मनुष्यविषैं उपजैं हैं सो आनुपूर्वीके उदयकरि पूर्व आकारकौं न छांडैं तातैं जघन्य अवगाहना घनांगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण तीहिकरि गुणैं पहला भेद अर उत्कृष्ट अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण ताकरि गुणैं अंतका भेद सो 'आदी अंते सुद्धे' इत्यादिक सूत्रकरि अंतमेस्यौं आदिकौं घटाएं एकका भाग दीएं एक मिलाएं जो प्रमाण होइ 'तितने भेद मनुष्यानुपूर्वीके जानने। बहुरि देवानुपूर्वी देवक्षेत्रविपाकी हैं तिन देवनिका क्षेत्र तिनकैं त्रसपनातैं विवक्षारूप ज्योतिषी लोकका अंतपर्यंत नवसै योजनकरि त्रसनालीके प्रतर क्षेत्रकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितना जानना और देवनिका उत्पत्तिक्षेत्र स्तोक—थोरा है तातैं बिवक्षा न लीनी, ज्योतिषीनिका ही मुख्यताकरि कथन कीया है। तहां पर्यंत पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य देवविषै उपजैं हैं तहां देवगतिकौं गमन कालविषैं देवगति देवायुका उदय सहित देवानुपूर्वीका उदयकरि पूर्व आकारका नाश न होइ तातैं तिनकी जघन्य अवगाहना संख्यात घनांगुल प्रमाण ताकरि तिस क्षेत्रकौं गुणि प्रथम भेद हो है। उत्कृष्ट अवगाहना भी संख्यात घनांगुल प्रमाण है ताकरि गुणैं अंत भेद हो है सो 'आदी अंते सुद्धे' इत्यादिक सूत्रकरि अंतमैस्यौं आदिकौं घटाएं एकका भाग दीएं एक मिलाएं जो प्रमाण होइ तितने भेद देवगत्यानुपूर्वीके जानने। ए सर्व आनुपूर्वीके उत्तरोत्तर भेद पूर्वोक्त ज्ञानावरणके उत्तरोत्तर भेद-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

निविषैं मिलाइए तव सर्व प्रकृति संग्रह होइ। ज्ञानावरण अर आनुपूर्वी इनकी तौ उत्तरोत्तर प्रकृति कहीं, शेष प्रकृतिनिका उत्तरोत्तर भेदनिका उपदेश इहां नाहीं ऐसा कथन टीकाकार रचनाके अनुसार कीया है। वहुश्रुतनिकौं शुद्ध करि लेना ऐसैं कर्मनिकी उत्तरोत्तर प्रकृतिनिका प्रमाण कह्या ॥ २५८ ॥

तेहिं असंखेज्जगुणा ठिदिअवसेसा हवंति पयडीणं।
ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा तत्तो असंखगुणा ॥ २५९ ॥

तैरसंख्येयगुणाः स्थित्यवशेषा भवंति प्रकृतीनां।
स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि ततोऽसंख्यगुणानि ॥ २५९ ॥

जी० प्र०—तेभ्यः प्रकृतिसंग्रहभेदेभ्यः प्रकृतीनां सर्वस्थितिविकल्पा असंख्यातगुणा भवंति। कुतः? एकप्रकृतिविकल्पस्य यद्येतावंतः— प ७ ७ स्थितिविकल्पाः तदैतावतां ≡ ə ≡ ə २ प्रकृतिविकल्पानां कति विकल्पाः स्युः? इति त्रैराशिकेन संख्यातपल्यैर्गुणितत्वप्रसिद्धेः— ≡ ə ≡ ə । २ प ७ ७ एभ्यः स्थितिविकल्पेभ्यः स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्यातगुणितानि तद्यथा—एकप्रकृतिस्थितिबंधकारणकषायपरिणामा असंख्यातलोकः द्रव्यं ≡ ə एकप्रकृतिस्थितिविकल्पाः स्थितिः प ७ ७ नानागुणहानिशलाकाः पल्यच्छेदासंख्येयभागः छे/ə अन्योन्याभ्यस्तराशिः पल्यासंख्यातैकभागः प/ə गुणहान्यायामः नानागुणहानिशलाकाभक्तस्थितिमात्रः प ७ ७ / छे ə अयं द्विगुणितो दोगुणहानिः—

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१——— १ ^ प ७ृ ७ृ २ तेषु स्थितिविकल्पेषु सर्वजघन्यस्थितेर्निबंधनकषायाध्यवसायाः सर्वतः स्तोका अपि असंख्यातलोकमात्राः ≡ a 'पदहतमुखमादि- छे a

धनं' ≡ a गु व्येकपदा गु १^ र्ध गु १^ २ घ्नेन रूपाधिकगुणहानिभक्तादिमात्रचयेन गु १^ २ ≡ a १— गु गुणो गच्छश्चयधनं गु १^ २ ≡ a १— गु तयोर्योगः प्रथ-

गुणहानिद्रव्यं ≡ a गु १——— गु २ । गु ३ १— इदं प्रतिगुणहानि द्विगुणं द्विगुणं भूत्वा चरमगुणहानौ रूपोननानागुणहानिमात्रद्विकगुणमिति अन्योन्याभ्यस्तार्ध-

गुणं स्यात् ≡ a गु १— गु २ । गु ३ १— प a २ इदं 'अंतधणं गुणगुणियं' ≡ a गु १— २ गु । गु ३ १— प २ a २ अपवर्तितं ≡ a गु १— २ गु । गु ३ १—— प a आदिविहीणमिति-

≡ a गु १— गु २ । गु ३ १— प १— a सर्वगुणहानिधनं स्यात् । एकप्रकृतिस्थितिविकल्पानामेषां प ७ृ ७ृ १——— १^ यद्येतावंतः ≡ a गु १— गु २ । गु ३ १— प १^ a स्थितिबंधाध्य-

वसायाः तदा एतावतां ≡ a ≡ a २ प ७ृ ७ृ १——— १^ स्थितिविकल्पानां कति स्थितिबंधाध्यवसायाः स्युः ? इति त्रैराशिकेन एषां—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

≡ a ≡ a २ ≡ a गु । गु ३ प (१– / गु २ ; १– / २ ; १ / a) स्थितिविकल्पेभ्योऽसंख्यातलोकगुणितत्वदर्शनात् । तेषां स्थितिबंधाध्यवसायानामनुकृष्टिविधानमस्त्यपि अत्राप्रस्तुतत्वान्नोक्तं । अग्रे वक्ष्यति ॥ २५९ ॥

सं० च०—तिन प्रकृति सग्रहनितैं प्रकृतिनिके स्थितिके भेद असंख्यात गुणे हैं। काहेतैं ? एक एक प्रकृतिके स्थिति भेद जघन्य स्थितिकौं उत्कृष्ट स्थितिमैं घटाइ एक समयका भाग देइ तामैं एक मिलाएं जघन्य स्थितितैं लगाय एक एक समय बंधता उत्कृष्टस्थिति पर्यंत संख्यात पल्य प्रमाण पाइए है सो एक प्रकृतिके स्थिति भेद संख्यात पल्य प्रमाण होइ तौ पूर्वोक्त सर्व उत्तरोत्तर प्रकृतिनिके भेद तिनके स्थिति भेदतैं कितने हो है ? ऐसैं त्रैराशिक करि प्रकृति संग्रहके प्रमाणतैं संख्यात पल्य गुणे स्थितिके भेद हो हैं। बहुरि इन स्थितिके भेदानितैं स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान असंख्यात गुणे है जिन परिणामनितै स्थिति बंध होइ तिनके स्थानानिकौं स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान कहिए। सो इनका कथन अंक संदृष्टिकरि दिखाइए है—

एक प्रकृतिकी स्थिति बंधकौं कारण कषाय परिणाम इकतीससै ३१०० सो तौ द्रव्य जानना। अर तिस एक प्रकृतिके स्थिति भेद चालीस ४० सो स्थिति स्थान जानना। तहां नाना गुणहानि पांच ५ नाना गुणहानि प्रमाण दूवा मांडि परस्पर गुणैं अन्योन्याभ्यस्त राशि बत्तीस ३२ एक गुणहानिविषैं स्थितिका प्रमाण सोई गुणहानि आयाम सो नाना गुणहानि शलाकाका भाग सर्व स्थितिकौं दीएं जो प्रमाण होइ सो गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। सो नाना गुणहानि पांच ५ ताका भाग स्थिति चालीस ४० ताकौं दीएं आठ पाए सो आठ एक गुण हानिका आयाम जानना। याकौ दूणा कीएं दोगुणहानिका प्रमाण हो है। तिन स्थितिके भेदानिविषैं सर्वतैं जघन्य स्थितिबंधका कारणविषैं ऐसे जो कषायाध्यवसाय ते सर्वतैं थोरे हैं तिनका प्रमाण नव ९ 'पदहतमुखमादिधनं' इस सूत्रकरि एक गुणहानिका जो आयाम सोई दूवा पद कहिए गच्छ आठ ८ ताकरि हतं कहिए गुण्या हूवा मुखं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कहिए आदि स्थान नव ९ सो आदि धनं कहिए आदि धन हो है। सो आदि धन वहत्तरि ७२ भया। वहुरि एक अधिक गुणहानिका भाग आदि स्थानककौं दीएं जो प्रमाण होइ सो चय जानना सो इहां गुणहानिका प्रमाण आठ एक आधिक कीएं नव ताका भाग आदि स्थानक नव ९ ताकौं दीएं एक पाया १ सोई चय जानना। एक एक स्थानक विषैं एक एक बंधता कषायाध्यवसाय स्थान प्रथम गुणहानि पर्यंत जानना। सो 'व्येकपदार्धघ्न चयगुणोगच्छ उत्तरधनं' एक घाटि गच्छका आधाकौं चयकरि गुणिए पीछैं गच्छकरि गुणैं जो प्रमाण होइ सो सर्व चयधन जानना। सो इहां गच्छ आठ एक घटाएं सात आधा साढातीन चयका प्रमाण एक ताकरि गुणैं साढातीन ही रहे बहुरि गच्छका प्रमाण आठ ताकरि गुणैं अट्ठाइस भए सो चयधन जानना सो आदि धन अर उत्तर धन दोऊ मिलाएं प्रथम गुणहानिका सर्व द्रव्य हो है सो आदि धन वहत्तरि ७२ उत्तर धन अट्ठाईस २८ दोऊ मिलैं सौ भए १०० सो प्रथम गुणहानिका सर्व द्रव्य जानना। बहुरि गुणहानि गुणहानि प्रति दूणा दूणा द्रव्य जानना १०० २०० ४०० ८०० १६०० एक घाटि नाना गुणहानि प्रमाण वार दूणां दूणां होइ सो अंतरस्थानकविषैं अन्योन्याभ्यस्त राशिका जो आधा प्रमाण ताकरि प्रथमककौं गुणैं जो प्रमाण होइ सो अंतका प्रमाण जानना। इहां नाना गुणहानि पांचमैं एक घटाएं च्यारि सो इतना दूवा माडि परस्पर गुणें सोला भए सोई अन्योन्याभ्यस्त राशी वत्तीसका आधा प्रमाण है सो सोलाकरि प्रथम स्थानक सौकौं गुणैं सोलासै भए सोई अंत गुणहानिका द्रव्य जानना। इन सव-निका जोड दीजिए है–'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' यहां स्थानक स्थानक प्रति समान गुणकार होइ तिनके जोड देनेका यहु करण सूत्र है सो गुणकार करता करता अंतके विषैं जो प्रमाण आवै ताकौं गुणकारका प्रमाणकरि गुणिए तामेंस्यों आदिका प्रमाण घटा दीजिए जो प्रमाण आवे ताकौं एक घाटि उत्तरका भाग दीजिए तव सर्व धन होइ। सो इहां अंतस्थानकका प्रमाण सोलासै १६०० अर दूणा २ किया था तातैं गुणकारकौं प्रमाणकरि गुणैं वत्तीससै ३२०० भए तामै आदिका प्रमाण सौ घटाए इकतीससै रहे। याकौं इहां दूणा दूणा कीया है तातैं उत्तरका प्रमाण दोय तामैं एक घटाए एक ताका भाग दीएं इकतीससै ही रहै

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो पांचौं गुणहानिका जोड दीएं एक प्रकृतिके स्थितिबंधकौं कारण इकतीससै जानने। अब यथार्थकरि कहिए है—

एक प्रकृतिके स्थिति बंधकौं कारण असंख्यात लोक प्रमाण कषायाध्यवसाय हैं सो द्रव्य जानना। बहुरि एक प्रकृतिका जघन्यस्थितितैं लगाय उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत संख्यात पल्य प्रमाण स्थितिके भेद सो स्थितिस्थान जानना। बहुरि नानागुणहानि पल्यके अर्धच्छेदांके असंख्यातवै भागमात्र जाननी। बहुरि अन्योन्याभ्यस्त राशि पल्यके असंख्यातवै भाग मात्र जाननी। नाना गुणहानिशलाकाका स्थितिकौं भाग दीएं जो प्रमाण होइ सो गुणहानि आयाम जानना। याकौ दूणां कीए दोगुण हानि हो है। तहां सर्व स्थितिके भेदविषैं जघन्य स्थितिबंधकौं कारण ऐसे कषायाध्यवसायस्थान सर्वतैं थोरे हैं ते पणि असंख्यात लोकमात्र हैं। 'पदहतमुखमादिधनं' गच्छ करि गुण्या हूवा आदि स्थानक सो आदि धन जानना। एक अधिक गुणहानिआयामका भाग आदिकौं दीएं चय प्रमाण होइ सो 'व्येकपदार्थघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' एक घाटि गच्छका आधाकौं चयकरि गुणिए जो प्रमाण होइ ताकौं गच्छकरि गुणिए तव चयधन होइ। बहुरि आदिधन अर चयधन इन दोऊनिकौं मिलाए प्रथम गुणहानिका सर्व द्रव्य होइ सो गुणहानि गुणहानि प्रति दूणा दूणा होतैं होतै अंतविषैं एक घाटि नाना गुणहानि प्रमाण दूणा होतैं अन्योन्याभ्यस्त राशिका आधा प्रमाण करि आदिकौं गुणैं जो प्रमाण होइ सोई अंतकी गुणहानिका द्रव्य जानना सो 'अंतधणं गुणगणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' इस सूत्रकरि अंतविषैं जो प्रमाण भया ताकौं गुणकार दोय करि गुणैं तामैं आदिका प्रमाण घटाइए उत्तरका प्रमाण दोय तामैं एक घटाएं एक रह्या ताका भाग दीजिए सो तेते ही रहे यों करता प्रमाण भया सो सर्व गुणहानिका धन जानना। सो एक प्रकृतिके संख्यात पल्यप्रमाण स्थिति भेद तिनके इतने असंख्यातलोक प्रमाण स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान भए तौ सर्व उत्तरोत्तर प्रकृति संग्रहके भेदनिके कितने स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान होंहि? ऐसैं त्रैराशिक करि स्थितिके भेदनितैं असंख्यात लोक गुणे प्रकट देखिए है। इन स्थिति बंधाध्यवसायस्थानकनिविषैं अधः प्रवृत्तकरणवत् अनुकृष्टि विधान है सो आगैं कहैंगे। इहां मुख्य कथन नाही तातै न कह्या है ॥ २५१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अणुभागाणं बंधज्झवसाणमसंखलोगगुणिदमदो ।
एत्तो अणंतगुणिदा कम्मपदेसा मुणेयव्वा ॥ २६० ॥

अनुभागानां बंधाध्यवसायमसंख्यलोकगुणितमतः ।
एतस्मादनंतगुणिताः कर्मप्रदेशाः मंतव्याः ॥ २६० ॥

जी० प्र०——एभ्यः सर्वस्थितिबंधाध्यवसायस्थानेभ्यः अनुभागबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्यातलोकगुणितानि । तद्यथा—जघन्यस्थितिबंधनि-बंधनस्थितिबंधाध्यवसायसंबंध्यनुभागबंधाध्यवसायाः असंख्यातलोकगुणितासंख्यातलोकमात्राः द्रव्यं ≡ a ≡ a जघन्यस्थितिबंधाध्यवसाया असंख्यातलोकमात्रषट्स्थानगता अप्यसंख्यातलोकाः स्थितिः ≡ a नानागुणहानिशलाकाः आवल्यसंख्यातैकभागः २ ताभिर्भक्तस्थितिगुणहा-
a a

न्यायामः ≡ a अयं द्विगुणितो दोगुणहानिः ≡ a २ आवल्यसंख्यातैकभागोऽन्योन्याभ्यस्तराशिः २ । अत्र जघन्यस्थितिबंधाध्यवसायस्थाने अ-
२ २ a
a a a a

नुभागबंधाध्यवसाया असंख्यातलोकाः सर्वतः स्तोकाः ≡ a ≡ a मुखमित्युच्यते । पदहतमुखमादिधनं ≡ a ≡ a गु 'व्येकपदार्धघ्नच-
१ — १—
यगुणोगच्छ उत्तरधनं'— गु ≡ a ≡ a गु तयोर्योगः प्रथमगुणहानिद्रव्यं ≡ a ≡ a गु । गु २ प्रतिगुणहानि द्विगुणद्विगुणक्रमेण
१— १— २
२ गु गु

१—
चरमगुणहानौ रूपोननानागुणहानिमात्रद्विकगुणितमित्यन्योन्याभ्यस्तराश्यर्धं गुणकारः स्यात् । ≡ a ≡ a गु । गु २ २ इदमंतधनं गुणगु-
१— a २
गु

१— १— १— १ —
णियं ≡ a ≡ a गु । गु २ २ । २ अपवर्तितं ≡ a ≡ a गु । गु २ २ आदिविहीणमिति ≡ a ≡ a गु । गु २ । २ जघ-
१— १— २ १—
गु २ a २ गु a गु २ a

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न्यस्थितेः स्थितिबंधाध्यवसायानां अनुभागबंधाध्यवसायस्थानममार्गं स्यात्। एकस्थितिविकल्पस्य अनुभागबंधाध्यवसायस्थानविकल्पा एतावंतः तदा एतावतां स्थितिविकल्पानां कति अनुभागबंधाध्यवसायस्थानानीति त्रैराशिकेन—प्र – १ फ– ≡ a ≡ a गु (१— / गु) गु ३ / २ २ (१^ / २ / a) इ– ≡ a ≡ a २ प ७ ७ (१— १^) लब्धानां एतावन्मात्रत्वात् ≡ a ≡ a २ प ७ ७ (१— १^) ≡ a ≡ a गु (१— / गु)। गु ३ / २ २ (१— १^ / २ / a) एभ्योऽनुभागबंधाध्यवसायेभ्यः कर्मप्रदेशाः अनंतगुणाः तद्यथा—

अनादिबंधनबद्धगलितावशेषसमयप्रबद्धानां आबाधारहितोत्कृष्टस्थितिः सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमप्रमिता, विवक्षितवर्तमानसमये एकैकनिषेकाधिकक्रमेण गत्वा चरमसमयप्रबद्धे आबाधारहितोत्कृष्टस्थितिप्रमितनिषेका भवंति। तत्समयप्रबद्धचरमगुणहानिचरमनिषेकादारभ्याधोधोनानागुणहानिषु प्रथमगुणहानिप्रथमोदयनिषेकपर्यंतमवतीर्य तत्प्रथमनिषेकमादिं कृत्वा तिर्यगाबाधोनितोत्कृष्टस्थितिप्रमितगलितावशेषसमयप्रबद्धेष्वेकैकनिषेकेषु दीयमानेषु एकनिषेकसमयप्रबद्ध उदेति। तत्त्रिकोणरचनासंदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

															९
														९	१०
													९।	१०।	११
												९	१०।	११।	१२
											९	१०।	११।	१२।	१३
										९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४
									९	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५
								९	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५।	१६।
								०	०	०	०	०	०	०	०
								०	०	०	०	०	०	०	०
								०	०	०	०	०	०	०	०
							९ ।०००	१६०।	१७६।	१९२।	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।
						९।	१०।०००	१७६।	१९२।	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।
					९।	१०।	११।०००	१९२।	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।
				९।	१०।	११।	१२।०००	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।
			९।	१०।	११।	१२।	१३।०००	२२४।	२४०।	२५६।	३८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।
		९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४।०००	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।	४४८।
	९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५।०००	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।	४४८।	४८०।
९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५।	१६।०००	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।	४४८।	४८०।	५१२।

अस्याश्चरमगुणहानौ चरमनिषेकः एकः ९ । अस्याधस्तनौ द्विचरमनिषेकौ द्वौ ९ । १० । त्रिचरमास्त्रयः ९ । १० । ११ । एवमेकैकाधिकक्रमेण तत्प्रथमनिषेके नानासमयप्रबद्धप्रतिबद्धा गुणहानिमात्राः स्युः ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । अत्र चरमनिषेकसमानं यथाभवति तथा अधस्तनाधस्तननिषेकस्थितचरमगुणहानिचयान् पृथक्कृत्य स्वस्वसदृशनिषेकसंख्यापार्श्वे स्थापितेषु सदृशधनिकानि गच्छप्रमितानि चयाश्च रूपोनगच्छसंकलनमात्रतया द्विकवारसंकलनक्रमा भवंति—

९	१		०
९	२	१	१
९	३	१	३
९	४	१	६
९	५	१	१०
९	६	१	१५
९	७	१	२२
९	८	१	२८

अस्मिन् पंक्तिद्वये संकलिते एवं $\overset{१-}{८}$ । $\overset{१-}{८}$ । $\frac{८}{२}$ १ । $\overset{१\frown}{\frac{८}{६}}$ । ८ । $\overset{१-}{८}$

उभयधनयुतावेवं $\overset{१-}{८}$ । ८ । $\overset{२-}{\frac{८}{६}}$ ४ तथा द्विगुणहानौ चरमे नानासमयप्रबद्धप्रतिबद्धाः चरमगुणहानिप्रथमनिषेका द्विगुणास्तच्चरमनिषेकाधिकाः ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

१८। तदनंतराधस्तनैतावंतोऽपि द्विचरमगुणहानिविशेषाधिकैकनिषेकाधिकाः स्युः ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १८। २०। एवमेकैकद्विचरमगुणहानिविशेषाधिकैकनिषेकाधिकक्रमेण गत्वा द्विचरमगुणहानिप्रथमनिषेके नानासमयप्रबद्धप्रतिबद्धाः गच्छमात्राः स्युः। ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १८। २०। २२। २४। २६। २८। ३०। ३२। अत्र द्विचरमगुणहानौ चरमे नानासमयप्रबद्धप्रतिबद्धनिषेकेषु उत्कृष्टोऽयं। १८। इदमादिं कृत्वा तत्सदृशा निषेका यथा भवंति तथा तदधस्तनाधस्तननिषेकस्थितिविशेषान् प्राग्वदपनीयापनीय स्वस्वसदृशनिषेकपार्श्वे स्थापितेषु प्राग्वत् सदृशधनिरा गच्छमात्रक्रमेण विशेषा रूपोनगच्छसंकलनमात्रक्रमेण द्विकवारसंकलनक्रमा भूत्वा द्विचरमगुणहानिप्रथमनिषेकपर्यंतं गत्वा इत्थं तिष्ठंति—

९	२	१	०	
९	२	२	२	१
९	२	३	२	३
९	२	४	२	६
९	२	५	२	१०
९	२	६	२	१५
९	२	७	२	२१
९	२	८	२	२८

अनयोः संकलने संदृष्टिः— ८ (ऊपर १–)। २। ८। ८ (ऊपर १–, नीचे २)। ४। | ८ (ऊपर १ ^)। ८। ८ (ऊपर १–, नीचे ६)। २ उभययुतिः। ८ (ऊपर १–)। ८। ८ (ऊपर २–, नीचे ६)। ४। २ अत्रोत्तरधनं त्वेतावत् १००। ८। कुतः ? सर्वत्र गुणहान्यायामे ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। एतावतां निषेकाणां सद्भावात् पुनः त्रिचरमगुणहानौ चरमनिषेके उपरितनगुणहानिप्रथमनिषेकाः सर्वे चरमगुणहानिचतुर्गुणचरमनिषेकश्चैकः ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १८। २०। २२। २४। २६। ३०। ३२। ३६। अनंतराधस्तने तावंतः त्रिचरमगुणहान्येकविशेषाधिकतच्चरमनिषेकश्चैकः। ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १८। २०। २२। २४। २६। २८। ३०। ३२। ३६। ४०। एवं त्रिचरमगुणहानित्रिचरमादिनिषेकेषु तद्गुणहानिविशेषयुतैकैकनिषेकाधिकक्रमेण गत्वा तद्गुणहानिप्रथमनिषेके एतावंतः नानासमयप्रबद्धप्रतिबद्धविशेषाः स्युः ९। १०। ११। १२। १३। १४। १५। १६। १८। २०। २२। २४। २६। २८। ३०। ३२।। ३६। ४०। ४४। ४८। ५२। ६०। ६४। अत्र त्रिचरमगुणहानौ चरमनिषेके चतुर्गुणचरमगुणहानिचरमनिषेक एकः। ९। ४। तत्समाना यथा भवंति तथा तदधस्तननिषेकस्थिताः त्रिचरमगुणहानिविशेषानपनीयापनीय पृथक्स्थापितेषु एवं तिष्ठंति—

९ । ४ । १	०
९ । ४ । २	४ । १
९ । ४ । ३	४ । ३
९ । ४ । ४	४ । ६
९ । ४ । ५	४ । १०
९ । ४ । ६	४ । १५
९ । ४ । ७	४ । २१
९ । ४ । ८	४ । २८

एतेषु संकलितेषु $८^{१-}\; \frac{८\; ८^{१-}}{२}\; ४ \;\Big|\; ८^{१-}\; \frac{८\; ८^{२-}}{६}\; ४$ उभयधनयुतिरियं $८^{१-}\; ८ \;।\; \frac{८^{२-}}{६}\; ४$ । ४ । अत्रोत्तरधनं तु इयत् ३०० । ८ । कुतः ? स-
र्वत्र गुणहान्यायामे ९ । १० ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । १८ । २० । २२ । २४ । २६ । २८ । ३० । ३२ । एतावतां निषेकाणां सद्भावात् । एवं चतुश्चरमादिगुणहानिषु आद्युत्तरधनानि अधोधो द्विगुणद्विगुणक्रमाणि अपि उत्तरधनानि उपरितनगुणहान्युत्तरधनाधिकानि भूत्वा सर्वाधस्तनप्रथमगुणहानिचरमनिषेके नानासमयप्रबद्धनिषेका एतावंतः ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । १८ । २० । २२ । २४ । २६ । २८ । ३० । ३२ । ३६ । ४० । ४४ । ४८ । ५२ । ५६ । ६० । ६४ । ७२ । ८० । ८८ । ९६ । १०४ । ११२ । १२८ । १४४ । १६० । १७६ । १९२ । २०८ । २२४ । २४० । २५६ । २८८ । अनंतराधस्तननिषेकेषु एकैकचयोत्तरैकसमयप्रबद्धैकनि-षेकाधिकक्रमेण गत्वा त्रिकोणरचनासर्वाधस्तनप्रथमगुणहानिप्रथम निषेके आबाधारहितोत्कृष्टस्थितिमात्रः सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमप्रमितनानासमयप्रब-द्धगलितावशेषनिषेका एतावंतः । ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । १८ । २० । २२ । २४ । २६ । २८ । ३० । ३२ । ३६ । ४० । ४४ । ४८ । ५२ । ५६ । ६० । ६४ । ७२ । ८० । ८८ । ९६ । १०४ । ११२ । १२० । १२८ । १४४ । १६० । १७६ । १९२ । २०८ । २२४ । २४० । २५६ । २८८ । ३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० । ५१२ । एवं सति तत्त्रि-कोणरचनाधनमानीयते—

अथ प्रथमगुणहानौ चरमनिषेके नानासमयप्रबद्धनिषेकव्यक्तिषु सर्वोत्कृष्टचरमनिषेकः अन्योन्याभ्यस्तराश्यर्धगुणितचरमगुणहानिचरमनिषेक प्रमितः । ९ । ३२ । तत्सदृशा यथाभवंति तथा तदधस्तननिषेकस्थितिप्रथमगुणहानिचयानपनीयापनीय पृथक्स्थापितेषु एवं तिष्ठंति ।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

९	३२१		०
९	३२२	३२	१
९	३२३	३२	३
९	३२४	३२	६
९	३२५	३२	१०
९	३२६	३२	१५
९	३२७	३२	२१
९	३२८	३२	२८

एतेषु संकलितेषु उभयराशी एवं $\overset{१-}{८}$ । ८ । $\underset{२}{\overset{१-}{८}}$ ३२ | $\overset{१-}{८}$ । $\underset{६}{८}$ । $\overset{१ \doteq}{८}$ । ३२ । उभययुतिः $\overset{१-}{८}$ । ८ । $\underset{६}{\overset{२-}{८}}$ । ४ । ३२ अत्रोत्तरधनं तु । एतावत् ३१०० । ८

कुतः ? सर्वत्र प्रथमगुणहान्यायामे एतावतां निषेकाणां— ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । १८ । २० । २२ । २४ । २६ । २८ । ३० । ३२ । ३६ । ४० । ४४ । ४८ । ५२ । ५६ । ६० । ६४ । ७२ । ८० । ८८ । ९६ । १०४ । ११२ । १२८ । १४४ । १६० । १७६ । १९२ । २०८ । २२४ । २४० । २५६ । सद्भावात् तानि सर्वगुणहान्याद्युत्तरधनानि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

	२–	
१– ६	८ । ४ । १	०
८ । ८	२–	१०० । ८
१– ६	८ । ४ । २	३०० । ८
८ । ८	२–	७०० । ८
१– ६	८ । ४ । ४	१५०० । ८
८ । ८	२–	३१०० । ८
१– ६	८ । ४ । ८	
८ । ८	२–	
१– ६	८ । ४ । १६	
८ । ८	२–	
१– ६	८ । ४ । ३२	
८ । ८		
६		

इदं संकलयति–अत्र प्रथमपंक्तौ अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादिना संकलितायां आदिधनमेतावत् (१– ८ । ८ । २– ८ । ४ । ६३ / ६) द्वितीयपंक्तौ सर्वत्र द्विचरमगुणहान्युत्तरधनप्रमितं १०० । ८ । ऋणं प्रक्षिप्य संकलितायामुत्तरधनमियत् । ६३०० । ८ । तानि ऋणानि एतावंति १०० । ८ । ६ । उत्तरराशयः त्रयः क्रमेण अमी—

१– २– ८ ८ । ८ ४ । ६३ ६ आदिधनं	उत्तरधनं ६३०० । ८	तदृणं १०० ८ । ६

समयप्रबद्धेन प्रमाणिता एवं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१– २– ८ ८। ८। ४। ६२ ६३०० । ६ १– २– स ३ ८ ८। ८। ४ १०० ६	६३०० ८ ६३०० स ३ ८	१०० । ८ । ६ ६३०० स ३ ८ । ६ ६२

अत्र शतषट्कविधानेन अपवर्तितं प्रथमधनमिदं— स ३ ८ ८ ४ (१– २–; १—; ८ । ३ । ३) । अधिकरूपं पार्श्वे स्थाप्यं स ३ । ८ । ८ । ४ (२–; १—; ८ । ३ । ३) । स ३ ८ ४ (२–; १—; ८ । ३ । ३) उभयत्र

उपरिस्थितरूपद्वयं स्वस्वाधः स्थाप्यं

स ३ ८ । ८ । ४ १— ८ ३ । ३	स ३ ८ । ४ । १ १— ८ । ३ । ३
स ३ ८ । २ १— ८ । ३ । ३	स ३ । २ १— ८ । ३ । ३

प्रथमद्विकं स ३ ८ । २ (१—; ८ । ३ । ३) अध उपर्यपि त्रिभिः संगुणय्य रूपषट्के रूपचतुष्टयं स्वीकृत्य स्वोपरितनराशौ स ३ ८ । ८ । ४ (१—; ८ । ३ । ३) त्रिभिः

समच्छिन्ने— स ३ ८ । ८ । ३ । ४ (१—; ८ ३ । ३ । ३) निक्षिप्य स ३ ८ । ८ । ३ । ४ (१—; १— ८ ३ । ३ । ३) अपवर्तिते एवं स ३ । ८ । ४ (१—; ३ । ३) शेषमिदं स ३ ८ । २ (१—; ८ ३ । ३ । ३) उपरितनपार्श्वे

स ३ ८ ४ (१—; ८ ३ ३) निक्षिप्तं तदिदं स ३ ८ १४ (१—; ८ ३ ३ ३) द्वितीयद्विकात् स ३ २ (१—; ८ । ३ । ३) उपर्यधोनवगुणितात् स ३ १८ (१—; ८ । ३ । ४ । ९) तद्गृहीतचतुर्दशरूपैर्युतं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१—
स a । ८ । ३ । १४ अपवर्तितं स a १४ पुनर्भागहारे एकरूपहीनत्वमवगणय्य चतुर्दशभिरपवर्तितमेकरूपार्धं स्यात् स a । १ इदं च-
१—
८ ३ २७ २७ । २

तुर्दशरूपापनीतशेषेण स a । ४ एकरूपासंख्यातैकभागेन स a । १ साधिकीकृत्य स a १ ऋणोऽस्मिन् स a । ८ । ६ वस्तुत ईदृशे
१— a ६३
८ । ३ २७ २

स a प ०ृ अपवर्तिते संख्यातवर्गशलाकामात्रे स a व ०ृ अपनयेत् स a । ०ृ – । प्रथमधने स a ८ ४ गुणहान्यष्टादशैकभागं स a । ८ । १
१ ०ृ ९ १८
छे व छे प
a
छे व छे

ऋणं निक्षिप्य स a । ८ । ६ अपवर्त्य उत्तरधने एकगुणहानौ निक्षिप्ते द्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धाःस्युः । एते किंचिदूनपल्यसंख्यातवर्गशलाकाधिक-
१८

।
गुणहान्यष्टादशैक भागद्वितीयऋणेन स a ८ । १ किंचिदूनिता एकजीवप्रदेशेषु सर्वदा सत्त्वस्थितकर्मप्रदेशाः किंचिन्न्यूनद्व्यर्धगुणहानिगुणित-
१८

समयप्रबद्धमात्राः स a १२—सर्वस्थित्यनुभागबंधाध्यवसायस्थानेभ्योऽनंतगुणा इति ज्ञातव्यं ॥ २६० ॥ एवं प्रदेशबंधं प्ररूप्य इदानीमुदयप्रकरण मुपक्रमते———

स० चं०—इन सर्व स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननितैं अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोक गुणां जानना सोई कहिए है—जघन्यस्थिति बंधनै कारण जे कषायाध्यवसाय स्थान तिन संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोककरि असंख्यात लोककौं गुणिए इतने प्रमाण हैं सोई इहां द्रव्य जानना। बहुरि जघन्य स्थितिबंधकौं कारण जे स्थितिबंधाध्यवसायस्थान असंख्यात लोकवार षट्स्थान वृद्धिकौं लीएं हैं तथापि असंख्यात लोक मात्र ही है सो इहां स्थितिस्थान जानने। बहुरि नाना गुणहानि शलाका आवलीका दोयवार असंख्यात

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का भाग दीजिए तीह प्रमाण है। बहुरि नाना गुणहानिका भाग स्थिति स्थानकनिकौं दीएं जो प्रमाण होइ तितना एक गुण हानिका आयाम जानना। याकौं दूणां कीए दोगुण हानि हो है। आवलीका असंख्यातवां भाग प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशी है। इहां जघन्य स्थिति बंधकौं कारण जघन्य अध्यवसाय स्थान तीहिविषें अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोक प्रमाण हैं ते सबतें थोरे हैं याकौं मुख कहिए। 'पदहतमुखमादिधनं पद जो गुणहानिका आयाम ताकरि इस मुखकौं गुणें जो प्रमाण होइ सो आदिधन जानना। व्येकपदार्धघ्नचय गुणो गच्छ उत्तरधनं' एक घाटि पद जो गुणहानिका आयाम ताकौं आधा कीजिए बहुरि याकौं एक अधिक पद का भाग आदिकौं दीजिए सो चयका प्रमाण है ताकरि गुणिए बहुरि जो प्रमाण होइ ताकौं पदकरि गुणिए यों करता जो प्रमाण होइ सो चयधन जानना। आदि धन अर चयधनकौं मिलाएं प्रथम गुणहानिका सर्वद्रव्य हो है। सो गुणहानि गुणहानि प्रति दूणा दूणा अनुक्रमकरि अंतगुणहानिविषें एक घाटि नानागुणहानि प्रमाण दूणा कीएं अन्योन्याभ्यस्त राशिका आधा प्रमाण गुणकार हो है। याकरि आदि गुणहानिका द्रव्यकौं गुणें अंत गुण हानिका सर्व द्रव्य हो है। बहुरि 'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' इस सूत्रकरि अंतगुण हानिके द्रव्यकौं गुणकार दोयकरि गुणिए तामैंस्यो आदि गुणहानिका द्रव्य घटाइए उत्तर जो दोय तामैं एक घटाइ एक रह्या ताका भाग दीएं तितने ही रहे यों करता जो प्रमाण भया तितना सर्व गुणहानिका द्रव्य भया सो जघन्य स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान संबंधी अनुभागाध्यवसायस्थानकनिका इतना प्रमाण भया सो जो एक स्थितिभेदका अनुभागाध्यवसायस्थान भेद इतने भए तौ पूर्वोक्त सर्वस्थितिके भेदनिका अनुभागाध्यवसाय स्थान केते होइ? असैं त्रैराशिक करतें लब्धराशिका जो प्रमाण होइ सो स्थिति बंधाध्यवसायानितैं असंख्यात गुणा जानना। बहुरि इन अनुभागाध्यवसाय स्थानकनितैं कर्मके प्रदेश जे परमाणू अनंत गुणे हैं सोई कहिए है—अंक संदृष्टिकरि कथन दिखाइए है—

एक समयविषें जितने परमाणू बंधे सो समय प्रबद्ध कहिये तिनका प्रमाण तरेसाठिसै ६३००, कर्मकी स्थितिका प्रमाण अठतालीस समय सो स्थिति ४८ नाना गुणहानि छह ६, एक एक गुण हानिविषें जेती स्थिति होइ सो गुण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हानिके आयाम आठ ८ नाना गुणहानि प्रमाण दूवे मांडि परस्पर गुणें अन्योन्याभ्यस्तराशि चौसठि ६४ गुणहानिका आयामकौं दूणा कीजिये सो दो गुणहानिका प्रमाण सोलह सो एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि तरेसठिका भाग सर्व द्रव्य तेरसाठिसैकौं दीजे तब सो १०० पाया सो अंतकी गुणहानिका प्रमाण जानना। यातैं दूणां दूणां द्रव्य आदिकी गुण हानिपर्यंत जानना। सो आधा अन्योन्याभ्यस्तराशिकरि अंतगुणहानिके द्रव्यकौं गुणें आदि गुणहानिका द्रव्य हो है सो बत्तीसकरि सौ को गुणें बत्तीससै हो है। सोई आदि गुण हानिका द्रव्य जानना। यातैं द्वितीयादि गुणहानिका द्रव्य आधा आधा जानना ३२०० १६०० ८०० ४०० २०० १००। बहुरि तींहि प्रथम गुण हानि संबंधी द्रव्यकौं गुणहानि आयामका भाग दीजिए तब मध्य धन होइ सो बत्तीससैनै आठका भाग दीया च्यारिसै पाया सो मध्य धन है याकौं एक घाटि गुणहानि आयामका आधा प्रमाणकौं निषेक भागहार जो दोगुण हानि तामैंस्यो घटाएं जो प्रमाण रहै ताका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सो चयका प्रमाण जानना। सो एक घाटि गुणहानि आयाम सात ताका आधा साढा तीनकौं दोगुणहानि सोलहमैंस्यों घटाएं साढावारा रहे ताका भाग मध्य धनकौं दीए बत्तीस पाया सोई प्रथम गुणहानिविषैं चय जानना। इस चयकौं दोगुण हानिकरि गुणैं जो प्रमाण होइ सो आदि निषेक जानना सो बत्तीसकौं सोलहकरि गुणैं पांचसैबारा आदि निषेक भया। यामैंस्यों एक चय बत्तीस घटाएं च्यारिसै असी दूसरा निषेक जानना। ऐसैं अनुक्रमतैं प्रथम गुणहानिका अंतनिषेकपर्यंत घटावना। बहुरि प्रथम गुणहानिका अंतानिषेकमैं प्रथम गुण हानि संबंधी एक चय घटाएं प्रथमगुणहानिका प्रथमनिषेकतैं आधा प्रमाण होइ सोई द्वितीय गुणहानिका प्रथम निषेक जानना। यातैं द्वितीय गुणहानि संबंधी एक एक चय घटाएं द्वितीयादिक निषेक हो है। इहां पूर्वोक्त प्रकार विधान कीएं प्रथम गुणहानितैं द्वितीय गुणहानिविषैं चयका प्रमाण निषेकनिका प्रमाण सर्व आधा आधा हो है। याके अंत निषेकमैंस्यो द्वितीय गुणहानि सबंधी एक चय घटाएं तृतीय गुणहानिका प्रथम निषेक हो है। यातैं एक एक चय घटाएं द्वितीयादिक निषेक हो हैं। इहां चयका ३८५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वा निषेकनिका प्रमाण द्वितीय गुण हानितैं आधा २ जानना । ऐसैं ही गुणहानि गुणहानि प्रति आधा आधा प्रमाण है सो सर्व गुणहानिका यंत्र लिखिए है—

नाम	चयका प्रमाण	निषेकनिका प्रमाण	सर्वद्रव्यका प्रमाण
प्रथमगुणहानि	३२	५१२ ४८० ४४८ ४१६ ३८४ ३५२ ३२० २८८	३२००
द्वितीयगुणहानि	१६	२५६ २४० २२४ २०८ १९२ १७६ १६० १४४	१६००
तृतीयगुणहानि	८	१२८ १२० ११२ १०४ ९६ ८८ ८० ७२	८००
चतुर्थगुणहानि	४	६४ ६० ५६ ५२ ४८ ४४ ४० ३६	४००
पंचमगुणहानि	२	३२ ३० २८ २६ २४ २२ २० १८	२००
षष्ठमगुणहानि	१	१६ १५ १४ १३ १२ ११ १० ९	१००
सर्वद्रव्य	६३००		

इहां ऐसा अर्थ जानना—समयप्रबद्ध तरेसठिसै वर्गणा कर्मकी बंध रूप भई अर ताका आबाधा काल अधिक अठतालीस समयकी स्थिति बंधी तहां आबाधा कालबिषैं तौ कोऊ परमाणू खिरै नाही आबाधाकाल भए पीछैं पहिले समय पांचसै वारा परमाणू खिरैं पीछे बत्तीस वत्तीस घाटि खिरैं एक गुणहानिका कालविषैं सर्व परमाणू वत्तीससै खिरैं कर्मबर्गणाकौं छोडैं गलि जांइ । द्वितीय गुण हानिका प्रथम समयविषैं दोयसै छप्पन खिरैं पाछैं सोलह सोलह घाटि खिरैं । सर्व परमाणूं द्वितीयगुणहानिविषैं सोलहसै खिरै ऐसैं गुण हानि गुण हानि प्रति आधी आधी खिरैं तहां सर्वगुणहानि विषैं तरेसाठिसै परमाणू इस प्रकार खिरैं हैं सो जैसैं अंक संदृष्टिकरि कथन दिखाया तैसैं अर्थ करि कथन जानना । विशेष इतना जो द्रव्यादिकका प्रमाण जैसा होइ तैसा जानना । सोई कहिए है मोहनीय कर्मकी अपेक्षा कथन दिखाइए है—

मोहनीय कर्मकी परमाणू समयप्रबद्धविषैं जितनी बंधैं सो द्रव्यका प्रमाण जानना । मोहनीय कर्मकी स्थिति सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण तामैस्यौं आबाधा काल घटाए जो प्रमाण रहे तीहिका जितना समय सो स्थि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिका प्रमाण जानना। बहुरि पल्यकी वर्गशालाकाका जेता अर्धच्छेद तिनतैं पल्यका अर्धच्छेदामैंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहे सो नानागुणहानिशलाकाका प्रमाण जानना। इसका भाग तिस स्थितिकौं दीएं जो प्रमाण आवै तितना एक गुणहानिका आयामका प्रमाण जानना। याकौं दूणां कीएं दोगुणहानिका प्रमाण हो है। नाना गुणहानि प्रमाण दूवा माडि परस्पर गुणें जो प्रमाण होइ सो अन्योन्याभ्यस्तराशिका प्रमाण जानना सो अंक संदृष्टिविषैं जैसा विधान कह्या तैसा विधान करतैं गुण हानिनिविषैं वा निषेकनिविषैं जितना द्रव्यका प्रमाण आवै सो जानना। सो आबाधाकाल भए पीछैं प्रथमसमयविषैं तौ प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेकविषैं जितना द्रव्यका प्रमाण होइ तितने परमाणू खिरैं। दूसरा समयविषैं दूसरा निषेकविषैं जितना द्रव्यका प्रमाण होइ तितने परमाणू खिरैं। ऐसैं एक गुणहानिका कालका जितना समय आयाम होइ तितने समयनिविषैं प्रथम गुणहानिका जितना द्रव्य होइ तितने परमाणू खिरैं पीछैं इसही अनुक्रमतैं गुणहानि गुणहानिविषैं आधा आधा खिरैं सो सर्व गुणहानिविषैं संपूर्ण समयप्रबद्ध इस अनुक्रमतैं कर्मपणाकौं छोडि खिरि जांय सो ऐसैं तौ जो समय प्रबद्ध बंधै ताकी निर्जरा होनेका विधान है अर एक एक समयप्रबद्ध समय समय प्रति नवीन बंधै हैं सो द्रव्यकर्मतैं अनादि संबंध है तातैं पूर्वोक्त प्रकार बंध होतैं वा निर्जरा होतैं जीवकैं किंचिदून द्व्यर्धगुण हानि करि गुणित समयप्रवद्ध प्रमाण सदा काल सत्ता रहै है। गुणहानिका आयामका प्रमाण ताकौं ड्योढा कीएं जो प्रमाण होइ तामैं किछू प्रमाण घटाएं जो प्रमाण रहैं तीहिंकरि समयप्रबद्धका प्रमाणकौं गुणें जो प्रमाण आवै तितने कर्म परमाणूनिकी सत्ता जीवकै सदा काल पाइए। बहुरि वर्तमान कालविषैं एक एक समय प्रबद्धका एक एक निषेक उदय होतैं समय समय प्रति एक २ समय प्रबद्धका उदय हो है। सो कैसैं? द्व्यर्धगुणहानि गुणित समय प्रबद्ध मात्र सत्ता है। बहुरि कैसे एक एक समय प्रबद्ध प्रमाण उदय है? इस कथनकौं अंक संदृष्टितै त्रिकोणरचना करि दिखाइए है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यहु अंक संदृष्टि अपेक्षा त्रिकोण यंत्र है इहां नीचेकी पंक्ति विषैं नव आदि आठ निषेक लिखि वीचिके वत्तीस निषेक लिखनेकी विंदीनिकी सहनानी करि दोयसै अठ्यासीका आदि आठ निषेक लिखें हैं ऐसै ही ऊपरकी पंक्तिनिके वीचि विंदीनिकी सहनानी करि वीचिके निषेक जानि लेने बहुरि आठ पंक्तिके ऊपरि विंदीनिकी सहनानी करि वत्तीस पंक्ति एक एक घटता निषेकरूप जाननी ताके ऊपरि आठ पंक्ति जैसैं लिखी है तैसैं जाननी पूर्वै जीवकांडविषैं योगमार्गणा अधिकार विषैं यहु त्रिकोण यंत्र संपूर्ण लिखा है सो इहां भी जानना सो इहां स्तोक लिखनेके अर्थि वीचि विंदीनिकी सहनानी जाननी—

															९
														९	१०
													९।	१०।	११
												९	१०।	११।	१२
											९	१०।	११।	१२।	१३
										९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४
									९	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५
								९	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५।	१६।
								०	०	०	०	०	०	०	०
								०	०	०	०	०	०	०	०
								०	०	०	०	०	०	०	०
							९।०००	१६०।	१७६।	१९२।	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।
						९।	१०।०००	१७६।	१९२।	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।
					९।	१०।	११।०००	१९२।	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।
				९।	१०।	११।	१२।०००	२०८।	२२४।	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।
			९।	१०।	११।	१२।	१३।०००	२२४।	२४०।	२५६।	३८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।
		९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४।०००	२४०।	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।	४४८।
	९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५।०००	२५६।	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।	४४८।	४८०।
९।	१०।	११।	१२।	१३।	१४।	१५।	१६।०००	२८८।	३२०।	३५२।	३८४।	४१६।	४४८।	४८०।	५१२।

त्रिकोण यंत्रका अर्थ लिखिए है—जो समय प्रबद्ध तरेसाठिसै परमाणू प्रमाण बंधरूप भया सो आबाधा काल को छोडि अठतालीस समयरूप स्थितिविषैं अनुक्रमतैं अठतालीस समयनिविषैं ऐसैं खिरै है ५१२ ४८० ४४८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

४१६ ३८४ ३५२ ३२० २८८। यहु प्रथम गुणहानि २५६ २४० २२४ २०८ १९२ १७६ १६० १४४ यहु द्वितीय गुणहानि १२८ १२० ११२ १०४ ९६ ८८ ८० ७२ यहु तृतीय गुणहानि ६४ ६० ५६ ५२ ४८ ४४ ४० ३६ यहु चतुर्थ गुणहानि ३२ ३० २८ २६ २४ २२ २० १८ यहु पंचम गुणहानि १६ १५ १४ १३ १२ ११ १० ९ यहु षष्ठम गुणहानि इन छहो गुणहानिनिविषै तरेसाठिसै परमाणू ऐसै खिरै हैं तहां जिस समय प्रबद्धका बंध भएं आबाधा अधिक अड़तालीस समय होइ गये तिसतै लगाय जे याके पहिलैं समय प्रबद्ध बंधे थे तिनका तौ कोऊ निषेक सत्ताविषै रह्या नाहीं तातैं उनका तौ किछू प्रयोजन रह्या ही नहीं बहुरि जिस समय प्रबद्धका बंधभएं आबाधा अधिक सैतालिस समय भए तिसके सैतालीस निषेक तौ गलिगए एक निषेक अंतका अवशेष रह्या सो त्रिकोण यंत्रविषै नव परमाणू रूप अंतका निषेक ऊपर लिख्या। बहुरि ताके नीचैं जिस समयप्रबद्धका बंध भएं आबाधा अधिक छियालीस समय भए तिसके छियालीस निषेक तौ गलिगए दोय निषेक अवशेष सत्ताविषैं रहे सो त्रिकोण यंत्रविषैं नव परमाणू अर दश परमाणूं का दोय निषेक लिखे। बहुरि ताके नीचैं जिस समयप्रबद्धका बंध भए आबाधा अधिक पैतालीस समय भए तिसके पैतालीस निषेक तौ खिर गये तीन निषेक अवशेष सत्ताविषै रहे सो त्रिकोण यंत्र विषैं नव परमाणू वा दश परमाणू वा ग्यारह परमाणूका तीन निषेक लिखे। ऐसैं ही जिस जिस समय प्रबद्धका बंध भए एक घाटि समय भए तिस तिसके एक २ घाटि निषेक तौ गलिगए अवशेष एक २ अधिक निषेक सत्ताविषैं रहे तिनकौं नीचैं लिखतैं जिस समयप्रबद्धका बंधभए आबाधा अधिक एक समय भया होइ ताका एक निषेक तौ गलि गया अवशेष सैतालीस निषेक रहे ते नवसौ लगाय च्यारिसै असी परमाणूके निषक पर्यंत निषेक लिखे। बहुरि ताके नीचैं अंतविषैं जिस समय प्रबद्धका बंध भए आबाधा काल ही भया अर जाका एक भी निषेक खिर्‍या नाहीं ताके नवसौ लगाय पांचसौ बारापर्यंत परमाणूवांका सर्व अठतालीससौ ही निषेक सत्ताविषैं पाइए हैं ते लिखे। ऐसैं त्रिकोण यंत्रविषै गले पीछे अवशेष निषेक रहे ते अनुक्रमतैं लिखे सो इस सर्व त्रिकोण यंत्रका जोड दीएं जो प्रमाण होइ तितनी सत्ता जीवकैं सदा काल जाननी। जोड देनेका विधान कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंत गुणहानिविषैं अंतका निषेक नव लिखि ताकौ एक एक अधिक गुणकार नौ ऐसी एक पंक्ति करनी अर दूसरी पंक्तिविषैं अंतविषैं तो शून्य लिखना पीछे संकलन रूप प्रमाण लिखना। बहुरि द्वितीयादिक गुणहानिविषैं प्रथमादिक गुणहानिका सर्वद्रव्य तौ आदि जानना उत्तर दोऊ पंक्तिनिविषैं पूर्वोक्ततैं दूणा दूणा प्रमाण जानना। तहां प्रथम गुण हानिकी पंक्ति दोय ऐसैं जाननी--

९	१		०
९	२	१	१
९	३	१	३
९	४	१	६
९	५	१	१०
९	६	१	१५
९	७	१	२१
९	८	१	२८

तहां नौ एकौ नौ सो तो पहिला जोड बहुरि नव दूणा अठारह अर एक एकौ एक दोऊ मिलैं उगणीसभए।सो नव अर दश दोऊ मिलैं उगणीस भए। बहुरि नवती सत्ताईस अर तीन इक तीन दोऊ मिलैं तीस भए सो नव दस ग्यारा इनका जोड़ तीस भया ऐसैं जोड़ देतैं अंतविषैं नव आठो बहत्तरि अर अठाईस एकौ अठाईस दोऊ मिलैं सौ भया सो सर्व गुणहानिके सर्व निषेकानिका जोड़ सौ भया। बहुरि द्वितीय गुणहानिकी पंक्ति दोय ऐसी जाननी--

९	२	१		०
९	२	२	२	१
९	२	३	२	३
९	२	४	२	६
९	२	५	२	१०
९	२	६	२	१५
९	२	७	२	२१
९	२	८	२	२८

नौ दूनौं अठारा अठारा एकौ अठारा सो तौ पहिला निषेक अर नव दूनौ अठारा अठारा दूनौ छत्तीस तौ ए अर दोय एकौ दोय इनकौ मिलाएं अठतीस भये सो अठारा अर वीस मिले अठतीस हो हैं। ऐसै ही अंतविषैं नव दूनौं अठारा अठारा आठ एकसौ चवालीस अर अठाई दूनौं छप्पन दोऊ मिलैं दोयसै भया सो द्वितीय गुणहानिविषैं सर्व निषेकनिका जोड जानना। सो इस द्वितीय गुणहानिविषैं प्रथम गुणहानिका द्रव्य सर्वत्र एक एक ठिकाने मिलाएं त्रिकोण विषैं जोड हो है जैसैं प्रथम गुणहानिका द्रव्य सौ मिलाएं एकसौ अठाराका जोड भया ताके नीचैं अठतीसमैं सौ मिलाए एकसौ अठतीसका जोड भया ऐसैं ही जानना। ऐसैं अंतकी गुणहानिपर्यंत दोऊ पंक्तिनिविषैं तौ दूणा दूणा प्रमाण माडि तिन दोऊ पंक्तिनिका एक एक ठिकानाका प्रमाण मिलाएं जो जो प्रमाणमें पहिली भई जे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणहानि तिनका सर्व द्रव्य मिलाएं जो जो प्रमाणमें होइ तितना तितना त्रिकोणविषैं अनुक्रमतैं पंक्तिनिका जोड जानना । ९ । १९ । ३० । ४२ । ५५ । ६९ । ८४ । १०० । ११८ । १३८ । १६० । १८४ । २१० । २३८ । २६८ । ३०० । ३३६ । ३७६ । ४२० । ४६८ । ५२० । ५७६ । ६३६ । ७०० । ७७२ । ८५२ । ९४० । १०३६ । ११४० । १२५२ । १३७२ । १५०० । १६४४ । १८०४ । १९८० । २१७२ । २३८० । २६०४ । २८४४ । ३'०० । ३३८८ । ३७०८ । ४०६० । ४४५४ । ४८६० । ५३०८ । ५७८८ । ६३०० । इन सव जोडनिका जोड दीए जो प्रमाण होइ तितना सर्व त्रिकोण यंत्रका जोड होइ । सो यहु सर्व जोड किंचिदून द्व्यर्धगुणहानि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण जानना । सर्व त्रिकोणका जोड इकहत्तरि हजार तीनसै च्यारि भया ७१३०४ सो गुणहानिका आयामका प्रमाण आठ ताकौं ड्योढा कीएं वारा भए सोई द्व्यर्धगुणहानिकरि समय प्रबद्ध तरेसठिसैकौं गुणिए तव पिचहत्तरि हजार छसै हूवा अर इहां इकहत्तरि हजार तीनसै च्यारि ही हूवा तातैं गुणकारविषैं किंचित् ऊन कह्या सो जितना यहु सर्व त्रिकोण यंत्रका जोड आया तितनी सत्ता जाननी सो जैसैं अंक संदृष्टिकरि कथन कीया तैसैं अर्थसंदृष्टि करि कथन जानना । निषेकादिकका प्रमाण तौ जैसा होइ तैसा जानना और विधान सर्व अंक संदृष्टिवत् जानना । संस्कृत टीकाविषैं अर्थसंदृष्टि वा अंक संदृष्टिकरि जोड देनेका विधान कह्या है तहां स्यों विशेष जानना । वा आगैं संदृष्टि अधिकार विषै लिखैंगे प्रयोजन इहां लिख्याही है । ऐसैं किंचिदून द्व्यर्धगुणहानिकरि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण जीवकै सत्ता सदाकाल पाइए है गुणहानि आयामके समयनिका जो प्रमाण ताकौं ड्योढाकरि तामैंस्यों किंचित् ऊन कहिए पल्यकी संख्यात वर्ग शलाकाकरि अधिक गुणहानि आयामका अठारह्वां भाग घटाइए तीहिंकरि समयप्रबद्धकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितनी कर्म परमाणू जीवकैं सदा काल रहै हैं याहीतैं सर्वस्थिति संबंधी अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थाननितैं कर्म प्रदेश अनंत गुणे कहे हैं । जैसैं समय समयविषैं एक एक समय प्रवद्ध नवीन बंधै तैसैं एक एक समय प्रबद्ध उदयरूप होइ खिरै सत्ता पूर्वोक्त प्रमाण सदा रहै । एक समयविषैं एक समयप्रवद्धका खिरना कैसै होइ सो कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्तमान विवक्षित समयविषैं जिस समय प्रबद्धका बंधभएं आबाधा कालही भया होइ अर जाका पूर्वै एक भी निषेक गल्या नाहीं होइ ताका तौ पांचसै वारा रूप प्रथम निषेक उदय रूप हो है और निषेक आगामी काल विषैं उदय आवैंगे। बहुरि जिस समयप्रबद्धका बंध भयें आबाधा काल अर एक समय होइ गया होइ अर जाका एक निषेक पूर्वै खिरया होइ ताका च्यारिसै असीरूप दूसरा निषेक वर्तमान समयविषै उदय आवे है। छियालीस निषेक आगामी कालविषैं उदय आवैंगे। बहुरि जिस समयप्रबद्धका बंधभएं आबाधाकाल अर दोय समय होइ गया होइ ताका दोय निषेक तौ पूर्वैं खिरैं अर च्यारिसै अठतालीसरूप तीसरा निषेक वर्तमान समय विषैं खिरैं है। अवशेष पैंतालीस निषेक आगामी कालविषैं खिरैंगे । ऐसे ही अनुक्रमतैं जिस जिस समयप्रबद्धका बंध पहिलै पहिलै भया ताका पिछला २ निषेक बर्तमान कालविषैं उदय होइ । अबशेष निषेक आगामी कालमें उदय होइ। अंतविषैं जिस समयप्रबद्धका बंध भएं आबाधा काल अर सैंतालीस समय होइ गए अर सैतालीस निषेक जाके पूर्वैं खिरगये ताका नव । ९ । रूप अंतका निषेक वर्तमान कालविषैं उदयरूप हो है । अवशेष निषेक कोऊ रह्या नाहीं याकं पहिलैं जे समय प्रबद्ध बंधे थे तिनके सर्व निषेक गलिगए तातै तिनका किछू प्रयोजन ही नाही ऐसैं वर्तमान विवक्षित एक समयविषैं पांचसै वारास्यौं लगाइ नव पर्यंत सर्व निषेक एकै काल उदय होइ तिनका जोड दीएं संपूर्ण समय प्रबद्धका उदय कह्या है ऐसैं एक एक समय प्रबद्ध प्रमाण परमाणू खिरै सोई एक समय प्रबद्धप्रमाण परमाणू नवीन बंधैं किंचिदून द्व्यर्ध गुणहानि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण सत्ता रहै सो जैसे अंकसंदृष्टि करि कथन कीया तैसैं ही अर्थ संदृष्टिकरि कथन जानना। याहीतैं अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थाननितैं कर्मकी परमाणू अनंत गुणी कहिए है ऐसा जानना ॥२६०॥ इति प्रदेशबंधः ॥ ऐसै बंधका निरूपणकरि आगैं उदयका निरूपण प्रारंभै हैं—

आहारं तु पमत्ते तित्थं केवलिणि मिस्सयं मिस्से ।
सम्मं वेदगसम्मे मिच्छदुगयदेव आणुदओ ॥२६१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आहारं तु प्रमत्ते तीर्थं केवलिनि मिश्रकं मिश्रे।
सम्यक् वेदकसम्ये मिथ्याद्विकायते एव आनूदयः ॥ २६१ ॥

जी० प्र०—तु पुनः चतुर्विधबंधनिरूपणानंतरं गुणस्थानेषु उदयनियममाह-आहारकशरीरतदंगोपांगादयः प्रमत्तसंयते एव। तीर्थोदयः केवलिन्येव। मिश्रप्रकृत्युदयः सम्यग्मिथ्यादृष्टावेव। सम्यक्त्वप्रकृत्युदयः वेदकसम्यग्दृष्टावेव असंयतादिचतुर्गुणस्थानेषु। आनुपूर्व्योदयः मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतेष्वेव अन्यत्र तेषामुदयाभावात् ॥ २६१ ॥ आनुपूर्व्योदयं पुनर्विशेषयति—

स० चं०—बहुरि च्यारि प्रकारका बंधका निरूपणके अनंतर गुणस्थाननिविषैं उदयका नियम कहै हैं—आहारक शरीर वा आहारक अंगोपांग इनका उदय प्रमत्त गुणस्थानविषैं ही है। तीर्थंकर प्रकृतिका उदय सयोगी अयोगी केवली विषैं ही है। मिश्र मोहनीयका उदय सम्यग्मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं ही है। सम्यक्त्व मोहनीयका उदय असंयतादि च्यारि गुणस्थानवर्ती वेदक सम्यग्दृष्टीविषैं ही है। आनुपूर्वीका उदय मिथ्यादृष्टि सासादन असंयत विषैं ही है। अन्यत्र तिनके उदयका अभाव है। २६१। आनुपूर्वीके उदयका बहुरि विशेष कहैं हैं—

णिरयं सासणसम्मो ण गच्छदित्ति य ण तस्स णिरयाणू।
मिच्छादिसु सेसुदओ सगसगचरिमोत्ति णायव्वो ॥२६२

निरयं सासादनसम्यो न गच्छतीति च न तस्य निरयानुः।
मिथ्यादिषु शेषोदयः स्वस्वकचरम इति ज्ञातव्यः ॥ २६२ ॥

जी० प्र०—नरकगतिं सासादनसम्यग्दृष्टिर्न गच्छति इति हेतोः तस्य सासादनस्य नारकानुपूर्व्योदयो नास्ति। शेषसर्वप्रकृत्युदयः मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानेषु स्वस्वोदयस्थानचरमसमयपर्यंतं ज्ञातव्यं ॥ २६२ ॥ अथ गुणस्थानेषु व्युच्छित्तिं पक्षांतरक्रमेणाह—

स० चं०—नरक गतिकौं सासादन सम्यग्दृष्टी मरि करि न जाय तातैं सासादन विषैं नारकानुपूर्वीका उदय नाही है। बहुरि पूर्वोक्त प्रकृतिनिका उदय मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननिविषैं अपना अपना उदयस्थानका अंत पर्यंत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जानना इहां उदय प्रकरण विषैं व्युच्छित्ति १ उदय १ अनुदय १ ऐसैं तीन प्रकार करि कथन कीजिए है—तहां जिस गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति कही होइ तिनप्रकृतिनिका तिस गुणस्थान पर्यंत तौ उदय जानना। तिस गुणस्थानतैं ऊपरिके गुणस्थाननिविषैं तिनका उदय न जानना। वहुरि तिस गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनिका उदय होइ सो उदय जानना। सो नीचली गुणस्थान विषैं जेती प्रकृतिनिका उदय कह्या होइ तिनमैंस्यों तिस ही गुणस्थान विषैं जेती व्युच्छित्ति कही होइ तिनकौं घटाएं तिस गुणस्थानके अनंतर ऊपरला गुणस्थान विषैं उदय प्रकृतिनिका प्रमाण जानना। इहां इतना विशेष है—कोई प्रकृति ऊपरला गुणस्थान विषैं उदय आवेगी तिस विवक्षित गुणस्थान विषैं उदय नाहीं है तौ ताकौं उदयमैंस्यों घटाइ देना अर जो पाहिले गुणस्थानविषैं जिसका उदय न था अर विवक्षित गुणस्थान विषैं ताका उदय होइ तौ वाकौं मिलाय लेनी ऐसैं उदय जानना। वहुरि जेती प्रकृतिनिका मूल विषैं उदय कह्या होइ तिन विषैं विवक्षित गुणस्थानविषैं जेती प्रकृतिनिका उदय कह्या होइ तिनतैं जे अवशेष प्रकृति रहैं तिनका अनुदय जानना। ऐसैं व्युच्छित्ति उदय अनुदयका कथन जानना २६२। तहां गुणस्थान विषैं व्युच्छित्ति पक्षांतर जो महा धवलका दूसरा नाम कषाय प्राभृत ताका कर्ता जो यति वृषभाचार्य ताके अनुसारि ताकरि अनुक्रमतैं कहिए है—

दस चउरिगि सत्तरसं अट्ठ य तह पंच चेव चउरो य।
छच्छक्कएक्कदुगदुग चोद्दस उगुतीस तेरसुदयाविधिः॥२६३

दश चतुरेकं सप्तदश अष्ट च तथा पंच चैव चतस्रश्च।
षट् षट्कैकद्विकद्विकं चतुर्दशैकोनत्रिंशत् त्रयोदशोदयविधिः॥ २६३ ॥

जी० प्र०—अभेदविवक्षया उदयप्रकृतिषु द्वाविंशत्युत्तरशते उदयविधिः उदयव्युच्छित्तिः उक्तगुणस्थानादुपर्युदयाभावः। स मिथ्यादृष्टौ दश। सासादने चतस्रः। अस्मिन् पक्षे एकेंद्रियस्थावरद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियनामकर्मणां मिथ्यादृष्टावेव उदयच्छेदकथनात्। मिश्रे एका, असंयते सप्तदश,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देशसंयतेऽष्टौ, प्रमत्ते पंच, अप्रमत्ते चतस्रः, अपूर्वकरणे षट्, अनिवृत्तिकरणे षट्, सूक्ष्मसांपराये एका, उपशांतकषाये द्वे, क्षीणकषाये द्वे चतुर्दश च, सयोगकेवलिन्येकान्नत्रिंशत् कुतः सदसद्वेद्योदययोर्नानाजीवापेक्षया एकस्यापि व्युच्छित्त्यभावात्। अयोगकेवलिनि त्रयोदश एवं सति मिथ्यादृष्टावुदयः सप्तदशोत्तरशतं। अनुदयः तीर्थाहारद्वयमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतयः पंच। सासादने नारकानुपूर्व्यं न इत्येकादश मिलित्वा अनुदयः षोडश, उदयः षडुत्तरशतं। मिश्रेऽनुदयः शेषानुपूर्व्यत्रयेण अनंतानुबंधिचतुष्कं मिलित्वा सम्यग्मिथ्यात्वोदयाद्द्वाविंशतिः। उदयः शतं। असंयतेऽनुदयः मिश्रप्रकृतिर्मिलित्वा सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयादष्टादश। उदयश्चतुरुत्तरशतं। देशसंयते सप्तदश मिलित्वा अनुदयः पचत्रिंशत्। उदयः सप्ताशीतिः। प्रमत्तेऽष्टौ मिलित्वाऽनुदयः आहारकद्वयोदयादेकचत्वारिंशत्। उदय एकाशीतिः। अप्रमत्ते पंच मिलित्वा अनुदयः षट्चत्वारिंशत्। उदयः षट्सप्ततिः। अपूर्वकरणे चतस्रो मिलित्वा अनुदयः पंचाशत्। उदयो द्वासप्ततिः। अनिवृत्तिकरणे षण्मिलित्वा अनुदयः षट्पंचाशत्। उदय षट्षष्टिः। सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्यानुदयो द्वाषष्टिः उदयः षष्टिः। उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदयः त्रिषष्टिः। उदयः एकान्नषष्टिः। क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदयः पंचषष्टिः उदयः सप्तपंचाशत्। सयोगकेवलिनि षोडश संयोज्य अनुदयः तीर्थकरत्वोदयादशीतिः उदयः द्वाचत्वारिंशत्। अयोगकेवलिनि एकान्नत्रिंशन्मिलित्वा अनुदयः नवोत्तरशतं। उदयः त्रयोदश।

उदीरणारचनायां प्रमत्तगुणस्थानपर्यंतं उदयानुदयव्युच्छित्तय एव उदीरणानुदीरणाव्युच्छित्तयः किंतु मनुष्यायुःसदसद्वेद्यानां उदीरणा प्रमत्तः एवास्ति तेन अप्रमतेऽनुदीरणा एकान्नपंचाशत्, उदीरणा त्रिसप्ततिः। अपूर्वकरणे चतस्रो मिलित्वा अनुदीरणा त्रिपंचाशत्, उदीरणा एकोनसप्तति अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्य अनुदीरणा एकोनषष्टिः। उदीरणा त्रिषष्टिः। सूक्ष्मसपराये षट् संयोज्य अनुदीरणा पंचषष्टिः, उदीरणा सप्तपंचाशत्। उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदीरणा षट्षष्टिः, उदीरणा षट्पंचाशत्। क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदीरणा अष्टषष्टिः, उदीरणा चतुःपंचाशत्। सयोगकेवलिनि षोडश संयोज्य अनुदीरणा तीर्थकृत्त्वोदीरणात् त्र्यशीतिः, उदीरणा एकान्नचत्वारिंशत्। अयोगिनि एकान्नचत्वारिंशतं संयोज्य अनुदीरणा द्वाविंशत्युत्तरशतं। उदीरणा नहि ॥ २६३ ॥ अथ भूतबल्याचार्यादिप्रवाहोपदेशेनाह—

सं० च०—अभेद विवक्षा करि उदय प्रकृति एकसौ बाईस हैं तिनविषैं उदयावधि कहिए उदय व्युच्छिति विवक्षित गुणस्थानतैं ऊपरि उदयका अभाव सो मिथ्यादृष्टि विषैं दश हैं। सासादन विषैं च्यारि हैं इस पक्षविषैं एकेंद्री १ स्थावर १ वेंद्री तेंद्री चौंद्री इन नामकर्मकी प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं कही। सासादनविषैं इनका उदय न कह्या। दूसरी पक्षविषैं इनका उदय सासादन विषैं भी कह्या है ऐसैं दोऊ पक्ष आचार्यनिकरि जानने। बहुरि मिश्रविषैं एक असंयतविषैं सतरह देश संयतविषैं आठ प्रमत्तविषैं पांच अप्रमत्तविषैं च्यारि अपूर्वकरण विषैं छह अनिवृत्ति करणविषैं छह सूक्ष्मसांपरायविषैं एक उपशांतकषायविषैं दोय क्षीणकषायविषैं दोय अर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौदह सयोग केवलीविषैं गुणतीस जातैं नाना जीवनिकी अपेक्षा साता असाता दोऊ ही वेदनीयकी व्युच्छित्ति नाहीं। अयोग केवलीविषै तेरह व्युच्छित्ति जानना। ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं उदय एकसौ सतरह तीर्थंकर आहारक द्विक मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी इनका उदय नाहीं तातैं अनुदय पांच। सासादनविषैं उदय एकसौं छह मिथ्यात्वविषैं व्युच्छित्ति दश अर नारकानुपूर्वी इनका उदय नाहीं तातैं अनुदय सोला। मिश्रविषैं उदय सौ १०० सासादनकी व्युच्छित्ति च्यारि ४ अर आनुपूर्वी तीनका उदय नाहीं अर मिश्रप्रकृति आनि मिली तातैं अनुदय वाईस। बहुरि असंयतविषैं उदय एकसौं च्यारि १०४ अर आनुपूर्वी च्यारि अर सम्यक्त्व मोहनी एतौ आनि मिली अर मिश्र मोहनीकी मिश्रही विषैं व्युच्छित्ति भई तातैं अनुदय अठारह। बहुरि असंयत विषैं व्युच्छित्ति सतरह भई तातैं देश संयतविषैं उदय सत्यासी अनुदय पैंतीस बहुरि देश संयतविषैं आठ व्युच्छित्ति भई अर आहारक द्विक आनि मिले तातैं प्रमत्तविषैं उदय इक्यासी अनुदय इकतालीस। बहुरि प्रमत्तविषैं पांच व्युच्छित्ति भई तातैं अप्रमत्तविषैं उदय छहंतरि अनुदय छयालीस ४६ बहुरि इहां चारि व्युच्छित्ति भई तातैं अपूर्वकरणविषैं उदय वहत्तरि अनुदय पचास। बहुरि इहां छह व्युच्छित्ति भई तातैं अनिवृत्ति करणविषैं उदय छयासठि अनुदय छप्पन बहुरि इहां छह व्युच्छित्ति भई तातैं सूक्ष्म सांपरायविषैं उदय साठि अनुदय वासठि। बहुरि इहां एक व्युच्छित्ति भई तातैं उपशांत कषायविषैं उदय गुणसठि अनुदय तरेसठि बहुरि इहां दोय व्युच्छित्ति भई तातैं क्षीण कषायविषैं उदय सत्तावन अनुदय पैंसठि बहुरि इहां सोलह व्युच्छित्ति भई अर तीर्थंकर आनि मिली तातैं सयोगी जिनविषैं उदय वियालीस अनुदय असी इहां गुणतीस व्युच्छित्ति भई तातैं अयोगकेवलीविषैं उदय तेरह अनुदय एकसौं नव बहुरि उदीरणा व्युच्छित्ति उदीरणा अनुदीरणाकी रचनाविषैं प्रमत्त गुणस्थान पर्यंत तौ जैसैं उदयविषैं व्युच्छित्ति कही तैसैं ही व्युच्छित्ति है। जैसैं उदय कह्या तैसैं ही उदीरणा है। जैसें अनुदय कह्या तैसैं ही अनुदीरणा है। बहुरि इतना विशेष है जो मनुष्यायु साता असाता वेदनीय २ इनकी उदीरणा प्रमत्त गुणस्थानपर्यंत ही है ऊपरि नाहीं। तातैं अप्रमत्तविषैं उदीरणा तेहत्तरि अनुदीरणा गुणचास इहां व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्व करणविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

उदारणी गुणहत्तरि अनुदीरणा तरेपन इहां व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्तिकरणविषैं उदीरणा तरेसठि अनुदीरणा गुणसठि इहां व्युच्छित्ति छह तातैं सूक्ष्म सांपरायविषैं उदीरणा सत्तावन अनुदीरणा पैंसठि इहां व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांत कषायविषैं उदीरणा छप्पन अनुदीरणा छयासठि इहां व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीणकषायविषैं उदीरणा चौवन अनुदीरणा अडसठि इहां व्युच्छित्ति सोलह तातैं सयोगकेवलीविषैं तीर्थंकरके मिलनेतैं उदीरणा गुणतालीस अनुदीरणा तियासी इहां व्युच्छित्ति गुणतालीस तातैं अयोगकेवलीविषैं उदीरणा नास्ति अनुदीरणा एकसौ वावीस ॥ २६३ ॥ आगैं भूतवलि आचार्य कृत धवल शास्त्रका उपदेश इत्यादिरूप दूसरा पक्षकरि कथन करैं है—

पण णवइगि सत्तरसं अड पंच च चउर छक्क छच्चेव ।
इगिदुग सोलस तीसं बारस उदये अजोगंता ॥२६४॥

पंचनवैकं सप्तदशाष्ट पंच च चतस्रः षट्कं षट् चैव ।
एकद्विकं षोडश त्रिंशत् द्वादश उदये अयोगांताः ॥ २६४ ॥

जी० प्र—स्वभावाभिव्यक्तिः उदयः, स्वकार्यं कृत्वा कर्मरूपपरित्यागो वा तस्मिन् अंता व्युच्छित्तयः गुणस्थानेषु क्रमशः पंच नव एका सप्तदश अष्टौ पंच चतस्रः षट् षट् एका द्वे षोडश त्रिंशत् द्वादश स्युः ॥ २६४ ॥ ताः काः ? इति चेदष्टादशगाथासूत्रैराह—

स० चं०—अपना अनुभाग रूप स्वभाव की जो प्रगटता ताकौं उदय कहिए । अथवा अपना कार्य करि कर्मपणाकौं छोडैं ताकौं उदय कहिए तिस उदयका जो अंत सो इहां व्युच्छित्ति कहिए । जिस गुणस्थान विषैं जाकी

उदयत्रिभंगी रचनेयं

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
५	९	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	३०	१२
११७	१०६	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१३
५	१६	२२	१८	३५	४१	४६	५०	५६	६२	६३	६५	८०	१०९

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

व्युच्छित्ति कही ताके ऊपरि ताका उदय नाहीं। सो व्युच्छित्ति प्रकृति मिथ्यादृष्टितैं लगाइ अयोग केवली पर्यंत गुणस्थान विषै अनुक्रमतैं पांच ५ नव ९ एक १ सतरह १७ आठ ८ पांच ५ च्यारि ४ छह ६ एक, दोय २ सोलह १६ तीस ३० वारह १२ जाननी। ते व्युच्छित्ति प्रकृति कौन? सो कहिए है—

मिच्छे मिच्छादावं सुहुमतियं सासणे अणेइंदी।
थावरवियलं मिस्से मिस्सं च य उदयवोच्छिण्णा ॥२६५॥

मिथ्ये मिथ्यातपं सूक्ष्मत्रयं सासादन अनेकेंद्रियं।
स्थावरविकलं मिश्रे मिश्रं च च उदयव्युच्छिन्नाः ॥ २६५ ॥

मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने मिथ्यात्वमातपः सूक्ष्ममपर्याप्तं साधारणं चेति पंच प्रकृतयः उदयतो व्युच्छिन्ना भवंति। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं एकेंद्रियं स्थावरं द्वींद्रियं त्रींद्रियं चतुरिंद्रियं चेति नव। मिश्रे सम्यग्मिथ्यात्वमित्येका ॥ २६५ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं मिथ्यात्व १ आतप १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ ए पंच प्रकृति उदयतैं व्युच्छित्ति भई। वहुरि सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ एकेंद्री १ स्थावर १ वेंद्री १ तेंद्री १ चौंद्री १ ए नव उदयतैं व्युच्छित्ति भई पूर्वपक्षविषैं अर इस पक्षविषैं इतना विशेष—जो इहां तौ सासादन विषैं एकेंद्री स्थावर वेंद्री तेंद्री चौंद्रीका उदय कह्या अर ऊपरि इनका उदय सासादन विषैं न कह्या मिथ्यादृष्टि विषैं ही कह्या सो दोऊ कथन आचार्यानिनैं कीए हैं तातैं दोऊ कथन कहे हैं। वहुरि मिश्रविषैं एक सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृति उदयतैं व्युच्छित्ति भई है ॥ २६५ ॥

अयदे बिदियकसाया वेगुव्वियछक्क णिरयदेवाऊ।
मणुयतिरियाणुपुव्वी दुब्भगणादेज्ज अज्जसयं ॥२६६॥

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अयते द्वितीयकषाया वैगूर्विकषट्कं निरयदेवायुः ।
मनुजतिर्यगानुपूर्व्ये दुर्भगानादेयमयशस्कं ॥ २६६ ॥

जी० प्र०—असंयते अप्रत्याख्यानावरणचतुष्क वैक्रियिकशरीरतदंगोपांगनरकदेवगतितदानुपूर्व्याणि नरकदेवायुषी मनुष्यतिर्यगानुपूर्व्ये दुर्भगमनादेयमयशस्कीर्तिश्चेति सप्तदश ॥ २६६ ॥

स० चं०—असंयतविषैं अप्रत्याख्यानावरण च्यारि ४ वैक्रियिक शरीर वा ताका अंगोपांग नरक देवगति वा तिनकी आनुपूर्वी ए छह ६ नरक देव आयु २ मनुष्य तिर्यंच आनुपूर्वी २ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति ए सतरह व्युच्छित्ति भई ॥ २६६ ॥

देसे तदियकसाया तिरियाउज्जोवणीचतिरियगदी ।
छट्ठे आहारदुगं थीणतियं उदयवोच्छिण्णा ॥ २६७ ॥

देशे तृतीयकषाया तिर्यगायुरुद्योतनीचतिर्यग्गतिः ।
षष्ठे आहारकद्विकं स्त्यानत्रयमुदयव्युच्छिन्नाः ॥ २६७ ॥

जी० प्र०—देशसंयते प्रत्याख्यानावरणचतुष्कं तिर्यगायुरुद्योतौ नीचैर्गोत्रं तिर्यगायुश्चेत्यष्टौ । षष्ठगुणस्थाने आहारकशरीरतदंगोपांगस्त्यानगृद्धि-निद्रानिद्राप्रचलाप्रचलाश्चेति पंच व्युच्छिन्नाः इति मध्यदीपकत्वादन्यत्रापि ग्राह्यं ॥ २६७ ॥

स० चं०—देश संयत विषैं प्रत्याख्यानावरण च्यारि ४ तिर्यंचायु उद्योत २ नीचगोत्र १ तिर्यंचगति १ ए आठ बहुरि प्रमत्त छठा गुणस्थान विषैं आहारक शरीर वा अंगोपांग २ स्त्यानगृद्धि निद्रानिद्रा प्रचलाप्रचला ए तीन ३ ए पांच उदयतैं व्युच्छित्ति भई । व्युच्छिन्नाः ऐसा शब्द मध्य दीपक समान है तातैं अन्यत्र भी यहु जानना जो व्युच्छित्ति कही है । २६७ ।

अपमत्ते सम्मत्तं अंतिमतियसंहदी यऽपुव्वम्हि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छच्चेव णोकसाया अणियट्टीभागभागेसु ॥ २६८ ॥

अप्रमत्ते सम्यक्त्वमंतिमत्रयसंहतिश्चापूर्वे ।
षट्चैव नोकषायाः अनिवृत्तिभागभागयोः ॥ २६८ ॥

जी० प्र०—अप्रमत्ते सम्यक्त्वप्रकृतिः अर्धनाराचकीलितासंप्राप्तसृपाटिकासंहननानि चेति चतस्रः । अपूर्वकरणे हास्यरत्यरतिशोकभयजुगुप्साः षट् । अनिवृत्तिकरणगुणस्थाने प्रकृतिविनाशक्रममपेक्ष्य सवेदावेदभागयोः ॥ २६८ ॥

सं० चं०—अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनीय १ अर्धनाराच कीलित सृपाटिक संहनन तीन ए च्यारि वहुरि अपूर्वकरण विषैं हास्य रति अराति शोक भय जुगुप्सा छह नोकषाय व्युच्छत्ति भई । वहुरि अनिवृत्ति करणविषैं प्रकृति नाशका अनुक्रमकी अपेक्षा करि सवेद भागका वा अभेद भाग विषैं ऐसैं व्युच्छित्ति है । २६८ ।

वेदतिय कोहमाणं मायासंजलणमेव सुहुमंते ।
सुहुमो लोहो संते वज्जं णारायणारायं ॥ २६९ ॥

वेदत्रयं क्रोधमानं मायासंज्वलनमेव सूक्ष्मांते ।
सूक्ष्मो लोभः शांते वज्रनाराचनाराचं ॥ २६९ ॥

जी० प्र०—सवेदभागे वेदत्रयं, अवेदभागे क्रमेण क्रोधसंज्वलनं मानसंज्वलनं मायासंज्वलनं चेति षट् । वादरलोभोऽपि तत्रैव । सूक्ष्मसांपरायचरमसमये सूक्ष्मकृष्टिगतलोभः । उपशांतकषाये वज्रनाराचनाराचसंहनने द्वे ॥ २६९ ॥

सं० च—अनिवृत्ति करणका वेदसहित जो सवेदभाग मोहविषैं तो तीन वेद व्युच्छित्ति भए । अवेद भागनिविषैं अनुक्रमतैं संज्वलन क्रोध सज्वलन मान संज्वलनमाया व्युच्छित्ति भई ऐसैं छह व्युच्छित्ति हैं । वादर लोभ भी अनिवृत्ति करण ही विषैं व्युच्छित्ति भया बहुरि सूक्ष्मसांपरायका अंतविषैं सूक्ष्मकृष्टिकों प्राप्त भया जो लोभ सो व्युच्छित्ति भया । बहुरि उपशांत कषायविषैं वज्रनाराच नाराच ए दोय संहनन व्युच्छित्ति भए ॥ २६९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खीणकसायदुचरिमे णिद्दा पयला य उदयवोच्छिण्णा ।
णाणंतरायदसयं दंसणचत्तारि चरिमम्हि ॥ २७० ॥

क्षीणकषायद्विचरमे निद्रा प्रचला च उदयव्युच्छिन्नाः ।
ज्ञानांतरायदशकं दर्शनचत्वारि चरमे ॥ २७० ॥

जी० प्र०—क्षीणकषायगुणस्थानद्विचरमसमये निद्राप्रचले उदयव्युच्छिन्ने । चरमसमये पंचज्ञानावरणपंचांतारायचतुर्दर्शनावरणानि ॥ २७० ॥

सं० च०—क्षीणकषाय गुणस्थानके अंतके दोय समय तिनविषैं पाहिला द्विचरम समयविषैं निद्रा प्रचला ए दोय उदयतैं व्युच्छित्ति भई । अंतके समयविषैं पांच ज्ञानावरण ५ पांच अंतराय ५ च्यारि दर्शनावरण ४ ए चौदह व्युच्छित्ति भई एवं सोलह १६ ॥ २७० ॥

तदियेक्कवज्जणिमिणं थिरसुहसरगदिउरालतेजदुगं ।
संठाणं वण्णागुरुचउक्क पत्तेय जोगिम्हि ॥ २७१ ॥

तृतीयैकवज्रनिर्माणं स्थिरशुभस्वरगतिऔरालतेजोद्विकं ।
संस्थानं वर्णागुरुचतुष्कं प्रत्येकं योगिनि ॥ २७१ ॥

जी० प्र० सयोगकेवलिगुणस्थाने वेदनीयैकतरं वज्रवृषभनाराचं निर्माणं स्थिरास्थिरे शुभाशुभे सुस्वरदुःस्वरौ प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगती औदारिकतदंगोपांगे तैजसकार्मणे संस्थानषट्कं वर्णचतुष्कं अगुरुलघूपघातपरघातोच्छ्वासाः प्रत्येकशरीरं चेति त्रिंशत् ॥ २७१ ॥

सं० च०—सयोगकेवली गुणस्थानविषैं दोऊ वेदनीयविषैं एक कोऊ वेदनीय १ वज्रवृषभनाराच १ निर्माण १ स्थिर अस्थिर २ शुभ अशुभ २ सुस्वर दुःस्वर २ प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति २ औदारिक शरीर वा अंगोपांग २ तैजस कार्माण २ संस्थान छह ६ वर्णादिक च्यारि ४ अगुरुलघु उपघात परघात उच्छ्वास ए च्यारि ४ प्रत्येक शरीर १ ए तीस व्युच्छित्ति भई ॥ २७१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तदियेक्कं मणुवगदी पंचिंदियसुभगतसातिगादेज्जं ।
जसतित्थं मणुवाऊ उच्चं च अजोगिचरिमम्हि ॥ २७२ ॥

तृतीयैकं मानवगतिः पंचेंद्रियसुभगत्रसात्रिकादेयं ।
यशस्तीर्थं मानवायुरुच्चं चायोगिचरमे ॥ २७२ ॥

जी० प्र०—अयोगिगुणस्थानचरमसमये वेदनीयैकतरं मनुष्यगतिः पंचेंद्रियं सुभगं त्रसबादरपर्याप्तानि आदेयं यशस्कीर्तिः तीर्थकरत्वं मनुष्यायुः उच्चैर्गोत्रं चेति द्वादश, एता व्युच्छित्तयो नानाजीवापेक्षयैवोक्ताः। सयोगायोगयोस्तु एकं जीवं प्रति असाते साते वा व्युच्छिन्ने त्रिंशत् द्वादश नानाजीवं प्रति उभयच्छेदाभावात् एकान्नत्रिंशत् त्रयोदश ज्ञातव्याः ॥ २७२ ॥ अथ पूर्वगुणस्थानवत् सयोगेऽप्येकजीवं प्रति, तदुभयोदयो भविष्यतीति शंकां निराकरोति—

अयोगी गुणस्थानका अंतसमयविषैं दोऊ वेदनीयविषैं एक कोऊ वेदनीय १ मनुष्यगति १ पंचेंद्री १ सुभग १ त्रस वादर पर्याप्त ए तीन ३ आदेय १ यशस्कीर्ति १ तीर्थंकरत्व १ मनुष्यायु १ उच्चगोत्र १ ए वारह व्युच्छित्ति भई। ए व्युच्छित्ति नानाजीवकी अपेक्षा कहिए अर सयोगी अयोगी गुणस्थानविषैं साता वा असाताविषैं एकहीकी व्युच्छित्ति कही है। सो एक जीवकी अपेक्षा व्युच्छित्ति कही है। नानाजीवकी अपेक्षा सयोगी गुणस्थानविषैं साता वा असाता दोऊकी व्युच्छित्ति नाहीं तातैं सयोगी अयोगीविषैं एक जीवकी अपेक्षा तीस अर वारा व्युच्छित्ति हैं। नाना जीवकी अपेक्षा गुणतीस अर तेरा व्युच्छित्ति है ॥ २७२ ॥ आगैं पहिले गुणस्थानवत् सयोग केवली विषैं भी साता असाताका उदय होइगा ऐसी शंकाकौं दूरि करैं हैं—

णट्ठा य रायदोसा इंदियणाणं च केवलिम्हि जदो ।
तेण दु सादासादजसुहदुक्खं णत्थि इंदियजं ॥ २७३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नष्टौ च रागद्वेषौ इंद्रियज्ञानं च केवलिनि यतः।
तेन तु सातासातजसुखदुःखं नास्ति इंद्रियजं ॥ २७३ ॥

जी० प्र०—यतः घातिकर्मविनाशात् सयोगकेवलिनि रागहेतुमायाचतुष्कलोभचतुष्कवेदत्रयहास्यरतीनां द्वेषहेतुक्रोधचतुष्कमानचतुष्कारतिशोकभयजुगुप्सानां च निरवशेषक्षयात् रागद्वेषौ नष्टौ। युगपत्सकलावभासिनि मतिश्रुतयोः परोक्षयोः क्षायोपशमिकयोरसंभवात् इंद्रियज्ञानं च नष्टं तेन कारणेन तु—पुनः सातासातोदयजं सुखदुःखमपि नास्ति कुतः? तस्येंद्रियजत्वात्। सहकारिकारणमोहनीयाभावे तदुदयो विद्यमानोऽपि न स्वकार्यकारीत्यर्थः ॥ २७३ ॥ तस्य तदकारणत्वे उपपत्तिमाह—

स० चं०—जातैं सयोग केवलीकैं घाति कर्मनिका नाश भया है तातैं रागकौं कारण भूत च्यारि प्रकार माया, च्यारि प्रकार लोभ, तीन वेद, हास्य रति इनका अर द्वेषकौं कारण भूत च्यारि प्रकार क्रोध, च्यारि प्रकार मान अरति शोक भय जुगुप्सा इनका निर्मूल नाश भया है तातैं राग द्वेष नष्ट भया है। बहुरि युगपत् सकल प्रकाशी ज्ञान विषैं क्षयोपशमरूप परोक्ष मतिज्ञान अर श्रुतज्ञान न संभवै है तातैं इंद्रिय जनित ज्ञान नष्ट भया है तिस कारण करि केवलीकैं साता असाता वेदनीयके उदयतैं सुख दुःख नाही है जातैं सुख दुःख इंद्रिय जनित है। बहुरि वेदनीयका सहकारी कारण मोहनीयका अभाव भया है तातैं वेदनीयका उदय होत संतैं भी अपना सुख दुःख देनेरूप कार्य करनेकौं समर्थ नाहीं।२७३। याका हेतु कहै है—

समयट्ठिदिगो बंधो सादस्सुदयाप्पिगो जदो तस्स।
तेण असादस्सुदओ सादसरूवेण परिणमदि ॥ २७४ ॥

समयास्थितिको बंधः सातस्योदयात्मको यतस्तस्य।
तेनासातस्योदयः सातस्वरूपेण परिणमति ॥ २७४ ॥

जी० प्र०—यतस्तस्य केवलिनः सातवेदनीयस्य बंधः समयस्थितिकः ततः उदयात्मक एव स्यात् तेन तत्रासातोदयः सातस्वरूपेण परिणमति कुतः? विशिष्टशुद्धे तस्मिन् असातस्य अनंतगुणहीनशक्तित्वसहायरहितत्वाभ्यां अव्यक्तोदयत्वात्। बध्यमानसातस्य च अनंतगुणानुभागत्वात् तथात्वस्यावश्यंभावात्। नच तत्र सातोदयोऽसातस्वरूपेण परिणमतीति शक्यते वक्तुं द्विसमयस्थितिकत्वप्रसंगात् अन्यथा असातस्यैव बंधः प्रसज्यते ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—जातैं तिस केवलीकैं साता वेदनीयका बंध एक समय स्थितिकौं लीएं हैं तातैं उदयस्वरूप ही है तातैं केवलीकैं असाता वेदनीयका उदय सातारूप होइकरि परिनमै है। काहेतैं ? केवलीकेविषैं विशुद्धता विशेष है तातैं असाता वेदनीयकी अनुभागशक्ति अनंतगुणी हीन भई है अर मोहका सहाय था ताका अभाव भया है तातैं असाता वेदनीयका अप्रगट सूक्ष्म उदय है। बहुरि जो साता वेदनीय बंधै है ताका अनुभाग अनंतगुणा है जातैं साता वेदनीयकी स्थितिकी अधिकता तो संक्लेश तातैं हो है अनुभागकी अधिकता विशुद्धतातैं हो है सो केवलीकै विशुद्धता विशेष है तातैं स्थितिका तौ अभाव है बंध है सो उदयरूप परिनमता ही हो है अर ताकैं साता वेदनीयका अनुभाग अनंतगुणा हो है ताहीतैं जो असाताका भी उदय है सो सातारूप होइकरि परिनमैं है। कोऊ कहै कि साता असातारूप होइ परिनमै है ऐसैं क्यों न कहौं ? ताका उत्तर कि ऐसैं कहैं साताका स्थितिबंध दोय समयका न ठहरै वा अन्य प्रकार कहैं असाताहीका बंध होइ तातैं तैं कह्या तैसैं कहना संभवै नाहीं ॥२७४॥

एदेण कारणेण दु सादस्सेव दु णिरंतरो उदओ।
तेणासादणिमित्ता परीसहा जिणवरे णत्थि ॥ २७५ ॥

एतेन कारणेन तु सातस्यैव तु निरंतर उदयः।
तेनासातनिमित्ताः परीषहाः जिनवरे नास्ति ?॥ २७५॥

जी० प्र०—एतेन उक्तकारणेन तु पुनः सातस्यैव निरंतरोदयः स्यात् तेनासातोदयजनिताः परीषहाः क्षुत्पिपासाशीतोष्णदंशमशकचर्याशय्यावधरोगतृणस्पर्शमलाख्या जिनवरे न संति 'एकादश जिने' 'वेदनीये शेषाः' इति सूत्रेणापि कारणे कार्योपचारेणैवोक्तत्वात् मुख्यतस्तेषामभावात्।

अथाभेदविवक्षया उदये द्वाविंशत्युत्तरशतं १२२। तत्र मिथ्यादृष्टावुदयः सप्तदशोत्तरशतं, अनुदयः तीर्थकरत्वाहारकद्वयसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतयः पंच। सासादने पंच नारकानुपूर्व्यं च मिलित्वा अनुदयः एकादश, उदयः एकादशोत्तरशतं। मिश्रेऽनुदयः नव शेषानुपूर्वत्रयं च मिलित्वा सम्यग्मिथ्यात्वोदयात् द्वाविंशतिः। उदयः शतं। असंयतेऽनुदयः एकां निक्षिप्य चतुरानुपूर्व्यसम्यक्त्वप्रकृत्युदयादष्टादश। उदयः चतुरुत्तरशतं। देशसंयतेऽनुदयः सप्तदश मिलित्वा पंचत्रिंशत्। उदयः सप्ताशीतिः। प्रमत्तेऽनुदयः आहारद्वयोदयादेकचत्वारिंशत्। उदयः एकाशीतिः। अप्रमत्तेऽनुदयः पंच संयोज्य षट्-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चत्वारिंशत् । उदयः षट्सप्ततिः । अपूर्वकरणेऽनुदयः चतस्रः संयोज्य पंचाशत् । उदयः द्वासप्ततिः । अनिवृत्तिकरणेऽनुदयः षट् संयोज्य षट्पंचाशत् । उदयः षट्षष्टिः । सूक्ष्मसांपराये षट् निक्षिप्य अनुदयो द्वाषष्टि, उदयः षष्टिः । उपशांतकषाये एकां संयोज्यानुदयस्त्रिषष्टिः । उदयः एकान्नषष्टिः । क्षीणकषाये द्वे निक्षिप्य अनुदयः पंचषष्टिः । उदयः सप्तपंचाशत् । सयोगकेवलिनि षोडश संयोज्य तीर्थकरत्वोदयादनुदयः अशीतिः । उदयः द्वाचत्वारिंशत् । अयोगकेवलिनि त्रिंशतं संयोज्यानुदयः दशोत्तरशतं । उदयः द्वादश ॥ २७५ ॥ अमूनुक्तोदयानुदयान् गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—इसही कारणकरि केवलीकैं निरंतर साताहीका उदय है तींहि कारणकरि असाताके उदयतै निपजैं ऐसा क्षुधा १ पिपासा १ शीत १ उष्ण १ दंशमशक १ चर्या १ शय्या १ बंध १ रोग १ तृणस्पर्श १ मल १ ए ग्यारह परीषह केवलीविषैं नाहीं हैं । सूत्रके कर्ता 'एकादश जिने' बहुरि 'वेदनीये शेषाः' ऐसा कह्या है सो कारण असाता वेदनीयका उदयविषैं कार्यरूप परीषहका उपचारकरि कह्या है । मुख्यपनैकरि परीषहका केवलीकैं अभाव है।

अथ अभेद विवक्षाकरि उदय प्रकृति एकसो वाईस १२२ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं उदय एकसो सतरह ११७ अनुदय तीर्थंकर १ आहारकद्विक २ सम्यक्त्व मोहनी मिश्र मोहनी ए पांच ५ वहुरि पांच व्युच्छित्ति अर नारकानुपूर्वी मिलिकरि सासादनविषैं अनुदय ग्यारह, उदय एकसौ ग्यारह है बहुरि नव व्युच्छित्ति अर अवशेष तीन आनुपूर्वीका अनुदय है अर सम्यग्मिथ्यात्वका उदय है तातैं मिश्रविषैं अनुदय वाईस उदय सौ १०० वहुरि व्युच्छित्ति एकका अनुदय है अर च्यारि आनुपूर्वी अर सम्यक्त्व मोहनीयका उदय है तातैं असंयतविषैं अनुदय अठारह उदय एक सौ च्यारि, वहुरि व्युच्छित्ति सतरह है तातैं देशसंयतविषैं अनुदय पैंतीस उदय सित्यासी वहुरि व्युच्छित्ति आठका अनुदय है अर आहारक द्विकका उदय है तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय इकतालीस उदय इक्यासी वहुरि व्युच्छित्ति पांच है तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय छियालीस उदय छिहतरि वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय पचास उदय बहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणविषैं अनुदय छप्पन उदय छ्यासठि वहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं सूक्ष्मसांपरायविषैं अनुदय वासठि उदय साठि वहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांत कषायविषैं अनुदय तरेसठि उदय गुनसठि वहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीणकषायविषैं अनुदय पैंसाठि उदय सत्तावन बहुरि व्युच्छित्ति सोलहका अनुदय अर तीर्थंकरत्वका उदय है तातैं संयोग केवलीविषैं अनुदय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

असी उदय वियालीस बहुरि व्युच्छित्ति तीस तातैं अयोग केवलीविषै अनुदय एकसौ दश उदय बारह जानना ॥ २७५ ॥ ए कहे उदय अनुदय तिनकौं दोय गाथानि करि कहैं हैं—

सत्तरसेक्कारख चदुसहियसयं सगिगिसीदि छदुसदरी।
छावट्ठि सट्ठि णवसगवण्णास दुदालबारुदया ॥ २७६ ॥

सप्तदशैकादशशून्यचतुःसहितशतं सप्तैकाशीतिः षद्‌द्विसप्ततिः।
षद्‌षष्टिः षष्टिः नवसप्तपंचाशत् द्विचत्वारिंशद्‌द्वादशोदयः॥ २७६ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानेषु यथाक्रमं सप्तदशैकादशशून्यचतुरधिकशतानि सप्तैकाशीतिः षद्‌द्व्युत्तरसप्ततिः षद्‌षष्टिः षष्टिः नवसप्ताधिकपंचाशतौ द्विचत्वारिंशत् द्वादश प्रकृतयः उदये भवंति ॥ २७६ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादिक गुणस्थाननिविषैं अनुक्रमतैं एकसौ सतरह एकसौ ग्यारह एकसौ एकसौ च्यारि सत्यासी इक्यासी छिहंतरि वहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालीस बारह प्रकृति उदयरूप जाननी। २७६।

पंचेक्कारसबावीसट्ठारसपंचतीस इगिछादालं।
पण्णं छप्पण्णं बितिपणसट्ठि असीदि दुगणपणवण्णं ॥२७७॥

पंचैकादशद्वाविंशत्यष्टादशपंचत्रिंशदेकषद्‌चत्वारिंशत्।
पंचाशत् षद्‌पंचाशत् द्वित्रिपंचषष्टिरशीतिः द्विगुणपंचपंचाशत् ॥ २७७ ॥

जी० प्र०—तेषु अनुदयाः यथाक्रमं पंचैकादशद्वाविंशत्यष्टादशपंचत्रिंशदेकषडधिकचत्वारिंशत्पंचाशत्षद्‌पंचाशद्‌द्वित्रिपंचाधिकषष्ट्यशीतिद्विगुणपंचपंचाशत्प्रकृतयो भवंति ॥ २७७ ॥ अथोदयप्रकृतीनामुदीरणामाह—

स० चं०—तिन मिथ्यादृष्ट्यादिक गुणस्थाननिविषैं अनुक्रमतैं पांच ग्यारह बाईस अठारह पैंतीस इकता-

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लीस छियालीस पंचास छप्पन बासठि तरेसठि पैंसठि असी एकसौ दश प्रकृति अनुदयरूप जाननी ॥ २७७ ॥

आगैं उदय प्रकृतिनिकी उदीरणा कहैं हैं—

उदयस्सुदीरणस्स य सामित्तादो ण विज्जदि विसेसो ।
मोत्तूण तिण्णिठाणं पमत्त जोगी अजोगी य ॥ २७८॥

उदयस्योदीरणायाश्च स्वामित्वात् न विद्यते विशेषः ।
मुक्त्वा त्रयस्थानं प्रमत्तं योग्ययोगि च ॥ २७८ ॥

जी० प्र०—उदयस्य उदीरणायाश्च स्वामित्वाद्विशेषो न विद्यते प्रमत्तयोग्ययोगित्रयं मुक्त्वा अन्यत्र विशेषो नेत्यर्थः ॥ २७८ ॥ तत्र कोविशेषः ? इति चेदाह—

स० चं०—उदयकैं अर उदीरणाकैं स्वामित्वपनेतैं किछू विशेष नाहीं प्रमत्त सयोगी अयोगी इन तीनों गुणस्थानोंको छोडि अन्यत्र उदयवत् उदीरणा जाननी ॥ २७८ ॥ तहां विशेष कहा ? सो कहैं हैं—

तीसं बारस उदयुच्छेदं केवलिणमेकदं किच्चा ।
सादमसादं च तहिं मणुवाउगमवणिदं किच्चा ॥२७९॥

त्रिंशत् द्वादश उदयोच्छेदं केवलिनोरेकत्र कृत्वा ।
सातमसातं च तत्र मानवायुष्कमपनीतं कृत्वा ॥ २७९ ॥

जी० प्र०—सयोगायोगयोः उदयव्युच्छित्तिं त्रिंशद्द्वादश एकीकृत्य ४२ तत्र सातासातमनुष्यायूंषि अपनेतव्यानि ३९ ॥ २७९ ॥

स० चं०—सयोगी अयोगीविषैं व्युच्छित्ति तीस अर बारह है तिनकौ एकठ्ठी करि तिनमैं स्यौं साता असाता मनुष्यायु ए घटाइए ॥ २७९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवणिदतिप्पयडीणे पमत्तविरदे उदीरणा होदि।
णत्थित्ति अजोगिजिणे उदीरणा उदयपयडीणं ॥२८०॥

अपनीतात्रिप्रकृतीनां प्रमत्तविरते उदीरणा भवति।
नास्तीति अयोगिजिने उदीरणा उदयप्रकृतीनां ॥ २८० ॥

जी० प्र०—अयोगिजिने उदयप्रकृतीनां उदीरणा नास्ति इति तदपनीतप्रकृतित्रयस्य प्रमत्तसंयते व्युच्छित्तिर्भवति ततः कारणात् प्रमत्तेऽष्टौ व्युच्छिद्यंते। शेषैकोनचत्वारिंशदुदीरणा सयोगे एव नाप्रमत्तादिषु तत्त्रयोदीरणास्ति अप्रमत्तादित्वात्। संक्लिष्टेभ्योऽन्यत्र तदसंभवाच्च ॥ २८० ॥ अथोदीरणाव्युच्छित्तिमाह—

स० चं०—घटाई जे तीन प्रकृति साता असाता मनुष्यायु इनकी उदीरणाकी व्युच्छित्ति प्रमत्त संयतविषैं ही भई तातैं प्रमत्तविषैं व्युच्छित्ति आठ है बहुरि अयोगी जिनविषैं उदीरणाका अभाव है। तातैं तिन तीन प्रकृतिनिकौं घटाएं अवशेष गुणतालीस प्रकृति रहीं तिनकी उदीरणाकी व्युच्छित्ति सयोगीविषैं जाननी। तिन तीन प्रकृतिनिकी उदीरणा अप्रमत्तादिक गुणस्थाननिविषैं नाहीं है जातैं इनकी उदीरणा संक्लेश परिणामनतैं हो है ॥ २८० ॥ आगैं उदीरणाकी व्युच्छित्ति कहैं हैं—

पण णव इगि सत्तरसं अट्ठ य चदुर छक्क छच्चेव।
इगि दुग सोलुगदालं उदीरणा होंति जोगंता ॥२८१॥

पंच नवैकं सप्तदश अष्टाष्ट च चत्वारि षट्कं षट्चैव।
एकं द्विकं षोडशैकोनचत्वारिंशदुदीरणा भवंति योग्यंताः ॥ २८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—सयोगपर्यंतत्रयोदशगुणस्थानेषु यथाक्रमं उदीरणा व्युच्छित्तिः पंचनवैकसप्तदशाष्टाष्टचतुःषट्कषट्कैकद्विषोडशैकान्नचत्वारिंशत्प्रकृतयः स्युः। तस्यां सत्यां मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने उदीरणा सप्तदशोत्तरशतं। अनुदीरणा तीर्थकृदाहारकद्विकसम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वानि पंच। सासादनेऽनुदीरणा मिथ्यादृष्टिव्युच्छित्तिनारकानुपूर्व्यं च मिलित्वा एकादश। उदीरणा एकादशोत्तरशतं। सम्यग्मिथ्यादृष्टौ अनुदीरणा नव शेषानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा सम्यग्मिथ्यात्वोदीरणाद्द्वाविंशतिः। उदीरणा शतं। असंयते अनुदीरणा एकां निक्षिप्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदीरणादष्टादश। उदीरणा चतुरुत्तरशत। देशसंयतेऽनुदीरणा सप्तदश संयोज्य पंचत्रिंशत्। उदीरणा सप्ताशीतिः। प्रमत्तेऽनुदीरणा अष्टौ मिलित्वा आहारकद्विकोदीरणादेकचत्वारिंशत्। उदीरणा एकाशीतिः। अप्रमत्तेऽनुदीरणा अष्टौ मिलित्वा एकान्नपंचाशत्। उदीरणा त्रिसप्ततिः। अपूर्वकरणेऽनुदीरणा चतस्रो मिलित्वा त्रिपंचाशत् उदीरणा एकान्नषष्टिः। अनिवृत्तिकरणेऽनुदीरणा षट् संयोज्य एकान्नषष्टिः। उदीरणा त्रिषष्टिः। सूक्ष्मसांपरायेऽनुदीरणा षट् संयोज्य पंचषष्टिः। उदीरणा सप्तपंचाशत्। उपशांतकषायेऽनुदीरणा एकां संयोज्य षट्षष्टिः। उदीरणा षट्पंचाशत्। क्षीणकषायेऽनुदीरणा द्वि संयोज्य अष्टषष्टिः, उदीरणा चतुःपंचाशत्। सयोगकेवलिन्यनुदीरणा षोडश संयोज्य तीर्थकृदुदीरणात् त्र्यशीतिः, उदीरणा एकान्नचत्वारिंशत्। अयोगकेवलिनि अनुदीरणा एकान्नचत्वारिंशत् मिलित्वा द्वाविंशत्युत्तरशतं, उदीरणा नास्ति। उदीरणा नाम अपक्वपाचनं दीर्घकाले उदेष्यतोऽग्रनिषेकानपकृष्य अल्पस्थितिकाधस्तननिषेकेषु उदयावल्यां दत्वा उदयमुखेन अनुभूय कर्मरूपं त्याजयित्वा पुद्गलांतररूपेण परिणामयतीत्यर्थः ॥ २८१ ॥ अथोक्तोदीरणानुदीरणाप्रकृतिसंख्याः गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादि सयोगीपर्यंत उदीरणाकी व्युच्छित्ति अनुक्रमतैं पांच नव एक सतरह आठ आठ च्यारि छह छह एक दोय सोलह गुणतालीस प्रकृति जाननी ऐसैं व्युच्छित्ति होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं उदीरणा एकसौ सत्तर अनुदीरणा तीर्थंकर १ आहारक द्विक २ सम्यक्त्व मोहनी मिश्र मोहनी ए पांच बहुरि व्युच्छित्ति पांच अर नारकानुपूर्वीकी उदीरणा नाहीं तातैं सासादनविषैं अनुदीरणा ग्यारह उदीरणा एकसौ ग्यारह। बहुरि व्युच्छित्ति नव अर अवशेष तीन अनुपूर्वीकी उदारणा नाहीं अर सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी उदीरणा हैं तातैं मिश्रविषैं अनुदीरणा वाईस, उदीरणा सौ १००। बहुरि व्युच्छित्ति एककी उदीरणा नाहीं सम्यक्त्व मोहनीय अर च्या-

उदीरणात्रिभंगीरचनेयं	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
	५	९	१	१७	८	८	४	६	६	१	२	१६	३९	०
	११७	१११	१००	१०४	८७	८१	७३	६९	६३	५७	५६	५४	३९	०
	५	११	२२	१८	३५	४१	४९	५३	५९	६५	६६	६८	८३	१९२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रि आनुपूर्वीकी उदीरणा है तातैं असंयतविषैं अनुदीरणा अठारह उदीरणा एकसौ च्यारि । बहुरि व्युच्छित्ति सतरह तातैं देशसंयतविषैं अनुदीरणा पैंतीस उदीरणा सित्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठकी उदीरणा नाही अर आहारकादिककी उदीरणा है तातैं प्रमत्तविषैं अनुदीरणा इकतालीस, उदीरणा इक्यासी । बहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदीरणा गुणचास, उदीरणा तेहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्वकरणविषैं अनुदीरणा तरेपन, उदीरणा गुणहत्तरि । बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणविषैं अनुदीरणा गुणसठि, उदीरणा तरेसठि। बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं सूक्ष्मसांपरायविषैं अनुदीरणा पैंसठि। उदीरणा सत्तावन। बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांत कषायविषैं अनुदीरणा छ्यासठि, उदीरणा छप्पन। बहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीणकषाय विषैं अनुदीरणा अडसठि, उदीरणा चौवन। बहुरि व्युच्छित्ति सोलहकी उदीरणा नाहीं अर तीर्थंकरकी उदीरणा है तातैं सयोगविषैं अनुदीरणा तियासी, उदीरणा गुणतालीस। बहुरि व्युच्छित्ति गुणतालीस तातैं अयोगीविषैं उदीरणाका अभाव, अनुदीरणा एकसौ बाईस है। उदीरणा कहा कहिए? 'अपक्वपाचनं उदीरणा' दीर्घकालमें जिनका उदय आवै ऐसे अगले निषेक तिनकौं अपकर्षणकरि थोराकालमें जिनका उदय आवै ऐसे निषेकनविषैं उदयावलीविषैं देय करि उदय रूप अनुभवकरि कर्मपना छुडाय और पुद्गल पर्यायरूप परिनमावना ताकौं उदीरणा कहिए। भावार्थ—जे कर्म प्रकृति बंध रूप भईं थी ते अपनी अपनी गुण हानिविषैं जे निषेक तिनका अनुक्रमतैं उदय रूप हो हैं बहुरि जे निषेक आगामी बहुत कालमें उदय आवैंगे तिन निषेकनिकौं जे निषेक थोरे कालमें उदय आवैं तिन विषैं मिलाय देना जैसे आंब बहुत कालमें पचता ताकौं पालमें देइ थोरे कालमें पचाया तैसे जे कर्म परमाणूका समुदायरूप निषेक बहुतकाल मैं उदय आवने योग्य थे तिनकौं थोरे कालमें उदय आवने योग्य कीए। बहुरि तिनको उदयरूप अनुभवकरि तिन कर्म परमाणूनिकौं कर्मपनेतैं छुडाय और पर्याय रूप परिनमावना तिसका नाम उदीरणा है ॥ २८१ ॥ आगै कही जो उदीरणा वा अनुदीरणा रूप प्रकृतिनिकी संख्या ताकौं दोय गाथानिकरि कहैं हैं-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्तरसेक्कारखचदुसहियसयं सगिगिसीदि तियसदरी।
णवतिण्णिसट्ठि सगछक्कवण्ण चउवण्णमुगुदालं॥२८२॥
पंचेक्कारसबावीसट्ठारस पंचतीस इगिणवदालं।
तेवण्णेक्कुणसट्ठी पणछक्कडसट्ठि तेसीदी॥२८३ जुम्मं।

सप्तदशैकादशखचतुःसहितशतं सप्तैकाशीतिः त्रिसप्ततिः।
नवत्रिषष्ठिः सप्तषट्कपंचाशत् चतुःपंचाशत् एकोनचत्वारिंशत्॥ २८२॥
पंचैकादशद्वाविंशत्यष्टादश पंचत्रिंशत् एकनवचत्वारिंशत्।
त्रिपंचाशदेकोनषष्टिः पंचषट्काष्टषष्टिः त्र्यशीतिः॥ २८३॥

जी० प्र०—चतुर्दशगुणस्थानेषु यथाक्रमं सप्तदशैकादशशून्यचतुःसहितशतानि सप्ताशीतिरेकाशीतिस्त्रिसप्ततिर्नवषष्टिः त्रिषष्टिः सप्तपंचाशत्षट्पंचाशच्चतुःपंचाशदेकान्नचत्वारिंशदुदीरणा भवति। पंचैकादशद्वाविंशत्यष्टादशपंचत्रिंशदेकचत्वारिंशन्नवोत्तरचत्वारिंशत्त्रिपंचाशदेकान्नषष्टिपंचषष्टिषट्षष्ट्यष्टषष्ट्यत्र्यशीतिसंख्या च अनुदीरणा भवति॥ २८२–२८३॥ एवं गुणस्थानेषूदयोदीरणात्रिभंगीमुक्त्वा इदानीं गत्यादिमार्गणासु उदयत्रिभंगीवक्तुमनास्तावद्गत्यादिषु तत्क्रममाह—

सं० चं०-मिथ्यादृष्ट्यादिक तेरह गुणस्थाननिविषै एकसौ सतरह, एकसौ ग्यारह, पूरा एकसौ, एकसौ च्यारि, सत्यासी इक्यासी तिहत्तरि गुणहत्तरि तरेसठि सत्तावन छप्पन चौवन गुणतालीस उदीरणा प्रकृति अनुक्रमतैं जाननी। बहुरि पांच ग्यारह बाईस अठारह पैंतीस इकतालीस गुणचास तरेपन गुणसठि पैंसठि अर छ्यासठि अडसठि तियासी अनुदीरणा प्रकृति जाननी॥ २८२-२८३॥ ऐसे गुणस्थाननिविषै उदय उदीरणा त्रिभंगी कहि अब गत्यादिक मार्गणा विषै उदय त्रिभंगी कह्या चाहै हैं सो प्रथम गत्यादिकका उदयका अनुक्रम कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गदियादिसु जोग्गाणं पयडिप्पहुदीणमोघसिद्धाणं ।
सामित्तं णेदव्वं कमसो उदयं समासेज्ज ॥२८४॥

गत्यादिषु योग्यानां प्रकृतिप्रभृतीनामोघसिद्धानां ।
स्वामित्वं नेतव्यं क्रमश उदयं समासाद्य ॥ २८४ ॥

जी० प्र०—गत्यादिमार्गणासु योग्यानां प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशानां गुणस्थानसिद्धानां स्वामित्वमागमोक्तक्रमेणोदयमाश्रित्य नेतव्यं ॥२८४॥ तत्र तावत्परिभाषां गाथापंचकेनाह—

स० चं०—योग्य जे प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेश गुणस्थान वर्णनविषैं सिद्ध भए तिनका स्वामित्वपना गत्यादिमार्गणानिविषैं आगमके अनुसारि क्रमतैं उदयकी अपेक्षाकरि प्राप्त करणा ॥ २८४ ॥ तहां प्रथम परिभाषा पंच गाथानि करि कहै हैं—

गदिआणुआउउदओ सपदे भूपुण्णबादरे ताओ ।
उच्चुदओ णरदेवे थीणतिगुदओ णरे तिरिये ॥२८५॥

गत्यान्वायुरुदयः सपदे भूपूर्णवादरे आतपः ।
उच्चोदयो नरदेवे स्त्यानत्रिकोदयो नरे तिरश्चि ॥ २८५ ॥

जी० प्र०—विवक्षितभवप्रथमसमये एव तद्गतितदानुपूर्व्यतदायुष्योदयः सपदे सदृशस्थाने युगपदेवैकजीवे उदेतीत्यर्थः । भूकायिकबादरपर्याप्ते एव आतपनामोदयः उच्चैर्गोत्रोदयो मनुष्ये सर्वदेवभेदे च । स्त्यानगृद्धित्रयोदयो मनुष्ये तिरश्चि च नेतरत्रेत्यर्थः ॥ २८५ ॥ तत्रापि—

स० चं०—विवाक्षित पर्यायका पहिला समय ही तीहिं विवाक्षित पर्याय संबंधी गति वा आनुपूर्वी वा आयुका उदय हो है सपदे कहिए एक ही गतिका वा आनुपूर्वी वा आयूका उदय एक जीवकैं यूगपत् हो है। बहुरि आ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताप प्रकृतिका उदय वादर पर्याप्तक पृथ्वीकायिक जीवही कैं है औरकैं नाहिं। बहुरि उच्चगोत्रका उदय किसी मनुष्यत्रिषैं वा सर्व देवके भेदनिविषैं पाइए है। बहुरि स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन निद्राका उदय मनुष्य अर तिर्यंचविषैं ही है अन्यत्र नाहीं ॥ २८५ ॥

संखाउगणरतिरिए इंदियपज्जत्तगादु थीणतियं।
जोग्गमुदेदुं वज्जिय आहारविगुव्विणुट्ठवगे ॥२८६॥

संख्यायुष्कनरतिरश्चि इंद्रियपर्याप्तकात् स्त्यानत्रयं।
योग्यमुदेतुं वर्जयित्वा आहारविगूर्वणोत्थापके ॥ २८६ ॥

जी० प्र०—तु-पुनः संख्यातवर्षायुष्के कर्मभूमिमनुष्यतिरश्चि इंद्रियपर्याप्तेरुपरि स्त्यानगृद्धित्रयमुदययोग्यं। तत्रापि मनुष्ये आहारकर्धिवैक्रियिकर्द्ध्यभावे एव ॥ २८६ ॥

सं० च—बहुरि संख्यात वर्षका जिनका आयु ऐसे जो कर्मभूमियां मनुष्य वा तिर्यंच तिनहीके इंद्रियपर्याप्ति पूर्ण भए पीछे स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन प्रकृति उदय योग्य हैं तहां भी आहारक ऋद्धि अर वैक्रियिक ऋद्धिका धारक मनुष्यकैं स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन प्रकृति उदय योग्य नाहीं ॥ २८६ ॥

अयदापुण्णे ण हि थी संढोवि य घम्मणारयं मुच्चा।
थीसंढयदे कमसो णाणुचऊ चरिमतिण्णाणू ॥२८७॥

अयतापूर्णे न हि स्त्री षंढोऽपि च घर्मनारकं मुक्त्वा।
स्त्रीषंढायते क्रमशो नानुचत्वारिचरमत्रयानुः ॥ २८७ ॥

जी० प्र०—निर्वृत्त्यपर्याप्तासंयते स्त्रीवेदोदयो नहि असंयतस्य स्त्रीत्वेनानुत्पत्तेः। षंढवेदोदयोऽपि च नहि षंढत्वेनापि तस्यानुत्पत्तेः। अयमुत्स-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गविधिः प्राग्बद्धनरकायुस्तिर्यग्मनुष्ययोः सम्यक्त्वेन समं घर्मायामुत्पत्तिसंभवात् तेन असंयते स्त्रीवेदिनि चतुर्णां, षंढवेदिनि त्रयाणां चानुपूर्वीणां उदयो नास्ति ॥ २८७ ॥

सं० च०—निवृत्ति अपर्याप्त असंयत गुणस्थानविषैं स्त्रीवेदका उदय नाहीं जातैं असंयत मरि स्त्री नाहीं उपजैं है। बहुरि धर्मानरक विना नपुंसक वेदका भी उदय नाहीं जातैं पूर्वै नरकायु बांध्या होइ ऐसैं तिर्यंच वा मनुष्य सम्यक्त्वसहित मरि धर्मा नरकविषैं ही उपजैं है याहीतैं असयतविषैं स्त्री वेदीकै तो च्यारयो आनुपूर्वीका उदय नाहीं। नपुंसककैं नरकविना तीन आनुपूर्वीका उदय नाहीं है॥ २८७॥

इगिविगलथावरचऊ तिरिए अपुण्णो णरेवि संघडणं।
ओरालदु णरतिरिए वेगुव्वदु देवणेरयिए ॥२८८॥

एकविकलस्थावरचत्वारि तिरश्चि अपूर्णो नरेऽपि संहननं।
औरालद्विनरतिरश्चि वैक्रियिकद्विदेवनैरयिके ॥ २८८ ॥

जी० प्र०—एकद्वित्रिचतुरिंद्रियजातिनामकर्मस्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणानि तिर्यक्षु एव उदययोग्यानि अपर्याप्तमनुष्येऽपि। संहननषट्कमौदारिकद्वयं च तिर्यग्मनुष्येष्वेव। वैक्रियिकद्वयं सुरनारकेष्वेव ॥ २८८ ॥

सं० च—एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री ए जाति नाम कर्म अर सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण ए तिर्यंचविषैं ही उदय योग्य हैं। अपर्याप्त प्रकृति मनुष्यविषैं भी उदय योग्य है। बहुरि छह संहनन औदारिक शरीर वा अंगोपांग तिर्यंच मनुष्यविषैं ही उदय योग्य हैं। बहुरि वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग देव नारकविषैं ही उदय योग्य है॥ २८८॥

तेउतिगूणतिरिक्खेसुज्जोवो बादरेसु पुण्णेसु।
सेसाणं पयडीणं ओघं वा होदि उदओ दु ॥२८९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेजस्त्रिकोनातिर्यक्षु उद्योतो वादरेषु पूर्णेषु ।
शेषाणां प्रकृतीनामोघवत भवति उदयस्तु ॥ २८९ ॥

जी० प्र०—तेजोवायुसाधारणवनस्पत्यूनशेषवादरपर्याप्ततिर्यक्षु उद्योतः । तु—पुनः शेषप्रकृत्युदयक्रमो गुणस्थानवद्भवेत् ॥ २८९ ॥ एवं पंचपरिभाषासूत्रैरुदयनियमं परिज्ञाप्य चतुर्गतिषु उदयप्रकृतीर्वक्तुं प्राक् नरकगतावाह—

सं० च०—तेजस्काय वातकाय साधारण वनस्पती काय इन विना अन्य वादर पर्याप्त तिर्यंचनिविषैं उद्योत प्रकृतिका उदय है । बहुरि अवशेष प्रकृतिनिका उदयका अनुक्रम गुणस्थानवत् जानना ॥२८९॥ ऐसैं पंच परिभाषा सूत्रनिकरि उदयका नियम कहिकरि च्यारि गतिनिविषैं उदय प्रकृति कह्या चाहैं है । तहां प्रथम नरकगतिविषैं कहैं हैं ॥ २८९ ॥

थीणातिथीपुरिसूणा घादी णिरयाउणीचवेयणियं ।
णामे सगवचिठाणं णिरयाणू णारयेसुदया ॥२९०॥

स्त्यानत्रिस्त्रीपुरुषोना घातिनी निरयायुर्नीचवेदनीयं ।
नाम्नि स्वकवचःस्थानं निरयानुः नारकेषूदयाः ॥ २९० ॥

जी० प्र०—स्त्यानगृद्धित्रयस्त्रीपुंवेदोनघातीनि द्वाचत्वारिंशत् । नरकायुर्नीचगोत्रसातासातवेदनीयानि नामकर्मणि नारकभाषापर्याप्तिस्थानस्यैकान्नत्रिंशत् नारकानुपूर्व्यं चेति षट्सप्ततिर्नारकोदययोग्यानि ॥ २९० ॥ तदेकान्नत्रिंशतमाह—

सं० च०—स्त्यान गृद्ध्यादिक तीन अर स्त्री पुरुषवेद इन पंच विना घाति कर्मनिकी बियालीस प्रकृति ४२ अर नरकायु १ नीचगोत्र १ साता असाता वेदनीय २ नामकर्मविषैं नारकी जीवाकैं भाषा पर्याप्ति स्थानविषैं होइ ऐसैं गुणतीस प्रकृति २९ अर नारकानुपूर्वी ए छिहंतरि प्रकृति नरक गतिविषैं उदय योग्य हैं ॥ २९० ॥ तिन गुणतीस प्रकृतिनिकौं कहैं हैं ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेगुव्वतेजथिरसुहदुग दुग्गदिहुंडणिमिणपंचिंदी ।
णिरयगदि दुब्भगागुरुतसवण्णचऊ य वचिठाणं ॥ २९१ ॥

वेगूर्वतेजः स्थिरशुभद्विकं दुर्गतिहुंडनिर्माणपंचेंद्रियं ।
निरयगतिर्दुर्भगागुरुत्रसवर्णचत्वारि च वचःस्थानं ॥ २९१ ॥

जी० प्र०—वैक्रियिकद्विकं तैजसद्विकं स्थिरद्विकं शुभद्विकं अप्रशस्तविहायोगतिः हुडसंस्थानं निर्माणं पंचेंद्रियनरकगतिः दुर्भगदुस्वरानादेयायशस्कीर्तयः अगुरुलघूपघातपरघातोच्छ्वासाः त्रसवादरपर्याप्तप्रत्येकशरीराणि वर्णगंधरसस्पर्शाश्च इत्येकान्नत्रिंशन्नारकाणां वचःपर्याप्तिस्थाने भवंति ॥ २९१ ॥ अथ घर्मानारकोदयव्युच्छित्तिमाह—

सं० च०—वैक्रियिक द्विक २ तैजस कार्माण २ स्थिर आस्थिर २ शुभ अशुभ २ अप्रशस्त विहायोगति १ हुंडसंस्थान १ निर्माण १ पंचेंद्री १ नरकगति १ दुर्भग दुःस्वर अनादेय अयशस्कीर्ति ए च्यारि ४ अगुरुलघु उपघात परघात उच्छ्वास ए च्यारि ४ त्रस वादर पर्याप्त प्रत्येक ए च्यारि ४ वर्ण गंध रस स्पर्श ए च्यारि ४ अैसैं गुणतीस प्रकृति नारकी जीवनिकैं वचन पर्याप्तिके ठिकानैं उदयरूप हैं ॥ २९१ ॥ आगैं घर्मानारकविषैं उदयकी व्युच्छित्ति कहै हैं ॥ २९१ ॥

मिच्छमणंतं मिस्सं मिच्छादितिए कमा छिदी अयदे ।
बिदियकसाया दुब्भगणादेज्जदुगाउणिरयचऊ ॥ २९२ ॥

मिथ्यमनंतं मिश्रं मिथ्यात्वादित्रयं क्रमात् छित्तिरयते ।
द्वितीयकषाया दुर्भगानादेयद्विकायुर्निरयचत्वारि ॥ २९२ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वं अनंतानुबंधिचतुष्कं सम्यग्मिथ्यात्वं च क्रमेण मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानत्रये व्युच्छित्तिः। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कदुर्भगानादेयायशस्कीर्तिनारकायुर्नरकगतितदानुपूर्व्यवैक्रियिकशरीरतदंगोपांगानि द्वादश । एवं सति मिथ्यादृष्टावनुदयः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती उदयः च-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुःसप्ततिः। सासादनेऽनुदयः मिथ्यात्वनरकानुपूर्व्ये मिलित्वा चतस्रः, उदयः द्वासप्ततिः। मिश्रेनुदयः चतस्रः संयोज्य सम्यग्मिथ्यात्वोदयात् सप्त, उदयः एकान्नसप्ततिः। असंयतेऽनुदयः एकां निक्षिप्य सम्यक्त्वप्रकृतिनारकानुपूर्व्योदयात् षट्, उदयः सप्ततिः ॥२९२॥ अथ द्वितीयादिपृथ्वीष्वाह—

सं० च—मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व १ सासादनविषैं व्युच्छित्ति च्यारि ४ अनंतानुबंधी मिश्रविषैं व्युच्छित्ति एक मिश्र मोहनी, असंयत विषैं व्युच्छित्ति वारह अप्रत्याख्यान च्यारि ४ दुर्भग १ अनादेय १ यशस्कीर्ति १ नरक आयु १ नरकगति १ नारकानुपूर्वी १ वैक्रियिक शरीर १ वैक्रियिक अंगोपांग १ ए वारह सो ऐसें होतें घर्मा नरकविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्र मोहनी अर सम्यक्त्व मोहनी ए अनुदय दोय उदय चौहत्तरि ७४। बहुरि मिथ्यात्व व्युच्छित्ति अर नारकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादनविषैं अनुदय चार उदय वहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारिका उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीयका उदय पाइए तातैं मिश्रविषैं अनुदय सात उदय गुणहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्वमोहनी अर नारकानुपूर्वीका उदय पाइए तातैं असंयतविषैं अनुदय छह उदय सत्तरि है ॥ २९२ ॥ आगैं द्वितीयादिक पृथ्वीनिविषैं कहैं हैं—

बिदियादिसु छसु पुढविसु एवं णवरि य असंजदट्ठाणे।
णत्थि णिरयाणुपुव्वी तिस्से मिच्छेव वोच्छेदो ॥२९३॥

द्वितीयादिषु षट्सु पृथिवीषु एवं नवरि च असंयतस्थाने।
नास्ति निरयापूर्वी तस्मात् मिथ्ये एव व्युच्छेदः ॥ २९३ ॥

प्रथमनरकरचना

मि	सा	मि	अ
१	४	१	१२
७४	७२	६९	७०
२	४	७	६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—वंशादिषु पृथ्वीषु घर्मावत् षट्सप्ततिः उदययोग्याः। असंयते नारकानुपूर्व्योदयो नहि प्राग्बद्धनरकायुष्कस्यापि सम्यग्दृष्टेस्तत्रानुत्पत्तेः। ततः नारकानुपूर्व्येण सह मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः द्वयं। उदयः चतुःसप्ततिः। अनुदयः सम्यग्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृती। सासादने द्वयं संयोज्य अनुदयः चतस्रः। उदयः द्वासप्ततिः। मिश्रेऽनुदयः चतस्रः संयोज्य मिश्रप्रकृत्युदयात्सप्त, उदयः एकान्नसप्ततिः। असंयतेऽनुदयः एकां संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृत्युदयात् सप्त। उदयः एकान्नसप्ततिः॥ २९३॥ अथ तिर्यग्गतावाह—

स० चं०—वंशादिक पृथ्वीनिविषैं घर्मावत् उदययोग्य प्रकृति छिहंतरि, तहां असंयतविषैं नरकानु पूर्वीका उदय नाहीं पूर्वें जिनके नरकायु बंध भया होइ ऐसा भी सम्यग्दृष्टी वंशादिक पृथ्वीनिविषैं उपजै नाहीं तातैं मिथ्यादृष्टिविषैं नारकानुपूर्वी अर मिथ्यात्व ए दोय प्रकृति व्युच्छित्ति हैं। उदय चौहत्तरि अनुदय दोय मिश्र मोहनी अर सम्यक्त्व मोहनी बहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं सासादनविषैं अनुदय च्यारि उदय बहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारिका उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीयका उदय पाइए तातैं मिश्रविषैं अनुदय सात उदय गुणहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनीयका उदय पाइए तातैं असंयतविषैं अनुदय सात उदय गुणहत्तरि है॥ २९३॥ आगैं तीर्यंच गतिविषैं कहैं हैं—

तिरिये ओघो सुरणरणिरयाऊउच्च मणुदुहारदुगं।
वेगुव्वछक्कतित्थं णत्थि हु एमेव सामण्णे॥२९४॥

तिरश्चि ओघः सुरनरनिरयायुरुच्चं मनुद्वि आहारद्विकं।
वैगूर्विकषट्कतीर्थं नास्ति हि एवमेव सामान्ये॥ २९४॥

द्वितीयादिनरकरचना।

मि	सा	मि	अ
२	४	१	११
७४	७२	६९	६९
२	४	७	७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी प्र०—तिर्यग्गतावोघः गुणस्थानवत् द्वाविंशत्युत्तरशतं । तत्र देवमनुष्यनरकायूंषि उच्चैर्गोत्रं मनुष्यद्विकमाहारद्विकं वैक्रियिकषट्कं तीर्थंकरत्वं चेति पंचदश न इत्युदययोग्याः सप्तोत्तरशतं । १०७ । सामान्यतिर्यक्षु एवमेव सप्तोत्तरशतमेव । गुणस्थानानि पंच । तिरियो ओघा इति पणणवेत्यादि व्युच्छित्तयः तेन मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः पंच । उदयः पंचोत्तरशतं । अनुदयः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती । सासादने अनुदयः पंच संयोज्य सप्त । उदयः शतं । व्युच्छित्तिर्नव । मिश्रगुणस्थानेऽनुदयः नव तिर्यगानुपूर्व्यं च संयोज्य सम्यग्मिथ्यात्वोदयात् षोडश । उदयः एकनवतिः । व्युच्छित्तिरेका । असंयतेऽनुदयः मिश्रं संयोज्य सम्यक्त्वतिर्यगानुपूर्व्योदयात् पंचदश । उदयः द्वानवतिः । व्युच्छित्तिः द्वितीयकषायचतुष्कतिर्यगानुपूर्व्यदुर्भगानादेयायशस्कीर्तयोऽष्टौ । देशसंयते अनुदयः अष्टौ संयोज्य त्रयोविंशतिः । उदयः चतुरशीतिः । व्युच्छित्तिः गुणस्थानोक्ता अष्टौ ॥ २९४ ॥ अथ पंचेंद्रियतत्पर्याप्तकयोराह—

स० चं०—तिर्यंच गतिविषैं ओघः कहिए गुणस्थान उदय योग्य एकसौ वाईस तिनविषैं इहां देव मनुष्य नारक आयु तीन ३ उच्चगोत्र १ मनुष्यगति वा आनुपूर्वी २ आहारक शरीर वा अंगोपांग २ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग देव नारक गति वा आनुपूर्वी ए छह तीर्थंकर ए पंद्रह प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं उदय योग्य प्रकृति एकसौ सात हैं सो पंचप्रकार तिर्यंचनिविषैं सामान्य तिर्यंचविषै ऐसैं ही उदय योग्य प्रकृति एकसौ सात गुणस्थान पांच। तहां व्युच्छित्ति गुणस्थाननिविषैं कही तैसै ही पंच नव इत्यादिक जाननी तातैं मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति पांच उदय एकसौ पांच अनुदय मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी दोय बहुरि सासादनविषैं पंच मिलनेतैं अनुदय सात उदय सौ १०० व्युच्छित्ति नव बहुरि नव व्युच्छित्ति अर तिर्यंचानुपूर्वीका उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय सोलह उदय इक्याणवै व्युच्छित्ति एक बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वीका उदय है तातैं असंयतविषैं अनुदय पंद्रह उदय वाणवै व्युच्छित्ति अप्रत्याख्यान च्यारि तिर्यंचानु-

सामान्यतिर्यग्रचना।

मि	सा	मि	अ	दे
५	९	१	८	८
१०५	१००	९१	९२	८४
२	७	१६	१५	२३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वी १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ ए आठ बहुरि व्युच्छित्ति आठका उदय नाहीं तातैं देशसंयतविषैं अनुदय तेईस उदय चौरासी व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् आठ ॥ २९४ ॥ आगैं पंचेंद्री तिर्यंच वा पर्याप्त तिर्यंच विषैं कहैं हैं—

थावरदुगसाहारणताविगिविगलूण ताणि पंचक्खे ।
इत्थिअपज्जत्तूणा ते पुण्णे उदयपयडीओ ॥२९५॥

स्थावरद्विकसाधारणातपैकविकलोनाः ताः पंचाक्षे ।
स्त्र्यपर्याप्तोनास्ताः पूर्णे उदयप्रकृतयः ॥ २९५ ॥

जी० प्र०—स्थावरसूक्ष्मसाधरणातपैकेंद्रियद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियोनसामान्यतिर्यगुक्ताः पंचेंद्रियतिरश्चि उदययोग्याः एकोनशतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः मिथ्यात्वापर्याप्तं २ उदयः सप्तनवतिः । अनुदयः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती । सासादने व्युच्छित्तिरनंतानुबंधिचतुष्कं । उदयः पंचनवतिः । द्वयं संयोज्य अनुदयः चतस्रः । मिश्रे मिश्रं व्युच्छित्तिः । उदयः एकनवतिः, चतस्रः संयोज्य अनुदयोष्टौ । असंयते व्युच्छित्तिः अष्टौ एकां निक्षिप्यानुदयः सम्यक्त्वतिर्यगानुपूर्व्योदयात्सप्त । उदयः द्वानवतिः । देशसंयते व्युच्छित्तिरष्टौ, अनुदयः अष्टौ निक्षिप्य पंचदश, उदयश्चतुरशीतिः ।

स्त्रीवेदापर्याप्तोनपंचेंद्रियतिर्यगुक्तास्तत्पर्याप्तस्य उदययोग्याः सप्तनवतिः । तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः मिथ्यात्वं । अनुदयः सम्यक्त्वमिश्रप्रकृती । उदयः पंचनवतिः । सासादने व्युच्छित्तिरनंतानुबंधिचतुष्कं । एकां संयोज्य अनुदयस्तिस्रः । उदयश्चतुर्नवतिः । मिश्रे व्युच्छित्तिः मिश्रं । अनुदयः चतुष्कं तिर्यगानुपूर्व्यं च संयोज्य मिश्रोदयात् सप्त । उदयः नवतिः । असंयते व्युच्छित्तिः अष्टौ । अनुदयः एकां संयोज्य सम्यक्त्वतिर्यगानुपूर्व्योदयात् षट्, उदयः एकनवतिः । देशसंयते व्युच्छित्तिः अष्टौ । अनुदयः अष्टौ संयोज्य चतुर्दश । उदयस्त्र्यशीतिः ॥ २९५ ॥

पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्रचना ।

मि	सा	मि	अ	दे
१	४	१	८	८
९५	९४	९०	९१	८३
२	३	७	६	१४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स०चं०–स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ आतप १ एकेंद्री १ बेंद्री १ तेंद्री १ चौंद्री १ इन आठ विना सामान्य तिर्यंच विषैं उदय योग्य प्रकृति कहीं थीं ते पंचेंद्री तिर्यंचके उदय योग्य निन्याणवै प्रकृति हैं तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व अपर्याप्त ए दोय उदय सत्याणवै अनुदय मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी ए दोय, सासादनविषैं व्युच्छित्ति अनंतानुबंधी च्यारि उदय पच्याणवै अनुदय दोय मिलनेतैं च्यारि मिश्रविषैं व्युच्छित्ति मिश्रमोहनी एक उदय इक्याणवै अनुदय तिर्यंचानुपूर्वीका उदय नाही अर मिश्रमोहनीका उदय पाइए अर व्युच्छित्तिका च्यारि मिलनेतैं आठ असंयतविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त आठ अर मिश्र सबंधी आठकी विषैं तहांकी व्युच्छित्ति एक मिलाए अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वीका उदय पाइए तातैं इनकौं घटाएं अनुदय सात उदय वाणवै बहुरि देश संयतविषै व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् आठ अनुदय आठ मिलावनेतैं पंद्रह उदय चौरासी है। बहुरि पंचेंद्री तिर्यंचकैं उदय योग्य प्रकृतिमैस्यों स्त्रीवेद अर अपर्याप्त ए दोय प्रकृति घटाएं पंचेंद्रीपर्याप्तके उदय योग्य प्रकृति सित्याणवै तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व अनुदय सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी दोय उदय पच्याणवै बहुरि सासादनविषैं व्युच्छित्ति अनंतानुबंधी च्यारि एक मिलनेतैं अनुदय तीन उदय चौराणवै बहुरि मिश्रविषै व्युच्छित्ति मिश्र मोहनी एक अनुदय च्यारि व्युच्छित्तिकी अर तिर्यंचानुपूर्वीके मिलनेतैं अर मिश्र मोहनीके घटनेतैं सात उदयविषैं बहुरि असंयतविषैं व्युच्छित्ति आठ अनुदय एक मिलनेतैं अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वीके घटनेतैं छह उदय इक्याणवै बहुरि देश संयतविषैं व्युच्छित्ति आठ अनुदय आठ मिलनेतैं चौदह, उदय तियासी ॥ २९५ ॥

पुंसंढूणित्थिजुदा जोणिणिये अविरदे ण तिरयाणू।
पुण्णिदरे थी थीणति परघाददु पुण्णउज्जोवं ॥२९६॥

पुंषंढोनस्त्रीयुता योनिमती अविरते न तिर्यगानुः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्णेतरे स्त्री स्त्यानत्रि परघाताद्वि पूर्णोद्योतं ॥ २९६ ॥

जी० प्र०—योनिमत्तिर्यक्षु उदययोग्याः पंचेंद्रियपर्याप्तोक्तसप्तनवत्यां पुवंढवेदावपनीय स्त्रीवेदे निक्षिप्ते षण्णवतिर्भवति । तंत्र व्युच्छित्तयः मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं तिर्यगानुपूर्व्यं चेति पंच । कुतः ! अविरदेखातिरियाण्वित्युक्तत्वात् । मिश्रे मिश्रं । असंयते तिर्यगानुपूर्व्याभावात् सप्त । देशसंयते गुणस्थानोक्ता अष्टौ । एवं सति मिथ्यादृष्टावनुदयः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती । उदयः चतुर्नवतिः । सासादनेऽनुदयः एकां संयोज्य तिस्रः । उदयस्त्रिनवतिः । मिश्रेऽनुदयः पंच संयोज्य मिश्रोदयात् सप्त । उदयः एकान्ननवतिः । असंयतेऽनुदयः एकां संयोज्य सम्यक्त्वोदयात्सप्त । उदयः एकान्ननवतिः । देशसंयतेऽनुदयः सप्त संयोज्य चतुर्दश, उदयो द्व्यशीतिः ।

लब्ध्यपर्याप्तपंचेंद्रियतिरश्चि उदययोग्या योनिमत्तिर्यगुक्तषण्णवत्यां स्त्रीवेदः स्त्यानगृद्धित्रयं परघातः उच्छ्वासः पर्याप्तं उद्योतः ॥ २९६ ॥

स०चं०—बहुरि योनिमतातिर्यंच जो तिर्यंचणी ताके उदययोग्य प्रकृति पंचेंद्री पर्याप्तके सत्याणवैं कहीं तामैं पुरुष वेद नपुंसक वेद घटाएं स्त्रीवेद मिलाएं छिनवे हो हैं । तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषै एक मिथ्यात्व सासादनविषै व्युच्छित्ति अनंतानुबंधी च्यारि अर तिर्यंचानुपूर्वी ए पांच जातैं अविरत सम्यग्दृष्टी मरि तिर्यंचणी न उपजैं । बहुरि मिश्रविषैं व्युच्छित्ति एक मिश्रमोहनी असंयतविषैं आठमैस्यों तिर्यंचानुपूर्वी विना व्युच्छित्ति सात देश संयतविषैं गुणस्थानवत् व्युच्छित्ति आठ ऐसे होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी अनुदय दोय उदय चौराणवै एक व्युच्छित्ति भई तातैं सासादनविषैं अनुदय तीन उदय तरेणवै व्युच्छित्ति पांचका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय सात उदय निवासी व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय सात उदय निवासी व्युच्छित्ति सात तातैं देशसंयतविषै अनुदय चौदह उदय वियासी बहुरि लब्धि अपर्याप्तक पचेंद्री तिर्यंच विषैं योनिमात्तिर्यंच विषैं उदय योग्य छिनवे प्रकृति कहीं

योनिमतीतिर्यग्रचना ।

मि	सा	मि	अ	दे
१	५	१	७	८
९४	९३	८९	८९	८२
२	३	७	७	१४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थीं तिनमैंस्यों इतनी प्रकृति घटाइए स्त्रीवेद १ स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन ३ परघात १ उच्छ्वास १ पर्याप्त १ उद्योत १ ॥ २९६ ॥

सरगदिदु जसादेज्जं आदीसंठाणसंहदीपणगं ।
सुभगं सम्मं मिस्सं हीणा तेऽपुण्णसंढजुदा ॥ २९७ ॥

स्वरगतिद्वि यश आदेयमादिसंस्थानसंहतिपंचकं ।
सुभगं सम्यक्त्वं मिश्रं हीनाः ता अपूर्णषंढयुताः ॥ २९७ ॥

जी० प्र०—सुस्वरदुःस्वरद्वयं प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगती यशस्कीर्तिः आदेयं आद्यपंचसंस्थानपंचसंहननानि सुभगं सम्यक्त्वमिश्रप्रकृती चेति सप्तविंशतिमपनीय अपर्याप्तषट्कवेदयोर्निक्षेपे एकसप्ततिः उदययोग्या भवंति । गुणस्थानमाद्यमेव ॥ २९७ ॥ मनुष्यगतावाह—

स० चं०—सुस्वर १ दुःस्वर १ प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति २ यशस्कीर्ति १ आदेय १ आदिका पंच संस्थान ५ आदिका पंच संहनन, सुभग १ सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनी २ ए सत्ताईस घटाइए अर अपर्याप्त नपुंसक वेद मिलाएं ऐसैं पंचेंद्री लब्धि अपर्याप्तककैं उदय योग्य प्रकृति इकहत्तरि हैं। गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है। २९७।
आगैं मनुष्यगतिविषैं कहैं हैं—

मणुवे ओघो थावरतिरियादावदुगएयवियलिंदी ।
साहरणिदराउतियं वेगुव्वियछक्क परिहीणो ॥२९८॥

मानवे ओघः स्थावरतिर्यगातपद्विकैकविकलेंद्रियं ।
साधारणेतरायुस्त्रयं वैगूर्विकषट्कं परिहीनः ॥ २९८ ॥

जी० प्र०—मनुष्याश्चतुर्विधाः तत्र सामान्यमनुष्ये उदययोग्याः सामान्योदयप्रकृतिषु १२२ स्थावरद्वयं तिर्यग्गतिद्वयं आतपद्वयं एकेंद्रियादिजातिचतुष्कं साधारणशरीरं नरकतिर्यग्देवायूंषि वैक्रियिकषट्कं चेति विंशतिमपनीय शेषद्व्युत्तरशतं ॥ १०२ ॥ २९८ ॥ तत्र—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मनुष्य च्यारि प्रकार तिनविषैं सामान्य मनुष्यविषैं उदय योग्य प्रकृति गुणस्थान विषैं उदय योग्य प्रकृति एक सौ बाईसमैंस्यों स्थावर सूक्ष्म २ तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी २ आतप उद्योत २ एकेंद्रियादिक च्यारि ४ साधारण १ नरक तिर्यंच देव आयु ३ वैक्रियक शरीर वा अंगोपांग देव नरक गति वा आनुपूर्वी ए छह ऐसें वीस प्रकृती घटाए एकसो दोय प्रकृति जाननी । २९८ ।

मिच्छमपुण्णं छेदो अणमिस्सं मिच्छगादितिसु अयदे ।
बिदियकसायणराणू दुब्भगऽणादेज्जअज्जसयं ॥२९९॥

मिथ्यात्वमपूर्णं छेदः अनमिश्रं मिथ्यकादित्रिषु अयते ।
द्वितीयकषायनरानुः दुर्भगानादेयायशस्कं ॥ २९९ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वमपर्याप्तं चेति द्वयं व्युच्छित्तिः। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं मिश्रे मिश्रप्रकृतिः । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं मनुष्यानुपूर्व्यं दुर्भगमनादेयमयशस्कीर्तिश्चेत्यष्टौ ॥ २९९ ॥

स० चं०—तहां व्युच्छित्ती मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व अपर्याप्त ए दोय सासादन विषैं अनंतानुबधी च्यारि मिश्रविषै मिश्रमोहनी असंयतविषै अप्रत्याख्यान १ कषाय च्यारि ४ मनुष्यानुपूर्वी १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ ए आठ । २९९ ।

देसे तदियकसाया णीचं एमेव मणुससामण्णे ।
पज्जत्तेवि य इत्थीवेदापज्जत्तिपरिहीणो ॥३००॥

देशे तृतीयकषाया नीचमेवमेव मनुष्यसामान्ये ।
पर्याप्तेऽपि च स्त्रीवेदापर्याप्तिपरिहीना ॥ ३०० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—देशसंयते तृतीयकषायचतुष्कं नीचैर्गोत्रं चेति पंच। उपरि प्रमत्तादिषु 'पंच य चउरछक्कछच्चेव इगिदुगसोलसतीसंवारसेति' प्रागुक्त एव छेदो ज्ञातव्यः। तत्र मिथ्यादृष्टौ अनुदयः मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्वयतीर्थकरत्वानि ५, उदयः सप्तनवतिः। सासादने द्वे मिलित्वा अनुदयः सप्त। उदयः पंचनवतिः। मिश्रे अनुदयः चतुष्कं मनुष्यानुपूर्व्यं च मिलित्वा मिश्रोदयादेकादश। उदयः एकनवतिः। असंयते अनुदयः एकं मिलित्वा सम्यक्त्वप्रकृतिमनुष्यानुपूर्व्योदयाद् दश। उदयः द्वानवतिः। देशसंयते अष्टौ संयोज्य अनुदयः-अष्टादश उदयश्चतुरशीतिः। प्रमत्ते अनुदयः पंच संयोज्य आहारकद्वयोदयादेकविंशतिः। उदयः एक॰ाशीतिः। अप्रमत्तेऽनुदयः पंच संयोज्य षड्विंशतिः। उदयः षट्सप्ततिः। अपूर्वकरणे चतस्रो मिलित्वा अनुदयस्त्रिंशत्। उदयोः द्वासप्ततिः। अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्य अनुदयः षट्त्रिंशत्। उदयः षष्टिः। सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्य अनुदयः द्वाचत्वारिंशत्। उदयः षष्टिः। उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदयः त्रिचत्वारिंशत्। उदयः एकान्नषष्टिः। क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदयः पंचचत्वारिंशत् उदयः सप्तपंचाशत्। सयोगेनुदयः षोडश संयोज्य तीर्थकरत्वोदयात् षष्टिः। उदयः द्वाचत्वारिंशत्। अयोगे त्रिंशतं संयोज्य अनुदयः नवतिः। उदयो द्वादश। तथा पर्याप्तमनुष्येऽपि च स्त्रीवेदापर्याप्तोनसामान्यमनुष्योक्तप्रकृतयः उदययोग्या भवंति। १००। तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः मिथ्यात्वं, सासादने चतस्रः, मिश्रे एका, असंयते अष्टौ, देशसंयते पंच, प्रमत्ते पंच, अप्रमत्ते चतस्रः, अपूर्वकरणे षट्, अनिवृत्तिकरणे पंचैव स्त्रीवेदस्यापनयनात्। उपरि सर्वत्रापि सामान्यमनुष्यवत् छेदो ज्ञातव्यः। एवं सति मिथ्यादृष्टौ अनुदयः मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्विकतीर्थकरत्वानि ५। उदयः पंचनवतिः। सासादने एकां संयोज्य अनुदयः षट्। उदयः चतुर्नवतिः। मिश्रे अनुदयः चतुष्कं मनुष्यानुपूर्व्यं च मिलित्वा मिश्रप्रकृत्युदयाद्दश। उदयो नवतिः। असंयते अनुदयः एकां निक्षिप्य सम्यक्त्वप्रकृतिमनुष्यानुपूर्व्योदयान्नव। उदय एकनवतिः। देशसंयते अष्टौ संयोज्य अनुदयः सप्तदश। उदयस्त्र्यशीतिः। प्रमत्ते अनुदयः पंच संयोज्य आहारकद्वयोदयाद्विंशतिः। उदयः अशीतिः। अप्रमत्ते पंच संयोज्य अनुदयः पंचविंशतिः। उदयः पंचसप्ततिः। अपूर्वकरणे चतस्रः संयोज्य अनुदयः एकान्नत्रिंशत्। उदयः एकसप्ततिः। अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्य अनुदयः पंचत्रिंशत। उदयः पंचषष्टिः। सूक्ष्मसांपराये पंच संयोज्य अनुदयः चत्वारिंशत्। उदयः षष्टिः। उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदयः एकचत्वारिंशत्। उदयः एकान्नषष्टिः। क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदयः त्रिचत्वारिंशत्। उदयः सप्तपंचाशत्। सयोगे अनुदयः षोडश संयोज्य तीर्थोदयादष्टापंचाशत्। उदयः द्वाचत्वारिंशत्। अयोगे त्रिंशतं संयोज्य अनुदयः—अ ष्ट।शीतिः, उदयो द्वादश ॥ ३०० ॥

उदारणात्रिभंगीरचनयं	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
	१	४	१	८	५	५	४	६	५	१	२	१६	३०	१२
	९५	९४	९०	९१	८३	८०	७५	७१	६५	६०	५९	५७	४२	१२
	५	६	१	९	१७	२०	२५	२९	३५	४०	४१	४३	५८	८८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—देश संयतविषैं तीसरा प्रत्याख्यान कषाय च्यारि अर नीच गोत्र ए पांच ऊपरि प्रमत्तादिकविषैं गुणास्थानोक्त पांच च्यारि छह छह एक दोय सोला तीस वारा व्युच्छित्ति जाननी तहां मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी आहारक द्विक तीर्थंकर ए पांच, उदय सत्याणावै वहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं सासादनविषैं अनुदय सात उदय पच्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वीका उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीका उदय तातै मिश्रविषैं अनुदय ग्यारह उदय इक्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्वमोहनी अर मनुष्यानुपूर्वीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय दश उदय वाणवै बहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं देशसंयतविषैं अनुदय अठारह उदय चौरासी वहुरि व्युच्छित्ति पांचका उदय नाहीं आहारकद्विकका उदय तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय इकईस उदय इक्यासी वहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय छब्बीस उदय छिहंतरि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्व करणविषैं अनुदय तीस उदय बहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणविषैं अनुदय छत्तीस उदय छ्यासठि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं सूक्ष्मसांपरायविषैं अनुदय वियालीस उदय साठि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांत कषायविषैं अनुदय तियालीस उदय गुणसठि बहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीणकषायविषैं अनुदय पैंतालीस उदय सत्तावन बहुरि व्युच्छित्ति सोलहका उदय नाहीं अर तीर्थंकरत्वका उदय तातैं सयोगीविषै अनुदय साठि उदय वियालीस बहुरि व्युच्छित्ति तीस तातैं अयोगीविषैं अनुदय निवै उदय वारह बहुरि तैसैंही पर्याप्त मनुष्यविषै सामान्य मनुष्यविषैं कहीं प्रकृति तिनमैंस्यों स्त्रीवेद अर अपर्याप्त घटाएं उदय योग्य प्रकृति सौ १०० तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं एक असंयतविषैं आठ देशसंयतविषै पांच प्रमत्तविषैं पांच अप्रमत्तविषैं च्यारि अपूर्वकरणविषैं छह अनिवृत्ति करणविषैं स्त्रीवेद विना पांच ही ऊपरि सामान्य मनुष्यवत व्युच्छित्ति जाननी। ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय पांच पूर्वोक्त उदय पिच्याणवै वहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय छह उदय चौराणवै बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वीका उदय नाहीं अर मिश्र मोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुदय दश उदय निवैं बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व प्रकृति मनुष्यानुपूर्वीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय नव उदय इक्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं देशसंयतविषैं अनुदय सतरह उदय तियासी बहुरि व्युच्छित्ति पांचका उदय नाहीं आहारद्विकका उदय तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय वीस उदय असी बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय पचीस उदय पिचहत्तरि, बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्व अरणविषैं अनुदय गुणतीस उदय इकहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणविषैं अनुदय पैंतीस उदय पैंसठि बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं सूक्ष्म सांपरायविषैं अनुदय चालीस उदय साठि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांत कषाय विषै अनुदय इकतालीस उदय गुणसठि बहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीणकषायविषैं अनुदय तियालीस उदय सत्तावन बहुरि व्युच्छित्ति सोलाका उदय नाहीं तीर्थंकरत्वका उदय तातैं सयोगीविषैं अनुदय अठावन उदय वियालीस बहुरि व्युच्छित्ति तीस तातैं अयोगीविषैं अनुदय अठ्यासी उदय वारा है ॥ ३०० ॥

मणुसिणिएत्थीसहिदा तित्थयराहारपुरिससंढूणा ।
पुण्णिदरेव अपुण्णे सगाणुगदिआउगं णेयं ॥३०१ ॥

मनुष्यिण्यां स्त्रीसहिताः तीर्थंकराहारपुरुषषंढोनाः ।
पूर्णेतर इवापूर्णे स्वकानुगत्यायुष्कं ज्ञेयं ॥ ३०१ ॥

जी० प्र०—मानुष्युदययोग्यप्रकृतयः षरणवतिः पर्याप्तमनुष्योक्तशते स्त्रीवेदं निक्षिप्य तीर्थंकरत्वाहारकद्वयपुंषंढवेदानामपनयनात् । तत्र मिथ्यादृष्टौ उदयव्युच्छेदो मिथ्यात्वं । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं मनुष्यानुपूर्व्यं च असंयतेऽनुदयात् । मिश्रे मिश्रप्रकृतिः । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कदुर्भगानादेयायशस्कीर्तयः । देशसंयते तृतीयकषायचतुष्कं नीचैर्गोत्रं च । प्रमत्ते स्त्यानगृद्धित्रयमेव । अप्रमत्तापूर्वकरणयोः गुणस्थानवत् चतुःषट् अनिवृत्तिकरणभागभागेषु क्रमेण स्त्रीवेदसंज्वलनक्रोधमानमायाः । सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मलोभः । उपशांतकषाये वज्रनाराचं नाराचं । क्षीणकषाये षोडश । सयोगे त्रिंशत् । अयोगे तीर्थकृत्वाभावात् एकादश । एवं संति मिथ्यादृष्टौ अनुदयः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती । उदयः चतुर्नवतिः । सासादने एकं संयोज्यानुदयः त्रीणि । उदयः त्रिनवतिः । मिश्रे अनुदयः पंच संयोज्य मिश्रप्रकृत्युदयात्सप्त । उदयः एकान्ननवतिः । असंयते अनुदयः एकां संयोज्य स-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

म्यक्त्वप्रकृत्युदयात्सप्त। उदयः एकान्ननवति। देशसंयते सप्तसंयोज्य अनुदयः चतुर्दश. उदयः द्व्यशीतिः। प्रमत्ते पंच संयोज्य अनुदयः एकान्नविंशतिः। उदयः सप्तसप्ततिः। अप्रमत्ते त्रीणि संयोज्य अनुदयः द्वाविंशतिः। उदयः चतुःसप्तति। अपूर्वकरणे चत्वारि संयोज्य अनुदयः षड्विंशतिः। उदयः सप्ततिः। अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्य अनुदयः द्वात्रिंशत्। उदयः चतुःषष्टिः। सूक्ष्मसांपराये चत्वारि संयोज्य अनुदयः षट्त्रिंशत्। उदय षष्टिः। उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदयः सप्तत्रिंशत्। उदयः एकान्नषष्टिः। क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदयः एकान्नचत्वारिंशत्। उदयः सप्तपंचाशत्। सयोगे षोडश संयोज्य अनुदयः पंचपंचाशत्। उदयः एकचत्वारिंशत्। अयोगे त्रिंशतं संयोज्य अनुदयः पंचाशीतिः। उदयः एकादश तीर्थाभावात्।

मनुष्यलब्ध्यपर्याप्ते उदयप्रकृतयः तिर्यग्लब्ध्यपर्याप्तवेदकसप्ततिः। तत्र तिरश्चः अनुपूर्व्यगत्यायूंषि नहि। मनुष्यस्य तानि ज्ञातव्यानि ॥३०१॥
अथ भोगभूमिमनुष्यतिरश्चोर्गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—बहुरि मनुष्यणीविषैं उदय योग्य प्रकृति छिनवै हैं पर्याप्त मनुष्यविषैं सौ कहीं तिनमें स्त्रीवेद मिलावना अर तीर्थंकर आहारकद्विक पुरुष वेद नपुंसकवेद घटावनां। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं एक मिथ्यात्व सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वी ए पांच, मिश्रविषैं मिश्रमोहनी एक, असंयतविषैं दूसरा कषाय च्यारि ४ दुर्भग अनादेय अयशस्कीर्ति ए सात, देशसंयतविषैं तीसरा कषाय च्यारि नीच गोत्र ए पांच, प्रमत्तविषैं स्त्यानगृद्धित्रिक ३, अप्रमत्त अपूर्वकरणविषैं गुणस्थानवत् च्यारि अर छह, अनिवृत्ति करणके भागनिविषैं अनुक्रमतैं स्त्रीवेद संज्वलन क्रोध मान माया ए च्यारि सूक्ष्म सांपरायविषैं सूक्ष्म लोभ उपशांत मोहविषैं वज्रनाराच नाराच ए दोय, क्षीणकषायविषैं सोला, सयोगीविषैं तीस, अयोगीविषैं तीर्थंकर नाहीं तातैं ग्यारह ऐसे होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी दोय उदय चौराणवै बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अ-

योनिमनुष्यरचना।

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
१	५	१	७	५	३	४	६	४	१	२	१६	३०	११
९४	९३	८९	८९	८२	७७	७४	७०	६४	६०	५९	५९	४१	११
२	३	७	७	१४	१९	२२	२६	३२	३६	३७	३९	५५	८५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नुदय तीन उदय तरेणवै बहुरि व्युच्छित्ति पांचका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय सात उदय निवासी बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाही सम्यक्त्व मोहनीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय सात उदय निवासी बहुरि व्युच्छित्ति सात तातैं देश संयतविषै अनुदय चौदह उदय वियासी बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय उगणीस उदय सतहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति तीन तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय वाईस उदय चहौत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्वकरणविषैं अनुदय छव्वीस उदय सत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करण विषैं अनुदय वत्तीस उदय चौंसठि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं सूक्ष्म सांपरायविषैं अनुदय छत्तीस उदय साठि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांत कषायविषैं अनुदय सैतींस उदय गुणसठि बहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीणकषायविषैं अनुदय गुणतालीस उदय सत्तावन बहुरि व्युच्छित्ति सोलह तातैं सयोगीविषैं अनुदय पचावन उदय इकतालीस बहुरि व्युच्छित्ति तीस तातैं अयोगीविषैं अनुदय पिच्यासी उदय ग्यारह बहुरि मनुष्य लब्धि अपर्याप्तकविषैं उदय प्रकृति इकहत्तरि तिर्यंच लब्धि अपर्याप्तक विषै इकहत्तरि कहीं तिन विषैं तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी वा आयु घटावनी । मनुष्यगति वा आनुपूर्वी वा आयु मिलावनी । गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है। ३०१। आगैं भोगभूमि मनुष्य वा तिर्यंच विषैं दोय गाथानिकरि कहैं हैं।

मणुसोघं वा भोगे दुब्भगचउणीचसंढथीणतियं।
दुग्गादितित्थमपुण्णं संहदिसंठाणचरिमपणं ॥३०२॥
हारदुहीणा एवं तिरये मणुदुच्चगोदमणुवाउं।
अवणिय पक्खिव णीचं तिरियदुतिरियाउउज्जोवं ॥६०३॥ जुम्मं ४२९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनुष्योघ इव भोगे दुर्भगचतुर्नीचषंढस्त्यानत्रयं।
दुर्गतितीर्थमपूर्णं संहतिसंस्थानचरमपंच ॥ ३०२ ॥
आहारद्धिहीना एवं तिरश्चि मनुद्विउच्चगोत्रमानवायुः।
अपनीय प्राक्षिप्य नीचं तिर्यग्द्वितिर्यगायुरुद्योतं ॥ ३०३ ॥

भोगभूमिमनुष्याणां मनुष्यौघवदिति द्व्युत्तरशतं। तत्रापि दुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्तिनीचैर्गोत्रषंढवेदस्त्यानगृद्धित्रयाप्रशस्तविहायोगतितीर्थकरत्वापर्याप्तचरमपंचसंहननपंचसंस्थानाहारकद्वयं न इत्युदययोग्यप्रकृतयः अष्टसप्ततिः। तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं छेदः। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं। मिश्रे मिश्रप्रकृतिः। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं मनुष्यायुश्च ५। तथासति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती अनुदयः। उदये षट्सप्ततिः। सासादने एकां संयोज्य अनुदये त्रीणि। उदये पंचसप्ततिः। मिश्रे अनुदये चतुर्भिर्मनुष्यानुपूर्व्यं सयोज्य मिश्रोदयात्सप्त। उदये एकसप्ततिः। असंयते अनुदयः एकां संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृतिमनुष्यानुपूर्व्योदयात् षट्। उदये द्वासप्ततिः।

एवं तिरश्चि मनुष्यद्वयोच्चैर्गोत्रमनुष्यायूंष्यपनीय नीचैर्गोत्रतिर्यग्द्वयतिर्यगायुरुद्योतेषु निक्षिप्ते भोगभूमितिर्यक्षु उदययोग्या एकोनाशीतिः। तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं। मिश्रे मिश्रप्रकृतिः। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं तिर्यगायुश्च ५। एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वे अनुदयः। उदये सप्तसप्ततिः। सासादने एकां संयोज्य अनुदये त्रयं। उदये षट्सप्ततिः। मिश्रे अनुदयः चतुर्भिस्तिर्यगानुपूर्व्यं संयोज्य मिश्रोदयात्सप्त। उदयः द्वासप्तति। असंयते अनुदयः एकां संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृतितिर्यगानुपूर्व्योदयात् षट्। उदयः त्रिसप्ततिः ॥ ३०२ ॥३०३॥ अथ देवगतावाह——

१ भोगभूमिमनुष्यरचना।

मि	सा	मि	अ
१	४	१	५
७६	७५	७१	७२
२	३	७	६

२ भोगभूमितिर्यग्रचना।

मि	सा	मि	अ
१	४	१	५
७७	७६	७२	७३
२	३	७	६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—भोगभूमियां मनुष्य विषैं सामान्य मनुष्यवत् एकसौ दोय तामैंस्यौं दुर्भग दुःस्वर अनादेय अयशस्कीर्ति ए च्यारि ४ नीच गोत्र १ नपुंसक वेद १ स्त्यान गृद्ध्यादिक तीन ३ अप्रशस्त विहायोगति १ तीर्थंकरत्व, अपर्याप्त १ अंतके पांच संहनन ५ अंतके पंच संस्थान ५ आहारक द्विक २ इन चौवीस विना उदय योग्य अठहत्तरि। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व १ सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि, मिश्रविषैं मिश्र मोहनी असंयतविषैं दूसरा कषाय च्यारि मनुष्यानुपूर्वी ए पांच ऐसैं होतें मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्र मोहनी सम्यक्त्व मोहनी ए अनुदय दोय उदय छिहंतरि वहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय तीन उदय पिचहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर मनुष्यानुपूर्वीका उदय नाहीं अर मिश्र मोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय सात उदय इकहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी मनुष्यानुपूर्वीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय छह उदय वहत्तरि है ऐसैं ही भोगभूमियां तिर्यंच विषैं भोगभूमियां मनुष्यवत् अठहत्तरि तिनमैंस्यौं मनुष्य गति वा आनुपूर्वी २ उच्चगोत्र १ मनुष्यायु १ ए च्यारि दूर करनी अर नीचगोत्र १ तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी २ तिर्यंचायु १ उद्योत १ ए पांच मिलावनी ऐसैं उदय योग्य प्रकृति गुणयासी । तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व १ सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं मिश्रमोहनी, असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि ४ तिर्यंचानुपूर्वी १ ए पांच व्युच्छित्ति ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्वमोहनी अनुदय दोय उदय सतहत्तरि वहुरि एक व्युच्छित्ति तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन उदय छिहंतरि वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तिर्यंचानुपूर्वीका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातें मिश्रविषैं अनुदय सात उदय वहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी अर तिर्यंचानुपूर्वीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय छह उदय तिहत्तरि है ॥३०२। ३०३॥ आगैं देवगति विषैं कहै हैं—

भोगं व सुरे णरचउणराउवज्जूण सुरचउसुराउं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खिव देवे णेवित्थी इत्थिम्मि ण पुरिसवेदो य ॥३०४॥

भोग इव सुरे नरचतुर्नरायुर्वज्रोनित्वा सुरचतुःसुरायुः।
क्षिप्त्वा देवे नैव स्त्री स्त्रियां न पुरुषवेदश्च ॥ ३०४ ॥

सुरेषु भोगभूमिवदिति अष्टसप्ततिः । तत्र मनुष्यगतिद्वयौदारिकद्वयनरायुर्वज्रवृषनाराचसहनान्यपनीय देवगतिद्वयवैक्रियिकद्वयसुरायुस्सु निक्षिप्तषु सामान्यदेवोदययोग्याः सप्तसप्ततिः । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं । मिश्रे मिश्रं । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कसुरचतुष्कसुरायूंषि । एवं सति मिथ्यादृष्टौ अनुदये मिश्रसम्यक्त्वप्रकृती । उदये पंचसप्ततिः । सासादने एकां संयोज्य अनुदयस्तिस्रः । उदये चतुःसप्ततिः । मिश्रे अनुदयः चतुर्भिर्देवानुपूर्व्यं संयोज्य मिश्रोदयात् सप्त । उदये सप्ततिः—असंयते अनुदय एकां संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृति देवानुपुर्व्योदयात् षट् । उदये एकसप्ततिः ।

स० चं०—देवनिविषैं भोगभूमि मनुष्यवत् अठहत्तरि तहां मनुष्य गति वा आनुपूर्वी २ औदारिक शरीर वा अंगोपांग मनुष्यायु एक वज्रवृषभनाराच संहनन एक ए छह घटावनी अर देवगति वा आनुपूर्वी २ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग २ देवायु १ ए पंच मिलावनी ऐसैं सामान्य देवविषैं उदय योग्य सतहत्तरि तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व १ सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं मिश्रमोहनी एक १ असंयतविषैं दूसरा कषाय च्यारि देवगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग ४ देवायु एवं नव ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहिनी ए अनुदय दोय उदय पिचहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय तीन उदय चहोत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि देवानुपूर्वी इनका उदय नाहीं । मिश्र मोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय सात उदय सत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी देवानुपूर्वीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय छह उदय इकहत्तरि बहुरि देवनिविषैं पुरुष वेदहीका उदय है अर देवांगनाविषैं स्त्रीवेदहीका उदय है तातैं सौधर्मादिक उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत देवनिविषैं उदय योग्य प्रकृति स्त्रीवेद विना छिहंतरि हैं अन्य सर्व सामान्य देववत्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवेषु पुंवेदस्यैवोदयः । देवीषु स्त्रीवेदस्यैवेति नियमात् स्त्रीवेदेऽपनीते सौधर्माद्युपरिमग्रैवेयकावसानेषूदययोग्यप्रकृतयः षट्सप्ततिः । अन्यत्सर्वं सामान्यसुरवत् ज्ञातव्यं । संदृष्टिः—

सौधर्माद्युपरिमग्रैवे—यो ७६				
व्यु	१	४	१	९
उ	७४	७३	६९	७०
अ	२मि	३सा	७मि	६अ

२०४ । अनुदिशादिष्वाह—

रचना है । तहां मिथ्यादृष्ट्यादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं व्युच्छित्ति एक च्यारि एक नव, उदय चहोत्तरि तेहत्तरि गुणहत्तरि सत्तरि, अनुदय दोय तीन सात छह अनुक्रमतैं जाननी ॥ ३०४ ॥ आगैं अनुदिशादिकविषैं कहैं हैं—

अविरदठाणं एक्कं अणुद्दिसादिसु सुरोघमेव हवे ।
भवणतिकप्पित्थीणं असंजदे णत्थि देवाणू ॥ ३०५ ॥

अविरतस्थानमेकमनुदिशादिषु सुरौघमेव भवेत् ।
भवनत्रिकल्पस्त्रीणामसंयते नास्ति देवानुः ॥ ३०५ ॥

जी० प्र०—अनुदिशानुत्तरचतुर्दशविमानेषु असंयतगुणस्थानमेव स्यात् । तेन उदययोग्याः सप्ततिरेव । भवनत्रयदेवदेवीनां कल्पस्त्रीणां च सुरौघ एव इत्युदययोग्याः सप्तसप्ततिः ॥ ७७ ॥ केवलदेवेषु देवीषु वा षट्सप्ततिः ॥ ७६ ॥ भवनत्रये कल्पस्त्रीषु च सम्यग्दृष्ट्यनुत्पत्तेरसंयतगुण-

---

१ अनुदिशानुत्तररचना

अ
०
७०
०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थाने देवानुपूर्व्यं नास्तीति सासादने व्युच्छित्तिः पंच ५। असंयते अष्टौ ८। शेषं सुगमं।

भवनत्रयकल्पस्त्रीयोग्य ७६

व्यु	१	५	१	८
उ	७४	७३	६९	६९
अ	२	३	७	७
	मि	सा	मि	अ

३०५। अथेंद्रियमार्गणायां गाथात्रयेणाह—

स० चं०—नव अनुदिश पंच अनुत्तर इन चौदह विमाननिविषैं एक असंयत गुणस्थान ही है तातैं जे देवनिविषैं असंयत गुणस्थानविषैं उदय रूप कहीं थी तेई सत्तरि प्रकृति तहां उदय योग्य जाननी बहुरि भवनत्रिक अर कल्पवासिनी देवांगना इनकैं सामान्य देववत् उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि तिनविषैं केवल देवनिविषैं स्त्री वेद विना अर केवल देवांगना विषैं पुरुष वेद विना छिहंत्तरि प्रकृति उदय योग्य जाननी सो भवनत्रिक अर कल्पवासिनी देवांगना इनविषैं सम्यग्दृष्टी उपजैं नाहीं तातैं देवानुपूर्वी चौथे गुणस्थान उदय नाहीं असैं सासादनविषैं व्युच्छित्ति पांच अर असंयतविषैं व्युच्छित्ति आठ कहनी और सब सुगम है। मिथ्यादृष्ट्यादिकविषैं व्युच्छित्ति एक पांच एक आठ, उदय चहोत्तरि तेहत्तरि गुणहत्तरि गुणहत्तरि अनुदय दोय तीन सात सात जाननी ॥३०५॥

आगैं इंद्रिय मार्गणाविषैं तीन गाथानिकरि कहैं हैं—

तिरियअपुण्णं वेगे परघादचउक्कपुण्णसाहरणं।
एइंदियजसथीणतिथावरजुगलं च मिलिदव्वं ॥३०६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रिणमंगोवंगतसं संहदिपंचक्खमेवमिह वियले ।
अवणिय थावरजुगलं साहरणेयक्खमादावं ॥३०७॥
खिव तसदुग्गदिदुस्सरमंगोवंगं सजादिसेवट्टं ।
ओघं सयले साहरणिगिविगलादावथावरदुगूणं॥३०८॥विसेसयं॥

तिर्यगापूर्णमिवैके परघातचतुष्कपूर्णसाधारणं ।
एकेंद्रिययशःस्त्यानत्रिस्थावरयुगलं मेलितव्यं ॥ ३०६ ॥
ऋणमंगोपांगत्रसं संहतिपंचाक्षमेवमिह विकले ।
अपनीय स्थावरयुगलं साधारणैकाक्षमातापं ॥ ३०७ ॥
क्षिप्त्वा त्रसदुर्गतिदुःस्वरमंगोपांगं स्वजातिसृपाटिकं ।
ओघः सकले साधारणैकविकलातापस्थावरद्विकोनं ॥ ३०८ ॥ विशेषकं

जी० प्र०—एकेंद्रियमार्गणायां उदययोग्याः तिर्यगपर्याप्तपंचेंद्रियवदित्येकसप्ततिः । तत्र परघातातपोद्योतोच्छ्वासपर्याप्तसाधारणैकेंद्रिया यशस्कीर्तिस्त्यानगृद्धित्रयस्थावरसूक्ष्माणि मेलयित्वा अंगोपांगत्रससृपाटिकासंहननपंचेंद्रियेष्वपनीतेष्वशीतिः स्युः । तत्र मिच्छादावं सुहुमतियमिति पंच पुनः स्त्यानगृद्धित्रयपरघातोद्योतोच्छ्वासाः सासादनानुदयात् षट् च मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः ११ सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कैकेंद्रियस्थावराणि षट् तथासति मिथ्यादृष्टौ अनुदयः शून्यं । उदयः अशीतिः । ८० । सासादने अनुदये एकादश ११ । उदये एकोनसप्ततिः ६९ । एवमिह वियले—विकलत्रये अशीतिं संस्थाप्य तत्र स्थावरसूक्ष्मसाधारणैकेंद्रियातपानपनीय त्रसाप्रशस्तविहायोगतिदुःस्वरांगोपांगस्वजातिसृपाटिकासंहननेषु प्रक्षिप्तेषु एकाशीतिरुदययोग्या भवंति । तत्र मिथ्यात्वापर्याप्तस्त्यानगृद्धित्रयं पुनः परघातोच्छ्वासोद्योताप्रशस्तविहायोगतिदुःस्वराः सासादने अनुदयात् मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः । १० । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं स्वैकतरजातिश्चेति पंच । एवं सति मिथ्यादृष्टा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वनुदये शून्यं । उदये एकाशीतिः १ । सासादने अनुदये १० । उदये एकसप्ततिः ७१ ।

सकलेंद्रियेषु ओघः द्वाविंशत्युत्तरशतं । १२२ । तत्र साधरणैकेंद्रियविकलत्रयातपस्थावरसूक्ष्मेष्वपनीतेषु उदययोग्यं चतुर्दशोत्तरशतं ११४ । गुणस्थानानि चतुर्दश । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वापर्याप्तद्वयं छेदः २ । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं । मिश्रे मिश्रप्रकृतिः १ । असंयते द्वितीय-कषायचतुष्कादिसप्तदश । १७ । देशसंयतेऽष्टौ । प्रमत्तादिषु गुणस्थानवत् पंच ५ चत्वारि ४ षट् ६ षट् ६ एकं १ द्वे २ षोडश १६ त्रिंशत् ३० द्वादश १२ तथासति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्वयतीर्थकरत्वाऽनुदयः । उदये नवोत्तरशतं १०९ । सासादनेऽनुदयः द्वयं नारकानुपूर्व्यं च मिलित्वा अष्टौ ८ । उदयः षडुत्तरशतं । १०६ । मिश्रेऽनुदयः चत्वारि ४ शेषानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रप्रकृत्युदय चतुर्दश १४ । उदये शतं । असंयते अनुदयः एकां संयोज्य चतुरानुपूर्व्यसम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्दश १० । उदयः चतुरुत्तरशतं । देशसंयते सप्तदश संयोज्यानुदः सप्तविंशतिः २७ । उदयः सप्ताशीतिः ८७ । प्रमत्ते अनुदयः अष्ट संयोज्य आहारकद्वयोदयात्त्रयस्त्रिंशत् ३३ । उदय एकाशीतिः । ८१ । अप्रमत्ते पंच संयोज्य अनुदयोऽष्टात्रिंशत् ३८ । उदयः षट्सप्ततिः ७६ । अपूर्वकरणे चत्वारि संयोज्य अनुदयः द्वाचत्वारिंशत् ४२ । उदयः द्वासप्ततिः ७२ । अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्य अनुदयः अष्टाचत्वारिंशत् ४८ । उदयः षट्षष्टिः ६६ । सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्य अनुदयः चतुःपंचाशत् ५४ । उदयः षष्टिः ६० । उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदये पंचपंचाशत् ५५ । उदये एकान्नषष्टिः ५९ । क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदये सप्तपंचाशत् ५७ । उदयेऽपि सप्तपंचाशत् ५७ । सयोगे अनुदयः षोडश संयोज्य तीर्थकरत्वोदयाद् द्वासप्ततिः ७२ । उदये द्वाचत्वारिंशत् ४२। अयोगे त्रिंशतं संयोज्य अनुदये द्व्युत्तरशतं १०२ । उदयो द्वादश । ३०६—३०८ अथ कायमार्गणायामाह—

स० चं०—एकेंद्रिय मार्गणाविषैं तिर्यंच लब्धि अपर्याप्तवत् इकहत्तरि तहां परघात १ आतप १ उद्योत १ उच्छ्वास १ पर्याप्त १ साधारण १ एकेंद्री १ यशस्कीर्ति १ स्त्यानगृद्धित्रिक ३ स्थावर १ सूक्ष्म १ ए तेरा मिलावनी अर औदारिक अंगोपांग १ त्रस १ सृपाटिका संहनन १ पंचेंद्री १ ए च्यारि घटावनी अैसैं उदय योग्य प्रकृति

१ विकलत्रयरचना

मि	सा
१०	५
८१	७१
०	१८

२ पचेंद्रियरचना ।

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
२	४	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	३०	१२
१०९	१०६	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१२
५	८	१४	१०	२७	३३	३८	४२	४८	५४	५५	५७	७२	१०२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असी तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व आतप सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण ए पांच अर स्त्यान गृद्धि तीन ३ परघात उद्योत उच्छ्वास इन छहोका एकेंद्रीकैं सासादनविषैं उदय नाहीं तातैं छह ए ऐसैं सर्व ग्यारह सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ एकेंद्रिय १ स्थावर १ ए छह व्युच्छित्ति ऐसैं मिथ्यादृष्टि विषैं अनुदय नास्ति उदय असी, बहुरि व्युच्छित्ति ग्यारह तातैं सासादनविषैं अनुदय ग्यारह उदय गुणहत्तरि है बहुरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री इन विकलत्रयविषैं एकेंद्रीवत् असी तिनमैंस्यों स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ एकेंद्री १ आतप १ ए पांच घटाइए त्रस १ अप्रशस्त विहायोगति १ दुःस्वर १ अंगोपांग १ अपनी अपनी जाति १ सृपाटिक संहनन १ ए छह मिलाइए ऐसैं उदय योग्य प्रकृति इक्यासी तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व १ अपर्याप्त १ स्त्यान गृद्धित्रिक ३ परघात १ उच्छ्वास १ उद्योत १ अप्रशस्त विहायोगति १ दुःस्वर १ एवं दश । सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ अपनी एक जाति १ ए पांच व्युच्छित्ति ऐसैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय नास्ति उदय इक्यासी बहुरि व्युच्छित्ति दश तातैं सासादनविषैं अनुदय दश उदय इकहत्तरि बहुरि पंचेंद्रिय विषैं गुणस्थानवत् एकसौ बाईस तहां साधारण १ एकेंद्रियादिक जाति च्यारि ४ आतप १ स्थावर १ सूक्ष्म १ ए आठ घटाएं उदययोग्य प्रकृति एकसौ चौदह अर गुणस्थान चौदह तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व १ अपर्याप्त ए दोय सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि मिश्रादिक विषैं गुणस्थानवत् एक सतरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय सोला तीस बारह व्युच्छित्ति जाननी । तहां मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय गुणस्थानवत् ५ उदय एकसौ नव बहुरि व्युच्छित्ति दोय अर नारकानु पूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादनविषैं अनुदय आठ उदय एकसौ छह मिश्रादिकविषैं गुणस्थानवत् अनुक्रमतैं उदय सौ एकसौ च्यारि सत्यासी इक्यासी छिहंतरि बहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालीस बारा प्रकृति जाननी । मूलमें आठ घाटि हैं तातैं मिश्रादिक विषै अनुक्रमतैं अनुदय चौदह दश सत्ताईस तेतीस अठतीस वियालीस अठतालीस चौवन पचावन सतावन बहत्तरि एकसौ दोय प्रकृति जाननी ॥ ३०६–३०८ ॥ आगैं कायमार्गणाविषैं कहै हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं वा पणकाये ण हि साहारणमिणं च आदावं।
दुसु तद्दुगमुज्जोवं कमेण चरिमम्हि आदावं॥३०९॥

एकं वा पंच काये नहि साधारणमिदं चा तापं।
द्वयोस्तद्द्विकमुद्योतः क्रमेण चरमे आतपः॥ ३०९॥

जी० प्र०—एकेंद्रियमार्गणावत् पंचकायमार्गणायामशीतिः ८०। तत्र साधारणेऽपनीते पृथ्वीकायिकोदययोग्या एकान्नाशीतिः। ७९। पुनस्तत्राशीत्यां साधारणातपद्वयेऽपनीतेऽप्कायिकोदययोग्या अष्टसप्ततिः ७८। पुनस्तत्राशीत्यां साधारणातपोद्योतत्रयेऽपनीते तेजोवातकायिकयोरुदययोग्याः सप्तसप्ततिः ७७। पुनः क्रमेण चरिमम्हि आतपेऽपनीते वनस्पतिकायिके उदययोग्याः एकान्नाशीतिः ७९। तथासति पृथ्वीकायिकोदययोग्या एकान्नाशीतिः ७९। गुणस्थानद्वयं। कुतः! णहि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे यतेउदुगे। इतिपारिशेष्यात् पृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिषु सासादनस्योत्पत्तेः। तत्रोत्पन्नसासादनस्य तद्गुणस्थाने उदययोग्यानि मिथ्यात्वातपसूक्ष्मापर्याप्तानि इंद्रियपर्याप्त्युपर्युदययोग्यस्त्यानगृद्धित्रयं उच्छ्वासपर्याप्त्युपर्युदययोग्योच्छ्वासाः शरीरपर्याप्त्युपर्युदययोग्यपरघातोद्योतौ एवं दश मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः १०। सासादने अनंतानुवंधिचतुष्कं एकेंद्रियस्थावरं चेति षट् ६। तथासति मिथ्यादृष्टावनुदयः शून्यं। उदयः एकान्नाशीतिः ७९ सासादने अनुदयो दश १०। उदयः एकान्नसप्ततिः ६९। अप्कायिकोदययोग्याष्टसप्तत्यां ७८ मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिः मिथ्यात्वं सूक्ष्ममपर्याप्तं स्त्यानगृद्धित्रयं परघातोद्योतोच्छ्वासाश्चेति नव। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कैकेंद्रियस्थावराणि षट्। तथासति मिथ्यादृष्टावनुदयः शून्यं। उदयोऽष्टसप्ततिः ७८। सासादने अनुदयः नव ९। उदयः एकान्नसप्ततिः ६९। तेजोवातकायिकोदययोग्याः सप्तसप्ततिः ७७। मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं। वनस्पतिकायिकोदय-

पृथ्वीकायरचना।

मि	सा
१०	६
७९	६९
०	१०

अप्कायरचना

मि	सा
९	६
७८	६९
०	९

तेजोवातकायरचना।

मि
०
७७
०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

योग्यैकान्नाशीत्यां मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणस्त्यानगृद्धित्रयपरघातोच्छ्वासोद्योताः व्युच्छित्तिः १० । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कैकेंद्रियस्थावराणि ६ तथासति मिथ्यादृष्टावनुदयः शून्यं । उदयः एकान्नाशीतिः ७९ । सासादनेऽनुदयः दश १० । उदयः एकान्नसप्ततिः । ६९ । ॥ ३०९ ॥ अथ त्रसकायमार्गणायामाह——

स० चं०—कायमार्गणाविषैं पांच कायविषैं एकेंद्रीवत् असी तहां साधारण घटाए पृथ्वी कायविषैं उदय योग्य गुण्यासी बहुरि तिन असीमैस्यों साधारण आतप ए दोय घटाए अप्कायिकविषैं उदय योग्य अठहत्तरि बहुरि तिन असीनिमैंस्यों साधारण आतप उद्योत ए तीन घटाएं तेजस्कायिक वातकायिकविषैं उदययोग्य सतहत्तरि बहुरि तीन असीनिमैंस्यों आतप घटाए बनस्पति कायिकविषैं उदय योग्य गुण्यासी तहां पृथ्वीकायिक विषैं उदय योग्य गुण्यासी गुणस्थान दोय जातैं 'णहि सासणो अपुण्णो साहारणसुहुमगेय तेउदुगे । इस बचनतैं पृथ्वी अप प्रत्येक बनस्पती विषैं ही सासादन मरि उपजै है तहां उत्पन्न भया सासादनकै तीहिं गुणस्थानविषैं उदय योग्य नाहीं असी मिथ्यात्व आतप उद्योत सूक्ष्म अपर्याप्त ए पांच प्रकृति अर तिनके सासादन तौ निर्वृत्ति अपर्याप्त दशाहीमैं होय अर स्त्यानगृद्धि तीन तौ इंद्रिय पर्याप्ति पूर्ण भए उदय योग्य होइ । उच्छ्वास, उच्छ्वास पर्याप्ति पूर्णभए उदय योग्य होइ परघात शरीरपर्याप्ति पूर्णभए उदय योग्य होइ तातैं इन पंचानिका उदय सासादनविषैं नाहीं तातैं मिथ्यादृष्टिविषै व्युच्छित्ति दश है सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ एकेंद्री १ स्थावर १ ए छह व्युच्छित्ति हैं असैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय नास्ति उदय गुण्यासी बहुरि व्युच्छित्ति दश तातैं सासादनविषैं अनुदय दश उदय गुणहत्तरि बहुरि अपकायविषैं उदय योग्य अठहत्तरि तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्त दशमैंस्यों आतप विना नव सासादनविषै पूर्वोक्त छह असैं होते मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय नास्ति उदय अठहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति नव तातै सासादनविषै अनुदय नव उदय गुणहत्तरि बहुरि तेजस्कायिक वातकायिकविषैं उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि बहुरि बनस्पति कायिकविषैं उदय योग्य प्रकृति गुण्यासी तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण स्त्यानगृद्धित्रिक परघात उस्वास उद्योत एवं दश सा-

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सादनविषैं पूर्वोक्त छह ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय नास्ति उदय गुण्यासी बहुरि व्युच्छित्ति दश तातैं सासादनविषैं अनुदय दश उदय गुणहत्तरि है ॥ ३०९ ॥ आगैं त्रसमार्गणाविषैं कहैं हैं—

ओघं तसे ण थावरदुगसाहरणेयतावमथ ओघं ।
मणवयणसत्तगे ण हि ताविगिविगलं च थावराणुचओ॥३१०॥

ओघस्त्रसे न स्थावरद्विकसाधारणैकातपमथ ओघः ।
मनोवचनसप्तके नहि आतपैकविकलं च स्थावरानुचतुष्कं ॥ ३१० ॥

जी० प्र—त्रसकायिकोदययोग्यं सप्तदशोत्तरशतं ११७ । कुतः ! स्थावरसूक्ष्मसाधारणैकेंद्रियातपानामेकेंद्रियेष्वेवोदयात् । गुणस्थानानि चतुर्दश १४ । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वापर्याप्तद्वयं व्युच्छित्तिः । सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं विकलत्रयं च । मिश्रे मिश्रं १ । असंयतादिषु गुणस्थानवत् सप्तदशाष्ट पंच चत्वारि षट् षडेकं द्वे षोडश त्रिंशत् द्वादश तथासति मिथ्यादृष्टावनुदयः मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्वयतीर्थकरत्वानि ५ । उदयः द्वादशोत्तरशतं ॥ ११२ सासादने अनुदयः द्वे नरकानुपूर्व्यं च मिलित्वा अष्टौ ८ । उदयः नवोत्तरशतं । मिश्रे अनुदयः सप्त शेषानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रप्रकृत्युदयात् सप्तदश १७ । उदयः शतं १०० । असंयते अनुदयः एकां संयोज्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयात् त्रयोदश १३ । उदयश्चतुरुत्तरशतं ॥ १०४ ॥ देशसंयते सप्तदश संयोज्य अनुदयः त्रिंशत् ॥ ३० ॥ उदयः सप्ताशीतिः ॥ ८७ ॥ प्रमत्तादिषु अनुदयोदयौ गुणस्थानवत् संदृष्टिः——

त्रसकाययोग्य ११७ ।

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
व्यु	२	७	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	३०	१२
उ	११२	१०९	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१२
अ	५	८	१७	१३	३०	३६	४१	४५	५१	५७	५८	६०	७५	१०५

अथ सत्यादिषु चतुर्षु मनोयोगेषु त्रिषु वाग्योगेषु च ओघः ११२, तत्र आतपैकेंद्रियविकलत्रयंस्थावरसूक्ष्मपर्याप्तसाधारणचतुरानुपूर्व्याणि उदययोग्यानि नेति नवोत्तरशतं ॥ १०९ ॥ तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं ४ । मिश्रे मिश्रं ४४०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१। असंयते भाषापर्याप्तेरुपरि योग्यसंभवात् आनुपूर्व्यचतुष्कं विना त्रयोदश १३। देशसंयते तृतीयकषायचतुष्कं तिर्यगायुरुद्योतनीचैर्गोत्रतिर्यग्गतयोष्टौ ८। प्रमत्तादिसयोगपर्यंतं पंचयचउरछक्कछच्चेव इगिदुगसोलसतीसमिति। अयोगे योगाभावात् तद्द्वादशानां सयोगे एव व्युच्छित्तेर्द्वाचत्वारिंशत्। ४२। तथासति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वतीर्थाहारकद्वयमनुदयः ५। उदयः चतुरुत्तरशतं १०४। सासादने एकसंयोगादनुदयः षट् ६ उदयः त्र्युत्तरशतं १०३ मिश्रेऽनुदयः चतुष्कं संयोज्य मिश्रोदयान्नव ९ उदयःशतं। १००। देशसंयते त्रयोदशसंयोगे अनुदयः द्वाविंशतिः २२। उदयः सप्ताशीतिः ८७। प्रमत्ते अष्ट संयोज्य आहारकद्वयोदयादनुदयः अष्टविंशतिः २८। उदयः एकाशीतिः ८१। अप्रमत्तादिषु अनुदयोदययोरेवं गच्छतोः संदृष्टिः—

मनो ४ वा ३ योग्यप्रकृतयः १०९।

म	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	स	उ	क्षी	स
व्यु	१	४	१	१३	८	५	४	६	६	१	२	१६	४२
उ	१०४	१०३	१००	१००	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२
अ	५	६	९	९	२२	२८	३३	३७	४३	४९	५०	५२	६७

३१०। अनुभयवागौदारिककाययोगयोराह—

स० चं०—त्रस कायिकविषैं गुणस्थानवत् एकसौ वाईस तहां स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ एकेंद्री १ आतप१ए पांच घटाएं उदय योग्य प्रकृति एकसौ सतरह गुणस्थान तहां चौदह, व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व१ अपर्याप्त १ ए दोय सासादनविषै अनतानुबंधी चतुष्क विकलत्रय तीन एवं सात ७। मिश्रादिकविषैं अनुक्रमतैं गुणस्थानवत् एक सतरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय साला तीस वारा व्युच्छित्ति जाननी। ऐसैं हांतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय पांच गुणस्थानवत् उदय एकसौ वारह बहुरि व्युच्छित्ति दोय अर नारकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातै सासादनविषैं अनुदय आठ उदय एकसौ नव मिश्रादि गुणस्थाननिविषैं गुणस्थानवत् अनुक्रमतैं उदय सौ एकसौ च्यारि सित्यासी इक्यासी छिहंतरि बहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालसि वारह प्रकृति है बहुरि मूलमें पच प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं मिश्रादिकविषैं अनुक्रमतैं अनुदय सतरह तेरह तीस छत्तीस इकतालीस पैंतालसि इक्यावन सत्तावन अठावन साठि पिचहत्तरि एकसौ पांच प्रकृति हैं बहुरि योगमार्गणा विषै च्यारि प्रकार मनोयोग अर सत्य असत्य उभय वचन योग इन सप्तनिविषैं गुणस्थानवत् एकसौ बाईस ति- ४४१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नविषैं आतप १ एकेंद्री १ विकलत्रय ३ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ च्यारि आनुपूर्वी ४ इन तेरह विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव गुणस्थान तेरह व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व १ सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं मिश्रमोहनी असंयतविषैं सतरहमैंस्यों च्यारि आनुपूर्वी घटाए तेरह च्यारि आनुपूर्वीका तौ उदय पर भवकौं गमन करतैं होइ अर मनोयोग वचन योग अपना पर्याप्ति पूर्ण भएं पीछैं होइ तातैं आनुपूर्वी न कही। देशसंयत विषैं तीसरा कषाय च्यारि ४ तिर्यंचायु १ उद्योत १ नीचगोत्र १ तिर्यंचगति १ ए आठ प्रमत्तादि विषैं गुणस्थानवत् पांच च्यारि छह छह एक दोय सोलह वहुरि अयोगी विषैं योगका अभाव है तातैं तीस अर वारा मिलाइ सयोगी विषैं वियालीस व्युच्छित्ति जाननी। ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानोक्त अनुदय पांच उदय एकसौ च्यारि वहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय छह उदय एकसौ तीन वहुरि व्युच्छित्ति च्यारिका अनुदय मिश्र मोहनीका उदय तातैं मिश्र विषैं अनुदय नव उदय सौ वहुरि व्युच्छित्ति एकका अनुदय सम्यक्त्व मोहनीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय नव उदय सौ वहुरि व्युच्छित्ति तेरह तातैं देशसंयतविषैं अनुदय वाइस उदय सित्यासी आगैं प्रमत्तादि विषैं गुणस्थानवत् अनुक्रमतैं उदय इक्यासी छिहंतरि वहत्तरि छ्यासठि गुणसठि सत्तावन वियालीस जानना। मूलमें तेरह प्रकृति उदय योग्य नाही तातैं प्रमत्तादिक विषैं अनुदय अठाईस तेंतीस सैंतीस वियालीस गुणचास पचास वावन सतसाठि जानना ॥ ३१० ॥ आगैं अनुभय वचन अर औदारिक काययोग विषैं कहै हैं—

अणुभयवचि वियलजुदा ओघमुराले ण हारदेवाऊ।
वेगुव्वछक्कणरतिरियाणु अपज्जत्तणिरयाऊ॥ ३११ ॥

अनुभयवचसि विकलयुता ओघ औराले नाहारदेवायुः।
वैगूर्वषट्कनरतिरियानुः अपर्याप्तनिरयायुः॥ ३११ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—अनुभयवाग्योगे विकलेंद्रियत्रये मिलिते द्वादशोत्तरशतं उदययोग्यं विकलत्रयजीवेष्वपि तद्योगसंभवात् । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः १। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं विकलत्रयं च ७ । मिश्रे मिश्रं १ । असंयते त्रयोदश १३ । देशसंयतादिषु अष्ट पंच चत्वारि षट् षडेकं द्वे षोडश द्वाचत्वारिंशत् । तथा सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रप्रकृत्यादिपंचकमनुदयः, उदयः सप्तोत्तरशतं १०७। सासादने एकं संयोज्य अनुदयः षट् ६ । उदयः षडुत्तरशतं १०६ । मिश्रो सप्त संयोज्य मिश्रोदयानुदयौ द्वादश १२ । उदयः शतं १०० । असंयते एकं संयोज्य सम्यक्त्वोदयादनुदयः द्वादश १२ । उदयः शतं १०० देशसंयते त्रयोदश संयोज्य अनुदयः पंचविंशतिः २५, उदयः सप्ताशीतिः ८७ । प्रमत्ते अष्टौ संयोज्य आहारकद्वयोदयादनुदयः एकत्रिंशत् ३१ । उदयः एकाशीतिः ८१ । अप्रमत्ते पंच संयोज्य अनुदयः षट्त्रिंशत् ३६ । उदयः षट्सप्ततिः ७६ । अपूर्वकरणे चतस्रः संयोज्य अनुदयः चत्वारिंशत् ४० । उदयः द्वासप्ततिः ७२ । अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्य अनुदयः षट्चत्वारिंशत् ४६ । उदयः षट्षष्टिः ६६ । सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्य अनुदयः द्वापंचाशत् ५२ उदयः षष्टिः ६० । उपशांतकषाये एकां संयोज्य अनुदयः त्रिपंचाशत् ५३ उदयः एकान्नषष्टिः ५९ । क्षीणकषाये द्वे संयोज्य अनुदयः पंचपंचाशत् ५५ । उदयः सप्तपंचाशत् ५७ । सयोगे षोडश संयोज्य तीर्थकरत्वोदयात् अनुदयः सप्ततिः ७० । उदयः द्वाचत्वारिंशत् ४२ ।

औदारिककाययोगे द्वाविंशत्युत्तरशतमध्ये १२२ आहारकद्वयं देवायुः वैक्रियिकषट्कं मनुष्यतिर्यगानुपूर्व्ये अपर्याप्तं नरकायुश्च उदययोग्यं नेति नवोत्तरशतं १०९ । गुणस्थानानि त्रयोदश । तत्र मिथ्यादृष्टौ अपर्याप्तवर्जितव्युच्छित्तिः चत्वारि ४ । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कैकेंद्रियस्थावरविकलत्रयाणि नव । मिश्रे मिश्रं । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं दुर्भगत्रयं च । देशसंयते तृतीयकषायचतुष्कतिर्यगायुरुद्योतनीचैर्गोत्रतिर्यग्गतयोऽष्टौ । अस्मिन् योगे आहारकयोगप्रवृत्तेर्नास्तीति प्रमत्ते स्त्यानगृद्धित्रयं । अप्रमत्तादिषु क्रमेण 'चउरछक्कछच्चेव इगिदुगसोलसवादालं' एवं सति मिथ्यादृष्टावनुदयः मिश्रसम्यक्त्वतीर्थकरत्वानि ३ । उदयः षडुत्तरशतं १०६ । सासादने चतस्रः संयोज्य अनुदयः सप्त ७ । उदयो द्व्युत्तरशतं १०२ । मिश्रे नव संयोज्य मिश्रोदयादनुदयः पंचदश १५ । उदयः चतुर्नवतिः ९४ । असंयते एकां संयोज्य सम्यक्त्वोदयादनुदयः पंचदश १५ । उदयः चतुर्नवतिः ९४ । देशसंयते सप्त संयोज्य अनुदयः द्वाविंशतिः २२ । उदयः सप्ताशीतिः ८७ । प्रमत्ते अष्ट संयोज्य अनुदयः त्रिंशत् ३० । उदयः एकोनाशीतिः । अप्रमत्ते तिस्रः संयोज्य अनुदयः त्रयस्त्रिंशत् ३३ । उदयः षट्सप्ततिः ७६ । अपूर्वकरणे चतस्रः संयोज्य अनुदयः सप्तत्रिंशत् ३७ । उदयः द्वासप्ततिः ७२ । अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्यानुदयः त्रिचत्वारिंशत् ४३ उदयः षट्षष्टिः ६६ । सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्य अनुदयः एकान्नपंचाशत् ४९ । उदयः षष्टिः ६० । उपशांते एकां संयोज्य अनुदयः पंचाशत् ५० उदयः एकान्नषष्टिः ५९ क्षीणकषाये द्वे संयोज्यानुदयो

१

	मि	सा	मि	अ	द	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स
व्यु	१	७	१	१३	८	५	४	६	६	१	२	१६	४२
उ	१०७	१०६	१००	१००	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२
अ	५	६	१२	१२	२५	३१	३६	४०	४६	५२	५३	५५	७०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वापंच शत् ५२। उदयः सप्तपंचाशत् ५७। सयोगे षोडश सं-योज्य तीर्थोदयादनुदयः सप्तषष्टिः ६७। उदयः द्वाचत्वारिंशत् ४२। ३११। अथौदारिकमिश्रकाययोगस्य गाथाद्वयेनाह—

सं० च०—अनुभय वचनविषैं पूर्वोक्त एकसौ नवमें विकलत्रय तीन मिलाएं उदययोग्य एकसौ वारह गुणस्थान तेरह तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि विकलत्रय तीन एवं सात, मिश्रादिकविषैं पूर्वोक्तवत् एक तेरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय सोला वियालीस व्युच्छित्ति हैं ऐसें होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं गुणस्थानवत् अनुदय पांच उदय एकसौ सात वहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय छह उदय एकसौ छह, मिश्रादिकविषैं पूर्वोक्तवत् उदय सौ सौ सित्यासी इक्यासी छिहंतरि वहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालीस जानना। पूर्वोक्ततैं उदय योग्य तीन प्रकृति बंधती हैं तातैं मिश्रादिकविषैं क्रमतैं अनुदय बारह वारह पचीस इकतीस छत्तीस चालीस छियालीस बावन तरेपन पंचावन सत्तरि प्रकृति जाननी। वहुरि औदारिक काय योगविषैं गुणस्थानवत् एकसौ वाईस तहां आहारक द्विक २ देवायु १ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग देव नारक गति वा आनुपूर्वी ए छह ६ मनुष्य तिर्यंच आनुपूर्वी २ अपर्याप्त १ नरकायु १ इन तेरह विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव गुणस्थान तेरह तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं गुणस्थानवत् पांचमैं अपर्याप्त विना च्यारि सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ एकेंद्री १ स्थावर १ विकलत्रय ३ एवं नव, मिश्रविषैं एक मिश्रमोहनी, असंयतविषैं दूसरा कषाय च्यारि ४ दुर्भग आदि तीन ३ एवं सात, देशसंयतविषैं गुणस्थानवत् आठ, इस औदारिक योगकी प्रवृत्ति होतैं आहारक योगकी प्रवृत्ति न होइ एक काल दोऊ योग न होइ तातैं प्रमत्तविषैं व्युच्छि-

औदारिक काययोगरचना।

१

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स
व्यु	४	९	१	७	८	३	४	६	६	१	२	१६	४२
उ	१०६	१०२	९४	९४	८७	७९	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२
अ	३	७	१५	१५	२२	३०	३३	३७	४३	४९	५०	५२	६७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्ति स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन ३ अप्रमत्तादिकविषैं व्युच्छित्ति पूर्वोक्तवत् च्यारि छह छह एक दोय सोला वियालीस हैं ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी तीर्थंकर ए तीन उदय एकसौ छह वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं सासादनविषैं अनुदय सात उदय एकसौ दोय वहुरि व्युच्छित्ति नवका उदय नाही अर मिश्र मोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय पंद्रह उदय चौराणवै वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाही सम्यक्त्व मोहनीयका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय पंद्रह उदय चौराणवै वहुरि व्युच्छित्ति सात तातैं देश संयतविषैं अनुदय वाईस उदय सित्यासी वहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय तीस उदय गुण्यासी वहुरि व्युच्छित्ति तीन तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय तेतीस उदय छिहंतरि उपरि अपूर्व करणादिकविषैं क्रमतैं पूर्ववत् उदय वहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालीस जानना। अनुदय सैंतीस तियालीस गुणचास वावन सतसाठि जानना। ३११। आगैं औदारिक मिश्र काययोगविषैं दोय गाथानिकरि कहैं है —

तम्मिस्से पुण्णजुदा ण मिस्सथीणतियसरविहायदुगं।
परघादचओ अयदे णादेज्जदुदुब्भगं ण संढिच्छी ॥ ३१२ ॥
साणे तेसिं छेदो वामे चत्तारि चोद्दसा साणे।
चउदालं वोछेदो अयदे जोगिम्हि छत्तीसं॥ ३१३ ॥ जुम्मं

तन्मिश्रे पूर्णयुता न मिश्रस्त्यानत्रयस्वरविहायोद्विकं।
परघातचत्वार्ययतेऽनादेयद्विदुर्भगं न षंढस्त्री ॥ ३१२ ॥
साने तेषां छेदो वामे चत्वारि चतुर्दश साने।
चतुश्चत्वारिंशत् व्युच्छेदः अयते योगिनि षट्त्रिंशत् ॥ ३१३ ॥ युग्मं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तन्मिश्रयोगे औदारिकयोगोक्तनवोत्तरशते अपर्याप्तिं निक्षिप्य मिश्रप्रकृतिः स्त्यानगृद्धित्रयं स्वरद्विकं विहायोगतिद्विकं परघातातपोद्योतोच्छ्वासाश्चेति द्वादशस्वपनीतेषु अष्टानवतिरुदययोग्याः ९८। गुणस्थानानि चत्वारि ४। सामान्योदयप्रकृतिषु आहारकद्विकं देवायुर्वैक्रियिकषट्कं मनुष्यतिर्यगानुपूर्व्ये नरकायुः मिश्रप्रकृतिः स्त्यानगृद्धित्रयं स्वरद्वयं विहायोगतिद्वयं परघातचतुष्कं चेति चतुर्विंशतिः कुतोनेतिचेत् नरकदेवगतिपर्याप्तकालविग्रहगतिसम्बन्धिनीनामत्र नुदयात्। असंयते अनादेयायशस्कीर्तिदुर्भगषंढस्त्रीवेदानामुदयो नहि सासादने एव व्युच्छित्तेः। तथासति मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं सूक्ष्मत्रयं च व्युच्छित्तिः। आतपस्य पर्याप्तेरुपर्युदयात्। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं एकेन्द्रियस्थावरविकलत्रयानादेयायशस्कीर्तिदुर्भगषंढस्त्रीवेद श्चेति चतुर्दश १४। असंयते स्वस्य द्वितीयकषायचतुष्कं तथा क्षीणकषायांतेषु कस्य योगस्याभावाद्देशसंयतस्योद्यातं विना सप्त। प्रमत्तस्य आहारकद्वयस्त्यानगृद्धित्रयं विना शून्यं। अप्रमत्तस्य चतस्रः। अपूर्वकरणस्य षट्। अनिवृत्तिकरणस्य षंढस्त्रीवेदौ विना चतस्रः, सूक्ष्मसांपरायस्य लोभः उपशांतकषायस्य वज्रनाराचनाराचद्वयं। क्षीणकषायस्य षोडश चेति चतुश्चत्वारिंशत् ४४। योगिनि षट्त्रिंशत् कपाट समुद्घातकाले स्वरद्वयविहायोगतिद्वयपरघातोच्छ्वासानामनुदयात्। तथासति मिथ्यादृष्टौ सम्यक्त्वं तीर्थं चानुदयः, उदयः षण्णवतिः। सासादनेऽनुदयः चतुःसंयोगात् षट्। उदयः द्वानवतिः ९२। असंयते चतुर्दश संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृत्युदयात् अनुदयः एकान्नविंशतिः १९। उदयः एकान्नाशीतिः ७९। सयोगे अनुदये चत्वारिंशतं संयोज्य तीर्थोदयात् द्वाषष्टिः ६२। उदयः षट्त्रिंशत् ३६। ३१२। ३१३। अथ वैक्रियिककाययोग स्याह—

स० चं०—तीहि औदारिक मिश्रकाययोगविषैं औदारिक योग विषैं एकसौ नव कहीं तिनमें अपर्याप्ति मिलाइए वहुरि मिश्र मोहनी १ स्त्यानगृद्धित्रिक ३ सुस्वर दुःस्वर २ प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति २ परघात आतप उद्योत उच्छ्वास ४ ए वारा घटाइए ऐसैं उदययोग्य प्रकृति अठ्याणवै गुणस्थान च्यारि सामान्य उदय प्रकृति एकसौ वाईस तिनमें आहारक द्विक २ देवायु १ वैक्रियिक षट् ६ मनुष्य तिर्यंचानुपूर्वी २ नरकायु १ मिश्र मोहनी १ स्त्यानगृद्धित्रिक ३ स्वरद्विक २ विहायोगतिद्विक २ परघातादि चतुष्क ४ ए चौईस उदय योग्य

औदारिक मिश्रकाययोगरचना।

१

मि	सा	अ	स
४	१४	४४	३६
९६	९२	७९	३६
२	६	१९	६२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाहीं जातैं देव नरक गति संबंधी वा पर्याप्त काल संबंधी वा विग्रहगति संबंधी प्रकृतिनिका इहां उदय नाहीं है यातैं उदय योग्य प्रकृति अठ्याणवै ही हैं तहां औदारिक मिश्र योगी असंयत गुणस्थानवर्तीकैं अनादेय अयशस्कीर्ति दुर्भग नपुंसक स्त्री वेद इनका उदय नाईं तातैं इनकी व्युच्छित्ति सासादन विषैं ही जाननी ऐसैं मिथ्यात्वविषैं मिथ्यात्व सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण ए च्यारि व्युच्छित्ति हैं आतप प्रकृति पर्याप्त पूर्ण भएं उदय योग्य हैं तातैं इहां न संभवै है। बहुरि सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ स्थावर १ एकेंद्री १ विकल त्रय ३ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ दुर्भग १ नपुंसक वेद १ स्त्री वेद १ ए व्युच्छित्ति चौदह बहुरि असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ अर क्षीणकषाय पर्यंत औदारिक मिश्र योग संभवै नाही तातैं ऊपरला गुणस्थानांका भी व्युच्छित्ति इहां ही कहनी सो दशसंयत संबंधी उद्योत विना सात प्रमत्त संबंधी आहारक द्विक स्त्यानगृद्धित्रिक विना शून्य ० अप्रमत्त संबंधी च्यारि ४ अपूर्व करण संबंधी छह अनिवृत्ति करण संबंधी स्त्री नपुंसक वेद विना च्यारि सूक्ष्मसांपराय संबंधी लोभ उपशांत कषाय संबंधी दोय २ क्षीणकषाय संबंधी सोलह ऐसैं असंयत विषैं व्युच्छित्ति चवालीस ४४ बहुरि सयोगी विषैं व्युच्छित्ति छत्तीस जातैं कपाट समुद्घात समय औदारिक मिश्र योग है तहां स्वर द्विक विहायोगति द्विक २ परघात उस्वास इनका उदय नाहीं ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं सम्यक्त्व मोहनी तीर्थंकर अनुदय दोय उदय छिनवै बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं सासादन विषैं अनुदय छह उदय बाणवै बहुरि व्युच्छित्ति चौदह का उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहनीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय उगणीस उदय गुण्यासी बहुरि व्युच्छित्ति चवालीसका उदय नाही तीर्थंकरका उदय तातैं सयोगी विषैं अनुदय बासठि उदय छत्तीस ॥३१२-३१३॥

आगैं वैक्रियिक काययोग विषै कहैं हैं—

देवोघं वेगुव्वे ण सुराणू पक्खिवेज्ज णिरयाऊ।
णिरयगदिहुंडसंढं दुग्गादि दुब्भगचओ णीचं ॥ ३१४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवौघः वैगूर्वं च सुरानुः प्रक्षिप्य निरयायुः।
निरयगतिहुंडषंढं दुर्गतिः दुर्भगचत्वारि नीचं ॥ ३१४ ॥

देवगतिसामान्योक्तसप्तसप्तत्यां देवानुपूर्व्यमपनीय नरकायुः नरकगतिहुंडसंस्थाने षंढवेदः अप्रशस्तविहायोगतिर्दुर्भगचतुष्कं नीचैर्गोत्रं चेति दशसु प्रक्षिप्तेषु वैक्रियिककाययोगोदययोग्याः षडशीतिः ८६। तत्र मिथ्यादृष्टौ व्युच्छित्तिर्मिथ्यात्वं १ सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं। मिश्रे मिश्रं। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कदेवनरकगतिवैक्रियिकद्विकदेवनारकायुर्दुर्भगत्रयाणि १३। एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रं सम्यक्त्वं चानुदयः २ उदयश्चतुरशीतिः ८४। सासादने अनुदये एकसंयोगात्त्रयं ३ उदयस्त्र्यशीतिः ८३। मिश्रे चत्वार्यनुदये संयोज्य सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृत्युदयात् षट् ६। उदयः अशीतिः ८०। असंयते अनुदये एकां संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृत्युदयात् षट्। उदयः—अशीतिः ८०। ३१४ ॥

अथ वैक्रियिकमिश्रयोगस्य द्व्यर्धगाथासूत्रेण आह—

स० चं०—वैक्रियिक काययोगविषैं सामान्यदेवगतिवत् सतहत्तरि तिनमें देवानुपूर्वी घटाइए नरकायु १ नरकगति १ हुंडसंस्थान १ नपुंसकवेद १ अप्रशस्त विहायोगति १ दुर्भग दुःस्वर अनादेय अयशस्कीर्ति ४ नीच गोत्र ए दश मिलाइए ऐसैं उदययोग्य प्रकृति छियासी तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व १ सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं एक मिश्रमोहनी, असंयतविषैं दूसरा कषाय च्यारि ४ देवनरकगति २ वैक्रियिक द्विक २ देवनरकायु २ दुर्भगादि तीन ३ एवं तेरह ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी अनुदय दोय २ उदय चौरासी बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय तीन उदय तियासी बहुरि व्युच्छित्ति च्यारिका उदय नाहीं। मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय छह उदय असी बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहिनीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय छह उदय असी ॥ ३१४ ॥ आगैं वैक्रियिक मिश्रयोगविषैं ड्योढ गाथाकरि कहैं हैं—

वेगुव्वं वा मिस्से ण मिस्स परघादसरविहायदुगं।
साणे ण हुंडसंढं दुब्भगणादेज्ज अज्जसयं ॥ ३१५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

णिरयगदिआउणीचं ते खित्तयदेऽवणिज्ज थीवेदं ।
छट्ठगुणं वाहारे ण थीणतियसंढथीवेदं ॥ ३१६ ॥ जुम्मं

वैगूर्वं वा मिश्रे न मिश्रं परघातस्वरविहायोद्विकं ।
साने न हुंडषंढं दुर्भगानादेयमयशस्कं ॥ ३१५ ॥
निरयगत्यायुर्नीचं ताः क्षिपायतेऽपनीय स्त्रीवेदं ।
षष्ठगुणं वाऽहारे न स्त्यानत्रयषंढस्त्रीवेदं ॥ ३१६ ॥ युग्मं ।

जी० प्र०—वैक्रियिकयोगवत्तन्मिश्रयोगे इति षडशीत्यां मिश्रं परघातद्विकं स्वरद्विक विहायोगतिद्विकं चेत्येकोनाशीतिरुदययोग्याः ७९ । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः । सासादने नरकगमनाभावात् हुंडसंस्थानषंढवेददुर्भगत्रयनरकगतिनरकायुर्नीचैर्गोत्राण्यनुदयं कृत्वा असंयते निक्षिप्य असंयतोदयाच्च स्त्रीवेदमनंतानुबंधिचतुष्कं च व्युच्छित्तिं कुर्यात् ५ । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं वैक्रियिकद्विकं देवनारकगती तदायुषी दुर्भगत्रयं चेति त्रयोदश । तथासति मिथ्यादृष्टावनुदयः सम्यक्त्वप्रकृतिः १ उदयः अष्टसप्तति: ७८ । सासादनेऽनुदयः सम्यक्त्वप्रकृतौ मिथ्यात्वं प्रागुक्तहुंडसंस्थानाद्यष्टकं च मिलित्वा दश १० । उदयः एकान्नसप्ततिः ६९ । असंयते अनुदयः पंच मिलित्वा सम्यक्त्वप्रकृतिहुंडसंस्थानाद्यष्टकोदयात् षट् ६ । उदयस्त्रिसप्ततिः ७३ । आहारककाययोगे षष्ठगुणस्थानोक्तैकाशीत्यां ८१ स्त्यानगृद्धित्रयं षंढवेदः स्त्रीवेदः ॥ ३१५ । ३१६ ॥

सं० च०—वैक्रियिक मिश्रयोगविषैं वैक्रियिक योगवत् छियासी तहां मिश्रमोहनी १ परघात उस्वास २ सुस्वर

वैक्रियिकमिश्ररचना ।

मि	सा	अ
१	५	१३
७८	६९	७३
१	१०	६

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुःस्वर २ प्रशस्त अप्रशस्त विहायो गतिः २ ए नाही तातैं उदययोग्य प्रकृति गुण्यासी तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व वहुरि सासादनवाला नरक न जाय यातैं हुंडसंस्थान १ नपुंसकवेद १ दुर्भगादि ३ नरकगति १ नरकायु १ नीच गोत्र १ इनका सासादनविषैं उदय नाही असंयतविषैं उदय है अर सासादनविषैं स्त्रीवेद १ अनंतानुबंधी च्यारि ४ ए पांच व्युच्छित्ति हैं असंयतविषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ वैक्रियिक द्विक २ देव नारक गति २ देव नरक आयु २ दुर्भगादि ३ ऐसैं व्युच्छित्ति तेरह ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय एक सम्यक्त्व मोहनी, उदय अठहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति एक अर हुंडसंस्थानादिक आठ इनका उदय नाही तातैं सासादनविषैं अनुदय दस उदय गुणहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति पांचका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी हुंड संस्थानादिक आठ इन नवका उदय पाइए तातैं असंयत विषैं अनुदय छह उदय तेहत्तरि वहुरि आहारक काययोगविषैं षष्ठम गुणस्थान विषैं उदय इक्यासी तिनमैं इतनी घटाएं स्त्यान गृद्ध्यादिकतीन ३ नपुंसक वेद १ स्त्रीवेद १ । ३१५–३१६ ।

दुग्गदिदुस्सरसंहदि ओरालदु चरिमपंचसंठाणं ।
ते तम्मिस्से सुस्सर परघाददुसत्थगादि हीणा ॥ ३१७ ॥

दुर्गतिदुस्वरसंहतिः औरालद्वे चरमपंचसंस्थानं ।
तास्तान्मिश्रे सुस्वरं परघातद्विशस्तगतिर्हीनाः ॥ ३१७ ॥

आ० आ० मि०रचना ।

प्र	प्र
०	०
६१	५७
०	०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—अप्रशस्तविहायोगतिः दुःस्वरं संहननषट्कमौदारिकद्विकं चरमपंचसंस्थानानीति विंशतिर्नेत्युदययोग्याः एकाम्नषष्टिः ६१ । तन्मिश्रयोगे ता एवैकषष्टिः । सुस्वरपरघातोच्छ्वासप्रशस्तविहायोगत्यूनाः सप्तपंचाशद्भवंति । ५७ । ३१७ । अथ कार्मणयोगस्य गाथाद्वयेनाह

स० चं०—अप्रशस्त विहायोगाति १ दुःस्वर १ संहनन छह ६ औदारिक शरीर वा अगोपांग २ अंतका पंच संस्थान ५ ए वीस नाहीं तातैं उदय योग्य प्रकृति इकसठि हैं। वहुरि आहारक मिश्र विषैं तिन इकसठिमैंस्यों सुस्वर १ परघात १ उस्वास १ प्रशस्त विहायोगाति १ ए च्यारि घटाइए तहां उदययोग्य प्रकृति सत्तावन हैं दोऊ विषैं गुणस्थान एक प्रमत्त ही है। ३१७। आगैं कार्मांण काय योगविषैं दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

ओघं कम्मे सरगादिपत्तेयाहारुरालदुग मिस्सं ।
उवघादपणविगुव्वदुथीणतिसंठाणसंहदी णत्थि ॥ ३१८ ॥

ओघः कर्मणि स्वरगतिप्रत्येकाहारौरालद्विकं मिश्रं ।
उपघातपंचवैगूर्वद्विस्त्यानत्रिसंस्थानसंहतिर्नास्ति ॥ ३१८ ॥

जी० प्र०—कार्माणयोगे उदयप्रकृतयः द्वात्रिंशत्युत्तरशते सुस्वरदुस्वरे प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगती प्रत्येकसाधारणे आहारकतदंगोपांगे औदारिक-तदंगोपांगे मिश्रप्रकृतिः उपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासाः वैक्रियिकतदंगोपांगे स्त्यानगृद्धित्रयं संस्थानषट्कं संहननषट्कं च नेत्येकान्ननवतिः ८९ । नतु अनादिसंसारे विग्रहाविग्रहगत्योर्मिथ्यादृष्ट्यादिसयोगांतगुणस्थानेषु कार्मणस्य निरंतरोदये सति 'विग्रहगतौ कर्मयोगः' इति सूत्रारंभः कथं ? सिद्धे सत्यारंभ्यमाणो विधिर्नियमायेति विग्रहगतौ कर्मयोग एव नान्योयोगः, इत्यवधारणार्थः । तेन पूर्वभवशरीरं त्यक्त्वोत्तरभवग्रहणार्थं गच्छतां । तत्र मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतगुणस्थानानि स्युः । तर्हि सयोगगुणस्थाने कथं कर्मयोगः ? विग्रहगतावेवेत्यनियमात् प्रतरलोकपूरण-त्रिसमये तत्संभवात् ॥ ३१८ ॥

स० चं०—कार्माण योगविषैं सामान्य उदय प्रकृति एकसौ वाईस तिनमैं सुस्वर दुःस्वर २ प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगाति २ प्रत्येक साधारण २ आहारक शरीर वा अगोपांग २ औदारिक शरीर वा अंगोपांग २ मिश्रमो-हनी १ उपघात परघात आतप उद्योत उस्वास ५ वैक्रियिक शरीर वा अगोपांग २ स्त्यान गृद्धित्रिक ३ संस्थान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छह ६ संहनन छह ६ इन तेतीस विना उदय योग्य प्रकृति निवासी। इहां प्रश्न जो अनादि संसारविषैं विग्रहगति अविग्रहगति विषैं मिथ्यादृष्टि आदि सयोगी पर्यंत सर्वगुण स्थानविषैं कार्माणका निरंतर उदय है 'विग्रहगतौ कर्मयोगः, ऐसैं सूत्र विषैं विग्रह गतिही विषैं कार्माण योग कैसैं कह्या ? ताका उत्तर—'सिद्धे सत्यारंभो नियमाय' सिद्ध होतैं भी वहुरि आरंभ सो नियमके अर्थि है तातैं इहां ऐसा नियम है जो विग्रहगति विषैं कार्माण योग ही है और योग नाहीं। वहुरि प्रश्न—जो विग्रहगतिका तौ अर्थ यहु है जो विग्रह कहिए नवीन शरीर ताके धारने के अर्थि जो गमन होइ सो विग्रह गति कहिए तहां मिथ्यादृष्टि सासादन असंयत विषैं तौ संभवै। सयोग विषैं विग्रहगतिका अभाव है तहां कार्माण योग कैसैं कह्या ? ताका समाधान जो विग्रह गतिविषैं कार्माण योग है ऐसा तो नियम नाहीं तातैं प्रतर लोक पूरण समुद्घात विषैं तीन समय कार्माण योग पाइए है॥ ३१८॥

साणे थीवेदछिदी णिरयदुणिरयाउगं ण तियदसयं।
इगिवण्णं पणवीसं मिच्छादिसु चउसु वोच्छेदो॥ ३१९॥

सानें स्त्रीवेदछित्तिः निरयद्विनिरयायुष्कं न त्रिकदशकं।
एकपंचाशत् पंचविंशतिः मिथ्यादिषु चतुर्षु व्युच्छेदः॥ ३१९॥

जी० प्र०—तन्मिथ्यादृष्ट्यादिचतुर्गुणस्थानेषु व्युच्छित्तिः—। मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं सूक्ष्ममपर्याप्तं चेति त्रयं। ससादने अनंतानुबंधिचतुष्कं एकेंद्रियं स्थावरं विकलत्रयं स्त्रीवेदश्चेति दश। असंयते वैक्रियिकद्विकं विना स्वस्य पंचदश। पुनः क्षीणकषायांतानां केवलतद्योगाभावादुद्योतं विना सप्त। आहारकद्विकस्त्यानगृद्धित्रयं विना शून्यं अंतिमसंहननत्रयं विना सम्यक्त्वप्रकृतिः षण्णोकषायाः स्त्रीवेदस्य सासादने छेदात् पंच, लोभः वज्रनाराचाभावात् शून्यं षोडश च मिलित्वा एकपंचाशत्। सयोगे वज्रर्षभनाराचसंहननस्वरद्विकविहायोगतिद्विकौदारिकद्विकसंस्थानषट्कोपघातोच्छ्वासप्रत्येकशरीराणि राशौ नेति पंचविंशतिः। तथा सति मिथ्यादृष्टौ सम्यक्त्वतीर्थकृत्वे अनुदयः २। उदयः सप्ताशीतिः। सासादने अनुदयः त्रयं 'णिरयदु णिरयाउगं णत्थीति त्रयं च मिलित्वाष्टौ। उदयः एकाशीतिः। असंयते दश मिलित्वा सम्यक्त्वनरकद्विकनरकायुरुदयाच्चतु-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देश १४ । उदयः पंचसप्ततिः । सयोगे-अनुदयः एकपंचाशतं मिलित्वा तीर्थोदयाच्चतुःषष्टिः ६४ । उदयः पंचविंशतिः ॥ ३११ ॥

स० चं०—तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व सूक्ष्म अपर्याप्त ए तीन सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि एकेंद्री १ स्थावर १ विकल त्रय ३ स्त्रीवेद १ ए दश असंयत विषैं सतरह वैक्रियिक द्विक विना पंद्रह बहुरि क्षीणकषाय पर्यंत कार्माण योग न संभवै तातैं ऊपरला गुणस्थानांकी व्युच्छित्ति इहां ही कहनी तहां देशव्रत संबंधी उद्योत विना सात, प्रमत्त संबंधी आहारक द्विक स्त्यान गृद्धित्रिक विना शून्य, अप्रमत्त संबंधी तीन संहनन विना एक सम्यक्त्व मोहनी, अपूर्व करण संबंधी छह अनिवृत्ति करण संबंधी स्त्रीवेदकी सासादन ही मैं व्युच्छित्ति भई तातैं पांच, सूक्ष्म सांपराय संबंधी एक, उपशांत मोह संबंधी संहननके अभावतैं शून्य ० क्षीणकषाय संबंधी सोलह ऐसैं सब मिलि असंयतविषैं व्युच्छित्ति इकावन । बहुरि सयोगी विषैं वियालीसमैंस्यों वज्रऋषभ नाराच १ स्वर-द्विक २ विहायो गति द्विक २ औदारिक द्विक २ संस्थान छह ६ उपघात परघात उच्छ्वास प्रत्येक ४ इन सतरह विना व्युच्छित्ति पचीस ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषै सम्यक्त्व मोहनी तीर्थंकर ए अनुदय दोय २ उदय सित्यासी ८७ बहुरि व्युच्छित्ति तीन अर नरक द्विक अर नरकायुका उदय नाहीं तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ उदय इक्यासी बहुरि व्युच्छित्ति दशका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी नरकद्विक नरकायुका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय चौदह उदय पिचहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति इक्यावनका उदय नाहीं तीर्थंकरत्वका उदय तातैं सयोगी विषैं अनुदय चौंसठि उदय पचीस पाइए है ॥ ३११ ॥ आगैं वेद मार्गणाविषैं कहैं हैं—

कर्मणकाययोगरचना ।

मि	सा	अ	स
३	१०	५१	२५
८७	८१	७५	२५
२	८	१४	६४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मूलोघं पुंवेदे थावरचउणिरयजुगलतित्थयरं ।
इगिविगलं थीसंढं तावं णिरयाउगं णत्थि ॥३२०॥

अथवेदमार्गणायामाह—

मूलौघः पुंवेदे स्थावरचतुर्निरययुगलतीर्थंकरं ।
एकविकलं स्त्रीषंढमातपं निरयायुष्कं नास्ति ॥ ३२० ॥

जी० प्र०– पुंवेदे मूलौघः द्वाविंशत्युत्तरशतं । तत्र स्थावरसूक्ष्मपर्याप्तसाधरणानि नरकद्विकं तीर्थकरत्वमेकेंद्रियं विकलत्रयं स्त्रीपंढवेदौ आतपो नरकायुर्नेति सप्तोत्तरशतमुदययोग्यं १०७ । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः १ । सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कं ४ । मिश्रे मिश्रं । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं वैक्रियिकद्विकं सुरद्विकं सुरायुः मनुष्यतिर्यगानुपूर्व्ये दुर्भगानादेयायशस्कीर्तयश्चेति चतुर्दश १४ । देशसंयतादिचतुर्षु क्रमेणाष्टौ पंच चत्वारि षट् । अनिवृत्तिकरणसवेदप्रथमभागे पुंवेदसंज्वलनक्रोधमानमायाः सूक्ष्मलोभः वज्रनाराचनाराचे षोडश तीर्थकृत्त्वं विनैकचत्वारिंशच्चेति चतुःषष्टिः ६४ । मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्वयान्यनुदयः ४ उदयः त्र्युत्तरशतं । १०३ । सासादने एकां संयोज्य अनुदयः पंच ५ । उदयो द्व्युत्तरशतं १०२ । मिश्रेऽनुदयः चतुष्कमानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रोदयादेकादश ११ । उदयः षण्णवतिः । ९६ । असंयतेऽनुदयः एकं मिलित्वा सम्यक्त्वतियग्मनुष्यदेवानुपूर्व्योदयादष्टौ । उदयो नवनवतिः । देशसंयते चतुर्दश संयोज्यानुदयो द्वाविंशतिः २२ । उदयः पंचाशीतिः । ८५ । प्रमत्तेऽष्ट संयोज्याहारकद्वयोदयादनुदयोऽष्टाविंशतिः २८ । उदय एकोनाशीतिः ७९ । अप्रमत्ते पंचसंयोज्यानुदयस्त्रयस्त्रिंशत् ३३ । उदयः चतुःसप्ततिः । ७४ । अपूर्वकरणे चत्वारः संयोज्यानुदयः सप्तत्रिंशत् ३७ । उदयः सप्ततिः ७० । अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे षट् संयोज्यानुदयः त्रिचत्वारिंशत् ४३ । उदयः चतुःषष्टिः । ६४ । ३२० । अथ स्त्रीषंढवेदयोराह—

पुंवेदरचना ।

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
१	४	१	१४	८	५	४	६	६४
१०३	१०२	९६	९९	८५	७९	७४	७०	६४
४	५	११	८	२२	२८	३३	३७	४३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—पुरुषवेदविषैं मूलौघवत् एकसौ वाईस तहां स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ नरक द्विक २ तीर्थंकरत्व १ एकेंद्री १ विकलत्रय ३ स्त्री नपुंसक वेद २ आतप १ नरकायु १ इन पंद्रह बिना उदय योग्यप्रकृति एकसौ सात तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषै मिथ्यात्व १ सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं एक मिश्र मोहनी, असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय ४ वैक्रियिक द्विक २ देवद्विक २ देवायु १ मनुष्य तिर्यंचानुपूर्वी २ दुर्भग अनादेय अयशस्कीर्ति ३ एवं चौदह देशसंयतादिक विषैं गुणस्थानवत् क्रमतैं आठ पांच च्यारि छह वहुरि अनिवृत्ति करणका सवेद पहिला भागविषैं पुरुषवेद १ बहुरि संज्वलन क्रोध मान माया बहुरि सूक्ष्मलोभ वहुरि वज्रनाराच नाराच बहुरि क्षीणकषाय संबंधी सोलह बहुरि तीर्थंकर विना केवली संबंधी इकतालीस ऐसैं सब मिल चौसठि व्युच्छित्ति जाननी जातैं अनिवृत्ति करण सवेद भागकै ऊपरि वेदका उदय नाहीं तहां मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी आहारक द्विक अनुदय च्यारि उदय एकसौ तीन बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय पांच उदय एकसौ दोय वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि आनुपूर्वी तीनका उदय नाहीं मिश्रमोहनी का उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय ग्यारह उदय छिनवै वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी तिर्यंच मनुष्य देवानुपूर्वी का उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय आठ उदय निन्याणवै वहुरि व्युच्छित्ति चौदह तातैं देशसंयतविषैं अनुदय वाईस उदय पिच्यासी वहुरि व्युच्छित्ति आठका उदय नाहीं आहारक द्विकका उदय तातैं प्रमत्त विषैं अनुदय अठाईस उदय गुण्यासी वहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय तेतीस उदय चौहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्वकरणविषैं अनुदय सैंतीस उदय सत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणका सवेदभाग विषैं अनुदय वियालीस उदय चौसठि। ३२०। आगैं स्त्री नपुंसक वेदनिविषैं कहै हैं—

इत्थीवेदेवि तहा हारदुपुरिसूणमित्थिसंजुत्तं ।
ओघं संढे ण हि सुरहारदुथीपुंसुराउतित्थयरं ॥३२१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्त्रीवेदेऽपि तथाहाराद्विपुरुषोनं स्त्रीसंयुक्तं।
ओघः षंढे नहि सुराहाराद्विस्त्रीपुंसुरायुस्तीर्थकरं ॥ ३२१ ॥

स्त्रीवेदेऽपि तथा पुंवेदोक्तं सप्तोत्तरशतं। तत्र चाहारकद्विकं पुंवेदं चापनीय स्त्रीवेदे निक्षिप्ते उदययोग्याः पंचोत्तरशतं १०५। तत्र मिथ्या दृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः। सामादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं। देवमनुष्यतिर्यगानुपूर्व्याणि चेति सप्त ७। मिश्रे मिश्रं १। असंयते द्वितीयकषायाः देवगतिः वैक्रियिकद्वयं देवायुः दुर्भगानादेयायशस्कीर्तयश्चेत्येकादश ११। देशसंयते स्वकीयाष्टौ ८। प्रमत्ते संक्लिष्टत्वादाहारकद्वयंनुदयगमात् स्त्यानगृद्धित्रयमेव ३। अप्रमत्ते सम्यक्त्वमंतिमसंहननत्रयं च ४। अपूर्वकरणे षण्णोकषायाः ६। अनिवृत्तिकरणे चतुःषष्टिः ६४। तथासति मिथ्या-दृष्टौ मिश्रं सम्यक्त्वं चानुदयः २। उदयस्त्र्युत्तरशतं १०३। सासादने एकं संयोज्य अनुदयः त्रयं ३। उदयो द्व्युत्तरशतं १०२। मिश्रेऽनुदयः सप्त संयोज्य मिश्रोदयान्नव ९। उदयः षण्णवतिः ९६। असंयते एकं संयोज्य सम्यक्त्वप्रकृत्युदयान्नव। उदयः षण्णवतिः। देशसंयते एकादश सं-योज्य अनुदयो विंशतिः २०। उदयः पंचाशीतिः ८५। प्रमत्तेऽष्टसंयोज्यानुदयोऽष्टाविंशतिः २८। उदयः सप्तसप्ततिः ७७। अप्रमत्ते त्रयं संयोज्य नुदयः एकत्रिंशत् ३१। उदयःश्चतुःसप्ततिः ७४। अपूर्वकरणे चतुष्कं संयोज्य अनुदयः पंचत्रिंशत् ३५। उदयः सप्ततिः ७०। अनिवृत्तिकरणसवेदभागे षट् संयोज्य अनुदय एकचत्वारिंशत् ४१। उदयश्चतुःषष्टिः।

ओघः षंढे–तत्र सुरद्विकमाहारकद्विकं स्त्रीवेदः पुंवेदो देवायुस्तीर्थकरत्वं च नेति चतुर्दशोत्तरशतमुदययोग्याः ११४। तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्या-त्वमातपः सूक्ष्मत्रयं चेति व्युच्छित्तिः पंच। सासादने अनंतानुबंधिचतुष्कमेकेंद्रियं स्थावरं विकलत्रयं मनुष्यतिर्यगानुपूर्व्ये चेत्येकादश ११। मिश्रे मिश्रं १। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं, वैक्रियिकद्विकं नरकगतिः तदानुपूर्व्यं नरकायुर्दुर्भगत्रयं चेति द्वादश १२। देशसंयते स्वकीयाष्टौ ८। प्रमत्ते स्त्यानगृद्धित्रयं ३। अप्रमत्ते सम्यक्त्वप्रकृतिः अंतिमसंहननत्रयं च ४। अपूर्वकरणे षण्णोकषायाः ६। अनिवृत्तिकरणे षंढवेदभागे चतु षष्टिः। ६४। एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वद्वयमनुदयः उदयो द्वादशोत्तरशतं। ११२। सासादनेऽनुदयः पंच नारकानुपूर्व्यं च मिलित्वाष्टौ ८।

स्त्रीवेदरचना।

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
१	७	१	११	८	३	४	६	६४
१०३	१०२	९६	९६	८५	७७	७४	७०	६४
२	३	९	९	२०	२८	३१	३५	४१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदयः षडुत्तरशतं १०६ । मिश्रेऽनुदय एकादश मिलित्वा मिश्रप्रकृत्युदयादष्टादश १८ । उदयः षण्णवतिः ९६ । असंयते एकां संयोज्य सम्यक्त्व-प्रकृतिनरकानुपूर्व्योदयादनुदयः सप्तदश १७ । उदयः सप्तनवतिः । ९७ । देशसंयते द्वादश संयोज्यानुदयः एकान्नत्रिंशत् २९ । उदयः पंचाशीतिः ८५ । प्रमत्तसंयतेऽष्ट संयोज्यानुदयः सप्तत्रिंशत् ३७ । उदयः सप्तसप्ततिः ७७ । अप्रमत्ते त्रयं संयोज्यानुदयश्चत्वारिंशत् ४० । उदयश्चतुःसप्ततिः ७४ । अपूर्वकरणे चतस्रः संयोज्य अनुदयश्चतुश्चत्वारिंशत् ४४ । उदयः सप्ततिः ७० । अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्यानुदयः पंचाशत् ५० उदय-श्चतुःषष्टि । ६४ । ३२१ । अथ कषायमार्गणायामाह——

स० चं०—स्त्रीवेदविषैं पुरुषवेदवत् एकसौ सात तहां आहारकद्विक पुरुष वेद घटाइए स्त्रीवेद मिलाइए ऐसैं उदययोग्य प्रकृति एकसौ पांच तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि देव मनुष्य तिर्यंच आनुपूर्वी एवं सात, मिश्रविषैं एक मिश्र मोहनी, असंयतविषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ देवगति १ वैक्रियिक द्विक २ देवायु १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ एवं ग्यारह, देश संयतविषैं गुणस्थानवत् आठ प्रमत्तविषैं स्त्रीवेदी संक्लेशी हैं तातैं आहारक द्विक नाहीं तातैं स्त्यान गृद्धि तीन, अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्व मोहनी अंतके संहनन तीन ३ एवं च्यारि अपूर्व करण विषैं छह नोकषाय अनिवृत्ति करण विषैं चौंसठि ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी अनुदय दोय २ उदय एकसौ तीन वहुरि एक व्युच्छित्ति तातैं सासादन विषैं अनुदय तीन उदय एकसौ दोय वहुरि व्युच्छित्ति सातका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्र विषैं अनुदय नव उदय छिनवै वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहनीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय नव उदय छिनवै वहुरि व्युच्छित्ति ग्यारह तातैं देशसंयतविषैं अनुदय वीस उदय पच्यासी वहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं

षंढवेदरचना ।

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ
१	५	११	१	१२	८	३	४	६	६४
	११२	१०६	९६	९७	८५	७७	७४	७०	६४
	२	८	१८	१७	२९	३७	४०	४४	५०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमत्त विषैं अनुदय अठाईस उदय सतहत्तरि वहुरि व्युच्छिति तीन तातैं अप्रमत्त विषैं अनुदय इकतीस उदय चौहत्तरि वहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय पैंतीस उदय सत्तरि वहुरि व्युच्छात्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणका सवेद भागविषैं अनुदय इकतालीस उदय चौंसठि है। वहुरि नपुंसक वेद विषैं ओघः कहिए मूल प्रकृति एकसौ वाईस तहां देवगति वा आनुपूर्वी २ आहारक द्विक २ स्त्रीवेद १ पुरुषवेद १ देवायु १ तीर्थंकरत्व इन आठ विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ चौदह तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व आतप २ सूक्ष्मादि तीन ३ ए पांच सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ एकेंद्री स्थावर १ विकलत्रय ३ मनुष्य तिर्यंच आनुपूर्वी २ ए ग्यारह मिश्रविषैं मिश्रमोहनी १ असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ वैक्रियिक द्विक २ नरक गति वा आनुपूर्वी वा आयु ३ दुर्भगादि तीन ३ एवं वारह देश संयतविषैं गुणस्थानवत् आठ ८ प्रमत्तविषैं स्त्यानगृद्धित्रिक ३ अप्रमत्त विषैं सम्यक्त्वमोहनी अंतके संहनन तीन ए च्यारि अपूर्व करण विषैं छह नोकषाय अनिवृत्ति करणका नपुंसक वेद भागविषैं चौंसठि ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी अर सम्यक्त्व मोहनी अनुदय दोय उदय एकसौ वारा वहुरि व्युच्छिति पांच नरकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ उदय एकसौ छह बहुरि व्युच्छित्ति ग्यारहका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय अठारह उदय छिनवै बहुार व्युच्छिति एकका उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहनी नरकानुपूर्वीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय सतरह उदय सत्याणवै वहुरि व्युच्छित्ति वारह तातै देशसंयत विषैं अनुदय गुणतीस उदय पिच्यासी वहुरि व्युच्छात्ति आठ तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय सैंतीस उदय सतहत्तरि वहुरि व्युच्छिति तीन तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय चालीस उदय चौहत्तरि वहुरि व्युच्छित्तिच्यारि तातैं अपूर्वकरण विषैं अनुदय चबालीस उदय सत्तरि बहुरि व्युच्छात्ति छह तातैं अनिवृत्तिकरणका सवेद भागविषैं अनुदय पचास उदय चौंसठि है। ३२१। आगैं कषाय मार्गणा विषैं कहै हैं—

तित्थयरमाणमायालोहचउक्कूणमोघमिह कोहे ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अणरहिदे णिगिविगलं तावऽणकोहाणुथावरचउक्कं ॥३२२॥

तीर्थंकरमानमायालोभचतुष्कोनमोघ इह क्रोधे ।
अनरहिते नैकविकलमातापानक्रोधानुस्थावरचतुष्कं ॥ ३२२ ॥

जी॰ प्र॰—इह क्रोधकषायमार्गणायां सामान्योदयः इतरद्वादशकषायतीर्थन्यूनः, तेन नवोत्तरशतं भवति । तत्र मिथ्यादृष्टौ स्वकीया पंच व्युच्छित्तिः । सासादनेऽनंतानुबंधिक्रोधः एकेंद्रियं स्थावरं विकलत्रयं चेति षट ६ । मिश्रे मिश्रं १ । असंयते प्रत्याख्यानक्रोधो वैक्रियिकषट्कं मनुष्यतिर्यगानुपूर्व्ये सुरनारकायुषी दुर्भगत्रयं चेति चतुर्दश १४ । देशसंयते प्रत्याख्यानक्रोधः तिर्यगायुरुद्योतौ नीचैर्गोत्रं तिर्यग्गतिश्चेति पंच ५ । प्रमत्तसंयते आहारकद्वयं स्त्यानगृद्धित्रयं चेति पंच ५ । अप्रमत्ते सम्यक्त्वमंतिमसंहननत्रयं चेति चतुष्कं ४ । अपूर्वकरणे नोकषायषट्कं ६ । अनिवृत्तिकरणे प्रथमभागस्य वेदत्रय । द्वितीयभागस्य संज्वलनक्रोधः । सूक्ष्मसांपरायस्य लोभापनयनात् शून्यं । उपशांतकषायस्य वज्रनाराचनाराचौ । क्षीणकषायस्य षोडश । सयोगस्य तीर्थं विनैकचत्वारिंशच्चेति त्रिषष्टिः ६३ । तथासति—मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्विकान्यनुदयः । उदयः पंचोत्तरशतं १०५ । सासादने पंच नरकानुपूर्व्यं चेत्यनुदयो दश १० । उदयः एकान्नशतं ९९ । मिश्रे अनुदयः षट् शेषानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रोदयादष्टादश १८ उदय एकनवतिः । असंयते एकं संयोज्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयाच्चतुर्दश, उदयःपंचनवतिः ९५ । देशसंयते चतुःसंयोज्यानुदयेऽष्टाविंशतिः । उदयः एकाशीतिः । ८१ । प्रमत्तसंयते पंच संयोज्याहारकद्विकोदयादेकत्रिंशत् ३१ । उदयोऽष्टासप्ततिः । ७८ । अप्रमत्ते पंच संयोज्यानुदयः षट्त्रिंशत् ३६ । उदयः त्रिसप्ततिः ७३ । अपूर्वकरणे चतुष्कं संयोज्यानुदयश्चत्वारिंशत् ४० । उदय एकान्नसप्ततिः ६९ । अनिवृत्तिकरणे द्वितीयक्रोधकषायभागे षट् संयोज्यानुदयः षट्चत्वारिंशत् ४६ । उदयस्त्रिषष्टिः । अनंतानुबंधिरहिते तु एकेंद्रिये विकलत्रयातपानंतानुबंधिक्रोधानुपूर्व्यचतुष्कस्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणानि मिथ्यादृष्ट्युदये पंचोत्तरशते नेत्येकंनवतिरुदयप्रकृतयो भवंति ॥ ३२२ ॥

स॰ चं॰—क्रोध कषाय विषैं सामान्य एकसौ वाईस तिनमें च्यारि क्रोध विना अन्य वारह कषाय अर तीर्थकर इन तेरह विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव, तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं गुणस्थानवत् पांच, सासादन

१

मि	आ	मि	अं	दे	प्र	अ	अ	अ
५	६	१	१४	५	५	४	६	६३
१०५	९९	९१	९५	८१	७८	७३	६९	६३
४	१०	१८	१४	२८	३१	३६	४०	४६

२

मि
१
९१
०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं अनंतानुबंधी क्रोध १ एकेंद्री १ स्थावर १ विकलत्रय ३ ए छह, मिश्रविषैं मिश्रमोहनी असंयतविषैं प्रत्याख्यान क्रोध १ वैक्रियिक षट्क ६ मनुष्य तिर्यंच आनुपूर्वी २ देव नरक आयु २ दुर्भगादि तीन एवं चौदह, देशसंयतविषैं प्रत्याख्यान क्रोध १ तिर्यंचायु १ उद्योत १ नीचगोत्र १ तिर्यंचगति एवं पांच, प्रमत्तविषैं आहारकद्विक स्त्यानगृद्धित्रिक ए पांच, अप्रमत्तविषैं सम्यक्त्व मोहनी अंतके संहनन तीन एवं च्यारि, अपूर्व करणविषैं नोकषाय छह अनिवृत्तिकरणका पहिला भाग संबंधी तीन वेद दूसरा भाग संबंधी संज्वलन क्रोध सूक्ष्मसांपराय संबंधी लोभका ग्रहण नाहीं तातैं शून्य उपशांत कषाय संबंधी दोय क्षीणकषाय संबंधी सोलह केवली संबंधी तीर्थंकर विना इकतालीस ऐसैं सर्व मिलि तरेसठि प्रकृति अनिवृत्ति करणका द्वितीय भागविषैं व्युच्छित्ति जाननी। ऐसैं होते मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी आहारकद्विक एवं अनुदय च्यारि उदय एकसौ पांच बहुरि व्युच्छित्ति पांच नारकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादनविषैं अनुदय दश उदय निन्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति छह अवशेष आनुपूर्वीका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातै मिश्रविषै अनुदय अठारह उदय इक्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहनी च्यारि आनुपूर्वीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय चौदह उदय पिच्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति चौदह तातैं देश संयतविषैं अनुदय अठाईस उदय इक्यासी बहुरि व्युच्छित्ति पांचका उदय नाहीं आहारक द्विकका उदय तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय इकतीस उदय अठहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय छत्तीस उदय तेहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्व करणविषैं अनुदय चालीस उदय गुणहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्तिकरणका दूसरा क्रोध कषायभागविषैं अनुदय छियालीस उदय तरेसठि है बहुरि अनंतानुबंधी रहित क्रोधविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं उदय एकसौ पांचका है तिनमैं एकेंद्री १ विकलत्रय ३ आतप १ अनंतानुबंधी क्रोध १ च्यारि आनुपूर्वी स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण इन चौदह विना उदय योग्य प्रकृति इक्याणवै जाननी। अनंतानुबंधीका विसंयोजनकरि मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं प्राप्त भया ताके केते इककाल अनंतानुबंधीका उदय न हो है ताका यहु कथन जानना ॥ ३२२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं माणादितिए मदिसुदअण्णाणगे दु सगुणोघं ।
वेभंगेवि ण ताविगिविगलिंदी थावराणुचऊ ॥३२३॥

एवं मानादित्रये मतिश्रुताज्ञानके तु स्वगुणौघः ।
वैभंगेऽपि नातपैकविकलेंद्रियं स्थावरानुचत्वारि ॥ ३२३ ॥

जी० प्र०—एवं क्रोधचतुष्कवन्मानचतुष्के मायाचतुष्के च द्वादश, इतरकषायतीर्थं नेति नवोत्तरशतं तेन तद्रचना क्रोधरचनैव ज्ञातव्या । लोभेऽपि तथैव तत्त्रयोदशप्रकृत्यभावात् उदययोग्यं नवोत्तरशतं । सूक्ष्मसांपरायांतानि गुणस्थानानि ।१०९। कुमतिकुश्रुतज्ञानयोः पुनः द्वाविंशत्युत्तरशते आहारकद्वयतीर्थमिश्रसम्यक्त्वप्रकृतयो नेति सप्तदशोत्तरशतमुदययोग्यं । ११७ । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वातपसूक्ष्मत्रयनारकानुपूर्व्याणि व्युच्छित्तिः ६ । सासादने स्वस्य नव । मिथ्यादृष्टावनुदयो नास्ति । उदयः सप्तदशोत्तरशतं । ११७ । सासादनेऽनुदयः षट् ६ । उदय एकादशोत्तर शतं १११ ।

विभंगेऽप्येवमेव तथापि नातपैकेंद्रियविकलत्रयस्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणानुपूर्व्यचतुष्कानीति चतुरुत्तरशतमुदययोग्यं । १०४ । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः । सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं ४ । मिथ्यादृष्टावनुदयो नास्ति । उदयः चतुरुत्तरशतं १०४ । सासादने एकमनुदयः १ । उदयस्त्र्युत्तरशतं १०३ ॥ ३२३ ॥

स० चं०—इसहीप्रकार जैसै अनंतानुबंध्यादिक च्यारि प्रकार क्रोधका कथन कीया तैसैं ही मानचतुष्कविषैं मायाचतुष्कविषैं अन्य बारह कषाय अर तीर्थंकर विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव एकसौ नव है तातैं तिनकी रचना क्रोध रचनावत जाननी। बहुरि लोभविषै भी वैसैं ही तेरह प्रकृतिके अभावतैं उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव

कुमतिकुश्रुतरचना । १

मि	सा
६	९
११७	१११
०	६

विभंगरचना । २

मि	सा
१	४
१०४	१०३
०	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

याकी रचना सूक्ष्म सांपराय पर्यंत जाननी। बहुरि ज्ञानमार्गणाविषैं कुमति कुश्रुत ज्ञानविषैं एकसौ बाईस प्रकृतिमें आहारकद्विक तीर्थंकर मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ सतरह तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व १ आतप १ सूक्ष्मादि तीन ३ नरकानुपूर्वी एवं छह, सासादनविषैं गुणस्थानवत् नव ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय नास्ति उदय एकसौ सतरह बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं सासादनविषैं अनुदय छह उदय एकसौ ग्यारह विभंग ज्ञानविषैं भी ऐसैंही तहां आतप एकेंद्री १ विकलत्रय ३ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्त १ साधारण १ आनुपूर्वी च्यारि ४ ऐसैं तेरह विना पूर्वोक्त उदय योग्य प्रकृति एकसौ च्यारि तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति एक मिथ्यात्व १ सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय नास्ति उदय एकसौ च्यारि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय एक उदय एकसौ तीन ॥ ३२३ ॥

सण्णाणपंचयादी दंसणमग्गणपदोत्ति सगुणोघं ।
मणपज्जवपरिहारे णवरि ण संढित्थि हारदुगं ॥३२४॥

संज्ञानपंचकादि दर्शनमार्गणापदमिति स्वगुणौघः ।
मनःपर्ययपरिहारे नवरि न षंढस्त्री आहारद्वयं ॥ ३२४ ॥

जी० प्र०—संज्ञानपंचकाद् दर्शनमार्गणापर्यंतं स्वगुणौघ एव तद्यथा—मतिज्ञानादित्रये गुणस्थानानि असंयतादीनि नव उदयप्रकृतयः । मिथ्यादृष्ट्यादित्रयस्य व्युच्छित्तिः पंचदश तीर्थकरत्वं च नेति षडुत्तरशतं १०६ । तत्रासंयते स्वस्य सप्तदश व्युच्छित्तिः १७ । तत्र देशसंयतादिषु 'अडपंचयचउरछक्कछच्चेव इगदुगसोलस' तथासति असंयते आहारकद्विकमनुदयः २ उदयश्चतुरुत्तरशतं १०४ । देशसंयते सप्तदश संयोज्यानुदयः एकान्नविंशतिः । उदयः सप्ताशीतिः । ८७ । प्रमत्तेऽष्टौ सयोज्याहारकद्विकोदयादनुदये पंचविंशतिः २५ । उदय एकाशीतिः । ८१ । अप्रमत्ते पंच संयोज्यानुदयस्त्रिंशत् ३० । उदयः षट्सप्ततिः ७६ । अपूर्वकरणे चतस्रः संयोज्यानुदयश्चतुस्त्रिंशत् ३४ । उदयो द्वासप्ततिः । अनिवृत्तिकरणे षट्संयोज्यानुदयश्चत्वारिंशत् ४० । उदयः षट्षष्टिः ६६ । सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्यानुदयः षट्चत्वारिंशत् ४६ । उदयः षष्टिः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

६० । उपशांतकषाये एकां संयोज्यानुदयः सप्तचत्वारिंशत् ४७ । उदय एकान्नषष्टिः ५९ । क्षीणकषाये द्वे संयोज्यानुदयः एकान्नपंचाशत् ४९ । उदयः सप्तपंचाशत् ५७ ।

मनःपर्ययज्ञाने—संढित्थीहारदुगं णोति तच्चतुष्के प्रमत्तोदयैकाशीत्यामपनीते सप्तसप्ततिः ७७ । गुणस्थानानि प्रमत्तादीनि सप्त । तत्र प्रमत्ते स्त्यानगृद्धित्रयं व्युच्छित्तिः ३ । अप्रमत्ते स्वस्य चतुष्कं ४ । अपूर्वकरणे षण्णोकषायाः ६ । अनिवृत्तिकरणे पुंवेदः संज्वलनक्रोधादित्रयं च ४ । सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मलोभः । उपशांतकषाये वज्रनाराचनाराचद्वयं २ । क्षीणकषाये द्विचरमसमये निद्राप्रचले, चरमे ज्ञानावरणपंचकं अंतरायपंचकं दर्शनावरणचतुष्कं च मिलित्वा षोडश १६ । एवं सति प्रमत्तेऽनुदयः शून्यं । उदयः सप्तसप्ततिः ७७ । अप्रमत्तेऽनुदयस्त्रयं ३ । उदयश्चतुःसप्ततिः ७४ । अपूर्वकरणे चतुष्कं संयोज्यानुदयः सप्त ७ उदयः सप्ततिः ७० । अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्यानुदयस्त्रयोदश १३ । उदयश्चतुःषष्टिः ६४ । सूक्ष्मसांपराये चतुष्कं संयोज्यानुदयः सप्तदश १७ । उदयः षष्टिः ६० । उपशांतकषाये एकं संयोज्यानुदयोऽष्टादश १८ । उदय एकान्नषष्टिः ५९ । क्षीणकषाये द्वे संयोज्यानुदयो द्वाविंशतिः २० । उदयः सप्तपंचाशत् ५७ ।

केवलज्ञाने उदययोग्या द्वाचत्वारिंशत् ४२ । तत्र सयोगे व्युच्छित्तिः त्रिंशत् । अयोगे द्वादश । संदृष्टिः———

केवलिद्वययोग्य : ४२

	स	अ
व्यु	३०	१२
उ	४२	१२
अ	०	३०

संयममार्गणायां सामायिकछेदोपस्थापनयोरुदययोग्याः प्रमत्तस्यैकाशीतिः ८१ । गुणस्थानानि प्रमत्तादीनि चत्वारि । व्युच्छित्तयः पंचचतुर-

१ संज्ञानत्रयरचना ।

अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
१७	८	५	४	६	६	१	२	१६
१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७
२	१९	२५	३०	३४	४०	४६	४७	४९

२ मनःपर्ययज्ञानरचना ।

प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
३	४	६	४	१	२	१६
७७	७४	७०	६४	६०	५९	५७
०	३	७	१३	१७	१८	२०

३ सामायिकछेदोपस्थापनरचना ।

प्र	अ	अ	अ
५	४	६	६
८१	७६	७२	६६
०	५	९	१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

छकळ्येव । प्रमत्तेऽनुदयः शून्यं । उदय एकाशीतिः ८१ अप्रमत्तेऽनुदयःपंच ५ । उदयः षट्सप्ततिः ७६ । अपूर्वकरणे चतुष्कं संयोज्यानुदयो नव ९ । उदयो द्वासप्ततिः ७२ । अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्यानुदयः पंचदश १५ उदयः षट्षष्टिः ६६ । परिहारविशुद्धौ षंढित्थीहारदुगं णोति तच्चतुष्केऽपनीते सप्तसप्ततिरुदययोग्याः ७७ । प्रमत्ताप्रमत्तगुणस्थाने द्वे संदृष्टिः—

१ परि=यो ७७

	प्र	अ
व्यु	३	४
उ	७७	७४
अ	०	३

सूक्ष्मसांपरायस्योदयः षष्टिः ६० । सूक्ष्मसांपरायगुणस्थाने यथाख्यातसंयमस्योदयः । उपशांतकषायस्य एकान्नषष्ट्यां तीर्थं मिलित्वा षष्टिः ६० गुणस्थानान्युपशांतकषायादीनि चत्वारि । तत्रोपशांतकषाये वज्रनाराचनाराचद्वयं व्युच्छित्तिः । क्षीणकषाये षोडशसयोगे त्रिंशत् । अयोगे द्वादश तथा सति उपशांतकषाये तीर्थमनुदयः १ । उदय एकान्नषष्टिः ५९ । क्षीणकषाये द्वे संयोज्यानुदयस्त्रयं । ३ । उदयः सप्तपंचाशत् ५७ । सयोगे षोडश संयोज्य तीर्थोदयादष्टादश १८ । उदयो द्वाचत्वारिंशत् ४२ । अयोगे त्रिंशतं संयोज्यानुदयोष्टाचत्वारिंशत् ४८ । उदयो द्वादश १२ । देशसंयमे तद्गुणस्थानस्य सप्ताशीतिरुदययोग्याः ८७ । गुणस्थानं तदेवै । असंयमे तीर्थकरत्वमाहारकद्वयं विना शेषैकान्नविंशत्युत्तरशतमुदययोग्यं ११९ । मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानानि चत्वारि व्युच्छित्तयः 'पणणव इगिसत्तरसं' तथा सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रं सम्यक्त्वं चानुदयः । उदयः सप्तदशोत्तरशतं ११७ । सासादनेऽनुदयः पंच नरकानुपूर्व्यं च मिलित्वाष्टौ ८ । उदय एकादशोत्तरशतं १११ । मिश्रेऽनुदयो नव शेषानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रोदयादेकान्नविंशतिः १९ । उदयः शतं १०० । असंयते एकं मिलित्वा सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयात्पंचदश-१५ । उदयश्चतुरुत्तरशतं १०४ । ३२४ ।

१ सूक्ष्मसांपरायरचना ।

०
६०
०

२ यथाख्यातरचना ।

उ	क्षी	स	अ
२	१६	३०	१२
५९	५७	४२	१२
१	३	१८	४८

३ देशसंयमरचना ।

दे
०
८७
०

४ असंयमरचना ।

मि	सा	मि	अ
५	९	१	१७
११७	१११	१००	१०४
२	८	१९	१५

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०–सुज्ञान पांचतैं लगाय दर्शनमार्गणापर्यंत अपना गुणस्थान रचनावत् रचना जाननी सोई कहिए
है–मतिज्ञान श्रुतज्ञान अवधिज्ञानविषैं गुणस्थान असंयतादिक नव उदय योग्य एकसौ बाइसमें पहिला दूसरा
४६७ तीसरा गुणस्थानविषैं व्युच्छित्ति पंद्रह अर तीर्थंकर इन सोलह विना एकसौ छह प्रकृति हैं। तहां व्युच्छित्ति गुण-
स्थानवत् असंयतादिकविषैं अनुक्रमतैं सतरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय सोलह जाननी ऐसैं होतैं असं-
यतविषैं अनुदय आहारकद्विक २ उदय एकसौ च्यारि ऊपरि देशसंयतादिक क्षीणकषाय पर्यंतविषैं गुणस्थानवत्
अनुक्रमतैं उदय सित्यासी इक्यासी छिहंतरि बहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन जाननी। बहुरि मूलमें
सोलह प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं देशसंयतादिकविषैं क्रमतैं अनुदय उणतीस पचीस तीस चौतीस चालीस
छियालीस सैंतालीस गुणचास जानना। बहुरि मनःपर्यय ज्ञानविषैं 'संढित्थीहारदुगं ण' नपुंसक वेद स्त्रीवेद
आहारकद्विक ए उदय योग्य नाहीं तातैं प्रमत्त गुणस्थानमें उदय योग्य इक्यासीमें ए च्यारि घटाएं उदय योग्य
प्रकृति सतहत्तरि, गुणस्थान प्रमत्तादिक सात, तहां व्युच्छित्ति प्रमत्तविषैं स्त्यानगृद्धि तीन अप्रमत्तविषैं गुणस्थानवत्
च्यारि अपूर्वकरणविषैं नोकषाय छह अनिवृत्ति करणविषैं पुरुषवेद संज्वलन क्रोधादि तीन ए च्यारि, सूक्ष्मसांप-
रायविषैं सूक्ष्मलोभ उपशांतकषायविषैं वज्रनाराच नाराच ए दोय क्षीणकषायविषै गुणस्थानवत् सोलह ऐसैं होतैं
प्रमत्तविषैं अनुदय शून्य उदय सतहत्तरि, बहुरि व्युच्छित्ति तीन तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय तीन उदय चहोत्तरि
बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं अपूर्वकरणविषैं अनुदय सात उदय सत्तरि, बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्तिक-
रणविषैं अनुदय तेरह उदय चौसठि बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि तातैं सूक्ष्मसांपरायविषैं अनुदय सतरह उदय साठि
बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांतकषायविषैं अनुदय अठारह उदय गुणसठि बहुरि व्युच्छित्ति दोय तातैं क्षीण
कषायविषैं अनुदय वीस उदय सत्तावन है बहुरि केवलज्ञानविषैं उदय योग्य प्रकृति बियालीस तहां सयोगीविषैं
व्युच्छित्ति ३० अयोगीविषैं बारह ऐसें होतैं सयोगीविषैं अनुदय शून्य उदय बियालीस अयोगीविषैं अनु- ४६५
दय तीस उदय बारह। बहुरि संयम मार्गणाविषैं सामायिक छेदोपस्थापना संयमविषैं उदय योग्य प्रकृति प्रमत्त-

६१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थानवत् इक्यासी गुणस्थान प्रमत्तादिक च्यारि तहां प्रमत्तादिकविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच च्यारि छह छह बहुरि उदय भी गुणस्थानवत् इक्यासी छिहंतरि वहत्तरि छ्यासठि बहुरि अनुदय शून्य पांच नव पंद्रह जानना बहुरि परिहार विशुद्धिविषैं 'संढित्थी हारदुगं ण' नपुंसक स्त्रीवेद आहारक द्विक इन च्यारि विना उदय योग्य प्रकृति सतहत्तरि गुणस्थान दोय, तहां व्युच्छित्ति प्रमत्तविषैं स्त्यानगृद्धि आदिक तीन ३ अप्रमत्तविषैं गुणस्थानवत् च्यारि ऐसैं होतैं प्रमत्तविषैं अनुदय शून्य उदय सतहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति तीन तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय तीन उदय चहोत्तरि वहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं उदय योग्य प्रकृति साठि सूक्ष्म सांपराय गुणस्थानवत् गुणस्थान एक वहुरि यथाख्यात विषैं उपशांत कषायकी गुणसठिमें तीर्थंकरत्व मिलाएं उदय योग्य प्रकृति साठि गुणस्थान उपशांत कषायादिक च्यारि तिनमें व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् दोय सोलह तीस वारा उदय गुणस्थानवत् गुणसठि सत्तावन वियालीस वारा अनुदय एक तीन अठारह अठतालीस जानना वहुरि देश संयतविषैं देशसंयत गुणस्थानवत् उदय प्रकृति सित्यासी गुणस्थान सोई एक जानना वहुरि असंयमविषैं तीर्थंकर आहारकद्विक विना उदय योग्य प्रकृति एकसो उगणीस गुणस्थान मिथ्यात्वादिक च्यारि तिनमें अनुक्रमतैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच नव एक सतरह उदय गुणस्थानवत् एकसौ सतरह. एकसौ ग्यारह, सौ, एकसौ च्यारि वहुरि तीन प्रकृति मूलमें उदय योग्य नाहीं तातैं अनुदय दोय आठ उगणीस पंद्रह जानना ॥ ३२४ ॥

चक्खुम्मि ण साहारणताविगिबितिजाइ थावरं सुहुमं।
किण्हदुगे सगुणोघं मिच्छे णिरयाणुवोच्छेदो ॥३२५॥

चक्षुषि न साधारणातपैकाद्वित्रिजातिः स्थावरं सूक्ष्मं।
कृष्णद्विके स्वगुणौघो मिथ्ये निरयानुव्युच्छेदः ॥ ३२५ ॥

जी० प्र०—दर्शनमार्गणायां चक्षुर्दर्शने साधारणमातप एकेंद्रियं द्वींद्रियं त्रींद्रियं स्थावरं सूक्ष्मं तीर्थकरत्वं च नेति चतुर्दशोत्तरशतमुदययोग्यं ११४।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि द्वादश १२ । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वापर्याप्ते व्युच्छित्तिः २ । सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं चतुरिंद्रियं च ५ । मिश्रात् क्षीणकषायपर्यंत इगिसत्तरसं अडपंचयचउरछक्कछ्चेवइगिदुगसोलस व्युच्छित्तयः । तथा सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रं सम्यक्त्वं आहारकद्वयं चानुदयः, उदयो दशोत्तरशतं ११० । सासादने द्वे नरकानुपूर्व्यं च मिलित्वानुदयः सप्त ७ । उदयः सप्तोत्तरशतं १०७ । मिश्रेऽनुदयः पंच शेषानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रोदयाच्चतुर्दश १४ । उदयः शतं १०० । असंयतेऽनुदयः एकं संयोज्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयाद्दश १० । उदयश्चतुरुत्तरशतं १०४ । देशसंयते सप्तदश संयोज्यानुदयः सप्तविंशतिः २७ । उदयः सप्ताशीतिः ८७ । प्रमत्तेऽष्ट संयोज्याहारकद्वयोदयादनुदयस्त्रयस्त्रिंशत् ३३ उदयः एकाशीतिः ८१ । अप्रमत्तात्क्षीणकषायपर्यंतमधस्तनव्युच्छित्त्यनुदययोग उपरितनानुदयः स्यात् । अधस्तनव्युच्छित्तौ स्वोदयेऽपनीतायामुपरितनोदयः स्यात् इति व्याप्तिर्ज्ञातव्या । संदृष्टिः—

चक्षुर्दर्शनोदययोग्याः ११४ ॥

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
व्यु	२	५	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६
उ	११०	१०७	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७
अ	४	७	१४	१०	२७	३३	३८	४२	४८	५४	५५	५७

अचक्षुर्दर्शने तीर्थकरत्वं नेत्युदयप्रकृतयः एकविंशत्युत्तरशतं १२१ । गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि द्वादश, व्युच्छित्तयः 'पणणवइगिसत्तरसं अडपंचयचउरछक्कछ्चेव इगिदुगसोलस' एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्वयान्यनुदयः ४ । उदयः सप्तदशोत्तरशतं ११७ । सासादनेऽनुदयः पंच नारकानुपूर्व्यं च मिलित्वा दश १० । उदय एकादशोत्तरशतं १११ । मिश्रेनुदयो नवानुपूर्व्यत्रयं च मिलित्वा मिश्रोदयादेकविंशतिः २१ । उदयः शतं १०० । असंयतेऽनुदय एकां संयोज्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयात्सप्तदश १७ । उदयश्चतुरुत्तरशतं १०४ । देशसंयते सप्तदश संयोज्यानुदयश्चतुस्त्रिंशत् ३४ उदयः सप्ताशीतिः ८७ । प्रमत्तेऽष्ट संयोज्याहारकद्विकोदयादनुदयश्चत्वारिंशत् । उदय एकाशीतिः ८१ ।

अचक्षुर्दर्शनरचना ।

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
५	९	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६
११७	१११	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७
४	१०	२१	१७	३४	४०	४५	४९	५५	६१	६२	६४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अप्रमत्त तु क्षीणकषायपर्यंतमनुदयः पंचचत्वारिंशत् ४५ । एकान्नपंचाशत् ४९ । पंचपंचाशत् ५५ । एकषष्टिः । द्वाषष्टिः ६२ चतुःषष्टिः ६४ । उदयाः छसदरीदुसदरीछावट्ठिसट्ठिगुणवण्णासगवण्णास ।

अवधिदर्शनमार्गणायां अवधिज्ञानवत् षडुत्तरशतमुदययोग्यं । गुणस्थानानि नव । व्युच्छित्तयः सत्तरसं अडपंचयचउरछक्कछच्चेवइगिदुगसोलस । तथा सति अनुदयो द्वयं २ । एकोनविंशतिः १९ । पंचविंशतिः २५ । त्रिंशत् ३० । चतुस्त्रिंशत् ३४ । चत्वारिंशत् ४० । षट्चत्वारिंशत् ४६ । सप्तचत्वारिंशत् । ४७ । एकान्नपंचाशत् ४९ । उदयाः चदुमहियसयं १०४ । सगसीदि ८७ । इगसीदि ८१ । छसदरी ७६ । दुसदरी ७२ । छावट्ठि ६६ । सट्ठि ६० । णवपण्णास ५९ । सगवण्णास ५७ । केवलदर्शने केवलज्ञानवत् । संदृष्टिः—

केवलदर्शनयोग्य ४२

	स	अ
व्यु	३०	१२
उ	४२	१२
अ	०	३०

लेश्यामार्गणायां कृष्णनीलयोस्तीर्थकृदाहारकद्वयं च नेत्युदययोग्यप्रकृतयः एकान्नविंशतिशतं । गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि चत्वारि । कुतः ? 'अयदोत्ति छल्लेस्साओ' इत्युक्तत्वात् । मिथ्यादृष्टौ स्वस्य पंच नरकानुपूर्व्यं च व्युच्छित्तिः ६ सासादनस्य नरकगमनाभावात्, । मिश्रस्यानुपूर्व्यानुदयात्, असंयतस्य द्वितीयादिपृथ्वीष्वनुत्पत्तेश्च तदानुपूर्व्यस्यात्रैव छेदात् । सासादने स्वस्य नव, असंयतागतसुरद्विकसुरायुस्तिर्यगानुपूर्व्याणि च १३ मिश्रे मिश्रं १ । असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं नरकगतिस्तदायुर्वैक्रियिकद्वयं मनुष्यानुपूर्व्यं दुर्भगत्रयं च १२ । तिर्यगानुपूर्व्यं कुतो न ? 'भोगापुण्णगसम्मे काउस्स जहण्णियं हवे' इति नियमात् देवनारकासंयतस्य तु तिर्यक्ष्वनुत्पत्तेः । मनुष्यानुपूर्व्यं कथं स्यात् ? नरकादागच्छत्सम्यग्दृष्टेः कर्मभूम्युत्पत्तिनियमात्तद्धप्रथमकालांतर्मुहूर्ते पूर्वभवलेश्यासद्भावात् । एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वेऽनुदयः, उदयः सप्तदशोत्तरशतं ।

अवधिदर्शनरचना ।

अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
१७	८	५	४	६	६	१	२	१६
१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७
२	१९	२५	३०	३४	४०	४६	४७	४९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

११७। सासादने षट् संयोज्य नुदयोऽष्टौ ८। उदय एकादशोत्तरशतं १११ । मिश्रेऽनुदयः त्रयोदश मनुष्यानुपूर्व्यं च मिलित्वा मिश्रोदयादेकविंशतिः २१ । उदयोष्टानवतिः ९८। असंयतेऽनुदय एकं मिलित्वा सम्यक्त्वमनुष्यानुपूर्व्योदयाद् विंशतिः २०। उदय एकान्नशतं ९९।

कपोतलेश्यायामुदययोग्यं कृष्णनीलवदेकान्नविंशतिशतं ११९। गुणस्थानानि आद्यानि चत्वारि। तत्र मिथ्यादृष्टौ निजपंच व्युच्छित्तिः। सासादने स्वकीयनवासंयतागतसुरद्विकसुरायुषी च १२। मिश्रे मिश्रं १। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं नरकद्विकं तदायुर्वैक्रियिकद्विकं तिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्यौ दुर्भगत्रयं च ११४। एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वे अनुदयः उदयः सप्तदशोत्तरशतं ११७। सासादने पंच नरकानुपूर्व्यं च मिलित्वाऽनुदयोऽष्टौ ८। उदय एकादशोत्तरशतं १११। मिश्रेनुदयो द्वादशानुपूर्व्यद्वयं च संयोज्य मिश्रोदयादेकविंशतिः २१ । उदयोऽष्टानवतिः ९८। असंयतेऽनुदयः एकं संयोज्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यत्रयोदयादष्टादश १८। उदय एकोत्तरशतं १०१।

भवनत्रयदेवानामपर्याप्तकाले अशुभलेश्यात्रयं। पर्याप्तेरुपरि तेजोलेश्याजघन्यांशः। अशुभलेश्यात्रयासंयतानां भवनत्रयाऽनुत्पत्तेर्देवद्विकं देवायुः सासादने व्युच्छित्तिः तादृक् सासादनानां तत्रोत्पत्तेः ॥ ३२५ ॥ तथैवाह—

स० चं०—बहुरि दर्शनमार्गणा विषैं चक्षुर्दर्शन विषैं एकसौ बाईसमैं साधारण १ आतप १ एकेंद्री १ बेंद्री १ तेंद्री १ स्थावर १ सूक्ष्म १ तीर्थंकर एक इन आठ विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ चौदह, गुणस्थान मिथ्यादृष्टि आदिक बारह तहां मिथ्यादृष्टि विषैं व्युच्छित्ति मिथ्यात्व अपर्याप्त ए दोय सासादन विषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ चौंद्री १ एवं पांच मिश्रादिक विषैं गुणस्थानवत् एक सतरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय सोलह प्रकृति व्युच्छित्ति जाननी ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्वमोहनी आहारक द्विक ए च्यारि अनुदय उदय एकसौ दश बहुरि व्युच्छित्ति दोय अर नारकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादनविषैं अनुदय सात उदय एकसौ सात बहुरि व्युच्छित्ति पांच तीन आनुपूर्वीका उदय नाहीं मिश्र मोहनीयका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय चौदह उदय सौ बहुरि असंयतादिकविषैं अनुक्रमतैं गुणस्थानवत् उदय एकसौ च्यारि सित्यासी इक्यासी छिहत्तरि बहत्तरि छ्यासठि गुणसठि साठि सत्तावन जानना बहुरि मूलमैं आठ प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं असंयतादिक विषैं क्रमतैं अनुदय दश सत्ताईस तेतीस अठतीस बियालीस अठतालीस चौवन पचावन सत्तावन जानना, नीचली व्युच्छित्ति ऊपरिका अनुदयमैं मिलावना वा यथायोग्य प्रकृतिका उदय अनुदय विचार लेना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वहुरि अचक्षुदर्शन विषैं तीर्थंकरत्व विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ इकईस गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक वारह तहां व्युच्छिति गुणस्थानवत् पांच नव एक सतरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय सोलह प्रकृति जाननी उदय भी गुणस्थानवत् एकसौ सतरह एकसौ ग्यारह सौ एकसौच्यारि सित्यासी इक्यासी छिहंतर वहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सतावन जानना। मूलमैं एक प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं अनुदय गुणस्थानोक्त अनुदयतैं एक एक धाटि जानना सो मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकर विना अनुदय च्यारि सासादनादिक विषैं क्रमतैं दश इकईस सतरह चौंतीस चालीस पैंतालीस गुणचास पचावन इकसठि वासठि चौंसठि अनुदय जानना। बहुरि अवधि दर्शनविषैं अवधि ज्ञानवत् उदय योग्य प्रकृति एकसौ छह गुणस्थान नव तिन विषैं व्युच्छित्ति उदय अनुदय अवधि ज्ञानरचनावत् जानना वहुरि केवल दर्शन विषैं उदय योग्य प्रकृति वियालीस गुणस्थान दोय तहां रचना केवलज्ञानवत् जाननी। बहुरि लेश्यामार्गणाविषै कृष्ण नील विषैं तीर्थंकर आहारक द्विक विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ उगणीस गुणस्थान मिथ्यादृष्टि आदि च्यारि जातैं 'अयदोत्ति छल्लेस्साओ' इस वचनतैं असंयत पर्यंत छह लेश्या हैं तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् पांच अर एक नारकानुपूर्वी एवं छह जातैं सासादनकैं मरि नरक विषैं गमन नाहीं मिश्रकैं आनुपूर्वीका उदय नाहीं असंयतकैं द्वितीयादि पृथ्वी विषैं उपजना नाहीं है तातैं कृष्ण नील लेश्या रूप नारकानुपूर्वीकी इहां ही व्युच्छित्ति भई है। बहुरि सासादन विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् नव अर असंयत संबंधी देवद्विक २ देवायु १ तिर्यंचानुपूर्वी १ एवं तेरह मिश्र विषैं मिश्रमोहनी असंयत विषैं दूसरा कषाय च्यारि ४ नरकगति १ नरकायु १ वैक्रियिक द्विक २ मनुष्यानुपूर्वी १ दुर्भग आदि तीन ३ एवं वारह इहां 'भोगा पुण्णगसम्मेकाउस्स जहण्णियं हवे' इस नियमतैं तिर्यंचानुपूर्वी इहां न कही है जातैं देवनारकी असंयत तिर्यंचविषैं उपजते नाहीं। वहुरि नरकतैं आया सम्यग्दृष्टीकैं कर्मभूमिका मनुष्यविषैं उपजनेका नियम है तहां पहिले अंतर्मुहूर्त काल पर्यंत पूर्वभव संबंधी लेश्या रहै हैं तातैं मनुष्यानुपूर्वी का उदय असंयतविषैं इहां संभवै है ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी अनुदय २ उदय एकसौ सतरह बहुरि व्युच्छित्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छह तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ उदय एकसौ ग्यारह वहुरि व्युच्छिति तेरह मनुष्यानुपूर्वीका उदय नाहीं अर मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय इकईस उदय अठ्याणवै वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी मनुष्यानुपूर्वीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय वीस उदय निन्याणवै है । बहुरि कपोत लेश्या विषैं कृष्ण नीलवत् उदय योग्य प्रकृति एकसौ उगणीस गुणस्थान आदिके च्यारि तहां मिथ्यादृष्टि विषैं गुणस्थानवत् व्युच्छित्ति पांच सासादन विषैं गुणस्थानवत् नव अर देवगति देवगत्यानुपूर्वी देवायु ए वारह मिश्रविषैं एक मिश्रमोहनी असंयत विषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ नरकगति वा आनुपूर्वी २ नरकायु १ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग २ तिर्यंच मनुष्य आनुपूर्वी २ दुर्भगादि तीन ३ एवं चौदह ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि विषैं सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी अनुदय दोय उदय एकसौ सतरह वहुरि व्युच्छित्ति पांच अर नारकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादन विषैं अनुदय आठ उदय एकसौ ग्यारह वहुरि व्युच्छित्ति बारह आनुपूर्वी दोय का उदय नाहीं, मिश्र मोहनी का उदय, तातैं मिश्र मोहनी विषैं अनुदय इकईस उदय अठ्याणवै वहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं अर सम्यक्त्व मोहनी तीन आनुपूर्वीका उदय तातैं असंयत विषैं अनुदय अठारह उदय एकसौ एक । भवन वासी व्यंतर ज्योतिषी देवनिकैं अपर्याप्त काल विषैं कृष्ण नील कपोत लेश्या ही है । पर्याप्त काल विषैं तेजोलेश्या का जघन्य अंश पाइए वहुरि अशुभ लेश्याका धारक असंयत भवनत्रिक विषैं उपजे नाहीं तातैं देवद्विक देवायु इन तीन प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति सासादन विषैं ही कही ॥ ३२५ ॥ सोई कहै हैं—

साणे सुराउसुरगदिदेवतिरिक्खाणुवोछिदी एवं ।
काओदे अयदगुणे णिरयतिरिक्खाणुवोछेदो ॥३२६॥

सानै सुरायुःसुरगतिदेवतिर्यगानुव्युच्छित्तिरेवं ।
कापोते अयतगुणे निरयतिर्यगानुव्युच्छेदः ॥ ३२६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—ततः कारणात्कृष्णनीलयोः सासादने सुरगत्यायुरानुपूर्व्यतिर्यगानुपूर्व्याणां व्युच्छित्तिरेवं सति त्रयोदश १३ । एवं कपोतलेश्यायामपि एकान्नविंशतिशतमुदययोग्यं भवति ११९ । तदसंयते गुणस्थाने नरकतिर्यगानुपूर्व्ये व्युच्छित्तिरेवं सति तदसंयतप्रथमपृथ्व्यामुत्पद्यते तेन द्वितीयकषायचतुष्कं नरकद्विकवैक्रियिकद्विकं नारकायुस्तिर्यगानुपूर्व्यं दुर्भगत्रयं मनुष्यानुपूर्व्यं चेति चतुर्दश व्युच्छित्तिरित्युक्तं ॥ ३२६ ॥ अथ शुभलेश्यात्रयस्याह—

स० चं०—तातैं कृष्ण नील विषैं सासादन गुणस्थानविषैं देवगति वा आनुपूर्वी देवायु तिर्यंच आनुपूर्वीकी व्युच्छित्ति जाननी गुणस्थानवत् नव सर्व तेरह हैं बहुरि एवं कहिए ऐसैं ही कपोत लेश्या विषै भी उदय योग्य प्रकृति उगणीस है तहां असंयत गुणस्थान विषैं नरक तिर्यंच आनुपूर्वी दुर्भगादि तीन मनुष्य आनुपूर्वी आदि ऐसैं चौदह व्युच्छित्ति है ऐसा कह्या है ॥ ३२६ ॥ आगैं तीन शुभ लेश्याविषैं कहैं हैं—

तेउतिये सगुणोघं णादावेगिविगलथावरचउक्कं ।
णिरयदुतदाउतिरियाणुगं णराणू ण मिच्छदुगे ॥३२७॥

तेजस्त्रये स्वगुणौघो नातपैकविकलस्थावरचतुष्कं ।
निरयद्विकतदायुस्तिर्यगानुकं नरानु न मिथ्याद्विके ॥ ३२७ ॥

जी०प्र०—तेजःपद्मशुक्ललेश्यासु स्वगुणौघः । तत्रातप एकेंद्रियं विकलत्रयं स्थावरं सूक्ष्ममपर्याप्तं साधारणं नरकद्विकं तदायुस्तिर्यगानुपूर्व्यं च नेति नवोत्तरशतमुदययोग्यं भवति । तत्रापि तेजःपद्मयोस्तीर्थकरत्वं नेत्यष्टोत्तरशतं १०८ । गुणस्थानानि सप्ताद्यानि । तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः १ । सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं ४ । मिश्रे मिश्रं १ । असंयते द्वितीयकषायाः सुरद्विकं । वैक्रियिकद्विकं सुरायुर्मनुष्यानुपूर्व्यं दुर्भगत्रयं चेति त्रयोदश । देशसंयते तृतीयकषायास्तिर्यगायुरुद्योतो नीचैर्गोत्रं तिर्यग्गतिश्चेत्यष्टौ ८ । प्रमत्ते आहारकद्विकं स्त्यानगृद्धित्रयं चेति पंच ५ । अप्रमत्ते सम्यक्त्वमंतिमसंहननत्रयं चेति चत्वारि ४ । एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रं सम्यक्त्वमाहारकद्विकं 'णराणू ण मिच्छदुगे' इति मनुष्यानुपूर्व्यं चेति पंचानुदयः ५ उदयस्त्र्युत्तरशतं १०३ । सासादने एकं संयोज्यानुदयः षट् उदयो द्व्युत्तरशतं १०२ । मिश्रेऽनुदयः चतुष्कं देवानुपूर्व्यं च मिलित्वा मिश्रोदयाद्दश १० । उदयोष्टानवतिः ९८ । असंयतेऽनुदये एकं संयोज्य सम्यक्त्वमनुष्यदेवानुपूर्व्योदयादष्टौ ८ । उदयः शतं १०० । देशसंयते त्रयोदश सयोज्यानुदयः एकविंशतिः २१ । उदयः सप्ताशीतिः ८७ । प्रमत्तेऽष्ट संयोज्याहारकद्विकोदयादनुदयः सप्तविंशतिः २७ । उदय एकाशीतिः । अप्रमत्ते पंच संयोज्यानुदयो द्वात्रिंशत् ३२ । उदयः षट्सप्ततिः ७६ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शुक्ललेश्यायां—उदययोग्यं नवोत्तरशतं १०९। गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि त्रयोदश १३। तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वं व्युच्छित्तिः। सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं। मिश्रे मिश्रं। असंयते द्वितीयकषायचतुष्कं, सुरचतुष्कं, सुरायुर्मनुष्यानुपूर्व्यं दुर्भगत्रयं चेति त्रयोदश १३। देशसंयतादिषु यथाक्रमं 'अडपंचयचउरछक्कछच्चेव इगिदुगसोलसवादालं' एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्विकतीर्थकरत्वानि 'णराणू ण मिच्छदुगे' इति मनुष्यानुपूर्व्यं चेत्यनुदयः ६। उदयस्त्र्युत्तरशतं १०३। सासादने एकं संयोज्यानुदयः सप्त ७। उदयो द्व्युत्तरशतं १०२। मिश्रेऽनुदये चतुष्कं देवानुपूर्व्यं च संयोज्य मिश्रोदयादेकादश उदयोऽष्टानवतिः ९८। असंयते एकं संयोज्य सम्यक्त्वदेवमनुष्यानुपूर्व्योदयान्नव ९ उदयः शतं १००। देशसंयते त्रयोदश संयोज्योदयो द्वाविंशतिः २२। उदयः सप्ताशीतिः ८७। प्रमत्तेऽष्टौ संयोज्याहारकद्विकोदयादनुदयोऽष्टाविंशतिः २८। उदय एकाशीतिः ८१। अप्रमत्ते पंच संयोज्यानुदयस्त्रयस्त्रिंशत् ३३। उदयः षट्सप्ततिः ७६। अपूर्वकरणे चतुष्कं संयोज्यानुदयः सप्तत्रिंशत् ३७। उदयो द्वासप्ततिः ७२। अनिवृत्तिकरणेऽनुदयस्त्रिचत्वारिंशत् ४३। उदयः षट्षष्टिः ६६। सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्यानुदय एकान्नपंचाशत् ४९। उदयः षष्टिः ६०। उपशांतकषाये एकं संयोज्यानुदयः पंचाशत् ५०। उदयः एकान्नषष्टिः ५९। क्षीणकषाये द्वे संयोज्यानुदयो द्वापंचाशत ५२। उदयः सप्तपंचाशत् ५७। सयोगे षोडश संयोज्य तीर्थकरत्वोदयादनुदयः सप्तषष्टिः ६७। उदयो द्वाचत्वारिंशत् ४२ ॥ ३२७॥

स० चं०—तेजः पद्म शुक्ल लेश्या विषैं अपना अपना गुणस्थानवत् रचना तहां विशेष जो आतप १ एकेंद्री १ विकल त्रय ३ स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण ४ नरक गति वा आनुपूर्वी नरकायु १ तिर्यंचानुपूर्वी १ इन तेरह विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव तहां भी पीतपद्म विषैं तीर्थकर विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ आठ गुणस्थान सात आदिके तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि विषैं मिथ्यात्व १ सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं मिश्रमोहनी असंयतविषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ देवगति वा आनुपूर्वी २ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग २ देवायु १ मनुष्यानुपूर्वी १ दुर्भगादि तीन ३ एवं तेरह, देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्त विषैं गुणस्थानवत् आठ पांच च्यारि व्युच्छित्ति है ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्वमोहनी आहारकद्विक अर 'णराणू ण मिच्छदुगे' इस वचनकरि मनुष्यानुपूर्वी ए पांच अनुदय उदय एकसौ तीन बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सासादनविषैं अनुदय छह उदय एकसौ दोय बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि देवानुपूर्वीका अनुदय अर मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय दश उदय अठ्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति एकका अनुदय बहुरि सम्यक्त्व मोहनी मनुष्य देवानुपूर्वीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय आठ उदय सौ बहुरि व्युच्छित्ति तेरह तातैं देशसंयतविषैं अनुदय इकईस उदय सित्यासी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि व्युच्छित्ति आठका अनुदय आहारक द्विकका उदय तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय सत्ताईस उदय इक्यासी बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय बत्तीस उदय छिहंतरि है। बहुरि शुक्ल लेश्याविषैं उदय योग्य प्रकृति एकसौ नव गुणस्थान तेरह आदिके तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टयादिक अप्रमत्त पर्यंत पीतपद्मवत् एक च्यारि एक तेरह आठ पांच च्यारि अपूर्वकरणादिकविषैं गुणस्थानवत् छह छह एक दोय सोलह सयोगीविषैं बियालीस प्रकृति जाननी। ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनी आहारकद्विक तीर्थंकर अर 'णराणू ण मिच्छदुगे' इस वचनतैं मनुष्यानुपूर्वी एवं अनुदय छह उदय एकसौ तीन बहुरि व्युच्छित्ति सासादनादिकविषैं अनुदय पीतपद्मतैं एक तीर्थंकरत्वका अधिक है तातैं इहां अनुदय सासादनादिकविषैं सात ग्यारह नव बाईस अठाईस तेतीस जानना । अपूर्वकरणादिक विषैं मूलमैं तेरह प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं गुणस्थानोक्त अनुदयतैं तेरह तेरह घाटि जानना सो अपूर्वकरणादिकविषैं अनुदय क्रमतैं सैंतीस तियालीस गुणचास पचास बावन सतसठि प्रकृतिका जानना । बहुरि उदय सासादनादिकविषैं तौ पीतपद्मवत् एकसौ दोय अठ्याणवै सौ सत्यासी इक्यासी छिहंतरि जानना अपूर्वकरणादिकविषैं गुणस्थानवत् बहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन बियालीस प्रकृतिका जानना ॥ ३२७ ॥

भव्विदरुवसमवेदगखइये सगुणोघमुवसमे खइये ।
ण हि सम्ममुवसमे पुण णादितियाणू य हारदुगं ॥३२८॥

भव्येतरोपशमवेदकक्षायिके स्वगुणौघ उपशमे क्षायिके ।
नहि सम्यगुपशमे पुनर्नादित्रयानु चाहारद्विकं ॥ ३२८ ॥ ४७५

जी०प्र०—भव्याभव्योपशमवेदकक्षायिकसम्यक्त्वमार्गणासु स्वगुणौघः किंतु उपशमसम्यक्त्वे दर्शनमोहस्य प्रशस्तोपशमात् क्षायिकसम्यक्त्वे च क्षयात् सम्यत्वप्रकृतिर्न । पुनः उपशमसम्यक्त्वे नरकतिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्याहारकद्विकमपि न, प्राग्बद्धतदायुषामपि तत्रामरणात ॥ ३२८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—भव्य अभव्य उपशम वेदक क्षायिक सम्यक्त्व इन मार्गणानिविषैं अपना अपना गुणस्थानका सामान्य कथनवत् कथन जानना। विशेष इतना जो उपशम सम्यक्त्वविषैं दर्शनमोहका प्रशस्त उपशम भया है क्षयोपशम सम्यक्त्वकी ज्यों अप्रशस्तपनां नाहीं है तातैं तहां सम्यक्त्व मोहनीका उदय नाहीं है बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वविषैं दर्शन मोहका क्षय भया है तातैं सम्यक्त्व मोहनीका उदय नाहीं है बहुरि उपशम सम्यक्त्वविषैं नरक तिर्यंच मनुष्य आनुपूर्वी ३ आहारक द्विक २ ए भी उदय योग्य नाहीं है जातैं पूर्वै आयुबंध भए भी तहां मरण नाहीं ॥ ३२८ ॥ कैसैं सो कहिए है—

मिस्साहारस्सयया खवगा चडमाडपढमपुव्वा य।
पढमुवसमया तमतमगुडपडिवण्णा य ण मरंति॥१॥
अणसंयोगे मिच्छे मुहुत्तअंतोत्ति णत्थि मरणं तु।
कदकरणिज्जं जाव दु सव्वपरट्ठाण अट्ठपदा॥२॥ जुम्मं।

मिश्राहाराश्रयकाः क्षपकाः चटमानप्रथमापूर्वाश्च।
प्रथमोपशमकाः तमस्तमोगुणप्रतिपन्नाश्च न मरंति॥ १ ॥
अनसंयोगे मिथ्ये मुहूर्तांतरिति नास्ति मरणं तु।
कृतकरणीयं यावत्तु सर्वपरस्थानानि अष्टपदानि ॥ २ ॥

जी० प्र०—निर्वृत्यपर्याप्ता आहारकमिश्रकायाः क्षपका उपशमश्रेण्यारोहकप्रथमभागापूर्वकरणाः प्रथमोपशमसम्यक्त्वाः सप्तमपृथ्वीगुणप्रतिपन्नाश्च न म्रियंते अनंतानुबंधिकषायान्विसंयोज्य मिथ्यात्वं प्राप्तस्यांतर्मुहूर्तपर्यंतं दर्शनमोहक्षपके च कृतकृत्यत्वं यावत्तावन्मरणं नास्ति। तुशब्दाद्बद्धदेवायुष्का उपशमश्रेण्यवतरणेऽपूर्वकरणगुणस्थानावसाने म्रियंते तदा देवासंयता एव जायंते ततो न प्रथमोपशमसम्यक्त्वे नरकतिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्योदयः। द्वितीयोपशमसम्यक्त्वेऽपि देवायुर्विना न शेषायुःसत्त्वं उपशमश्रेण्यारोहणार्थं सातिशयाप्रमत्तेनैव तत्सम्यक्त्वस्य स्वीकरणात् 'अणुवदमह-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बद्धाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तु' इति नियमात् न तदानुपूर्व्यत्रयस्य सत्त्वं। तत उदयोऽपि न। उभयोपशमसम्यक्त्वे आहारकद्वयमाप्तेन तद्द्विकोदयः। तथा सति भव्यमार्गणायां मूलौघ इत्युदययोग्यं द्वाविंशत्युत्तरशतं। गुणस्थानानि चतुर्दश। व्युच्छित्त्यादि गुणस्थानवत्। संदृष्टिः—

भव्यमार्ग=योग्य १२२।

व्यु	५	९	१	१७	८	५	४	६	६	१	२	१६	३०	१२
उ	११७	१११	१००	१०४	८७	८१	७६	७२	६६	६०	५९	५७	४२	१२
अ	५	११	२२	१८	३५	४१	४६	५०	५६	६२	६३	६५	८०	११०

अभव्यमार्गणायामेकं मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं। उदयप्रकृतयः सप्तदशोत्तरशतं ११७। उपशमसम्यक्त्वमार्गणायामसंयतोदये चतुरुत्तरशते 'णादितियाणुयहारदुगं' इत्याद्यानुपूर्व्यत्रयं सम्यक्त्वप्रकृतिश्च नेति शतमुदययोग्यं १००। गुणस्थानान्यसंयतादीन्यष्टौ। तत्रासंयते द्वितीयकषायचतुष्कं सुरनारकायुषी नरकगतिर्देवगतिद्विकं। वैक्रियिकद्विकं दुर्भगत्रयं चेति चतुर्दश व्युच्छित्तिः १४। अत्र प्रथमोपशमसम्यक्त्वापेक्षया नरकगतितदायुषी ज्ञातव्ये। देशसंयते तृतीयकषायाः तिर्यगायुरुद्योतो नीचैर्गोत्रं तिर्यग्गतिश्चेत्यष्टौ। अत्रापि तदपेक्षयैव तिर्यगायुष्यचतुष्कं ज्ञातव्यं। प्रमत्तसंयते उभयोपशमसम्यक्त्वेऽप्याहारकद्वयमाप्तेस्तद्द्वयाभावात् स्त्यानगृद्धित्रयं व्युच्छित्तिः ३। अप्रमत्ते सम्यक्त्वप्रकृत्यभावाच्चरमसंहननत्रयं ३। अपूर्वकरणे षण्णोकषायाः ६। अनिवृत्तिकरणे वेदत्रयं संज्वलनक्रोधादित्रयं च ६। सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मलोभः। उपशांतकषाये वज्रनाराचनाराचद्विकं। एवं सत्यसंयतेऽनुदयः शून्यं सम्यक्त्वाहारकद्वयतीर्थापनयनात्। उदयः शतं १००। देशसंयतेऽनुदयश्चतुर्दश १४ उदयः षडशीतिः ८६। प्रमत्तेऽष्टौ संयोज्यानुदयो द्वाविंशतिः २२। उदयोऽष्टसप्ततिः ७८। अप्रमत्ते त्रयं संयोज्यानुदयः पंचविंशतिः २५। उदयः पंचसप्ततिः। अपूर्वकरणे त्रयं संयोज्यानुदयोऽष्टाविंशतिः २८। उदयो द्वासप्ततिः ७२। अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्यानुदयश्चतुस्त्रिंशत् ३४। उदयः षट्षष्टिः ६६। सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्यानुदयश्चत्वारिंशत् ४०। उदयः षष्टिः ६०। उपशांतकषाये एकां संयोज्यानुदय एकचत्वारिंशत् ४१। उदय एकान्नषष्टिः ५९।

वेदकसम्यक्त्वमार्गणायां स्वगुणौघः इति मिथ्यादृष्ट्यादित्रयस्य पंचनवैकतीर्थं च नेत्युदययोग्यं षडुत्तरशतं १०६। असंयतादिचतुर्गुणस्थानानि। तत्रासंयते कृतकृत्यवेदकस्य चतुर्गतिषु संभवात्तदपेक्षया चत्वार्यानुपूर्व्याणीति सप्तदश व्युच्छित्तिः। देशसंयतेऽष्टौ ८। प्रमत्ते आहारकर्धिसद्भावात्पंच। अप्रमत्ते चतस्रः। उपरितनाश्च षट्षडेका द्वे षोडश त्रिंशदेकादश मिलित्वा षट्सप्ततिः ७६। अपूर्वकरणादिषु तत्सम्यक्त्वाभावात्। एवं सत्यसंयते आहारकद्विकमनुदयः। उदयश्चतुरुत्तरशतं १०४। देशसंयते सप्तदश संयोज्यानुदय एकान्नविंशतिः १९। उदयः सप्ताशीतिः ८७। प्रमत्तेऽनुदयेऽष्ट संयोज्याहारकद्विकोदयात्पंचविंशतिः २५। उदय एकाशीतिः ८१। अप्रमत्ते पंच संयोज्यानुदयस्त्रिंशत् ३०, उदयः षट्सप्ततिः ७६।

क्षायिकसम्यक्त्वमार्गणायां मिथ्यादृष्ट्यादित्रयस्य पंचदश सम्यक्त्वं च नेत्युदययोग्यं षडुत्तरशतं १०६। असंयताद्येकादश गुणस्थानानि। तत्रासंयते स्वस्य सप्तदश १७॥ १—२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्थाके धारी बहुरि आहारकमिश्र योगके धारी बहुरि क्षपकश्रेणीवाले बहुरि उपशम श्रेणी चढ़नेविषैं अपूर्वकरणका प्रथम भागवाले बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व संयुक्त बहुरि तमस्तम सातवी नरक पृथ्वीविषैं सम्यक्त्व गुण साहित जीव एते मरणकौं प्राप्त न होंहि बहुरि अनंतानुबंधीका विसंयोजन-करि अन्य कषायरूप परिणमाइ पीछैं मिथ्यात्वकौं प्राप्त भया होइ ताकैं अंतर्मुहूर्तकालपर्यंत मरण न होइ बहुरि दर्शन मोहका क्षय करनेवाले जीवकैं यावत् कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टीपना होइ तावत् मरण न होइ। तुशब्द-करि जिनके पूर्व देवायुका बंध भया होइ तिनके उपशम श्रेणीका उतरनेविषैं अपूर्व करण गुणस्थान पर्यंत मरण होइ तब मरिकरि असंयत गुणस्थानवर्ती देव ही होइ तातैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषैं नरक तिर्यंच मनुष्य आनु-पूर्वीका उदय नाहीं बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्वविषैं देवायुविना और आयुका सत्त्व नाहीं जातैं उपशम श्रेणी चढने के निमित्ति सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती जीवहीकरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व अंगीकार कीजिए है। बहुरि अणु-व्रत महाव्रत देवायुविना और आयुका बंधवालेकैं होते नाहीं तातैं उपशम सम्यक्त्वविषैं देव विना तीन आनुपूर्वीका सत्त्व नाहीं तातैं उदय भी नाहीं। बहुरि दोऊ उपशम सम्यक्त्वविषैं आहारक ऋद्धिकी प्राप्ति न होइ ऐसैं जानना।

सो भव्य मार्गणाविषैं गुणस्थानवत् उदय योग्य प्रकृति एकसौ वाईस गुणस्थान चौदह तथा व्युच्छित्ति उदय अनुदय सर्व गुणस्थानवत् जानना विशष किछू नाहीं। बहुरि अभव्य मार्गणाविषैं गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि तहां उदय योग्य प्रकृति एकसौ सतरह जाननी बहुरि सम्यक्त्व मार्गणाविषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं असंयतमैं उदय योग्य एकसौं च्यारि तहां 'णादितियाणू य हारदुगं' ऐसे वचनकरि नारक तिर्यंच मनुष्य आनुपूर्वी तीन सम्यक्त्व मोह-नी इन च्यारि विना उदय योग्य प्रकृति सौ गुणस्थान असंयतादिक आठ तहां असंयतविषैं अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ देवनरक आयु २ नरकगति १ देवगति वा आनुपूर्वी २ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग २ दुर्भगादि तीन ३ एवं चौदह व्युच्छित्ति इहां नरकगति नरकायुका उदय प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी अपेक्षा जानना। बहुरि देशसंयतविषैं प्रत्याख्यान कषाय च्यारि४ तिर्यंचायु उद्योत नीचगोत्र तिर्यंचगति ४ ए आठ व्युच्छित्ति, इहां भी तिर्यं-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चायु इत्यादिक च्यारि प्रकृतिनिका उदय प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी अपेक्षा ही जानना। बहुरि प्रमत्तविषैं आहारकद्विक उपशम सम्यक्त्ववालेकैं न होइ यातैं स्त्यानगृद्धित्रिक व्युच्छित्ति है। बहुरि अप्रमत्तविषैं सम्यक्त्व मोहनीका मूलमें उदय नाहीं तातैं अंतके संहनन तीन व्युच्छित्ति बहुरि अपूर्वकरणविषैं छह नोकषाय अनिवृत्ति करणविषैं वेद तीन संज्वलन क्रोधादि तीन एवं छह, सूक्ष्मसांपरायविषैं सूक्ष्म लोभ उपशांत कषायविषैं वज्रनाराच नाराच ए दोय व्युच्छित्ति हैं ऐसैं होतैं असंयतविषैं अनुदय नास्ति उदय सौ बहुरि व्युच्छित्ति चौदह तातैं देश संयतविषैं अनुदय चौदह उदय छियासी बहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय बाईस उदय अठहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति तीन तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय पचीस उदय पिचहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति तीन तातैं अपूर्वकरणविषैं अनुदय अठाईस उदय बहत्तरि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं अनिवृत्ति करणविषैं अनुदय चौंतीस उदय छ्यासठि बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं सूक्ष्मसांपरायविषैं अनुदय चालीस उदय साठि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं उपशांतकषायविषैं अनुदय इकतालीस उदय गुणसठि है बहुरि वेदक सम्यक्त्वविषैं स्वगुणस्थानवत् सो मिथ्यादृष्ट्यादिक तीन गुणस्थानविषैं पांच नव एक ऐसैं पंद्रह व्युच्छित्ति भईं एक तीर्थंकर ऐसैं सोलह विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ छह गुणस्थान असंयतादिक च्यारि तहां असंयत देशसंयत प्रमत्तविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् सतरह आठ पांच बहुरि अप्रमत्तादिककी व्युच्छित्ति च्यारि छह छह एक दोय सोलह तीस तीर्थंकर विना ग्यारह सब मिलि छिहंतरि अप्रमत्तविषैं व्युच्छित्ति जानना जातैं अपूर्व करणादिकविषैं क्षयोपशम सम्यक्त्व नाही ऐसैं होतैं असंयतविषैं आहारकद्विक अनुदय उदय एकसौ च्यारि बहुरि सतरह व्युच्छित्ति तातैं देशसंयतविषैं अनुदय उगणीस उदय सित्यासी बहुरि व्युच्छित्ति आठ का उदय नाही आहारक द्विकका उदय तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय पचीस उदय इक्यासी बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं अप्रमत्तविषैं अनुदय तीस उदय छिहंतरि बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वविषैं मिथ्यादृष्ट्यादिक तीन गुणस्थाननिविषैं व्युच्छित्ति भई पंद्रह अर सम्यक्त्व मोहनी इन विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ छह गुणस्थान असंयतादिक ग्यारह ॥ १–२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खाइयसम्मो देसो णर एव जदो तहिं ण तिरियाऊ।
उज्जोवं तिरियगदी तेसिं अयदम्हि वोच्छेदो ॥ ३२९ ॥

क्षायिकसम्यग् देशो नर एव यतस्तस्मिन् न तिर्यगायुः ।
उद्योतस्तिर्यग्गतिस्तेषामयते व्युच्छेदः ॥ ३२९ ॥

जी० प्र०—क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्देशसंयतो मनुष्य एव ततः कारणात्तत्र तिर्यगायुरुद्योतस्तिर्यग्गतिश्चेति त्रीण्युदये न संति तेन तत्त्रयस्य तत्सप्तदशभिः सहासंयतगुणस्थाने एव व्युच्छित्तिः २० । देशसंयते तत्त्रयाभावात् तृतीयकषाया नीचैर्गोत्रं चेति पंचैव ५ । प्रमत्ते स्वस्य पंच ५ । अप्रमत्ते सम्यक्त्वप्रकृतेः क्षपितत्वात्त्रयं । अपूर्वकरणादिषु 'छक्कछच्चेव इगिदुगसोलसतीसंवारस' एवं सत्यसंयते आहारकद्विकं तीर्थं चानुदयः । उदयस्त्र्युत्तरशतं । १०३ । देशसंयते विंशतिं संयोज्यानुदयस्त्रयोविंशतिः २३ उदयस्त्र्यशीतिः ८३ । प्रमत्ते पंच संयोज्याहारकद्विकोदयादनुदयः षड्विंशतिः २६ । उदयोऽशीतिः ८० । अप्रमत्ते पंच संयोज्यानुदय एकत्रिंशत् ३१ । उदयः पंचसप्ततिः ७५ । अपूर्वकरणे तिस्रः संयोज्यानुदयश्चतुस्त्रिंशत् उदयो द्वासप्ततिः अनिवृत्तिकरणे षट् संयोज्यानुदयश्चत्वारिंशत् ४० । उदयः षट्षष्टिः ६६ । सूक्ष्मसांपराये षट् संयोज्यानुदयः षट्चत्वारिंशत् ४६ । उदयः षष्टिः ६० । उपशांतकषाये एकां संयोज्यानुदयः सप्तचत्वारिंशत् ४७ । उदय एकान्नषष्टिः ५९ । क्षीणकषाये द्वे संयोज्यानुदय एकान्नपंचाशत् ४९ । उदयः सप्तपंचाशत् ५७ । सयोगे षोडश संयोज्य तीर्थोदयादनुदयः चतुःषष्टिः, उदयो द्वाचत्वारिंशत् । अयोगे त्रिंशतं संयोज्यानुदयश्चतुर्णवतिः ९४ । उदयो द्वादश १२ ॥ ३२९ ॥

स० चं०—क्षायिक सम्यग्दृष्टी देशसंयत गुणस्थानवर्ती मनुष्य ही होइ तिर्यंच न होइ तातैं तिर्यंचायु १ उद्योत १ तिर्यंचगति १ इन तीनका उदय पंचम गुणस्थानविषैं नाहीं । इनकी व्युच्छिति चौथे ही भई यातैं असंयत विषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् सतरह अर तिर्यंचायु उद्योत तिर्यंचगति तीन ए अैसे वीस व्युच्छित्ति है बहुरि देश संयतविषैं ते तीन नाहीं तातैं प्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ नीचगोत्र १ अैसैं पांच व्युच्छित्ति हैं प्रमत्तविषैं गुणस्थानवत् पांच अप्रमत्तविषैं सम्यक्त्व मोहनी नाही तातैं तीन बहुरि अपूर्वकरणादिक विषैं गुणस्थानवत् छह छह एक दोय सोलह तीस वारह व्युच्छित्ति जाननी अैसैं होतैं असंयतविषैं आहारकद्विक तीर्थंकर ए अनुदय तीन उदय एकसौ तीन बहुरि व्युच्छित्ति वीस तातैं देश संयतविषैं अनुदय तेईस उदय तियासी बहुरि व्युच्छित्ति पांचका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुदय आहारक द्विकका उदय तातैं प्रमत्तविषैं अनुदय छव्वीस उदय असी बहुरि अप्रमत्तादिक विषैं नीचली व्युच्छित्ति मिलाएं अनुदय अनुक्रमतैं इकतीस चौंतीस चालीस छियालीस सैतालीस गुणचास जानना। बहुरि व्युच्छित्ति सोलह तीर्थकरका उदय तातैं सयोगीविषैं अनुदय चौसठि बहुरि व्युच्छित्ति तीस तातैं अयोगीविषै अनुदय चौराणवैं बहुरि अप्रमत्तादिक विषैं उदय अनुक्रमतैं पिचहत्तरि बहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालीस बारह जानना॥ ३२९॥

सेसाणं सगुणोघं सण्णिस्सवि णत्थि तावसाहरणं।
थावरसुहुमिगिविगलं असण्णिणोवि य ण मणुदुच्चं॥३३०॥

शेषाणां स्वगुणौघः संज्ञिनोऽपि नास्ति आतपसाधारणं।
स्थावरसूक्ष्मैकविकलमसंज्ञिनोऽपि च न मनुद्विकं॥ ३३०॥

जी॰ प्र॰—शेषाणां मिथ्यादृष्टिसासादनमिश्ररुचीनां स्वगुणौघः। तत्र मिथ्यारुचीनां मिश्रसम्यक्त्वाहारकद्वयतीर्थंकरत्वानि नेत्युदययोग्यं सप्तदशोत्तरशतं ११७। सासादनरुचीनां तत्पंचकं मिथ्यादृष्टिः व्युच्छित्तिपंचकं नरकानुपूर्व्यं च नेत्येकादशोत्तरशतं १११। मिश्ररुचीनां मिश्रं विना ता एव दश पुनः अनंतानुबंधिचतुष्कमेकेंद्रियं स्थावरं विकलत्रयं तिर्यग्मनुष्यदेवानुपूर्व्याणि च नेति शतं १००।

संज्ञिमार्गणायामातपसाधारणस्थावरसूक्ष्मैकेंद्रियविकलत्रयतीर्थकरत्वानि नेति त्रयोदशशतमुदययोग्यं। ११३। गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि द्वादश। सयोगायोगौ न संज्ञिनौ भावमनोरहितत्वात्। नाप्यसंज्ञिनौ तिर्यग्भ्योऽन्यत्र तद्व्यपदेशाभावात्। तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वमपर्याप्तं चेति द्वयं व्युच्छित्तिः। सासादनेऽनंतानुबंधिचतुष्कं ४। मिश्रे मिश्रं १। असंयतादिषु 'सत्तरसं अडपंचयचउरछक्कछच्चेव इगिदुगसोलस' सयोगायोगस्य विना तीर्थकरत्वमेकचत्वारिंशत्। ४१। एवं सति मिथ्यादृष्टौ मिश्रं सम्यक्त्वमाहारकद्विकं चानुदयः ४ उदयो नवोत्तरशतं १०९। सासादने द्वे नरकानुपूर्व्यं च मिलित्वानुदयः सप्त ७। उदयः षडुत्तरशतं १०६। मिश्रेऽनुदयश्चतस्रः तिर्यग्मनुष्यदेवानुपूर्व्याणि च संयोज्य मिश्रोदयात्त्रयोदश। १३। उदयः शतं। १००। असंयते एकां संयोज्य सम्यक्त्वानुपूर्व्यचतुष्कोदयादनुदयो नव ९। उदयश्चतुरुत्तरशतं १०४। देशसंयतादिष्वेवमनुदयोदयौ यथाक्रमं षड्विंशतिः सप्ताशीतिः २६, ८७। द्वात्रिंशत् एकाशीतिः ३२, ८१। सप्तत्रिंशत् षट्सप्ततिः। ३७

३३०। ३३१ अंकितयोर्गाथयोरन्योऽन्यं संश्लेषः।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

७६ । एकचत्वारिंशद् द्वासप्ततिः ४१ । ७२ । सप्तचत्वारिंशत् षट्षष्टिः ४७ । ६६ । त्रिपंचाशत् षष्टिः ५३ । ६० । चतुःपंचाशत् एकान्नषष्टिः । ५४ । ५९ षट्पंचाशत् सप्तपंचाशत् ५६ । ५७ ॥ ३३० ॥

वेगुव्वछ पणसंहादिसंठाण सुगमण सुभगआउतियं ।
आहारे सगुणोघं णवरि ण सव्वाणुपुव्वीओ ॥३३१॥ जुम्मं

वैगूर्वषट् पंचसंहतिसंस्थानं सुगमनं सुभगायुस्त्रयं ।
आहारे स्वगुणौघो नवरि न सर्वानुपूर्व्यः ॥३३१॥

जी० प्र०—असंज्ञिमार्गणायां मनुद्विकमुच्चैर्गोत्रं वैक्रियिकषट्कमाद्यसंहननपंचकमाद्यसंस्थानपंचकं प्रशस्तविहायोगतिः सुभगत्रयं नरकमनुष्यदेवायूंषि च मिथ्यादृष्टिः सप्तदशोत्तरशते नेत्येकनवतिरुदययोग्याः ९१ । गुणस्थानद्वयं । तत्र मिथ्यादृष्टौ स्वस्य पंच पुनः स्त्यानगृद्धित्रयपरघातोद्योतोच्छ्वासदुःस्वराप्रशस्तविहायोगतीनां पर्याप्तेरुपर्युदयनियमात्, सासादने स्तोककालत्वात्तद्घटनात् ता अष्टौ च व्युच्छित्तिः । १३ । सासादने स्वस्य नव ९ । तथा सति मिथ्यादृष्टावनुदयः शून्यं । उदय एकनवतिः ९१ । सासादने त्रयोदश संयोज्यानुदयः त्रयोदश १३ । उदयोऽष्टसप्ततिः ७८ ।

आहारमार्गणायां—द्वाविंशत्युत्तरशते चतुरानुपूर्व्यं नेत्यष्टादशोत्तरशतमुदययोग्यं । ११८ । गुणस्थानानि त्रयोदश १३ । तत्र मिथ्यादृष्ट्यादित्रये स्वस्य पंच नवैकं व्युच्छित्तिः । असंयते त्रयोदश १३ । आनुपूर्व्यचतुष्टयस्यापनीतत्वात् । देशसंयतादिषु—'अडपंचयचउरछक्कछच्चेव इगिदुगसोलसबादालं' एवं सति मिथ्यादृष्टौ तीर्थमाहारकद्विकं मिश्रं सम्यक्त्वं चेति पंचानुदयः ५ । उदयस्त्रयोदशशतं ११३ । सासादने पंच संयोज्यानुदयो दश १० उदयोऽष्टोत्तरशतं १०८ । मिश्रे नव संयोज्य मिश्रोदयादनुदयोऽष्टादश १८ । उदयः शतं १०० । असंयते एकां संयोज्य सम्यक्त्वोदयादनुदयोऽष्टादश १८ उदयः शतं १०० । देशसंयतादिष्वनुदयोदयौ एकत्रिंशत् ३१ । सप्ताशीतिः ८७ । सप्तत्रिंशत् ३७ । एकाशीतिः ८१ । द्वाचत्वारिंशत् ४२ । षट्सप्ततिः ७६ । षट्चत्वारिंशत् ४६ । द्वासप्ततिः ७२ । द्वापंचाशत् ५२ षट्षष्टिः ६६ । अष्टपंचाशत् षष्टिः ५८ । ६० । एकान्नषष्टिरेकान्नषष्टिः ५९ । ५९ । एकषष्टिः सप्तपंचाशत् । ६१ । ५७ । षट्सप्ततिर्द्वाचत्वारिंशत् । ७६ । ४२ ॥ ३३१ ॥

स० चं०—अवशेष मिथ्यात्व सासादन मिश्र सम्यक्त्वविषैं अपने अपने गुणस्थानवत् जानना । तहां मिथ्यारुचिविषैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानवत् उदय योग्य प्रकृति एकसौ सतरह गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि । सासादनरुचिविषैं सासादन गुणस्थानवत् उदय योग्य प्रकृति एकसौ ग्यारह गुणस्थान एक सासादन । मिश्ररुचिविषैं मिश्र ४८१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थानवत् उदय योग्यप्रकृति सौ गुणस्थान एक मिश्र। बहुरि संज्ञी मार्गणाविषैं आतप १ साधारण १ स्थावर १ सूक्ष्म १ एकेंद्री १ विकलत्रय ३ तीर्थंकर १ इन विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ तेरह, गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक बारह। सयोगी अयोगी भी मन रहित हैं तातैं संज्ञी न कहिए। बहुरि तिर्यंच विना अन्यत्र असंज्ञी नाहीं कहना तातैं असंज्ञी भी न कहिए। तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टिविषैं मिथ्यात्व अपर्याप्त ए दोय सासादनविषैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ मिश्रविषैं मिश्रमोहनी असंयतादिकविषैं गुणस्थानवत् क्रमतैं सतरह आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय, क्षीणकषायविषैं सोलह अर सयोगी अयोगी संबंधी तीर्थंकरत्व विना इकतालीस असैं सत्तावन व्युच्छित्ति हैं असैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्र मोहनी सम्यक्त्वमोहनी आहारद्विक एवं अनुदय च्यारि उदय एकसौ नव बहुरि व्युच्छित्ति दोय नारकानुपूर्वीका उदय नाहीं तातैं सासादनविषैं अनुदय सात उदय एकसौ छह बहुरि व्युच्छित्ति च्यारि अर तिर्यंच मनुष्य देव आनुपूर्वीका उदय नाहीं मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय तेरह उदय सौ बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहनी आनुपूर्वी च्यारिका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय नव उदय एकसौ च्यारि बहुरि मूलमें नव प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं गुणस्थाननिके अनुदयतैं नव नव धाटि अनुदय देशसंयतादिक विषैं जानना। सो देशसंयतादिकविषैं क्रमतै छब्वीस बत्तीस सैंतीस इकतालीस सैंतालीस तरेपन चौवन छप्पन अनुदय जानना। बहुरि देशसंयतादिक विषैं गुणस्थानवत् क्रमतैं सित्यासी इक्यासी छिहंतरि बहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन उदय जानना। बहुरि असंज्ञी मार्गणा विषैं मनुष्यद्विक २ उच्चगोत्र १ देव नारकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग ए छह ६ आदिके संहनन पांच ५ आदिके संस्थान पांच ५ प्रशस्त विहायोगति १ सुभगादिक तीन ३ नरक मनुष्य देवायु ए छब्वीस प्रकृति मिथ्या दृष्टि संबंधी एकसौ सतरह तिनमें घटाइए तब उदययोग्य प्रकृति इक्याणवै हैं गुणस्थान दोय तहां मिथ्यादृष्टिविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच अर स्त्यानगृद्धित्रिक परघात उद्योत उश्वास दुःस्वर अप्रशस्त विहायोगति इनका उदय पर्याप्त अवस्थामें होइ अर सासादन असैनीकैं पर्याप्त अवस्थामें होइ नाहीं तातैं इनकी भी व्युच्छित्ति मि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थ्यादृष्टिविषैं ही है ऐसैं तेरह व्युच्छित्ति है सासादनविषैं गुणस्थानवत् नव व्युच्छित्ति हैं ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनुदय शून्य ० उदय इक्याणवै बहुरि व्युच्छित्ति तेरह तातैं सासादनविषैं अनुदय तेरह उदय अठहत्तरि है।

बहुरि आहारमार्गणाविषैं च्यारि आनुपूर्वी विना उदय योग्य प्रकृति एकसौ अठारह गुणस्थान आदिके तेरह तहां मिथ्यादृष्ट्यादिक तीनविषैं व्युच्छित्ति गुणस्थानवत् पांच नव एक असंयतविषैं च्यारि आनुपूर्वीविना तेरह देशसंयतादिकविषैं गुणस्थानवत् आठ पांच च्यारि छह छह एक दोय सोलह सयोगीविषैं वियालीस व्युच्छित्ति जाननी ऐसैं होते मिथ्यादृष्टिविषैं गुणस्थानवत् अनुदय पांच उदय एकसौ तेरह बहुरि व्युच्छित्ति पांच तातैं सासादनविषैं अनुदय दश उदय एकसौ आठ बहुरि व्युच्छित्ति नवका उदय नाही मिश्रमोहनीका उदय तातैं मिश्रविषैं अनुदय अठारह उदय सौ बहुरि व्युच्छित्ति एकका उदय नाहीं सम्यक्त्व मोहनीका उदय तातैं असंयतविषैं अनुदय अठारह उदय सौ बहुरि मूलमैं च्यारि प्रकृति उदय योग्य नाहीं तातैं गुणस्थानोक्त उदयतैं देशसंयतादिकविषैं अनुदय च्यारि च्यारि घाटि जानना। उदय गुणस्थानोक्त ही जानना। तहां देशसंयतादिकविषैं क्रमतैं अनुदय इकतीस सैंतीस वियालीस छियालीस वावन अठावन गुणसाठि इकसठि छिहंतरि जानना। बहुरि उदय सित्यासी इक्यासी छिहंतरि वहत्तरि छ्यासठि साठि गुणसठि सत्तावन वियालीस जानना॥ ३३०। ३३१॥

कम्मे व अणाहारे पयडीणं उदयमेवमादेसे।
कहियमिणं बलमाहवचंदच्चियणेमिचंदेण॥ ३३२॥

कार्मे इवानाहारे प्रकृतीनामुदय एवमादेशे।
कथितोऽयं बलमाधवचंद्रार्चितनेमिचंद्रेण॥ ३३२॥

जी० प्र०—अनाहारमार्गणायां कार्मणकाययोगवत्स्वरविहायोगतिप्रत्येकाहारकौदारिकद्विकानि मिश्रप्रकृत्युपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासा वैक्रियिकद्विकं स्त्यानगृद्धित्रयं स्थानषट्कं संहननषट्कं च नेत्येकान्ननवतिरुदययोग्याः ८९, गुणस्थानानि पंच। तत्र मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वापर्याप्त-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूक्ष्माणि व्युच्छित्तिः ३ । सासादने—अनंतानुबंधिचतुष्कमेकेंद्रियं स्थावरं विकलत्रयं स्त्रीवेदश्चेति दश १० । असंयते वैक्रियिकद्विकं विना पंचदश उद्योतं विना सप्त शून्यं सम्यक्त्वप्रकृतिः नोकषायषट्कं स्त्रीवेदं विना पंच सूक्ष्मलोभः शून्यं षोडश चेत्येकपंचाशत् । ५१ । सयोगे सातासातैकतरनिर्माणस्थिरास्थिरशुभाशुभतैजसकार्मणानि वर्णचतुष्कमगुरुलघुकं चेति त्रयोदश १३ । अयोगे स्वस्य द्वादश १२ । एवं सति मिथ्यादृष्टौ सम्यक्त्वं तीर्थं चानुदयः । उदयः सप्ताशीतिः ८७ । सासादनेऽनुदयस्त्रयं नरकद्विकं नरकायुश्च मिलित्वाष्टौ ८ । उदय एकाशीतिः ८१ । असंयते दश संयोज्य सम्यक्त्वतिर्यग्मनुष्यदेवानुपूर्व्योदयादनुदयश्चतुर्दश १४ । उदयः पंचसप्ततिः ७५ । सयोगे एकपंचाशतं संयोज्य तीर्थोदयादनुदयश्चतुःषष्टिः ६४ उदयः पंचविंशतिः २५ । अयोगे त्रयोदश संयोज्यानुदयः सप्ततिः ७७ । उदयो द्वादश । एवं मार्गणास्थाने उदयः, बलदेवनारायणार्चितनेमितीर्थकरेण बलदेवभ्रातृश्रीमाधवचंद्रत्रैविद्यदेवार्चितनेमिचंद्रसैद्धांतचक्रवर्तिना वा कथितः । इत्युदयप्रकरणं समाप्तं ॥ ३३२ ॥ अथ प्रकृतिसत्त्वं गुणस्थानेष्वाह—

स० चं०—बहुरि अनाहार मार्गणाविषैं कार्मणकाययोगवत् निवासी प्रकृति उदय योग्य हैं गुणस्थान पांच तहां व्युच्छित्ति मिथ्यादृष्टि सासादन असंयतविषैं कार्माण काय योगवत् तीन दश इकावन जानना । सयोगीविषैं साता असातामैंस्यों एक वेदनीय १ निर्माण १ स्थिर १ अस्थिर १ शुभ १ अशुभ १ तैजस १ कार्माण १ वर्णादिक च्यारि ४ अगुरुलघु १ ए तेरह व्युच्छित्ति हैं अयोगीविषैं गुणस्थानवत् बारह व्युच्छित्ति हैं ऐसैं होतैं मिथ्यादृष्टि सासादन असंयत सयोगीविषैं अनुदय वा उदय कार्मणकाययोगवत् जानना । तहां अनुदय दोय आठ चौदह चौसठि जानना । उदय सित्यासी इक्यासी पिचहत्तरि पचीस जानना । बहुरि सयोगीविषैं व्युच्छित्ति तेरह तातैं अयोगी विषैं अनुदय सतहत्तरि उदय बारह ऐसैं आदेश जो मार्गणास्थान तीहिविषैं उदय है सो बल कहिए बलभद्र अर माधव कहिए नारायण इनकरि अर्चित कहिए पूजित ऐसे नेमिचंद्र कहिए नेमिनाथ तीर्थंकर सो भया चंद्रमा ताकरि कह्या है अथवा बल कहिए बलदेव अपना भाई अर माधव कहिए माधवचंद्र त्रैविद्यदेव इनकरि अर्चित पूजित ऐसा नेमिचंद्र सिद्धांत चक्रवर्ती ताकरि कह्या है सो जानना ॥ ३३२ ॥ इति उदयप्रकरण समाप्त । आगैं सत्ताका निरूपण कीजिए है तहां गुणस्थाननिविषैं सत्त्व कहिए है—

तित्थाहारा जुगवं सव्वं तित्थं ण मिच्छगादितिए । ४८४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तस्सत्तकाम्मियाणं तग्गुणठाणं ण संभवदि ॥ ३३३ ॥

तीर्थहारा युगपत्सर्वं तीर्थं न मिथ्यकादित्रये ।
तत्सत्वकर्मकाणां तद्गुणस्थानं न संभवति ॥ ३३३ ॥

जी०प्र०—मिथ्यादृष्टौ तीर्थकृत्त्वसत्त्वे आहारकद्वयसत्त्वं न । आहारकद्वयसत्त्वे च तीर्थकृत्त्वसत्त्वं न, उभयसत्त्वे तु मिथ्यात्वाश्रयणं न तेन तद् द्वयं । तत्र युगपदेकजीवापेक्षया न । नानाजीवापेक्षयास्ति ततोऽष्टचत्वारिंशदुत्तरशतं सत्त्वं । सासादने तदुभयमपि एकजीवापेक्षयाऽनेकजीवापेक्षया च क्रमेण युगपद्वा सत्त्वं नेति पंचचत्वारिंशदुत्तरशतं १४५ । मिश्रे तीर्थकरत्वसत्त्वं न सप्तचत्वारिंशदुत्तरशतं सत्त्वं १४७ । कुतः ? तत्सत्कर्मणां जीवानां तद्गुणस्थानं न संभवतीति कारणात् ॥ ३३३ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं जाकैं तीर्थंकरत्वका सत्व होइ ताकैं आहार द्विकका सत्व न होइ जाकैं आहारक द्विकका सत्त्व होइ ताकैं तीर्थंकरत्वका सत्त्व न होइ बहुरि दोऊनिका सत्व होतैं मिथ्यात्व न होइ तातैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं युगपत् एक जीवकी अपेक्षा तीर्थंकरत्व आहारकाद्विक इन दोऊनिका सत्व न होइ एकहीका होइ बहुरि अनुक्रमतैं वा नाना जीवकी अपेक्षा तिन दोऊनिका सत्त्व पाइए है। बहुरि सासादनविषैं एक जीवकी अपेक्षा वा अनेक जीवकी अपेक्षा क्रमतैं वा युगपत् तीर्थंकरत्वका अर आहारद्विकका सत्व न पाइए है। बहुरि मिश्रविषैं एक तीर्थंकरत्वका सत्त्व न पाइए है जातैं इन प्रकृतिनिका जिनकैं सत्त्व होइ तिनकौं सो गुणस्थान न संभवै है ॥ ३३३ ॥

चत्तारिवि खेत्ताइं आउगबंधेण होइ सम्मत्तं ।
अणुवदमहव्वदाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥ ३३४ ॥

चतुर्णामपि क्षेत्राणामायुष्कबंधेन भवति सम्यक्त्वं ।
अणुव्रतमहाव्रतानि न लभते देवायुष्कं मुक्त्वा ॥ ३३४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—चतुर्णां क्षेत्राणां गतीनां संबंध्यायुर्बंधेनापि जीवस्य सम्यक्त्वं भवति। तत्र देवगत्यायुर्मुक्त्वा शेषैकतरगतिबद्धायुष्कस्तिर्यङ् अणुव्रतं मनुष्योऽणुव्रतं महाव्रतं वा न लभते तेषां तत्तद्व्रतपरिणामकारणविशुद्धकषायपरिणामस्थानोदयासंभवात् ॥ ३३४ ॥

स० चं०—च्यारि जे क्षेत्र कहिए गति तिन संबंधी जिनके आयु बंधी होइ तिनकैं सम्यक्त्व होइ बहुरि देवायु विना और गति संबंधी आयु जिनकैं बंधी होइ ते तिर्यंच तौ अणुव्रतकौं अर मनुष्य अणुव्रत वा महाव्रतकौं न पावै भावार्थ—जो पहिले च्यारि आयु विषैं किसी आयुका बंध भया होइ अर पीछैं सम्यक्त्वकौं धारै तौ धारौ किछू दोष नाहीं। बहुरि जो पहिले नरक तिर्यंच मनुष्यायुका बंध भया होइ तौ अणुव्रत महाव्रतनिके धारनेकौ समर्थ न होइ। एक देवायुका बंध पहिले भया होइ अर अणुव्रत महाव्रत धारै तो धारै किछू दोष नाहीं जातैं और आयुका जिनकैं बध भया होइ तिनकैं व्रत परिणामकौं कारण विशुद्ध रूप कषायनिके उदय संभवै नाहीं ॥३३४॥

णिरयातिरिक्खसुराउगसत्ते ण हि देससयलवदखवगा।
अयदचउक्कं तु अणं अणियट्टीकरणचरिमम्हि ॥ ३३५ ॥

निरयतिर्यक्सुरायुष्कसत्त्वे नहि देशसकलव्रतक्षपकाः।
अयतचतुष्कस्तु अनमनिवृत्तिकरणचरमे ॥ ३३५ ॥

जी० प्र०—नरकतिर्यग्देवायुस्सु भुज्यमानबध्यमानोभयप्रकारेण सत्त्वेषु सत्सु यथासंख्यं देशव्रताः सकलव्रताः क्षपका नैव स्युः। तु-पुनः, असंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिनोऽनिवृत्तिकरणपरिणामकालांतर्मुहूर्तचरमसमयेऽनंतानुबंधिकषायचतुष्कं—॥ ३३५ ॥

जुगवं संजोगित्ता पुणोवि अणियट्टिकरणबहुभागं।
वोलिय कमसो मिच्छं मिस्सं सम्मं खवेदि कमे ॥ जुम्मं ॥

युगपद्विसंयोज्य पुनरपि अनिवृत्तिकरणबहुभागं।
व्यतीत्य क्रमशो मिथ्यं मिश्रं सम्यक् क्षपयति क्रमेण ॥ ३३६ ॥ युग्मं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—युगपदेव विसंयोज्य द्वादशकषायनोकषायरूपेण परिणमय्य अंतर्मुहूर्तकालं विश्रम्य पुनरप्यनंतानुबंधिविसंयोजनवद्दर्शनमोहक्षपणोद्योगेपि स्वीकृतकरणलब्धावधःप्रवृत्तापूर्वाऽनिवृत्तिकरणेषु तदुत्पन्नानिवृत्तिकरणकालांतर्मुहूर्तसंख्यातबहुभागं २ृ $\frac{१ \, ^\frown}{४ \atop ४}$ अतीत्यैकभागे प्रथमसमयात्प्रभृतिमिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृती: क्रमेण क्षपयति । ततः क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्भवति तथा सति मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने कश्चिदाहारकद्वयमुद्वेल्य नरकायुर्बध्वाऽसंयतो भूत्वा तीर्थं बद्ध्वा द्वितीयतृतीयपृथ्वीगमनकाले पुनर्मिथ्यादृष्टिर्भवतीत्येकजीवे क्रमेण नानाजीवे युगपत्तीर्थाहाराः स्युः इति तत्र सत्त्वमष्टचत्वारिंशदुत्तरशतं १४८ । सासादने क्रमाक्रमाभ्यां तदसत्वात् पंचचत्वारिंशदुत्तरशतं १४५ । मिश्रे तीर्थकृदसत्वात्सप्तचत्वारिंशदुत्तरशतं । असंयते सप्तप्रकृतिसत्त्वजीवानामष्टचत्वारिंशदुत्तरशतं । १४८ । देशसंयते तेषामेव नरकायुरसत्त्वात्सप्तचत्वारिंशदुत्तरशतं १४७ । प्रमत्तसंयते तेषामेव नरकतिर्यगायुरसत्त्वात् षट्चत्वारिंशदुत्तरशतं १४६ । अप्रमत्तेऽपि तथैव षट्चत्वारिंशदुत्तरशतं १४६ । क्षपकश्रेण्यारूढानामपूर्वकरणेऽष्टत्रिंशदुत्तरशतं । १३८ । सप्तप्रकृतीनामसंयतादिचतुर्गुणस्थानेष्वेकत्र क्षपितत्वान्नरकतिर्यग्देवायुषां चाबद्धायुष्कत्वेनासत्त्वात् ॥ ३३६ ॥ अनिवृत्तिकरणादिषु क्षययोग्यानां क्रममाह—

स० चं०—विद्यमान जिस आयुकौं भोगवै सो भुज्यमान अर आगामी जाका बंध कीया सो बध्यमान ऐसै दोऊ प्रकार अपेक्षाकरि नरकायुका सत्व होतैं देशव्रत न होइ नरक तिर्यंचायुका सत्व होतैं सकलव्रत न होइ नरक तिर्यंच देवायुका सत्व होतैं क्षपकश्रेणी न होइ बहुरि अनंतानुबंधी च्यारि अर दर्शन मोहनी तीन इन सातनिकी सत्ताका असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं किसी एक गुणस्थानविषैं नाशकरि क्षायिक सम्यग्दृष्टी होइ । सो कैसैं नाश करै सो कहिए है—

प्रथम तीन करण करै तहां अनिवृत्तिकरणका अंतर्मुहूर्त काल ताका अंत समयविषैं अंनतानुबंधीकी चौकडी ताकौं कहा करै सो कहिए है—

तिस अनंतानुबंधीके चतुष्ककौं युगपत् एकही वार विसंयोजन करै बारह कषाय वा नोकषाय रूप परिणमावै ऐसैं विसंयोजन करि अंतर्मुहूर्त काल विश्राम करै तहां पीछैं दर्शन मोहका नाशका उद्यमी होइ पहिले बहुरि अधःकरण अपूर्वकरण अनिवृत्ति करण करै तहां अनिवृत्ति करणका जो अंतर्मुहूर्त मात्र काल ताकौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संख्यातका भाग दीजए तामैं एक भाग अवशेष रहै और बहुभाग सर्व व्यतीत होइ जाइ तब तिस एक भागका पहिला समयस्यों लगाइ पहिलैं तौ मिथ्यात्व प्रकृतिका क्षय करै तहां पीछैं मिश्रप्रकृतिका क्षयकरै तहां पीछैं सम्यक्त्व प्रकृतिका क्षय करै तब क्षायिक सम्यग्दृष्टी हो हैं। सो अब गुणस्थाननिविषैं सत्ता कहिए है—

मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं एक जीवकी अपेक्षा आहारक द्विक अर तीर्थंकरका सत्त्व अनुक्रमकरि पाइए है कैसें? कोई जीव ऊपरला गुणस्थाननिमैं आहारकका बंधकरि मिथ्यात्व गुणस्थानविषैं आय आहारक द्विकका उद्वेलन कीया बंध भया था ताकौं दूरि कीया पीछैं नरकायुका बंध कीया तहां पीछैं असंयत गुणस्थानवर्ती होइ तीर्थंकर प्रकृतिका बंध कीया पीछैं दूसरी वा तीसरी नरक पृथ्वीकौं जानेका कालविषैं मिथ्यादृष्टी बहुरि भया ऐसैं एक जीवकैं अनुक्रमकरि आहारद्विक वा तीर्थंकरका सत्त्व पाइए है बहुरि नाना जीवकी अपेक्षा युगपत् पाइए है एकही कालविषैं कोई जीवकै आहारक द्विकका सत्त्व पाइए है कोऊ जीवकैं तीर्थंकरत्वका सत्त्व पाइए है ऐसैं मिथ्यादृष्टिविषै तीर्थंकर आहारकका सत्त्व पाइए है अर अन्य प्रकृतिनिका सत्त्व प्रगट है ही तातैं मिथ्यादृष्टिविषैं सत्त्व एकसौ अठतालीस है। बहुरि सासादनविषैं आहारक द्विक वा तीर्थंकरत्वका सत्त्व किसी भी प्रकार नाहीं तातैं सत्त्व एकसौ पैतालीस है। बहुरि मिश्रविषैं तीर्थंकरत्वका सत्त्व कोई प्रकार नहीं तातैं सत्त्व एकसौ सैंतालीस है और असंयतादिक विषै जिनकैं अनंतानुबंधी चतुष्क दर्शन मोह तीन इनकी सत्ता पाइए है ऐसे उपशमी वा क्षायोपशमी सम्यग्दृष्टी जीव तिनकैं असंयतविषैं तो सत्त्व एकसौ अठतालीस देश संयतविषैं नरकायुविना सत्व एकसौ सैंतालीस प्रमत्तविषैं नरकायु तिर्यंचायु विना सत्व एकसौ छियालीस अप्रमत्तविषैं भी तैसैं हीं सत्व एकसौ छियालीस है। बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टीकैं इन गुणस्थाननिविषैं सात सात प्रकृति घाटि सत्व जानना। बहुरि अपूर्व करणादिकविषैं दोय श्रेणी हैं एक क्षपक श्रेणी एक उपशमक श्रेणी तहां प्रथम क्षपक श्रेणी अपेक्षा कथन कीजिए है—

तहां अपूर्व करणविषैं सत्व एकसौ अठतीस जातैं सात प्रकृतिनिका असंयतादिक किंसी एक गुणस्थानविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षय किया है अर नरक तिर्यंच देवायुका याकैं सत्त्व न होइ जातैं जाकैं आयुबंध न भया होइ सोई क्षपक श्रेणी माडै है ऐसैं एकसौ अडतीसकी सत्ता है ॥ ३३६॥ आगैं अनिवृत्ति करणादिकविषैं क्षय योग्य प्रकृतिनिका अनुक्रम कहैं हैं—

सोलट्ठेक्किगिछक्कं चदुसेक्कं बादरे अदो एक्कं।

खीणे सोलसऽजोगे बावत्तरि तेरुवत्तंते ॥ ३३७ ॥

षोडशाष्टैकैकषट्कं चतुर्ष्वेकं वादरे अत एकं।

क्षीणे षोडशायोगे द्वासप्ततिस्त्रयोदश उपरिमांते ॥ ३३७ ॥

जी० प्र०—अनिवृत्तिकरणगुणस्थाने क्रमेण षोडशाष्टावेकमेकं षट्कं चतुर्ष्वेकैकं सत्त्वव्युच्छित्तिः। अत उपरि सूक्ष्मसांपरायेप्येकं। क्षीणे षोडश। सयोगे शून्यं। अयोगे द्विचरमसमये द्वासप्ततिः, चरमसमये त्रयोदश ॥ ३३७ ॥ ताः षोडशादिप्रकृतयः काः ? इति चेदाह—

स० चं०—इहां प्रकृतिनिकी सत्त्व व्युच्छित्ति कहैं हैं सो जहां जिन प्रकृतिनिकी व्युच्छित्ति होइ तिसतैं ऊपरि तिन प्रकृतिनिकी सत्ताका अभाव जानना। तहां अनिवृत्तिकरण गुणस्थानविषैं अनुक्रमतैं सोलह आठ एक एक अर छह च्यारिविषैं एक एक प्रकृति सत्तातैं व्युच्छित्ति है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं एक, क्षीणकषाय विषैं सोलह, सयोगीविषैं शून्य, अयोगीविषैं अयोगीका अंतका दोय समयनिविषैं—द्विचरमसमयविषैं बहत्तरि बहुरि अंतसमयविषैं तेरह सत्वतैं व्युच्छित्ति है ॥ ३३७ ॥ ते सोलहकौं आदि देकर प्रकृति कौंन ? सो कहैं हैं—

णिरयातिरिक्खदु वियलंथीणतिगुज्जोवतावएइंदी।

साहरणसुहुमथावर सोलं मज्झिमकसायट्ठं ॥ ३३८ ॥

निरयतिर्यग्द्वि विकलस्त्यानत्रिकमुद्योतातपैकेंद्रियं।

साधारणसूक्ष्मस्थावरं षोडश मध्यमकषायाष्टौ ॥ ३३८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—नरकद्विकं तिर्यग्द्विकं विकलत्रयं स्त्यानगृद्धित्रयमुद्योतः आतपः एकेंद्रियं साधारणं सूक्ष्मं स्थावरं चेति षोडश । अप्रत्याख्यान-प्रत्याख्यानकषाया अष्टौ ८ ॥ १३८ ॥

स० चं०—नरकगति वा आनुपूर्वी तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी २ विकलत्रिक ३ स्त्यानगृद्धित्रिक ३ उद्योत १ आतप १ एकेंद्री १ साधारण १ सूक्ष्म १ स्थावर १ ए सोलह अनिवृत्ति करणका पहिला भागविषैं व्युच्छित्ति हैं। बहुरि अप्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ प्रत्याख्यान कषाय च्यारि ४ ए मध्यम आठ कषाय दूसरा भागविषैं व्युच्छित्ति है ॥ ३३८ ॥

संढित्थि छक्कसाया पुरिसो कोहो य माण मायं च ।
थूले सुहुमे लोहो उदयं वा होदि खीणम्हि ॥ ३३९ ॥

षंढस्त्री षट्कषायाः पुरुषः क्रोधश्च मानं माया च ।
स्थूले सूक्ष्मे लोभ उदयो वा भवति क्षीणे ॥ ३३९ ॥

जी० प्र०—क्रमेण षंढवेदः स्त्रीवेदो नोकषायषट्कं पुंवेदः संज्वलनक्रोधः संज्वलनमानः संज्वलनमाया एताः स्थूले अनिवृत्तिकरणे व्युच्छिन्ना भवंति । सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मसंज्वलनलोभ., क्षीणकषाये उदयवत्षोडश, सयोगे शून्यं ॥ ३३९ ॥

स० चं०—बहुरि नपुंसक वेद तीसरा भागविषैं, स्त्रीवेद चौथा भागविषैं, छह नोकषाय पांचवां भागविषै, पुरुषवेद संज्वलन क्रोध संज्वलन मान संज्वलन माया ए च्यारि छठा सातवां आठवां नवां भागविषैं अनुक्रमतैं व्युच्छित्ति हैं ऐसैं स्थूल कहिए अनिवृत्ति करण तामैं छत्तीस प्रकृति व्युच्छित्ति हैं। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं संज्वलन लोभ व्युच्छित्ति है क्षीणकषायविषैं व्युच्छित्ति उदयवत् पांच ज्ञानावरण दर्शनावरण च्यारि पांच अंतराय निद्रा प्रचला ए सोलह व्युच्छित्ति हैं सयोगीविषैं व्युच्छित्ति नास्ति है ॥ ३३९ ॥

देहादीफस्संता थिरसुहसरसुरविहायदुग दुभगं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिमिणाजसऽणादेज्जं पत्तेया पुण्ण अगुरुचऊ ॥ ३४० ॥
अणुदयतदियं णीचमजोगिदुचरिमम्मि सत्तवोच्छिण्णा ।
उदयगबार णराणू तेरस चरिमम्हि वोच्छिण्णा ॥३४१॥जुम्मं

देहादिस्पर्शाताः स्थिरशुभस्वरसुरविहायोद्विकं दुर्भगं ।
निर्माणायशोनादेयं प्रत्येकापूर्णमगुरुचत्वारि ॥ ३४० ॥
अनुदयतृतीयं नीचमयोगिद्विचरमे सत्त्वव्युच्छिन्नाः ।
उदयगद्वादश नरानुः त्रयोदश चरमे व्युच्छिन्नाः ॥ ३४१ ॥ युग्मं ।

जी० प्र०—पंचशरीरपंचबंधनपंचसंघातषट्संस्थानत्र्यंगोपांगषट्संहननपंचवर्णद्विगंधपंचरसाष्टस्पर्शाः स्थिरशुभसुस्वरसुरविहायोगतिद्विकानि दुर्भगनिर्माणमयशस्कीर्तिरनादेयं प्रत्येकमपर्याप्तमगुरुलघूपघातपरघातोच्छ्वासा अनुदयवेदनीयं नीचैर्गोत्रं चेति द्वासप्ततिरयोगिद्विचरमसमये सत्त्वव्युच्छित्तिः । चरमसमये उदयगततृतीयैकादिद्वादश; मनुष्यानुपूर्व्यं चेति त्रयोदश । एवं सत्यनिवृत्तिकरणप्रथमभागे असत्त्वं दश सत्त्वमष्टात्रिंशदुत्तरशतं, तद्द्वितीयस्थाने षोडश संयोज्यासत्त्वं षड्विंशतिः सत्त्वं द्वाविंशत्युत्तरशतं । तृतीयस्थानेऽष्टौ संयोज्यासत्त्वं चतुस्त्रिंशत्, सत्वं चतुर्दशोत्तरशतं । चतुर्थस्थाने एकां संयोज्यासत्वं पंचत्रिंशत्, सत्त्वं त्रयोदशोत्तरशतं । पंचमस्थाने एकां संयोज्यासत्त्वं षट्त्रिंशत्, सत्वं द्वादशोत्तरशतं । षष्ठस्थाने षट्संयोज्यासत्वं द्वाचत्वारिंशत्, सत्त्वं षडुत्तरशतं । सप्तमस्थाने एकां संयोज्यासत्त्वं त्रिचत्वारिंशत्, सत्वं पंचोत्तरशतं । अष्टमस्थाने एकां संयोज्यासत्त्वं चतुश्चत्वारिंशत्, सत्त्वं चतुरुत्तरशतं । नवमस्थाने एकां संयोज्यासत्त्वं पंचचत्वारिंशत्, सत्त्वं त्र्युत्तरशतं । सूक्ष्मसांपराये एकां संयोज्यासत्त्वं षट्चत्वारिंशत् सत्त्वं द्व्युत्तरशतं । क्षीणकषाये सूक्ष्मलोभं संयोज्यासत्वं सप्तचत्वारिंशत् । सत्त्वमेकोत्तरशतं । सयोगे षोडश संयोज्यासत्त्वं त्रिषष्टिः सत्वं पंचाशीतिः । अयोगे द्विचरमसमयपर्यंतमसत्त्वं त्रिषष्टिः सत्त्वं पंचाशीतिः, चरमसमये द्वासप्तति संयोज्यासत्त्वं पंचत्रिंशदुत्तरशतं, सत्त्वं त्रयोदश । ॥ ३४०–३४१ ॥ अथोक्तस्थानासत्त्वे प्राह—

स० च०—पांच शरीर ५ पांच बंधन ५ पांच संघात ५ छह ६ संस्थान तीन अंगोपांग ३ छह संहनन ६ पांच वर्ण ५ दोय गंध २ पांच रस ५ आठस्पर्श ८ स्थिर अस्थिर २ शुभ अशुभ २ सुस्वर दुःस्वर २ देवगति वा आनुपूर्वी २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रशस्त अप्रशस्तविहायोगति २ दुर्भग १ निर्माण १ अयशस्कीर्ति १ अनादेय १ प्रत्येक १ अपर्याप्त १ अगुरुलघु १ उपघात १ परघात १ उस्वास १ जाका उदय न पाइए ऐसी साता वा असाताविषैं एक वेदनीय १ नीचगोत्र १ ए बहत्तरि प्रकृति अयोगीका द्विचरम समयविषैं व्युच्छित्ति हैं बहुरि जिनका उदय अयोगीविषैं पाइए ऐसे साता वा असाता वेदनीय एक १ मनुष्यगति १ पंचेंद्री १ सुभग १ त्रस १ वादर १ पर्याप्त १ आदेय १ यशस्कीर्ति १ तीर्थंकरत्व १ मनुष्यायु १ उच्चगोत्र १ ए बारह अर मनुष्यानुपूर्वी १ एवं तरह प्रकृति अयोगीका अंतके समय व्युच्छित्ति भई। ऐसैं होतैं असत्व सत्व कहिए है—

जो जिन प्रकृतिनिकी सत्ता न पाइए सो असत्व कहिए, जिनकी सत्ता पाइए सो सत्व कहिए सो अनिवृत्ति करणका पहिला भागविषैं असत्व दश, सत्व एकसौ अठतीस बहुरि व्युच्छित्ति सोलह तातैं अनिवृत्ति करणका दूसरा स्थानविषै असत्व छव्वीस सत्व एकसौ वाईस बहुरि व्युच्छित्ति आठ तातैं तिसहीका तीसरा स्थानविषैं असत्व चौंतीस सत्व एकसौ चौदह बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं चौथा स्थानविषैं असत्व पैंतीस सत्व एकसौ तेरह बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं पांचवां स्थानविषैं असत्व छत्तीस सत्व एकसौ बारह बहुरि व्युच्छित्ति छह तातैं छठा स्थानविषैं असत्व बियालीस सत्व एकसौ छह बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सातवां स्थानविषैं असत्व तियालीस सत्व एकसौ पांच बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं आठवां स्थानविषैं असत्व चवालीस सत्व एकसौ च्यारि बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं अनिवृत्ति करणका नवमां स्थानविषैं असत्व पैंतालीस सत्व एकसौ तीन बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं सूक्ष्मसांपरायविषैं असत्व छियालीस सत्व एकसौ दोइ बहुरि व्युच्छित्ति एक तातैं क्षीणकषायविषैं असत्व सैंतालीस सत्व एकसौ एक बहुरि व्युच्छित्ति सोलह तातैं सयोगीविषैं असत्व तरेसठि सत्व पिच्यासी बहुरि व्युच्छित्ति नास्ति तातैं अयोगीका द्विचरम समय पर्यंत असत्व तरेसठि सत्व पिच्यासी बहुरि व्युच्छित्ति बहत्तरि तातैं अयोगीका अंत समयविषैं असत्व एकसौ पैंतीस सत्व तेरह ॥ ३४० – ३४१ ॥ ऐसैं कह्या जो सत्व असत्व तिनकौं आचार्य कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णभतिगिणभइगि दोद्दो दस दससोलट्ठगादिहीणेसु ।
सत्ता हवंति एवं असहायपरक्कमुद्दिट्ठं ॥ ३४२ ॥

नभस्त्र्येकनभ एकं द्वे द्वे दश दश षोडशाष्टकादिहीनेषु ।
सत्ता भवंति एवमसहायपराक्रमोद्दिष्टं ॥ ३४२ ॥

जी०प्र०–मिथ्यादृष्टावसत्त्वं शून्यं । सासादने त्रिकं । मिश्रे एकं । असंयते शून्यं । देशसंयते एकं । प्रमत्ते द्वयं । अप्रमत्ते द्वयं । अपूर्वकरणे दश । अनिवृत्तिकरणप्रथमभागे दश । द्वितीयतृतीयादिभागेषु षोडशाष्टकादिहीनेषु पूर्वोक्तक्रमेण सत्त्वानि स्युरित्यसहायपराक्रमेण वर्धमानस्वामिना प्ररूपितं । अनिवृत्तिकरणगुणस्थानोक्तषोडशाष्टकादिसत्त्वव्युच्छित्तीनां क्षपणाविधानरचनासंदृष्टिः ।

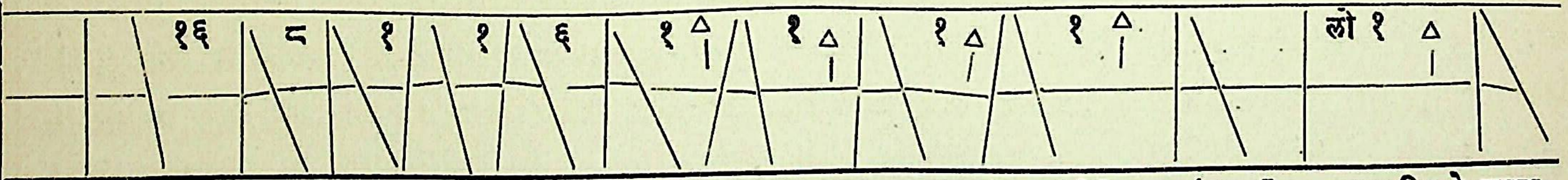

अत्रानिवृत्तिकरणे बादरलोभं क्षपयति सूक्ष्मकृष्टीः करोति । ताः कृष्टयः सूक्ष्मसांपराये उदयंतीति ज्ञातव्यं । अस्मिन् क्षपणाविधाने उदयागतपुंवेदादीनामेकनिषेकः एकसमयस्थितिकः । द्वौ निषेकौ द्विसमयस्थितिकावेवं क्रमः । अनुदयगतनपुंसकवेदादीनां च क्षपितावशेषोच्छिष्टस्य समयाधिकावलिः स्थितिः स्यात्, एकनिषेको द्विसमयस्थितिकः, द्वौ निषेकौ त्रिसमयस्थितिकाविति क्रमस्य सद्भावात् । अनुदयगतानां परमुखोदयत्वेन समयसमयोदया एकैकनिषेकाः स्थितोक्तसंक्रमेण संक्रम्य गच्छंतीति स्वमुखपरमुखोदयविशेषोऽवमंतव्यः । संदृष्टिः—

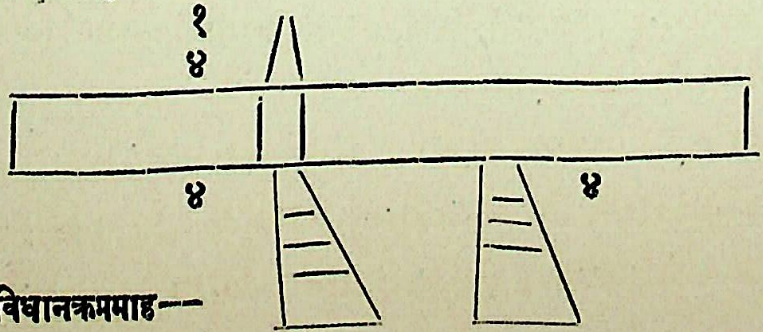

॥३४२॥ अथैकविंशतिचारित्रमोहनीयोपशमविधानक्रममाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं० च०—असत्व मिथ्यादृष्टिविषै शून्य ० सासादनविषैं तीन मिश्रविषैं एक असंयतविषैं शून्य देशसंयतविषैं एक प्रमत्तविषैं दोय अप्रमत्तविषैं दोय अपूर्वकरणविषैं दश अनिवृत्तिकरणका पहिला भागमें दश दूसरा तीसरा भागादिकमें सोला आठ इत्यादिक मिलाएं असत्व हो है सो सर्व प्रकृतिनिमैंस्यों असत्वप्रकृति घटाएं तिस तिस गुणस्थानविषैं सत्व प्रकृति पूर्वोक्त अनुक्रमकरि जाननी ऐसैं सहाय जाकौं न चाहिए ऐसे पराक्रमके धारी श्रीवर्धमान स्वामीनैं कह्या है। इहां अनिवृत्ति करणवाला बादर लोभकौं खिपावै है तिस लोभकी सूक्ष्मकृष्टि करै है ते वे सूक्ष्म कृष्टि सूक्ष्मसांपरायविषैं उदय हो हैं ऐसा जानना। इस क्षपणाविधानविषैं उदयकौं प्राप्त जे पुरुष वेद आदि तिनका एक निषेक तौ एक समयस्थिति लीएं है। दोय निषेक दोय समय स्थिति लीएं हैं ऐसैं अनुक्रम जानना। बहुरि उदयकौं प्राप्त नाहीं जे नपुंसक वेद आदि तिनकी क्षय भएं पीछैं अवशेष उच्छिष्ट रही सर्वस्थिति, समय अधिक आवली प्रमाण है जातैं तहां एक निषेक दोय समय स्थिति लीएं है दोय निषेक तीन समय स्थिति लीए हैं इत्यादि अनुक्रमका सद्भाव है तातैं उच्छिष्टावलीतैं एक समय अधिक स्थिति जाननी। बहुरि उदयकौं प्राप्त नाहीं जे नपुंसक वेद आदि परमुख उदयकरि समान समयनिविषैं उदय रूप एक एक निषेक, कह्या अनुक्रमकरि संक्रमणरूप होइ प्रवर्तैं हैं। ऐसैं स्वमुख परमुख उदयका विशेष जानना। जो प्रकृति आपरूप ही होइ उदय आवै तहां स्वमुख उदय है। जो प्रकृति अन्य प्रकृति रूप होइ तहां परमुख उदय है। विशेष स्वरूप आगैं क्षपणासार अनुसारि इस भाषा टीकाविषैं कथन करैंगे तहां जानना॥ ३४२॥ आगैं उपशम श्रेणीवालाकैं मोहकी सात प्रकृति तौ पूर्वैं उपशम भई थीं अवशेष इकईस प्रकृतिका उपशमावनेका विधान कहैं हैं—

खवणं वा उवसमणे णवरि य संजलणपुरिसमज्झम्हि।
मज्झिमदोदो कोहादीया कमसोवसंता हु॥ ३४३॥

क्षपणामिवोपशमने नवरि च संज्वलनपुरुषमध्ये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मध्यमद्वौ द्वौ क्रोधाधिकौ क्रमश उपशांतौ हि ॥ ३४३ ॥

जी॰ प्र॰—क्षपणावदुपशमविधानेऽपि सत्वं स्यात् । किंतु संज्वलनकषायपुंवेदमध्ये मध्यमा अप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानाः द्वौ द्वौ क्रोधादयः क्रमेणोपशांताः खलु । तद्यथा—पुंवेदोपशमनानंतरं तन्नवकबंधेन समं मध्यमक्रोधद्वयमुपशमयति । तदनंतरं संज्वलनक्रोधमुपशमयति । तदनतरं तन्नवकबधेन समं मध्यममानद्वयमुपशमयति । तदनंतरं संज्वलनमानमुपशमयति । तदनंतरं तन्नवकबंधेन समं मध्यममायाद्वयमुपशमयति । तदनंतरं संज्वलनमायामुपशमयति । तदनंतरं तन्नवकबंधेन समं मध्यमलोभद्वयमुपशमयति । तदनंतरं संज्वलनबादरलोभमुपशमयति इति विशेषो मोहनीयस्यैव शेषकर्मणामुपशमनविधानाभावात् । नपुंसकवेदादीनामुपशमविधाने संदृष्टिः—

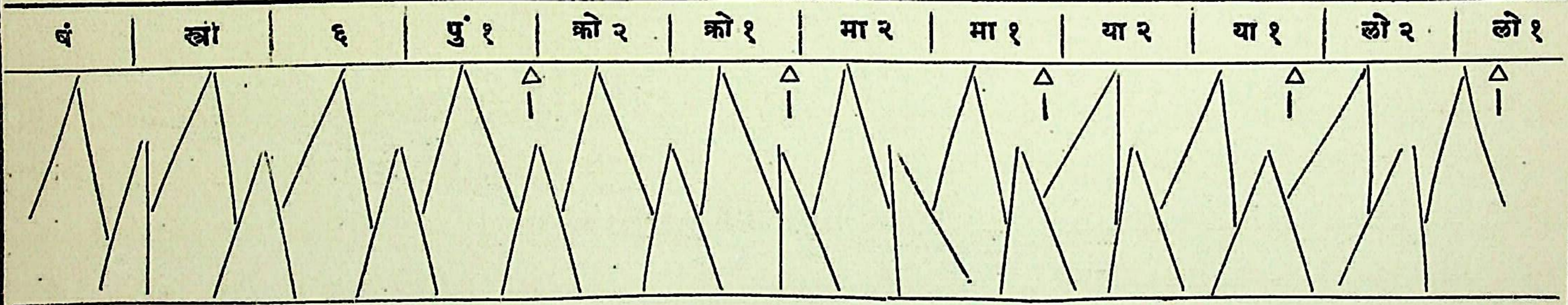

स॰ चं॰—क्षपणावत् उपशमविधानविषैं भी अनुक्रम है परतु विशेष इतना है जो संज्वलन कषाय अर पुरुष वेदीके वीचि मध्यम वीचिके जे अप्रत्याख्यान वा प्रत्याख्यान क्रोधादिक ते अनुक्रमतैं उपशमै हैं सोई कहिए है—

नपुंसकवेद स्त्री वेद हास्यादिक छह पुरुषवेद इनका अनुक्रमतैं उपशम हो है पीछैं पुरुषेवदका उपशमनेके अनंतरि तीहिं पुरुषवेदका नवकबंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान वा प्रत्याख्यान क्रोध युग्म ताकौं उपशमावै है इहां जो तत्काल नवीन बंध भया ताका नाम नवकबंध जानना सो पुरुषवेदका जो नवीन बंध भया ताके निषेक पुरुषवेद कौं उपशमावनेके कालविषैं उपशमावने योग्य न भए जातैं अचलावली विषैं कर्म प्रकृतिकौं अन्यथा परनमावने कौं असमर्थपना है तातैं पुरुषवेदके निषेक मध्यम क्रोधयुग्मकौं उपशमावनेके कालविषैं उपशमाइए है ऐसैं ही संज्वलन क्रोधादिकका भी नवक बंधका स्वरूप यथावस्थित जानना बहुरि ताके अनंतरि संज्वलन क्रोधकौं उप- ५१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शमावै है। बहुरि ताके अनंतरि तीहिं संज्वलन क्रोधका नवक बंधसहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान वा प्रत्याख्यान मान युग्म ताकौं उपशमावै है बहुरि ताके अनंतरि संज्वलन मानकौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि तीहिं संज्वलन मानका नवक बंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान माया युग्म ताकौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि संज्वलन मायाकौं उपशमावै है। बहुरि ताके अनंतरि तीहि संज्वलन मायाकौं नवक बंध सहित मध्यम जो अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान लोभ ताकौं उपशमावै है बहुरि ताके अनंतरि वादर संज्वलन लोभकौं उपशमावै है ऐसा विशेष मोहनीय कर्महीका जानना जातैं मोहनीय विना और कर्मनिका उपशम विधान नाहीं है ऐसैं उपशम श्रेणीविषैं मोहकौं उपशमावै है सत्ता नाश न हो है तातैं अपूर्वकरणादिक उपशांत कषाय गुणस्थानपर्यंत उपशम श्रेणीवालेकैं नरकायु तिर्यंचायु विना एकसौ छियालीस प्रकृतिकी सत्ता जाननी। बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टि उपशम श्रेणीवालेकैं एकसौ अठतीसकी सत्ता अपूर्वकरणादि उपशांतकषायपर्यंत जाननी। तथा जाके आयु बंध न भया होइ तिस क्षायिक सम्यग्दृष्टीकैं असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं भी एकसौ अठतीस ही की सत्ता जाननी ॥ ३४३ ॥

णिरयादिसु पयडिट्ठिदिअणुभागपदेसभेदभिण्णस्स।
सत्तस्स य सामित्तं णेदव्वमिदो जहाजोग्गं ॥ ४४ ॥

निरयादिषु प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदभिन्नस्य।
सत्त्वस्य च स्वामित्वं नेतव्यमितो यथायोग्यं ॥ ३४४ ॥

जी० प्र०—इतः परं नरकगत्यादिमार्गणासु प्रकृतिस्थित्यनुभागप्रदेशभेदभिन्नस्य चतुर्विधसत्त्वस्य स्वामित्वं यथायोग्यं नेतव्यं ॥ ३४४ ॥

अथ परिभाषामाह—

स० चं०—इहांतैं आगैं नरक गत्यादिक मार्गणानिविषैं प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेश च्यारि प्रकार भेदकौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लीए कर्मनिका जो सत्त्व सो यथायोग्य प्राप्तकरना ॥ ३४४ ॥ आगैं परिभाषा कहैं हैं—

तिरिए ण तित्थसत्तं णिरयादिसु तिय चउक्क चउ तिण्णि।
आऊणि होंति सत्ता सेसं ओघादु जाणेज्जो ॥ ३४५ ॥

तिरश्चि न तीर्थसत्वं निरयादिषु त्रीणि चतुष्कं चत्वारि त्रीणि ।
आयूंषि भवंति सत्ताः शेषमोघाज्ज्ञातव्यं ॥ ३४५ ॥

जी० प्र०—तिर्यग्जीवे तीर्थकृत्त्वसत्त्वं न स्यात् । नरकगतौ भुज्यमाननरकायुबध्यमानतिर्यग्मनुष्यायुषी चेति त्रयमेव, न देवायुः । तिर्यग्गतौ भुज्यमानतिर्यगायुः बध्यमानतिर्यग्मनुष्यदेवायूंषीति चत्वारि । मनुष्यगतौ भुज्यमानमनुष्यायुर्बध्यमाननरकतिर्यग्मनुष्यदेवायूंषीति चतुष्कं । देवगतौ भुज्यमानदेवायुर्बध्यमानतिर्यग्मनुष्यायुषी इति त्रयं । शेषप्रकृतिसत्त्वं सर्वं गुणस्थानवज्ज्ञातव्यं ॥ ३४५ ॥ अथ नरकगतौ सत्त्वमाह—

सं० च०—तिर्यंचविषैं तीर्थंकर प्रकृतिका सत्त्व नाही है बहुरि नरक गतिविषैं भुज्यमान नरकायु बध्यमान तिर्यंचायु वा मनुष्यायु ऐसैं तीन आयुही का सत्त्व है देवायुका नाही । बहुरि तिर्यंचगतिविषैं भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान नरकायु तिर्यंचायु मनुष्यायु देवायु ऐसैं च्यार्‍यो आयुका सत्त्व है । बहुरि मनुष्यगतिविषैं भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु तिर्यंचायु मनुष्यायु देवायु ऐसैं च्यार्‍यो आयुका सत्त्व है। बहुरि देवगतिविषैं भुज्यमान देवायु बध्यमान तिर्यंचायु मनुष्यायु ऐसैं तीन आयुका सत्व है। जाकौं भोगवै है ताकौं भुज्यमान कहिये आगामी उदय होनेकौं योग्य जाका बध भया होइ सो बध्यमान कहिए बहुरि अवशेष प्रकृतिनिका सत्व गुणस्थानवत् जानना ॥ ३४५ ॥ तहां नरकगतिविषैं सत्व कहै हैं—

ओघं वा णेरइये ण सुराऊ तित्थमत्थि तदियोत्ति।
छट्ठित्ति मणुस्साऊ तिरिए ओघं ण तित्थयरं ॥ ३४६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओघ इव नैरयिके न सुरायुस्तीर्थमस्ति तृतीय इति।
षष्ठ इति मनुष्यायुस्तिरश्चि ओघो न तीर्थकरं ॥ ३४६ ॥

जी० प्र०—नारके गुणस्थानवन्न देवायुरिति सप्तचत्वारिंशच्छतं। तत्रापि तृतीयपृथ्वीपर्यंतं तीर्थसत्त्वमस्ति न चतुर्थ्यादिष्विति षट्चत्वारिंश-
च्छतं। तत्रापि षष्ठपृथ्वीपर्यंतं मनुष्यायुःसत्वमस्ति न माघव्यामिति पंचचत्वारिंशच्छतं। तत्र धर्मादित्रयसत्त्वे १४७। मिथ्यादृष्टावसत्त्वं शून्यं। सत्त्वं
सर्वं। सासादने तीर्थाहाराः असत्त्वं। सत्त्वं चतुश्चत्वारिंशच्छतं। मिश्रे तीर्थमसत्वं सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं। असंयते असत्वं शून्यं, सत्वं सर्वं १४७।
अंजनादित्रयसत्वे १४६ मिथ्यादृष्टावसत्वं शून्यं सत्वं सर्वं १४६। सासादने आहारकद्विकमसत्वं सत्वं च चतुश्चत्वारिंशच्छतं। मिश्रे अ-
सत्वं शून्यं। सत्वमाहारकद्वयसद्भावात् सर्वं १४६। असंयते असत्वं शून्यं सत्वं सर्वं १४६।
माघवीसत्वे १४५ मिथ्यादृष्टावसत्वं शून्यं, सत्वं सर्वं १४५। सासादने आहारकद्वयमसत्वं सत्वं त्रिचत्वारिंशच्छतं। मिश्रेऽसत्वं शून्यं, सत्वं
सर्वं १४५। असंयतेऽसत्वं शून्यं सत्वं सर्वं १४५।
तिर्यग्गतौ ओघो, न तीर्थकरमिति सत्त्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ असत्वं शून्यं सत्वं सर्वं १४७। सासादने आहारकद्विकमसत्वं
सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं। मिश्रे असत्वं शून्यं सत्वं सर्वं १४७। असंयते नारकमनुष्यायुषी व्युच्छित्तिः, तत्सत्वेऽणुव्रताघटनात्। असत्वं शून्यं
सत्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं। देशसंयते तद्द्वयमसत्वं सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं ॥ ३४६ ॥

सं० च०—नरकगतिविषैं गुणस्थानवत् है तहां देवायुका सत्व नाहीं तातैं सत्व योग्य एकसौ सैंतालीस है तहां भी तीर्थंकरका सत्व तीसरी पृथ्वी ताईं है तातैं चौथी आदि पृथ्वीनिविषैं सत्व एकसौ छियालीस है तहां भी मनुष्यायुका सत्व छठीपृथ्वी ताईं है तातैं सातवीं माघवी पृथ्वीविषैं एकसौ पैंतालीस ही सत्व है। तहां धर्मादिक तीन पृथ्वीनिविषैं सत्व एकसौ सैंतालीस सो मिथ्यादृष्टिविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ सैंतालीस, सासादनविषैं आहारक द्विक तीर्थंकर ए असत्व तीन सत्व एकसौ चवालीस मिश्रविषैं असत्व एक तीर्थंकर सत्व एकसौ छियालीस असंयतविषैं असत्व शून्य ० सत्व एकसौ सैंतालीस। बहुरि अंजनादिक तीन पृथ्वीनिविषैं सत्व एकसौ छियालीस तहां मिथ्यादृष्टिविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ छियालीस सासादनविषैं असत्व आहारकद्विक सत्व एकसौ चवालीस मिश्र अविरतविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ छियालीस बहुरि माघवी सातवीं पृथ्वीविषैं सत्व एकसौ पैंतालीस तहां मिथ्यादृष्टि मिश्र अविरतविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ पैंतालीस सासादनविषैं असत्व आहारकद्विक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्व एकसौ तियालीस जानना। बहुरि तिर्यंचगतिविषैं तीर्थंकर विना गुणस्थानवत् सत्व एकसौ सैंतालीस तहां मिथ्यादृष्टि मिश्र अविरतविषैं असत्व शून्य ० सत्व एकसौ सैंतालीस सासादनविषैं असत्व आहारद्विक सत्व एकसो पैंतालीस बहुरि असंयतविषैं नरकायु मनुष्यायुकी व्युच्छित्ति भई जातैं इनका सत्व होतैं अणुव्रत न होइ तातैं देशव्रतविषैं असत्व नरकायु मनुष्यायु दोय, सत्व एकसौ पैंतालीस है ॥ ३४६ ॥

एवं पंचतिरिक्खे पुण्णिदरे णत्थि णिरयदेवाऊ।
ओघं मणुसतियेसुवि अपुण्णगे पुण अपुण्णेव ॥ ३४७ ॥

एवं पंचतिराश्चि पूर्णेतरस्मिन् नास्ति निरयदेवायुः।
ओघो मनुष्यत्रयेष्वपि अपूर्णके पुनरपूर्णे इव ॥ ३४७॥

जी० प्र०—एवं तिर्यक्त्सामान्यपंचेंद्रियपर्याप्तयोनिमदपर्याप्तपंचविधतिर्यक्ष्वपि भवति। तत्र लब्ध्यपर्याप्ते तु नारकदेवायुषी अपि नेति सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं। गुणस्थानं मिथ्यादृष्टिरेव। कुतः ? 'णहि सासणो अपुण्णे' इति नियमात्। मनुष्यगतौ सामान्यपर्याप्तकयोनिमत्त्रिविधमनुष्येष्वोघः किंतु योनिमत्क्षपके एवैव विशेषः, तेन शेषद्वये सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ नानाजीवापेक्षया सत्वं सर्वं। सासादने तीर्थाहारा नेति पंचचत्वारिंशच्छतं। मिश्रे तीर्थं नेति सप्तचत्वारिंशच्छतं। असंयते सर्वं। देशसंयते प्रमत्ताप्रमत्तयोश्च न नरकतिर्यगायुषी बध्यमानदेवायुर्भुज्यमानमनुष्यायुश्चेति षट्चत्वारिंशच्छतं। क्षपकापूर्वकरणे भुज्यमानमनुष्यायुरस्तीति शेषायुस्त्रयसप्तप्रकृत्यभावादष्टत्रिंशच्छतं। उपशमश्रेण्यपेक्षया नरकतिर्यगायुरभावात् षट्चत्वारिंशच्छतं। क्षायिकसम्यक्त्वं प्रत्यष्टत्रिंशच्छतं। अबद्धायुर्मनुष्यासंयतादिचतुर्ष्वपि तत्प्रत्यष्टत्रिंशच्छतं। अनिवृत्तिकरणे उपशमश्रेण्यपेक्षया षट्चत्वारिंशच्छतं अष्टत्रिंशच्छतं च। क्षपकश्रेण्यपेक्षया प्रथमभागे अष्टत्रिंशच्छतं द्वितीयभागे द्वाविंशतिशतं षोडशानां तत्प्रथमभागचरमसमये एव क्षपणात्। तृतीयभागे मध्यमाष्टकषायाभावाच्चतुर्दशशतं। चतुर्थभागे षंढवेदाभावात्त्रयोदशशतं। पंचमभागे स्त्रीवेदाभावाद् द्वादशशतं। षष्ठभागे षण्णोकषायाभावात् षडुत्तरशतं। सप्तमभागे पुंवेदाभावात्पंचोत्तरशतं। अष्टमभागे संज्वलनक्रोधाभावाच्चतुरुत्तरशतं। नवमभागे संज्वलनमानाभावात्त्र्युत्तरशतं। सूक्ष्मसांपराये संज्वलनमायाऽभावात् द्व्युत्तरशतं। उपशमश्रेण्यपेक्षया षट्चत्वारिंशच्छतं अष्टचत्वारिंशच्छतं च। उपशांतकषाये द्वाचत्वारिंशच्छतं, अष्टत्रिंशच्छतं च। क्षीणकषाये संज्वलनलोभाभावादेकोत्तरशतं। सयोगे निद्राप्रचलादिषोडशाभावात् पंचाशीतिः। अयोगे द्विचरमसमयांते च निद्राप्रचलादिषोडशाभावात्पंचाशीतिः। चरमसमये द्वासप्तत्यभावात्त्रयोदश।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योनिमन्मनुष्ये तु क्षपकश्रेण्यां न तीर्थं, तीर्थसत्त्वस्यातोऽप्रमत्तादुपरि स्त्रीवेदित्वासंभवात् । अपूर्वकरणे सत्त्वं सप्तत्रिंशच्छतं । असत्त्वं दश । अनिवृत्तिकरणे प्रथमभागे सत्त्वं सप्तत्रिंशच्छतं । असत्त्वं दश । द्वितीयभागे षोडश संयोज्यासत्त्वं षड्विंशतिः । सत्त्वमेकविंशतिशतं । तृतीयभागे अष्ट संयोज्याऽसत्त्वं चतुस्त्रिंशत् सत्त्वं त्रयोदशशतं । चतुर्थभागे एकं संयोज्यासत्वं पंचत्रिंशत् सत्वं द्वादशशतं । पंचमभागे एकं संयोज्यासत्वं षट्त्रिंशत् सत्त्वमेकादशशतं । षष्ठभागे षट् संयोज्यासत्त्वं द्वाचत्वारिंशत् सत्वं पंचोत्तरशतं । सप्तमभागे एकं संयोज्यासत्वं त्रिचत्वारिंशत्, सत्वं चतुरुत्तरशतं । अष्टमभागे एकं संयोज्यासत्वं चतुश्चत्वारिंशत्, सत्वं त्र्युत्तरशतं । नवमभागे एकं संयोज्यासत्वं पंचचत्वारिंशत्, सत्वं द्व्युत्तरशतं । सूक्ष्मसांपराये लोभव्युच्छित्तिः, असत्वं संज्वलनमायां संयोज्य षट्चत्वारिंशत्, सत्वमेकोत्तरशतं । क्षीणकषाये लोभं संयोज्यासत्वं सप्तचत्वारिंशत्, सत्वं शतं । सयोगे षोडश संयोज्यासत्वं त्रिषष्टिः, सत्वं चतुरशीतिः । अयोगे द्विचरमसमये असत्वं त्रिषष्टिः, सत्वं चतुरशीतिः । चरमसमयेऽसत्वं द्वासप्ततिं संयोज्य पंचत्रिंशदुत्तरशतं, सत्वं द्वादश ।

लब्ध्यपर्याप्तकमनुष्ये पुनस्तिर्यग्लब्ध्यपर्याप्तकवत्तीर्थनरकदेवायूंषि नेति सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं, गुणस्थानं मिथ्यादृष्टिरेव ॥३४७॥ अथ देवगतावाह—

स० चं०—ऐसैंही सामान्य तिर्यंच पंचेंद्री तिर्यंच योनिमत् तिर्यंच पर्याप्त तिर्यंच अपर्याप्त तिर्यंचविषैं जानना विशेष इतना जो लब्धि अपर्याप्तकविषैं नरकायु देवायुका सत्व नाहीं तातैं सत्व एकसौ पैंतालीस, गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि ही है जातैं 'णहि सासणो अपुण्णे' इस वचनतैं ताकैं सासादन भी न होइ। बहुरि मनुष्य गतिविषैं सामान्य मनुष्य पर्याप्त मनुष्य योनिमत् मनुष्यविषैं ओघः गुणस्थानवत् है। तहां योनिमत् मनुष्यविषैं क्षपक श्रेणीविषैं विशेष है जातैं सामान्य मनुष्य अर पर्याप्त मनुष्यविषैं मिथ्यादृष्ट्यादि अयोगी गुणस्थानपर्यंत सर्व सत्व असत्व गुणस्थान रचनावत् जानना विशेष इतना जो देश संयत गुणस्थानविषैं तिर्यंचायुकी भी सत्ता नाहीं तातैं तहां सत्व एकसौ छियालीस असत्व दोय कहना अन्य सर्व कथन समान जानना। बहुरि योनिमत् मनुष्यविषैं क्षपकश्रेणीविषैं तीर्थंकर सत्तावालेकैं अप्रमत्त गुणस्थानतैं ऊपरी स्त्रीवेदीपणाका अभाव है तातैं अपूर्वकरणविषैं सत्व एकसौ सैंतीस असत्व दश ऐसैं ही अनिवृत्ति करणका नवभाग वा सूक्ष्मसांपरायादिक अयोगी पर्यंतविषैं गुणस्थानोक्त सत्वतैं एक एक घाटि सत्व जानना, असत्व गुणस्थानोक्त ही जानना बहुरि लब्धि अपर्याप्तक मनुष्यविषैं लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंचवत् तीर्थंकर नरकायु देवायु विना सत्व एकसौ पैंतालीस गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि जानना ॥ ३४७ ॥ आगैं देवगतिविषैं कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओघं देवे ण हि णिरयाउ, सारोत्ति होदि तिरियाउ, ।
भवणतियकप्पवासियइत्थीसु ण तित्थयरसत्तं ॥३४८॥

ओघो देवे नहि निरयायुः सार इति भवति तिर्यगायुः ।
भवनत्रयकल्पवासिकस्त्रीषु न तीर्थकरसत्त्वं ॥ ३४८ ॥

जी प्र०—देवगतौ ओघः किंतु नरकायुर्नहि पुनः सहस्रारपर्यंतमेव तिर्यगायुरस्ति न तत उपरि, तेन सौधर्मादिसहस्रारपर्यंतं द्वादशकल्पेषु सत्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ तीर्थं न 'किण्हदुगसुहतिलेस्सय वामेविणितित्थयरसत्त'मिति नियमात् सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं, असत्वमेकं । सासादने तीर्थाहारा असत्वं । सत्वं चतुश्चत्वारिंशच्छतं । मिश्रे तीर्थमसत्वं सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं । असंयते सत्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं, असत्वं शून्यं ।

आनतादिचतुःकल्पेषु नवग्रैवेयकेषु च नरकतिर्यगायुषी नेति सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं । तत्र मिथ्यादृष्टावसत्वं तीर्थं, सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं । सासादने असत्वं तीर्थाहाराः सत्वं त्रिचत्वारिंशच्छतं । मिश्रे तीर्थमसत्वं सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं । असंयते असत्वं शून्यं, सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं ।

नवानुदिशपंचानुत्तरविमानसम्यग्दृष्टिषु नरकतिर्यगायुषी नेति सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं । भवनत्रयदेवेषु कल्पस्त्रीषु च तीर्थनरकायुषी नेति सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ सत्वं तदेव, असत्वं शून्यं । सासादने आहारकद्विकमसत्वं, सत्वं चतुश्चत्वारिंशच्छतं । मिश्रासंयतयोरसत्वं शून्यं, सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं ॥ ३४८ ॥ अथेंद्रियमार्गणायामाह—

स० चं०—देवगतिविषैं नरकायुविना सामान्यवत् सत्व प्रकृति एकसौ सैंतालीस हैं । बहुरि तिर्यंचायुका सत्व सहस्रार पर्यंत ही है ऊपरि नाहीं है सो सौधर्मादिक सहस्रारपर्यंत बारहस्वर्गनिविषैं सत्व एकसौ सैंतालीस तहां 'किण्ह दुगसुहतिलेस्सय वामेविणितित्थयरसत्तं' इस वचनकरि तीर्थंकरका सत्व विना मिथ्यादृष्टिविषैं सत्व एकसौ छियालीस असत्व एक । सासादनविषैं तीर्थंकर आहारक द्विक ए असत्व तीन, सत्व एकसौ चवालीस मिश्रविषैं असत्व एक तीर्थंकर सत्व एकसौ छियालीस, असंयतविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ सैतालीस है, बहुरि आनतादि च्यारि स्वर्ग अर नवग्रैवेयक इनविषैं नरकायु तिर्यंचायु विना सत्व एकसौ छियालीस तहां मिथ्यादृष्टि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्रविषैं असत्व एक तीर्थंकर सत्व एकसौ पैंतालीस सासादनविषैं तीर्थंकर आहारद्विक ए असत्व तीन सत्व एकसौ तियालीस, असंयतविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ छियालीस बहुरि नवानुदिश पंचानुत्तरविमानविषैं नरकायु तिर्यंचायु विना सत्व प्रकृति एकसौ छियालीस गुणस्थान एक असंयत ही है बहुरि भवनत्रिक देव कल्पवासिनी स्त्री इनविषैं तीर्थंकर नरकायु विना सत्व एकसौ छियालीस तहां मिथ्यादृष्टिविषैं सत्व एकसौ छियालीस असत्व शून्य ० सासादनविषैं असत्व आहारकद्विक सत्व एकसौ चवालीस मिश्र असंयतविषैं असत्व शून्य सत्व एकसौ छियालीस जानना ॥ ३४८ ॥ आगैं इंद्रिय कायमार्गणाविषैं कहै हैं—

ओघं पंचक्खतसे सेसिंदियकायगे अपुण्णं वा ।
तेउदुगे ण णराउ, सव्वत्थुव्वेल्लणावि हवे ॥ ३४९ ॥

ओघः पंचाक्षत्रसे शेषेंद्रियकायके अपूर्णं वा ।
तेजोद्विके न नरायुः सर्वत्रोद्वेल्लनापि भवेत् ॥ ३४९ ॥

जी प्र०—इंद्रियकायमार्गणायोः पंचाक्षे त्रसे च ओघः इति सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं । गुणस्थानानि चतुर्दश । तद्रचना सामान्योक्तैव ज्ञातव्या ।

संदृष्टिः—

पंचेंद्रियत्रसकायिकयोर्योग्याः सत्त्वप्रकृतयः १४८ ।

गु	मि०	सा०	मि०	अ०	दे१	प्र०	अ८	अ०	अ१६	अ८	१	१	६	१	१	१	१	सू१	उ	०	क्षी१६	स०	अ७:	१३
स	१४८	१४५	१४७	१४८	१४७	१४६	१४६	१३८	१३८	१२२	११४	११३	११२	१०६	१०५	१०४	१०३	१०२	१४६	१३८	१०१	८५	८५	१३
अ	०	३	१	०	१	२	२	१०	१०	२६	३४	३५	३	४२	४३	४४	४५	४६	२	१०	४७	६३	६३	१३५

शेषैकद्वित्रिचतुरिंद्रियपृथ्व्यब्वनस्पतिकायिकेषु लब्ध्यपर्याप्तत्वचीर्थनरकदेवायुरभावात् सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं, असत्वं शून्यं । सासादने आहारकद्वयमसत्वं, सत्वं त्रिचत्वारिंशच्छतं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेजोद्विके मनुष्यायुरपि नेति सत्वं चतुश्चत्वारिंशच्छतं। तत्र मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमेकमेव। 'णहि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे' इति नियमात्। सर्वत्र इंद्रियमार्गणायां कायमार्गणायां चोद्वेल्लनापि भवेत् वल्वजरज्जुभावविनाशवत् प्रकृतेरुद्वेल्लनभागहारेणापकृष्य परप्रकृतितां नीत्वा विनाशनमुद्वेल्लनं ॥ ३४९ ॥ ताः प्रकृतीराह—

स० चं०—इंद्रियमार्गणा अर कायमार्गणानिविषैं पंचेंद्री अर त्रसकाय इनविषैं सामान्यवत् सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस गुणस्थान सव चौदह तिनविषैं सर्व रचना गुणस्थानवत् जाननी किछू विशेष नाही बहुरि अवशेष एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री मार्गणा अर पृथ्वी अप वनस्पती काय मार्गणा इनविषैं लब्धि अपर्याप्तवत् तीर्थंकर नरकायु देवायु विना सत्व प्रकृति एकसौ पैंतालीस तहां मिथ्यादृष्टिविषैं सत्व एकसौ पैंतालीस असत्व शून्य० सासादनविषैं असत्व आहारकद्विक सत्व एकसौ तियालीस बहुरि तेजकाय वातकायविषैं मनुष्यायु भी नाहीं तातैं सत्त्व प्रकृति एकसौ चवालीस गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि है। बहुरि सर्व इंद्रियमार्गणा अर कायमार्गणाविषैं उद्वेलना भी हो है। उद्वेलना कहा कहिए? जैसें जेवरा बल देइ करि वट्या था पीछेंहू बलकरि उघेडिए तैसें जिन प्रकृतिनिका बंध कीया था पीछें तिनकौं उद्वेलन भागहारतैं अपकर्षण करि अन्य प्रकृतिपनेकौं प्राप्तकरि नाश करना उद्वेलन कहिए। ३४९। ते उद्वेलन प्रकृति कौन हैं? सो कहैं हैं—

हारदु सम्मं मिस्सं सुरदुग णारयचउक्कमणुकमसो।
उच्चागोदं मणुदुगमुव्वेल्लिज्जंति जीवेहिं ॥ ३५० ॥

हारद्वि सम्यक् मिश्रं सुरद्विकं नारकचतुष्कमनुक्रमशः।
उच्चैर्गोत्रं मनुद्विकमुद्वेल्ल्यंते जीवैः ॥ ३५० ॥

जी० प्र०—उद्वेल्लनविधानं विस्तरेण वक्ष्यमाणमप्यत्र प्रसंगायातं। आहारद्विकं सम्यक्त्वप्रकृतिः मिश्रप्रकृतिः सुरद्विकं नारकचतुष्कं उच्चैर्गोत्रं मनुष्यद्विकं चेति त्रयोदश प्रकृतयः क्रमेणोद्वेल्ल्यंते ॥ ३५० ॥ कैर्जीवैः का इति चेदाह—

स० चं०—उद्वेलनाका विधान आगै विस्तारतैं कहिएगा तथापि इहां भी प्रसंग पाइ किछू कहिए है—आहा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रकद्विक २ सम्यक्त्व मोहनी १ मिश्रमोहनी १ देवगति वा आनुपूर्वी २ नरकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग ए वैक्रियिक चतुष्क वा नारक चतुष्ककी च्यारि ४ उच्चगोत्र १ मनुष्यगति वा आनुपूर्वी २ तेरह प्रकृति अनुक्रमतैं उद्वेलना रूप कीजिए है ॥ ३५० ॥ कौंन जीव किस प्रकृतिकी उद्वेलना करै सो कहिए है—

चदुगदिमिच्छे चउरो इगिविगले छप्पि तिण्णि तेउदुगे ।
सिय अत्थि णत्थि सत्तं सपदे उप्पण्णठाणेवि ॥ ३५१ ॥

चतुर्गतिमिथ्ये चतस्रः एकविकले षडपि तिस्रस्तेजोद्विके ।
स्यादस्ति नास्ति सत्वं स्वपदे उत्पन्नस्थानेऽपि ॥ ३५१ ॥

जी० प्र०—चतुर्गतिमिथ्यादृष्टौ चतस्रः । एकत्रिकलेंद्रियेषु षट् । तेजोद्विके तिस्रः । स्वस्थाने उत्पन्नस्थाने च सत्वं स्यादस्ति स्यान्नास्ति । तद्यथा—

तीर्थकरनरकदेवायुरसत्वचातुर्गतिकसंक्लिष्टमिथ्यादृष्टेराहारकद्विके उद्वेल्लिते त्रिचत्वारिंशच्छतं । सत्वं पुनः सम्यक्त्वप्रकृतावुद्वेल्लितायां द्वाचत्वारिंशच्छतं । पुनः सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतावुद्वेल्लितायां एकचत्वारिंशच्छतं, स्वस्थाने स्यात् । अकृतोद्वेल्लनस्य तस्य पंचचत्वारिंशच्छतमेव । उत्पन्नस्थाने एकद्वित्रिचतुरिंद्रियपृथ्वीवनस्पतिकायिकेषु तानि चत्वारि सत्वानि । पुनः सुरद्विके उद्वेल्लिते स्वस्थाने एकोनचत्वारिंशच्छतं । पुनर्नारकचतुष्के उद्वेल्लिते स्वस्थाने पंचत्रिंशच्छतं । उत्पन्नस्थाने तेजोद्विकमनुष्यायुरभावाच्चतुश्चत्वारिंशच्छतं द्वाचत्वारिंशच्छतं एकचत्वारिंशच्छतं चत्वारिंशच्छतं अष्टात्रिंशच्छतं चतुस्त्रिंशच्छतं च । पुनः स्वस्थाने उच्चैर्गोत्रे उद्वेल्लिते त्रयस्त्रिंशच्छतं । स्वस्थाने पुनः नरकद्विके उद्वेल्लिते एकत्रिंशच्छतं । स्वस्थाने इदमंत्यसत्वद्वयं । उत्पन्नस्थानेऽप्येकेंद्रियादिसप्तस्वप्यस्ति ॥ ३५१ ॥ अथ योगमार्गणायामाह—

स० चं०—च्यारयो गति वाले मिथ्यादृष्टि जीवनि विषैं च्यारि अर एकेंद्री विकलेंद्री विषैं छह अर तेज वात

(१)

	ए	द्वि	त्रि	च	पृ	अ	व	योग्य	१४५
	० आ २	० स १	० मि १	० सु २	० नार ४	उत्पन्न			
१४५	१४३	१४२	१४१	१३९	१३५	१३३	१३१		

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काय विषैं तीन प्रकृति स्वस्थान अर उत्पन्न स्थानविषैं स्यादस्ति, स्यान्नास्ति कहिए कोई प्रकार सत्त्व है कोई प्रकार सत्व नाहीं है। जो उद्वेलना न भई होइ तो सत्व पाइए अर जो उद्वेलना भई होय तो सत्व न पाइए सो कहिए है–

तीर्थंकर नरकायु देवायु इनकी सत्ता जाकैं न पाइए ऐसा चतुर्गतिवाले संक्लेशपारिणामी मिथ्यादृष्टि जीव ताकैं उद्वेलना भए विना सत्व तो एकसौ पैंतालीस पाइए बहुरि आहारक द्विककी उद्वेलना भएं एकसौ तियालीसका सत्त्व पाइये बहुरि सम्यक्त्वमोहनीकी उद्वेलना भए सत्त्व एकसौ बियालीस पाइए बहुरि मिश्र मोहनीकी उद्वेलना भएं एकसौ इकतालीसका सत्व पाइए ऐसें स्वस्थानविषैं सत्व जानना। बहुरि उत्पन्न स्थान विषैं एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री पृथ्वी अप वनस्पतीकायविषैं ते च्यारि पूर्वोक्त प्रकार करि एकसौ पैंतालीस एकसौ तियालीस एकसौ बियालीस एकसौ इकतालीसका सत्व पाइए है। बहुरि देवगति वा आनुपूर्वी इन दोऊनिकी उद्वेलना भएं स्वस्थानविषैं तिन एकेंद्रियादिकनिकैं एकसौ गुणतालीसका सत्व है । बहुरि वैक्रियिक चतुष्ककी उद्वेलना भएं एकसौ पैंतीसका सत्व है । बहुरि उत्पन्नस्थान विषैं तेजःकाय वात कायविषैं मनुष्यायुका भी सत्व नाहीं तातैं विना उद्वेलना भएं सत्व एकसौ चवालीस बहुरि आहारक द्विककी उद्वेलना भएं क्रमसैं एकसौ बियालीस एकसौ इकतालीस एकसौ चालीस, सुरद्विककी उद्वेलनातैं एकसौ अठतीस वैक्रियिक चतुष्ककी उद्वेलनातैं एकसौ चौंतीस सत्त्व पाइए बहुरि स्वस्थानविषैं तेज वातकायिककैं उच्चगोत्रकी उद्वेलना भएं सत्व एकसौ तेतीसका है बहुरि मनुष्य द्विककी उद्वेलना भएं एकसौ इकतीस हीं का सत्व पाइए है। ए अंतके दोय सत्व एकसौ तेतीस वा एकसौ इकतीसका उत्पन्नस्थान विषैं एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्री पृथ्वी अप

तेजोद्विकयोग्य १४५ ।

	० आ २	० सं १	० मि १	० सु २	० ना ४	० उ १	० म २
१४४	१४२	१४१	१४०	१३८	१३४	१३३	१३१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

वनस्पति विषैं भी जानना । यहां पूर्व पर्याय विषैं जो विना उद्वेलनातैं सत्व भया तिस सहित उत्तर पर्याय विषैं उपजै तहां उत्तर पर्याय विषै तिस सत्वकौं उत्पन्न स्थानविषैं सत्व कहिए बहुरि तिस विवक्षित पर्यायविषै विना उद्वेलना वा उद्वेलनातैं जो सत्त्व होय ताकौं स्वस्थानविषैं सत्व कहिये ॥ ३५१ ॥ आगैं योगमार्गणाविषैं कहै हैं—

पुण्णेकारसजोगे साहारयमिस्सगेवि सगुणोघं ।
वेगुव्वियमिस्सेवि य णवरि ण माणुसतिरिक्खाऊ ॥३५२॥

पूर्णैकादशयोगे साहारकमिश्रकेऽपि स्वगुणौघः ।
वैगूर्विकमिश्रेऽपि च नवरि न मानुषतिर्यगायुः ॥ ३५२ ॥

जी० प्र०—पूर्णैकादशयोगेषु चतुर्मनश्चतुर्वागौदारिकवैक्रियिकाहारकयोगेषु आहारकमिश्रे च स्वगुणौघः इत्यावेषु नवसु सत्त्वमष्टचत्वारिंशच्छतं । गुणस्थानानि त्रयोदश । तस्य संदृष्टिः—

मनो ४ । वाग्योग ४ । औदारिक काययोग १ । योग्य १४८ ।

व्यु	मि	सा	मि	अ १	दे १	प्र०	अ८	अ०	अ१६	८	१	१	६	१	१	१	१	सू१	उ	०	ती१६	स
स	१४८	१४५	१४७	१४८	१४७	१४६	१४६	१३८	१३८	१२२	११४	११३	११२	१०६	१०५	१०४	१०३	१०२	१४६	१३८	१०१	८५
अ	०	३	१	०	१	२	२	१०	१०	२६	३४	३५	३६	४२	४३	४४	४५	४६	२	१०	४७	६३

आहारकतन्मिश्रयोर्नरकतिर्यगायुरभावात् प्रमत्ते षट्चत्वारिंशच्छतं । वैक्रियिकयोगेऽष्टचत्वारिंशच्छतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ सत्त्वं सर्वं तीर्थकरसत्वयुक्तस्य तृतीयपृथ्व्यंतं गमनात् । सासादने पंचचत्वारिंशच्छतं सत्त्वं, असत्त्वं त्रयं । मिश्रे सत्त्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं, असत्त्वमेकं । असंयते सत्त्वं सर्वं ।

तन्मिश्रयोगे तिर्यग्मनुष्यायुषी नेति मिथ्यादृष्टौ सत्त्वं षट्चत्वारिंशच्छतं । असत्त्वं शून्यं । सासादने नरकायुस्तत्त्रयं च नेत्यसत्त्वं चत्वारि सत्त्वं द्वाचत्वारिंशत् शतं । असंयते सत्त्वं षट्चत्वारिंशत् शतं ॥ ३५२ ॥ औदारिकमिश्रयोगस्याह—

स० चं०—च्यारि मन योग च्यारि वचनयोग औदारिक वैक्रियिक आहारक योग आहारक मिश्रयोग इन विषैं अपना अपना गुणस्थानवत् रचना है तहां च्यारि मनयोग च्यारि वचनयोग औदारिक शरीर इनविषैं सत्व प्रकृति

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकसौ अठतालीस गुणस्थान बारह वा तेरह तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी विशेष नाहीं। बहुरि आहारक आहारकमिश्र योगविषैं नरकायु तिर्यंचायु विना सत्व एकसौ छियालीस गुणस्थान एक प्रमत्त बहुरि वैक्रियिक योगविषै सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस गुणस्थान च्यारि। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं सत्व सर्व असत्व नास्ति जातैं तीर्थंकर सत्तावाला तृतीय पृथ्वी पर्यंत जाय है। सासादन मिश्र अविरतविषैं गुणस्थानवत् असत्व सत्व जानना। बहुरि वैक्रियिक मिश्रविषैं तिर्यंचायु मनुष्यायु विना सत्व प्रकृति एकसौ छियालीस तहां मिथ्यादृष्टि अर असंयतविषैं असत्व नास्ति सत्व सर्व सासादनविषैं आहारक द्विक तीर्थंकर नरकायु ए असत्व च्यारि सत्व एकसौ बियालीस है ॥ ३५२ ॥ औदारिकमिश्रयोगविषैं कहैं हैं—

ओरालमिस्सजोगे ओघं सुरणिरयआउगं णत्थि ।
तम्मिस्सवामगे ण हि तित्थं कम्मेवि सगुणोघं ॥३५३॥

औरालमिश्रयोगे ओघः सुरनिरयायुष्कं नास्ति।
तन्मिश्रवामके न हि तीर्थं कार्मेऽपि स्वगुणौघः ॥ ३५३ ॥

जी० प्र०—औदारिकमिश्रयोगे सामान्यसत्त्वं किंतु सुरनारकायुषी न स्तः इति षट्चत्वारिंशत् शतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ सत्त्वं पंचचत्वारिंशत् शतं, तन्मिश्रवामे तीर्थं नहीत्युक्तत्वात्। असत्त्वमेकं। सासादने असत्त्वं त्रयं, सत्त्वं त्रिचत्वारिंशत् शतं। असंयतेऽसत्त्वं शून्यं सत्त्वं षट्चत्वारिंशत् शतं। सयोगे सत्त्वं पंचाशीतिः। असत्त्वमेकषष्टिः।

कार्मणयोगे चतुर्गतिभुज्यमानायुःसंभवात् मिथ्यादृष्टौ सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं, सासादने सत्त्वं चतुश्चत्वारिंशत् शतं, असत्त्वं तीर्थाहारनरकायूंषि। असंयते सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं। सयोगे सत्त्वं पंचाशीतिः। असत्त्वं त्रिषष्टिः ॥ ३५३ ॥ अथ वेदमार्गणादिष्वाह—

स० चं०—औदारिक मिश्रयोगविषैं देवायु नरकायु विना सामान्यवत् सत्व प्रकृति एकसौ छियालिस तहां 'तम्मिस्सवामगे ण हि तित्थं' इस वचनतैं मिथ्यादृष्टिविषैं असत्व एक तीर्थंकर सत्व एकसौ पैंतालीस सासादनविषैं तीर्थंकर आहारकद्विक ए असत्व तीन सत्व एकसौ तियालीस असंयतविषैं असत्व शून्य सत्व एकसौ छियालीस सयोगी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं सत्व पिच्यासी असत्व इकसठि बहुरि कार्माणकाय योगविषैं च्यार्‍यो भुज्यमान आयु संभवै हैं तातैं सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस तहां मिथ्यादृष्टि असंयतविषैं सत्व सर्व असत्व नास्ति। सासादनविषैं तीर्थंकर आहारक द्विक नरकायु ए असत्व च्यारि सत्व एकसौ चवालीस। सयोगीविषैं असत्व त्रेसठि सत्व पिच्यासी ॥ ३५३ ॥
आगै वेदमार्गणादिक विषैं कहैं हैं—

वेदादाहारोत्ति य सगुणोघं णवरि संढथीखवगे।
किण्हदुगसुहतिलेस्सियवामेवि ण तित्थयरसत्तं ॥३५४॥

वेदादाहार इति च स्वगुणौघः नवरि षंढस्त्रीक्षपके।
कृष्णद्विकशुभत्रिलेश्यिकवामेऽपि न तीर्थंकरसत्वं ॥ ३५४ ॥

जी० प्र०—वेदमार्गणातः आहारमार्गणापर्यंतं स्वगुणौघः इति पुंवेदे सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं। गुणस्थानानि चतुर्दश। रचना गुणस्थानोक्तैव। षंढस्त्रीवेदयोः सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं किंतु क्षपकश्रेण्यां न तीर्थंकरसत्त्वं तत्सत्त्वे तदुदयसंक्लिष्टस्य तत्रारोहणाभावात्, तेनापूर्वकरणादिषु सत्त्वमेकैकहीनं स्यात्।

कषायमार्गणायां सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं। गुणस्थानानि क्रोधादित्रयेऽनिवृत्तिकरणांतानि नव। लोभे सूक्ष्मसांपरायांतानि दश संदृष्टिर्गुणस्थानवत्।

ज्ञानमार्गणायां कुमतित्रये सत्त्वमष्टचत्वारिंशच्छतं। तत्र मिथ्यादृष्टावसत्त्वं शून्यं, सत्वं सर्वं। सासादनेऽसत्वं त्रयं। सत्वं पंचचत्वारिंशच्छतं। मतित्रये सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं गुणस्थानान्यसंयतादीनि नव। संदृष्टिस्तदुक्तैव। मनःपर्यये नरकतिर्यगायुरभावात्सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं। गुणस्थानानि प्रमत्तादीनि सप्त, संदृष्टिस्तद्वत्। केवलज्ञाने सत्वं पंचाशीतिः सयोगायोगगुणस्थानद्वयं। गुणस्थानातीताः सिद्धाः।

संयममार्गणायामसंयमे सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं। गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि चत्वारि संदृष्टिस्तदुक्तैव। देशसंयते सत्वं नरकायुरभावात्सप्त-

असंयमयोग्यसत्वं १४८

	मि	सा	मि	अ
स	१४८	१४५	१४७	१४८
अ	०	३	१	०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चत्वारिंशच्छतं । गुणस्थानं तन्नाम । सामायिकछेदोपस्थापनयोर्नरकतिर्यगायुषी नेति सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं गुणस्थानानि प्रमत्तादीनि चत्वारि । संदृष्टिस्तदुक्तैव । परिहारविशुद्धौ सत्वं तदायुर्द्वयाभावात् षट्चत्वारिंशच्छतं गुणस्थानं प्रमत्ताप्रमत्तद्वयं । सूक्ष्मसांपराये गुणस्थानं तन्नामैव सत्वं द्व्युत्तरशतं । यथाख्याते गुणस्थानानि चत्वारि तत्रोपशांतकषाये सत्वं षट्चत्वारिंशच्छतं अष्टत्रिंशच्छतं च । क्षीणकषाये एकोत्तरशतं । सयोगे पंचाशीतिः । अयोगे द्विचरमसमयांतं पंचाशीतिः, चरमसमये त्रयोदश ।

दर्शनमार्गणायां चक्षुरचक्षुर्दर्शनयोः सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं । गुणस्थानान्याद्यानि द्वादश । संदृष्टिस्तदुक्तैव । अवधिदर्शने सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं गुणस्थानान्यसंयतादीनि नव । रचना तदुक्तैव । केवलदर्शने तज्ज्ञानवत् ।

लेश्यामार्गणायां कृष्णनीलयोः सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि चत्वारि । तत्र किण्हदुगवामे णा तित्थयरसत्तमितिमिथ्यादृष्टौ सत्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं । अशुभलेश्यात्रये तीर्थबंधप्रारंभाभावात् । बद्धनारकायुषोऽपि द्वितीयतृतीयपृथ्व्योः कपोतलेश्ययैव गमनात् । संदृष्टिः—

कृष्ण नी= योग्य १४८

व्यु	मि	सा	मि	अ
स	१४७	१४५	१४७	१४८
अ	ती १	३	ती १	०

कपोतलेश्यायां मिथ्यादृष्टौ सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं । सासादने पंचचत्वारिंशत् शतं । मिश्रे सप्तचत्वारिंशत् शतं । असंयते सर्वं । तेजःपद्मलेश्ययोः सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं गुणस्थानानि सप्त । तत्र सुहतियलेस्सियवामेवि णा तित्थयरसत्तमिति तन्मिथ्यादृष्टौ तीर्थसत्त्वं नास्ति, कुतः ? नरकगमनाभिमुखसंक्लिष्टेभ्योऽन्येषां सम्यक्त्वविराधनाभावेन शुभलेश्यात्रये तद्विराधनासंभवात् । तेन तन्मिथ्यादृष्टौ सत्त्वं सप्तचत्वारिंशत् शतं । सासादने पंचचत्वारिंशत् शतं । मिश्रे सप्तचत्वारिंशच्छतं । असंयते अष्टचत्वारिंच्छतं देशसंयते नरकायुर्विना सप्तचत्वारिंशच्छतं । प्रमत्ते नरकतिर्यगायुषी विना षट्चत्वारिंशत् शतं । अप्रमत्तेऽपि तथैव षट्चत्वारिंशत् शतं ।

शुक्ललेश्यायां सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं । गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि त्रयोदश । तत्रापि मिथ्यादृष्टौ तीर्थासत्वात् सत्त्वं सप्तचत्वारिंशत् शतं । सासादनादिषु गुणस्थानोक्तैव संदृष्टिः ।

भव्यमार्गणायां सत्त्वमष्टचत्वारिंशत् शतं । गुणस्थानानि चतुर्दश, संदृष्टिस्तदुक्तैव ॥ ३५४ ॥

स० चं०—वेदमार्गणातैं लगाय आहारमार्गणापर्यंत अपने अपने गुणस्थानवत् सामान्य रचना है । तहां पुरुषवेदविषैं सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस गुणस्थान चौदह तहां रचना सर्व गुणस्थानवत् जाननी । बहुरि न-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि केवल दर्शनविषैं रचना केवलज्ञानवत् जाननी। बहुरि लेश्यामार्गणाविषैं कृष्ण नीलविषैं सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक च्यारि, 'तहां किण्हदुगेवामे ण तित्थयरसत्तं' इस वचनतैं मिथ्यादृष्टि-विषैं तीर्थंकर सत्व नाहीं जातैं तीन अशुभलेश्याविषैं तीर्थंकर का प्रारंभ न होय बहुरि जाकैं नरकायु बंध्या होइ सो दूसरी तीसरी पृथ्वीविषैं उपजै तहां भी कपोतलेश्या पाइए तातैं एकसौ सैंतालीसका सत्व है। बहुरि सासादनादिकविषैं गुणस्थानवत् रचना है। बहुरि कपोतलश्याविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान च्यारि आदिके तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि तेजः पद्म लेश्याविषैं,सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान सात आदिके तहां सुहतियलेस्सियवामे वि ण तित्थयरसत्तं, इस वचनतैं मिथ्यादृष्टिविषैं तीर्थंकर सत्व नाहीं जातैं तीर्थंकर सत्तावाला जो नरक जानेकौं सन्मुख होइ तिसहीकैं सम्यक्त्वकी विराधना होइ है। तीनों शुभ लेश्याविषैं सम्यक्त्वकी विराधना होइ नाहीं तातैं तहां सत्व एकसौ सैंतालीस बहुरि सासादनादिकविषैं गुणस्थानवत् रचना जाननी। बहुरि शुक्ल लेश्याविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक तेरह तहां मिथ्यादृष्टि विषैं तीर्थंकरकी सत्ता नाहीं तातैं सत्व एकसौ सैंतालीस। सासादनादिकविषैं गुणस्थानवत् रचना जाननी। बहुरि भव्य मार्गणाविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान चौदह तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी॥ ३५४॥

अभव्वसिद्धे णत्थि हु सत्तं तित्थयरसम्ममिस्साणं।
आहारचउक्कस्सवि असण्णिजीवे ण तित्थयरं॥३५५॥

अभव्यसिद्धे नास्ति हि सत्त्वं तीर्थकरसम्यग्मिश्राणां।
आहारचतुष्कस्यापि असंज्ञिजीवे न तीर्थकरं॥ ३५५॥

जी० प्र०—अभव्यमार्गणायां तीर्थकरसम्यक्त्वमिश्राणामाहारकचतुष्कस्य च सत्त्वं नास्ति, तस्य सम्यग्दर्शनाद्यभिव्यक्तेः सर्वकालेऽप्यसंभवात्। गुणस्थानं मिथ्यादृष्टिसंज्ञं। सत्त्वमेकचत्वारिंशच्छतं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुंसक वेद स्त्रीवेदविषैं सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस तहां 'णवरि संढथी खवगे' इस वचनकरि क्षपक श्रेणीविषैं तीर्थंकरका सत्व नाहीं तातैं अपूर्वकरणादिकविषैं सत्व प्रकृति गुणस्थानोक्त सत्व प्रकृतितैं एक २ घाटि जाननी। और रचना सर्व गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि कषायमार्गणाविषैं सत्व एकसौ अठतालिस गुणस्थान क्रोध मान मायाविषै अनिवृत्ति करणपर्यंत नव लोभविषैं सूक्ष्मसांपराय पर्यंत दश तहां रचना सर्व गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि ज्ञानमार्गणाविषैं कुमति कुश्रुत विभंगविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान मिथ्यादृष्टि सासादन दोय तहां रचना गुणस्थानवत्। बहुरि मति श्रुत अवधिविषैं सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस गुणस्थान असंयतादिक नव तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि मनःपर्ययविषैं नरक तिर्यंचायुविना सत्व प्रकृति एकसौ छियालीस गुणस्थान प्रमत्तादिक सात तहां सत्व गुणस्थानवत् असत्व गुणस्थानोक्त असत्वतैं दोय दोय घाटि जानना बहुरि केवलज्ञानविषैं सत्वप्रकृति पिच्यासी गुणस्थान सयोगी अयोगी दोय तहां सत्व गुणस्थानवत् असत्व सयोगी विषैं नास्ति अयोगीविषैं द्विचरम समय पर्यंत नास्ति चरम समयविषैं बहत्तरि। बहुरि संयम मार्गणाविषैं असंयतविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक च्यारि तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि देशसंयतविषैं नरकायु विना सत्व एकसौ सैंतालीस गुणस्थान एक देशसंयत बहुरि सामायिक छेदोपस्थापनविषैं नरक तिर्यंचायु विना सत्व एकसौ छियालीस गुणस्थान प्रमत्तादिक च्यारि तहां सत्व गुणस्थानोक्त, असत्व गुणस्थानोक्ततैं दोय घाटि जानना। बहुरि परिहार विशुद्धिविषैं सत्व पूर्वोक्त एकसौ छियालीस गुणस्थान प्रमत्त अप्रमत्त दोय बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं सत्व एकसौ दोय गुणस्थान एक सूक्ष्मसांपराय बहुरि यथाख्यातविषैं गुणस्थान च्यारि तहां उपशांत कषायविषैं सत्व एकसौ छियालीस अथवा एकसौ अठतीस क्षीणकषायविषैं एकसौ एक सयोगीविषैं पिच्यासी अयोगीविषैं द्विचरम समय पर्यंत पिच्यासी चरम समयविषैं तेरह हैं। बहुरि दर्शनमार्गणाविषैं चक्षु अचक्षु दर्शनविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान आदिके बारह तहां गुणस्थानोक्तवत् रचना है। बहुरि अवधिदर्शनविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान असंयतादिक नव तहां रचना गुणस्थानोक्त है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्यक्त्वमार्गणायां—मिथ्यारुचीनां सत्त्वमष्टचत्वारिंशच्छतं। सासादनरुचीनां पंचचत्वारिंशच्छतं। मिश्ररुचीनां सप्तचत्वारिंशच्छतं। उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचत्वारिंशच्छतं। तत्रासंयतादूयुपशांतकषायांतान्यष्टौ गुणस्थानानि। संदृष्टिः—

उपशमसम्यक्त्वयोग्य १४८

व्यु	अ१	दे१	प्र	अ	अ	अ	सू	उ
स	१४८	१४७	१४६	१४६	१४६	१४६	१४६	१४६
अ	०	१	२	२	२	२	२	२

वेदकसम्यक्त्वे सत्त्वमष्टचत्वारिंच्छतं। असंयतादिचतुर्गुणस्थानानि। संदृष्टिः—

वेदकयोग्य १४८

व्यु	अ१	दे१	प्र०	अ०
स	१४८	१४७	१४६	१४६
अ	०	१	२	२

क्षायिकसम्यक्त्वे सत्त्वं सप्तप्रकृत्यभावादेकचत्वारिंशच्छतं। तत्रासंयते नरकतिर्यगायुषी व्युच्छित्तिः। कुतः? क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्देशसंयतो मनुष्य एवेति कारणात्। सत्त्वमेकचत्वारिंशच्छतं। देशसंयते एकान्नचत्वारिंशच्छतं। प्रमत्तेऽप्येकान्नचत्वारिंशच्छतं। अप्रमत्ते क्षपकश्रेण्यपेक्षया देवायुर्व्युच्छित्तिः। सत्त्वमेकोनचत्वारिंशच्छतं। अपूर्वकरणे उभयश्रेण्यपेक्षयाऽष्टत्रिंशच्छतं। अनिवृत्तिकरणादिषु गुणस्थानवत्।

संज्ञिमार्गणायां सामान्यसत्त्वमष्टचत्वारिंशच्छतं। गुणस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादीनि द्वादश विशेषो न।

असंज्ञिमार्गणायां 'ण तित्थयरमिति सत्वं सप्तचत्वारिंशच्छतं। मिथ्यादृष्टावपि तथा। सासादने पंचचत्वारिंशच्छतं।

आहारमार्गणायां—सत्वमष्टचत्वारिंशच्छतं। गुणस्थानानि सयोगांतानि त्रयोदश। विशेषो नास्ति॥ ३५५॥

स० चं०—अभव्य मार्गणा विषैं तीर्थंकर १ सम्यक्त्व मोहनी १ मिश्रमोहनी १ आहारक शरीर अगोपांग बंधन संघात ए च्यारि ४ इन सातका सत्व नाहीं जातैं वाके कदाचित् सम्यग्दर्शनादिक की प्रगटता नाहीं तातैं सत्व एकसौ इकतालीस गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि। बहुरि सम्यक्त्व मार्गणा विषैं मिथ्यारुचि विषैं सत्व एकसौ अडतालीस गुणस्थान एक मिथ्यादृष्टि, सासादन रुचि विषैं तीर्थंकर आहारक द्विक विना सत्व एकसौ पैंतालीस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थान एक सासादन मिश्र रुचि विषैं तीर्थंकर विना सत्व एकसौ सैंतालीस गुणस्थान एक मिश्र उपशम सम्यक्त्व विषैं सत्व प्रकृति एकसौ अठतालीस गुणस्थान असंयतादिक आठ तहां असंयतविषैं असत्व नास्ति सत्व सर्व, देशसंयतविषैं असत्व नरकायु सत्व एकसौ सैंतालीस प्रमत्तादि उपशांत मोह पर्यंतविषैं असत्व नरकायु तिर्यंचायु दोय सत्व एकसौ छियालीस बहुरि वेदक सम्यक्त्वविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान अविरतादिक च्यारि तहां रचना गुणस्थानवत् बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वविषैं च्यारि अनंतानुबंधी तीन दर्शन मोहनीका अभाव है तातैं सत्व प्रकृति एकसौ इकतालीस गुणस्थान असंयतादिक ग्यारह तहां असंयतविषैं असत्व नास्ति सत्व एकसौ इकतालीस इहां ही नरकायु तिर्यंचायुकी व्युच्छित्ति भई जातैं क्षायिकसम्यक्त्वी तिर्यंच देशगुणस्थानवर्ती न होइ, यातैं देशसंयतविषै असत्व दोय सत्व एकसौ गुणतालीस बहुरि प्रमत्त अप्रमत्तविषैं भी एकसौ गुणतालीस सत्व है बहुरि अपूर्वकरण विषैं दोऊ श्रेणीनिकी अपेक्षा सत्व एकसौ अठतीस है। बहुरि अनिवृत्तिकरणादिक विषैं गुणस्थानवत् कथन जानना। बहुरि संज्ञीमार्गणाविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक बारह, रचना गुणस्थानवत् जाननी। बहुरि असंज्ञी मार्गणाविषैं 'ण तित्थयरं' इस वचनतैं तीर्थंकर विना सत्व एकसौ सैंतालीस तहां मिथ्यादृष्टिविषैं असत्व नास्ति सत्व सर्व सासादनविषैं असत्व आहारक द्विक अर सत्व एकसौ पैंतालीस है। बहुरि आहार मार्गणाविषैं सत्व एकसौ अठतालीस गुणस्थान सयोगी पर्यंत तेरह तहां रचना गुणस्थानवत् जाननी ॥ ३५५ ॥

कम्मेवाणाहारे पयडीणं सत्तमेवमादेसे ।
कहियमिणं बलमाहवचंदच्चियणेमिचंदेण ॥३५६॥

कार्मे एवानाहारे प्रकृतीनां सत्वमेवमादेशे ।
कथितमिदं बलमाधवचंद्रार्चितनेमिचंद्रेण ॥ ३५६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—अनाहारमार्गणायां कार्मणयोगवत्, संदृष्टिः—

अनाहारयोग्य १४८

व्यु	मि	सा	अ६३	स	अ७२	१३
स	१४८	१४४	१४८	८५	८५	१३
अ	०	४	०	६३	६३	१३५

एवं मार्गणास्थाने प्रकृतिसत्वमिदं प्रत्यक्षवंदारुभ्यां बलदेववासुदेवाभ्यामर्चितनेमिचंद्रतीर्थंकरेण अथवा बलदेवभ्रात्रा श्रीमाधवचंद्रत्रैविद्यदेवेनार्चितनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्तिना निरूपितं ॥ ३५६ ॥

स० चं०—अनाहार मार्गणा विषैं कार्माण काय योगवत् रचना जाननी तहां मिथ्यादृष्टि सासादन अविरत सयोगीविषैं कार्माण काय योगवत् रचना है अर अयोगीविषैं अयोगी गुणस्थानवत् रचना है। ऐसैं यहु मार्गणा स्थान विषैं प्रकृतिनिका सत्व सो प्रत्यक्ष बंदनेवाले ऐसे बलभद्र अर माधव कहिए वासुदेव तिन कर अर्चित पूजित ऐसा जु नेमिचंद्र तीर्थंकर देव ताकरि निरूपण कीया है। अथवा बलदेव अपना भाई अर माधवचंद्र त्रैविद्यदेव इन करि पूजित ऐसा जु नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती ताकरि निरूपण कीया है ॥ ३५६ ॥

सो मे तिहुवणमहियो सिद्धो बुद्धो णिरंजणो णिच्चो।
दिसदु वरणाणलाहं बुहजणपरिपत्थणं परमसुद्धं ॥३५७॥

स मे त्रिभुवनमहितः सिद्धो बुद्धो निरंजनो नित्यः।
दिशतु वरज्ञानलाभं बुधजनपरिप्रार्थनं परमशुद्धं ॥ ३५७ ॥

जी० प्र०—स मे त्रिभुवनमहितः सिद्धो बुद्धो निरंजनो नित्यः दिशतु वरज्ञानलाभं बुधजनपरिप्रार्थितं परमशुद्धं ॥ ३५७ ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचन्द्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां
कर्मकांडे बंधोदयसत्त्वप्ररूपणो नाम द्वितीयोऽधिकारः ॥ २ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—सो श्रीनेमिचंद्र स्वामी तीन भुवन करि पूजित है सिद्ध है बुद्ध है निरंजन है नित्य है सो जाकौं बुध ज्ञानी जन प्रार्थना करैं जाचैं बहुरि जो परम शुद्ध होइ ऐसा वर उत्कृष्ट ज्ञान लाभकौं मोकूं द्यो-प्राप्त करो।

सोरठा—बंध उदय फुनि सत्त्व इस अधिकार विषैं कहे।
इनका जाने तत्त्व सो ज्ञानी शिव पद लहै ॥ २ ॥

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृतटीकाके अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषा टीकाविषै कर्मकांडविषै बंधोदयसत्वनिरूपण नामा दूसरा अधिकार संपूर्ण भया ॥ २ ॥

अथ सत्वस्थानभंगाधिकार ॥ ३ ॥

णमिऊण वड्ढमाणं कणयणिहं देवरायपरिपुज्जं।
पयडीण सत्तठाणं ओघे भंगे समं वोच्छं ॥३५८॥

नत्वा वर्धमानं कनकनिभं देवराजपरिपूज्यं।
प्रकृतीनां सत्त्वस्थानमोघे भंगेन समं वक्ष्यामि ॥ ३५८ ॥

जी० प्र०—कनकवर्णं देवराजपरिपूज्यं श्रीवीरवर्धमानस्वामिनं नत्वा प्रकृतीनां सत्त्वस्थानं गुणस्थानेषु भंगसहितं वक्ष्यामि। किं स्थानं ? को वा भंगः ? संख्याभेदेनैकस्मिन् जीवे युगपत्संभवत्प्रकृतिसमूहः स्थानं। अभिन्नसंख्यानां प्रकृतीनां परिवर्तनं भंगः, संख्याभेदेनैकत्वे प्रकृतिभेदेन वा भंगः ॥ ३५८ ॥ गुणस्थानेषु स्थानभंगप्रतिपादनप्रकारमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा—करि विशेष सत्ता सहित अष्ट कर्म अरि नाश।
महावीर जयवंत जगि धारो ज्ञान प्रकाश ॥ ३ ॥

स०चं०—कनक जो सोनौ तीहि सारिखा वर्णसंयुक्त बहुरि देवनिका राजा जो इंद्र ताकरि सर्व प्रकार पूज्य ऐसा वीर वर्धमान तीर्थंकर देवकौं नमस्कार करि ओघ जो गुणस्थान तिन विषैं भंगनिकरि सहित प्रकृतिनिका सत्व स्थान कहोंगा। तथा स्थान कहा ? अर भंग कहा ? सो कहिए है—

संख्या भेद करि एक काल एकै जीवविषैं जो प्रकृतिनिका समूह संभवै सो स्थान है। बहुरि एक संख्या रूप जे प्रकृति तिनविषै प्रकृतिनिका पलटना सो भंग है। अथवा संख्या भेदकरि एकत्वविषैं प्रकृति भेद करि भंग हो है। भावार्थ—एक जीवकैं एक कालविषैं जितनी प्रकृतिनिकी सत्ता पाइए तिनकै समूहका नाम स्थान कहिए सो जहां अन्य अन्य संख्याकौं लीएं प्रकृतिनिकी सत्ता पाइए तहां अन्य अन्य स्थान कहिए है।

जैसैं केई जीवनिकी एकसौ छियालीसकी सत्ता पाइए केई जीवनिकैं एकसौ पैंतालीसकी सत्ता पाइए तो इहां दोय स्थान भए ऐसैं ही सर्वत्र जानना। बहुरि जहां एक ही स्थानविषैं प्रकृतिनिका बदलना संभवै सो भंग कहिए जैसैं केई जीवनिकै मनुष्यायु अर देवायुकी सत्तासहित एकसौ पैंतालीसकी सत्ता पाइए है। केई जीवनिकैं तिर्यंचायु नरकायुकी सत्ता सहित एकसौ पैंतालीसकी सत्ता पाइए है तौ यहां स्थान तो एकही भया जातैं संख्या एक है बहुरि भंग अन्य भया जातैं प्रकृति बदली गई तहां मनुष्यायु देवायुकी सत्ता है, वहां तिर्यंचायु नरकायु की सत्ता है सो ऐसैंही सर्वत्र अन्य अन्य प्रकृतिनिकी संख्यातैं स्थान भेद हो है। बहुरि एक स्थान विषैं कोई प्रकृति अन्य अन्य होनेतैं भंग भेद हो है ऐसैं जानना ॥ ३५८ ॥ आगैं गुणस्थानविषैं स्थान अर भंग कहनेका विधान कहै हैं—

आउगबंधाबंधणभेदमकाऊण वण्णणं पढमं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भेदेण य भंगसमं परूवणं होदि बिदियम्हि ॥३५९॥

आयुष्कबंधाबंधनभेदमकृत्वा वर्णनं प्रथमं ।
भेदेन च भंगसमं प्ररूपणं भवति द्वितीयस्मिन् ॥ ३५९ ॥

जी० प्र०—आयुर्बंधाबंधभेदमकृत्वा प्रथमं वर्णनं भवति । द्वितीयस्मिन्नायुर्बंधाबंधभेदेन सह भंगसहितं प्ररूपणं भवति ॥ ३५९ ॥ तत्र प्रथमपक्षे आह—

स० चं०—आयुके बंधका वा आयुके अबंधका भेदकौं न करि पाहिला वर्णन है बहुरि दूसरा वर्णन विषैं आयुका बंधका वा अबंधका भेदसहित प्ररूपण है ॥ ३५९ ॥ तहां प्रथम पक्ष विषैं आयुका बंध अबंध विशेष विना कीएं जो सामान्य वर्णन तीहि विषैं कैसैं सत्ता पाइए सो कहै हैं—

सव्वं तिगेग सव्वं चेगं छसु दोण्णि चउसु छद्दस य दुगे ।
छस्सगदालं दोसु तिसट्ठी परिहीण पडि सत्तं जाणे ॥ ३६० ॥

सर्वं त्रिकैकं सर्वं चैकं षट्सु द्वयं चतुर्षु षट् दश च द्विके ।
षट्सप्तचत्वारिंशत् द्वयोस्त्रिषष्टिः परिहीनं प्रति सत्त्वं जानीहि ।

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ सत्त्वं सर्वमष्टचत्वारिंशच्छतं । सासादने तदेव तीर्थाहारकद्विकहीनं । मिश्रे तीर्थहीनं । असंयतेऽसर्वं । देशसंयते नरकायुर्हीनं । प्रमत्तादिषु षट्सु नरकतिर्यगायुर्हीनं । पुनरपूर्वकरणादिषु चतुर्षु नरकतिर्यगायुरनंतानुबंधिचतुष्कहीनं । क्षपकापूर्वकरणादिद्वये नरकतिर्यग्देवायुःसप्तप्रकृतिहीनं । सूक्ष्मसांपराये सोलट्ठिक्किगिछक्कं चदुसेक्कमिति षट्चत्वारिंशता हीनं । क्षीणकषाये लोभसहितया हीनं । सयोगायोगयोः घातिसप्तचत्वारिंशता नामकर्मत्रयोदशभिरायुस्त्रयेण च हीनं । चशब्दादयोगिचरमसमये पंचत्रिंशच्छतहीनं जानीहि ॥ ३६० ॥ ता अपनीतप्रकृतीराह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टि विषैं सत्व सर्व एकसौ अठतालीस है सासादन विषैं तीर्थंकर आहारक द्विक इन तीन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

विना एकसौ पैंतालीस सत्व है। मिश्रविषैं एक तीर्थंकर विना एकसौ सैंतालीस सत्व है। असंयत विषैं सर्व एकसौ अठतालीस सत्व है। देश संयतविषैं एक नरकायुविना एकसौ सैंतालीस सत्व है। प्रमत्तादिक छह गुणस्थानविषैं उपशम सम्यक्त्व अपेक्षा नरकायु तिर्यंचायु इन दोय विना एकसौ छियालीस सत्व है बहुरि अपूर्वकरणादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं अनंतानुबंधी विसंयोजना करनेकी अपेक्षा नरकायु तिर्यंचायु अनंतानुबंधीचतुष्क इन छहो विना एकसौ बियालीसका भी सत्व पाइए है। बहुरि क्षपक श्रेणी अपेक्षा अपूर्वकरणादिक दोय गुणस्थाननिविषैं नरकायु तिर्यंचायु देवायु तीन दर्शन मोह अनंतानुबंधी चतुष्क इन दश विना एकसौ अठतीस सत्व है। सूक्ष्म सांपरायविषैं अनिवृत्तिकरणमें व्युच्छित्ति भई सोलह आठ एक एक छह एक एक एक एक तिन सहित छियालीस विना एकसौ दोय सत्व है। क्षीण कषायविषैं लोभ सहित सैंतालीस विना एकसौ एक सत्व है। सयोगी अयोगीविषैं घातियानिकी सैंतालीस नाम कर्मकी तेरह तीन आयु इन तरेसठ विना पिच्यासी सत्व है चकारतैं अयोगीका अंत समयविषैं एकसौ पैंतीस विना तेरह सत्व है ऐसैं सत्व जानहु॥ आगैं जे ए प्रकृति घटाईं तिनके नाम कहै हैं—

सासणमिस्से देसे संजददुग सामगेसु णत्थी य।
तित्थाहारं तित्थं णिरयाऊ णिरयतिरियआउअणं॥३६१॥

सासादनमिश्रे देशे संयतद्विके शामकेषु नास्ति च।
तीर्थाहारं तीर्थं निरयायुर्निरयातिर्यगायुरनं॥ ३६१॥

जी० प्र०—सासादने मिश्रे देशसंयते संयतद्विके उपशमके चापनीतप्रकृतयः क्रमेण तीर्थाहारत्रयं तीर्थं नरकायुष्यं नरकतिर्यगायुर्द्वयं नरकतिर्ये-

१		मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	उ	क्षी	अ	उ	क्षी	सू	उ	क्षी	उ		क्षी	स	अ	चरम
	स	१४८	१४५	१४७	१४८	१४७	१४६	१४६	१४६	१४२	१३८	१४६	१४२	१३८	१४६	१४२	१०२	१४६	१४२	१०१	८५	८५	१३
	अ	०	३	१	०	१	२	२	२	६	१०	२	६	१०	२	६	४६	२	६	४७	६३	६३	१२५

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गायुषी अनंतानुबंधिचतुष्कं चेति षट्। चशब्दात् क्षपकेषु। दस य दुगे इत्यादिनोक्तप्रकृतयोऽपि ज्ञातव्याः। अथ गुणस्थानेषु स्थानसंख्या गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—सासादनविषैं मिश्रविषैं देशसंयतविषैं संयतद्विक प्रमत्त अप्रत्त तिन विषै उपशम श्रेणीविषैं अनुक्रमतैं तीर्थंकर आहारकद्विक ए तीन बहुरि तीर्थंकर बहुरि नरकायु बहुरि नरकायु तिर्यंचायु ए दोय बहुरि नरकायु तिर्यंचायु अनंतानुबंधी ए छह ऐसैं सत्व विषैं घटाई हुई प्रकृति जाननी। चकारतैं क्षपक श्रेणीविषैं 'दश य दुगे' इत्य दि पूर्वोक्त प्रकार घाटि प्रकृति जाननी ॥३६१॥ आगैं गुणस्थान विषैं आयुके बंध अबंधका भेद लीएं विशेष वर्णन कहे हैं तहां स्थान संख्या दोय गाथानिकरि कहे हैं—

बिगुणणव चारि अट्ठं मिच्छातिये अयदचउसु चालीसं।
तिय उवसमगे संते चउवीसा हौंति पत्तेयं ॥३६२॥
चउछक्कादि चउअट्ठं चउछक्क य हौंति सत्तठाणाणि।
आउगबंधाबंधे अजोगिअंते तदो भंगा ॥३६३॥ जुम्मं।

द्विगुणनव चत्वारि अष्ट मिथ्यत्रये अयतचतुर्षु चत्वारिंशत्।
त्रीणि उपशामके शांते चतुर्विंशतिः भवंति प्रत्येकं ॥ ३६२ ॥
चतुः षट्कृतिः चतुरष्ट चतुःषट्कं च भवंति सत्त्वस्थानानि।
आयुष्कबंधाबंधे अयोग्यंते ततो भंगाः ॥ ३६३ ॥ युग्मं ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ सत्त्वस्थानान्यष्टादश, सासादने चत्वारि, मिश्रेऽष्टौ, असंयतादिषु चतुर्षु प्रत्येकं चत्वारिंशत्, त्रिषूपशमकेषूपशांते च प्रत्येकं चतुर्विंशतिः, क्षपकापूर्वकरणे चत्वारि, अनिवृत्तिकरणे षट्त्रिंशत्, सूक्ष्मसांपराये चत्वारि, क्षीणकषायेऽष्टौ, सयोगे चत्वारि, अयोगे षट्। एवमायुर्बंधाबंधविवक्षायामयोग्यंतगुणस्थानेषु सत्त्वस्थानान्युक्तानि ॥ ३६२–३६३ ॥ ततोऽग्रे तेषां भंगसंख्यामाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं नवके दूणे अठारह सत्व स्थान हैं । सासादनविषैं च्यारि हैं। मिश्रविषैं आठ हैं। असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं प्रत्येक चालीस चालीस सत्व स्थान हैं। अपूर्वकरणादिक तीन उपशम श्रेणी युक्त अर उपशांत कषाय इनविषैं प्रत्येक चौवीस चौवीस सत्व स्थान हैं। क्षपक श्रेणीविषैं अपूर्वकरणविषैं तो च्यारि अनिवृत्तिकरणविषैं छत्तीस, सूक्ष्मसांपरायविषैं च्यारि, क्षीणकषायविषैं आठ, सयोगीविषैं च्यारि, अयोगीविषैं छह सत्व स्थान हैं। ऐसैं आयुका बंध वा अबंधका विवक्षाविषैं अयोगीपर्यंत गुणस्थाननिविषैं सत्व स्थान हैं ॥ ३६२-३६३ ॥ ताके आगैं इन स्थाननिके भंगनिकी संख्या कहै हैं—

पण्णास बार छक्कादि वीससयं अट्ठदाल दुसु दालं।
अडवीसा बासट्ठी अडचउवीसा य अट्ठ चउ अट्ठ ॥३६४॥

पंचादश द्वादश षट्कृतिः विंशशतं अष्टचत्वारिंशत् द्वयोः चत्वारिंशत्।
अष्टविंशतिः द्वाषष्टिः अष्टचतुर्विंशतिः च अष्ट चत्वारि अष्ट ॥ ३६४ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टावष्टादशस्थानानां भंगाः पंचाशत् । सासादनस्य चतुर्णां द्वादश । मिश्रस्याष्टानां षट्त्रिंशत् । असंयतस्य चत्वारिंशतो विंशत्युत्तरशतं । देशसंयतस्य चत्वारिंशतोऽष्टचत्वारिंशत् । प्रमत्तस्याप्रमत्तस्य च चत्वारिंशतश्चत्वारिंशत् । उभयश्रेण्यपूर्वकरणस्याष्टाविंशतेरष्टाविंशतिः । उभयश्रेण्यनिवृत्तिकरणस्य षष्टेर्द्वाषष्टिः । उभयश्रेणीसूक्ष्मसांपरायस्याष्टाविंशतेरष्टाविंशतिः । उपशांतकषायस्य चतुर्विंशतेश्चतुर्विंशतिः । क्षीणकषायस्याष्टानामष्टौ । सयोगकेवलिनश्चतुर्णां चत्वारः । अयोगिनः षण्णामष्टौ ॥ ३६४ ॥ अथ मिथ्यादृष्टावष्टादशस्थानानां प्रकृतिसंख्यामायुर्बंधाबंधविवक्षयाह—

१

	मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
स्थानं	१८	४	८	४०	४०	४०	४०	२४।४	२४।३६	२४।४	२४	८	४	६
भंगः	५०	१२	३६	१२०	४८	४०	४०	२८	६२	२८	२४	८	४	८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मिथ्यादृष्टिके अठारह स्थानकनिके पचास भंग हैं। सासादनके च्यारि स्थानकनिके बारह भंग हैं। मिश्रके आठ स्थानकानिके छत्तीस भंग हैं। असंयतके चालीस स्थानकनिके एकसौ वीस भंग हैं। देश संयतके चालीस स्थानकनिके अठतालीस भंग हैं। प्रमत्त अप्रमत्तके चालीस चालीस स्थानकनिके चालीस चालीस भंग हैं। दोऊ श्रेणीरूप अपूर्व करणके अठाईस स्थानकनिके अठाईस भंग हैं। दोऊ श्रेणीरूप अनिवृत्ति करणके साठि स्थानकनिके बासठि भंग है। दोऊ श्रेणीरूप सूक्ष्मसांपरायके अठाईस स्थानकनिके अठाईस भंग हैं। उपशांत कषायके चौवीस स्थानकनिके चौवीस भंग हैं। क्षीण कषायके आठ स्थानकनिके आठ भंग हैं। सयोगीके च्यारि स्थानकनिके च्यारि भंग हैं। अयोगीके छह स्थानकनिके आठ भंग हैं॥ ३६४॥ आगैं मिथ्यादृष्टिविषैं अठारह स्थानकनिविषैं प्रकृतिनिकी संख्या आयुका बंधकी वा अबंधकी विवक्षाकरि कहै हैं—

दुतिछस्सत्तट्ठणवेक्करसं सत्तरसमूणवीसमिगिवीसं।
हीणा सव्वे सत्ता मिच्छे बद्धाउगिदरमेगूणं॥३६५॥

द्वित्रिषट्सप्ताष्टनवैकादश सप्तदशोनविंशमेकविंशं।
हीना सर्वा सत्ता मिथ्ये बद्धायुष्कमितरदेकोनं॥ ३६५॥

जी० प्र०—बद्धायुष्के मिथ्यादृष्टौ द्वित्रिषट्सप्ताष्टनवैकादशसप्तदशैकान्नविंशत्येकविंशतिभिः पृथग्हीने सत्वे स्थानानि दश। अबद्धायुष्के पुनरेकैकस्मिन् हीने दश। एवं विंशतिस्थानेषु पुनरुक्तद्वयेऽपनीतेऽष्टादश भवंति॥ ३६५॥ ताः अपनीतप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—जाकैं आगामी आयुका बंध भया होइ ताकौं बद्धायु कहिए बहुरि जाकैं आगामी आयु बंध न भया होइ ताकौं अबद्धायु कहिए। तहां बद्धायु मिथ्यादृष्टिविषैं सर्व सत्वरूप एकसौ अठतालीस प्रकृतिनितैं दोय प्रकृति घाटि पहिला स्थान है बहुरि द्वितीयादिक स्थान अनुक्रमतैं तीन छह सात आठ नव ग्यारह सतरह उगणीस इकईस प्रकृति घाटि जानने। ए दश स्थान तौ बद्धायुके हैं। बहुरि अबद्धायुके बद्धायुके स्थाननितैं एक एक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अधिक प्रकृति घाटि स्थान जानने। ऐसैं इन वीस स्थाननिविषैं पुनरुक्त दोय स्थानक घटाएं मिथ्यादृष्टिविषैं सर्व अठारह स्थान जानने ॥३६५॥ आगैं घटाई जे प्रकृति तिनके नाम कहैं हैं—

तिरियाउगदेवाउगमण्णदराउगदुगं तहा तित्थं।
देवतिरियाउसहियाहारचउक्कं तु छच्चेदे ॥३६६॥
आउदुगहारातित्थं सम्मं मिस्सं च तह य देवदुगं।
णारयछक्कं च तहा णराउउच्चं च मणुवदुगं ॥३६७॥ जुम्मं।

तिर्यगायुष्कदेवायुष्कमन्यतरायुष्कद्विकं तथा तीर्थं।
देवातिर्यगायुस्सहितमाहारचतुष्कं च षट् चैताः ॥ ३६६ ॥
आयुर्द्विकाहारतीर्थं सम्यं मिश्रं च तथा च देवद्विकं।
नारकषट्क च तथा नरायुरुच्चं च मानवद्विकं ॥ ३६७ ॥ युग्मं।

जी० प्र०—तिर्यग्देवायुषी अन्यतरायुषी तीर्थं चेति देवतिर्यगायुषी आहारकचतुष्कं चेति अन्यतरायुषी तीर्थमाहारचतुष्कं चेति, ता एव सप्त,

१	० २	० ३	० ६	० ७	० ८	० ९	० ११	० १७	० १९	० २१
मि। ब=	१४६	१४५	१४२	१४१	१४०	१३९	१३७	१३१	१२९	१२७
भंगः	१	५	१	५	५	५	१	१	१	१
मि। अ=	१४५	१४४	१४१	१४०	१३९	१३८	१३६	१३०	१२९	१२७
भंगः	१	४	१	४	४	४	४	२	पुनः	पुनः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्यक्त्वप्रकृत्याष्टौ, पुनर्मिश्रप्रकृत्या नव, देवद्विकेनैकादश, नारकषट्केन सप्तदश, नरायुरुच्चैर्गोत्राभ्यामेकान्नविंशतिः, मनुष्यद्विकेनैकविंशतिः, तेषामष्टादशस्थानानां पंचाशद्भंगाः रचनानुसारेण परमगुरूपदेशेनोच्यंते—

तत्र प्राग्बद्धनरकायुर्मनुष्यो मिथ्यादृष्टिर्गृहीतवेदकसम्यक्त्वोऽसंयतः केवलिद्वयोपांते षोडशभावनाभिस्तीर्थबंधं प्रारभ्य तत्सकर्मा भूत्वा मरणकाले भुज्यमानायुष्यंतर्मुहूर्तेऽवशिष्टे मिथ्यादृष्टिर्जातस्तस्य तिर्यग्देवायुरभावात्षट्चत्वारिंशच्छतं सत्वस्थानं भवति । अस्य तु भंगः बध्यमानतिर्यग्मनुष्यायुर्भुज्यमानमनुष्यायुरसंयतयोस्तीर्थबंधप्रारंभाभावात्, बध्यमानदेवायुर्मनुष्यासंयतादिचतुर्णां सम्यग्दर्शनप्रकृत्यभावात् । भुज्यमाननारकबध्यमानमनुष्यायुषोर्मिथ्यादृष्टिर्नास्ति कुतः ? षण्मासावशेषे संभवत्तीर्थसत्वस्य तदा गर्भावतरणकल्याणसद्भावात् मिथ्यादृष्टित्वाघटनाच्चैक एव । स एव जीवो नारको भूत्वा पर्याप्तिनिष्पत्त्यंतर्मुहूर्ते मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा तिष्ठति तस्याबद्धायुष्कत्वाद्भुज्यमानायुष्यादितरेषामभावात्पंचचत्वारिंशच्छतं सत्त्वस्थानं भवति । तत्रापि भंग एक एव । संदृष्टिः—

ब	१४६ १
अ	१४५ १

पुनः द्वितीयं बध्यमानायुःस्थानं चतुर्गतिविवक्षितभुज्यमानबध्यमानायुर्द्वयाच्छेषायुर्द्वयतीर्थाभावात्पंचचत्वारिंशच्छतप्रकृतिकं । तत्र भंगाः भुज्यमाननारकबध्यमानतिर्यगायुः १ भुज्यमाननारकबध्यमानमनुष्यायुः २ भुज्यमानतिर्यग्बध्यमाननरकायुः ३ भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानतिर्यगायुः ४ भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानमनुष्यायुः ५ भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानदेवायुः ६ भुज्यमानमनुष्यबध्यमाननारकायुः ७ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानतिर्यगायुः ८ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानमनुष्यायुः ९ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानदेवायुः १० भुज्यमानदेवबध्यमानतिर्यगायुः ११ भुज्यमानदेवबध्यमानमनुष्यायुश्चेति १२ द्वादश भवंति ।

	१	१	०	०	१	१	०	०	०	१	०	०
बध्यमा.	ति	म	ना	ति	म	दे	ना	ति	म	दे	ति	म
भुज्यमा	ना	ना	ति	ति	ति	ति	म	म	म	म	दे	दे

एतेषु भुज्यमानबध्यमानतिर्यगायुर्भुज्यमानबध्यमानमनुष्यायुषोः पुनरुक्तत्वात् भुज्यमानतिर्यग्बध्यमाननरकायुः १—भुज्यमानमनुष्यबध्यमाननरकायुः ५२६
२—भुज्यमानमनुष्यबध्यमानतिर्यगायुः ३—भुज्यमानदेवबध्यमानतिर्यगायुः ४—भुज्यमानदेवबध्यमानमनुष्यायुषां समत्वाच्च शेषाः पंचैव ग्राह्याः । संदृष्टिः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बध्य	ति	म	म	दे	दे
भुज्य	ना	ना	ति	ति	म

तदवध्यमानायुः स्थानं तदेकं बद्धायुर्विना चतुश्चत्वारिंशच्छतप्रकृतिकं । तस्य भंगाश्चतुर्गतिभुज्यमानायुर्भेदाच्चत्वारः । संदृष्टिः—

बध्य	१४५ ५
अब	१४४ ४

कश्चिन्मिथ्यादृष्टिः प्रागप्रमत्तगुणस्थानं गत्वाऽनुपार्जिताहारकचतुष्टयतया तदसत्त्वोऽथवा उपार्ज्य क्रमेण मिथ्यादृष्टिर्भूत्वोद्वेल्य तदसत्त्वः सन् मनुष्योबद्धनरकायुर्गृहीतवेदकसम्यक्त्वोऽसंयतः केवलिद्वयोपांते षोडशभावनाभिस्तीर्थकरयुग्यबंधं प्रारभ्य तत्सत्कर्मा भूत्वा मरणे भुज्यमानायुष्यंतर्मुहूर्तेऽवशिष्टे द्वितीयतृतीयपृथ्व्योर्गमिष्यमानमिथ्यादृष्टिः स्यात् तस्य तृतीयं बध्यमानायुःस्थानं तिर्यग्देवायुराहारकचतुष्काभावाद्द्वाचत्वारिंशच्छतकं भवति। तस्य भंग एक एव बद्धतिर्यग्मनुष्यायुष्कयोस्तीर्थसत्त्वाभावात् । बद्धदेवायुष्के तत्सत्वेऽपि सम्यक्त्वप्रकृत्यभावाच्च। तर्हि मनुष्य एव तत्प्रारंभे, देवनारकासंयतेऽपि तद्बंधः कथं ? सम्यक्त्वाप्रच्युतावुत्कृष्टतन्निरंतरबंधकालस्यांतर्मुहूर्ताधिकाष्टवर्षन्यूनपूर्वकोटिद्वयाधिकत्रयस्त्रिंशत्सागरोपममात्रत्वेन तत्रापि संभवात् । तदबद्धायुःस्थानं मनुष्यायूरहितमिति तिर्यग्मनुष्यदेवायुराहारकचतुष्काभावादेकचत्वारिंशच्छतकं । तस्य द्वितीयतृतीयपृथ्व्यपर्याप्तनारकमिथ्यादृष्टेरेव संभवाद् भंग एकः । संदृष्टिः—

ब	१४२ १
अ	१४१ १

चतुर्थं बध्यमानायुःस्थानं विवक्षितभुज्यमानबध्यमानायुर्भ्यामितरायुर्द्वयाहारचतुष्कतीर्थाभावादेकचत्वारिंशच्छतकं । तत्र प्रागुक्तद्वादशभंगेषु पुनरुक्तसमभंगान्विहाय पंच भंगा भवंति । तदबद्धायुःस्थानं इतरायुस्त्रयाहारकचतुष्कतीर्थाभावाच्चत्वारिंशच्छतकं । तत्र चातुर्गतिकभेदाद् भंगाश्चत्वारः । संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ब	१४१ ५
अ	१४० ४

पंचमं बध्यमानायुःस्थानं विवक्षितभुज्यमानबध्यमानायुर्भ्यामितरायुर्द्वयाहारकचतुष्कतीर्थसम्यक्त्वप्रकृत्यभावाच्चत्वारिंशच्छतकं। तत्र प्राग्वद्भंगाः पंच। तदबद्धायुःस्थानं एकान्नचत्वारिंशच्छतकं। तत्र चातुर्गतिकभेदाद्भंगाश्चत्वारः। संदृष्टिः—

ब	१४० ५
अ	१३९ ४

षष्ठं बध्यमानायुःस्थानं विवक्षितभुज्यमानबध्यमानायुर्भ्यामितरायुर्द्विकाहारकचतुष्कतीर्थसम्यक्त्वमिश्राभावादेकान्नचत्वारिंशच्छतकं। तत्र प्राग्वद्भंगाः पंच तदबद्धायुःस्थानमष्टत्रिंशच्छतकं। तत्र चातुर्गतिकभेदाद्भंगाश्चत्वारः। संदृष्टिः—

ब	१३९ ५
अ	१३८ ४

सप्तमं बध्यमानायुःस्थानमुद्वेल्लितदेवद्विकैकेंद्रियविकलत्रयजीवस्य भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानमनुष्यायुषी त्यक्त्वा नारकदेवायुराहारकचतुष्कतीर्थसम्यक्त्वमिश्रदेवद्विकाभावात्सप्तत्रिंशच्छतकं। तत्र भंगः भुज्यमानैकेंद्रियविकलत्रयविशिष्टतिर्यग्बध्यमानतिर्यगायुष्क.. भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानमनुष्यायुष्कश्चेति द्वयोः पुनरुक्तमेकं विनैकः॥ ३६६—३६७॥

स० चं०—जो जीवकैं तिर्यंचायु देवायु विना एकसौ छियालीसकी सत्ता पाइए सो बद्धायुका एकस्थान तौ यहु है। बहुरि भुज्यमान बध्यमान दोय आयुविना कोई दोय आयु अर तीर्थंकर इन तीन विना एकसौ पैंताली-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है बहुरि देवायु तिर्यंचायु बहुरि आहारक चतुष्क इन छह विना एकसौ वियालीसका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है। बहुरि कोऊ दोय आयु आहारक चतुष्क तीर्थंकर इन सात विना एकसौ इकतालीसका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त सात अर सम्यक्त्व मोहनी इन आठ विना एकसौ चालीसका सत्त्व पाइए सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त आठ अर मिश्रमोहनी इन नव विना एकसौ गुणतालीसका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त नव अर देवगति वा आनुपूर्वी इन ग्यारह विना एकसौ सैंतीसका सत्व पाइए एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त ग्यारह अर नरकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर अंगोपांग बंधन संघात ए नारक षट्क इन सतरह विना एकसौ इकतीसका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त सतरह अर नरायु उच्चगोत्र इन उगणीस विना एकसौ गुणतीसका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है। बहुरि पूर्वोक्त उगणीस अर मनुष्यगति वा आनुपूर्वी इन इकईस विना एकसौ सत्ताईसका सत्व पाइए सो एक यहु स्थान है। ऐसैं बद्धायुके स्थान दश जानने। बहुरि अबद्धायुके भुज्यमान आयुहीकी सत्ता पाइए बध्यमान आयुकी सत्ता न पाइए तातैं पूर्वोक्त सत्वतैं एक एक बध्यमान आयुकरि हीन ऐसैं अबद्धायुके दश स्थान जानने। तहां पुनरुक्त दोय स्थान दूर कीजिए ऐसैं अठारह स्थान मिथ्यादृष्टिविषैं हैं। भावार्थ—इहां यहु है—जो मिथ्यादृष्टिविषैं इस प्रकार प्रकृतिनिकी सत्ता एक जीवकैं एककालविषैं पाइए अन्य प्रकार कदाचित् न पाइए। इहां विद्यमान जिस आयुकौं भोगवै है सो भुज्यमान आयु कहिए। बहुरि जिस आगामी आयुका बंध किया होइ ताकौं बध्यमान आयु कहिए। सो अब इन अठारह स्थाननिके पंचास भंग रचनाके अनुसारि परम गुरूके उपदेशकरि कहिए है—

तहां पूर्वै नरकायु बंध जाकैं भया होइ ऐसा मिथ्यादृष्टि मनुष्य सो वेदक सम्यक्त्वकौं अंगीकार करि असंयत गुणस्थानवर्ती होय केवली श्रुतकेवलीके निकटि षोडश भावनानिकरि तीर्थंकर प्रकृतिके बंधका प्रारंभ करि तीर्थंकर प्रकृतिकी सत्तायुक्त होइ मरण कालविषैं भुज्यमान मनुष्यायुका अंतर्मुहूर्त काल अवशेष

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रहैं मिथ्यादृष्टी भया तिस जीवकैं तिर्यंचायु देवायुके सत्वका अभाव है। तातैं एकसौ छियालीस प्रकृतिस्वरूप सत्वस्थान पाइए। इहां भंग भी एक ही पाइए जातैं जिनकैं बध्यमान तिर्यंचायु मनुष्यायु होइ अर भुज्यमान मनुष्यायु होइ तिन असंयत सम्यग्दृष्टिनिकैं तीर्थंकर बंधका प्रारंभ न होइ। बहुरि बध्यमान देवायु भुज्यमान मनुष्यायु युक्त असंयतादि च्यारि गुणस्थानवर्ती जीव सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट होइ मिथ्यादृष्टिविषैं होते नाहीं। बहुरि भुज्यमान नरकायु बध्यमान मनुष्यायु ऐसा भंग नरकायुका छह महीना अवशेष रहैं संभवै तहां गर्भावतरण कल्याणके सद्भावतैं मिथ्यादृष्टिपना संभवै नाहीं तातैं भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु ऐसा एकही भंग संभवै है अन्य प्रकार प्रकृतिके बदलनेतैं एकसौ छियालीसका सत्व पाइए है। बहुरि अबद्धायुके भुज्यमान एक आयुका सत्व विना अन्य आयुका सत्व संभवै नाहीं तातैं देवायु मनुष्यायु तिर्यंचायु विना एकसौ पैंतालीसका सत्वरूप स्थान होइ तहां भी भंग एक भुज्यमान नरकायु रूप ही जानना जातैं सोई बध्यमान नरकायु तीर्थंकर सत्तावाला मनुष्य मरि नारकी भया ताकैं निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्थाविषैं अंतर्मुहूर्त पर्यंत मिथ्यादृष्टिपना रहै है। तहां अबद्धायुपनातैं भुज्यमान एक नरकायुका सत्व विना अन्य सत्व नाहीं है तिस जीवकैं एकसौ पैंतालीस सत्व स्थान संभवै है अन्यकैं ऐसा सत्व न पाइए। बहुरि बद्धायुका दूसरा स्थान भुज्यमान बध्यमान दोय अर तीर्थंकर इन तीन विना एकसौ पैंतालीस प्रकृतिनिका सत्व रूप जानना तहां भंग कहिए हैं—

भुज्यमान नरकायु बध्यमान तिर्यंचायु १ भुज्यमान नरकायु बध्यमान मनुष्यायु २ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान नरकायु ३ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु ४ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान मनुष्यायु ५ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान देवायु ६ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नारकायु ७ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान तिर्यंचायु ८ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान मनुष्यायु ९ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु १० भुज्यमान देवायु बध्यमान तिर्यंचायु ११ भुज्यमान देवायु बध्यमान मनुष्यायु १२ ऐसैं बारह भंग भए। इन विषैं भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु अर भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान मनुष्यायु ए दोऊ भंग पुनरुक्त हैं जातैं भुज्यमान तिर्यं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चायु बध्यमान तिर्यंचायु इस भंग विषैं एक तिर्यंचायु ही की सत्ता आई और दूसरी प्रकृति नाहीं। ऐसैं ही भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान मनुष्यायु विषैं भी जानना। यातैं ए दोऊ भंगनितैं अवशेष दश रहे तिनविषैं भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान नरकायुकैं अर भुज्यमान नरकायु बध्यमान तिर्यंचायुके समानता है जातैं दोऊ भंगनिविषैं नरकायु तिर्यंचायुही की सत्ता पाइए यातैं दोऊ भंगनिका एकही भंग गिनिए ऐसैंही भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु अर भुज्यमान नरकायु बध्यमान मनुष्यायुविषैं बहुरि भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान तिर्यंचायु अर भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान मनुष्यायुविषैं बहुरि भुज्यमान देवायु बध्यमान तिर्यंचायु अर भुज्यमान तिर्यंचायु अर बध्यमान देवायुविषैं बहुरि भुज्यमान देवायु बध्यमान मनुष्यायु अर भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु बिषैं समानता हैं तातैं एक एक ही भंग गिन्या ऐसैं एकसौ पैंतालीस बद्धायु सत्ताविषैं पंच भंग जानने। यहां भंगनिका यहु भावार्थ है—

भुज्यमान बध्यमान तिर्यंचायु नरकायु वालेकैं तो तिर्यंचायु नरकायुकी सत्ता सहित एकसौ पैंतालीस सत्व स्थान पाइए सो एक तो यहु भंग भया बहुरि भुज्यमान बध्यमान मनुष्यायु नरकायुवालेकैं मनुष्यायु नरकायु सहित एकसौ पैंतालीस सत्त्र स्थान पाइए सो दूसरा यहु भंग भया सो उस भंग विषैं तिर्यंचायु अर इस भंगविषैं मनुष्यायु ऐसैं एक प्रकृति बदली गई तातैं अन्य अन्य भंग कह्या ऐसैं ही अन्यत्र भी भंगनिका स्वरूप जानि लेना। बहुरि अबद्धायुका दूसरा स्थान एकसौ पैंतालिसमैं बध्यमान एक आयुकी सत्ता घटाइए एकसौ चवालिस प्रकृति रूप है यातैं च्यारो गतिका जीव भुज्यमानकी अपेक्षा च्यारि भंग हैं। भुज्यमान तिर्यंचायुवालेकैं तिर्यंचायु सहित एकसौ चवालिसका सत्व स्थान है अर भुज्यमान नरकायुवालेकैं नरकायु सत्ता सहित एकसौ चवालीस रूप सत्व स्थान पाइए ऐसैं प्रकृति बदलनेतैं इहां भी अन्य अन्य भंग जानने। ऐसैं ही अन्यत्र भी भंग जानने। बहुरि कोई मिथ्यादृष्टि जीव पहिलैं अप्रमत्त गुणस्थानकौं प्राप्त होइ तहां आहारकचतुष्टयका बंध न कीया तातैं ताकैं आहारक चतुष्टयका सत्व नाहीं है। अथवा अप्रमत्त गुणस्थानविषैं आहारक चतुष्टयका बंधकरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पीछैं मिथ्यादृष्टि होइ आहारक चतुष्टयकी उद्वेलना करी तातैं आहारक चतुष्टयका सत्व रहित भया ऐसा मनुष्य नरकायुका बंध पहिलैं करि पीछैं वेदक सम्यक्त्वकौं धारि असंयत गुणस्थानवर्ती होइ केवली श्रुतकेवलीकै निकटि षोडश कारण करि तीर्थंकर बंधका प्रारंभ करि तीर्थंकर सत्त्व सहित होइ भुज्यमान आयुका अंतर्मुहूर्त अवशेष रहैं दूसरी तीसरी पृथ्वीविषैं गमनकौं योग्य मिथ्यादृष्टि होइ, जिस जीवकैं तीसरा बद्धायुस्थान तिर्यंचायु देवायु आहारक चतुष्क विना एकसौ वियालीस प्रकृति रूप पाइए तहां भंग एक ही है। इस ही प्रकार एकसौ वियालीस का सत्त्व पाइए अन्य प्रकार नाहीं ! जातैं मनुष्यायु तिर्यंचायुका पहिलैं बंध भया होइ ताकैं तीर्थंकरका बंध न होइ। देवायुका जाकैं बंध भया होइ ताकैं तीर्थंकरका सत्व होइ पर मिथ्यादृष्टि न होइ। इहां प्रश्न—जो मनुष्यही विषैं तीर्थंकर बंधका प्रारंभ कह्या तो देव नारकीकैं असंयतविषैं तीर्थंकर बंध कैसैं कह्या है ? ताका समाधान—जो पहिलैं तीर्थंकर बंधका प्रारंभ तो मनुष्यहीकैं होइ पीछैं जा सम्यक्त्वस्यों भ्रष्ट न होइ तो समय समय प्रति अंतर्मुहूर्त अधिक आठ वर्ष घाटि दोय कोडि पूर्व अधिक तेतीस सागर पर्यंत उत्कृष्टपनैं तीर्थंकर प्रकृतिका बंध समयप्रबद्धविषैं हूवा करै तातैं देव नारकी विषैं भी तीर्थंकरका बंध संभवै है। बहुरि तीसरा अबद्धायुस्थान मनुष्यायुका भी सत्व रहित है तातैं तिर्यंच मनुष्य देव ए तीन आयु आहारक चतुष्टय इन सात बिना एकसौ इकतालीस प्रकृति रूप जानना। इहां सो तीर्थंकर सत्तावाला मरि दूसरी तीसरी नरक पृथ्वीविषैं प्राप्त भया तहां अपर्याप्त अवस्थाविषैं मिथ्यादृष्टी ही रहै ताकैं भुज्यमान नरकायुका सत्व विना अन्य आयुका सत्व नाहीं है। तिस ही जीवकैं ऐसी सत्ता पाइए तातैं भंग एकही जानना अन्य प्रकार ऐसी सत्ता न होइ। बहुरि चौथा बद्धायुस्थान भुज्यमान बध्यमान विना दोय आयु आहारक चतुष्क तीर्थंकर इन सात विना एकसौ इकतालीस प्रकृति रूप जानना। तहां पूर्वोक्त बारह भंगनिविषैं दोय पुनरुक्त अर पंच समान भंगनि बिना अवशेष पंच भंग जानने। बहुरि चौथा अबद्धायुस्थान भुज्यमान बिना तीन आयु आहारक चतुष्क तीर्थंकर बिना एकसौ चालीस प्रकृतिरूप जानना। तहां भुज्यमान च्यारि गतिकी अपेक्षा च्यारि भंग हैं बहुरि पांचवां बद्धायुस्थान भुज्यमान बध्यमान बिना दोय ५२९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आयु आहारक चतुष्क तीर्थंकर सम्यक्त्व मोहनी इन आठ बिना एकसौ चालीस प्रकृतिरूप जानना। तहां पूर्वोक्त प्रकार बारह भंगनिविषैं पांच भंग जानने। बहुरि पांचवा अबद्धायुस्थान पूर्वोक्त एकसौ चालीसमैं बध्यमान आयु बिना एकसौ गुणतालीस प्रकृतिरूप जानना तहां च्यारि गतिके भेदतैं भंग च्यारि जानने। बहुरि छठा बद्धायुस्थान भुज्यमान बध्यमान बिना आयु दोय तीर्थंकर आहारक चतुष्क सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी इन बिना एकसौ गुणतालीस प्रकृतिरूप जानना तहां भंग पूर्वोक्त प्रकार पंच जानने। बहुरि छठा अबद्धायुस्थान पूर्वोक्त एकसौ गुणतालीसमैं बध्यमान आयु बिना एकसौ अठतीस प्रकृतिरूप जानना। तहां भंग च्यारि गतिकी अपेक्षा च्यारि जानना। बहुरि सातवां बद्धायुस्थान देवद्विककी उद्वेलना जिनकै भई ऐसे एकेंद्री विकलत्रय जीवनिकैं भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान मनुष्यायु बिना अवशेष देवायु अर नरकायु बहुरि आहारक चतुष्क तीर्थंकर सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी देवगति वा आनुपूर्वी इन बिना एकसौ सैंतीस प्रकृतिरूप जानना। तहां भुज्यमान एकेंद्री विकलेंद्री संबंधी तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु बहुरि भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान मनुष्यायु ए दोय भंग हैं तिन विषैं भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु यह पुनरुक्त भंग है सो न गिन्या तातैं भंग एक ही जानना। इहां उद्वेलनाका स्वरूप पूर्वै कह्या है सो जानना ॥ ३६६–३६७ ॥

उव्वेल्लिददेवदुगे बिदियपदे चारि भंगया एवं।
सपदे पढमो बिदियं सो चेव णरेसु उप्पण्णो ॥३६८॥
वेगुव्वअट्ठरहिदे पंचिंदियतिरियजादिसुववण्णे।
सुरछब्बंधे तदियो णरेसु तब्बंधणे तुरियो ॥३६९॥ जुम्मं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उद्वेल्लितदेवद्विके द्वितीयपदे चत्वारो भंगा एवं ।
स्वपदे प्रथमो द्वितीयः स चैवं नरेषु उत्पन्नः ॥ ३६८ ॥
वैगूर्वाष्टरहिते पंचेंद्रियतिर्यग्जातिषूपपन्ने ।
सुरषड्बंधे तृतीयो नरेषु तद्बंधने तुरीयः ॥ ३६९ ॥

जी० प्र०—तद्द्वितीयेऽबद्धायुःस्थाने षट्त्रिंशच्छतकोद्वेल्लितदेवद्विकस्यैकेंद्रियविकलत्रयमिथ्यादृष्टेः तस्मिन्नेव भवे भंग एकः । पुनस्तस्यैव मनुष्येषूत्पन्नस्यापर्याप्तकाले मिथ्यादृष्टित्वात्सुरचतुष्कायुष्कस्याबंधाद् द्वितीयः, संख्यैकत्वप्रकृतिभेदयोस्सद्भावात् । पुनस्तस्यैव वैक्रियिकाष्टके उद्वेल्लिते पंचेंद्रियतिर्यग्जातावुत्पन्नस्य पर्याप्तेरुपरि सुरषट्कबंधेन नरकद्विकस्याबंधात्तृतीयः । मनुष्येषूत्पन्नस्य सुरषट्कबंधे चतुर्थः । एवं चत्वारो भंगा भवंति । संदृष्टिः—

ब	१३७ १
अ	१३६ ४

अष्टमे बध्यमानायुःस्थाने नारकषट्के उद्वेल्लिते एकेंद्रियविकलत्रयजीवस्य भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानमनुष्यायुर्भ्यामितरसुरनारकायुराहारकचतुष्कतीर्थसम्यक्त्वमिश्रदेवद्विकनारकषट्काभावादेकत्रिंशच्छतके भंगः । भुज्यमानबध्यमानतिर्यगायुष्कभुज्यमानतिर्यग्बध्यमानमनुष्यायुष्कश्चेति भंगद्वये पुनरुक्तमेकं त्यक्त्वैकः ॥ ३६८ ॥ ३६९ ॥

सं०च०—बहुरि सातवां अबद्धायु स्थान एकसौ छत्तीस प्रकृति रूप है तहां देवद्विककी उद्वेलना जाकैं भई ऐसा एकेन्द्री वा विकलत्रय मिथ्यादृष्टि जीव ताकैं तिसही पर्यायविषैं आहारक चतुष्क तीर्थंकर सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी देवगति वा आनुपूर्वी नव तौ ए अर भुज्यमान तिर्यंचायु विना अवशेष तीन आयु इन बारह विना सत्व एकसौ छत्तीसका पाइए सो एक तौ यहु भंग है । बहुरि सोई देवद्विककी उद्वेलना जाकैं भई ऐसा एकेंद्री विकलत्रय मिथ्यादृष्टि जीव सो मरि करि मनुष्य उपजा तहां अपर्याप्त अवस्थाविषैं मिथ्यादृष्टिपनांतैं सुरचतुष्कका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंध नाहीं तातैं पूर्वोक्त नव अर भुज्यमान मनुष्यायु विना तीन आयु ऐसैं बारह विना एकसौ छत्तीसका सत्व पाइए सो यहु दूसरा भंग है। बहुरि जाकैं वैक्रियिक अष्टककी उद्वेलना भई ऐसा सोई एकेंद्री विकलत्रय जीव मरि करि पंचेंद्री तिर्यंच विषैं उपज्या तहां पर्याप्त दशाविषैं देवगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग बंधन संघात इस सुरषट्कका तौ बंध कीया अर नरकगति वा आनुपूर्वीका बंध न कीया तहां आहारक चतुष्क तीर्थंकर सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी नरकगति वा आनुपूर्वी नव तौ ए अर भुज्यमान तिर्यंचायु विना तीन आयु ऐसैं बारह विना एकसौ छत्तीसका सत्व पाइए सो यहु तीसरा भंग है। बहुरि सोई जीव मरि करि मनुष्य-विषैं उपज्या तहां सुरषट्कका बंध होतैं पूर्वोक्त नव अर भुज्यमान मनुष्यायुविना तीन आयु ऐसैं बारह विना एकसौ छत्तीसका सत्व पाइए सो यहु चौथा भंग है। ऐसैं च्यारि भंग भए। इहां सब भंगनिविषैं एकसौ छत्तीसहीकी संख्या पाइए तातैं स्थान एक कह्या अर प्रकृति बदलनेतैं च्यारि प्रकार पाइए तातैं भंग च्यारि कहे। बहुरि आठवां बद्धायुस्थान नारकषट्ककी उद्वेलना भएं एकेंद्री विकलत्रय जीवकैं हो है सो भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान मनुष्यायु विना देव नरक दोय आयु आहारक चतुष्क तीर्थंकर सम्यक्त्वमोहनी मिश्र मोहनी देवगति वा आनुपूर्वी नरकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर अंगोपांग बंधन संघात ए नारक षट्क इन सतरह विना एकसौ इकतीस प्रकृतिरूप जानना तहां भंग दोय भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु १ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान मनुष्यायु २ तहां भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु यहु भंग पुनरुक्त है तातैं ग्रहण न करना एकही भंग जानना ॥ ३६८ ॥ ३६९ ॥

णारकछक्कुव्वेल्ले आउगबंधुज्झिदे दुभंगा हु।
इगिविगलेसिगिभंगो तम्मि णरे बिदियमुप्पण्णे ॥३७०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नारकषट्कोद्वेल्ये आयुर्बंधोज्झिते द्विभंगौ हि ।
एकविकलेष्वेकभंगस्तस्मिन्नरे द्वितीयमुत्पन्ने ॥ ३७० ॥

जी० प्र—तदबद्धायुःस्थाने त्रिंशच्छतके भंगः, नारकषट्कोद्वेल्लितैकेंद्रियविकलत्रयजीवे एकः । तु—पुनस्तस्मिन्नेव जीवे मनुष्येषूत्पन्ने प्रथमकाले द्वितीयः । एवं द्वौ भंगौ खलु स्फुटं मनुष्यायुषो भेदात् । संदृष्टिः—

ब	१३१ १
अ	१३० २

उच्चैर्गोत्रोद्वेल्लिततेजोवातकायिकयोर्नवमं बद्धायुःस्थानं तत्कायविशिष्टभुज्यमानबध्यमानतिर्यगायुर्भ्यामितरायुस्त्रयाहारकचतुष्टयतीर्थसम्यक्त्व मिश्रदेवद्विकनारकषट्कोच्चैर्गोत्राभावात् एकान्नत्रिंशच्छतकं तत्र भुज्यमानबध्यमानतिर्यगायुष्कतेजोवातकायिकभंग एकः । सोयं पुनरुक्तोऽपि ग्राह्यः । तदबद्धायुःस्थानमेकान्नत्रिंशच्छतकं तत्र तेजोवातयोः स्वस्थानभंग एकः स न ग्राह्यः पुनरुक्तत्वात् । संदृष्टिः—

ब	१२९ १
अ	१२९ पुनरु.

मनुष्यद्विकोद्वेल्लिततेजोवायुकायिकयोर्दशमं बद्धायुःस्थानं तद्द्विकेनोच्चैर्गोत्रोद्वेल्लितस्योक्ततद्प्रकृत्यस्याभावात्सप्तविंशतिशतकं । तत्रापि भुज्यमानबध्यमानतिर्यगायुष्कतेजोवायुकायिकभंग एकः स च पुनरुक्तोऽपि ग्राह्यः। तदबद्धायुःस्थानं तदेकविंशतेरभावात्सप्तविंशतिशतकं । तत्र तत्तेजोवायुकायिकस्वस्थानभंग एकः, स च पुनरुक्तत्वान्न ग्राह्यः । संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बध्य	१२७ / १
अब	१२७ / १
पुनरु.	

॥ ३७० ॥ अथोक्ताष्टादशसत्त्वस्थानभंगान् पुनरुक्तसमभंगेभ्यः शेषान् संख्याति—

स०चं०—बहुरि सो आठवां अबद्धायुस्थान भुज्यमान आयु विना तीन आयु अर आहारक चतुष्टयादिक पंद्रह इन विना एकसौ तीस प्रकृति रूप जानना। तहां भंग दोय, नारक षट्ककी उद्वेलना भए एकेंद्री विकलत्रय जीवकैं तिर्यंचायु विना तीन आयु आहारक चतुष्टयादि पंद्रह इन विना एकसौ तीसका सत्व पाइए सो एक तौ यहु भंग है। बहुरि सोई एकेंद्री विकलत्रय जीव मरिकरि मनुष्य उपजा तहां अपर्याप्त कालविषैं मनुष्यायु विना तीन आयु आहारक चतुष्टयादि पंद्रह इन विना एकसौ तीस का सत्व पाइए सो यहु दूसरा भंग है। बहुरि नवमां बद्धायु स्थान उच्चगोत्रकी उद्वेलना भएं तेजःकायिक वातकायिक जीवनिविषैं पाइए सो पूर्वोक्त एकसौ तीसमेंस्यों उच्चगोत्रका अभाव भया तातैं एकसौ गुणतीस प्रकृतिरूप जानना। तहां भंग एक भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान तिर्यंचायु सो यहु भंग पुनरुक्त है तथापि इहां अन्य प्रकार कोई भंग नाहीं तातैं इसहीका ग्रहण करना बहुरि नवमां अबद्धायु स्थान भी एकसौ गुणतीस प्रकृतिरूप ही है सो यहु स्थान बद्धायुस्थानके समान है तातैं पुनरुक्त है तातैं इस स्थानका ग्रहण न करना। बहुरि दसवां बद्धायुस्थान मनुष्यद्विककी उद्वेलना भए तेजःकायिक वातकायिक जीवकैं पाइए सो पूर्वोक्त एकसौ गुणतीसमें मनुष्यगति वा मनुष्यानुपूर्वी विना एकसौ सत्ताईसका सत्व रूप जानना तहां भंग एक ही है सो यहु भंग पुनरुक्त है तथापि ग्रहण करना। पूर्वैं पुनरुक्त भंग अबद्धायु स्थानविषैं गर्भित होगये थे तातैं ग्रहण न कीए थे इहां अबद्धायु स्थानका ग्रहण ही न कीया तातैं पुनरुक्त

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भंगका ग्रहण कीया। बहुरि दशवां अबद्धायुस्थान भी तैसैं ही एकसौ सत्ताईस प्रकृतिरूप जानना सो इस बद्धायु स्थान अबद्धायुस्थानविषैं किछू संख्या वा प्रकृतिविषैं विशेष नाहीं तातैं यहु स्थान ग्रहण न करना ॥३७०॥ आगैं कहे जे अठारह स्थान तिनके पुनरुक्त अर समभंग विना जे भंग कहे तिनकी संख्या गाथाकरि कहैं हैं—

बिदिये तुरिये पणगे छट्ठे पंचेव सेसगे एक्कं।
बिगचउपणछस्सत्तयठाणे चत्तारि अट्ठगे दोण्णि ॥३७१॥

द्वितीये चतुर्थे पंचमे षष्ठे पंचैव शेषके एकः।
द्विकचतुःपंचषट्सप्तमस्थाने चत्वारः अष्टमे द्वौ ॥ ३७१ ॥

जी० प्र०—द्वितीये चतुर्थे पंचमे षष्ठे बद्धायुष्कसत्त्वस्थाने पंच पंच भंगा भवंति। शेषप्रथमतृतीयसप्तमाष्टमनवमदशमेष्वेकैक एव। अबद्धायुःस्थानेषु च द्वितीये चतुर्थे पंचमे षष्ठे सप्तमे चत्वारश्चत्वारः, अष्टमे द्वौ, शेषप्रथमतृतीयोरेकैकः, एवं मिथ्यादृष्टौ सत्त्वस्थानान्यष्टादश। भंगाः पंचाशत् ॥ ३७१ ॥ अथ सासादनमिश्रयोः स्थानभंगसंख्यां गाथाचतुष्केणाह—

स० चं०—दूसरा चौथा पांचवा छठा बद्धायुस्थानविषैं पांच पांच भंग जानने अवशेष पहिला तीसरा सातवां आठवां नवमां दशवां बद्धायुस्थानविषैं एक एक भंग जानना। बहुरि अबद्धायु स्थानविषैं दूसरा चौथा पांचवां छठां सातवां विषैं च्यारि च्यारि आठवां विषैं दोय अवशेष पहिला तीसरा विषैं एक एक भंग जानने ऐसैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं सत्त्वस्थान अठारह भंग पचास जानने ॥ ३७१ ॥ आगैं सासादन मिश्रविषैं स्थान अर भंगनिकी संख्या च्यारि गाथानि करि कहैं हैं—

सत्तातिगं आसाणे मिस्से तिगसत्तसत्तएयारा।
परिहीण सव्वसत्तं बद्धस्सियरस्स एगूणं ॥३७२॥ ५५५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सप्तत्रिकमासाने मिश्रे त्रिकसप्तसप्तैकादश ।
परिहीनं सर्वसत्त्वं बद्धस्येतरस्यैकोनं ॥ ३७२ ॥

जी० प्र०—सासादने सप्तभिर्हीनं त्रिभिर्हीनं च सर्वसत्त्वं बद्धायुष्कस्य । मिश्रे त्रिभिः सप्तभिः सप्तभिरेकादशभिश्च हीनं भवति । अबद्धायुष्कस्य पुनरेकैकहीनं भवति ॥ ३७२ ॥ सासादनस्य हीनप्रकृतीराह—

स० चं०—सासादनविषैं सर्व सत्वमैं सातकरि हीन अर तीनकरि हीन दोय स्थान जानने। बहुरि मिश्रविषैं तीनकरि हीन सातकरि हीन सातकरि हीन ग्यारह करि हीन च्यारि स्थान जानने सो ए बद्धायुके स्थान हैं। बहुरि अबद्धायुके स्थान बद्धायुके स्थाननितैं एक एक बध्यमान आयु करि हीन स्थान जानने ॥३७२॥ ते हीन प्रकृति कौन कौन? सो सासादनविषैं कहैं हैं—

तित्थाहारचउक्कं अण्णदराउगदुगं च सत्तेदे ।
हारचउक्कं वज्जिय तिण्णि य केइं समुद्दिट्ठं ॥ ३७३ ॥

तीर्थाहारचतुष्कमन्यतरायुष्कद्विकं च सप्तैताः ।
आहारकचतुष्कं वर्जयित्वा तिस्रश्च केश्चित्समुद्दिष्टं ॥ ३७३ ॥

जी० प्र०—तीर्थमाहारचतुष्टयं विवक्षितभुज्यमानबध्यमानाभ्यामितरायुषी चेति सप्त । तत्राहारकचतुष्के वर्जिते तिस्रः तच्चतुष्कसत्त्वं तु कैश्चिदेवोद्दिष्टं ॥ ३७३ ॥ मिश्रस्य ता आह—

स० चं०—सासादनविषैं तीर्थंकर आहारकचतुष्क भुज्यमान बध्यमान विना दोय आयु इन सात विना एकसौ इकतालीस रूप प्रथमस्थान जानना बहुरि तिन सातमैं आहारक चतुष्क न गिनिए तब एकसौ पैंतालीस रूप दूसरा स्थान जानना सो इस एकसौ पैंतालीसका स्थानविषैं जो आहारक चतुष्कका सत्व कह्या सो केई आचार्यनिकरि कह्या है तातैं कह्या है। बहुरि केई आचार्य सासादनविषैं आहारक चतुष्कके सत्वका अभाव ही कहैं हैं तिस अपेक्षा एकसौ इकतालीसका ही एक स्थान है ॥ ३७३ ॥ आगैं मिश्रविषैं कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तित्थण्णदराउदुगं तिण्णिवि अणसहिय तह य सत्तं च ।
हारचउक्के सहिया ते चेव य होंति एयारा ॥ ३७४ ॥

तीर्थान्यतरायुर्द्विकं तिस्रः अपि अनसहिताः तथा च सत्त्वं च ।
आहारचतुष्केण सहितास्ताः चैव च भवंति एकादश ॥ ३७४ ॥

जी० प्र०—तीर्थमन्यतरायुषी चेति तिस्रः । ता एव पुनः अनंतानुबंधिचतुष्केण सप्त वा आहारकचतुष्केण सप्त । अमूः पुनः अनंतानुबंधिचतुष्केणैकादश भवंति ॥ ३७४ ॥ अथ तेषु स्थानेषु भंगसंख्यामाह—

स० चं०—मिश्रविषैं तीर्थंकर अर भुज्यमान, बध्यमान विना दोय आयु इन तीन विना एकसौ पैतालीसरूप प्रथम स्थान है बहुरि तीन ए अर च्यारि अनंतानुबंधी अथवा आहारक चतुष्क इन सात विना एकसौ इकतालीसरूप दूसरा तीसरा स्थान है। बहुरि तीन पूर्वोक्त च्यारि अनंतानुबंधी आहारक चतुष्क इन ग्यारह विना एकसौ सैतीस रूप चतुर्थ स्थान है ऐसैं बद्धायुके स्थान कहे इनविषैं एक एक बध्यमान आयु घटाए अबद्धायुके स्थान हैं। ॥ ३७४ ॥ आगैं इनविषैं भंग संख्या कहैं हैं—

साणे पण इगि भंगा बद्धस्सियरस्स चारि दो चेव ।
मिस्से पण पण भंगा बद्धस्सियरस्स चउ चऊ णेया ॥३७५॥

साने पंच एको भंगा बद्धस्येतरस्य चत्वारो द्वौ चैव ।
मिश्रे पंच पंच भंगा बद्धस्येतरस्य चत्वारश्चत्वारो ज्ञेयाः ॥ ३७५ ॥

जी० प्र०—सासादने भंगाः पंचैको बद्धायुष्कस्य। इतरस्य चत्वारो द्वौ । मिश्रे पंच पंच बद्धायुष्कस्य । इतरस्य चत्वारश्चत्वारः । तद्यथा—एकचत्वारिंशच्छतप्रकृतिके चतुर्गतिबद्धायुषां द्वादशभंगेषु सप्त पुनरुक्तान्विना पंच भंगाः । अबद्धायुष्कस्य चत्वारिंशच्छतप्रकृतिके चतुर्गति- ५३७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भुज्यमानायुर्भेदाच्चत्वारो भंगाः ।

द्वितीये बद्धायुःस्थाने पंचचत्वारिंशच्छतप्रकृतिके बद्धाहारचतुष्कस्य कस्यचित्सासादनत्वप्राप्तिरित्युपदेशाश्रयणादेको भंगः । तदबद्धायुष्के भुज्यमानमनुष्यायुष्कस्योपशमसम्यग्दृष्टेरर्जिताहारकचतुष्कस्यानंतानुबंध्युदयाज्जातसासादनस्यैको भंगः । प्राग्बद्धदेवायुष्कस्य मृत्वा जातभुज्यमानदेवायुष्कस्यैको भंगः, एवं द्वौ । संदृष्टिः—

ब	१४५ १
अ	१४४ २

मिश्रे प्रथमे बद्धायुःस्थाने पंचचत्वारिंशच्छतप्रकृतिके प्राग्बद्धद्वादशभंगे सप्तपुनरुक्तान्विना पंच भंगाः । अबद्धायुःस्थाने चतुर्गतिकभेदाच्चत्वारो भंगाः । संदृष्टिः—

ब	१४५ ५
अ	१४४ ४

एवं द्वितीयतृतीयचतुर्थबद्धाबद्धायुःस्थानेष्वपि पंच चत्वारो भंगा ज्ञातव्याः । अत्र मिश्रेऽनंतानुबंध्यसत्त्वं कथमिति चेत् असंयतादिचतुर्ष्वेकत्र क-

(१)

सासादन०

०	० ७	० ३
ब	१४१ ५	१४५ १
अ	१४० ४	१४४ २

मिश्र०

	० ३	० ७	० ७	० ११
ब	१४५ ५	१४१ ५	१४१ ५	१३७ ५
अ	१४४ ४	१४० ४	१४० ४	१३६ ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रत्नत्रयेण तच्चतुष्कं विसंयोज्य दर्शनमोहक्षपणाभिमुखस्य संक्लिष्टपरिणामेन सम्यग्मिथ्यात्वोदयात्तत्र गमनात् । तद्बंधस्य सासादने एव च्छेदात् ॥ ३७५ ॥ अथासंयतोक्तचत्वारिंशत्स्थानानामुत्पत्तिं तद्विंशत्युत्तरशतभंगांश्च गाथाषट्केनाह—

स० चं०—सासादनविषैं बद्धायुस्थानके पांच अर एक भंग है अर अबद्धायुस्थानके च्यारि अर दोय भंग हैं। बहुरि मिश्रविषैं बद्धायुस्थानके पांच पांच अर अबद्धायुस्थानके च्यारि च्यारि भंग हैं सोई कहिए हैं—

सासादनविषैं एकसौ इकतालीसरूप बद्धायुस्थानविषैं च्यारि गतिका बद्धायु जीवनिकी अपेक्षा पूर्वोक्त प्रकार बारहभंगनिविषैं समभंग पुनरुक्त भंगविना पांच भंग जानने। बहुरि एकसौ चालीस प्रकृतिरूप अबद्धायु स्थानविषैं भुज्यमान च्यारि आयुकी अपेक्षा च्यारि भंग जानने। बहुरि एकसौ पैतालीसरूप बद्धायुस्थानविषैं आहारक चतुष्क का बंध जाकैं भया तिस किसीको सासादनकी प्राप्ति हो है। इस उपदेशकी अपेक्षा एक भंग ही है। बहुरि एकसौ चवालीसरूप अबद्धायुस्थानविषैं दोय भंग हैं। तहां भुज्यमान मनुष्यायुवाला उपशम सम्यग्दृष्टि आहारक चतुष्कका बंधकरि मरि सासादन भया सो एक तौ यहु भंग, बहुरि पूर्वें देवायुका बंध जाके भया था ऐसा उपशम सम्यग्दृष्टि आहारकचतुष्कका बंधकरि देव होइ सासादन भया तहां भुज्यमान देवायुका सत्व पाइए सो यहु दूसरा भंग है। बहुरि मिश्रविषैं बद्धायुके च्यारयो स्थानकनिविषैं पूर्वोक्त प्रकार बारह भंगनिमैंस्यों पंच पंच भंग जानने। अबद्धायुके च्यारयो स्थानकनिविषैं भुज्यमान च्यारि आयुकी अपेक्षा च्यारि २ भंग जानने। इहां प्रश्न—जो मिश्रविषैं अनंतानुबंधीका सत्व कैसे न पाइए? ताका समाधान—असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं कही तीन करणकरि अनंतानुबंधीका विसंयोजन कीया। बहुरि दर्शन मोहनीका क्षपणाकरनेकौं तौ सन्मुख न भया अर संक्लेश परिणाम करि मिश्रमोहनीके उदयतैं मिश्र गुणस्थानवर्ती भया ताकैं अनंतानुबंधीका सत्व न पाइए है नवीन बंधतैं सत्व होइ सो नवीन बंधका सासादनविषैं ही व्युच्छेद हुआ है॥ ३७५ ॥ आगै असंयतविषैं चालीस स्थाननिका प्रकार अर तिनके एकसौ वीस भंग छह गाथानिकरि कहै हैं—

दुग छक्क सत्त अट्ठं णवराहियं तह य चउपडिं किच्चा। ५२६।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णभमिगि चउ पण हीणं बद्धस्सियरस्स एगूणं ॥३७६॥

द्विकं षट्कं सप्त अष्ट नवरहितं तथा च चतुःपंक्तीः कृत्वा।
नभ एकं चतुष्कं पंच हीनं बद्धस्येतरस्यैकोनं ॥ ३७६ ॥

जी॰ प्र॰—द्विकषट्कसप्ताष्टनवप्रकृतिरहितपंचस्थानानि तिर्यक्क्रमेण विन्यस्य पुनस्तथैवाधोधः चतुःपंक्तीः कृत्वा प्रथमपंक्तौ पंचस्थानेषु शून्यमपनयेत्। द्वितीयपंक्तौ एकैकं, तृतीयपंक्तौ चतुष्कं चतुष्कं, चतुर्थपंक्तौ पंच पंच। एवं बद्धायुष्कस्य विंशतिः सत्त्वस्थानानि। अबद्धायुष्कस्य तथा पंचपंक्तीनां पंच पंच सत्त्वस्थानेषु प्रत्येकमेकैकमपनीय स्वस्वाधःस्थापितेषु विंशतिः, मिलित्वा असंयतस्य चत्वारिंशद्भवंति ॥३७६॥ अथोक्तपंक्तिचतुष्के तीर्थाहारयुतायुतत्वेन विशेषमाह—

स॰ चं॰—दोय छह सात आठ नव प्रकृतिनिकरि रहित पंच स्थानक बरोबरि लिखने बहुरि ऐसैं ही पंच पंच स्थाननिकी च्यारि पंक्ति नीचैं नीचैं लिखनी तहां प्रथम पंक्ति पंच स्थाननिविषैं तौ शून्य घटावनी ते पांचौ स्थानक ज्यौंके त्यौं सर्व प्रकृतिनमैंस्यों दोय छह सात आठ नव प्रकृतिरहित जानने। बहुरि दूसरी पंक्तिविषैं एक एक प्रकृति और घटावनी ते पांचों स्थानक सर्व प्रकृतिनिमैंस्यों तीन सात आठ नव दश प्रकृति रहित जानने बहुरि तीसरी पंक्तिविषै च्यारि च्यारि प्रकृति घटावनी। ते पांचों स्थानक छह दश ग्यारह बारह तेरह प्रकृति रहित जानने। बहुरि चौथी पंक्तिविषैं पांच पांच प्रकृति घटावनी ते पांचौं स्थानक सात ग्यारह बारह तेरह चौदह प्रकृति रहित जानने। इहां जहां दोय प्रकृति घटाई तहां एकसौ छियालीसकी सत्तारूप स्थान जानना। छह घटाइ तहां एकसौ बियालीसकी सत्तारूप जानना ऐसैं जेती जेती प्रकृति घटाईये तितनी तितनी एकसौ अठतालीसमैंस्यों घटाएं जेती रहे तितनी सत्तारूप स्थान जानना सो ऐसैं बद्धायुके वीस स्थान भए। बहुरि जे बद्धायुके स्थानक वीस कहे थे तिनमें जेती जेती प्रकृतिनिकी सत्ता कही थी तिनमें बध्यमान आयुरूप एक एक प्रकृति और घटाएं जेती जेती रहे तितनी तितनी सत्तारूप वीस स्थान अबद्धायुके जानने। सर्व मिलि असंयत विषैं चालीस सत्ता स्थान भए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

असंयतविषैं स्थान भंगनिका यंत्र। कोठेनिविषैं ऊपरि प्रकृतिनिका प्रमाण, नीचैं भंगनिका प्रमाण जाननां।

बद्धायुका यंत्रस्थान २० भंग ६० । अबद्धायुका यंत्रस्थान २० भंग ६० ।

१४६ २	१४२ २	१४१ २	१४० २	१३९ २	१४५ ३	१४१ ३	१४० १	१३६ ३	१३८ ३	०	०
१४५ ५	१४१ ५	१४० ३	१३९ ३	१३८ ४	१४४ ४	१४० ४	१३६ १	१३८ ४	१३७ ४	०	०
१४२ २	१३८ २	१३७ २	१३६ २	१३५ २	१४१ ३	१३७ ३	१३६ १	१३५ ३	१३४ ३	०	०
१४१ ५	१३७ ५	१३६ ३	१३५ ३	१३४ ४	१४० ४	१३६ ४	१३५ १	१३४ ४	१३३ ४	०	०
०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०	०

॥ ३७६ ॥ आगैं च्यारयौ पंक्तिविषैं तीर्थंकर आहारककी अपेक्षा विशेष है सो कहै हैं—

तित्थाहारे सहियं तित्थूणं अह य हारचउहीणं।
तित्थाहारचउक्केणूणं इति चउपट्ठिाणं ॥३७७॥

तीर्थाहारेण सहितं तीर्थोनमथ चाहारचतुर्हीनं।
तीर्थाहारचतुष्केणोनमिति चतुःपंक्तिस्थानं ॥ ३७७ ॥

जी० प्र०—प्रथमपंक्तिद्वयस्य स्थानपंचकद्वयं तीर्थाहारकचतुष्कसहितं भवति। द्वितीयपंक्तिद्वयस्य स्थानपंचकद्वयं तीर्थरहितमाहारकचतुष्टयसहितं भवति। तृतीयपंक्तिद्वयस्य स्थानपंचकद्वयं तीर्थसहितमाहारकचतुष्टयरहितं भवति। चतुर्थपंक्तिद्वयस्य स्थानपंचकद्वयं तीर्थकराहारकचतुष्टयरहितं भवति। एवं चतुःप्रकृतिकं स्थानं ज्ञातव्यं ॥ ३७७ ॥ अथ दुगछक्कादिहीनप्रकृतीराह—

स० चं०—बद्धायुकी अबद्धायुकी पहिली दोय पंक्ति तिनके पांच पांच स्थान ते तीर्थंकर अर आहारक चतुष्क

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सहित जानने तातैं पहिली पंक्तिविषैं शून्य घटाया। जेतीकी तेतीहीं प्रकृति तहां कहीं। बहुरि बद्धायु अर अबद्धायुकी दूसरी दोय पंक्तिनिके पंच पंच स्थान ते तीर्थंकर प्रकृतिरहित जानने तातैं दूसरी पंक्तिविषैं एक एक प्रकृति घटाई। बहुरि बद्धायु अर अबद्धायुकी तीसरी दोय पंक्तिके पंच पंच स्थान ते आहारक शरीर अंगोपांग बंधन संघात रहित जानने तातैं तीसरी पंक्तिविषैं च्यारि च्यारि प्रकृति घटाई। बहुरि बद्धायु अर अबद्धायुकी चौथी दोय पंक्तिके पंच पंच स्थान ते आहारक चतुष्क अर तीर्थंकर रहित जानने तातैं चौथी पंक्तिविषैं पांच पांच प्रकृति घटाई। ऐसैं च्यारि पंक्तिरूप स्थान जानने ॥ ३७७॥ आगैं एक पंक्तिविषैं दोय छह आदि देकरि जे प्रकृति घटाई तिनके नाम कहै हैं—

अण्णदरआउसहिया तिरिगाऊ ते च तह य अणसहिया।
मिच्छं मिस्सं सम्मं कमेण खविदे हवे ठाणा ॥३७८॥

अन्यतरायुःसाहितं तिर्यगायुस्ते च तथा च अनसहिते।
मिथ्यं मिश्रं सम्यक्त्वं क्रमेण क्षपिते भवेत्स्थानं ॥ ३७८ ॥

जी० प्र०—तिर्यगायुरन्यतरायुःसहितं तद्द्वितीयमनंतानुबंधिसहितं तत्षट्कं मिथ्यात्वसहितं तत्सप्तकं मिश्रसहितं तदष्टकं सम्यक्त्वसहितनवकमित्यपनीतप्रकृतयो भवंति ॥ ३७८ ॥ अथ भंगान् गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—तिर्यंचायु अर एक कोई अन्य आयु ए तो दोय प्रकृति जानना। बहुरि दोय तो ए अर अनंतानुबंधी चतुष्क ए छह जाननी। बहुरि मिथ्यात्वमोहनी सहित ते सात जाननी। मिश्रमोहनी सहित ते आठ जाननी। सम्यक्त्वमोहनी सहित ते नव जाननी ऐसैं घटाई जे प्रकृति ते जाननी। भावार्थ—बद्धायुका प्रथम पंक्तिका पहिला स्थान दोय आयु विना एकसौ छियालीस प्रकृति रूप है। दूसरी पंक्तिका पहिला स्थानक तीर्थंकर विना एकसौ पैंतालीस प्रकृति रूप है। तीसरी पंक्तिका पहिला स्थानक आहारक चतुष्क विना एकसौ ब्यालीस प्रकृतिरूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है चौथी पंक्तिका पहिला स्थानक आहारक चतुष्क तीर्थंकर विना एकसौ इकतालीस प्रकृति रूप है इनमें बध्यमान आयु रूप एक एक प्रकृति और घटाए अबद्धायुके च्यारि स्थानक हो हैं ऐसैं आठ स्थान भए। इनसवनि विषैं अनंतानुबंधी चतुष्क रूप च्यारि प्रकृति घटाएं दूसरे आठ स्थान हो हैं। इन विषैं भी मिथ्यात्व घटाएं तीसरे आठ स्थान हो हैं इन विषैं भी मिश्रमोहनी घटाएं चौथे आठ स्थान हो हैं। इन विषैंभी सम्यक्त्व मोहनी घटाएं पांचवे आठ स्थान हो हैं ऐसैं सर्व मिलि असंयतविषैं चालीस सत्तास्थान जानने ॥ ३७८ ॥ आगैं इन विषैं भंग दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

आदिमपंचट्ठाणे दुगदुगभंगा हवंति बद्धस्स।
इयरस्सावि णादव्वा तिगतिगइगि तिण्णितिण्णेव ॥३७९॥

आदिमपंचस्थाने द्विकद्विकभंगौ भवतो बद्धस्य।
इतरस्यापि ज्ञातव्याः त्रिकत्रिकैकं त्रयस्त्रय एव ॥ ३७९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—प्रथमपंचस्थानेषु बद्धायुष्कस्य द्वौ द्वौ भंगौ भवतः। अबद्धायुष्कस्य च त्रयस्त्रयः एकस्त्रयस्त्रयो भवंति ॥ ३७९ ॥

स० चं०—पहिली पंक्ति संबंधी बद्धायुके पंच स्थान तिनविषै दोय दोय भंग है सो ए दश भंग भए बहुरि अबद्धायुके पंच स्थानक तिन विषैं अनुक्रमतैं तीन तीन एक तीन तीन भंग हैं सो ए तेरा भंग भए ॥ ३७९ ॥

१ तिर्यग्रचना—पंचबंधस्थानेषु शून्यं कोऽर्थः १४६ १४२ १४१ १४० १३९। द्वितीयपंचबंधस्थानेषु एकैकहीनं १४५ १४१ १४० १३९ १३८। तृतीयपंचबंधस्थानेषु चतुष्कचतुष्कहीनं १४२ १३८ १३७ १३६ १३५। चतुर्थपंचपक्तौ पंच पंच हीनं १४१ १३७ १३६ १३५ १३४। अबंधस्य सर्वत्रैकैकहीनं स्थानं।

ब	१४६= २	१४२= २	१४१= २	१४०= २	१३९= २
अ	१४५= ३	१४१ ३	१४० १	१३९ ३	१३८ ३
ब	१४५ ५	१४१ ५	१४० ३	१३९ ३	१३८ ४
अ	१४४ ४	१४० ४	१३९ १	१३८ ४	१३७ ४
ब	१४२ २	१३८ २	१३७ २	१३६ २	१३५ २
अ	१४१ ३	१३७ ३	१३६ १	१३५ ३	१३४ ३
ब	१४१ ५	१३७ ५	१३६ ३	१३५ ३	१३४ ४
अ	१४० ४	१३६ ४	१३५ १	१३४ ४	१३३ ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बिदियस्सवि पणठाणे पण पण तिग तिण्णि चारि बद्धस्स ।
इयरस्स होंति णेया चउचउइगिचारि चत्तारि ॥३८०॥

द्वितीयस्यापि पंचस्थानं पंच पंच त्रिकं त्रयश्चत्वारो बद्धस्य ।
इतरस्य भवंति ज्ञेयाः चतुश्चतुरेकचत्वारश्चत्वारः ॥ ३८० ॥

जी० प्र०—द्वितीयपंक्तेः पंचस्थानेषु बद्धायुष्कस्य पंच पंच त्रयस्त्रयश्चत्वारो भंगा भवंति । इतरस्य चत्वारश्चत्वार एकश्चत्वारश्चत्वारो भवंति ॥ ३८० ॥

स० चं०—दूसरी पंक्ति संबंधी बद्धायुके पंच स्थान तिन विषैं अनुक्रमतैं पांच पांच तीन तीन च्यारि भंग हैं सो ए बीस भंग भए । बहुरि अबद्धायुके पंच स्थान तिनविषैं अनुक्रमतैं च्यारि च्यारि एक च्यारि च्यारि भंग हैं सो ए सतरह भंग भए ॥ ३८० ॥

आदिल्लदससु सरिसा भंगेण य तिदियदसयठाणाणि ।
बिदियस्स चउत्थस्स य दसठाणाणि य समा होंति ॥३८१॥

आद्यदशसु सदृशा भंगेन च तृतीयदशकस्थानानि ।
द्वितीयस्य चतुर्थस्य च दश स्थानानि च समानि भवंति ॥ ३८१ ॥

जी० प्र०—आद्येषु बद्धाबद्धायुष्कदशस्थानेषूक्तभंगैः तृतीयबद्धाबद्धायुष्कदशस्थानभंगाः समानाः । द्वितीयपंक्तेर्बद्धाबद्धायुष्कदशस्थानोक्तभंगैः चतुर्थपंक्तेर्बद्धाबद्धायुष्कदशस्थानभंगाः समानाः । एवमसंयतस्य चत्वारिंशत्स्थानेषु त्रिंशत्युत्तरशतं भंगा भवंति । तद्भेद उच्यते—

बद्धायुष्कस्यासंयतस्य प्रथमपंक्तिपंचस्थानानां सतीर्थत्वात्तिर्यगायुषा भुज्यमानबध्यमानाभ्यामितरायुषा च रहितषट्चत्वारिंशच्छतसस्वस्थाने भंगाः भुज्यमानमनुष्यबध्यमाननरकायुष्कः १ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानदेवायुष्कः २ भुज्यमाननारकबध्यमानमनुष्यायुष्कः ३ भुज्यमानदेवबध्यमानमनुष्यायुष्कश्चेति चतुर्षु सम्यद्वये त्यक्ते द्वौ भंगौ भवतः । तथा विसंयोजितानंतानुबंधिनस्तच्चतुष्कस्यान्यतरायुरितर्यगायुषोश्चाभावाद् द्वाच-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने पुनः क्षपितमिथ्यात्वस्य तस्यैकचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने पुनः क्षपितमिश्रस्य चत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने पुनः क्षपितसम्यक्त्वप्रकृतेरेकान्नचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थानेऽपि तौ भुज्यमानमनुष्यबध्यमाननरकायुः भुज्यमानमनुष्यबध्यमानदेवायुश्चेति द्वौ द्वौ भंगौ भवतः । तदधस्तनाबद्धायुष्कपंक्तौ पंचस्थानेषु पंचचत्वारिंशच्छतके विसंयोजितानंतानुबंधिनः एकचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने भुज्यमाननारकमनुष्यदेवायुर्भेदात्त्रयो भंगाः । क्षपितमिथ्यात्वस्य चत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने भुज्यमानमनुष्याणामेको भंगः । क्षपितमिश्रस्यैकान्नचत्वारिंशच्छतके भुज्यमाननरकमनुष्यदेवायुर्भेदात्त्रयो भंगाः कृतकृत्यवेदकतीर्थसत्त्वमनुष्यस्य गतिद्वयजननसंभवात् । क्षपितसम्यक्त्वप्रकृतेरष्टत्रिंशच्छतकेऽपि त एव त्रयो भंगा. । असौ क्षायिकसम्यग्दृष्टिः तस्मिन्नेव भवे घातीनि हंति तदा गर्भावतरणजन्माभिषवणकल्याणे न स्यातां । अथ तृतीयभवे हंति तदा नियमेन देवायुरेव बध्वा देवो भवेत् तस्य पंच कल्याणानि स्युः । यो बद्धनारकायुस्तीर्थसत्त्वः स प्रथमपृथ्व्यां द्वितीयायां तृतीयायां वा जायते । तस्य षण्मासावशेषे बद्धमनुष्यायुष्कस्य नारकोपसर्गनिवारणं गर्भावतरणकल्याणादयश्च भवंति । द्वितीयपंक्तेर्बद्धायुःपंचस्थानेषु विवक्षितभुज्यमानबध्यमानाभ्यामितरायुर्द्वयतीर्थाभावात्पंचचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने विसंयोजितानंतानुबंधिन एकचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने च तीर्थसत्त्वाच्चातुर्गतिसंबंधिद्वादशभंगेषु सप्तभंगेषु समपुनरुक्तान्विना पंच । क्षपितमिथ्यात्वस्य चत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने भुज्यमानमनुष्यस्य बध्यमाननरकतिर्यक्मनुष्यदेवभेदेन चतुर्षु भंगेषु पुनरुक्तमेकं विना त्रयः । क्षपितमिश्रस्यैकान्नचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थानेऽपि त एव त्रयः । क्षपितसम्यक्त्वप्रकृतेरष्टत्रिंशच्छतसत्त्वस्थाने भुज्यमाननारकबध्यमानमनुष्यायुष्कः १ भुज्यमानतिर्यग्बध्यमानदेवायुष्क. २ भुज्यमानमनुष्यबध्यमाननरकायुष्कः ३ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानतिर्यगायुष्कः ४ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानमनुष्यायुष्कः ५ भुज्यमानमनुष्यबध्यमानदेवायुष्कः ६ भुज्यमानदेवबध्यमानमनुष्यायुष्कश्चेति ७ सप्तभंगेषु पंचमः पुनरुक्तः, प्रथमसप्तमौ च समाविति चत्वारः । शेषाः पंच न संभवंति । संदृष्टिः—

ब	ति	म	ना	ति	म	दे	ना	ति	म	दे	ति	म
भु	ना	ना	ति	ति	ति	ति	म	म	म	म	दे	दे
०	०	स	०	०	०	०	०	०	पु	०	०	स

तदधस्तनाबद्धायुष्कपंचस्थानेषु विवक्षितभुज्यमानादितरायुस्त्रयतीर्थाभावे चतुश्चत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने विसंयोजितानंतानुबंधिचतुष्कस्य चत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने चतुर्गतिजभेदाच्चत्वारः । क्षपितमिथ्यात्वस्यैकान्नचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थाने भुज्यमानमनुष्यादितरगतित्रयजाभावादेकः । क्षपितमिश्रस्याष्टात्रिंशच्छतसत्त्वस्थाने भुज्यमानमनुष्यः कृतकृत्यवेदकनारकतिर्यग्देवाश्चेति चत्वारः । क्षायिकसम्यग्दृष्टेः सप्तत्रिंशच्छतसत्त्वस्थानेऽपि चतुर्गतिजभेदाच्चत्वारः । एवं इतरतृतीयपंक्तिद्वयदशस्थानेषु प्रथमपंक्तिद्वयदशस्थानवत्त्रयोविंशतिर्भूत्वा चतुर्थपंक्तिद्वयदशस्थानेषु द्वितीयपंक्तिद्वयदशस्थानवत्सप्तत्रिंशद्भूत्वा चासंयते चत्वारिंशत्सत्त्वस्थानेषु समपुनरुक्तान्विना विंशत्युत्तरशतं भंगाः स्युः ॥ ३८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—पाहिली पंक्ति संबंधी पंच बद्धायुके अर पंच अबद्धायुके जे दश स्थान तिन विषैं जे भंग कहे तिनही के समान तीसरी पंक्तिके दश स्थानविषैं भी भंग जानने। भावार्थ—तीसरी पंक्तिविषैं प्रथम पंक्तिवत् बद्धायुके दश अबद्धायुके तेरह भंग जानने बहुरि दूसरी पंक्तिका अर चौथी पंक्तिका दश स्थाननिविषैं भंग समान जानने। भावार्थ—चौथी पंक्तिविषैं द्वितीय पंक्तिवत् बद्धायुके वीस अबद्धायुके सतरह भंग जानने ऐसैं सर्व मिलि असंयतविषैं चालीस सत्ता स्थाननिविषैं एकसौ वीस भंग भए। अब इनका भेद कहिए है—

बद्धायु असंयतविषैं सम्यग्दृष्टीकैं पहली पंक्तिसंबंधी जे पंच स्थान ते तीर्थंकर प्रकृति सहित हैं अर तिर्यंचविषैं तीर्थंकर सत्ताका अभाव है तातैं प्रथम पंक्तिका पहिला स्थान एक तौ भुज्यमान वा बध्यमान तिर्यंचायु अर एक कोई अन्य आयु इन दोऊविना एकसौ छियालीस प्रकृतिरूप है। तहां भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु १ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु २ भुज्यमान नरकायु बध्यमान मनुष्यायु ३ भुज्यमान देवायु बध्यमान मनुष्यायु ४ ऐसैं च्यारि भंग भए। इहां भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु अर भुज्यमान नरकायु बध्यमान मनुष्यायु इन दोऊ भंगनिविषैं प्रकृति समान है तातैं एक ही भंग ग्रह्या अर भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु अर भुज्यमान देवायु बध्यमान मनुष्यायु इन दोऊनिविषै प्रकृति समान है तातैं एकही भंग ग्रह्या ऐसैं दोय भंग जानने। बहुरि प्रथम पंक्तिके अनंतानुबंधीका जाकैं विसंयोजन भया होइ ताकैं अनंतानुबंधी च्यारि ४ तिर्यंचायु एक १ अन्य कोऊ आयु १ इन छह विना एकसौ वियालीस रूप दूसरा स्थान बहुरि जाकैं मिथ्यात्व प्रकृतिका क्षय भया होइ ताकैं एकसौ इकतालीस प्रकृतिरूप तीसरा स्थान। बहुरि जाकैं मिश्रमोहनीका भी क्षय भया होइ ताकैं एकसौ चालिस प्रकृतिरूप चौथास्थान, बहुरि जाकैं सम्यक्त्व मोहनीका भी क्षय भया होइ ताकैं एकसौ गुणतालीस प्रकृतिरूप पांचवा स्थान सो इन च्यार्यो स्थानकनिविषैं भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु १ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु ए दोय दोय भंग जानने। बहुरि अबद्धायुके प्रथम पंक्ति संबंधी पंचस्थान तिनविषैं प्रथम स्थान एकसौ पैंतालीस प्रकृतिरूप अर अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए दूसरा स्थान एकसौ इकतालीस प्रकृतिरूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इन दोऊ विषैं भुज्यमान नरकायु मनुष्यायु देवायुकी अपेक्षा तीन भंग हैं। बहुरि मिथ्यात्वका क्षय भएं तीसरा स्थान एकसौ चालीस प्रकृतिरूप तहां भुज्यमान मनुष्यायु ऐसा एकही भंग है। बहुरि मिश्रमोहनीका क्षय भएं एकसौ गुणतालीसरूप चौथा स्थान तहां भुज्यमान नरकायु मनुष्यायु देवायुकी अपेक्षा तीन भंग हैं जातैं कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी तीर्थंकर सत्तावाला मनुष्य मरि नरक देवगतिविषैं उपजै तहां नरक देवगतिविषैं भी ऐसी सत्ता पाइए। बहुरि सम्यक्त्व मोहनीका अभाव भए एकसौ 'अठतीसकी सत्तारूप पांचवां' स्थान, तहां भी भुज्यमान मनुष्यायु देवायु नरकायुकी अपेक्षा तीन भंग पाइए। तहां मनुष्यायु सहित एकसौ अठतीस सत्तास्थान वाला जो यहु क्षायिक सम्यग्दृष्टी सो तिसही भवविषैं जो घातिया कर्म नाशि केवली होइ तौ इस जीवकैं गर्भ कल्याण जन्माभिषेक कल्याण न होइ तप आदि तीन ही कल्याण होंइ। बहुरि जो तीसरा भवविषैं घातिकर्मका नाश करै तौ नियमकरि देवायु ही कौ बांधै तहां देवपर्यायविषैं देवायुसहित एकसौ अठतीस सत्व पाइए तिसके छह महिना अवशेष रहैं मनुष्यायुका बंध होइ अर पंच कल्याण ताकैं होंइ। बहुरि जाकैं मिथ्यादृष्टिविषैं नरकायुका बंध भया था अर तीर्थंकरका सत्व होइ तौ वह जीव नरक पृथ्वीविषैं उपजै तहां नरकायु सहित एकसौ अठतीस सत्व पाइए तिसकै छह महिना आयुका अवशेष रहे मनुष्यायुका बंध होइ अर नारक उपसर्गका निवारण होइ अर गर्भ कल्याणादिक होंइ। बहुरि दूसरी पंक्ति संबंधी बद्धायुके पंचस्थान तिनविषैं भुज्यमान बध्यमान बिना दोय आयु अर तीर्थंकर इन बिना एकसौ पैंतालीस प्रकृतिरूप प्रथम स्थान है अर अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए एकसौ इकतालीस प्रकृतिरूप दूसरा स्थान है। इन दोऊनिविषैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं एकसौ पैंतालीसका सत्वस्थानविषैं जैसे च्यार्यो गति संबंधी बारह भंगनिविषैं समभंग पुनरुक्त भंग विना पंच भंग कहे थे तैसैं पंच पंच भंग जानने। बहुरि मिथ्यात्वका क्षय भए एकसौ चालीस प्रकृतिरूप तीसरा स्थान है तहां भुज्यमान मनुष्यायु अर बध्यमान नरकायु तिर्यंचायु मनुष्यायु देवायु भेदतैं च्यारि भंग हो हैं। तहां भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान मनुष्यायु यहु भंग पुनरुक्त है जातैं एकही प्रकृति है सो इस विना तीन भंग जानने। बहुरि मिश्र मोहनीका क्षय भए एकसौ गुणतालीस प्रकृतिरूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौथा स्थान है तहां भी तैसैं ही तीन भंग जानने। बहुरि सम्यक्त्व मोहनीका क्षय भए एकसौ अठतीस प्रकृतिरूप पांचवां स्थान है तहां भुज्यमान नरकायु बध्यमान मनुष्यायु १ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान देवायु २ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान नरकायु ३ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान तिर्यंचायु ४ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान मनुष्यायु ५ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु ६ भुज्यमान देवायु बध्यमान मनुष्यायु ७ इन सात भंगनिविषैं पांचवां भंग तो पुनरुक्त है जातैं एक मनुष्यायु ही है अर पहिला भंग तीसरा भंग समान है अर सातवां भंग छठा भंग समान है जातैं प्रकृतिनिकी समानता पाइए है। सो ऐसैं तीन भंग विना च्यारि भंग जानने। च्यार्यो गति संबंधी बारह भंग पूर्वैं कहे थे तिनविषै इहां पंच भंग संभवै नाहीं तातैं सात ही कहे। बहुरि दूसरी पंक्तिसंबंधी अबद्धायुके पंच स्थान तिनविषै भुज्यमान आयु विना तीन आयु अर तीर्थंकर विना एकसौ चवालीस प्रकृति रूप पहिला स्थ न है अर अनंतानुबंधीका विसंयोजन भए एकसौ चालीस प्रकृतिरूप दूसरा स्थान है इन दोऊनिविषैं भुज्यमान च्यारि आयुकी अपेक्षा च्यारि च्यारि भंग हैं। बहुरि मिथ्यात्वका क्षय भएं एकसौ गुणतालीसरूप तीसरा स्थान है तहां भुज्यमान मनुष्य विना और भंगका अभाव है तातैं एक ही भंग है। बहुरि मिश्र मोहनीका क्षय भए एकसौ अठतीस प्रकृतिरूप चौथा स्थान है तहां भुज्यमान मनुष्यायु अर कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टीकी अपेक्षा भुज्यमान नरकायु तिर्यंचायु देवायु ऐसैं च्यारि भंग हैं बहुरि सम्यक्त्वमोहनीका क्षय भए क्षायिक सम्यग्दृष्टीकै एकसौ सैंतीस प्रकृतिरूप पांचवा स्थान है तहां भुज्यमान च्यारि आयुकी अपेक्षा च्यारि भंग हैं। बहुरि तीसरी पंक्तिविषैं पहिली पंक्तिका बद्धायु अबद्धायुरूप दश स्थानकनिविषैं आहारक चतुष्क रूप च्यारि २ प्रकृति घटाए दश स्थान होंइ तहां प्रथम पंक्तिवत् तेईस भंग जानने। बहुरि चौथी पंक्तिविषैं दूसरी पंक्तिका बद्धायु अबद्धायुरूप दश स्थानकनिविषैं आहारक चतुष्करूप च्यारि च्यारि प्रकृति घटाएं दश स्थान होंइ, तहां द्वितीय पंक्तिवत् सैंतीस भंग जानने ऐसैं सर्व मिलि असंयतविषैं चालीस सत्त्व स्थाननिविषैं एकसौ वीस भंग हैं॥

देसतियेसुवि एवं भंगा एक्केक्क देसगस्स पुणो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पडिरासि बिदियतुरियस्सादीबिदियम्मि दो भंगा ॥३८२॥

देशत्रयेष्वपि एवं भंगा एकैकं देशकस्य पुनः।
प्रतिराशि द्वितीयचतुर्थस्यादिद्वितीयस्मिन् द्वौ भंगौ ॥ ३८२ ॥

जी० प्र०—देशसंयतादित्रये प्रतिस्थानमेकैको भंगः। देशसंयते पुनर्द्वितीयपंक्तिद्वयस्य चतुर्थपंक्तिद्वयस्य च बद्धावद्धायुषोः प्रथमद्वितीयस्थानयोर्द्वौ द्वौ भंगौ। तथाहि—

तद्गुणस्थानत्रयेप्यसंयतवद् दुगछक्कसत्तअट्ठं नव प्रकृतयो हीना भूत्वा पंचस्थानानि तिर्यगधोधश्चतुःप्रतिकं कृत्वा स्थाप्यानि बद्धायुष्कस्य भवंति। तत्र पुनरेकैकायुरपनीय तेषामधःस्थापितेऽबद्धायुष्कस्य भवंति। तत्र प्रथमपंक्तिद्वयदशस्थानेषु तीर्थाहाराः संतीति शून्यमपनीय द्वितीयपंक्तिद्वयदशस्थानेषु तीर्थमपनीय तृतीयपंक्तिद्वयदशस्थानेषु तन्निक्षिप्याहारकचतुष्कमपनीय चतुर्थपंक्तिद्वयदशस्थानेषूभयमपनीय स्थापिताष्टपंक्तीनां बद्धायुष्कपंचपंचस्थानेषु प्रत्येकं भुज्यमानमनुष्यबद्धदेवायुरित्येक एव, इतरायुस्त्रये बध्यमाने देशमहाव्रताभावात्। अबद्धायुष्कपंचपंचस्थानेषु भुज्यमानमनुष्य इत्येक एव। पुनर्देशसंयते तीर्थरहितद्वितीयपंक्तिद्वयदशस्थानेषु चतुर्थपंक्तिद्वयदशस्थानेषु च प्रथमद्वितीयस्थानयोर्भुज्यमानमनुष्यबद्धदेवायुष्कभुज्यमानतिर्यग्बद्धदेवायुष्कौ भुज्यमानमनुष्यभुज्यमानतिर्यंचौ च भवतः। एवं सति देशसंयतस्य चत्वारिंशत्स्थानानामष्टचत्वारिंशद्भंगा भवंति। तथा प्रमत्ताप्रमत्तयोस्तु चत्वारिंशत्स्थानानां चत्वारिंशदेव भवंतीति ज्ञातव्यं ॥ ३८२ ॥ अथोपशमकचतुष्के वक्तुं तावदपूर्वकरणस्याह—

स० चं०—देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्त इन तीन गुणस्थाननिविषैं ऐसैंही असंयतवत् चालीस चालीस स्थान जानने तहां सर्व स्थानकनिविषैं एक एक भंग जानना। विशेष इतना जो देशसंयतविषैं बद्धायु अबद्धायुकी दूसरी दोय पंक्ति अर चौथी दोय पंक्ति तिनके पहिला अर दूसरा स्थानविषैं दोय दोय भंग हैं। सोई कहिए है—

देशसंयतादिक तीनगुणस्थाननिविषैं भी असंयतवत् दोय छह सात आठ नव प्रकृति रहित पंच स्थान बरोबरि लिखि तिनके नीचैं नीचैं च्यारि पंक्ति बद्धायुकी करनी। अर तिनके नीचैं बध्यमान एक एक आयु घटाइ च्यारि पंक्ति अबद्धायुकी करनी। तिन पंक्तिनिविषैं पहिली पंक्ति तीर्थंकर आहारक सहित है तातैं शून्य घटावना दूसरी पंक्तिविषैं तीर्थंकर प्रकृति घटावनी। तीसरी पंक्तिविषैं तीर्थंकर मिलाइ आहारक चतुष्क घटावना। चौथी पंक्तिविषैं तीर्थंकर आहारक चतुष्क घटावना ऐसैं बद्धायु अबद्धायुकी आठ पंक्तिनिके चालीस स्थान भए तहां जे बद्धायुके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीस स्थान हैं तहां भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु ऐसा एक एकही भंग है जातैं और तीन आयुका बंध भएं देशव्रत महाव्रत न होइ। अर अबद्धायुके वीस स्थान हैं तहां भुज्यमान मनुष्यायु ऐसा एक एकही भंग है तहां इतना विशेष है जो देशसंयतविषैं तीर्थंकर रहित दूसरी पंक्तिके दश स्थाननिविषैं और चौथी पंक्तिके दश स्थाननिविषैं पहिला अर दूसरा स्थानविषैं दोय दोय भंग हैं। तहां बद्धायुका दूसरी चौथी पंक्तिका पहिला दूसरा स्थान विषैं तौ भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु १ भुज्यमान तिर्यंचायु बध्यमान देवायु १ ऐसैं दोय दोय भंग हैं। बहुरि अबद्धायुका दूसरी चौथी पंक्तिका पहिला दूसरा स्थानविषैं भुज्यमान मनुष्यायु भुज्यमान तिर्यंचायु ऐसैं दोय दोय भंग हैं। ऐसैं देश संयतविषैं चालीस स्थाननिके अठतालीस भंग हैं। प्रमत्त अप्रमत्तविषैं चालीस चालीस स्थाननिके चालीस चालीस भंग हैं ॥३८२॥ आगैं उपशम श्रेणी संबंधी च्यारि गुणस्थाननिविषैं स्थान भंग कह्या चाहैं हैं तहां प्रथम अपूर्वकरणविषैं कहै हैं—

दुगछक्कतिण्णिवग्गेणूणापुव्वस्स चउपडिं किच्चा।
णभमिगिचऊपणहीणं बद्धस्सियरस्स एगूणं ॥३८३॥

द्विकषट्कत्रिवर्गेणोनानि अपूर्वस्य चतुःप्रति कृत्वा।
नभएकचतुःपंचहीनं बद्धस्येतरस्यैकोनं ॥ ३८३ ॥

जी० प्र०—उपशमकापूर्वकरणस्य द्विकषट्कत्रिवर्गोनस्थानत्रयं चतुःप्रतिकं कृत्वा प्रथमपंक्तौ शून्ये द्वितीयपंक्तौ तीर्थे तृतीयपंक्तावाहारकचतुष्के चतुर्थपंक्तावुभयस्मिन्नपनीते बद्धायुष्काणां सत्त्वस्थानानि भवंति अबद्धायुष्काणां तच्चतुःपंक्तीनां स्वस्याधः एकैकस्मिन्नायुष्यपनीते चतुःपंक्तयो भवंति। एवमष्टपंक्तीनां प्रत्येकं त्रीणि त्रीणि भूत्वा चतुर्विंशतिस्थानानि भवंति ॥ ३८३ ॥ अथ ता हीनप्रकृतीः भंगांश्चाह—

स० चं०—उपशम अपूर्व करणविषैं दोय छह तीन का वर्ग नव इन प्रकृतिनिकरि रहित तीन स्थान तिनकी च्यारि पंक्ति करनी। पूर्ववत् प्रथम पंक्तिविषैं शून्य घटावना। दूजी पंक्तिविषैं तीर्थंकर एक प्रकृति घटावनी। तीजी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंक्तिविषैं आहारक चतुष्क घटावना चौथी पंक्तिविषैं तीर्थंकर आहारक चतुष्क ए पांच प्रकृति घटावनी। ऐसैं बद्धायुके बारह स्थान भए अर अबद्धायुके च्यारयो पंक्तिविषैं सर्व स्थाननिविषैं अपने अपने नीचैं एक एक बध्यमान आयु घटाएं बारह स्थान हो हैं। ऐसैं आठ पंक्तिनिके प्रत्येक तीन तीन स्थान होइ सर्व चौईस स्थान हो हैं ॥ ३८३ ॥ आगैं घटाई जे प्रकृति तिनके नाम अर स्थाननिविषैं भंग कहै हैं—

णिरयतिरियाउ दोण्णिवि पढमकसायाणि दंसणतियाणि।
हीणा एदे णेया भंगे एक्केक्कगा होंति ॥३८४॥

निरयतिर्यगायुषी द्वे अपि प्रथमकषाया दर्शनत्रीणि।
हीनानि एतानि ज्ञेयानि भंगा एकैकका भवंति ॥ ३८४ ॥

जी० प्र०—नरकतिर्यगायुषी तच्च प्रथमकषायचतुष्कं च तानि च दर्शनमोहत्रयं च अमूनि क्रमेण षट्चत्वारिंशच्छतद्वाचत्वारिंशच्छतैकान्नचत्वारिंशच्छतसत्त्वस्थानेष्वपनेतव्यानि। बद्धायुःस्थानपंक्तिचतुष्के भुज्यमानमनुष्यबध्यमानदेवायुरित्येकैक एव भंगः। तत्पंक्तिचतुष्कस्याधः अबद्धायुःस्थानत्रयचतुःपंक्तिषु भुज्यमानमनुष्य इत्येकैक एव भंगः। एवं सति स्थानानि भंगाश्च चतुर्विंशतिर्भवंति ॥ ३८४ ॥

स० चं०—नरकायु तिर्यंचायु ए दोय प्रकृति घटाएं एकसौ छियालीस रूप प्रथम स्थान है। बहुरि दोय तौ ए अर अनंतानुबंधीका चतुष्क ए छहु प्रकृति घटाएं एकसौ बियालीस रूप दूसरा स्थान है। बहुरि छह तो ए अर तीन दर्शनमोह ए नव घटाएं एकसौ गुणतालीस रूप तीसरा स्थान है इन तीनों स्थानकनिकी च्यारि पंक्ति करनी। तहां प्रथम पंक्तिविषैं तो इतनी इतनी प्रकृति रूप ही तीनस्थान जानने। दूजी पंक्तिविषैं तीर्थंकर एक एक प्रकृति घाटि तीन स्थान जानने। तीजी पंक्तिविषैं आहारक चतुष्क रूप च्यारि च्यारि प्रकृति घाटि तीन स्थान जानने। चौथी पंक्तिविषैं आहारक चतुष्क तीर्थंकर इन पंच पंच प्रकृति घाटि तीन स्थान जानने। ऐसैं ए बारह स्थान बद्धायुके भए। इन सवनिविषैं बध्यमान आयु एक एक घटाएं अबद्धायुके बारह स्थान हो हैं सो इन चौवीसों

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थानकनिविषैं भंग एक एकही है। तहां बद्धायुस्थानकनिविषैं तो भुज्यमान मनुष्यायु बध्यमान देवायु ऐसाही एक भंग जानना अर अबद्धायु स्थाननिविषैं भुज्यमान मनुष्यायु ऐसाही एक भंग जानना । ऐसैं उपशमक अपूर्व करण विषैं स्थान चौईस हैं अर भंगभी चौईस हैं ॥ ३८४ ॥

एवं तिसु उवसमगे खवगापुव्वम्मि दसहिं परिहीणं ।
सव्वं चउपडि किच्चा णभमेक्कं चारि पण हीणं ॥३८५॥

एवं त्रिषु उपशमकेषु क्षपकापूर्वे दशाभिः परिहीनं ।
सर्वं चतुः प्रातिकं कृत्वा नभ एक चत्वारि पंच हीनं ॥ ३८५ ॥

जी० प्र०—एवमुपशमकापूर्वकरणवत् अनिवृत्तिकरणाद्युपशमकत्रयेऽपि स्थानानि भंगाश्च चतुर्विंशतिश्चतुर्विंशतिर्भवंति। क्षपकापूर्वकरणे भुज्यमानमनुष्यायुष्यादितरायुस्त्रयानंतानुबंधिचतुष्कदर्शनमोहत्रयाभावात्सत्त्वस्थानमष्टात्रिंशच्छतकं स्यात् । तच्चतुःप्रतिकं कृत्वा प्रथमे तीर्थाहारः समस्तीति शून्यमपनयेत्, द्वितीये तीर्थं, तृतीये आहारकचतुष्कं, चतुर्थे उभयं एवं सत्त्वस्थानानि अष्टात्रिंशच्छतकसप्तत्रिंशच्छतकचतुस्त्रिंशच्छतकत्रयस्त्रिंशच्छतकानि चत्वारि तेषु प्रत्येकं भुज्यमानमनुष्यायुरेवेति भंगा अपि चत्वारः ॥ ३८५ ॥

स० चं०—ऐसैं ही उपशमक अपूर्व करणवत् उपशमक अनिवृत्ति करण उपशमक सूक्ष्म सांपराय उपशांत मोह इन तीनों विषैं भी स्थान वा भंग चौईस चौईस जानने। बहुरि क्षपक अपूर्व करणविषैं भुज्यमान मनुष्यायु विना तीन आयु अनंतानुबंधी चतुष्क दर्शन मोह तीन इन दश करि रहित एकसौ अठतीस प्रकृति रूप एक सत्त्व स्थानकी च्यारि पंक्ति करनी। तहां पूर्ववत् पहिली पंक्तिविषैं तो शून्य दूसरी पंक्तिविषैं तीर्थकर तीसरी पंक्तिविषैं आहारक चतुष्क चौथी पंक्तिविषैं तीर्थकर आहारक चतुष्क घटाएं एकसौ अठतीस एकसौ सैंतीस एकसौ चौंतीस एकसौ तेतीस प्रकृति रूप च्यारि स्थान हो हैं। इन विषैं भुज्यमान मनुष्यायु ऐसैं एक एकही भंग है तातैं भंग भी च्यारि हो हैं ॥ ३८५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एदे सत्तट्ठाणा अणियट्टिस्सवि पुणोवि खविदेवि।
सोलस अट्ठेक्केक्कं छक्केक्कं एक्कमेक्क तहा ॥३८६॥

एतानि सत्त्वस्थानानि अनिवृत्तेरपि पुनरपि क्षपितेपि।
षोडशाष्टैकैकं षट्कैकमेकमेकं तथा ॥ ३८६ ॥

जी० प्र०—एतानि क्षपकापूर्वकरणोक्तचत्वारि स्थानानि क्षपकानिवृत्तिकरणस्यापि भवंति पुनः षोडशाष्टैकैकेषु षट्कैकैकैकेषु क्षपितेषु क्रमेण द्वाविंशतिशतकचतुर्दशशतकत्रयोदशशतकद्वादशशतकषडुत्तरशतकपंचोत्तरशतकचतुरुत्तरशतकत्र्युत्तरशतकान्यपि भवंति तानि सर्वाणि चतुःप्रतिकानि कृत्वा णभमेक्कचारिपणहीणमिति स्थाप्यानि ॥ ३८६ ॥ अमीषु षट्त्रिंशत्सत्त्वस्थानेषु भंगान् गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—ए क्षपक अपूर्व करण विषैं जे च्यारि स्थान कहे ते क्षपक आनिवृत्ति करणविषै भी पाइए है। बहुरि अनिवृत्ति करणविषैं अनुक्रमतैं पूर्वोक्त सोलह आठ एक एक छह एक एक एक प्रकृति खिपावै है तातैं एकसौ बाईस एकसौ चौदह एकसौ तेरह एकसौ वारह एकसौ छह एकसौ पांच एकसौ च्यारि एकसौ तीन प्रकृतिरूप आठ स्थान हो हैं। तिनकी च्यारि पंक्तिकरि प्रथम पंक्तिविषैं शून्य घटावना। द्वितीय पंक्तिविषैं तीर्थंकर घटावनी। तीसरी पंक्तिविषै आहारक चतुष्क घटावना चौथी पंक्तिविषैं तीर्थंकर आहारक चतुष्क घटावना। ऐसैं च्यारचौ पंक्तिविषै बत्तीस स्थान भए अर च्यारि अपूर्वकरणवत् स्थान कहे थे सब मिलि क्षपक अनिवृत्ति करणविषैं छत्तीस स्थान भए ॥ ३८६ ॥ आगैं इन विषैं भंग दोय गाथानिकरि कहै हैं—

भंगा एक्केक्का पुण णउंसयक्खविदचउसु ठाणेसु।
बिदियतुरियेसु दो दो भंगा तित्थयरहीणेसु ॥ ३८७॥

भंगाः एकैकः पुनः नपुंसकक्षपितचतुर्षु स्थानेषु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीयतुरीययोर्द्वौ द्वौ भंगौ तीर्थकरहीनयोः ॥ ३८७ ॥

जी० प्र०—एतेषु क्षपकानिवृत्तिकरणस्य षट्त्रिंशत्सत्त्वस्थानेषु भंगः एकैकः तत्र क्षपितनपुंसकवेदचतुःस्थानेषु तीर्थकरत्वोनद्वितीयचतुर्थयोर्द्वौ द्वौ ॥ ३८७ ॥ तद्यथा—

स० चं०—ए क्षपक अनिवृत्ति करणके छत्तीस स्थान तिनविषैं एक एक भंग है तहां इतना विशेष-जो नपुंसक वेदका जहां क्षय कह्या ऐसे च्यारि पंक्ति संबंधी च्यारि स्थान तिनविषैं तीर्थंकर सत्व रहित पहिली (?) वा चौथी पंक्ति संबंधी जे दोय स्थान तिनविषैं दोय दोय भंग हैं ॥ ३८७ ॥ सोई कहिए है—

थीपुरिसोदयचडिदे पुव्वं संढं खवेदि थी अत्थि ।
संढस्सुदये पुव्वं थीखविदं संढमत्थित्ति ॥ ३८८ ॥

स्त्रीपुरुषोदयचटिते पूर्वं षंढं क्षपयति स्त्री अस्ति ।
षंढस्योदये पूर्वं स्त्रीक्षपितं षंढमस्तीति ॥ ३८८ ॥

जी० प्र०—स्त्रीवेदोदयेन पुंवेदोदयेन वा क्षपकश्रेणिमारूढाः पूर्वं षंढवेदं क्षपयंति स्त्रीवेदसत्त्वं स्यात् । षंढवेदोदयेनारूढाः पूर्वं स्त्रीवेदं क्षपयंति षंढवेदसत्त्वं स्यात् । तेन द्वौ द्वौ भंगौ भवतः । एवं सत्यनिवृत्तिकरणस्योभयश्रेण्योर्मिलित्वा द्वाषष्टिर्भंगा भवंति । अस्मिन्पक्षे क्षपकानिवृत्तिकरणस्य मायोनचत्वारि स्थानानि न संति चदुसेक्के बादरे इति पक्षे संति ॥ ३८८ ॥ अथ क्षपकसूक्ष्मसांपरायक्षीणकषाययोराह—

स० चं०—जे जीव स्त्री वा पुरुष वेदका उदय सहित क्षपक श्रेणी चढैं हैं ते पहिलैं नपुंसक वेदकौं खिपावै हैं तिनकैं तो पूर्वोक्त दोऊ स्थानकनिविषैं स्त्री वेदका सत्त्व पाइए है बहुरि नपुंसक वेदका उदय सहित क्षपक श्रेणी चढै हैं ते पूर्वें स्त्री वेदकौं खिपावै हैं तिसकैं पूर्वोक्त दोऊ स्थानकनिविषै नपुंसक वेदका सत्व पाइए है। ऐसैं दोय दोय स्थानकनिविषैं दोय दोय भंग हैं। ऐसैं क्षपकके छत्तीस स्थानकनिके अठतीस भंग भए अर चौईस उपशमकके थे सब मिलि अनिवृत्ति करणविषैं बासठि भंग भए। इस पक्षविषैं मायाका सत्व रहित च्यारि पंक्तिका च्यारि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थान न कहे हैं बहुरि 'चदुसेक्के वादरे' इत्यादि गाथा आगैं कहैंगे तिस पक्षकरि ते च्यारि स्थान पाइए हैं सो कथन आगैं करैंगे ॥ ३८८ ॥ आगैं क्षपक सूक्ष्मसांपराय अर क्षीणकषाय विषैं कहै हैं—

अणियट्टिचरिमठाणा चत्तारिवि एक्कहीण सुहुमस्स ।
ते इगिदोण्णिविहीणं खीणस्सवि होंति ठाणाणि ॥३८९॥

अनिवृत्तिचरमस्थानानि चत्वार्यपि एकहीनं सूक्ष्मस्य ।
तानि एकद्विविहीनं क्षीणस्यापि भवंति स्थानानि ॥ ३८९ ॥

जी० प्र०—क्षपकानिवृत्तिकरणस्य संज्वलनमानरहितचत्वारि स्थानानि संज्वलनमायाहीनानि भूत्वा सूक्ष्मसांपरायस्य भवंति । एतानि चत्वारि संज्वलनलोभहीनानि क्षीणकषायद्विचरमसमयपर्यंत भवंति । एतानि पुनर्निद्राप्रचलारहितानि चरमसमयस्य भवंति ॥ ३८९ ॥ अथ सयोगायोगयोराह—

स० चं०—क्षपक अनिवृत्ति करण विषैं संज्वलन मानरहित एकसौ तीन प्रकृतिरूप स्थान कह्या था ताकी च्यारि पंक्तिविषैं शून्य एक च्यारि पांच घटावनेतैं च्यारि स्थान कहे थे इन च्यारयोविषैं संज्वलन माया घटाइये तब एकसौ दोय, एकसौ एक अठ्याणवै सत्याणवै प्रकृतिरूप क्षपक सूक्ष्म सांपरायके हो हैं । बहुरि इन च्यारो स्थाननिविषैं संज्वलन लोभ घटाइए तब एकसौ एक एकसौ सत्याणवैं छिनवे प्रकृतिरूप क्षीणकषायका अंतका दोय समय अवशेष रहै तहां पर्यंत च्यारि स्थान हैं अर इन च्यारयो स्थाननिविषैं निद्रा प्रचला ए दोय घटाइए तब निन्याणवै अठ्याणवै पच्याणवे चौराणवे प्रकृतिरूप क्षीणकषायका अंत समयविषैं च्यारि स्थान हो हैं ॥ ३८९ ॥ आगैं सयोगी अयोगीविषैं कहैं हैं—

ते चोद्दसपरिहीणा जोगिस्स अजोगिचरिमगोवि पुणो ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बावत्तरिमडसट्ठिं दुसु दुसु हीणेसु दुगदुगा भंगा ॥३९०॥

तानि चतुर्दशपरिहीनानि योगिन अयोगिचरमकेऽपि पुनः।
द्वासप्ततिरष्टषष्टिः द्वयोर्द्वयोः हीनयोः द्विकद्विकौ भंगाः ॥ ३९० ॥

जी० प्र०—तानि क्षीणकषायचरमसमयस्थानानि चतुर्दशप्रकृतिरहितानि सयोगायोगद्विचरमसमयपर्यंतं च भवंति । पुनर्द्विचरमचतुःस्थानेषु प्रथमद्वितीययोर्द्वासप्ततौ तृतीयचतुर्थयोरष्टषष्ट्यां चापनीतायां चरमसमये द्वे त्रयोदशात्मके द्वादशात्मके तत्र पुनरुक्तद्वये त्यक्ते द्वे भवतः। तत्र सातोदययुतस्य नासातसत्त्वमसातोदययुतस्य न सातसत्त्वमिति द्वौ द्वौ भंगौ भवतः। एवं गुणस्थानेषु सत्त्वस्थानानि सभंगान्युक्तानि ॥ ३९० ॥ अथ दुगछकतिण्णिवग्गेणूणेत्युपशमकानां सानंतानुबंधिस्थानाष्टकयुक्तं तत्स्वपक्षे नेत्यादिविशेषं तद्भंगसंख्यां च गाथाचतुष्केणाह—

सं० च०—ते क्षीणकषायका अंत समय संबंधी च्यारि च्यारि स्थान तिनविषैं ज्ञानावरण पांच दर्शनावरण च्यारि अंतराय पांच ए चौदह प्रकृति घटाएं पिच्यासी चौरासी इक्यासी असी प्रकृतिरूप सयोगी अर अयोगीका अंतका दोय समय अवशेष रहै तहां पर्यंत च्यारि स्थान पाइए है। बहुरि तिनविषैं पाहिला दूसरा स्थानविषैं तौ सामान्य सत्ताविषैं कही बहत्तरि प्रकृति ते घटाइए तब तेरह वा बारह प्रकृतिरूप दोय स्थान होंइ अर तीसरा चौथा विषैं आहारक चतुष्क विना अडसठि प्रकृति घटाइए तब तेरह वा बारह प्रकृतिरूप दोय स्थान होंइ इन चार्‍यौ स्थानकनिविषैं तेरह तेरहका स्थान दोय बार कहे तातैं पुनरुक्त भया तातैं एक स्थान ही ग्रहण करना। ऐसैं ही एक बारहका स्थान अंगीकार करना ऐसैं अयोगीका अंत समय विषैं दोय स्थान पाइए तहां जाकैं साता वेदनीका उदय पाइए ताकैं साताही का सत्व है अर असाताका सत्व नाहीं अर जाकैं असाताका उदय पाइए ताकैं असाताही का सत्व है साताका सत्व नाहीं तातैं तिन दोऊ स्थानकनिविषैं साता असाता प्रकृति बदलनेतैं दोय दोय भंग जानने। ऐसैं गुणस्थान विषैं सत्व स्थान भंग सहित कहे ॥ ३९० ॥ 'आगैं दुगछकतिण्णिवग्गे' इत्यादि गाथाकरि पूर्वैं अनंतानुबंधी सहित आठ स्थान उपशम श्रेणीवालोंके कहे ते अपने पक्षविषैं नाहीं है इत्यादि विशेष वा तिनके भंग संख्यानिकौं च्यारि गाथानिकरि कहै हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णत्थि अणं उवसमगे खवगापुव्वं खवित्तु अट्ठा य।
पच्छा सोलादीणं खवणं इदि केइं णिद्दिट्ठं ॥ ३९१ ॥

नास्ति अनमुपशमके क्षपकापूर्वं क्षपयित्वा अष्टौ च।
पश्चात् षोडशादीनां क्षपणमिति कैर्निर्दिष्टं ॥ ३९१ ॥

जी० प्र०—श्रीकनकनंदिसिद्धांतचक्रवर्तितीर्थसंप्रदाये चतुरुपशमकेष्वनंतानुबंधिचतुष्कसत्त्वयुतस्थानाष्टकं न स्यात्। क्षपका मध्यमकषायाष्टकं पूर्वं क्षपयित्वा पश्चात् षोडशादीनि क्षपयंति इति पुनः कैश्चिदुक्तं ॥ ३९१ ॥

सं० च०—श्रीकनकनंदि सिद्धांतचक्रवर्ती तिनका संप्रदायविषैं ऐसैं कहैं हैं–जो उपशमका च्यारि गुणस्थाननिविषैं अनंतानुबंधीका सत्व सहित एकसौ छियालीसका सत्वनैं आदि देकरि बद्धायु अबद्धायुकी च्यारि पंक्तिनिविषैं आठ स्थान कहे ते नाहीं हैं तातैं चौवीस स्थान कहे थे ते सोला ही स्थान हैं। बहुरि क्षपक अनिवृत्तिकरणवाले पहिली तौ अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यान कषायरूप आठ प्रकृति खिपावै हैं पीछै सोलह आदि प्रकृतिनिकौं खिपावै हैं ऐसैं केई आचार्यनिकरि कहिए ॥ ३९१ ॥

अणियट्टिगुणट्ठाणे मायारहिदं च ठाणमिच्छंति।
ठाणा भंगपमाणा केई एवं परूवेंति ॥ ३९२ ॥

अनिवृत्तिगुणस्थाने मायारहितं च स्थानमिच्छंति।
स्थानानि भंगप्रमाणानि केचिदेवं प्ररूपयंति ॥ ३९२ ॥

जी० प्र०—अनिवृत्तिगुणस्थाने मायारहितं स्थानचतुष्कमिच्छंति। स्थानानि भंगप्रमाणानीति केचित्प्ररूपयंति ॥ ३९२ ॥ एवं सति स्थानभंगसंख्यां गाथाद्वयेनाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं० च०—अनिवृत्ति करण गुणस्थानविषैं माया कषाय रहित च्यारि स्थान केई आचार्य कहैं हैं। इस प्रकार केई आचार्य स्थान वा भंगनिका प्रमाण प्ररूपण करै हैं ॥ ३९२ ॥ ऐसैं होतैं स्थाननिकी अर भंगनिकी संख्या कहा सो कहै हैं—

अट्ठारह चउ अट्ठं मिच्छतिये उवरि चाल चउठाणे।
तिसु उवसमगे संते सोलस सोलस हवे ठाणा ॥३९३॥

अष्टादश चत्वारि अष्ट मिथ्यत्रये उपरि चत्वारिंशत् चतुःस्थानानि।
त्रिषु उपशमके शांते षोडश षोडश भवंति स्थानानि ॥ ३९३ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानत्रये स्थानानि प्राग्वत् क्रमेणाष्टादश चत्वार्यष्टौ भवंति। उपर्यसंयतादिचतुर्षु प्रत्येकं चत्वारिंशच्चत्वारिंशत् उपशमकत्रये उपशांतकषाये चानंतानुबंधिसत्त्वरहितानि बद्धाबद्धायुष्काणामष्टावष्टौ भूत्वा षोडश, षोडश क्षपके तु पूर्वोक्तक्रमेणापूर्वकरणे चत्वारि अनिवृत्तिकरणे संज्वलनमायारहितचतुर्भिश्चत्वारिंशत्, सूक्ष्मसांपराये चत्वारि, क्षीणकषायेऽष्टौ, सयोगकेवलिनि चत्वारि, अयोगकेवलिनि षट् ॥ ३९३ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादिक तीन गुणस्थाननिविषैं क्रमतैं पूर्वोक्त प्रकार अठारह च्यारि आठ स्थान हैं। बहुरि ऊपरि असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं भी पूर्वोक्त चालीस चालीस स्थान हैं। बहुरि उपशमक अपूर्वकरणादिक तीन अर उपशांतमोह इन विषैं अनंतानुबंधी सत्व रहित बद्धायु अबद्धायु संबंधी च्यारि पंक्तिनिके आठ आठ स्थान हैं तातैं सोलह सोलह स्थान हो हैं। बहुरि क्षपक अपूर्वकरणविषैं पूर्वोक्त च्यारि स्थान हैं। बहुरि क्षपक अनिवृत्ति करणविषै छत्तीस स्थान तौ पूर्वोक्त अर संज्वलन माया रहित च्यारि स्थान जे सूक्ष्म सांपराय विषैं कहे थे ते अनिवृत्ति करणविषैं ही कहिए ऐसैं चालीस स्थान हैं। बहुरि क्षपक सूक्ष्मसांपरायविषैं च्यारि, क्षीण कषायविषैं आठ सयोगीविषैं च्यारि अयोगीविषैं छह पूर्वोक्त स्थान जानने ॥ ३९३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पण्णेकारं छक्कदि वीससयं अट्ठदाल दुसु तालं।
वीसडतिण्णं वीसं सोलट्ठ य चारि अट्ठेव ॥ ३९४ ॥

पंचाशदेकादश षट्कृतिः विंशशतमष्टचत्वारिंशत् द्वयोश्चत्वारिंशत्।
विंशाष्टत्रिंशत् विंशं षोडशाष्ट च चत्वारः अष्टैव ॥ ३९४ ॥

जी० प्र०——ते पूर्वोक्तभंगा मिथ्यादृष्टौ पंचाशत्। सासादने द्वादश स्वबद्धायुःस्थानमध्यवर्तिदेवापर्याप्तकभेदमुद्धृत्यैकादश, द्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टेर्बद्धदेवायुष्कस्य सासादने मरणं नास्तीति पक्षांगीकरणात्। मिश्रे षट्त्रिंशत्। असंयते विंशत्युत्तरशतं। देशसंयतेऽष्टाचत्वारिंशत्। प्रमत्ताप्रमत्तयोश्चत्वारिंशत् चत्वारिंशत्। अपूर्वकरणे उपशमके षोडश, क्षपके चत्वारः, मिलित्वा विंशतिः। अनिवृत्तिकरणे उपशमके षोडश, क्षपके षट्त्रिंशत्। मायारहिताः चत्वारः। नपुंसकवेदे क्षपणास्थानस्य चतुर्षु स्थानेषु तीर्थरहितद्वितीयचतुर्थयोः स्त्रीषंढवेदकृतौ द्वौ एवमष्टपंचाशत्। सूक्ष्मसांपराये उपशमके षोडश, क्षपके चत्वारः, मिलित्वा विंशतिः। उपशांतकषाये षोडश। क्षीणकषाये द्विचरमचरमसमयाष्टस्थानानामष्टौ। सयोगे चत्वारः। अयोगे द्विचरमसमयस्थानषट्कस्याष्टौ, चरमसमये सातासातसत्त्वभेदेन भंगद्वयस्याधिक्यात् ॥ ३९४ ॥

स० चं०—तिन स्थाननिके भंग पूर्वोक्त प्रकार मिथ्यादृष्टिविषैं पचास बहुरि सासादनविषैं बारह तिनमें बद्धायुस्थानविषैं देव अपर्याप्तक भेद दूर कीजिए तब ग्यारह भंग होंइ। इहां जाकैं देवायु बंध भया ऐसा द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी जीव ताका सासादनविषैं मरण नाहीं ऐसैं केई आचार्य कहै हैं तिनकी अपेक्षा ग्यारह ही भंग हैं बहुरि मिश्रविषैं छत्तीस असंयतविषैं एकसौ वीस देश संयतविषै अठतालीस सप्रमत्त अप्रमत्तविषैं चालीस चालीस अपूर्व करणविषैं उपशमकविषैं इहां सोलह स्थान कहे तातैं सोलह अर क्षपकविषैं च्यारि ऐसा सर्व वीस अनिवृत्ति करणविषैं उपशमकविषैं सोलह क्षपकविषैं पूर्वोक्त छत्तीस स्थाननिके नपुंसकवेद क्षपणाका च्यारि स्थाननिविषैं तीर्थकर रहित दूसरा चौथा स्थानविषैं स्त्री नपुंसक वेदके बदलनेतैं दोय दोय भंग भए तातैं अठतीस अर मायारहित च्यारिस्थाननिके च्यारि भंग एवं वियालीस मिलिकरि सर्व अठावन। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं उपशमकविषैं सोलह क्षपकविषैं च्यारि मिलिकरि सर्व वीस बहुरि उपशांत कषायविषैं सोलह क्षीणकषायविषैं आठ स्थाननिके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आठ सयोगीविषैं च्यारि अयोगीविषैं छह स्थाननिके आठ ऐसैं भंग जानना। प्रत्यक्ष केवली श्रुतकेवलीके अभावतैं एक निश्चय होता नाहीं तातैं यहां अनेक प्रकार कथन कीया है ॥ ३९४ ॥

एवं सत्तट्ठाणं सवित्थरं वण्णियं मए सम्मं।
जो पढइ सुणइ भावइ सो पावइ णिव्वुदिं सोक्खं॥३९५॥

एवं सत्त्वस्थानं सविस्तरं वर्णितं मया सम्यक्।
यः पठति शृणोति भावयति स प्राप्नोति निर्वृतिं सौख्यं ॥ ३९५ ॥

जी० प्र०—एवं सत्त्वस्थानं सविस्तरं मया वर्णितं सम्यक् यः पठति शृणोति भावयति स मोक्षसुखं प्राप्नोति ॥ ३९५ ॥

स० चं०—ऐसैं सत्त्व स्थान विस्तार सहित मैं वर्णन कीया है। सम्यक् प्रकार जो पढै सुनै भावै सो निर्वाण सुखकौं प्राप्त हो है ॥ ३९५ ॥

वरइंदणंदिगुरुणो पासे सोऊण सयलसिद्धंतं।
सिरिकणयणंदिगुरुणा सत्तट्ठाणं समुद्दिट्ठं ॥ ३९६ ॥

वरेंद्रनंदिगुरोः पार्श्वे श्रुत्वा सकलसिद्धांतं।
श्रीकनकनंदिगुरुणा सत्त्वस्थानं समुद्दिष्टं ॥ ३९६ ॥

जी० प्र०—सूरिमतल्लिकाश्रीमदिंद्रनंदिभट्टारकपार्श्वे सकलसिद्धांतं श्रुत्वा श्रीकनकनंदिसिद्धांतचक्रवर्तिभिः सत्त्वस्थानं सम्यक् प्ररूपितं॥३९६॥

स० चं०—आचार्यनिमैं प्रधान ऐसे श्रीमत् इंद्रनदी नामा भट्टारक ताके पास सकल सिद्धांतकौं सुणिकरि श्री कनकनंदी नामा सिद्धांतचक्रवर्ती करि यहु सत्त्वस्थान सम्यक् प्रकार प्ररूपण कीया है ॥ ३९६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जह चक्केण य चक्की छक्खंडं साहियं अविग्घेण ।
तह मइचक्केण मया छक्खंडं साहियं सम्मं ॥ ३९७ ॥

यथा चक्रेण च चक्रिणा षट्खंडं साधितमविघ्नेन ।
तथा मतिचक्रेण मया षट्खंडं साधितं सम्यक् ॥ ३९७ ॥

जी० प्र०—यथा चक्रेण चक्रवर्तिना षट्खंडक्षेत्रमविघ्नेन साधितं तथा मतिचक्रेण मया जीवस्थानक्षुद्रकबंधबंधस्वामित्ववेदनाखंडवर्गणाखंडमहाबंधभेदषट्खंडसिद्धांतशास्त्रं सम्यक् साधितं ॥ ३९७ ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे कनकनंदिकृतसत्त्वस्थानभंगप्ररूपणो नाम तृतीयोऽधिकारः ॥ ३ ॥

स० चं०—जैसैं चक्रवर्ती छह खंड क्षेत्र निर्विघ्नपनैं करि साध्या तैसैं मैं मतिरूपी चक्रकरि जीवस्थान क्षुद्रकबंध बंधस्वामी वेदनाखंड वगर्णाखंड महाबंध लीए षट्रूप सिद्धांत शास्त्र भले प्रकार करि साध्या है ॥ ३९७ ॥

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नामा पंच संग्रह ग्रंथकी जीवतत्त्व प्रदीपिका नाम संस्कृतटीकाके अनुसारि इस सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषा टीकाविषै कर्मकांडविषै कनकनंदि आचार्यकृत सत्त्वस्थानभंगप्ररूपणा नामा तीसरा अधिकार संपूर्ण भया ॥ ३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ त्रिचूलिका अधिकार ॥ ९ ॥

असहायजिणवरिंदे असहायपरक्कमे महावीरे ।
पणमिय सिरसा वोच्छं तिचूलियं सुणह एयमणा ॥ ३९८ ॥

असहायजिनवरेंद्रानसहायपराक्रमान् महावीरान् ।
प्रणम्य शिरसा वक्ष्यामि त्रिचूलिकं शृणुतैकमनसः ॥ ३९८ ॥

जी० प्र०—असहायपराक्रमान् महावीरगुरून् वृषभादिजिनवरेंद्रांश्च शिरसा प्रणम्य नवप्रश्न-पंचभागहार-दशकरणनामत्रिचूलिकं वक्ष्यामि शृणुतैकमनसः । उक्तानुक्तदुरुक्तचिंतनं चूलिका ॥ ३९८ ॥ तत्र तावन्नवप्रश्नचूलिकामाह—

दोहा—तीन भवन चूडारतन सम श्री जिनके पाय ।
नमत पाइए आप पद सबविधि बंध नसाय ॥ ४ ॥

स० चं०—इंद्रियादिकका सहाय रहित है ज्ञानादि शक्ति रूप पराक्रम जिनिका ऐसे महावीर गुरु अर वृषभादिक जिन वरेंद्र तीर्थंकर तिनकौं मस्तक नमाय नमस्कारकरि नवप्रश्न पंचभागहार दशकरण नामकौं लीए त्रिचूलिका अधिकार कहोंगा सो तुम एकाग्र चित्त होतै संते सुणो । चूलिका कहा कहिए ? जो अर्थ कह्या वा न कह्या वा विशिष्टरूप न कह्या ताका जो चिंतवन सो चूलिका कहिए सो इस अधिकार विषैं तीन चूलिकाका व्याख्यान है तातैं त्रिचूलिका कहिए ॥ ३९८ ॥ तहां प्रथम ही नवप्रश्नचूलिकाकौं कहै हैं—

किं बंधो उदयादो पुव्वं पच्छा समं विणस्सादि सो ।
सपरोभयोदयो वा णिरंतरो सांतरो उभयो ॥ ३९९ ॥

को बंध उदयात्पूर्वं पश्चात् समं विनश्यति सः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वपरोभयोदयो वा निरंतरः सांतर उभयः ॥ ३९९ ॥

जी० प्र०—उदयव्युच्छित्तेः पूर्वं पश्चात् युगपद्बंधव्युच्छित्तिः का । स बंधः स्वोदयेन परोदयेनोभयोदयेन कः ? वा पुनः निरंतरः सांतरः उभयरूपः कः ? इति नव प्रश्ना भवंति ॥ ३९९ ॥ तत्राद्यप्रश्नत्रयप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—पूर्वै जो प्रकृति कहीं तिनविषैं उदयकी व्युच्छित्तिके पहिलैं बंधकी व्युच्छित्ति कौन प्रकृतिनिकी हो है। बहुरि उदयकी व्युच्छित्तिके पीछैं बंधकी व्युच्छित्ति कौन प्रकृतिनिकी हो है? बहुरि उदय व्युच्छित्तिकी साथि युगपत् बंधकी व्युच्छित्ति कौन प्रकृतिनिकी हो है? ऐसैं तीन प्रश्न तो ए भए। बहुरि जिनका अपना उदय होत संतैं बंध होइ ते प्रकृति कौन हैं ? बहुरि जिनका अन्य प्रकृतिनिका उदय होतैं बंध होइ ते प्रकृति कौन हैं? बहुरि जिनका अपना वा अन्य प्रकृतिनिका उदय होतैं बंध होइ ते प्रकृति कौन हैं? ऐसैं तीन प्रश्न ए भए। बहुरि जिनका निरंतर बंध होइ ते प्रकृति कौन हैं?। बहुरि जिनका सांतर बंध होइ कदाचित् होइ कदाचित् न होइ ते प्रकृति कौन हैं बहुरि जिनका निरंतर वा सांतर दोऊ प्रकार बंध होइ ते प्रकृति कौन हैं? ऐसैं तीन प्रश्न ए भए। ऐसैं नव प्रश्न हैं ॥ ३९९ ॥ तिनविषैं पहिलैं तीन प्रश्ननिकी प्रकृति दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

देवचउक्काहारदुगज्जसदेवाउगाण सो पच्छा ।
मिच्छत्तादावाणं णराणुथावरचउक्काणं ॥४००॥
पण्णरकसायभयदुगहस्सदुचउजाइपुरिसवेदाणं ।
सममेक्कत्तीसाणं सेसिगिसीदाण पुव्वं तु ॥४०१॥ जुम्मं ।

देवचतुष्काहारद्विकायशोदेवायुष्काणां स पश्चात् ।
मिथ्यात्वातापानां नरानुस्थावरचतुष्काणां ॥ ४०० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचदशकषायभयद्विकहास्यद्विचतुर्जातिपुरुषवेदानां ।
सममेकत्रिंशतां शेषैकाशीतेः पूर्वं तु ॥ ४०१ ॥ युग्मं ।

जी० प्र०—देवचतुष्कमाहारकद्विकमयशस्कीर्तिर्देवायुरित्यष्टानामुदयव्युच्छित्तेः पश्चाद्बंधव्युच्छित्तिः । तथाहि-देवचतुष्कस्यासंयते उदयव्युच्छित्तिः, अपूर्वकरणषष्ठभागे बंधव्युच्छित्तिः । आहारकद्वयस्य प्रमत्ते उदयव्युच्छित्तिः, अपूर्वकरणषष्ठभागे बंधव्युच्छित्तिः । अयशस्कीर्तेरसंयते उदयव्युच्छित्तिः, प्रमत्ते बंधव्युच्छित्तिः । देवायुषोऽसंयते उदयव्युच्छित्तिः अप्रमत्ते बंधव्युच्छित्तिः । एवं शेषसमयादिष्वपि योज्यं । मिथ्यात्वमातपो मनुष्यानुपूर्व्यं स्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणानि संज्वलनलोभवर्जितपंचदशकषायाः भयद्विकं हास्यद्विकमेकेंद्रियादिजातिचतुष्कं पुंवेदः इत्येकत्रिंशत उदयव्युच्छित्तिर्बंधव्युच्छित्तिश्च द्वे समं स्तः । शेषाणां पंचज्ञानावरणनवदर्शनावरणद्विवेदनीयसंज्वलनलोभस्त्रीनपुंसकवेदारतिशोकनारकतिर्यग्मानुष्यायुर्नारकतिर्यग्मनुष्यगतिपंचेंद्रियजात्यौदारिकतैजसकार्माणषट्संहननौदारिकांगोपांगषट्संस्थानवर्णचतुष्कनरकतिर्यगानुपूर्व्यागुरुलघुचतुष्कोच्छ्वासविहायोगतिद्वयत्रसचतुष्कस्थिरद्विशुभद्विसुभगद्विकसुस्वरद्विकादेयद्विकयशस्कीर्तिनिर्माणतीर्थकरगोत्रद्विकपंचांतरायाणामेकाशीतेः उदयव्युच्छित्तेः पूर्वं बंधव्युच्छित्तिः स्यात् ॥ ४००—४०१ ॥ द्वितीयप्रश्नत्रयप्रकृतीर्गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—देवगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग ए च्यारि ४ आहारक शरीर वा अंगोपांग २ अयशस्कीर्ति १ देवायु १ इन आठ प्रकृतिनिकी उदय व्युच्छित्तिके पीछैं बंधव्युच्छित्ति हो है । सोई कहिए है—

देव चतुष्ककी उदय व्युच्छित्ति तो असंयतविषैं भई अर बंध व्युच्छित्ति अपूर्व करणका छठा भागविषैं भई । आहारकद्विककी उदय व्युच्छित्ति प्रमत्तविषैं भई, बंध व्युच्छित्ति अपूर्वकरणका छठा भाग विषैं भई । अयशस्कीर्तिकी उदय व्युच्छित्ति असंयतविषैं भई बंध व्युच्छित्ति प्रमत्तविषैं भई, देवायुकी उदय व्युच्छित्ति असंयतविषैं भई, बंध व्युच्छित्ति अप्रमत्तविषैं भई । ऐसैंही जिनकी युगपत् बंध व्युच्छित्ति उदय व्युच्छित्ति है वा बंध व्युच्छित्तिके पीछैं उदय व्युच्छित्ति है तिनका भी कथन गुणस्थाननिविषैं उदय बंधका कथन पूर्वैं कह्या तातैं जानि लेना । सो मिथ्यात्व १ आतप १ मनुष्यानुपूर्वी १ स्थावर १ सूक्ष्म १ अपर्याप्तक १ साधारण १ संज्वलन लोभ विना १५ कषाय, भय जुगप्सा २ हास्य रति २ एकेंद्रियादि जाति च्यारि ४ पुरुष वेद १ इन इकतीस प्रकृतिनिकी उदय व्युच्छित्ति अर बंध व्युच्छित्ति युगपत् हो हैं इहां महाधवलके अनुसारतैं स्थावर एकेंद्री विकलत्रयकी व्युच्छित्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यात्व विषैं हो है तिस अपेक्षा कथन जानना। बहुरि अवशेष ज्ञानावरण पांच ५ दर्शनावरण नव ९ वेदनीय दोय २ संज्वलन लोभ १ स्त्री नपुंसक वेद २ अरति शोक २ नरक तिर्यंच मनुष्यायु ३ नरक तिर्यंच मनुष्यगति तीन ३ पंचेंद्री जाति १ औदारिक तैजस कार्माण शरीर ३ छह संहनन ६ औदारिक अंगोपांग १ षटसंस्थान ६ वर्णादिक च्यारि ४ नरक तिर्यंच आनुपूर्वी २ अगुरु लघु आदि च्यारि ४ उश्वास १ विहायोगति दोय २ त्रस चतुष्क ४ स्थिर द्विक २ शुभद्विक २ सुभगद्विक २ सुस्वरद्विक २ आदेयद्विक २ यशस्कीर्ति १ निर्माण १ तीर्थंकर १ गोत्रद्विक २ अंतराय पांच ५ इन इक्यासी प्रकृतिनिकी उदय व्युच्छित्ति पीछैं हो है। पहिलैं बंध व्युच्छित्ति हो है। व्युच्छित्ति नाम अभाव होनेका जानना॥ ४००—४०१॥ आगे दूजे तीन प्रश्ननिकी प्रकृति कहैं हैं—

सुराणिरयाऊ तित्थं वेगुव्वियछक्कहारमिदि जासिं।
परउदयेण य बंधो मिच्छं सुहुमस्स घादीओ ॥४०२॥

सुरनिरयायुषी तीर्थं वैगूर्विकषट्काहारमिति य सां।
परोदयेन च बंधो मिथ्यं सूक्ष्मस्य घातिन्यः॥ ४०२॥

जी० प्र०—यासां परोदयेन बंधः, ताः प्रकृतयः सुरनारकायुषी तीर्थं वैक्रियिकषट्कमाहारकद्वयं चेत्येकादश भवंति। मिथ्यात्वं सूक्ष्मसांपरायस्य चतुर्दशघातीनि॥ ४०२॥

स० चं०—देव नरक आयु दोय २ तीर्थंकर १ वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग देव नरक गति वा आनुपूर्वी ए छह ६ आहारक शरीर वा अंगोपांग २ इन ग्यारह प्रकृतिनिका पर उदयतैं बंध है। इन प्रकृतिनिका उदय होतैं इन प्रकृतिका बंध न हो है। बहुरि मिथ्यात्व १ सूक्ष्म सांपरायविषैं जिनकी व्युच्छित्ति भई ऐसे पंच ज्ञानावरण च्यारि दर्शनावरण पांच अंतराय मिलि घातियनकी चौदह॥ ४०२॥

तेजदुगं वण्णचऊ थिरसुहजुगलगुरुणिमिणधुवउदया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोदयबंधा सेसा बासीदा उभयबंधाओ ॥४०३॥

तेजोद्विकं वर्णचत्वारि स्थिरशुभयुगलागुरुनिर्माणध्रुवोदयाः।
स्वोदयबंधाः शेषाः द्व्यशीतिरुभयबंधाः ॥ ४०३ ॥

श्री० प्र०—तैजसद्विकं वर्णचतुष्कं स्थिरद्विकशुभद्विकागुरुलघुनिर्माणानीति ध्रुवोदयाश्च मिलित्वा सप्तविंशतिः स्वोदयबंधा भवंति। आसां बंधः स्वोदयेनैव, उदयः अबंधेऽपि स्यात्। शेषाः पंचदर्शनावरणद्विवेदनीयपंचविंशतिमोहनीयतिर्यग्मनुष्यायुस्तिर्यग्मनुष्यगतिपंचजात्यौदारिकतदंगोपांग षट्संहननषट्संस्थानतिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्योपघातपरघातातपोद्योतोच्छ्वासविहायोगतिद्विकत्रसद्विकबादरद्विकपर्याप्तद्विकप्रत्येकसाधारणसुभगद्विकसुस्वरद्विकादेयद्विकयशस्कीर्तिद्विकगोत्रद्विकानि द्व्यशीतिप्रकृतयः उभयोदयबंधा भवंति ॥ ४०३ ॥ तृतीयप्रश्नत्रयप्रकृतीर्गाथाचतुष्टयेनाह—

सं० चं०—तैजस कार्माण २ वर्णादिक च्यारि ४ स्थिर आस्थिर २ शुभ अशुभ २ अगुरु लघु १ निर्माण १ ए बारह प्रकृति ध्रुवोदय हैं इनका निरंतर उदय पाइए हैं। इनविषैं पूर्वोक्त पंद्रह मिलाएं सत्ताईस प्रकृति भई ते ए स्वोदय हैं अपना संबंधी उदय होतैं संतैही इनका बंध हो है। बहुरि इनका उदय है सो इनका बंध न होतैं भी हो है जैसैं चौदह प्रकृतिनिका बंध तो दशवां गुण स्थान पर्यंत है उदय बारह्वां पर्यंत है ऐसैं अन्य प्रकृतिनिका भी जानना। बहुरि अवशेष पंच निद्रा ५ दोय वेदनीय २ मोहनी पचीस २५ तिर्यंच मनुष्य आयु २ तिर्यंच मनुष्यगति २ जाति पांच ५ औदारिक शरीर वा अंगोपांग २ छह संहनन ६ छह संस्थान ६ तिर्यंच मनुष्य आनुपूर्वी २ उपघात १ परघात १ आतप १ उद्योत १ उश्वास १ विहायोगति द्विक २ त्रसद्विक २ बादर द्विक २ पर्याप्तद्विक २ प्रत्येक १ साधारण १ सुभगद्विक २ सुस्वरद्विक २ आदेय द्विक २ यशस्कीर्तिद्विक २ गोत्रद्विक २ ए बियासी प्रकृति उभयोदयबंधी हैं इनका उदय होतैं संतैं भी इनका बंध हो है अर इनका उदय न होतैं भी इनका बंध हो है ॥ ४०३ ॥ आगैं तीजे तीन प्रश्ननिकी प्रकृति च्यारि गाथानि करि कहै हैं—

सत्तेताल धुवावि य तित्थाहाराउगा णिरंतरगा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिरयदुजाइचउक्कं संहदिसंठाणपणपणगं ॥४०४॥
दुग्गमणादावदुगं थावरदसगं असादसंढित्थि ।
अरदीसोगं चेदे सांतरगा होंति चोत्तीसा ॥४०५॥जुम्मं ।

सप्तचत्वारिंशत् ध्रुवा अपि च तीर्थाहारायुष्का निरंतरका ।
निरयद्विजातिचतुष्कं संहतिसंस्थानपंचपंचकं ॥ ४०४ ॥
दुर्गमनातापद्विकं स्थावरदशकमसातषंढस्त्री ।
अरतिः शोकं चैताः सांतरका भवंति चतुस्त्रिंशत् ॥ ४०५ ॥

जी० प्र०—पंचज्ञानावरणनवदर्शनावरणपंचांतरायमिथ्यात्वषोडशकषायभयद्विकतैजसद्विकागुरुलघुद्विकनिर्माणवर्णचतुष्काणीति सप्तचत्वारिंशद् ध्रुवोदयाः । तीर्थमाहारकद्विकमायुश्चतुष्कं चेति चतुःपंचाशत्प्रकृतयो निरंतरबंधा भवंति । नरकद्विकमेकेंद्रियादिजातिचतुष्कं पंचसंहननानि पंचसंस्थानान्यप्रशस्तविहायोगतिरातपोद्योतौ स्थावरदशकमसातं स्त्रीषंढवेदौ अरतिः शोकश्चेति चतुस्त्रिंशत्सांतरबंधा भवंति ॥ ४०४–४०५ ॥

स० चं०—पांच ज्ञानावरण ५ नव दर्शनावरण ९ पांच अंतराय ५ मिथ्यात्व १ सोलह कषाय १६ भय जुगुप्सा २ तैजस कार्माण २ अगुरुलघु द्विक २ निर्माण १ वर्णादिक च्यारि ४ ए सैंतालीस प्रकृतिनिका अपनी अपनी व्युच्छित्ति पर्यंत सदा उदय पाइए तातैं ध्रुवोदयी ध्रुवबंधी हैं अर तीर्थंकर १ आहारकद्विक २ आयु च्यारि ४ ए सात मिलिकरि चौवनि प्रकृति भई ते निरंतर बंधी हैं। तहां सैंतालीस प्रकृतिनिका तो व्युच्छित्तितैं पहिलैं समय समय निरंतर बंध सदा पाइए अर तीर्थंकर आहारकका प्रारंभ भएं पीछैं जिन गुणस्थाननिविषैं इनका बंध पाइए तहां निरंतर समय २ बंध पाइए है। बहुरि आयुका जिस कालविषैं आयु बंध होना योग्य है तहां आयु बंध भए पीछैं तिस कालविषैं समय समय निरंतर बंधै है तातैं इनकौं निरंतरबंधी कही है। बहुरि नरक गति वा आनुपूर्वी २ एकेंद्रि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यादिक च्यारि जाति ४ वज्रवृषभ नाराच विना पांच संहनन ५ समचतुरस्र विना पांच संस्थान ५ अप्रशस्त विहायोगति १ आतप उद्योत २ स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त साधारण आस्थिर अशुभ दुर्भग दुस्वर अनादेय अयशस्कीर्ति ए स्थावर दशक १० असाता वेदनीय १ स्त्री नपुंसक वेद २ अरति १ शोक १ ए चौंतीस प्रकृति सांतरबंधी हैं। जैसैं किसी समय नरक गतिका बंध होइ किसी समय विषैं अन्य गतिनिका बंध होइ। जातिविषैं किसी समय विषैं एकेंद्री जातिका बंध होइ किसी समय बेंद्रियादिक जातिका बंध होइ इत्यादिक ऐसैं ए प्रकृति सांतरबंधी जाननी ॥ ४०४—४०५ ॥

सुरणरतिरियोरालियवेगुव्वियदुगपसत्थगदिवज्जं ।
परघाददुसमचउरं पंचिंदिय तसदसं सादं ॥४०६॥
हस्सरदिपुरिसगोददु सप्पडिवक्खम्मि सांतरा होंति ।
णट्ठे पुण पडिवक्खे णिरंतरा होंति बत्तीसा ॥४०७॥जुम्मं ।

सुरनरतिर्यगौरालिकवैगूर्विकद्विकप्रशस्तगतिवज्रं ।
परघातद्विसमचतुरस्रं पंचेंद्रियं त्रसदश सातं ॥ ४०६ ॥
हास्यरतिपुरुषगोत्रद्विकं सप्रतिपक्षे सांतरा भवंति ।
नष्टे पुनः प्रतिपक्षे निरंतरा भवंति द्वात्रिंशत् ॥ ४०७ ॥

जी० प्र०—सुरद्विकं मनुष्यद्विकं तिर्यग्द्विकं औदारिकद्विकं वैक्रियिकद्विकं प्रशस्तविहायोगतिर्वज्रवृषभनाराचं परघातोच्छ्वासौ समचतुरस्रसंस्थानं पंचेंद्रियं त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तयः सातं हास्यरती पुंवेदो गोत्रद्विकं चेति द्वात्रिंशत्प्रकृतयः सप्रतिपक्षे सांतरा भवंति। तस्मिन्नष्टे निरंतरोदयबंधा भवंति। तत्र सुरद्विकं नरकतिर्यग्मनुष्यद्विकैर्मिथ्यादृष्टौ, तिर्यग्मनुष्यद्विकाभ्यां सासादने, मनुष्यद्विकेन मिश्रासंयत-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योश्च सप्रतिपक्षं, उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागांतं भोगभूमौ च निःप्रतिपक्षं। मनुष्यद्विकं 'सदरसहस्सारगोत्तितिरियदुगं' इत्यानतादिकल्पेषु निःप्रतिपक्षं। नीचैर्गोत्रं तिर्यग्द्विकं च सप्तमपृथिव्यां तेजोवातकायिकयोश्च निःप्रतिपक्षं। औदारिकद्विकं नरकदेवगत्योर्निष्प्रतिपक्षं। वैक्रियिकद्विकं नरतिर्यगसंयतादौ भोगभूमौ च निःप्रतिपक्षं। प्रशस्तविहायोगतिरप्रशस्तविहायोगतेः सासादने बंधच्छेदान्मिश्राद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निष्प्रतिपक्षा। वज्रवृषभनाराचं मिथ्यादृष्टिसासादनयोः सप्रतिपक्षं, मिश्रासंयतयोर्निष्प्रतिपक्षं। परघातोच्छ्वासद्वयं अपर्याप्तेनैव सप्रतिपक्षं, अपर्याप्तस्य मिथ्यादृष्टौ बंधच्छेदात् परघातोच्छ्वासद्वयं सासादनाद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षं। आतपः मिथ्यादृष्टावपर्याप्तबंधे पर्याप्तेन निःप्रतिपक्षः। समचतुरस्रं मिश्राद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षं। पंचेंद्रियं मिथ्यादृष्टौ सप्रतिपक्षं, सासादनाद्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षं। त्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकानि मिथ्यादृष्टौ स्थावरसूक्ष्मापर्याप्तसाधारणशरीराणां बंधात्सप्रतिपक्षाणि, उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निष्प्रतिपक्षाणि। स्थिरशुभयशस्कीर्तयः प्रमत्तपर्यंतमस्थिराशुभायशस्कीर्तीनां बंधात्सप्रतिपक्षाः, उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निष्प्रतिपक्षाः। यशस्कीर्तिस्तु सूक्ष्मसांपरायपर्यंतं निःप्रतिपक्षा। सुभगसुस्वरादेयानि सासादनपर्यंतं दुर्भगत्रयबंधात् सप्रतिपक्षाणि उपर्यपूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षाणि। सातवेदनीयं प्रमत्तपर्यंतमसातबंधात्सप्रतिपक्षं, उपरि सयोगपर्यंतं निःप्रतिपक्षं। हास्यरतिद्वयं प्रमत्तपर्यंतमरतिशोकबंधात्सप्रतिपक्षं, उपर्यपूर्वकरणचरमसमयपर्यंतं निष्प्रतिपक्षं। पुंवेदः सासादनपर्यंतं सप्रतिपक्षः, मिथ्यादृष्टौ षंढस्त्रीवेदयोः सासादने स्त्रीवेदस्य च बंधात् उपर्यनिवृत्तिकरणसवेदभागपर्यंतं निःप्रतिपक्षः। उच्चैर्गोत्रं सासादनपर्यंतं नीचैर्गोत्रबंधात्सप्रतिपक्षं, उपरि सूक्ष्मसांपरायपर्यंतं निःप्रतिपक्षं॥ ४०६–४०७॥ इतिनवप्रश्नप्रथमचूलिका व्याख्याता।

स० चं०—देवगति वा आनुपूर्वी मनुष्यगति वा आनुपूर्वी तिर्यंचगति वा आनुपूर्वी औदारिक शरीर वा अंगोपांग वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग प्रशस्त विहायोगति १ वज्रवृषभ नाराच १ परघात उश्वास समचतुरस्र संस्थान १ पंचेंद्री १ त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय यशस्कीर्ति ए त्रस दशक १० साता वेदनीय १ हास्य १ रति १ पुरुषवेद १ गोत्रद्विक २ ए बत्तीस प्रकृति सांतर वा निरंतर उभय बंधी हैं। तहां प्रतिपक्षी होतैं संतै सांतर बंधी हैं प्रतिपक्षी जहां नाहीं तहां निरंतर बंधी हैं। जैसैं अन्यगतिका जहां बंध पाइए तहां तौ देवगति सप्रतिपक्षी है सो तहां कोई समय देवगतिका बंध होइ कोई समय अन्य गतिका बंध होइ तातैं सांतर बंधी है। बहुरि जहां अन्य गतिका बंध नाहीं केवल देवगतिका ही बंध है तहां देवगति निष्प्रतिपक्षी है सो तहां समय समय देवगतिही का बंध पाइए तातैं निरंतरबंधी है तातैं देवगतिकौं उभयबंधी कहिए ऐसैंही अन्य प्रकृतिनिकैं उभय बंध जानना। अब ए प्रकृति सप्रतिपक्षी कही हैं निःप्रतिपक्षी कहा है सो कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवगति वा आनुपूर्वी हैं सो मिथ्यादृष्टिविषै तो नरक तिर्यंच मनुष्यका द्विककरि, सासादनविषैं तिर्यंच मनुष्य का द्विककरि, मिश्र असंयतविषैं मनुष्यका द्विककरि सप्रातिपक्ष है। ऊपरि अपूर्वकरणका छठाभाग पर्यंत वा भोगभूमिविषैं केवल देवाद्विकहीका बंध है तातैं तहां निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि मनुष्यद्विक है सो 'सदरसहस्सारगोत्ति तिरियदुगं' इस वचनतैं आनत आदि स्वर्ग वा ग्रैवेयकादिविषैं निःप्रतिपक्ष है। बहुरि नीच गोत्र अर तिर्यंच द्विक ये सातवीं नरक पृथ्वी विषैं वा तेजोकायिक वातकायिक विषैं निःप्रतिपक्ष हैं बहुरि औदारिकद्विक है सो नारकदेवगतिविषैं निष्प्रतिपक्ष है बहुरि उच्चगोत्र अर वैक्रियिकद्विक ए मनुष्य तिर्यंच असंयतादिकविषैं वा भोग भूमिविषैं निष्प्रातपक्ष हैं। बहुरि प्रशस्त विहायोगति है सो अप्रशस्त विहायोगतिकी सासादनहीमैं बंधव्युच्छित्ति भई तातैं मिश्रादिक अपूर्वकरण का छठा भाग पर्यंत निःप्रतिपक्ष है बहुरि वज्रवृषभ नाराच मिथ्यादृष्टि सासादन विषैं तो सप्रतिपक्ष हैं मिश्र असंयतविषैं निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि परघात उस्वास ए अपर्याप्त अपेक्षा सप्रतिपक्ष हैं अपर्याप्त प्रकृतिकी साथि इनका बंध न हो है। अर अपर्याप्त प्रकृतिकी मिथ्यादृष्टिविषैं ही व्युच्छित्ति भई तातैं परघात उस्वास सासादनादिक अपूर्वकरणका छठा भागपर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं। बहुरि आतप मिथ्यादृष्टिविषै अपर्याप्त प्रकृतिका बंध होतैं सप्रतिपक्षी है जातैं अपर्याप्तका बंध होतैं याका बंध न हो है। बहुरि बंधै है पर्याप्त अपेक्षा निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि समचतुरस्र संस्थान मिश्रादिक अपूर्वकरणका छठा भागपर्यंत निष्प्रतिपक्ष है। पंचेंद्रिय प्रकृति मिथ्यादृष्टिविषैं सप्रतिपक्ष है। सासादनादिक अपूर्वकरणका छठा भागपर्यंत निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि त्रस बादर पर्याप्त प्रत्येक ए च्यारि मिथ्यादृष्टिविषै स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त साधारणका भी बंध है तातैं तहां सप्रतिपक्ष हैं। ऊपरि अपूर्वकरणका छठाभागपर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं। बहुरि स्थिर शुभ यशस्कीर्ति ए तीन प्रमत्तपर्यंत अस्थिर अशुभ अयशस्कीर्तिका बंध है तातैं तहां सप्रतिपक्ष हैं। ऊपरि अपूर्व करण का छठा भागपर्यंत निःप्रतिपक्ष हैं तहां यशस्कीर्ति सूक्ष्मसांपरायपर्यंत निष्प्रतिपक्ष है बहुरि सुभग सुस्वर आदेय है सो सासादनपर्यंत दुर्भगादिक तीनका बंध है तातैं तहां सप्रतिपक्ष है। बहुरि मिश्रादिक अपूर्वकरणका छठाभाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं बहुरि सातावेदनीय है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो प्रमत्तपर्यंत असाताका बंध है तातैं सप्रातिपक्ष है। ऊपरि सयोगीपर्यंत निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि हास्य रति ए दोऊ प्रमत्त पर्यंत अरति शोकका बंध है तातैं तहां सप्रातिपक्ष हैं। ऊपरि अपूर्वकरणका अंतसमय पर्यंत निष्प्रतिपक्ष हैं। बहुरि पुरुषवेद सासादन पर्यंत सप्रतिपक्ष है जातैं मिथ्यादृष्टिविषैं नपुंसक स्त्रीवेदका अर सासादनविषैं स्त्रीवेदका भी बंध है। ऊपरि अनिवृत्ति करणका सवेदभाग पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है। बहुरि उच्चगोत्र सासादनपर्यंत नीचगोत्रका बंध है तातैं तहां सप्रातिपक्ष है। ऊपरि सूक्ष्मसांपराय पर्यंत निष्प्रतिपक्ष है। ऐसैं जहां स्वजाति अन्यप्रकृतिका बंध पाइए तहां सप्रातिपक्ष कहिए तहां सांतरबंधी है। बहुरि जहां केवल आपहीका बंध पाइए तहां निष्प्रतिपक्षी कहिए सो तहां निरंतरबंधी है। ऐसैं उभयबंधी प्रकृति जाननी॥४०६–४०७॥इति नवप्रश्नचूलिका समाप्ता।

अथ पंचभागहारचूलिका।

जत्थ वरणेमिचंदो महणेण विणा सुणिम्मलो जादो।
सो अभयणंदिणिम्मलसुओवही हरउ पावमलं॥४०८॥

यत्र वरनेमिचंद्रो मथनेन विना सुनिर्मलो जातः।
स अभयनंदिनिर्मलश्रुतोदधिर्हरतु पापमलं॥ ४०८॥

जी० प्र०—यत्र वरनेमिचंद्रो मथनेन विनापि सुनिर्मलो जातः सोऽभयनंदिनिर्मलश्रुतोदधिर्भव्यजनानां पापमलं हरतु॥ ४०८॥

सं० च०—जिसविषैं उत्कृष्ट नेमिचंद्र, मथन विना ही निर्मल भया सो अभयनंदीका निर्मल शास्त्रसमुद्र है सो जीवनिके पापमलको दूरि करो। भावार्थ—लोकोक्ति ऐसी है जो समुद्र मथिकरि चंद्रमा निकास्या सो अभयनंदि नामा आचार्यका उपदेश्या शास्त्र समुद्रविषै विनाही मथन कीए नेमिचंद्र आचार्यरूपी चंद्रमा निर्मल प्रगट भया बहुत तिस शास्त्रका अभ्यास न कीया थोरे ही अभ्यासतैं निर्मल भया ऐसा निर्मलताकौं कारण सो शास्त्र समुद्र है सो सब जीवनिके पाप मलकौं हरो ऐसा आशीर्वादात्मक मंगल इहां कीया है॥ ४०८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उव्वेलणविज्झादो अधापवत्तो गुणो य सव्वो य।
संकमदि जेहिं कम्मं परिणामवसेण जीवाणं ॥४०९॥

उद्वेल्लनविध्यातः अधःप्रवृत्तः गुणश्च सर्वश्च।
संक्रामति यैः कर्म परिणामवशेन जीवानां ॥ ४०९ ॥

जी० प्र०—यैः शुभाशुभं कर्म संसारिजीवानां परिणामवशेन संक्रामति परप्रकृतिरूपेण परिणमति, ते भागहाराः उद्वेल्लनविध्याताधःप्रवृत्त-गुणसर्वसंक्रमनामानः पंच संभवंति ॥ ४०९ ॥ संक्रमस्वरूपमाह—

सं० चं०—जिन भागहारनिकरि शुभकर्म वा अशुभकर्म संसारी जीवनिकैं अपने परिणामनिके वशतैं संक्रमण करैं अन्य प्रकृतिरूप होइकरि परिणमै ते भागहार पंच प्रकार हैं—उद्वेलन १ विध्यात २ अधःप्रवृत्त ३ गुणसंक्रम ४ सर्वसंक्रम ५ ए पंच भागहारनिके नाम हैं। भावार्थ—जो उद्वेलन प्रकृति है ताके जितने परमाणु हैं तिनकौं उद्वेलन नामा भागहारका जो प्रमाण ताका भाग दीए जो प्रमाण आवै तितनी परमाणू जहां अन्य प्रकृतिरूप होइ परिणमै तहां उद्वेलन जानना। ऐसैं ही अन्य भागहारनिका स्वरूप जानना। इनका प्रमाण आगें कहैंगे ॥ ४०९ ॥ संक्रमणका स्वरूप कहैं हैं—

बंधे संकामिज्जदि णोबंधे णत्थि मूलपयडीणं।
दंसणचरित्तमोहे आउचउक्के ण संकमणं ॥४१० ॥

बंधे संक्रामति नोबंधे नास्ति मूलप्रकृतीनां।
दर्शनचारित्रमोहे आयुश्चतुष्के न संक्रमणं ॥ ४१० ॥

जी० प्र०—बंधे बध्यमानमात्रे संक्रामति इत्ययमुत्सर्गविधिः क्वचिदबध्यमानेऽपि संक्रमात्, नोबंधे अबंधे न संक्रामति इत्यनर्थकवचनाद्दर्शनमोह-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीयं विना शेषं कर्म बध्यमानमात्रे एव संक्रामतीति नियमो ज्ञातव्यः। मूलप्रकृतीनां परस्परं संक्रमणं नास्ति उत्तरप्रकृतीनामस्तीत्यर्थः । तत्रापि दर्शनचारित्रमोहयोः चतुर्णामायुषां च परस्परं संक्रमणं नास्ति ॥ ४१० ॥

सं० चं०—बंधे कहिए जिस प्रकृतिका बंध होइ तिस प्रकृतिविषैं संक्रमण होइ अन्य प्रकृति तद्रूप होइ परिणमै है यहु सामान्य कथन है जातै कहीं जाका बंध नाहीं तिसविषैं भी संक्रमण हो है । बहुरि 'नो बंध' कहिए जाका बंध नाहीं तिहिविषैं नाहीं संक्रमण करै है। ऐसा वचन कहनेका अभिप्राय यहु है–जो दर्शन मोहनी विना अवशेष प्रकृति जाका बंध होइ तिहिविषैं संक्रमण हो है ऐसा नियम जानना । बहुरि मूल प्रकृतिके परस्पर संक्रमण नाहीं है। ज्ञानावरण दर्शनावरणादिक रूप न हो है इत्यादिक जानना । बहुरि उत्तर प्रकृतिविषैं संक्रमण है। ज्ञानावरणकी पंच प्रकृतिनिविषैं परस्पर संक्रमण पाइए ऐसैं सबनिविषैं जानना तहां भी दर्शनमोह अर चारित्र मोहविषैं परस्पर संक्रमण नाहीं है। दर्शन मोहकी प्रकृति चारित्र मोहकी प्रकृति रूप होइ परिणमैं नाहीं चारित्रमोहकी प्रकृति दर्शन मोहकी रूप होइ परिणमैं नाहीं। बहुरि च्यारि आयु तिनकैं परस्पर संक्रमण नाहीं देवायु मनुष्यायु आदि रूप होइ न परिणमैं इत्यादि ऐसैं संक्रमणका स्वरूप जानना ॥ ४१० ॥

सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदि।
सासणमिस्से णियमा दंसणतियसंकमो णत्थि ॥ ४११ ॥

सम्यं मिथ्यं मिश्रं स्वगुणस्थाने नैव संक्रामति।
सासनमिश्रे नियमाद्दर्शनत्रिकसंक्रमो नास्ति ॥ ४११ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वं मिथ्यात्वं मिश्रं च स्वस्वगुणस्थाने एव न संक्रामति, सासादनमिश्रयोर्नियमेन दर्शनमोहत्रयस्य संक्रमणं नास्ति । असंयतादिचतुर्ष्वस्तीत्यर्थः ॥ ४११ ॥

सं० चं०—सम्यक्त्व मोहनी मिथ्यात्व मोहनी मिश्रमोहनी अपना अपना असंयतादिक वा मिथ्यादृष्टि वा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्र गुणस्थानविषैं संक्रमण नाहीं करै हैं। बहुरि सासादन अर मिश्रविषैं नियमकरि तीनों ही दर्शन मोहका संक्रमण नाहीं असंयतादिक च्यारि गुणस्थानविषैं संक्रमण है ॥ ४११ ॥

मिच्छे सम्मिस्साणं अधापवत्तो मुहुत्तअंतोत्ति।
उव्वेलणं तु तत्तो दुचरिमकंडोत्ति णियमेण ॥ ४१२ ॥

मिथ्ये सम्यग्मिश्रयोरधःप्रवृत्तो मुहूर्तांतरिति।
उद्वेलनं तु ततो द्विचरमकांड इति नियमेन ॥ ४१२ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वे प्राप्ते सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्योरधःप्रवृत्तसंक्रमोऽन्तर्मुहूर्तपर्यंतं वर्तते। तु पुनः—उद्वेलनभागहारसंक्रमो द्विचरमकांडपर्यंतं वर्तते नियमेन। तत्राधःप्रवृत्तसंक्रमः फालिरूपेण, उद्वेलनसंक्रमः कांडकरूपेण वर्तते ॥ ४१२ ॥

स० चं०—मिथ्यात्वकौं प्राप्त होतैं संतैं सम्यक्त्व मोहनी अर मिश्रमोहनी इनकैं अधः प्रवृत्त नामा संक्रमण अंतर्मुहूर्त पर्यंत प्रवर्तै है बहुरि उद्वेलना भागहार नामा संक्रम उपांत कांडक पर्यंत वर्तै है नियमकरि। तहां अधः प्रवृत्त संक्रम फालिरूप करि वर्तै है। उद्वेलना संक्रम कांडकरूप करि वर्तै है। एक समय विषैं संक्रमण होइ सो फालि कहिए। बहुत समय समुदायविषैं संक्रमण होइ सो कांडक कहिए इनका विशेष वर्णन आगैं इस भाषाविषैं लब्धिसार क्षपणासार अनुसारि कथन लिखैंगे तहां जानना ॥ ४१२ ॥

उव्वेलणपयडीणं गुणं तु चरिमम्हि कंडये णियमा।
चरिमे फालिम्मि पुणो सव्वं च य होदि संकमणं ॥४१३॥

उद्वेलनप्रकृतीनां गुणं तु चरमे कांडके नियमात्।
चरमे फालौ पुनः सर्वं च भवति संक्रमणं ॥ ४१३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—उद्वेल्लनप्रकृतीनां द्विचरमकांडकपर्यंतमुद्वेल्लनसंक्रमणं, चरमकांडके तु पुनः नियमेन गुणसंक्रमणं। चरमफालौ पुनः सर्वसंक्रमणं चास्ति तेन सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्योरुद्वेल्लनप्रकृतित्वाच्चरमकांडके गुणसंक्रमणं चरमफालौ सर्वसंक्रमणं च सिद्धं। संदृष्टिः—

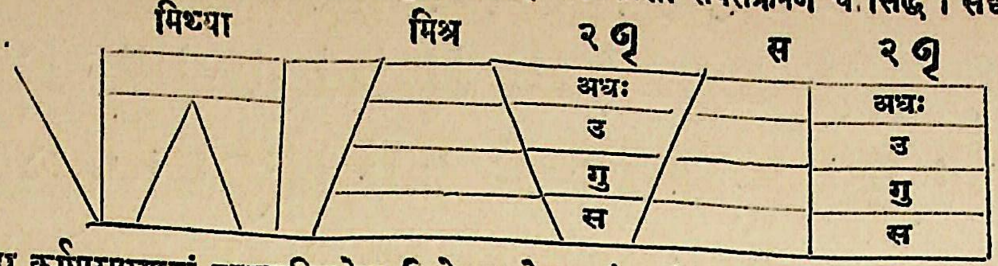

करणपरिणामेन विना कर्मपरमाणूनां परप्रकृतिरूपेण निक्षेपणमुद्वेल्लनसंक्रमणं नाम। विध्यातविशुद्धिकस्य जीवस्य स्थित्यनुभागकांडकगुणश्रेण्यादिपरिणामेष्वतीतेषु प्रवर्तनाद्विध्यातसंक्रमणं नाम। बंधप्रकृतीनां स्वबंधसंभवविषये यः प्रदेशसंक्रमः तदधःप्रवृत्तसंक्रमणं नाम। प्रतिसमयमसंख्येयगुणश्रेणिक्रमेण यत्प्रदेशसंक्रमणं तद् गुणसंक्रमणं नाम। चरमकांडकचरमफालेः सर्वप्रदेशाग्रस्य यत्संक्रमणं तत्सर्वसंक्रमणं नाम॥४१३॥ सर्वसंक्रमणप्रकृतिस्थतिर्यगेकादशमाह—

स० चं०—जे उद्वेलन प्रकृति है तिनके द्विचरम कांडक पर्यंत तौ उद्वेलन संक्रम है बहुरि अंतका कांडकविषैं नियमकरि गुण संक्रम हैं। बहुरि अंतफालिविषैं सर्व संक्रमण है तातैं सम्यक्त्व मोहनी अर मिश्रमोहनी भी उद्वेलन प्रकृति है सो इनके भी चरम कांडकविषैं गुणसंक्रमण अर चरम फालिविषैं सर्व संक्रमण सिद्ध भया। इहां पंच प्रकार संक्रमणका स्वरूप कहिए हैं—

जो अधःप्रवृत्त आदि तीन करण रूप परिणाम विना ही कर्म प्रकृतिके परमाणूनिका अन्य प्रकृति रूप परणमना सो उद्वेलन संक्रमण है। बहुरि विध्यातविशुद्धकस्य कहिए मंद है विशुद्धता जाकैं ऐसा जो जीव ताकैं स्थिति अनुभागके घटावने रूप कांडक वा गुणश्रेणि आदि परिणाम तिनकौं होइ गए संतैं जो प्रवर्तै सो विध्यात संक्रमण है। बहुरि बंधरूप भई जे प्रकृति तिनका अपने बंध विषैं संभवती प्रकृतिनिविषैं परमाणूनिका जो संक्रमण होना सो अधःप्रवृत्त संक्रमण है। बहुरि समय समय प्रति जहां श्रेणी जो पंक्ति तींहि रूप असंख्यात असंख्यात गुणे परमाणू अन्य प्रकृति रूप होइ परिणमैं सो गुणसंक्रमण है। बहुरि अंतका कांडका जो अंतका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

फालि सर्व प्रदेशनिविषैं जो पीछैं ही पीछैं अन्य प्रकृति रूप न भया ऐसा परमाणू तिसका जो अन्य प्रकृति रूप होना सो सर्वसंक्रमण है। ऐसैं पंच संक्रमण जानने ॥ ४१३ ॥ आगैं सर्व संक्रमण प्रकृतिनिविषैं तिर्यक् एकादश है ताकौं कहै हैं—

तिरियदुजाइचउक्कं आदावुज्जोवथावरं सुहुमं।
साहारणं च एदे तिरियेयारं मुणेयव्वा ॥४१४॥

तिर्यग्द्विजातिचतुष्कमातापोद्योतस्थावरं सूक्ष्मं।
साधारणं चैताः तिर्यगेकादश मंतव्याः ॥ ४१४ ॥

जी॰ प्र॰—तिर्यग्द्वयमाद्यजातिचतुष्कमातपः उद्योतः स्थावरः सूक्ष्मं साधारणं चेत्येता एकादश तिर्यक्ष्वेवोदयाचिर्यगेकादश इति संज्ञाः स्युः ४१४ ॥ अथोद्वेल्लनप्रकृतयः काः ? इति चेदाह—

स॰ चं॰—तिर्यंच गति वा आनुपूर्वी २ एकेंद्रियादिक जाति च्यारि ४ आतप १ उद्योत १ स्थावर १ सूक्ष्म १ साधारण १ इन ग्यारह प्रकृतिनिका तिर्यंच ही विषैं उदय है। तातैं इनका तिर्यगेकादश नाम जानना ॥ ४१४ ॥ आगैं उद्वेलना प्रकृति कहै हैं—

आहारदुगं सम्मं मिस्सं देवदुगणारयचउक्कं।
उच्चं मणुदुगमेदे तेरस उव्वेलणा पयडी ॥४१५॥

आहारद्विकं सम्यं मिश्रं देवद्विकनारकचतुष्कं।
उच्चं मनुद्विकमेताः त्रयोदश उद्वेल्लनाप्रकृतयः ॥ ४१५ ॥

जी॰ प्र॰—आहारकद्विकं सम्यक्त्वं मिश्रं देवद्विकं नारकचतुष्कमुच्चैर्गोत्रं मनुष्यद्विकं चेत्येतास्त्रयोदश उद्वेल्लनानामप्रकृतयः स्युः ॥ ४१५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—आहारक द्विक २ सम्यक्त्व मोहनी १ मिश्रमोहनी १ देवद्विक २ नरकगति वा आनुपूर्वी वैक्रियिक शरीर वा अंगोपांग ए च्यारि उच्चगोत्र १ मनुष्यद्विक २ ए तेरह उद्वेलना प्रकृति हैं ॥ ४१५ ॥

बंधे अधापवत्तो विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे ।
एत्तो गुणो अबंधे पयडीणं अप्पसत्थाणं ॥ ४१६ ॥

बंधे अधःप्रवृत्तो विध्यातः सप्तम इति हि अबंधे ।
इतो गुणः अबंधे प्रकृतिनामप्रशस्तानां ॥ ४१६ ॥

जी० प्र०—प्रकृतीनां बंधे सति स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्यंतमधःप्रवृत्तसंक्रमणः स्यात् न मिथ्यात्वस्य, सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदीति निषेधात् । बंधव्युच्छित्तौ सत्यामसंयताद्यप्रमत्तपर्यंतं विध्यातसंक्रमणं स्यात् । इतः अप्रमत्तगुणस्थानादुपर्युपशांतकषायपर्यंतं बंधरहिताप्रशस्तप्रकृतीनां गुणसंक्रमणं स्यात् । ततोऽन्यत्रापि प्रथमोपशमसम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयादंतर्मुहूर्तपर्यंतं पुनः मिश्रसम्यक्त्वप्रकृत्योः पूरणकाले मिथ्यात्वक्षपणायामपूर्वकरणपरिणामान्मिथ्यात्वचरमकांडकद्विकचरमफालिपर्यंतं च गुणसंक्रमणं स्यात् । चरमफालौ सर्वसंक्रमणं स्यात् ॥ ४१६ ॥ ताः सर्वसंक्रमणप्रकृतीराह—

स० चं०—प्रकृतिनिके बंधकौं होतैं संतै अपनी अपनी बंध व्युच्छित्ति पर्यंत अधःप्रवृत्त संक्रमण है तहां मिथ्यात्व का नाहीं है जातैं 'सम्मं मिच्छं मिस्सं' इत्यादि गाथाविषैं मिथ्यात्वका संक्रमण मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं निषेध कीया है अर मिथ्यात्वका बंध मिथ्यादृष्टिविषैं ही है तातैं मिथ्यात्वकौं नाहीं कह्या । बहुरि बंधकी व्युच्छित्तिकौं होत संतै असंयतादिक अप्रमत्त पर्यंत विध्यात नामा संक्रमण है । बहुरि यातैं अप्रमत्त गुणस्थानके ऊपरि उपशांत कषाय पर्यंत बंधरहित जे अप्रशस्त प्रकृति तिनकैं गुणसंक्रमण है तातैं अन्यत्र भी प्रथमोपशम सम्यक्त्वके ग्रहणका प्रथम समयतैं लगाय अंतर्मुहूर्त पर्यंत गुण संक्रमण है । बहुरि मिश्रमोहनी सम्यक्त्व मोहनीका पूरण कालविषै मिथ्यात्वकौं क्षय करने विषैं अपूर्व करण परिणाम है तातैं मिथ्यात्वका अंतका कांडकका द्विचरमफालिपर्यंत गुणसंक्रमण है चरम फालिविषैं सर्व सक्रमण है ॥ ४१६ ॥ तिन सर्व संक्रमण रूप प्रकृतिनिकौं कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिरियेयारुव्वेल्लणपयडी संजलणलोहसम्ममिस्सूणा ।
मोहा थीणातिगं च य बावण्णे सव्वसंकमणं ॥ ४१७ ॥

तिर्यगेकादशोद्वेल्लनप्रकृतयः संज्वलनलोभसम्यग्मिश्रोनाः ।
मोहाः स्त्यानत्रिकं च द्वापंचाशत् सर्वसंक्रमणं ॥ ४१७ ॥

जी० प्र०—प्रागुक्ततिर्यगेकादशोद्वेल्लनत्रयोदशसंज्वलनलोभसम्यक्त्वमिश्रवर्जितमोहनीयानि स्त्यानगृद्धित्रयं चेति द्वापंचाशत्प्रकृतिषु सर्वसंक्रमणं स्यात् ॥ ४१७ ॥ अथ प्रकृतीनां संक्रमणनियममाह—

स० चं०—पूर्वोक्त तिर्यगेकादशकी ग्यारह ११ उद्वेलना प्रकृति तेरह १३ संज्वलन लोभ सम्यक्त्व मिश्र इन तीन विना मोहनीयकी पचीस २५ स्त्यान गृद्ध्यादिक तीन ३ ए बावन प्रकृतिनिविषैं सर्व संक्रमण हो है ।४१७॥ आगैं प्रकृतिनिकै संक्रमणका नियम कहै हैं—

उगुदालतीससत्तयवीसे एक्केक्कबारतिचउक्के ।
इगिचदुदुगतिगतिगचदुपणदुगदुगतिण्णि संकमणा ॥ ४१८ ॥

एकोनचत्वारिंशत्त्रिंशत्सप्तकविंशे एकैकद्वादशत्रिचतुष्के ।
एकचतुर्द्विकत्रिकत्रिकचतुःपंचद्विकद्विकत्रयः संक्रमणाः ॥ ४१८ ॥

जी० प्र०—एकान्नचत्वारिंशत्त्रिंशत्सप्तविंशत्येकैकद्वादशत्रिचतुष्केषु क्रमेणैकचतुर्द्वित्रित्रिचतुःपंचद्विद्वित्रिसंक्रमा भवंति ॥ ४१८ ॥ ताः प्रकृतीः तासां संक्रमणस्थानि च क्रमशो गाथासप्तकेनाह—

स० चं०—गुणतालीस प्रकृतिनिविषैं तीसविषैं सातविषैं वीसविषैं एकविषैं एकविषै बारहविषैं च्यारिविषैं च्यारिविषैं च्यारि विषैं अनुक्रमतैं एक च्यारि दोय तीन तीन च्यारि पांच दोय दोय तीन संक्रमण पाइए है ॥४१८॥ आगैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिन प्रकृतिनिकौं वा तिनके संक्रमणनिकौं क्रमतैं सात गाथानिकरि कहैं हैं—

सुहुमस्स बंधघादी सादं संजलणलोहपंचिंदी।
तेजदुसमवण्णचऊ अगुरुगपरघादउस्सासं ॥४१९॥
सत्थगदी तसदसयं णिमिणुगुदाले अधापवत्तो दु।
थीणतिबारकसाया संढित्थी अरइ सोगो य ॥४२०॥

सूक्ष्मस्य बंधघातिन्यः सातं संज्वलनलोभपंचेंद्रियं।
तेजोद्विसमवर्णचतुरगुरुकपरघातोच्छ्वासं ॥ ४१९ ॥
शस्तगतिः त्रसदशकं निर्माणमेकोनचत्वारिंशत्सु अधःप्रवृत्तस्तु।
स्त्यानत्रिद्वादशकषायाः षंढस्त्री अरतिः शोकश्च ॥ ४२० ॥

जी० प्र०—पंचचतुर्ज्ञानदर्शनावरणपंचांतरायाः सातं संज्वलनलोभः पंचेंद्रियं तैजसकार्मणे समचतुरस्रवर्णचतुष्कमगुरुलघुकं परघातः उच्छ्वासः प्रशस्तविहायोगतिस्त्रसवादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरशुभसुभगसुस्वरादेययशस्कीर्तयो निर्माणं चेत्येकान्नचत्वारिंशत्प्रकृतिष्वनुद्वेल्लनप्रकृतित्वान्नोद्वेल्लनसंक्रमणं। 'विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे' इत्यप्रमत्तगुणाभ्यंतरे बंधच्छेदाभावान्न विध्यातसंक्रमणं। 'एत्तो गुणो अबंधे' इति न गुणसंक्रमणं। प्रागुक्तवाक्यस्य पाठाभावान्न सर्वसंक्रमणं तेनाधःप्रवृत्तसंक्रमणमेकमेव स्यात्। एवं सर्वप्रकृतीनां व्यतिरेकं विचारयेत्। मिथ्यात्वे बध्यमाने मिथ्यादृष्टावधःप्रवृत्तसंक्रमणं न, कुतः? सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदीति निषेधात्। पुनः स्त्यानगृद्धित्रयं द्वादश कषायाः षंढस्त्रीवेदौ अरतिः शोकः- ॥४१९–४२०॥

सं० चं०—पांच ज्ञानावरण ५ च्यारि दर्शनावरण ४ पंच अंतराय ५ सातावेदनीय १ संज्वलन लोभ १ पंचेंद्री १ तैजस कार्माण २ समचतुरस्र १ वर्णादिक च्यारि ४ अगुरुलघु १ परघात १ उस्वास १ प्रशस्त विहायोगति १ त्रस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वादर पर्याप्त प्रत्येक स्थिर शुभ सुभग सुस्वर आदेय यशस्कीर्ति ए दश १० निर्माण १ ए गुणतालीस प्रकृति उद्वेलन रहित हैं तातैं इनविषैं उद्वेलन संक्रमण नाहीं। बहुरि 'विज्झादं सत्तमोत्ति हु अबंधे' इस अनुसारतैं अप्रमत्त गुणस्थानके नीचैं इनकी बंध व्युच्छित्ति नाहीं तातैं विध्यात संक्रमण भी इनविषैं नाहीं। बहुरि 'एत्तो गुणे अबंधे' इस अनुसारतैं गुण संक्रमण भी नाहीं बहुरि बावन प्रकृति सर्व संक्रमणरूप कहीं तिनविषैं ये प्रकृति न कहीं, तातैं इनविषैं सर्वसंक्रमण भी नाही तौ इन गुणतालीस प्रकृतिनिविषैं एक अधःप्रवृत्त नामा संक्रमण ही संभवै है ऐसैंही अन्य प्रकृतिनिविषैं संक्रमण कहिए है तहां भी विचार करि लेना। मिथ्यात्वकैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थान विषैं अधः प्रवृत्त संक्रमण क्यों न कहो? ताका उत्तर—' सम्मं मिच्छं मिस्सं सगुणट्ठाणम्मि णेव संकमदि' इस गाथा करि पाहिली ही कह्या था सो जानना। बहुरि स्त्यानगृद्ध्यादिक तीन ३ बारह कषाय १२ नपुंसक स्त्री वेद २ अरति १ शोक १ और ॥ ४१९–४२० ॥ आगैं कहै हैं—

तिरियेयारं तीसे उव्वेलणहीणचारि संकमणा।
णिद्दा पयला असुहं वण्णचउक्कं च उवघादे ॥ ४२१ ॥
सत्तण्हं गुणसंकममधापवत्तो य दुक्खमसुहगदी।
संहदिसंठाणदसं णीचापुण्णथिरछक्कं च ॥ ४२२ ॥

तिर्यगेकादश त्रिंशत्सु उद्वेल्लनहीनचत्वारः संक्रमणाः।
निद्रा प्रचला अशुभं वर्णचतुष्कं च उपघातं ॥ ४२१ ॥
सप्तानां गुणसंक्रमोऽधःप्रवृत्तश्च दुःखमशुभगतिः।
संहतिसंस्थानं दश नीचपूर्णमस्थिरषट्कं च ॥ ४२२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तिर्यगेकादशं चेति त्रिंशत्प्रकृतिषूद्वेल्लनवर्जितचत्वारि संक्रमणानि स्युः। पुनः निद्रा प्रचला अशुभवर्णचतुष्कमुपघातश्चेति सप्तसु गुणसंक्रमणमधःप्रवृत्तसंक्रमणं च। असातवेदनीयमप्रशस्तविहायोगतिः, आद्यं विना पंच पंच संहननसंस्थानानि, नीचैर्गोत्रमपर्याप्तमस्थिराशुभदुर्भगदुःस्वरानादेयायशस्कीर्तय इति ॥ ४२१–४२२ ॥

स० चं०—तिर्यगेकादशकी ग्यारह ११ इन तीस प्रकृतिनिविषैं उद्वेलना विना च्यारि संक्रमण पाइए है। बहुरि निद्रा १ प्रचला १ अशुभ वर्णादिक च्यारि ४ उपघात १ इन सप्तनिविषैं गुण संक्रमण अर अधःप्रवृत्त संक्रमण ए दोय पाइए है। बहुरि असाता वेदनीय १ अप्रशस्त विहायोगति १ पहिला विना पांच संहनन पांच संस्थान १० नीचगोत्र १ अपर्याप्त १ अस्थिर अशुभ दुर्भग दुःस्वर अनादेय यशस्कीर्ति ए छह ६ ऐसैं वीस भई ॥

वीसण्हं विज्झादं अधापवत्तो गुणो य मिच्छत्ते।
विज्झादगुणे सव्वं सम्मे विज्झादपरिहीणा ॥४२३॥

विंशानां विध्यातोऽधःप्रवृत्तो गुणश्च मिथ्यात्वं।
विध्यातगुणौ सर्वः सम्यक्त्वे विध्यातपरिहीनाः ॥ ४२३ ॥

जी० प्र०—विंशतौ विध्याताधःप्रवृत्तगुणसंक्रमणानि, मिथ्यात्वे विध्यातगुणसर्वसंक्रमणानि, सम्यक्त्वप्रकृतौ विध्यातवर्जितानि चत्वारि ॥४२३॥

स० चं०—तिन वीसनिविषैं विध्यात अधःप्रवृत्त गुणसंक्रमण ए तीन पाइए है बहुरि मिथ्यात्वविषैं विध्यात संक्रमण, गुण संक्रमण, सर्व संक्रमण ये तीन पाइये हैं। बहुरि सम्यक्त्व मोहनीयविषैं विध्यात विना च्यारि संक्रमण पाइए हैं ॥ ४२३ ॥

सम्मविहीणुव्वेल्ले पंचेव य तत्थ होंति संकमणा।
संजलणतिये पुरिसे अधापवत्तो य सव्वो य ॥ ४२४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्यग्विहीनोद्वेल्ये पंचैव च तत्र भवंति संक्रमणाः ।
संज्वलनत्रये पुरुषे अधःप्रवृत्तश्च सर्वश्च ॥ ४२४ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वं विना द्वादशोद्वेल्लनप्रकृतिषु पंचैव संक्रमणानि भवंति । संज्वलनक्रोधमानमायापुंवेदेष्वधःप्रवृत्तः सर्वसंक्रमणं च । न चैषां बंधव्युच्छित्तौ गुणसंक्रमणप्राप्तिः सूत्रे हारद्वयस्यैव नियमात् ॥ ४२४ ॥

स० चं०— सम्यक्त्व मोहनी विना उद्वेलना प्रकृति बारह तिनविषैं पांचौं संक्रमण पाइए है । बहुरि संज्वलन क्रोध मान माया ३ पुरुष वेद १ इन च्यारिनिविषैं अधःप्रवृत्त सर्व संक्रमण ए दोय पाइए हैं । इन प्रकृतिनिकैं बंध व्युच्छित्ति होतैं भी गुणसंक्रमणकी प्राप्ति नाहीं है ॥ ४२४ ॥

ओरालदुगे वज्जे तित्थे विज्झादधापवत्तो य ।
हस्सरदिभयजुगुच्छे अधापवत्तो गुणो सव्वो ॥ ४२५ ॥

औरालद्विके वज्रे तीर्थे विध्यातोऽधःप्रवृत्तश्च ।
हास्यरतिभयजुगुप्सायामधःप्रवृत्तो गुणः सर्वः ॥ ४२५ ॥

जी० प्र०—औदारिकद्विके वज्रवृषभनाराचे तीर्थे च विध्यातोऽधःप्रवृत्तश्च । तेषु प्रशस्तत्वाद् गुणसंक्रमणं नास्ति । तीर्थस्य नारकाभिमुखे नारकापर्याप्ते च मिथ्यादृष्टौ विध्यातोऽस्ति । हास्यरतिभयजुगुप्सास्वधःप्रवृत्तसंक्रमणं गुणसंक्रमणं सर्वसंक्रमणं च ॥ ४२५ ॥

स० चं०—औदारिक शरीर वा अंगोपांग वज्रवृषभनाराच १ तीर्थंकर १ इनविषैं विध्यात संक्रमण अधःप्रवृत्त संक्रमण ए दोय पाइए है । ए प्रशस्त प्रकृति हैं तातैं इन विषैं गुण संक्रमण नाहीं है इहां तीर्थंकरविषैं विध्यात संक्रमण कह्या है सो नरक जानेकौं सन्मुख भया मनुष्य वा मरिकरि भया नारकी अपर्याप्त तिसमें मिथ्यादृष्टि जीवकैं जानना । बहुरि हास्य १ रति १ भय १ जुगुप्सा १ इन च्यारि विषैं अधःप्रवृत संक्रमण गुण संक्रमण सर्व संक्रमण ए तीन पाइए है । ऐसैं प्रकृतिनिविषैं सर्व संक्रमण कह्या ॥ ४२५ ॥

Ganesh Varṇi Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सम्मत्तूणुव्वेलणथीणतितीसं च दुक्खवीसं च ।
वज्जोरालदुतित्थं मिच्छं विज्झादसत्तट्ठी ॥ ४२६ ॥

सम्यक्त्वोनोद्वेल्लनस्त्यानत्रिंशच्च दुःखविंशश्च ।
वज्रोरालद्वितीर्थं मिथ्यं विध्यातसप्तषष्टिः ॥ ४२६ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वोनद्वादशोद्वेल्लनाः स्त्यानगृद्धित्रयादिस्त्रिंशत्, असातादिर्विंशतिः, वज्रर्षभनाराचमौदारिकद्विकं तीर्थकरत्वं मिथ्यात्वं चेति सप्तषष्टिः विध्यातसंक्रमणाः स्युः ॥ ४२६ ॥

स० चं०—सम्यक्त्व मोहनी विना बारह उद्वेलना प्रकृति १२ स्त्यानगृद्धित्रयादिक तीस ३० असाता वेदनीय आदि वीस वज्रवृषभनाराच १ औदारिक द्विक २ तीर्थंकर १ मिथ्यात्व १ ए सतसठि प्रकृति विध्यात संक्रमण संयुक्त जाननी ॥ ४२६ ॥

मिच्छूणिगिवीससयं अधापवत्तस्स होंति पयडीओ ।
सुहुमस्स बंधघादिप्पहुदी उगुदालुरालदुगतित्थं ॥२७॥

मिथ्योनैकविंशशतमधःप्रवृत्तस्य भवंति प्रकृतयः ।
सूक्ष्मस्य बंधघातिप्रभृतयः एकोनचत्वारिंशदौरालद्विकतीर्थं ॥ ४२७ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वोनाः एकविंशतिशतं अधःप्रवृत्तसंक्रमणप्रकृतयो भवंति । सूक्ष्मसांपरायस्य बंधघातिप्रभृत्येकान्नचत्वारिंशत् औदारिकद्विकं तीर्थकरत्वं ॥ ४२७ ॥

स० चं०—मिथ्यात्व विना एकसौ इकईस प्रकृति अधःप्रवृत्त संक्रमण संयुक्त जाननी । बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं जिनिका बंध ऐसी घातियानिकी चौदह प्रकृति आदि देकरि गुणतालीस ३९ औदारिक द्विक तीर्थंकर १ ॥४२७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वज्जं पुंसंजलणतिऊणा गुणसंकमस्स पयडीओ ।

पणहत्तरिसंखाओ पयडीणियमं विजाणाहि ॥४२८॥ जुम्मं ।

वज्रं पुंसंज्वलनत्रिकमूना गुणसंक्रमस्य प्रकृतयः ।

पंचसप्ततिसंख्याः प्रकृतिनियमं विजानीहि ॥ ४२८ ॥

जी० प्र०—वज्रर्षभनाराचं पुंवेदः संज्वलनत्रयं चेति सप्तचत्वारिंशदूनद्वाविंशतिशतं गुणसंक्रमप्रकृतयो भवंति, पंचसप्ततिरित्यर्थः ॥ ४२८ ॥ अथ स्थित्यनुभागबंधस्य प्रदेशबंधसंक्रमणस्य च गुणस्थानसंख्यामाह—

स० चं०—वज्रवृषभ नाराच १ पुरुष वेद १ संज्वलन क्रोध मान माया ३ इन सैंतालीस प्रकृति विना एकसौ वाईस प्रकृतिमैंस्यों पिचहत्तरि प्रकृति गुण संक्रमण संयुक्त जाननी । ऐसैं प्रकृतिनिविषैं नियम जानना ॥ ४२८ ॥

आगैं स्थिति अनुभाग बंधकैं अर प्रदेश बंधका संक्रमणकैं गुणस्थाननिकी संख्या कहे हैं—

ठिदिअणुभागाणं पुण बंधो सुहुमोत्ति होदि णियमेण ।

बंधपदेसाणं पुण संकमणं सुहुमरागोत्ति ॥ ४२९ ॥

स्थित्यनुभागयोः पुनः बंधः सूक्ष्म इति भवति नियमेन ।

बंधप्रदेशानां पुनः संक्रमणं सूक्ष्मराग इति ॥ ४२९ ॥

जी० प्र०—स्थित्यनुभागयोर्बंधः पुनः सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमेव स्यात्, तयोः कषायहेतुत्वात् । सातस्य तदुपरि बंधेऽपि तस्य प्रकृतिप्रदेशमात्रत्वात् । पुनः प्रदेशबंधानां संक्रमणमपि सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमेव 'बंधे अधापवत्तो' इति स्थितिबंधपर्यंतमेव तत्संभवात् ॥ ४२९ ॥ अथ पंचभागहाराणामल्पबहुत्वं गाथाषट्केनाह—

स०चं०—स्थिति अनुभागनिका बंध सूक्ष्मसांपराय पर्यंत ही है जातैं स्थिति अनुभागकौं कारण कषाय ही है ।

७६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि सूक्ष्म सांपरायके ऊपरि सात वेदनीयका बंध भी है सो प्रकृतिबंध प्रदेशबंध मात्र ही है बहुरि बंध रूप भए जे परमाणू तिनका संक्रमण भी सूक्ष्मसांपराय पर्यंत ही है। बंधे अधापवत्तो इस सूत्रके अभिप्रायतैं स्थितिबंध पर्यंत ही संक्रमण संभवै है ॥ २९ ॥ आगैं पंचभागहारानिका अल्पबहुत्व छह गाथानिकरि कहैं हैं—

सव्वस्सेक्कं रूवं असंखभागो दु पल्लछेदाणं ।
गुणसंकमो दु हारो ओकड्डुक्कट्टणं तत्तो ॥ ४३० ॥
हारं अधापवत्तं तत्तो जोगम्हि जो दु गुणगारो ।
णाणागुणहाणिसला असंखगुणिदक्कमा होंति ॥ ४३१ ॥
तत्तो पल्लसलायच्छेदहिया पल्लछेदणा होंति ।
पल्लस्स पढममूलं गुणहाणीवि य असंखगुणिदकमा ॥ ४३२ ॥
अण्णोण्णब्भत्थं पुण पल्लमसंखेज्जरूवगुणिदकमा ।
संखेज्जरूवगुणिदं कम्मुक्कस्सट्ठिदी होदि ॥ ४३३ ॥
अंगुलअसंखभागं विज्झादुव्वेल्लणं असंखगुणं ।
अणुभागस्स य णाणागुणहाणिसला अणंताओ ॥ ४३४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणहाणिअणंतगुणं तस्स दिवड्ढं णिसेयहारो य ।
अहियकमाणण्णोण्णब्भत्थो रासी अणंतगुणो ॥४३५॥ कुलयं

सर्वस्यैकं रूपमसंख्यभागस्तु पल्यच्छेदानां ।
गुणसंक्रमस्तु हारः अपकर्षणोत्कर्षणं ततः ॥ ४३० ॥
हारोऽधःप्रवृत्तस्ततो योगे यस्तु गुणकारः ।
नानागुणहानिशला असंख्यगुणितक्रमा भवंति ॥ ४३१ ॥
ततः पल्यशलाकच्छेदाधिकाः पल्यच्छेदना भवंति ।
पल्यस्य प्रथममूलं गुणहानिरपि चासंख्यगुणितक्रमा ॥ ४३२ ॥
अन्योन्याभ्यस्तं पुनः पल्यमसंख्येयरूपगुणितक्रमं ।
संख्येयरूपगुणिता कर्मोत्कृष्टस्थितिर्भवति ॥ ४३३ ॥
अंगुलासंख्यभागं विध्यातोद्वेल्लनमसंख्यगुणं ।
अनुभागस्य च नानागुणहानिशला अनंताः ॥ ४३४ ॥
गुणहान्यनंतगुणा तस्या द्व्यर्धं निषेकहारश्च ।
अधिकक्रमाणामन्योन्याभ्यस्तो राशिरनंतगुणः ॥ ४३५ ॥ कुलकं ।

टी० प्र०—सर्वसंक्रमणभागहारः सर्वतः स्तोकस्तस्य प्रमाणमेकरूपं १ । तु-पुनः ततोऽसंख्यातगुणः पल्यच्छेदासंख्यातैकभागो गुणसंक्रमभागहारः छे/aaaa ततोऽपकर्षणोत्कर्षणभागहारावसंख्यातगुणावपि प्रत्येकं पल्यच्छेदासंख्यातैकभागः छे/aaa ततः अधःप्रवृत्तसंक्रमभागहारोऽसंख्यातगुणितोऽपि पल्यच्छेदासंख्यातैकभागः छे/aa ततो योगे यो गुणकारः सोऽसंख्यातगुणोऽपि पल्यच्छेदासंख्यातैकभागः छे/a । तु-पुनस्त- ५८७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ततः स्थितेर्नानागुणहानिशलाकाराशिरसंख्यातगुणोऽपि पल्यवर्गशलाकार्धच्छेदोनपल्यार्धच्छेदमात्रः छे—व—छे। ततः पल्यार्धच्छेदशलाकाराशिः पल्यवर्गशलाकार्धच्छेदाधिकः छे अपि ततः पल्यप्रथममूलमसंख्यातगुणं मू १; द्विरूपवर्गधारायां तस्योपर्यसंख्यातवर्गस्थानान्यतीत्योत्पन्नत्वात्। च ततः स्थितिगुणहान्यायामोऽसंख्यातगुणः प ७१ / छे—व—छे स्थितिनानागुणहानिशलाकाभक्तसप्ततिचतुर्वारकोटिगुणितपल्यप्रथममूलवर्गमात्रत्वात् मू १ मू १ ७० को ४ गुणिते सत्येवं। प ७१ / छे—व—छे ततोऽन्योन्याभ्यस्तराशिरसंख्यातगुणः प / a नानागुणहानिमात्रद्विकसंवर्गसमुत्पन्नत्वात्। ततः पल्यमसंख्यातगुणं पल्यवर्गशलाकागुणितत्वात् प। ततः कर्मोत्कृष्टस्थितिः संख्यातगुणः प ७१। यद्येकसागरोपमस्य दशकोटाकोटिपल्यानि तदा सप्ततिकोटाकोटीनां कतीति सप्ततिचतुर्वारकोटिगुणकारसंभवात्। ततो विध्यातसंक्रमभागहारोऽसंख्यातगुणः। स च सूच्यंगुलासंख्यातैकभागः २ / a a तत उद्वेल्लनभागहारोऽसंख्यातगुणः सोऽपि तदालापः २ / a ततोऽनुभागस्य नानागुणहानिशलाका अनंताः ख ततो नानागुणहान्यायामोऽनंतगुणः ख ख ततो द्व्यर्धगुणहानिरर्धाधिका ख ख ३ / २ ततो दोगुणहानिरर्धाधिका ख ख २ ततोऽन्योन्याभ्यस्तराशिरनंतगुणः ख ख २ ख ॥ ४३०—४३५ ॥

इति पंचभागहाराख्या द्वितीयचूलिका व्याख्याता।

———:०:———

अथ दशकरणचूलिकां चतुर्दशगाथासूत्रैर्वक्तुमुपक्रममाणस्तदादौ निजश्रुतगुरुं नमस्यति—

स०चं०—सर्व संक्रमण नामा भागहार सर्वतैं स्तोक है तिसका प्रमाण एक रूप है। अंत फालिविषैं जेती परमाणू अवशेष रहीं थीं ताकौं इस भागहारका प्रमाण एक ताका भाग दीएं सर्व परमाणू जहां ही आए ते अन्य प्रकृतिरूप परिणमैं तहां सर्वसंक्रमण जानना। बहुरि यातैं असंख्यातगुणा ऐसा पल्यका अर्धच्छेदनिकैं असंख्यातवैं-भाग प्रमाण गुण संक्रमण नामा भागहार है। सो गुणसंक्रमण रूप जे प्रकृति ताके जे परमाणू तिनकौं इस भाग-हारका प्रमाणका भाग दीएं जो परिमाण आवै तितनी परमाणू यथायोग्य कालविषैं समय समय प्रति असंख्यात-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणी होंइ अन्य प्रकृतिरूप परिणमै तहां गुणसंक्रमण कहिए । बहुरि यातैं उत्कर्षण भागहार वा अपकर्षण भागहार असंख्यात गुणे हैं तथापि ए दोन्यों जुदे जुदे पल्यके अर्धच्छेदनिके असंख्यातवे भागप्रमाण हैं सो इन पंच भागहारनिविषैं इनका कथन नाहीं तथापि जहां उत्कर्षण भागहारका वा अपकर्षण भागहारका कथन आवै तहां ऐसा प्रमाण जानना । बहुरि यातैं अधःप्रवृत्तसंक्रम भागहार असंख्यात गुणा है तथापि सो भी पल्यके अर्धच्छेदनिके असंख्यातवे भाग प्रमाण है सो जो अधःप्रवृत्तसंक्रम रूप प्रकृति है ताके परमाणूनिकौं याका भाग दीएं जो प्रमाण आवै तितनी परमाणू अन्यप्रकृति रूप होइ जहां परिणमै तहां अधःप्रवृत्त संक्रम कहिए । बहुरि यातैं योगनिका कथनविषैं जो गुणकार कह्या है सो असंख्यातगुणा है तथापि सो भी पल्यके अर्धच्छेदनिके असंख्यातवे भाग ही हैं । जघन्य योगस्थानकौं याकरि गुणै उत्कृष्ट योगस्थान हो है बहुरि यातैं कर्मकी जो स्थिति ताकी नानागुणाहानि शलाकाका प्रमाण सो असंख्यातगुणा है सो पल्यकी वर्ग शलाकाका अर्धच्छेद पल्यका अर्धच्छेदनिमैं घटाएं जो परिमाण रहै तितना है । बहुरि यातैं पल्यका अर्धच्छेदनिका प्रमाण अधिक है सो पल्यकी वर्ग शलाकाका जितने अर्धच्छेद तितना अधिक है। बहुरि यातैं पल्यका प्रथम वर्गमूल असंख्यात गुणा है जातैं द्विरूप वर्गधाराविषैं पल्यके अर्धच्छेद रूप स्थानतैं असंख्यात स्थान गएं पल्यका प्रथम मूल हो है । बहुरि यातैं कर्मकी स्थितिकी जो एक गुणहानि ताके समयानिका प्रमाण असंख्यात गुणा है जातैं सातसैकौं च्यारि वार कोडि करि गुणैं जो प्रमाण होइ ताकरि गुण्या ऐसा पल्य ताकौं स्थितिकी नानागुणाहानिका प्रमाणका भाग दीएं यहु प्रमाण आवै है । बहुरि यातैं कर्मकी स्थितिकी अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण असंख्यात गुणा है जातैं नाना गुणहानिका प्रमाण दोयका अंक माडि परस्पर गुणै अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण हो है । बहुरि यातैं पल्यका प्रमाण असंख्यात गुणा है जातैं तिस अन्योन्याभ्यस्त राशिके प्रमाण कौं पल्यकी वर्गशलाकातैं गुणैं पल्य हो है । बहुरि यातैं कर्मकी उत्कृष्ट स्थितिका प्रमाण संख्यातगुणा है जातैं एक सागरके दश कोडाकोडी पल्य हैं तौ सत्तरि कोडाकोडी सागरानिकी च्यारिवार कोडिकरि सातसैकौं गुणिए इतनी पल्य भई । बहुरि यातैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विध्यात संक्रम नामा भागहार असंख्यात गुणा है सो सूच्यंगुलके असंख्यातवें भागप्रमाण है सो विध्यात संक्रम रूप प्रकृतिनिके परमाणूनिकौं याका भाग दीएं जो परिमाण होइ तितनी परमाणू अन्य प्रकृतिरूप होइ जहां परिणमै तहां विध्यात संक्रम जानना। बहुरि यातैं उद्वेलन भागहार असंख्यात गुणा है सो भी सूच्यंगुलके असंख्यातवें भाग प्रमाण है। सो उद्वेलन प्रकृतिनिके परमाणूनिकौं याका भाग दीएं जो परिमाण आवै तितनी परमाणू जहां अन्य प्रकृति रूप होइ परिणमै तहां उद्वेलन संक्रम जानना। बहुरि यातैं कर्मानिका अनुभागका कथनविषै नाना गुणहानि शलाका अनंत प्रमाण हैं। बहुरि यातैं तिस अनुभागकी एक गुणहानिका आयामका प्रमाण अनंतगुणा है। बहुरि यातैं तिसहीकी द्व्यर्धगुणहानिका प्रमाण तिसका आधा प्रमाण करि अधिक है। बहुरि यातैं तिसही की दोगुणहानिका प्रमाण आधा गुणहानिका आयामका प्रमाण करि अधिक है। बहुरि यातैं तिस अनुभागकी अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण अनंत गुणा जानना। ऐसैं पंच भाग हारनिका अल्पबहुत्वका प्रसंग पाइ अन्यका भी अल्प बहुत्व निरूपण कीया ॥ ४३०—४३५ ॥ इति पंचभागहार चूलिका समाप्ता। अथ दश करण चूलिका चौदह गाथानिकरि कहनेकौं उद्यम करै हैं। तहां प्रथम ही अपने श्रुत गुरुकौं नमस्कार करै हैं—

जस्स य पायपसायेणणंतसंसारजलहिमुत्तिण्णो।
वीरिंदणंदिवच्छो णमामि तं अभयणंदिगुरुं ॥ ४३६ ॥

यस्य च पादप्रसादेनानंतसंसारजलधिमुत्तीर्णः।
वीरेंद्रनंदिवत्सो नमामि तमभयनंदिगुरुं ॥ ४३६ ॥

जी० प्र०—यस्य श्रुतगुरोः पादप्रसादेन वीरेंद्रनंदिवत्सः अनंतसंसारजलधिमुत्तीर्णः तमभयनंदिगुरुं नमामि ॥ ४३६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—जिस शास्त्र शिक्षादायक गुरुके चरणनिके प्रसाद करि वीरेंद्रनंदि नामा आचार्यका वत्स शिष्य जो मैं ग्रंथकर्ता सो संसार समुद्रकौं पार भया तिस अभयनंदि नामा श्रुतगुरुकौं मैं नमस्कार करौं हौं ॥ ४३६ ॥

बंधुक्कट्टणकरणं संकममोकट्टुदीरणा सत्तं ।

उदयुवसामणिधत्ती णिकाचणा होदि पडिपयडी ॥४३७॥

बंधोत्कर्षणकरणं संक्रममपकर्षणोदीरणा सत्त्वं ।

उदयोपशांतनिधत्तिर्निष्काचना भवति प्रतिप्रकृति ॥ ४३७ ॥

जी० प्र०—बंधः उत्कर्षणं संक्रमोऽपकर्षणमुदीरणा सत्त्वमुदयः उपशमो निधत्तिर्निष्काचनेति दश करणानि प्रकृतिं प्रकृतिं भवंति ॥४३७॥

स०चं०—बंध १ उत्कर्षण २ संक्रम ३ अपकर्षण ४ उदीरणा ५ सत्त्व ६ उदय ७ उपशम ८ निधत्ति ९ निःकाचना १० ए दश करण प्रकृति प्रकृति प्रति संभवै हैं ॥ ४३७ ॥

कम्माणं संबंधो बंधो उक्कट्टणं हवे वड्ढी ।

संकमणमणत्थगदी हीणा ओकट्टणं णाम ॥४३८॥

कर्मणां संबंधो बंध उत्कर्षणं भवेद्वृद्धिः ।

संक्रमणमन्यत्रगतिर्हानिरपकर्षणं नाम ॥ ४३८ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वादिपरिणामैर्यत्पुद्गलद्रव्यं ज्ञानावरणादिरूपेण परिणमति तच्च ज्ञानादीन्यावृणोतीत्यादि संबंधो बंधः । स्थित्यनुभागयोर्वृद्धिः उत्कर्षणं । परप्रकृतिरूपपरिणमनं संक्रमणं । स्थित्यनुभागयोर्हानिरपकर्षणं नाम ॥ ४३८ ॥

स० चं०—मिथ्यात्वादिक परिणामनिकरि जो पुद्गल द्रव्य ज्ञानावरणादिक रूप होइ परिणमै सो ज्ञानादिकौं आवरै ऐसा इत्यादिक संबंधका होना सो बंध कहिए। बहुरि जो स्थिति अनुभाग पूर्वै था तिसतैं स्थिति अनुभा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गकी वृद्धि जो अधिकता ताका होना सो उत्कर्षण कहिए । बहुरि जो प्रकृति पूर्वे बंधनेमैं आई थी सो प्रकृति अन्य प्रकातिरूप होइ परिणमैं तिस प्रकृतिके परमाणू अन्य प्रकृति रूप होंइ सो संक्रमण कहिए। बहुरि जो स्थिति अनुभाग पूर्वैं था तिसतैं स्थिति अनुभागकी हानि जो घटावना सो अपकर्षण कहिए ॥ ४३८ ॥

अण्णत्थठियस्सुदये संथुहणमुदीरणा हु अत्थित्तं ।
सत्तं सकालपत्तं उदओ होदित्ति णिद्दिट्ठो ॥४३९॥

अन्यत्र स्थितस्योदये संस्थापनमुदीरणा हि अस्तित्वं ।
सत्त्वं स्वकालप्राप्तमुदयो भवतीति निर्दिष्टः ॥ ४३९ ॥

जी० प्र०—उदयावलिवाह्यस्थितस्थितिद्रव्यस्यापकर्षणवशादुदयावल्यां निक्षेपणमुदीरणा खलु, अस्तित्वं सत्त्वं, स्वस्थितिं प्राप्तमुदयो भवतीति निर्दिष्टः ॥ ४३९ ॥

स०चं०—उदयावलीके वाह्य तिष्ठता जो द्रव्य ताकौं अपकर्षण वशतैं उदयावलीविषैं मिलावना सो उदीरणा कहिए। भावार्थ—जिन प्रकतिनिके निषेकनिका उदय काल न आया है उदयावलीतैं अधिक काल है तिनकी स्थिति कौं घटाइ करि जे निषेक आवलीमात्र कालविषैं उदय आवैं तिनविषैं तिनके परमाणूनिकौं मिलावना तिनके साथिही उनका भी उदय होइ सो उदीरणा है। बहुरि अस्तित्व कहिए पुद्गलनिका कर्म रूप रहना सो सत्त्व कहिए बहुरि जो कर्मकी स्थितिका तिस स्थितिकौं प्राप्त होना सो उदय कहिए ऐसा कह्या है ॥ ४३९ ॥

उदये संकममुदये चउसुवि दादुं कमेण णो सक्कं ।
उवसंतं च णिधत्तिं णिकाचिदं होदि जं कम्मं ॥४४०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदये संक्रमोदययोः चतुर्ष्वपि दातुं क्रमेण नो शक्यं।
उपशांतं च निधत्तिः निकाचितं भवति यत्कर्म ॥ ४४० ॥

जी० प्र०—यत्कर्म उदयावल्यां निक्षेप्तुमशक्यं तदुपशांतं नाम। उदयावल्यां निक्षेप्तुं संक्रमयितुं चाशक्यं तन्निधत्तिर्नाम। उदयावल्यां निक्षेप्तुं संक्रमयितुमुत्कर्षयितुमपकर्षयितुं चाशक्यं तन्निकाचितं नाम भवति ॥ ४४० ॥ एवं दशकरणलक्षणं प्ररूप्य प्रकृतीनां गुणस्थानानां च संभवंति तानि गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—जो कर्म उदयावलीविषैं प्राप्त करनेकौं समर्थ न हूजे सो उपशांत कहिए। बहुरि जो कर्म उदयावलीविषैं प्राप्त करनेकौं वा अन्य प्रकृति रूप संक्रमण करनेकौं समर्थ न हूजे सो निधत्ति कहिए। बहुरि जो कर्म उदयावलीविषैं प्राप्त करनेकौं वा अन्य प्रकृतिरूप संक्रमण करनेकौं वा उत्कर्षण वा अपकर्षण करनेकौं समर्थ न हूजे सो निकाचित कहिए ॥ ४४० ॥ आगैं दश करण निरूपणकरि प्रकृतिनिविषै वा गुणस्थाननिविषैं जो ए करण संभवैं ते कहिए है—

संकमणाकरणूणा णवकरणा होंति सव्वआऊणं।
सेसाणं दसकरणा अपुव्वकरणोत्ति दसकरणा॥४४१॥

संक्रमणकरणोनानि नवकरणानि भवंति सर्वायुषां।
शेषाणां दशकरणान्यपूर्वकरण इति दशकरणानि ॥ ४४१ ॥

जी० प्र०—चतुर्णामायुषां संक्रमकरणं विना नव करणानि भवंति। शेषसर्वप्रकृतीनां दशकरणानि भवंति। मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वकरणपर्यंतं दशकरणानि भवंति ॥ ४४१ ॥

स० चं०—च्यारि आयु तिनकैं संक्रमण करण विना नव करण पाइए है जातैं चार्‍यौ आयु परस्पर परिणमैं नाहीं। अवशेष सर्व प्रकृतिनिकैं दश करण पाइए है। बहुरि मिथ्यादृष्ट्यादिक अपूर्वकरण पर्यंत तो दश करण पाइए है ॥ ४४१ ॥ ५९३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदिमसत्तेव तदो सुहुमकसाओत्ति संकमेण विणा ।
छच्च सजोगित्ति तदो सत्तं उदयं अजोगित्ति ॥४४२॥

आदिमसप्तैव ततः सूक्ष्मकषाय इति संक्रमेण विना ।
षट् च सयोगीति ततः सत्त्वमुदयः अयोगीति ॥ ४४२ ॥

जी० प्र०——ततः अपूर्वकरणगुणस्थानादुपरि सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमाद्यान्येव बंधादीनि सप्त करणानि भवंति । तत्रापि संक्रमकरणं विना षडेव सयोगपर्यंतं भवंति । तत उपर्ययोगे सत्त्वोदयकरणे द्वे एव ॥ ४४२ ॥

स० चं०–तिस अपूर्व करण गुणस्थानके ऊपरि सूक्ष्म सांपराय पर्यंत उपशांत निधत्ति निकाचित विना आदिके सात करणही पाइए है । तहां भी संक्रम करण विना सयोगी पर्यंत छह करण ही पाइए है । तिसतैं ऊपरि अयोगीविषैं सत्त्व उदय ए दोय ही करण पाइए है ॥ ४४२ ॥

णवरि विसेसं जाणे संकममवि होदि संतमोहम्मि ।
मिच्छस्स य मिस्सस्स य सेसाणं णत्थि संकमणं ॥४४३॥

नवरि विशेषं जानीहि संक्रममपि भवति शांतमोहे ।
मिथ्यस्य च मिश्रस्य च शेषाणां नास्ति संक्रमणं ॥ ४४३ ॥

जी० प्र०——उपशांतकषाये विशेषोऽस्ति । स कः ? मिथ्यात्वमिश्रयोरेव संक्रमणमस्ति तद्द्रव्यस्य सम्यक्त्वप्रकृतिरूपेण करणात् । शेषप्रकृतीनां संक्रमकरणं विना षडेव । अपूर्वकरणे उपशमनिधत्तिनिकाचनत्रयं व्युच्छित्तिः, अनिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपराये च शून्यं, उपशांतकषाये मिथ्यात्वमिश्रप्रकृती प्रति सप्त करणानि स्युः, शेषप्रकृतीः प्रति संक्रमणस्य सूक्ष्मसांपराये एव छेदात् षडेव । क्षीणकषाये व्युच्छित्तिः शून्यं, सयोगे बंधोत्कर्षणापकर्षणोदीरणाकरणानि, अयोगे सत्त्वोदयौ । शेषं सुगमं ॥ ४४३ ॥

स० चं०–उपशांत कषाय विषै विशेष है सो कहा ? मिथ्यात्व मिश्र इन दोऊ प्रकृतिनिकैं तहां संक्रम करण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भी पाइए है। इनके परमाणूनिकौं सम्यक्त्वमोहनी रूप परिणमावै है। अवशेष प्रकृतिनिके छह ही करण हैं। ऐसैं अपूर्वकरणविषैं तो उपशम निधात्ति निकाचित ए तीन करण व्युच्छित्ति भए, अनिवृत्ति करण सूक्ष्मसांपरायविषैं व्युच्छित्ति शून्य ० उपशांत कषायविषैं मिथ्यात्व मिश्र इनके सात करण औरनिके संक्रमण विना छह करण हैं। क्षीणकषायविषै व्युच्छित्ति शून्य ० सयोगीविषैं बंध उत्कर्षण अपकर्षण उदीरणा ए च्यारि करण व्युच्छित्ति भए। अयोगीविषैं सत्त्व उदय ए दोय करण व्युच्छित्ति भए। अवशेष कथन सर्व सुगम है ॥ ४४३ ॥

बंधुक्कट्टणकरणं सगसगबंधोत्ति होदि णियमेण।
संकमणं करणं पुण सगसगजादीण बंधोत्ति ॥ ४४४ ॥

बंधोत्कर्षणकरणं स्वकस्वकबंध इति भवति नियमेन।
संक्रमणं करणं पुनः स्वकस्वकजातीनां बंध इति ॥ ४४४ ॥

जी० प्र०—बंधकरणमुत्कर्षणकरणं च स्वस्वबंधव्युच्छित्तिपर्यंतं स्यात् नियमेन। संक्रमणकरणं पुनः स्वस्वजातीनां बंधव्युच्छित्तिपर्यंतं स्यात् ॥ ४४४ ॥

स० चं०—बंध करण अर उत्कर्षण करण ए तो दोऊ जिस जिस प्रकृतिनिकी जहां बंध व्युच्छित्ति भई तिस तिस प्रकृतिका तहां ही पर्यंत जानने नियमकरि। बहुरि जिस जिस प्रकृतिके जे जे स्वजाती हैं जैसे ज्ञानावरण की पांचो प्रकृति स्वजाति हैं ऐसैं स्वजाति प्रकृतिनिकी बंधकी व्युच्छित्ति जहां भई तहां पर्यंत तिन प्रकृतिनिकैं संक्रमण करण जानना ॥ ४४४ ॥

ओक्कट्टणकरणं पुण अजोगिसत्ताण जोगिचरिमोत्ति।
खीणं सुहुमंताणं खयदेसं सावलीयसमयोत्ति ॥ ४४५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपकर्षणकरणं पुनरयोगिसत्त्वानां योगिचरमं इति।
क्षीणं सूक्ष्मांतानां क्षयदेशं सावलिक समय इति ॥ ४४५ ॥

जी० प्र०—अपकर्षणकरणं पुनरयोगोक्तपंचाशीतिसत्त्वस्य सयोगचरमसमयपर्यंतं भवति। क्षीणकषायसत्त्वव्युच्छित्तिषोडशानां सूक्ष्मसांपरायसत्त्वव्युच्छित्तिसंज्वलनलोभस्य च क्षयदेशपर्यंतमपकर्षणं स्यात्। तत्र क्षयदेशो नाम परमुखोदयेन विनश्यतां चरमकांडकचरमफालिः, स्वमुखोदयेन विनश्यतां च समयाधिकावलिस्तेनैषां सप्तदशानां समयाधिकावलिपर्यंतमपकर्षणं स्यात्। संदृष्टिः—

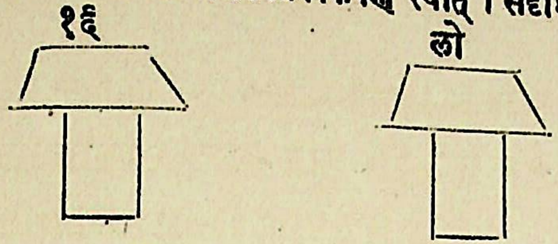

स० चं०—बहुरि अयोगीविषैं सत्त्व रूप कही पिच्यासी प्रकृति तिनकैं सयोगीका अंत समय पर्यंत अपकर्षण करण जानना। बहुरि क्षीण कषायविषैं सत्वतैं व्युच्छित्ति भई सोलह अर सूक्ष्मसांपरायविषैं सत्वतैं व्युच्छित्ति भया सूक्ष्म लोभ इन सतरह प्रकृतिनिकैं क्षयदेशपर्यंत अपकर्षण करण जानना। तहां क्षयदेश कहा? सो कहिए है- जे प्रकृति अन्य प्रकृति रूप उदय देइ विनसै हैं ऐसी परमुखोदयी हैं तिनकैं तो अंत कांडक की अंत फालि क्षयदेश है बहुरि अपने ही रूप उदय देइ विनसै हैं ऐसी स्वमुखोदयी प्रकृति तिनके एक एक समय अधिक आवली प्रमाण काल क्षय देश है तातैं तिन सतरह प्रकृतिनिके एक समय आवली काल पर्यंत अपकर्षण पाइए है ॥४४५॥

उवसंतोत्ति सुराऊ मिच्छत्तिय खवगसोलसाणं च।
खयदेसोत्ति य खवगे अट्ठकसायादिवीसाणं ॥ ४४६ ॥

उपशांत इति सुरायुर्मिथ्यत्रयं क्षपकषोडशानां च।
क्षयदेश इति चक्षपके अष्टकषायादिविंशानां ॥ ४४६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—उपशांतकषायपर्यंतं देवायुषोऽपकर्षणकरणं स्यात् । मिथ्यात्वसम्यक्मिथ्यात्वसम्यक्त्वप्रकृतीनां णिरयतिरिक्खेत्यादिक्षपकषोडशानां च क्षयदेशपर्यंतं चरमकांडकचरमफालिपर्यंतमित्यर्थः । तथा क्षपकाष्टकषायादिविंशतिप्रकृतीनां स्वस्वक्षयदेशपर्यंतमपकर्षणं स्यात् ॥४४६॥

स० चं०—उपशांत कषाय पर्यंत देवायुके अपकर्षण करण हैं। बहुरि मिथ्यात्व सम्यग्मिथ्यात्व सम्यक्त्व प्रकृति ए तीन अर 'णिरयतिरिक्ख' इत्यादिक सूत्रोक्त अनिवृत्तिकरणविषैं क्षय भईं सोलह प्रकृति इनकैं क्षय देश पर्यंत अपकर्षण करण है—अंत कांडकका अंतका फालि पर्यंत है ऐसा अर्थ जानना। बहुरि आठ कषायनै आदि देकरि अनिवृत्ति करण विषैं क्षय भईं ऐसी वीस प्रकृति तिनकैं अपने अपने क्षयदेश पर्यंत अपकर्षण करण है। जिस स्थानक क्षय भया सो क्षयदेश कहिए है॥ ४४६ ॥

मिच्छतियसोलसाणं उवसमसेढिम्मि संतमोहोत्ति ।
अट्ठकसायादीणं उवसमियट्ठाणगोत्ति हवे ॥ ४४७॥

मिथ्यत्रयषोडशानामुपशमश्रेण्यां शांतमोह इति ।
अष्टकषायादीनामुपशामिकस्थानक इति भवेत् ॥ ४४७ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वमिश्रसम्यत्वप्रकृतीनां नरकद्विकादिषोडशानां चोपशमश्रेण्यामुपशांतकषायपर्यंतं अष्टकषायादीनां स्वस्वोपशमस्थानपर्यंतं चापकर्षणकरणं स्यात् ॥ ४४७ ॥

स० चं०—उपशम श्रेणि विषैं मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व प्रकृति तीन अर नरक द्विकादिक सोलह इनकैं उपशांत कषाय पर्यंत अपकर्षण करण है। बहुरि अष्ट कषायादिक तिनके अपने २ उपशमनेके ठिकाने पर्यंत अपकर्षण करण है। प्रकृतिनिके नाम पूर्वै सत्ता कथन विषैं कहे ही थे ॥४४७॥

पढमकसायाणं च विसंजोजकं वोत्ति अयददेसोत्ति ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिरयतिरियाउगाणमुदीरणसत्तोदया सिद्धा ॥

प्रथमकषायाणां च विसंयोजकं वा इति अयतदेश इति ।
निरयतिर्यगायुषोरुदीरणसत्वोदयाः सिद्धाः ॥ ४४८ ॥

जी० प्र०—अनंतानुबंधिनां विसंयोजकपर्यंतं असंयतदेशसंयतप्रमत्ताप्रमत्तेषु यथासंभवावसानमपकर्षणं स्यात् । नरकायुषोऽसंयतपर्यंतं तिर्यगायुषः देशसंयतपर्यंतं चोदीरणासत्वोदयकरणानि सिद्धानि ॥ ४४८ ॥

स० च०—अनंतानुबंधी चतुष्कके असंयत देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्तनिविषै यथासंभव जहां विसंयोजन होइ तहां पर्यंत अपकर्षण करण है । बहुरि नरकायुकैं असंयत पर्यंत तिर्यंचायुके देश संयत पर्यंत उदीरणाकरण सत्त्व करण उदयकरण ए प्रसिद्ध हैं—पूर्वैं कथन कीया ही था ॥ ४४८ ॥

मिच्छस्स य मिच्छोत्ति य उदीरणा उवसमाहिमुहियस्स ।
समयाहियावलित्ति य सुहुमे सुहुमस्स लोहस्स ॥

मिथ्यस्य च मिथ्येति चोदीरणा उपशमाभिमुखस्य ।
समयाधिकावलीति च सूक्ष्मे सूक्ष्मस्य लोभस्य ॥ ४४९ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वप्रकृतेर्मिथ्यादृष्टौ उपशमसम्यक्त्वाभिमुखस्य समयाधिकावलिपर्यंतं उदीरणाकरणं स्यात्, तावत्पर्यंतमेव तदुदयात् । सूक्ष्मलोभस्य च सूक्ष्मसांपराये एव अन्यत्र तदुदयाभावात् ॥ ४४९ ॥

स०चं०—मिथ्यात्व प्रकृतिके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं उपशम सम्यक्त्वकौं सन्मुख भया जीवकैं एक समय अधिक आवली कालपर्यंत उदीरणा करण हो है तितने ही तिसका उदय है बहुरि सूक्ष्म लोभकैं सूक्ष्म सांपरायविषैं ही उदीरणा करण है तातैं अन्यत्र तिसका उदय नाही हैं ॥ ४४९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदये संकममुदये चउसुवि दादुं कमेण णो सक्कं।
उवसंतं च णिधत्तिं णिकाचिदं तं अपुव्वोत्ति॥

उदये संक्रमोदययोः चतुर्ष्वपि दातुं क्रमेण नो शक्यं।
उपशांतं च निधत्तिः निकाचितं तत् अपूर्व इति॥ ४५०॥

जी॰ प्र॰——यत् उपशांतद्रव्यं उदयावल्यां निक्षेप्तुमशक्यं, यत् निधत्तिकरणद्रव्यं संक्रमणोदययोर्निक्षेप्तुमशक्यं, यत् निकाचितकरणद्रव्यं उदयावलिसंक्रमोत्कर्षणापकर्षणेषु निक्षेप्तुमशक्यं तत् अपूर्वकरणगुणस्थानपर्यंतमेव स्यात्। तदुपरि गुणस्थानेषु यथासंभवं शक्यमित्यर्थः॥४५०॥

इति दशकरणचूलिका।

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे
त्रिचूलिकानामचतुर्थोऽधिकारः॥ ४॥

स॰ चं॰—जो उदयावलीविषैं प्राप्त करनेकौं समर्थ न हूजै ऐसा उपशांत द्रव्य बहुरि जो संक्रम वा उदयकौं प्राप्त करणेकौं समर्थ न हूजै ऐसा निधत्ति करण द्रव्य बहुरि जो उदयावली संक्रम उत्कर्षण अपकर्षणकौं प्राप्त करनेकौं समर्थ न हूजै ऐसा निकाचित करण द्रव्य सो ए तीनौं अपूर्व करण गुणस्थान पर्यंत ही हैं ऊपरि यथा संभव उदयावली आदिविषैं प्राप्त करनेकौं समर्थ हूजै ऐसे ही कर्म परमाणू पाइए है॥४५०॥ इति दशकरणचूलिका।

इति आचार्य श्रीनेमिचंदविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रन्थकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीकाके अनुसारि
सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नाम भाषा टीकाविषै कर्मकांडविषै त्रिचूलिका नामा चौथा अधिकार संपूर्ण भया॥ ४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थानसमुत्कीर्त्तनाधिकार ॥ ५ ॥

एवं त्रिचूलिकाधिकारं निरूप्य श्रीमन्नेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्ती निजेष्टदेवताविशेषनमस्कारपुरस्सरमुत्तरकरणाभिधेयं प्रतिजानीते—

बंध उदय सत्ता सहित, कर्म थानकरि नष्ट ।
नेमिचंद जयवंत जगि, भए केवली स्पष्ट ॥ ५ ॥

ऐसैं त्रिचूलिका अधिकार कहि श्रीमत् नेमिचंद्र सिद्धांतचक्रवर्ती अपने इष्ट देवकौं नमस्कार पूर्वक आगैं जो कार्य करिए है ताकी प्रतिज्ञा करैं हैं—

णमिऊण णेमिणाहं सच्चजुहिट्ठिरणमंसियंघिजुगं ।
बंधुदयसत्तजुत्तं ठाणसमुक्कित्तणं वोच्छं ॥

नत्वा नेमिनाथं सत्ययुधिष्ठिरनमस्कृतांघ्रियुगं ।
बंधोदयसत्वयुक्तं स्थानसमुत्कीर्तनं वक्ष्ये ॥ ४५१ ॥

जी० प्र०—प्रत्यक्षवंदारुसत्ययुधिष्ठिरनमस्कृतांघ्रियुगं नेमिनाथं नत्वा बंधोदयसत्त्वयुक्तं स्थानसमुत्कीर्तनं वक्ष्ये । तत्किमर्थमागतं ? पूर्वं प्रकृतिसमुत्कीर्तने याः प्रकृतयः उक्तास्तासां बंधः क्रमेणाक्रमेण वेति प्रश्ने एवं स्यादिति ज्ञापयितुं । किं स्थानं ? एकस्य जीवस्यैकस्मिन् समये संभवंतीनां प्रकृतीनां समूहः ॥ ४५१ ॥ तत्स्थानसमुत्कीर्तनं तावद् गुणस्थानेषु मूलप्रकृतीनां बंधोदयोदीरणासत्त्वभेदं गाथाषट्केनाह—

स० चं०—प्रत्यक्ष वंदनेवाला सत्य युधिष्ठिर नामा पांडव ताकरि नमस्कार रूप कीया है चरणयुगल जाका ऐसा नेमिनाथ तीर्थंकरकौं नमिकरि बंध उदय सत्तासंयुक्त स्थानसमुत्कीर्तनकौं कहौंगा । सो किस वास्तैं ? पूर्वैं प्रकृति समुत्कीर्तन अधिकार विषैं जे प्रकृति कहीं तिनका बंधादिक क्रमतैं हो है वा विना क्रमतैं हो है ऐसा प्रश्न होत संतैं ऐसैं हो है ऐसैं जाननेके अर्थि स्थानसमुत्कीर्तन नामा अधिकार कहिए है । स्थान कहा कहिए ? एक जीवकैं एक कालविषैं जितनी प्रकृति संभवैं तिनके समूहका नाम स्थान है तिसका व्याख्यान इस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अधिकारविषैं है ॥ ४५१ ॥ तहां प्रथम ही मूल प्रकृतिनिके बंध उदय उदीरणा सत्वका भेद लीएं तिस स्थानसमुत्कीर्तनकौं गुणस्थाननिविषैं छह गाथानिकरि कहैं हैं—

छसु सगविहमट्ठविहं कम्मं बंधंति तिसु य सत्तविहं ।
छव्विहमेक्कट्ठाणे तिसु एक्कमबंधगो एक्को ॥४५२॥

षट्सु सप्तविधमष्टविधं कर्म बध्नंति त्रिषु च सप्तविधं ।
षड्विधमेकस्थाने त्रिषु एकमबंधकमेकं ॥ ४५२ ॥

जी० प्र०—मिश्रवर्जिताप्रमत्तांतषड्गुणस्थानेषु विनायुः सप्तविधं तत्सहितमष्टविधं च कर्म बध्नंति मिश्रापूर्वानिवृत्तिकरणेषु तत्सप्तविधमेव । सूक्ष्मसांपराये आयुर्मोहवर्जितं षड्विधमेव । उपशांतक्षीणकषायसयोगेष्वेकं वेदनीयमेव । अयोगे बंधो नास्ति ॥ ४५२ ॥

स०चं०—मिश्रविना अप्रमत्त पर्यंत छह गुणस्थाननिविषैं आयुविना सात प्रकार अथवा आयु सहित आठ प्रकार कर्म बंधै हैं । बहुरि मिश्र अपूर्वकरण अनिवृत्ति करण इन तीन विषैं आयु विना सात प्रकार ही कर्म बंधै हैं । बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं आयु मोह विना छह प्रकार ही कर्म बंधै हैं । उपशांतकषाय क्षीणकषाय सयोगीविषैं एक वेदनीय कर्म ही बंधै हैं । अयोगीविषैं बंध नाहीं है ॥ ४५२ ॥

चत्तारि तिण्णि तिय चउ पयडिट्ठाणाणि मूलपयडीणं ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि कमे होंति ॥४५३॥

चत्वारि त्रीणि त्रीणि चत्वारि प्रकृतिस्थानानि मूलप्रकृतीनाम् ।
भुजाकाराल्पतराणि च अवस्थितान्यपि क्रमेण भवन्ति ॥ ४५३ ॥

जी० प्र०—मूलप्रकृतीनां सामान्यबंधस्थानान्यष्टप्रकृतिकं सप्तप्रकृतिकं षट्प्रकृतिकमेकप्रकृतिकमिति चत्वारि भवंति । १ । ६ । ७ । ८ । एषां च उपशमश्रेण्यवतरणे भुजाकारबंधास्त्रयः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१	६	७
६	७	८

उपर्युपरि गुणस्थानारोहणे अल्पतरास्त्रयः

८	७	६
७	६	१

पुनस्तेषामेव स्वस्थानेऽवस्थितबंधाश्चत्वारः

८	७	६	१
८	७	६	१

उपशांतकषायस्यावतरणे सूक्ष्मसांपरायं मुक्त्वा अनिवृत्तिकरणादौ गमनाभावादिमौ

१	१
७	८

भुजाकारौ न स्तः। नाप्यप्रमत्तानिवृत्तिकरणयोः समनंतरमेवोपशांतकषायेनारोहणादिमा

८	७
१	१

वल्पतरौ स्तः। उपशांतकषायस्य मरणे देवासंयतगुणप्राप्तेरीदृशौ

१	१
७	८

भुजाकारबंधौ कुतो नोक्तौ ? अबद्धायुष्कस्याऽमरणादस्या

१
७

भावात्। बद्धायुषो मरणे देवासंयतस्य स्वस्वस्थितिषण्मासावशेषे एवायुर्बंधादस्या

१
८

भावात्। अल्पं बध्वा बहु बध्नतो भुजाकारो बंधः। बहु बध्वाल्पं बध्नतोऽल्पतरः। अल्पं बहु वा बध्वानंतरसमये तावदेव बध्नतोऽवस्थितः। किमप्यबध्वा पुनर्बध्नतोऽवक्तव्यः, नायं भेदो मूलप्रकृतिबंधस्थानेष्वस्ति ॥ ४५३ ॥

स०चं०—ऐसैं मूल प्रकृतिनिका सामान्यपनैं बंधस्थानक आठ सात छह एक प्रकृतिरूप च्यारि है । तहां उपशम श्रेणीतैं उतरनेविषैं भुजाकार बंध तीन हैं । उपशांत कषायविषैं एकका बंध था तहांतैं सूक्ष्मसांपरायविषैं आया तब छहका बंध कीया सो एक तो यहु भुजाकार बंध भया। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं छहका बंध था तहांतैं अनिवृत्ति करणविषैं आया तब सातका बंध भया तहां एक यहु भुजाकार बंध भया। बहुरि अपूर्वकरणकेविषैं सातका बंध था नीचले गुणस्थानविषैं आठका होइ तहां एक यहु भुजाकार भया ऐसैं तीन भुजाकार हो हैं।

१	६	७
६	७	८

बहुरि ऊपरि ऊपरि गुणस्थान चढने विषै अल्पतर बंध तीन हैं। आठ कर्मके बंधतैं सातका बंध होइ तहां एक अल्पतर होइ। बहुरि साततैं छहका बंध भए एक अल्पतर होइ छहतैं एकका बंध भए एक अल्पतर होइ ऐसैं तीन अल्पतर हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८	७	६	
७	६	१	

बहुरि अपने ही स्थान विषैं पाहिले समयनिविषैं जितने कर्मनिका बंध होइ तितने ही पिछले समय बंधै तहां अवस्थित बंध च्यारि हैं। पहिले आठकर्मका बंध था अर पीछै आठका ही बंध होइ तहां एक अवस्थित बंध भया। सात पीछैं सातका होइ, तहां एक भया। छह पीछैं छहका होइ, तहां एक भया। एक पीछैं एकका होइ तहां एक भया। ऐसैं अवस्थित बंध च्यारि हैं—

८	७	६	१
८	७	६	१

बहुरि उपशांत कषायतैं उतरि सूक्ष्मसांपरायकौं छोडि अनिवृत्तिकरणादिककौं प्राप्त न होइ तातैं एकका बंध पीछैं सातका बंध वा एकका बंध पीछैं आठका बंध रूप ए दोय भुजाकार बंध नाहीं संभवै हैं। बहुरि अप्रमत्त वा अनिवृत्ति करणके वीचके गुणस्थान छोडि उपशांतकषायकौं प्राप्त न होइ तातैं आठ पीछैं एकका बंध रूप वा सात पीछैं एकका बंध रूप ए अल्पतर भी दोय बंध न करै है। इहां प्रश्न—जो उपशांत कषायतैं मरिकरि देव असंयत गुणस्थानवर्ती होइ तहां एकतैं सातका बंध रूप वा एकतैं आठका बंध रूप होइ भुजाकार बंध संभवै हैं ते क्यों न कहे? ताका समाधान—अबद्धायुका तो मरण नाहीं जातैं एकतैं सातका बंधरूप भुजाकारका अभाव है अर बद्धायुका मरण होइ सो देव असंयत गुणस्थानवर्ती होइ तहां देवायुका छह महीना अवशेष रहे ही आयुका बंध होइ तातैं एकतैं आठका बंध रूप भुजाकारका अभाव है तातैं न कहे। तहां जो पहिलैं थोरी प्रकृतिनिका बंधकरि पीछैं बहुत प्रकृतिनिकौं बांधै ताकैं भुजाकार बंध कहिए, पहिले बहुत प्रकृतिनिका बंधकरि पीछे थोरी प्रकृतिनिकौं बांधै ताकौं अल्पतर बंध कहिए। पहिलैं थोरी वा बहुत जितनी प्रकृति बाधैं तितनी ही पीछैं अनंतर समयविषैं बांधै ताकौं अवस्थित बंध कहिए। किछू भी न बांधिकरि पीछैं बांधै ताकौं अवक्तव्य बंध कहिए। सो यहु अवक्तव्य बंध मूल प्रकृतिनिविषैं न संभवै है। उत्तर प्रकृतिनिविषैंही संभवैं है। ऐसैं इनका स्वरूप जानना॥ ४५३॥

अट्ठुदओ सुहुमोत्ति य मोहेण विणा हु संतखीणेसु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घादिदराण चउक्कस्सुदओ केवलिदुगे णियमा ॥४५४॥

अष्टोदयः सूक्ष्म इति च मोहेन विना हि शांतक्षीणयोः ।
घातीतराणां चतुष्कस्योदयः केवलिद्विके नियमात् ॥ ४५४ ॥

जी० प्र०—सूक्ष्मसांपरायपर्यंतमष्टमूलप्रकृतीनामुदयः, उपशांतक्षीणकषाययोर्मोहेन विना सप्तानामेवोदयः। सयोगायोगयोरघातिनामेव चतुर्णामुदयो नियमेन ॥ ४५४ ॥

स० चं०—सूक्ष्म सांपराय पर्यंत आठौ मूलप्रकृतिनिका उदय है । उपशांतकषाय क्षीणकषायविषैं मोह विना सातका उदय है। सयोगी अयोगीविषै च्यारि अघातियानिका ही उदय है नियमकरि ॥ ४५४ ॥

घादीणं छदुमट्ठा उदीरगा रागिणो हि मोहस्स ।
तदियाऊण पमत्ता जोगंता होंति दोण्हंपि ॥ ४५५ ॥

घातिनां छद्मस्था उदीरका रागिणो हि मोहस्य ।
तृतीयायुषोः प्रमत्ता योग्यंता भवंति द्वयोरपि ॥ ४५५ ॥

जी० प्र०—घातिकर्मणां चतुर्णां क्षीणकषायांताश्छद्मस्था एवोदीरका भवंति । तत्रापि मोहनीयस्य सूक्ष्मसांपरायांता रागिण एव । वेदनीयायुषोः प्रमत्तांताः प्रमादिन एव । नामगोत्रयोः सयोगपर्यंता एव ॥ ४५५ ॥

स० चं०—घातिया कर्म च्यारि तिनकी क्षीण कषाय पर्यंत छद्मस्थ उदीरणा करने वाले हैं तहां भी मोहनीयकी उदीरणा करने वाले सूक्ष्मसांपराय पर्यंत सरागी ही हैं बहुरि वेदनीय अर आयुकी उदीरणा करने वाले प्रमत्त पर्यंत प्रमादी जीव ही हैं। बहुरि नाम अर गोत्रकी उदीरणा करने वाले सयोगी पर्यंत हैं ॥ ४५५ ॥

मिस्सूणपमत्तंते आउस्सद्धा हु सुहुमखीणाणं ।
आवलिसिट्ठे कमसो सग पण दो चेवुदीरणा होंति ॥४५६॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्रोनप्रमत्तांते आयुषः अद्धा हि सूक्ष्मक्षीणयोः ।
आवलिशिष्टे क्रमशः सप्त पंच द्वे चैवोदीरणा भवंति ॥ ४५६ ॥

जी० प्र०—सम्यग्मिथ्यादृष्टेरायुष्यावलिमात्रेऽवशिष्टे सति नियमेन गुणस्थानांतराश्रयणात्तं विना प्रमत्तांतपंचानामायुषि आवलिमात्रेऽवशिष्टे सति तथा सूक्ष्मसांपरायक्षीणकषाययोः कालेऽपि तावत्यवशिष्टे सति क्रमेणायुर्वर्जितसप्तायुर्मोहवेदनीयवर्जितपंचनामगोत्रद्वयानामेवोदीरका भवंति ॥ ४५६ ॥

स० चं०—भुज्यमान आयुका आवली मात्र काल अवशेष रहैं नियमकरि मिश्र गुणस्थानतैं अन्य गुणस्थानकौं प्राप्त होइ तातैं मिश्र विना प्रमत्त पर्यंत पंच गुणस्थाननिकैं आयुविषै आवली मात्र काल अवशेष रहै आयु विना सातकी उदीरणा है। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं तितना ही काल अवशेष रहैं आयु मोहनीय वेदनीय विना पांचकी ही उदीरणा है बहुरि क्षीण कषायविषैं तितना ही काल अवशेष रहैं नाम गोत्र इन दोऊनिकी उदीरणा है ॥ ४५६ ॥

संतोत्ति अट्ठ सत्ता खीणे सत्तेव होंति सत्ताणि ।
जोगिम्मि अजोगिम्मि य चत्तारि हवंति सत्ताणि ॥४५७॥

शांत इति अष्ट सत्ताः क्षीणे सप्तैव भवंति सत्त्वानि ।
योगिनि अयोगिनि च चत्वारि भवंति सत्त्वानि ॥ ४५७ ॥

जी० प्र०—उपशांतकषायपर्यंतमष्टौ मूलप्रकृतयः सत्त्वं भवंति । क्षीणकषाये मोहं विना सप्तैव सत्त्वं भवंति । सयोगायोगयोरघातिचतुष्टयमेव सत्त्वं भवति ॥ ४५७ ॥ अथोत्तरप्रकृतीनां तत्समुत्कीर्तनमाह—

स० चं०—उपशांत कषायपर्यंत आठौ मूल प्रकृतिनिका सत्व है। क्षीण कषायविषैं मोह विना सातही का सत्व है। सयोगी अयोगी विषैं च्यारि अघातीनिका ही सत्व है ॥ ४५७ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिके स्थान-समुत्कीर्तन कहै हैं—

तिण्णि दस अट्ठ ठाणाणि दंसणावरणमोहणामाणं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एत्थेव य भुजगारा सेसेसेयं हवे ठाणं ॥४५८॥

त्रीणि दश अष्ट स्थानानि दर्शनावरणमोहनाम्नां।
अत्रैव च भुजाकाराः शेषेष्वेकं भवेत् स्थानं ॥ ४५८ ॥

जी० प्र०—दर्शनावरणमोहनामकर्मणां बंधस्थानानि क्रमशः त्रीणि दशाष्टौ भवंति तेन भुजाकारबंधा अप्येष्वेव नान्येषु। शेषेषु मध्ये ज्ञानावरणेऽतराये च पंचात्मकं। गोत्रायुर्वेदनीयेष्वेकात्मकं चैकैकमेव बंधस्थानं भवेदिति कारणात् ॥ ४५८ ॥

स० चं०—दर्शनावरणका वा मोहनीका वा नामका बंध स्थान अनुक्रमतैं तीन दश आठ जानने तातैं भुजाकार बंध भी इनही विषैं हैं जातैं अवशेषनिविषैं ज्ञानावरण अर अंतराय तो पांच प्रकृतिनिका बंध रूप अर गोत्र आयु वेदनीयका एक एकका प्रकृतिका बंधरूप एक एक स्थान ही है ॥ ४५८ ॥

णव छक्क चदुक्कं च य बिदियावरणस्स बंधठाणाणि।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि य जाणाहि ॥४५९॥

नव षट्कं चतुष्कं च द्वितीयावरणस्य बंधस्थानानि।
भुजाकाराल्पतराणि च अवस्थितान्यपि च जानीहि ॥ ४५९ ॥

जी० प्र०—दर्शनावरणस्य बंधस्थानानि नवप्रकृतिकं, स्त्यानगृद्धित्रयेण विना षट्प्रकृतिकं, पुनर्निद्राप्रचले विना चतुःप्रकृतिकं चेति त्रीणि। तेषां भुजाकाराल्पतरावस्थितबंधाः, अपिशब्दादवक्तव्यबंधौ च स्युरिति जानीहि। तद्यथा—

उपशमश्रेण्यवरोहकोऽपूर्वकरणद्वितीयभागे चतुःप्रकृतिकं बध्वा तत्प्रथमभागेऽवतीर्णः षट्प्रकृतिकं बध्नाति। प्रमत्तो देशसंयतोऽसंयतो मिश्रो वा षट्प्रकृतिकं बध्नन्मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा वा प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिः सासादनो भूत्वा नवप्रकृतिकं बध्नाति इति भुजाकारौ द्वौ स्तः। प्रथमोपशमसम्यक्त्वाभिमुखो मिथ्यादृष्टिरनिवृत्तिकरणचरमसमये नवप्रकृतिकं बध्नन्ननंतरसमयेऽसंयतो देशसंयतोऽप्रमत्तो वा भूत्वा षट्प्रकृतिकं बध्नाति। तथा सत उपशमकः क्षपको वाऽपूर्वकरणप्रथमभागचरमसमये षट्प्रकृतिकं बध्नन् द्वितीयभागप्रथमसमये चतुःप्रकृतिकं बध्नातीत्यल्पतरौ द्वौ भवतः। मिथ्यादृष्टिः सासादनो वा नवप्रकृतिकं मिश्राद्यपूर्वकरणप्रथमभागांतःषट्प्रकृतिकं अपूर्वकरणद्वितीयभागादिसूक्ष्मसांपरायांतः चतुःप्रकृतिकं च बध्नन्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनंतरसमये तदेव बध्नातीत्यवस्थितबंधास्त्रयो भवंति। उपशांतकषायः दर्शनावरणं किमप्यबध्नन् अवतरन् सूक्ष्मकषायप्रथमसमये चतुःप्रकृतिकं वा सपदि बद्धायुष्को म्रियते तदा देवासंयतो भूत्वा षट्प्रकृतिकं च बध्नातीत्यवक्तव्यबंधौ द्वौ भवतः॥ ४५९॥ इममुक्तार्थं द्योतयति—

स० चं०—दर्शनावरणके नव प्रकृति रूप अर स्त्यान गृद्धित्रिक विना छह प्रकृति रूप अर निद्रा प्रचला विना च्यारि प्रकृति रूप ए तीन बंध स्थान हैं तिनके भुजाकार अल्पतर अवस्थित बंध हैं। अपि शब्दतैं अवक्तव्य बंध भी है सोई कहिए है—

उपशम श्रेणी उतरनेवाला अपूर्वकरणका दूसरा भागविषैं च्यारि प्रकृतिरूप दर्शनावरणकौं बांधि तिस अपूर्वकरणके प्रथमभाग विषैं छह प्रकृतिरूप बांधै सो एक तौ यहु भुजाकार भया बहुरि प्रमत्त देशसंयत असंयत मिश्रविषैं छह प्रकृतिरूप बांधै अर पीछै मिथ्यादृष्टी होइ करि वा प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी सासादन होइ करि नव प्रकृतिरूप बांधै एक यहु भुजाकार भया ऐसैं भुजाकार बंध दोय हैं। बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं सन्मुख भया मिथ्यादृष्टी अनिवृत्ति करणका अंत समयविषैं नव प्रकृतिरूप बांधता अनंतर समयविषैं असंयत वा देश संयत वा अप्रमत्त होइ करि छह प्रकृतिरूप बांधै तहां एक तौ यहु अल्पतर भया। बहुरि उपशमक वा क्षपक अपूर्व करणका पहिला भागका अंत समयविषैं छह प्रकृतिरूप बांधता दूसरा भागका प्रथमसमयविषैं च्यारि प्रकृतिरूप बांधै एक अल्पतर यहु भया ऐसैं अल्पतर बंध दोय हैं। बहुरि मिथ्यादृष्टि वा सासादन नव प्रकृतिरूप मिश्रादि अपूर्वकरणका प्रथम भाग पर्यंत छह प्रकृतिरूप अपूर्व करणका द्वितीयभागतैं सूक्ष्म सांपराय पर्यंत च्यारि प्रकृतिरूप बांधता अनंतर समयविषैं तितनी ही प्रकृतिरूप बांधै ऐसैं अवस्थित बंध तीन हैं बहुरि उपशांत कषाय किछू भी दर्शनावरणकौं न बांधता उतरने विषैं सूक्ष्म सांपरायका प्रथमसमयविषैं च्यारि प्रकृतिरूप वा बद्धायु मरि देव असंयत होइ छह प्रकृतिरूप बांधै ऐसैं अवक्तव्य बंध दोय हैं॥ ४५९॥ इस कहे अर्थकौं प्रगट करै हैं—

णव सासणोत्ति बंधो छच्चेव अपुव्वपढमभागोत्ति।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चत्तारि होंति तत्तो सुहुमकसायस्स चरिमोत्ति ॥ ४६० ॥

नव सासन इति बंधः षट् चैव अपूर्वप्रथमभाग इति ।
चतस्रो भवंति ततः सूक्ष्मकषायस्य चरम इति ॥ ४६० ॥

जी० प्र०—नवप्रकृतिकं सासादनपर्यंतमेव बध्नाति । उपर्यपूर्वकरणप्रथमभागपर्यंतं षट्प्रकृतिकमेव । तत उपरि सूक्ष्मसांपरायचरमसमयपर्यंतं चतुःप्रकृतिकमेव ॥ ४६० ॥

स० चं०—दर्शनावरणकौं नव प्रकृति रूप सासादन पर्यंतही बांधै है । ऊपरि अपूर्वकरणका प्रथम भाग पर्यंत छह प्रकृति रूप बांधै है ताके ऊपरि सूक्ष्मसांपरायका अंतसमय पर्यंत च्यारि प्रकृति रूप बांधै है ॥ ४६० ॥

खीणोत्ति चारि उदया पंचसु णिद्दासु दोसु णिद्दासु ।
एक्के उदयं पत्ते खीणदुचरिमोत्ति पंचुदया ॥४६१॥

क्षीण इति चतस्र उदयाः पंचसु निद्रासु द्वयोर्निद्रयोः ।
एकस्यामुदयं प्राप्तायां क्षीणाद्विचरम इति पंचोदयाः ॥ ४६१ ॥

जी० प्र०—दर्शनावरणस्योदयस्थानं जाग्रज्जीवे मिथ्यादृष्ट्यादिक्षीणकषायचरमसमयपर्यंतं चक्षुर्दर्शनावरणादिचतुरात्मकमेव, निद्रिते तु प्रमत्तपर्यंतं स्त्यानगृद्ध्यादिपंचस्वेकस्यां उपरि क्षीणकषायद्विचरमसमयपर्यंतं निद्राप्रचलयोरेकस्यां चोदितायां पंचात्मकमेव । उपरि दर्शनावरणोदयो नास्ति ॥ ४६१ ॥

स० चं०—दर्शनावरणका उदय स्थान जागता जीव विषैं मिथ्यादृष्टितैं क्षीण कषायका अंत समय पर्यंत चक्षु दर्शनावरणादिक च्यारि प्रकृति रूप जानना । निद्रावान जीव विषैं प्रमत्तपर्यंत स्त्यानगृद्ध्यादिक पंचनिविषैं एक का उदय होतैं अर ऊपरि क्षीण कषायका द्विचरम समय पर्यंत निद्रा प्रचला विषैं एकका उदय होतैं पंच प्रकृति रूप जानना । ऊपरि दर्शनावरणके उदयका अभाव है ॥ ४६१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिच्छादुवसंतोत्ति य अणियट्टीखवगपढमभागोत्ति ।
णवसत्ता खीणस्स दुचरिमोत्ति य छच्चदूवरिमे ॥४६२॥

मिथ्यात्वादुपशांत इति च अनिवृत्तिक्षपकप्रथमभाग इति ।
नवसत्ता क्षीणस्य द्विचरम इति च षट्चतुरुपरिमे ॥ ४६२ ॥

जी० प्र०––दर्शनावरणीयस्य गुणस्थानेषु सत्त्वस्थानं मिथ्यादृष्ट्याद्युपशांतकषायपर्यंतं क्षपकानिवृत्तिप्रथमभागपर्यंतं च नवात्मकमेव । उपरि क्षीणकषायद्विचरमसमयपर्यंतं षडात्मकमेव स्त्यानगृद्धित्रयस्य तत्प्रथमभागे एव विनष्टत्वात्, तच्चरमसमये चतुरात्मकमेव, निद्राप्रचलयोर्द्विचरमे एव क्षपितत्वात् । सयोगायोगयोः शून्यं ॥ ४६२ ॥

स० चं०–दर्शनावरणीयका सत्व स्थान मिथ्यादृष्ट्यादिक उपशांत कषाय पर्यंत क्षपक श्रेणीविषै अनिवृत्ति करणका प्रथम भाग पर्यंत नव प्रकृति रूपही है । ऊपरि क्षीण कषायका द्विचरम समय पर्यंत छह प्रकृति रूप ही है जातैं स्त्यानगृद्ध्यादिक त्रिक अनिवृत्तिका प्रथम भाग ही में नष्ट हो है । बहुरि क्षीण कषायका अंत समय विषै निद्रा प्रचला विना च्यारि प्रकृति रूप ही है सयोगी अयोगीविषैं ताके सत्त्वका अभाव है ॥ ४६२ ॥

बावीसमेक्कवीसं सत्तारस तेरसेव णव पंच ।
चदुतियदुगं च एक्कं बंधट्ठाणाणि मोहस्स ॥ ४६३ ॥

द्वाविंशतिरेकविंशतिः सप्तदश त्रयोदशैव नव पंच ।
चतुस्त्रिकद्विकं चैकं बंधस्थानानि मोहस्य ॥ ४६३ ॥

जी० प्र०––मोहस्य बंधस्थानानि द्वाविंशतिकं एकविंशतिकं सप्तदशकं त्रयोदशकं नवकं पंचकं चतुष्कं त्रिकं द्विकमेककं चेति दश ॥ ४६३ ॥

१ 'अथ दर्शनावरणस्य सत्त्वस्थानं गुणस्थानेष्वाह' इत्यन्यः पाठः एतद्गाथाया उत्थानिकारूपेणाभयचंद्रनामांकितायां टीकायामधिकः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मोहनीके बंधस्थान बाईस इकईस सतरह तेरह नव पांच च्यारि तीन दोय एक प्रकृति रूप दश जानने ॥ ४६३ ॥

बावीसमेक्कवीसं सत्तर सत्तार तेर तिसु णवयं।
थूले पणचदुतियदुगमेक्कं मोहस्स ठाणाणि ॥ ४६४ ॥

द्वाविंशतिरेकविंशतिः सप्तदश सप्तदश त्रयोदश त्रिषु नवकं।
स्थूले पंचचतुष्कत्रिकद्विकमेकं मोहस्य स्थानानि ॥ ४६४ ॥

जी० प्र०—मोहनीयबंधस्थानानि गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ द्वाविंशतिकं। सासादने एकविंशतिकं। मिश्रासंयतयोः सप्तदशकं। देशसंयते त्रयोदशकं। प्रमत्तादित्रये प्रत्येकं नवकं। अनिवृत्तिकरणे पंचकं चतुष्कं त्रिकं द्विकमेककं च ॥ ४६४ ॥

स० चं०—तिन मोहनीके बंधस्थाननिविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं तो बाईस प्रकृति रूप स्थान है। सासादन विषैं इकईस प्रकृति रूप है। मिश्र असंयतविषैं सतरह प्रकृति रूप है। देशसंयतविषैं तेरह प्रकृति रूप है। प्रमत्तादि तीन विषै प्रत्येक नव नव प्रकृति रूप है। अनिवृत्ति करणविषैं पांच च्यारि तीन दोय एक प्रकृति रूप पांच स्थान हैं॥४६४॥

उगुवीसं अट्ठारस चोद्दस चोद्दस य दस य तिसु छक्कं।
थूले चदुतिदुगेक्कं मोहस्स य होंति धुवबंधा ॥४६५॥

एकोनविंशतिरष्टादश चतुर्दश चतुर्दश च दश च त्रिषु षट्कं।
स्थूले चतुस्त्रिद्विकैकं मोहस्य च भवंति ध्रुवबंधाः ॥ ४६५ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणभागांतमुक्तस्थानेषु क्रमेण मोहनीयस्य ध्रुवबंधान्येकान्नविंशतिरष्टादश चतुर्दश चतुर्दश दश षट् षट् षट् चत्वारि त्रीणि द्वे एकं भवंति ॥ ४६५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादिक अनिवृत्ति करणके भागपर्यंत जे स्थान कहे तिन विषैं क्रमतैं उगणीस अठारह चौदह चौदह दश छह छह छह च्यारि तीन दोय एक तो ध्रुवबंधी प्रकृति पाइए है। जिनका बंध होइ ही होइ सो ध्रुवबंधी कहिए है॥ ४६५ ॥

सगसंभवधुवबंधे वेदेक्के दोजुगाणमेक्के य ।
ठाणो वेदजुगाणं भंगहदे होंति तब्भंगा ॥ ४६६ ॥

स्वकसंभवध्रुवबंधे वेदे एका द्वियुगयोरेका च ।
स्थानं वेदयुगानां भंगहते भवंति तद्भंगाः ॥ ४६६ ॥

जी० प्र०—उक्तस्वस्वध्रुवबंधिषु पुनर्वेदेष्वेकस्मिन् हास्यरतियुग्मयोरेकस्मिंश्च मिलिते तानि स्थानानि तद्वेदयुग्मभंगे च हते तद्भंगा भवंति । तद्यथा— मिथ्यादृष्टिबंधकूटे

२ भ
२ । २
१ । १ । १
१६
१

मिथ्यात्वषोडशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु वेदत्रये युग्मयोश्चैकैकस्मिन् मिलिते द्वाविंशतिकं । तद्भंगा हास्यरतिद्विकाभ्यां वेदत्रये हते षट् $\frac{२२}{६}$ । सासादने बंधकूटे

२ भ
हा २।२। श्र
० । १ । १
१६
०

षोडशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु वेदयोर्द्विकयोश्चैकैकस्मिन्मिलिते एकविंशतिकं, तद्भंगाः वेदद्वययुग्मद्वयजाश्चत्वारः

२१
४

मिश्रबंधकूटे

२
२।२
१
१२

द्वादशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु पुंवेदे द्विकयोरेकैकस्मिंश्च

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिलिते सप्तदशकं, तद्भंगाः हास्यरतिद्विकजौ द्वौ $\frac{१७}{२}$ असंयतबंधकूटे २ २।२ १ १२ द्वादशकषायभयद्विकध्रुवबंधिषु द्विकयोरेकस्मिन् पुंवेदे च मिलिते सप्तदशकं, तद्भंगाः द्विकद्वयजौ द्वौ $\frac{१७}{२}$ देशसंयतबंधकूटे २ २।२ १ ८ अष्टकषायभयद्वयध्रुवबंधिषु पुंवेदे द्विकद्वयोरेकैकस्मिंश्च मिलिते त्रयोदशकं, तद्भंगाः द्विकद्वयजौ द्वौ $\frac{१३}{२}$। प्रमत्तबंधकूटे २ २।२ १ ४ चतुष्कषायभयद्विकध्रुवबंधिषु पुंवेदे द्विकयोरेकस्मिंश्च मिलिते नवकं तद्भंगाः द्विकद्वयजौ द्वौ $\frac{९}{२}$। अत्रारतिद्विकं बंधव्युच्छिन्नं। अप्रमत्तेऽपूर्वकरणे च बंधकूटे २ २ १ ४ चतुःसंज्वलनभयद्विकध्रुवबंधिषु पुंवेदे हास्यद्विके च मिलिते नवकं, तेन तद्भंग एकः $\frac{९}{१}$ अत्र हास्यद्विकभयद्विके व्युच्छिन्ने। अनिवृत्तिकरणबंधकूटे $\frac{१}{४}$ चतुष्कषायध्रुवबंधिषु पुंवेदे मिलिते पंचकं तद्भंग एकः $\frac{५}{१}$। अत्र पुंवेदो व्युच्छिन्नः। द्वितीयभागे कषायचतुष्कं ध्रुवबंधिभंग एकः $\frac{४}{१}$, क्रोधो व्युच्छिन्नः। तृतीयभागे कषायत्रयं, भंग एकः $\frac{३}{१}$ मानो व्युच्छिन्नः। चतुर्थभागे कषायद्वयं भंग एकः $\frac{२}{१}$ माया व्युच्छिन्ना, पंचमभागे लोभ एव भंग एकः $\frac{१}{१}$ ॥ ४६६ ॥ उक्तभंगसंख्यामाह—

स० चं०—कही जे अपनी अपनी ध्रुव बंधी प्रकृति तिनविषैं यथासंभव तीन वेदनिविषैं एक वेद अर हास्य शोकका युगलमें अर रति अरतिका युगलमैं एक एक मिलाएं स्थान हो है। बहुरि वेदनिके प्रमाणकों युग्मके ६१२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाणतैं गुणै जो जो प्रमाण होइ तितने तितने एक एक स्थानविषैं प्रकृतिनिके बदलनेतैं भंग जानने। सोई कहिए है—

मिथ्यादृष्टिका बंध कूटविषैं एक मिथ्यात्व सोलह कषाय भय जुगप्सा ए उगणीस तो ध्रुव बंधी अर तीन वेद विषैं एक वेद दोय युगलनि विषैं एक एक अैसैं वाईस प्रकृति रूप स्थान हैं इहां कूटके आकारि अैसैं रचना हो है—

२	भय		
२	२		
१	१	१	
	१६		
	२		

तातैं इहां कूट संज्ञा धरी है। तहां तीन वेदनिकौं हास्य रतिके युग्मतैं गुणैं छह भए सो इस स्थान विषैं छह भंग जानने। कैसैं? उगणीस ध्रुव बंधी पुरुष वेद हास्य रति अैसैं एक भंग बहुरि पुरुष वेदकी जायगा स्त्री वेद भएं दूसरा भंग बहुरि तहां नपुंसक वेद भएं तीसरा भंग बहुरि हास्य रतिकी जायगा शोक अरति भएं तैसैं ही तीन भंग और होंइ अैसैं छह भंग जानने। वाईसका बंध छह प्रकार करि हो है अैसैं ही अन्यत्र भी प्रकृतिनिके बदलनेतैं भंग जानने। बहुरि सासादन बंध कूट विषैं सोलह कषाय भय जुगप्सा ए अठारह तो ध्रुव बंधी हैं अर इन विषैं पुरुष स्त्री दोय वेदनिमैंस्यौं एक वेद अर दोऊ युगलनिमैंस्यौं एक एक मिलाएं इकईस प्रकृति रूप स्थान हो हैं—

२	भ जु		
२	२		
०	१	१	
	१६		
	०		

तहां वेद दोय दोय युग्मतैं गुणै च्यारि भंग हो हैं। बहुरि मिश्र बंध कूट विषैं बारह कषाय भय जुगुप्सा ए चौदह ध्रुव बंधी इन विषैं पुरुष वेद अर दोऊ जुगलनिमैंस्यौं एक एक मिलाएं सतरह प्रकृति रूप स्थान हो हैं।

२	
२	२
१	
१२	

तहां एक वेदकौं दोय युग्मतैं गुणै दोय भंग हो हैं। बहुरि असंयतविषैं भी मिश्रवत् चौदह ध्रुव बंधी सतरह प्रकृति रूप स्थान दोय भंग जानने। बहुरि देशसंयत बंध कूट विषैं आठ कषाय भय जुगुप्सा ए दश ध्रुवबंधी इन विषैं पुरुष वेद दोय युगलनिमैं एक एक मिलाएं तेरह प्रकृति रूप स्थान हो हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२
२।२
१
८

तहां एक वेदकौं दोय युग्मतैं गुणै दोय भंग हो हैं। बहुरि प्रमत्त बंधकूटविषै च्यारि कषाय भय जुगुप्सा ये छह ध्रुव बंधी इनिविषै पुरुषवेद दोऊ जुगलनिमें एक एक मिलाएं नव प्रकृतिरूप स्थान हो है। तहां एकवेद दोय युग्मतैं गुणै दोय भंग हो हैं इहां अराति शोक बंधतैं व्युच्छित्ति रूप भए। बहुरि अप्रमत्त अपूर्वकरण बंध कूट विषैं च्यारि संज्वलन भय जुगुप्सा ए ध्रुव बंधी इन विषैं पुरुष वेद हास्य रति मिलैं नव प्रकृतिरूप स्थान हो हैं।

२
२।२
१
४

२
२
१
४

इहां भंग एक ही है। इहां हास्य रति भय जुगुप्सा बंधतैं व्युच्छित्ति रूप भए। बहुरि अनिवृत्ति करणका बंध कूटविषै च्यारि कषाय ध्रुव बंधी तिनमैं पुरुष वेद।मिलैं पांच प्रकृति रूप स्थान हो है

५
१

तहां भंग एक ही है। इहां पुरुष वेद व्युच्छित्ति भया। बहुरि तिसही का दूसरा भाग विषै कषाय चतुष्क ध्रुव बंधी रूप स्थान हो है। ४। तहां भंग एक। इहां क्रोध व्युच्छित्ति भया। बहुरि तीसरा भाग विषै तीन कषाय ध्रुव बंधी रूप स्थान हो हैं। ३। तहां भंग एक। इहां मान व्युच्छेद भया। बहुरि चौथा भाग विषै दोय कषाय ध्रुव बंधी प्रकातिरूप स्थान हो है। २। तहां भंग एक १। इहां माया व्युच्छेद भई। बहुरि पांचवां भागविषै लोभ ध्रुव बंधी प्रकृति रूप स्थान हो हैं। भंग एक है ॥ ४६६ ॥ ऐसें भंग कहे तिनकी संख्या कहै हैं—

छब्बावीसे चदु इगिवीसे दो दो हवंति छट्ठोत्ति।
एक्केक्कमदो भंगो बंधट्ठाणेसु मोहस्स ॥ ४६७॥

षट् द्वाविंशतौ चत्वार एकविंशतौ द्वौ द्वौ भवंति षष्ठ इति
एकैकोतो भंगो बंधस्थानेषु मोहस्य ॥ ४६७ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्याद्यनिवृत्तिकरणांतेषूक्तमोहनीयबंधस्थानेषु भंगा द्वाविंशतिके षड् भवंति। एकविंशतिके चत्वारः। उपरि प्रमत्तपर्यंतं द्वौ द्वौ। अत उपरि सर्वस्थानेष्वेकैकः ॥ ४६७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादिक अनिवृत्तिकरण पर्यंत मोहनीके बंधस्थान विषैं भंग बाईस प्रकृति रूप स्थान विषैं छह, इकईस प्रकृति रूपविषैं च्यारि, ऊपरि प्रमत्त पर्यंत दोय दोय, ऊपरि सर्व स्थाननिविषैं एक एक जानना ॥४६७॥

दस वीसं एक्कारस तेत्तीसं मोहबंधठाणाणि ।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि य सामण्णे ॥४६८॥

दशसु विंशतिरेकादश त्रयस्त्रिंशत् मोहबंधस्थानानि ।
भुजाकारात्पतराणि च अवस्थितान्यपि च सामान्ये ॥४६८॥

जी० प्र०—प्राग्मोहनीयबंधस्थानानि दशोक्तानि तेषां भंगविवक्षामंतरेण भुजाकारबंधाः विंशतिः । अल्पतरबंधा एकादश । अवस्थितबंधास्त्रयस्त्रिंशत् ॥ ४६८ ॥ एतान् लक्षयति—

स० चं०—पूर्वैं मोहनीयके बंध स्थान दश कहे तिनके भंग विवक्षा विना कीये भुजाकार बंध वीस हैं। अल्पतर बंध ग्यारह हैं। अवस्थित बंध तेतीस हैं ॥ ४६८ ॥ इनका लक्षण कहैं हैं—

अप्पं बंधंतो बहुबंधे बहुगादु अप्पबंधेवि ।
उभयत्थ समे बंधे भुजगारादी कमे होंति ॥ ४६९ ॥

अल्पं बध्नतो बहुबंधे बहुकादल्पबंधेऽपि ।
उभयत्र समे बंधे भुजाकारादयः क्रमेण भवंति ॥ ४६९ ॥

जी० प्र०—अल्पप्रकृतिकं बध्नन्ननंतरसमये बहुप्रकृतिकं बध्नाति तदा भुजाकार बंधः स्यात् । पुनः बहुप्रकृतिकं बध्नन्ननंतरसमयेऽल्पप्रकृतिकं बध्नाति तदाल्पतरबंधः । तत्र उभयत्र अपिशब्दादवक्तव्यबंधद्वयेऽपि च द्वितीयादिसमयेषु समानप्रकृतिकं बध्नाति तदावस्थितबंधः ॥ ४६९ ॥ अथ सामान्यावक्तव्यभंगसंख्यामाह—

१ 'अथ सामान्योक्तस्थानानि वद्भुजाकारादिबंधांश्च संख्याति' पाठोयमभयचंद्रनामांकितायां टीकायामधिकः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—अल्प थोरी प्रकृति कौं बांधता पीछै अनंतर समय विषै बहुत प्रकृतिनिकौं बांधै तब भुजाकार बंध हो है। बहुरि बहुत प्रकृतिकौं बांधता पीछै अनंतर समय विषै थोरी प्रकृतिकौं बाधै तब अल्पतर बंध हो है। बहुरि तिन दोऊनिविषैं थोरी वा बहुत प्रकृतिकौं बाधता चकारतैं अवक्तव्य दोय बंधनिविषैं भी जेती प्रकृति पाहिलैं बांधता था तितनीही पीछै द्वितीयादिक समयनिविषैं बांधै तब अवस्थित बंध हो है ॥ ४६९ ॥ आगें सामान्य अवक्तव्य भंगनिकी संख्या कहै हैं—

सामण्णअवत्तव्वो ओदरमाणम्मि एक्कयं मरणे।
एक्कं च होदि एत्थवि दो चेव अवट्ठिदा भंगा ॥४७०॥

सामान्यावक्तव्यः अवतरमाणे एको मरणे।
एकश्च भवत्यत्रापि द्वौ चैवावस्थितौ भंगौ ॥ ४७० ॥

जी० प्र०—सामान्येन भंगविवक्षामकृत्वा अवक्तव्यबंधः। उपशमश्रेण्यवरोहके एकः। तत्र मरणेऽप्येकः एवं द्वौ भवतः। तथा तद्द्वितीयादिसमये चावस्थितबंधावपि द्वौ भवतः। अमीषां भुजाकारादीनां संभवप्रकार उच्यते—

अवरोहकानिवृत्तिकरणः संज्वलनलोभं बध्नन्नधस्तनभागेऽवतीर्य मायासहितं बध्नाति वा स यदि बद्धायुष्को म्रियते तदा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश च बध्नातीत्येकबंधके भुजाकारौ द्वौ। पुनः तद्द्वयं बध्नन्नवतीर्याधस्तनभागे मानसहितं बध्नाति। वा तथा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश बध्नातीति द्विबंधकेऽपि द्वौ। पुनस्तत्त्रयं बध्नन्नवतीर्याधस्तनभागे चतुःसंज्वलनान् वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश च बध्नातीति त्रिबंधके द्वौ। पुनस्तच्चतुष्कं बध्नन्नवतीर्याधस्तनभागे पुंवेदसहितं बध्नाति। वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश बध्नातीति चतुर्बंधके द्वौ। पुनस्तत्पंच बध्नन्नवतीर्यापूर्वकरणो भूत्वा हास्यरतिभयजुगुप्साचतुष्केण सह नवकं बध्नाति। वा देवासंयतोभूत्वा सप्तदश च बध्नातीति पंचबंधके द्वौ। पुनः अपूर्वकरणोऽप्रमत्तः प्रमत्तो वा नवबंधकः क्रमेणावतीर्य देशसंयतो भूत्वा त्रयोदश, वा देवासंयतो भूत्वा सप्तदश, वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वः सासादनो भूत्वैकविंशतिं, वा वेदकसम्यक्त्वः स मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा द्वाविंशतिं च बध्नातीति नवबंधके चत्वारः। पुनः तत्त्रयोदशबंधकोऽसंयतो देवासंयतो वा भूत्वा सप्तदश वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वः स सासादनो भूत्वैकविंशतिं वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वो वेदकसम्यक्त्वश्च मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा द्वाविंशतिं च बध्नातीति त्रयोदशबंधके त्रयः। तत्सप्तदशबंधकः प्रथमोपशमसम्यक्त्वः सासादनो भूत्वैकविंशतिं वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वो वेदकसम्यक्त्वो मिश्रश्च स मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा द्वाविंशतिं च

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बध्नातीति सप्तदशबंधके द्वौ। पुनस्तदेकविंशतिं बध्नन् मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा तस्मिन्नन्यस्मिन्वा भवे द्वाविंशतिं बध्नातीत्येकः। एवं भुजाकारा विंशतिः।
अथाल्पतरबंधा उच्यंते—

अनादिः सादिर्वा मिथ्यादृष्टिः करणत्रयं कुर्वन्ननिवृत्तिकरणचरमसमये द्वाविंशतिं बध्नन्ननंतरसमये प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा वा सादिमिथ्यादृष्टिरेव सम्यक्त्वप्रकृत्युदये सति वेदकसम्यग्दृष्टिर्भूत्वा उभयोऽप्यप्रत्याख्यानोदयेऽसंयतो भूत्वा सप्तदश बध्नाति। वा प्रत्याख्यानोदये देशसंयतो भूत्वा त्रयोदश बध्नाति। वा संज्वलनोदयेऽप्रमत्तो भूत्वा नव बध्नातीति द्वाविंशतिबंधे त्रयः। पुनः वेदकसम्यग्दृष्टिः क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा असंयतः सप्तदश बध्नन् देशसंयतो भूत्वा त्रयोदश वा अप्रमत्तो भूत्वा नव च बध्नातीति सप्तदशबंधे द्वौ। पुनः तत्त्रयोदशबंधकोऽप्रमत्तो भूत्वा नव, नवबंधकोऽपूर्वकरणोऽनिवृत्तिकरणप्रथमभागे पंच, पंचबंधकः द्वितीयभागे चत्वारि, चतुर्बंधकस्तृतीयभागे त्रीणि, त्रिबंधकश्चतुर्थभागे द्वे, द्विबंधकः पंचमभागे एकं च बध्नातीत्येकैकः। एवमल्पतरबंधाः एकादश। उक्तभुजाकाराल्पतरावक्तव्यानां द्वितीयादिसमयेषु समबंधोऽवस्थितबंधस्त्रयस्त्रिंशत्॥ ४७०॥
अथ विशेषभुजाकारादीन् संख्याति—

स० चं०—सामान्यपनै भंग विवक्षाकौं विना कीएं अवक्तव्य बंध उपशम श्रेणी उतरने विषैं एक है, एक तहां मरण होतैं संतै हो है। ऐसैं दोय हो हैं। बहुरि द्वितीयादि समयनिविषैं तैसैंही बध होतैं अवस्थित बंध भी इहां दोय हो हैं। अब इन भुजाकारादिक बंधनिके उपजनेका विधान कहिए है—

उपशम श्रेणी उतरनेवाला अनिवृत्ति करण जो एक संज्वलन लोभकौं बांधता उतरकरि माया लोभ दोयकौं बांधै अथवा बद्धायु तहां मरि देव असंयत होइ सतरहकौं बांधैं ऐसैं एक प्रकृतिरूप स्थाननिविषैं दोय भुजाकार भए। बहुरि तिन दोऊनिकौं बांधता उतारकरि मान सहित तीनकौं बांधै अथवा मरि देव असंयत होइ सतरहकौं बांधैं ऐसैं दोय प्रकृतिरूप स्थानविषैं भी दोय भुजाकार भए। बहुरि तिन तीनोंको बांधता नीचैं उतरि च्यारि संज्वलनकौं बांधै वा मरि देव असंयत होइ सतरहकौं बांधैं ऐसैं तीन प्रकृतिरूप विषैं भी दोय भए। बहुरि च्यारिकौं बांधता उतरि नीचला भाग विषै पुरुष वेद सहित पांच बांधै वा मरि देव असयमी होइ सतरह बांधै ऐसैं च्यारि प्रकृतिरूप स्थानविषैं दोय भए। बहुरि पांचकौं बांधता उतरिकरि अपूर्वकरणविषैं नव बांधै वा मरि देव असंयमी होइ सतरह बांधै ऐसैं पंच प्रकृतिरूप बंध स्थान विषैं दोय भए। बहुरि अपूर्वकरण वा अप्रमत्त वा प्रमत्त नवकौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बांधता संता अनुक्रमतैं उतरि देशसंयत होइ तेरह बांधै वा असंयत होइ वा मरि देव असंयत होइ सतरह बांधै वा प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सासादन होइ इकईस बांधै अर प्रथमोपशम सम्यक्त्वी वा वेदकसम्यक्त्वी मिथ्यादृष्टि होइ बाईस बांधै ऐसैं नव प्रकृतिरूप बंध स्थाननिविषैं च्यारि भुजाकार भए। बहुरि तेरह प्रकृतिकौं बांधता संता असंयत वा देव असंयत होइ सतरह बांधै वा प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सासादन होइ इकईस बांधै अर प्रथमोपशमसम्यक्त्वी वा वेदक सम्यक्त्वी मिथ्यादृष्टि होइ बाईस बांधै ऐसैं तेरह प्रकृतिरूप बंध स्थानविषैं तीन भुजाकार भए। बहुरि सतरह प्रकृतिनिकौं बांधता संता प्रथमोपशम सम्यक्त्वी सासादन होइ इकईस बांधै वा प्रथमोपशम सम्यक्त्वी वेदक सम्यक्त्वी मिश्र गुणस्थानवर्ती जीव मिथ्यादृष्टि होइ बाईस प्रकृति बांधै ऐसैं सतरह प्रकृतिरूप बंध स्थानविषै दोय भुजाकार भए बहुरि इकईस प्रकृतिकौं बांधता संता मिथ्यादृष्टी होइ बाईस कौं बांधै ऐसैं इकईस प्रकृतिरूप बंध स्थानविषै एक भुजाकार भया ऐसैं भुजाकार बंध वीस जानने। अब अल्पतर बंध कहिए है—

अनादि वा सादि मिथ्यादृष्टि तीन करण करता अनिवृत्ति करणका अंत समय विषै बाईसका बंध करता संता अनंतर समयविषै प्रथमोपशम सम्यक्त्वी होइ वा सादि मिथ्यादृष्टी सम्यक्त्व मोहनीके उदयतैं वेदक सम्यक्त्वी होइ दोन्यो ही अप्रत्याख्यानके उदय होतैं असंयत होइ सतरह बांधै, वा प्रत्याख्यानका उदय होतैं देशसंयत होइ तेरह बांधै वा संज्वलनके उदय होतैं अप्रमत्त होइ नव बांधै ऐसैं बाईस प्रकृतिरूप बंध स्थान विषैं तीन अल्पतर हैं। बहुरि वेदक सम्यग्दृष्टी वा क्षायिक सम्यग्दृष्टी असंयत सतरहकौं बांधता देशसंयत होइ तेरह बांधै वा अप्रमत्त होइ नव बांधै ऐसैं सतरहका बंधस्थानविषैं दोय हैं बहुरि तेरह कौं बांधता अप्रमत्त होइ नव बांधै बहुरि नव बांधता अपूर्वकरण वा अनिवृत्ति करणका प्रथम भागविषैं पांच बांधै। बहुरि पांच बांधता दूसरा भागविषैं च्यारि बांधै। च्यारि बांधता तीसरा भागविषैं तीन बांधै, तीन बांधता चौथा भागविषैं दोय बांधै, दोय बांधता पांचवा भागविषैं एक बांधै ऐसैं इन स्थाननिविषैं एक एक अल्पतर है। या प्रकार सर्व अल्पतर बंध ग्यारह जानने। बहुरि कहे जे दोय अवक्तव्य वीस भुजाकार ग्यारह अल्पतर तिनविषैं जेती प्रकृतिनिका बंध कह्या तितनी ही प्रकृतिनिका ६१८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंध द्वितीयादिक समयनिविषै जहां होइ तहां अवस्थित बंध कहिए तातैं अवस्थित बंध तेतीस जानने॥ ४७० ॥

आगें विशेष भुजाकारादिकनिकी संख्या कहै हैं—

सत्तावीसाहियसयं पणदालं पंचहत्तरिहियसयं।
भुजगारप्पदराणि य अवट्ठिदाणिवि विसेसेण ॥४७१॥

सप्तविंशाधिकशतं पंचचत्वारिंशत्पंचसप्तत्यधिकशतं।
भुजाकारात्पतराणि च अवस्थितान्यपि विशेषेण ॥ ४७१ ॥

जी० प्र०—विशेषभुजाकाराः सप्तविंशतिशतं, अल्पतराः पंचचत्वारिंशत्, अवस्थिताः पंचसप्ततिशतं । तत्र भुजाकारो यथा—द्वाविंशतिकस्य मिथ्यादृष्टौ शून्यं, ततोऽधिकस्य मोहनीयबंधस्थानस्याभावात् । सासादनबंधयोग्यचतुर्थैकविंशतिकस्यैकभंगस्य मिथ्यादृष्टिबंधयोग्यषोढद्वाविंशतिकस्यैकैकभंगेन समबंधे चतुर्विंशतिः । एवं सम्यग्मिथ्यादृष्टिबंधयोग्यद्विधासप्तदशकस्य मिथ्यादृष्टिषोढाद्वाविंशतिकेन द्वादश । असंयतद्विधासप्तदशकस्य सासादनचतुर्थैकविंशतिकेनाष्टौ मिथ्यादृष्टिषोढाद्वाविंशतिकेन च द्वादशेति विंशतिः । देशसंयतद्विधात्रयोदशकस्य मिश्रासंयतदेवासंयतानां द्विधासप्तदशकेन चत्वारः । सासादनचतुर्थैकविंशतिकेन चाष्टौ मिथ्यादृष्टिषोढाविंशतिकेन च द्वादशेति चतुर्विंशतिः । प्रमत्तसंयतद्विधानवकस्य देशसंयतद्विधात्रयोदशकेन चत्वारः, मिश्रासंयतद्विविधसप्तदशकेन चत्वारः, सासादने चतुर्विधैकविंशतिकेनाष्टौ मिथ्यादृष्टिषड्विधद्वाविंशतिकेन द्वादशेत्यष्टाविंशतिः । अप्रमत्तैकविधनवकस्य देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ । अपूर्वकरणनवकस्यापि तथैव द्वौ । अनिवृत्तिकरणैकभंगपंचकस्यापूर्वकरणैकभंगनवकेनैकः, देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, चतुष्कस्यैकभंगपंचकेनैकः, देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, त्रिकस्य चतुष्केणैकः, देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, द्विकस्यैकभंगत्रिकेणैकः देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ, एकस्यैकभंगद्विकेनैकः, देवासंयतद्विभंगसप्तदशकेन द्वौ मिलित्वा सप्तविंशत्यग्रशतं ॥ ४७१ ॥ तानेवाह—

स०चं०—विशेषपनैं करि भंगनिकी अपेक्षा भुजाकार बंध एकसौ सत्ताईस हैं, अल्पतर पैंतालीस हैं। अवस्थित एकसौ पिचहत्तरि हैं। ते भुजाकार कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषैं बाईसका बंध तिसतैं अधिक बंध मोहनीयका नाहीं तातैं तहां तौ शून्य है। बहुरि सासा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दनविषैं बंध योग्य इकईस प्रकृति तहां भंग च्यारि सो सासादनतैं मिथ्यादृष्टिविषैं आवै तहां एक एक भंगकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टिके विषैं वाईसका बंधके छह भंगनिकरि भुजाकार कहिए तब चौईस भए ऐसैं ही मिश्रविषैं सतरहका बंधविषैं दोय भंग सोई इहांतैं मिथ्यादृष्टिविषैं आवै हैं तातैं मिथ्यादृष्टिका वाईसका बंधविषैं छह भंगनिकी अपेक्षा भुजाकार कहिए तब बारह ए होंइ। बहुरि असंयतविषै सतरहका बंध दोय प्रकार सो इहांतैं सासादनविषैं आवै तहां इकईसका बंध च्यारि प्रकार तिनकी अपेक्षा आठ भुजाकार अर मिथ्यादृष्टिविषैं आवै तहां वाईसका बंध छह प्रकार तिनकी अपेक्षा बारह भुजाकार ऐसैं वीस भए। बहुरि देश संयतविषैं तेरहका बंध दोय प्रकार इहांतै मिश्रविषैं वा असंयतविषैं वा मरि देव असंयत विषै आवै तहां सतरहका बंध दोय प्रकार, तिनकी अपेक्षा च्यारि भुजाकार अर सासादनविषैं आवै तहां इकईसका वंध च्यारि प्रकार तिनकी अपेक्षा आठ भुजाकार अर मिथ्यादृष्टिविषैं आवै तहां वाईसका वंध छह प्रकार तिनकी अपेक्षा बारह भुजाकार ऐसैं चौईस भए। वहुरि प्रमत्तविषै नवका वंध दोय प्रकार सो इहांतैं देशसंयतविषै आवै तहां तेरहका वंध दोय प्रकार तिनकरि च्यारि भुजाकार अर मिश्र असंयतविषैं आवै तहां सतरहका बंध दोय प्रकार तिसकरि च्यारि भुजाकार अर सासादन विषै आवै तहां इकईसका बंध च्यारि प्रकार तिनकरि आठ भुजाकार अर मिथ्यादृष्टिविषैं आवै तहां वाईसका बंध छह प्रकार तिनकरि वारह भुजाकार ऐसैं सर्व अट्ठाईस भए। वहुरि अप्रमत्तविषैं वंध एक प्रकार इहांतै मरि देव असंयत होइ तहां सतरहका बंध दोय प्रकार तिनकरि दोय भुजाकार हैं। प्रमत्तविषैं आवै तहां नवका बंध है ही तातैं भुजाकार तिसकी अपेक्षा न कह्या। वहुरि अपूर्व करणविषै नवका वंध तहां भी ऐसैंही दोय भुजाकार हैं। वहुरि अनिवृत्ति करणका प्रथम भाग विषै पंचका वंध एक प्रकार इहांतैं अपूर्वकरणविषै आवै तहां नवका वंध एक प्रकार तिसकरि एक भुजाकार अर मरि देव असंयत होइ तहां सतरहका वंध दोय प्रकार तिनकरि दोय भुजाकार एवं तीन वहुरि दूसरा भागविषै च्यारिका वंध इहांतै प्रथम भागविषैं आइ पांचका वंध करै ताकी अपेक्षा एक भुजाकार अर मरि देव असंयत होइ तहां सतरहका बंध दोय प्रकार तिनकरि दोय भुजाकार एवं तीन ऐ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सैं ही तीसरा भागविषैं तीनका बंध तहां दूसरा भागविषैं च्यारिका बंध की अपेक्षा एक अर देव असंयतकी अपेक्षा दोय ऐसैं तीन भए। अर चौथा भागविषैं दोयका बंध तहां तीसरा भागविषैं तीनका बंध करि एक अर देव असंयतविषैं सतरहका बंध करि दोय ऐसैं तीन भुजाकार अर पांचवां भागविषैं एकका बंध तहां चौथा भागविषैं दोयका बंध करि एक वा देव असंयतविषैं सतरहका बंध करि दोय ऐसैं तीन भुजाकार हैं। ऐसैं सर्व मिलिकरि भुजाकार बंध एकसौ सत्ताइस हैं ॥ ४७१ ॥ सो इनहीकौं कहैं हैं—

णभ चउवीसं बारस वीसं चउरट्ठवीस दो द्दो य।
थूले पणगादीणं तिय तिय मिच्छादिभुजगारा ॥४७२॥

नभश्चतुर्विंशं द्वादश विंशं चतुरष्टविंशं द्वौ द्वौ च।
स्थूले पंचकादीनां त्रयस्त्रयो मिथ्यादिभुजाकाराः ॥४७२॥

जी० प्र०—विशेषभुजाकाराः मिथ्यादृष्टौ शून्यं। सासादने चतुर्विंशतिः। मिश्रे द्वादश। असंयते विंशतिः। देशसंयते चतुर्विंशतिः। प्रमत्तेऽष्टाविंशतिः। अप्रमत्ते द्वौ। अपूर्वकरणेऽपि द्वौ। स्थूले अनिवृत्तिकरणे पंचकादिषु त्रयस्त्रयो भूत्वा पंचदश मिलित्वा तावंतः ॥ ४७२ ॥

स०चं०—भंगनिकी विवक्षाकरि विशेष भुजाकार मिथ्यादृष्टिविषैं नास्ति, सासादनविषैं चौईस, मिश्रविषैं बारह, असंयतविषैं वीस, देशसंयतविषैं चौईस, प्रमत्तविषैं अठाईस, अप्रमत्तविषैं दोय, अपूर्व करणविषैं दोय, स्थूल जो अनिवृत्तिकरण तीहिविषैं पंचकादिकका बंधविषैं तीन तीन भुजाकार तिनके पांचौ भागविषैं पंद्रह सर्व मिलि एकसौ सत्ताईस भुजाकार बंध हैं ॥ ४७२ ॥

अप्पदरा पुण तीसं णभ णभ छद्दोण्णि दोण्णि णभ एक्कं।
थूले पणगादीणं एक्केकं अंतिमे सुण्णं ॥४७३॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अल्पतराः पुनस्त्रिंशन्नभोनभः षट् द्वौ द्वौ नभ एकः।
स्थूले पंचकादीनामेकैकः अंतिमे शून्यं ॥ ४७३ ॥

जी० प्र०—पुनः अल्पतरा मिथ्यादृष्टौ षोढाद्वाविंशतिकस्य मिश्रासंयतयोर्द्विर्धासप्तदशकेन द्वादश, देशसंयतद्विधात्रयोदशकेन द्वादश, अप्रमत्तैकधानवकेन षडिति त्रिंशत्। तस्यैकविंशतिकेन द्विधानवकेन च बंधः 'सासणपमत्तवज्जं अपमत्तं तं समल्लियइ मिच्छो' इति नियमात्, सासादनस्य पतनशीलत्वात् मिथ्यादृष्टावेव गमनादेकविंशतिकस्य भुजाकारा एव नाल्पतरमिति शून्यं। मिश्रस्यासंयते गमने बंधस्यावस्थितत्वान्मिथ्यादृष्टौ च गमने भुजाकारत्वादन्यत्रागमनाच्च सप्तदशकस्य नाल्पतरोऽस्तीति शून्यं। असंयते द्विधासप्तदशकस्य देशसंयतद्विधात्रयोदशकेन चत्वारः, अप्रमत्तैकभंगनवकेन च द्वाविति षट्। देशसंयते द्विधात्रयोदशकस्याप्रमत्तैकधानवकेन द्वौ। प्रमत्ते द्विधानवकस्य अप्रमत्तैकभंगनवकेन द्वौ। कथं समसंख्याबंधेऽल्पतरत्वं? प्रमत्ते अरतिद्विकबंधच्छेदेनाप्रमत्ते प्रकृतिबंधस्याल्पतरत्वसंभवात्। अप्रमत्तेऽपूर्वकरणसमानभंगनवकबंधाच्छून्यं। अपूर्वकरणे एकधानवकस्यानिवृत्तिकरणैकधापंचकेनैकः। अनिवृत्तिकरणे एकधापंचकस्यैकधाचतुष्केणैकः। तच्चतुष्कस्यैकधात्रिकेणैकः। तत्त्रिकस्यैकधाद्विकेनैकः। तद्द्विकस्यैकधैकेनैकः चरमभागे एकं बध्वा सूक्ष्मसांपरायं गतस्य बंधादवक्तव्यत्वादल्पतरशून्यं। एवमल्पतरबंधाः पंचचत्वारिंशत्। अवस्थितास्तु भुजाकाराल्पतरवक्ष्यमाणावक्तव्यानां द्वितीयादिसमयेषु बंधे पंचसप्तत्यग्रशतं ॥ ४७३ ॥

स०च०—बहुरि अल्पतर बंध कहिए है–मिथ्यादृष्टिविषें बाईसका बंध छह प्रकार इहांतैं मिश्र असंयतविषें जाइ तहां सतरहका बंध दोय प्रकार सो एक एक प्रकार विषें छह छह प्रकार बाईसका बंधकी अपेक्षाकरि बारह अल्पतर अर देश संयतविषें जाइ तहां तेरहका बंध दोय प्रकार तिनकरि बारह अल्पतर अर अप्रमत्तविषें जाइ तहां नवका बंध एक प्रकार तहां तिसकरि छह अल्पतर ऐसैं तीस भए। मिथ्यादृष्टि जीव है सो सासादन प्रमत्त विना अप्रमत्त पर्यंत जाइ है तातैं सासादनका च्यारि प्रकार इकईसका बंधकी अपेक्षा अर प्रमत्तका दोय प्रकार नवका बंधकी अपेक्षा अल्पतर इहां न कहे। बहुरि सासादनतैं पडि मिथ्यादृष्टी ही हो है तातैं इकईसका बंधकैं भुजाकार बंध संभवै है ऊपरि चढै नाहीं तातैं अल्पतरका अभाव है तातैं शून्य कह्या बहुरि मिश्रतैं पडै तौ मिथ्यादृष्टिविषें आवै तहां भुजाकार बंध ही संभवै। अर चढै तौ असंयतविषें जाइ तहां जो सतरहका बंध मिश्रविषें था सोई असंयत विषें रह्या तहां अवस्थित बंध संभवै तातैं मिश्रविषें अल्पतर बंध नाहीं शून्य है। बहुरि असंयतविषें दोय प्रकार सतरहका बंध इहांतै देशसंयतविषें जाइ तहां तेरहका बंध दोय प्रकार तिनकरि च्यारि अल्पतर ६२९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर अप्रमत्तविषैं जाइ तहां नवका बंध एक प्रकार तिसकरि दोय अल्पतर एवं छह बहुरि देश संयतविषैं तेरहका बध दोय प्रकार इहांतैं अप्रमत्तविषैं जाइ तहां नवका बंध एक प्रकार तिसकरि दोय अल्पतर हैं बहुरि प्रमत्तविषैं नवका बंध दोय प्रकार इहांते अप्रमत्तविषैं जाइ तहां नवका बंध एक प्रकार तिसकरि दोय अल्पतर हैं। इहां प्रश्न–जा प्रमत्तविषैं वा अप्रमत्तविषैं नवही का बंध पाइए सो इहां तौ समान संख्या है सो अवस्थित संभवै अल्पतर कैसैं कहो हो? ताका समाधान–प्रमत्तविषै अरति शोकके बंधका व्युच्छेद भया है तिस अपेक्षा अल्पतर बंध भंगविवक्षाविषैं संभवै है। बहुरि अप्रमत्ततैं अपूर्व करणविषैं जाइ सो इहां दोऊनिविषैं समान नवका बंध है तहां अल्पतर न संभवै है तातैं शून्य है बहुरि अपूर्व करणविषैं नवका बंध एक प्रकार अर अनिवृत्ति करणका प्रथम भागविषैं पचका बंध एक प्रकार तिसकरि एक अल्पतर है। बहुरि अनिवृत्ति करणविषैं एक प्रकार पांचका बंधकैं एक प्रकार च्यारि बंधकी अपेक्षा एक अर एक प्रकार च्यारिका बंधकैं एक प्रकार तीनका बंधकी अपेक्षा एक अर एक प्रकार तीनका बंधकैं एक प्रकार दोयका बंधकी अपेक्षा एक अर एक प्रकार दोयका बंधकैं एक प्रकार एकका बंधकी अपेक्षा एक अल्पतर है। बहुरि अनिवृत्तिकरणका पंचम भागविषैं एकका बंध सो इहांतै सूक्ष्मसांपरायविषैं जाइ तहां बंधका अभाव है सो तहां अवक्तव्यबंध संभवै है अल्पतर बंध नाही तातैं शून्य है ऐसैं अल्पतर बंध पैंतालीस है। बहुरि एकसौ सत्ताईस भुजाकार कहे पैंतालीस अल्पतर कहे तीन अवक्तव्य कहैंगे। इन सबनिविषैं जितनी जितनी प्रकृतिनिका पहिले समय बंध होइ तितनी ही प्रकृतिनिका जहां द्विती-यादिक समयनिविषैं बंध होइ तहां अवस्थित बंध कहिए तातैं अवस्थित बंध एकसौ चिहत्तरि हैं ॥ ४७३ ॥

भेदेण अवत्तव्वा ओदरमाणम्मि एक्कयं मरणे।
दो चेव होंति एत्थावि तिण्णेव अवट्ठिदा भंगा ॥४७४॥ ६२३

भेदेन अवक्तव्या अवतरति एकको मरणे।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वौ चैव भवतोऽत्रापि त्रय एवावस्थिता भंगाः ॥ ४७४ ॥

जी० प्र०—ते विशेषेणावक्तव्यास्तु सूक्ष्मसांपरायोऽस्तमोहबंधोऽवतरणेऽनिवृत्तिकरणो भूत्वा संज्वलनलोभं बध्नातीत्येकः । स एव च यदि बद्धायुष्कः आरोहणेऽवरोहणे वा म्रियते तदा देवासंयतो भूत्वा द्विधा सप्तदशकं बध्नातीति द्वौ एवं त्रयो भवंति । अत्रापि तद्द्वितीयादिसमयेषु समबंधे त्रय एवावस्थिताश्च भवंति ॥ ४७४ ॥ एवं मोहनीयस्य सामान्यविशेषभुजाकारादिचतुर्धाबंधानुक्त्वा इदानीमुदयस्थानान्याह—

स०चं०—बहुरि भंगाविवक्षा होतैं विशेषकरि अवक्तव्य बंध कहिए है। सूक्ष्मसांपराय है सो मोह बंधतै रहित हैं तहांतैं उतरि अनिवृत्तिकरण होइ संज्वलन लोभकौं बांधै सो एक तौ यहु अवक्तव्यबंध अर चढनेविषैं वा उतरनेविषैं बद्धायु जो सूक्ष्मसांपराय सो मरि देव असंयत होइ करि दोय प्रकार सतरह प्रकृति बांधै तिनकी अपेक्षा दोय अवक्तव्य ऐसैं तीन अवक्तव्य बंध हैं। इहां भी द्वितीयादिक समयनिविषैं समान प्रकृतिका बंध भएं तीन अवस्थित बंध हो हैं सो ऊपरि कहेही थे ॥ ४७४ ॥ ऐसैं मोहनीयके सामान्य विशेष भुजाकार आदि च्यारि प्रकार बंध कहि अब मोहनीय हीके उदय स्थान कहिए है—

दश णव अट्ठ य सत्त य छप्पण चत्तारि दोण्णि एक्कं च।
उदयट्ठाणा मोहे णव चैव य होंति णियमेण ॥४७५॥

दश नवाष्ट च सप्त च षट् पंच चत्वारि द्वे एकं च।
उदयस्थानानि मोहे नव चैव च भवंति नियमेन ॥ ४७५ ॥

जी० प्र०—दशनवाष्टसप्तषट्पंचचतुर्द्व्येकप्रकृतिसंख्यान्युदयस्थानानि मोहनीये नवैव भवंति ॥ ४७५ ॥

स०चं०—दश नव आठ सात छह पांच च्यारि दोय एक प्रकृतिरूप मोहनीयके उदय स्थान नव ही हैं नियम करि ॥ ४७५ ॥

मिच्छं मिस्सं सगुणो वेदगसम्मेव होदि सम्मत्तं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक्का कसायजादी वेददुजुगलाणमेक्कं च ॥४७६॥

मिथ्यं मिश्रं स्वगुणे वेदकसम्ये एव भवति सम्यक्त्वं ।
एका कषायजातिर्वेदद्वियुगलयोरेकं ॥ ४७६ ॥

जी० प्र०—मोहनीयोदयप्रकृतिषु मिथ्यात्वं मिश्रं च स्वस्वगुणस्थाने एवोदेति । सम्यक्त्वप्रकृतिः वेदकसम्यग्दृष्टावेवासंयतादिचतुर्षूदेति, आसां गुणस्थानेषूदयनियमं प्रदर्श्योदयकूटानि रचयति । चतसृष्वेका कषायजातिः, वेदत्रये एको वेदः, हास्यद्विकारतिद्विकयोरेकं द्विकं चेतीदं ॥ ४७६ ॥

स० चं०—मोहनीकी उदय प्रकृतिनिविषैं मिथ्यात्व अर मिश्र ए दोऊ मिथ्यादृष्टि अर मिश्र अपना अपना गुणस्थानविषैं उदय हो है । अर सम्यक्त्व मोहनी है सो वेदक सम्यक्त्वीकैं असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं उदय हो है ऐसैं गुणस्थाननिविषैं उदय नियमकौं दिखाइ उदयके कूटादिक कहैं हैं । अनंतानुबंध्यादिक च्यारि कषायनिकी क्रोध मान माया लोभ रूप च्यारि जाति तहां एक जातिका उदय पाइए । तीन वेदनिविषैं एक वेदका उदय पाइए हास्य शोक का युगल अर रति अरतिका युगल इन दोऊ युगलनिविषैं एक एकका उदय पाइए ॥ ४७६ ॥

भयसहियं च जुगुच्छासहियं दोहिंवि जुदं च ठाणाणि ।
मिच्छादिअपुव्वंते चत्तारि हवंति णियमेण ॥४७७॥

भयसाहितं च जुगुप्सासाहितं द्वाभ्यामपि युतं च स्थानानि ।
मिथ्याद्यपूर्वांते चत्वारि भवंति नियमेन ॥ ४७७ ॥

जी० प्र०—भयजुगुप्सासहितमेककूटं, भयेन युतमेककूटं, जुगुप्सया युतमेककं कूटं, चशब्दादुभयरहितमेकं कूटममीषु—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

मिथ्यात्वे युतेऽनंतानुबंधियुते मिथ्यादृष्टेर्भवंति—

२	१	१	०
२ | २	२ | २	२ | २	२ | २
१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४
मि १	१	१	१

एषु मिथ्यात्वेऽपनीते सासादनस्य—

२	१	१	०
२ | २	२ | २	२ | २	२ | २
१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

एषु मिश्रप्रकृतिं निक्षिप्यानंतानुबंधिचतुष्केऽपनीते मिश्रस्य—

२	१	१	०
२ | २	२ | २	२ | २	२ | २
१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
मि १	१	१	१

एषु मिश्रमपनीय सम्यक्त्वप्रकृतौ युतायामसंयतस्य—

२	१	१	०
२ | २	२ | २	२ | २	२ | २
१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १	१ | १ | १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
स १	१	१	१

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एष्वप्रत्याख्यानचतुष्केऽपनीते देशसंयतगुणस्थानस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १
२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २
१	१	१	१

एषु प्रत्याख्यानचतुष्केऽपनीते प्रमत्ताप्रमत्तयोः—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १
१	१	१	१

प्रत्येकं । एषु सम्यक्त्वप्रकृतौ वियुतायामपूर्वकरणगुणस्थानस्य—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १	१ । १ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

इतीमानि चत्वारि चत्वारि मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वकरणांतमेव नियमेन । अत्र षण्णोकषायेष्वपनीतेष्वनिवृत्तिकरणप्रथमभागे एकं कूटं १ १ १ / १ १ १ १ अत्र वेदत्रयेऽपनीते तद्द्वितीयभागे १ १ १ १ पुनः संज्वलनक्रोधेऽपनीते तृतीयभागे १ १ १ मानेऽपनीते चतुर्थभागे १ १ मायायामपनीतायां पंचमभागे बादरलोभः १ सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मलोभः १ ॥ ४७७ ॥ अथ मिथ्यादृष्ट्यावसंयतादिचतुर्षु संभवद्विशेषमाह—

स० चं०—बहुरि एक जीवकैं एक कालविषैं भयही का उदय होइ वा जुगुप्साही का उदय होइ वा दोऊनिका उदय होइ वा दोऊनि का उदय न होइ यातैं इनकी अपेक्षा च्यारि कूट करने। कूट आकार ऐसैं रचना करनी—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनंतानुबंधी सहित मिथ्यादृष्टि कूट।

२ २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४ १	१ २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४ १	१ २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४ १	० २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४ १

तहां नीचैं ही नीचैं तो एक मिथ्यात्वका एकका अंक लिखना। ऊपरि अनंतानुबंध्यादिक च्यारि च्यारि कषाय लिखने रूप यथा संभव क्रोध आदि कषायनिके च्यारि जायगा च्यारि च्यारिके अंक जहां जिसका उदय होइ सो तहां जानना। बहुरि तिस ऊपरि तीन वेदनिविषैं एक वेदके तीन जायगा एक एकके अंक लिखने सो जिसका उदय होइ सोई तहां जानना। बहुरि तिसके ऊपरि दोय युगलनिविषैं एक एक प्रकृतिका उदय तिनके दोय जायगा दोय दोय के अंक लिखने सो जिन हास्य रतिका वा अरति शोकका उदय पाइए सोई तहां जानने ताके ऊपरि प्रथम कूटविषैं भय जुगुप्सा दोन्यों जानने दूसरा कूटविषैं केवल भय ही जानना। तीसरा कूटविषैं जुगुप्सा ही जाननी। चौथा कूटविषैं दोऊनिका अभाव रूप शून्य जानना तिनके च्यार्यौ कूटनिविषैं क्रमतैं दोय एक एक विंदी लिखनी ऐसैं च्यारि कूट करने। सो प्रथम कूटविषैं दश प्रकृतिरूप उदय स्थान जानना दूसरा तीसरा कूटविषैं नव नव प्रकृतिरूप उदय स्थान चौथा कूटविषैं आठ प्रकृतिरूप उदय स्थान जानना सो ए तौ च्यार्यौ कूट अनंतानुबंधी सहित मिथ्यादृष्टि गुणस्थानके जानने बहुरि इन च्यार्यौ कूटनिविषैं मिथ्यात्वकौं दूर कीजिए तब च्यार्यौ कूट सासादनके जानने।

सासादन कूट।

२ २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४	१ २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४	१ २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४	० २ २ १ १ १ ४ ४ ४ ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि इनविषैं मिथ्यादृष्टिकी जायगा मिश्र मोहनीय मांडिए अर कषाय च्यारि च्यारि लिखे थे तहां तीन तीन ही लिखिए जातैं ऊपरिके कूटनि विषै एक काल एक जीवकैं जो क्रोधका उदय है सो अनंतानुबंध्यादिक च्यारि रूप है। इन कूटनिविषैं अनंतानुबंधी विना तीन रूपही है ऐसैंही मानादिकका उदय जानना सो ये च्यारि कूट मिश्र गुणस्थानके जानने।

मिश्र कूट

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
१	१	१	१

बहुरि इन विषैं मिश्र माहनीकी जायगा सम्यक्त्व मोहनी मांडिए तब च्यारि कूट वेदक सम्यक्त्व युत अविरत गुणस्थानके जानने।

वेदक असंयत कूट।

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
१	१	१	१

बहुरि इन विषैं जहां तीन तीन कषाय लिखी तहां दोय दोय कषाय लिखिए जातैं अप्रत्याख्यान का भी उदय नाहीं है सो ए च्यारचौ कूट देशसंयतके होंइ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेदक देशसंयतके कूट ।

२ २ २ १ १ १ २ २ २ २ १	१ २ २ १ १ १ २ २ २ २ १	१ २ २ १ १ १ २ २ २ २ १	० २ २ १ १ १ २ २ २ २ १

बहुरि इन विषै प्रत्याख्यान घटाइ, दोय दोय कषाय लिखे थे तहां एक एक कषाय लिखिए सो ए च्यार्‌यौ कूट प्रमत्तके होंइ ।

वेदक प्रमत्तके कूट ।

२ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १	१ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १	१ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १	० २ २ १ १ १ १ १ १ १ १

बहुरि प्रमत्तवत् चार्‌यो कूट अप्रमत्तके हैं—

वेदक अप्रमत्तके कूट ।

२ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १	१ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १	१ २ २ १ १ १ १ १ १ १ १	० २ २ १ १ १ १ १ १ १ १

बहुरि इनविषैं सम्यक्त्व प्रकृति घटाइए तब ए च्यार्‌यो कूट अपूर्वकरणके होंइ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपूर्वकरणके कूट ।

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

ऐसैं मिथ्यादृष्ट्यादिक अपूर्वकरण पर्यंत ही च्यारि च्यारि कूट हैं नियमकरि । इहां छह हास्यादिककी व्युच्छित्ति भई तातैं अनिवृत्ति करणका प्रथमभागविषैं संज्वलन च्यारि कषायनिविषैं एक कषाय तीन वेदनिविषैं एक वेदका उदयरूप एकही कूट है । बहुरि इनविषैं वेदकौं घटाए दूसरा भागविषैं संज्वलन च्यारि कषायनिविषैं एकका उदयरूप एकही कूट है । इनविषैं क्रोधकौं घटाए तीसरा भागविषैं तीन संज्वलन कषायविषैं एकका उदयरूप एकही कूट है बहुरि इनविषैं मानकौं घटाएं चौथा भागविषैं दोय संज्वलन कषायनिविषैं एकका उदयरूप एक ही कूट है बहुरि इनविषैं मायाकौं घटाए पांचवा भागविषैं वादर संज्वलन लोभका उदयरूप एकही कूट है ।

अनिवृत्तिकरणके कूट ।

प्रथम भाग	द्वितीय भाग	तृतीय भाग	चतुर्थ भाग	पंचम भाग
१ १				
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १	१ १	१

बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं सूक्ष्म लोभका उदय रूप एक ही कूट है

सूक्ष्म सांपराय कूट
१

ऐसैं कूटाकार करि उदय कह्या है ॥ ४७७ ॥ आगैं मिथ्यादृष्टिविषैं वा असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं विशेष संभवै है सो कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

अणसंजोजिदसम्मे मिच्छं पत्ते ण आवलित्ति अणं।
उवसमखइये सम्मं ण हि तत्थवि चारि ठाणाणि ॥४७८॥

अनसंयोजितसामान्ये मिथ्यं प्राप्ते न आवलीति अनं।
उपशमक्षायिके सम्यं नहि तत्रापि चत्वारि स्थानानि ॥ ४७८ ॥

जी० प्र०—अनंतानुबंधिविसंयोजितवेदकसम्यग्दृष्टौ मिथ्यात्वकर्मोदयान्मिथ्यादृष्टिगुणस्थानं प्राप्ते आवलिपर्यंतमनंतानुबंध्युदयो नास्ति। तत्प्राप्तिप्रथमसमये बद्धतत्समयप्रबद्धस्यापकर्षणे कृते तावत्कालमुदयावल्यां निक्षेप्तुमशक्तः। तत्रानंतानुबंधितरहितचतुष्कूटानि—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
१	१	१	१

उपशमसम्यक्त्वे क्षायिकसम्यक्त्वे च सम्यक्त्वप्रकृत्युदयो नास्ति इति तद्रहितान्यसंयतचतुष्के तत्कूटानि संदृष्टिः—

वेदकरहितासंयते—

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३

वेदकरहितदेशसंयते—

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेदकरहितप्रमत्ते ।

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

वेदकरहिताप्रमत्ते ।

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १	१ । १ । १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

स० चं०—अनंतानुबंधी का जाकैं विसंयोजन भया ऐसा वेदक सम्यग्दृष्टि सो मिथ्यात्व कर्मके उदयतैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थानकौं प्राप्त होइ ताकें आवली काल पर्यंत अनंतानुबंधीका उदय नाहीं है जातैं मिथ्यात्वकौं प्राप्त होइ पहले स-मय जो समय प्रबद्ध बांधे ताका अपकर्षण करि आवली प्रमाण काल पर्यंत उदयावली विषैं प्राप्त करनेकौं समर्थपना नाहीं अर अनंतानुबंधीका बंध मिथ्यादृष्टि विषैं ही है पूर्वैं अनंतानुबंधी था ताका विसंयोजन कीया तातैं तिस जीवकैं आवली काल प्रमाण अनंतानुबंधीका उदय नाहीं तिसकी अपेक्षा मिथ्यादृष्टिविषैं अनंतानुबंधीरहित च्यारि कूट और जानने ।

अनंतानुबंधीरहित मिथ्यादृष्टिके कूट ।

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३
१	१	१	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

इनविषैं पहिला कूट नव प्रकृति रूप दूसरा तीसरा विषैं आठ प्रकृति रूप चौथा विषैं सात प्रकृति रूप उदय स्थान जानने। बहुरि उपशम सम्यक्त्व विषैं अर क्षायिक सम्यक्त्व विषैं सम्यक्त्व मोहनीयका उदय नाहीं वेदक सम्यक्त्व ही विषैं है तातैं असंयत देश संयत प्रमत्त अप्रमत्तके पूर्वैं जे सम्यक्त्व मोहनीय सहित च्यारि च्यारि कूट कीए हैं ते वेदक सम्यक्त्वी अपेक्षा जानने तिन सवकूटनिविषैं सम्यक्त्व मोहनी घटाइए तब उपशम क्षायिककी अपेक्षा असंयत देश संयत प्रमत्त अप्रमत्त विषैं च्यारि च्यारि और कूट हो हैं।

वेदक रहित असंयत कूट।

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३	३ ३ ३ ३

वेदकरहित देशसंयत कूट।

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २	२ २ २ २

वेदक रहित प्रमत्त कूट।

२	१	१	०
२ २	२ २	२ २	२ २
१ १ १	१ १ १	१ १ १	१ १ १
१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १	१ १ १ १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेदक रहित अप्रमत्त कूट।

२ २ २ १ १ १ १ १ १ १	१ २ २ १ १ १ १ १ १ १	१ २ २ १ १ १ १ १ १ १	० २ २ १ १ १ १ १ १ १

पुव्विल्लेसुवि मिलिदे अड़ चउ चत्तारि चदुसु अट्ठेव।
चत्तारि दोण्णि एक्कं ठाणा मिच्छादिसुहुमंते ॥ ४७९ ॥

पूर्व्येष्वपि मिलितेषु अष्ट चत्वारि चत्वारि चतुर्षु अष्टैव।
चत्वारि द्वे एकं स्थानानि मिथ्यादिसूक्ष्मांते ॥ ४७९ ॥

जी० प्र०—एतेषूक्तकूटेषु पूर्वकूटेषु मिलितेषु मिथ्यादृष्टावष्टौ। सासादने मिश्रे च चत्वारि। असंयतादिचतुष्केऽष्टावष्टौ। अपूर्वकरणे चत्वारि। अनिवृत्तिकरणे द्वे। सूक्ष्मसांपराये एकं ॥ ४७९ ॥ अमीअपुनरुक्तोदयस्थानानि गुणस्थानेष्वाह—

(१)

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू
८ ६ । ६ १०	७ ८।८ ६	७ ८।८ ६	७ ८।८ ६	६ ७।७ ८	५ ६।६ ७	५ ६।६ ७	४ ५।५ ६	१ २	१
७ ८।८ ६	०	०	६ ७।७ ८	५ ६।६ ७	४ ५।५ ६	४ ५।५ ६	०	०	०
८	४	४	८	८	८	८	४	२	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—ए पीछैं कहे कूट तिनविषैं पहिले कहे थे कूट ते मिलाएं संतै मिथ्यादृष्टिविषैं आठ, सासादन मिश्रविषैं च्यारि च्यारि, असंयतादिक च्यारि विषैं आठ आठ, अपूर्व करणविषैं च्यारि, अनिवृत्तिकरणविषैं दोय सूक्ष्मसांपरायविषैं एक कूट जानने ॥ ४७९ ॥ इनविषैं अपुनरुक्त स्थान कहै हैं—

दसणवणवादि चउतियतिट्ठाण णवट्ठसगसगादि चऊ।
ठाणा छादि तियं च य चदुवीसगदा अपुव्वोत्ति ॥४८०॥

दशनवनवादि चतुस्त्रिकत्रिस्थानं नवाष्टसप्तसप्तादि चतुष्कं।
स्थानानि षडादि त्रिकं च च चतुर्विंशगता अपूर्व इति ॥ ४८० ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ दशकादीनि चत्वारि १०, ९, ८, ७। सासादने मिश्रे च नवकादिनि त्रीणि ९, ८, ७। असंयते तदादीनि चत्वारि ९, ८, ७, ६। देशसंयतेऽष्टकादीनि चत्वारि ८, ७, ६, ५। प्रमत्तेऽप्रमत्ते च सप्तकादीनि चत्वारि ७, ६, ५, ४। अपूर्वकरणे षट्कादीनि त्रीणि ६, ५, ४। अमूनि सर्वस्थानानि प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगानि।

अथ मिथ्यादृष्ट्यादिषु पंचस्वपुनरुक्तानां संख्यासादृश्येऽपि प्रकृतिभेदादपुनरुक्तता तद्भेदस्तु मिथ्यात्वात्सासादने तदभावात्, मिश्रे सम्यग्मिथ्यात्वात् असंयते सम्यक्त्वप्रकृतेर्देशसंयते प्रत्याख्यानाभावाच्च ज्ञातव्या ॥ ४८० ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं दशके आदि च्यारि उदय स्थान हैं ते दश प्रकृति रूप नव प्रकृति रूप आठ प्रकृति रूप सात प्रकृति रूप हैं। बहुरि सासादन अर मिश्रविषैं नवके आदि तीन तीन स्थान हैं ते नव आठ सात प्रकृतिरूप हैं। बहुरि असंयतविषैं नवके आदि च्यारि स्थान हैं ते नव आठ सात छह प्रकृतिरूप हैं। बहुरि देशसंयतविषैं आठके आदि च्यारि स्थान हैं ते आठ सात छह पांच प्रकृतिरूप हैं बहुरि प्रमत्त वा अप्रमत्त विषैं सातके आदि च्यारि स्थान हैं ते सात छह पांच च्यारि प्रकृतिरूप हैं। बहुरि अपूर्वकरणविषैं छहके आदि तीन स्थान हैं ते छह पांच च्यारि प्रकृतिरूप हैं ए सर्वस्थान प्रत्येक चौईस चौईस भंगनिकरि संयुक्त हैं। इन मिथ्यादृष्टि आदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंच गुणस्थाननिविषैं अपुनरुक्त स्थान कहे तिनविषैं किसीकी संख्या समान होतैं भी प्रकृति भेद अपेक्षा अपुनरुक्तपना है जैसैं नव नव प्रकृतिरूप स्थान बहुत कहे तथापि तिनविषैं प्रकृति अन्य अन्य पाइए है तातैं अपुनरुक्तता ही जाननी जातैं मिथ्यादृष्टिविषैं स्थान हैं ते मिथ्यात्वसहित हैं, सासादनविषैं मिथ्यात्वरहित हैं, मिश्रविषैं मिश्रमोहनी सहित हैं, असंयतविषैं सम्यक्त्वमोहनी सहित हैं, देश संयतविषैं प्रत्याख्यानरहित हैं। अैसैं प्रकृति भेदतैं अपुनरुक्तता जाननी।

एक्क य छक्केयारं एयारेयारसेव णव तिण्णि।
एदे चउवीसगदा चदुवीसेयार दुगठाणे ॥४८१॥

एकं च षट्कमेकादश एकादशैकादशैव नव त्रीणि।
एतानि चतुर्विंशतिगतानि चतुर्विंशैकादश द्विकस्थाने ॥४८१॥

जी० प्र०—सर्वगुणस्थानेषु मिलित्वा दशकं स्थानमेकं, नवकानि षट्, अष्टकानि सप्तकानि षट्कानि चैकादशैकादश, पंचकानि नव, चतुष्काणि त्रीणि। एतानि प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगगतानि द्विकमेकं भंगाश्चतुर्विंशतिः, एकैकमेकं भंगा एकादश ॥ ४८१ ॥ एतत्स्थानद्वयभंगानामुपपत्तिमाह—

स०चं०—सर्व गुणस्थाननिविषैं मिलकरि दश प्रकृतिरूप तौ एक स्थान है सो मिथ्यादृष्टिविषैं ही है बहुरि नव प्रकृतिरूप छह स्थान हैं पहिले कूटनिविषैं दोय पिछले कूटनिविषैं एक अैसैं मिथ्यादृष्टिविषैं तीन अर सासादन मिश्र असंयतविषैं पहिले कूटनिविषैं एक एक एक अैसैं छह स्थान हैं। बहुरि आठ प्रकृतिरूप सात प्रकृतिरूप छह प्रकृतिरूप ग्यारह ग्यारह स्थान हैं तहां मिथ्यादृष्टिविषैं पहिले कूटनिविषैं एक पिछले कूटनिविषैं दोय अैसैं तीन, सासादन मिश्रविषैं दोय दोय, असंयतविषैं पहिले कूटनिविषैं दोय, पिछले कूटनिविषैं एक अैसैं तीन, देश संयतविषैं पहिले कूटनिविषैं एक अैसैं आठ प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान जानने। बहुरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पिछले कूटनिविषैं एक मिथ्यादृष्टिविषैं, एक एक सासादन मिश्रविषैं, एक पहिले दोय पिछले कूटनिकरि तीन असंयतविषैं, दोय पहिले एक पिछले कूटनिकरि तीन देश संयतविषैं, एक एक प्रमत्त अप्रमत्तके पहिले कूटनिविषैं असैं सात प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान जानने। बहुरि एक असंयतके पिछले कूटनिविषैं एक एक पहिले दोय पिछले कूटनिकरि तीन देश संयतविषैं दोय पहिले एक पिछले कूटनिकरि तीन तीन प्रमत्त अप्रमत्तविषैं एक अपूर्वकरणविषैं छह प्रकृतिरूप ग्यारह स्थान जानने बहुरि पांच प्रकृतिरूप नव स्थान हैं ते एक देश संयतका पिछला कूटविषैं एक पहिले दोय पिछले कूटनिकरि तीन तीन प्रमत्त अप्रमत्तविषैं दोय अपूर्वकरणविषैं जानने। बहुरि च्यारि प्रकृतिरूप स्थान तीन हैं ते एक एक प्रमत्त अप्रमत्तके पिछले कूटविषैं एक अपूर्वकरणविषैं जानने। असैं ए सर्व स्थान कहे तिन एक एक स्थानविषैं चौईस चौईस भंग हैं। जैसैं दश प्रकृतिरूप स्थानविषैं च्यारि क्रोधादि कषायनिका उदय एक एक वेदविषैं होइ असैं बारह भंग भए ते बारह भंग हास्य रति सहित अर बारह भंग अरति शोक सहित असैं चौईस-भंग भए असैं ही अन्य स्थाननिविषैं चौईस चौईस भंग जानने। बहुरि दोय प्रकृतिरूप एक स्थान है ताके चौईस भंग हैं। बहुरि एक प्रकृतिरूप एक स्थान है ताके ग्यारह भंग है॥ ४८१॥ इनि दोऊ प्रकृतिरूप स्थाननिके भंगनिका विधान कहैं हैं—

उदयट्ठाणं दोण्हं पणबंधे होदि दोण्हमेकस्स।
चदुविहबंधट्ठाणे सेसेसेयं हवे ठाणं॥ ४८२॥

उदयस्थानं द्वयोः पंचबंधे भवति द्वयोरेकस्य।
चतुर्विधबंधस्थाने शेषेष्वेकं भवेत्स्थानं॥ ४८२॥

जी० प्र०—पंचबंधकचतुर्बंधकानिवृत्तिकरणभागयोस्त्रिवेदचतुःसंज्वलनानामेकैकोदयसंभवं द्विप्रकृत्युदयस्थानं स्यात्। तत्र भंगा द्वादश द्वादशेति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चतुर्विंशतिः । पक्षांतरापेक्षया चतुर्बंधकचरमसमये त्रिद्व्येकबंधकेष्वबंधके च क्रमेण चतुस्त्रिद्व्येकैकसंज्वलनानामेकैकोदयभवमेकोदयभवमेकोदयस्थानं स्यात् । तेन तत्र भंगाः चतुस्त्रिद्व्येकैके भूत्वैकादश ॥ ४८२ ॥ अमुमेवार्थं विशदयितुं सूत्रचतुष्टयमाह—

स॰चं॰—अनिवृत्ति करणविषैं पांच प्रकृतिका जहां बंध पाइए ऐसा एक भाग अर च्यारि प्रकृतिका जहां बंध पाइए तहां भी कितने इक काल वेदनिका उदय है तातैं सो एक भाग ऐसैं इन दोऊनिविषैं तीन वेद अर च्यारि संज्वलनविषैं एकका उदयतैं दोय प्रकृतिरूप स्थान पाइए तहां च्यारि च्यारि कषाय एक एक वेदविषैं पाइए यातैं बारह भंग भए दोऊ भागनिविषैं चौईस भंग भए । बहुरि पक्षांतर जो कनकनंदी आचार्यका आम्नाय ताकी अपेक्षा करि च्यारि प्रकृतिका जहां बंध पाइए तिसका अंत समयविषैं वेदनिके उदयका अभाव ही है तातैं तिसविषैं अर तीन दोय एक प्रकृतिका जहां बंध पाइए तिनविषैं अर बंध न पाइए तिसविषैं क्रमतैं च्यारि तीन दोय एक एक संज्वलन कषायनिविषैं एक एकका उदय पाइए तहां भंग अनुक्रमतैं च्यारि तीन दोय एक एक जानने ऐसैं एक प्रकृतिरूप बंध स्थाननिविषैं ग्यारह भंग जानने ॥ ४८२ ॥ इसही अर्थके प्रगट करनेकौं च्यारि सूत्र कहैं हैं—

अणियट्टिकरणपढमा संढित्थीणं च सरिस उदयद्धा ।
तत्तो मुहुत्तअंते कमसो पुरिसादिउदयद्धा ॥ ४८३ ॥

अनिवृत्तिकरणप्रथमात् षंढस्त्रियोश्च सदृशी उदयाद्धा ।
ततो मुहूर्तांतः क्रमशः पुरुषाद्युदयाद्धा ॥ ४८३ ॥

जी॰ प्र॰—अनिवृत्तिकरणप्रथमभागप्रथमसमयमादिं कृत्वा षंढस्त्रीवेदयोरुदयाद्धा सदृशी ततः पुंवेदस्य आदिशब्दात् संज्वलनक्रोधादीनां च क्रमशोंऽतर्मुहूर्ताधिका भवंति । द्वादशपुरुषसंबंधिनी रचनेयं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

						२१
					२१	२१
				२१	२१	२१
		४	२१	२१	२१	२१
४	४	२१	२१	२१	२१	२१
२१	२१	२१	२१	२१	२१	२१
षं	स्त्री	पुं	क्रो	मा	मा	लो

स०चं०—अनिवृत्तिकरणके प्रथमभागके प्रथमसमयतैं लगाय नपुंमक स्त्रीवेदका उदयका काल परस्पर समान है अस्तोक है तिसतैं पुरुषवेद संज्वलन क्रोध मान माया लोभका उदय काल अनुक्रमतैं यथासंभव अंतर्मुहूर्तकरि अधिक अधिक जानना ॥ ४८३ ॥

पुरिसोदएण चडिदे बंधुदयाणं च जुगवदुच्छित्ती ।
सेसोदयेण चडिदे उदयदुचरिमम्हि पुरिसबंधछिदी ॥४८४॥

पुरुषोदयेन चटिते बंधोदययोश्च युगपदुच्छित्तिः ।
शेषोदयेन चटिते उदयद्विचरमे पुरुषबंधच्छित्तिः ॥ ४८४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—पुंवेदोदयेन श्रेण्यारूढे पुंवेदस्य बंधव्युच्छित्तिः उदयव्युच्छित्तिश्च द्वे युगपदेव । अथवा चशब्दाद्बंधव्युच्छित्तिः उदयद्विचरमसमये स्यात् । शेषस्त्रीषंढवेदोदयेन श्रेण्यारूढयोरुदयद्विचरमसमये एव पुंवेदबंधव्युच्छित्तिः ॥ ४८४ ॥ तत्र—

स० चं०—पुरुषवेदका उदयसाहित जो श्रेणी चढै ताकैं पुरुषवेदकी बंधव्युच्छित्ति अर उदय व्युच्छित्ति दोनों युगपत् होहैं अथवा चकारतैं बंधकी व्युच्छित्ति उदयका द्विचरम समयविषै होहै । बहुरि शेष स्त्री नपुंसकवेदका उदयसहित जो श्रेणी चढै हैं ताकैं पुरुषवेदकी बंध व्युच्छित्ति तिनवेदकनिके उदय द्विचरमविषैं होहै ॥ ४८४ ॥

पणबंधगम्मि बारस भंगा दो चेव उदयपयडीओ ।
दोउदये चदुबंधे बारेव हवंति भंगा हु ॥ ४८५ ॥

पंचबंधके द्वादश भंगा द्वे चैव उदयप्रकृती ।
द्व्युदये चतुर्बंधे द्वादशैव भवंति भंगा हि ॥ ४८५ ॥

जी० प्र०—पंचबंधकानिवृत्तिकरणे द्वे एवोदयप्रकृती । तत्र भंगा द्वादश भवंति ।

बं ५	चतुर्बंधकेऽपि द्व्युदये भंगा द्वादश खलु	बं ४
१ १ १		१ १ १
१ १ १ १		१ १ १ १

स० चं०—पांच प्रकृतिका जहां बंध पाइए ऐसा अनिवृत्तिकरणविषै दोय उदयप्रकृति हैं तहां च्यारि कषाय तीन वेदनिकरि भंग बारह हैं | १ १ १ / १ १ १ १ | ऐसैं ही च्यारि प्रकृतिका जहां बंध पाइए ऐसे अनिवृत्ति करणविषै भी दोयका उदयरूप स्थानविषैं बारह भंग हैं ॥ ४८५ ॥

कोहस्स य माणस्स य मायालोहाणियट्टिभागम्हि ।
चदुतिदुगेक्कं भंगा सुहुमे एक्को हवे भंगो ॥ ४८६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्रोधस्य च मानस्य च मायालोभानिवृत्तिभागे।
चतुस्त्रिद्विकैकभंगाः सूक्ष्मे एको भवेद्भंगः ॥ ४८६ ॥

जी० प्र०—क्रोधमानमायालोभोदयानिवृत्तिकरणभागेषु चतुस्त्रिद्व्येकबंधकेषु क्रमेण चतुस्त्रिद्व्येकभंगा भवंति । सूक्ष्मसांपराये मोहनीयबंधरहित एको भंगः ॥ ४८६ ॥ अथ सर्वोदयस्थानसंख्यास्तत्प्रतिसंख्याश्चाह—

स० चं०—क्रोध मान माया लोभका उदयरूप अनिवृत्तिकरणके च्यारि भाग जिनविषैं च्यारि तीन दोय एक प्रकृतिनिका बंध पाइए तिनविषै अनुक्रमतैं कषाय बदलनेकी अपेक्षा ही च्यारि तीन दोय एक भंग है अर सूक्ष्मसांपराय मोहनीयका बंधरहित तहां सूक्ष्मलोभका उदयरूपस्थानविषैं एकभंग है ऐसैं ग्यारह भए ॥४८६॥

आगैं सर्व उदयस्थाननिकी वा तिनकी प्रकृतिनिकी संख्या कहैं हैं—

बारससयतेसीदीठाणवियप्पेहिं मोहिदा जीवा।
पणसीदिसदसगेहिं पयडिवियप्पेहिं ओघम्मि ॥ ४८७ ॥

द्वादशशतत्र्यशीतिस्थानविकल्पैर्मोहिता जीवाः।
पंचाशीतिशतसप्तभिः प्रकृतिविकल्पैरोघे ॥ ४८७ ॥

बं ५	बं ४	बं ४	बं ३	बं २	बं १	सू। बं ०
उ २	उ २	उ १	उ १	उ १	उ १	उ १
भ १२	भं १२	भं ४	भं ३	भं २	भं १	भं १

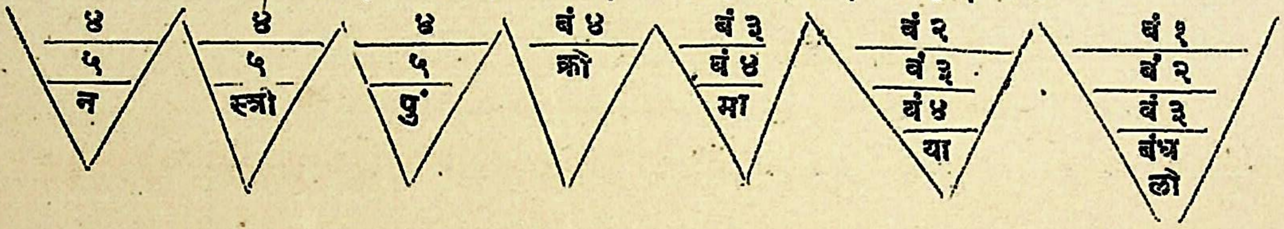

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—ओघे गुणस्थानेषु सर्वमोहनीयोदयस्थानानीमानि—

१०	९	८	७	६	५	४	२
१	६	११	११	११	९	३	१

मिलित्वा त्रिपंचाशत् । प्रत्येकं चतुर्विंशतिभंगानीति तावता संगुण्यैकप्रकृतिकस्यैकादशभिर्युतानि त्र्यशीत्यग्रद्वादशशतानि तत्प्रकृतयोऽमूः १०।५४। ८८।७७।६६।४५।१२।२। मिलित्वा चतुःपंचाशत् त्रिशतं चतुर्विंशत्या संगुण्य ८४९६ एकप्रकृतिकस्यैकादशभिर्युताः सप्ताग्रपंचाशीतिशतानि। एतैः स्थानविकल्पैश्च त्रिकालात्रैलोकोदरवर्तिचराचरजीवा मोहिताः संति॥ ४८७॥ अथापुनरुक्तस्थानसंख्यां तत्प्रकृतीश्चाह—

स० चं०—ओघ कहिए गुणस्थान तिनविषैं सर्व मोहनीयके उदयस्थान दश प्रकृतिरूप एक, नव रूप छह, आठ सात छहरूप ग्यारह ग्यारह, पांच रूप नव, च्यारि रूप तीन, दोय रूप एक मिलिकरि तरेपन भए। तहां एक एक के चौईस चौईस भंग तातैं चौईसकरि तरेपनकौं गुणे बारहसै बहत्तरि भए अर एक प्रकृतिरूप स्थानके ग्यारह भंग ऐसैं सर्व बारहसै तियासी भए, अब तिन स्थाननिकी जे प्रकृति तिनकी अपेक्षा कहिए है—

दश प्रकृतिरूप एक स्थानकी दश प्रकृति, नव रूप छहकी चौवन, आठरूप ग्यारहकी अठ्यासी, सातरूप ग्यारहकी सतहत्तरि, छहरूप ग्यारहकी छ्यासठि, पांचरूप नवकी पैंतालीस, च्यारिरूप तीनकी बारह, दोय रूप एककी दोय सर्व मिले तीनसै चौवन प्रकृति भईं तहां चौईस भंगनिकरि गुणे चौरासीसै छिनवै अर एक प्रकृति रूपके ग्यारह भंग मिलाएं पिच्यासीसै सात ८५०७ सर्व प्रकृति अपेक्षा भेद हो हैं। इन स्थान भेदनिकरि वा प्रकृति भेदनिकरि त्रिकाल संबंधी त्रिलोकके चराचर जीव मोहित हैं॥ ४८७॥ आगैं अपुनरुक्त स्थाननिकी संख्या अर तिनकी प्रकृति कहै हैं—

एक्क य छक्केयारं दससगचदुरेक्कयं अपुणरुत्ता। ६४९
एदे चदुवीसगदा बार दुगे पंच एक्कम्मि॥ ४८८॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकं च षट्कैकादश दशसप्तचतुरेकमपुनरुक्तानि ।
एतानि चतुर्विंशगतानि द्वादश द्विके पंच एकस्मिन् ॥ ४८८ ॥

जी० प्र०—दशकस्थानमेकं नवकानि षट् अष्टकान्येकादश सप्तकानि दशैव सवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोस्तदेकस्य पुनरुक्तत्वात् । षट्कानि सप्तैव सवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोः षट्कद्वयस्य षट्कद्वयेन अवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोस्तु षट्कद्वयस्यापूर्वकरणषट्केन च पुनरुक्तत्वात् । पंचकानि चत्वार्येव सवेदकप्रमत्ताप्रमत्तयोस्तद्द्वये एकस्य अवेदकतत्सप्तसु चतुर्णां च पुनरुक्तत्वात् । चतुष्कमेकमेव अवेदकतद्द्वयस्यापूर्वकरणस्य तेन पुनरुक्तत्वात् । एतानि चत्वारिंशत् प्रत्येकं चतुर्विंशतिभेदानीति तावता गुणयित्वा द्विप्रकृतिकस्य द्वादशभिरेकप्रकृतिकस्य पंचभिश्चापुनरुक्तैर्युतानि भूत्वा ॥ ४८८ ॥

स० चं०—दश प्रकृति रूप एक स्थान, नव रूप छह स्थान, आठ रूप ग्यारह स्थान, सात रूप दशही स्थान पूर्वैं ग्यारह कहे थे तिन विषैं पाहिले कूटनिविषैं सम्यक्त्व मोहनी सहित वेदक सम्यक्त्ववालेकैं प्रमत्त अप्रमत्तके सात प्रकृति रूप दोय स्थान कहे ते दोऊ स्थान समान हैं तातैं इनमैं एक स्थान पुनरुक्त भया तातैं दश ही कहे। बहुरि छह प्रकृति रूप सातही सातही स्थान पूर्वैं ग्यारह कहे थे तिनविषैं वेदक सहित पहिले कूटनिविषैं छह प्रकृति रूप दोय कूट प्रमत्तके कीएं अर दोय अप्रमत्तके कीएं तिनके समानता पाइए है तातैं इनविषैं दोय ही गिने दोय पुनरुक्त कहे अर वेदकरहित पिछिले कूटनिविषैं छह प्रकृति रूप स्थानकौं लीएं एक कूट प्रमत्तका कीया एक अप्रमत्तका कीया सो ए दोऊ कूट अपूर्व करणका छह प्रकृति रूप कूटके समान हैं तातैं दोय कूट पुनरुक्त कहे थे ऐसैं च्यारि कूटनिके च्यारि स्थान पुनरुक्त ते घटाइ दीए। बहुरि पांच प्रकृति रूप च्यारि ही स्थान हैं। पूर्वैं नव कहे थे तिनविषैं वेदक सहित पाहिले कूटनिविषैं एक प्रमत्तका कह्या था एक अप्रमत्तका कह्या था ते दोऊ समान हैं तातैं इनविषैं एक पुनरुक्त कह्या। बहुरि वेदक रहित पिछले कूटनिविषैं एक देश संयतका दोय दोय प्रमत्त अप्रमत्तका अर दोय अपूर्व करणका इन सातनिविषैं दोय दोय प्रमत्त अप्रमत्तके दोय अपूर्व करणके समान हैं तातैं च्यारि पुनरुक्त कहे हैं ऐसैं पंच स्थान पुनरुक्त घटाइ दीए। बहुरि च्यारि प्रकृतिरूप एकही स्थान है पूर्वैं तीन कहे थे तिनविषैं ते तीनोंही समान हैं तातैं दोय पुनरुक्त घटाइ दीए जिनविषैं प्रकृतिनिकी समानता पाइए ऐसे पुनरुक्त स्थान घटाएं इस प्रकार स्थान रहे तिनका जोड दीएं चालीस भए ते एक एक स्थान चौईस चौईस भंगनिकरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संयुक्त हैं तातैं चौईस करि गुणैं नवसै साठि भए। इनविषैं दोय प्रकृति रूप स्थानके चौईस भंग कहे थे तिनविषैं बारह पुनरुक्त छोडि बारह गिने अर एक प्रकृति रूप स्थानके ग्यारह भंग कहे थे तिनविषैं छह पुनरुक्त भंग छोडि पंच गिने ऐसैं सतरह उनविषैं और मिलाइए ॥ ४८८ ॥

णवसयसत्तत्तरिहिं ठाणवियप्पेहिं मोहिदा जीवा।
इगिदालूणत्तरिसयपयाडिवियप्पेहिं णायव्वा ॥ ४८९ ॥

नवशतसप्तसप्ततिभिः स्थानविकल्पैर्मोहिता जीवाः।
एकचत्वारिंशदेकोनसप्ततिशतप्रकृतिविकल्पैर्ज्ञातव्याः॥ ४८९ ॥

जी० प्र०—नवशतानि सप्तसप्तत्यग्राणि तत्प्रकृतयोऽमूः—१० । ५४ । ८८ । ७० । ४२ । २० । ४ । मिलित्वाऽष्टाशीतिद्विशतं चतुर्विंशत्या गुणयित्वा द्विप्रकृतिकस्य चतुर्विंशत्या एकप्रकृतिकस्य पंचभिश्च युताः एकचत्वारिंशदग्रैकोनसप्ततिशतानि। एतैः स्थानविकल्पैः प्रकृतिविकल्पैश्च त्रिकालत्रिलोकोदरवर्तिचराचरसंसारिजीवाः मोहिताः संति ॥ ४८९ ॥ अथ मोहोदयस्थानतत्प्रकृतीर्गुणस्थानेषूपयोगादीनाश्रित्याह—

स० चं०—ऐसैं नवसै सतहत्तरि भेद भए तिनकी प्रकृति कहिए है—दश रूप एक स्थानकी दश, नव रूप छह स्थाननिकी चौवन, आठ रूप ग्यारह स्थाननिकी अठ्यासी, सातरूप दशस्थाननिकी सत्तरि, छह रूप सात स्थाननिकी वियालीस, पांच रूप च्यारि स्थाननिकी वीस, च्यारि रूप एक स्थानकी च्यारि इनका जोड दीएं दोयसै अठ्यासी भईं इनकौं भंग चौईस करि गुणिए तब गुणहत्तरिसै बारा हूवा तिनविषैं दोय प्रकृति रूपके बारह बारह भंग एक एक प्रकृतिके गिने तातैं चौईस अर एक प्रकृति रूप पंच ऐसैं गुणतीस मिलाएं गुणहत्तरिसै इकतालीस ६९४१ भेद भए इन स्थान भेदनिकरि अर प्रकृति भेदनिकरि त्रिकाल संबंधी त्रिलोकवासी चराचर संसारी जीव मोहित हैं ॥४८९॥ आगैं मोहका उदय रूप स्थान वा तिनकी प्रकृति गुणस्थाननिविषैं उपयोगादिककी अपेक्षा करि कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदयट्ठाणं पयडिं सगसगउवजोगजोगआदीहिं ।
गुणयित्ता मेलविदे पदसंखा पयडिसंखा य ॥४९०॥

उदयस्थानं प्रकृतिं स्वकस्वकोपयोगयोगादिभिः ।
गुणयित्वा मेलापिते पदसंख्या प्रकृतिसंख्या च ॥ ४९० ॥

जी० प्र०–'पुव्विल्लेसुवि मिलिदे' इति सूत्रोक्तस्थानसंख्यां तत्प्रकृतिसंख्यां च संस्थाप्य स्वस्वगुणस्थाने संभव्युपयोगयोगैः, आदिशब्दात्संयमदेशसंयमलेश्यासम्यक्त्वैश्च संगुण्य मेलने स्थानसंख्या प्रकृतिसंख्या च स्यात् ॥ ४९० ॥ तद्यथा—

स० चं०–पुव्विल्लिसुवि मिलिदे इत्यादिक गाथाकरि कही स्थाननिकी संख्या अर तिन स्थानकनिविषैं प्रकृतिनिकी संख्या तिनकौं अपने अपने गुणस्थाननिविषैं संभवै ऐसे उपयोग वा योग, आदि शब्दतैं संयम देश संयम लेश्या सम्यक्त्व इनकरि गुणिए बहुरि सबका जोड दीजिए जो प्रमाण होइ तितनी तहां मोहकी स्थान संख्या वा प्रकृति संख्या जाननी ॥ ४९० ॥ सोई कहिए है—

मिच्छदुगे मिस्सतिये पमत्तसत्ते जिणे य सिद्धे य ।
पण छस्सत्त दुगं च य उवजोगा होंति दो चेव ॥ ४९१ ॥

मिथ्याद्विके मिश्रत्रये प्रमत्तसप्तके जिने च सिद्धे च ।
पंच षद् सप्त द्विकं च च उपयोगा भवंति द्वौ चैव ॥ ४९१ ॥

जी० प्र०—उपयोगा मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये त्र्यज्ञानं द्विदर्शनमिति पंच । मिश्रादित्रये त्र्यज्ञानं त्रिदर्शनमिति षद् । प्रमत्तादिसप्तके चतुर्ज्ञानं त्रिदर्शनमिति सप्त । जिने सिद्धे च केवलज्ञानदर्शने इति द्वौ द्वौ । तत्र मिथ्यादृष्टौ स्थानानि प्रकृतयश्च

४ ८	७
९।९	८।८
१०	६
६६	३२

स्वोपयोगैर्गुणिते सति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

स्थानानि चत्वारिंशत्, प्रकृतयश्चत्वारिंशदग्रत्रिशतानि । सासादने स्थानप्रकृतयः

७
८ । ८
६
३२

स्वोपयोगैर्गुणिता विंशतिः षण्णवत्यग्रशतं ।

मिश्रे

७
८ । ८
९
३२

स्वोपयोगैर्गुणिताश्चतुर्विंशतिः, द्वानवत्यग्रशतं । असंयते

७	६
८ । ८	७ । ७
६	८
३२	२८

अष्टचत्वारिंशत् षष्ट्यग्रत्रिशती । देश-संयते

६	५
७ । ७	६ । ६
८	७
२८	२४

अष्टचत्वारिंशत् द्वादशाग्रत्रिशती । प्रमत्तेऽप्रमत्ते च

५	४
६ । ६	५ । ५
७	६
२४	२०

षट्पंचाशत् अष्टाग्रत्रिशती । अपूर्वकरणे

४
५ । ५
६
२०

अष्टाविंशतिः चत्वारिंशदग्रशतं । अनिवृत्तिकरणस्य स्थानं प्रकृती $\frac{१}{२}$ उपयोगैर्गुणिते सप्त चतुर्दश पुनर्द्वादशभंगैर्गुणिते चतुरशीतिः अष्टषष्ट्यग्रशतं । अवेदभागे स्थानं प्रकृतिः $\frac{१}{१}$ उपयोगैर्गुणिते सप्त सप्त । पुनश्चतुर्भंगैर्गुणितेऽष्टाविंशतिरष्टाविंशतिः ।

सूक्ष्मसांपराये स्थानं प्रकृतिः $\frac{१}{१}$ उपयोगैर्गुणिते सप्त सप्त । अत्रापूर्वकरणांतं स्थानानि प्रकृतीश्चैकीकृत्य चतुर्विंशत्या संगुण्य तत्र च स्थानेष्वनिवृत्तिकरणाद्येकान्नविंशत्यग्रशतस्थानानि प्रकृतिषु त्र्यग्रद्विशतं प्रकृतीश्च क्षेपं कुर्यात् ।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गु		८ मि	४ सा	मि ४	८ अ	८ दे	८ प्र	८ अ	४ अ	१ अ	अ १	१ सू
प्र		६८	३२	३२	६०	५२	४५	४५	२०	२	१	१
उ		५	५	६	६	६	७	७	७	७	७	७
गु	वि	४०	२०	२४	४८	४८	५६	५६	२८	७	७	७
प्र०	वि	३४०	१६०	१९२	३६०	३१२	३०८	३०८	१४०	१५	७	७

स० चं०—उपयोग है सो मिथ्यादृष्ट्यादिक दोय गुणस्थाननिविषैं तीन अज्ञान दोय दर्शन ऐसैं पांच हैं। मिश्रादिक तीनविषैं तीन ज्ञान तीन दर्शन ऐसैं छह हैं प्रमत्तादिक सातविषै च्यारि ज्ञान तीन दर्शन ऐसैं सात हैं सयोगी अयोगी जिनविषैं वा सिद्धविषैं केवलज्ञान केवलदर्शन ए दोय हैं तहां मिथ्यादृष्टिविषैं पहले कूटनिकरि एक तौ दश प्रकृतिरूप अर दोय नव नव रूप अर एक आठ रूप ए च्यारि स्थान हैं। तिनकी प्रकृतिनिका जोड छत्तीस भया। बहुरि पिछले कूटनिकरि नव रूप एक अर आठ आठ रूप दोय अर सात रूप एक ऐसैं च्यारि स्थान तिनकी बत्तीस प्रकृति इनकौं मिलाएं आठ स्थान अरसठि प्रकृति तिनकौं पांच उपयोगकरि गुणैं चालीस स्थान तीनसै चालीस प्रकृति हो हैं। बहुरि सासादनविषैं एक नव रूप अर दोय आठ आठ रूप अर एक सात रूप ऐसैं च्यारि स्थान बत्तीस प्रकृति तिनकौं पंच उपयोग करि गुणैं वीस स्थान एकसौ साठि प्रकृति हो हैं। बहुरि मिश्रविषैं एक नव रूप अर दोय आठ आठ रूप अर एक सात रूप ऐसैं च्यारि स्थान तिनकी बत्तीस प्रकृति इनकौं छह उपयोग करि गुणे चौईस स्थान एकसौ वाणवै प्रकृति हो हैं। बहुरि असंयतविषैं पहिले कूटनिकरि नव रूप एक अर आठ आठ रूप दोय अर सात रूप एक ऐसैं च्यारि स्थान तिनकी वत्तीस प्रकृति अर पिछले कूटनिकरि आठ रूप एक अर सात सात रूप दोय अर छह रूप एक ऐसैं च्यारि स्थान तिनकी अट्ठाईस प्रकृति इनकौं मिलाए आठ स्थान साठि प्रकृति तिनकौं छह उपयोग करि गुणैं अडतालीस स्थान तीनसै साठि प्रकृति हो हैं। बहुरि देशसंयतविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पहिले कूटनिकरि एक आठ रूप अर दोय सात सात रूप अर एक छह रूप असैं च्यारि स्थान अट्ठाईस प्रकृति पिछले कूटनिकरि एक सात रूप अर दोय छह छह रूप अर एक पंच रूप असैं च्यारि स्थान चौईस प्रकृति मिलाएतैं आठ स्थान बावन प्रकृति तिनकौं छह उपयोग करि गुणैं अडतालीस स्थान तीनसै बारा प्रकृति हो हैं। बहुरि प्रमत्तविषैं वा अप्रमत्तविषैं पहिले कूटानिकरि एक सात रूप अर दोय छह छह रूप अर एक पांच रूप असैं च्यारि स्थान चौईस प्रकृति पिछले कूटनिकरि एक एक छह रूप अर दोय पांच पांच रूप अर एक च्यारि रूप असैं च्यारि स्थान वीस प्रकृति मिलाएतैं आठ स्थान चवालीस प्रकृति तिनकौं सात उपयोगनिकरि गुणैं छप्पन छप्पन स्थान तीनसै आठ तीनसै आठ प्रकृति हो हैं। बहुरि अपूर्वकरणविषैं छह रूप अर पांच पांच रूप दोय अर च्यारि रूप एक असैं च्यारि स्थान वीस प्रकृति तिनकौं सात उपयोगनिकरि गुणै अठाईस स्थान एकसौ चालीस प्रकृति हो हैं। इन सवनिका जोड दीए ४० २० २४ ४८ ४८ ५६ ५६ २८। तीनसौं वीस स्थान भए तिनकौं चौवीस भंगनिकरि गुणै छिहत्तरिसै असी स्थान भए। बहुरि प्रकृति सर्व ३४० १६० ११२ ३६० ३१२ ३०८ ३०८ १४० मिलि इकईससै वीस भई। तिनकौं चौवीस भंगनिकरि गुणै पचास हजार आठसै असी प्रकृति भई। बहुरि आनिवृत्तिकरण विषैं दोय प्रकृति रूप एक स्थान तिनकौं सात उपयोगानिकरि गुणै स्थान सात प्रकृति चौदह होंइ तिनकौं बारह भंगनिकरि गुणै चौरासी स्थान एकसौ अडसठि प्रकृति हो हैं। बहुरि अवेद भागरूप अनिवृत्ति करणविषैं एक प्रकृति रूप एक स्थान तिनकौं सात उपयोगकरि गुणै सात स्थान सात प्रकृति तिनकौं च्यारि भंगनिकरि गुणै अठाईस स्थान अठाईस प्रकृति हो हैं। बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं एक प्रकृति रूप एक स्थान तिनकौं सात उपयोगनिकरि गुणै सात स्थान सात प्रकृति इहां भंग एकही है असैं इनका जोड दीएं ८४। २८। ७। एकसौ उगणीस स्थान अर १६८ २८ ७ दोयसै तीन प्रकृति हो हैं। इनकौं पूर्वैं अपूर्वकरण पर्यंत कहे स्थान प्रकृति तिन विषैं मिलाइए॥४९१॥

णवणउदिसगसयाहियसत्तसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ठाणवियप्पे जाणसु उवजोगे मोहणीयस्स ॥ ४९२ ॥

नवनवतिसप्तशताधिकसप्तसहस्रप्रमाणमुदयस्य ।
स्थानविकल्पा जानीहि उपयोगे मोहनीयस्य ॥ ४९२ ॥

जी० प्र०—तत्रोपयोगाश्रितमोहनीयोदयस्थानविकल्पा नवनवत्यग्रसप्तशताधिकसप्तसहस्राणि जानीहि ७७९९ ॥ ४९२ ॥

सं० च०—ऐसैं उपयोगका आश्रय करि मोहनीयके उदय स्थानके भेद निन्याणवै अधिक सातसै संयुक्त सात हजार जानहु ७७९९ ॥ ४९२ ॥

एक्कावण्णसहस्सं तेसीदिसमण्णियं वियाणाहि ।
पयडीणं परिमाणं उवजोगे मोहणीयस्स ॥ ४९३ ॥

एकपंचाशत्सहस्रं त्र्यशीतिसमन्वितं विजानीहि ।
प्रकृतीनां परिमाणमुपयोगे मोहनीयस्य ॥ ४९३ ॥

जी० प्र०—उपयोगाश्रितमोहनीयप्रकृतिपरिमाणं च त्र्यशीतिसमन्वितैकपंचाशत्सहस्राणि जानीहि ५१०८३ ॥४९३॥ अथ योगमाश्रित्याह—

सं० च—बहुरि उपयोग आश्रय करि मोहनीके प्रकृतिनिका प्रमाण इकावन हजार तियासी जानहु ५१०-८३ ॥ ४९३ ॥ आगै योग आश्रय करि कहै हैं—

तिसु तेरं दस मिस्से णव सत्तसु छट्ठयम्मि एक्कारा ।
जोगिम्मि सत्त जोगा अजोगिठाणं हवे सुण्णं ॥ ४९४ ॥

त्रिषु त्रयोदश दश मिश्रे नव सप्तसु षष्ठे एकादश ।
योगिनि सप्त योगा अयोगिस्थानं भवेत् शून्यम् ॥ ४९४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—योगाः मिथ्यादृष्टिसासादनासंयतेषु त्रयोदश त्रयोदश । मिश्रे दश । देशसंयतादिषु सप्तसु नव नव । प्रमत्त एकादश । सयोगे सप्त । अयोगे शून्यं भवेत् ॥ ४९४ ॥ अथ मिश्रयोगयुक्तकेवलपर्याप्तयोगयुक्तगुणस्थानानि विशेषयति—

सं० च०—योग मिथ्यादृष्टि सासादन असंयतविषैं तेरह तेरह, मिश्रविषैं दश, देशसंयतादिक सप्तनिविषैं नव नव, प्रमत्तविषैं ग्यारह, सयोगी विषैं सात, अयोगी विषैं शून्य है ॥४९४॥ आगैं मिश्रयोग युक्त अर केवल पर्याप्त योग युक्त गुणस्थान तिनकौं विशेष करि कहै हैं—

मिच्छे सासण अयदे पमत्तविरदे अपुण्णजोगगदं ।
पुण्णगदं च य सेसे पुण्णगदे मेलिदं होदि ॥ ४९५ ॥

मिथ्ये सासने अयते प्रमत्तविरते अपूर्णयोगगतं ।
पूर्णगतं च च शेषे पूर्णगते मिलितं भवति ॥ ४९५ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ सासादने असंयते प्रमत्तविरते चेति चतुर्गुणस्थानेषु अपर्याप्तयोगगतं पर्याप्तयोगगतं च मिलितं स्थानप्रमाणं प्रकृतिप्रमाणं च भवति । शेषगुणस्थानेषु केवलपर्याप्तयोगगतमेव तद्द्वयं भवति । तद्यथा—

मिथ्यादृष्टौ स्थानप्रकृतयः

८	
९	९
१०	
३६	

स्वयोगैर्गुणिता द्वापंचाशत्, अष्टषष्ट्यग्रचतुःशतानि । विसंयोजितानंतानुबंधिन्यंतर्मुहूर्ते मरणाभावात्तत्पर्याप्तदशयोगैर्गुणिताः स्थानप्रकृतयः

७	
८	८
९	
३२	

चत्वारिंशत् विंशत्यग्रत्रिशती मिलित्वा स्थानानि द्वानवतिः प्रकृतयोऽष्टाशीत्यग्रसप्तशती । सासादने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थानप्रकृतयः [४ / ३२] वैक्रियिकमिश्रस्य पृथग्वक्ष्यतीति द्वादशभिर्गुणिता अष्टचत्वारिंशत् चतुरशीत्यग्रत्रिशती। मिश्रे [७ / ८ । ८ / ९ / ३२] दशभिर्गुणिताश्चत्वारिंशत् विंशत्यग्रत्रिशती। असंयते [७ / ८ । ८ / ९ / ३२ ‖ ६ / ७ । ७ / ८ / २८] कार्मणौदारिकमिश्रवैक्रियिकमिश्राणां पृथग्वक्ष्यतीति दशभिर्गुणिता अशीतिः षट्छती। देशसंयते [८ / ५२] नवभिर्गुणिता द्वासप्ततिरष्टषष्ट्यग्रचतुःशती। प्रमत्तेऽप्रमत्ते च [५ / ६ । ६ / ७ / २४ ‖ ४ / ५ । ५ / ६ / २०] आहारकद्वयस्य पृथग्वक्ष्यतीति नवभिर्गुणिता द्वासप्ततिः षण्णवत्यग्रत्रिशती। अपूर्वकरणे [४ / ५ । ५ / ६ / २०] नवभिर्गुणिताः षट्त्रिंशदशीत्यग्रशतं। एतावत्पर्यंतं सर्वत्र स्थानप्रकृतीनां गुणाकारश्चतुर्विंशतिः। अनिवृत्तिकरणसवेदभागे [१ / २] नवभिर्गुणिता नवाष्टादश। गुणाकारो द्वादश। अवेदभागे [१ / १] तथा नव नव गुणाकारश्चत्वारः। सूक्ष्मसांपरायेऽपि [१ / १] तथा नव नव गुणाकार एकः ॥ ४९५ ॥ अथापनीतयोगानां विशेषं गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं सासादनविषैं असंयतविषैं प्रमत्तविरतिविषैं इनि च्यारि विषैं अपर्याप्त योगकौं प्राप्त अर पर्याप्त योगकौं प्राप्त मिलाइकरि स्थान प्रमाण अर प्रकृति प्रमाण हो है। बहुरि अवशेष गुणस्थाननिविषैं केवल पर्याप्त योगहीकौं प्राप्त स्थान प्रमाण वा प्रकृति प्रमाण हो है। सोई कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यादृष्टिविषैं पहिले कूटनिकरि स्थान च्यारि प्रकृति छत्तीस

८
९ ९
१०
३६

तिनकौं तेरह जोगनिकरि गुणै बावन स्थान च्यारिसै अडसठि प्रकृति हो हैं। बहुरि अनंतानुबंधीका विसंयोजन रूप अंतर्मुहूर्तविषैं मरण नाहीं तातैं पिछले कूटनिकरि च्यारिस्थान बत्तीस प्रकृति

७
८ ८
९
३२

तिनकौं दश जोगनिकरि गुणै स्थान चालीस प्रकृति तीनसौ वीस हो हैं बहुरि सासादनविषैं स्थान च्यारि प्रकृति बत्तीस

७
८ ८
९
३२

तिनकौं वैक्रियिक मिश्रका जुदा कहिएगा तातैं बारहयोगनि करि गुणै स्थान अडतालीस प्रकृति तीनसै चौरासी हो हैं। बहुरि मिश्रविषैं स्थान च्यारि प्रकृति बत्तीस

७
८ ८
९
३२

तिनकौं दश योगनिकरि गुणै स्थान चालीस प्रकृति तीनसै वीस हो हैं। बहुरि असंयत विषैं आठ स्थान साठि प्रकृति

७	६
८ ८	७ ७
९	८
३२	२८

तिनकौं कार्माण औदारिक मिश्र वैक्रियिक मिश्रका जुदा कहिएगा तातैं दश योगनिकरि गुणै स्थान अस्सी प्रकृति छस्सौ हो हैं। बहुरि देशसंयतविषै स्थान आठ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

प्रकृति बावन

६	५
७ ७	६ ६
८	७
२८	२४

तिनकौं नव योगनिकरि गुणैं स्थान बहत्तरि प्रकृति च्यारसै अडसठि हो हैं, बहुरि प्रमत्तविषैं अप्रमत्तविषैं स्थान आठ प्रकृति चवालीस

५	४
६ ६	५ ५
७	६
२४	२०

तिनकौं आहारक द्विकका जुदा कहिएगा तातैं नवयोगनिकरि गुणैं स्थान बहत्तरि बहत्तरि प्रकृति तीनसै छिनवै तीनसै छिनवै होहैं। बहुरि अपूर्वकरणविषैं च्यारि स्थान वीस प्रकृति

४
५ ५
६
२०

तिनकौं नव योगनिकरि गुणै स्थान छत्तीस प्रकृति एकसौ असी होहैं। इहां पर्यंत स्थान वा प्रकृति जितने होहिं तिनकौं चौवीस भंगनिकरि गुणिए। बहुरि अनिवृत्ति करणविषैं सवेदभागविषै एक स्थान दोय प्रकृति इनकौं नव योगनिकरि गुणै नव स्थान अठारह प्रकृति हो हैं इनकौं बारह भंगनिकरि गुणिए। अर अवेदभागविषैं एकस्थान एक प्रकृति इनकौं नव योगनिकरि गुणे नव स्थान नव प्रकृति हो हैं इनकौं च्यारि भंगनिकरि गुणिए। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं एक स्थान एक प्रकृति इनकौं नव योगनिकरि गुणैं नव स्थान नव प्रकृति होहैं इनकौं एक भंगकरि गुणिए॥ ४९५॥ आगैं जुदे राखे योग तिनका विशेष दोय गाथानिकरि कहैं हैं

सासणअयदपमत्ते वेगुव्वियमिस्स तं च कम्मायियं।
ओरालमिस्स हारे अडसोलडवग्ग अड्डवीससयं॥ ४९६॥

६५४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सासनायतप्रमत्ते वैगूर्विकमिश्रं तच्च कार्मणं ।
औरालमिश्रमाहारे अष्टषोडशाष्टवर्गं अष्टविंशशतं ॥ ४९६ ॥

जी० प्र०——सासादनस्य वैक्रियिकमिश्रयोगे स्थानान्यष्टवर्गमात्राणि प्रकृतयो द्वादशाग्रपंचशती । कुतः ? षंढवेदवर्जितकूटस्य——

२	१	१	०
२ । २	२ । २	२ । २	२ । २
० । १ । १	० १ १	० । १ । १	० । १ । १
४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४	४ ४ ४ ४

संजातचतुःस्थानद्वात्रिंशत्प्रकृतीनां

७
८ । ८
९
३२

षोडशभंगैर्गुणितत्वात् । असंयतस्य वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोगयोः स्थानानि षोडशवर्गमात्राणि प्रकृतयो विंशत्यग्रैकान्नविंशतिशती । कुतः ? स्त्रीवेदवर्जिततत्कूटसंजाताष्टस्थानषष्टिप्रकृतीनां

७	६
८ । ८	७ । ७
९	८
३२	२८

षोडशभंगैर्योगयुग्मेन च गुणितत्वात् ।

पुनः असंयतस्यौदारिकमिश्रयोगे स्थानान्यष्टवर्गमात्राणि प्रकृतयोऽशीत्यग्रचतुःशती, कुतः ? स्त्रीषंढवेदवर्जितासंयताष्टकूटसंजाताष्टस्थानषष्टिप्रकृतीनां

७	६
८ । ८	७ । ७
९	८
३२	२८

अष्टभंगैर्गुणितत्वात् । प्रमत्तसंयतस्याहारकद्वये स्थानान्यष्टाविंशत्यग्रशतं प्रकृतयश्चतुरग्रसप्तशती । कुतः ? स्त्रीषंढवर्जिततत्कूटजाताष्टस्थानचतुश्चत्वारिंशत्प्रकृतीनां——

५	४
६ । ६	५ । ५
७	६
२४	२०

अष्टभंगैर्योगयुग्मेन च गुणितत्वात् ॥ ४९६ ॥ अथ तमपनीतवेदं स्वयं निषेधयति——

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—सासादनका वैक्रियिक मिश्रयोगविषैं स्थान अष्टका वर्ग चौसठि तीहिं प्रमाण है अर प्रकृति पांचसै बारह हैं। कैसें? च्यारि कूट सासादनविषैं कीए थे तिनविषैं तीन वेदनिविषैं एकका उदय कह्या था इहां नपुंसक वेद विना दोय ही वेदनिविषैं एकका उदय जानना सो नव रूप एक अर आठ आठ रूप दोय अर सात रूप एक तिनके च्यारि स्थान अर बत्तीस प्रकृति तिनकौं च्यारि कषाय दोय वेद दोय युगलनितैं भए सोलह भंग तिनकरि गुणे चौसठि स्थान पांचसै बारह प्रकृति होहैं। बहुरि असंयतका वैक्रियिक मिश्र अर कार्माण योगनिविषैं पूर्वोक्त आठ कूटनिविषैं स्त्री वेद विना दोय वेदनिविषैं एकका उदय जानना तातैं तिन कूटनिविषैं आठ स्थान साठ प्रकृति तिनकौं च्यारिकषाय स्त्रीवेदविना दोय वेद दोय जुगलनितैं भए सोलह भंग तिनकरि गुणे अर दोय योगनिकरि गुणे सोलह वर्गप्रमाण दोयसै छप्पन्न स्थान होहैं अर प्रकृति उगणीससै वीस हो हैं। बहुरि असंयतका औदारिक मिश्र योगविषैं स्त्रीवेद नपुंसक वेद दोऊ नाहीं, तातैं पूर्वोक्त आठ कूटनिविषैं तीन तीन जायगा वेद लिखे थे तहां एक एक जायगा लिखना। तहां आठ कूटनिके आठ स्थान साठि प्रकृति तिनकौं च्यारि कषाय एक वेद दोय जुगलनितैं भए आठ भंग तिनकरि गुणिए एक योगकरि गुणिए ऐसैं आठ वर्गप्रमाण चौसठि स्थान हैं अर च्यारिसै असी प्रकृति हैं। बहुरि प्रमत्तसंयतका आहारक आहारक मिश्र रूप दोय योगनिविषै भी स्त्री नपुंसक वेदरहित आठ कूटनिके आठ स्थान चवालीस प्रकृतिनिकौं आठ भंगनिकरि गुणे अर आहारक आहारक मिश्र योगनिकरि गुणे एकसौ अट्ठाईस स्थान अर सातसै च्यारि प्रकृति होहैं॥ ४९६॥ आगैं तिस घटाया वेदकौं आप ग्रंथकर्ता निषेधै है—

णत्थि णउंसयवेदो इत्थीवेदो णउंसइत्थिदुगे।
पुव्वुत्तपुण्णजोगगचदुसुट्ठाणेसु जाणेज्जो॥ ४९७॥

नास्ति नपुंसकवेदः स्त्रीवेदो नपुंसकस्त्रीद्विकं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वोक्तापूर्णयोगगचतुर्षु स्थानेषु ज्ञातव्यं ॥ ४९७ ॥

जी० प्र०—पूर्वोक्तापूर्णयोगगतचतुःस्थानेषु प्रथमे सासादने वैक्रियिकमिश्रकाययोगे नपुंसकवेदोदयो नास्ति सासादनस्य नरकेऽनुत्पत्तेः। असंयते वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोगयोः स्त्रीवेदोदयो नास्ति असंयतस्य स्त्रीष्वनुत्पत्तेः। पुनः असंयतौदारिकमिश्रयोगे प्रमत्ताहारकयोश्च स्त्रीषंढवेदौ न स्तः, इति ज्ञातव्यं। अत्र मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वकरणपर्यंतानि स्थानान्येकीकृत्य चतुर्विंशतिगुणकारेण संगुण्य तत्र सवेदानिवृत्तिकरणादीनां त्रिपंचाशदुत्तरशतं क्षेपं कृत्वा पुनः अपर्याप्तसासादनासंयतप्रमत्तानां द्वादशाग्रपंचशते मिलिते—

स० चं०—पूर्वोक्त अपर्याप्त योगकौं प्राप्त च्यारि स्थान तिनविषै सासादनका वैक्रियिक मिश्रयोगविषै नपुंसक वेद नाहीं जातैं सासादनवाला मरि नरक विषै उपजै नाहीं। बहुरि असंयतका वैक्रियिक मिश्र वा कार्माण योगविषैं स्त्री वेद नाहीं जातैं असंयतवाला मरि स्त्रीविषैं उपजै नाहीं। बहुरि असंयतका औदारिक मिश्र योगविषैं अर प्रमत्तका आहारक दोय योगनिविषैं स्त्री नपुंसक दोय वेद नाहीं ऐसा जानना। इहां मिथ्यादृष्ट्यादिक अपूर्वकरण पर्यंत जेते स्थान होंइ तिनकौं एकटेकरि चौवीस भंगनिकरि गुणिए जो प्रमाण होइ तिसविषैं अनिवृत्तिका सवेद अवेद भागका वा सूक्ष्म सांपरायका एकसौ तरेपन स्थान मिलाइए अर अपर्याप्त सासादन असंयत प्रमत्त का पीछे कहे पांचसै बारह स्थान ते मिलाइए सबका जोड दीजए॥ ४९७॥

तेवण्णणवसयाहियबारसहस्सप्पमाणमुदयस्स।
ठाणवियप्पे जाणसु जोगं पडि मोहणीयस्स ॥ ४९८॥

त्रिपंचाशन्नवशताधिकद्वादशसहस्रप्रमाणमुदयस्य।
स्थानविकल्पान् जानीहि योगं प्रति मोहनीयस्य ॥ ४९८ ॥

जी० प्र०—योगाश्रितसर्वमोहनीयोदयस्थानानि त्रिपंचाशदग्रनवशताधिकद्वादशसहस्राणीति जानीहि १२९५३। प्रकृतयोऽपि मिथ्यादृष्ट्याद्यपूर्वकरणांता एकीकृत्य चतुर्विंशत्या गुणयित्वाऽनिवृत्तिकरणादीनामेकषष्ट्यग्रद्विशती क्षेपं कृत्वा (एकान्नत्रिंशदुत्तरपंचाशीतिसहस्राणि भवंति। ८५०२९ ॥ ४९८ ॥ अथ तेषु निक्षेपयन्नाह) पुनस्तत्र—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust Gangotri

स० चं०—ऐसैं योगका आश्रयकरि सर्व मोहनीयके उदय स्थान तरेपन सहित नवसै अधिक बारह हजार जानहु १२९५३ बहुरि प्रकृति भी मिथ्यादृष्ट्यादिक अपूर्वकरण पर्यंत सर्व प्रकृति एकठी करि तिनकौं चौईस भंगनिकरि गुणै जो प्रमाण होइ तिसविषैं अनिवृत्तिकरणके सवेद अवेद भाग वा सूक्ष्म सांपरायकी दोयसै इकसठि प्रकृति मिलाइए ॥ ४९८ ॥ बहुरि तहां कहा करिए ? सो कहैं हैं—

बिदिये बिगिपणमयदे खदुणवएक्कं खअट्ठचउरो य ।
छट्ठे चउसुण्णसगं पयडिवियप्पा अपुण्णम्हि ॥ ४९९ ॥

द्वितीये द्व्येकपंचकमयते खद्विनवैकं खाष्टचत्वारश्च ।
षष्ठे चतुःशून्यसप्त प्रकृतिविकल्पा अपूर्णे ॥ ४९९ ॥

जी० प्र०—सासादने वैक्रियिकमिश्रे क्रमेण प्रकृतिविकल्पाः द्व्येकपंच ५१२ । असंयते वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोः खद्विनवैकं १९२० । चशब्दादौदारिकमिश्रे खाष्टचत्वारि ४८० । प्रमत्ते आहारकद्वये चतुःशून्यसप्त ७०४ चैकीकृत्य निक्षिप्तेषु—

स०चं०—सासादनका वैक्रियिक मिश्रविषैं प्रकृति विकल्प दोय एक पंच अंक रूप पांचसौ बारह५१२, असंयतका वैक्रियिक मिश्र कार्माण विषैं बिंदी दोय नव एक अंक रूप उगणीससै वीस, चकारतैं असंयतका औदारिक मिश्रयोगविषैं बिंदी आठ च्यारि अंक रूप च्यारिसै असी प्रमत्तका आहारक द्विकविषैं च्यारि शून्य सात अंक रूप सातसै च्यारि है सो इनका जोड देय तिनहीमैं मिलाइए ॥ ४९९ ॥

पणदालछस्सयाहियअट्ठासीदीसहस्समुदयस्स ।
पयडीणं परिसंखा जोगं पडि मोहणीयस्स ॥ ५०० ॥

पंचचत्वारिंशत्षट्शताधिकाष्टाशीतिसहस्रमुदयस्य ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृतीनां परिसंख्या योगं प्रति मोहनीयस्य ॥ ५०० ॥

जी० प्र०—योगाश्रितमोहनीयोदयप्रकृतिविकल्पाः पंचचत्वारिंशदग्रषट्छताधिकाष्टाशीतिसहस्राणि ८८६४५ ॥ ५०० ॥ अथ संयममाश्रित्याह—

स० चं०—ऐसैं योग आश्रयकरि मोहनीयके सर्व उदय प्रकृतिनिके भेद पैंतालीस सहित छसै अधिक अठ्यासी हजार हैं ८८६४५ ॥ ५०० ॥ आगैं संयमका आश्रय करि कहिए है—

तेरससयाणि सत्तरिसत्तेव य मेलिदे हवंतित्ति ।
ठाणवियप्पे जाणसु संजमलंबेण मोहस्स ॥ ५०१ ॥

त्रयोदशशतानि सप्ततिसप्तैव च मिलिते भवंतीति ।
स्थानविकल्पा जानीहि संयमालंबेन मोहस्य ॥ ५०१ ॥

जी० प्र०—संयमावलंबेन मोहनीयस्योदयस्थानविकल्पास्त्रयोदशशतानि सप्तसप्तत्यग्राणि मिलित्वा भवंतीति जानीहि १३७७ ॥ तद्यथा—प्रमत्तेऽप्रमत्ते च सामायिकादित्रयं प्रतिस्थानानि चतुर्विंशतिः । प्रकृतयो द्वात्रिंशदग्रशतं । अपूर्वकरणे सामायिकादिद्वयं प्रति स्थानान्यष्टौ । प्रकृतयश्चत्वारिंशत् । एतेषु त्रिषु गुणकारश्चतुर्विंशतिः । अनिवृत्तिकरणेऽपि तद्द्वयं प्रति सवेदभागे स्थाने द्वे । प्रकृतयश्चतस्रः । गुणकारो द्वादश । अवेदभागे स्थाने द्वे । प्रकृती अपि द्वे । गुणकारश्चत्वारः । सूक्ष्मसांपराये तत्संयमं प्रति स्थानमेकं, प्रकृतिरेका, गुणकारोऽप्येकः । अत्र तावत्प्रमत्तादित्रयस्य स्थानान्येकीकृत्य चतुर्विंशत्या संगुणय्य तत्रानिवृत्तिकरणादीनां त्रयस्त्रिंशत्तः प्रक्षेपे कृते पूर्वोक्तसंख्यानि भवंति १३७७ ॥ ५०१ ॥

स० चं०—संयमके अवलंबन करि मोहनीयके उदय स्थानके भेद मिलाएं तेरहसै सतहत्तरि हैं ते जानहु सोई कहिए है—प्रमत्त अप्रमत्तविषैं सामायिकादिक तीन संयम हैं तिनकरि आठ आठ स्थानकनिकौं गुणे चौवीस चौवीस स्थान हो हैं अर तिन स्थाननिकी प्रकृति चवालीस तिनकौं गुणे एकसौ बत्तीस एकसौ बत्तीस प्रकृति हो हैं। बहुरि अपूर्वकरण विषैं सामायिकादिक दोय संयम तिनकरि तहांके च्यारि स्थान गुणे आठ स्थान हो हैं अर वीस प्रकृतिनिकौं गुणे चालीस प्रकृति हो हैं सो इनकौं तो चौवीस भंगनिकरि गुणिए बहुरि अनिवृत्ति करणका सवेद ६५१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भागविषैं एक स्थान दोय प्रकृति तिनकौं दोय संयमकरि गुणै दोय स्थान च्यारि प्रकृति होंइ इनकौं बारह भंगनिकरि गुणिए अवेद भागविषैं एक स्थान एक प्रकृति इनकौं दोय संयम करि गुणै दोय स्थान दोय प्रकृति होंइ इनकौं च्यारि भंगनिकरि गुणिए। बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं संयम एक सो तहां एक स्थान एक प्रकृति ही है भंग भी एक ही है। इहां प्रमत्तादिक तीनके छप्पन स्थानकनिकौं चौवीस करि गुणै तेरासौ चवालीस अर अनिवृत्तिकरणादिक तेतीस मिलाएतैं सततहत्तरि उदय स्थान के भेद हो हैं ॥ ५०१ ॥

तेवण्णतिसदसहियं सत्तसहस्सप्पमाणमुदयस्स ।
पयडिवियप्पे जाणसु संजमलंबेण मोहस्स ॥ ५०२ ॥

त्रिपंचाशत्त्रिशतसहितं सप्तसहस्रप्रमाणमुदयस्य ।
प्रकृतिविकल्पान् जानीहि संयमावलंबेन मोहस्य ॥ ५०२ ॥

जी० प्र०—संयमावलंबेन मोहनीयोदयप्रकृतयोऽपि स्थानवदेकीकृते त्रिपंचाशदग्रत्रिशताधिकसप्तसहस्राणीति जानीहि ॥ ५०२ ॥ अथ गुणस्थानेषु संभवल्लेश्याः प्राह—

स० चं०—संयमके अवलंबन करि मोहनीयका उदय प्रकृति भेद प्रमत्तादिक तीनका तीनसै च्यारिकौं चौवीस करि गुणिए ७२९६ तिनविषैं अनिवृत्तिकरणादिकी सत्तावन मिलाएं तरेपन सहित तीनसै अधिक सात हजार जानहु ७३५३ ॥ ५०२ ॥ आगैं गुणस्थानविषैं संभवती लेश्या कहिए है—

मिच्छचउक्के छक्कं देसतिये तिण्णि होंति सुहलेस्सा ।
जोगित्ति सुक्कलेस्सा अजोगिठाणं अलेस्सं तु ॥ ५०३ ॥

मिथ्यचतुष्के षट्कं देशत्रये तिस्रो भवंति शुभलेश्याः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योगी इति शुक्ललेश्या अयोगिस्थानमलेश्यं तु ॥ ५०३ ॥

जी० प्र०——मिथ्यादृष्ट्यादिचतुर्गुणस्थानेषु प्रत्येकं लेश्याः षड् भवंति । देशसंयतादित्रये शुभा एव तिस्रः । उपर्यपूर्वकरणादिसयोगपर्यंतमेका शुभलेश्यैव । तु—पुनः अयोगिगुणस्थानं लेश्यारहितं ॥ ५०३ ॥ उक्तलेश्यामाश्रित्य तत्संस्थानप्रकृतिसंख्ये गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं प्रत्येक छह लेश्या हैं । देशसंयतादिक तीनविषैं तीन शुभ लेश्या ही हैं । ऊपरि अपूर्वकरणादि सयोगी पर्यंत विषैं शुक्ल लेश्या ही है अयोगी गुणस्थान लेश्यारहित है ॥ ५०३ ॥ कही लेश्याका आश्रयकरि मोहके स्थान वा प्रकृति तिनकी संख्या दोय गाथानिकरि कहै हैं——

पंचसहस्सा बेसयसत्ताणउदी हवंति उदयस्स ।

ठाणवियप्पे जाणसु लेस्सं पडि मोहणीयस्स ॥ ५०४ ॥

पंचसहस्राणि द्विशतसप्तनवतिः भवंति उदयस्य ।

स्थानविकल्पा जानीहि लेश्यां प्रति मोहनीयस्य ॥ ५०४ ॥

जी० प्र०——इमा गुणस्थानेषूक्तलेश्या आश्रित्य तावत्सर्वमोहनीयोदयस्थानानि सप्तनवत्यग्रद्विशताधिकपंचसहस्राणीति जानीहि ५२९७ ॥

स० चं०—ए कहीं गुणस्थाननिविषैं लेश्या तिनकौं आश्रय करि सर्व मोहनीयके उदय स्थान पांच हजार दोय सै सत्याणवै हे शिष्य तू जानि ५२९७ ॥ ५०४ ॥

अट्ठत्तीससहस्सा बेण्णिसया होंति सत्ततीसा य ।

पयडीणं परिमाणं लेस्सं पडि मोहणीयस्स ॥ ५०५ ॥

अष्टत्रिंशत्सहस्राणि द्विशतानि भवंति सप्तत्रिंशच्च ।

प्रकृतीनां परिमाणं लेश्यां प्रति मोहनीयस्य ॥५०५ ॥ ६६१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

जी० प्र०—लेश्यां प्रति मोहनीयोदयप्रकृतिपरिमाणं सप्तत्रिंशदग्रद्विशताधिकाष्टात्रिंशत्सहस्राणि भवंति ३८२३७ । तद्यथा—मिथ्यादृष्टौ स्थानानि दशादीनि चत्वारि (८ । ९।९ । १०) नवादीनि चत्वारि (७ । ८।८ । ९) मिलित्वाष्टौ, षड्लेश्यागुणितान्यष्टचत्वारिंशत्, प्रकृतयोऽष्टषष्टिः षड्लेश्यागुणितान्यष्टाग्रचतुःशती । सासादने स्थानानि नवादीनि चत्वारि (७ । ८।८ । ९) षड्लेश्यागुणितानि चतुर्विंशतिः, प्रकृतयो द्वात्रिंशत्, षड्लेश्यागुणिता द्वानवत्यग्रशतं । मिश्रे स्थानानि नवादीनि चत्वारि (७ । ८।८ । ९) षड्लेश्यागुणितानि चतुर्विंशतिः, प्रकृतयो द्वात्रिंशत्, षड्लेश्यागुणिता द्वानवत्यग्रशतं ।

असंयते स्थानानि नवादीनि चत्वारि (७ । ८।८ । ९) अष्टादीनि चत्वारि (६ । ७।७ । ८) मिलित्वाष्टौ षड्लेश्यागुणितान्यष्टाचत्वारिंशत, प्रकृतयः षष्टिः, षड्लेश्यागुणिताः षष्ट्यग्रत्रिशती । देशसंयते स्थानान्यष्टादीनि चत्वारि (६ । ७।७ । ८) सप्तादीनि चत्वारि (५ । ६।६ । ७) मिलित्वाष्टौ शुभलेश्यात्रयगुणितानि चतुर्विंशतिः, प्रकृतयो द्वापंचाशत्, तत्त्रयगुणिताः षट्पंचाशदग्रशतं । प्रमत्तेऽप्रमत्ते च स्थानानि सप्तादीनि चत्वारि (७ । ६।६ । ७) षट्कादीनि चत्वारि (४ । ५।५ । ६) मिलित्वाष्टौ, तत्त्रयगुणितानि चतुर्विंशतिः । प्रकृतयश्चतुश्चत्वारिंशत्, तत्त्रयगुणिता द्वात्रिंशदग्रशतं । अपूर्वकरणे स्थानानि षट्कादीनि चत्वारि (४ । ५।५ । ६) शुक्ललेश्यागुणितानि चत्वार्येव, प्रकृतयो विंशतिः, तया गुणिता विंशतिरेव । एतावत्पर्यंतं सर्वत्र गुण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कारश्चतुर्विंशतिः। अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे स्थानं तया गुणितमेकं प्रकृती द्वे तथा गुणिते द्वे एव। गुणकारो द्वादश। अवेदभागे स्थानं तया गुणितमेकं प्रकृतिस्तया गुणितैका, गुणकारश्चतुष्कं। सूक्ष्मसांपराये स्थानमेकं, प्रकृतिरेका गुणकारोऽप्येकः। अत्रापूर्वकरणपर्यंतं स्थानानि प्रकृतीश्च मेलयित्वा चतुर्विंशत्या संगुणय तत्र स्थानेष्वनिवृत्तिकरणादीनां स्थानदशके प्रकृतिषु तत्प्रकृत्येकान्नत्रिंशत्के च प्रक्षिप्ते प्रागुक्तलेश्याश्रितमोहनीयस्थानप्रकृतिप्रमाणे स्यातां ॥ ५०५ ॥ अथ सम्यक्त्वमाश्रित्याह—

स० चं०—लेश्या प्रति मोहनीयके उदय प्रकृतिनिका प्रमाण अठतीस हजार दोयसै सैंतीस है ३८२३७। सोई कहिए है—मिथ्यादृष्टिविषैं स्थान दश आदि च्यारि नव आदि च्यारि तिन आठ स्थाननिकौं छह लेश्यानिकरि गुणै अडतालीस स्थान भए अर तिनकी अडसाठि प्रकृतिनिकौं छह लेश्यानिकरि गुणै प्रकृति च्यारिसै आठ भई। बहुरि सासादनविषै नव आदिक च्यारि स्थान ते षट् लेश्याकरि गुणै स्थान चौईस होहैं अर तिनकी बत्तीस प्रकृतिनिकौं गुणै प्रकृति एकसो बाणवै हैं। बहुरि मिश्रविषै स्थान नव आदि च्यारि प्रकृति बत्तीस तिनकौं छह लेश्यानिकरि गुणै स्थान चौईस प्रकृति एकसौ बाणवै हो हैं। बहुरि असंयतविषै स्थान नव आदि च्यारि अष्ट आदि च्यारि ऐसैं आठ अर तिनकौं प्रकृति साठि तिनकौं छह लेश्यानिकरि गुणै स्थान अठतालीस प्रकृति तीनसै साठि होहैं। बहुरि देश संयतविषै स्थान अष्ट आदि च्यारि सप्त आदि च्यारि मिलिकरि स्थान आठ प्रकृति बावन तिनकौं तीन लेश्यानिकरि गुणै स्थान चौईस प्रकृति एकसौ छप्पन होहैं। बहुरि प्रमत्तविषै वा अप्रमत्तविषै स्थान सप्त आदि च्यारि छह आदि च्यारि मिलिकरि स्थान आठ तिनकौं प्रकृति चवालीस तिनकौं तीन लेश्यानिकरि गुणै स्थान चौईस चौईस प्रकृति एक सौ बत्तीस एक सौ बत्तीस हो हैं। बहुरि अपूर्वकरणविषै स्थान छह आदिक च्यारि तिनकौं प्रकृति बीस तिनकौं शुक्ल लेश्याकरि गुणैं स्थान च्यारि प्रकृति बीस होहैं इहां पर्यंत स्थान वा प्रकृतिनिकौं चौवीस करि गुणिए। बहुरि अनिवृत्ति करणविषै सवेद भागविषै स्थान एक प्रकृति दोय तिनकौं शुक्ल लेश्याकरि गुणै स्थान एक प्रकृति दोय इनकौं बारह भंगनिकरि गुणिए। अवेदभागविषै स्थान एक प्रकृति एक शुक्ल लेश्याकरि गुणै भी स्थान एक प्रकृति एक इनकौं च्यारि भंगनिकरि गुणिए बहुरि सूक्ष्मसांपराय विषैं स्थान एक प्रकृति एक शुक्ल लेश्या करि गुणै भी स्थान एक प्रकृति एक इनकौं एक भंग करि गुणिए इहां अपूर्व करण पर्यंत स्थान वा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Narja, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृतिंनिका जोड देय तिनकौं चौवीस करि गुणि बहुरि अनिवृत्ति करणादिकका सतरह स्थान तौ स्थानप्रमाणविषैं अर गुणतीस प्रकृति प्रकृति प्रमाणविषैं मिलाएं पूर्वोक्त स्थान भेद वा प्रकृति भेदका प्रमाण हो है॥ ५०५ ॥ आगैं सम्यक्त्वका आश्रयकरि कहैं हैं—

अट्ठत्तरीहिं सहिया तेरसयसया हवंति उदयस्स ।
ठाणवियप्पे जाणसु सम्मत्तगुणेण मोहस्स ॥ ५०६ ॥

अष्टसप्ततिभिः सहितानि त्रयोदशकशतानि भवंति उदयस्य ।
स्थानविकल्पा जानीहि सम्यक्त्वगुणेन मोहस्य ॥ ५०६ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वगुणेन सह मोहनीयोदयस्थानविकल्पा अष्टासप्तत्यग्रत्रयोदशशतानि १३७८ भवंतीति जानीहि ॥ ५०६ ॥

स० चं०—सम्यक्त्व गुणकरि मोहनीयके उदय स्थानके विकल्प अठहत्तरि सहित तेरासै १३७८ जानहु।५०६।

अट्ठेव सहस्साइं छव्वीसा तह य होंति णादव्वा ।
पयडीणं परिमाणं सम्मत्तगुणेण मोहस्स ॥ ५०७ ॥

अष्टैव सहस्राणि षड्विंशतिस्तथा च भवंति ज्ञातव्याः ।
प्रकृतीनां परिमाणं सम्यक्त्वगुणेन मोहस्य ॥ ५०७ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वगुणेन सह मोहनीयोदयप्रकृतिपरिमाणं अष्टैव सहस्राणि तथा च षड्विंशतिः ८०२६ ज्ञातव्या भवंति । तद्यथा—

असंयते क्षायोपशमिकस्य स्थानानि नवकादीनि चत्वारि | ७ / ८ । ८ / ९ | प्रकृतयो द्वात्रिंशत् । औपशमिकक्षायोपशमिकयोः स्थानान्यष्टकादीनि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चत्वारि चत्वारि | ६ / ७।७ / ८ | ६ / ७।७ / ८ | प्रकृतयः षट्पंचाशत् । देशसंयते क्षायोपशमिकस्य स्थानान्यष्टकादीनि चत्वारि | ६ / ७।७ / ८ | प्रकृतयो ऽष्टाविंशतिः । औपशमिकक्षायिकयोः स्थानानि प्रत्येकं सप्तकादीनि चत्वारि | ५ / ६।६ / ७ | ५ / ६।६ / ७ | प्रकृतयोऽष्टचत्वारिंशत् । प्रमत्तेऽप्रमत्ते च क्षायोपशमिके स्थानानि सप्तकादीनि चत्वारि | ५ / ६।६ / ७ | ५ / ६।६ / ७ | प्रकृतयश्चतुर्विंशतिः । औपशमिकक्षायिकयोः स्थानानि प्रत्येकं षट्कादीनि चत्वारि | ४ / ५।५ / ६ | ४ / ५।५ / ६ | प्रकृतयश्चत्वारिंशत् । अपूर्वकरणे तु न क्षायोपशमिकं । औपशमिकक्षायिकयोः स्थानानि प्रत्येकं षट्कादीनि चत्वारि | ४ / ५।५ / ६ / २० | ४ / ५।५ / ६ / २० | प्रकृतयश्चत्वारिंशत् । एतावत्पर्यंतं सर्वत्र गुणकारश्चतुर्विंशतिः । अनिवृत्तिकरणे औपशमिकक्षायिकयोः स्थानमेकैकं प्रकृती द्वे द्वे । गुणकारो १ १ १ / १ १ १ १ द्वादश । अवेदभागे तयोः स्थानप्रकृती एकैके इति द्वे द्वे गुणकारश्चतुष्कं । सूक्ष्मसांपरायेऽपि तथा स्थानप्रकृती द्वे द्वे गुणकारः सूक्ष्मलोभः । अत्रापूर्वकरणांतं स्थानानि प्रकृतीश्चैकीकृत्य चतुर्विंशत्या गुणयित्वा तत्रानिवृत्तिकरणादेस्तद्गुणकारगुणितस्थानप्रकृतीनां प्रक्षेपे कृते तत्तदुक्तप्रमाणं स्यात् । अत्र प्रकरणे यथा गुणस्थानेषूपयोगयोगसंयमलेश्यासम्यक्त्वान्याश्रित्य मोहनीयोदयस्थानतत्प्रकृतय उक्तास्तथा जीवसमासेषु गत्यादिविशेषमार्गणासु वक्ष्यमाणैकचत्वारिंशज्जीवपदेषु चागमानुसारेण वक्तव्याः ॥ ५०७ ॥ अथ तत्सत्त्वप्रकरणमेकादशगाथासूत्रैराह—

स० चं०—सम्यक्त्व गुणकरि सहित मोहनीयके प्रकृतिनिका प्रमाण आठ हजार छब्बीस जानना ८०२६ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

सोई कहिए है—असंयतविषैं क्षायोपशमिक सम्यक्त्वके स्थान नव आदि च्यारि

<table><tr><td colspan="2" align="center">७</td></tr><tr><td>८</td><td>८</td></tr><tr><td colspan="2" align="center">९</td></tr></table>

तिनकी प्रकृति बत्तीस औपशमिक क्षायिकके स्थान अष्ट आदि च्यारि ८ ७ ७ ६ प्रकृति अट्ठाईस सो दोऊ सम्यक्त्वानिके मिलाएं स्थान आठ प्रकृति छप्पन। बहुरि देश संयतविषैं क्षायोपशम सम्यक्त्वके स्थान अष्ट आदि च्यारि ८ ७ ७ ६ प्रकृति अट्ठाईस औपशमिक वा क्षायिकके जुदे जुदे स्थान सप्त आदि च्यारि ७ ६ ६ ५ प्रकृति चौईस सो दोऊ सम्यक्त्वानिके स्थान आठ प्रकृति अठतालीस। बहुरि प्रमत्तविषैं वा अप्रमत्तविषैं क्षापोशमिकके स्थान सप्त आदिक च्यारि च्यारि ७ ६ ६ ५ तिनकी प्रकृति चौईस चौईस, औपशमिक वा क्षायिकविषैं स्थान छह आदि च्यारि च्यारि ६ ५ ५ ४ तिनकी प्रकृति वीस वीस सो दोऊ सम्यक्त्वनिके स्थान आठ आठ प्रकृति चालीस चालीस। बहुरि अपूर्व करणविषैं क्षायोपशमिक नाहीं औपशमिक क्षायिकविषैं स्थान छह आदि च्यारि ६ ५ ५ ४ तिनकी प्रकृति वीस सो दोऊ सम्यक्त्वानिके स्थान आठ प्रकृति चालीस इहां पर्यंत स्थान वा प्रकृतिनिकौं चौवीस भंगानिकरि गुणिए। बहुरि अनिवृत्तिकरणविषैं सवेद भाग विषैं स्थान एक प्रकृति दोय सो औपशमिक क्षायिककरि स्थान दोय प्रकृति च्यारि इनकौं बारह भंगनिकरि गुणिए अवेदभागविषैं स्थान एक सो दोऊ सम्यक्त्वनिके दोय, प्रकृति एक सो दोऊ सम्यक्त्वनिकी दोय इनकौं च्यारि भंगनिकरि गुणिए। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं स्थान एक सो दोऊ सम्यक्त्वानिके दोय प्रकृति एक सो दोऊ सम्यक्त्वनिकी दोय इनकौं एक भंगकरि गुणिए इहां अपूर्व करण पर्यंत स्थान वा प्रकृतिनिकौं जोडि तिनकौं पृथक चौवीस करि गुणिए तहां अनिवृत्तिकरणादिकके स्थान वा प्रकृति तिनकौं गुणकारतैं गुणे स्थान तो स्थान प्रमाणविषैं अर प्रकृति प्रकृति प्रमाण विषैं मिलाएं पूर्वोक्त स्थान प्रमाण अर प्रकृति प्रमाण हो है। इस प्रकरणविषैं जैसैं गुणस्थाननिविषै उपयोग योग संयम लेश्या सम्यक्त्वानिके आश्रयकरि मोहनीयके उदय स्थान वा तिसके प्रकृति भेद कहे तैसैंही जीव समासनिविषैं वा गति आदि विशेष मार्गणानिविषैं वा आगे कहिए है इकतालीस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीव पद तिनविषैं आगमके अनुसारि मोहनीयके उदय स्थान भेद वा प्रकृति भेद कहने ॥ ५०७॥ आगै मोहनीयके सत्त्वका प्रकरण ग्यारह गाथानकरि कहै हैं—

अट्ठ य सत्त य छक्क य चदुतिदुगेगाधिगाणि वीसाणि ।
तेरस बारेयारं पणादि एगूणयं सत्तं ॥ ५०८ ॥

अष्ट च सप्त च षट्कं च चतुस्त्रिद्विकैकमधिकानि विंशतिः ।
त्रयोदश द्वादशैकादश पंचादि एकोनकं सत्त्वं ॥ ५०८ ॥

जी०प्र०—अष्टसप्तषट्चतुस्त्रिद्व्येकाधिकविंशतयस्त्रयोदशद्वादशैकादशपंचाद्येकोनं च सत्त्वं स्यात् । अत्र त्रिदर्शनमोहपंचविंशतिचारित्रमोहमष्टाविंशतिकं । तत्र सम्यक्त्वप्रकृतावुद्वेल्लितायां सप्तविंशतिकं । पुनः सम्यग्मिथ्यात्वे उद्वेल्लिते षड्विंशतिकं । पुनःअष्टाविंशतिकेऽनंतानुबंधिचतुष्के विसंयोजिते चतुर्विंशतिकं । पुनः मिथ्यात्वे क्षपिते त्रयोविंशतिकं । पुनः सम्यग्मिथ्यात्वे क्षपिते द्वाविंशतिकं । पुनः सम्यक्त्वे क्षपिते एकविंशतिकं । पुनः मध्यमकषायाष्टके क्षपिते त्रयोदशकं । पुनः षंढे स्त्रीवेदे वा क्षपिते द्वादशकं । पुनः स्त्रीवेदे वा षंढे क्षपिते एकादशकं । पुनः षण्णोकषाये क्षपिते पंचकं । पुनः पुंवेदे क्षपिते चतुष्कं । पुनः संज्वलनक्रोधे क्षपिते त्रिकं । पुनः संज्वलनमाने क्षपिते द्विकं । पुनः संज्वलनमायायां क्षपितायामेककं । पुनः बादरलोभे क्षपिते सूक्ष्मलोभरूपमेककं । उभयत्र लोभसामान्येनैक्यं ॥ ५०८॥ अमीषां पंचदशानां गुणस्थानसंभवमाह—

स० चं०—आठ सात छह च्यारि तीन दोय एक करि अधिक वीस अर तेरह बारह ग्यारह अर पंचादिक एक एक घाटि प्रकृति रूप सत्व स्थान है २८ २७ २६ २४ २३ २२ २१ १३ १२ ११ ५ ४ ३ २ १ सोई कहिए है—

तीन दर्शन मोह पचीस चारित्र मोह ऐसैं अठाईस प्रकृति रूप सत्व हैं तिनविषैं सम्यक्त्व मोहनीयकी उद्वेलना भए सत्ताईस प्रकृति रूप सत्त्व हो है। तिनविषै मिश्रमोहनीयकी उद्वेलना भएं छव्वीस प्रकृति रूप सत्व हो है। बहुरि अठ्ठाईस में अनंतानुबंधीका विसंयोजन भएं चौबीस प्रकृति रूप सत्व हो है। तिनविषैं मिथ्यात्वका क्षय भए तेईस प्रकृति रूप सत्त्व हो है। बहुरि मिश्र मोहनीयका क्षय भएं बाईस प्रकृतिरूप सत्व होहै बहुरि सम्यक्त्व मोहनियका क्षय भए इकईस प्रकृति रूप सत्व हो है। बहुरि अप्रत्याख्यान प्रत्याख्यानरूप मध्यम आठ कषायका क्षय भए तेरह ६६७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृति रूप सत्व हो है बहुरि स्त्रीवेद वा नपुंसक वेद विषैं एकका क्षय भएं बारह प्रकृति रूप सत्व हो है। बहुरि स्त्रीवेद वा नपुंसक वेद विषैं अवशेष एक वेदका क्षय भएं ग्यारह प्रकृति रूप सत्व हो है। बहुरि छह हास्यादिक नोकषायनिका क्षय भएं पंच प्रकृति रूप सत्व हो है। बहुरि पुरुष वेदका क्षय भएं च्यारि प्रकृति रूप सत्व हो है बहुरि संज्वलन क्रोधका क्षय भएं तीन प्रकृति रूप सत्व हो है बहुरि संज्वलन मानका क्षय भएं दोय प्रकृति रूप सत्व हो है बहुरि संज्वलन मायाका क्षय भएं एक वादर लोभरूप सत्व हो है बहुरि वादर लोभका क्षय भएं सूक्ष्म लोभ रूप सत्व हो है सो वादर वा सूक्ष्म एक लोभ प्रकृति ही है तातैं दोऊ का एकही स्थान कह्या है ऐसैं पंद्रह सत्व स्थान हैं ॥५०८॥ आगै ए गुणस्थाननिविषैं कैसैं संभवै है? सो कहै हैं—

तिण्णेगे एगेगं दो मिस्से चदुसु पण णियट्टीए।
तिण्णि य थूलेकारं सुहुमे चत्तारि तिण्णि उवसंते ॥५०९॥

त्रीण्येकस्मिन्नेकस्मिन्नेकं द्वे मिश्रे चतुर्षु पंच निवृत्तौ।
त्रीणि च स्थूले एकादश सूक्ष्मे चत्वारि त्रीण्युपशांते ॥ ५०९ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ त्रीणि सासादने एकं मिश्रे द्वे असंयतादिचतुर्षु पंच पंच अपूर्वकरणे त्रीणि अनिवृत्तिकरणे एकादश सूक्ष्मसांपराये चत्वारि उपशांतकषाये त्रीणि ॥ ५०९ ॥ तानि कानीति चेदाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं तीन सासादनविषैं एक मिश्रविषैं दोय असंयतादिक च्यारि विषैं पांच पांच अपूर्वकरणविषैं तीन आनिवृत्ति करणविषैं ग्यारह सूक्ष्म सांपरायविषैं च्यारि उपशांत कषायविषैं तीन सत्व स्थान संभवै हैं ॥५०९॥ ते कौन? सो कहै हैं—

पढमतियं च य पढमं पढमं चउवीसयं च मिस्सम्हि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पढमं चउवीसचऊ अविरददेसे पमत्तिदरे ॥५१०॥

प्रथममत्रयं च च प्रथमं प्रथमं चतुर्विंशकं च मिश्रे।
प्रथमं चतुर्विंशचतुष्कं अविरतदेशे प्रमत्तेतरे ॥ ५१० ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ त्रीण्यष्टाविंशतिकादीनि सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्युद्वेल्लनयोश्चतुर्गतिजीवानां यत्र करणात् । सासादनेऽष्टाविंशतिकं। मिश्रे द्वे अष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिके, विसंयोजितानंतानुबंधिनोऽपि सम्यग्मिथ्यात्वोदये तत्र गमनात् । असंयतादिचतुर्षु पंच प्रत्येकं अष्टाविंशतिकं चत्वारि चतुर्विंशतिकादीनि, विसंयोजितानंतानुबंधिनः क्षपितमिथ्यात्वादित्रयाणां च तेषु संभवात् ॥ ५१० ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं तीन सत्व स्थान अठाईस सत्ताईस छब्बीस रूप जातैं सम्यक्त्व मोहनीय मिश्र मोहनीकी उद्वेलना मिथ्यादृष्टिविषैं च्यारयौ गतिके जीव करै हैं। बहुरि सासादनविषैं अठाईस रूप एकही है। बहुरि मिश्रविषैं अठाईस रूप वा चौवीस रूप होय है जातैं अनंतानुबंधीके विसंयोजनवाले भी मिश्रमोहनीके उदयतैं मिश्रविषैं आवै हैं। बहुरि असंयत आदिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं पांच पांच स्थान अट्ठाईस चौईस तेईस बाईस इक्कईस प्रकृतिरूप हैं जातैं अनंतानुबंधीका विसंयोजन अर तीन दर्शन मोहका क्रमतैं क्षय इनविषैं संभवै है ॥ ५१० ॥

अडचउरेक्काबीसं उवसमसेढिम्हि खवगसेढिम्हि ।
एक्काबीसं सत्ता अट्ठकसायाणियट्टित्ति ॥ ५११ ॥

अष्टचतुरेकविंशतिः उपशमश्रेण्यां क्षपकश्रेण्यां।
एकविंशतिः सत्ता अष्टकषायानिवृत्तिरिति ॥ ५११ ॥

जी० प्र०—उपशमश्रेण्यां चतुर्गुणस्थानेषु प्रत्येकमष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि त्रीणि विसंयोजितानंतानुबंधिनः क्षपितदर्शनमोहसप्तकस्य तत्सत्त्वस्य तत्रारोहणात् । क्षपकश्रेण्यामपूर्वकरणे अष्टकषायानिवृत्तिकरणे चैकविंशतिकमेव ॥ ५११ ॥ ६६९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—बहुरि उपशम श्रेणीविषैं अपूर्वकरणादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं तीन तीन स्थान अठाईस चौईस इकईस प्रकृतिरूप हैं जातैं अनंतानुबंधी विसंयोजनवाले वा तीनौं दर्शन मोह च्यारि अनंतानुबंधीका जिनके क्षय भया ते भी तहां चढै हैं। बहुरि क्षपक श्रेणीविषैं अपूर्व करणविषैं अर अनिवृत्तिकरणविषैं आठ कषाय नष्ट भए पहिले इकईस इकईस प्रकृतिरूप एक एक स्थान है ॥ ५११ ॥

तेरस बारेयारं तेरस बारं च तेरसं कमसो।
पुरिसित्थिसंढवेदोदयेण गदपणगबंधम्हि ॥ ५१२ ॥

त्रयोदश द्वादशैकादश त्रयोदश द्वादश च त्रयोदश क्रमशः।
पुरुषस्त्रीषंढवेदोदयेन गतपंचकबंधे ॥ ५१२ ॥

जी० प्र०——तत उपरि पुंवेदोदयारूढस्य पंचबंधकानिवृत्तिकरणे त्रयोदशकद्वादशकैकादशकानि । अष्टकषायक्षपणानंतरं तत्र षंढस्त्रीवेदयोः क्रमशः क्षपणात् । स्त्रीवेदोदयारूढस्य तत्र त्रयोदशकं षंढे क्षपिते च द्वादशकं षंढोदयारूढस्य तत्र त्रयोदशकमेव स्त्रीपुंवेदयोर्युगपत्क्षपणाप्रारंभात् ॥
संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

	१ २ ३ बं ४	१ २ ३ स ४		१ २ ३ बं ५	१ २ ३ स ५		१ २ ३ बं ५	१ २ ३ स ४ । ५
नों०	४	११	नों०	४	११	नों०	५	११
	४	१३		४	१२	इ		१२
	५	१३		५	१२	सं		१३
		१३	सं		१३			१३
		२१			२१			२१
न			इ			पुं		

स० चं०—ताके ऊपरि जो पुरुष वेदका उदय सहित श्रेणी चढै है ताके पुरुष वेद च्यारि संज्वलन इन पांच प्रकृतिनिका जहां बंध ऐसा अनिवृत्ति करणका भागविषैं तेरह प्रकृतिरूप बारह प्रकृति रूप ग्यारह प्रकृतिरूप तीन स्थान हैं। बहुरि अष्ट कषायका क्षयके अनंतरि अनिवृत्ति करणविषैं स्त्री नपुंसक वेदका अनुक्रमतैं क्षय हो है तातैं स्त्री वेदका उदय सहित जो श्रेणी चढै है ताकैं सो तेरह प्रकृति रूप स्थान हैं अर नपुंसक वेदका क्षय भए बारह प्रकृति रूप स्थान है। बहुरि जो जीव नपुंसक वेदका उदय सहित श्रेणी चढै ताकैं तहां सो तेरह प्रकृतिरूप स्थान ही है जातैं ताकैं नपुंसक (?) स्त्री वेदका युगपत क्षपणाका प्रारंभ है ॥ ५१२ ॥

पुरिसोदयेण चडिदे अंतिमखंडंतिमोत्ति पुरिसुदओ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तप्पणिधिम्हिदराणं अवगदवेदोदयं होदि ॥ ५१३ ॥

पुरुषोदयेन चटिते अंतिमखंडांतिम इति पुरुषोदयः।
तत्प्रणिधौ इतरयोरपगतवेदोदयो भवति ॥ ५१३ ॥

जी० प्र०—पुंवेदोदयेन क्षपकश्रेण्यारूढे चरमसमयपर्यंतं पुंवेदोदयप्रथमस्थित्यायामे षंढक्षपणाखंडस्त्रीक्षपणाखंडपुंक्षपणाखंडेषु चरमे खंडे चरमसमयपर्यंतं पुंवेदस्योदयो बंधश्च निरंतरो भवति। तत्प्रणिधौ चेतरवेदयोरपगतवेदोदयो भवति ॥ ५१३ एवं सति—

स० चं०—पुरुष वेदका उदय सहित क्षपक श्रेणीकौं चढै तिहिंविषैं अंतका खंडका अंत समय पर्यंत पुरुष वेदका उदयकी प्रथमस्थितिका कालविषैं नपुंसक वेद क्षपणा खंड वा स्त्री वेद क्षपणा खंड वा पुरुष वेद क्षपणा खंडनिविषैं अंतका खंडका अंत समय पर्यंत निरंतर पुरुष वेदका उदय अर बंध पाइए है। बहुरि तिसही पुरुष वेद क्षपणाका अंतका खंडका निकटि अन्य नपुंसक स्त्री वेदनिका उदयका अभाव हो है ॥ ५१३ ॥ ऐसैं होतैं कहा हो है? सो कहै हैं—

तट्ठाणे एक्कारस सत्ता तिण्होदयेण चडिदाणं।
सत्तण्हं समग छिदी पुरिसे छण्हं च णवगमत्थित्ति ॥ ५१४ ॥

तत्स्थाने एकादश सत्ताः त्रिकोदयेन चटितानां।
सप्तानां समकं छित्तिः पुरुषे षण्णां च नवकमस्तीति ॥ ५१४ ॥

जी० प्र०—तस्मिन् पुंवेदोदयारूढानिवृत्तिसवेदचरमखंडे तत्प्रणिधौ स्त्रीषंढोदयारूढयोरवेदोदयस्थानद्वये च सप्तनोकषायचतुस्संज्वलना इत्येकादश सत्त्वमस्ति। त्रिवेदोदयारूढानां सप्तनोकषायक्षपणाप्रारंभः चरमखंड चरमसमये सत्त्वव्युच्छित्तिश्च युगपदेव। तत्र पुंवेदोदयारूढे तु समयोनावलिमात्र-क्षपितावशेषा आवलीमात्रसंपूर्णाश्च पुंवेदस्य नवकबंधसमयप्रबद्धाः संतीति षण्णोकषायाणामेव सत्त्वव्युच्छित्तिः। ते च नवकसमयप्रबद्धाः स्वस्वबंध-समयादचलावलौ गतायां प्रतिसमयमेकैकफालि परमुखेनवोदयंतः, आवलिकाले क्षीयमाणाः समयोनद्व्यावलिकाले सर्वे उच्छिष्टावलिमात्रनिषेकैः सह क्षीयंते। गलितावशेषास्तु समयप्रबद्धांशत्वात्समयप्रबद्धा इत्युच्यंते। संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बं ४	स ४	बं ४	स ४	बं ४	स ४	५	१।२।३।४।४।४।४।४।
४	११	४	११		५	११	आ ०।०।०।०। बाधा
४	१३	४	१२			१२	० ० ०
५	१३	५	१२				० ०
							०

अत्र नवकसमयप्रबद्धस्यांकसंदृष्टिश्चतुष्कं । तस्याचलावलिराबाधा । तस्याः संदृष्टिश्चतुःशून्यं । उच्छिष्टावलिस्तु उदयागतानामावलिमात्रका अनुदयागतानामावलिमात्रनिषेकानतीत्य लक्षितचरमस्थितिकांडकचरमफालिपतनेऽवशिष्टावलिमात्रनिषेकाश्च क्षपणां विना स्थितोक्तसंक्रमविधानेन परमुखोदयेनैव प्रतिसमयमेकैकनिषेकगलनक्रमेण विनश्यंतीति ॥ ५१४ ॥ उक्तार्थानुवादपुरस्सरमनिवृत्तिकरणे सत्त्वस्थानविशेषानाह——

स० चं०——तीहिं पुरुषवेदका उदयसहित श्रेणी चढ्या ताका अनिवृत्तिकरणका सवेदभागका अंतका खंडविषै बहुरि तिसही खंडके निकटि अनिवृत्ति करणका तिस अंतका खंडका कालविषैं स्त्री नपुंसक वेदका उदयकरि सहित चढै तिनके स्त्रीनपुंसक वेदका उदयका अभाव रूप दोय स्थाननिविषैं पुरुषवेदसहित सात नोकषाय अर च्यारि संज्वलन इन ग्यारह प्रकृतिरूप सत्त्वस्थान हैं । बहुरि तीनोंमें किसी वेदका उदय सहित श्रेणी चढे होहु तिनकैं सात नोकषाय क्षपणाका प्रारंभ अर तहां अंतका खंडका अंत समयविषै तिन सातोंकी सत्त्वकी व्युच्छित्ति युगपत् हो है याकौं भएं च्यारिहीका सत्व रहै है । तहां इतना विशेष–जो पुरुषवेदका उदय सहित श्रेणी चढ्या है ताकैं एक समय घाटि दोय आवली प्रमाण समय प्रबद्धनिविषै एकसमय घाटि आवली प्रमाण क्षय भएं पीछैं अवेशष आवली प्रमाण संपूर्ण पुरुषवेदकैं नवक समय प्रबद्ध पाइए है तातैं ताकैं छह नोकषायनिहीका सत्वकी व्युच्छित्ति है सो पुरुषवेद सहित चढनेवालेकैं पांचका सत्व रहै है। जिनका बंध भए थोरा काल भया संक्रमणादि करनेयोग्य जे निषेक न भए ऐसे नूतन समय प्रबद्धके निषेक तिनका नाम नवक समय प्रबद्ध जानना । ते वे नवक समयप्रबद्ध अपने अपने बंधके प्रथम समयतैं लगाय आवली प्रमाण कालविषैं अन्य अवस्थान धरैं तातैं इस आवलीकालकौं अचलावली कहिए तिस अचलावलीकौं व्यतीत भएं संतैं समय समय प्रति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक एक फालि जो समयविषै संक्रमण होनेयोग्य परमाणूनिका समूह ताकौं अन्यप्रकृतिरूप परिणमाइ उदयमें ल्यावना सोई परमुखकरि उदय होना तिसरूप होतैं आवली कालविषैं क्षय होतसतैं एकसमय घाटि दोय आवली कालविषै सर्व उच्छिष्टावलिमात्र निषेकनिकरि सहित क्षय होहै। इहां नवक समय प्रबद्ध कह्या तहां गले पीछे अवशेष समय प्रबद्धके निषेक रहे ते समयप्रबद्धके अंश हैं तातैं तिन निषेकनिकौं समयप्रबद्ध कहिए है। नवक समय प्रबद्धकी सहनानी च्यारिका अंक है तिस समय प्रबद्धकी अचलावली प्रमाण आबाधा है तिसविषैं उदयादिक रूप न होहै ताकी सहनानी च्यारि बिंदी हैं। बहुरि उच्छिष्टावलि जो उदयकौं प्राप्त भए जे कर्म तिनके आवली मात्र अवशेष रहे निषेक अर जे उदयकौं प्राप्त न भए कर्म तिनके आवलि मात्र निषेक उलंघि स्थितिका अंतकांडककी अंतफालिका पतनविषैं आवलीकालमात्र अवशेष रहे निषेक ते क्षपणाविना संक्रमविधानकरि अन्य प्रकृतिरूप होइ परमुख उदयकरि समय समय प्रति एक एक निषेक अनुक्रमतैं गलन होइ विनसै हैं। भावार्थ—ऐसा जो वेदक्षपणाकालविषै पुरुषवेदका नवक समय प्रबद्धका सत्व अवशेष रहै है सो क्रोधक्षपणाकालविषै क्रोधरूप परिणमि विनसै है तातैं तहां पांचका भी सत्व जानना। निषेक संक्रमादिक स्वरूप वर्णन पूर्वै कीया था सो जानना। बहुरि इनका विशेष कथन इहां भाषाविषै आगै क्षपणासार अनुसारि कथनविषैं लिखेंगे तहां जानना॥ ५१४॥ इस अर्थकौं कहि अनिवृत्ति करणविषै सत्व स्थाननिका विशेष कहैं हैं—

इदि चदुबंधक्खवगे तेरस बारस एगार चउसत्ता।
तिदुइगिबंधे तिदुइगि णवगुच्छिट्ठाणमविवक्खा॥ ५१५॥

इति चतुर्बंधक्षपके त्रयोदश द्वादशैकादश चतुःसत्ता।
त्रिद्विकैकबंधे त्रिद्विकैकं नवकोच्छिष्टयोरविवक्षा॥ ५१५॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—इति उक्तप्रकारेण षंढोदयारूढस्य सवेदानिवृत्तिकरणचरमसमयचतुर्बंधके सत्त्वं त्रयोदशकं। स्त्रीवेदोदयारूढस्य द्वादशकं। षंढस्त्रीवेदोदयारूढापगतवेदोदयचतुर्बंधके एकादशकं। पुनः षंढस्त्रीवेदोदयानां तत्र चतुष्कं पुंवेदोदयारूढस्य पंचकमपि तदेकादशस्थानेषु पुंवेदनवकसत्त्वस्य विवक्षितत्वात्। तत उपरि त्रिवेदोदयारूढानां त्रिद्व्येकबंधभागेषु यथाक्रमं त्रिकं द्विकमेककमस्ति। अत्र प्राग्नवकबंधसमयोनद्व्यावलिमात्रसमयप्रबद्धा उच्छिष्टावलिमात्रोदयावशेषप्रथमस्थितिनिषेकाश्च संत्यपि ते न विवक्षिताः। एवमनिवृत्तिकरणे उपशमश्रेण्यामष्टाविंशतिचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि, क्षपकश्रेण्यामेकविंशतिकत्रयोदशकद्वादशकैकादशकपंचकचतुष्कत्रिकद्विकैकानि। एतेषु एकमेकविंशतिकं पुनरुक्तमित्येकादशेत्युक्तं। सूक्ष्मसांपराये उपशमश्रेण्यामष्टाविंशतिचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि। क्षपकश्रेण्यां सूक्ष्मलोभरूपैकमिति चत्वारि। तल्लोभसत्त्वं कीदृशं ? अनंतैकभागानुभागक्रमेणानिवृत्तिकरणे बादरसंज्वलनलोभस्याश्वकर्णकरणसहचरितापूर्वस्पर्धककरणं तेषां च बादरकृष्टिकरणं तासां च सूक्ष्मकृष्टिकरणमिति तत्र सूक्ष्मकृष्टिरूपमनुदयगतमत्रोदयगतमिति ज्ञातव्यं। उपशांतकषायेऽष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि ॥ ५१५ ॥ अथ मोहनीयबंधस्थानेषु सत्त्वस्थानान्याधेयभावेन गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—इस कहे विधानकरि जो नपुंसकवेद सहित श्रेणी चढै है ताकैं वेदसहित अनिवृत्तिका भाग जिसविषै मोहनीयकी च्यारि प्रकृतिका बंध पाइए तहां तेरह प्रकृतिरूप सत्व है। बहुरि जो स्त्रीवेदका उदय सहित चढै ताकैं तहांही बारह प्रकृतिरूप सत्व है। बहुरि नपुंसक वा स्त्रीवेदका उदय सहित श्रेणी चढै तिनकैं वेदका उदय रहित अर च्यारि प्रकृतिका जहां बंध ऐसे भागविषै ग्यारह प्रकृति रूप सत्त्व है बहुरि नपुंसक वा स्त्रीवेदका उदय सहित श्रेणी चढै तिनकैं सात नोकषायका क्षय भएं च्यारि प्रकृतिरूप सत्त्व स्थान है अर पुरुषवेदका उदय सहित श्रेणी चढै ताकैं च्यारि वा पांच प्रकृति रूप भी सत्व स्थान है जातैं ग्यारहका सत्व स्थान संबंधी पुरुषवेदके नवक समय प्रबद्धकी विवक्षा है। बहुरि ताके ऊपरि तीनूही वेदोंका उदय सहित श्रेणी चढैं तिनके तीन दोय एक प्रकृतिका जिनविषैं बंध पाइए ऐसे तीन भागनिविषै क्रमतैं तीनरूप दोयरूप एकरूप सत्वस्थान पाइए है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षपक अनिवृत्ति करणके सत्त्वस्थाननिका यंत्र।

	बंध १ २ ३ ४	सत्त्व १ २ ३ ४		बंध १ २ ३ ४	सत्त्व १ २ ३ ४		बंध १ २ ३ ४	सत्त्व १ २ ३ ४ वा ५
व्युछित्ति नोकषाय ७	बंध ४	सत्त्व ११	व्युछित्ति नोकषाय ७	बंध ४	सत्त्व ११	व्युछित्ति नोकषाय ७	बंध ५	सत्त्व ११
	बंध ४	सत्त्व १३		बंध ४	सत्त्व १२	व्युछित्ति स्त्री	बंध ५	सत्त्व १२
	बंध ५	सत्त्व १३		बंध ५	सत्त्व १२		बंध ५	सत्त्व १३
	बंध ५	सत्त्व १३		बंध ५	सत्त्व १३		बंध ५	सत्त्व १३
		सत्त्व २१			सत्त्व २१			सत्त्व २१
नपुंसकवेदसहितश्रेणी चढ़नेवालोंके।			स्त्रीवेदसहित श्रेणी चढने वालोंके।			पुरुषवेदसहितश्रेणी चढने वालोंके।		

इहां पूर्ववत् नवक बंधके समय घाटि दोय आवली प्रमाण समय प्रबद्ध अर उच्छिष्टावलिमात्र उदयतैं अवशेष प्रथमस्थितिके निषेक हैं तथापि तिनकी विवक्षा इहां नाहीं है। जैसैं पुरुषवेदके नवक समय प्रबद्धका सत्व अवशेष रहे हैं ते क्रोध क्षपणाकालविषैं परमुख होइ विनसै है तैसैं क्रोध मान मायाके भी नवक समयप्रबद्धके सत्व अवशेष रहि क्रमतैं मान माया लोभका क्षपणाकालविषै परमुख होइ विनसै हैं परंतु तिनकी विवक्षा

Gaṇesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न ग्रही जो विवक्षा होती तो जैसैं च्यारिका सत्वकी जायगा पांचका भी सत्व कह्या तैसैं तीन दोय एककी जायगा च्यारि तीन दोयका भी सत्व कहते सो विवक्षा नाहीं तातैं तीन दोय एक हीका सत्व कह्या है ऐसैं अनिवृत्ति करणविषैं उपशम श्रेणीविषैं तो अट्ठाईस चौईस इकईस रूप तीन सत्व स्थान हैं क्षपक श्रेणीविषै इकईस तेरह बारह ग्यारह पंच च्यारि तीन दोय एकरूप नवस्थान, तिनविषै इकईस रूपस्थान उपशमक वा क्षपक दोऊ विषै कह्या तातैं पुनरुक्त है। तातैं ग्यारह सत्वस्थान कहे। बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं उपशमश्रेणीविषैं अठाईस चौइस इकईस रूप तीन स्थान, क्षपकश्रेणीविषैं सूक्ष्म लोभरूप एक स्थान ऐसैं च्यारि हैं। सो लोभ कैसा है ? अनिवृत्ति करणविषै अनुक्रमतैं अनंतवे अनंतवे भाग वादर संज्वलन लोभका अश्वकर्ण करण सहित कबहू न भया ऐसा अपूर्वस्पर्धक करण होहै। बहुरि तिन स्पर्धकनिका स्थूल खंडरूप वादर कृष्टि करण होहै। बहुरि तिन वादर कृष्टिनिका सूक्ष्म खंडरूप सूक्ष्मकृष्टि करण होहै तिन सूक्ष्मकृष्टिनिका उदय अनिवृत्तिविषै नाहीं ते सूक्ष्म सांपरायविषैं उदयकौं प्राप्त होवैं ऐसा जानना। अश्वकर्णादिकका स्वरूप क्षपणासार अनुसार आगैं इहां लिखैंगे तहां जानना। बहुरि उपशांतकषायविषै अठाईस चौईस इकईस रूप तीन स्थान हैं। ऊपरि मोहनीयके सत्वका अभाव है॥५१५॥ आगै मोहनीयके बंधस्थाननिविषैं सत्त्वस्थान कैसैं पाइए ? सो गाथा दोयकरि कहैं हैं—

तिण्णेव दु बावीसे इगिवीसे अट्ठवीस कम्मंसा।
सत्तरतेरणवबंधगेसु पंचेव ठाणाणि ॥ ५१६ ॥
पंचविधचदुविधेसु य छ सत्त सेसेसु जाण चत्तारि।
उच्छिट्ठावलिणवकं अविवेकिखय सत्तठाणाणि॥५१७॥जुम्मं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रय एव तु द्वाविंशतौ एकविंशतौ अष्टविंशतिः कर्मांशाः ।
सप्तदशत्रयोदशनवबंधकेषु पंचैव स्थानानि ॥ ५१६ ॥
पंचविधचतुर्विधेषु च षट् सप्त शेषेषु जानीहि चत्वारि ।
उच्छिष्टावलिनवकमविवेक्ष्य सत्त्वस्थानानि ॥ ५१७ ॥

जी० प्र०—द्वाविंशतिबंधे कर्मांशाः सत्त्वस्थानानि अष्टविंशतिकसप्तविंशतिकषड्विंशतिकानि त्रीणि । एकविंशतिबंधेऽष्टाविंशतिकमेव । सप्तदशबंधे त्रयोदशबंधे नवबंधे चाष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकत्रयोविंशतिकद्वाविंशतिकैकविंशतिकानि पंच पंच । पंचबंधे तान्येव पंचैकादशकाग्राणि । चतुर्बंधे तान्येव षट्चतुष्काग्राणि । अत्र पंचकसत्त्वं तु नवकोच्छिष्टयोरविवक्षितत्वान्नोक्तं । त्रिबंधे द्विबंधे एकबंधे चाष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिकैकविंशतिकानि क्रमशः त्रिकद्विकैकाग्राणीति चत्वारि चत्वारि जानीहि । इमान्यपि सत्त्वस्थानानि उच्छिष्टावलिनवकबंधाविवक्षयैवोक्तानि ॥ ५१६ ॥ ५१७ ॥

स० चं०—मोहनीयका जहां बाईस बंधरूप स्थान है तहां कर्मांश कहिए सत्व स्थान ते अठाईस सत्ताईस छवीस प्रकृतिरूप तीन हैं। बहुरि इकवीसका बंध जहां है तहां अठाईस रूप ही सत्व स्थान हैं। बहुरि सतरह वा तेरह वा नवका बंध स्थाननिविषैं अठाईस चौईस तेईस बाईस इकईस रूप पांच पांच सत्व स्थान हैं। बहुरि पांचका बंध स्थानविषै अठाईस चौईस इकईस तेरह बारह ग्यारह प्रकृतिरूप ऐसैं छह सत्व स्थान हैं। बहुरि च्यारिका बध स्थानविषै छह पूर्वोक्त एक च्यारि प्रकृतिरूप ऐसैं सात सत्व स्थान हैं। इहां पांच प्रकृतिरूप सत्वस्थान नवक बंध रूप समय प्रबद्ध वा उच्छिष्टावलीकी इहां विवक्षा नाहीं तातैं न कह्या। बहुरि तीनका बंध स्थानविषै अठाईस चौईस इकईस अर तीन प्रकृति रूप च्यारि सत्व स्थान हैं। बहुरि दोयका बंध स्थानविषैं अठाईस चौईस इकईस अर दोय प्रकृति रूप च्यारि स्थान हैं। बहुरि एकका बंध स्थानविषैं अठाईस चौईस इकईस अर एक प्रकृतिरूप च्यारि सत्व स्थान हैं। ए सत्व स्थान उच्छिष्टावली नवक समय प्रबद्धकी विवक्षा विना कहे हैं। ऐसे जीवनिकैं ऐसैं बंध स्थान होतैं ऐसैं सत्व स्थान पाइए है ॥ ५१६–५१७ ॥

दसणवपण्णरसाइं बंधोदयसत्तपयडिठाणाणि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भणिदाणि मोहणिज्जे एत्तो णामं परं वोच्छं ॥ ५१८ ॥

दशनवपंचदश बंधोदयसत्त्वप्रकृतिस्थानानि ।
भणितानि मोहनीये इतो नाम परं वक्ष्यामि ॥ ५१८ ॥

जी॰ प्र॰—मोहनीये बंधोदयसत्त्वप्रकृतिस्थानानि क्रमेण दश नव पंचदश भणितानि । इतः परं नामकर्मसत्त्वस्थानानि वक्ष्यामि ॥ ५१८ ॥ तदाधारत्वादेकचत्वारिंशत्पदानि तावद्गाथाद्वयेन निर्दिशति—

स॰ चं॰—मोहनीयविषैं दश बंध स्थान नव उदय स्थान पंद्रह सत्व स्थान कहे यातैं आगैं नाम कर्मके कहैंगे ॥५१८॥ तहां प्रथमही नामकर्मके स्थाननिके आधार भूत इकतालीस पद तिनकौं दोय गाथानिकरि कहै हैं—

णिरया पुण्णा पण्हं बादरसुहुमा तहेव पत्तेया ।
वियलाऽसण्णी सण्णी मणुवा पुण्णा अपुण्णा य ॥५१९॥
सामण्णतित्थकेवलि उहयसमुग्घादगा य आहारा ।
देवावि य पज्जत्ता इदि जीवपदा हु इगिदाला॥५२०॥जुम्मम्

निरयाः पूर्णाः पंच वादरसूक्ष्माः तथैव प्रत्येकाः ।
विकला असंज्ञिनः संज्ञिनो मनुष्या पूर्णा अपूर्णाश्च ॥ ५१९ ॥
सामान्यतीर्थकेवलिन उभयसमुद्घातगाश्च आहाराः ।
देवा अपि च पर्याप्ता इति जीवपदा हि एकचत्वारिंशत् ॥ ५२० ॥ ६७९

जी॰ प्र॰—नारकाः सर्वे पर्याप्ता एव, पृथ्व्यादयः पंच बादराः सूक्ष्माश्च, तथा प्रत्येकं वनस्पतयः, द्वित्रिचतुरिंद्रियाः असंज्ञिनः संज्ञिनो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मानवाश्चैते सप्तदशापि पर्याप्ता अपर्याप्ताश्च, सामान्यकेवलिनस्तीर्थकेवलिनः एते उभये समुद्घातवंतश्च आहारका देवाश्चामी षट् पर्याप्ता एवेत्येकच- त्वारिंशत्खलु स्फुटं जीवपदानि, नामकर्मबंधस्थानविवक्षया कर्मपदान्युदयसत्त्वविवक्षया जीवपदानि च भवंति। तद्यथा—

नरकगतिनाम पृथ्वीकायस्थावरविशिष्टवादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं अप्कायस्थावरविशिष्टवादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं तेजस्कायस्थावरविशिष्टवादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं वायुकायस्थावरविशिष्टवादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं, साधारणस्थावरविशिष्टवादरैकेंद्रियं तद्विशिष्टसूक्ष्मैकेंद्रियं स्थावरवादरविशिष्टप्रत्येकवनस्पत्येकेंद्रियमित्येकादश नामकर्माण्येकेंद्रियत्वनिमित्तानि। त्रसविशिष्टद्वींद्रियं, तद्विशिष्टत्रींद्रियं, तद्विशिष्टचतुरिंद्रियं, तद्विशिष्टासंज्ञिपंचेंद्रियं, तद्विशिष्टसंज्ञिपंचेंद्रियं मनुष्यगतिनामेमानि सप्तदशापि पर्याप्तनामविशिष्टानि पर्याप्तपदानि अपर्याप्तनामविशिष्टान्यपर्याप्तपदानि। चत्वारः केवलिनः केवलजीवपदानि आहारकमपि जीवपदं देवगतिं विनान्यगत्या सह बंधाभावात् तस्यामेव तदंतर्भावात् पर्याप्तविशिष्टदेवगतिनाम। नारकदेवगती पदे तिर्यग्मनुष्यगत्योश्चतुस्त्रिंशत्पदानि च कर्मपदानि केवलजीवपदानि पंच मिलित्वैकचत्वारिंशत् ॥ ५१९–५२० ॥

स० चं०—नारकी सर्व पर्याप्त ही हैं बहुरि पृथ्वी अप तेज वायु साधारण वनस्पती ए वादर वा सूक्ष्म तिनकी दश अर प्रत्येक वनस्पती वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्री अर संज्ञी पंचेंद्री अर मनुष्य ऐसैं सतरह पर्याप्त वा अपर्याप्त तिनके चौंतीस भए। बहुरि सामान्य केवली तीर्थंकर केवली अर समुद्घातकौं प्राप्त सामान्य केवली तीर्थंकर केवली ए च्यारि अर आहारक अर देव ए छह पर्याप्त हीहैं ऐसैं इकतालीस जीव पद हैं। तहां नामकर्मका बंधस्थाननिकी विवक्षाकरि कर्मपद है जातैं इन प्रकृतिरूप नाम कर्मका बंध होहै। उदय सत्त्वकी विवक्षाकरि जीवपद हैं जातैं इनका उदय सत्व जीवकैं पाइए है। सोई कहिए है—

नरकगति नाम १ बहुरि पृथ्वीकाय स्थावर विशेषरूप वादर एकेंद्री १ पृथ्वीकाय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेंद्री १ अपकाय स्थावर विशेषरूप वादर एकेंद्री १ अपकाय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेंद्री १ तेजःकाय स्थावर विशेषरूप वादर एकेंद्री १ तेजःकाय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेंद्री १ वायुकाय स्थावर विशेषरूप वादर एकेंद्री १ वायुकाय स्थावर विशेषरूप सूक्ष्म एकेंद्री १ साधारण स्थावर विशेषरूप वादर एकेंद्री १ साधारण स्थावरविशेषरूप सूक्ष्म एकेंद्री १ स्थावर वादर विशेषरूप प्रत्येक वनस्पती एकेंद्री १ ए ग्यारह नाम कर्म एकेंद्री जातिनामा नामकर्म एकेंद्रीके निमित्ततैं हैं। बहुरि त्रस विशेषरूप वेंद्री १ त्रस विशेषरूप तेंद्री १ त्रस विशेषरूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौंद्री १ त्रस विशेषरूप असंज्ञी पंचेंद्री १ त्रस विशेषरूप संज्ञी पंचेंद्री १ अर मनुष्यगति नाम १ ए सतरह पर्याप्त नामकर्मके विशेषकों धरैं पर्याप्त पद जानने, अपर्याप्त नाम विशेष धरैं अपर्याप्त जानने। बहुरि च्यारि केवली केवल जीवपद ही हैं इनविषैं कर्मपद नाहीं जातैं केवलीपना जीवका स्वभाव है। बहुरि आहारपद भी जीवपद ही है जातैं देवगतिविना और गति सहित आहारकका बंध नाहीं तातैं देवगतिविषैं आहारकपदकौं गर्भित कीया बहुरि पर्याप्त विशेषरूप देवगति नाम। ऐसैं नारक देवगति रूप दोय पद अर तिर्यंच मनुष्यगतिके चौंतिस पद ऐसैं मिलिकरि च्यारि केवली आहारक विना कर्मपद छत्तीस ही जानने अर जीवपद सर्व इकतालीस जानने ॥५१९–५२०॥

तेवीसं पणवीसं छव्वीसं अट्ठवीसमुगतीसं।
तीसेक्कतीसमेवं एक्को बंधो दुसेढिम्हि ॥ ५२१ ॥

त्रयोविंशतिः पंचविंशतिः षड्विंशतिरष्टविंशमेकोनत्रिंशत्।
त्रिंशदेकत्रिंशदेवमेको बंधो द्विश्रेण्यां ॥ ५२१ ॥

जी० प्र०—नामकर्मबंधस्थानानि त्रयोविंशतिकं पंचविंशतिकं षड्विंशतिकमष्टाविंशतिकमेकान्नत्रिंशत्कं त्रिंशत्कमेकत्रिंशत्कमेककमित्यष्टौ। आद्यानि सप्तापूर्वकरणषष्ठभागपर्यंतं यथासंभवमेककमुभयश्रेण्योरपूर्वकरणसप्तमभागप्रथमसमयात् सूक्ष्मसांपरायचरमसमयपर्यंतं च बध्यते ॥ ५२१ ॥ तानि केन केन कर्मपदेन युतानि बध्यंते इति सूत्रद्वयेनाह—

स० चं०—नामकर्मके बंधस्थान तेईस पचीस छवीस अठाईस गुणतीस तीस इकतीस एक प्रकृतिरूप आठ हैं तिन विषैं आदिके सात स्थान अपूर्व करणके छठे भाग पर्यंत यथासंभव पाइए है। एक प्रकृतिरूप दोऊ श्रेणीनिविषैं अपूर्वकरणके सातवें भागके प्रथम समयतैं सूक्ष्मसांपरायके अंत समयपर्यंत बंधे हैं ॥ ५२१ ॥ ते बंधस्थान किस कर्म पद सहित बंधै हैं सो दोय सूत्रनिकरि कहै हैं—

ठाणमपुण्णेण जुदं पुण्णेण य उवरि पुण्णगेणेव।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

तावदुगाणण्णदरेणण्णदरेणमरणिरयाणं ॥ ५२२ ॥
णिरयेण विणा तिण्हं एक्कदरेणेवमेव सुरगइणा ।
बंधंति विणा गइणा जीवा तज्जोगपरिणामा ॥५२३ ॥

स्थानमपूर्णेन युतं पूर्णेन चोपरि पूर्णकेनैव ।
आतपद्विकयोरन्यतरेणान्यतरेणामरनिरययोः ॥ ५२२ ॥
निरयेन विना त्रयाणामेकतरेणैवमेव सुरगतिना ।
बंध्नंति विना गतिना जीवास्तद्योग्यपरिणामाः ॥ ५२३ ॥

जी० प्र०—त्रयोविंशतिकं अपर्याप्तेन युतं । पंचविंशतिकं पर्याप्तेन युतं । चशब्दादपर्याप्तेन युतं च । उपरितनानि षड्विंशतिकादीनि पर्याप्तेन युतान्यपि षड्विंशतिकं आतपोद्योतान्यतरेण युतं । अष्टाविंशतिकं देवगतिनरकगत्यन्यतरेण युतं । एकान्नत्रिंशत्कं त्रिंशत्कं च तिर्यगादिगतित्रयान्यतमेन युतं । एकत्रिंशत्कं देवगत्या युतं । एकैकं कयापि गत्या युतं न भवति । एतानि स्थानानि जीवाः तत्तत्स्थानबंधयोग्यपरिणामाः संतो बंध्नंति ॥ ५२२–५२३ ॥ तौ चातपोद्योतौ प्रशस्तत्वात्केन पदेन सह बध्नंतीति चेदाह—

स० चं०—तेईस प्रकृतिरूपस्थान अपर्याप्त प्रकृति सहित बंधै हैं । पचीसरूप स्थान पर्याप्त प्रकृति सहित बंधै हैं चकारतैं अपर्याप्त प्रकृति सहित भी बंधै हैं। छबीस आदिक स्थान पर्याप्त प्रकृति सहित ही बंधै हैं तहां भी छबीसरूप स्थान आतप उद्योतविषै एक कोई प्रकृति सहित बंधै हैं। अठाईस प्रकृतिरूप स्थान देवगति वा नरक गतिविषै एक गति प्रकृति सहित बंधै हैं। गुणतीस रूप स्थान अर तीस रूप स्थान तिर्यंच आदि तीनविषै एक गति प्रकृति सहित बंधै हैं। इकतीस प्रकृतिरूप स्थान देवगति प्रकृतिसहित बंधै है। एक प्रकृतिरूप स्थान किसी गति प्रकृति सहित नाही बंधै हैं। ऐसैं इन स्थाननिकौं जीव तींह तींह स्थानयोग्य परिणामनिकरि युक्त भए बांधै हैं ॥५२२-५२३॥ ते आतप उद्योत प्रकृति प्रशस्त हैं ते किस पद सहित बंधै हैं सो कहै हैं—

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भूवादरपज्जत्तेणादावं बंधजोग्गमुज्जोवं।
तेउतिगूणतिरिक्खपसत्थाणं एयदरगेण ॥ ५२४ ॥

भूवादरपर्याप्तेनातापो बंधयोग्य उद्योतः।
तेजस्त्रिकोनातिर्यक्प्रशस्तानामेकतमेन ॥ ५२४ ॥

जी० प्र०—पृथ्वीकायवादरपर्याप्तेनातपः बंधयोग्यो नान्येन। उद्योतस्तेजोवातसाधारणवनस्पतिसंबंधिवादरसूक्ष्माण्यन्यसंबंधिसूक्ष्माणि च अप्रशस्तत्वात् त्यक्त्वा शेषतिर्यक्संबंधिवादरपर्याप्तादिप्रशस्तानामन्यतरेण बंधयोग्यः, ततः पृथ्वीकायवादरपर्याप्तेनातपोद्यतान्यतरयुतं, वादराप्काय-पर्याप्तप्रत्येकवनस्पतिपर्याप्तयोरन्यतरेणोद्योतयुतं च षड्विंशतिकं, द्वींद्रियत्रींद्रिय चतुरिंद्रियासंज्ञिपंचेद्रियसंज्ञिपंचेद्रियकर्मान्यतरेणोद्योतयुतं त्रिंशत्कं च भवति ॥ ५२४ ॥

स० चं०—पृथ्वीकाय वादरपर्याप्त सहित ही आतप प्रकृति बंधयोग्य है अन्य सहित बंधै नाहीं। बहुरि उद्योत प्रकृति है सो तेज वायु साधारण वनस्पती संबंधी बादर सूक्ष्म अन्य संबंधी सूक्ष्म ये अप्रशस्त हैं तातैं इन-विना अवशेष तिर्यंच संबंधी बादर पर्याप्त आदि प्रशस्त प्रकृतिनिविषै किसी प्रकृति सहित बंध योग्य हैं तातैं पृथ्वीकाय वादर पर्याप्त सहित आतप उद्योतविषै एक प्रकृति संयुक्त छब्बीस प्रकृति रूप बंध स्थान होहै वा बादर अप्कायिक पर्याप्त, प्रत्येक वनस्पती पर्याप्त विषै किसी करि सहित उद्योत प्रकृतिसंयुक्त छब्बीस प्रकृतिरूप बंध स्थान होहै। बहुरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्री संज्ञी पंचेंद्रीविषैं किसी एक प्रकृतिकरि सहित उद्योत प्रकृति संयुक्त तीस प्रकृतिरूप बंधस्थान संभवै है ॥ ५२४ ॥

णरगइणामरगइणा तित्थं देवेण हारमुभयं च।
संजदबंधट्ठाणं इदराहि गईहि णत्थित्ति ॥ ५२५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नरगतिनामरगतिना तीर्थं देवेनाहारमुभयं च।
संयतबंधस्थानमितराभिर्गतिभिर्नास्तीति ॥ ५२५ ॥

जी० प्र०—तीर्थाहारायां प्रशस्तविशेषत्वात् तीर्थं मनुष्यगत्यैवासंयतदेवनारकाः, देवगत्यैवासंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिमनुष्याश्च बध्नंति । आहारकद्वयं तीर्थाहारकोभयं च देवगत्यैव बध्नंति । कुतः ? संयतबंधस्थानमितराभिर्गतिभिर्न बध्नातीति कारणात् । अनेन सूत्रेणैते देवनारका मनुष्यगतित्रिंशत्कमेते मनुष्याः देवगतिनवविंशतिकं, अप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागांतं देवगतियुते आहारकद्वयत्रिंशत्कतीर्थाहारोभयैकत्रिंशत्के च बध्नंतीत्युक्तं भवति ॥ ५२५ ॥ अथ त्रयोविंशतिकादीनां प्रकृतिसंख्यानिमित्तं तत्पाठक्रमं गाथात्रयेणाह—

स० चं०—तीर्थंकर आहारक ए विशेष प्रशस्त प्रकृति हैं तातैं तीर्थंकर प्रकृतिकौं देव नारक असंयत तौ मनुष्यगति सहितही बांधै है अर मनुष्य असंयतादि च्यारि गुणस्थानवर्ती देवगति सहित ही बांधै है। बहुरि आहारक द्विक वा तीर्थंकर आहारक दोऊ देव गति सहित ही बांधै हैं जातैं संयतके योग्य जो बंधस्थान सो देवगति विना अन्य गति सहित बंधै नाही है। सो इसही सूत्रकरि ते देव नारकी तो मनुष्यगति संयुक्त तीस प्रकृतिरूप स्थानकौं अर मनुष्य हैं ते देवगति संयुक्त गुणतीस प्रकृतिरूप स्थानकौं तीर्थंकर सहित बांधै हैं। बहुरि अप्रमत्त अपूर्वकरणका षष्ठम भाग पर्यंत देवगति संयुक्त आहारक द्विक सहित तीस प्रकृतिरूप स्थानकौं अर तीर्थंकर आहारक द्विक सहित इकतीस प्रकृतिरूप स्थानकौं बांधै हैं ऐसा कह्या है ॥ ५२५ ॥ आगैं तेईस आदि स्थाननिविषैं प्रकृति जाननेके अर्थि पाठका अनुक्रम गाथा तीनकरि कहैं हैं—

णामस्स णवधुवाणि य सरूणतसजुम्मगाणमेक्कदरं।
गइजाइदेहसंठाणाणूणेक्कं च सामण्णा ॥ ५२६ ॥
तसबंधेण हि संहदिअंगोवंगाणमेगदरगं तु।
तप्पुण्णेण य सरगमणाणं पुण एगदरगं तु ॥ ५२७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुण्णेण समं सव्वेणुस्सासो णियमदो दु परघादो।
जोगट्ठाणे तावं उज्जोवं तित्थमाहारं ॥५२८॥ विसेसयं।

नाम्नो नव ध्रुवाश्च स्वरोनत्रसयुग्मकानामेकतमकं।
गतिजातिदेहसंस्थानानूनामेका च सामान्याः ॥ ५२६ ॥
त्रसबंधे हि संहत्यंगोपांगानामेकतरकं तु।
तत्पूर्णेन च स्वरगमनानां पुनः एकतरकं तु ॥ ५२७ ॥
पूर्णेन समं सर्वेणाच्छ्वासो नियमतस्तु परघातः।
योगस्थाने आतप उद्योतः तीर्थमाहारः ॥ ५२८ ॥ विशेषकं

जी० प्र०—नामकर्मणः तैजसकार्मणागुरुलघूपघातनिर्माणवर्णचतुष्काणीति ध्रुवप्रकृतयो नव। स्वरयुग्मोनत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरशुभसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मानामेकैकेत्यपि नव चतुर्गतिपंचजातित्रिदेहषट्संस्थानचतुरानुपूर्व्यानामेकैकेति पंच मिलित्वा त्रयोविंशतिः सामान्याः साधारणाः। तु—पुनः चशब्दद्वयमत्रावधारणार्थं तेन त्रसापर्याप्तत्रसपर्याप्तयोरन्यतरबंधेनैव षट्संहनानां त्र्यंगोपांगानां चैकतरं बंधयोग्यं नान्येन, पुनः त्रसपर्याप्तबंधेनैव सुस्वरदुःस्वरयोः प्रशस्ताविहायोगत्योश्चैकतरं बंधयोग्यं नान्येन, तु—पुनः पर्याप्तेनैव समं वर्तमानसर्वत्रसस्थावराभ्यां नियमादुच्छ्वासपरघातौ बंधयोग्यौ नान्येन, तु-पुनः योग्यनामपदे एवातपनामोद्योतनामतीर्थकरमाहारकद्वयं च बंधयोग्यं भवति ॥ ५२६—५२८ ॥

स० चं०—नामकर्मकी तैजस १ कार्मण १ अगुरुलघु १ उपघात १ निर्माण १ वर्णादिक च्यारि ४ ए नव तौ ध्रुवबंधी हैं इनका तो निरंतर सर्वजीवनिकैं बंध है। बहुरि स्वर विना नव युग्म त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक १ स्थिर १ शुभ १ सुभग १ आदेय १ यशस्कीर्ति १ ऐसैं इनके प्रतिपक्षी स्थावरादिक तिनकरि संयुक्त नव युगल तिन एक एक युगल विषैं एक प्रकृतिका बंध होइ ऐसैं नव प्रकृति ए भई बहुरि च्यारि गति पांच जाति तीन शरीर छह संस्थान च्यारि आनुपूर्वी इन विषैं एक एक का बंध होइ ऐसैं पांच प्रकृति ए भई सर्व मिलि तेईस प्रकृति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भई सो ए तौ सामान्य हैं इनका तौ बंध सर्वकैं हैं। बहुरि त्रसपर्याप्त वा अपर्याप्तनिविषैं एक किसी प्रकृति सहित छह संहनन तीन अंगोपांगनिविषैं एक एक का बंध योग्य है अन्य सहित नाहीं। बहुरि त्रस पर्याप्त सहित ही सुस्वर दुःस्वर विषैं एकका वा प्रशस्त अप्रशस्तविहायोगतिविषैं एकका बंध योग्य है अन्य सहित नाहीं। बहुरि पर्याप्त सहित वर्तमान सर्व ही त्रस स्थावर तिनकरि सहित उस्वास परघात बंध योग्य है अन्य सहित नाहीं है। बहुरि पूर्वगाथोक्त योग्य नाम पद ही विषैं आतप उद्योत तीर्थंकर आहारक द्विक बंध योग्य हैं ॥५२६-५२८॥

तित्थेणाहारदुगं एक्कसराहेण बंधमेदीदि।
पक्खित्ते ठाणाणं पयडीण होदि परिसंखा ॥ ५२९ ॥

तीर्थेनाहारद्विकमेकसराहेण बंधमेतीति।
प्रक्षिप्ते स्थानानां प्रकृतीनां भवति परिसंख्या ॥ ५२९ ॥

जी० प्र०—तीर्थेन सहाहारकद्वयं युगपद् बंधमेति तेन सामान्यत्रयोविंशतौ योग्यप्रकृतिप्रक्षेपे स्थानसंख्या प्रकृतिसंख्या च स्यात् ॥ ५२९ ॥ तामेव गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—तीर्थंकर सहित आहारक द्विक है सो 'एकसराहेण' कहिए एक कालकरि युगपत बंधकौं प्राप्त हो है तातैं पूर्वोक्त सामान्य तेईसका बंध कह्या तिसविषैं यथायोग्य प्रकृति मिलाएं स्थाननिकी वा प्रकृतिनिकी संख्या हो है ॥ ५२९ ॥ तिसहीकौं दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

एयक्खअपज्जत्तं इगिपज्जत्तबितिचपणरापज्जत्तं।
एइंदियपज्जत्तं सुरणिरयगईहिं संजुत्तं ॥ ५३० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पज्जत्तगवितिचपमणुसदेवगदिसंजुदाणि दोण्णि पुणो।
सुरगइजुदमगइजुदं बंधट्ठाणाणि णामस्स ॥५३१॥

एकाक्षापर्याप्तमेकपर्याप्तं द्वित्रिचपनरापर्याप्तं।
एकेंद्रियपर्याप्तं सुरनिरयगतिभ्यां संयुक्तं ॥ ५३० ॥
पर्याप्तकद्वित्रिचपं मानुषदेवगतिसंयुते द्वे पुनः।
सुरगातियुतमगातियुतं बंधस्थानानि नाम्नः ॥ ५३१ ॥

जी० प्र०—तन्नवध्रुवाद्यानुपूर्व्यांतप्रकृतिबंधत्रयोविंशतिकं। स्थावरापर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रिययुतं तदेकेंद्रियापर्याप्तयुतं २३ ए अ। तत्रापर्याप्तमपनीय
१
पर्याप्तोच्छ्वासपरघातेषु निक्षिप्तेषु पंचविंशतिकमेकेंद्रियपर्याप्तयुतं। पुनः स्थावरपर्याप्तैकेंद्रियोच्छ्वासपरघातान् पंचापनीय त्रसापर्याप्तद्वींद्रियसंहननांगोपांगेषु पंचसु निक्षिप्तेषु तद्द्वींद्रियापर्याप्तयुतं पुनः द्वींद्रियमपनीय त्रींद्रिये निक्षिप्ते तत्त्रींद्रियापर्याप्तयुतं, पुनः त्रींद्रियमपनीय चतुरिंद्रिये निक्षिप्ते तच्चतुरिंद्रियापर्याप्तयुतं। पुनः चतुरिंद्रियमपनीय पंचेंद्रिये निक्षिप्ते तत्पंचेंद्रियापर्याप्तयुतं। पुनः तिर्यग्गतिमपनीय मनुष्यगतौ निक्षिप्तायां तन्मनुष्यापर्याप्तयुतं २५ ए प बि ति च प म अ। तत्र त्रसापर्याप्तमनुष्यगतिपंचेंद्रियसंहननांगोपांगानि षडपनीय स्थावरपर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रियोच्छ्वासपरघातेषु षट्स्वातपे च निक्षिप्तेषु षड्विंशतिकमेकेंद्रियपर्याप्तयुतं। पुनः आतपमपनीयोद्योते निक्षिप्तेऽपि तदेव २६ ए प। अष्टाविंशतिकं तु नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरास्थिरैकतरशुभाशुभैकतरसुभगादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्येकतरदेवगतिपंचेंद्रियवैक्रियिकप्रथमसंस्थानदेवगत्यानुपूर्व्यवैक्रियिकांगोपांगसुस्वरप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघातं तद्देवगतियुतं नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकास्थिराशुभदुर्भगानादेयायशस्कीर्तिनरकगतिपंचेंद्रियवैक्रियिकशरीरहुंडसंस्थाननरकगत्यानुपूर्व्यवैक्रियिकांगोपांगदुःस्वराप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघातं तन्नरकगतियुतं २८ दे नि। एकान्नत्रिंशत्कं च नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरास्थिरैकतरशुभाशुभैकतरदुर्भगानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्येकतरतिर्यग्गतिद्वींद्रियौदारिकशरीरहुंडसंस्थानतिर्यग्गत्यानुपूर्व्यासंप्राप्तसृपाटिकौदारिकांगोपांगदुःस्वराप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघातं तस्य द्वींद्रिययुतं। तत्र द्वींद्रियमपनीय त्रींद्रिये निक्षिप्ते तत्पर्याप्तत्रींद्रिययुतं। पुनः त्रींद्रियमपनीय चतुरिंद्रिये निक्षिप्ते तत्पर्याप्तचतुरिंद्रिययुतं। पुनः चतुरिंद्रियमपनीय पंचेंद्रिये निक्षिप्ते तत्पर्याप्तपंचेंद्रिययुतं। अत्र स्थिरास्थिरशुभाशुभसुभगदुर्भगादेयानादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्तिषट्संस्थानषट्संहननसुस्वरदुःस्वरप्रशस्ताप्रशस्तविहायोगत्येकतरमिति विशेषः। तत्र तिर्यग्गतितदानुपूर्व्ये अपनीय मनुष्यगतितदानुपूर्व्यनिक्षेपे तत्पर्याप्तमनुष्यगतियुतं। पुनः नवध्रुवत्रसबादरपर्याप्तप्रत्येकस्थिरास्थिरैकतरशुभाशुभैकतरसुभगादेययशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्येकतरदेवगतिपंचेंद्रिय-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वैक्रियिकशरीरप्रथमसंस्थानदेवगत्यानुपूर्व्यवैक्रियिकांगोपांगसुस्वरप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासपरघाततीर्थकरं तद्देवगतियुतं मनुष्यासंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिनो बध्नंति प २९ वि ति च प म दे। एतेष्वाद्यानि चत्वार्युद्योतयुतानि पर्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिययुतं त्रिंशत्कानि। मनुष्यगत्येकान्नत्रिंशत्कं तीर्थयुतं देवनारकासंयतबंधयोग्यं मनुष्यगतित्रिंशत्कं स्यात्। तच्च स्थिरास्थिरशुभाशुभयशस्कीर्त्ययशस्कीर्तिसुभगदुर्भगैकतरयुतमिति विशेषः। पुनः देवगत्येकान्नत्रिंशत्कं तीर्थमपनीयाहारकद्वययुतं देवगतित्रिंशत्कं स्यात्। तच्चाप्रमत्तो बध्नाति ३० प वि ति च प म दे। पुनः देवगतितीर्थयुतैकान्नत्रिंशत्कं आहारकद्वययुतं अप्रमत्तबंधयोग्यं एकत्रिंशत्कं स्यात् ३१ सु। एककमगति अपूर्वकरणषष्ठभागादासूक्ष्मसांपरायांता बध्नंति ॥ ५३१ ॥ एवं नामबंधस्थानान्युक्त्वा तद्भंगानाह—

स॰ चं॰—नामकर्मके एक जीवकैं एकसमयविषैं बंध संभवै असे बंधस्थान कहिए है—तहां पूर्वोक्त नव ध्रुवबंधी आदि आनुपूर्वी पर्यंत तेईस प्रकृति सो तिनविषैं स्थावर अपर्याप्त तिर्यंच गति एकेन्द्रिय जाति संयुक्त जो बंध सो एकेन्द्री अपर्याप्तयुत तेईसका बंध स्थान है २३/१ ए अ। बहुरि यामैं अपर्याप्त प्रकृति घटाइ पर्याप्त १ उस्वास १ परघात १ ए तीन मिलाइए तब एकेन्द्री पर्याप्त युत पचीसका बंध स्थान हो है। बहुरि इन विषैं स्थावर १ पर्याप्त १ एकेन्द्रीजाति १ उस्वास १ परघात १ इन पंचनिकौं घटाइ त्रस १ अपर्याप्त १ वेन्द्री जाति १ स्फाटकसंहनन १ औदारिक अंगोपांग १ ए पांच मिलाइए तब द्वीन्द्रिय अपर्याप्त युत पचीसका स्थान होइ। बहुरि इनविषैं बेन्द्री जाति घटाइ तेंद्री जाति मिलाइए तब त्रींद्रिय अपर्याप्त युत पचीसका स्थान होइ। बहुरि इनविषैं तेंद्री जाति घटाइ चौंद्री जाति मिलाइए तब चतुरिंद्रिय अपर्याप्त युत पचीसका स्थान होइ है। बहुरि इनविषैं चौंद्री जाति घटाइ पंचेंद्री जाति मिलाइए तब पंचेंद्रिय अपर्याप्त युत पचीसका स्थान होइ। बहुरि इनविषैं तिर्यंच गति घटाइ मनुष्य गति मिलाइए तब मनुष्य अपर्याप्त युत पचीसका स्थान होइ

ए	प	वि	ति	च	पं	म	अ
	१	१	१	१	१	१	

ऐसैं ए पचीस प्रकृतिरूप बंध स्थान छह भए। बहुरि तिस मनुष्यगति युत पचीसका स्थानविषै त्रस १ अपर्याप्त १ मनुष्यगति १ पचेंद्री जाति १ सृपाटिका संहनन १ औदारिक अंगोपांग १ ए छह प्रकृति घटाइ स्थावर १ पर्याप्त १ तिर्यंच गति १ एकेंद्री

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जाति १ उस्वास १ परघात १ ए छह अर आतप १ इन सातनिकौं मिलाएं एकेंद्री पर्याप्त युत छब्बीसका बंधस्थान होहै। बहुरि इनविषै आतप घटाइ उद्योत मिलाएं भी एकेंद्री पर्याप्त युत छब्बीसका ही बंधस्थान होहै। ए छवीस प्रकृतिरूप दोय स्थान भए। अब अठाईस प्रकृतिरूप कहे हैं—

नव ध्रुवबंधी ९ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक १ स्थिर अस्थिरविषैं एक १ शुभ अशुभविषैं एक १ सुभग १ आदेय १ यशस्कीर्ति अयशस्कीर्तिविषैं एक १ देवगति १ पंचेंद्री जाति १ वैक्रियिक शरीर १ प्रथम संस्थान १ देवगत्यानुपूर्वी १ वैक्रियिक अंगोपांग १ सुस्वर १ प्रशस्तविहायोगति १ उस्वास १ परघात १ इन अठाईसरूप देवगति युत अठाईसका स्थान होहै। बहुरि नव ध्रुवबंधी ९ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक १ अस्थिर १ अशुभ १ दुर्भग १ अनादेय १ अयशस्कीर्ति १ नरकगति १ पंचेंद्री जाति १ वैक्रियिक शरीर १ हुंड संस्थान १ नरकगत्यानुपूर्वी १ वैक्रियिक अंगोपांग १ दुःस्वर १ अप्रशस्तविहायोगति १ उस्वास १ परघात १ इन रूपयुत नरक गतियुत अठाईसका स्थान होहै। ए दोय अठाईसके बंधरूप स्थान भए। बहुरि नव ध्रुवबंधी ९ त्रस १ बादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक १ स्थिर अस्थिरविषैं एक १ शुभ अशुभविषैं एक १ दुर्भग १ अनादेय १ यशस्कीर्ति अयशस्कीर्तिविषैं एक १ तिर्यंचगति १ वेंद्रीजाति १ औदारिक शरीर १ हुंडसंस्थान १ तिर्यंच गत्यानुपूर्वी १ असंप्राप्तासृपाटिका संहनन १ औदारिक अंगोपांग १ दुःस्वर १ अप्रशस्तविहायोगति १ उस्वास १ परघात १ इन रूप द्वींद्रिय पर्याप्त युत गुणतीसका स्थान होहै। बहुरि इनविषैं वेंद्री जाति घटाइ तेंद्री जाति मिलाएं त्रींद्रिय पर्याप्तयुत गुणतीसका स्थान होइ। बहुरि इन विषैं तेंद्री जाति घटाइ चौंद्री जाति मिलाएं चतुरिंद्रिय पर्याप्त युत गुणतीसका स्थान हो है। बहुरि इनविषैं चतुरिंद्रिय जाति घटाइ पंचेंद्रिय जाति मिलाइए अर इहां स्थिर अस्थिर १ शुभ अशुभ १ सुभग दुर्भग १ आदेय अनादेय १ यशस्कीर्ति अयशस्कीर्ति १ छह संस्थान १ छह संहनन १ सुस्वर दुःस्वर १ प्रशस्त अप्रशस्तविहायोगति इनविषैं कोई एक एक कोई प्रकृति ग्रहण कीजिये तब पंचेंद्रिय पर्याप्त युत गुणतीसका स्थान हो है। बहुरि इनविषैं तिर्यंच गति तिर्यंचानुपूर्वी घटाइ मनुष्यगति अर मनुष्यानुपूर्वी मिलाएं पर्याप्त मनुष्ययुत गु-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णतीसका स्थान हो है। बहुरि नव ध्रुवबंधी ९ त्रस १ वादर १ पर्याप्त १ प्रत्येक एक स्थिर अस्थिरविषैं एक १ शुभ अशुभविषैं एक १ सुभग १ आदेय १ यशस्कीर्ति अयशस्कीर्तिविषैं एक १ देवगति १ पंचेंद्री जाति १ वैक्रियिक शरीर १ प्रथम संस्थान १ देवगत्यानुपूर्वी १ वैक्रियिक अंगोपांग १ सुस्वर १ प्रशस्तविहायोगति १ उस्वास १ परघात १ तीर्थंकर १ इनरूप देव तीर्थंकर युत गुणतीसका स्थान हो है । याकौं असंयतादि च्यारि गुणस्थानवर्ती मनुष्य ही बांधै हैं ऐसैं गुणतीसरूप छह कहे। बहुरि द्वींद्रिय त्रींद्रिय चतुरिंद्रिय पंचेंद्रिय पर्याप्त युत गुणतीसके च्यारि कहे थे तिनविषैं उद्योत प्रकृति मिलाएं पर्याप्त द्वींद्रिय युत तीसका १ पर्याप्त त्रींद्रिय युत तीसका १ पर्याप्त चतुरिंद्रिय युत तीसका १ पर्याप्त पंचेंद्रिय युत तीसका १ ए च्यारि बंध स्थान हो हैं । बहुरि पर्याप्त मनुष्य युत गुणतीसका विषैं तीर्थंकर प्रकृति मिलाएं असंयत देव नारकीकैं बंध योग्य मनुष्यगति युत तीसका स्थान हो है । विशेष इतना जो इहां स्थिर आस्थिर विषैं शुभ अशुभ विषैं यशस्कीर्ति अयशस्कीर्तिविषैं सुभग दुर्भगविषैं एक एक कोई प्रकृतियुत स्थान जानना। बहुरि देवगति युत गुणतीसका स्थानविषैं तीर्थंकर प्रकृति घटाइ आहारक द्विक मिलाइए तब देव गतियुत तीसका स्थान हो है याकौं अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती बांधै है । ऐसैं तीस प्रकृतिरूप छह स्थान भए। बहुरि देवगति तीर्थयुत गुणतीसका स्थानविषैं आहारकद्विक मिलाए अप्रमत्तके बंध योग्य देवगति युत इकतीसका स्थान हो है ऐसैं अपूर्वकरणका छठा भागपर्यंत बंध योग्य इकतीस प्रकृतिरूप एक स्थान है बहुरि एक यशस्कीर्ति प्रकृतिरूप अपूर्वकरणके सातवें भागतैं सूक्ष्मसांपरायपर्यंत एक स्थान है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नामकर्मके बंधस्थाननिका यंत्र ।

तेईसका स्थान १	१ एकेंद्री अपर्याप्त युत २३
पचीसका स्थान ६	१ एकेंद्री पर्याप्त युत २५ १ वेंद्री अपर्याप्त युत २५ १ तेंद्री अपर्याप्त युत २५ १ चौंद्री अपर्याप्त युत २५ १ पंचेंद्री अपर्याप्त युत २५ १ मनुष्य अपर्याप्त युत २५
छवीसके स्थान २	१ एकेंद्री पर्याप्त आतप युत २६ १ एकेंद्री पर्याप्त उद्योत युत २६
अठाईसके स्थान २	१ देवगति युत २८ १ नरकगति युत २८
गुणतीसके स्थान ६	१ वेंद्री पर्याप्त युत २९ १ तेंद्री पर्याप्त युत २९ १ चौंद्री पर्याप्त युत २९ १ पंचेंद्री पर्याप्त युत २९ १ मनुष्य पर्याप्त युत २९ १ देव तीर्थं युत २९
तीसके स्थान ६	१ वेंद्री पर्याप्त उद्योत युत ३० १ तेंद्री पर्याप्त उद्योत युत ३० १ चौंद्री पर्याप्त उद्योत युत ३० १ पंचेंद्री पर्याप्त उद्योत युत ३० १ मनुष्य तीर्थं युत ३० १ देव आहारक युत ३०
इकतीसका स्थान १	१ देव आहारक तीर्थं युत ३१
एकका स्थान १	१ यशस्कीर्तिरूप १

ऐसैं नामकर्मके बंध स्थान कहे ॥ ५३०–५३१ ॥ आगैं इन नाम कर्मनिके बंध स्थाननिके भेद कहे हैं—

संठाणे संहडणे विहायजुम्मे य चरिमछज्जुम्मे ।

अविरुद्धेक्कदरादो बंधट्ठाणेसु भंगा हु ॥ ५३२ ॥

संस्थाने संहनने विहायोयुग्मे च चरमषड्युग्मे ।

अविरुद्धे एकतरात् बन्धस्थानेषु भंगा हि ॥ ५३२ ॥

जी० प्र०—षट् स्थानानि षट् संहननानि विहायोगतियुग्मं प्रत्येकस्थिरशुभसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मानि चोपर्युपरि संस्थाप्य अविरुद्धैकतरग्रहणाद् बंधस्थानेषु खल्वष्टाग्रषट्छताधिकचतुःसहस्री भंगा भवंति ४६०८ ॥ ५३२ ॥ अत्र नरकगतियुतस्य सर्वापर्याप्तयुतानां च कतीति चेदाह—

सं० च०—छह संस्थान छह संहनन विहायोगति युगल प्रत्येक स्थिर शुभ सुभग आदेय यशस्कीर्ति अर इनके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रति पक्षीरूप छह युगल इनविषैं एक एकका बंध पाइए सो इनकौं ऊपरि ऊपरि स्थापनकरि अविरुद्ध एक एकका ग्रहण कीएं प्रकृतिके वदलनेतैं भंग हो हैं सो इन सत्रनिकौं ६ ६ २ २ २ २ २ २ २ परस्पर गुणन कीएं छियालीससै आठ भंग हो हैं। जैसैं प्रथम संस्थान सहित स्थान कह्या पीछैं दूसरा सहित कह्या ऐसैं संचारकरि एक एक प्रकृति बदलनेतैं ए भंग हो हैं ऐसा भावार्थ जानना ॥ ५३२ ॥

तत्थासत्थो णारयसव्वापुण्णेण होदि बंधो दु।
एक्कदराभावादो तत्थेक्को चेव भंगो दु ॥ ५३३ ॥

तत्राशस्तो नारकसर्वापूर्णेन भवति बन्धस्तु।
एकतराभावात् तत्रैकश्चैव भंगस्तु ॥ ५३३ ॥

जी० प्र०—तत्र प्रशस्ताप्रशस्तबंधमध्ये नरकगत्या त्रसस्थावरयुतसर्वापर्याप्तेन च बंधः, अप्रशस्त एव स्यात्। कुतः? एकतरप्रतिपक्षबंधाभावात्। तेन प्रागुक्तैकचत्वारिंशत्पदेषु नरकगतियुताष्टाविंशतिकेषु एकेंद्रियापर्याप्तयुतैकादशत्रयोविंशतिकेषु, त्रसापर्याप्तयुतषट्पंचविंशतिकेषु चैकैक एव भंगः स्यात् ॥ ५३३ ॥

सं० च०—तिन प्रशस्त अप्रशस्त बंधरूप प्रकृतिनिविषैं नरकगति सहित हुंड संस्थान अप्रशस्त विहायोगति आदि एक एक अप्रशस्त प्रकृतिनिहीका बंध है बहुरि त्रस स्थावर सहित जो अपर्याप्त तीहिं सहित दुर्भग अनादेय आदि अप्रशस्त प्रकृतिनिहीका बंध है जातैं इनविषैं बंध योग्य एक प्रकृतिका प्रतिपक्षी प्रकृतिनिका बंध नाहीं संस्थानादिविषैं जाका बंध है तिस एक एक ही प्रकृतिका बंध है तातैं पूर्वैं इकतालीस पद कहे थे तिनविषैं नरक गति सहित अठाईसका स्थानविषैं अर एकेंद्रिय युत ग्यारह पदनिकें अपर्याप्तयुत तेईसका स्थाननिविषैं अर त्रस सहित छह पद तिनके अपर्याप्त युत पचीसका स्थाननिविषैं एक एक ही भंग है ॥ ५३३ ॥

१	२३	२५
	१	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्थासत्थ एदि हु साहारणथूलसव्वसुहुमाणं ।
पज्जत्तेण य थिरसुहजुम्मेक्कदरं तु चदुभंगा ॥ ५३४ ॥

तत्राशस्ता एति हि साधारणस्थूलसर्वसूक्ष्माणाम् ।
पर्याप्तेन च स्थिरशुभयुग्मैकतरं तु चतुर्भंगाः ॥ ५३४ ॥

जी० प्र०—तत्र तेषु एकेंद्रियभेदेषु साधारणवनस्पतिबादरपर्याप्तेन सर्वसूक्ष्माणांपर्याप्तेन च पंचविंशतिकं खलु अप्रशस्तं बंधमेति तेन स्थिरशुभयुग्मयोरेकैव प्रकृतिबंधाच्चत्वारो भंगा भवंति $\frac{२५}{४}$ । साधारणबादरवनस्पतिपर्याप्तयुतपंचविंशतिके पृथिव्यप्तेजोवायुसाधारणानां सूक्ष्मपर्याप्तयुतपंचविंशतिकपंचके च चत्वारो भंगा भवंतीत्यर्थः ॥ ५३४ ॥

सं० च०—तिन एकेंद्रियके ग्यारह भेदनिविषैं साधारण वनस्पती बादर पर्याप्त अर सर्व सूक्ष्म पर्याप्त सहित पचीसका बंध स्थानविषैं भी तिन पूर्वोक्त प्रकृतिनिंविषैं एक एक अप्रशस्तहीका बंध है । विशेष इतना—स्थिर अस्थिरविषैं कै स्थिरका बंध होइ कै अस्थिरका होइ अर शुभ अशुभ युगलविषैं कै शुभका कै अशुभका बंध होइ तातैं इन दोऊ युगलनिकरि साधारण बादर वनस्पती पर्याप्त सहित पचीसका स्थानविषैं अर पृथ्वी अप तेज वायु साधारणनिका सूक्ष्म पर्याप्त सहित पचीसका स्थान पांच स्थानकनिविषैं च्यारि च्यारि भंग जानने ॥ ५३४ ॥

पुढवीआऊतेऊवाऊपत्तेयवियलसण्णीणं ।
सत्थेण असत्थं थिरसुहजसजुम्मट्ठभंगा हु ॥ ५३५ ॥

पृथिव्यप्तेजोवायुप्रत्येकविकलासंज्ञिनां ।
शस्तेनाशस्तं स्थिरशुभयशोयुग्ममष्टभंगा हि ॥ ५३५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—पृथिव्यप्तेजोवायुप्रत्येकवनस्पतिद्वित्रिचतुरसंज्ञिपंचेंद्रियाणामविरुद्धभाविभवजातपंचविंशतिकषड्विंशतिकैकान्नत्रिंशत्त्रिंशत्कानां त्रसवादरपर्याप्तादियथायोग्यप्रशस्तदुर्भगानादेयाद्यप्रशस्तेन बंधमेति। तेन स्थिरशुभयशोयुग्मकृतभंगाः खल्वष्टावष्टौ भवंति २५ २६ २९ ३० । पृथ्वी-
८ ८ ८ ८
कायवादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकमातपयुतषड्विंशतिकं उद्योतयुतषड्विंशतिकं अप्कायवादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकमुद्योतयुतषड्विंशतिकं तेजस्कायबादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकं वायुकायवादरपर्याप्तयुतपंचविंशतिकं प्रत्येकवनस्पतिपर्याप्तयुतपंचविंशतिकं उद्योतयुतषड्विंशतिकं द्वित्रिचतुरसंज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्कं त्रिंशत्कानि चेति सर्वाण्यष्टाष्टभंगानीत्यर्थः ॥ ५३५ ।. शेषतिर्यक्पंचेंद्रियपर्याप्तयुतसंज्ञिकर्मपदे मनुष्यगतिपर्याप्तयुतमनुष्यकर्मपदे चैकान्नत्रिंशत्कत्रिंशत्कयोर्भंगान् वक्तुं गुणस्थानेषु विभजयति—

स० चं०—पृथ्वी अप तेज वायु प्रत्येक वनस्पती वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्री इनके अविरुद्ध त्रस वादर पर्याप्तादिक यथा संभवतैं भए पचीस छबीस गुणतीस तीसके स्थाननिविषैं दुर्भग अनादेयादिकनिका तो एक एक अप्रशस्तहीनिका बंध है अर स्थिर अस्थिर १ शुभ अशुभ १ यशः अयशः १ इन तीन युगलनिविषैं एक एक प्रशस्त वा अप्रशस्त किसीका बंध हो है तातैं इन तीन युगलनिकी प्रकृति बदलनेतैं आठ आठ भंग हो हैं। पृथ्वी काय वादर पर्याप्त युत पचीसका स्थान आतपयुत वा उद्योत युत छबीसका स्थान बहुरि अपकाय वादर पर्याप्त युत पचीसका स्थान, उद्योत सहित छबीसका स्थान बहुरि तेज कायिक वादर पर्याप्त युत पचीसका स्थान बहुरि वायुकायिक वादर पर्याप्तयुत पचीसका स्थान बहुरि प्रत्येक वनस्पति पर्याप्त युत पचीसका स्थान अर उद्योतयुत छबीसका स्थान बहुरि वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पचेंद्री पर्याप्त सहित गुणतीस तीसके बंध स्थान तिनविषैं आठ आठ भंग हैं ॥ ५३५ ॥ अवशेष तिर्यंच पंचेंद्री पर्याप्तयुत संज्ञी कर्म पदविषैं अर मनुष्यगति पर्याप्तयुत मनुष्य कर्मपदविषैं गुणतीस अर तीसका स्थाननिविषैं भंग कहनेकौं गुणस्थाननिविषैं विभाग करै हैं—

सण्णिस्स मणुस्सस्स य ओघेक्कदरं तु मिच्छभंगा हु ।
छादालसयं अट्ठ य बिदिये बत्तीससयभंगा ॥ ५३६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संज्ञिनो मनुष्यस्य च अधिकतरं तु मिथ्याभंगा हि ।
षद्चत्वारिंशच्छतमष्ट च द्वितीये द्वात्रिंशच्छतभंगाः ॥ ५३६ ॥

जी॰ प्र॰—तिर्यग्गतिपर्याप्तयुतसंज्ञिनः एकान्नत्रिंशत्कोद्योतयुतत्रिंशत्कयोः मनुष्यगतिपर्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्के च सामान्यषट्संस्थानषट्संहननसप्तयुग्मेष्वेकतरबंधमेतीति तेषु खल्वष्टाग्रषट्चत्वारिंशच्छतानि भंगा भवंति। ते च मिथ्यादृष्टेरेव—मि ति २९/४६०८ ३०/४६०८ मि म २९/४६०८ मनुष्यगतियुतत्रिंशत्कं तु तीर्थयुतमसंयतदेवनारकाणामेव बंधान्मिथ्यादृष्टिस्थानभंगेषु नोक्तं। सासादनस्योद्योतरहितैकान्नत्रिंशत्के तद्युतत्रिंशत्के च पंचसंस्थानपंचसंहननसप्तद्विकफृताः द्वात्रिंशच्छतान्येव सा २९/३२०० ३०/३२०० सासादनस्य मनुष्यगतिपंचेंद्रियपर्याप्तयुतैकान्नत्रिंशत्केऽपि तावंतः सा २९/३२०० ॥ ५३६ ॥ अथ मिश्रगुणस्थानादिष्वाह—

स॰ चं॰—तिर्यंच गति पर्याप्त युत संज्ञीका गुणतीसका स्थान अर उद्योत युत तीसका स्थानविषै अर मनुष्य गति पर्याप्त युत गुणतीसका स्थानविषैं सामान्य छह संस्थान छह संहनन विहायोगत्यादिक सात युगल सो इन विषै एक एक करि सर्व प्रकृतिनिका बंध संभवै है तातैं छह संस्थानादिकानिके एक एक करि बदलनेतैं पूर्वोक्त एक एक स्थानविषैं छियालीससै आठ भंग हो हैं ते ए मिथ्यादृष्टिविषैं ही हैं। बहुरि मनुष्य गतियुत तीसका स्थान तीर्थंकर सहित है सो इसका बंध असंयत देव नारकनिहीकैं है तातैं मिथ्यादृष्टिकै बंध स्थान भंगनिविषैं यहु न कह्या। बहुरि सासादनका उद्योत रहित गुणतीसका स्थानविषैं अर उद्योत सहित तीसका स्थानविषैं पांच संस्थान पांच संहनन सात युगलनिविषैं एक एक करि बंध संभवै सो इनकी एक एक प्रकृति बदलनेतैं बत्तीससै बत्तीससै भंग हो हैं। सासादनका मनुष्य गति पंचेंद्री पर्याप्त युत गुणतीसका स्थानविषैं भी ऐसैंही बत्तीससै भंग हैं।५३६।

मिस्साविरदमणुस्सट्ठाणे मिच्छादिदेवजुदठाणे ।
सत्थं तु पमत्तंते थिरसुहजसजुम्मगट्ठभंगा हु ॥५३७॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्राविरतमनुष्यस्थाने मिथ्यादिदेवयुतस्थाने।
शस्तं तु प्रमत्तांते स्थिरशुभयशोयुग्मकाष्टभंगा हि ॥ ५३७ ॥

जी० प्र०—देवनारकमिश्रासंयतयोः पर्याप्तमनुष्यगतियुतैकान्नत्रिंशत्के तद्द्वयासंयतस्य मनुष्यगतिपर्याप्ततीर्थयुतत्रिंशत्के च स्थिरशुभयशोयुग्मकृतभंगा अष्टावष्टौ दुर्भगदुःस्वरानादेयाप्रशस्तविहायोगतिबंधस्य सासादने एव च्छेदात्। मि २९/८ असं २९/८ ३०/८ तिर्यग्मनुष्यमिश्रासंयतयोस्तु मनुष्यगतियुतबंधस्य सासादने छेदात्तत्स्थानद्वयं न बध्नाति। मिथ्यादृष्ट्याद्यसंयतांतानां देवगतियुताष्टाविंशतिके असंयतस्य देवगतितीर्थयुतैकान्नत्रिंशत्के देशसंयतस्य प्रमत्तस्य च देवगतियुततीर्थयुतत्रियुताष्टाविंशतिकैकान्नत्रिंशत्कयोश्च प्रशस्तं बंधमेत्यप्यस्थिराशुभायशस्कीर्तीनां प्रमत्तपर्यंतं बंधात् तत्त्रियुग्मकृत्या अष्टावष्टौ भंगा भवंति खलु स्फुटं मि २८/८। सा २८/८। मि २८/८। अ २८/८, २९/८। दे २८/८। २९/८। प्र २८/८। २९/८

अप्रमत्तापूर्वकरणयोः देवगतियुताष्टाविंशतिके तीर्थयुतैकान्नत्रिंशत्के तीर्थवियुताहारकद्वययुतत्रिंशत्के तीर्थाहारकयुतैकत्रिंशत्के च भंग एकैक एव। अ प्र २८/१ २९/१ ३०/१ ३१/१ अपू २८/१ २९/१ ३०/१ ३१/१ अपूर्वकरणचरमभागप्रथमसमयादासूक्ष्मसांपरायचरमसमयं यशस्कीर्तिबंधरूपैकके भग एकः ॥ ५३७ ॥ अथ भवच्यवनोत्पत्ती प्राह—

सं० च०—देव नारकी मिश्र असंयत गुणस्थानवर्तीकैं पर्याप्त मनुष्यगतियुत गुणतीसका स्थानविषैं बहुरि देव नारकी असंयतकैं मनुष्यगति पर्याप्त तीर्थंकर युत तीसका स्थानविषैं स्थिर अस्थिर शुभ अशुभ यश अयश इन तीन जुगलनिविषैं तो कोऊ एक एक प्रकृतिका बंध है अर और संस्थानादिकविषैं एक एक प्रशस्त प्रकृतिहीका बंध है (दुर्भग) दुस्वर अनादेय अप्रशस्त विहायोगति आदिका बंध व्युच्छेद सासादनविषैं ही भया तातैं तीन युगलनिकी प्रकृति बदलनेतैं एक एक पूर्वोक्त स्थानविषैं आठ आठ भंग हैं। बहुरि तिर्यंच मनुष्य मिश्र असंयत गुणस्थानवर्तीके तिर्यंच मनुष्यविषैं मनुष्यगतिका बंध व्युच्छेद सासादन ही विषैं भया तातैं ते पूर्वोक्त दोऊ स्थान न कहे। बहुरि मिथ्यादृष्ट्यादि असंयतपर्यंत जीवनिके देवगति संयुत अट्ठाईसका स्थानविषैं अर असंयत जीवकैं देवगति तीर्थंकरयुत गुणतीसका स्थानविषैं अर देश संयत प्रमत्त जीवकैं देव गतियुत अठाईस-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

का स्थान अर देवगति तीर्थंकर युत गुणतीसका स्थानविषैं प्रशस्तनिहीका बंध है तथापि अस्थिर अशुभ अयशस्कीर्ति इनका प्रमत्त पर्यंत बंध है तातैं तीन युगलनितैं इन स्थाननिविषैं आठ आठ भंग संभवै हैं । बहुरि अप्रमत्त अपूर्वकरणके देवगति युत अठाईसका तीर्थंकर युत गुणतीसका तीर्थंकर रहित आहारकद्विक युत तीसका तीर्थंकर आहारक द्विक युत इकतीसका इन च्यारयो स्थाननिविषैं प्रतिपक्षी अप्रशस्त प्रकृतिनिका बंध नाहीं तातैं एक एक ही भंग संभवै है । बहुरि अपूर्वकरणका अंतभागका प्रथम समयतैं लगाय सूक्ष्मसांपरायका अंत समय पर्यंत यशस्कीर्ति बंधरूप एकहीका स्थानविषैं एकही भंग है ॥ ५३७ ॥ आगैं पर्यायकौं छोडना या पर्यायविषैं उपजना तिनकौं कहै हैं——

णेरयियाणं गमणं सण्णीपज्जत्तकम्मतिरियणरे ।
चरिमचऊतित्थूणे तेरिच्छे चेव सत्तमिया ॥ ५३८ ॥

नैरयिकाणां गमनं संज्ञिपर्याप्तकर्मतिर्यग्नरे ।
चरमचतुष्कतीर्थोने तिरश्चि चैव सप्तमिकाः ॥ ५३८ ॥

जी० प्र०—नारकाणां गमनं—मृत्वोत्पत्तिः, धर्मादित्रयजानां गर्भजपंचेंद्रियपर्याप्तसंज्ञिकर्मभूमितिर्यग्मनुष्येष्वेव, कुतः ? अर्धसकलचक्रिबलभद्रवर्जितपंचदशकर्मभूमितिर्यग्मनुष्येषु लवणोदकालोदस्वयंप्रभाचलापरभागस्वयंभूरमणद्वीपापरार्धतत्समुद्रतद्बहिश्चतुष्कोणजलस्थलखेचरेषु च तादृक्चैवोत्पत्तेः । त्रिंशत्षण्णवतिभोगकुभोगभूमितिर्यग्मनुष्यमानुषोत्तरस्वयंप्रभाचलांतरालस्थलजघन्यतिर्यग्भोगभूमिजेषु चानुत्पत्तेः । अंजनजानां गमनं धर्मादित्रयोक्तजीवेष्वेव तीर्थंकरोनेषु, अरिष्टाजानां पुनश्चरमांगोनेषु, मघवीजानां पुनः सकलसंयम्यूनेषु, माघवीजानां देशसंयतासंयतमिश्रसासादनवर्जिततादृक्मिथ्यादृष्टितिर्यक्ष्वेव अन्यायुषस्तेषामबंधात् ॥ ५३८ ॥

सं० च०—गमन कहिये मरिकरि उपजना सो नारकी धर्मादि तीन पृथ्वी वालेनिकैं तौ गर्भज पंचेंद्री पर्याप्त सैनी कर्म भूमियां तिर्यंच वा मनुष्यनिविषैं ही गमन है जातैं अर्धचक्री सकलचक्री बलभद्र विना पंद्रह कर्मभूमिके तिर्यंच मनुष्यनिविषैं अर लवणोद कालोद समुद्र वा स्वयंप्रभाचल पर्वत परैं आधा स्वयंभूरमण द्वीपविषैं ६१७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वा सर्व स्वयंभूरमण समुद्रविषैं अर स्वयंभूरमण समुद्रके परैं च्यारयो कूणां जातैं त्रस नाली चौकोर है स्वयंभूरमण समुद्र गोल है तातैं तिन च्यारयो कूंणानिविषैं भी पंचेंद्री तिर्यंच हैं सो इनविषैं आदिके तीन नरकतैं निकसि जीव है सो जलचर स्थलचर नभचर तिर्यंचनिविषैं उपजे है। बहुरि तीस भोगभूमि छिनवै कुभोगभूमिके तिर्यंच मनुष्यनिविषैं वा मानुषोत्तर अर स्वयंप्रभाचलके वीच जघन्य भोगभूमि असंख्याते द्वीप समुद्रनिविषैं हैं तहांके तिर्यंचनिविषैं नाहीं उपजे है। बहुरि अंजना पृथ्वीवाले तीर्थंकर विना अर अरिष्टावाले चरम शरीरी विना अर मघवीवाले सकल संयमी विना पूर्वोक्त तिर्यंच वा मनुष्यनिविषैं उपजै हैं। बहुरि माघवीवाले देश संयत असंयत मिश्र सासादन विना पूर्वोक्त मिथ्यादृष्टि तिर्यंचनिविषैं ही उपजे हैं जातैं तिर्यंच विना अन्य आयुका इनकैं बंध नाहीं ॥ ५३८ ॥

तत्थतणऽविरदसम्मो मिस्सो मणुवदुगमुच्चयं णियमा।
बंधदि गुणपडिवण्णा मरंति मिच्छेव तत्थ भवा॥ ५३९ ॥

तत्रतनोऽविरतसम्यक् मिश्रो मानवद्विकमुच्चकं नियमात्।
बध्नाति गुणप्रातिपन्ना म्रियंते मिथ्ये एव तत्र भवाः ॥ ५३९ ॥

जी० प्र०—तत्रतनः—सप्तमनरकोत्पन्नः असंयतसम्यग्दृष्टिः सम्यग्मिथ्यादृष्टिश्च स्वस्वगुणस्थाने मनुष्यद्विकमुच्चैर्गोत्रं च नियमेन बध्नाति तत्र भवाः सासादनमिश्रासंयतगुणप्रतिपन्नास्तु यदा म्रियंते तदा मिथ्यादृष्टिगुणस्थाने गत्वैव ॥ ५३९ ॥

सं० च०—तत्रतनः कहिए सातवां माघवी नरकविषैं उपज्या जीव असंयत सम्यग्दृष्टी अर मिश्र गुणस्थानवर्ती सो अपने अपने गुणस्थानविषैं मनुष्य गति वा आनुपूर्वी अर उच्चगोत्र इनकौं नियमकरि बांधे है। बहुरि तहांके उपजे सासादन मिश्र असंयत गुणस्थानकौं प्राप्त भए जीव ते जिस काल मरैं तिसकाल मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं प्राप्त होइ करि ही मरे हैं॥ ५३९ ॥ ६९८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेउदुगं तेरिच्छे सेसेगअपुण्णवियलगा य तहा।
तित्थूणणरेवि तहाऽसण्णी घम्मे य देवदुगे ॥ ५४० ॥

तेजोद्विकं तिरश्चि शेषैकापूर्णविकलकाश्च तथा।
तीर्थोननरेऽपि तथा असंज्ञी घर्मे च देवद्विके ॥ ५४० ॥

जी० प्र०—वादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ततेजोवातकायिकाः नियमेन तिर्यग्गतावेवोत्पद्यंते सर्वभोगभूमिजपंचेंद्रियवर्जितत्रिलोकोदरवर्तिसर्ववादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तपृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणपर्याप्तापर्याप्तप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकद्वित्रिचतुःसंज्ञ्यसंज्ञिपंचेंद्रियतिर्यगायुषामेव बंधात् । शेषाः वादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तपृथ्व्यप्कायिकनित्यचतुर्गतिनिगोदाः पर्याप्तापर्याप्तप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकाः पर्याप्तापर्याप्तद्वित्रिचतुरिंद्रियाश्च तेजोद्विकोक्ततिर्यक्षु त्रिषष्टिशलाकापुरुषवर्जितमनुष्येषु च । तत्र नित्यचतुर्गतिसूक्ष्मनिगोदागतमनुष्याः सम्यक्त्वं देशसंयमं च गृह्णीयुर्न सकलसंयममित्युपदेशः । असंज्ञी पृथ्वीकायिकोक्ततिर्यग्मनुष्येषु प्रथमनरके भावनव्यंतरयोश्च न शेषदेवनारकेषु । कुतः ? तदायुःस्थितिबंधस्योत्कृष्टेन पल्यासंख्येयभागमात्रत्वात् ॥ ५४० ॥

सं० च०—तिर्यंचगतिविषैं वादर वा सूक्ष्म पर्याप्त वा अपर्याप्त जे तेजस्कायिक वा वातकायिक जीव हैं ते मरिकरि तिर्यंच गति ही विषैं नियमतैं उपजै हैं जातैं सर्व भोग भूमिया पंचेंद्री विना अन्य सर्वत्रिलोकवर्ती वादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त पृथ्वी अप तेज वायु साधारण पर्याप्त अपर्याप्त प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित प्रत्येक वेंद्री तेंद्री चौंद्री सैनी असैनी पंचेंद्री इन सर्व तिर्यंचनिविषैं तेजकाय वायुकायके जीव उपजै हैं । बहुरि अवशेष वादर वा सूक्ष्म पर्याप्त वा अपर्याप्त पृथ्वीकायिक वा अप्कायिक बहुरि नित्य निगोदिया चतुर्गति निगोदिया पर्याप्त वा अपर्याप्त बहुरि प्रतिष्ठित वा अप्रतिष्ठित प्रत्येक बहुरि पर्याप्त वा अपर्याप्त वेंद्री तेंद्री चौंद्री इतने जीव मरिकरि तेज वायुवत् तिर्यंचनिविषैं अर तरेसठि शलाका पुरुष विना मनुष्यनिविषैं उपजैं हैं। इतना विशेष—जो नित्य चतुर्गति सूक्ष्म निगोदतैं आए मनुष्य सम्यक्त्व वा देश संयमको ग्रहैं हैं अर सकल संयमको न ग्रहैं अर असंज्ञी पंचेंद्री हैं सो पृथ्वीकायिकवत् तिर्यंच मनुष्यनिविषैं वा प्रथम नरकविषैं वा भवनवासी व्यंतरदेवानिविषै उपजै हैं बहुरि अन्य देव नारकीनिविषैं उपजैं नाहीं हैं जातैं असंज्ञीकैं आयुका उत्कृष्ट स्थिति बंध पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण ही है॥ ५४० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सण्णीवि तहा सेसे णिरये भोगेवि अच्चुदंतेवि ।
मणुवा जंति चउग्गादिपरियंतं सिद्धिठाणं च ॥ ५४१ ॥

संज्ञी अपि तथा शेषे निरये भोगेऽपि अच्युतांतेऽपि ।
मानवा यांति चतुर्गतिपर्यंतं सिद्धिस्थानं च ॥ ५४१ ॥

जी० प्र०–संज्ञितिर्यङ्ङप्यसंज्ञ्युक्तसर्वजीवेषु सर्वनारकेषु सर्वभोगभूमिजेष्वच्युतांतसर्वदेवेषु च जायते। कर्मभूमिमनुष्याः पर्याप्ताः संज्ञ्युक्तसर्वजीवेषु कल्पातीतदेवेषु च, तदपर्याप्ताः पर्याप्तापर्याप्तकर्मभूमिसर्वतिर्यग्सामान्यमनुष्येषु, त्रिंशद्भोगभूमितिर्यग्मनुष्या जघन्यतिर्यग्भोगभूमितिर्यंचश्च सम्यग्दृष्टयः सौधर्मद्वये तन्मिथ्यादृष्टिसासादनाः कुमनुष्याश्च भवनत्रये, चरमांगाः स्वात्मोपलब्धिलक्षणां सिद्धिस्थानमाप्नुवंति ॥ ५४१ ॥

सं० च०–बहुरि संज्ञी तिर्यंच भी असंज्ञी पंचेंद्रीवत् सबनिविषैं अर सर्व नारकीनिविषैं वा सर्व भोग भूमियांनिविषैं वा अच्युत स्वर्गपर्यंत सर्व देवनिविषैं उपजै हैं। बहुरि कर्मभूमिया पर्याप्त मनुष्य हैं ते संज्ञीवत् सर्व जीवनिविषैं वा कल्पातीत अहमिंद्र देवनिविषैं उपजै हैं। बहुरि अपर्याप्त मनुष्य हैं ते कर्मभूमिया तिर्यंचनिविषैं वा तीर्थंकरादि पद रहित सामान्य मनुष्यनिविषैं उपजै हैं। बहुरि तीस भोगभूमिके तिर्यंच वा मनुष्य अर असंख्यात द्वीप समुद्र संबंधी जघन्य तिर्यंच संबंधी भोग भूमिके तिर्यंच ते सम्यग्दृष्टी तो सौधर्म ईशानविषैं उपजैं हैं अर तेई मिथ्यादृष्टी सासादन अर कुभोगभूमिया मनुष्य ते भवनात्रिक देवनिविषैं उपजैं हैं। बहुरि चरम शरीरी मनुष्य हैं ते स्वात्मोपलब्धिरूप सिद्धिस्थानकौं प्राप्त हो ही हैं ॥ ५४१ ॥

आहारगा दु देवे देवाणं सण्णिकम्मातिरियणरे ।
पत्तेयपुढविआऊबादरपज्जत्तगे गमणं ॥ ५४२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भवणतियाणं एवं तित्थूणणरेसु चेव उप्पत्ती ।
ईसाणंताणेगे सदरदुगंताण सण्णीसु ॥ ५४३ ॥

आहारकास्तु देवे देवानां संज्ञिकर्मतिर्यग्नरे ।
प्रत्येकपृथिव्यब्वादरपर्याप्तके गमनं ॥ ५५२ ॥
भवनत्रिकाणामेवं तीर्थोननरेषु चैवोत्पत्तिः ।
ईशानांतयोरेकस्मिन् शतारद्विकांतानां संज्ञिषु ॥ ५५३ ॥

जी० प्र०—आहारकदेहेन मृतप्रमत्तसंयतानां गमनं वैमानिकेष्वेव भवति । देवानामुत्पत्तिः सर्वार्थसिद्ध्यंतानां पंचदशकर्मभूमिमनुष्येष्वेव नान्यत्र सहस्रारांतानां तेषु च पंचदशकर्मभूमिलवणोदककालोदकस्वयंभूरमणद्वीपपरार्धतत्समुद्रसंज्ञिपर्याप्तजलस्थलखचरतिर्यक्षु च ईशानांतानां तेषु च वादरपर्याप्तपृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिभेदैकेंद्रिये च । भवनत्रयाणां तेष्वपि मनुष्येषु तीर्थकरादित्रिषष्टिशलाकापुरुषवर्जितेष्वेव ॥५४३॥ एवं चतुर्गतिजानां च्यवनोपपादान् संक्षेपेणोक्त्वाधुना तानि बंधस्थानानि चतुर्दशमार्गणासु गाथाष्टकेनाह—

स० चं०—आहारक देह सहित मरे प्रमत्त संयमी तिनका गमन वैमानिक देवनिविषैं ही है। बहुरि देव सर्वार्थसिद्धि पर्यंतनिका पंद्रह कर्मभूमिके मनुष्यनिविषैं ही गमन है अन्यत्र नाहीं, बहुरि सहस्रार पर्यंत देवनिका तिन मनुष्यनिविषैं वा पंद्रह कर्मभूमि लवणोद कालोद समुद्र स्वयंभूरमण द्वीपका अपरार्ध स्वयंभूरमण समुद्रवर्ती संज्ञी पर्याप्त जलचर स्थलचर नभचर तिर्यंचनिविषैं उपजना है। बहुरि ईशान पर्यंत देवनिका तिन पूर्वोक्त मनुष्य तिर्यंचनिविषैं वा वादर पर्याप्त पृथ्वी अप प्रत्येक वनस्पतीरूप एकेंद्रियविषैं भी उपजै हैं। बहुरि भवनत्रिक देवनिका भी सौधर्म ईशानवत् ही उपजना है। विशेष इतना—जो मनुष्यनिविषैं तीर्थंकरादिक तरेसठि शलाका पुरुषनिविषैं ते नाहीं उपजैं हैं ॥ ५४२–५४३ ॥ ऐसैं च्यार्यो गतिके जीवनिका च्यवन उत्पत्तिकौं संक्षेपताकरि कहि आगैं तिन नामकर्मके बंध स्थाननिकौं चौदह मार्गणानिविषैं आठ गाथानिकरि कहे हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णामस्स बंधठाणा णिरयादिसु णवयवीस तीसमदो ।
आदिमछक्कं सव्वं पणछण्णववीस तीसं च ॥ ५४४ ॥

नाम्नः बंधस्थानानि निरयादिषु नवकाविंशं त्रिंशदतः ।
आदिमषट्कं सर्वं पंचषट्नवविंशं त्रिंशच्च ॥ ५४४ ॥

जी० प्र०—नामबंधस्थानानि नरकादिगतिषु क्रमेण नरकगतौ नवविंशतिकं त्रिंशत्कं च । तत्र नवविंशतिकं पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतं पर्याप्तमनुष्यगतियुतं च मघवीपर्यंता बध्नंति । त्रिंशत्कं पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमुद्योतयुतं च माघवीपर्यंताः बंध्नंति । पर्याप्तमनुष्यगतितीर्थयुतं मेघापर्यंता बध्नंति । मार्गणासु गुणस्थानविवक्षया तद्योजनिका सुगमा, गतींद्रियपर्याप्तादिविशेषाणां प्रतिस्थानं प्राक् प्रतिपादनात् । तत्र नारका मिथ्यादृष्टयः सासादनाश्च तिर्यग्गतियुतं मनुष्यगतियुतं च नवविंशतिकं बध्नंति । सम्यग्मिथ्यादृष्टयः मनुष्यगतियुतमेव । तिर्यग्गतिद्वयोद्योतबंधस्य सासादने छेदात् । असंयता मनुष्यगतियुतं च नवविंशतिकं तत्केचिदाद्यत्रिनरके मनुष्यगतिपर्याप्ततीर्थयुतं त्रिंशत्कं च । तिर्यग्गतौ आद्यान्येव षट् । तत्र त्रयोविंशतिकं स्थावरबादरापर्याप्तैकेंद्रिययुतं स्थावरसूक्ष्मापर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रिययुतं च । पंचविंशतिकमेकेंद्रियबादरपर्याप्तयुतमेकेंद्रियसूक्ष्मपर्याप्तयुतं, त्रसापर्याप्तद्वींद्रियत्रींद्रियचतुरिंद्रियपंचेंद्रिययुतं त्रसापर्याप्तमनुष्यगतियुतं च । षड्विंशतिकं पृथ्वीकायविशिष्टबादरैकेंद्रियातपतिर्यग्गतियुतं तेजोवायुसाधारणोनैकेंद्रियं बादरापर्याप्तोद्योततिर्यग्गतियुतं च । अष्टाविंशतिकं त्रसपर्याप्तनरकगतियुतं त्रसपर्याप्तदेवगतियुतं च । नवविंशतिकं त्रसपर्याप्तद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यग्गतियुतं त्रसपर्याप्तमनुष्यगतियुतं च । त्रिंशत्कं त्रसबादरपर्याप्तद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यग्गत्युद्योतयुतं । लब्ध्यपर्याप्तेषु तान्येवाष्टाविंशतिकं विना पंच । मनुष्यगतौ सर्वाणि । देवगतौ पंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि ॥ ५४४ ॥ अथेंद्रियादिमार्गणास्वाह—

स० चं०—नामकर्मके बंधस्थान नरकादि गतिविषैं क्रमतैं नरकगति विषैं तौ गुणतीस तीसके दोय स्थानबंध हैं । तहां पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच गति युत अर मनुष्य गतियुत गुणतीसके स्थानकौं तौ मघवी पर्यंत बांधै हैं अर पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच गति युत गुणतीसका वा उद्योत युत तीसका स्थानकौं माघवी पर्यंत बांधै हैं अर पर्याप्त मनुष्य गति तीर्थंकर सहित तीसके स्थानकौं मेघा पृथ्वी पर्यंतही बांधै है । बहुरि मार्गणानिविषैं गुणस्थान विवक्षाकरि तिन स्थाननिका लगावना सुगम है जातैं गति इंद्री पर्याप्तादिकके विशेष स्थान २ प्रति कहे हैं । तहां नारकी मिथ्यादृष्टि वा सासादन सो तिर्यंच गति युक्त वा मनुष्य गति युक्त गुणतीसके स्थानकौं बांधै

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है । सम्यग्मिथ्यादृष्टी मनुष्य गतियुक्त गुणतीसकौं ही बांधै है जातैं तिर्यंच गति द्विक अर उद्योतका बंध व्युच्छेद सासादनविषैं ही भया है। बहुरि असंयत मनुष्य गति युत गुणतीसके स्थानकौं वा आदिके तीन नरकनिविषैं मनुष्यगति पर्याप्त तीर्थंकर सहित तीसके स्थानकौं बांधै है । बहुरि तिर्यंच गतिविषैं आदिके छह स्थान हैं तहां स्थावर वादर अपर्याप्त एकेंद्री सहित वा स्थावर सूक्ष्म अपर्याप्त तिर्यंच गति एकेंद्री सहित तेईसके स्थानकौं बांधै है। बहुरि एकेंद्री वादर पर्याप्त सहित वा एकेंद्री सूक्ष्म पर्याप्त सहित वा त्रस अपर्याप्त वेंद्री वा तेंद्री वा चौंद्री वा पंचेंद्री जाति तिर्यंचगति सहित वा त्रस अपर्याप्त मनुष्यगति सहित पचीसके स्थानकौं बांधै है । बहुरि पृथ्वी काय विशेषरूप वादर एकेंद्री जाति आतप तिर्यंच गति सहित वा तेज काय वात काय साधारण विना अन्य एकेंद्री वादर अपर्याप्त उद्योत तिर्यंच गति सहित छवीसके स्थानकौं बांधै है बहुरि त्रस पर्याप्त नरकगति सहित वा त्रस पर्याप्त देव गति सहित अठाईसके स्थानकौं बांधै हैं। बहुरि त्रस पर्याप्त वेंद्री वा तेंद्री वा चौंद्री वा पंचेंद्री तिर्यंच गति सहित वा त्रस पर्याप्त मनुष्य गति सहित गुणतीसके स्थानकौं बांधै है बहुरि त्रस वादर पर्याप्त वेंद्री वा तेंद्री वा चौंद्री वा पंचेंद्री तिर्यंच गति उद्योत सहित तीसके स्थानकौं बांधै हैं । ऐसैं छह स्थान हैं । बहुरि लब्धि अपर्याप्त तिर्यंच है सो अठाईसके विना पांच ही स्थाननिकौं बांधै है । बहुरि मनुष्यगतिविषैं सर्व ही स्थाननिकौं बांधै है। बहुरि देव गतिविषैं पचीस छवीस गुणतीस तीसके च्यारि स्थाननिकौं बांधै हैं ॥ ५४४ ॥

पंचक्खतसे सव्वं अडवीसूणादिछक्कयं सेसे ।
चउमणवयणोराले सड देवं वा विगुव्वदुगे ॥ ५४५ ॥

पंचाक्षत्रसे सर्वमष्टाविंशोनादिषट्कं शेषे ।
चतुर्मनोवचनौराले सर्वं देवं वा वैगूर्वद्विके ॥ ५४५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—इंद्रियमार्गणायां पंचेंद्रिये कायमार्गणायां त्रसे च सर्वाणि, शेषासु एकेंद्रियादिषु चतसृषु पृथ्वीकायादिषु पंचसु च मार्गणासु

१ एतद्गाथायाष्टीका अभयचंद्रनामांकितायां टीकायां विभिन्नतयोपलब्धा। सा च यथा—इंद्रियमार्गणायां पंचेंद्रिये सर्वे २३। ए अ। २५। ए प। त्र अ। २६। ए आ। उ। २८। न। दे। २९। वि ति च अ सं म दे ती। ३० वि ति च अ सं ति उ म ती दे आ। ३१ देती आ। १ अगति। इदं पंचेंद्रियत्वं नारकेषु संज्ञ्यसंज्ञितिर्यक्षु मनुष्येषु देवेषु च स्यात्। भवप्रथमसमये पंचेंद्रियनामोदयाविर्भूतपंचेंद्रियाण्येष्विति पंचेंद्रियाः, तस्य सादृश्यसामान्यत्वात्

धर्मे धर्मेऽन्य एवार्थो धर्मिणोऽनंतधर्मणः। अंगित्वेऽन्यतमांगस्य शेषांतानां तदंगता ॥ १ ॥

पूर्वोत्तरपर्यायरूपधर्माणां विवक्षयाऽनंतधर्मणो धर्मे धर्मे धर्मं धर्मं प्रति अन्य एवार्थः पृथक् पृथगेवार्थः। तेषु पृथगर्थेष्वन्यतमस्य कस्यचिद्विवक्षितस्य धर्मस्यावयवित्वे सति शेषधर्माणां तदंगता तदवयवता इत्यूर्ध्वतासामान्यविवक्षयापि तत्पंचेंद्रियत्वं एकांतत्वानेकांताभ्यां समर्थितं। तदेव पंचेंद्रियत्वं पुनर्नयविषयमपि। तथाहि—

अनेकांतात्मकादर्थादपोद्धृत्यांजसान्वयः। तत्प्राप्त्युपायमेकांतं तदंशं व्यावहारिकं ॥ १ ॥

अनेकांतात्मकादर्थात्सकाशात् तदनेकांतात्मकार्थस्य प्राप्त्युपायभूतं व्यावहारिकं प्रवृत्तिनिवृत्तिसाधकं तदंशं एकांतं एकस्वभावं पृथक्कृत्योच्यते स परमार्थतो नयः स्यात् नयविषयत्वात्।

प्रकाशयन्न मिथ्या स्याच्छब्दात्तच्छास्त्रवत्स हि। मिथ्योऽनपेक्षोऽनेकांतक्षेपान्नान्यस्तदत्ययात् ॥ १ ॥

स प्रमाणविषयार्थस्यैकदेशग्राही निश्चयनयो व्यवहारनयो वा स्वगृहीतमेकांतं स्याच्छब्दात्प्रकाशयन् न मिथ्या स्यात् सुनयः स्यात् हि यस्मात्कारणाच्च निरपेक्षो मिथ्यः। किंवत्? स्याच्छब्दसापेक्षनिरपेक्षशास्त्रवत् 'स्यात्कारः सत्यलांछनः' इति वचनात्। मिथ्य इत्यभ्राद्याकृतिगणत्वान्मत्वर्थीयाऽप्रत्ययांतः स्याच्छब्दनिरपेक्षः कथं दुर्नयः स्यात्? अनेकांतक्षेपात्। तत्क्षेपाच्चानेकांतो न, एकांत एव स्यात् तथा सति अवस्तु, तन्न जिनमतं। श्रीसमंतभद्रस्वामिनोक्तं—

सधर्मणैव साध्यस्य साधर्म्यादविरोधतः। स्यात्कारप्रविभक्तार्थविशेषव्यंजको नयः ॥ १ ॥

स्यादनेकांतं वस्तु स्यादेकांतं वस्तु इति सधर्मणैव समानधर्मणैव प्रमाणनयसाधनेन साध्यस्य अनेकांतस्य साधर्म्यादविरोधतः सदृशधर्मत्वादविरोधात् स्यादनेकांतं वस्त्विति स्यात्कारप्रविभक्तार्थस्य वस्तुनो विशेष एकांतः व्यंग्यः, तस्य व्यंजको नयः। तथा चोक्तं—

नयोपनयैकांतानां त्रिकालानां समुच्चयः। अविभ्राड्भावसंबंधो द्रव्यमेकमनेकधा ॥ १ ॥

त्रिकालानां त्रिकालगोचराणां नयोपनयैकांतानां नयाश्च तदंशाः—उपनयाश्च नयोपनयाः त एव एकांताः निश्चयव्यवहारनयाविषयधर्माः तेषां समुच्चयः समुदायः अविभ्राट् भावसंबंधः अनश्वरवस्तुसंबंधः स्यात् ततः कारणात् द्रव्यमेकमनेकधा अनेकप्रकारं स्यात्।

मिथ्यासमूहो मिथ्या चेन्न मिथ्यैकांततास्ति न। अनपेक्षो नयो मिथ्या सापेक्षो वस्तुतोऽर्थकृत् ॥ १ ॥

नयोपनयानामेकांतविषयत्वात् तदेकांतानां समुच्चयः मिथ्यासमूहः स मिथ्यैव चेत्तन्न, नयविषयत्वेन सत्यत्वात् तदा मिथ्यानयैकांततास्ति तदपि न स्यात्कारानपेक्षो नयो मिथ्या सापेक्षस्तु वस्तुतः वस्तुवृत्त्या अर्थकृदिष्टसाधकः। सोयं सामान्यनयः निश्चयव्यवहारभेदाद् द्वेधा। तत्र निश्चयनयोऽपि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तदादिषट्कमष्टाविंशतिकं विना, चतुश्चतुर्मनोवाग्योगेष्वौदारिककाययोगे च सर्वाणि वैक्रियिकतन्मिश्रयोगयोर्देवगत्युक्तानि चत्वारि ॥ ५४५ ॥

शुद्धाशुद्धभेदाद् द्वेधा व्यवहारनयोऽपि सद्‌भूतासद्‌भूतभेदाद् द्वेधा । तत्र सद्‌भूतनयोऽपि शुद्धाशुद्धभेदादनुपचरितोपचरितभेदाद्वा द्वेधा । असद्‌भूतोऽप्यनुपचरितोपचरितभेदाद् द्वेधा । इति षण्णयाः । तद्यथा—

कर्त्राद्या वस्तुनो भिन्ना येन निश्चयसिद्धये । साध्यते व्यवहारोऽसौ निश्चयस्तदभेददृक् ॥ १ ॥

कर्त्रादयो धर्मा वस्तुनः सकाशाद्भिन्नाः साध्यंते । किमर्थं ? निश्चयसिद्धये येनासौ व्यवहारनयः स्यात् । निश्चयनयस्तु तेषां कर्त्रादिधर्माणां वस्तुन्यभेददर्शनं ।

सर्वेऽपि शुद्धबुद्धैकस्वभावाश्चेतना इति । शुद्धोऽशुद्धश्च रागाद्या एवात्मेत्यस्ति निश्चयः ॥

सर्वेऽपि चेतनाः प्राणिनः शक्तितो व्यक्तितश्च शुद्धबुद्धैकस्वभावाः इति शुद्धनिश्चयनयः स्यात् । तु—पुनः रागाद्या एवात्मेत्यशुद्धनिश्चयनयः स्यात् ।

सद्‌भूतेतरभेदाद् व्यवहारः स्याद् द्विधा भिदुपचारः । गुणगुणिनोरभिदायामपि सद्‌भूतो विपर्ययादितरः ॥ १ ॥

सद्‌भूतासद्‌भूतभेदाद् व्यवहारनयो द्विधा तत्र गुणगुणिनोरभेदे सत्यपि भेदोपचारः स सद्‌भूतव्यवहारनयः । भेदे चाभेदोपचारः स असद्‌भूतव्यवहारनयः स्यात् ।

सद्‌भूतः शुद्धेतरभेदाद् द्वेधा तु चेतनस्य गुणाः । केवलबोधादय इति शुद्धोऽनुपचरितसंज्ञोऽसौ ॥ १ ॥

तु—पुनः स सद्‌भूतव्यवहारनयः शुद्धाशुद्धभेदाद् द्वेधा ॥ तत्र चेतनस्य गुणाः केवलज्ञानादयः इति शुद्धसद्‌भूतव्यवहारनयः । असौ पुनः अनुपचरितनामा स्यात् ।

मत्यादिविभावगुणाश्रित इत्युपचरितकः स चाशुद्धः । देहो मदीय इत्यनुपचरितसंज्ञस्त्वसद्‌भूतः ॥ १ ॥

मतिश्रुतादिविभावगुणा जीवस्येत्युपचरितनामा स चाशुद्धसद्‌भूतव्यवहारनयः स्यात् । तु—पुनः देहो मदीय इत्यनुपचरितनामा असद्‌भूतव्यवहारनयः स्यात् ।

देशो मदीय इत्युपचरितसमाह्वः स एव चेत्युक्तं । नयचक्रमूलभूतं नयषट्कं प्रवचनपटिष्ठैः ॥ १ ॥

मदीयो देश इत्युपचरितनामा असद्‌भूतव्यवहारनयः स्यात् । इत्येवं नयचक्रशास्त्रस्य मूलभूतं नयषट्कं प्रवचनपटिष्ठैर्गणधरादिभिरुक्तं ।

व्यवहारपराचीनो निश्चयं यश्चिकीर्षति । बीजादिना विना मूढः स सस्यानि सिसृक्षति ॥ १ ॥

व्यवहारे पराङ्मुखो यो मूढो निश्चयमुत्पादयितुमिच्छति स बीजादिसामग्रीं विना सस्यान्युत्पादयितुमिच्छति ।

व्यवहारमभूतार्थं प्रायो भूतार्थविमुखजनमोहात् । केवलमुपयुंजानो व्यंजनवद् भ्रश्यति स्वार्थात् ॥ १ ॥

व्यवहारनयं—अविद्यमानेष्टविषयं निश्चयनयविमुखजनजनिताज्ञानान्निश्चयनिरपेक्षं व्यवहारमेवैकमुपयुंजानो विवक्षितार्थात्प्रच्यवते केवलं शालीनमुपयुंजानोऽन्नादेर्यथा ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—इंद्रिय मार्गणाविषैं तौ पंचेंद्रियविषैं अर काय मार्गणाविषैं त्रसविषैं तौ सर्व बंध स्थान हैं। बहुरि अवशेष एकेंद्रियादिक च्यारिविषैं अर पृथ्वीकायादिक पांचविषैं आदिके छह स्थानकनिविषैं अठाईसका विना

भूतार्थे रज्जुवत्स्वैरं विहर्तुं वंशवन्मुहुः। श्रयाधीरैरभूतार्थो हयस्तद्विहृतीश्वरैः ॥ १ ॥

निश्चयनयविषये स्वैरं मुहुर्विहर्तुं धीरैः व्यवहारनयः श्रयः रज्ज्वां यथा वारणैर्वेणुर्यथा भूतार्थे स्वैरविहारपरिणतैस्तु हेयः न शेषैरित्यर्थः।

पुनः—अनेकांतात्मके वस्तुन्यविरोधेन हेत्वर्पणया साध्यविशेषयाथात्म्यप्रापणप्रवणप्रयोगो नय इति सामान्यलक्षणं। स च नैगमादिभेदात्सप्तधा। तत्र द्रव्यं सामान्यमुत्सर्गः तद्विषयः द्रव्यार्थिकः। पर्यायः विशेषः व्यावृत्तिरित्यर्थः तद्विषयः पर्यायार्थिकः। तयोर्भेदा नैगमादयः तेषां लक्षणमुच्यते। तद्यथा—अभिनिर्वृत्तार्थसंकल्पमात्रग्राही नैगमः यथा हस्ते कुठारं गृहीत्वा गच्छन् केनचिद् दृष्ट्वा पृष्टः—'किमर्थं यासि? रज्जुमानेतुं' तदा रज्जुरनिष्पन्ना तथापि रज्जुनिष्पत्तिनिमित्तं संकल्पमात्ररज्ज्वोर्व्यवहरणं। तथा एधं नीरं च गृहीत्वा समागच्छन् कश्चित्पृष्टः 'किं करोषि?' ओदनं पचामीत्युक्तवांस्तदौदनपर्यायोऽनिष्पन्नस्तथापि तन्निमित्तमुद्युक्तो भवेत्। एवं लोकस्य व्यवहारः अनिष्पन्नार्थसंकल्पमात्रविषयो नैगमः नयगोचरः स्यात्।

स्वजात्यविरोधेनैकत्वमाश्रित्य पर्यायाक्रांतभेदात्समस्तग्रहणात्संग्रहः। स च द्रव्यं घटः इति। अत्र सदित्युक्ते सत्तेति वाग्विज्ञानानुप्रवृत्तिलिंगानुमितसत्ताधारभूतानामविशेषेण सर्वेषां संग्रहः स्यात्। तथा द्रव्यमित्युक्ते द्रवति गच्छति तांस्तान् पर्यायानिति द्रव्यमित्युपलक्षितजीवाजीवतद्भेदप्रभेदानां ग्रहणं स्यात्। तथा घट इत्युक्ते घटबुद्ध्यभिधानानुगमलिंगानुमितसकलार्थसंग्रहः स्यात्। एवमन्योऽपि संग्रहनयविषयो भवेत्।

संग्रहे निक्षिप्तार्थानां विधिपूर्वकमवहरणं भेदग्रहणं व्यवहारः। यः संग्रहनयगृहीतार्थस्तदनुपूर्वेणैव व्यवहारः प्रवर्तते इति विधिः। स कथं? उच्यते—सर्वसंग्रहेण यत्सत् संगृहीतं तदनपेक्षितविशेषाणां संव्यवहारायोग्यत्वात् यत्सत् तद् द्रव्यं गुणो वेति व्यवहारनय आश्रेयः। संग्रहनयविषयद्रव्येणापि संग्रहाक्षिप्तजीवाजीवविशेषानपेक्षत्वेन संव्यवहाराशक्यत्वात् यद् द्रव्यं तज्जीवोऽजीव इति व्यवहारनय आश्रेयः। पुनः तौ जीवाजीवौ द्वावपि संग्रहाक्षिप्तौ तदापि संव्यवहारायोग्यौ इति प्रत्येकं देवनारकादिर्घटादिर्व्यवहारनयेनाश्रेयौ। इत्ययं नयस्तावद्वर्तते यावत्पुनर्विभागो न स्यात्।

ऋजु प्रगुणं सूत्रयति तंत्रयति स्वीकरोतीति ऋजुसूत्रः। पूर्वापरान् त्रिकालविषयान् त्यक्त्वा वर्तमानविषयानेव स्वीकरोति। अतीतानागतानां विनष्टानुत्पन्नत्वेन संव्यवहाराभावात्। सोऽपि वर्तमानः समयमात्रः तद्विषयपर्यायमात्रग्राही स्यादयं ऋजुसूत्रनयः। तथा सति संव्यवहारलोपप्रसंग इति न वाच्यं नयस्य विषयमात्रप्रदर्शकत्वात् लोकव्यवहारस्य च सर्वनयसमूहसाध्यत्वात्।

लिंगसंख्यासाधनादिव्यभिचारनिवृत्तिप्रधानः शब्दनयः। तत्र पुष्यस्तारका नक्षत्रमिति लिंगव्यभिचारः। जलमापो वर्षाः इति संख्याव्यभिचारः। सेना वनमध्यास्ते इति साधनव्यभिचारः—कारकव्यभिचारः। आदिशब्दात् एहि मन्ये रथेन यास्यसि यातस्ते पिता इति पुरुषव्यभिचारः। विश्वदृश्वास्यां पुत्रो जनिता इति कालव्यभिचारः। संतिष्ठते प्रतिष्ठते विरमति उपरमति इत्ययं प्रग्रहव्यभिचारः। एवंप्रकारः शब्दनयन्यायः। कुतः? अन्यार्थस्यान्यार्थेनासंबंधात्। एवं चेदयं नयः लोकसमयविरोधः इति न वाच्यं तत्त्वविचार एवं स्यात् भैषज्यमातुरेच्छानुवर्ति न तथापि प्रयोक्तव्यं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पांच पांच स्थान जानने। बहुरि च्यारि मनोयोग च्यारि वचन योग औदारिक काय योग इनविषैं तो सर्व बंध स्थान हैं। बहुरि वैक्रियिक वैक्रियिक मिश्रविषैं देवगतिवत् च्यारि स्थान हैं॥ ५४५॥

अडवीसदु हारदुगे सेसदुजोगेसु छक्कमादिल्लं।
वेदकसाये सव्वं पढमिल्लं छक्कमण्णाणे॥ ५४६॥

अष्टविंशद्विकमाहारद्विके शेषद्वियोगयोः षट्कमादिमं।
वेदकषाये सर्वं प्राथमिकं षट्कमज्ञाने॥ ५४६॥

नानार्थसमभिरोहणात्समभिरूढः। यतः कारणात् नानार्थान् हि परित्यज्यैकार्थमभिमुखत्वेन रूढः। गौ इति शब्दः गवादिषु वर्तमानः पशुषु रूढः। अथवा अर्थज्ञः ज्ञाप्यार्थानुरूपं शब्दं प्रयुंक्ते तत्रैकार्थस्यैकशब्देन ज्ञातत्वात् पर्यायशब्दप्रयोगोऽनर्थकः। शब्दभेदोऽस्ति चेदर्थभेदो भवेत्तेनार्थभेदेनावश्यं न संभवतीति नानार्थसमभिरोहणात्समाभिरूढः, इंदनानिंद्रः, शकनाच्छक्रः, पूर्दारणात्पुरंदरः इत्येवंप्रकारेण सर्वत्र ज्ञातव्यं। अथवा यः शब्दो यत्राभिरूढः स तत्रागत्याभिमुखत्वेनाभिरोहणात्समभिरूढः। इदानीं क्व भवानास्ते? आत्मनि, वस्त्वंतरे वृत्त्यभावात्। अन्यथा ज्ञानादीनां रूपादीनां चाकाशे वृत्तिः स्यात्।

येनात्मना भूतस्तेनैवाध्यवसाययतीत्येवंभूतः। स्वाभिधेयक्रियापरिणतिक्षणे एव तच्छब्दो युक्तो नान्यकाले यदा इंदति तदैवेंद्रः नाभिषेचको नाभिपूजकः। यदैव गच्छति तदैव गौः न स्थितो न शयित इति। अथवा येनात्मना ज्ञानेन भूतः परिणतस्तेनैवाध्यवसाययति यथेंद्राग्निज्ञानपरिणत आत्मा इंद्राग्निः। नैगमादीनामुत्तरोत्तरसूक्ष्मविषयत्वेनायं क्रमः। पूर्वपूर्वहेतुका अमी पूर्वपूर्वविरुद्धमहाविषया उत्तरोत्तरानुकूलाल्पविषयाः स्युः। कुतः? द्रव्यस्यानंतशक्तितः प्रतिशक्तिभिद्यमानत्वे बहुविकल्पाः स्युः। ते सर्वे नया गौणमुख्यतया परस्परतंत्राः पुरुषार्थक्रियासाधनसामर्थ्यात्सम्यग्दर्शनहेतवः।

एवं तद्भवसामान्यसादृश्यसामान्ये आश्रित्य जीवस्य पंचेंद्रियत्वे प्रमाणनयविषयत्वेनानेकांतत्वमेकांतत्वं च सिद्धं। तदुपलक्षणं तेन सर्वमुक्तानां सर्वकर्मविप्रमोक्षलक्षणे मोक्षे संसारिणां चैकेंद्रियादिजातिनामोदयजनितैकेंद्रियत्वादिपर्यायेष्वपि ज्ञातव्यं। 'अडवीसूणादिछक्कयं सेसे।' शेषैकेंद्रियादिचतुरिंद्रियपर्यंतं चतुरिंद्रियमार्गणासु पृथ्वीकायादिपंचकायमार्गणासु च बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकोनाद्यानि षट् २३ ए अ। २५ ए प त्र अ। २६ ए प आ उ। २९ वि ति च प म। ३० वि ति च पं ति उ। सत्यासत्योभयानुभयमनोवाग्योगेष्वौदारिककाययोगे चाष्टौ २३ ए अ। २५ ए प त्र अ। २६ ए प आउ। २८ न दे। २९ वि ति च पं ति म दे ती। ३० वि ति च पं ति उ म ती दे आ। ३१ दे ती आ। १ अगति। देवगतिवद्वैक्रियिकतन्मिश्रयोः २५ ए प। २६ ए प आ उ। २९ ति म ३० ति उ म ती।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—आहारकतन्मिश्रयोगयोः अष्टाविंशतिकनवविंशतिके द्वे। शेषयोः कार्मणौदारिकमिश्रयोस्तान्याद्यानि षट्, नात्र देवगत्याहारकद्वययुतं अप्रमत्तापूर्वकरणयोरेव तद्बंधसंभवात्। नापि तिर्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टावष्टाविंशतिकं 'कम्मे उरालमिस्सं' वेति देवनारकद्विकयोरबंधात्। तिर्यग्मनुष्यकार्मणयोगसासादने सर्वैकेंद्रियवादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्तत्रयोविंशतिकपंचविंशतिकषड्विंशतिकनरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकविकलत्रययुतनवविंशतिकत्रिंशत्कवर्जितशेषतिर्यक्पंचेंद्रियमनुष्यगतियुतनवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे। देवगत्यष्टाविंशतिकाभावस्तु 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं णहीति' वचनात्। तिर्यग्मनुष्यकार्मणयोगासंयते तच्च तन्मनुष्ये देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकं च। त्रिषु वेदेषु चतुर्षु क्रोधादिषु च सर्वाणि, षंढे नवविंशतिकद्वयं त्याज्यं नरकं प्रति, तिर्यग्गतौ एकेंद्रियवादरसूक्ष्मापर्याप्तयुतत्रयोविंशतिकं एकेंद्रियवादरसूक्ष्मपर्याप्तयुतत्रसापर्याप्तद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियतिर्यग्गतिमनुष्यगतियुतपंचविंशतिकं एकेंद्रियवादरपर्याप्तातपोद्योतयुतषड्विंशतिकं तिर्यग्मनुष्यगतिपर्याप्तनवविंशतिकं, तिर्यग्गतिपर्याप्तोद्योतयुतत्रिंशत्कं च तत्पंचेंद्रियषंढे तानि च नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकं च। तत्स्त्रीपुंवेदयोस्तानि षट्। मनुष्यलब्ध्यपर्याप्ते एकविकलेंद्रियोक्तानि पंच। पर्याप्तमनुष्याः द्रव्यषंढस्त्रीपुंवेदाः पुंस्त्रीषंढवेदोदयेन भावपुंस्त्रीषंढा भवंति विना तीर्थकरं। तत्र भावतः षंढे स्त्रियां पुंसि च गुणस्थानानि तत्तत्सवेदानिवृत्तिकरणांतानि। तत्र नव बंधस्थानानि सर्वाणि, न च स्त्रीषंढक्षपके देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकैकत्रिंशत्के, चरमांगाणां केषांचित्तत्र तीर्थबंधसंभवेऽपि क्षपकश्रेण्यां पुंवेदोदयेनैवारोहणात्। तीर्थबंधप्रारंभचरमांगाणामसंयतदेशसंयतयोस्तदा कल्याणानि निष्क्रमणादीनि त्रीणि, प्रमत्ताप्रमत्तयोस्तदा ज्ञाननिर्वाणे द्वे, प्राग्भवे तदा गर्भावतरादीनि पंचेत्यवसेयं।

कषायमार्गणायां क्रोधादीनामनंतानुबंध्यादिभेदेन चतुरात्मकत्वेऽपि जात्याश्रयेणैकत्वमभ्युपगतं शक्तिप्राधान्येन भेदस्याविवक्षितत्वात्। तद्यथा-द्वादशकषायाणां स्पर्धकानि सर्वघातीन्येव न देशघातीनि। संज्वलनानामुभयानि तेनानंतानुबंध्यन्यतमोदये इतरेषामुदयोऽस्त्येव तदुदयसहचरितेतरोदयस्यापि सम्यक्त्वसंयमगुणघातकत्वात्। तथा—अप्रत्याख्यानान्यतमोदये प्रत्याख्यानाद्युदयोऽस्त्येव तदुदयेन समं तद्द्वयोदयस्यापि देशसंयमघातकत्वात् तथा प्रत्याख्यानान्यतमोदये संज्वलनोदयोऽस्त्येव प्रत्याख्यानवत्तस्यापि सकलसंयमघातकत्वात्। न च केवलं संज्वलनोदये प्रत्याख्यानादीनामुदयोऽस्ति तत्स्पर्धकानां सकलसंयमविरोधित्वात्। नापि केवलप्रत्याख्यानसंज्वलनोदये शेषकषायोदयः तत्स्पर्धकानां देशसकलसंयमघातित्वात्। नापि केवलाप्रत्याख्यानादित्रयोदयेऽनंतानुबंध्युदयः तत्स्पर्धकानां सम्यक्त्वदेशसकलसंयमघातकत्वात्, इत्यनंतानुबंधिनां तदुदयसहचरिताप्रत्याख्यानादीनां च चारित्रमोहत्वेऽपि सम्यक्त्वसंयमघातकत्वमुक्तं तेषां तदा तच्छक्तेरेवोदयात्। अनंतानुबंध्युदयरहिताप्रत्याख्यानाद्युदयाः देशसंयमं घ्नंति। अप्रत्याख्यानोदयरहितप्रत्याख्यानसंज्वलनोदयाः सकलसंयमं प्रत्याख्यानोदयरहितसंज्वलनदेशघात्युदयाः यथाख्यातमिति शक्तिसाधारणविवक्षया षोडशकषायाणां क्रोधादिभेदेन चतुर्धात्वमंगीकृतं तेन सम्यक्त्वदेशसंयमसकलसंयमानां असंयतदेशसंयतप्रमत्तादिषु संभवः सिद्धः। कथमनंतानुबंधिशक्त्येतरकषायशक्तेः सादृश्यं उच्यते ?

आवरणदेसघादंतरायसंजलणपुरिससत्तरसं। चदुविधभावपरिणदा तिविहा भावा हु सेसाणं ॥ १ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देशघातिचतुर्ज्ञानदर्शनावरणपंचांतरायचतुःसंज्वलनपुंवेदाः सप्तदशापि चतुर्धानुभागपरिणताः शेषमिश्रोनकेवलज्ञानावरणादिसर्वघातिविंशतिः नोकषायाष्टकमघातिपंचसप्ततिश्च त्रिधा भावपरिणता भवंति । संदृष्टिः—

मि १			अनं ४			अप्र ४			प्र ४			सं ४			
शै	मि १		शै	अनं ४		शै	अप्र ४		शै	प्र ४		शै	सं ४		
अ	अ	मि १	अ	अ	अनं ४	अ	अ	अप्र ४	अ	अ	प्र ४	अ	अ	सं ४	
१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	१— दाख ख	
												दा १ ख	दा १ ख	दा १ ख	सं४
												ल	ल	ल	ल

अत्र मिथ्यात्वेन सहोदीयमानाः कषायाः सम्यक्त्वं घ्नंति । अनंतानुबंधिना च सम्यक्त्वसंयमौ । अप्रत्याख्यानेन देशसकलसंयमौ । प्रत्याख्यानेन सकलसंयमं । संज्वलनदेशघात्युदयो यथाख्यातमिति सिद्धं । एवं द्वादशकषायाणां सर्वघातिसंज्वलनानां च कथंचिद्भेदेऽपि शक्तिसादृश्यात्समानकार्यकरणाच्च क्रोधादिभेदाच्चातुर्विध्यं ज्ञातव्यं । तत्र क्रोधे नामबंधस्थानानि नारकेषु द्वे २९ । ३० । तिर्यग्गतावाद्यानि षट् । मनुष्येषु सर्वाणि, देवगतौ चत्वारि २५ २६ २९ ३० । एवं मानादित्रयेऽपि ज्ञातव्यं । ज्ञानमार्गणायामज्ञानत्रये आद्यानि षट् । तत्र नारकेषु तिर्यग्गतिमनुष्यगतिपर्याप्तयुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्के द्वे । एकविकलेंद्रिये कुमतिकुश्रुते नरकदेवगतियुताष्टाविंशतिकवर्जितयोग्यतिर्यग्मनुष्यगतियुतत्रयोविंशतिकादीनि पंच । पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्यापर्याप्तकुमतिकुश्रुतिमिथ्यादृष्टावपि तानि पंच, कुज्ञानत्रये मिथ्यादृष्टिसासादने "पर्याप्तपंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्ये योग्यचतुर्गतियुतानि षट् । भवनत्रयसौधर्मद्वये तिर्यग्गतियुतयोग्यपंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कमनुष्यगतियुतनवविंशतिकानि"। सानत्कुमारादिसहस्रारांते संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्के द्वे । आनतादिनवग्रैवेयके मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव 'तदो णत्थि सदरचऊ' इति नियमात् ॥ ५४६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

सं० च०—आहारक आहारक मिश्र योगविषैं अठाईस गुणतीसके दोय स्थान हैं। शेष कार्माण औदारिकमिश्र विषैं आदिके छह स्थान हैं । इहां देवगति आहारक द्विक सहित स्थान न संभवै हैं जातैं इसका बंध अप्रमत्त अपूर्वकरणविषैंही संभवै है। बहुरि कार्माण वा औदारिक मिश्र सहित तिर्यंच वा मनुष्य मिथ्यादृष्टिविषैं अठाईस का बंध नाहीं जातैं 'कम्मे उरालमिस्सं' इस सूत्रकरि देवद्विक नरकद्विकका तहां बंधका अभाव है। बहुरि कार्माण योग सहित तिर्यंच मनुष्य सासादनविषैं सर्व एकेंद्री वादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त साहित तेईस पचीस छवीसका अर नरकगति देवगति संयुक्त अठाईस अर विकलत्रय संयुक्त गुणतीस तीसका इन विना अवशेष तिर्यंच पंचेंद्री वा मनुष्यगति संयुक्त गुणतीस वा तीस के दोय बंध स्थान हैं। इहां 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं णहि' इस वचनकरि देवगतियुत अठाईसके स्थानका अभाव जानना। बहुरि कार्माण सहित तिर्यंच मनुष्य असंयतविषैं देवगति युत अठाईसका स्थान अर कार्माण सहित मनुष्य असंयतविषैं देवगति तीर्थ सहित गुणतीसका भी स्थान जानना॥ बहुरि तीनों वेदनिविषैं अर च्यारयो क्रोधादिक कषायनिविषैं सर्व बंध स्थान हैं तहां विशेष कहिए है—

नपुंसक वेदविषैं गुणतीस तीसके दोय स्थान आदिके तीन नरकनिविषैं जानने। बहुरि नपुंसक वेद सहित तिर्यंचगतिविषैं एकेंद्री वादर सूक्ष्म अपर्याप्त युत तेईसका, एकेंद्री वादर सूक्ष्म पर्याप्त युत पचीसका, त्रस अपर्याप्त वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्य गति युत पचीसका, एकेंद्री वादर पर्याप्त आतप वा उद्योत युत छवीसका, तिर्यंच वा मनुष्य गति पर्याप्त युत गुणतीसका, तिर्यंच गति पर्याप्त उद्योतयुत तीसका अर तिर्यंच पंचेंद्री नपुंसक वेदीविषैं नरक देव युत अठाईसका भी स्थान पाइए है। बहुरि तिर्यंच स्त्रीवेदी पुरुष वेदीविषैं छह स्थान जानने। बहुरि मनुष्य लब्ध्यपर्याप्तक नपुंसकवेदीविषैं एकेंद्री विकलत्रयविषैं जे कहे ते पंच स्थान जानने बहुरि पर्याप्त मनुष्य द्रव्य नपुंसक स्त्री पुरुष वेदी ते पुरुष स्त्री नपुंसक वेदके उदयकरि भाव पुरुष स्त्री नपुंसकवेदी हो हैं तीर्थंकर देव विना। तहां भाव नपुंसक स्त्री पुरुष वेद विषैं गुणस्थान अपना अपना सवेद अनिवृत्तिकरणपर्यंत जानने। तहां नव नव बंध स्थान वेदनिविषैं जानने। विशेष इतना—जो क्षपकश्रेणीवाला नपुंसक स्त्रीवेदीविषैं देवगति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीर्थयुत गुणतीसका वा इकतीसका स्थान न पाइए है जातैं केई चरम शरीरीनिकैं तहां क्षपकश्रेणीविषैं तीर्थंकर-का बंध संभवै भी है तथापि ते जीव क्षपक श्रेणीविषैं पुरुष वेदका उदय सहित ही चढैं हैं। बहुरि तीर्थंकर बंधका प्रारंभ चरम शरीरीनिकैं असंयत देशसंयत गुणस्थानविषैं होइ तौ तिनकैं तपकल्याण आदि तीन ही कल्याण होंइ अर प्रमत्त अप्रमत्तविषैं होइ तो ज्ञाननिर्वाण ये दोही कल्याण होंइ अर जो पूर्वभवविषैं ही तीर्थंकरका बंध प्रारंभ किया होइ तौ ताकैं गर्भावतरण आदि पांचों कल्याण होंइ ऐसा विशेष जानना।

बहुरि कषाय मार्गणाविषैं क्रोधादिकनिकैं अनंतानुबंधी आदि भेदकरि च्यारि भेद हो हैं तथापि जानिका आश्रयकरि एकत्वपना ही ग्रह्या है जातैं इहां शक्तिकी प्रधानताकरि भेद कहनेकी इच्छा नाही है। सोई कहिए है—

बारहकषायनिके स्पर्धक तौ सर्वघाती ही हैं देशघाती नाही हैं अर संज्वलनके स्पर्धक सर्वघाती वा देश घाती दोऊ हैं। तातैं अनंतानुबंधी क्रोध मान माया लोभविषैं एकका उदय होत संतैं अप्रत्याख्यानादिक तीनोंका भी उदय है ही जातैं अनंतानुबंधीका उदय सहित औरनिका उदयकैं भी सम्यक्त्व संयम गुणका घातकपणा है। बहुरि तैसैं ही अप्रत्याख्यान क्रोधादिकविषैं एकका उदय होतैं प्रत्याख्यानादिक दोयका भी उदय है ही जातैं अप्रत्याख्यानका उदयकी साथि तिन दोऊनिका उदय भी देश संयमकौं घातै है। बहुरि प्रत्याख्यान क्रोधादिकविषैं एकका उदय होतैं संज्वलनका भी उदय है ही जातैं प्रत्याख्यानवत् संज्वलन भी सकल संयमकौं घातै है बहुरि केवल संज्वलनकौं उदय होतैं प्रत्याख्यानादिक तीनका उदय नाहीं हो है जातैं और कषायनिके स्पर्धक सकल संयमके विरोधी हैं। बहुरि केवल प्रत्याख्यान संज्वलनका भी उदय होतैं शेष दो कषायनिका उदय नाहीं है जातैं अवशेष कषायनिके स्पर्धक देश सकल संयमकौं घातैं हैं। बहुरि केवल अप्रत्याख्यानादिक तीनका उदय होतैं अनंतानुबंधीका उदय नाही है जातैं अनंतानुबंधीके स्पर्धक सम्यक्त्व देशसंयम सकल संयमकौं घातै हैं। या प्रकार अनंतानुबंधीनिके अर तिसके उदयकी साथि अप्रत्याख्यानादिकनिकैं चारित्रमोहपणांकौं होत संतैं भी सम्यक्त्व संयमका घातकपणा कह्या। बहुरि अनंतानुबंधीका उदयरहित अप्रत्याख्यानादिनिके उदय हैं ते देशसंयमकौं घातैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। बहुरि अप्रत्याख्यानका उदयरहित प्रत्याख्यान संज्वलनका उदय है सो सकल संयमकौं घातै है बहुरि प्रत्याख्यानका उदय रहित केवल संज्वलन देशघातियानिका उदय यथाख्यातकौं घातै है ऐसैं शक्ति साधारण विवक्षा करि सोलह कषायनिके क्रोधादिक भेदकरि च्यारि कषाय ही अंगीकार कीए हैं तीह कारणकरि सम्यक्त्व देश संयम सकल संयमनिका असंयत देशसंयत प्रमत्तादिकविषैं उपजना कह्या है। इहां प्रश्न—जो अनंतानुबंधीकी शक्तिकरि और कषायनिकी शक्ति कैसैं समान हो है? ताका उत्तर—

आवरणदेसघादंतरायसंजलणपुरिससत्तरसं।
चउविह भावपरिणदा तिविहा भावा हु सेसाणं ॥ १ ॥

देशघाती च्यारि ज्ञानावरण तीन दर्शनावरण अर पंच अंतराय च्यारि संज्वलन पुरुषवेद ए सतरह प्रकृति तो च्यारि प्रकारकरि अनुभागरूप परिणमै हैं बहुरि अवशेष मिश्र मोहनी विना केवलज्ञानावरणादिक सर्व घातिया वीस नोकषाय आठ अघातिया पिचहत्तरि ए तीनप्रकार अनुभागरूप परणमै हैं सो अनुभाग बंधका कथनविषै पूर्वै कथन कीया है तातैं अनुभाग शक्तिके विशेषतैं अनंतानुबंधीवत् अन्यकषायनिकैं भी सम्यक्त्वादिकका घातके करनेतैं सादृश्यपना संभवै है सो मिथ्यात्व सहित उदय होंय कषाय ते सम्यक्त्वकौं घातै हैं। अनंतानुबंधी सहित उदय होंइ कषाय ते सम्यक्त्व संयमकौं घातैं हैं। अप्रत्याख्यान सहित उदय होंइ ते देशसंयम सकल संयमकौं घातैं है, प्रत्याख्यान सहित उदय होंइ ते सकल संयमकौं घातैं हैं। संज्वलनके देशघाती स्पर्धकनिका उदय है सो यथाख्यातकौं घातै है ऐसैं बारह कषाय अर सर्वघाती संज्वलन स्पर्धकनिविषैं कोई प्रकारकरि भेद है तथापि शक्तिकी समानतातैं समान कार्यकौं करै है तातैं इहां अनंतानुबंधी आदि भेद न कहे। क्रोधादिक च्यारि कषाय ही कहे। तहां क्रोधविषैं नामकर्मके बंधस्थान नारकविषैं तो गुणतीस तीसके दोय, तिर्यंचगतिविषैं आदिके छह, मनुष्यनिविषैं सर्व, देवविषैं देवगतिवत् च्यारि हैं ऐसैं ही मान माया लोभविषैं भी जानने। बहुरि ज्ञानमार्गणाविषैं तीन कुज्ञाननिविषैं आदिके छह तहां नारकीनिकैं ज्ञाननिविषैं तो तिर्यंचगति मनुष्यगति पर्याप्त सहित गुणतीस अर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उद्योत सहित तीसके दोय हैं। अर एकेंद्री विकलेंद्रीकौं कुमति कुश्रुतविषैं नरकगति देवगति संयुक्त अठाईसका विना योग्य तिर्यंच मनुष्ययुत तेईसकानै आदि देकरि पंच हैं। बहुरि पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्य अपर्याप्तका कुमति कुश्रुत सहित मिथ्यादृष्टिविषैं भी तेई पांच हैं। बहुरि कुज्ञान तीन सहित मिथ्यादृष्टि सासादनवर्ती पर्याप्त पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्यविषै यथायोग्य चतुर्गतियुत छह स्थान हैं। बहुरि भवनत्रिक सौधर्मद्विक विषै तिर्यंच गति सहित यथायोग्य पचीस छवीस गुणतीस तीसके अर मनुष्यगतियुत गुणतीसका ए पांच हैं। बहुरि सनत्कुमारादि सहस्रारपर्यंतविषैं संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच मनुष्यगति सहित गुणतीसका अर उद्योतसहित तीस का ये दोय हैं बहुरि आनतादि नवग्रैवेयक पर्यंतविषै मनुष्यगति सहित गुणतीसका ही है जातैं 'तदो णत्थि सदर चऊ' इस वचनतैं तहां तिर्यग्गति युत स्थानका अभाव है। ऐसैं कुज्ञानवाले जीवनिकी अपेक्षा तीन कुज्ञाननिविषैं छह स्थान कहे हैं॥ ५४६॥

सण्णाणे चरिमपणं केवलजहखादसंजमे सुण्णं।
सुदमिव संजमतिदए परिहारे णत्थि चरिमपदं॥ ५४७॥

सज्ज्ञाने चरमपंच केवलयथाख्यातसंयमे शून्यं।
श्रुतमिव संयमत्रितये परिहारे नास्ति चरमपदं॥ ५४७॥

जी० प्र०—मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानेष्वष्टाविंशतिकादीनि पंच त्रयोविंशतिकपंचविंशतिषड्विंशतिकाभावात्, मतिज्ञानादित्रयं पर्याप्तापर्याप्तनारकसंज्ञितिर्यग्मनुष्यदेवेषु। तत्र नारके मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमाद्यपृथ्वीत्रये तु मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कमपि, सौधर्मादिदेवे ते एव द्वे, भवनत्रये मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव, तिरश्चि देवगतियुताष्टाविंशतिकं, मनुष्ये तच्च देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकंच। चतुर्ज्ञानप्रमत्ते ते द्वे, तदप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागांते तद्द्वयं च, देवगत्याहारकद्वययुतत्रिंशत्कदेवगतितीर्थाहारयुतैकत्रिंशत्के च तत्सप्तमभागादिसूक्ष्मसांपरायांते यशस्कीर्तिरूपैकं। केवलज्ञाने नामबंधशून्यं। सामायिकादिसंयमत्रये श्रुतमिव पंच स्थानानि। तत्र परिहारविशुद्धौ न चरमपदं नैककं स्थानमस्ति। तत्र सम्-एकीभावेन अयः-गमनं समयः, समय एव सामायिकं। समयः प्रयोजनमस्येति वा सामायिकं। एतावति क्षेत्रे काले च नियमिते सति स्थितस्य मुनेर्महाव्रतं स्यात्, न केवलं ७१३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृतस्थूलसूक्ष्मजीवहिंसादिनिवृत्तेः तस्यास्तद्वात्युदयेऽर्हद्गृहीतलिंगवन्मिथ्यादृष्टावपि संभवात् राजकुलसर्वगतचैत्रस्य राजाभिधानवत्तस्योपचारेणैव तदभिधानात् । तत एव देशकालयोरियत्तापरिच्छिन्नस्यैकत्ववृत्तिरेव सामायिकं सिद्धं । 'प्रमादयोगैः प्राणव्यपरोपणं हिंसा' तन्निवृत्तिरहिंसा महाव्रतं । अनृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहनिवृत्तयः सत्यादिमहाव्रतानि । सम्यगीर्याभाषैषणादाननिक्षेपणोत्सर्गाः पंच समितयः । सम्यग्योगनिग्रहास्तिस्रो गुप्तयः । कायवाङ्मनोव्यापारा योगाः । तेषां स्वेच्छाप्रवृत्तिनिवृत्तयः निग्रहास्ते च विषयसुखाभिलाषानुवृत्तिनिषेधार्थंजाताः सम्यगित्युच्यंते । सत्यादयोऽहिंसाव्रतपरिपालनसम्यगुपायाः । ते चामी त्रयोदश सर्वसावद्याद्विरतोऽस्मीति स्वीकृतसामायिकेंऽतर्भवंति । तत एव श्रीवर्धमानस्वामिना प्राक्तनोत्तमसंहननजिनकल्पाचरणपरिणतेषु तदेकधा चरित्रं । पंचमकालस्थविरकल्पाल्पसंहननसंयमिषु त्रयोदशधोक्तं । तन्नियतक्षेत्रद्विधाकालप्रमादकृतानर्थप्रबंधविलोपने सम्यक्प्रतिक्रियाविकल्पनिवृत्तिर्वा छेदोपस्थापनं । परिहरणं परिहारः प्राणिवधनिवृत्तिरित्यर्थः । तेन विशिष्टा शुद्धिर्यस्मिन्स परिहारविशुद्धिः । सूक्ष्मः सांपरायः कषायो यस्मिन् स सूक्ष्मसांपरायः । मोहनीयस्य निरवशेषोपशमात् क्षयाद्वात्मस्वभावावस्थोपेक्षालक्षणः यथाख्यातः । पूर्वचारित्रानुष्ठायिभिर्मोहक्षयोपशमाभ्यां प्राप्त यथाख्यातं न तथाख्यातं यथाशब्दस्यानंतर्यार्थवृत्तित्वान्निरवशेषमोहक्षयोपशमानंतरमाविर्भवतीत्यर्थः । तथाख्यातमिति वा यथात्मस्वभावोऽवस्थितस्तथैवाख्यातत्वात् । तत्राद्यसंयमद्वये प्रमत्ते देवगतियुताष्टाविंशतिकदेवगतितीर्थयुतनवविंशतिके द्वे । अप्रमत्तापूर्वकरणषष्ठभागांते तद्द्वयं च देवगत्याहारकद्विकद्वययुतत्रिंशत्कदेवगतितीर्थाहारयुतैकत्रिंशत्के च सप्तमभागेऽनिवृत्तिकरणे चैककं । परिहारविशुद्धौ प्रमत्ताप्रमत्तयोः सामायिकोक्तानि द्वे चत्वारि, नात्र श्रेण्यारोहणाभावादेकैकमस्ति ॥ ५४७ ॥

स॰ चं॰—मति श्रुत अवधि मनःपर्यय ज्ञाननिविषैं अठाईसकेतैं लगाय पांच स्थान पाइए हैं । जातैं इहां तेईसकानैं आदि देकरि तीनका अभाव है । तहां मतिज्ञानादिक तीन हैं ते पर्याप्त अपर्याप्त नारकी अर संज्ञी तिर्यंच अर मनुष्य देव इनविषैं पाइए । तहां नारकीनिविषैं मनुष्यगतियुक्त गुणतीसका वा आदि तीन पृथ्वीविषैं मनुष्यगति तीर्थंकर सहित तीसका ए दोय स्थान हैं । सौधर्मादिक देवनिविषैं भी तेई दोन्यों स्थान हैं । भवनत्रिकविषैं मनुष्यगति युक्त गुणतीसहीका है । बहुरि तिर्यंचविषैं देवगति सहित अठाईसहीका है । मनुष्यविषैं देवगति सहित अठाईस वा देवगति तीर्थंकर सहित गुणतीसका है ऐसैं मतिज्ञानादिक तीनविषैं कहे । मनःपर्यय सहित च्यारि ज्ञाननिविषैं प्रमत्तविषैं अठाईस गुणतीसके दोय स्थान हैं । बहुरि अप्रमत्त अपूर्वकरणका षष्ठम भाग पर्यंत ते दोऊ अर देवगति आहारक द्विकयुक्त तीसका अर देवगति तीर्थंकर आहारकयुक्त इकतीसका ऐसैं च्यारि हैं अर अपूर्वकरणके सातवे भागतैं सूक्ष्मसांपराय पर्यंत यशस्कीर्तिरूप एक ऐसैं पंच स्थान हैं । बहुरि केवलज्ञानविषैं नामकर्मका बंधका अभाव है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि सामायिकादिक तीन संयमनिविषैं श्रुतज्ञानवत् पांच स्थान हैं। तहां परिहार विशुद्धिविषै अंतका एक स्थान नाहीं है तातैं च्यारि ही हैं। तहां सं कहिए एकीभावकरि सम भावविषैं अय कहिए गमन परिणमन सो समय कहिए। समय सोही सामायिक अथवा समय है प्रयोजन जाका सो सामायिक कहिए। एतावन्मात्र क्षेत्रकालका नियम होतैं तिष्ठ्या जो मुनि ताकैं महाव्रत हो है। केवल स्थूल सूक्ष्म जीवहिंसादिकका त्याग कीएं ही महाव्रत न हो है जातैं ऐसी क्रिया तौ चारित्र मोहका उदय होतैं अर्हंत लिंगका धारी मिथ्यादृष्टिविषैं भी संभवै है जैसैं राजकुलविषैं प्राप्त राजमान्य जनकौं राजा कहिए तैसैं तिस क्रियाकौं उपचारतैं महाव्रत कहिए है तातैं देशकालका तावत् जितना योग्य तितना प्रमाणकरि एकत्वरूप वृत्ति सोई सामायिक है यहु सिद्धि भया। तहां प्रमाद योगनिकरि प्राणनिका हिंसन सो हिंसा याका त्याग सो अहिंसा महाव्रत अर अनृत स्तेय अब्रह्म परिग्रहका त्याग ते सत्यादिक महाव्रत हैं। बहुरि सम्यक् इर्या भाषा एषणा आदाननिक्षेपण उत्सर्ग ए पांच समिति हैं। बहुरि सम्यक् योगनिका निग्रह ते तीन गुप्ति हैं। काय वचन मनका व्यापाररूप योग तिनकी स्वेच्छा प्रवृत्तिका त्याग सोई निग्रह कहिए। ते गुप्ति विषय सुखका अभिलाष निमित्त प्रवृत्तिका निषेधके अर्थि भई हैं तातैं सम्यक् कहिए सो ए सत्यादिक सर्व अहिंसा व्रतके पालनेके अर्थि भले उपाय हैं तातैं ए तेरह भेद हैं ते सर्व सावद्यतैं मैं त्यागी हूं ऐसैं अंगीकार कीया सामायिक तिसविषैं गर्भित हैं। ताहीतैं श्रीवर्धमान स्वामीकरि पूर्वले उत्तम संहननके धारी जिनकल्प आचरणरूप परिणए मुनि तिनकैं सो सामायिकरूप एक प्रकार ही चारित्र कह्या है। बहुरि पंचमकालविषैं स्थविरकल्पी हीन संहननके धारी तिनकौं सो चारित्र तेरह प्रकार कह्या है। बहुरि नियत क्षेत्र वा नियत अनियतकालविषैं प्रमादतैं अनर्थ दोषकरि सामायिकविषैं विलोपभएं सम्यक् प्रतिक्रिया ताके शुद्ध करनेका उपाय वा विकल्प जे भेद ताका त्याग सो छेदोपस्थापन कहिए। बहुरि परिहार कहिए प्राणहिंसाका त्याग तिहिंकरि विशेषतारूप शुद्धता जिसविषैं होइ सो परिहारविशुद्धि कहिए। बहुरि सूक्ष्म है सांपराय कहिए कषाय जिसविषैं सो सूक्ष्मसांपराय कहिए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि मोहनीयका समस्त उपशमतैं वा क्षयतैं आत्मस्वभावविषैं अवस्थितिरूप उपेक्षा उदासीनता है लक्षण जाका सो यथाख्यात है। पूर्वैं चारित्रके धारीनिकरि मोहका क्षय वा उपशमकरि पाया सो यथाख्यात कहिए। यथा शब्द अनंतर वाची है सो समस्त मोहका क्षय वा उपशमके अनंतरि प्रगट हुआ सो यथाख्यात है अथवा तथाख्यात भी याकौं कहिए जातैं जैसा आत्मस्वभाव अवस्थित था तैसाही प्रगट हूवा सो इनविषैं सामायिक छेदोपस्थापनविषै तौ प्रमत्तविषैं देवगति युक्त अठाईसका देवगति तीर्थंकर सहित गुणतीसका ए दोय हैं। अप्रमत्त अपूर्वकरणका षष्ठम भागपर्यंत दोय तो तेई अर देवगति आहारक युत तीस अर तीर्थंकर आहारक सहित इकतीसके च्यारि हैं। बहुरि अपूर्वकरणका सातवां भाग अर अनिवृत्तिकरणविषैं एकका है ऐसैं पांच बंधस्थान हैं। बहुरि परिहारविशुद्धिविषैं सामायिकवत् प्रमत्तविषैं दोय अप्रमत्तविषैं च्यारि हैं इहां श्रेणी चढनेके अभावतैं एकका स्थान नाहीं है ॥ ५४७ ॥

अतिमठाणं सुहुमे देसाविरदीसु हारकम्मं वा।
चक्खूजुगले सव्वं सगसगणाणं व ओहिदुगे ॥ ५४८ ॥

अंतिमस्थानं सूक्ष्मे देशाविरत्योः आहारकर्म वा।
चक्षुर्युगले सर्वं स्वकस्वकज्ञानं वा अवधिद्विके ॥ ५४८ ॥

जी० प्र०—सूक्ष्मसांपरायसंयमे अंतिमस्थानं बध्यते। यथाख्याते केवलज्ञानवन्नामबंधशून्यं। देशविरते आहारकवद्देवगतियुताष्टाविंशतिकदेवगतितीर्थयुतनवत्रिंशतिके द्वे। तत्त्विरश्चि देवगतियुताष्टाविंशतिकमेव। अविरतौ कार्मणवदाद्यानि षट्। अत्र नारके मिथ्यादृष्टौ सासादने च पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्के द्वे। मिश्रे मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव। असंयते धर्मादित्रये तच्च मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कं च। शेषपृथ्वीषु मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव। तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टौ त्रयोविंशतिकादीनि षट्। तत्र पर्याप्तापर्याप्तसर्वैकविकलेंद्रियेष्वपर्याप्तपंचेंद्रिये च न च नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकं 'पुण्णादरं विगिविगले' इति तेषु तदबंधात्। नापि बादरसूक्ष्मपर्याप्तापर्याप्ततेजोवायुषु मनुष्यगत्यपर्याप्तयुतपंचविंशतिकपर्याप्तमनुष्यगतियुतनवविंशतिके 'मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं णहि तेउ वाउम्मीति तेषु तद्बंधनिषेधात्। प्रथमोपशमसम्यक्त्वं त-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्युतदेशव्रतं वा विराध्य जातसासादनस्तिर्यङ् तिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्कदेवगतियुताष्टाविंशतिकानि बध्नाति । मरणो नरकवर्जितगतिषूत्कृष्टेन समयोनषडावलिकालं जघन्येनैकसमयं सासादनस्तिर्यङ् तदा 'णहि सासणो अपुण्णो साहारणसुहुमगे य तेउदुगे' इति शेषैकेंद्रियविकलत्रयसंज्ञ्यसंज्ञ्येव नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकमबध्नन् शरीरपर्याप्तेः प्राक् सासादनत्वं त्यक्त्वा नियमेन मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा पर्याप्तेरुपरि बध्नाति। संज्ञ्यसंज्ञिनावपि तत्कथं न बध्नतः? 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं णहीति अस्मिन् सासादने तयोरपि तदघटनात् । तिर्यग्मिश्रोऽसंयतो वा संज्ञिपर्याप्त एव तन्मिश्रे देवगतियुताष्टाविंशतिकमेव 'उवरिमछण्हं च छिदी सासणसम्मे' इति तिर्यग्मनुष्यगत्योरस्य बंधाभावात् । तदसंयतेऽपि तदेव तिर्यग्जीवे तीर्थाहाराणामबंधात् । मनुष्ये मिथ्यादृष्टौ लब्ध्यपर्याप्ते नरकगतिदेवगतियुताष्टाविंशतिकवर्जिततिर्यग्मनुष्यगतियुतत्रयोविंशतिकादीनि षट् । पर्याप्ते चतुर्गतियुतानि तानि षट्, चदुगदिमिच्छो सण्णीत्यादिसामग्रीसंपन्नः करणलब्धिचरमसमये दर्शनमोहमुपशमय्य प्रथमोपशमसम्यक्त्वं तत्सहितदेशव्रतं तत्सहितमहाव्रतं वा प्राप्य तत्कालांतर्मुहूर्ते एकसमयतः षडावल्यंतेषु कालेष्वेकस्मिन्नवशिष्टेऽनंतानुबंधिनामप्रशस्तोपशांतानामन्यतमोदयेन लब्धगुणं हत्वा जातसासादनः एकविकलेंद्रियाणां मिथ्यादृष्टावेव बंधात् पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्कदेवगतियुताष्टाविंशतिकानि बध्नाति । मरणो तिर्यङ् मनुष्यो देवो वा सासादनकाले नवविंशतिकादिद्वयं, न च नरकगतिदेवगत्यष्टाविंशतिकं । तत्काले परिसमाप्ते मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा शेषमिश्रकाले विनाष्टाविंशतिकं पंचविंशतिकादीनि पंच । पर्याप्तौ तु अष्टाविंशतिकमपि । कर्मभोगभूमिमिश्रासंयतौ देवगत्यष्टाविंशतिकमेव नरकतिर्यग्गत्योः सासादने बंधच्छेदात् । विग्रहगतितीर्थकृत् मिश्रतीर्थकृत् गर्भतीर्थकृत् जन्मतीर्थकृत् कुमारतीर्थकृत् वद्धदेवनरकायुः प्रारब्धतद्बंधः तत्सच्चचरमांगश्च देवगतितीर्थयुतनवविंशतिकं, देवः पर्याप्तो मिथ्यादृष्टिः भवनत्रयसौधर्मद्वयजः एकेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतपंचविंशतिकातपोद्योतयुतषड्विंशतिकपंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्मनुष्यगतियुतनवविंशतिकतिर्यग्गत्युद्योतयुतत्रिंशत्कानि, सानत्कुमारादिदशकल्पजः मनुष्यतिर्यग्गतियुतनवविंशतिकतिर्यग्गत्युद्योतयुतत्रिंशत्के । आनतादिकल्पनवग्रैवेयकजः मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव । मनुष्यलोकप्रतिबद्धत्रिंशद्भोगभूमितिर्यग्मनुष्यः मानुषोत्तरात्स्वयंप्रभाचलांतरालवर्तिजघन्यतिर्यग्भोगभूमिसंज्ञितिर्यङ्षण्णवतिकुमानुष्यद्वीपकुमानुष्यश्च नियमेन देवायुष्यं स्वस्थितिनवमासावशेषेऽष्टापकर्षेषु कश्चित्त्रिभागावशेषे वद्ध्वा भुज्यमानायुः स्थितिक्षयवशेन भवनत्रये कल्पस्त्रीषु वा मिथ्यादृष्टिर्भूत्वोत्पद्य यावच्छरीरमपूर्णं तावत् निर्वृत्त्यपर्याप्तो भवति । अत्र प्रस्तुतगाथा—

सव्वहोत्ति सुद्दिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा । सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं ॥ १ ॥

मिथ्यादृष्टयो भोगभूमिजास्तापसाश्च वरमुत्कृष्टेन भवनत्रये उत्पद्यंते नान्यत्र । भरतैरावतविदेहजाः स्वयंभूरमणद्वीपापरार्धतत्समुद्रलवणोदकालोदजाश्च केचित् जलस्थलखचरसंज्ञिपर्याप्तभद्रमिथ्यादृष्टयः उपशमब्रह्मचर्यांकितवानप्रस्थाः एकजटित्रिशतजटिसहस्रजटिनग्नांडकांजीभिक्षुकंदमूलपत्रपुष्पफलभुजः अकामनिर्जरा एकदंडित्रिदंडिमिथ्यातपश्चरणपरिणताश्च कायक्लेशाचरणैः केचित् स्वस्वविशुद्ध्यनुसारेण भवनत्रयाद्यच्युतांतमुत्पद्यंते । अकामैः अनभिलषितैः बंधनेन क्षुत्पिपासानिरोधब्रह्मचर्यभूशयनमलधारणपरितापादिभिर्निर्जरा अकामनिर्जरेत्युच्यते । मिथ्यादर्शनोपेताः अनुपायकायक्लेशप्रचुराः निकृतिबहुलव्रतधराः बालतपसः । तदुत्पत्तिप्रस्तुतगाथासूत्रं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चरया य परिव्वाजा बम्होत्तरच्चुदपदोत्ति आजीवा । अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जंति ॥ १ ॥

चरकाः नग्नांडाः परिव्राजकाः एकत्रिदंडिनः एते उत्कृष्टेन भवनत्रयादिब्रह्मकल्पांतमुत्पद्यंते । आजीवाः कांजीभिक्षवः उत्कृष्टेन भवनत्रयाद्यच्युतांतमुत्पद्यंते । अनुदिशानुत्तरविमानागताः द्विचरमांगत्वात् वासुदेवप्रतिवासुदेवेषु नरकगामिषु नोत्पद्यंते । साग्रनाग्रभव्यमिथ्यादृष्टयः अर्हल्लिंगधराः बाह्यषड्विधतपोनिरतास्त्रिकालदेववंदनादिसमेताः दर्शनचारित्रमोहघातिकर्मोदयाः उपशमब्रह्मचर्यादिसमेताः केचिद् द्रव्यमहाव्रताः उपरिमग्रैवेयकांतमुत्पद्यंते न तत उपरि । अत्रोपयोगिगाथा सूत्रं—

णरतिरियदेसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा । णरअयददेसमिच्छा गेवज्जंतोत्ति गच्छंति ॥ १ ॥

तिर्यग्मनुष्या देशसंयता असंयताश्चोत्कृष्टेनाच्युतांतमुत्पद्यंते । द्रव्यतो जिनरूपमहाव्रताः भावतोऽसंयतदेशसंयतमिथ्यादृष्टयः उपरिमग्रैवेयकांतमुत्पद्यंते । सोऽयं निर्वृत्त्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिः भवनत्रयकल्पस्त्रीसौधर्मद्वयजः तदा एकेंद्रियपर्याप्तयुतपंचविंशतिकातपोद्योतयुतपर्याप्ततिर्यग्गत्येकेंद्रिययुतषड्विंशतिकपंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुतत्रिंशत्कानि बध्नाति । सानत्कुमारादिदशकल्पजस्तदा पंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतनवविंशतिकोद्योतयुततिर्यक्पंचेंद्रिययुतत्रिंशत्के एव, आईसाणोत्ति सत्तवामछिदीत्येकेंद्रियपर्याप्तादियुतस्थानानामबंधात् । आनताद्युपरिमग्रैवेयकांतजस्तदा मनुष्यगतियुतनवविंशतिकमेव । तिरियदुगं तिरियाऊ उज्जोओ णत्थीति तिर्यग्गतियुतनवविंशतिकत्रिंशत्कयोरबंधात् । एवं संक्षेपाद् देवगत्यसंयमिमिथ्यादृष्टीनां नामबंधस्थानानि योजितानि । अत्र जीवसमासपर्याप्तिभाषादिविवक्षया ग्रंथगौरवभयान्न योजितानि परमागमप्रवीणैर्योजयितव्यानि ।

अथ संज्ञिपर्याप्तो गर्भजो विशुद्धः साकारोपयोगो मिथ्यादृष्टिः तिर्यग्भोगभूमिजस्तदा जातिस्मरणाद्देवप्रतिबोधनाद्वा त्रिंशद्भोगभूमिजस्तदा तद्द्वयाच्चारणप्रतिबोधनाद्वा प्रथमोपशमसम्यक्त्वं गृहीत्वा संयतः स्यात् । स्वयंप्रभाचलबाह्यकर्मभूमिजस्तदा तद्द्वयात्तथा स्यात् । कश्चिच्च प्रथमोपशमसम्यक्त्वेन समं देशव्रतं गृहीत्वा देशसंयतः स्यात् । पंचदशकर्मभूमिजस्तदा जातिस्मरणाद्देवमनुष्यप्रतिबोधनाज्जिनबिंबदर्शनाद्वा तथा द्विविधः स्यात् । तादृक्मनुष्यस्तदा तथा द्विविधः, कश्चित्प्रथमोपशमसम्यक्त्वेन समं महाव्रतं स्वीकृत्याऽप्रमत्तोऽपि स्यात् । अयमप्रमत्तः कश्चित्प्रमत्तः स्यात् । कश्चिच्च द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं स्वीकृत्य श्रेणिमारुह्य क्रमेणावतरन्नसंयतः देशसंयतः प्रमत्तो वा स्यात् । अमी प्रथमद्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टयः स्वभवचरमे स्वसम्यक्त्वकाले जघन्येनैकसमये उत्कृष्टेन षडावलिमात्रेऽवशिष्टेऽनंतानुबंध्यन्यतमोदयेन सासादना भूत्वा प्राग्बद्धदेवायुष्का मृत्वा अबद्धायुष्काः केचिद्देवायुर्बध्वा च देवनिर्वृत्त्यपर्याप्तसासादनाः स्युः । ते च भवनत्रयकल्पस्त्रीसौधर्मद्वयजास्तदा पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्यगतिपर्याप्तयुतनवविंशतिकतिर्यग्गत्युद्योतपर्याप्तयुतत्रिंशत्के बध्नंति । सासादनकालमतीत्य मिथ्यादृष्टय एव भूत्वा तद्द्वयं यावच्छरीरमपूर्णं तावदेकेंद्रियपर्याप्तयुतपंचविंशतिकोद्योतातपैकेंद्रियपर्याप्तयुतषड्विंशतिके च सानत्कुमारादिदशकल्पजास्तदा तद्द्वयमेव आनतादिकल्पनवग्रैवेयकजास्तदा मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । सासादनत्वेऽतीते तन्निर्वृत्त्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टिवद्बध्नंति । भवनत्रयाद्युपरिमग्रैवेयकांतमिश्ररुचयः पर्याप्तभवनत्रयकल्पस्त्र्यसंयताश्च मनुष्यगतियुतनवविंशतिकं वैमानिकास्तीर्थरहितास्तदेव सतीर्थाः मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कमेव ।

चक्षुर्दर्शनेऽचक्षुर्दर्शने च सर्वाणि । तत्र चक्षुर्दर्शने नारकाः नवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे । चतुरिंद्रिया विनाष्टाविंशतिकं तिर्यग्गतिमनुष्यगतियुतत्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योविंशतिकादीनि षट्। पंचेंद्रियाः त्रयोविंशतिकादीनि षट्। मनुष्याः सर्वाणि। देवा यथायोग्यपंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि। अचक्षुर्दर्शने नारका चक्षुर्दर्शनोक्ते द्वे। एकेंद्रियादिचतुरिंद्रियांताः नरकदेवगत्यष्टाविंशतिकं विना योग्यत्रयोविंशतिकादीनि षट्। पंचेंद्रियास्तद्युतानि षट्। मनुष्याः सर्वाणि। देवाः चक्षुर्दर्शनोक्तानि चत्वारि। अवधिदर्शनेऽवधिज्ञानवच्चरमाणि पंच। असंयतदेवनारके असंयतदेशसंयतसंज्ञिपर्याप्ततिरश्च्यसंयतादिक्षीणकषायांतमनुष्ये च देशावधिः प्रमत्तादिक्षीणकषायांतचरमांगे च परमावधिसर्वावधी, तथावधिदर्शनमपि। तत्र घर्मादित्रयजाः सतीर्थाः तीर्थमनुष्यगतित्रिंशत्कं तत्रातीर्थाः अंजनादिजाश्च मनुष्यगतिनवविंशतिकं। तिर्यंचः देवगतियुताष्टाविंशतिकं। मनुष्यास्तदादीनि पंच। सौधर्मादयस्तीर्थसत्त्वा मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कं। भवनत्रयादयस्तदसत्त्वाः मनुष्यगतिनवविंशतिकं। केवलदर्शने केवलज्ञानवच्छून्यं ॥ ५४८ ॥

स० चं०–सूक्ष्मसांपराय संयमविषैं अंतका एकका ही स्थान है। यथाख्यातविषैं केवलज्ञानवत् बंधका शून्य है। बहुरि देशसंयमविषैं आहारकवत् देवगतियुत अठाईसका अर देवगति तीर्थंकर युत गुणतीसका ए दोय हैं। तहां देशसंयम सहित तिर्यंचविषैं देवगतियुत अठाईसका ही है। बहुरि असंयमविषै कार्माणवत् आदिके छह स्थान हैं। तहां नारकी मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंचगतियुक्त वा मनुष्यगतियुक्त गुणतीस अर उद्योत सहित तीसका ए दोय हैं। मिश्रविषैं मनुष्यगति युत गुणतीस का ही है। असंयतविषैं घर्मादि तीन विषैं मनुष्यगतियुत गुणतीस अर मनुष्यगति तीर्थ सहित तीसका ए दोय हैं। अवशेष पृथ्वीनिविषैं मनुष्यगतियुक्त गुणतीसका ही है। बहुरि तिर्यंचगतिविषैं तेईसकानैं आदि देकरि छह हैं। तहां इतना विशेष–जो पर्याप्त अपर्याप्त एकेंद्री विकलेंद्रीनिविषैं अर अपर्याप्त पंचेंद्रीविषैं नरकगति देवगतियुत अठाईसका बंधस्थान नाहीं है बहुरि बादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त तेजःकायिक वातकायिकनिविषैं मनुष्यगति अपर्याप्तयुक्त पचीसका अर पर्याप्त मनुष्यगतियुत गुणतीसका ए दोय नाहीं है। बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व तीह संयुक्त देशव्रत ताकी विराधनाकरि सासादन भया ऐसा तिर्यंच सो तिर्यंच गतियुत वा मनुष्यगति युत गुणतीसका अर उद्योत युत तीसका अर देवगतियुत अठाईसका ऐसैं तीनस्थान बांधे है। मरण होतैं नरक विना और गतिनिविषैं उत्कृष्ट एक समय घाटि छह आवली जघन्य एक समय पर्यंत अपर्याप्त दशामें सासादन होहै तातैं सासादन तिर्यंच है सो 'णहि सासणो अपुण्णे साहारणसुहुमगे य तेउदुगे' इस वचनतैं एकेंद्री विकलेंद्री संज्ञी असंज्ञी जीव ही अपर्याप्त सासादनवर्ती हैं सो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नरकगति वा देवगति युत अठाईसकौं न बांधता शरीर पर्याप्तिके पहिले ही सासादनपणां छाडि नियमतैं मिथ्यादृष्टी होइ पर्याप्त अवस्थाके ऊपरि ही नरकगतियुत वा देवगति युत अठाईसके स्थानकौं बांधैं है। 'मिच्छदुगेदेवचऊ तित्थं णहिं' इस वचनतैं संज्ञी असंज्ञी भी अपर्याप्त दशायुक्त सासादनविषै अठाईसका स्थान बांधै है बहुरि तिर्यंच मिश्र व असंयत गुणस्थानवर्ती है सो संज्ञी पर्याप्त ही हैं सो मिश्रविषैं तो देवगति युक्त अठाईसकौं ही बांधैं हैं जातैं 'उवरिम छण्हं च छिदी' इस वचनतैं तिर्यंच मनुष्यगति बंधनेका याकैं अभाव है। बहुरि असंयतविषैं भी सोई स्थान बंधे है जातैं तिर्यंच जीवविषैं तीर्थंकर आहारकका बंध नाहीं है। बहुरि असंयम सहित मनुष्यविषै मिथ्यादृष्टिविषैं लब्धि अपर्याप्तक मनुष्यकैं तौ नरकगति देवगति युत अठाईसका विना तेइसकानैं आदि देकरि छह स्थान हैं। बहुरि पर्याप्त मनुष्यकैं च्यारचो गति सहित छहौ स्थान पाइए है। बहुरि 'चदुगादि मिच्छो सण्णी' इत्यादिक सामग्री सहित जीव करणलब्धीका अंत समयविषैं दर्शन मोहकौं उपशमाइ प्रथमोपशम सम्यक्त्वी भया वा प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित देशव्रती वा महाव्रती भया तिस उपशम सम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्त कालविषै एक समयतैं लगाय छह आवली पर्यंत कोईका अवशेष रहैं अनंतानुबंधीनिका अप्रशस्त उपशम भया था तिसविषै एक कोई क्रोधादिकका उदय होतैं पाया था जो प्रथमोपशम सम्यक्त्व गुण ताका घातकरि सासादन भया ऐसा मनुष्य सो एकेंद्री विकलेंद्रीका तौ मिथ्यादृष्टिविषैं ही बंध है तातैं पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच गति वा मनुष्यगतियुत गुणतीसका स्थानकौं वा उद्योतयुत तीसकाकौं वा देवगतियुत अठाईसकाकौं बांधै है। बहुरि मरणविषैं तिर्यंच वा मनुष्य वा देव यावत् काल अपर्याप्त दशाविषैं सासादन रहै तावत् काल तौ गुणतीस वा तीसके दोय ही बांधै नरकगति देवगति युत अठाईसकाकौं न बांधै। बहुरि सासादनका काल पूर्णभए पीछैं मिथ्यादृष्टि होइ तहां जितना-काल निर्वृत्ति अपर्याप्त दशाका अवशेष रहैं तिसविषै अठाईसका विना पचीसकानैं आदि देकरि पांच स्थाननिकौं बांधैं। बहुरि पर्याप्त अवस्थाविषै अठाईसका सहित छह स्थान बांधैं। बहुरि कर्मभूमिया वा भोगभूमिया मनुष्य मिश्र वा असंयत गुणस्थानवर्ती सो देवगतियुत अठाईसकौं ही बांधै है जातैं नरक तिर्यंच गतिका सासादनहीविषैं बंध ७२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्युच्छेद भया है। बहुरि विग्रहगतिविषै तीर्थंकर वा निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्थाविषै तीर्थंकर वा गर्भ अवस्थाविषै तीर्थंकर वा जन्म अवस्थाविषै तीर्थंकर वा कुमार अवस्थाविषैं तीर्थंकर बहुरि जाकैं देवायु नरकायुका पूर्वै बंध भया अर पीछैं तीर्थंकर बंधका प्रारंभ कीया असा जीव वा तीर्थंकर सत्त्वका धारी चरमशरीरी मनुष्य असंयत गुणस्थानवर्ती सो देवगति तीर्थंकर सहित गुणतीसका स्थानकौं ही बांधैं है। बहुरि असंयम सहित देव सो पर्याप्त दशाविषैं मिथ्यादृष्टी भवनत्रिक सौधर्मद्विकवाले तौ एकेंद्री पर्याप्त तिर्यंचगति सहित पचीसका वा आतप उद्योत युक्त छवीसका वा पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच मनुष्यगति युत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका असैं च्यारि स्थानकों बांधे हैं और सानत्कुमारादि दश स्वर्गवाले मनुष्य तिर्यंच गति सहित गुणतीसका वा तिर्यंचगति उद्योत सहित तीसका स्थानकौं बांधै हैं। बहुरि आनतादि स्वर्ग अर नवग्रैवेयकवाले ते मनुष्यगति सहित गुणतीसका स्थानकौं ही बांधै हैं। अब देवनिकी निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्थाविषै बंध कहैं हैं तातैं देवविषैं कौन कैसै उपजै हैं? सो कहै हैं—

मनुष्यलोक संबंधी तीस भोगभूमिके तिर्यंच मनुष्य वा मानुषोत्तर स्वयंप्रभ पर्वतके वीचि असंख्यात द्वीप समुद्र संबंधी जघन्य तिर्यंच भोगभूमिके संज्ञी तिर्यंच वा लवणोद कालोदविषैं छिनवै कुमानुष द्वीप वासी कुमनुष्य सो नियमतैं अपनी आयुके नव महिने अवशेष रहैं आठ अपकर्षनिविषैं कहीं त्रिभाग अवशेषविषैं देवायुकौं बांधि भुज्यमान आयुका नाशतैं भवनत्रिकविषैं वा कल्पवासिनी स्त्रीविषैं मिथ्यादृष्टी होइ उपजैं तहां यावत् शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् निर्वृत्त्यपर्याप्त हैं। इहां औरनिके कथन निमित्त प्रासंगिक गाथा कहिए है—

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा।
सोहम्मदुगं मिच्छा भवणातियं तावसा य वरं ॥ १॥

मिथ्यादृष्टि भोगभूमिया अर तापसी ते वर उत्कृष्टपनैं भवनत्रिकविषैं उपजैं हैं अन्यत्र नाहीं। बहुरि भरत ऐरावत विदेहवासी वा स्वयंभूरमण द्वीपका अपरार्ध अर स्वयंभूरमण लवणोद कालोद समुद्र तिनके वासी जीव केई जलचर, थलचर नभचर संज्ञी पर्याप्त भद्र मिथ्यादृष्टी अर उपशम ब्रह्मचर्य सहित वानप्रस्थ वा एकजटी शत-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जटी सहस्रजटी वा नागा वा कांजी भक्षणवाले वा कंदमूल पत्र पुष्प फलके खानेवाले वा अकाम निर्जरा संयुक्त वा एकदंडी त्रिदंडी मिथ्यातपश्चरण रूप परिणए ते कायक्लेशादि आचरणकरि कोई अपनी अपनी विशुद्धताके अनुसारि भवनत्रिकादिक अच्युत स्वर्गपर्यंत उपजैं हैं । अकाम कहिए अपने अभिलाष विना बंधनादिककरि क्षुधा तृषाका सहना ब्रह्मचर्य धारना भूमिविषैं सोवना मलादिक धारना परीषहादिक सहना इन करि जो निर्जरा होइ सो अकाम निर्जरा कहिए। बहुरि मिथ्यादर्शन सहित मोक्ष उपाय रहित बहुत काय क्लेश करना कपटरूप बहुत व्रत धारना सो बालतप कहिए, ए भी देवविषै उपजनेकौं कारण हैं। सो इहां तिनके उपजनेकी प्रासंगिक गाथा कहिए है—

चरिया य परिव्वाजा बम्होत्तरचुदपदोत्ति आजीवा।
अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जंति ॥ २ ॥

चरकाः कहिए नागा परिव्राजक कहिए सन्यासी एकदंडी त्रिदंडी ए उत्कृष्ट भवनत्रिकादिक ब्रह्मस्वर्गपर्यंत उपजै हैं बहुरि आजीवा कहिये कांजीके भक्षण करनेवाले उत्कृष्ट भवनत्रिकादिक अच्युत स्वर्गपर्यंत उपजैं हैं। बहुरि अनुदिश अनुत्तर विमानवासी देव द्विचरम शरीरी हैं तातैं ते मरि नारायण प्रतिनारायण नरकगामी जीवनिविषैं नाहीं उपजै हैं। बहुरि सादि वा अनादि वा अभव्य जो मिथ्यादृष्टी अर्हंतके द्रव्य लिंगका धारी वाह्य छै प्रकार तपविषैं मग्न त्रिकाल देववंदनादिक क्रिया सहित दर्शन चारित्र मोहरूप घातिया कर्मका जाकैं उदय पाइए उपशम ब्रह्मचर्यादिक संयुक्त द्रव्यलिंगी सो उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत उपजै है। बहुरि ऊपरि नाही। यहां प्रासंगिक गाथा कहिए है—

णरतिरियदेसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा।
णरअयददेसमिच्छा गेव्वेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥ ३ ॥

तिर्यंच मनुष्य देशसंयत वा असंयत ते उत्कृष्टपनैं अच्युत स्वर्गपर्यंत उपजैं हैं अर द्रव्यलिंगी जिनरूप महाव्रती

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावा असंयत वा देश संयत वा मिथ्यादृष्टी ते उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत उपजैं हैं ऐसैं देवनिविषैं उपजना कह्या तिनविषैं निर्वृत्त्यपर्याप्त मिथ्यादृष्टी भवनत्रिक देव वा कल्पवासिनी स्त्री वा सौधर्म ईशानवाले जे एकेंद्री पर्याप्तयुत पचीसका अर आतप उद्योतयुत पर्याप्त तिर्यंचगति एकेंद्री सहित छवीसका अर पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच गतियुक्त वा मनुष्यगति युक्त गुणतीसका वा उद्योत सहित तीसका ऐसैं च्यारि स्थाननिकौं बांधै है। बहुरि तैसैंही सनत्कुमारादिक दशस्वर्गके वासी पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच गतियुत वा मनुष्यगतियुत गुणतीसकौं अर उद्योत तिर्यंचगति पंचेंद्री सहित तीसकौं बांधैं है। बहुरि आनतादि उपरिम ग्रैवेयकवाले मनुष्यगतियुक्त गुणतीसकाकौं ही बांधै हैं जातैं तिर्यंचगति सहित गुणतीस तीसका इहां बंध नाहीं ऐसैं संक्षेपतैं असंयम सहित मिथ्यादृष्टि जीवनिकैं देवगति अपेक्षातैं नामकर्मके बंधस्थान कहे। इहां जीवसमास पर्याप्ति प्राणादिककी विवक्षाकरि ग्रंथ बधनेके भयतैं न कहैं हैं। परमागमके ज्ञायकनिकरि लगायलेने। आगैं असंयत सहित (अ) पर्याप्त सासादनविषैं कहिए है—

संज्ञी पर्याप्त गर्भज विशुद्धता सहित साकार ज्ञान उपयोगका धारी मिथ्यादृष्टि ऐसा भोगभूमिया तिर्यंच तौ जातिस्मरण वा देव संबोधनतैं अर तीस भोगभूमिका तिर्यंच जातिस्मरण वा देव संबोधन वा चारणमुनि संबोधनतैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं ग्रहिकरि असंयत गुणस्थानवर्ती होय अर स्वयंप्रभाचल पर्वतके परैं कर्मभूमिका तिर्यंच जातिस्मरण वा देव संबोधनतैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं पाइ असंयत होइ वा प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित देशसंयमकौं पाइ देश संयत होइ बहुरि पंद्रह कर्मभूमिके वासी तिर्यंच जातिस्मरण वा देव मनुष्य संबोधन वा जिन बिंबदर्शनतैं तैसैं ही असंयत वा देश संयत होइ। बहुरि तैसा ही मनुष्य तैसैंही असंयत वा देशसंयत होइ वा कोई मनुष्य प्रथमोपशम सम्यक्त्व सहित महाव्रत अंगीकार करि अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती होइ। यहु अप्रमत्त कोई उतरि करि प्रमत्तविषैं आवै। बहुरि कोई जीव द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकौं अंगीकार करि श्रेणीं चढि अनुक्रमतैं उतरि असंयत वा देशसंयत वा प्रमत्त होइ। ए प्रथम द्वितीयोपशम सम्यक्त्वके धारी जीव ते अपने पर्यायका अंतविषैं जघन्य एक समय उत्कृष्ट छह आवली अवशेष रहैं केई एक अनतानुबंधी कषायके उदय करि सासादन होंइ ७२३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain, Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केई पूर्वें देवायु बांध्या था ते मरिकरि अर केई पूर्वें आयु न बाध्या ते तहां अंत समयविषैं देवायु बांध मरिकरि देव निर्वृत्ति अपर्याप्त सासादन गुणस्थानवर्ती होंइ ते भवनत्रिक कल्पवासिनी स्त्री सौधर्म द्विकवाले देव तो तहां पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्यगति पर्याप्तयुत गुणतीसका वा तिर्यंचगति उद्योत पर्याप्तयुत तीसका स्थानकौं बाधै हैं। अर सासादनकालकौं उलंघि मिथ्यादृष्टि होइ, तिन दोऊ स्थाननिकौं अर यावत् शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् एकेंद्री पर्याप्त युत पचीसका वा उद्योत आतप एकेंद्री पर्याप्तयुत छत्तीसका स्थानकौं बाधै हैं बहुरि सनत्कुमारादि दश स्वर्गवाले तहां तिन गुणतीस तीसके दोऊ स्थाननिहीकौं बाधै हैं। बहुरि आनतादि स्वर्ग अर नवग्रैवेयक वाले तहां मनुष्यगतियुत गुणतीसके स्थानहीकौं बांधै हैं बहुरि सासादनका काल व्यतीत भएं पीछे तिस निर्वृत्ति अपर्याप्त मिथ्यादृष्टिवत् स्थाननिकौं बाधै हैं। बहुरि भवनत्रिकादिक उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत मिश्र गुणस्थानवर्ती अर पर्याप्त भवनत्रिक कल्पवासिनी स्त्री असंयत गुणस्थानवर्ती ते मनुष्यगतियुत गुणतीसके स्थानकौं बाधैं हैं बहुरि वैमानिक देव तीर्थ रहित तिसही गुणतीस के स्थानकौं अर तीर्थ सहित तीसके स्थानकौं बाधै हैं।

बहुरि चक्षु दर्शन अर अचक्षु दर्शनविषैं सर्व बंध स्थान हैं। तहां चक्षु दर्शनसहित नारकी गुणतीस तीसके दोय स्थानकौं बाधै है चौंद्री जीव अठाईसके स्थान विना तिर्यंच मनुष्यगतियुत तेईसकानै आदि देकर पांच स्थान बाधै हैं। पंचेंद्री तिर्यंच तेईसकानै आदि देकरि छह स्थान बांधै है मनुष्य सर्व स्थाननिकौं बांधै है। देव यथायोग्य पचीस छवीस गुणतीस तीस के च्यारि स्थाननिकौं बाधै हैं। बहुरि अचक्षुदर्शन सहित नारकी चक्षुदर्शनवत् दोयकौं अर एकेंद्रिय आदि चौंद्रिय पर्यंत नरक देवगतियुत अठाईसके विना तेईस आदि पांचकौं अर पंचेंद्री तिर्यंच तिस सहित छहकौं अर मनुष्य सर्वस्थाननिकौं अर देव चक्षुर्दर्शनवत् च्यारि स्थाननिकौं बाधै हैं। बहुरि अवधि दर्शनविषैं अवधिज्ञानवत् अंतके पांच स्थान हैं। असंयत देवनारकीविषैं वा असंयत देशसंयत संज्ञी पर्याप्त तिर्यंच विषैं वा असंयतादि क्षीण कषाय पर्यंत मनुष्यविषैं देशावधि ज्ञान है अर प्रमत्तादि क्षीण कषाय चरम शरीरी विषै परमावधि वा सर्वावधि पाइए है सो ऐसैं अवधिज्ञानी जीवनिकैं ही अवधि दर्शन पाइए है। तहां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवधि दर्शनके धारी घर्मादि तीन नरकवाले तीर्थंकर मनुष्यगतियुत तीसकौं अर तीर्थंकर सत्त्व रहित घर्मादिवाले वा अंजनादिवाले मनुष्यगति गुणतीसकेकौं बांधै हैं। बहुरि तिर्यंच हैं ते देवगतियुत अठाइसकेकौं बांधै हैं। बहुरि मनुष्य हैं ते देवगतियुत अठाईसकानें आदि देकरि एकका पर्यंत पांचकौं बांधै हैं। बहुरि देव हैं ते सौधर्मादिकवाले तीर्थ सत्व सहित तीर्थंकर मनुष्यगतियुत तीसकेकौं अर तीर्थ सत्व रहित भवनत्रिकादिक ते मनुष्यगतियुत गुणतीसकेकौं बांधै हैं बहुरि केवल दर्शन केवलज्ञानवत् बंध शून्य है ॥ ५४८ ॥

कम्मं वा किण्हतिये पणुवीसाछक्कमट्ठवीसचऊ।
कमसो तेऊजुगले सुक्काए ओहिणाणं वा ॥ ५४९ ॥

कर्म वा कृष्णत्रये पंचविंशतिषट्कमष्टाविंशचतुष्कं ।
क्रमशः तेजोयुगले शुक्लायामवधिज्ञानं वा ॥ ५४९ ॥

जी० प्र०—कृष्णाद्यशुभलेश्यात्रये बंधस्थानानि कार्मणयोगवदाद्यानि षट्। तेजोलेश्यायां पचविंशतिकादीनि षट्। पद्मलेश्यायामष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि। शुक्ललेश्यायामवधिज्ञानवच्चरमाणि पंच। वर्णनामोदयसंपादितशरीरवर्णो द्रव्यलेश्या सा नात्र विवक्षिता। मोहोदयोपशमक्षयक्षयोपशमजनितजीवस्पंदनं भावलेश्या, सा च कृष्णादिभेदेन षोढा। प्रथमनरकप्रथमेंद्रके कपोतजघन्यांशः। तृतीयनरकद्विचरमेंद्रके तदुत्कृष्टांशः। तच्चरमेंद्रके नीलजघन्यांशः। पंचमनरकद्विचरमेंद्रके तदुत्कृष्टांशः। तच्चरमेंद्रके कृष्णाजघन्यांशः। सप्तमनरकावधिस्थानेंद्रके तदुत्कृष्टांशः। तयोस्तयोर्मध्ये स्वस्वमध्यमांशो भवति। तत्रोत्पत्तियोग्यमिथ्यादृष्टिजीवाः घर्मायां कर्मभूमिषट्संहननाः असंज्ञिसरीसृपपक्षिभुजंगसिंहवनितामत्स्यमनुष्या एव। तत्रापि वंशायां सरीसृपादय एव। मेघायां पक्ष्यादय एव। अंजनायां आद्यपंचसंहनना एव भुजंगादय एव। अरिष्टायां केसर्यादय एव। मघव्यां आद्यचतुःसंहनना एव वनितादय एव। माघव्यामाद्यसंहनना एव मत्स्यमनुष्या एव। ते च तत्रोत्पन्नाः शरीरे पूर्णेऽपूर्णे च तिर्यग्मनुष्यगतिनवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे बध्नंति। सप्तम्यां ते द्वे तिर्यग्गतियुते एव। तत्सासादनाः ते तिर्यग्मनुष्यगतियुते। मिश्रा असंयताश्च मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव। घर्मायां निर्वृत्त्यपर्याप्ताः पर्याप्ताश्च क्षायिकवेदककृतकृत्यवेदकास्तदेव, सतीर्थाः मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कमेव। वंशामेघयोः सतीर्थाः पर्याप्तत्वे नियमेन मिथ्यात्वं त्यक्त्वा सम्यग्दृष्टयो भूत्वा तत्त्रिंशत्कमेव। तिर्यग्गतौ पर्याप्तादित्रिविधसर्वैकद्वित्रिचतुरिंद्रियेषु लब्ध्यपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तासंज्ञिनि मिथ्यादृष्टिनरकाद्यागतसासादनापर्याप्तसंज्ञिनि च लेश्या अशुभा एव तिस्रः। पर्याप्तमिथ्यादृष्ट्यसंज्ञिनि कृष्णाद्याश्चतस्रः। पर्याप्तसासादनमिश्रपर्याप्तापर्याप्तासंयतसंज्ञिनि षट्

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोगभूमौ निर्वृत्त्यपर्याप्तासंयते कापोतजघन्यं । मिथ्यादृष्टौ सम्यग्दृष्टौ वा तत्पर्याप्ते शुभा एव तिस्रः । तत्रत्यानां शरीरपर्याप्तौ पूर्णायां तत्त्रये एवागमनात् । एषामुक्ततिर्यग्जीवानां मध्ये ये दिरसूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुनित्यचतुर्गतिनिगोदप्रतिष्ठिताप्रतिष्ठितप्रत्येकद्वित्रिचतुरसंज्ञिसंज्ञिपंचेंद्रियलब्ध्यपर्याप्तास्ते च तेभ्यो वा तदेकान्नविंशतिविधपर्याप्तेभ्यो वा पर्याप्तापर्याप्तकर्मभूमिमनुष्येभ्यश्च मिथ्यादृष्टिभ्य एवागत्याशुभलेश्यात्रयेणोत्पद्यंते ते च विनाष्टाविंशतिकं त्रयोविंशतिकादीनि पंच बध्नंति । तेजोवायुकायिकास्तु तिर्यग्गतियुतान्येव । ते चत्वारिंशद्विधमिथ्यादृष्टयः, अशुभलेश्यात्रयेण मृतास्तदेकान्नविंशतिविधपर्याप्ततिर्यग्मिथ्यादृष्टिषूत्पद्यंते । तत्र तेजोवायुषु त्र्यशुभलेश्यामध्यमांशैरेव, भवनत्रयसौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टयः तेजोमध्यमांशेन तिर्यग्मनुष्या अशुभत्रयमध्यमांशेन च मृताः केचिद्बादरपृथ्व्यप्प्रतिष्ठितप्रत्येकेषूत्पद्यंते । भवनत्रयादिसहस्रारांतदेवसर्वनारकमिथ्यादृष्टयः बद्धतिर्यगायुषः स्वस्वलेश्याभिर्मृताः कर्मभूमिगर्भसंज्ञितिर्यक्षूत्पद्यंते । ते च एकान्नविंशतिधाचतुर्गत्यागतनिर्वृत्त्यपर्याप्तमिथ्यादृष्टयः सर्वाण्यष्टाविंशतिकोनत्रयोविंशतिकादीनि पंच बध्नंति । अनंतानुबंध्यन्यतमोदयेन प्रथमोपशमसम्यक्त्वं विराध्य सासादना भूत्वा प्राग्बद्धतिर्यगायुष्का मृत्वा अबद्धायुष्काः केचित्तदैव तिर्यगायुर्बध्वा मृत्वा च कर्मभूमितिर्यग्मनुष्यास्तदा वादरपृथ्व्यप्प्रत्येकविकलत्रयसंज्ञ्यसंज्ञिषु देवास्तदा स्वस्वलेश्याभिरीशानांता वादरपृथ्व्यप्प्रत्येकेषु भवनत्रयादिसहस्रारांता षष्ठनरकांतनारकाश्च कर्मभूमिगर्भजसंज्ञितिर्यक्षु च सासादना भूत्वा तिर्यग्मनुष्यगतिपर्याप्तनवविंशतिकत्रिंशत्के बध्नंति । स्वस्वसासादनकालमतीत्य नियमेन मिथ्यादृष्टयो भूत्वा यावच्छरीरमपूर्णं तावन्निर्वृत्त्यपर्याप्ताः मिथ्यादृष्ट्युक्तत्रयोविंशतिकादीनि पंच बध्नंति । ननूत्कृष्टः सासादनकालः षडावलिः आयुर्बंधाद्धा जघन्याप्यंतर्मुहूर्तमात्री तर्हि पूर्वोत्तरभवयोः कथं सासादनत्वमिति ? तन्न, आवलितः समयाधिकक्रमेण समयोनमुहूर्तपर्यंतानां कालविशेषाणां अंतर्मुहूर्तत्वेन विरोधाभावात् । तिर्यगसंयते प्राग्बद्धतिर्यगायुर्देवनारकवेदकसम्यग्दृष्टयः स्वस्वलेश्याभिरुत्पद्यंते । तेऽपि न सप्तमपृथ्वीजाः मिथ्यादृष्टित्वे एवैषां मरणात् । ते चोत्पन्नतिर्यगसंयता देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नंति । पर्याप्तेरुपरि देशसंयतांतगुणस्थाना भवंति । तत्र असंयतांतं षड्लेश्याः, देशसंयते शुभत्रिलेश्याः ।

ननु शुभाशुभलेश्यास्वेकजीवः क्रमेण परिणमेदक्रमेण वा ? उच्यते—आत्मा संक्लेशहान्या कृष्णोत्कृष्टादाकपोतजघन्यं संक्लेशवृद्ध्या कपोतजघन्यादाकृष्णोत्कृष्टं चासंख्यातलोकमात्रषट्स्थानपतितलेश्यास्थानेषु क्रमेण परिणमति । विशुद्धिवृद्ध्या तेजःपद्मशुक्लजघन्याद्यंशेषु विशुद्धिहान्या तेष्वन्यथा च परिणमति । तासां च लेश्यानां मूलकारणं कषायोदयानुभागस्थानानुरंजितयोगप्रवृत्तिः । ते कषायाश्चत्वारः । तेषु विवक्षितक्रोधकषायानुभागस्थानोदयः जीवनरकतिर्यग्मनुष्यदेवगतिषूत्पादकः । तच्छक्तिः शिलाभेदपृथ्वीभेदधूलिराजिजलराजिसमाना । तत्रैसर्वघातिशक्तियुतोदयस्थानेभ्योऽधस्तनी प्रमत्तादिसंयमिष्वेव संभविनी देशघातिनी पूर्वस्पर्धकनामा । तदधोधः अपूर्वस्पर्धकनामा वादरकृष्टिनामा लोभकषाये सूक्ष्मसांपराये सूक्ष्मकृष्टिनामापि । तान्यशेषक्रोधकषायानुभागोदयस्थानान्यसंख्यातलोकमात्रषड्ढानिवृद्धिपतितासंख्यातलोकमात्राणि तेष्वसंख्यातलोकभक्तबहुभागमात्राणि संक्लेशस्थानानि तदेकमात्रभागमात्राणि विशुद्धिस्थानानि । तेषु लेश्यापदानि चतुर्दश लेश्यांशाः षड्विंशतिः । तत्र मध्यमा अष्टौ आयुर्बंधनिबंधनाः । संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

≡ ३८ । श्र । मे । तीव्रतर । नर ६	पृ । मे ≡ ३८ तीव्र । तिर्यग्गतिनिबंधनानि ९ । ९	धू । रा । मंद । मनुष्यगतिनिबंधनानि ≡ ३ । ८ ६ । ६ । ६	जल=रा । देव । मंदतर ≡ ३१ ६ । ६ । ६
उ ० ० ० १ ० ० ० ज	१ २ ३ ४ ५ ६	५ ४ ३ २ १	१
कृ १ १ १ १ १ १ १ १ ० ० ० ० ० ० ० ०	ते क शु प नो १११११२२२२ ३३३३३३३३३३३३४४४४ ५५५५६६६६ ००००००००००००००००००००००००००००००	कृ नो क ते प ६६६६ ६६६६६६६६६ ५५५५४४४४३३३३ २२२२११११ ००००००००००००००००००००००००००००००	शु ११११ ११११ ०००० ००००
० ० ० ० न १ १ १ १ उ	११११११११११११२२२२३ ३३३४४४४४४४४४४४ उ उ ज ज ज	४४४३३३३२२२२११११ ११११ ११११ ०००० ०००० ज ज ज उ उ	०००००००० उ

ते मध्यमांशास्तु तेजोलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानमादिं कृत्वा कपोतलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानपर्यंतं वा कपोतलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानमाद्यं कृत्वा तेजोलेश्याजघन्यस्थानानंतरस्वमध्यमानंतगुणवृद्धिस्थानपर्यंतं पद्मशुक्लकृष्णनीलजघन्यांशाश्चत्वारः चतुर्गत्यायुर्बंधनिबंधननरकवर्जितत्र्यायुर्बंधनिबंधननरकतिर्यग्वर्जिततद्द्व्यायुर्बंधनिबंधनकेवलदेवायुर्बंधनाश्चत्वारः एवमष्टौ । अत्र पद्मशुक्लकृष्णनीलजघन्यांशानां मध्यमत्वं तु शुभाशुभलेश्याविभागापेक्षं शेषाष्टादशांशाः चतुर्गतिगमनकारणानि तेषु सुभगत्रयस्य नवांशाः । नरकगतौ तिर्यग्गतौ चोत्पादकाः अग्रतनाः शुभाशुभलेश्यांशास्तु तिर्यग्मनुष्यदेवगतिगमनकारणानि । लेश्यासंक्रमणं तु कृष्णशुक्लयोर्वृद्धावग्रेऽन्यलेश्याभावात्स्वस्थाने एव हानौ स्वोत्कृष्टात्स्वजघन्यपर्यंतं स्वस्थाने कृष्णायाः नीलकपोततेजःपद्मशुक्लोत्कृष्टपर्यंतं शुक्लायाः पद्मतेजःकपोतनीलकृष्णोत्कृष्टपर्यंतं च परस्थाने स्यात् । शेषाणां हानौ स्वस्वोत्कृष्टादास्वस्वजघन्यं स्वस्थाने परस्थाने तु नीलकपोतयोः स्वस्वजघन्यादाशुक्लोत्कृष्टं पद्मतेजसोराकृष्णोत्कृष्टं च स्यात् । वृद्धौ स्वस्थाने स्वस्वजघन्यादास्वस्वोत्कृष्टं । परस्थाने तु नीलकपोतयोः स्वस्वोत्कृष्टादाकृष्णोत्कृष्टं पद्मतेजसोराशुक्लोत्कृष्टं च स्यात् । न च स्वस्थाने परस्थानवत्परलेश्यासदृशशक्तिस्थानं संक्रामति स्वस्वलक्षणस्यात्यजनात् । स्वस्थानसंक्रमणे सर्वलेश्यानामुत्कृष्टानंतरस्वमध्यमस्थाने हानिरनंतभागातिका तदुत्कृष्टस्योर्ध्वं कृत्वा च तासां जघन्यादनंतरस्वमध्यमस्थाने वृद्धिरपि सैव तज्जघन्यस्याष्टांकत्वात् । परस्थानसंक्रमणे तासां जघन्याद्धानिरनंतगुणा इतरलेश्यापेक्षया तज्जघन्यानामष्टांकत्वात् । तत्तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ मिथ्यात्वेन सहानंतानुबंध्यादिसर्वघातिक्रोधचतुष्कं वा मानचतुष्कं वा मायाचतुष्कं वा लोभचतुष्कमुदेति । सासादने तदेव विना मिथ्यात्वं मिश्रे पुनरनंतानुबंध्यूनं युतं जात्यंतरसर्वघातिसम्यग्मिथ्यात्वेन । असंयते सम्यग्मिथ्यात्वोनं दर्शनमोहस्य क्षयोपशमे युतं देशघातिसम्यक्त्वप्रकृत्या वियुतमुपशमे क्षये च । देशसंयते पुनरप्रत्याख्यानोनं युतं दर्शनमोहस्य क्षयोपशमे तया वियुतमुपशमे तथापि तिर्यग्देशसंयते संक्लेशहानौ जातानि त्र्यशुभलेश्याकारणकषायोदयस्थानान्यसंख्यातैकभागत्वेप्यसंख्यातलोकमात्राणि शेषबहुभागाः षड्लेश्योदयस्थानानि मिथ्यादृष्टयादिचतुष्के भवंति । तत्र मिथ्यादृष्टौ त्रयोविंशतिकादीनि षट् बध्यंते । सासादनेऽष्टा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विंशतिकादीनि त्रीणि मिश्रादित्रये उवरिमछण्हं च छिदीसासणसम्मे इत्यष्टाविंशतिकमेव। मनुष्यपूर्वभवे योग्यद्रव्यदातृगुणरहिता पात्रदानेन तदनुमोदेन वा तिर्यङ् दानानुमोदेनैव मिथ्यादृष्टित्वेन तिर्यगायुर्बद्ध्वा अशुभलेश्याभिर्भोगभूमितिर्यग्मिथ्यादृष्टिर्भूत्वा अपुण्णेतिरियुगुतीसं तीसं णरउगुतीसं च बंधदि। बद्धतिर्यगायुर्मरणे प्रथमोपशमसम्यक्त्वमनंतानुबंध्युदयेन विराध्य तिर्यग्मनुष्यो वा भोगभूमौ नारकादिकर्मभूमौ च त्र्यशुभलेश्याभिस्तिर्यक्सासादनो भूत्वा तद्द्वयमेव। मिच्छदुगे देव चऊ तित्थं णोति सुराष्टाविंशतिकं पर्याप्तिष्वेत्यर्थः । कर्मभूमेस्तिर्यग्मनुष्यवेदकसम्यग्दृष्टिः मनुष्यक्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा प्राग्बद्धतिर्यगायुस्त्रिधापात्रदानतदनुमोदेन त्रिविधकपल्यप्रमाणां कृत्वा त्रिधाभोगभूमौ कपोतलेश्याजघन्यांशेनोत्पद्य वेदकसम्यग्दृष्टिः कृत्यकृत्यवेदकसम्यग्दृष्टिः क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्वा देवगत्यष्टाविंशतिकमेव। भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो इति नियमात्। पर्याप्तेरुपरि चतुर्गुणस्थानवर्ती शुभत्रिलेश्य एव। तत्र मिथ्यादृष्टिः सासादनश्च सुराष्टाविंशतिकादित्रयं २८ दे २९ ति म ३० ति उ। मिश्रोऽसंयतश्च देवगत्यष्टाविंशतिकमेव तिर्यग्मनुष्यगतियुतस्थानयोस्सासादने एवच्छेदात्।

मनुष्यगतौ लब्ध्यपर्याप्ते त्र्यशुभलेश्ये निर्वृत्त्यपर्याप्ते च षड्लेश्ये मिथ्यादृष्टौ २३, २५, २६, २९, ३०। सासादने २९, ३०। असंयते २८, २९ दे ति। पर्याप्तेरुपरि षड्लेश्ये मिथ्यादृष्टौ त्रयोविंशतिकादीनि षट्, सासादनेऽष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि २८, दे २९ ति म ३० ति उ। मिश्रे देवगत्यष्टाविंशतिकमेव। असंयते शुभलेश्यात्रयं देशसंयतादिद्वये च तदादिद्वयं २८ दे २९ दे ती। अप्रमत्ते ते चेमे च ३० दे आ २ ३१ दे आ २ ती। अपूर्वकरणे शुक्ललेश्ये तानि चेदं च। बादरानिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपराये चैककमेव। नोपशांतादिषु नामबंधः। भोगभूमौ तत्तिर्यग्वक्तव्यं। देवगतौ भवनत्रये अपर्याप्ते त्र्यशुभलेश्याः। पर्याप्ते तेजोजघन्यांशः। पर्याप्तापर्याप्तवैमानिकेषु सौधर्मद्वयस्याद्येंद्रकश्रेणीबद्धप्रकीर्णकेषु तेजोजघन्यांशः। द्वितीयेंद्रकादासनत्कुमारद्वयस्य षष्ठेंद्रकं तेजोमध्यमांशः सप्तमेंद्रकश्रेणीबद्धेषु तदुत्कृष्टपद्मजघन्यांशौ ब्रह्मद्वयस्येंद्रकेषु चतुर्षु लांतवद्वयस्य द्वयोः शुक्रद्वयस्यैकस्मिंश्च पद्ममध्यमांशः शतारद्वयस्यैकस्मिंस्तदुत्कृष्टशुक्लजघन्यांशौ आनतचतुष्कस्य षट्सु नवग्रैवेयकानां नवस्वनुदिशानामेकस्मिन्ननुत्तरश्रेणीबद्धेषु च शुक्लमध्यमांशः सर्वार्थसिद्धावुत्कृष्टांशः। जन्मावासास्तु वैमानिकानां त्रिषष्टिपटलानि। भावनानां रत्नप्रभाखरभागे द्वासप्ततिलक्षाधिकसप्तकोटिभवनानि। व्यंतराणामसंख्यातद्वीपसमुद्राः। ज्योतिष्काणां सुदर्शनमेरुं तिर्यगेकविंशत्येकादशशतयोजनानि मुक्त्वा चित्रात उपरि नवत्यग्रसप्तशतयोजनानि गत्वा दशाग्रशतयोजनबाहुल्येन लोकांतं स्थितानि संख्यातरज्जुगुणितप्रतरांगुलभक्तजगत्प्रतरमात्रविमानानि। मिथ्यादृष्टीनामुत्पत्तिः कर्मभूमिमनुष्यसंज्ञिगर्भजतिरश्चोः कृष्णादिचतुर्लेश्ययोर्भवनत्रये गर्भजासंज्ञिनस्तेजोलेश्यस्य भावनव्यंतरयोरेव तद्देवायुरुत्कृष्टस्थितिबंधस्य पल्यासंख्येयभागमात्रत्वात्। तिर्यग्जघन्यभोगभूमित्रिविधमनुष्यभोगभूमिषण्णवतिकुभोगभूमिजानां तेजोलेश्यानां भवनत्रये, न च सम्यग्दृष्टीनां बद्धदेवायुस्तिर्यग्मनुष्यप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टेरप्यनंतानुबंध्यन्यतमोदयेन तत्सम्यक्त्वं हत्वैव कृष्णादिचतुर्लेश्याभिस्तत्रोत्पत्तेः। तेन निर्वृत्त्यपर्याप्ता मिथ्यादृष्टयोऽष्टाविंशतिकं विना पंचविंशतिकादीनि चत्वारि बध्नंति २५ ए प २६ ए प आ उ २९ ति म ३० ति उ। सासादने द्वे २९ ति म ३० ति उ। सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टिषु नरतिर्यग्लोककर्मभूमितिर्यंचः चरकपरिव्राजादयः द्रव्यजिनलिंग्यादयश्च तेजोलेश्ययोत्पद्यंते। ते निर्वृत्त्यपर्याप्तकपंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि २५ ए प २६ ए प आ उ २९ ति म ३० ति उ। तत्सासादनेषु देशसंयतांततिर्यंचः प्रथमोपशमसम्यक्त्वं प्रमत्तांतमनुष्या उभ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योपशमसम्यक्त्वे च विराध्य बद्धदेवायुषः तेजोलेश्ययोत्पद्यंते ते स्वयोग्यनवविंशतिकादिद्वयं २९ ति म ३० ति उ । तदसंयतेषु सर्वभोगभूमिवेदकक्षायिकसम्यग्दृष्टयः कर्मभूम्यसंयततिर्यंचः सतीर्थातीर्थासंयताद्यप्रमत्तांतमनुष्याश्च बद्धदेवायुष्कास्तेजोलेश्ययोत्पद्यंते ते सतीर्थाः मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कं, अतीर्थाः मनुष्यगतिनवविंशतिकं, भोगभूमिपद्मशुक्ललेश्यासंयता अपि सोहम्मदुजाइणो सम्मेति मरणे तेजोलेश्यां प्राप्य तत्रोत्पद्यंते । असंयतादिपद्मशुक्ललेश्या अपूर्वकरणादिशुक्ललेश्या अपि तामेव प्राप्य तत्रोत्पद्यंते

उत्तरसेढीबद्धा वायव्वीसाणकोणगइपयणा ।
उत्तरइंदणिबद्धा सेसा दक्खिणदिसिंदपडिबद्धा ॥ १ ॥

इति सौधर्मैशानविभागः । सानत्कुमारद्वये चक्रेंद्रकश्रेणीबद्धादिपर्यंतं तेजोलेश्यास्वपि न भोगभूमिजानां तत्रोत्पत्तिः, शेषाणां स्यात् । तन्निर्वृत्त्यपर्याप्ताः मिथ्यादृष्टिसासादनाः तिर्यग्मनुष्यगतियुते द्वे २९ ति म ३० ति उ । असंयताः मनुष्यगतियुतमनुष्यगतितीर्थयुते द्वे २९ म ३० म ति । उपर्यष्टकल्पेषु चरकादिकर्मभूमितिर्यग्मनुष्या बद्धदेवायुषः पद्मलेश्ययोत्पद्यंते । तन्मिथ्यादृष्टिसासादनाः तिर्यग्मनुष्यगतियुते द्वे २९ ति म ३० ति उ । असंयताः स्वयोग्ये द्वे २९ म ३० म ती । आनतादिचतुःकल्पनवग्रैवेयकशुक्ललेश्यामिथ्यादृष्टिसासादनाः मनुष्यगतिनवविंशतिकं । तदसंयताः नवानुदिशपंचानुत्तरशुक्ललेश्यासंयताश्च तच्च तीर्थमनुष्यगतित्रिंशत्कं च । अत्र प्रस्तुतगाथा—

णरतिरिय देसअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्ति णिग्गंथा । णय अयददेसमिच्छा गेवेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥ ५४५ ॥
सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा । सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं ॥
चरया य परिव्वाजा बह्मोत्तरच्चुदपदोत्ति आजीवा । अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जंति ॥
सोहम्मो वरदेवी सलोगवाला य दक्खिणमरिंदा । लोयंतिय सव्वट्ठा तदो चुदा णिव्वुदिं जंति ॥
णरतिरियगदीहिंतो भवणतियादो य णिग्गया जीवा । ण लहंते ते पदविं तेसट्ठिसलागपुरिसाणं ॥
सुहसयणग्गे देवा जायंते दिणयरं व पुव्वणगे । अंतोमुहुत्तपुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा ॥
आणंदतूरजयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ संपत्तं । दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणा णच्चा ॥
धम्मं पसंसिदूणं ण्हादूणं दहेभिसेयलंकारं । लद्धा जिणाभिसेयं पुज्जं कुव्वंति सुद्दिट्ठी ॥ ८ ॥
सुरबोहियावि मिच्छा पच्छा जिणपूजणं पकुव्वंति । सुहसायरमज्झगया देवा ण विदंति गयकालं ॥
महपूजासु जिणाणं कल्लाणेसु य पजांति कप्पसुरा । अहमिंदा तत्थ ठिया णमंति मणिमौलिघडिदकरा ॥
विविहतवरयणभूसा णाणसुचीसीलवत्थसोम्मंगा । जे तेसिमेव वस्सा सुरलच्छी सिद्धिलच्छी य ॥

अत्र—

अयदोत्ति छल्लेस्साओ सुहतियलेस्सा हु देसविरदतिये ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्तो सुक्का लेस्सा अजोगठाणं अलेस्सं तु ॥ १ ॥

इत्यशुभलेश्यात्रये बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट्, तेजोलेश्यायां पंचविंशतिकादीनि षट्, पद्मलेश्यायामष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि, शुक्ललेश्यायां तदादीनि पंच, सूक्ष्मसांपरायांतं यथासंभवं ॥ ५४९ ॥

स० चं०—कृष्णादिक अशुभ तीन लेश्याविषैं कार्माणयोगवत् आदिके छह बंध स्थान हैं। बहुरि तेजो लेश्याविषैं पचीसकानै आदि देकरि छह हैं बहुरि पद्मलेश्याविषैं अठाईसकानै आदि देकरि च्यारि हैं। बहुरि शुक्ललेश्याविषैं अवधिज्ञानवत् अंतके पंच स्थान हैं। तहां वर्णनामा नामकर्मके उदयतैं भया शरीरका वर्ण द्रव्यलेश्या सा इहां ग्रहण न करी। मोहका उदय वा उपशम वा क्षय वा क्षयोपशमतैं भई जीवकी चंचलता रूप भाव लेश्या सो इहां ग्रहण करी है सो लेश्या कृष्णादिक भेदतैं छहप्रकार है। तहां प्रथम नरकका प्रथम इंद्रकविषैं कपोतका जघन्य अंश है। तीसरा नरकका द्विचरम इंद्रकविषैं कपोतका उत्कृष्ट अंश है। बहुरि तीसरा नरकका अंत इंद्रकविषैं नीलका जघन्य अंश है। पंचम नरकका द्विचरम इंद्रकविषैं नीलका उत्कृष्ट अंश है। बहुरि पंचम नरकका अंत इंद्रकविषैं कृष्णका जघन्य अंश है। बहुरि सप्तम नरकका अवधिस्थान इंद्रकविषैं कृष्णका उत्कृष्ट अंश है। तिन जघन्य उत्कृष्ट स्थानकनिका मध्यविषैं तिन तिन लेश्यानिका मध्यम अंश जानने। तिन नरकनिविषैं उपजनेकौं योग्य कौन जीव हैं? सो कहिए है—

मिथ्यादृष्टी जीव घर्मा पृथ्वीविषैं कर्मभूमिया छहौ संहननके धारी असंज्ञी सरीसृप पंखी सर्प सिंह स्त्री मछला मनुष्य उपजै हैं। तहां वंशाविषैं सरीसृपादिक ही उपजैं हैं असंज्ञी नाहीं उपजैं हैं। मेघाविषैं पंखी आदिक ही उपजैं हैं। अंजनाविषैं आदिके पंच संहननके धारक सर्पादिक ही उपजैं हैं। अरिष्टाविषैं सिंघादिक ही उपजैं हैं। मघवीविषैं आदिके च्यारि संहननके धारक स्त्री मछले मनुष्य ही उपजैं हैं। माघवीविषैं आदि संहननके धारक मछले वा मनुष्य ही उपजै हैं ते तिन नरकनिविषैं उपजे शरीर पर्याप्ति पूर्ण भएं वा न पूर्ण भएं तिर्यंचका मनुष्यगति युत गुणतीस वा तीसके स्थाननिकौं बांधै हैं। सातवी पृथ्वीविषैं तिर्यंचगतियुक्त ही गुणतीस तीसके स्थानानिकौं बाधै हैं। बहुरि सासादनवाले भी तैसैं ही तिर्यंच मनुष्यगतियुत दोऊ स्थानानिकौं बाधै हैं। बहुरि मिश्र अर असंयतवाले

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनुष्यगतियुत गुणतीसहीकौं बांधै हैं। बहुरि घर्माविषैं निर्वृत्त्यपर्याप्त वा पर्याप्त क्षायिक वा वेदक सम्यग्दृष्टी वा कृतकृत्य वेदक तीर्थसत्त्व रहित सो तौ मनुष्यगति गुणतीसकेकौं अर तीर्थसत्त्व सहित सो मनुष्यगति तीर्थसहित तीसकेकौं बांधै हैं। बहुरि वंशा मेघाविषैं तीर्थंकरसत्त्व सहित जीव सो पर्याप्ति पूर्ण भएं नियमकरि मिथ्यात्वकौं छोडि सम्यग्दृष्टी होइ तीसकेकौं ही बांधै हैं। बहुरि तिर्यंचगतिविषैं पर्याप्तादिक तीनप्रकार सर्व एकेंद्री वेंद्री तेंद्री चौंद्रीनिविषैं वा लब्धि अपर्याप्त निर्वृत्त्यपर्याप्त असंज्ञीविषैं वा मिथ्यादृष्टी नरकादिकस्यों आया तीहिंविषैं वा सासादन अपर्याप्त संज्ञीविषैं तीन अशुभलेश्या ही हैं। बहुरि पर्याप्त मिथ्यादृष्टी असंज्ञीविषैं कृष्णादिक च्यारि लेश्या हैं। बहुरि पर्याप्त सासादन अर मिश्र अपर्याप्त असंयत संज्ञी तिर्यंच तिसविषैं छह लेश्या हैं। बहुरि भोगभूमिविषैं निर्वृत्त्यपर्याप्तक असंयतविषैं जघन्य कपोत ही है। अर पर्याप्त अवस्थाविषैं मिथ्यादृष्टी वा सम्यग्दृष्टीकैं तीन शुभ लेश्या ही हैं जातैं तहांके उपजे जीवनिकैं शरीर पर्याप्ति पूर्ण होतैं तीन शुभ लेश्या ही आगमविषैं कहीं हैं। बहुरि ए कहे तिर्यंच जीव तिनविषैं वादर सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु नित्यनिगोद चतुर्गति निगोद अर प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित प्रत्येक अर वेंद्री तेंद्री चौंद्री अर संज्ञी असंज्ञी पंचेंद्री ए उगणीस प्रकार तिर्यंच लब्धि अपर्याप्तक अर इन उगणीस प्रकार लब्धि अपर्याप्तकनितैं वा तिर्यंच पर्याप्तकनितैं अर पर्याप्त वा अपर्याप्त कर्मभूमिया मनुष्यनितैं इन सर्व मिथ्यादृष्टीनितैं आयकरि जे केई तीन अशुभलेश्या सहित तिर्यंच जीव उपजैं ते अठाईसका विना तेईसकानैं आदिदेकरि पांचस्थाननिकौं बांधै हैं। बहुरि तेजकाय वातकायके जीव तिर्यंचगतियुत ही तिन पंचस्थाननिकौं बांधै हैं। बहुरि ते उगणीस प्रकार लब्धि अपर्याप्त तिर्यंच उगणीस प्रकार पर्याप्त तिर्यंच दोय प्रकार मनुष्य मिलि भए चालीस प्रकार मिथ्यादृष्टि ते अशुभ तीन लेश्याकरि मरे हुए पूर्वोक्त उगणीस प्रकार पर्याप्त तिर्यंच मिथ्यादृष्टीनिविषैं उपजैं हैं। तहां विशेष—

जो तेजःकाय वातकायविषैं तौ अशुभलेश्यानिका मध्यम अंश तिनहीकरि उपजै हैं अर भवनत्रिक सौधर्मद्विकके देव मिथ्यादृष्टी तेजोलेश्याका मध्यम अंशकरि अर तिर्यंच मनुष्य अशुभ तीन लेश्याका मध्यम अंशकरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मरे हुए केई बादरपृथ्वी अप्रतितिष्ठत प्रत्येकनिविषैं उपजै हैं । बहुरि भवनत्रिकादिक सहस्रारपर्यंत देव सर्वं नारकी मिथ्यादृष्टी तिर्यंचायुका जिनकैं बंध भया ते अपनी अपनी लेश्यानिकरि मर हूए कर्मभूमिया गर्भज संज्ञी तिर्यंचनिविषैं उपजै हैं । तहां ते पूर्वोक्त उगणीस प्रकारके तिर्यंच चतुर्गतितैं आयकरि उपजे निर्वृत्यपर्याप्त मिथ्यादृष्टी सर्व ही अठाईसका विना तेवीसकानैं आदि देकरि पांच स्थाननिकौं बाधे हैं । बहुरि अनंतानुबंधीविषैं किसी एक प्रकृतिका उदयतैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं विराधिकरि सासादन होइ पूर्वैं बाधी है तिर्यंचायु जिनि ऐसैं जीव मरिकै वा जिनकैं आयुबंध न भया ते केई तिसही अंतकालविषैं तिर्यंचायुकौं बाधि मरिकैं तिर्यंचविषैं उपजैं जहां कर्मभूमियां तिर्यंच मनुष्य तो बादर पृथ्वी अप् प्रत्येक वनस्पती विकलत्रय संज्ञी असंज्ञीविषैं उपजैं। ईशानपर्यंत देव अपनी अपनी लेश्या सहित मरि बादर पृथ्वी अप प्रत्येक वनस्पतीविषैं उपजै । भवनत्रिकादि सहस्रार पर्यंत अर छठा नरकपर्यंत नारकी कर्मभूमिया गर्भज संज्ञी तिर्यंचनिविषैं उपजै। ते ए सासादन तिर्यंच होंइ तिर्यंच मनुष्यगति पर्याप्तयुत गुणतीस वा तीसकाकौं बाधे हैं। बहुरि अपना अपना सासादनका काल भएं पीछैं नियमकरि मिथ्यादृष्टि होइ यावत् शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् निर्वृत्ति अपर्याप्तक तिर्यंच मिथ्यादृष्टिविषैं कहे तेईसकानैं आदि देकरि पांच स्थान तिनकौं बाधैं हैं इहां प्रश्न--

जो सासादनका तौ उत्कृष्टकाल भी छह आवली प्रमाण अर आयुका जघन्यकाल भी अंतर्मुहूर्तप्रमाण सो पूर्व उत्तर दोऊ पर्यायनिविषैं सासादन कैसैं संभवै ? ताका समाधान--

जो अंतर्मुहूर्तके भेद बहुत हैं एक आवलीतैं लगाय समय समय बंधता समय समय घाटि मूहूर्त पर्यंत अंतर्मुहूर्तके भेद हैं तातैं आयुबंधका काल इहां कोई आवली प्रमाण ही जानना । बहुरि तिर्यंच असंयतविषैं पूर्वैं जिनकैं तिर्यंचायुका बंध भया ऐसे देवनारकी वेदक सम्यग्दृष्टी अपनी अपनी लेश्या सहित मरि उपजैं हैं तहां सातवां नरकवाले नाहीं जातैं इनका मरण मिथ्यादृष्टिविषैं ही है। तहां उपजे तिर्यंच असंयत गुणस्थानवर्ती निर्वृत्यपर्याप्तक ते देवगतियुत अठाईसका स्थानकौं बाधैं हैं। पर्याप्त पूर्णभएं देशसंयत गुणस्थान पर्यंत प्राप्त हो हैं। तहां असंयतपर्यंत छहों लेश्या हैं। देशसंयतविषैं तीन शुभलेश्या ही हैं। इहां प्रश्न--

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो शुभाशुभलेश्यानिविषैं एक जीव अनुक्रमतैं परिनमै है कि युगपत् परिनमै है ? तहां समाधान—जो आत्मा संक्लेश ताकी हानिकरि तौ उत्कृष्ट कृष्णलेश्यातैं जघन्य कपोतपर्यंत, अर संक्लेशकी वृद्धितैं जघन्य कपोततैं उत्कृष्ट कृष्ण पर्यंत असंख्यात लोकप्रमाण षट् स्थानपतित वृद्धिहानिकौं लीएं लेश्याका स्थानानिविषैं अनुक्रमतैं परिनमै है। बहुरि विशुद्धताकी वृद्धिकरि तेज पद्म शुक्ल लेश्याका जघन्यादिक अंशनिविषैं अर विशुद्धताकी हानिकरि शुक्ल पद्म तेजोलेश्यानिका उत्कृष्टादि अंशनिविषैं अनुक्रमतैं परिनमै है। तिन लेश्यानिका मूल कारण कषायनिका उदयरूप अनुभाग स्थाननिकरि अनुरंजित योगनिकी प्रवृत्ति है। ते कषाय च्यारि हैं—तिनविषैं विवक्षित क्रोध कषायका अनुभाग स्थानका उदय है सो जीवकौं नरक तिर्यंच मनुष्य देवगतिनिविषैं उपजावै है। तिस क्रोधकी शक्ति शिलाभेद पृथ्वीभेद धूलिरेखा जलरेखा समान च्यारि है। तहां सर्वघातिया शक्ति सहित जे उदय स्थान तिनके नीचैं प्रमत्तादिक संयमी जीवनिविषैं ही संभवैं ऐसी देशघातियारूप पूर्वस्पर्धक है नाम जाका ऐसी शक्ति है। ताके नीचैं नीचैं अपूर्व स्पर्धक है नाम जाका वा बादरकृष्टि है नाम जाका वा लोभ कषायविषैं सूक्ष्मसांपराय गुणस्थाननिविषैं सूक्ष्मकृष्टि है नाम जाका ऐसी शक्ति है ऐसैं समस्त क्रोध कषायके अनुभागरूप उदयस्थान असंख्यात लोक मात्र षट्स्थानपतित हानिकौं लीएं असंख्यात लोकप्रमाण है। तिनकौं यथायोग्य असंख्यात लोकका भाग दीजिए तहां एक भागविना बहुभाग प्रमाण तौ संक्लेश स्थान हैं। एक भागप्रमाण विशुद्धिस्थान हैं। तिनविषैं लेश्यापद चौदह हैं। लेश्यानिके अंश छवीस हैं तिनविषैं मध्यके आठ अंश आयुके बंधकौं कारण हैं। इहां संदृष्टि यंत्र आदि विशेष पूर्वैं जीवकांडविषैं कषायमार्गणा अधिकारविषैं कह्या है सो जानना।

ते मध्यम अंश तेजोलेश्याका जघन्यस्थानके अनंतरि अपना अनंतगुणवृद्धिरूप मध्यम स्थानसौं लगाय कपोत लेश्याका जघन्य स्थानके अनंतरि अनंतगुणवृद्धिकौं लीएं उसहीका मध्यम स्थान पर्यंत अथवा कपोत लेश्याका जघन्यस्थानके अनंतर अनंतगुणवृद्धिरूप तिस ही कपोतका मध्यम स्थानतैं लगाय तेजोलेश्याका जघन्य स्थानके अनंतर अनंतगुणवृद्धिरूप जो तेजोलेश्याका मध्यम स्थान तहां पर्यंत पद्म शुक्ल कृष्ण नील इनका ज-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

घन्य अंश अर च्यारिगति संबंधी आयुके कारण वा नरक विना तीन आयुके वा नरक तिर्यंच विना दोय आयुके वा केवल देव आयुके बंधकै कारण च्यारि अंश ऐसैं आठ मध्यम अंश आयुके बंधकौं कारण हैं। इहां प्रश्न—जो पद्म शुक्ल कृष्ण नील लेश्याका जघन्य अंशनिकौं मध्यम अंश कैसैं कहिए ? ताका समाधान—जो शुभ अशुभ लेश्याका भेदकी अपेक्षा ए वीचिके अंश हैं तातैं इनिकौं मध्यम अंश कहिए बहुरि अवशेष कृष्णादिकके जघन्य मध्यम उत्कृष्ट भेदतैं अठारह अंश ते च्यारि गातिके गमनकौं कारण हैं। मरण इन अठारहौ अंशनिविषैं हो है। तिनविषैं तीन अशुभ लेश्यानिके नव अंश तौ नरकगति तिर्यंचगतिविषैं उपजावनहारे हैं। अर आगिले शुभ अशुभ लेश्यानिके अंश तिर्यंच मनुष्य देव गतिविषैं गमनकौं कारण है। बहुरि लेश्यानिका संक्रमण कहिए है—

संक्रमण नाम स्थानतैं अन्य स्थान प्राप्त होनेका है सो वृद्धिकरि कृष्ण अर शुक्ललेश्याका अपने स्थानकविषैं ही है जातैं संक्लेश वा विशुद्धताकी वृद्धि होतैं कृष्ण वा शुक्ललेश्याकौं छोडि कोई अन्य लेश्याकौं प्राप्त न होइ। बहुरि हानिविषैं अपने उत्कृष्ट अंशतैं जघन्य अंशपर्यंत स्वस्थानविषैं अर कृष्णके नील कपोत तेज पद्म शुक्लका उत्कृष्ट पर्यंत अर शुक्लके पद्म तेज कपोत नील कृष्णका उत्कृष्ट पर्यंत परस्थानविषैं संक्रमण हो है। बहुरि अवशेष लेश्यानिकैं संक्लेश वा विशुद्धताकी हानिविषैं अपने अपने उत्कृष्टतैं अपने अपने जघन्य पर्यंत तौ स्वस्थान संक्रमण है अर नील कपोतकैं अपने अपने जघन्यतैं शुक्लके उत्कृष्ट पर्यंत अर पद्म तेजकैं अपने अपने जघन्यतैं कृष्णका उत्कृष्ट पर्यंत परस्थान संक्रमण है। बहुरि वृद्धिविषैं अपने अपने जघन्यतैं अपने अपने उत्कृष्ट पर्यंत तौ स्वस्थान संक्रमण है अर नील कपोतकैं अपने अपने उत्कृष्टतैं कृष्णके उत्कृष्ट पर्यंत अर पद्म तेजकैं अपने अपने उत्कृष्टतैं शुक्लका उत्कृष्ट पर्यंत परस्थान संक्रमण है। बहुरि स्वस्थानविषैं परस्थानवत् अन्य लेश्याकैं समान शक्तिरूप स्थानकौं न प्राप्त हो है जातैं अपना अपना लक्षणकौं छोडै नाही। बहुरि स्वस्थान संक्रमणविषैं सर्व लेश्यानिके उत्कृष्टतैं अनंतर अपना अपना मध्यम स्थानविषैं कृष्णादिक तीनविषैं संक्लेशकी अर पीतादिक तीनविषैं विशुद्धताकी हानि अनंत भाग पाइए है जातैं लेश्यानिका उत्कृष्ट स्थान है सो अपने अनंतरवर्ती मध्यम स्थानतैं उर्वंक कहिए अनंत भागरूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कह्या है। बहुरि तिन लेश्यानिके जघन्यके अनंतर अपना मध्यम स्थानविषैं वृद्धि भी अनंतभागरूप ही है जातैं तिन लेश्यानिका जघन्य स्थान है सो अष्टांक कहिए अपना अनंतर वर्ती स्थानतैं अनंत गुणरूप है। बहुरि पर स्थान संक्रमणविषैं तिन लेश्यानिकैं जघन्यतैं अनंत गुणहानि पाइए है जातैं अन्य लेश्याकी अपेक्षा जघन्यतैं अष्टांक कहिए अनंत गुणपणा पाइए है। ऐसैं ए लेश्या पाइए हैं सो कथन जीवकांडविषैं लेश्या अधिकारविषैं विशेष कह्या है सो जानना। सो तिर्यंच मिथ्यादृष्टिविषैं तौ मिथ्यात्व सहित अनंतानुबंधी आदि सर्वघातिया क्रोधका चतुष्क व मानका चतुष्क व मायाका चतुष्क व लोभका चतुष्क उदयरूप हो है। बहुरि सासादनविषैं मिथ्यात्व विना उदय हो है। बहुरि मिश्रविषैं अनंतानुबंधी विना जुदीही जातिका सर्वघातिया सम्यग्मिथ्यात्व सहित उदय हो है। बहुरि असंयतविषैं सम्यग्मिथ्यात्व विना दर्शन मोहका क्षयोपशमविषैं देशघातिया सम्यक्त्व मोहनी सहित अर उपशम क्षयविषैं सम्यक्त्व मोहनी रहित उदय हो है। बहुरि देश संयतविषैं अप्रत्याख्यान रहित दर्शनमोहका क्षयोपशमविषैं सम्यक्त्वमोहनी सहित अर उपशमविषैं सम्यक्त्व मोहनी रहित उदय हो है। तिर्यंच देशसंयतविषैं संक्लेशकी हानितैं भए तीन शुभलेश्याकौं कारण कषायनिके उदयस्थान ते सर्व कषायनिके उदयस्थानके असंख्यातवे भागप्रमाण हैं तौ भी असंख्यात लोकप्रमाण हैं। बहुरि अवशेष बहुभाग प्रमाण छह लेश्याकौं कारण उदयस्थान हैं ते मिथ्यादृष्ट्यादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं हो हैं। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं तेईसकानैं आदि देकरि छह स्थान बंधे हैं। सासादनविषैं अठाईसकानैं आदि देकरि तीन स्थान बंधे हैं। मिश्रादिक तीन गुणस्थाननिविषैं अठाईसकाकौं ही बांधे हैं। बहुरि मनुष्य पूर्वभवविषैं दान योग्य द्रव्यकौं दाताका गुणसहित होइ तीनप्रकार पात्रकौं दान दीया वा अनुमोदना करी अर तिर्यंच अनुमोदना ही करी तिसकरि मिथ्यादृष्टिपणातैं तिर्यंचायुकौं बांधि तीन अशुभलेश्या सहित मरणकरि भोगभूमिविषैं तिर्यंच मिथ्यादृष्टी होइ सो अपर्याप्त दशाविषैं तिर्यंचगतियुक्त गुणतीस वा तीसका अर मनुष्यगतियुत गुणतीसका स्थानकौं बांधे है। बहुरि जाकैं तिर्यंचायुका बंध भया अर मरणदशाविषैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं पाय अनंतानुबंधीके उदयतैं विराधनाकरि तिर्यंच वा मनुष्य तौ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोगभूमिविषैं अर नारकादिक कर्मभूमिविषैं तीन अशुभ लेश्यासहित सासादन होइ करि तिर्यंच उपज्या तहां तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीस अर तीसकौं ही बांधै है जातैं 'मिच्छदुगे देवचऊ तित्थं णहि' इस बचनतैं देवगतियुत अठाईसकेका बंध पर्याप्तविषैं ही है। बहुरि कर्मभूमिका तिर्यंच मनुष्य वेदक सम्यग्दृष्टी वा मनुष्य क्षायिक सम्यग्दृष्टी पूर्वै जाकै तिर्यंचायुका बंध भया सो तीनप्रकार पात्र दानकरि वा दानकी अनुमोदन करि तीन दोय एक पल्य प्रमाण आयु धारैं तीन भोगभूमिविषैं कपोतलेश्याका जघन्य अंश सहित उपजिकरि वेदक सम्यग्दृष्टी वा कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी वा क्षायिक सम्यग्दृष्टी तिस अपर्याप्त दशाविषैं देवगतियुत अठाईसका स्थानकौं ही बाधै है 'भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो' इति वचनतैं जानाना। बहुरि पर्याप्त दशाके ऊपरि च्यारयो गुणस्थान वर्ती भोगभूमिया तीन शुभलेश्या संयुक्त ही हैं। तहां मिथ्यादृष्टि अर सासादन तौ देवगतियुत अठाईसका वा तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीसका वा उद्योतयुत तीसका इन तीन स्थाननिकौं बाधै हैं। बहुरि मिश्र असंयत है सो देवगतियुत अठाईसका स्थानकौं ही बाधै है जातैं तिर्यंच मनुष्यगतियुत स्थाननिका सासादनहीविषैं व्युच्छेद भया अैसें लेश्यासहित तिर्यंचनिविषैं बंधस्थान कहे अब मनुष्यगतिविषैं कहिए है—

लब्धि अपर्याप्तक मनुष्यविषैं तौ तीन अशुभ लेश्या ही हैं निर्वृत्ति अपर्याप्तककैं छहौ लेश्या है सो मिथ्यादृष्टिविषैं तो तेवीस पचीस छव्वीस गुणतीस तीसके छह स्थान बंधैं हैं। सासादनविषैं गुणतीस तीसके दोय स्थान बंधैं हैं। असंयतविषैं देवगति युत अठाईका वा देव तीर्थयुत गुणतीसका बंधै हैं। बहुरि पर्याप्त दशाविषैं छहौ लेश्या पाइए तहां मिथ्यादृष्टिविषैं तेईसकानै आदि देकरि छह स्थान बंधै है। सासादनविषैं अठाईसकानै आदि देकरि तीन दे २८ तिर्यंच मनुष्य २९ तिर्यंच उद्योत ३० बंधै हैं। बहुरि मिश्रविषैं देवयुत अठाईसका ही बंध है। असंयतविषैं वा तीन शुभलेश्या सहित देश संयत वा प्रमत्तविषैं देवयुत अठाईस देव तीर्थयुत गुणतीसका बंधै है। अप्रमत्तविषैं ते दोन्यूं अर आहारक सहित तीस इकतीसके अैसें च्यारि बंधै है। अपूर्वकरणविषैं शुक्ल लेश्या ही है तहां ते च्यारयो अर अंत भागविषैं एकका अैसें पांच बंधै है। बादर अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपरायविषैं एकका ही ७३६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधे हैं। उपशांतादिकविषैं बंधका अभाव है। बहुरि भोगभूमिविषैं भोगभूमियां तिर्यचवत् बंध जानना। अर देवगतिविषैं कहिए है—

भवनत्रिक अपर्याप्तविषैं तीन अशुभलेश्याही हैं। पर्याप्तविषैं तेजका जघन्य अंश है। पर्याप्त अपर्याप्त वैमानिक देवनिविषैं सौधर्म युगलका प्रथम इंद्रक श्रेणी बद्ध प्रकीर्णकनिविषैं तौ तेजका जघन्य अंश है। द्वितीय इंद्रकतैं सनत्कुमारद्विकका षष्ठम इंद्रक पर्यंत मध्यम अंश है। सातवां इंद्रक श्रेणी बद्धनिविषैं तेजका उत्कृष्ट पद्मका जघन्य अंश है। ब्रह्मद्विकका च्यारि इंद्रक लांतवद्विकका दोय इंद्रक शुक्रद्विकका एक इंद्रक इनविषैं पद्मका मध्यम अंश है। शतार युगलका एक इंद्रकविषैं पद्मका उत्कृष्ट शुक्लका जघन्य अंश है।' आनत चतुष्कका छह इंद्रक नवग्रैवेयकनिका अनुदिशानिका एक इंद्रक वा अनुत्तरनिका श्रेणी बद्धनिविषैं शुक्लका मध्यम अंश है। सर्वार्थसिद्धिविषैं उत्कृष्ट अंश है। जहां देवनिका जन्म होइ ऐसे आवास ते वैमानिक देवनिके तौ तरेसठि पटल हैं। भवनवासीनिके रत्नप्रभा पृथ्वीका खर भाग पंक भागविषैं सात कोडि बहत्तरि लाख भवन हैं। व्यंतरनिके असंख्यात द्वीप समुद्र हैं। ज्योतिषीनिकैं सुदर्शन मेरुतैं ग्यारहसै इकईस योजन उरै पृथ्वीतैं सातसै निवै योजन ऊपरि नवसै पर्यंत एकसै दश योजनकी मोटाईमैं लोक पर्यंत पण्णट्ठी प्रमाण प्रतरांगुलकरि भाजित जगत्प्रतर प्रमाण विमान हैं। तहां मिथ्यादृष्टी कर्म भूमियां मनुष्य संज्ञी गर्भज तिर्यंच तौ कृष्णादिक च्यारि लेश्यावाले भवनत्रिक उपजै हैं। गर्भज असंज्ञी तेजो लेश्यावाले भवनवासी व्यंतरहीविषैं उपजै हैं जातैं असंज्ञीकैं उत्कृष्ट देवायुका स्थितिबंध पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण ही है। बहुरि तिर्यंच संबंधी मानुषोत्तर स्वयं प्रभाचलके वीचि जघन्य भोगभूमि तीन प्रकार मनुष्य भोगभूमि छिनवै कुभोग भूमिके उपजै तेजो लेश्यावाले जीव भवनत्रिकविषैं उपजैं हैं, सम्यग्दृष्टि भवनत्रिकविषैं नाहीं उपजै है। बहुरि जिनकैं देवायु बंध भया ऐसैं तिर्यंच मनुष्य सो प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं अनंतानुबंधी एक प्रकृतिका उदयतैं घातकरि च्यारूं लेश्यानिकरि तहां सासादन उपजै हैं ते भवनित्रिक निर्वृत्त्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टी तौ अठाईसका विना पचीसकानैं आदि देकरि च्यारि स्थान बांधै हैं। ए प २५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प २६ ति म २९ ति उ ३० बहुरि सासादन गुणतीस तीसके दोय बाधै है ति म २९ ति उ ३० । बहुरि मनुष्य वा तिर्यग लोक संबंधी कर्म भूमियां तिर्यंच वा नागा सन्यासी इत्यादिक वा जिनद्रव्यलिंगी आदि तेजो लेश्याकरि सौधर्मद्विकविषैं मिथ्यादृष्टी उपजै हैं ते निर्वृत्यपर्याप्तक देव पचीस छवीस गुणतीस तीसके स्थाननिकौं बाधै हैं। एप २५ एप २६ आउ तिम २९ तिउ ३० । बहुरि देश संयतपर्यंत तो तिर्यंच प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं अर प्रमत्तपर्यंत मनुष्य प्रथम द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकौं विराधि देवायुका जिनकैं बंध भया ते तेजोलेश्याकरि सौधर्मद्विकविषैं सासादनविषैं उपजैं है। तहां निर्वृत्ति अपर्याप्तकविषैं गुणतीस तीसके दोय स्थाननिकौं बाधैं है तिम २९ ति उ ३० । बहुरि सर्व भोग भूमिया वेदक क्षायिक सम्यग्दृष्टी अर (कर्मभूमिया वेदकसम्यग्दृष्टी अर) कर्म भूमिया देशसंयत पर्यंत तिर्यंच अर तीर्थंकर सत्त्व सहित वा रहित अप्रमत्त पर्यंत मनुष्य देवायु बंध संयुक्त ते तेजो लेश्याकरि सौधर्मद्विकविषैं उपजैं तहां असंयत गुणस्थानवर्ती निर्वृत्ति अपर्याप्तविषैं तीर्थंकर सत्त्व सहित तौ तीर्थयुत तीसकेकौं अर तीर्थंकर सत्व रहित मनुष्यगति युत गुणतीसकेकौं बाधैं है। पद्म शुक्ल संयुक्त भोगभूमिया असंयत वा पद्म शुक्लवाले और असंयतादिक वा शुक्ल लेश्यावाले अपूर्वकरणादिक भी मरण समय नीचेके गुणस्थाननिविषैं तेजो लेश्याकौं पाइकरि ही सौधर्मद्विकविषैं उपजै हैं। तहां उत्तरदिशाके श्रेणी बद्ध अर वायु ईशान कौणके प्रकीर्णक विमान तौ उत्तरदिशानिविषैं ईशान इंद्र संबंधी हैं, अवशेष दक्षिण दिशाका सौधर्म इंद्र संबंधी हैं,इतना ही सौधर्म ईशानविषैं भेद है । बहुरि सनत्कुमार युगलविषैं चक्र इंद्रक श्रेणीबद्ध पर्यंत तेजो लेश्या है तथापि तहां भोगभूमिया उपजै नाहीं, अवशेष उपजै हैं ते निर्वृत्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टी सासादन तो तिर्यंच मनुष्य गतियुत गुणतीसके स्थाननिको बाधै हैं । तिम २९ तिउ ३० । बहुरि असंयत मनुष्य गतियुत गुणतीस अर मनुष्य तीर्थयुत तीसका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बाधै हैं। बहुरि ऊपरि अष्ट स्वर्गनिविषैं नागा इत्यादिक कर्मभूमियां तिर्यंच मनुष्य देवायु बंध सहित ते पद्मलेश्याकरि उपजैं हैं ते भी तैसैं ही मिथ्यादृष्टि सासादन तिर्यंच मनुष्य युत दोय अर असंयत मनुष्य तीर्थयुत दोय स्थाननिकौं बाधै हैं। बहुरि आनतादिक च्यारि स्वर्ग नव ग्रैवेयकविषैं शुक्ल लेश्या है तहां मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं मनुष्यगतियुत गुणतीस अर तहांके असंयत अर अनुदिश अनुत्तरके वासी असंयत ते मनुष्ययुत गुणतीसका वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका स्थानकौं बाधै हैं। इहां प्रासंगिक गाथा कहिए हैं—

णरतिरियदेशअयदा उक्कस्सेणच्चुदोत्तिणिग्गंथा।
णरअयददेसमिच्छा गेवेज्जंतोत्ति गच्छंति ॥ १ ॥

मनुष्य तिर्यंच देशव्रती वा असंयत उत्कृष्ट अच्युत स्वर्गपर्यंत उपजैं हैं। द्रव्य निर्ग्रंथ भाव असंयत देश;संयत मिथ्यादृष्टी ऊपरि ग्रैवेयक पर्यंत उपजै हैं।

सव्वट्ठोत्ति सुदिट्ठी महव्वई भोगभूमिजा सम्मा।
सोहम्मदुगं मिच्छा भवणतियं तावसा य वरं ॥ २ ॥

सर्वार्थ सिद्धिपर्यंत सम्यग्दृष्टी महाव्रती उपजैं हैं। भोग भूमियां सम्यग्दृष्टी तौ सौधर्म युगलविषैं मिथ्यादृष्टी भवनत्रिकविषैं उपजैं है। तापसी उत्कृष्टपनैं भवनत्रिकविषैं उपजैं है।

चरियाय परिव्वाजा बम्होत्तरचुदपदोत्ति आजीवा।
अणुदिसअणुत्तरादो चुदा ण केसवपदं जंति ॥ ३ ॥

नागा सन्यासी ब्रह्मोत्तर पर्यंत उपजैं है। कांजीभिक्षु अच्युतपर्यंत उपजैं है। अनुत्तर विमानतैं चए जीव नारायण प्रति नारायण न हो हैं।

सोहम्मोवरदेवी सलोगपालाय दक्खिणमरिंदा।
लोयंतिय सव्वट्ठा चुदा तदो णिव्वुदिं जंति ॥ ४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सौधर्म देवकी शची नामा पट्टदेवी अर लोक पालनिकरि सहित सौधर्मादिक दक्षिण दिशाके इंद्र अर लौकांतिक देव सर्वार्थ सिद्धिवासी देव ए चयकरि मनुष्य होंइ निर्वाणहीकौं पावैं हैं।

णरतिरियगदीहिंतो भवणतियादो य णिग्गया जीवा।
ण लहंते ते पदवीं तेसट्ठिसलागपुरिसाणं ॥ ५ ॥

मनुष्य तिर्यंच गतितैं वा भवनत्रिकतैं च्युत भए जीव ते तरेसठि शलाका पुरुषनिकी पदवीको न प्राप्त हो है।

सुहसयणंगो देवा जायंते दिणयरोव्व पुव्वणगे।
अंते मुहुत्तपुण्णा सुगंधिसुहफाससुचिदेहा ॥ ६ ॥

शुभ शय्या स्थानविषैं प्राप्त भए देव उदयाचलविषैं सूर्यवत् जन्मकौं धारे हैं ते अंतर्मुहूर्तविषैं संपूर्ण सुगंध शुभ स्पर्श पवित्र देहयुक्त हो हैं।

आणंदतूरजयथुदिरवेण जम्मं विबुज्झ संपत्तं।
दट्ठूण सपरिवारं गयजम्मं ओहिणाणं च ॥ ७ ॥

आनंदके वाजित्र जयकार स्तुति शब्दकरि अपने पाए जन्मकौं जानि परिवार सहित सबैकौं देखि अवधिज्ञानकौं प्राप्त होइ।

धम्मं पसंसिदूणं ण्हादूण दहेभिसेयलंकारं।
लद्धा जिणाभिसेयं पूजं कुव्वंति सद्दिट्ठी ॥ ८ ॥

धर्मकी प्रशंसाकरि द्रहविषैं स्नानकरि अति उज्वल शरीर अलंकार सहित होइ जिन प्रतिमाका अभिषेक वा पूजनकौं सम्यग्दृष्टी करै हैं।

सुरबोहियावि मिच्छा पच्छा जिणपूजणं पकुव्वंति।
सुहसायरमज्झगया देवा ण विदंति गयकालं ॥ ९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यादृष्टी हैं ते और देवनिकरि संबोधे हुए पीछैं जिन पूजन करैं है ते देव सुख सागरमैं मग्न भए गये कालकौं न जानै हैं।

महपूजासु जिणाणं कल्लाणेसु य पजांति कप्पसुरा ।
अहमिंदा तत्थविया णमंति मणिमौलिघडिदकरा ॥ १० ॥

महा पूजा इंद्रध्वज अष्टाह्निकादिविषैं वा तीर्थंकरके कल्याणनिविषैं कल्पवासी देव जावैं हैं। अहमिंद्र अपने स्थान तिष्ठते ही मणि मुकटनितैं हस्त लगाय नमस्कार करैं हैं।

विविहतवयरणभूसा णाणसुचीसीलवत्थसोम्मंगा ।
जो तेसिमेव वस्सा सुरलच्छी सिद्धिलच्छी य ॥ ११ ॥

जे विविधतपश्चरणकरि आभूषित हैं। ज्ञानकरि पवित्र हैं। शीलरूपी वस्त्र धरे हैं। सौम्य अंग लीए हैं तिन हीकैं देव लक्ष्मी वा मुक्तिलक्ष्मी वश्य हो है। ऐसैं देव कहे, तहां लेश्याका वर्णनकरि बंध स्थान कहे। या प्रकार कही थीं असंयतविषैं छह लेश्या देश विरतादि तीनविषैं तीन शुभ लेश्या ऊपरि शुक्ल लेश्या अयोगी लेश्या रहित है तहां तीन अशुभ लेश्यानिविषैं तेईसकानै आदि देकरि छह बंध स्थान हैं। तेजो लेश्याविषैं पचीसकानैं आदि देकरि छह स्थान है। पद्मलेश्याविषैं अठाईसकानै आदि देकरि च्यारि स्थान हैं। शुक्लेश्याविषैं अठाईसकानैं आदि देकरि पंच स्थान हैं ते सूक्ष्म सांपराय पर्यंत यथा संभव जानने ॥ ५४९ ॥

भव्वे सव्वमभव्वे किण्हं वा उवसमम्मि खइए य।
सुक्कं वा पम्मं वा वेदगसम्मत्तठाणाणि ॥ ५५० ॥

भव्ये सर्वमभव्ये कृष्णा वा उपशमे क्षायिके च ।
शुक्लं वा पद्मं वा वेदकसम्यक्त्वस्थानानि ॥ ५५० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—भव्यमार्गणायां सर्वाणि सर्वगुणस्थानसंभवात् । अभव्ये कृष्णलेश्यावच्चतुर्गतियुतत्रयोविंशतिकादीनि षट् मिथ्यादृष्टिसंबंधीन्येव । सम्यक्त्वमार्गणायामुपशमक्षायिकयोः शुक्ललेश्यावदष्टाविंशतिकादीनि पंच । वेदके पद्मलेश्यावत्तदादीनि चत्वारि । सम्यक्त्वं सम्यग्भावः, संसारच्छेदकारणजीवादिपदार्थयाथात्म्यप्रतिपत्तिश्रद्धानलक्षणभव्यजीवपरिणामविशेषः । तच्चौपशमिकं क्षायिकं वेदकमिति त्रेधा । तत्राद्यं प्रथमद्वितीयभेदाद्द्वेधा । तत्र प्रथमं—

दंसणमोहक्खवणा खवगा चउमाणपढमपुव्वा य ।
पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णाय ण मरंति ॥

इति चतुर्गतिपर्याप्तेष्वेव नापर्याप्तेषु । द्वितीयं पर्याप्तमनुष्यनिर्वृत्त्यपर्याप्तवैमानिकयोरेव । क्षायिकं घर्मानारकभोगभूमितिर्यग्भोगकर्मभूमिमनुष्यवैमानिकेष्वेव पर्याप्तापर्याप्तेषु । वेदकं चातुर्गतिपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तेषु । तत्र तत्प्रथमं कीदृग्जीवो गृह्णीयात् ?

चदुगदिमिच्छो सण्णी पुण्णो गब्भज विसुद्धसागारो ।
पढमुवसम्मं गेण्हदि पंचमवरलद्धिचरिमम्मि ॥

इति चतुर्गतिमिथ्यादृष्टिरेव, सोऽपि नासंज्ञी ततः संज्ञ्येव, सोऽपि न लब्ध्यपर्याप्तः निर्वृत्त्यपर्याप्तश्च ततः पूर्ण एव । सोऽपि न संमूर्छिमस्ततो गर्भज उपपादजो वा । सोऽपि न संक्लिष्टस्ततो विशुद्ध एव, सोऽपि न अनाकारोपयोगस्ततः साकारोपयोग एव, सोऽपि—

चत्तारिवि खेत्ताइं आउगबंधेण होइ सम्मत्तं ।
अणुवदमहव्वदाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं ॥

इत्यबद्धायुष्को बद्धायुष्को वा, सोऽपि सादिरनादिर्वा । तत्र सादिर्यदि सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिसत्त्वस्तदा सप्तप्रकृतीः तदसत्त्वस्तदा सोऽप्यनादिरपि मिथ्यात्वानंतानुबंधिनः पंचैव क्षयोपशमविशुद्धिदेशनाप्रायोग्यताकरणलब्धिपरिणामैः प्रशस्तोपशमनविधानेन युगपदेवोपशमय्यांतर्मुहूर्तकालं प्रथमोपशमसम्यक्त्वं स्वीकुर्वन् कश्चिदप्रत्याख्यानकषायोदयादेकचत्वारिंशद्दुरितबंधं निवारयन्नसंयतः, कश्चित्प्रत्याख्यानकषायोदयादेकपंचाशद्बंधमपाकुर्वन् देशसंयतः, कश्चित्संज्वलनोदयादेकषष्टिबंधं निराकुर्वन्नप्रमत्तसंयतो वा स्यात् । सोऽप्रमत्तः प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसंख्यातसहस्राणि करोति । तत्सम्यक्त्वग्रहणप्रथमसमयाद्गुणसंक्रमणेन तत्परिमाणेन यंत्रेण कोद्रववन्मिथ्यात्वद्रव्यं त्रिधाकरोति । तत्र नारकस्तदा असंयत एव भूत्वा घर्मादित्रये नवविंशतिकादिद्वयं बध्नाति २९ म ३० म ती । शेषपृथ्वीषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । नन्वविरतादिचत्वारितित्थयरबंधपारंभया णरा केवलिदुगंते इत्युक्तं तदा नारकेषु तद्युतस्थानं कथं बध्नाति ? तन्न । प्राग्बद्धनरकायुषां प्रथमोपशमसम्यक्त्वे वेदकसम्यक्त्वे वा प्रारब्धतीर्थबंधानां मिथ्यादृष्टित्वेन मृत्वा तृतीयपृथ्व्यंतं गतानां शरीरपर्याप्तेरुपरि प्राप्ततदन्यतरसम्यक्त्वानां तद्बंधस्यावश्यंभावात् । तत्प्राप्तौ खलु साकारोपयोगेन भाव्यं तत्र स कथं संभवेत् ? तन्न तृतीयपृथ्व्यंतं देवप्रतिबोधनान्निसर्गाद्वा तत्रापि तत्संभवात् । तर्हि निसर्गजेऽर्थावबोधः स्यान्नवा ? यदि स्यात्तदा तदप्यधिगमजमेव । यदि न स्यात्तदानवगततत्त्वः श्रद्धीतेति ? तन्न । उभयत्रांतरंगकारणे दर्शनमोहस्योपशमे क्षये क्षयोपशमे वा समाने च सत्याचार्याद्युपदेशेन जा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तमधिगमजं तद्विना जातं नैसर्गिकमिति भेदस्य सद्भावात् । सचायं प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टिर्यदि तिर्यङ् तदा असंयतो देशसंयतो वा भूत्वा देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नाति । मनुष्यस्तदा असंयतः देशसंयतः प्रमत्तश्च तदादिद्वयं । अस्मिन् सम्यक्त्वेऽपि तीर्थबंधप्रारंभात् । अप्रमत्तस्तदादीनि चत्वारि २८ दे २९ दे ती ३० दे आ ३१ दे आ ती । देवस्तदा असंयत एव भूत्वा उपरिमग्रैवेयकावसानः मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव न तीर्थयुतं प्रारब्धतीर्थबंधस्य बद्धदेवायुष्कवदबद्धायुष्कस्यापि सम्यक्त्वप्रच्युत्यभावात् । तद्द्वितीयोपशमसम्यक्त्वं वेदकसम्यग्दृष्टयप्रमत्त एव करणत्रयपरिणामैः सप्तप्रकृतीरुपशमय्य गृण्हाति तत्कालांतर्मुहूर्तप्रथमसमये देवगत्यष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि बध्नाति । अयं चोपशमश्रेणिमारोढुं करणत्रयं कुर्वन्नधःप्रवृत्तकरणं सातिशयाप्रमत्त एव करोति । तत्र प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धवृद्धि सातादिप्रशस्तप्रकृतीनां प्रतिसमयमनंतगुणवृद्ध्या चतुःस्थानानुभागबंधं असाताद्यप्रशस्तप्रकृतीनां प्रतिसमयमनंतगुणहान्या द्विस्थानानुभागबंधं स्थितिबंधापसरणं च कुर्वन्नपूर्वकरणगुणस्थानं गतः । तत्प्रथमसमयादाषष्ठभागं तान्येव चत्वारि बध्नन् सप्तमभागेऽनिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपराये चैककमेव बध्नाति ।

उपशांतकषाये आ तच्चरमसमयं नामकर्माबध्नन् क्रमेणावतरन् प्राग्वद्बध्नन् अप्रमत्तगुणस्थानं गतः । प्रमत्ताप्रमत्तपरावृत्तिसहस्राणि कुर्वन् संक्लेशवशेन प्रत्याख्यानावरणोदयाद्देशसंयतो भूत्वा पुनः अप्रत्याख्यानावरणोदयादसंयतो भूत्वा च प्रमत्तोक्ते द्वे बध्नाति इत्यसावसंयताद्यष्टगुणस्थानः स्यात् । स च बद्धदेवायुष्क आरोहणेऽपूर्वकरणप्रथमभागादन्यत्रावतरणे सर्वत्र क्वचिद्यदि म्रियते तदा वैमानिकेषु यथासंभवं निर्वृत्त्यपर्याप्तो भूत्वा मनुष्यगतिनवविंशतिकादिद्वयं बध्नाति २९ म ३० म ती । उभयोपशमसम्यक्त्वे एकत्रिंशत्कसत्त्वप्रमत्ते मिथ्यात्वं तीर्थसत्त्वाहारकसत्त्वासंयतादित्रयेऽनंतानुबंधी तीर्थसत्त्वे मिश्रं च नोदेति, तत्तत्कर्मसत्त्वजीवानां तत्तद्गुणस्थानस्य संभवाभावात् ।

दंसणमोहक्खवणापट्ठवगो कम्मभूमिजो मणुजो । तित्थयरपादमूले केवलिसुदकेवलीमूले ॥

णिट्ठवगो तट्ठाणे विमाणभोगावणीसु धम्मे य । कदकरणिज्जो चदुसुवि गदीसु उप्पज्जदे जम्हा ॥

इति सामग्रीविशेषविशिष्टोऽसंयतादिचतुर्गुणस्थानान्यतमवेदकसम्यग्दृष्टिरधःप्रवृत्ताकरणप्रथमसमयात्प्रागुक्तचतुरावश्यकानि कुर्वन् तं करणं नीत्वानंतरसमयेऽपूर्वकरणं गतः तैः समं प्रतिसमयं प्रथमोपशमसम्यक्त्वोत्पत्तिदेशसंयतसकलसंयतगुणश्रेणिद्रव्येभ्यः असंख्यातासंख्यातगुणमनंतानुबंधिद्रव्यमनंतानुबंधिविसंयोजकः, अपकृष्यापूर्वकरणानिवृत्तिकरणकालद्वयात्साधिकेऽपि संयतगुणश्रेण्यायामात् संख्यातगुणहीने गलितावशेषगुणश्रेण्यायामे निक्षिपन् अनंतानुबंधिनः गुणसंक्रमणसद्भावात् पूर्वतोऽसंख्यातगुणं गुणसंक्रमणद्रव्यं संक्रामन् पूर्वतः संख्यातगुणायामानि संख्यातसहस्राणि स्थितिकांडकानि घातयन् तावंति स्थितिबंधापसरणानि कुर्वन् एकैकस्मिन् स्थितिकांडकघातकाले पूर्वतोऽनंतगुणायामानि तावंत्यनुभागकांडकानि घातयन्नपूर्वकरणं नीत्वानंतरसमयेऽनिवृत्तिकरणं गच्छति ।

अणियट्टी अद्धाए अणस्स चत्तारि होंति पव्वाणि ।

सायरलक्खपुधत्तं पल्लं दूरावकिट्टिउच्छिट्टं ॥

तत्प्रथमसमयेऽनंतानुबंधिनां स्थितिसत्त्वं सागरोपमलक्षपृथक्त्वमात्रं । तत उपरि तत्कालसंख्यातबहुभागे गते पल्यसंख्यातैकभागायामैः संख्या-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तसहस्रस्थितिकांडकैर्हीनमसंज्ञिस्थितिबंधसमं सहस्रसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं चतुरिंद्रियस्थितिबंधसमं शतसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं त्रींद्रियं स्थितिबंधसमं पंचाशत्सागरोपममात्रं।तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं द्वींद्रियस्थितिबंधसमं पंचविंशतिसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनमेकेंद्रियस्थितिबंधसममेकसागरोपममात्रं । तत उपरि तदायामैस्तावद्भिस्तैर्हीनं पल्यमात्रं । (अत उपरि पल्यमात्रं) अत्र उपरि पल्यासंख्यातबहुभागायामैस्तावद्भि स्तैर्हीनं दूरापकृष्टिसंज्ञं पल्यासंख्यातैकभागमात्रं । तत उपर्येतदायामैस्तावद्भिर्हीनमुच्छिष्टावलिसंज्ञमावलिमात्रं । एतावत्स्थितावशिष्टायां विसंयोजनोपशमनक्षपणाक्रिया नेतीदमुच्छिष्टावलिनाम । ते निषेकाः आवलिकाले परप्रकृतिरूपेण भूत्वा गलंति इत्येवं तच्चतुष्कं तच्चरमसमये सर्वं विसंयोजितं द्वादशकषायनवनोकषायरूपं नीतं ।

अंतो मुहुत्तकालं विस्समिय पुणोवि तिकरणं करिय ।
अणयट्टीए मिच्छं मिस्सं सम्मं कमेण खवेई ॥

तदनंतरमंतर्मुहूर्तं विश्रम्यानंतानुबंधिचतुष्कं विसंयोज्यांतर्मुहूर्तानंतरं करणत्रयं कृत्वाऽनिवृत्तिकरणकाले संख्यातबहुभागे गते शेषैकभागे मिथ्यात्वं ततः सम्यग्मिथ्यात्वं ततः सम्यक्त्वप्रकृतिं च क्रमेण क्षपयति, दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभप्रथमसमयः स्थापितसम्यक्त्वप्रकृतिप्रथमस्थित्यायामांतर्मुहूर्तावशेषे चरमसमयप्रस्थापकः । अनंतरसमयादाप्रथमस्थितिचरमनिषेकं निष्ठापकः, प्रस्थापकोऽयमसंयतादिचतुर्ष्वन्यतमो मनुष्य एव । निष्ठापकस्तु बद्धायुष्कापेक्षया वैमानिकघर्मानारकभोगभूमितिर्यग्मनुष्यनिर्वृत्त्यपर्याप्तः । अबद्धायुष्कापेक्षया मनुष्य एव सच निष्ठापकः। कृतकृत्यवेदककालांतर्मुहूर्ते गते क्षायिकसम्यग्दृष्टिः स्यात् । अयं कश्चित्कर्मभूमिमनुष्यः तीर्थबंधं प्रारभ्य नप्रारभ्य वा चरमांगः तस्मिन्नेव भवे क्षपकश्रेणिमारुह्य घातीनि हत्वा सातिशयनिरतिशयकेवली स्यात्। तृतीयभवे सेत्स्यन् देवायुरेव बध्वा वैमानिकेष्वेवावतीर्य दिव्यभोगाननुभूयागत्य पंचदशकर्मभूमिषूत्तमसंहननो भूत्वा घातीनि हंति। एते क्षायिकसम्यग्दृष्टयो यथा संभवमष्टाविंशतिकादीनि पंच बध्नंति । असंयतादिचतुर्गुणस्थानवर्तिमनुष्यद्वितीयोपशमसम्यग्दृष्टयः केचिन्मृत्वा वैमानिकासंयतेषूत्पन्नास्ते च कर्मभूमिमनुष्यप्रथमोपशमसम्यग्दृष्टयश्च स्वस्वांतर्मुहूर्तकाले गते सम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्वेदकसम्यग्दृष्टयो जायंते । कर्मभूमिमनुष्यसादिमिथ्यादृष्टयः सम्यक्त्वप्रकृत्युदयेन मिथ्यात्वोदयनिषेकानुत्कृष्यासंयतादिचतुर्गुणस्थानवेदकसम्यग्दृष्टयो भूत्वा तीर्थं बध्नीयुः । केचिन्न बध्नीयुः ।

एते वेदकाः कृतकृत्यवेदकाश्चाष्टाविंशतिकादीन्यसंयतादित्रयो द्वे अप्रमत्ताश्चत्वारि बध्नंति । नरकगतौ प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टयः स्वकालानंतरसमयं प्राप्य सम्यग्मिथ्यादृष्टिसादिमिथ्यादृष्टयः मिश्रमिथ्यात्वप्रकृत्युदयनिषेकानुत्कृष्य च सम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्वेदकसम्यग्दृष्टयो भूत्वा धर्मादित्रये सतीर्थातीर्थनवविंशतिकादिद्वयं बध्नंति । शेषपृथ्वीषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । कर्मभोगभूमितिर्यंचो भोगभूमिमनुष्याश्च प्रथमोपशमसम्यक्त्वं त्यक्त्वा सादिमिथ्यादृष्टितिर्यंचो मिथ्यात्वोदयनिषेकानुत्कृष्य च सम्यक्त्वप्रकृत्युदयाद्वेदकसम्यग्दृष्टयो जायंते ते च भोगभूमिकृतकृत्यवेदकाश्च देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नंति देवकृतकृत्यवेदका नवविंशतिकादिद्वयं २९ म ३० म ती । प्रथमोपशमसम्यग्दृष्टयस्तत्र जातवेदकसम्यग्दृष्टयश्च तन्नवविंशतिकमेव । भवनत्रयाद्युपरिमग्रैवेयकांतसादिमिथ्यादृष्टयः करणत्रयमकृत्वा कृत्वा वा यथासंभवं सम्यक्त्वप्रकृत्युदयान्मिथ्यात्वं त्यक्त्वा वेदकसम्यग्दृष्टयो भूत्वा तदेव बध्नंति ॥ ५५० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भव्य मार्गणाविषैं सर्व बंध स्थान हैं जातैं ताके सर्व गुणस्थान संभवै हैं बहुरि अभव्यविषैं कृष्णलेश्यावत् चतुर्गतिसाहित तेईसकानैं आदि देकरि छह स्थान मिथ्यादृष्टि संबंधी ही संभवै हैं।

बहुरि सम्यक्त्व मार्गणाविषैं उपशम क्षायिकविषैं तो शुक्ल लेश्यावत् अठाईसकानैं आदि देकरि पंच स्थान हैं। वेदकविषैं पद्मलेश्यावत् अठाईसकानैं आदि देकरि च्यारि स्थान हैं। तहां सम्यक्का जो भाव सो सम्यक्त्व है सो संसारके नाशकौं कारण जे जीवादिक पदार्थनिका यथार्थ प्रतीति श्रद्धान सो है लक्षण जाका ऐसा भव्य जीवका परिणामविशेष सो सम्यक्त्व कहिए। सो सम्यक्त्व तीन प्रकार है—औपशमिक १ क्षायिक १ वेदक १ तहां औपशमिक दोय प्रकार है प्रथमोपशम सम्यक्त्व द्वितीयोपशम सम्यक्त्व तहां—

दंसणमोहक्खवणा खवगा चडमाण पढमपुव्वाय।
पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णा य ण मरंति ॥ १३ ॥

दर्शन मोहकी क्षपणा करनेवाले वा क्षपक श्रेणीवाले वा चढतैं अपूर्व करणका प्रथम भाग विषैं उपशम श्रेणीवाले वा प्रथमोपशम सम्यक्त्वके धारी वा तमतम सातवां नरकविषैं सासादनादि गुणके धारी ए मरैं नाहीं तातैं तिन दोऊनिकेविषैं प्रथमोपशम सम्यक्त्व है सो च्यारयो गतिके पर्याप्तविषैं ही होइ अपर्याप्तविषैं न होइ। बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्व पर्याप्त मनुष्य वा निर्वृत्त्यपर्याप्त वैमानिक देवनिविषैं होइ। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व घर्मा नारकी भोगभूमिया तिर्यंच, भोगभूमिया कर्मभूमिया मनुष्य वैमानिक देव इनकैं पर्याप्त वा अपर्याप्त दशाविषैं हो है। बहुरि वेदक सम्यक्त्व च्यारिगतिके पर्याप्तक वा निर्वृत्त्यपर्याप्तक जीवनिकैं हो है। तहां प्रथमोपशम सम्यक्त्व कैसे जीवकैं होइ है? सो कहैं हैं—

चदुगदि मिच्छो सण्णी पुण्णो गब्भज विसुद्धसागारो।
पढमुवसम्मं गेण्हदि पंचमवरलद्धिचरिमम्मि ॥ १४ ॥

च्यारि गतिका मिथ्यादृष्टी सो भी सैनी ही होइ, असैनी न होइ, सो भी लब्धि अपर्याप्तक निर्वृत्त्यपर्याप्तक न

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होइ, पर्याप्तक ही होइ, सो भी सन्मूर्छन न होइ, गर्भज वा उपपादज ही होइ, सो भी संक्लेशी न होइ, विशुद्ध परिणामी होइ। सो भी अनाकार दर्शनोपयोग युक्त न हो, विशेष ग्रहणरूप साकारोपयोगका धारी होइ तहां भी—

चत्तारिवि खेत्ताइं आउगबंधेण होदि सम्मत्तं।
अणुव्वदमहव्वयाइं ण लहइ देवाउगं मोत्तुं॥ ५॥

च्यारिगतिका आयु पूर्वै बांध्या होइ तौ भी सम्यक्त्व होइ दोष नाहीं। बहुरि अणुव्रत महाव्रत, देवायु विना और आयुका बंध जाकै भया होइ ताकै न होइ इस वचनतैं बद्धायु हो वा अबद्धायु हो, सो भी सादि मिथ्यादृष्टी होइ वा अनादि मिथ्यादृष्टी होइ, तहां सादि मिथ्यादृष्टीकैं जो सम्यक्त्व मोहनी मिश्र मोहनीका सत्त्व पाइए है तौ ताकै तीन दर्शन मोह च्यारि अनंतानुबंधी ए सात प्रकृति हैं अर जो सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनीका सत्त्व नाही है तो पंच प्रकृति हैं अर अनादि मिथ्यादृष्टीकैं पांच ही प्रकृति हैं सो क्षयोपशम १ विशुद्धि १ देशना १ प्रायोग्यता १ करण १ लब्धिके परिणामनिकरि प्रशस्तोपशमन विधानकरि तिनि प्रकृतिनिकौं युगपत् उपशमाइ अंतर्मुहूर्त कालपर्यंत प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं अंगीकार करता कोई जीव अप्रत्याख्यान कषायके उदयतैं इकतालीस पाप प्रकृतिनिका बधकौं निवारता असंयत हो है। वा कोई जीव प्रत्याख्यानके उदयतैं इकावन प्रकृतिके बंधकौं दूरि करता दश संयत हो है। वा कोई जीव संज्वलनके उदयतैं इकसठि प्रकृतिनिके बंधकौं दूरि करता अप्रमत्त हो है, सो अप्रमत्त, संख्यात हजारां बार अप्रमत्ततैं प्रमत्तविषैं प्रमत्ततैं अप्रमत्तविषैं आवै जाय है। सो तिस प्रथमोपशम सम्यक्त्वके ग्रहणके प्रथम समयतैं गुण संक्रमणकरि तिस सम्यक्त्वके परिणामतैं जैसे घरटीकरि कोदों नाज तीन भाग कीजिये तैसैं मिथ्यात्व, द्रव्यकौं मिथ्यात्व मिश्र सम्यक्त्व भेदकरि तीन प्रकार करै है। तहां नारकी तौ असंयत ही हो है सो मनुष्य युत गुणतीसका वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका इन दोऊनिकौं तौ घर्मादिक तीनविषैं बाधैं है। अवशेष पृथ्वीनिविषैं मनुष्य युत गुणतीसकेकौं ही बाधैं हैं। इहां प्रश्न—"अविरदादि चत्तारि तित्थयरबंधपारंभया णरा केवलिदुगंते" इस वचनतैं अविरतादि च्यारि गुणस्थानवाले मनुष्यही केवली द्विककैं निकटि तीर्थंकर बंधके प्रारंभक कहे नरकविषैं कैसे तीर्थंकरका बंध है? तहां समाधान—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

जिनकैं पूर्वै नरकायु बंध न भया होइ पीछे प्रथमोपशम वा वेदक सम्यक्त्वविषैं तीर्थंकर बंधका प्रारंभ मनुष्य-करै पीछे मरण समय मिथ्यादृष्टी होइ तृतीय पृथ्वीपर्यंत उपजै तहां शरीर पर्याप्ति पूर्ण भए पीछे तिन दोऊनिमैंस्यों किसी सम्यक्त्वकौं पाइ समय प्रबद्धविषैं तीर्थंकरका भी बंध करै है। तहां प्रश्न—जो प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्तिविषैं साकारोपयोग कह्या है सो नरकविषैं कैसैं संभवै? ताका समाधान—तीसरी पृथ्वीपर्यंत देवका संबोधनतैं वा
१५७ निसर्ग सहज स्वभावतैं तहां भी साकारोपयोग हो है। इहां प्रश्न—जो निसर्गविषैं पदार्थनिका अवबोध है कि नाही जौ है तौ वह भी अधिगमज ही भया अर नहीं है तौ तत्त्वज्ञान विना सम्यक्त्व कैसैं नाम पाया? ताका समाधान—दोऊनिविषैं अंतरंगकारण दर्शन मोहका उपशम क्षय क्षयोपशमकी समानता है ताकौं होतैं जहां आचार्यादिकका उपदेशकरि तत्त्वज्ञान होइ सो अधिगमज है तीहिं विना होइ सो निसर्गज है। बहुरि प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी तिर्यंच असंयत वा देशसंयत होइ सो देवगतियुत अठाईसके स्थानकौं ही बाधै है। बहुरि प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी मनुष्य सो असंयत वा देशसंयत वा प्रमत्त तौ देवगतियुत अठाईसका देवतीर्थ सहित गुणतीसका स्थानकौं बाधै है। जातैं इस सम्यक्त्वविषैं भी तीर्थंकर बंधका प्रारंभ हो है। बहुरि अप्रमत्त ते दोन्यों अर आहारकयुत तीस वा इकतीस ऐसैं च्यारि स्थान बाधै है। बहुरि प्रथमोपशम सम्यक्त्व देव असंयत ही है सो उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत ही है सो मनुष्यगतियुत गुणतीसकौं ही बाधै है। तीर्थंकर सहित तीस बाधै नाहीं जातैं देवायुका बंध सहित तीर्थंकर बंधवालेकैं जैसैं सम्यक्त्वतैं भ्रष्टता न होइ तैसैं अबद्धायु देवकैं भी न होइ। अर सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट होइ मिथ्यादृष्टिविषैं प्राप्त भएं विना प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी प्राप्ति नाहीं। बहुरि द्वितीयोपशम सम्यक्त्वकौं वेदक सम्यग्दृष्टी अप्रमत्त ही तीन करणके परिणामनिकरि सातौ प्रकृतिनिकौं उपशमाय ग्रहण करै है। तिस द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्त कालका प्रथम समयविषैं देवगतियुत अठाईसकानैं आदि देकरि च्यारिकौं बाधै है सो यहु उपशम श्रेणीके चढनेकौं तीन करण करता अधःप्रवृत्त कारणकौं तौ सातिशय अप्रमत्त ही करै है, सो समय समय अनंतगुणी विशुद्धताको धारता सातादिक प्रशस्त प्रकृतिनिकौं गुड खंड शर्करा अमृतरूप च्यारि प्रकार अनु-

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाग बंधकौं समय समय प्रति अनंतगुणा बधावता असाता आदि अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग बंधकौं समय समय अनंतगुणा घटावता निंब कांजीररूप दोयप्रकार बांधता बहुरि सर्वप्रकृतिका स्थितिबंधकौं घटावता अपूर्वकरण गुणस्थानकौं प्राप्त हो है। ताका प्रथम समयतैं लगाय छठा भाग पर्यंत तिनही च्यारि बंधस्थानकनि बाधता सातवां भागविषैं वा अनिवृत्ति करणविषैं वा सूक्ष्मसांपरायविषैं एकककौं बाधै है। बहुरि उपशांत कषायविषैं अंत समय पर्यंत नाम कर्मकौं न बाधता अनुक्रमतैं उतरि अप्रमत्त गुणस्थानकौं प्राप्त भया तहां अप्रमत्ततैं प्रमत्तविषैं प्रमत्ततैं अप्रमत्तविषैं हजारां वार गमनागमन करै पीछैं प्रमत्ततैं संक्लेशका वशकरि प्रत्याख्यानावरणके उदयतैं देश संयत होइकरि वा अप्रत्याख्यानके उदयतैं असंयत होइकरि प्रमत्तवत् दोय स्थाननिकौं बाधै ऐसैं द्वितीयोपशम सम्यक्त्वविषैं आठ गुणस्थान हैं। बहुरि सो देवायुका बंध सहित जीव चढतैं अपूर्वकरणका प्रथम भाग विना अन्यत्र अर उतरतैं सर्वत्र कहीं जो मरण होइ तौ वैमानिक देवविषैं यथा संभव उपजै तहां निर्वृत्ति अपर्याप्त अवस्थाविषैं मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका स्थानकौं बाधै है ऐसैं उपशम सम्यक्त्व कह्या। बहुरि दोऊ प्रकारके उपशम सम्यक्त्वनिविषैं इकतीस प्रकृतिरूप जो नाम कर्मका बंधस्थान ताका सत्त्व सहित प्रमत्त तींहविषैं मिथ्यात्वका उदय न होइ। इकतीसके बंधस्थानकी प्रकृतिनिका सत्त्व जाकैं पाइए सो प्रमत्ततैं मिथ्यादृष्टि विषैं न आवै। बहुरि तीर्थ सत्व आहारक सत्व लीएं असंयतादिक तीनाविषैं अनंतानुबंधीका उदय न होइ तातैं तहांतैं तिस सत्ववाला सासादनविषैं न आवै। बहुरि तीर्थंकरका सत्त्व होतैं मिश्रमोहनीका उदय न हो है तातैं तहांतैं तिस सत्ववाला मिश्रगुणस्थानविषैं न आवै है जातैं तिस तिस कर्मका सत्वयुक्त जीवनिकैं सो सो गुणस्थान नाहीं संभवै है। एक जीवकैं तीर्थंकर अर आहारकका सत्त्व होतैं मिथ्यादृष्टि गुणस्थान न हो है। आहारकका सत्व होतैं सासादन न हो है। तीर्थंकरका सत्त्व होतैं मिश्र न हो है ऐसैं जानना। आगैं क्षायिक सम्यक्त्वका विधान कहिए है—प्रासंगिक गाथा—

दंसणमोहक्खवणापट्ठवगो कम्मभूमिजो मणुजो।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तित्थयरपादमूले केवलिसुदकेवलीमूले ॥ १ ॥
णिट्ठवगो तट्ठाणे विमाणभोगावणीसु धम्मे य ।
कदकरणिज्जो चदुसुवि गदीसु उप्पज्जदे जम्हा ॥ २ ॥

दर्शन मोहकी क्षपणाका प्रारंभक तौ कर्मभूमिया मनुष्य तीर्थंकर वा केवली वा श्रुतकेवलीके पादमूलविषैं ही हो है अर निष्ठापक तहां ही वा वैमानिक देव वा भोगभूमिया वा घर्मा नरकवाला हो है जातैं कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी च्यारचो गतिविषैं उपजै है सोई कहिए है—

सामग्री विशेष संयुक्त असंयतादि च्यारिगुणस्थाननिविषैं कोई गुणस्थानवर्ती जो वेदक सम्यग्दृष्टी जीव सो अधःप्रवृत्त करणका प्रथम समयतैं लगाय पूर्वोक्त प्रकार विशुद्धताका बंधना, सातादि प्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग बंध वधावना, असातादि अप्रशस्त प्रकृतिनिका अनुभाग बंध घटावना, सर्व प्रकृतिनिका स्थिति बध घटावना, ए च्यारि आवश्यक करता तिस अधःप्रवृत्त करणकौं पूर्णकरि अनंतर समयविषैं अपूर्व करणकौं प्राप्त भया तहां तिन पूर्वोक्त च्यारि आवश्यकनिकरि सहित समय समय प्रति जो प्रथमोपशम सम्यक्त्वकी उत्पत्ति विषैं वा देश संयतविषैं वा सकल संयतविषैं असंख्यात गुणा असंख्यात गुणा गुण श्रेणीरूपी द्रव्य है तिसतैं असंख्यात गुणा अनंतानुबंधीका द्रव्य कहिये परमाणुनिका समूह ताका अपकर्षणकरि जुदे ग्रहिकरि अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणका दोऊ कालतैं इहां गुण श्रेणी आयामका काल किछू अधिक है तथापि सकल संयमका गुण श्रेणीका काल तै संख्यात गुणा घाटि है । तिसविषैं व्यतीत भएं पीछैं अवशेष जेता रहता जाय तिस गुणश्रेणी कालविषैं तिस अपकर्षण कीए हुए द्रव्यकौं देवै है भावार्थ—सत्त्वरूप मोहनीयकर्मके परमाणूनिविषैं जेते अनंतानुबंधीके परमाणू हैं तिनविषैं पूर्वोक्त गुण श्रेणीविषैं देनेकौं अपकर्षण करि जेते परमाणू जुदे करे तितने परमाणू तिस पूर्वोक्त गुण श्रेणीका कालके जितने समय होंइ तितनेविषैं समय समय प्रति असंख्यात असंख्यात गुणे होइ निर्जरावै है । बहुरि पूर्वतैं असंख्यात गुणा संक्रम द्रव्यकौं संक्रमावै है । अनंतानुबंधीके द्रव्यकौं अन्य कषायनिरूप परिणमावै

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। बहुरि पूर्वतैं असंख्यात गुणे आयाम जो समयनिका जो प्रमाण ताकौं लीए संख्यात हजार कर्मनिके कांडक का स्थान तिनिका घात करै है पूर्वै सत्ताविषैं कर्मनिकी स्थिति थी ताकौं घटावै है। बहुरि तितने ही नए कर्मनिके स्थिति बंधका अपसरण जो घटावना ताकौं करै है। बहुरि एक एक स्थिति कांडकका घात करनेका कालविषैं पूर्वतैं अनंतगुणा अनुभागके अविभाग प्रतिच्छेदादिकरूप आयामकौं लीएं अनुभाग कांडकनिका नाश करै है। ऐसैं करता संता अपूर्वकरणकौं पूर्ण करै है। तिसके अनंतर समयविषैं अनिवृत्ति करण हो है।

अणियट्टि अद्धाए अणस्स चत्तारि होंति पव्वाणि।
सायरलक्खपुधत्तं पल्लं दूरावकिट्टिउच्छिट्टं ॥ १ ॥

तहां अनिवृत्ति करणका प्रथम समयविषैं सत्त्वरूप अनंतानुबंधीकी स्थिति पृथक्त्व लक्ष सागर प्रमाण है। ताके ऊपरि तिस अनिवृत्ति करणके कालकौं संख्यातका भाग दीजिए तहां एक भाग विना अवशेष बहुभाग प्रमाणकालकौं गएं पल्यका संख्यातवां भाग प्रमाण एक एक कांडक जो एक एक बार इतनी इतनी स्थिति घटावना सो ऐसैं संख्यात सहस्र स्थितिके कांडकनिकरि असैनीका बंधके समान हजार सागर प्रमाण स्थिति राखै है। बहुरि ताके ऊपरि तितने ही प्रमाणकौं लीएं तितने ही कांडकनिकरि चौंद्रीका बंधके समान सौ सागरकी स्थिति राखै हैं। बहुरि ताके ऊपर तितने प्रमाणकौं लीएं तितने ही कांडकनिकरि तेंद्रीका बंध समान पचास सागरकी स्थिति राखै है। बहुरि ताके ऊपरि तितने आयामकौं लीएं तितनेही कांडकनिकरि वेंद्रीका बंध समान पचीस सागरकी स्थिति राखै है। बहुरि ताके ऊपर तितने ही आयामकौं लीएं तितनेही कांडकनिकरि घटाइ एकेंद्रीका बंध समान एक सागर स्थिति राखे हैं। बहुरि ताके ऊपरि तितने आयामकौं लीएं तितने ही कांडकनिकरि घटाइ पल्यप्रमाण स्थिति राखै है। बहुरि ताके ऊपरि पल्यका असंख्यातवां भाग मध्ये एक भाग विना बहु भाग प्रमाण आयामकौं लीएं तितनेही कांडकनिकरि स्थितिकौं घटाइ दूरापकृष्टि है नाम जाका ऐसी पल्यके असंख्यातवै भाग प्रमाण स्थिति राखै है। बहुरि ताके ऊपरि तितने ही आयामकौं लीएं तितनेही कांडकनिकरि उच्छि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ष्टावली है नाम जाका ऐसी आवलीप्रमाण स्थिति राखै है। इतनीस्थिति अवशेष रहैं विसंयोजन वा उपशमन वा क्षपणा क्रिया न होइ सके तातैं याकौं उच्छिष्टावली कहिए, ते अवशेष रहे आवलीकालके निषेक तिस आवली कालविषैं एक एक निषेककरि अन्य प्रकृतिरूप परिणामिकरि गलैं हैं। ऐसैं अनंतानुबंधी चतुष्क है सो तिस उच्छिष्टावलीका अंत समयविषैं विसंयोजनरूप कीया हुवा अन्य बारह कषाय वा नव नो कषायरूप प्राप्त कीया।

अंतो मुहुत्तकालं विस्समिय पुणोवि तिकरणं किरिय।
अणियट्टीए मिच्छं मिस्सं सम्मं कमेण णासेइ ॥ १ ॥

बहुरि ताके अनंतरि अंतर्मुहूर्त विश्राम लेइकरि अनंतानुबंधीका विसंयोजन कीएं पीछै अंतर्मुहूर्त भया तब, बहुरि तीन करण करै तहां अनिवृत्ति करण कालका संख्यातभागनिमें एक भाग विना बहुभाग गएं एक भाग अवशेष रहैं पहिलैं मिथ्यात्वकौं पीछैं सम्यग्मिथ्यात्वकौं पीछै सम्यक्त्व प्रकृतिकौं अनुक्रमतैं क्षय करै है। तहां दर्शन मोहकी क्षपणाका प्रारंभका प्रथम समयविषैं स्थापी जो सम्यक्त्वमोहनीकी प्रथम स्थिति ताका कालविषैं अंतर्मुहूर्त अवशेष रहे तहांका अंतसमय पर्यंत तौ प्रस्थापक कहिए। बहुरि तिसके अनंतरि समयतैं प्रथम स्थितिका अंत निषेक पर्यंत निष्ठापक कहिए, सो प्रस्थापक तौ असंयतादि च्यारि गुणस्थाननिविषैं कोई गुणस्थानवर्ती मनुष्य हो है बहुरि निष्ठापक बद्धायुकी अपेक्षा वैमानिक देव वा घर्मा नारक वा भोगभूमिया तिर्यंच वा मनुष्य निर्वृत्त्य-पर्याप्तक भी हो है अर अबद्धायुकी अपेक्षा मनुष्य निष्ठापक हो है। बहुरि कृतकृत्य वेदकका काल अंतर्मुहूर्त गए पीछैं जीव क्षायिक सम्यग्दृष्टी हो है। सो यहु क्षायिक सम्यग्दृष्टी कोई कर्मभूमिका मनुष्य तीर्थबंधका प्रारंभकरि वा न प्रारंभकरि चरम शरीरी तिस ही भवविषैं क्षपकश्रेणी चढि घातियाकर्महानि सातिशय वा निरतिशय केवली हो है। अर जो तीसरा भवविषैं मुक्त होना होइ तौ देवायुहीकौं बांधि वैमानिक देवनिहीविषैं उपजि दिव्यभोग-निकौं भोगि चयकरि पंद्रह कर्मभूमिनिविषैं उत्तम संहननका धारी होइ घातिकर्मनिकौं नष्ट करै है। ए क्षायिक सम्यग्दृष्टी यथासंभव अठाईसकाकौं आदि देकरि पांच स्थान बाधै हैं। आगैं वेदकविषैं कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

असंयतादिक च्यारि गुणस्थानवर्ती मनुष्य द्वितीयोपशम सम्यग्दृष्टी केई मरि वैमानिक देवनिविषैं असंयत भए ते वेदक सम्यग्दृष्टी हो हैं। बहुरि कर्मभूमिया मनुष्य प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी ते अपने उपशम सम्यक्त्वका अंतर्मुहूर्तकाल गए पीछैं सम्यक्त्व मोहनीके उदयतैं वेदक सम्यग्दृष्टी हो हैं। बहुरि कर्मभूमियां मनुष्य सादि मिथ्यादृष्टी ते सम्यक्त्व मोहनीके उदयतैं मिथ्यात्वका उदयरूप निषेकनिका अभावकरि असंयतादिक च्यारि गुणस्थाननिविषैं मिथ्यात्वतैं वेदक सम्यग्दृष्टी होइ तीर्थंकर प्रकृतिकौं बांधै वा कोई जीव न बांधैं सो ए वेदक सम्यक्ती अर कृतकृत्य वेदक सम्यक्ती हैं ते असंयतादिक तीन तौ अठाईस गुणतीसके दोय अर प्रमत्त अठाईसकानैं आदि देकरि च्यारि स्थानकनिकौं बांधै है। बहुरि नरक गतिविषैं प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी अपने कालके अनंतर समयकौं प्राप्त होइ करि मिश्रगुणस्थानी वा सादि मिथ्यादृष्टी होंहिं ते मिश्र प्रकृति वा मिथ्यात्व प्रकृतिके उदय निषेकनिकौं मिटाइ सम्यक्त्व प्रकृतिके उदयतैं वेदक सम्यग्दृष्टी होइकरि घर्मादिक तीनविषैं तो तीर्थंकर रहित वा सहित गुणतीस तीसके स्थाननिकौं बांधै है। शेष पृथ्वीनिविषैं मनुष्यगति सहित गुणतीसकेकौं ही बांधैं हैं। बहुरि कर्म भूमिया वा भोगभूमियां तिर्यंच अर भोगभूमियां मनुष्य ते प्रथमोपशम सम्यक्त्वकौं छोडि सादि मिथ्यादृष्टी होइ ते मिथ्यात्वके उदयनिषेकनिकौं मिटाइ सम्यक्त्व मोहनीके उदयतैं वेदक सम्यग्दृष्टी होंहिं ते जीव अर भोगभूमियां कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टी ते देवगति युत अठाईसकेकौं ही बांधै हैं। बहुरि देव कृतकृत्यवेदक सम्यग्दृष्टी गुणतीसकानैं आदि देकरि दोय स्थान बांधैं हैं। मनु मती। अर प्रथमोपशम सम्यग्दृष्टी देव वा देव प-

२९ ३०

र्याय ही विषैं जिनके वेदक सम्यक्त्व भया ऐसैं देव हैं ते मनुष्य युत गुणतीसकेकौं ही बांधैं है। बहुरि भवनत्रिकादिक उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत सादि मिथ्यादृष्टी जीव तीन करणनिकौं विना कीएं यथा संभव सम्यक्त्व मोहनीके उदयतैं मिथ्यात्वकौं छोडि वेदक सम्यग्दृष्टी होइ मनुष्यगतियुत गुणतीसकेकौं ही बांधै है॥ ५५०॥

अडवीसतिय दु साणे मिस्से मिच्छे दु किण्हलेस्सं वा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सण्णीआहारिदरे सव्वं तेवीसछक्कं तु ॥ ५५१ ॥

अष्टविंशत्रयं तु साने मिश्रे मिथ्ये तु कृष्णलेश्या वा ।
संज्ञ्याहारेतरयोः सर्वं त्रयोविंशषट्कं तु ॥ ५५१ ॥

सासादनरुचावष्टाविंशतिकादित्रयमेव । तत्र निर्वृत्त्यपर्याप्तबादरपृथ्व्यप्प्रत्येकवनस्पतिद्वित्रचतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञितिर्यग्मनुष्येषु पर्याप्तनारकोभयभवनत्रयादिसहस्रारांतदेवेषु च नवविंशतिकादिद्वयमेव । २९ ति म ३० ति उ । पर्याप्तसंज्ञितिर्यग्मनुष्ययोर्देवगत्यष्टाविंशतिकादित्रयं २८ दे २९ ति म ३० ति उ । उभयानतायुपरिमग्रैवेयकांतेषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । अनुदिशानुत्तरयोः सासादनो नास्ति । मिश्ररुचावष्टाविंशतिकादिद्वयं वध्नाति । तत्र पर्याप्तयोर्देवनारकयोर्मनुष्यगतिनवविंशतिकं । तिर्यग्मनुष्ययोश्च देवगत्यष्टाविंशतिकं । अनुदिशानुत्तरयोर्मिश्रो नास्ति । मिथ्यारुचौ कृष्णलेश्यावत्त्रयोविंशतिकादीनि षट् वध्नंति । तत्र निर्वृत्त्यपर्याप्तापर्याप्तनारकेषु नवविंशतिकादिद्वयं । षट्पृथ्वीषु तिर्यग्मनुष्यगतियुतं । २९ ति म ३० ति उ । सप्तम्यां तिर्यग्गतियुतमेव २९ ति म ३० ति उ । तिर्यग्गतौ लब्धिनिर्वृत्त्यपर्याप्तबादरसूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणप्रत्येकवनस्पतिद्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिसंज्ञितिर्यग्मनुष्येष्वष्टाविंशतिकं विना त्रयोविंशतिकादीनि पंच । तेजोवायुषु तु—'मणुवदुगं मणुवाऊ उच्चं णेति मनुष्यगतियुतपंचविंशतिकनवविंशतिके न स्तः । पर्याप्तासंज्ञिसंज्ञितिर्यग्मनुष्येषु त्रयोविंशतिकादीनि षट् । लब्धिनिर्वृत्त्यपर्याप्तमनुष्येषु तान्यष्टाविंशतिकं विना पंच । देवगतौ निर्वृत्त्यपर्याप्तापर्याप्तयोर्भवनत्रयादीशानांतेषु पंचविंशतिकषड्विंशतिकनवविंशतिकत्रिंशत्कानि चत्वारि । सानत्कुमारादिदशकल्पेषु नवविंशतिकादिद्वयं । आनतायुपरिमग्रैवेयकांतेषु मनुष्यगतिनवविंशतिकमेव । अनुदिशानुत्तरेषु मिथ्यादृष्टिर्नास्ति । अत्र प्रस्तुतगाथासूत्रं—

चदुरेकदुपण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता ।
तिरगुणसमगे संतेत्ति य तियतियदोण्णि गच्छंति ॥ १ ॥

स्वगुणस्थानं त्यक्त्वानंतरसमये मिथ्यादृष्टयः सासादनप्रमत्तं वर्जित्वा मिश्राद्यप्रमत्तांतानि चत्वारि गुणस्थानानि गच्छंति । सासादनाः मिथ्यात्वमेव । मिश्रा मिथ्यात्वासंयताख्ये द्वे । असंयता देशसंयताश्च प्रमत्तहीनान्यप्रमत्तांतानि पच पंच । प्रमत्ताः अप्रमत्तांतानि षट् । अप्रमत्ताः प्रमत्तापूर्वकरणे मरणे देवासंयतं च । अपूर्वकरणादित्र्युपशमकाः आरोहंत्यवरोहंति मरणे देवासंयतं चेति त्रीणि त्रीणि त्रीणि । उपशांतकषाया अवतरणे सूक्ष्मसांपरायं मरणे देवासंयतं चेति द्वे ।

गत्यनुवादे तु नारकमिथ्यादृष्टयः मिश्रमसंयतं च । सासादनाः मिथ्यादृष्टिगुणस्थानमेव । मिश्रा मिथ्यादृष्ट्यसंयतं च । असंयता मिश्रांतानि त्रीणि । तिर्यग्मिथ्यादृष्टयः मिश्रादिदेशसंयतांतानि । सासादना मिथ्यादृष्टिं । मिश्रा मिथ्यादृष्ट्यसंयतं च । असंयता देशसंयतांतानि । देशसंयता असंयतांतानि । मनुष्यमिथ्यादृष्टयः विना सासादनप्रमत्तमप्रमत्तांतानि । सासादना मिथ्यादृष्टिं । मिश्रा मिथ्यादृष्ट्यसंयतं च । असंयता विना

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमत्तमप्रमत्तांतानि पंच । देशसंयताश्च तथा । प्रमत्ता अप्रमत्तांतानि । अप्रमत्ताः प्रमत्तमपूर्वकरणं मरणे देवासंयतं च । अपूर्वकरणाः आरोहणेऽनिवृत्तिकरणमवरोहणे अप्रमत्तं, आरोहकापूर्वकरणप्रथमभागादन्यत्र मरणे देवासंयतं च । अनिवृत्तिकरणा आरोहणे सूक्ष्मसांपरायमवरोहणेऽपूर्वकरणं मरणे देवासंयतं च । सूक्ष्मसांपराया आरोहणे उपशांतकषायमवरोहणेऽनिवृत्तिकरणं मरणे देवासंयतं च । उपशांतकषाया अवरोहणे सूक्ष्मसांपरायं मरणे देवासंयतं च। क्षपकश्रेण्यामारोहणमेव नावरोहणमरणे तेनापूर्वकरणोऽनिवृत्तिकरणमनिवृत्तिकरणः सूक्ष्मसांपरायं, सूक्ष्मसांपरायः क्षीणकषायं, क्षीणकषायः सयोगकेवलिनं, सयोगकेवली अयोगकेवलिनं, अयोगकेवली सिद्धं ।

देवमिथ्यादृष्टयः मिश्रमसयतं च, सासादनाः मिथ्यादृष्टिं, मिश्रा मिथ्यादृष्टयसंयतं च, असंयता मिश्रांतानि, संज्ञ्याहारमार्गणयोर्नामबंधस्थानानि सर्वाणि, असंज्ञ्यनाहारयोस्त्रयोविंशतिकादीनि षट् । तत्र संज्ञिनि नारके नवविंशतिकादिद्वयं २९ ति म ३० ति उ म ती । तिरश्चि तीर्थाहारवर्जिताद्यानि षट्, मनुष्ये सर्वाणि, देवेऽष्टाविंशतिकं विना पंचविंशतिकादीनि चत्वारि २५ ए प २६ ए प आउ २९ ति म ३० ति उ मती । असंज्ञिमार्गणायां लब्ध्यनिर्वृत्त्यपर्याप्तापर्याप्तबादरसूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुसाधारणप्रत्येकद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियेषु तीर्थाहारवर्जिताद्यानि षट् । आहारमार्गणायां देवनारकेषु तन्नवविंशतिकादिद्वयं २९ ति म ३० ति उ म ती । तिर्यक्षु त्रयोविंशतिकादीनि षट् । मनुष्येषु सर्वाणि । अनाहारमार्गणायां विग्रहगतौ देवनारकेषु ते द्वे २९ ति म ३० ति उ मती । एकान्नविंशतिविधतिर्यक्षु त्रयोविंशतिकादीनि षट् २३ ए अ, २५ ए प वि ति च पं म अ, २६ ए प आ उ, २८ दे । इदमेकसंयतं प्रति २९ वि ति च पं म । ३० वि ति च पं प उ ।मनुष्येषु त्रयोविंशतिकादीनि षट् २३ ए अ २५ ए प वि ति च पं म अ २६ ए प आउ २८ दे २९ वि ति च पं म दे ती ३० वि ति च पं उ । तत्त्वरुचिः सम्यक्त्वं । तत्त्वानां सम्यग्ज्ञानं बोधः । तद्द्वयपूर्वकं जीवाविराधनं चारित्रं ॥ ५५१ ॥ अथापुनरुक्तभंगानाह———

स० चं०—सासादन सम्यक्त्वविषैं अठाईसकानैं आदि दैकरि तीनकौं बाधै हैं । तहां निर्वृत्त्यपर्याप्तक वादर पृथ्वी अप प्रत्येक वनस्पती वेंद्री तेंद्री चौंद्री सैनी असैनी तिर्यंच मनुष्यनिविषैं वा पर्याप्त नारकीनिविषैं वा पर्याप्त अपर्याप्त भवनत्रिकादि सहस्रार पर्यंत देवनिविषैं गुणतीसकानैं आदि दैकरि दोय ही बाधै है तिम तिउ । बहुरि पर्याप्त

२९ ३०

संज्ञी तिर्यंच मनुष्यविषैं देवगतियुत अठाईसकानैं आदि दैकरि तीन बांधै है–दे तिम तिउ। बहुरि पर्याप्त अपर्याप्त

२८ २९ ३०

आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत मनुष्यगति युत गुणतीसकेकौं ही बाधै हैं । बहुरि अनुदिश अनुत्तरनिविषैं सासादन है नाहीं । बहुरि मिश्ररुचिविषैं अठाईसकानैं आदि दैकरि दोय ही बाधै है। तहां पर्याप्त देव नारकीनिविषैं मनु- ७५४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

च्युत गुणतीसकेकौं ही बांधै है। तिर्यंच मनुष्यविषैं देवगतियुत अठाईसकेकौं ही बाधै है । अनुदिश अनुत्तरविषैं मिश्र है नाहीं। बहुरि मिथ्यारुचिविषैं कृष्णलेश्यावत् तेईसकानैं आदि देकरि छह स्थाननिकौं बाधै है। तहां निर्वृत्त्य पर्याप्त पर्याप्त नारकीनिविषैं छह पृथ्वीनिविषैं तिर्यंच मनुष्यगतियुत गुणतीस तीसकेकौं बाधैं है । सातवी पृथ्वीविषैं
७५६ तिर्यंचगतियुत ही दोऊनिकौं बाधै है । बहुरि तिर्यंचगतिविषैं लब्धि अपर्याप्त निर्वृत्त्यपर्याप्तक बादर सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु साधारण प्रत्येक वनस्पती वेंद्री तेंद्री चौंद्री असैनी सैनी तिर्यंच अर मनुष्यनिविषैं अठाईसका विना तेईसकानैं आदि देकरि पंचस्थान बांधै है। तहां विशेष—जो तेज वायुविषैं मनुष्यगतियुत पचीस गुणतीसका नाहीं बंधै है। बहुरि पर्याप्त असंज्ञी संज्ञी तिर्यंच वा मनुष्यनिविषैं तेईसकानैं आदि देकरि छह बाधै । बहुरि लब्धि अपर्याप्त निर्वृत्त्यपर्याप्तक मनुष्यनिविषैं अठाईसका विना पांच ही बाधै है। बहुरि देवगतिविषैं निर्वृत्त्यपर्याप्त वा पर्याप्तविषैं भवनत्रिकादि ईशान पर्यंत तौ पचीस छवीस गुणतीस तीसके च्यारि बांधै है। अर सनत्कुमारादि दश स्वर्गनिविषैं गुणतीसकानैं आदि देकरि दोय बांधै हैं। आनतादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यंतनिविषैं गुणतीसका ही बांधै है। अनुदिश अनुत्तरनिविषैं मिथ्यादृष्टि है नाहीं। इहां प्रासंगिक गाथा कहिए है—

चदुरेक्कदुपण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता ।
तिण्णुवसमगे संते त्तियतियतियदोण्णि गच्छंति ॥ १ ॥ ५५६ कर्म

निज गुणस्थानकौं छांडि अनंतर समयविषैं किस किस गुणस्थानकौं प्राप्त होइ ? सो कहिए है—मिथ्यादृष्टी है सो सासादन प्रमत्त विना अप्रमत्तपर्यंत च्यारि गुणस्थाननिकौं प्राप्त हो है। सासादन है सो एक मिथ्यादृष्टिकौ ही प्राप्त हो है। मिश्र है सो मिथ्यादृष्टि अर असंयत इन दोयकौं प्राप्त हो है । असंयत अर देशसंयत ए दोऊ हैं ते प्रमत्त विना अप्रमत्तपर्यंत पांच पांचकौं प्राप्त हो हैं। प्रमत्त है सो अप्रमत्त पर्यंत छहकौं प्राप्त हो है । अप्रमत्त वा अपूर्वकरणादि तीन उपशम श्रेणीवाले आपतैं ऊपरले गुणस्थान चढैं वा नीचले गुणस्थान उतरैं, मरण होइ तौ देव पर्यायरूप असंयत होइ, ऐसैं तीन तीनकौं प्राप्त हो हैं । उपशांत कषाय उतरै तौ सूक्ष्मसांपरायविषैं आवै, ७५५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मरण होइ तौ देव असंयत होइ ऐसैं दोयकौं प्राप्त हो है। तहां गति अपेक्षा नारकी मिथ्यादृष्टी है सो मिश्र असंयतकौं, सासादन है सो मिथ्यादृष्टिहीकौं, मिश्र है सो मिथ्यादृष्टी असंयतकौं, असंयत है सो मिश्रपर्यंत तीनकौं प्राप्त हो है। बहुरि तिर्यंच मिथ्यादृष्टी है सो मिश्रादि देशसंयत पर्यंत तीनकौं, सासादन है सो मिथ्यादृष्टीहीकौं, मिश्र है सो मिथ्यादृष्टी असंयतकौं, असंयत है सो देश संयतपर्यंत च्यारिकौं, देशसंयत है सो असंयत पर्यंत च्यारिकौं प्राप्त हो है। बहुरि मनुष्य मिथ्यादृष्टी है सो सासादन प्रमत्त विना अप्रमत्त पर्यंत च्यारिकौं, सासादन है सो मिथ्यादृष्टीहीकौं, मिश्र है सो मिथ्यादृष्टि वा असंयतकौं, असंयत है सो प्रमत्त विना अप्रमत्त पर्यंत पांचकौं, देशसंयत है सो भी प्रमत्तविना अप्रमत्त पर्यंत पांचकौं, प्रमत्त है सो अप्रमत्त पर्यंत छहकौं, अप्रमत्त है सो प्रमत्त वा अपूर्व करण वा मरण भएं देव असंयतकौं, अपूर्वकरण है सो चढनेविषैं अनिवृत्तिकरणकौं उतरतैं अप्रमत्तकौं मरण भएं देव असंयतकौं, अनिवृत्तिकरण है सो चढनेविषैं सूक्ष्मसांपरायकौं उतरनेविषैं अपूर्वकरणकौं मरण भएं देव असंयतकौं, सूक्ष्मसांपराय है सो चढनेविषैं उपशांत कषायकौं उतरनेविषैं अनिवृत्ति करणकौं मरण भएं देव असंयतकौं, उपशांत कषाय है सो उतरनेविषैं सूक्ष्मसांपरायकौं मरण भएं देव असंयतकौं प्राप्त हो है। बहुरि क्षपक श्रेणीविषैं चढना ही है उतरना नाहीं तातैं अपूर्वकरण अनिवृत्ति करणकौं, अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपरायकौं, सूक्ष्मसांपराय क्षीणकषायकौं, क्षीणकषाय सयोगीकौं, सयोगी अयोगीकौं, अयोगी सिद्धपदकौं प्राप्त हो है। बहुरि देव मिथ्यादृष्टि है सो मिश्र अर असंयतकौं, सासादन है सो मिथ्यादृष्टिकौं, मिश्र है सो मिथ्यादृष्टि अर असंयतकौं, असंयत है सो मिश्रपर्यंत तीनकौं प्राप्त हो है। बहुरि संज्ञी अर आहारमार्गणाविषैं नामकर्मके सर्व बंधस्थान हैं। असंज्ञी अनाहारकविषैं तेवीसकानैं आदि देकरि छह ही हैं, तहां संज्ञीविषैं नारकीविषैं तौं गुणतीस, तीस के दोय हैं तिम तिउ मती। बहुरि तिर्यंचविषैं तीर्थंकर आहारक वर्जित छह स्थान है। बहुरि मनुष्यविषैं सर्व स्थान है। देव-
२९ ३०

विषैं अठाईसका विना पचीसकानैं आदि देकरि च्यारि हैं ए प ए प आउ तिम तिउ मती। ७५६
२५ २६ २९ ३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि असंज्ञी मार्गणाविषैं लब्धि अपर्याप्त निर्वृत्त्यपर्याप्त पर्याप्त बादर सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु साधारण प्रत्येक बेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीनिविषैं तीर्थंकर आहारक रहित छह स्थान हैं । बहुरि आहार मार्गणाविषैं देवनरकविषैं गुणतीस तीसके, तिर्यंचविषैं तेईसकानैं आदि देकरि छह, मनुष्यविषैं सर्व स्थान हैं । अनाहार मार्गणाविषैं विग्रहगतिविषैं देवनरकविषैं गुणतीस तीसके दोय, पूर्वोक्त गुणतीस प्रकार तिर्यंचनिविषैं तेईसकानैं आदि देकरि छह, तिनविषैं देवयुत अठाईसका असंयतही विषैं संभवै है। मनुष्यविषैं तेईसकानैं आदि देकरि छह—एअ २३

एपवितिचपम २५ एपआउ २ दे २८ वितिचपमदेती २९ वितिचपंउ ३० इहां सैनानीनिविषैं विशेषनिका आदि अक्षर जानना । ऐसैं नामकर्मके बंधस्थान मार्गणानिविषैं जानने, जातैं तत्त्वरूचि सम्यक्त्व है। तत्त्वनिका सम्यग्ज्ञान बोध है । तिन सहित जीवनिका न विराधना चारित्र है सोई मोक्ष मार्ग है ॥ ५५१ ॥ आगैं पुनरुक्त भंगनिकौं कहैं हैं—

णिरयादिजुदट्ठाणे भंगेणप्पप्पणम्मि ठाणम्मि ।
ठविदूणमिच्छभंगे सासणभंगा हु अत्थित्ति ॥ ५५२ ॥
अविरदभंगे मिस्सयदेसपमत्ताण सव्वभंगा हु ।
अत्थित्ति ते दु अवणिय मिच्छाविरदापमादेसु ॥५५३॥ जुम्मं।

निरयादियुतस्थाने भंगेनात्मात्मनि स्थाने ।
स्थापयित्वा मिथ्यभंगे सासनभंगा हि अस्तीति ॥ ५५२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अविरतभंगे मिश्रकदेशप्रमत्तानां सर्वभंगा हि ।
अस्तीति तांस्तु अपनीय मिथ्याविरताप्रमादेषु ॥ ५५३ ॥

जी० प्र०—नारकादिगतियुतस्थानानि स्वस्वभंगैः सह स्वस्वगुणस्थाने संस्थाप्य तन्मिथ्यादृष्टिबंधस्थानभंगेषु सासादनबंधस्थानभंगाः खलु संतीति कारणात् । पुनः असंयतबंधस्थानभंगेषु मिश्रदेशसंयतप्रमत्तबंधस्थानसर्वभंगाः खलु संतीति कारणाच्च तान् सासादनभंगान् मिथ्यादृष्टिभंगेषु मिश्र देशसंयतप्रमत्तभंगान् असंयतभंगेषु चापनीय मिथ्यादृष्ट्यविरताप्रमत्तेषु बंधस्थानभंगा भवंति । संदृष्टिः—मिथ्यादृष्टेर्नरक २८/१ तिर्यग् २३/१ २५/८ २६/८ २९/४६०८ ३०/४६०८ मनुष्य २९/४६०८ २५/८ देवगतियुतानि २८/८ । सासादनस्य नरकगतियुतं नास्ति । तिर्यग् २९/३२०० ३०/३२०० मनुष्य २९/३२०० देवगतियुतानि २८/८ । मिश्रासंयतयोर्नैच नरकतिर्यग्गतियुतानि । मिश्रस्य मनुष्य २९/८ देवगतियुते २८/८ असंयतस्य मनुष्य २९/८ ३०/८ देव २८/८ २९/८ गतियुतानि । देशसंयतस्य प्रमत्तस्य च केवलदेवगतियुते २८/८ २९/८ ॥ ५५२–५५३ ॥

सं० च०—नरक आदि गतियुत स्थान तिनकौं अपने अपने भंगनिकरि सहित अपने अपने गुणस्थाननिविषैं स्थापने । तहां मिथ्यादृष्टिके बंधस्थाननिके भंगनिविषैं सासादनके बंधस्थाननिके भंग आयगए अर असंयतके बंधस्थाननिके भंगनिविषैं मिश्र देशसंयत प्रमत्तके बंधस्थाननिके भंग आय गए जातैं इनिके भंगनिकैं परस्पर समानता पाइए है तातैं सासादनिके भंगनिकौं घटाइकरि अर मिश्र देशसंयत प्रमत्तके भंग घटाइकरि मिथ्यादृष्टि असंयत प्रमत्तविषैं बंधस्थाननिके भंग हो हैं । तहां मिथ्यादृष्टिविषैं नरकयुत अठाईसका स्थानविषैं भंग एक है । तिर्यंच गतियुत तेईसकाविषैं एक, पचीसकाविषैं आठ, छवीसका विषैं आठ, गुणतीसका विषैं छियालीससै आठ, तीसकाविषैं छियालीससै आठ भंग हैं । मनुष्ययुत पचीसकाविषैं एक गुणतीसकाविषैं छियालीससै आठ भंग हैं । देवगतियुत अठाईसकाविषैं आठ भंग हैं । बहुरि सासादनविषैं नरक गतियुत नाहीं है । तिर्यंचगतियुत गुणतीसकाविषैं वत्तीससै, तीसकाविषैं वत्तीससै, मनुष्यगतियुत गुणतीसकाविषैं वत्तीससै, देवगतियुत अठाईसकाविषैं आठ भंग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं। बहुरि मिश्र असंयतविषैं नरक तिर्यंच गतियुत स्थान नाहीं हैं तातैं मिश्रविषैं मनुष्यगतियुत गुणतीसकाविषैं "च्यारि भंग हैं। देवयुत अठाईसकाविषैं आठ हैं। बहुरि असंयतविषैं मनुष्ययुत गुणतीस तीसका देवयुत अठाईस गुणतीसकाविषैं च्यारि भंग हैं। देवयुत अठाईस गुणतीस गुणतीस तीसका इन च्यारयोंविषैं आठ आठ भंग हैं"(१) देश संयत प्रमत्तविषैं देवयुत अठाईस गुणतीसकाविषैं आठ आठ भंग हैं ॥ ५५२–५५३ ॥

भुजगारा अप्पदरा अवट्ठिदावि य सभंगसंजुत्ता।
सव्वपरट्ठाणेण य णेदव्वा ठाणबंधम्मि ॥ ५५४ ॥

भुजाकारा अल्पतरा अवस्थिता अपि च स्वभंगसंयुक्ताः।
सर्वपरस्थानेन च नेतव्याः स्थानबंधे ॥ ५५४ ॥

तद्बंधा भुजाकारा अल्पतरा अवस्थिताः, चशब्दादवक्तव्याश्चेति चत्वारः, स्वस्वभंगसंयुक्ता नामस्थानबंधविषये स्वस्थानेन परस्थानेन सर्वपरस्थानेन च सह नेतव्याः ॥ ५५४ ॥ तानि स्वस्थानादीनि लक्षयति—

सं० चं०–ते पूर्वोक्त बंध हैं ते भुजाकार १ अल्पतर १ अवस्थित १ चकारतैं अवक्तव्य १ ऐसैं च्यारि प्रकार हैं ते अपने अपने भंगनिकरि संयुक्त नामकर्मके बंधस्थाननिविषैं स्वस्थान वा परस्थान वा सर्वपरस्थानकरि ल्यावने ॥ ५५५ ॥ तिन स्वस्थानादिकनिका लक्षण कहैं हैं—

अप्पपरोभयठाणे बंधट्ठाणाण जो दु बंधस्स।
सट्ठाण परट्ठाणं सव्वपरट्ठाणमिदि सण्णा ॥ ५५५ ॥

आत्मपरोभयस्थानानि बंधस्थानानां यत्तु बंधस्य।
स्वस्थानं परस्थानं सर्वपरस्थानमिति संज्ञा ॥ ५५५ ॥

१ यहां से लेकर कुछ पाठ संस्कृत टीकाके पाठसे अधिकसा प्रतीत होता है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी॰ प्र॰—आत्मस्थानं स्वगुणस्थानं, परस्थानं परगुणस्थानं, उभयस्थानं परगतिपरगुणस्थानं। अस्मिंस्त्रये यत्तु मिथ्यादृष्ट्यसंयताप्रमत्तबंधस्थानसंबंधी भुजाकारादिबंधः स क्रमेण स्वस्थानभुजाकारादिः परस्थानभुजाकारादिः सर्वपरस्थानभुजाकारादिरितिसंज्ञः स्यात् ॥ ५५५ ॥

सं॰ चं॰—आत्मस्थान कहिए विवक्षित निज गुणस्थान अर परस्थान कहिए तिस विवक्षित गुणस्थानतैं अन्य गुणस्थान अर उभयस्थान कहिए अन्य ही गति अर अन्य ही गुणस्थान सो इन तीनोंविषैं मिथ्यादृष्टी असंयत अप्रमत्तके बंधस्थान संबंधी भुजाकारादिक बंध सो अनुक्रमतैं स्वस्थानभुजाकारादिक परस्थान भुजाकारादिक, सर्व परस्थान भुजाकारादिक ऐसी तीन संज्ञा धारक हो हैं ॥ ५५५ ॥

चदुरेक्कदुपण पंच य छत्तिगठाणाणि अप्पमत्तंता।
तिसु उवसमगे संतेत्ति य तियतिय दोण्णि गच्छंति ॥५५६॥

चतुरेकद्विपंच पंचच षट्त्रिकस्थानान्यप्रमत्तांताः।
त्रिषु उपशामके शांत इति च त्रिकत्रिकं द्वे गच्छंति ॥ ५५६ ॥

जी॰ प्र॰—मिथ्यादृष्टयः स्वस्वगुणस्थानं त्यक्त्वा अप्रमत्तांताः क्रमेण चत्वार्येकं द्वे पंच पंच षट् त्रीणि गुणस्थानानि गच्छंति। अपूर्वकरणादि त्र्युपशमकास्त्रीणि त्रीणि, उपशांतकषाया द्वे ॥ ५५६ ॥ तानि गुणस्थानानि कानीति चेदाह—

स॰ चं॰—मिथ्यादृष्ट्यादिक निज निज गुणस्थानकौं छोडैं अनुक्रमतैं च्यारि एक दोय पांच पांच छह तीन गुणस्थानकनिकौं अप्रमत्तपर्यंतवाले प्राप्त हो हैं। बहुरि अपूर्वकरणादिक तीन उपशमवाले तीन तीनकौं, उपशांतकषायवाले दोय गुणस्थानकनिकौं प्राप्त हो हैं ॥ ५५६ ॥ ते गुणस्थान कौंन? सो कहैं हैं—

सासणपमत्तवज्जं अपमत्तंतं समल्लियइ मिच्छो।
मिच्छत्तं बिदियगुणो मिस्सो पढमं चउत्थं च ॥ ५५७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अविरदसम्मो देसो पमत्तपरिहीणमप्पमत्तंतं ।
छट्ठाणाणि पमत्तो छट्ठगुणं अप्पमत्तो दु ॥ ५५८ ॥ जुम्मं ।

सासनप्रमत्तवर्ज्यमप्रमत्तांतं समाश्रयति मिथ्यः ।
मिथ्यात्वं द्वितीयगुणो मिश्रः प्रथमं चतुर्थं च ॥ ५५७ ॥
अविरतसम्यो देशः प्रमत्तपरिहीनमप्रमत्तांतं ।
षट्स्थानानि प्रमत्तः षष्ठगुणमप्रमत्तस्तु ॥ ५५८ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टिः सासादनप्रमत्तं वर्जित्वा मिश्राद्यप्रमत्तांतानि चत्वारि गुणस्थानानि समाश्रयति । द्वितीयगुणः सासादनः मिथ्यात्वं । मिश्रः प्रथमं चतुर्थं च । अविरतो देशविरतश्च प्रमत्तपरिहीनाप्रमत्तांतानि पंच । प्रमत्तः— अप्रमत्तांतानि षट् । अप्रमत्तः षष्ठं । तुशब्दात् उपशमकक्षपकापूर्वकरणं देवासंयतं च ॥ ५५७–५५८ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टी है सो सासादन प्रमत्तकौं वर्जिकरि मिश्रादिक अप्रमत्त पर्यंत च्यारि गुणस्थाननिकौं प्राप्त हो है । बहुरि दूसरा सासादन गुणस्थानवर्ती सो मिथ्यादृष्टिहीकौं प्राप्त हो है । बहुरि मिश्र है सो पहिला अर चौथा गुणस्थाननिकौं प्राप्त हो है । बहुरि असंयत देशसंयत है सो प्रमत्त विना अप्रमत्तपर्यंत पांच पांच गुणस्थाननिकौं प्राप्त हो है । बहुरि प्रमत्त है सो अप्रमत्त पर्यंत छहकौं प्राप्त हो है । बहुरि अप्रमत्त छठे गुणस्थानकौं अर तु शब्दतैं उपशमक क्षपक अपूर्वकरणकौं वा मरण भएं देव असंयतको प्राप्त हो है ॥ ५५७–५५८ ॥

उवसामगा दु सेढिं आरोहंति य पडंति य कमेण ।
उवसामगेसु मरिदो देवतमत्तं समल्लियई ॥ ५५९ ॥

उपशामकास्तु श्रेणिमारोहयंति च पतंति च क्रमेण ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपशामकेषु मृतो देवतमत्वं समाश्रति ॥ ५५१ ॥

अपूर्वकरणाद्युपशामका उपशमश्रेणिं क्रमेणारोहंत्यवरोहंति च । उपशामकेषु मृता देवमहर्द्धिकत्वं समाश्रयंति ॥ ५५९ ॥ उपशमश्रेण्यां क म्रियंते ? इति चेदाह—

स० चं०—अपूर्वकरणादिक उपशमश्रेणीवाले उपशमश्रेणीकौं अनुक्रमतैं चढै हैं अर अनुक्रमतैं ही उतरै हैं। बहुरि उपशम श्रेणीविषैं मरे हूए महर्द्धिक देव हो हैं। "तहां एक ऊपरला गुणस्थान चढनेका एक नीचला गुणस्थान उतरनेका मरण भएं एक देव असंयत ऐसैं तीन तीन स्थाननिकौं अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपराय प्राप्त हो हैं। उपशांत कषायतैं चढै नाही। तातैं एक पडनेका सूक्ष्मसांपराय अर मरण भएं देव असंयत इन दोयहीकौं प्राप्त हो हैं" ॥ ५५१ ॥ उपशम श्रेणीविषैं मरण कहां हो है ? सो कहनेके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

"मिस्सा आहारस्स य खवगा चडमाणपढमपुव्वा य ।

(१)

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
मरणं	मरणं	०	मरणं	मरणं	मरण	मरणं	उ.म क्ष.न	उ.म क्ष.न	उ.म क्ष.न	उ.म	०	०	मरणं

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
गति ४	गति ३	०	गति ४	दे	दे	दे	दे	दे	दे	अह मिंद्राः	०	०	शिव गतिः

उपशांतगुणश्रेण्यां येषां मृत्युः प्रजायते । अहमिंद्रा भवंत्यंते सर्वार्थसिद्धिसद्मनि ।
मिथ्यात्वेऽविरते मृत्वा जीवा यांति चतुर्गतिं । सासादने विना श्वभ्रं तिर्यगादिगतित्रयं ॥ २ ॥
अयोगे मरणं कृत्वा भव्या यांति शिवालयं मृत्वा देवगतिं यांति शेषेषु सप्तसु ध्रुवं ॥ ३ ॥
मिश्रे क्षिणे सयोगे च मरणं नास्ति देहिनां । अन्यत्र मरणं प्रोक्तं शेषत्रिक्षपकैर्विना ॥ ४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पढमुवसम्मा तमतमगुणपडिवण्णा य ण मरंति ॥ ५६० ॥

मिश्राहाराश्रयकाः क्षपकाः चटमानप्रथमापूर्वाश्च ।
प्रथमोपशमसम्यक्त्वास्तमस्तमोगुणप्रतिपन्नाश्च न मरंति ॥ ५६० ॥

जी० प्र०—मिश्रगुणस्थानवर्तिन आहारकमिश्रकाययोगिनः क्षपका आरुह्यमाणोपशमकापूर्वकरणप्रथमभागाः प्रथमोपशमसम्यक्त्वाः महातमःप्रभोत्पन्नसासादनमिश्रासंयताश्च न म्रियंते ॥ ५६० ॥

स० चं०—मिश्र गुणस्थानवर्ती अर निर्वृत्त्यपर्याप्त अवस्थारूप मिश्रकाययोगी अर क्षपकश्रेणीवाले अर चढतैं अपूर्वकरण उपशमकका प्रथमभागवाले अर प्रथमोपशम सम्यक्त्वके धारक अर महातमप्रभा पृथ्वीके सासादन मिश्र असंयत नारकी ए मरणकौं प्राप्त न हो हैं ॥ ५६० ॥

अणसंजोजिदमिच्छे मुहुत्तअंतं तु णत्थि मरणं तु ।
किदकरणिज्जं जाव दु सव्वपरट्ठाण अट्ठपदा ॥ ५६१ ॥"

अनसंयोगे मिथ्ये मुहूर्तांतरिति नास्ति मरणं तु ।
कृतकरणीयं यावत्तु सर्वपरस्थानान्यष्टपदानि ॥ ५६१ ॥

विसंयोज्यानंतानुबंधिचतुष्कं मिथ्यात्वं प्राप्तोंतर्मुहूर्तं यावत् दर्शनमोहक्षपकश्च कृतकृत्यत्वं यावत्तावन्न म्रियते ॥ ५६१ ॥ कृतकृत्यं बद्धायुष्कं-प्रति सर्वपरस्थानानामर्थवंति पदान्याह—

स० चं०—अनंतानुबंधीका विसंयोजनकरि जो मिथ्यात्वकौं प्राप्त होय ताका अंतर्मुहूर्त पर्यंत मरण नाहीं है । बहुरि दर्शनमोहका क्षय करनेवाला है सो यावत् कृतकृत्यपणा होय तावत् मरै नाहीं ॥ ५६१ ॥ कृतकृत्यपणां भएं पीछैं मरै सो बद्धायु कृतकृत्य प्रति पूर्वोक्त तीन स्थाननिविषैं सर्वपरस्थाननिका अर्थवान पद हैं तिनकौं कहैं हैं—

१ ५६०—५६१ तमे गाथे क्षपकरूपेण पूर्वमपि समुल्लिखिते ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवेसु देवमणुवे सुरणरतिरिये चउग्गईसुंपि ।
कदकरणिज्जुप्पत्ती कमसो अंतोमुहुत्तेण ॥ ५६२ ॥

देवेषु देवमनुष्ये सुरनरतिरश्चि चतुर्गतिष्वपि ।
कृतकरणीयोत्पत्तिः क्रमशोऽतर्मुहूर्तेन ॥ ५६२ ॥

जी० प्र०—कृतकृत्यवेदककालोंतर्मुहूर्तः । तस्मिंश्चतुर्भागीकृते क्रमेण प्रथमभागांतर्मुहूर्तेन मृतो दिविजे जायते । द्वितीयभागांतर्मुहूर्तेन मृतो देवमनुष्ययोः, तृतीयभागांतर्मुहूर्तेन मृतो देवमनुष्यतिर्यक्षु, चतुर्थभागांतर्मुहूर्तेन मृतश्चतुर्गतिष्वप्येकत्र ॥

स० चं०—कृतकृत्यवेदक काल अंतर्मुहूर्त है ताका च्यारि भाग कीजिए तहां क्रमतैं प्रथम भागका अंतर्मुहूर्तकरि मर्या हूवा देवविषैं उपजै है । दूसराका देवविषैं वा मनुष्यविषैं, तीसराका देव वा मनुष्य वा तिर्यंचविषैं, चौथा भागका देव वा मनुष्य वा तिर्यंच वा नरकनिविषैं एकविषैं उपजै है ॥ ५६२ ॥

तिविहो दु ठाणबंधो भुजगारप्पदरवट्ठिदो पढमो ।
अप्पं बंधंतो बहुबंधे बिदियो दु विवरीयो ॥ ५६३ ॥
तदियो सणामसिद्धो सव्वे अविरुद्धठाणबंधभवा ।
ताणुप्पत्तिं कमसो भंगेण समं तु वोच्छामि ॥ ५६४ ॥जुम्मं ।

त्रिविधस्तु स्थानबंधो भुजाकारात्पतरावस्थितः प्रथमः ।
अल्पं बध्नन् बहुबंधे द्वितीयस्तु विपरीतः ॥ ५६३ ॥
तृतीयः स्वनामसिद्धः सर्वे अविरुद्धस्थाबंधभवाः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेषामुत्पत्तिं क्रमशो भंगेन समं तु वक्ष्यामि ॥ ५६४ ॥

जी० प्र०–तु–पुनः नामस्थानबंधस्त्रिधा। भुजाकारोऽल्पतरोऽवस्थितश्चेति। तत्र प्रथमोल्पप्रकृतिकं बध्नतो बहुप्रकृतिकबंधे स्यात्। तु-पुनः द्वितीयः बहुप्रकृतिकं बध्नतोऽल्पप्रकृतिकबंधे स्यात्। तृतीयः स्वनामतः सिद्धः स्यात् अवस्थितरूपत्वात्। ते सर्वे भुजाकारादयः अविरुद्धस्थानसंभूता भवंति॥ ५६३–५६४ ॥ तदुत्पत्तिं पुनः क्रमेण भंगैः सह वक्ष्यामि तद्यथा—

स० चं –बहुरि नामकर्मके बंधस्थान तीन प्रकार हैं भुजाकार १ अल्पतर १ अवस्थित १ तहां पहिलैं थोरी प्रकृतिनिकौं बांधे तापीछैं बहुत प्रकृतिनिकौं बाधै तहां पहिला भुजाकार बंध कहिए। बहुरि पहलैं बहुत प्रकृतिनिकौं बाधे ता पीछैं थोरी प्रकृतिनिकौं बाधै तहां दूसरा अल्पतर बंध कहिए है। बहुरि तीसरा अपने नामहीतैं सिद्ध है जितनी प्रकृतिका पूर्व समयविषैं बंध होइ तितनीका ही पीछैं अनंतर समयविषैं होइ तहां अवस्थित कहिए। ते सर्व भुजाकारादिक हैं ते अविरुद्ध बंधस्थाननिकरि उपजे हैं। तिनकी उत्पत्तिकौं क्रमतैं भंगनिकरि सहित कहौं हौं ॥ ५६३–५६४ ॥ सो कहिए है—

भूबादरतेवीसं बंधंतो सव्वमेव पणुवीसं।
बंधदि मिच्छाइट्ठी एवं सेसाणमाणेज्जो ॥ ५६५ ॥

भूबादरत्रयोविंशं बध्नन् सर्वमेव पंचविंशतिं।
बध्नाति मिथ्यादृष्टिः एवं शेषाणामानेयः ॥ ५६५ ॥

जी० प्र०–भूबादराद्येकचत्वारिंशन्नामपदयुतस्थानेषु त्रयोविंशतिकान्येकादश। २३/११ पंचविंशतिकान्यष्टधापंचचतुर्धाषडेकधाषडिति सप्तति: २५/७० षड्विंशतिकान्यष्टधाचत्वारीति द्वात्रिंशत् २६/३२ अष्टाविंशतिकादीन्यष्टधैकमिति नव २८/९ नवविंशतिकान्यष्टधाचत्वारि चतुःसहस्रषट्शतच्छताष्टधा द्वे इत्येतावंति २९/९२४८ त्रिंशत्कान्यष्टधा चत्वारि चतुःसहस्रषट्छताष्टाधिकमित्येतावंति ३०/४६४० अमूनि मिथ्यादृष्टिबंधस्थानानि, अ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

त्रैकं भूत्वा बादरयुतत्रयोविंशतिकं बध्नन् सप्तति पंचविंशतिकानि बध्नाति तदैकादशत्रयोविंशतिकानि बध्नन् कति पंचविंशतिकानि बध्नाति ? । एवं शेषषड्विंशतिकादिष्वप्यानेतव्यं । तत्संदृष्टिः—

प्र	फ	इ
२३ १	३० ४६४०	२३ ११
२३ १	२९ ९२४८	२३ ११
२३ १	२८ ९	२३ ११
२३ १	२६ ३२	२३ ११
२३ १	२५ ७०	२३ ११

प्र	फ	इ
२५ १	३० ४६४०	२५ ७०
२५ १	२९ ९२४८	२५ ७०
२५ १	२८ ९	२५ ७०
२५ १	२६ ३२	२५ ७०

प्र	फ	इ
२६ १	३० ४६४०	२६ ३२
२६ १	२९ ९२४८	२६ ३२
२६ १	२८ ९	२६ ३२

प्र	फ	इ
२८ १	३० ४६४०	२८ ९
२८ १	३० ९२४८	२८ ९

प्र	फ	इ
२९ १	३० ४६४०	२९ ९२४८

अत्र पंचस्थानेषु पृथक्पृथक्स्वस्वफलभूतभंगराशीनेकीकृत्य स्वस्वैकैकेच्छाराशिभंगसंख्यया गुणिते आद्यत्रैराशिकपंचके गुणिते आद्यत्रैराशिकपंचके गुण्यं त्रयोदशसहस्रनवशतनवनवतयः, गुणकारः एकादश १३९९९ । ११ । तदनंतरत्रैराशिकचतुष्के गुण्यं त्रयोदशसहस्रनवशतैकान्नत्रिंशतः, गुणकारः सप्ततिः १३९२९ । ७० । तदनंतरत्रैराशिकत्रये त्रयोदशसहस्राष्टशतसप्तनवतयः । गुणकारो द्वात्रिंशत् । १३८९७ । ३२ । तदनंतरत्रैराशिकद्वये गुण्यं त्रयोदशसहस्राष्टशताष्टाशीतयः । गुणकारो नव । १३८८८ । ९ । नवविंशतिके गुण्यं चतुःसहस्रषट्छतचत्वारिंशतः । गुणकारो नवसहस्रद्विशताष्टचत्वारिंशतः ४६४० । ९२४८ । गुण्यगुणकारे गुणिते त्रयोविंशकस्यैकलक्षत्रिपंचाशत्सहस्रनवशतैकान्नवतयः २३/१५३९८९ पंचविंशतिकस्य नवलक्षपंचसप्ततिसहस्रत्रिंशतः २५/९७५०३० षड्विंशतिकस्य चतुर्लक्षचतुश्चत्वारिंशत्सहस्रसप्तशतचत्वारि २६/४४४७०४ अष्टाविंशतिकस्यैकलक्षचतुर्विंशतिसहस्रनवशतद्वानवतयः २८/१२४९९२ नवविंशतिकस्य चतुष्कोट्येकान्नत्रिंशल्लक्षदशसहस्रसप्तशतविंशतयः २९/४२९१०७२० ॥५६५॥

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—वादर पृथ्वी कायादिक इकतालीस पद पूर्वै कहे थे तिनविषैं भंगनि सहित स्थान कहिए है। तहां अपर्याप्त पृथ्वी अप तेज वायु साधारण इनके सूक्ष्म वादर अर प्रत्येक ऐसैं एकेंद्रीके ग्यारह भेदनिकरि तेईसका बंधस्थान ग्यारह प्रकार है। तहां भंग एक एक ही है तातैं ग्यारह भए। बहुरि पचीसका स्थानविषैं वादर पर्याप्त पृथ्वी अप तेज वायु प्रत्येक भेदरूप पंच तिनविषैं तौ स्थिर शुभ यश युगलतैं भए आठ आठ भंग पाइए तिनके चालीस भए। बहुरि पर्याप्त वादर साधारण अर सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु साधारण इन रूप छहविषैं स्थिर शुभ युगलतैं च्यारि च्यारि भंग पाइए तिनके चौईस भए। बहुरि अपर्याप्त वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी संज्ञी पंचेंद्री तिर्यंच अर मनुष्य इन रूप छहविषैं अप्रशस्तनिकाही बंध है तातैं एक एक ही भंग है तिनके छह भए। ऐसैं सर्व पचीसका स्थानविषैं सत्तरि भेद भए। बहुरि छवीसका स्थानविषैं वादर पृथ्वी काय आताप युत अर उद्योतयुत दोय तौ ए अर उद्योतयुत अप् काय वनस्पती काय इन च्यारिरूपविषैं स्थिर शुभ यश युगलतैं आठ आठ भंग हैं तिनके सर्व छवीसके स्थानविषैं वत्तीस भेद भए। बहुरि अठाईसका स्थानविषैं देवगतियुतविषैं तौ तिन तीन युगलनितैं आठ भंग पाइए अर नरकगतियुतविषैं अप्रशस्तनिहीका बंध है तातैं एक ही भंग पाइए ऐसै अठाईसके स्थानविषै नव भेद जानने। बहुरि गुणतीसके स्थानविषैं पर्याप्त वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीरूप च्यारिविषैं तौ तिनही तीन युगलानितैं आठ आठ भंग तिनके वत्तीस अर तिर्यंचगातियुत मनुष्यगतियुत इन दोयविषैं प्रत्येक संस्थान संहनन सप्त युगलनितैं छियालैं ससै आठ भंग तिनके वाणवैसै सोला ऐसैं गुणतीसके स्थानविषैं वाणवैसै अडतालीस भेद भए। बहुरि तीसके विषैं उद्योतयुत पर्याप्त वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीयुत च्यारि विषैं तौ तिनही तीन युगलानितैं आठ आठ भंग तिनके वत्तीस, अर संज्ञी तिर्यंच उद्योतयुत एकविषैं छियालीससै आठ भंग ऐसैं तीसके स्थानविषैं छियालीससै चालीस भेद भए ए मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं बंधस्थान हैं सो इनतैं भुजाकारादिक नानाकालकी अपेक्षा कहिए है—

सो पहिलैं तेईसका स्थानकौं बाधता था पीछैं पचीसकानै आदि देकरि बाधै तहां भुजाकार बंध होइ तहां वादर पृथ्वी काययुत तेवीसके एक भेदकौं बाधता पीछैं पचीसकानैं आदि देकरि स्थाननिके सर्व भेदानिकौं बाधै

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Nara, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेवीसकेके ग्यारह भेदनिकौं बाधता कितने भेदनिकौं बाधैं ? ऐसैं पंच त्रैराशिक करने तिन पंच त्रैराशिकनिविषैं प्रमाणराशि तौ तेवीसकाका एक ही भेद सर्वत्र जानना। बहुरि फलराशि अनुक्रमतैं पचीसकेके सत्तरि भेद, छवीसकेक वत्तीस भेद, अठाईसकेके नव भेद, गुणतीसकेके वाणवैसै अडतालीस भेद, तीसकेके छियालीससै चालीस भेद। बहुरि इच्छाराशि सर्वत्र तेवीसके ग्यारह भेद सो फलकौं इच्छाकरि गुणें प्रमाणका भाग दीएं ए सब भेदानिका प्रमाण हो है सो सर्व इच्छाराशि ग्यारह ही है तातैं सर्व फलराशि ७०। ३२। ९। ९। २४८। ४६४०। का जोड दीएं तरह हजार नवसै निन्याणवै गुण्य भए, तिनकौं इच्छाराशिरूप ग्यारह गुणकारकरि गुणिए तब एकलाख तरेपन हजार नवसैं निवासी १५३९८९ भेद भए। प्रमाणराशि एकही है तिसका भाग दीएं भी तितने ही रहैं सो इतने तौ तेईसके भुजाकार भए। बहुरि पचीसका बंधकरि ता पीछैं छवीसकानैं आदि देकरि बाधै तब भुजाकार होइ सो एक भेदरूप पचीसकाका बंधकरि छवीस आदि सवनिके सर्वभेदानका बंध होइ तौ पचीसकेके सत्तरि भेदनिकरि कितने बंध हो है? ऐसैं च्यारि त्रैराशिक करने तिनविषैं प्रमाणराशि सर्वत्र पचीसकेका एक भेद फलराशि क्रमतैं छवीसकेके वत्तीस भेद, अठाईसकेके नव भेद, गुणतीसकेके वाणवैसै अडतालीस भेद, तीसकेके छियालीससै चालीस इच्छाराशि सर्वत्र पचीसकेक सत्तरि भेद सो सर्व फलराशिका जोड दीएं ३२। ९। ९। ९२४८। ४६४०। तरह हजार नवसै गुणतीस भए। तिनकौं इच्छाराशि सत्तरिकरि गुणिए तब नव लाख पिचहत्तरि हजार तीस भए सो इतने पचीसकेके भुजाकार जानने। बहुरि छवीसकाका बंध कर ता पीछैं अठाईस आदिकका बंध करै तब भुजाकार होइ सो छवीसकेका एक भेदका बंधकरि सर्व अठाईसका आदि सवनिके सब भेदनिका बंध करै तौ छवीसकेके वत्तीस भेदनिकरि कितने बंध भेद होंइ ? ऐसैं इहां तीन त्रैराशिक करने। तिनविषैं प्रमाणराशि तौ सर्वत्र छवीसकेका एक भेद, फलराशि क्रमतैं अठाईसकेका नव भेद, गुणतीसकेका वाणवैसै अठतालीस भेद तीसकेका छियालीससै चालीस भेद इच्छाराशि सर्वत्र छवीसके वत्तीस भेद सो सर्व फलराशिका जोड दीएं ९। ९२४८। ४६४०। तेरह हजार आठसै सित्याणवै होंइ तिनकौं इच्छाराशि वत्तीसकरि गुणैं च्यारि लाख चवालीस हजार सातसै च्यारि होइ सो इतने

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छवीसके भुजाकार जानने । बहुरि अठाईसकेका बंध कर तापीछैं गुणतीस तीस का बंध करै तब भुजाकार होइ सो एक प्रकार अठाईसकेका बंधकरि गुणतीस तीसके सब भेदनिका बंध करै तब नवप्रकार अठाईसकेकरि कितने बंध भेद होंइ? ऐसैं दोय त्रैराशिक करने। तिनविषैं प्रमाणराशि सर्वत्र अठाईसकेका एक भेद, फलराशि क्रमतैं गुणतीसकेका वाणवैसै अठतालीस भेद, तीसकेका छियालीससै चालीस भेद, इच्छाराशि सर्वत्र अठाईसकेका नव भेद, सो फलराशिका जोड दीएं ९२४८। ४६४०। तेरह हजार आठसै अठ्यासी तिनकौं इच्छाराशि नवकरि गुणैं एक लाख चौइस हजार नवसै वाणवै होंइ सो इतने अठाईसकेके भुजाकार हैं। बहुरि गुणतीसकेका बंध कर ता पीछैं तीसकेका बंध करै तब भुजाकार होइ सो गुणतीसकेके एक भेदकौं बंध करता तीसकेके सर्व भेदनिकौं बंध करै तौ गुणतीसकेके वाणवैसै अठतालीस भेदनिकरि केते बंध भेद होंइ ? ऐसैं एक त्रैराशिक भया तिसविषैं प्रमाणराशि गुणतीसकेका एक भेद, फलराशि तीसकेके छियालीससै चालीस भेद, इच्छाराशि गुणतीसकेके वाणवैसै अठतालीस भेद, सो फलराशि छियालीससै चालीसकौं इच्छाराशि वाणवैसै अठतालीसकरि गुणिए तब च्यारि कोडि गुणतीस लाख दश हजार सातसै वीस भेद होंइ सो इतने गुणतीसकेके भुजाकार भए ॥ ५६५ ॥

नाम कर्मके स्थाननिका भुजाकार बंध ल्यावनेकौ त्रैराशिक यंत्र

२३ १	३० ४६४०	२३ ११	२५ १	३० ४६४›	२५ ७०	२६ १	३० ४६४०	२६ ३२	२८ १	३० ४६४०	२८ ९	२९ १	३० ४६४०	२९ १२४८
२३ १	२९ ९२४८	२३ ११	२५ १	२९ ९२४८	२५ ७०	२६ १	२९ ९२४८	२६ ३२	२८ १	३० १२४८	२८ ९	प्रमाण	फल	इच्छा
२३ १	२८ ९	२३ ११	२५ १	२८ ९	२५ ७०	२६ १	२८ ९	२६ ३२	प्रमाण	फल	इच्छा			
२३ १	२६ ३२	२३ ११	२५ १	२६ ३२	२५ ७०	प्रमाण	फल	इच्छा						
२३ १	२५ ७०	२३ ११	प्रमाण	फल	इच्छा									
प्रमाण	फल	इच्छा												

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेवीसट्ठाणादो मिच्छत्तीसोत्ति बंधगो मिच्छो ।
णवरि हु अट्ठावीसं पंचिंदियपुण्णगो चेव ॥ ५६६ ॥

त्रयोविंशतिस्थानान्मिथ्यात्वत्रिंशदिति बंधको मिथ्यः ।
नवरि हि अष्टाविंशं पंचेंद्रियपूर्णकश्चैव ॥ ५६६ ॥

जी॰ प्र॰—एतान् त्रयोविंशतिकादितः मिथ्यादृष्टि त्रिंशत्कातं उक्तभुजाकारान्मिथ्यादृष्टिर्बध्नाति, किंतु खलु तत्राष्टाविंशतिकं पर्याप्तपंचेंद्रिय एव बंध्नाति ॥ ५६६ तथा भोगभूमेस्तानाह—

स॰ चं॰—ए तेवीसका आदितैं लगाय मिथ्यादृष्टिविषैं बंध योग्य तीसके स्थानपर्यंतनिके कहे भुजाकार तिनकूं मिथ्यादृष्टी जीव बांधै है। संदृष्टि—

२३	२५	२६	२८	२९
१५३९८९	९७५०३०	४४४७७४	१२४९९२	४२९१०७२०

तहां विशेष जो अठाईसकेकौं पर्याप्त पंचेंद्री ही बाधै है ॥ ५६६ ॥ तथा भोगभूमियाकैं तिनकौं कहैं हैं—

भोगे सुरट्ठवीसं सम्मो मिच्छो य मिच्छगअपुण्णे ।
तिरिउगतीसं तीसं णरउगुतीसं च बंधादि हु ॥ ५६७ ॥

भोगे सुराष्टविंशं सम्यो मिथ्यश्च मिथ्यकापूर्णे ।
तिर्यगेकोनत्रिंशत् नैकोन त्रिंशच्च बध्नाति हि ॥ ५६७ ॥

१

२३	।	१५३९८९
२५	।	९७५०३०
२६	।	४४४७७४
२८	।	१२४९९२
२९	।	४२९१०७२०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—भोगभूमौ पर्याप्तपंचेंद्रियः सम्यग्दृष्टिर्मिथ्यादृष्टिश्च चशब्दान्निर्वृत्त्यपर्याप्तसम्यग्दृष्टिश्च सुराष्टाविंशतिकं बध्नाति। निर्वृत्त्यपर्याप्त-मिथ्यादृष्टिः खलु तिर्यग्गतिनवविंशतिकत्रिंशत्के, मनुष्यगतिनवविंशतिकं च बध्नाति ॥ ५६७ ॥

स० चं०—भोगभूमिविषैं पर्याप्त पंचेंद्री सम्यग्दृष्टी वा मिथ्यादृष्टी चकारतैं निर्वृत्त्यपर्याप्त सम्यग्दृष्टी है सो देवगतियुत अठाईसकेकों ही बांधै है। बहुरि निर्वृत्त्यपर्याप्तक मिथ्यादृष्टी तिर्यंचगतियुत गुणतीस तीसकौं अर मनुष्यगतियुत गुणतीसकेकौं बांधै है ॥ ५६७ ॥

मिच्छस्स ठाणभंगा एयारं सदरि दुगुणसोल णवं।
अडदालं बाणउदी सदाण छादाल चत्तधियं ॥ ५६८ ॥

मिथ्यस्य स्थानभंगा एकादश सप्ततिः द्विगुणषोडश नव।
अष्टचत्वारिंशद्द्वानवतिः शतानां षट्चत्वारिंशच्चत्वारिंशदधिकं ॥ ५६८ ॥

जी० प्र०—प्रागुक्ता मिथ्यादृष्टेः स्थानभेदाः—त्रयोविंशतिकस्यैकादश, पंचविंशतिकस्य सप्ततिः, षड्विंशतिकस्य द्विगुणषोडश, अष्टाविंशतिकस्य नव, नवविंशतिकस्य द्वानवतिशताष्टचत्वारिंशः, त्रिंशत्कस्य षट्चत्वारिंशच्छतचत्वारिंशतः ॥ ५६८ ॥ अथाल्पतरभंगानाह—

स० चं०—पूर्वोक्तप्रकार मिथ्यादृष्टीके स्थान भेद तेवीसकेके ग्यारह, पचीसकेके सत्तरि, छवीसकेके दूणे सोला ताके वत्तीस, अठावीसकेके नव, गुणतीसकेके वाणवैसै अडतालीस तीसकेके छियालीससै चालीस जानने ॥ ५६८ ॥

आगैं अल्पतर भंगनिकौं कहै हैं—

१

३०	।	४६४०
२९	।	९-४८
२८	।	०००९
२६	।	००३२
२५	।	००७०
२३	।	००११

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विवरीयेणप्पदरा हौंति हु तेरासिएण भंगा हु ।
पुव्वपरट्ठाणाणं भंगा इच्छा फलं कमसो ॥ ५६९ ॥

विपरीतेनाल्पतरा भवंति हि त्रैराशिकेन भंगा हि ।
पूर्वापरस्थानानां भंगा इच्छा फलं क्रमशः ॥ ५६९ ॥

जी० प्र०—अल्पतरभंगाः खलु भुजाकारभंगार्थं कृतत्रैराशिकेभ्यो विपरीतत्रैराशिकैर्भवंति। कुतः ? तत्पूर्वस्थानभंगानामिच्छाराशित्वेन परस्थानभंगानां फलराशित्वेन च क्रमशो विधानात् । संदृष्टिः—

प्र	फ	इ												
३० १	२३ ११	३ ४६४०	प्र	फ	इ									
३० १	२५ ७०	३० ४६४०	२९ १	२३ ११	२९ ९२४८	प्र	फ	इ						
३० १	२६ ३२	३० ४६४०	२९ १	२५ ७०	२९ ९२४८	२८ १	२३ ११	२८ ९	प्र	फ	इ			
३० १	२८ ९	३० ४६४०	२९ १	२६ ३२	२९ ९२४८	२८ १	२५ ७०	२८ ९	२६ १	२३ ११	२६ ३२	प्र	फ	इ
३० १	२९ ९२४८	३० ४६४०	२९ १	२८ ९	२९ ९२४८	२८ १	२६ ३२	२८ ९	२६ १	२५ ७०	२६ ३२	२५ १	२३ ११	२५ ७०

अत्र त्रिंशत्के गुण्यं ९३७० । गुणाकारः ४६४० । नवविंशतिके गुण्यं १२२ गुणकारः ९२४८ । अष्टाविंशतिके गुण्यं ११३ गुणाकारः ९ षड्विंशतिके गुण्यं ८१ गुणाकारः ३२ पंचविंशतिके गुण्यं ११ गुणाकारः ७० गुण्यगुणकारे गुणिते त्रिंशत्कादिषु क्रमेण संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३०	४३४७६८००
२९	११२८२५६
२८	१०१७
२६	२५९२
२५	७७०

॥ ५६९ ॥ अथ भुजाकाराल्पतरादिभंगान् मिथ्यादृष्टेर्लघुकरणेनाह—

स० चं०—भुजाकार भंगनिके निमित्त जे त्रैराशिक कीए थे तिनकौं विपरीत त्रैराशिक कीएं अल्पतर भंग हो हैं जातैं पहले स्थानरूप भंगनिकौं इच्छाराशि कीएं पिछले स्थाननिके भंगनिकौं फलराशि कीएं अनुक्रमतैं भेद हो हैं। सो कहिए है—

तीसका बंध करता था सो गुणतीस आदिकका बंध करै तब अल्पतर होइ। तहां तीसकेका एक भेदका बंधकरि गुणतीस आदिकके सब भेदनिका बंध करै तौ छियालीससै चालीस तीसके भेदनिकरि केते बंध होंइ? इहां त्रैराशिक पंच करने, तिनविषैं प्रमाणराशि सर्वत्र तीसकेका एक भेद, फलराशि क्रमतैं गुणतीसकेका वाणवैसै अठतालीस, अठाईसकेका नव, छवीसकेका वत्तीस, पचीसकेका सत्तरि, तेवीसकेका ग्यारह, इच्छाराशि सर्वत्र तीसकेके छियालीससै चालीस भेद, सो फलराशिका जोड दीएं तरेणवैसै सत्तरि गुण्य होंइ, तिनकौं इच्छारूप छियालीससै चालीसकरि गुणिए तब च्यारि काडि चौंतीस लाख छिहंतरि हजार आठसै भए सो इतने तौ तीसकेके अल्पतर हैं। बहुरि गुणतीसकेका बंधकरि तापीछैं अठाईस आदिका बंध करै तब अल्पतर होंइ, सो गुणतीसकेका एकका बंधकरि सर्व अठाईसकेका आदिके भेद बंधैं तौ वाणवैसै अठतालीस भेदरूप गुणतीसकेके बंधकरि केते भेद होंइ? इहां च्यारि त्रैराशिक होंइ, तिनविषैं प्रमाणराशि सर्वत्र गुणतीसकेका एक भेद, फलराशि क्रमतैं अठाईसकेका नव, छवीसकेका वत्तीस, पचीसकेका सत्तरि, तेवीसकेके ग्यारह, इच्छाराशि सर्वत्र गुणतीसकेके वाणवैसै अठतालीस भेद सो फलराशिका जोड दीएं एकसौ वाईस तिनकौं इच्छाराशि वाणवैसै अठतालीसकरि गुणैं ग्यारह लाख अठाईस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हजार दोयसै छप्पन भेद हो हैं। सो इतने गुणतीसकेके अल्पतर हैं । बहुरि अठाईसकेका बंधकर तापीछैं छवीसकेका आदिका बंध करै तब अल्पतर होंइ सो अठाईसका एक भेदका बंधकरि सर्व छवीस आदिकके भेदनिका बंध करै तौ अठाईसकेके नव भेदनिकरि केते बंध होइ ? इहां तीन त्रैराशिक, तिनविषैं प्रमाणराशि सर्वत्र अठाईसकेका एक भेद, फलराशि क्रमतैं छवीसकेका वत्तीस, पचीसकेके सत्तरि, तेवीसकेके ग्यारह, इच्छाराशि सर्वत्र अठाईसकेके नव, तहां फलराशिका जोड दीएं एकसौ तेरह इनकौं इच्छाराशि नवकरि गुणें एक हजार सतरह हो हैं सो इतने अठाईसकेके अल्पतर हैं। बहुरि छवीसकेका बंधकर ता पीछैं पचीस तेवीसकेका बंध करै तब अल्पतर होंइ, सो छवीसकेका एक भेदका बंधकरि पचीस तेवीसके सर्व भेदनिकौं बाधै तौऊ छवीसके वत्तीस भेदनिकरि केते बंध भेद होंइ ? सो इहां दोय त्रैराशिक तिनविषैं सर्वत्र प्रमाणराशि छवीसका एक भेद, फलराशि क्रमतैं पचीसकेके सत्तरि तेवीसकेके ग्यारह इच्छाराशि सर्वत्र छवीसकेके वत्तीस तहां फलराशिका जोड इक्यासीकौं इच्छा वत्तीसकरि गुणें पचीससै वाणवै होंइ सो इतने छवीसकेके अल्पतर हैं। बहुरि पचीसकौं बाधता पीछैं तेवीसकौं बाधै तब अल्पतर होइ सो पचीसका एक भेद बांधकरि तेवीसके ग्यारह भेदनिकौं बाधै तौ सर्व पचीसकेके सत्तरि भेदनिकरि केते बंध भेद होंइ ? इहां एक त्रैराशिक तिसविषैं प्रमाणराशि पचीसकेके एक भेद फलराशि तेवीसकेके ग्यारह भेद इच्छाराशि पचीसकेके सत्तरि भेद सो फल सत्तरिकौं इच्छा ग्यारहकरि गुणें सातसै सत्तरि होंइ सो इतने पचीसकेके अल्पतर जानने ॥ ५६९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाण	फल	इच्छा	प्रमाण	फल	इच्छा	प्रमाण	फल	इच्छा	प्रमाण	फल	इच्छा	प्रमाण	फल	इच्छा
३०/१	२३/११	३०/४६४०												
३०/१	२५/७०	३०/४६४०	२६/१	२३/११	२६/६२४८									
३०/१	२६/३२	३०/४६४०	२६/१	२५/७०	२६/६२४८	२८/१	२३/११	२८/६						
३०/१	२८/६	३०/४६४०	२६/१	२६/३२	२६/६२४८	२८/१	२५/७०	२८/६	२६/१	२३/११	२६/३२			
३०/१	२६/६२४८	३०/४६४०	२६/१	२८/६	२६/६२४८	२८/१	२६/३२	२८/६	२६/१	२५/७०	२६/३२	२५/१	२३/११	२५/७०

आगैं एक भेद तिनका त्रैराशिकादिक विना थोरेमें ज्ञान होइ ऐसा विधान कहैं हैं—

लघुकरणं इच्छंतो एयारादीहिं उवरिमं जोग्गं।
संगुणिदे भुजगारा उवरीदो होंति अप्पदरा ॥५७०॥

लघुकरणमिच्छत एकदशादिभिरुपरिमं योग्यं।
संगुणिते भुजाकारा उपरितो भवंत्यल्पतराः ॥ ५७० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—लघुकरणमिच्छन् एकादशाद्यंकैरुपरितनांकयोगे संगुणिते भुजाकारबंधभंगा भवति। तद्यथा संदृष्टिः—

३० ।	४६४०
२९ ।	९२४८
२८ ।	९
२६ ।	२३
२५ ।	७०
२३ ।	११

एकादशभिः सप्तत्यादीनेकीकृत्य १३९९९ गुणिते त्रयोविंशतिकस्य २३। १५३९८९। द्वात्रिंशदादीनेकीकृत्य १३९२९ सप्तत्या गुणिते पंचविंशतिकस्य २५। ९७५०३० नवादीनेकीकृत्य १३८९७ द्वात्रिंशता गुणिते षड्त्रिंशतिकस्य २६। ४४४७०४। उपरिमस्थानद्वयभंगानेकीकृत्य १३८८८ नवभिर्गुणितेऽष्टाविंशतिकस्य २८। १२४९९२। अष्टचत्वारिंशदग्रद्वानवतिशतैरुपरितनचत्वारिंशदग्रषट्चत्वारिंशच्छतेषु गुणितेषु नवविंशतिकस्य २९। ४२९१०७२०। मिलित्वा मिथ्यादृष्टेः सर्वभुजाकारभंगा भवंति ४४६०९४३५। तदल्पतरभंगास्तु उपरितः त्रिंशत्कादि भंगैरधस्तनाधस्तनांकसंयोगैर्गुणिते सति भवंति। संदृष्टिः—

गुण्यं	गुणकारः	लब्धं	
६३७०	४६४०	३० ।	४३४७६८००
१२२	९२४८	२९ ।	११२८२५६
११३	९	२८ ।	१०१७
८१	३२	२६ ।	२५९२
११	७०	२५ ।	७७०

अमी पंच राशयो मिलिताः ४४६०९४३५ उभययोगः मिथ्यादृष्टेः सर्वावस्थितबंधभंगाः स्युः ८९२१८८७० ॥ ५७० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—थोरेमैं ज्ञान होइ ऐसा लघुकरणकौं बांधता विवेकी है सो ग्यारह आदि अंकनिकरि ऊपरिके अंक मिलाएं जो प्रमाण होइ ताकौं गुणैं भुजाकार हो है ऐसा जानहु । तहां सत्तरि वत्तीस नव, वाणवैसै अठतालीस, छियालीससै चालीसका, ७० । ३२ । ९ । ९२४८ । ४६४० । जोड देय १३३९९ । ग्यारहकरि गुणैं तेवीसके भुजा
७७७ कार १५३९८९ हो हैं । वत्तीस आदिका ३२ । ९ । ९२४८ । ४६४० । जोड देय १३९२९ सत्तरिकरि गुणैं पचीसकेके ९७५०३० हो है । नव आदिकका ९ । ९२४८ । ४६४० । जोड देय १३८९७ वत्तीसकरि गुणैं छवीसकेके ४४४७०४ हो है । ऊपरिके दाय स्थाननिके भंग ९२४८ । ४६४० तिनिका जोड देय १३८८८ । नवकरि गुणै अठाईसकेके १२४९९२ हो हैं । ऊपरिका छियालीससै चालीसकौं वाणवैसै अठतालीसकरि गुणैं गुणतीसकेके ४२९१०७२० हो हैं । ए सर्व मिलि मिथ्यादृष्टिके भुजाकार भंग हो है । बहुरि अल्पतर भंग ल्यावनेकौं ऊपरिका तीस आदिका स्थानका भंगनिकरि नीचेके सर्व भंगनिकौं जोडि गुणैं अल्पतर हो हैं । सो कथन ऊपरि करि आए हैं सो जानि लेना ।

यहु अल्पतर भंगनिका यंत्र

गुण्य	गुणकार	सर्वभंग
९३७०	४६४०	४३४७६८००
१२२	९२४८	११२८२५६
११३	९	१०१७
८१	३२	२५९२
११	७०	७७०

सो इन अल्पतरनिका जोड दीएं सर्व मिथ्यादृष्टिके अल्पतर हो हैं । बहुरि भुजाकार अल्पतर दोऊनिकौं ६७७
मिलाएं जो प्रमाण होइ तितने मिथ्यादृष्टिके अवस्थित भंग हैं ॥ ५७० ॥ ते कितने भए ? सो कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भुजगारप्पदराणं भंगसमासो समो हु मिच्छस्स।
पणतीसं चउणउदी सट्ठी चोदालमंककमे ॥ ५७१ ॥

भुजकाराल्पतरयोर्भंगसमासो समो हि मिथ्यस्य।
पंचत्रिंशत् चतुर्नवतिः षष्टिः चतुश्चत्वारिंशदंकक्रमेण ॥ ५७ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टेरुक्तो भुजाकारभंगसामासोऽल्पतरभंगसमासश्च खलु सदृशः। तर्हि किंसंख्यः ? अंकक्रमेण पंचत्रिंशच्चतुर्नवतिषष्टिचतुश्चत्वारिंशन्मात्रः ४४६०९४३५ ॥ ५७१ ॥ असंयतस्य तानाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं कहे भुजाकार अर अल्पतर तिन दोऊनिकी संख्या समान है। सो कितनी है ?—पैंतीस चौराणवै साठि चवालीस इतने अंक क्रमतैं माडैं च्यारि कोडि छियालीस लाख नव हजार च्यारिसै पैंतीस हो है सो इतनी संख्या है ४४६०९४३५। सो इतने भुजाकार हैं। इतने ही अल्पतर हैं। तिन दोऊनिकौं मिलाएं आठ कोडि बाणवै लाख अठारह हजार आठसै सत्तरि ८९२१८८७० होइ इतने अवस्थित भंग हैं। जातैं भुजाकार वा अल्पतर भंगनिविषैं जिस जिस प्रकृति भंगका बंध होइ तिसहीका बंध द्वितीयादिक समयविषैं जहां होइ तहां अवस्थित बंध हो है। इहां परस्पर भंगनिकौं गुणि भुजाकारादिक भंग ल्यावनेकाअभिप्राय यहु है जो एक एक भंगकरि अन्य भंगनिकी अपेक्षा भुजाकारादिक जानने ॥ ५७१ ॥ आगैं असंयतविषै तिनकौं कहैं है—

देवट्ठवीस णरदेवुगुतीस मणुस्सतीस बंधयदे।
तिछणवणवदुगभंगा तित्थविहीणा हु पुणरुत्ता ॥ ५७२ ॥

देवाष्टविंशं नरदेवैकोनत्रिंशत् मनुष्यत्रिंशत् बंधोऽयते।
त्रिषद्नवनवद्विकभंगास्तीर्थविहीना हि पुनरुक्ताः ॥ ५७२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—देवाष्टाविंशतिकनरदेवैकान्नत्रिंशत्कमनुष्यत्रिंशत्कबंधासंयते २८ । २९ । २९ । ३० (दे म दे म) त्रिषट्नवनवद्वि ३६९९२ मात्रभुजाकारा भवंति ॥ ५७२ ॥ तद्यथा—

स० चं०—देवगतियुत अठाईसकाविषैं वा मनुष्ययुत गुणतीसकाविषैं वा देवयुत गुणतीसकाविषैं वा मनुष्ययुत तीसकाविषैं तीन छह नव नव दोय इन अंकनिकरि छत्तीस हजार नवसै वाणवै भुजाकार हो हैं ॥ ५७२ ॥ इनविषैं तीर्थंकर रहित भंग हैं ते पुनरुक्त हैं मिथ्यादृष्टिके भंगविषैं आयगये सोई कहिए है—

देवट्ठवीसबंधे देवुगुतीसम्मि भंग चउसट्ठी ।

देवुगुतीसे बंधे मणुवत्तीसेवि चउसट्ठी ॥ ५७३ ॥

देवाष्टविंशबंधे देवैकोनत्रिंशति भंगाः चतुष्षष्टिः ।

देवैकोनत्रिंशति बंधे मानवत्रिंशत्यपि चतुष्षष्टिः ॥ ५७३ ॥

जी प्र०—देवाष्टाविंशतिकं वध्वा मनुष्यासंयतः तीर्थबंधं प्रारभ्य तद्युतदेवैकान्नत्रिंशत्कं वध्नाति तदा चतुःषष्टिः । पुनः तीर्थयुतदेवैकान्नत्रिंशत्कं वध्वा मनुष्यासंयतो देवासंयतो नारकासंयतो वा भूत्वा तीर्थयुतमनुष्यत्रिंशत्कं बध्नाति तदापि चतुष्षष्टिः ॥ ५७३ ॥ पुनः—

स० चं०—देवयुत अठाईसकौं बाधि मनुष्य असंयत तीर्थंकर बंधका प्रारंभ करै तब तीर्थ सहित गुणतीसकौं बाधै तब दोऊनिके आठ आठ भंगनिकौं परस्पर गुणैं चौसठि भंग भए, बहुरि तीर्थ देवसहित गुणतीसकौं बाधि मनुष्य असंयत पीछैं देव वा नारकी असंयत होइ तहां तीर्थ मनुष्ययुत तीसकौं बाधै । तहां भी दोऊनिके आठ आठ भंगनिकौं परस्पर गुणैं चौंसठि हो हैं ॥ ५७३ ॥

तित्थयरसत्तणारयमिच्छो णरऊणतीसबंधो जो ।

सम्मम्मि तीसबंधो तियछक्कडछक्कचउभंगा ॥ ५७४ ॥ ७७९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीर्थंकरसत्त्वनारकमिथ्यो नरैकोनात्रिंशबंधो यः ।
सम्यंचि त्रिंशबंधः त्रिकषट्काष्टषट्कचतुर्भंगाः ॥ ५७४ ॥

जी॰ प्र—यस्तीर्थसत्त्वनारकमिथ्यादृष्टिः यावदपूर्णशरीरस्तावदष्टाग्रषट्चत्वारिंशच्छतधानरनवविंशतिकबंधकः स शरीरपर्याप्तेरुपरि सम्यक्त्वं प्राप्य तीर्थयुतमनुष्यत्रिंशत्कं बध्नाति तदा चतुःषष्ट्यग्राष्टशतषट्त्रिंशत्सहस्री ३६८६४ मिलित्वासंयतभुजाकारभंगास्तावंतो भवंति । ३६९९२ ॥ ५७४ ॥ अथासंयतस्याल्पतरबंधभंगानाह—

स॰ चं॰—तीर्थंकरका सत्त्वसंयुक्त नारकी मिथ्यादृष्टी सो अपर्याप्त अवस्थाविषैं छियालीससै आठ भंगनिकरि मनुष्ययुत गुणतीसका बाधै पीछैं शरीर पर्याप्ति पूर्ण भएं सम्यक्त्वकौं पाइ तीर्थ मनुष्य सहित तीसकौं बाधै ताके आठ भंग सो इनि भंगनिकौं परस्पर गुणैं छत्तीस हजार आठसै चौसठि होंइ इनविषैं पूर्वोक्त एकसौ अठाईस मिलाएं छत्तीस हजार नवसै वाणवै असंयतविषैं भुजाकार हो है ॥ ५७४ ॥ आगैं असंयतविषैं अल्पतर भंगनिकौं कहै हैं—

बावत्तरि अप्पदरा देवुगुतीसा हु णिरयअडवीसं ।
बंधंत मिच्छभंगेणवगयतित्था हु पुणरुत्ता ॥ ५७५ ॥

द्वासप्ततिरल्पतरा देवैकोनात्रिंशत्तु निरयाष्टाविंशतिः ।
बध्नन् मिथ्यभंगेनापगततीर्था हि पुनरुक्ताः ॥ ५७५ ॥

जी॰ प्र॰—प्राग्बद्धनरकायुर्मनुष्यासंयतः तीर्थबंधं प्रारभ्य तीर्थकरदेवगतिनवविंशतिकं बध्नन्, नरकगतिगमनाभिमुखोऽन्तर्मुहूर्तं मनुष्यमिथ्यादृष्टिः सन् नरकगत्यष्टाविंशतिकं बध्नाति तदाष्टौ । पुनः देवो नारको वाऽसंयतः तीर्थयुतमनुष्यत्रिंशत्कं बध्नन्मृत्वा तीर्थकरत्वेन जनर्नीगर्भेऽवतीर्य तीर्थयुत-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवनवविंशतिकं बध्नाति तदा चतुःष्षष्टिः एवं द्वासप्ततिरल्पतरभंगा असंयते भवंति। तीर्थोनमनुष्यगतिनवविंशतिकं बध्वा देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नतः चतुःषष्टि-रल्पतरभंगास्ते पुनरुक्ताः प्राग्मिथ्यादृष्टावुक्तत्वात् ॥ ५७५ ॥ अथाप्रमादिषु भुजाकारबंधभंगानाह—

स० चं०—पूर्वै नारकायु जाकैं बंध्या ऐसा मनुष्य असंयत सो तीर्थंकरका प्रारंभकरि तीर्थ देव सहित गुणतीसकौं बाधै ताके आठ भंग, बहुरि पीछैं मरण समय नरककौं सन्मुख भया तहां अंतर्मुहूर्त मिथ्यादृष्टी होइ नरकगतियुत अठाईसकौं बाधै ताका एक भंग, इनकौं परस्पर गुणैं आठ भंग भए, बहुरि देव नारकं असंयत तीर्थ मनुष्ययुत तीसकेकौं बाधै ताके आठ भंग, पीछैं मरि तीर्थंकर पदवीरूप माताका गर्भविषैं अवतरै तहां तीर्थ देवसहित गुणतीसकेकौं बाधै ताके भी आठ भंग इनकौं परस्पर गुणैं चौसठि इनकौं जोडै बहत्तरि अल्पतर भंग असंयतविषैं हो हैं। तीर्थंकर रहित मनुष्यगतियुत गुणतीसकौं बाधि पीछैं देवयुत अठाईसकौं बाधै ताके चौसठि भंग पुनरुक्त हैं। पूर्वै मिथ्यादृष्टिके भंगनिविषैं आयगये तातैं न कहे ॥५७५॥ आगैं अप्रमत्तादिकविषैं भुजाकार भंगनिकौं कहैं हैं—

देवजुदेक्कट्ठाणे णरतीसे अप्पमत्तभुजयारा।
पणदालिगिहारुभये भंगा पुणरुत्तगा होंति ॥ ५७६ ॥

देवयुतैकस्थाने नरात्रिंशति अप्रमत्तभुजाकाराः।
पंचचत्वारिंशदेकाहारोभयेषु भंगाः पुनरुक्तका भवंति ॥ ५७६ ॥

१

असंयतस्य भुजाकाराः			असंयतस्याल्पतराः			असंयतयुतिः
६४	६४	३६८६४	८	६४	पुनरुक्त ६४	भुजा ३६९९२
दे २९ ८	म ३० ८	म ३० ८	न २८ १	दे २९ ८	दे २८ ८	अल्पतर ७२
दे २८ ८	दे २९ ८	म २९ ४६०८	दे २९ ८	म ३० ८	म २९ ८	अवस्थित३७०६४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टी प्र०—देवगतियुतैकस्थाने मनुष्यगतितीर्थयुतत्रिंशत्कस्थाने चाप्रमत्तभुजाकारबंधभंगा पंचचत्वारिंशत्स्युः ४५ । तीर्थेनाहारकद्वयेन तदुभयेन च युतस्थानत्रये भंगास्ते पुनरुक्ताः ॥ ५७६ ॥ तत्पंचचत्वारिंशत उपपत्तिमाह—

स० चं०—देवगतियुत एक स्थानविषैं वा मनुष्यगति तीर्थंकरयुत तीसका स्थानविषैं अप्रमत्त गुणस्थानविषैं पैंतालीस भुजाकार हो हैं। बहुरि तीर्थंकर सहित अर आहारक सहित अर तीर्थ आहार दोऊ युक्त तीन स्थाननिविषैं जे भंग हैं ते पुनरुक्त हैं ॥ ५७६ ॥ तिन पैंतालीस भुजाकारनिका विधान कहैं हैं—

इगि अड अडिगि अडिगिभेदड अट्ठड दुणव य वीस तीसेक्के ।
अडिगिगि अडिगिगि बिहि उणखिगि इगिइगितीस देवचउ कमसो ॥

एकमष्ट अष्टैकमष्टैकभेदमष्टाष्टाष्ट द्विनव च विंशतित्रिंशदेकान् ।
अष्टैकमेकमष्टैकैकं द्वाभ्यामेकोनखैकैकैकत्रिंशद्देवचतुष्कं क्रमशः ॥ ५७७ ॥

जी० प्र०—अधस्तनपंक्तेरेकाष्टाष्टैकाष्टैकैकैकैकभंगाष्टाष्टाष्टनवनवविंशतित्रिंशदेकैकैकैकप्रकृतिकेषु, उपरितनपंक्तेरष्टैकैकाष्टैकैकैकैकैकधैकोनखैकखैकयुतत्रिंशत्कान्येकत्रिंशत्कं देवचतुःस्थानानि च क्रमेणेति पंचचत्वारिंशद्भवंति तद्यथा—

अप्रमत्तः देवगत्येकधाष्टाविंशतिकं बध्नन् प्रमत्ते गत्वा तीर्थबंधं प्रारभ्य सतीर्थाष्टधादेवगतिनवविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः प्रमत्तोष्टधाष्टाविंशतिकं बध्नन्नप्रमत्तोभूत्वा देवगत्याहारकद्वययुतैकधात्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः प्रमत्तोऽष्टधाष्टाविंशतिकं बध्नन्नप्रमत्तोभूत्वैकधातीर्थाहारैकत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनरप्रमत्तः तीर्थदेवगतिनवविंशतिकं बध्नन्मृत्वा देवासंयतो भूत्वाष्टधा मनुष्यगतितीर्थत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनः प्रमत्तः देवग-

१

प्र २९ ८	अ ३० १	अ ३१ १	म ३० ८	अ ३१ १	अ ३१ १	२८ १	२९ १	३० १	३१ १	पुन अ २९ १	पुन अ ३१ १	पुन अ ३१ १	अप्रमादानां भुजाकाराः ४५
म २८ १	प्र २८ ८	प्र २८ ८	अ २९ १	अ २९ ८	अ ३० १	१ १	१ १	१ १	१ १	अ २८ १	अ २८ १	अ २८ १	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्यष्टधानवविंशतिकं बध्नन्नप्रमत्तो भूत्वा तीर्थाहारैकधैकत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ । पुनरप्रमत्तः एकधाहारत्रिंशत्कं बध्नंस्तीर्थबंधं प्रारभ्यैकधैकत्रिंशत्कं बध्नातीत्येकः । पुनरवरोहकापूर्वकरणः एकधैककं बध्नन् देवगतियुतं देवगतितीर्थयुतं देवगत्याहारकयुतं देवगत्याहारकतीर्थयुतं च बध्नातीति चत्वारः । एवं पंचचत्वारिंशदित्यर्थः ॥ ५७७ ॥ अथाप्रमादि नामल्पतरभंगानाह—

स० चं०—नीचली पक्तिके एक आठ आठ एक आठ एक एक एक एक एक भंगनिकरि सहित अठाईस अठाईस अठाईस गुणतीस गुणतीस तीस इकतीस इकतीस इकतीस इकतीस रूप स्थानकनिविषैं ऊपरि पक्तिके आठ एक एक आठ एक एक एक एक एक एक भंगनिकरि सहित गुणतीस तीस इकतीस तीस इकतीस इकतीस अर देवयुत च्यारि स्थाननिकौं क्रमतैं बाधै ऐसैं नीचली पंक्तिविषैं कहे तिनकौं बाधता था पीछैं ऊपरिकी पंक्तिके बंधस्थाननिकौं बाधै सो एक एक ऊपरली पंक्तिका स्थान भंगनितैं एक एक नीचली पंक्तिका स्थान भंगनिकौं गुणैं सर्व पैंतालीस भुजाकार हो हैं । सोई कहिए है—

अप्रमत्त गुणस्थानीय एक भंग सहित देवगति अठाईसकाकौं बाधता था पीछैं प्रमत्तविषैं जाय तीर्थंकरका प्रारंभकरि तीर्थ देवयुत गुणतीसकाकौं आठ भंगनिकरि सहित बाधै तिन दोऊनिके भंगनिकौं पस्पर गुणैं आठ भए। बहुरि प्रमत्त आठ भंगनिकरि देवयुत अठाईसकाकौं बाधता था पीछैं अप्रमत्त होइ आहारक द्विकसहित तीसकाकौं एक भंगकरि बाधै ऐसैं आठ ए भए। बहुरि प्रमत्त आठ भंगनिकरि अठाईसकाकौं बांधता था पीछैं अप्रमत्त होइ तीर्थ आहारक सहित इकतीसकाकौं एक भंगकरि सहित बाधै ऐसैं आठ ए भए। बहुरि अप्रमत्त तीर्थ देव सहित गुणतीसकाकौं एक भंगनिकरि बाधता मरि देव असंयत होइ आठ भंगनिकरि मनुष्य तीर्थ सहित तीसकाकौं बाधैं ऐसैं आठ ए भए। बहुरि प्रमत्त देवगति तीर्थयुत गुणतीसकाकौं आठ भंगनिकरि बाधता अप्रमत्त होइ तीर्थ आहारक सहित इकतीसकाकौं एक भंगकरि बाधै ऐसैं ए आठ भए। बहुरि अप्रमत्त एक भंगकरि आहारक सहित तीसकाकौं एक भंगकरि बाधता तीर्थ बंध प्रारंभकरि एक भंगकरि इकतीसकाकौं बाधै ऐसैं एक यहु भया। बहुरि उतरनेवाला अपूर्वकरण सातवां भंगविषैं एक भंग लीएं एक प्रकृतिरूप एककाकौं बाधता नीचैं आइ देवगतियुत अठाईसकाकौं वा देव तीर्थयुत गुणतीसकाकौं वा देव आहारकयुत तीसकाकौं वा देव आहारक तीर्थ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

युत इकतीसक्काकौं एक भंगकरि बाधै तिनके च्यारि भए। ऐसैं पैंतालीस भुजाकार होइ हैं ॥ ५७७ ॥ आगैं अप्रमत्तनिके अल्पतर भंग कहैं हैं—

इगिविहिगिगिखखतीसे दस णव णवडधियवीसमट्ठविहं ।
देवचउक्केक्केक्के अपमत्तप्पदरछत्तीसा ॥ ५७८ ॥

एकविधिकमेकखखत्रिंशत् दशनव नवाष्टाधिकविंशमष्टविधं ।
देवचतुष्कमेकैकेन अप्रमत्तालपतरषट्त्रिंशत् ॥ ५७८ ॥

जी० प्र०—एकैकधैकैकखखाधिकत्रिंशत्केष्वष्टाष्टधादशनवनवाष्टाधिकविंशतिकान्येकैकधादेवचतुष्कं चेत्यप्रमत्ताल्पतराः षट्त्रिंशत्। तद्यथा—अप्रमत्तः एकधादेवगतितीर्थाहारैकत्रिंशत्कं बध्नन् मृत्वा देवासंयतो भूत्वाष्टधा मनुष्यगतितीर्थत्रिंशत्कं बध्नातीत्यष्टौ। पुनः अप्रमत्तः एकधैकत्रिंशत्कं बध्नन् प्रमत्तो भूत्वा देवगतितीर्थनवविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ। पुनरप्रमत्त एकधा देवगत्याहारकत्रिंशत्कं बध्नन् प्रमत्ताभूत्वा तीर्थबंधं प्रारभ्याष्टधा देवगतितीर्थनवत्रिंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ। पुनरप्रमत्तः एकधाहारदेवगतित्रिंशत्कं बध्नन् प्रमत्तो भूत्वा अष्टधा देवगत्यष्टाविंशतिकं बध्नातीत्यष्टौ। पुनः अपूर्वकरणः आरोहण एकैकधादेवगतिचतुःस्थानानि बध्नन् सप्तमभागं गत्वा एकधैककं बध्नातीति चत्वारः। एवं षट्त्रिंशत् ॥५७८॥ अथ भुजाकारादीनेकीकरोति—

स० चं०—एक एक भंग सहित एक एक शून्य शून्य अधिक तीस प्रकृतिरूप स्थानकनिकौं बांधता आठ

१

अप्रमादाल्पतर								अवक्तव्यभंग			
म ३० ८	प्र २९ ८	प्र २९ ८	प्र २८ ८	१ १	१ १	१ १	१ १	१ १	म २९ ८	म ३० ८	अल्पतर ३६
अ ३१ १	अ ३१ १	अ ३० १	अ ३० १	२८ १	२९ १	३० १	३१ १	०	०	०	अवक्तव्य १७

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आठ भंगनिकरि दश नव नव आठ अधिक वीस प्रकृतिरूप स्थान अर एक एक भंगकरि देवगतियुत च्यारि स्थाननिकौं बाधै ऐसैं अप्रमत्तविषैं छत्तीस अल्पतर हो हैं। सोई कहिए हैं—

अप्रमत्त देवगति आहारक तीर्थसहित इकतीसका एक भंग करि बांधता मरि करि देव असंयत होइ आठ भंगनिकरि मनुष्य तीर्थ सहित तीसकाकौं बाधै ऐसैं आठ भए। बहुरि अप्रमत्त एक प्रकार इकतीसकाकौं बांधता प्रमत्त होइ आठभंगनिकरि देवतीर्थयुत गुणतीसकाकौं बाधै ऐसैं ए आठ भए। बहुरि अप्रमत्त एक भंगकरि देव आहारकयुत तीसकाकौं बाधता तीर्थके बंधका प्रारंभकरि आठ भंगनिकरि देवगति तीर्थ सहित गुणतीसकाकौं बाधै ऐसैं आठ ए भए। बहुरि अप्रमत्त एक भंगकरि आहारक देवयुत तीसकाकौं बाधता प्रमत्त होइ आठ भंगनिकरि देवगतियुत अठाईसकाकौं बाधै ऐसैं आठ ए भए। बहुरि अपूर्वकरण है सो चढनेविषैं एक एक भंग सहित देवयुत अठाईस देव तीर्थयुत गुणतीस देव आहारकयुत तीस देव आहारक तीर्थयुत इकतीसके स्थाननिकौं बांधता सप्तम भागविषैं एक भग सहित एक प्रकृतिरूप स्थानकौं बाधैं तहां च्यारि भंग भए ऐसैं छत्तीस अल्पतर जानने ॥ ५७८ ॥ आगैं भुजाकारादिकनिकौं एकठे करैं हैं—

सव्वपरट्ठाणेण य अयदपमत्तिदरसव्वभंगा हु।
मिच्छस्स भंगमज्झे मिलिदे सव्वे हवे भंगा ॥ ५७९ ॥

सर्वपरस्थानेन च अयतप्रमत्तेतरसर्वभंगा हि।
मिथ्यस्य भंगमध्ये मिलिते सर्वे भवंति भंगाः ॥ ५७९ ॥

सर्वपरस्थानैः चशब्दात्स्वस्थानैः स्वपरस्थनैश्चाश्रिताः असंयताप्रमत्तादिसर्वभुजाकारादिभंगाः खलु मिथ्यादृष्टिभुजाकारादिभंगेषु मिलंति तदा नामकर्मणः सर्वे भुजाकारादिभंगाः स्युः संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भुजाकार मि ४४६०६४३५	अल्पतर मि ४४६०६४३५	अवस्थित मि ८६२१८८७०	
असं० ३६६६२	असं ७२	असं० ३७०६४	उपशांत कषायावक्तव्यभंगाः १७
अप्र० ४५	अप्र० ३६	अप्र० ८१	
युति ६४६४६४७२	युति ४४६०७५३४३	उपशां० १७	
		युति ८६२५६०३२	

५७९ । अथ तेषामुत्पत्तिसाधरणोपायं गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—सर्व परस्थाननिकरि वा स्वस्थाननिकरि वा स्वपरस्थाननिकरि संयुक्त जे असंयत अप्रमत्तादिकके सर्व भुजाकारादिक भंग तिनकौं मिथ्यादृष्टिके भुजाकारादिक भंगनिविषैं मिलाएं नामकर्मके सर्व भुजाकारादिक बंध हो हैं ॥ ५७९ ॥

सर्व नामबंधस्थाननिके भंगनिका यंत्र

भुजाकार	अल्पतर	अवस्थित	अवक्तव्य
मिथ्यादृष्टि ४४६०९४३५	मिथ्यादृष्टि ४४६०२४३५	मिथ्यादृष्टि ८९२१८८७०	उपशांत कषायविषैं १७
असंयत ३६०९२	असंयत ७२	असंयत ३७०६४	
अप्रमत्त ४५	अप्रमत्त ३६	अप्रमत्त ८१	
		उपशांतमोह १७	
जोड ६४६४६४७२	जोड ४४६०७५४३	जोड ८९२५६०३२	जोड १७

आगैं तिन भंगनिकी प्राप्तिका साधारण उपाय गाथा दोयकरि कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भुजगारा अप्पदरा हवंति पुव्ववरठाणसंताणे ।
पयडिसमोऽसंताणोऽपुणरुत्तेत्ति य समुद्दिट्ठो ॥ ५८० ॥

भुजकारा अल्पतरा भवंति पूर्वापरस्थानसंताने ।
प्रकृतिसमः, असंतानोऽपुनरुक्तेति च समुद्दिष्टः ॥ ५८० ॥

जी० प्र०—पूर्वस्थानस्याल्पप्रकृतिकस्य बहुप्रकृतिकेनानुसंधाने भुजाकारा भवंति। परस्थानस्य बहुप्रकृतिकस्याल्पप्रकृतिकेनानुसंधानेऽल्पतरा भवंति। प्रकृतिसंख्यासमानोऽपि यः—असंतानः प्रकृतिसमुदायभेदयुक् सोऽपुनरुक्त इति निर्दिष्टः यथा—संहननेन तीर्थेन वा युते नवविंशतिके प्रकृतिसमुदायस्य समत्वेप्यपुनरुक्तत्वं ॥ ५८० ॥

पहिला स्थान थोरी प्रकृतिरूप ताकौं बहुत प्रकृतिरूप स्थानकनिकरि यथा संभव लगाएं भुजाकार हो हैं। बहुरि पिछले स्थानके बहुत प्रकृतिरूप तिनकौं थोरी प्रकृतिरूप स्थाननिकरि यथासंभव लगाएं अल्पतर हो है। बहुरि प्रकृतिनिकी समान संख्या होतैं भी असंतानः कहिए प्रकृतिका समुदाय प्रकृति भेदकरि संयुक्त होय तौ अपुनरुक्त ही कहिए, जैसैं तीर्थ विना संहनन सहित भी गुणतीसका बंध है अर तीर्थसहित संहनन विना भी गुणतीसका है सो इनविषैं गुणतीसकी समानता होतैं भी तीर्थंकर अर संहनन प्रकृतिके भेदतैं अपुनरुक्त पणां कहिए ऐसा कह्या है ॥ ५८० ॥

भुजगारे अप्पदरेऽवत्तव्वे ठाइदूण समबंधो ।
होदि अवट्ठिदबंधो तब्भंगा तस्स भंगा हु ॥ ५८१ ॥

भुजकारानल्पतरानवक्तव्यान् स्थापयित्वा समबंधः ।
भवति अवस्थितबंधः तद्भंगास्तस्य भंगा हि ॥ ५८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी॰ प्र०—भुजकारानल्पतरानवक्तव्यांश्च संस्थाप्य द्वितीयादिसमयेषु समानं बध्नाति तदावस्थितबंधः स्यात्। ततस्तेषां भंगा यावंतस्तावंतः खल्ववस्थितभंगा भवंति ॥ ५८१ ॥ अथ तानवक्तव्यभंगानाह—

स॰ चं०—भुजाकार अल्पतर अवक्तव्य इन भंगनिकौं स्थापिकरि जिन जिन भंगसहित प्रकृतिनिका तिनविषैं एक समय बंध होइ करि तिनही भंग सहित प्रकृतिनिका जहां द्वितीयादिक समयनिविषैं समान बंध होइ तब अवस्थित बंध कहिए तातैं तिन तीनके जितने भंग तितने अवस्थितके भंग जानने ॥ ५८१ ॥ आगैं तिन अवक्तव्य भंगनिकौं कहे हैं—

पडिय मरियेक्कमेक्कूणतीस तीसं च बंधगुवसंते।
बंधो दु अवत्तव्वो अवट्ठिदो बिदियसमयादी ॥ ५८२ ॥

पतित्वा मृत्वैकमेकोनत्रिंशत्त्रिंशच्च बंधकोपशांते।
बंधस्तु अवक्तव्योऽवस्थितो द्वितीयसमयादिः ॥ ५८२ ॥

जी॰ प्र०—अवक्तव्यास्तु उपशांतकषाये किमपि नामाबध्नन् पतितः सूक्ष्मसांपरायं गत एककं बध्नाति वा मरणे देवासंयतो भूत्वा मनुष्यगतिनवविंशतिकं मनुष्यगतितीर्थत्रिंशत्कंचाष्टाष्टधा बध्नातीति सप्तदश भवंति। पुनः तद्द्वितीयादिसमयेष्ववस्थितबंधः स्यात्तेन तेऽपि तावंतः।

घोरसंसारवाराशितरंगनिकरोपमैः।
नामबंधपदैर्जीवा वेष्टितास्त्रिजगद्भवाः ॥ १ ॥

५८२। अथ नामोदयस्थानानि द्वाविंशतिगाथाभिराह——

स॰ चं०—उपशांत कषायविषैं किसी भी नाम कर्म प्रकृतिकौं न बाधता पीछै सूक्ष्म सांपरायकौं प्राप्त होइ एककाकौं बाधै सो एक तो यहु बहुरि मरण भएं देव असंयत होइ आठ आठ भंगनिकरि मनुष्ययुत गुणतीसकाकौं वा मनुष्य तीर्थ सहित तीसकाकौं बाधै सो दोऊनिके सोलह भए ऐसैं सतरह अवक्तव्य बंधके भंग जानने। अर तिनहीके समान बंध द्वितीयादिक समयविषैं होइ तहां अवस्थित भी इतनेही जानने।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोहा—जे तरंग भव उदधिके, नाम बंधके थान।
तीन जगतके जीव सब, तिनकरि वेष्टित जान॥ १॥

॥ ५८२ ॥ आगैं नामकर्मके उदयस्थाननिकौं बाईस गाथानिकरि कहै हैं—

विग्गहकम्मसरीरे सरीरमिस्से सरीरपज्जत्ते।
आणावचिपज्जत्ते कमेण पंचोदये काला॥ ५८३॥

विग्रहकार्मशरीरे शरीरमिश्रे शरीरपर्याप्ते।
आनवचःपर्याप्ते क्रमेण पंचोदये कालाः॥ ५८३॥

जी० प्र०—तेषां स्थानानामुदयस्य नियतकालत्वात्ते कालाः विग्रहगतिकार्मणशरीरे शरीरमिश्रे शरीरपर्याप्तौ आनपानपर्याप्तौ भाषापर्याप्तौ च क्रमेण पंच भवंति अत्र विग्रहगतावित्येतावत एव ग्रहणं समुद्घातकेवलिनः कार्मणकायस्य ग्रहणार्थं॥ ५८३॥

स० चं०—ते नामकर्मके उदयस्थान जिस जिस कालविषैं उदय योग्य हैं तहां ही होंइ तातैं नियतकाल है। ते काल विग्रहगति वा कार्मण शरीरविषैं मिश्र शरीरविषैं शरीरपर्याप्तिविषैं आनपान पर्याप्तिविषैं भाषा पर्याप्तिविषैं अनुक्रमतैं पांच जानने। कार्माण शरीर जहां पाइए सो कार्माण काल, यावत् शरीर पर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् शरीर मिश्रकाल, शरीरपर्याप्ति पूर्ण भएं यावत् सासोसास पर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् शरीरपर्याप्तिकाल, सासोसास पर्याप्ति पूर्ण भएं यावत् भाषापर्याप्ति पूर्ण न होइ तावत् आनपान पर्याप्तिकाल, भाषा पर्याप्ति पूर्ण भएं पीछैं सर्व अवशेष आयुप्रमाण भाषापर्याप्ति काल कहिए। इहां विग्रहगति अर कार्माण दोय विशेषण कीए सो समुद्घात केवलीका कार्माण ग्रहणके निमित्त कहे हैं—

एक्कं व दो व तिण्णि व समया अंतोमुहुत्तयं तिसुवि।
हेट्ठिमकालूणाओ चरिमस्स य उदयकालो दु॥ ५८४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एको वा द्वौवा त्रयो वा समया अंतर्मुहूर्तकास्त्रिष्वपि ।
अधस्तनकालोनः चरमस्य चोदयकालस्तु ॥ ५८४ ॥

जी० प्र०—तेषां कालानां प्रमाणं क्रमेण विग्रहगतेः कार्मणशरीरे एको वा द्वौ वा त्रयो वा समयाः, शरीरमिश्रे शरीरपर्याप्तौ उच्छ्वासनिश्वासपर्याप्तौ च प्रत्येकमंतर्मुहूर्तः, भाषापर्याप्तौ उक्तचतुःकालोनं सर्वं भुज्यमानायुः प ३ ॥ ५८४ ॥ तान् पंचकालान् जीवसमासेषु योजयति—
स ३
२ ७ ३

स० चं०—तिन पंच कालनिका प्रमाण क्रमतैं विग्रहगतिका कार्माण शरीरविषैं एक समय वा दोय समय वा तीन समय है अरपर्याप्तिरूप मिश्रशरीरविषैं अर शरीर पर्याप्तिविषैं अर उस्वास निश्वास पर्याप्तिविषैं अंतर्मुहूर्त अंतर्मुहूर्तकाल है। भाषा पर्याप्तिविषैं पूर्वोक्त च्यारि कालनिका प्रमाण घटाएं अवशेष सर्व भुज्यमान आयु प्रमाण काल जानना ॥ ५८४ ॥ तिन पंच कालनिकौं जीव समासनिविषैं कहैं हैं—

सव्वापज्जत्ताणं दोण्णिवि काला चउक्कमेयक्खे ।
पंचवि होंति तसाणं आहारस्सुवरिमचउक्कं ॥ ५८५ ॥

सर्वापर्याप्तानां द्वावपि कालौ चतुष्कमेकाक्षे ।
पंचापि भवंति त्रसानामाहारस्योपरिमचतुष्कं ॥ ५८५ ॥

जी० प्र०—ते कालाः सर्वलब्ध्यपर्याप्तेष्वाद्यौ द्वौ । एकेंद्रियेषु आद्याश्चत्वारः । त्रसेषु पंच । आहारकशरीरे आद्यं विनोपरितनाश्चत्वारो भवंति ॥ ५८५ ॥

स० चं०—ते काल सर्व ही लब्धि अपर्याप्तकनिविषैं आदि के दोय ही है। बहुरि एकेंद्रीविषैं आदिके च्यारि हैं। त्रसविषैं पांचो हैं। आहारक शरीरविषैं पहले विना ऊपरिके च्यारि काल हैं ॥ ५८५ ॥

कम्मोरालियमिस्सं ओरालुस्सासभास इदि कमसो ।
काला हु समुग्घादे उवसंहरमाणगे पंच ॥ ५८६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कार्मौरालिकमिश्रमौरालोच्छ्वासभाषेति क्रमशः ।
काला हि समुद्घाते उपसंहरमाणके पंच ॥ ५८६ ॥

जी०प्र०—समुद्घातकेवलिनि खलु कालाः कार्मणः औदारिकमिश्रः औदारिकशरीरपर्याप्तिः उच्छ्वासनिश्वासपर्याप्तिः भाषापर्याप्तिश्चेति क्रमेण पंच । अमी उपसंहरमाणके एव उपसर्पमाणके त्रयस्यैव संभवात् ॥ ५८६ ॥ तद्यथा—

स० चं०—समुद्घात केवलीविषैं कार्माण १ औदारिकामिश्र १ औदारिक शरीरपर्याप्ति १ उश्वास निश्वास पर्याप्ति १ भाषा पर्याप्ति ऐसैं पंच काल अनुक्रमतैं हो हैं। ते ए पांचौ काल प्रदेशनिकौं समेटतैं ही हैं, फैलावतैं तीन ही काल हैं ॥ ५८६ ॥ सोई कहिए है—

ओरालं दंडदुगे कवाडजुगले य तस्स मिस्सं तु ।
पदरे य लोगपूरे कम्मे व य होदि णायव्वो ॥ ५८७ ॥

औरालं दंडद्विके कपाटयुगले च तस्य मिश्रं तु ।
प्रतरे च लोकपूरे कर्मणि वा च भवंति ज्ञातव्यः ॥ ५८७ ॥

दंडद्वये कालः औदारिकशरीरपर्याप्तिः, कवाटयुगले तन्मिश्रः प्रतरयोर्लोकपूरणे च कार्मण इति ज्ञातव्यः । मूलशरीरप्रथमसमयात्संज्ञिवत्पर्याप्तयः पूर्यंते—

दं	३०	३१
क	२६	२७
प्र	२०	२१
लो	२०	२१

भा	३०	३१
उ	२९	३०
इं	२८	२९
श	२८	२९
मू	२८	२९

लो १		
प्र		प्र
क		क
द		दं

५८७ ॥ अथ नामोदयस्थानानामुत्पत्तिक्रमं गाथाचतुष्टयेनाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—दंडका करनैं वा समेटनेरूप युगलविषैं औदारिक शरीरपर्याप्ति काल है। कपाटका करने समेटनेरूप युगलविषैं औदारिकमिश्र शरीर काल है। प्रतरका करना वा समेटनाविषैं अर लोकपूर्णविषैं कार्माण काल है ऐसैं विस्तार करतैं तौ तीन ही काल हैं अर समेटतैं मूलशरीरविषैं प्रवेश करनेका प्रथम समयतैं लगाय संज्ञी पंचेंद्रीवत् अनुक्रमतैं पर्याप्त पूर्ण करै है तातैं पांचौ काल संभवै हैं ॥ ५८७ ॥ आगैं नामकर्मके उदयस्थाननिका क्रमतैं उपजनेका विधान च्यारि गाथानिकरि कहैं हैं–

णामधुवोदयबारस गइजाईणं च तसतिजुम्माणं।
सुभगादज्जजसाणं जुम्मेक्कं विग्गहे वाणू ॥ ५८८ ॥

नामध्रुवोयद्वादश गतिजातीनां च त्रसत्रियुग्मानां।
सुभगादययशसां युग्मैकं विग्रहे वानुः ॥ ५८८ ॥

तेजदुगं वण्णचऊ थिरसुहजुगलागुरुणिमिणेति नामध्रुवोदयाः द्वादश, चतुर्गतिषु पंचजातिषु त्रसस्थावरयोर्वादरसूक्ष्मयोः पर्याप्तापर्याप्तयोः सुभगदुर्भगयोरादेयानादेययोर्यशस्कीर्त्ययशस्कीर्त्योः चतुरानुपूर्व्येषु चैकैकमित्येकविंशतिकं तदानुपूर्व्ययुतत्वाद्विग्रहगतावेवोदेति न ऋजुगतौ तस्यां चतुर्विंशतिकादीनामेवोदयात् ॥ ५८८ ॥

स० चं०—तैजस कार्माण २ वर्णादिक ४ स्थिर अस्थिर २ शुभ अशुभ २ अगुरुलघु १ निर्माण १ ए बारह ध्रुवोदयी है। सबनिकैं निरंतर उदय इनका पाइए है। बहुरि च्यारि गतिविषैं, पांच जातिविषैं त्रसस्थावरविषैं वादर सूक्ष्मविषैं पर्याप्त अपर्याप्तविषैं सुभग दुर्भगविषैं आदेय अनादेयविषैं यशस्कीर्ति अयशस्कीर्तिविषैं च्यारि आनुपूर्वीविषैं एक एकका उदय होइ ऐसैं इकईस प्रकृतिरूप इकईसका स्थान विग्रह गतिहीविषैं उदय हो है जातैं इसविषैं आनुपूर्वी कही है सो आनुपूर्वीका उदय विग्रहगतिविषैं ही है। ऋजुगतिविषैं इकईसके स्थानका उदय नाहीं चौवीसका आदिका ही उदय है ॥ ५८८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिस्सम्मि तिअंगाणं संठाणाणं च एगदरगं तु ।
पत्तेयदुगाणेक्को उवघादो होदि उदयगदो ॥५८९॥

मिश्रे त्र्यंगानां संस्थानानां चैकतरकं तु ।
प्रत्येकद्विकयोरेक उपघातो भवत्युदयगतः ॥ ५८९ ॥

जी० प्र०—पुनस्तस्मिन्नेकविंशतिके आनुपूर्व्यमपनीय औदारिकादित्रिशरीराणां षट्संस्थानानां चैकतरं प्रत्येकसाधारणयोरेकं उपघातश्चेति चतुष्कमुदयगतं मिलितं तदा चतुर्विंशतिकं भवति । तच्च त्रसस्थावरमिश्रकाले एवोदेति ॥ ५८९ ॥

स० चं०—बहुरि तिस इकईसका स्थानविषैं आनुपूर्वी घटाइए अर औदारिकादिक तीन शरीरनिविषैं एक, छह संस्थाननिविषैं एक, प्रत्येक साधारणविषैं एक, अर उपघात ए च्यारि मिलाइए तब चौवीसका स्थान हो है सो यहु त्रस वा स्थावरके शरीरका मिश्रकालविषैं उदय हो है ॥ ५८९ ॥

तसमिस्से ताणि पुणो अंगोवंगाणमेगदरगं तु ।
छण्हं संहडणाणं एगदरो उदयगो होदि ॥ ५९० ॥
परघादमंगपुण्णे आदावदुगं विहायमविरुद्धे ।
सासवची तप्पुण्णे कमेण तित्थं च केवलिणि ॥ ५९१ ॥ जुम्मं ।

त्रसमिश्रे तानि पुनः अंगोपांगानामेकतरकं तु ।
षण्णां संहननानामेकतरमुदयकं भवति ॥ ५९० ॥
परघातमंगपूर्णे आतापद्विकं विहायोऽविरुद्धे ।
श्वासवचसी तत्पूर्णे क्रमेण तीर्थं च केवलिनि ॥ ५९१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तानि पूर्वोक्तानि चत्वारि, पुनः त्र्यंगोपांगेष्वेकतरं षट्संहननेष्वेकतरं चेति षट्कं त्रसमिश्रे उदयगतं स्यात् । परघातः त्रसस्थावराणां शरीरपर्याप्तावुदेति । आतपोद्योतौ प्रशस्ताप्रशस्तविहायोगती चाविरुद्धं योग्यत्रसस्थावराणां पर्याप्तौ, उच्छ्वासः स्वरद्वयं च स्वस्वपर्याप्तौ, तीर्थं केवलिनि ॥ ५९०–५९१ ॥ अथैकैकस्मिन् जीवे एकैकसमये संभवंति नामोदयस्थानानि नानाजीवं प्रत्युक्तानि तान्येवाह–

स० चं०—ते पूर्वोक्त च्यारि, अर तीन अंगोपांगविषैं एक, छह संहननविषैं एक, अैसैं छह मिश्रशरीरी त्रसविषैं उदय योग्य हैं। बहुरि परघात है सो त्रसस्थावरनिकैं शरीर पर्याप्तिविषैं ही उदय हो है। बहुरि आतप उद्योत वा प्रशस्त अप्रशस्त विहायोगति सो अविरुद्ध योग्य व स्थावरनिकैं पर्याप्त कालविषैं ही उदय हो है। बहुरि उश्वास अर स्वरद्विक ए अपने अपने पर्याप्ति कालविषैं ही उदय हो हैं। तीर्थंकर प्रकृति केवलीविषैं ही उदय हो है ॥ ५९०–५९१ ॥ आगैं एक एक जीवविषैं एक एक समयविषैं जे ते संभवैं अैसे नामकर्मके उदयस्थान नाना जीवनिप्रति कहे तिनहीकौं कहैं है—

वीसं इगिचउवीसं तत्तो इगितीसओत्ति एयधियं ।
उदयट्ठाणा एवं णव अट्ठ य होंति णामस्स ॥५९२॥

विंशमेकचतुर्विंशं तत एकात्रिंशदिति एकाधिकं ।
उदयस्थानान्येवं नवाष्ट च भवंति नाम्नः ॥ ५९२

जी० प्र०—विंशतिकमेकविंशतिकं चतुर्विंशतिकं ततः पंचविंशतिकाद्येकैकाधिकमेकत्रिंशत्कांतं पुनः नवकमष्टकं चेति द्वादश नामोदयस्थानानि भवंति ॥ ५९२ ॥

स० चं०—वीसका इकवीसका चौवीसका इसतैं एक एक अधिक इकतीसका पर्यंत अर नवका आठका ए बारह नामकर्मके उदयस्थान हैं ॥ ५९२ ॥

चदुगदिया एइंदी विसेसमणुदेवणिरयएइंदी ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इगिबितिचपसामण्णा विसेससुरणारगेइंदी ॥ ५९३ ॥
सामण्णसयलवियलविसेसमणुस्ससुरणारया दोण्हं ।
सयलवियलसामण्णा सजोगपंचक्खवियलया सामी॥५९४॥ जुम्मं

चतुर्गतिका एकेंद्रिया विशेषमनुदेवनिरयैकेंद्रियाः ।
एकद्वित्रिचपसामान्या विशेषसुरनारकैकेंद्रियाः ॥ ५९३ ॥
सामान्यसकलविकलविशेषमनुष्यसुरनारका द्वयोः ।
सकलविकलसामान्याः सयोगपंचाक्षविकलकाः स्वामिनः ॥ ५९४ ॥

जी० प्र०—तेषां स्थानानां स्वामिनः एकविंशतिकस्य चतुर्गतिजाः । चतुर्विंशतिकस्यैकेंद्रियाः । पंचविंशतिकस्य विशेषमनुष्यदेवनारकैकेंद्रियाः। षड्विंशतिकस्यैकद्वित्रिचतुःपंचेंद्रियसामान्यजीवाः । सप्तविंशतिकस्य विशेषपुरुषाः सुरनारकैकेंद्रियाश्च । अष्टाविंशतिकनवविंशतिकयोः सामान्यपुरुषाः सकला विकला विशेषपुरुषाः सुरा नारकाश्च । त्रिंशत्कस्य सकला विकला समान्यपुरुषाश्च । एकत्रिंशत्कस्य सयोगकेवलिनः पंचद्वित्रिचतुरिंद्रियाश्च, नवकाष्टकयोरयोगकेवलिनः । अत्र नामध्रुवोदया द्वादश, चतुर्गतिपंचजातिद्वित्रसवादरपर्याप्तसुभगादेययशस्कीर्तिचतुरानुपूर्व्योदयेष्वेकैकः मिलित्वैकविंशतिकं। तच्च कार्मणशरीरचतुर्गतिजविग्रहगत्योरेवोदेति नान्यत्र आनुपूर्व्ययुतत्वात् । तत्र वानुपूर्व्यमपनीयौदारिकादित्रिशरीरेषु षट्संस्थानेषु प्रत्येकसाधारणयोश्चैकैकस्मिन्नुपघाते च निक्षिप्ते चतुर्विंशतिकं, तच्च एकेंद्रियाणां शरीरमिश्रयोगे एवोदेति नान्यत्र, तेषामंगोपांगसंहननोदयाभावात् । पुनः एकेंद्रियस्य शरीरपर्याप्तौ तत्र परघाते युते इदं २५ वा विशेषमनुष्यस्याहारकशरीरमिश्रकाले तदंगोपांगे युते इदं २५ । वा देवनारकयोः शरीरमिश्रकाले वैक्रियिकांगोपांगे युते इदं २५ । पुनः एकेंद्रियस्य पंचविंशतिके तच्छरीरपर्याप्तौ आतपे उद्योते वा युते इदं २६ । वा तस्यैवोच्छ्वासनिःश्वासपर्याप्तौ उच्छ्वासे युते इदं २६ । वा चतुर्विंशतिके द्वित्रिचतुष्पंचेंद्रियाणां सामन्यमनुष्यस्य निरतिशयकेवलिकवाटद्वयस्य च औदारिकमिश्रकाले तदंगोपांगसंहनने युते इदं २६ । तत्रैवाहारकांगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगत्याहारकशरीरपर्याप्तिप्रनत्ते इदं २७ । सामान्यकेवल्यौदारिकमिश्रषड्विंशतिके तीर्थे युते कवाटद्वयसमुद्घातविशेषमनुष्यौदारिकमिश्रे इदं २७ । पुनः चतुर्विंशतिके प्रमत्तस्य शरीरपर्याप्तौ वैक्रियिकांगोपांगपरघाताविरुद्धविहायोगतिषु युतास्विदं । २७ । वा तत्रैवैकेंद्रियस्योच्छ्वासपर्याप्तौ परघाते आतपोद्योतैकतरस्मिन्नुच्छ्वासे च युते इदं २७ । पुनः तत्रैव सामान्यमनुष्यस्य मूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातसामान्यकेवलिनः द्वित्रिचतुष्पंचेंद्रियाणां च शरीरपर्याप्तौ अंगोपांगसंहननपरघाताविरुद्धविहायोगतिषु युतास्विदं ॥ २८ ॥ वा प्राप्ताहारकर्धेस्तच्छरीरोच्छ्वासपर्याप्त्योस्तदंगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं ॥ २८ ॥ वा देवनारकयोरुच्छ्वासपर्याप्तौ वैक्रियि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कांगोपांगपरघाताविरुद्धविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं २८। पुनः तत्सामान्यमनुष्याष्टाविंशतिके तस्य च मूलशरीरप्रविष्टसमुद्घातसामान्यकेवलिनश्चोच्छ्वासपर्याप्तौ उच्छ्वासे युते इदं २९। वा तच्चतुर्विंशतिके द्वित्रिचतुष्पंचेंद्रियाणां शरीरपर्याप्तावुद्योतेन समं, उच्छ्वासपर्याप्तौ च उच्छ्वासेन समं अंगोपांगसंहननपरघातविहायोगतिषु युतास्विदं २९। वा समुद्घातकेवलिनः शरीरपर्याप्तावंगोपांगसंहननपरघातप्रशस्तविहायोगतितीर्थेषु युतेष्विदं २९। वा प्रमत्तस्याहारकशरीरभाषापर्याप्त्यास्तदंगोपांगपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वाससुस्वरेषु युतेष्विदं २९। वा देवनारकयोर्भाषापर्याप्तौ अविरुद्धैकस्वरे युते इदं २९। पुनः तत्रैव द्वित्रिचतुष्पंचेंद्रियाणामुच्छ्वासपर्याप्तावुद्योतेन समं, सामान्यमनुष्यसकलविकलानां भाषापर्याप्तौ स्वरद्वयान्यतरेण समं चांगोपांगसंहननपरघातविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं ३०। वा समुद्घाततीर्थंकरकेवलिनः उच्छ्वासपर्याप्तौ तीर्थेन समं, सामान्यसमुद्घातकेवलिनो भाषापर्याप्तौ स्वरद्वयान्यतरेण समं चांगोपांगसंहननपरघातप्रशस्तविहायोगत्युच्छ्वासेषु युतेष्विदं ३०। पुनः तत्सयोगकेवलिस्थाने भाषापर्याप्तौ तीर्थे युते इदं ३१। वा चतुर्विंशतिके द्वित्रिचतुष्पंचेंद्रियाणां भाषापर्याप्तावंगोपांगसंहननपरघातोद्योतविहायोगत्युच्छ्वासस्वरद्वयान्यतरेषु युतेष्विदं ॥ ३१ ॥ ५९३–५९४ ॥

स० चं०—तिन स्थाननिका स्वामी कहिए है–इकईसके स्थानके चतुर्गतिके जीव स्वामी हैं। चौवीसकेके एकेंद्री स्वामी हैं। पचीसकेके विशेष मनुष्य देव नारकी एकेंद्री स्वामी हैं। छवीसकेके एकेंद्री बेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री सामान्य जीव स्वामी हैं। सताईसकेके विशेष मनुष्य वा देव नारकी एकेंद्री स्वामी हैं। अठाईस गुणतीसकेके सामान्य पुरुष सकलेंद्री विकलेंद्री विशेष पुरुष देव नारकी स्वामी हैं। तीसकेके सकलेंद्री विकलेंद्री सामान्य पुरुष स्वामी हैं। इकतीसकेके सयोगकेवली वा पंचेंद्री बेंद्री तेंद्री चौंद्री स्वामी है। नवकेके अर आठकेके अयोग केवली स्वामी हैं। जिस स्थानका जो स्वामी कह्या तिसकैं तिस स्थान संबंधी प्रकृतिनिका उदय जानना। सो इहां इन स्थाननिका प्रगट कथन कीजिए है—

ध्रुवोदयी बारह १२ च्यारिगतिविषैं एक १ पंच जातिविषैं एक १ त्रस बादर पर्याप्त सुभग आदेय यशस्कीर्ति अर इनका प्रतिपक्षीरूप छह युगल तिनिविषैं एक एक ६ च्यारि आनुपूर्वीविषैं एक ऐसैं इकईस प्रकृतिरूप स्थान हैं। सो याका उदय कार्माण शरीर सहित च्यार्यो गतिसंबंधी वक्र गमनरूप जो विग्रहगति तिसहीविषैं हो है, अन्यत्र नाहीं जातै यहु स्थान आनुपूर्वी सहित है। बहुरि इसविषैं आनुपूर्वीकौं घटाइए अर औदारिक तीन शरीरनिविषैं एक १ छह संस्थाननिविषैं एक, प्रत्येक साधारणविषैं एक १ अर उपघात इनि च्यार्योकौं मिलाएं चौवीस प्रकृतिरूप स्थान हो है

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो यहु एकेंद्रीकैं अपर्याप्तविषैं शरीर मिश्रयोग होतैं ही उदय हो है अन्यत्र नाहीं जातैं इसविषैं अंगोपांग वा संहनन नाहीं है। बहुरि इसविषैं परघात मिलैं एकेंद्रीका शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य पचीसका स्थान हो है अथवा आहारक अंगोपांग मिलैं विशेष मनुष्यकैं आहारक शरीरका मिश्रकालविषैं उदय योग्य पचीसका स्थान हो है। अथवा वैक्रियिक अंगोपांग मिलैं देव नारकीकैं शरीर मिश्रकालविषैं उदय योग्य पचीसका स्थान हो है ऐसैं तीन पचीसके स्थान भए। बहुरि एकेंद्रीकैं उदय योग्य पचीसका स्थानविषैं आतप वा उद्योतविषैं एककौं मिलैं एकेंद्रीका शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य छवीसका स्थान हो है। अथवा तिस एकेंद्रीका पचीसका स्थानविषैं उश्वास मिलैं एकेंद्रीकैं उश्वास निश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य छवीसका स्थान हो है। अथवा चौवीसका स्थानविषैं औदारिक अंगोपांग अर एक संहनन मिलैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री सामान्य मनुष्य निरतिशय केवली का कपाट युगल इनका औदारिक मिश्रकालविषैं उदय योग्य छवीसका स्थान हो है ऐसैं तीन छवीसके स्थान भए। बहुरि चौवीसका स्थानविषैं आहारक अंगोपांग परघात प्रशस्तविहायोगति ए तीन मिलैं प्रमत्त गुणस्थानीकैं आहारक शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य सताईसका स्थान हो है। अथवा पूर्वोक्त समुद्घात केवलीका छवीसका स्थानविषैं तीर्थंकर प्रकृति मिलैं तीर्थंकर समुद्घात केवलीकैं उदय योग्य सत्ताईसका स्थान हो है। अथवा पूर्वोक्त चौवीसका स्थानविषैं वैक्रियिक अंगोपांग परघात अर नारकीकैं अप्रशस्तविहायोगति देवकैं प्रशस्तविहायोगति ऐसैं तीन मिलैं देव नारकीकैं शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य सताईसका स्थान हो है अथवा पूर्वोक्त चौवीसका स्थानविषैं परघात अर आतप उद्योतविषैं एक अर उश्वास इन तीनोंकौं मिलैं एकेंद्रीकैं उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य सत्ताईसका स्थान हो है। ऐसैं च्यारि सत्ताईके स्थान भए। बहुरि तिस चौवीसके स्थानविषैं औदारिक अंगोपांग एक संहनन परघात यथायोग्य विहायोगति इन च्यारिकौं मिलैं सामान्य मनुष्य वा मूलशरीरविषैं प्रवेश करता समुद्घातरूप सामान्य केवली वा वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री इनकैं शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य अठाईसका स्थान हो है। अथवा चौवीसकाविषैं आहारक अंगोपांग परघात प्रशस्तविहायोगति उश्वास ए च्यारि मिलैं आहारक संयुक्तकैं आहारक शरीरका उश्वा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सपर्याप्तिविषैं उदय योग्य अठाईसका स्थान हो है। अथवा चौवीसकाविषैं वैक्रियिक अंगोपांग परघात यथासंभव विहायोगति उश्वास इन च्यारिकौं मिलैं देव नारकीकैं उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य अठाईसका स्थान उदय हो है। ऐसैं तीन अठाईसके स्थान भए। बहुरि सामान्य मनुष्य वा समुद्घात केवलीका अठाईसका स्थानविषैं उश्वास प्रकृति मिलैं सामान्य मनुष्यका वा मूल शरीरविषैं प्रवेश करता समुद्घात केवलीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य गुणतीसका स्थान हो है। अथवा चौवीसकाविषैं औदारिक अंगोपांग एक संहनन परघात एक विहायोगति उद्योत मिलैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीका शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य गुणतीसका स्थान हो है। अथवा पूर्वोक्त चौवीसकाविषैं एक अंगोपांग एक संहनन परघात एक विहायोगति उश्वास मिलैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य गुणतीसका स्थान हो है। अथवा चौवीसकाविषैं औदारिक अंगोपांग संहनन परघात प्रशस्तविहायोगति तीर्थंकर मिलैं समुद्घात तीर्थंकर केवलीका शरीरपर्याप्तिनिविषैं उदय योग्य गुणतीसका स्थान हो है। अथवा चौवीसकाविषैं आहारक अंगोपांग परघात प्रशस्तविहायोगति उश्वास सुस्वर मिलैं प्रमत्तका आहारक शरीरका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य गुणतीसका स्थान हो है। अथवा देव नारकका अठाईसका स्थानविषैं देवकैं सुस्वर नारकीकैं दुस्वर मिलैं देव नारकीकैं भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य गुणतीसका स्थान हो है। ऐसैं गुणतीसके छह स्थान भए। बहुरि चौवीसकाविषैं अंगोपांग संहनन परघात विहायोगति उच्छ्वास मिलैं गुणतीस होइ इनविषैं उद्योत मिलैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य तीसका हो है। वा दोय स्वरविषैं एक मिलैं सामान्य मनुष्य वा पंचेंद्री वा विकलत्रयकैं भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य तीसका हो है। अथवा चौवीसकाविषैं औदारिक अंगोपांग वज्रवृषभ संहनन परघात प्रशस्तविहायोगति उश्वास मिलें गुणतीस होइ तिनविषैं तीर्थंकर प्रकृति मिलाएं समुद्घात तीर्थंकर केवलीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य तीसका स्थान हो है वा दोय स्वरविषैं एक मिलैं सामान्य समुद्घात केवलीका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य तीसका हो है ऐसैं तीसके स्थान च्यारि कहे। बहुरि सामान्य सयोग केवलीका भाषापर्याप्ति संबंधी तीसकाविषैं तीर्थंकर प्रकृति मिलाएं तीर्थंकर ७१८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

केवलीका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य इकतीसका स्थान हो है अथवा पूर्वोक्त चौईसकाविषैं अंगोपांग संहनन परघात उद्योत विहायोगति उश्वास सुस्वर दुःस्वरविषैं एक ऐसैं सात मिलैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीनिका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य इकतीसका हो है । ऐसैं इकतीसके स्थान दोय कहे या प्रकार एक जीवके एककालविषैं उदयके स्थान कहे ॥ ५९३-५९४ ॥

एगे इगिवीसपणं इगिछव्वीसट्ठवीसतिण्णि णरे ।
सयले वियलेवि तहा इगितीसं चावि वचिठाणे ॥५९५॥
सुरणिरयविसेसणरे इगिपणसगवीसतिण्णि समुघादे ।
मणुसं वा इगिवीसे वीसं रूवाहियं तित्थं ॥५९६॥
वीसदु चउवीसचऊ पणछव्वीसादिपंचयं दोसु ।
उगुतीसति पणकाले गयजोगे होंति णव अट्ठं ॥५९७॥ विसेसयं ।

एकस्मिन्नेकविंशतिपंच एकषड्विंशाष्टाविंशत्रीणि नरे ।
सकलविकलेऽपि तथा एकत्रिंशचापि वचःस्थाने ॥ ५९५ ॥
सुरनिरयविशेषनरे एकपंचसप्तविंशत्रीणि समुद्धाते ।
मनुष्यं वा एकविंशे विंशं रूपाधिकं तीर्थं ॥ ५९६ ॥
विंशद्विकं चतुर्विंशचतुष्कं पंचषड्विंशादिपंचकं द्वयोः ।
एकोनत्रिंशत्त्रिकं पंचकालेषु गतयोगे भवंति नवाष्ट ॥ ५९७ ॥ विशेषकं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

जी० प्र०—पंचकालेषु क्रमेणैकेंद्रियेष्वेकविंशतिकादीनि पंच। मनुष्येष्वेकविंशतिकं षड्विंशतिकमष्टाविंशतिकादित्रयं च। सकलेंद्रिये विकलेंद्रियेऽपि तथैवैकविंशतिकषड्विंशतिकाष्टाविंशतिकत्रयं। एकत्रिंशत्कं तु भाषापर्याप्तौ। सुरनारकविशेषमनुष्येष्वेकविंशतिकं पंचविंशतिकं सप्तविंशतिकादित्रयं च। समुद्घातकेवलिनि तीर्थोने मनुष्यवदप्येकोनविंशतिकस्थाने विंशतिकं स्यात्। तीर्थसमुद्घातकेवलिनि तान्येव रूपाधिकानि। एवं सति केवलिकार्मणे विंशतिकैकविंशतिके द्वे। विग्रहकाले एकविंशतिकं शरीरमिश्रकाले चतुर्विंशतिकादिचतुष्कं। शरीरपर्याप्तिकाले पंचविंशतिकादि पंचकं। आनापानपर्याप्तौ षड्विंशतिकादिपंचकं, भाषापर्याप्तिकाले नवविंशतिकादित्रयं, अयोगे सतीर्थे नवकमतीर्थेऽष्टकं ॥ ५९५–५९७ ॥

वचि	०	२९	२९	३० ३१	३०	३०	३१	२९
आणु	२७ २६	२८	२८	३० २९	२९	२९	३०	२८
शरी	२६ २५	२७	२७	२९ २८	२८	२८	२९	२७
शमि	२४	२५	२५	२६	२६	२६	२७	२५
विका	२१	२१	२१	२१	२१	२०	२१	० (?)
	एकेंद्रिय	देव	नारक	तिर्यंग्	मनुष्य	साके	तीर्थकेव	विशेष मनुष्य

अस्यायोगस्थानद्वयस्योपपत्तिमाह—

स० चं०—पूर्वोक्त पंचकालनिविषैं यथासंभव अनुक्रमतैं एकेंद्रीविषैं उदय योग्य इकईसका आदि पांच स्थान हैं। बहुरि मनुष्यविषैं उदय योग्य इकईसका छवीसका अर अठाईसका आदि तीन ऐसैं पंच स्थान हैं। बहुरि सकलेंद्री विकलेंद्री तिर्यंचविषैं उदय योग्य इकईसका अर छवीसका अठाईसका आदि तीन भाषापर्याप्तिविषैं इकतीसका ऐसैं छह स्थान हैं। बहुरि देव नारकी अर आहारक वा केवल सहित विशेष मनुष्य इनविषैं उदय योग्य इकईसका

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पचीसका अर अठाईसका आदि तीन ऐसैं पंच स्थान हैं तहां समुद्घात केवलीका कार्मणकालविषैं इकवीसका स्थानविषैं आनुपूर्वी विना सामान्य केवलीकैं वीसका ही उदय स्थान है । तीर्थंकर केवलीके तीर्थंकर प्रकृति सहित इकईसका उदय स्थान है ।

|| नामकर्मके उदयस्थाननिका यंत्र ||

वीसका स्थान एक || १ ||
समुद्घातकेवलीका कार्माणविषैं उदययोग्य || २० ||

इकईसके स्थान || २ ||
चारयोगतिके विग्रहगतिविषैं उदययोग्य || २१ ||
तीर्थंकरकेवलीका कार्माणविषैं उदय योग्य || २१ ||

चौवीसका स्थान एक || १ ||
एकेंद्रीका मिश्रशरीरविषैं उदय योग्य || २४ ||

पचीसका स्थान तीन || ३ ||
एकेंद्रीका शरीरपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २५ ||
आहारकका शरीरमिश्रकालविषैं उदय योग्य || २५ ||
देवनारककैं शरीरमिश्रकालविषैं उदय योग्य || २५ ||

छवीसके स्थान तीन || ३ ||
एकेंद्रीका शरीरपर्याप्तिकालविषैं उदय योग्य || २६ ||
एकेंद्रीका उश्वासपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २६ ||
वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री सामान्य मनुष्य निरतिशयकेवलीका औदारिक मिश्रकालविषैं उदय योग्य || २६ ||

सत्ताईसके स्थान च्यारि || ४ ||
आहारक शरीरपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २७ ||
तीर्थंकर समुद्घातकेवलीकैं उदय योग्य || २७ ||
देव नारकीका शरीरपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २७ ||
एकेंद्रीका उश्वासपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २७ ||

अठाईसके स्थान तीन || ३ ||
सामान्य मनुष्य सामान्यकेवली वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीकैं शरीरपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २८ ||
आहारकका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २८ ||
देव नारकीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २८ ||

गुणतीसके स्थान छह || ६ ||
समुद्घात केवलीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २९ ||
वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीका शरीरपर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २९ ||
वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २९ ||
समुद्घात तीर्थंकरका शरीर पर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २९ ||
आहारक शरीरका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २९ ||
देव नारकका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य || २९ ||

तीसके स्थान च्यारि || ४ ||
वेंद्री तेंद्री चौंद्री विकलत्रयकैं भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य || ३० ||
सामान्य मनुष्य पंचेंद्री विकलत्रयकैं भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य ||३०||
तीर्थंकर समुद्घात केवलीका उश्वास पर्याप्तिविषैं उदय योग्य || ३० ||
सामान्य समुद्घात केवलीका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य || ३० ||

इकतीसके स्थान || २ ||
तीर्थंकर केवलीका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य || ३१ ||
वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्रीका भाषापर्याप्तिविषैं उदय योग्य || ३१ ||

नवका स्थान एक । १ । अयोग केवलीकैं उदय योग्य || ९ ||

आठका स्थान । १ । अयोग केवलीकैं उदय योग्य || ८ ||

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ऐसैं केवली कार्माणविषैं तौ वीस इकवीसके दोय स्थान हैं। अर विग्रहगतिका कार्माणविषैं इकवीसका ही है। शरीर मिश्रकालविषैं चौवीसका आदि च्यारि स्थान हैं। शरीर पर्याप्तिकालविषैं पचीसका आदि पंच स्थान हैं। आनपान पर्याप्तिविषैं छवीसका आदि पंच स्थान हैं। भाषापर्याप्तिकालविषैं गुणतीसका आदि तीन स्थान हैं। अयोगीविषैं तीर्थंकरकैं नवका अर सामान्यकैं आठका उदय जानना ॥ ५९५-५९७ ॥

नामकर्मके उदय स्थान जैसैं संभवै तिनिका यंत्र

जिनके पाइए तिनका नाम	एकेंद्री	देव	नारक	तिर्यंच	मनुष्य	सामान्य केवली	तीर्थंकर केवली	विशेष मनुष्य
भाषापर्याप्ति विषैं	०	२९	२९	३० ३१	३०	३०	३१	२६
आनपानविषैं	२७ २६	२८	२८	३० २९	२९	२९	३०	२८
शरीरपर्याप्ति विषैं	२६ २५	२७	२७	२९ २८	२८	२८	२६	२७
शरीरमिश्रविषैं	२४	२५	२५	२६	२६	२७	२७	२५
कार्माणविषैं	२१	२१	२१	२१	२१	२०	२१	०

अयोगी गुणस्थाननिके दोय स्थाननिका स्वरूप कहैं हैं—

गयजोगस्स य बारे तदियाउगगोद इदि विहीणेसु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णामस्स य णव उदया अट्ठेव य तित्थहीणेसु ॥ ५९८ ॥

गतयोगस्य च द्वादश तृतीयायुष्कगोत्रमिति विहीनेषु ।
नाम्नश्च नव उदया अष्टैव च तीर्थहीनेषु ॥ ५९८ ॥

जी० प्र०—अयोगकेवलिनः द्वादशोदयप्रकृतिषु वेदनीयायुर्गोत्रेष्वपनीतेषु नाम्नो नव भवंति । पुनः तीर्थेऽपनीतेऽष्टौ भवंति ॥ ५९८ ॥ अथ नामोदयस्थानेषु भंगानाह—

स० चं०— अयोग केवलीकैं बारह उदय प्रकृति हैं तिनविषैं वेदनीय आयु गोत्रकी तीन प्रकृति विना नव प्रकृति नामकर्मकीका उदय जानना । तीर्थंकर विना आठका जानना । ऐसैं नवका आठका उदय जानना ॥ ५९८ ॥ आगैं नामके उदयस्थाननिविषैं भंग कहिए है—

सठाणे संहडणे विहायजुम्मे य चरिमचदुजुम्मे ।
अविरुद्धेक्कदरादो उदयट्ठाणेसु भंगा हु ॥ ५९९ ॥

संस्थाने संहनने विहायोयुग्मे च चरमचतुर्युग्मे ।
अविरुद्धैकतरस्मात् उदयस्थानेषु भंगा हि ॥ ५९९ ॥

जी० प्र०—संस्थानषट्के संहननषट्के विहायोगतिद्वये सुभगद्वये सुस्वरद्वये आदेयद्वये यशस्कीर्तिद्वये च अविरुद्धैकैकतरग्रहणेन भंगा भवंति । ते खलु द्वापंचाशदधिकैकादशशतानि । ११५२ । ॥ ५९९ ॥ तेषु नारकाद्येकचत्वारिंशज्जीवसंभविनो गाथात्रयेणाह—

१

या ।	अ ११
आ ।	अ ११
सु ।	दु ११
सु ।	दु ११
प्र ।	अ ११
सं ।	१११११११
सं ।	११११११
युतिः ११५२	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—छह संस्थान छह संहनन दोय विहायोगति सुभग युगल स्वरयुगल आदेय युगल यशस्कीर्ति युगल इनविषैं अविरुद्ध एक एकका ग्रहण करतैं भंग हो हैं जैसैं संस्थानविषैं समचतुरस्रकी अपेक्षा उदयस्थान कह्या वाकौं पलटि न्यग्रोध परिमंडलकी अपेक्षा कह्या ऐसैं सबनिविषैं अक्ष संचार विधानतैं भंग हो हैं सो छह संस्थानादिककौं ६ ६ २ २ २ २ २ परस्पर गुणैं ग्यारहसै बावन भंग हो है ॥५९९॥ तिनविषैं नारकादि इकतालीस जीवपदनिविषैं भंग संभवै तिनकौं तीन गाथानिकरि कहैं हैं—

तत्थासत्था णारयसाहारणसुहुमगे अपुण्णे य ।
सेसेगविगलऽसण्णीजुदठाणे जसजुगे भंगा ॥ ६०० ॥

तत्राशस्ता नारकसाधारणसूक्ष्मके अपूर्णे च ।
शेषैकविकलासंज्ञियुतस्थाने यशोयुग्मे भंगाः ॥ ६०० ॥

जी० प्र—तत्रोदयप्रकृतिषु नारके साधारणवनस्पतौ सर्वलब्ध्यपर्याप्ते वाऽप्रशस्ता एवोदयंतीति तत्पंचकालसर्वोदयस्थानेषु भंग एकैकः। शेषैकेंद्रियविकलासंज्ञ्युदयस्थानेषु यशस्कीर्तिद्वयकृतौ द्वौ द्वौ भंगौ भवतः ॥ ६०० ॥

स० चं०—तिन उदय प्रकृतिनिविषैं नारकी अर साधारण वनस्पती अर सर्व ही सूक्ष्म अर सर्व ही लब्धि अपर्याप्तक इनविषैं अप्रशस्त प्रकृतिनिहीका उदय है तातैं तिनके पंच कालसंबंधी सर्व उदय स्थाननिविषैं एक एक भंग है । बहुरि अवशेष एकेंद्री विकलेंद्री असैनी पंचेंद्री इनविषैं और तौ अप्रशस्त प्रकृतिनिहीका उदय है अर यशस्कीर्ति अयस्कीर्ति इनि दोऊनिविषैं एक किसीका उदय है तातैं तिनके उदय स्थाननिविषैं दोय दोय भंग जानने—एक यशस्कीर्ति सहित उदय स्थान एक अयशस्कीर्ति सहित उदयस्थान ऐसैं दोय जानने ॥ ६०० ॥

सण्णिम्मि मणुस्सम्मि य ओघेक्कदरं तु केवले वज्जं ।
सुभगादेज्जजसाणि य तित्थजुदे सत्थमेदीदि ॥ ६०१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संज्ञिनि मनुष्ये च ओघैकनरं तु केवले वज्रं।
सुभगादेययशांसि च तीर्थयुते शस्तमेतीति ॥ ६०१ ॥

जी० प्र०—संज्ञिजीवे मनुष्ये च संस्थानादिसामान्यकृताः सर्वे भंगा भवंति। केवलज्ञाने वज्रवृषभनाराचसंहननं सुभगादेययशस्कीर्तय एवोदयंति, "दुर्भगत्रयादेयस्यासंयते छेदात्"। सतीर्थे च प्रशस्तमेव तेन तत्स्थानेष्वेकैकः, चरमपंचसंस्थानाप्रशस्तविहायोगतिदुःस्वराणां तत्रानुदयात्॥६०१॥

स० चं०—संज्ञी जीवविषैं मनुष्यविषैं छह संस्थान छह संहनन विहायोगति आदि पंच युगल इनविषैं एक एकका उदय पाइए तातैं सामान्यवत् ग्यारहसै बावन भंग मनुष्यके उदयस्थाननिविषैं यथासंभव जानने। बहुरि केवलज्ञानविषैं वज्रवृषभ नाराच सुभग आदेय यशस्कीर्ति इनहीका उदय पाइए तातैं केवलज्ञान संबंधी स्थाननिविषैं छह संस्थान दोय युगल इनविषैं एक एकका उदयकी अपेक्षा चौईस चौईस ही भंग जानने। बहुरि तीर्थंकर केवलीकैं अंतके पंच स्थान अप्रस्तविहायोगति दुःस्वर इनिका भी उदय नाहीं। सर्व प्रशस्तप्रकृतिनिहीका उदय है तातैं ताके उदयस्थाननिविषैं एक एक ही भंग है॥ ६०१॥

देवाहारे सत्थं कालवियप्पेसु भंगमाणेज्जो।
वोच्छिण्णं जाणित्ता गुणपडिवण्णेसु सव्वेसु ॥ ६०२ ॥

देवाहारे शस्तं कालविकल्पेषु भंग आनेयः।
व्युच्छिन्नं ज्ञात्वा गुणप्रतिपन्नेषु सर्वेषु ॥ ६०२ ॥

जी० प्र०—चतुर्निकायदेवेष्वाहारकर्धिप्राप्तप्रमत्ते च प्रशस्तमेवोदेतीति तत्सर्वकालोदयस्थानेष्वेकैको भंगः। सासादनादिगुणप्रतिपन्नेषु विग्रहकार्मणशरीरादिकालविकल्पेषु व्युच्छिन्नप्रकृतीर्ज्ञात्वा भंगा आनेतव्याः ॥ ६०२ ॥

स० चं०—च्यारि प्रकार देवनिविषैं वा आहारक सहित प्रमत्तविषैं प्रशस्त प्रकृतिनिहीका उदय है तातैं तिनके सर्वकाल संबंधी उदय स्थाननिविषैं एक एक ही भंग है। बहुरि सासादनादिक गुणस्थानकौं प्राप्त भए तिनविषैं वा विग्रहगतिका कार्माणादिक कालनिविषैं व्युच्छित्ति भई प्रकृतिनिकौं जानि अवशेष प्रकृतिनिके यथासंभव भंग जानने ॥ ६०२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वीसादीणं भंगा इगिदालपदेसु संभवा कमसो ।
एक्कं सट्ठी चेव य सत्तावीसं च उगुवीसं ॥ ६०३ ॥
वीसुत्तरछच्चसया बारस पण्णत्तरीहिं संजुत्ता ।
एक्कारससयसंखा सत्तरससयाहिया सट्ठी ॥ ६०४ ॥
ऊणत्तीससयाहियएक्कावीसा तदोवि एकट्ठी ।
एक्कारससयसहिया एक्केक्क विसरिसगा भंगा ॥ ६०५ ॥ विसेसयं ।

विंशादीनां भंगा एकचत्वारिंशत्पदेषु संभवाः क्रमशः ।
एकः षष्टिः चैव च सप्तविंशं च एकोनविंशं ॥ ६०३ ॥
विंशोत्तरषट् च शतानि द्वादश पंचसप्ततिभिः संयुक्ता ।
एकादशशतसंख्या सप्तदशशताधिकाः षष्टिः ॥ ६०४ ॥
एकोनत्रिंशच्छताधिकैकविंशं ततोऽपि एकषष्टिः ।
एकादशशतसहिता एकैकं विसदृशका भंगाः ॥ ६०५ ॥ विशेषकं

जी० प्र०—विंशतिकादीनां स्थानानामेकचत्वारिंशज्जीवपदेषु संभवंतो भंगाः क्रमेण विंशतिकं सामान्यसमुद्घातकेवलिनः प्रतरलोकपूरणकार्मणकाये उदययोग्यमतीर्थमेकं २० । एकविंशतिकानि पर्याप्तानां देवगतिविग्रहकार्मणे एकं, तीर्थसमुद्घाते एकं, मनुष्यगतिविग्रहगतौ सुभगादेययशस्की-
१
र्तियुग्मकृतान्यष्टौ । संज्ञिन्यपि तथैवाष्टौ । विकलासंज्ञिषु प्रत्येकं यशोयुग्मकृते द्वे द्वे भूत्वाष्टौ । बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकेष्वपि तथा दश । सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुषूभयसाधारणयोश्चैकैकं भूत्वा षट् । नारकेष्वेकं । लब्ध्यपर्याप्ते सप्तदशेति षष्टिः २१ । चतुर्विंशतिकानि पर्याप्तानां शरीरमिश्रकाले बादरपृ-
६०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

थ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकेषु द्वे द्वे भूत्वा दश। सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायुवृभयसाधारणयोश्चैकैकं भूत्वा षट्। लब्ध्यपर्याप्तेष्वेकादशेति सप्तविंशतिः २४। पंचविंश-
२७
तिकानि देवाहारकनारकाणां शरीरमिश्रकाले एकैकं भूत्वा त्रीणि, शरीरपर्याप्तौ बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकानां द्वे द्वे भूत्वा दश। सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजो-
वायूनामुभयसाधारणयोश्चैकैकं भूत्वा षडित्येकान्नविंशतिः २५। षड्विंशतिकानि शरीरमिश्रकालेद्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिनां द्वे द्वे भूत्वाष्टौ। संज्ञिनि
१९
मनुष्ये च प्रत्येकं षट्संहननषट्संस्थानसुभगादेययशस्कीर्तियुग्मकृताष्टाशीत्यग्रद्विशती भूत्वा षट्सप्तत्यग्रपंचशती, अतीर्थसमुद्घातकेवलिनः संस्थानषट्केन
षट्। लब्ध्यपर्याप्तेष्वपि षट्। शरीरपर्याप्तौ बादरपृथ्वीकायस्यातपोद्योतस्थानद्वये द्वे द्वे भूत्वा चत्वारि। बादराप्कायप्रत्येकयोर्द्वे द्वे भूत्वा चत्वारि। उ-
च्छ्वासपर्याप्तौ बादरपृथ्व्यप्तेजोवायुप्रत्येकेषु द्वे द्वे भूत्वा दश। सूक्ष्मपृथ्व्यप्तेजोवायूभयसाधारणेष्वेकैकं भूत्वा षडिति विंशत्यग्रषट्छती। २६ सप्त-
६२०
विंशतिकानि सतीर्थसमुद्घातशरीरमिश्रकाले एकं देवाहारकनारकशरीरपर्याप्तावेकैकं भूत्वा त्रीणि। आनापानपर्याप्तौ बादरपृथ्वीकायस्यातपोद्योत-
स्थानयोर्द्वे द्वे भूत्वा चत्वारि। बादराप्प्रत्येकयोर्द्वे द्वे भूत्वा चत्वारीति द्वादश २७। अष्टाविंशतिकानि शरीरपर्याप्तौ निरतिशयसमुद्घातकेवलिनः
१२
द्विविहायोगतिषट्स्थानकृतानि द्वादश। मनुष्ये संज्ञिनि च प्रत्येकं सुभगादेययशस्कीर्तिविहायोगतियुग्मषट्संस्थानषट्संहननकृतानि षट्सप्तत्यग्रपंचशती
भूत्वा द्वापंचाशदग्रैकादशशती। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु द्वे द्वे भूत्वाष्टौ। देवाहारकनारकानापानपर्याप्तावेकैकं भूत्वा त्रीणीति पंचसप्तत्यग्रैकादशशती
२८। नवविंशतिकानि शरीरपर्याप्तौ तीर्थसमुद्घातकेवलिन्येकं। संज्ञिनि प्राग्वत् सोद्योतषट्सप्तत्यग्रपंचशती। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु सोद्योते द्वे द्वे भू-
११७५
त्वाष्टौ। उच्छ्वासपर्याप्तौ निरतिशयसमुद्घातकेवलिनः संस्थानविहायोगतिकृतानि द्वादश। मनुष्ये संज्ञिनि प्रत्येकं प्राग्वत् षट्सप्तत्यधिकपंचशती
भूत्वा द्वापंचाशदग्रैकादशशती। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिष्वनुद्योते द्वे द्वे भूत्वाष्टौ। भाषापर्याप्तौ देवाहारकनारकाणामेकैकं भूत्वा त्रीणीति षष्ट्यग्रसप्त-
शशती २९। त्रिंशत्कान्युच्छ्वासपर्याप्तौ तीर्थसमुद्घातकेवलिन्येकं। संज्ञिनि प्राग्वत्सोद्योतषट्सप्तत्यग्रपंचशती। द्वित्रिचरिंद्रियासंज्ञिषु सोद्योते द्वे द्वे
१७६०
भूत्वाष्टौ। भाषापर्याप्तौ तीर्थोनकेवलिनः संस्थानविहायोगतिस्वरकृतानि चतुर्विंशतिः। मनुष्ये संस्थानसंहननसुभगादेययशस्कीर्तिविहायोगतिस्वर
कृतानि द्वापंचाशदग्रैकादशशती। संज्ञिनोऽपि तथा उद्योतरहितानि भवंति। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु ते द्वे द्वे भूत्वाष्टावित्येकविंशत्यग्रैकान्नत्रिंशच्छती
३० तीर्थोनसमुद्घातकेवलिभाषापर्याप्तौ चतुर्विंशतिभंगास्ते पुनरुक्ताः। एकत्रिंशत्कानि भाषापर्याप्तौ सतीर्थकेवलिन्येकं। संज्ञिनि सोद्योतानि
२९२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तथा द्वापंचाशदग्रैकादशशती । द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिषु सोद्योते द्वे द्वे भूत्वाष्टाविंशत्येकषट्चग्रैकादशशती ३१ तीर्थसमुद्घातकेवलिन्येकं पुनरुक्तं अयोगकेवलिनि सतीर्थनवकमेकं, अतीर्थाष्टकमेकं ९ । ८ मिलित्वा सर्वाणि ७७५८ ॥ ६०३–६०५ ॥ तानि पुनरुक्तान्याह
११६१ १ । १

स० चं०—वीसकानैं आदि दैकरि जे स्थान कहे तिनिविषैं इकतालीस जीवपदनिकी अपेक्षा भंग संभवे ते अनुक्रमतैं कहिए हैं—

तहां वीसका उदय सामान्य समुद्घात केवलीकैं प्रतरलोक पूरणका कार्माणकालविषैं है तिसविषैं एकही भंग है। बहुरि इकवीसके भंग कहिए है—देवगतिका विग्रहगतिरूप कार्माणविषैं एक ही भंग है। तीर्थंकरकैं समुद्घात संबंधी कार्माणविषैं एक ही भंग है १। मनुष्यगतिका विग्रहगतिसंबंधी कार्माणविषैं सुभग आदेय यशस्कीर्ति इन तीन युगलनिविषैं एक एकके उदयतैं आठ भंग है ।८। संज्ञी पंचेंद्रीका कार्माणविषैं भी तैसैं ही आठ भंग है ।८। बेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी इनके कार्माणविषैं यशस्कीर्तिके युगलतैं भए दोय भंग हैं तिनके भए ।८। बादर पृथ्वी अप तेज वायु प्रत्येक बनस्पती इन पंचनिके कार्माणविषैं भी यशस्कीर्तिके युगलतैं भए दोय दोय भंग हैं तिनके दश भए १०। सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु सूक्ष्म बादर साधारण इन छहौंके कार्माणविषैं एक एक ही भंग हैं तिनके छह भंग भए ।६। नारककैं कार्माणविषैं एक ही भंग है। लब्धि अपर्याप्तक सूक्ष्म पृथ्वीकायादिक भेदतैं सतरह प्रकार तिनके कार्माणविषैं एक एकही भंग है तिनके सतरह भए ऐसैं इकईसके स्थानविषैं साठि भंग हैं। बहुरि चौबीसके स्थाननिविषै भंग कहिए है—

ताका उदय पर्याप्तजीवनिका शरीर मिश्रकालविषैं है तहां बादर पृथ्वी अप तेज वायु प्रत्येक इन पंचनिविषैं यशस्कीर्ति युगलतैं भए दोय भंगनितैं दशभए १०। सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु बादर सूक्ष्म साधारण इनिविषैं एक एक भंगतैं छह भए। बहुरि लब्धि अपर्याप्तक ग्यारह तिनकैं शरीर मिश्रकालविषैं उदय है तहां एक एक ही भंग है तिनके ग्यारह भए। ऐसैं चौबीसका स्थानविषैं सत्ताईस भंग हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि पचीसकाविषैं देव आहारक नारकी इनकैं तौ एक एक भंगतैं तीन भए। बहुरि शरीर पर्याप्तिविषैं बादर पृथ्वी अप तेज वायु प्रत्येकनिके दोय दोय भंगतैं दश भए १०। सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु सूक्ष्म बादर साधारण इनकैं एक एक भंगतैं छह भए ऐसैं पचीसके स्थानविषैं उगणीस भंग हैं।

बहुरि छबीसका स्थानविषैं शरीरमिश्रकालविषैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञीनिकैं यशस्कीर्ति युग्मतैं भए दोय दोय भंगकरि आठ हो हैं। संज्ञी तिर्यंच अर मनुष्य इनिविषैं छह संहनन छह संस्थान सुभग आदेय यशस्कीर्ति युगल इनकरि दोयसै अठ्यासी दोयसै अठ्यासी भंग भए तिनके पांचसै छिहंतरि हो हैं। ५७६। तीर्थ रहित साधारण सामान्य समुद्घात केवलीकैं छह संस्थाननिके बदलनेतैं छह भंग हो हैं। ६। बहुरि लब्धि अपर्याप्तक छह तिनके एक एक भंगतैं छह भंग हो हैं। ६। बहुरि शरीर पर्याप्ति कालविषैं बादर पृथ्वीकायके आतप उद्योत सहितपनेतैं दोय स्थान तिनविषैं यश युग्मतैं दोय दोय भंग तिनके च्यारि भए। ४। बहुरि बादर अपकाय प्रत्येक बनस्पती इनविषैं भी दोय दोय भंगतैं च्यारि भए। ४। बहुरि उश्वास पर्याप्तिकालविषैं बादर पृथ्वी अप तेज वायु प्रत्येक इनविषैं यश युग्मतैं दोय दोय भंगनितैं दश भए १०। सूक्ष्म पृथ्वी अप तेज वायु सूक्ष्म बादर साधारण इनविषैं एक एक भंगतैं छह भए। ६। ऐसैं छबीसके स्थानविषैं छसै बीस भंग हैं।

बहुरि सत्ताईसके स्थानविषैं तीर्थंकर समुद्घात केवलीका शरीर मिश्रकालविषैं एक भंग है। देव आहारक नारकीनिका शरीर पर्याप्ति कालविषैं एक एक भंग तिनके तीन भए। ३। उश्वास पर्याप्ति कालविषैं बादर पृथ्वी कायके आतप उद्योततैं दोय स्थान तिनविषैं दोय दोय भंगतैं च्यारि भए। ४। बादर अप प्रत्येकके दोय दोय भंगतैं च्यारि भए ४ ऐसैं सत्ताईसके स्थानविषैं बारह भंग हैं।

बहुरि अठाईसके स्थानविषै शरीर पर्याप्ति कालविषैं निरतिशय समुद्घात केवलीकैं विहायोगति युगल छह संस्थान करि बारह भंग हो हैं। १२। मनुष्य अर संज्ञी तिर्यंचविषै सुभग आदेय यशस्कीर्ति विहायोगतिके युगल छह संस्थान छह संहनन इनकरि प्रत्येक पांचसै छिहंतरि भंग होंइ तिनके ग्यारहसै बावनभए। ११५२। वेंद्री तेंद्री

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चौंद्री असंज्ञी विषैं यश युग्मतैं दोय दोय भंग हैं तिनके आठ भए। ८। देव नारकी आहारक इनका आनपान पर्याप्तिकालविषै एक एक भंग तिनके तीन भए। ३। ऐसैं अठाईसके स्थानविषैं ग्यारहसे पिचहत्तरि भंग हैं ॥ ११७५ ॥

बहुरि गुणतीसके स्थानविषैं शरीर पर्याप्ति कालविषै तीर्थंकर समुद्घात केवलीकैं एक भंग है। संज्ञी तिर्यंच उद्योत सहित ताकैं पूर्वोक्त प्रकार पांचसे छिहंतरि भंग हैं। ५७६। वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी उद्योत सहित तिनकैं दोय दोय भंगतै आठ आठ भंग हैं। ८। बहुरि उश्वास पर्याप्तिविषैं निरतिशय समुद्घात केवलीकैं संस्थान छह बिहायोगति युगलकरि बारह भंग हैं। १२। मनुष्यविषैं वा संज्ञी पंचेंद्रीविषैं पूर्वोक्तप्रकार प्रत्येक पांचसे छिहंतरि भंग हैं तिनके ग्यारहसै बावन भए। ११५२। वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी उद्योत रहित तिनके दोय दोय भंगकरि आठ भंग हैं। ८। बहुरि भाषा पर्याप्ति कालविषैं देव आहारक नारकीकैं एक एक भंगकरि तीन भए ऐसैं गुणतीसके स्थानविषैं सतरहसे साठि भंग हैं।

बहुरि तीसके स्थानविषैं उश्वास पर्याप्ति कालविषैं तीर्थंकर समुद्घात केवलीकैं एक भंग है। उद्योत सहित संज्ञीकैं पूर्वोक्तप्रकार पांचसे छिहंतरि भंग हैं। ५७६। उद्योत सहित वेंद्री तेंद्री चौंद्री पचेंद्रीकैं दोय दोय भंगतैं आठ भंग हैं। ८। बहुरि भाषा पर्याप्ति कालविषै तीर्थरहित सामान्य केवलीकैं छह संस्थान विहायोगति युगल, स्वरयुगल, करि चौबीस भंग हैं। मनुष्यविषैं छह संस्थान छह संहनन सुभग आदेय यशस्कीर्ति विहायोगति स्वरके युगल इनिकरि ग्यारहसे बावन भंग हैं। ११५२। उद्योतरहित संज्ञी पंचेंद्री तिर्यंचविषैं भी तैसैं ही ग्यारहसे बावन भंग हैं। ११५२। वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञीकैं दोय दोय भंगकरि आठ भंग हैं। ८। ऐसैं तीसके स्थानविषै गुणतीससे इकईस भंग है। २९२१।

बहुरि तीर्थरहित समुद्घात केवलीकैं भाषापर्याप्तिकालविषैं चौईस भंग हैं ते पुनरुक्त हैं जातैं पूर्वै कहे तिनविषैं अर इनविषैं किछू विशेष नाहीं। बहुरि इकतीसके स्थानविषैं भाषा पर्याप्तिविषैं तीर्थंकर केवलीकैं एक भंग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है । १ । उद्योत सहित संज्ञी पंचेंद्रीविषैं पूर्वोक्त प्रकार ग्यारहसै बावन भंग हैं । ११५२ । उद्योत सहित बेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञी पंचेंद्रीके दोय दोय भंगनितैं आठ भए ऐसैं इकतीसके स्थानविषैं ग्यारहसै इकसठि भंग हैं ।११६१। तीर्थसहित समुद्घात केवलीविषैं एक भंग है, सो पुनरुक्त है । अयोग केवलीविषैं तीर्थंकर सहित नवका ताका एक भंग है । बहुरि तीर्थंकर रहित आठ ताका एक भंग ऐसैं सर्व मिलि सात हजार सातसै अठावन ७७५८ भंग भए । ६०३–६०५ । तिन पुनरुक्त भंगनिकौं कहैं हैं—

सामण्णकेवलिस्स समुग्घादगदस्स तस्स वाचि भंगा ।
तित्थस्सवि सगभंगा समेदि तत्थेक्कमवणिज्जो ॥ ६०६ ॥

सामान्यकेवलिनः समुद्घातगतस्य तस्य वचसि भंगाः ।
तीर्थस्यापि स्वकभंगाः समा इति तत्रैकोपनेयः ॥ ६०६ ॥

जी० प्र०—भाषापर्याप्तौ सामान्यकेवलिसमुद्घातसामान्यकेवलिनस्त्रिंशत्कस्य चतुर्विंशतिश्चतुर्विंशतिः । तीर्थकेवलिसमुद्घाततीर्थकेवलिनोरेक-त्रिंशत्कस्यैकैकश्च भंगाः सामाना इति पंचविंशतिरपनेतव्याः ॥ ६०६ ॥ अथ गुणस्थानेषु तान् भंगानाह—

स० चं०–भाषा पर्याप्तिकालविषैं सामान्यकेवली वा समुद्घात सहित सामान्यकेवलीकैं तीसके स्थानविषैं चौईस चौईस भंग समान हैं । बहुरि तीर्थंकर केवलीकैं वा समुद्घात तीर्थंकर केवलीकैं इकतीसके स्थानविषैं एक एक भंग है सो समान है तातैं ए पचीस भंग पुनरुक्त हैं ते ग्रहण न करने ॥ ६०६ ॥ आगे गुणस्थानविषैं तिन भंगनिकौं कहैं हैं—

णारयसण्णिमणुस्ससुराणं उवरिमगुणाण भंगा जे ।
पुणरुत्ता इदि अवणिय भणिया मिच्छस्स भंगेसु ॥ ६०७ ॥ ८११

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नारकसंज्ञिमनुष्यसुराणामुपरितनगुणानां भंगा ये।
पुनरुक्ता इत्यपनीय भणिता मिथ्यस्य भंगेषु ॥ ६०७ ॥

जी० प्र०—नारकसंज्ञितिर्यग्मनुष्यसुराणामुपरितनगुणस्थानेषु ये भंगास्ते पुनरुक्ता इति मिथ्यादृष्टिभंगेष्वपनीय भणिताः। तद्यथा—एकविंशतिकस्य षष्टौ तीर्थजो नेत्येकान्नषष्टिः। चतुर्विंशतिकस्य सप्तविंशतिः। पंचविंशतिकस्यैकान्नविंशतावाहारकशरीरमिश्रजो नेत्यष्टादश। षड्विंशतिकस्य विंशत्यग्रषट्छत्यां सामान्यसमुद्घातकेवलिसंस्थानजाः षड्नेति चतुर्दशाग्रषट्छती। सप्तविंशतिकस्य द्वादशस्वाहारकतीर्थजौ नेति दश। अष्टाविंशतिकस्य पंचसप्तत्यग्रैकादशशत्यां सामान्यसमुद्घातकेवलिनो द्वादश, आहारकस्यैकश्च नेति द्वाषष्ट्यग्रैकादशशती। नवविंशतिकस्य षष्ट्यग्रसप्तदशशत्यां सामान्यसमुद्घातकेवलिनो द्वादश, तीर्थसमुद्घानकेवलिन एकः, आहारकस्यैकश्च नेति षट्चत्वारिंशदग्रशती। त्रिंशत्कस्यैकविंशत्यग्रैकान्नत्रिंशच्छत्यां सामान्यकेवलिनश्चतुर्विंशतिः। तीर्थकेवलिन एकश्च नेति षण्णवत्यग्राष्टविंशतिशती। एकत्रिंशत्कस्यामीषु ११६१ तीर्थजो नेति षष्ट्यग्रैकादशशती। सासादने एकविंशतिकस्य वादरपृथ्व्यप्प्रत्येकेषु षट्। द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिष्वष्टौ। संज्ञिन्यष्टौ। मनुष्येऽष्टौ। देवगतावेकः इत्येकत्रिंशत्। चतुर्विंशतिकस्य वादरपृथ्व्यप्प्रत्येकेषु षट्। पंचविंशतिकस्य देवगतेरेकः। षड्विंशतिकस्य द्वित्रिचतुरिंद्रियासंज्ञिष्वष्टौ। संज्ञिमनुष्ययोः प्रत्येकमष्टाशीत्यग्रद्विशती इति चतुरशीत्यग्रपंचशती। नात्र सप्तविंशतिकाष्टविंशतिकोदयः शरीरपर्याप्त्यादिकालेषु मिथ्यादृष्टित्वसंभवात्। नवविंशतिकस्य देवनारकयोरेकैक इति द्वौ। त्रिंशत्कस्य तिर्यग्मनुष्ययोर्भाषापर्याप्तौ प्रत्येकं द्वापंचाशदग्रैकादशशतीति चतुरग्रत्रयोविंशतिशती। एकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनो भाषापर्याप्तावुद्योतयुतद्वापंचाशदग्रैकादशशती। मिश्रे देवनारकयोर्भाषापर्याप्तौ नवविंशतिके द्वौ। त्रिंशत्कस्य संज्ञिमनुष्ययोश्चतुरग्रत्रिंशतद्विसहस्री। एकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनि सोद्योतद्वापंचाशदग्रैकादशशती। असंयते एकविंशतिकस्य चतुर्गतिजेष्वेकैको भूत्वा चत्वारः। पंचविंशतिकस्य घर्मानारकवैमानिकदेवयोरेकैक इति द्वौ। षड्विंशतिकस्य भोगभूमितिरश्चां शुभोदयादेकः। कर्मभूमिसंज्ञिनां संस्थानसंहननजाः षट्त्रिंशदिति सप्तत्रिंशत्। सप्तविंशतिकस्य घर्माजवैमानिकयोर्द्वौ। अष्टाविंशतिकस्य भोगभूमिजघर्माजवैमानिकानामुच्छ्वासपर्याप्तौ त्रयः। मनुष्ये संस्थानसंहननविहायोगतिजा द्वासप्ततिरिति पंचसप्ततिः। नवविंशतिकस्य भोगभूमितिर्यग्मनुष्ययोरानापानपर्याप्तौ द्वौ। देवनारकयोर्भाषापर्याप्तौ द्वौ। कर्मभूमिमनुष्यस्यानापानपर्याप्तौ प्राग्वद्द्वासप्ततिरिति षट्सप्ततिः। त्रिंशत्कस्य भोगभूमितिर्यक्ष्वानापानपर्याप्तौ सोद्योत एकः। संज्ञितिर्यग्मनुष्ययोर्भाषापर्याप्तौ चतुरग्रत्रयोविंशतिशती पंचाग्रत्रिंशतद्विसहस्री। एकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनो द्वापंचाशदग्रैकादशशती। देशसंयते त्रिंशत्कस्य संज्ञितिर्यग्मनुष्ययोः संस्थानसंहननविहायोगतिस्वरप्रकृता अष्टाशीत्यग्रशती। सोद्योतैकत्रिंशत्कस्य संज्ञिनः चतुश्चत्वारिंशदग्रशतं। प्रमत्ते आहारकशरीरमिश्रपंचविंशतिकस्यैकः। शरीरपर्याप्तौ सप्तविंशतिकस्यैकः। आनापानपर्याप्तावष्टाविंशतिकस्यैकः, भाषापर्याप्तौ नवविंशतिकस्यैकः। त्रिंशत्कस्यौदारिकशरीरभाषापर्याप्तौ संस्थानसंहननविहायोगतिस्वरजाश्चतुश्चत्वारिंशदग्रैकशतं। अप्रमत्ते त्रिंशत्कस्य तथा तावंतः। उपशमकेषु चतुर्षु प्रत्येकं संस्थानत्रिसंहननस्वरविहायोगतिजा द्वासप्ततिः। क्षपकेषु चतुर्षु तथा संस्थानैकसंहननविहायोगतिस्वरजाः चतुर्विंशतिः। सयोगे समुद्घाते कार्मणे विंशतिकस्यैकः। सतीर्थे एकविंशतिकस्यैकः। औदारिकमिश्रे षड्विंशतिकस्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संस्थानजाः षट् । सतीर्थे सप्तविंशतिकस्यैकः । अष्टाविंशतिकस्य मूलशरीरप्रवेशे पर्याप्तौ संस्थानविहायोगतिजा द्वादश, सतीर्थे नवविंशतिकस्यैकः, आनापानपर्याप्तौ द्वादशेति त्रयोदश । सतीर्थे त्रिंशत्कस्यैकः । भाषापर्याप्तौ संस्थानस्वरविहायोगतिजाश्चतुर्विंशतिरिति पंचविंशतिः । सतीर्थे एकत्रिंशत्कस्यैकः । अयोगे नवकस्यैकोऽष्टकस्यैकः ॥ ६०७ ॥

स० चं०—नारकी संज्ञी तिर्यंच मनुष्य देव इनकैं ऊपरिके सासादनादिक गुणस्थाननिविषैं जे भंग हैं ते मिथ्या दृष्टिके भंगनिके समान हैं तातैं तिन पुनरुक्त भंगनिकों दूरिकरि एक मिथ्यादृष्टीहीका भंगनिविषैं तेभी कहे, सोई कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषै इकईसकेके साठि भंगनिविषैं तीर्थंकर संबंधी एक विना गुण साठि भंग हैं। चौबीसकेके सत्ताईस भंग हैं। पचीसकेके उगणीसविषैं आहारक शरीर मिश्र संबंधी एक विना अठारह भंग हैं। छबीसकेके छसै बीसविषैं समुद्घात केवलीके छह भंग विना छहसै चौदह भंग है। सत्ताईसकेके बारहविषैं आहारक तीर्थंकरके दोय विना दश भंग हैं। अठाईसके ग्यारहसै पिचहत्तरि भंगनिविषैं सामान्य समुद्घात केवलीके बारह, आहारकका एक, इन तेरह विना ग्यारहसै बासटि भंग हैं। गुणतीसके सतरहसै साठि भंगनिविषैं सामान्य समुद्घात केवलीके बारह, तीर्थंकर समुद्घात केवलीका एक, आहारकका एक, इन चौदह बिना सतरैसै छियालीस भंग हैं। तीसकेके गुणतीससै इकईस भंगनिविषैं सामान्य केवलीके चौईस, तीर्थंकर केवलीका एक, इन पचीस विना अठाईससै छिनवै भंग हैं। इकतीसकेके ग्यारहसे इकसाठि भंगनिविषै तीर्थंकरका एक बिना ग्यारहसै साठि भंग है।

बहुरि सासादन गुणस्थानविषैं इकईसकेके बादर पृथ्वी अप प्रत्येकके छह, वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञीके आठ, संज्ञीके आठ, मनुष्यके आठ, देवका एक, ऐसैं इकतीस भंग हैं। चौबीसकेके बादर पृथ्वी अप प्रत्येकके ही छह भंग हैं। पचीसकेका देवगतिका एक भंग है। छबीसकेके वेंद्री तेंद्री चौंद्री असंज्ञीके आठ, संज्ञी पंचेंद्रीके दोयसै अठ्यासी, मनुष्यके दोयसै अठ्यासी, ऐसैं पांचसै चौरासी भंग हैं। इस गुणस्थानविषै सत्ताईस अठाईसका उदय नाहीं है जातैं शरीर पर्याप्ति आदि कालनिविषैं एकेंद्रियादिककैं मिथ्यादृष्टिपनां ही संभवै है। बहुरि गुणतीसकेके देव नारकीका १०३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक एकतैं दोय भंग हैं। तीसकेका भाषापर्याप्तिविषैं संज्ञी तिर्यंचके ग्यारहसै बावन मनुष्यके ग्यारहसै बावन असैं तेईसमे च्यारि भंग हैं। इकतीसकेका संज्ञी भाषापर्याप्तिविषै उद्योत सहित स्थानका ग्यारासै बावन भंग हैं। बहुरि मिश्रगुणस्थानविषैं गुणतीसकेका देवनारकीका भाषापर्याप्तिविषै एक एक करि दोय भंग हैं। तीसकेके संज्ञी अर मनुष्यका मिलाएं तेईससै च्यारि भंग हैं। इकतीसकेके उद्योत सहित संज्ञीके ग्यारहसै बावन भंग हैं। बहुरि असंयत गुणस्थानविषै इकवीसकेके च्यार्‌योगातिका एक एक भंगकरि च्यारि भंग हैं। पचीसकेके धर्मा नारक वैमानिक देवकैं एक एक करि दोय भंग हैं। छबीसकेका भोगभूमिया तिर्यंचकैं शुभहीका उदय है तातैं एक अर कर्मभूमियां संज्ञी तिर्यंचकैं छह संस्थान छह संहननतैं छत्तीस असैं सैंतीस भंग हैं। सत्ताईसकेकैं धर्मानारक वैमानिक देवका एक एक करि दोय भंग हैं। अठाईसकेकैं भोगभूमियां तिर्यंच धर्मा नारकी वैमानिक देव इनिके उश्वास पर्याप्तिविषैं एक एककरि तीन मनुष्यके छह संस्थान छह संहनन विहायोगति युगलतैं बहत्तरि असैं पिचहत्तरि भंग हैं। गुणतीसकेके भोगभूमियां तिर्यंच मनुष्यके प्रशस्तहीका उदय है तातैं एक एक भंगकरि तिनके आनपान पर्याप्तिविषै दोय अर देवनारकीका भाषापर्याप्तिविषै एक एक भंगकरि दोय अर कर्म भूमिया मनुष्यका आनपान पर्याप्तिविषैं पूर्वोक्त प्रकार वहत्तरि असैं छिहंतरि भंग हैं। तीसकेके भोगभूमियां तिर्यंच उद्योत सहित ताका आनपान पर्याप्तिविषैं एक अर संज्ञी तिर्यंच वा मनुष्य कर्मभूमिया तिन दोऊनिके मिलाएं तेईससै च्यारि असैं तेईससै पांच भंग हैं। इकतीसकेके संज्ञी तिर्यंचके ही ग्यारहसै बावन भंग हैं। बहुरि देशसंयत गुणस्थानविषैं तीसकेके संज्ञी तिर्यंचके संस्थान छह संहनन छह विहायोगति युगल स्वरयुगलतैं एकसौ चवालीस असैं ही मनुष्यके एकसौ चवालीस असै दोयसै अठ्यासी भंग हैं। उद्योत सहित इकतीसकेके संज्ञी पंचेंद्रीका पूर्वोक्तप्रकार एकसौ चवालीस भंग हैं। बहुरि प्रमत्तविषैं आहारकका शरीर मिश्रविषै पचीसकेका एक, शरीर पर्याप्तिविषैं सताईसकेका एक, आनपान पर्याप्तिविषैं
अठाईसकाका एक, भाषापर्याप्तिविषैं गुणतीसकाका एक भंग है। औदारिक शरीरका भाषापर्याप्ति संबंधी तीसकेके ८१
छह संस्थान छह संहनन बिहायोगति युगल स्वर युगलतैं भए एकसौ चवालीस भंग हैं। बहुरि अप्रमत्तविषैं तीसकेके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेसैं ही एकसौ चवालीस भंग हैं। बहुरि उपशम श्रेणीवाले च्यारि गुणस्थाननिविषैं प्रत्येक छह संस्थान तीन संहनन स्वर युगल विहायोगति युगलतैं बहत्तरि बहत्तरि भंग हैं । बहुरि क्षपकश्रेणी वाले आदि गुणस्थाननिविषैं छह संस्थान एक संहनन विहायोगतियुगल स्वरयुगल थे चौईस चौईस भंग हैं । बहुरि सयोगीविषैं समुद्घातरूप कार्माणविषैं वीसकाका एक भंग है। तीर्थ सहित इकवीसकाका एक भंग है। औदारिकका मिश्रविषै छवीसके छह संस्थाननिकरि छह भंग हैं। तीर्थसहित सताईसकाका एक भंग है। अठाईसकाका मूल शरीरविषै प्रवेशकरता शरीर पर्याप्तिविषै छह संस्थान विहायोगतिके युगलतैं बारह भंग हैं। तीर्थ सहित गुणतीसकाका एक सामान्य केवलीका आनपान पर्याप्तिविषैं बारह ऐसैं तेरह भंग हैं। तीर्थ सहित तीसकाका एक, भाषापर्याप्तिविषैं सामान्यकेवलीका छह संस्थान स्वर विहायोगति युगलतैं चौईस ऐसैं पचीस भंग हैं। तीर्थ सहित इकतीसका एक भंग है । बहुरि अयोगीविषैं नवका एक भंग है। अष्टका एक भंग है ॥ ६०७ ॥

अडवण्णा सत्तसया सत्तसहस्सा य होंति पिंडेण ।
उदयट्ठाणे भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ॥ ६०८ ॥

अष्टपंचाशत्सप्तशतानि सप्तसहस्राणि च भवंति पिंडेन ।
उदयस्थाने भंगा असहायपराक्रमोद्दिष्टाः ॥ ६०८ ॥

जी० प्र०—असहायपराक्रमेण श्रीवर्धमानस्वामिना विंशतिकादिद्वादशनामोदयस्थानेष्वपुनरुक्तभंगाः पिंडेनाष्टपंचाशदग्रसप्तशतसप्तसहस्री समुद्दिष्टा भवंति। ७७५८। अत्र नारकसंज्ञितिर्यग्मनुष्यदेवमिथ्यादृष्टिभंगेषु स्वस्वगुणप्रतिपन्नभंगोपलब्धेः पुनरुक्तत्वं ज्ञातव्यं ॥ ६०८॥ अथ नामसत्त्वस्थानप्रकरणमेकान्नविंशतिगाथाभिराह—

स० चं०—सहाय रहित पराक्रमके धारी बर्धमान स्वामी तिन बीसका आदि बारह नामकर्मके उदय स्थान तिनविषैं अपुनरुक्त भंग हैं ते मिलाइ करि अठावन अधिक सातसै सहित सातहजार ७७५८ कहे हैं। इहां नारकी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संज्ञी पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्य देव इनके मिथ्यादृष्टि गुणस्थानविषैं जे भंग कहे तिनके सासादनादिकविषैं जे भंग कहे तिनस्यों जिनके समान हैं ते सासादनादिकके भंग पुनरुक्त जानने ॥ ६०८ ॥ आगैं नामकर्मका सत्त्वस्थानका प्रकरण उगणीस गाथानिकरि कहैं हैं—

तिदुइगिणउदी णउदी अडचउदोअहियसीदि सीदी य।
ऊणासीदट्ठत्तरि सत्तत्तरि दस य णव सत्ता ॥ ६०९ ॥

त्रिद्व्येकनवतिः नवतिः अष्टचतुर्द्व्यधिकाशीतिरशीतिश्च।
एकोनाशीत्यष्टसप्तती सप्ततिः दश च नव सत्त्वानि ॥ ६०९ ॥

जी० प्र०—त्रिनवतिर्द्वानवतिरेकनवतिर्नवतिरष्टाशीतिश्चतुरशीतिर्द्व्यशीतिरशीतिरेकोनाशीतिरष्टसप्ततिः सप्तसप्ततिर्दश नव च प्रकृतयः नामकर्मसत्त्वस्थानानि त्रयोदश भवंति ॥ ६०९ ॥ तेषामुपपत्तिमाह—

स० चं०—तरेणवै बाणवै इक्याणवै निंवै अठ्यासी चौरासी वियासी अस्सी गुण्यासी अठहत्तरि सतहत्तरि दश नव प्रकृतिरूप नामकर्मके सत्त्वस्थान तेरह हैं ॥ ६०९ ॥ तिनका विधान कहैं हैं—

सव्वं तित्थाहारुभऊणं सुरणिरयणरदुचारिदुगे।
उव्वेल्लिदे हदे चउ तेरे जोगिस्स दसणवयं ॥ ६१० ॥

सर्वं तीर्थाहारोभयोनं सुरनिरयनरद्विचतुर्द्विके।
उद्वेल्लिते हते चतुष्कं त्रयोदश योगिनो दश नवकं ॥ ६१० ॥

जी० प्र०—सर्वनामप्रकृतयः प्रथमं तदेव तीर्थाहारकद्वयतदुभयैः क्रमेणोनितं द्वानवतिकैकनवतिकनवतिकत्वं प्राप्नोति। तन्नवतिकं पुनः सुरद्विके पुनः नारकचतुष्के पुनः मनुष्यद्विके चोद्वेल्लितेऽष्टाशीतिकचतुरशीतिकद्व्यशीतिकत्वं। पुनः तानि त्रिनवतिकादीनि चत्वारि 'णिरयतिरिक्खदुवियल-मित्यादित्रयोदशसु क्षपितेषु अशीतिकैकान्नाशीतिकाष्टासप्ततिकसप्तसप्ततिकत्वं दशकं, नवकं चायोगकेवलिनि ॥ ६१० ॥ तयोः प्रकृतीराह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—सर्व नाम कर्मका प्रकृतिरूप तरेणवैका स्थान है । सर्व प्रकृतिनिमैंस्यों तीर्थंकर घटतैं बाणवैका स्थान हो है। आहारक द्विक घटैं इक्याणवैका हो है। तीर्थंकर आहारक द्विक दोन्यों घटैं निवैका हो है । बहुरि तिस निवैके स्थानविषैं देवगति वा आनुपूर्वीकी उद्वेलना भएं अठ्यासीका हो है। इसविषैं भी नारकचतुष्ककी उद्वेलना भएं चउरासीका हो है। इसविषैं भी मनुष्यद्विककी उद्वेलना भएं बियासीका हो है । बहुरि 'णिरयतिरक्ख दु वियलं' इत्यादि गाथोक्त अनिवृत्ति करणविषैं क्षय गईं तेरह प्रकृति ते तरेणवैमैंस्यों घटैं अस्सीका हो है। बाणवैमैंस्यों घटैं गुण्यासीका हो है। इक्याणवैमैंस्यों घटैं अठहत्तरिका हो है। निवैमैंस्यों घटैं सतहत्तरिका हो है । बहुरि अयोगकेवलीविषैं दशका अर नवका स्थान है। असैं सर्व नाम कर्मके सत्त्वस्थान जानने।

नाम कर्मके सत्त्व स्थाननिका यंत्र

१ तरेणवैका स्थान सर्व प्रकृतिरूप	१ अस्सीका स्थान अनिवृत्ति करणविषैं तेरह क्षयगईं तिनकरि रहित
१ बाणवैका स्थान तीर्थंकर रहित	१ गुण्यासीका स्थान तेरह अर तीर्थंकर रहित
१ इक्याणवैका स्थान आहारक द्विकरहित	१ अठहत्तरिका स्थान तेरह अर आहारद्विक रहित
१ निवैका स्थान तीर्थंकर आहारक द्विकरहित	१ सतहत्तरिका स्थान तेरह अर तीर्थंकर आहारक द्विक रहित
१ अठ्यासीका स्थान तीर्थंकर आहारक द्विक देवद्विककरि रहित	१ दशका स्थान तीर्थंकर अयोगीकै अंतसमय सत्तारूप
१ चौरासीका स्थान तीर्थंकर आहारकद्विक देवद्विक नरकचतुष्क करि रहित	१ नवका स्थान सामान्य अयोग केवलीकैं अंतसमय सत्तारूप
१ बियासीका स्थान तीर्थंकर आहारकद्विक देवद्विक नरकचतुष्क मनुष्यद्विक करि भी रहित	

॥ ६१० ॥ तिन दशका नवका स्थाननिविषैं प्रकृतिनिकौं कहै हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गयजोगस्स दु तेरे तदियाउगगोदइदि विहीणेसु ।
दस णामस्स य सत्ता णव चेव य तित्थहीणेसु ॥ ६११ ॥

गतयोगस्य तु त्रयोदशसु तृतीयायुष्कगोत्रेति विहीनेषु ।
दश नाम्नश्च सत्ता नव चैव च तीर्थहीनेषु ॥ ६११ ॥

जी० प्र०—तु–पुनः अयोगिकेवलिसत्त्वप्रकृतयः 'उदयगवारणराणू' इति त्रयोदशसु वेदनीयमनुष्यायुरुच्चैर्गोत्रेष्वपनीतेषु दश स्युः । तत्र तीर्थेऽपनीते नव स्युः ॥ ६११ ॥ अथोद्वेल्लितस्थानविशेषमाह—

स० चं०—बहुरि अयोगकेवलीविषैं सत्त्वप्रकृति 'उदयगवारणराणू' इत्यादि गाथाकरि कहीं तेरह हैं तिनविषैं वेदनीय मनुष्यायु उच्चगोत्र घटाएं नामकी दश प्रकृतिके सत्त्व हैं। तामैं तीर्थंकर प्रकृति बिना नवका हो है ॥६११॥ आगैं उद्वेलनाके स्थाननिका विशेष कहैं हैं—

गुणसंजादप्पयडिं मिच्छे बंधुदयगंधहीणम्मि ।
सेसुव्वेल्लणपयडिं णियमेणुव्वेल्लदे जीवो ॥ ६१२ ॥

गुणसंजातप्रकृतिं मिथ्ये बंधोदयगंधहीने ।
शेषोद्वेल्लनप्रकृतिं नियमेनोद्वेल्लयति जीवः ॥ ६१२ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ सर्वदापि बंधोदयगंधो नेति सम्यग्दर्शनादिगुणसंजातसम्यक्त्वसम्यग्मिथ्यात्वाहारकद्वयप्रकृतीः शेषोद्वेल्लनप्रकृतीश्च नियमेन मिथ्यादृष्टिरेवोद्वेल्लयति ॥ ६१२ ॥ तत्क्रममाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं जिनि प्रकृतिनिके बंधका वा उदयका गंध कहिए बासनामात्र सोभी नाहीं ऐसी सम्यक्त्वादि गुणतैं उपजीं सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनी आहारकद्विक इनि च्यारि प्रकृतिनिका बहुरि अवशेष उद्वेलन प्रकृतिनिके उद्वेलना मिथ्यादृष्टिहीविषैं हो है ताका अनुक्रम कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्थत्तादाहारं पुव्वं उव्वेल्लदे तदो सम्मं ।
सम्मामिच्छं तु तदो एगो विगलो य सगलोय ॥ ६१३ ॥

शस्तत्वादाहारं पूर्वमुद्वेल्लयति ततः सम्यक् ।
सम्यग्मिथ्यं तु तत एको विकलश्च सकलश्च ॥ ६१३ ॥

जी० प्र०—प्रशस्तत्वादाहारकद्वयं पूर्वं चतुर्गतिकमिथ्यादृष्टिः उद्वेल्लयति, ततः पश्चात् सम्यक्त्वप्रकृतिं, ततः पश्चात् सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिं, ततः पश्चात् शेषसुरद्विकादीन्येकेंद्रियो विकलेंद्रियः सकलेंद्रियश्च ॥ ६१३ ॥ तदुद्वेल्लनावसरकालमाह—

स० चं०—आहारकद्विक प्रशस्त प्रकृति है तातैं च्यार्‍यो गतिका मिथ्यादृष्टि जीव पहिलैं आहारकद्विककी उद्वेलना करै तहां पीछैं सम्यक्त्वमोहनी ता पीछैं सम्यग्मिथ्यात्व मोहनीकी करै तहां पीछैं अवशेष देवद्विकादिक की एकेंद्री वा विकलेंद्री वा पचेंद्री उद्वेलना करै है ॥ ६१३ ॥ तिस उद्वेलनाके अवसरका काल कहैं हैं—

वेदगजोग्गे काले आहारं उवसमस्स सम्मत्तं ।
सम्मामिच्छं चेगे वियले वेगुव्वछक्कं तु ॥ ६१४ ॥

वेदकयोग्ये काले आहारमुपशमस्य सम्यक्त्वं ।
सम्यग्मिथ्यं चैकस्मिन् विकले वैगूर्वषट्कं तु ॥ ६१४ ॥

जी० प्र०—वेदकयोग्यकाले आहारकद्वयमुद्वेल्लयति । उपशमकाले सम्यक्त्वप्रकृतिं सम्यग्मिथ्यात्वप्रकृतिं च । एकविकलेंद्रियेषु वैक्रियिकषट्कं ॥ ६१४ ॥ तौ कालौ लक्षयति—

स० चं०—वेदक योग्य कालविषैं तो आहारक द्विककी उद्वेलना करै है अर उपशमकालविषैं सम्यक्त्व प्रकृति वा सम्यग्मिथ्यात्व प्रकृतिकी अर एकेंद्री विकलेंद्री जीव वैक्रियिक षट्ककी उद्वेलना करै है ॥ ६१४ ॥ तिन दोऊ कालनिका लक्षण कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदधिपुधत्तं तु तसे पल्लासंखूणमेगमेयक्खे ।
जाव य सम्मं मिस्सं वेदगजोग्गो य उवसमस्स तदो ॥ ६१५ ॥

उदधिपृथक्त्वं तु त्रसे पल्यासंख्योनमेकमेकाक्षे ।
यावच्च सम्यं मिश्रं वेदकयोग्यश्च उपशमस्य ततः ॥ ६१५ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्याः स्थितिसत्वं यावत्त्रसे उदधिपृथक्त्व एकाक्षे च पल्यासंख्यातैकभागोनसागरोपममवशिष्यते तावद्वेदकयोग्य-कालो भरायते । तत उपर्युपशमकाल इति ॥ ६१५ ॥ तेजोद्वयस्योद्वेल्लनप्रकृतीराह——

स० चं०—सम्यक्त्व मोहनी अर मिश्रमोहनी इनकी जो पूर्वै स्थितिबंधी थी सो वह सत्तारूप स्थिति त्रसकैं तौ पृथक्त्व सागर प्रमाण अवशेष रहै अर एकेंद्रीकैं पल्यका असंख्यातवां भागकरि हीन एक सागर प्रमाण अवशेष रहै तावत्काल तौ वेदक योग्य काल कहिए । बहुरि ताके ऊपरि जो तिसतैं भी सत्तारूप स्थिति घाटि होइ तहां उपशम योग्य काल कहिए ॥ ६१५ ॥ आगैं तेज बात कायिककैं उद्वेलन प्रकृतिनिकौं कहैं हैं——

तेउदुगे मणुवदुगं उच्चं उव्वेल्लदे जहण्णिदरं ।
पल्लासंखेज्जदिमं उव्वेल्लणकालपरिमाणं ॥ ६१६ ॥

तेजोद्विके मनुष्यद्विकमुच्चमुद्वेल्ल्यते जघन्येतरत् ।
पल्यासंख्यियमुद्वेल्लनकालपरिमाणं ॥ ६१६ ॥

जी० प्र०—तेजोवातकायिकयोर्मनुष्यद्विकमुच्चैर्गोत्रं चोद्वेल्ल्यते । जघन्यमुत्कृष्टं चोद्वेल्लनकारणकालप्रमाणं पल्यासंख्यातैकभागः ॥ ६१६ ॥ तदेवाह—

स० चं०—तेज कायिक बात कायिकविषैं मनुष्यद्विक उच्चगोत्र ए तीन उद्वेलनरूप हो हैं । तिस उद्वेलन करनेके ८२०
कालका प्रमाण जघन्य वा उत्कृष्ट पल्यके असंख्यातवे भाग प्रमाण जानना । इतने कालकरि तिनकी सर्व स्थितिके निषेकनिकौं उद्वेलना रूप करै है ॥ ६१६ ॥ सोई कहिए है——

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पल्लासंखेज्जदिमं ठिदिमुव्वेल्लदि मुहुत्तअंतेण ।
संखेज्जसायराठिदिं पल्लासंखेज्जकालेण ॥ ६१७ ॥

पल्यासंख्येयिमां स्थितिमुद्वेल्लयति मुहूर्तांतरेण ।
संख्येयसागरास्थितिं पल्यासंख्येयकालेन ॥ ६१७ ॥

जी० प्र०— अंतर्मुहूर्तकालेन पल्यासंख्यातैकभागस्थितिमुद्वेल्लयति । स संख्यातसागरोपमस्थितिं कियत्कालेनेति प्रश्ने पल्यासंख्यातैकभागेनेत्युत्तरं । तद्यथा—

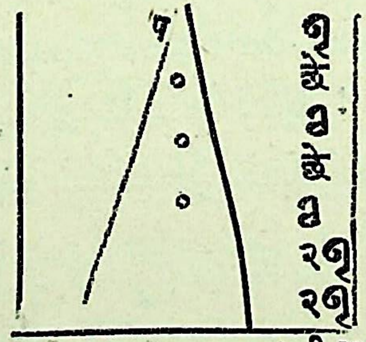

अस्याः स्थितेरग्रतनभागे पल्यच्छेदासंख्यातैकभागक..क अधोगलनरूपांतर्मुहूर्तेनाधिकं प्रमाणं २७ छे a तत्कांडकपतनकालोंतर्मुहूर्तः फलं २७

स्थितिः संख्यातसागारत्वात्संख्यातपल्यानि इच्छा प ७ । लब्धं प a ॥ ६१७ ॥ अथ सम्यक्त्वादिविराधनावारानाह—

स० चं०—पूर्वें जो बंधी थी ऐसी सत्तारूप स्थिति नाम पल्यका असंख्यातवां भाग प्रमाण स्थितिकौं एक अंतमुहूर्त कालविषैं उद्वेलना करे तौ संख्यात सागर प्रमाण मनुष्यद्विकादिककी सत्तारूप स्थितिकौं कितने कालविषैं उद्वलेना करे ? यहु प्रश्न होतैं तहां उत्तर ऐसा कि—पल्यका असंख्यातवां भागप्रमाणकालविषैं तिस सर्व स्थितिकी उद्वेलना करै, सोई कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इस स्थितिका अग्रतन भागविषैं पल्यके अर्धच्छेदनिके असंख्यातवै भागप्रमाण कांडक अधोगलन रूप अंतर्मुहूर्तकरि अधिक सो याकौं तौ प्रमाण राशि करिए बहुरि तिस कांडकका पडना—उद्वेलनारूप होना ताका काल अंतमुहूर्त है याकौं फलराशि करिए। बहुरि सर्वस्थिति संख्यात सागर प्रमाण याकौं इच्छाराशि करिए। फलकौं इच्छाकरि गुणैं प्रमाणका भाग दीएं पल्यका असंख्यातवां भागही लब्धि राशिका प्रमाण हो है। इहां अंतर्मुहूर्तविषैं जितनी स्थितिके निषेक उद्वेलना रूप कीए ताका ही नाम कांडक जानना ॥ ६१७॥ आगैं सम्यक्त्वादिककी विराधना केती वार होइ ? सो कहैं हैं—

सम्मत्तं देसजमं अणसंजोजणविहिं च उक्कस्सं।
पल्लासंखेज्जादिमं वारं पडिवज्जदे जीवो ॥ ६१८ ॥

सम्यक्त्वं देशसंयतमनसंयोजनविधिं चोत्कृष्टं।
पल्यासंख्येयं वारं प्रतिपद्यत जीवः ॥ ६१८ ॥

जी० प्र०—प्रथमोपशमसम्यक्त्वं वेदकसम्यक्त्वं देशसंयममनंतानुबंधिविसंयोजनविधिं चोत्कृष्टेन पल्यासंख्यातैकभागवारान् प्रतिपद्यते जीवः। उपरि नियमेन सिद्धयत्येव ॥ ६१८ ॥

स० चं०—प्रथमोपशम सम्यक्त्व अर वेदक सम्यक्त्व अर देशसंयम अर अनंतानुबंधीका विसंयोजनका विधान इन च्यारिकौं उत्कृष्टपनैं जीव पल्यका असंख्यातवां भागका जितने समय होंहि तितनीबार छोडि ग्रहण करै है पीछैं सिद्धि पदहीकौं पावै है ॥ ६१८ ॥

चत्तारि वारमुवसमसेढिं समरुहदि खविदकम्मंसो।
बत्तीसं वाराइं संजममुवलहिय णिव्वादि ॥ ६१९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चतुरोवारानुपशमश्रेणिं समारोहति क्षपितकर्मांशः ।
द्वात्रिंशद्वारान् संयममुपलभ्य निर्वाति ॥ ६१९ ॥

जी० प्र०—उपशमश्रेणिमुत्कृष्टेन चतुर्वारानेवारोहति । क्षपितकर्मांशो जीवः, उपरि नियमेन क्षपकश्रेणिमेवारोहति । संयममुत्कृष्टेन द्वात्रिंशद्वारान् प्राप्य ततो निर्वात्येव ॥ ६१९ ॥

स० चं०—उत्कृष्टपनैं उपशम श्रेणीकौं च्यारि बारही चढै पीछै क्षय किए हैं कर्मका अंश जानें ऐसा होइ क्षपक श्रेणी ही चढै । बहुरि सकल संयमकौं उत्कृष्ट पनैं वत्तीसवार ही धारै पीछै निर्वाण ही कौं पावै ॥ ६१९ ॥

तित्थाहाराणुभयं सव्वं तित्थं ण मिच्छगादितिये ।
तस्सत्तकम्मियाणं तग्गुणठाणं ण संभवई ॥ १ ॥

तीर्थाहारोभयं सर्वं तीर्थं न मिथ्यकादित्रये ।
तत्सत्त्वकर्मकाणां तद्गुणस्थानं न संभवति ॥ १ ॥

तीर्थाहारकयोरुभयेन युतं सत्त्वस्थानं मिथ्यादृष्टौ नास्ति । तीर्थयुतमाहारकद्वययुतं च नानाजीवापेक्षयास्ति । सासादने नानाजीवापेक्षयाप्याहारकतीर्थयुतानि न संति । मिश्रगुणस्थाने तीर्थयुतं नाहारयुतं चास्ति । तत्र कारणमाह । तत्तत्कर्मसत्त्वजीवानां तत्तद्गुणस्थानं न संभवति । कुतः ? तीर्थाहारोभयसत्त्वे मिथ्यात्वस्य तीर्थाहारयोरन्यतरसत्त्वेऽनंतानुबंधिनां तीर्थसत्त्वे सम्यग्मिथ्यात्वस्य चानुदयात् । १ । अथ चतुर्गतिविवक्षया गुणस्थानेषु नानासत्त्वस्थानानि योजयति—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं एक जीव अपेक्षा तीर्थंकर आहारकद्विक इनि दोऊनिकरि सहित स्थान न पाइए हैं । कै तो तीर्थंकर हीका सत्त्व होइ, कै आहारक द्विकहीका सत्त्व होइ, अर नाना जीव अपेक्षा दोऊनिका सत्त्व मिथ्यादृष्टिविषै है । बहुरि सासादनविषै नानाजीव अपेक्षा भी आहारक तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान नाही है । बहुरि मिश्रविषै तीर्थंकर सहित सत्त्वस्थान है, आहारक सहित नाही है, जातैं तिनकर्मनिकी सत्तासहित जीवनिकै सो गुणस्थान न संभवै है । सोई कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीर्थंकर आहारक दोऊका सत्व होतैं मिथ्यात्वका उदय होइ नाहीं। तीर्थंकर वा आहारकविषै एक एकका भी सत्व होतैं मिथ्यात्व रहित अनंतानुबंधीका उदय होइ नाहीं। तीर्थंकरका सत्त्व होतैं "मिश्रमोहनीका उदय होइ आहारकद्विकका सत्त्व होतैं" मिश्र मोहनी का उदय होइ नाहीं। आगैं च्यारि गतिकी विवक्षाकरि गुणस्थानविषै नामकर्मके सत्त्वस्थान लगावै हैं--

सुरणरसम्मे पढमो सासणहीणेसु होदि बाणउदी।
सुरसम्मे णरणारयसम्मे मिच्छे य इगिणउदी ॥ ६२० ॥

सुरनरसम्ये प्रथमं सासनहीनेषु भवति द्वानवतिः।
सुरसम्ये नरनारकसम्ये मिथ्ये चैकनवतिः ॥ ६२० ॥

जी० प्र०--सुरसम्यग्दृष्टौ मनुष्यासंयतादिसम्यग्दृष्टौ च त्रिनवतिकं संभवति। सासादनवर्जितचातुर्गतिकेषु द्वानवतिकं। सुरसम्यग्दृष्टौ मनुष्य-नारकसम्यग्दृष्टिमिथ्यादृष्टौ चैकनवतिकं ॥ ६२० ॥

स० चं०--तरेणवैका सत्वस्थान देव असंयत सम्यग्दृष्टीविषैं वा मनुष्य असंयतादिक सम्यग्दृष्टीविषैं संभवै है। बहुरि बाणवैका स्थान सासादन रहित च्यार्योगतिके जीवनिविषैं संभवै है। बहुरि इक्याणवैका स्थान देव सम्यग्दृष्टीविषैं अर मनुष्य नारकी सम्यग्दृष्टी वा मिथ्यादृष्टीविषैं संभवै ॥ ६२० ॥

णउदी चदुग्गदिम्मि य तेरसखवगोत्ति तिरियणरमिच्छे।
अडचउसीदी सत्ता तिरिक्खमिच्छम्मि बासीदी ॥ ६२१ ॥

नवतिः चतुर्गतौ च त्रयोदशक्षपक इति तिर्यग्नरमिथ्ये।
अष्टचतुरशीतिः सत्ता तिर्यग्मिथ्ये द्व्यशीतिः ॥ ६२१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—चतुर्गतिकेऽत्रत्रयोदशक्षपकानिवृत्तिकरणांतं सर्वत्र नवतिकं संभवति। तिर्यग्मनुष्यमिथ्यादृष्टावेवाष्टाशीतिकं चतुरशीतिकं च सपदे उप्पण्णठाणेवीत्युक्तत्वात्। तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ द्व्यशीतिकं। मनुष्यद्विकोद्वेल्लकतेजोवाय्वोस्तिर्यग्गतेरन्यत्रानुत्पत्तेः ॥ ६२१ ॥

स० चं०—बहुरि निवैका स्थान आनिवृत्ति करणविषैं तेरह प्रकृति क्षय हो हैं तिसतैं नीचैं सर्वत्र च्यारयोगतिके जीवनिविषै संभवै है। बहुरि अठ्यासी चौरासीके दोऊ स्थान तिर्यंच वा मनुष्य मिथ्यादृष्टिविषै ही संभवै है जातैं 'सपदे उप्पण्णठाणेवि' इस गाथातैं एकेंद्रियादिकविषैं जहां देवद्विकादिककी उद्वेलना होइ तहां भी असी सत्ता पाइए। बहुरि सो जीव मरि तिर्यंचविषैं वा मनुष्यविषैं जहां उपजैं तहां भी असी सत्ता पाइए'। बहुरि बियासीका स्थान मिथ्यादृष्टी तिर्यंचविषैं ही संभवै है जातैं मनुष्यद्विककी उद्वेलना तेज वात कायिककैं होइ तहां असी सत्ता होइ बहुरि वह मरिकरि भी तिर्यंचहीविषैं उपजै अन्यत्र नाही तहां असी सत्ता होइ ॥ ६२१ ॥

सीदादिचउट्ठाणा तेरसखवगादु अणुवसमगेसु।
गयजोगस्स दुचरिमं जाव य चरिमम्हि दसणवयं ॥ ६२२ ॥

अशीत्यादिचतुःस्थानानि त्रयोदशक्षपकादनुपशामकेषु।
गतयोगस्य द्विचरमं यावच्च चरमं दशवनकं ॥ ६२२ ॥

जी० प्र०—अशीतिकादीनि चत्वारि तत्त्रयोदशक्षपकानिवृत्तिकरणादा अयोगद्विचरमसमयं, चरमसमये दशकं नवकं च ॥ ६२२ ॥ अथैकचत्वारिंशज्जीवपदेष्वाह—

स० चं०—असीकानैं आदि देकरि च्यारि स्थान तेरह प्रकृति क्षयसहित अनिवृत्तिकरणतैं लगाय अयोगीका द्विचरमसमयपर्यंत जानने दशका नवका सत्त्व अयोगीका अंतसमयविषैं बहुरि संभवै है ॥६२२॥ आगैं इकतालीस जीव पदनिविषैं कहैं हैं—

णिरये वा इगिणउदी उणदी भूआदिसव्वतिरियेसु।
बाणउदी णउदी अडचउबासीदी य होंति सत्ताणि ॥ ६२३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निरये द्व्येकनवतिर्नवतिर्भवादिसर्वतिर्यक्षु ।
द्वानवतिर्नवतिरष्टचतुर्द्व्यशीतिश्च भवंति सत्वानि ॥ ६२३ ॥

जी० प्र०—सत्वस्थानानि नारकेषु द्वानवतिकैकनवतिकनवतिकानि त्रीणि भवंति । पृथ्वीकायिकादिसर्वतिर्यक्षु द्वानवतिकनवतिकाष्टशीतिक चतुरशीतिकद्व्यशीतिकानि पंच ॥ ६२३ ॥

स० चं०—नाम कर्मके सत्वस्थान नारकीनिविषैं बाणवै इक्याणवै निवैके ए तीनू हैं। पृथ्वीकायिकादिक सर्व तिर्यंचनिविषैं बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीके पांच पांच स्थान हैं ॥ ६२३ ॥

बासीदिं वज्जित्ता बारसठाणाणि होंति मणुवेसु ।
सीदादिचउट्ठाणा छट्ठाणा केवलिदुगेसु ॥ ६२४ ॥

द्व्यशीतिं वर्जयित्वा द्वादशस्थानानि भवंति मानवेषु ।
अशीत्यादिचतुःस्थानानि षट्स्थानानि केवलिद्विकयोः ॥ ६२४ ॥

जी० प्र०—सत्वस्थानानि मनुष्येषु द्व्यशीतिकं वर्जित्वा शेषाणि द्वादश भवंति । सयोगे अशीतिकादीनि चत्वारि । अयोगे च षट् ॥६२४॥

स० चं०—मनुष्यनिविषैं बियासीका बिना अवशेष बारह सत्वस्थान हैं । सयोग केवलीविषैं अस्सीका आदि च्यारि स्थान हैं। अयोगीविषैं असीका आदि छह स्थान हैं ॥ ६२४ ॥

समविसमट्ठाणाणि य कमेण तित्थिदरकेवलीसु हवे ।
तिदुणवदी आहारे देवे आदिमचउक्कं तु ॥ ६२५ ॥

समविषमस्थानानि च क्रमेण तीर्थेतरकेवलिनोर्भवेयुः ।
त्रिद्विनवतिराहार देवे आदिमचतुष्कं तु ॥ ६२५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—केवल्युक्तस्थानेषु सयोगायोगयोः चतुःषट्सु सतीर्थातीर्थयोः क्रमेण समविषमाणि स्युः । आहारके त्रिनवतिकद्विनवतिके द्वे । वैमानिकेष्वाद्यानि चत्वारि ॥ ६२५ ॥

स० चं०—केवलीविषै स्थान कहे सयोगीविषैं च्यारि अयोगीविषैं छह तिनविषैं तीर्थंकर सहितविषैं समरूप तीर्थंकर रहितविषैं विषमरूप प्रकृति जाननी। सयोगीविषैं असी अठहत्तरिके अयोगीविषैं ते दोय अर दशका ऐसैं ए स्थान सम गिणतीकौं धरैं तीर्थंकरके सत्वसहित हैं। बहुरि सयोगीविषैं गुण्यासी सतहत्तरिके अयोगीविषैं ते दोय अर नवका ए स्थान विषम गिणतीकौं धरैं सामान्य केवलीके सत्वरूप हैं। बहुरि आहारकविषै तरेणवै बाणवैके दोय सत्वस्थान हैं। बहुरि वैमानिक देवनिविषैं आदिके च्यारि स्थान हैं॥ ६२५॥

बाणउदिणउदिसत्ता भवणतियाणं च भोगभूमाणं।
हेट्ठिमपुढविचउक्कभवाणं च य सासणे णउदी॥ ६२६॥

द्वानवतिनवतिसत्ता भवनत्रिकाणां च भोगभूमीनां।
अधस्तनपृथिवीचतुष्कभवानां च च सासने नवतिः॥ ६२६॥

जी० प्र०—सत्त्वस्थानानि भवनत्रयदेवानां सर्वभोगभूमितिर्यग्मनुष्याणामंजनाद्यधस्तनचतुःपृथ्वीनारकाणां च द्वानवतिकनवतिके द्वे। सर्वसासादनानां नवतिकमेव॥ ६२६॥

स० चं०—भवनत्रिक देवनिकैं सर्व भोगभूमिया मनुष्य तिर्यंचनिकैं अंजनादिक च्यारि नीचली पृथ्वीके नारकीनिकैं बाणवै निवैके दोय ही सत्वस्थान हैं। बहुरि सर्व ही सासादनवर्ती जीवनिकैं निवैका ही एक स्थान है॥ ६२६॥

मूलुत्तरपयडीणं बंधोदयसत्तठाणभंगा हु।
भणिदा हु तिसंजोगे एत्तो भंगे परूवेमो॥ ६२७॥ ८२७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मूलोत्तरप्रकृतीनां बंधोदयसत्त्वस्थानभंगा हि।
भणिता हि त्रिसंयोगे इतो भंगान् प्ररूपयामः॥ ६२७॥

जी० प्र०—मूलोत्तरप्रकृतीनां बंधोदयसत्त्वस्थानभंगाः खलु भणिताः। इतोऽग्रे त्रिसंयोगे भंगान् प्ररूपयामः खलु॥ ६२७॥ तद्यथा—

स० चं०—मूल प्रकृति वा उत्तरप्रकृति तिनके बंध उदय सत्वरूप स्थान वा भंग कहे। इहांतैं आगैं बंध उदय सत्ता इनिका त्रिसंयोगविषैं स्थान वा भंगनिकौं हम प्ररूपण करैं हैं॥ ६२७॥ सोई कहिए है—

अट्ठविहसत्तछब्बंधगेसु अट्ठेव उदयकम्मंसा।
एयविहे तिवियप्पो एयवियप्पो अबंधम्मि॥ ६२८॥

अष्टविधसप्तषड्बंधकेषु अष्टैव उदयकर्मांशाः।
एकविधे त्रिविकल्प एकविकल्पोऽबंधे॥ ६२८॥

जी० प्र०—अष्टविधसप्तविधषड्विधबंधकेषु उदयसत्त्वे अष्टाष्टविधे स्तः। एकविधबंधके तु सप्ताष्टविधे सप्तसप्तविधे चतुश्चतुर्विधे च स्तः। अबंधके चतुश्चतुर्विधे स्तः॥ ६२८॥ अथ तत्त्रिसंयोगभंगान् गुणस्थानेषु योजयति—

स० चं०—मूल प्रकृति ज्ञानावरणादि भेदतैं आठ प्रकार है तहां जिस जीवकै आठप्रकार वा सात प्रकार वा छह प्रकार मूल प्रकृतिनिका बंध होइ ताकैं उदय अर सत्व आठ आठ प्रकार ही जानना। बहुरि जाकैं एकप्रकार मूल प्रकृतिका बंध हैं ताकैं उदय सात प्रकार सत्व आठप्रकार अथवा उदय अर सत्व दोन्यूं सात सात प्रकार वा उदय अर सत्व दोन्यूं च्यारि च्यारि प्रकार पाइए है। बहुरि जाकैं एक भी मूल प्रकृतिका बंध नाहीं ताकैं उदय वा सत्व दोन्यूं च्यारि च्यारिका ही है॥ ६२८॥ आगैं इनिकौं गुणस्थाननिविषैं जोडै हैं—

१

ब	८	७	६	१	१	१	०
उ	८	८	८	७	७	४	४
स	८	८	८	८	७	४	४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिस्से अपुव्वजुगले विदियं अपमत्तओत्ति पढमदुगं ।
सुहुमादिसु तदियादी बंधोदयसत्तभंगेसु ॥ ६२९ ॥

मिश्रेऽपूर्वयुगले द्वितीयमप्रमत्त इति प्रथमद्विकं ।
सूक्ष्मादिषु तृतीयादिर्बंधोदयसत्त्वभंगेषु ॥ ६२९ ॥

जी० प्र०—तेषु बंधोदयसत्त्वभंगेषु गुणस्थानं प्रति मिश्रेऽपूर्वानिवृत्तिकरणयोश्च सप्ताष्टाष्टबंधोदयसत्त्वो द्वितीयभंगः स्यात् । शेषाप्रमत्तांतेषु षट्सु अष्टाष्टबंधोदयसत्त्वप्रथमभंगो द्वितीयभंगश्च स्यात् । सूक्ष्मसांपरायाद्ययोगांतेषु पंचसु क्रमेण तृतीयादयः षडष्टाष्टबंधोदयसत्त्वैकसप्ताष्टबंधोदयसत्त्वैकसप्तसप्तबंधोदयसत्त्वैकचतुश्चतुर्बंधोदयसत्त्वशून्यचतुश्चतुर्विधोदयसत्त्वभंगाः स्युः ॥ ६२९ ॥ अथोत्तरप्रकृतिष्वाह—

स० चं०—तिन बंध उदय सत्त्वके भंगनिविषैं गुणस्थाननि प्रति मिश्रविषैं अर अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणविषैं सात मूल प्रकृतिनिका बंध अर आठका उदय आठका सत्व ऐसा दूसरा ही भंग पाइए है। बहुरि मिश्रविना अवशेष मिथ्यादृष्ट्यादि अप्रमत्त पर्यंत छहविषैं आठ आठ हीका बंध उदय सत्तारूप प्रथम भंग अर सातका बंध आठ आठका उदय वा सत्व ऐसा दूसरा भंग पाइए है। बहुरि सूक्ष्म सांपराय अयोगी पर्यंतनिविषैं क्रमतैं तीसरा भंग नैं आदि देकरि छहका बंध आठ आठका उदय सत्व, अर एकका बंध सातका उदय आठका सत्व, अर एकका बंध सात सातका उदय सत्व, अर एकका बंध च्यारि च्यारिका उदय सत्व, अर बंधका अभाव च्यारि च्यारिका उदय सत्व, ऐसैं यथासंभव भंग पाइए हैं ॥ ६२९ ॥ आगैं उत्तर प्रकृतिनिविषैं कहैं हैं—

मि	सासा	मि	असं	देश	प्रमत्त	अप्र	अपू	अनि	सू	उप	क्षीण	सयो	अयोगी
बं ८।७	बं ८।७	बं ७	बं ८।७	बं ८।७	बं ८।७	बं ८।७	बं ७	बं ७	बं ६	बं १	बं १	बं १	बं०
उ ८।८	उ ८।८	उ ८	उ ८।८	उ ८।८	उ ८।८	उ ८।८	उ ८	उ ८	उ ८	उ ७	उ ७	उ ४	उ ४
स ८।८	स ८।८	स ८	स ८।८	स ८।८	स ८।८	स ८।८	स ८	स ८	स ८	स ८	स ७	स ४	स ४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधोदयकम्मंसा णाणावरणंतरायिए पंच।
बंधोपरेमेवि तहा उदयंसा होंति पंचेव ॥ ६३० ॥

बंधोदयकर्मांशा ज्ञानावरणांतराययोः पंच।
बंधोपरमेऽपि तथा उदयांशा भवंति पंचैव ॥ ६३० ॥

जी० प्र०—ज्ञानावरणांतराययोः सूक्ष्मसांपरायपर्यंतं बंधोदयसत्वानि पच पंच प्रकृतयो भवंति। बंधोपरमेऽप्युपशांतक्षीणकषाययोरुदयसत्वे तथा पंच पंच प्रकृतयः स्तः ॥ ६३० ॥

स० चं०—ज्ञानावरण अर अंतराय इनकी पांच पांच प्रकृति सूक्ष्म सांपराय पर्यंत बंध उदय सत्वरूप हैं। बंधका अभाव भएं उपशांत मोह क्षीण मोहविषैं उदय अर सत्वरूप ही पांच पांच प्रकृति हैं। इहां अंश नाम सत्व का जानना ॥ ६३० ॥

बिदियावरणे णवबंधगेसु चदुपंचउदय णवसत्ता।
छब्बंधगेसु एवं तह चदुबंधे छडंसा य ॥ ६३१ ॥
उवरदबंधे चदुपंचउदय णव छच्च सत्त चदु जुगलं।
तदियं गोदं आउं विभज्ज मोहं परं वोच्छं ॥ ६३२ ॥ जुम्मं।

ज्ञानावरणांतरायगुणस्थानेषु तत्त्रिसंयोगरचना—

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	०	०
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५
५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५	५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वितीयावरणे नवबंधकेषु चतुःपंचोदयः नवसत्ता ।
षड्बंधकेषु एवं तथा चतुर्बंधे षडंशाश्च ॥ ६३१ ॥
उपरतबंधे चतुःपंचोदयो नव षट् च सत्त्वं चतुष्कं युगलं ।
तृतीयं गोत्रमायुर्विभज्य मोहं परं वक्ष्ये ॥ ६३२ ॥ युग्मं ।

जी० प्र०—दर्शनावरणे मिथ्यादृष्टिसासादनयोर्नवबंधकयोश्चत्वारि पंच चोदयः । सत्त्वं नव । षड्बंधकेषु मिश्राद्युभयश्रेण्यपूर्वकरणप्रथमभागांतेष्वप्युदयसत्त्वे एवमेव । चतुर्बंधके तद्द्वितीयभागादा उपशमकसूक्ष्मसांपरायांतं, षोडशक्षपकानिवृत्त्यंतं चोदयस्तथैव, सत्त्वं नव, षोडशक्षपकादुपरि तत्सूक्ष्मसांपरायांतं च उदयस्तथैव, सत्त्वं षट् । उपरतबंधे उदयस्तथैव, सत्त्वं उपशांते नव क्षीणद्विचरमांते षट् । चरमे उभयमपि चत्वारि । वेदनीयगोत्रायुस्त्रिसंयोगभंगान् भक्त्वा गुणस्थानेषु संयोज्याग्रे मोहनीयं वक्ष्यामि ॥ ६३१–६३२ ॥

स० चं०—दूसरा दर्शनावरणविषैं नवका जिनकैं बंध ऐसैं मिथ्यादृष्टि सासादन तिनके उदय पांचका वा च्यारिका अर सत्व नवहीका जाननां । बहुरि छहका जिनके बंध पाइए ऐसे मिश्रादिक दोऊ श्रेणीरूप अपूर्वकरणका प्रथमभागपर्यंत तिनकैं भी ऐसैं ही उदय च्यारिका वा पांचका सत्व नवका है । बहुरि च्यारिका जिनकैं बंध ऐसे अपूर्वकरणके दूसरे भागतैं लगाय उपशमक सूक्ष्म सांपराय पर्यंत वा सोलह प्रकृतिका क्षय करनेवाला क्षपक अनिवृत्ति करण पर्यंतविषैं उदय तैसैं ही च्यारि वा पांचका है । सत्व नवका है अर सोलह प्रकृति क्षपकतैं ऊपरि सूक्ष्म सांपराय पर्यंत उदय तौ तैसैं ही अर सत्व छहका है । बहुरि जिनके बंधका अभाव भया तिनकैं उदय तैसैं ही च्यारि वा पांचका है । सत्व उपशांत कषायविषै नवका क्षीणकषायविषै द्विचरम समय पर्यंत छहका है । बहुरि क्षीणकषायका अंतसमयविषैं उदय वा सत्व दोन्यूं ही च्यारि च्यारिका है । बहुरि वेदनीय गोत्र आयुके त्रिसंयोग भंगनिका विभागकरि गुणस्थाननिविषैं लगाइ आगै मोहनीयके कहौंगा ॥ ६३१ ॥ ६३२ ॥

१	मि	सा	मि	असं	देश	प्र	अप्र	अपू उ क्ष		अ नि उ क्ष		सू उ क्ष		उ	क्षी
बं	९	६	६	६	६	६	६	६।४	६।४	४	४	४	४	०	०।०
उ	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५	४।५।४
स	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९	९।६	९	६	९	६।४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सादासादेक्कदरं बंधुदया होंति संभवट्ठाणे ।
दोसत्तं जोगित्ति य चरिमे उदयागदं सत्तं ॥६३३॥
छट्ठोत्ति चारि भंगा दो भंगा होंति जाव जोगिजिणे ।
चउभंगाऽजोगिजिणे ठाणं पडि वेयणीयस्स ॥६३४॥ जुम्मं ।

सातासातैकतरं बंधोदयौ भवतः संभवस्थाने ।
द्विसत्वं योगीति च चरमे उदयागतं सत्त्वं ॥ ६३३ ॥
षष्ठ इति चत्वारो भंगा द्वौ भंगौ भवतो यावद्योगिजिनं ।
चतुर्भंगा अयोगिजिने स्थानं प्रति वेदनीयस्य ॥ ६३४ ॥ युग्मं ।

जी॰ प्र॰—सातासातैकतरमेव योग्यस्थाने बंध उदयो वा स्यात् । सत्त्वं सयोगांतं द्वे द्वे । अयोगे ते उदयागते, तेन वेदनीयस्य गुणस्थानं प्रति भंगाः षष्ठांतं । सातबंधोदयोभयसत्त्वं सातबंधासातोदयोभयसत्त्वं । असातबंधसातोदयोभयसत्त्वं असातबंधोदयोभयसत्त्वमिति चत्वारः । उपरि सयोगांतं केवलं सातस्यैव बंधात् तद्बंधतदुदयोभयसत्त्वं तद्बंधासातोदयोभयसत्त्वमिति द्वौ[२] । अयोगे सातोदयोभयसत्त्वं, असातोदयोभयसत्त्वं सातोदयसत्त्वमसातोदयसत्त्वमिति चत्वारः ॥ ६३३ ॥ ६३४ ॥ अथ गोत्रस्याह—

१

सा	सा	अ	अ
सा	अ	सा	अ
२	२	२	२

२

सा	सा
सा	अ
२	२

३

०	०	०	०
सा	अ	सा	अ
२	२	सा	अ

गुणस्थानसंदृष्टिः

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
४	४	४	४	४	४	२	२	२	२	२	२	२	४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—साता वा असाताविषैं एकहीका बंध वा उदय, योग्य स्थानविषैं हो है। बहुरि सत्व है सो सयोगी पर्यंत दोय दोयहीका है। अयोगी का अंत समयविषैं उदय जाका होइ तिसहीका सत्व है तातैं वेदनीयके गुणस्थान प्रतिभंग छठा प्रमत्तपर्यंत तौ साताका बंध वा उदय सत्व दोऊनिका अथवा साताका बंध असाताका उदय सत्व दोऊनिका अथवा असाताका बंध साताका उदय सत्व दोऊनिका अथवा असाताहीका बंध वा उदय अर सत्व दोऊनिका ऐसैं च्यारि भंग हैं। बहुरि ऊपरि सयोगी पर्यंत केवल साताहीका बंध है तातैं साताहीका बंध वा उदय अर सत्व दोऊनिका अथवा साताका बंध असाताका उदय सत्व दोऊनिका ऐसैं दोय ही भंग हैं। बहुरि अयोगीविषैं बंधका तौ अभाव है तातैं साताका उदय, सत्व दोऊनिका अथवा असाताका उदय, सत्व दोऊनिका अथवा साताहीका उदय साताहीका सत्व अथवा असाताहीका उदय असाताहीका सत्व ऐसैं च्यारि भंग हैं॥ ६३३-६३४॥

आगैं गोत्रके कहैं हैं—

णीचुच्चाणेकदरं बंधुदया होंति संभवट्ठाणे।
दोसत्ताजोगित्ति य चरिमे उच्चं हवे सत्तं॥६३५॥

नीचोच्चयोरेकतरं बंधोदयौ भवतः संभवस्थाने।
द्विसत्त्वमयोगीति च चरमे उच्चं भवेत्सत्त्वं॥६३५॥

जी० प्र०—गोत्रद्वयबंधसंभवस्थाने उच्चनीचैकतरमेव बंधोदयौ स्तः। सत्त्वमयोगिद्विचरमसमयपर्यंतमुभयं स्यात्। चरमसमये सत्त्वमुच्चमेवं॥६३५॥

स० चं०—गोत्रद्विकका बंधरूप यथासंभव स्थानविषैं उच्च वा नीचविषैं एकहीका बंध वा उदय हो है। बहुरि सत्व अयोगीका द्विचरम समय पर्यंत दोऊनिका है। ऊपरि एक उच्चहीका है॥ ६३५॥

१	बं	नी	नी	उ	उ	नी	०	०
	उ	नी	उ	उ	नी	नी	उ	उ
	स	उ	२	२	२	नी	उ	उ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उच्चुव्वेल्लिदतेऊ वाउम्मि य णीचमेव सत्तं तु।
सेसिगिवियले सयले णीचं च दुगं च सत्तं तु ॥ ६३६ ॥

उच्चोद्वेल्लिततेजसि वायौ च नीचमेव सत्त्वं तु।
शेषैकविकले सकले नीचं च द्विकं च सत्त्वं तु ॥ ६३६ ॥

जी॰ प्र॰—उच्चोद्वेल्लिततेजोवाय्वोस्तु सत्त्वं नीचमेव स्यात्। तु-पुनः शेषैकविकलसकलेंद्रियेषु सत्त्वं नीचं चोभयं च स्यात् ॥ ६३६ ॥ तद्यथा—

स॰ चं॰—उच्चगोत्रकी उद्वेलना जिनकैं भई ऐसे तेजकायिक वातकायिक तिनकैं नीचगोत्रहीका सत्व हैं बहुरि अवशेष एकेंद्री विकलेंद्रा सकलेंद्रीनिकैं सत्व नीचहीका वा दोऊनिका है ॥ ६३६ ॥ सोई कहिए है—

उच्चुव्वेल्लिदतेऊ वाऊ सेसे य वियलसयलेसु।
उप्पण्णपढमकाले णीचं एयं हवे सत्तं ॥ ६३७ ॥

उच्चोद्वेल्लिततेजसि वायौ शेषे च विकलसकलेषु।
उत्पन्नप्रथमकाले नीचमेकं भवेत्सत्त्वं ॥ ६३७ ॥

जी॰ प्र॰—उच्चोद्वेल्लिततेजोवाय्वोस्तदागतशेषैकविकलेंद्रियेषूत्पन्नप्रथमकालांतर्मुहूर्ते चैकं नीचमेव सत्त्वं स्यात्। उपर्युच्चं बध्नाति तदोभयसत्त्वं स्यादित्यर्थः ॥ ६३७ ॥

स॰ चं॰—उच्चगोत्रकी उद्वेलना संयुक्त तेजकायिक वातकायिकविषैं एक नीच गोत्रहीका सत्व है। बहुरि तेज वातकायिक मरि जहां उपजैं ऐसे एकेंद्री विकलेंद्री सकलेंद्री तिर्यंच तिनविषैं उपजनेतैं अंतर्मुहूर्त पर्यंत पहिले कालविषैं एक नीचहीका सत्व है। पीछैं उच्चकौं बाधैं तब तिनकै दोऊनिका सत्व हो है ॥ ६३७ ॥

मिच्छादिगोदभंगा पण चदु तिसु दोण्णि अट्ठाणेसु।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक्केक्का जोगिजिणे दो भंगा हौंति णियमेण ॥ ६३८ ॥

मिथ्यादौ गोत्रभंगाः पंच चत्वारः त्रिषु द्वौ अष्टस्थानेषु ।
एकैकोऽयोगिजिने द्वौ भंगौ भवंति नियमेन ॥ ६३८ ॥

जी० प्र०—गोत्रस्य भंगाः गुणस्थानेषु नियमेन मिथ्यादृष्टौ नीचबंधोदयोभयसत्त्वं। नीचबंधोच्चोदयोभयसत्त्वं, उच्चबंधोदयोभयसत्त्वं, उच्चबंधनीचोदयोभयसत्त्वं नीचबंधोदयसत्त्वं चेति पंच भवंति । सासादने चरमो नेति चत्वारः तस्य तेजोद्वयेऽनुत्पत्तेरुच्चानुद्वेल्लनात् । मिश्रादित्रये उच्चबंधोदयोभयसत्त्वं, उच्चबंधनीचोदयोभयसत्त्वं चेति द्वौ द्वौ । प्रमत्तादिसूक्ष्मसांपरायांतमुच्चबंधोदयोभयसत्त्वमित्येकः। उपरि सयोगांतमुच्चोदयोभयसत्त्वमित्येकः । अयोगिजिने उच्चोदयोभयसत्त्वं उच्चोदयसत्त्वं चेति द्वौ ॥ ६३८ ॥ अथायुषस्त्रयोदशगाथासूत्रैराह—

स० चं०—नियमकरि गोत्रके भंग गुणस्थाननिविषैं कहिए है—मिथ्यादृष्टिविषैं नीचका बंध अर उदय, बहुरि सत्व दोऊनिका अथवा नीचका बंध उच्चका उदय, सत्व दोऊनिका अथवा उच्चका बंध अर उदय बहुरि सत्व दोऊनिका अथवा उच्चका बंध नीचका उदय, सत्व दोऊनिका अथवा नीचहीका बंध उदय सत्व ऐसैं पंच भंग है। बहुरि सासादनविषैं अंतका नीचहीका बंध उदय सत्वरूप भंग नाहीं अवशेष च्यारि हैं जातैं तेजोद्विकविषैं सासादन नाहीं है। बहुरि मिश्रादिक तीनविषैं उच्चका बंध अर उदय सत्व दोऊनिका अथवा उच्चका बंध नीचका उदय सत्व दोऊनिका ऐसैं दोय दोय भंग है। बहुरि प्रमत्तादि सूक्ष्मसांपराय पर्यंतविषैं उच्चहीका बंध उच्चहीका उदय, सत्व दोऊनिका एक एक ही भंग है। ऊपरि सयोगी पर्यंत बंधका अभाव उच्चका उदय सत्व दोऊनिका ऐसाही एक भंग है। अयोगीविषै उच्चका उदय सत्व दोऊनिका वा उच्चहीका उदय अर सत्व ऐसैं दोय भंग हैं ॥ ६३८ ॥
आगे आयुके बंध तेरह गाथा सूत्रनिकरि कहैं हैं—

सुरणिरया णरतिरियं छम्मासवसिट्ठगे सगाउस्स ।
णरतिरिया सव्वाउं तिभागसेसम्मि उक्कस्सं ॥ ६३९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भोगभुमा देवाउं छम्मासवसिट्ठगे य बंधंति।
इगिविगला णरतिरियं तेउदुगा सत्तगा तिरियं ॥६४०॥ जुम्मं।

सुरनिरया नरतिर्यंचं षण्मासावशिष्टके स्वकायुषः।
नरतिर्यंचः सर्वायूंषि त्रिभागशेषे उत्कृष्टं ॥ ६३९ ॥
भोगभूमा देवायुः षण्मासावशिष्टके च बध्नंति।
एकविकला नरतिर्यंचं तेजोद्विकौ सप्तकाः तिर्यंचं ॥ ६४० ॥ युग्मं।

जी० प्र०—परभवायुः स्वभुज्यमानायुष्युत्कृष्टेन षण्मासेऽवशिष्टे देवनारका नारं तैरश्चं च बध्नंति तद्बंधे योग्याः स्युरित्यर्थः। नरतिर्यंचस्त्रिभागेऽवशिष्टे चत्वारि। भोगभूमिजाः षण्मासेऽवशिष्टे दैवं, एकविकलेंद्रिया नारं तैरश्चं च। तेजोवायवः सप्तमपृथ्वीजाश्च तैरश्चमेव ॥६३९ ।६४०॥ एवमायुर्बंधस्य प्रकारमुक्त्वोदयसत्त्वयोराह—

स० चं०—जिस उदयागत आयुकौं भोगवै है तिस भुज्यमान आयुके उत्कृष्ट छहमास अवशेष रहैं देवनारकी हैं ते मनुष्यायु वा तिर्यंचायुकौं बांधै हैं। तिस कालविषैं बंधयोग्य हो हैं। बहुरि मनुष्य तिर्यंच भुज्यमान आयुका तीसरा भाग अवशेष रहैं च्यार्यो आयुकौं बांधै हैं। बहुरि भोगभूमिया छह मास अवशेष रहैं देवायुहीकौं बांधै बहुरि एकेंद्री वा विकलेंद्री है सो मनुष्यायु वा तिर्यंचायुहीकौं बांधै। बहुरि तेजकायिक वा वातकायिक वा सप्तम पृथ्वीके नारकी तिर्यंचायुहीकौं बांधैं॥ ६३९ ॥ ६४० ॥ ऐसैं आयुका बंधविधान कहि उदय सत्वका विधान कहैं हैं—

सगसगगदीणमाउं उदेदि बंधे उदिण्णगेण समं।
दो सत्ता हु अबंधे एक्कं उदयागदं सत्तं। ॥ ६४१ ॥

स्वकस्वकगतीनामायुरुदेति बंधे उदीर्णकेन समं।
द्वे सत्त्वे हि अबंधे एकमुदयागतं सत्त्वं ॥ ६४१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—नारकादीनामेकं स्वस्वगत्यायुरेवोदेति सत्त्वं परभवायुर्बंधे खलूदयागतेन समं द्वे स्तः। अबद्धायुष्ये सत्त्वमेकमुदयागतमेव ॥ ६४१ ॥

स० चं०—नारकादिकनिकैं अपनी अपनी गति संबंधी ही एक आयु उदय हो है। बहुरि सत्व परभवकी आयुका बंध भएं उदयागत आयु सहित दोय आयुका है। एक बध्यमान एक भुज्यमान। बहुरि अबद्धायुकैं एक उदय आया भुज्यमान आयुहीका सत्व है ॥ ६४१ ॥

एक्के एक्कं आऊ एक्कभवे बंधमेदि जोग्गपदे।
अडवारं वा तत्थवि तिभागसेसे व सव्वत्थ ॥ ६४२ ॥

एकस्मिन्नेकमायुरेकभवे बंधमेति योग्यपदे।
अष्टवारं वा तत्रापि त्रिभागशेषे एव सर्वत्र ॥ ६४२ ॥

जी० प्र०—एकजीवे एकमेवायुः एकभवे योग्यकालेऽष्टवारमेव बध्नाति। तत्र सर्वत्रापि त्रिभागशेष एव ॥ ६४२ ॥

स० चं०—एक जीव एक भवविषैं एकही आयुकौं बांधै सोभी योग्यकालविषैं आठ वार ही बांधैं, तहां सर्वत्र तीसरा तीसरा भाग अवशेष रहैं बांधै है ॥ ६४२ ॥

इगिवारं वज्जित्ता वड्ढी हाणी अवट्ठिदी होदि।
ओवट्टणघादो पुण परिणामवसेण जीवाणं ॥ ६४३ ॥

एकवारं वर्जयित्वा वृद्धिर्हानिरवस्थितिर्भवति।
अपवर्तनघातः पुनः परिणामवशेन जीवानां ॥ ६४३ ॥

जी० प्र०—अपकर्षेषु मध्ये प्रथमवारं वर्जित्वा द्वितीयादिवारे बध्यमानस्यायुषो वृद्धिर्हानिरवस्थितिर्वा भवति। यदि वृद्धिस्तदा द्वितीयादिवारे बद्धाधिकस्थितेरेव प्राधान्यं। अथ हानिस्तदा पूर्वबद्धाधिकस्थितेरेव प्राधान्यं। पुनः आयुर्बंधं कुर्वतां जीवानां परिणामवशेन बध्यमानस्यायुषोऽपवर्तनमपि भवति तदेवापवर्तनघात इत्युच्यते उदीयमानायुरपवर्तनस्यैव कदलीघाताभिधानात्। त्रिभागशेषे त्रिभागशेषे सत्यायुर्बध्नात्येकांता नास्ति तत्र तत्र योग्यनास्तीति ज्ञातव्यं ॥ ६४३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—आठ अपकर्षनिविषैं पहिलीवार बिना द्वितीयादिक बारविषैं पूर्वैं जो आयु बाध्या था तिसकी स्थितिकी वृद्धि वा हानि वा अवस्थिति हो है। भावार्थ—पहलैं आयुकी स्थिति जो बांधी थी पीछैं दूसरीवार वा तीसरीवार इत्यादिक बाधै तब पहिली स्थितिस्यों अधिक वा हीन वा जेतीकी तेती स्थिति बाधैं। तहां जो वृद्धि होइ तौ पीछैं जो अधिक स्थिति बंधी तिसहीकी प्रधानता जाननी। बहुरि जो हानि होइ तौ पहिली अधिक स्थिति बंधी थी ताकी प्रधानता जाननी। बहुरि आयुके बंधको करते जीव तिनके परिणामनिके वशतैं अपवर्तन भी हो है। अपवर्तन नाम घटनेका है सो याकौं अपवर्तनघात कहिए जातैं उदय आया आयुके अपवर्तनका नाम कदलीघात है। बहुरि तीसरा भाग तीसरा भाग अवशेष रहैं आयु बंधै ही बंधै ऐसा एकांत नियम नाहीं तिस कालविषैं आयुके बंध होनेकी योग्यता हो है तहां आयु बंधै वा न बंधै, अर अन्यकालविषैं आयुका बंध होइ ही नाहीं यहु नियम है। अपकर्षनिका वर्णन पूर्वैं करि आए हैं तातैं इहां नाहीं कीया है॥ ६४३॥

एवमबंधे बंधे उवरदबंधेवि होंति भंगा हु।
एक्कस्सेक्कम्मि भवे एक्काउं पडि तये णियमा॥ ६४४॥

एवमबंधे बंधे उपरतबंधेऽपि भवंति भंगा हि।
एकस्यैकस्मिन् भवे एकायुः प्रति त्रयो नियमात्॥ ६३४॥

जी० प्र०—एवमुक्तरीत्यायुर्बंधे अबंधे उपरतबंधे च स्फुटं एकजीवस्यैकभवे एकायुः प्रति त्रयो भंगा नियमाद्भवंति॥ ६३४॥

स० चं०—ऐसैं पूर्वोक्त रीतिकरि बंध वा अबंध वा उपरत बंधकरि एक जीवकैं एक पर्यायविषैं एक आयु प्रति तीन भंग नियमतैं हो हैं। तहां वर्तमान कालविषैं जहां परभव संबंधी आगामी आयुका बंध होइ तहां बंध आगामी आयु एक उदय भुज्यमान आयु एक सत्व भुज्यमान बध्यमान आयु दोय पाइए, तहां बंध कहिए। बहुरि जे आगामी आयुका अतीतकालविषैं बंध न भया वर्तमान कालविषैं भी न हो है तहां बंधका अभाव अर उदय सत्व

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria,, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक भुज्यमान आयु पाइए तहां अबंध कहिए। बहुरि जहां आगामी आयुका पूर्वै बंध भया होइ अर वर्तमान कालविषैं बंध न होता होइ तहां बंधका अभाव अर उदय भुज्यमान आयु एकका अर सत्व पूर्वबद्ध वा भुज्यमान आयु दोयका होइ तहां उपरत बंध कहिए ऐसैं एक एक आयु प्रति तीन तीन भंग जानने ॥ ६४४ ॥

एक्काउस्स तिभंगा संभवआऊहिं ताडिदे णाणा।
जीवे इगिभवभंगा रूऊणगुणूणमसरित्थे ॥ ६४५ ॥

एकायुषस्त्रिभंगाः संभवायुर्भिस्ताडिते नाना।
जीवेषु एकभवभंगा रूपोनगुणोनमसदृशे ॥ ६४५ ॥

जी० प्र०—ते एकैकायुषस्त्रयस्त्रयो भंगा विवक्षितगतौ बध्यमानत्वेन संभवदायुःसंख्यया गुण्यंते तदा नानाजीवेष्वेकैकभवभंगा भवंति। देवनारकगत्योः प्रत्येकं षट्। नरतिर्यग्गत्योः प्रत्येकं द्वादश द्वादशामी। असदृशेष्वपुनरुक्तेषु विवक्षितेषु रूपोनेन संभवदायुःसंख्यागुणकारेणोना भवंति। देवनारकगत्योः प्रत्येकं पंच पंच। नरतिर्यग्गत्योर्नव नव ॥ ६४५ ॥

स० चं०—ते एक एक आयुके तीन तीन भंग तिनकी विवक्षित गतिविषैं जेता आगामी आयुका बंध संभवै तीहिं संख्याकरि गुणैं जो जो प्रमाण होइ तितने नाना जीव अपेक्षा एक एक भवसंबंधी भंग हो हैं सो नरक देव गतिविषैं तो तिर्यंच मनुष्य दोय आयुहीका बंध संभवै है सो दोयकरि उन तीन भंगनिकौं गुणैं छह छह भंग हो हैं। बहुरि मनुष्य तिर्यंच गतिविषैं च्यार्‍यो आयुका बंध संभवै है तातैं च्यारिकरि उन तीनो भंगनिकौं गुणैं बारह बारह भंग हो हैं। बहुरि असदृश कहिए अपुनरुक्त भंगकी विवक्षा लीजिये तब बध्यमान आयुकी संख्यारूप जो गुणकार कह्या था तिसमैं एक घटाएं जो प्रमाण रहै तितना पूर्वोक्त भंगनिमैंस्यौं घटाएं अपुनरुक्त भंग हो हैं सो देव नरकगतिविषैं बध्यमान आयु दोयका गुणकार था तामैं एक घटाएं एक रह्या सो एक एक पूर्वोक्त छह छह भंगनिमैंस्यौं घटाएं पांच पांच अपुनरुक्त भंग हो हैं। ते कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नरक गतिविषै बंध एक मनुष्यायु उदय एक नरकायु सत्ता दोय मनुष्य आयु नरकायु अथवा बंध एक तिर्यंचायु उदय एक नरकायु सत्ता दोय तिर्यंच आयु नरक आयु ऐसैं बंध अपेक्षा तौ दोय भंग हैं ऐसैं ही देवगतिविषैं नरकायुकी जायगा देवायु कहना। बहुरि अबंधकी अपेक्षा मनुष्य तिर्यंचायुका बंध नाहीं ऐसैं दोय भंग हैं परि दोऊ समान हैं। जातैं दोऊनिविषैं बंधका अभाव उदय स्वकीय भुज्यमान आयु सत्ता एक स्वकीय भुज्यमान आयु तातैं इनि दोऊनिविषैं एक ही भंग ग्रह्या। बहुरि उपरत बंधकी अपेक्षा मनुष्य तिर्यंच आयुका बंध पूर्वैं भया ताकी अपेक्षा दोय दोय भंग हैं। दोऊनिविषैं बंधका अभाव उदय एक स्वकीय भुज्यमान आयु सत्ता एक भंगविषैं स्वकीय भुज्यमान आयु अर मनुष्यायु दूसरा भंगविषैं स्वकीय भुज्यमान आयु अर तिर्यंचायु ऐसैं दोय भंग भए। ऐसैं देव वा नारकविषैं पांच पांच अपुनरुक्त भंग जानने। याही प्रकार मनुष्य तिर्यंच गतिविषैं बध्यमान आयुका प्रमाणरूप च्यारिका गुणकार था तिनमें एक घटाएं तीन रहै सो पूर्वोक्त बारह बारह भंगनिमैं तीन तीन घटाएं नव नव अपुनरुक्त भंग हो हैं तहां आयुबंधकी अपेक्षा नरक तिर्यंच मनुष्य देवके बंधकरि च्यारि भंग हैं तिनविषैं बंधतौ क्रमतैं नरक तिर्यंच मनुष्य देवायुका जानना। उदय तिर्यंच गतिविषैं तिर्यंचायुका मनुष्यगतिविषैं मनुष्यायुका जानना। सत्ता एक भुज्यमान आयु एक बध्यमान आयु ऐसैं दोय दोयकी जाननी तिनविषैं भी जो आयु भुज्यमान होइ सोई बध्यमान होइ तहां एक आयुहीकी सत्ता जाननी ऐसैं च्यारि भंग हैं। बहुरि आयुका अबंधविषैं च्यारि गतिका बंध नाहीं इस अपेक्षा च्यारि भंग होइ परंतु ये च्यारूं समान हैं जातैं सबनिविषैं बंधका अभाव उदय वा सत्ता भुज्यमान स्वकीय आयु एक तातैं च्यारयोंविषैं एक ही ग्रह्या। बहुरि उपरतबंधकी अपेक्षा भी च्यारि आयुकरि च्यारि भंग हैं तिनविषैं बंधका अभाव उदय वा सत्ता जैसैं बंध अपेक्षा करि कहीं तैसैं जाननी। ऐसैं च्यारि भंग हैं। या प्रकार मनुष्य तिर्यंचविषैं अपुनरुक्त नव नव भंग जानने॥ ६४६॥

पण णव णव पण भंगा आउचउक्केसु होंति मिच्छम्मि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णिरयाउबंधभंगेणूणा ते चेव बिदियगुणे ॥ ६४६ ॥

पंच नव नव पंच भंगा आयुश्चतुष्केषु भवंति मिथ्ये ।
निरयायुर्बंधभंगेनोनास्ते चैव द्वितीयगुणे ॥ ६४ ॥

जी० प्र०—ते असदृशभंगा गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ नरकादिगतिषु क्रमेण पंच नव नव पंच भवंति । सासादने ते नरकायुर्बंधभंगेनोनाः पंचाष्टाष्टपंच भवंति ॥ ६४६ ॥

स० चं०—ते अपुनरुक्त भंग मिथ्यादृष्टिविषैं तौ नरकादिक गतिविषैं क्रमतैं पांच नव नव पांच जानने । बहुरि दूसरा सासादन गुणस्थानविषैं मनुष्य तिर्यंचविषैं ज आयुबंधकी अपेक्षा च्यारि भंग कहे थे तिनमैं नरकायुका बंधरूप भंग इहां नाहीं तातैं नरकादिक गतिविषैं क्रमतैं पांच आठ आठ पांच भंग जानने ॥ ६४६ ॥

सव्वाउबंधभंगेणूणा मिस्सम्मि अयदसुरणिरये ।
णरतिरिये तिरियाऊ तिण्णाउगबंधभंगूणा ॥ ६४७ ॥

सर्वायुर्बंधभंगेनोना मिश्रे अयतसुरनिरये ।
नरतिरश्चि तिर्यगायुस्त्रिकायुष्कबंधभंगोनाः ॥ ६४७ ॥

जी० प्र०—मिश्रे ते सर्वायुर्बंधभंगेनोनास्त्रयः पंच पंच त्रयो भवंति । असंयते सुरनारकयोस्तिर्यगायुर्बंधभंगेनोनाश्चत्वारश्चत्वारः तयोस्तस्य सासादने छेदात् । नरतिरश्चोस्तु नरकतिर्यग्मनुष्यायुर्बंधभंगेनोनाः षट् षट् तयोर्नरकायुर्बंधस्य मिथ्यादृष्टौ, नरतिर्यगायुर्बंधयोः सासादने च छेदात् ॥ ६४७ ॥

स० चं०—मिश्रविषैं जे आयुबंधकी अपेक्षा भंग कहे थे ते सर्व घटाएं नरकादिक गतिविषैं क्रमतैं तीन पांच

१	ना	ति	म	दे
	५।५	८।९	८।९	८।९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पांच तीन भंग हैं। बहुरि असंयतविषैं देवनारक गतिविषैं आयुबंधकी अपेक्षा तिर्यंचायुका बंधरूप भंग नाहीं तातैं च्यारि च्यारि भंग हैं। बहुरि मनुष्य तिर्यंच गतिविषैं आयु बंधकी अपेक्षा नरक तिर्यंच मनुष्यायुका बंधरूप तीन भंग नाहीं तातैं छह छह भंग हैं जातैं इनके बंधका सासादनविषैं ही व्युच्छेद भया ॥ ६४७ ॥

देस णरे तिरिये तियतियभंगा होंति छट्ठसत्तमगे ।
तियभंगा उवसमगे दो दो खवगेसु एक्केक्को ॥ ६४८ ॥

देशे नरे तिरश्चि त्रिकत्रिकभंगा भवंति षष्ठसप्तमके ।
त्रिभंगा उपशमके द्वौ द्वौ क्षपकेष्वेकैकः ॥ ६४८ ॥

जी० प्र०—देशसंयते तिर्यग्मनुष्ययोरेव देवायुरबंधबंधोपरतबंधभंगास्त्रयस्त्रयः । षष्ठे सप्तमे च त एव त्रयस्त्रयः । उपशमकेषु देवायुरबंधोपरतबंधौ द्वौ द्वौ । क्षपकेष्वायुरबंधभंग एकैकः ॥ ६४८ ॥ अथ गुणस्थानेषु सर्वायुर्बंधभंगयुतिमाह—

स० चं०—देश संयतविषैं तिर्यंच मनुष्यविषैं बंध अबंध उपरत बंधकी अपेक्षा एक देवायुकरि तीन तीन भंग हैं बहुरि छठे सातवे गुणस्थान मनुष्यविषैं ही बंध अबंध उपरतबंधकी अपेक्षा एक देवायुहीकरि तीन तीन भंग हैं। बहुरि उपशमश्रेणीविषैं देवायुका बंध भी नाहीं तातैं देवायुका अबंध वा उपरत बंधकी अपेक्षा दोय दोय भंग हैं। बहुरि क्षपक श्रेणीविषैं उपरत बंध भी नाहीं तातैं अबंध अपेक्षाकरि एक एक ही भंग है॥ ६४८ ॥ आगैं गुणस्थाननिविषैं कहे जे सर्वगति संबंधी आयुके भंग तिनिका जोड़ कहैं हैं—

अडछव्वीसं सोलस वीसं छत्तिगतिगं च चदुसु दुगं ।
असरिसभंगा तत्तो अजोगिअंतेसु एक्केक्को ॥ ६४९ ॥

अष्टषड्विंशतिः षोडश विंशतिः षट् त्रिकत्रिकं च चतुर्षु द्विकं ।
असदृशभंगास्ततोऽयोग्यंतेष्वेकैकः ॥ ६४९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—मिलित्वा असदृसभंगा मिथ्यादृष्टावष्टाविंशतिः । सासादने षड्विंशतिः, मिश्रे षोडश । असंयते विंशतिः । देशसंयते षट् । प्रमत्ताप्रमत्तयोस्त्रयस्त्रयः । उपशमकेषु द्वौ द्वौ । क्षपकेष्वेकैकः ॥ ६४९ ॥ अथ वेदनीयगोत्रायुषां मिथ्यादृष्ट्यादिसर्वभंगयुतिमाह—

स० चं०—मिलिकरि असदृश कहिए अपुनरुक्त भंग मिथ्यादृष्टिविषैं अठाईस सासादनविषैं छबीस मिश्रविषैं सोलह असंयतविषैं बीस देश संयतविषैं छह प्रमत्त अप्रमत्तविषैं तीन तीन उपशम श्रेणीवालौंविषैं दोय दोय क्षपक श्रेणीवाले अयोगी पर्यंत तिनविषैं एक एक जानने ॥ ६४९ ॥ आगैं वेदनीय गोत्र आयु इनके मिथ्यादृष्टि आदि सर्व गुणस्थाननिविषैं केते केते भंग भए सो कहैं हैं—

बादालं पणुवीसं सोलसअहियं सयं च वेयणिये ।
गोदे आउम्मि हवे मिच्छादिअजोगिणो भंगा ॥६५०॥

द्वाचत्वारिंशत् पंचविंशतिः षोडशाधिकं शतं च वेदनीये ।
गोत्रे आयुषि भवेयुर्मिथ्याद्ययोगिनो भंगाः ॥ ६५० ॥

जी० प्र०—प्राग्मिथ्यादृष्ट्याद्ययोगांतेषूक्तास्ते भंगा वेदनीये द्वाचत्वारिंशत् । गोत्रे पंचविंशतिः । आयुषि षोडशाग्रशतं ॥ ६५० ॥ अथ पूर्वोक्तानां वेदनीयगोत्रायुःसामान्यमूलभंगानां संख्यां कथयति——

स० चं०—पूर्वैं मिथ्यादृष्ट्यादि अयोगीपर्यंत गुणस्थाननिविषैं जे भंग कहे तिनका जोडदीएं वेदनीयके वियालीस गोत्रके पचीस आयुके एकसौ सोलह भंग हो हैं ॥ ६५० ॥ आगैं पूर्वैं कहे वेदनीय गोत्र आयुके सामान्य पनैं मूलभंग तिनकी संख्या कहैं हैं—

वेयणिये अडभंगा गोदे सत्तेव होंति भंगा हु ।
पण णव णव पण भंगा आउचउक्केसु विसरित्था ॥६५१॥ ८४३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेदनीये अष्ट भंगा गोत्रे सप्तैव भवंति भंगा हि ।
पंच नव नव पंच भंगा आयुश्चतुष्केषु विसदृशाः ॥ ६५१ ॥

जी० प्र०—तेषु खलु विसदृशभंगा वेदनीयेऽष्टौ भवंति । गोत्रे सप्त, चतुष्कायुस्सु क्रमेण पंच नव नव पंच ॥६५१॥ अथ मोहनीयत्रिसंयोगभंगानाह—

स० चं०—तिन पूर्वोक्त भंगनिविषैं अपुनरुक्त मूल भंग वेदनीयविषैं आठ गोत्रविषैं सात च्यारचो आयुविषैं क्रमतैं पांच नव नव पांच जानने ॥ ६५१ ॥ आगैं मोहनीयके त्रिसयोगरूप भगनिकौं कहैं हैं—

मोहस्स य बंधोदयसत्तट्ठाणाण सव्वभंगा हु ।
पत्तेउत्तं व हवे तियसंजोगेवि सव्वत्थ ॥६५२॥

मोहस्य च बंधोदयसत्त्वस्थानानां सर्वभंगा हि ।
प्रत्येकोक्तं व भवंति त्रिकसंयोगेऽपि सर्वत्र ॥ ६५२ ॥

जी० प्र —मोहनीयस्य बंधोदयसत्त्वस्थानसर्वभंगाः खलु त्रिसंयोगेऽपि सर्वत्र प्रत्येकोक्तवद्भवंति ॥६५२॥ अथ गुणस्थानेषु स्थानसंख्यामाह—

स० चं०—मोहनीयके बंध उदय सत्व स्थाननिविषैं सर्व भंग जैसैं पूर्वै जुदा जुदा बंध उदय सत्वका कथन करते कहे थे तैसै ही बंध उदय सत्व इनिका संयोगरूप त्रिसंयोगविषैं भी भंग हो हैं ॥ ६५२ ॥ आगैं गुणस्थाननिविषैं मोहके स्थाननिकी संख्या कहैं हैं—

अट्ठसु एक्को बंधो उदया चदु ति दुसु चउसु चत्तारि ।
तिण्णि य कमसो सत्तं तिण्णेगदु चउसु पणग तियं ॥६५३॥
अणियट्टीबंधतियं पणदुगएक्कारसुहुमउदयंसा ।
इगि चत्तारि य संते सत्तं तिण्णेव मोहस्स ॥६५४॥ जुम्मं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अष्टसु एको बंध उदयाः चत्वारस्त्रयः द्वयोश्चतुर्षु चत्वारः।
त्रीणि च क्रमशः सत्त्वं त्र्येकद्विकं चतुर्षु पंचकं त्रिकं ॥ ६५३ ॥
अनिवृत्तिबंधत्रिकं पंचद्विकैकादश सूक्ष्मोदयांशाः।
एकश्चत्वारश्च शांते सत्त्वं त्रीण्येव मोहस्य॥ ६५४ ॥

जी० प्र०—तत्राद्येष्वष्टसु बंधस्थानान्येकैकं। उदयस्थानान्याद्ये चत्वारि। द्वयोस्त्रीणि त्रीणि, चतुर्षु चत्वारि चत्वारि। एकस्मिंस्त्रीणि भवंति। सत्त्वस्थानानि क्रमेण त्रीण्येकं द्वे चतुर्षु पंच पंच, एकस्मिन्त्रीणि भवंति। अनिवृत्तिकरणे बंधादित्रयस्थानानि पंच द्वे एकादश। सूक्ष्मसांपराये उदयस्थानमेकं, सत्त्वस्थानानि चत्वारि। उपशांतकषाये सत्त्वस्थानान्येव त्रीणि ॥ ६५३ ॥ ६५४ ॥ तानि कानीति चेदाह—

स॰ चं॰—पूर्वें जे मोहनीयके बंधके उदयके सत्वके स्थान कहे थे तिनविषैं आदिके आठ गुणस्थाननिविषैं यथासंभव बंधस्थान तो एक एक ही है बहुरि उदयस्थान आदिके गुणस्थाननिविषै च्यारि ताके ऊपरि दोयविषैं तीन तीन च्यारिविषैं च्यारि च्यारि एकविषैं तीन जानने। बहुरि सत्वस्थान क्रमतैं मिथ्यादृष्टिविषैं तीन सासादन विषैं एक, मिश्रविषैं दोय, उपरि च्यारि गुणस्थाननिविषैं पांच पांच, एकविषैं तीन जानने। बहुरि अनिवृत्ति करणविषैं बंध उदय सत्वस्थान अनुक्रमतैं पांच दोय ग्यारह जानने। सूक्ष्म सांपरायविषैं बंधस्थानका अभाव, उदयस्थान एक सत्वस्थान च्यारि जानने। बहुरि उपशांत मोहविषैं बंध उदय स्थान नाहीं सत्वस्थान ही तीन पाइए हैं॥६५४॥ ते स्थान कौंन? सो कहै हैं—

बावीसं दसयचऊ अडवीसतियं च मिच्छबंधादी।
इगिवीसं णवयतियं अट्ठावीसे च बिदियगुणे ॥६५५॥

द्वाविंशतिः दशकचतुष्कमष्टाविंशतिकत्रिकं च मिथ्ये बंधादिः।
एकविंशतिर्नवकत्रिकमष्टाविंशतिश्च द्वितीयगुणे ॥ ६५५ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ बंधस्थानं द्वाविंशतिकं। उदयस्थानानि दशकादीनि चत्वारि। सत्त्वस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि। सासादने बंधस्थानमेकविंशतिकं। उदयस्थानानि नवकादीनि त्रीणि। सत्त्वस्थानमष्टाविंशतिकमेव ॥ ६५५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं बंधस्थान एक वाईसका ही है। उदय स्थान दशकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं। सत्वस्थान अठाईसकानैं आदि दैकरि तीन हैं। बहुरि सासादनविषैं बंधस्थान एक इकवीसका ही है। उदयस्थान नवकानैं आदि दैकरि तीन हैं। सत्वस्थान अठाईसहीका है ॥ ६५५ ॥

सत्तरसं णवयतियं अडचउवीसं पुणोवि सत्तरसं ।
णवचउ अडचउवीस य तिवीसतियमंसयं चउसु ॥६५६॥

सप्तदश नवकत्रयमष्टचतुर्विंशं पुनरपि सप्तदश ।
नवचतुष्कमष्टचतुर्विंशं च त्रयोविंशत्रयमंशकं चतुर्षु ॥ ६५६ ॥

जी० प्र०—मिश्रे बंधस्थानं सप्तदशकं। उदयस्थानानि नवकादीनि त्रीणि। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। असंयते पुनः बंधस्थानं सप्तदशकं। उदयस्थानानि नवकादीनि चत्वारि। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुर्दशविंशतिके द्वे, त्रयोविंशतिकादित्रयं च। इमान्येव पंचाप्रमत्तांतं ज्ञेयानि ॥ ६५६ ॥

स० चं०—मिश्रविषैं बंधस्थान एक सतरहहीका है। उदयस्थान नवकानैं आदि दैकरि तीन हैं। सत्वस्थान अठाईसका वा चौईसका दोय हैं। बहुरि असंयतविषै बंधस्थान सतरहका एक ही है। उदयस्थान नवकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं। सत्वस्थान अठाईस चौईसके दोय अर तेईसकानैं आदि दैकरि तीन ऐसैं पांच हैं। एई पंच सत्वस्थान अप्रमत्त पर्यंत जानने ॥ ६५६ ॥

तेरहचऊ देसे पमदिदरे णव सगादिचत्तारि ।
तो णवगं छादितियं अडचउरिगिवीसयं च बंधतियं ॥६५७॥

त्रयोदशाष्टचतुष्कं देशे प्रमत्तेतरयोर्नव सप्तकादिचत्वारि ।
अतो नवकं षडादित्रयमष्टचतुरेकविंशकं च बंधत्रयं ॥ ६५७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—देशसंयते बंधस्थानं त्रयोदशकं। उदयस्थानान्यष्टकादीनि चत्वारि। प्रमत्ताप्रमत्तयोर्बंधस्थानं नवकं। उदयस्थानानि सप्तकादीनि चत्वारि। ततोऽपूर्वकरणे बंधस्थानं नवकं। उदयस्थानानि षट्कादीनि त्रीणि। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रीणि। क्षपकेऽप्येकविंशतिकं॥ ६५७॥

स० चं०—देश संयतविषैं बंधस्थान तेरहका एकही है। उदयस्थान आठकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं। सत्वस्थान पांच है। बहुरि प्रमत्त अप्रमत्तविषैं बंधस्थान एक नवका ही है। उदयस्थान सातकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं। सत्वस्थान पांच है। बहुरि अपूर्वकरणविषै बंधस्थान नवका एक ही है उदयस्थान छहकानैं आदि दैकरि तीन हैं। सत्वस्थान अठाईस चौईस इकईसके तीन हैं। क्षपकविषैं इकईसहीका है॥ ६५७॥

पंचादिपंचबंधो णवमगुणे दोण्णि एक्कमुदयो दु।
अडचदुरेक्कवीसं तेरादीअट्ठयं सत्तं॥६५८॥

पंचादिपंचबंधो नवमगुणे द्वौ एक उदयस्तु।
अष्टचतुरेकविंशं त्रयोदशाद्यष्टकं सत्त्वं॥ ६५८॥

जी० प्र०—नवमगुणे बंधस्थानानि पंचकादीनि पंच। उदयस्थानानि द्विकैकके द्वे। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि। क्षपके त्रयोदशकादीन्यष्टौ। उपरि बंधो नास्ति॥ ६५८॥

स० चं०—नवमां गुणस्थानविषैं बंधस्थान पांचकानैं आदि दैकरि पांच हैं। उदयस्थान दोय अर एक प्रकृतिरूप दोय हैं। सत्त्वस्थान अठाईस चौईस इकईसके तीन हैं। क्षपकश्रेणीवालेकैं तेरहकानैं आदि दैकरि आठ सत्त्वस्थान पाइए हैं। ऊपरि मोहके बंधका अभाव है तातैं उदय सत्व दोय ही कहने॥ ६५८॥

लोहेक्कुदओ सुहुमे अडचउरिगिवीसमेक्कयं सत्तं।
अडचउरिगिवीसंसा संते मोहस्स गुणठाणे॥६५९॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोभैकोदयः सूक्ष्मे अष्टचतुरेकविंशमेकं सत्त्वं ।
अष्टचतुरेकविंशांशाः शांते मोहस्य गुणस्थाने ॥ ६५९ ॥

जी० प्र०—सूक्ष्मसांपराये उदयस्थानं सूक्ष्मलोभः । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकान्येककं च । उपरि मोहोदयो नास्ति । उपशांतकषाये सत्त्वस्थानान्येवाष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि । उपरि मोहसत्त्वं नास्ति ॥ ६५९ ॥ अथ मोहनीयबंधोदयसत्त्वस्थानानां त्रिसंयोगविशेषमाह—

स० चं०—सूक्ष्मसांपरायविषैं उदयका स्थान एक सूक्ष्म लोभरूप ही है। सत्वस्थान अठाईस चौईस इकईसके तीन वा क्षपकवालेकैं एक प्रकृतिरूप एक है। ऊपरि मोहका उदय नाहीं सत्व ही है । बहुरि उपशांतकषायविषैं सत्वस्थान ही अठाईस चौईस इकईस तीन जानने । ऊपरि मोहका सत्व नाहीं ॥ ६५९ ॥ आगैं मोहनीयके बंध उदय सत्वस्थान तिनके त्रिसंयोगविषैं विशेष कहे हैं—

बंधपदे उदयंसा उदयट्ठाणेवि बंध सत्तं च ।
सत्ते बंधुदयपदं इगिअधिकरणे दुगाधेज्जं ॥६६०॥

बंधपदे उदयांशा उदयस्थानेऽपि बंधः सत्त्वं च ।
सत्त्वे बंधोदयपदमेकाधिकरणे द्विकाधेयं ॥ ६६० ॥

जी० प्र०—बंधस्थाने उदयसत्त्वस्थानद्वयं, उदयस्थाने बंधसत्त्वस्थानद्वयं, सत्त्वस्थाने बंधोदयस्थानद्वयमित्येकाधिकरणे द्वयमाधेयं भवति ॥६६०॥

स० चं०—बंधस्थानविषैं उदयस्थान सत्वस्थान ए दोय । बहुरि उदयस्थानविषैं बंधस्थान सत्वस्थान ए दोय । बहुरि सत्वस्थानविषैं बंधस्थान उदयस्थान ए दोय ऐसैं एक अधिकरणविषैं दोय आधेय हो हैं। जिसविषैं कहिए ताकौं अधिकरण वा आधार कहिए। बहुरि तिस अधिकरणविषैं जाकौं कहिए ताकौं आधेय कहिए सो जहां इतनी प्रकृतिका बंध होइ तहां उदय इतनी इतनी प्रकृतिनिका हो है वा सत्व इतनी इतनी प्रकृतिनिका होइ ऐसा जहां कहनां तहां बंध तौ अधिकरण भया अर उदय सत्व आधेय भए। ऐसैं ही उदयस्थानविषैं जहां बंधस्थान सत्वस्थान कहिए

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तहां उदयस्थान तौ अधिकरण अर बंधस्थान सत्वस्थान आधेय जानने। बहुरि सत्वस्थानविषैं जहां बंधस्थान उदयस्थान कहिए तहां सत्वस्थान अधिकरण अर बंधस्थान उदयस्थान आधेय जानने ॥ ६६० ॥

बावीसयादिबंधेसुदयंसा चदुतितिगिचऊपंच।
तिसु इगि छद्दो अट्ठ य एक्कं पंचेव तिट्ठाणे ॥६६१॥

द्वाविंशकादिबंधेषूदयांशाश्चतुस्त्रित्रिकैकचतुःपंच।
त्रिष्वेकः षट् द्वौ अष्ट च एकः पंचैव त्रिस्थाने ॥ ६६१ ॥

जी० प्र०—तत्र तावद्बंधस्थानेषु द्वाविंशतिकादिषूदयसत्त्वस्थानान्याद्ये चत्वारि त्रीणि, द्वितीये त्रीण्येकं, त्रिषु प्रत्येकं चत्वारि पंच, एकस्मिन्नेकं षट्, अन्यस्मिन् द्वे अष्टौ, त्रिष्वेकं पंच ॥ ६६१ ॥

स० चं०—तहां प्रथम ही बंधस्थानविषैं उदय सत्वस्थान कहैं हैं सो वाईसकानैं आदि देकरि बंधस्थाननिविषैं पहिला वाईसका स्थानविषैं उदयस्थान च्यारि सत्वस्थान तीन हैं। दूसरा बंधस्थानविषैं उदयस्थान तीन सत्वस्थान एक है। ऊपरि तीन बंध स्थाननिविषैं उदयस्थान च्यारि च्यारि सत्त्वस्थान पांच पांच हैं। ऊपरि एक बंध स्थानविषैं उदय स्थान एक सत्त्वस्थान छह हैं। अन्य एक बंधस्थानविषैं उदयस्थान दोय सत्त्वस्थान आठ हैं। तीन बंधस्थानविषैं उदयस्थान एक सत्वस्थान पांच हैं॥ ६६१ ॥

दसयचऊ पढमतियं णवतियमडवीसयं णवादिचऊ।
अडचदुतिदुइगिवीसं अडचदु पुव्वं व सत्तं तु ॥ ६६२ ॥

दशकचतुष्कं प्रथमत्रिकं नवत्रिकमष्टाविंशकं नवादिचतुष्कं।
अष्टचतुस्त्रिद्व्येकविंशमष्टचतुष्कं पूर्वं व सत्वं तु ॥ ६६२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तानि द्वाविंशतिके उदयस्थानानि दशकादीनि चत्वारि । सत्त्वस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि । एकविंशतिके उदयस्थानानि नवकादीनि त्रीणि । सत्त्वस्थानमष्टाविंशतिकं । सप्तदशके उदयस्थानानि नवकादीनि चत्वारि । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुस्त्रिद्व्येकाग्रविंशतिकानि । त्रयोदशके उदयस्थानान्यष्टादीनि चत्वारि । सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि पंच ॥ ६६२ ॥

स० चं०—तहां वाईसका बंधस्थानविषैं उदयस्थान दशकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं सत्वस्थान अठाईसकानैं आदि दैकरि तीन हैं । भावार्थ—जिसजीवकैं जिसकालविषैं वाईसका बंध है ताकैं उदय दशका पाइए वा नवका वा आठका वा सातका भी पाइए । बहुरि सत्व अठाईसका वा सताईसका वा छवीसका पाइए ऐसें ही आगैं भी कथन जानि लेना । बहुरि इकईसका बंधस्थानविषैं उदयस्थान नवकानैं आदि दैकरि तीन हैं । सत्त्वस्थान एक अठाईसका ही है । बहुरि सतरहका बंध स्थानविषैं उदयस्थान नवकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं सत्वस्थान अठाईस चौईस तेईस वाईस इकईसके पांच हैं । बहुरि तेरहका बंधस्थानविषैं उदयस्थान आठकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं । सत्वस्थान पूर्वोक्त पांच हैं ॥ ६६२ ॥

सगचउ पुव्वं वंसा दुगमडचउरेक्कवीस तेरतियं ।
दुगमेक्कं च य सत्तं पुव्वं वा अत्थि पणगदुगं ॥ ६६३ ॥

सप्तचतुष्कं पूर्वं वांशा द्विकमष्टचतुरेकविंशं त्रयोदशत्रयं ।
द्विकमेकं च च सत्त्वं पूर्वं वा अस्ति पंचकद्विकं ॥ ६६३ ॥

जी० प्र०—नवके उदयस्थानानि सप्तकादीनि चत्वारि । सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि पंच पंच । पंचके उदयस्थानं द्विकं । सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रयोदशकादित्रयं च । चतुष्के उदयस्थानानि द्विकैकके द्वे । सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि षट् । पुनः पंचकादिद्वयं च ॥ ६६३ ॥

स० चं०—नवका बंधस्थानविषैं उदयस्थान सातकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं । सत्वस्थान पूर्वोक्त पांच हैं । बहुरि पांचका बंधस्थानविषैं उदयस्थान एक दोयहीका है । सत्वस्थान उपशमककैं अठाईस चौईस इकईसके तीन ८५०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर क्षपककैं तेरहनैं आदि दैकरि तीन हैं ऐसैं छह हैं । बहुरि ग्यारिका बंधस्थानविषैं उदयस्थान दोय वा एक प्रकृतिरूप दोय हैं। सत्वस्थान पूर्वोक्त छह पांचकानैं आदि दैकरि दोय ऐसैं आठ हैं ॥ ६६३ ॥

तिसु एक्केक्कं उदओ अडचउरिगिवीससत्तसंजुत्तं ।
चदुतिदयं तिदयदुगं दो एक्कं मोहणीयस्स ॥६६४॥

त्रिषु एकैकं उदयोऽष्टचतुरेकविंशसत्त्वसंयुक्तं ।
चतुस्त्रितयं त्रितयद्विकं द्वे एकं मोहनीयस्य ॥ ६६४ ॥

जी० प्र०—त्रिकद्विकैककेषूदयस्थानमेककं सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रीण्यपि त्रिके चतुष्कत्रिकाग्राणि । द्विके त्रिकद्विकाग्राणि, एकके द्विकैककाग्राणि । अयं बंधाधिकरणोदयसत्त्वाधेयभंगो गुणस्थानविवक्षयापि तत्प्रकृतीनां बंधोदयव्युच्छित्तिक्षपणोद्वेल्लनाभ्यां सत्त्वव्युच्छित्तिं च स्मृत्वा वक्तव्यः ॥ ६५४ ॥ अथोदयाधिकरणबंधसत्त्वाधेयभंगमाह—

स० चं०—तीन दोय एक प्रकृतिरूप तीन बंधस्थाननिविषैं उदयस्थान एक प्रकृतिरूप ही है। बहुरि सत्वस्थान अठाईस चौईस इकईसके तीन, तीनका बंधस्थानविषैं ग्यारिका वा तीनका सहित पांच है। दोयका बंधस्थानविषैं दोयका तीनका सहित पांच हैं। एकका बंधस्थानविषैं दोयका एकका सहित पांच सत्वस्थान हैं। यहु बंधस्थान अधिकरण अर उदय सत्व आधेयरूप भंग हैं ते गुणस्थान विवक्षाकरि कह्या है तथापि तिन तिन प्रकृतीनिकी बंध वा उदयकी व्युच्छित्ति अर क्षपणा उद्वेलनाकरि सत्वकी व्युच्छित्तिकौं यादिकरि जानने ॥ ६६४ ॥ आगे उदयस्थान अधिकरण अर बंध सत्व आधेय ऐसा भंग कहे हैं—

दसयादिसु बंधंसा इगितिय तियछक्क चारिसत्तं च ।
पणपण तियपण दुगपण इगितिग दुगछच्चऊणवयं ॥६६५॥ ८५१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दशकादिषु बंधांशा एकत्रिकं त्रिकषट्कं चतुःसप्त च।
पंचपंच त्रिकपंच द्विकपंच एकत्रिकं द्विकषट् चतुर्नवकं ॥ ६६५ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानेषु दशकादिषु क्रमेण बंधसत्त्वस्थानानि एकत्रिकं त्रिकषट्कं चतुःसप्तकं पंचपंचकं त्रिपंचकं द्विपंचकं एकत्रिकं द्विषट्कं चतुर्नवकं ॥ ६६५ ॥ तानि कानीतिचेदाह—

स० चं०—दशकानैं आदि दैकरि जे उदयस्थान तिनविषैं अनुक्रमतैं बंधस्थान अर सत्वस्थान क्रमतैं एक तीन अर तीन छह अर च्यारि सात अर पांच पांच अर तीन पांच अर दोय पांच अर एक तीन अर दोय छह अर च्यारि नव जानने ॥ ६६५ ॥ ते कौन ? सो कहैं हैं—

पढमं पढमतिचउपणसत्तरतिग चदुसु बंधयं कमसो।
पढमतिछस्सगमडचउतिदुइगिवीसंसयं दोसु ॥ ६६६ ॥

प्रथमं प्रथमत्रिचतुःपंचसप्तदशत्रिकं चतुर्षु बंधकं क्रमशः।
प्रथमत्रिषट्सप्त अष्टचतुस्त्रिद्विकैकविंशांशकं द्वयोः ॥ ६६६ ॥

जी० प्र०—दशकादिषु पंचसु क्रमेण बंधस्थानानि द्वाविंशतिकं, तदादित्रयं तदादिचतुष्कं तदादिपंचकं सप्तदशकादित्रयं च भवंति। सत्त्वस्थानान्यष्टाविंशतिकादित्रयं तदादिषट्कं तदादिसप्तकं अष्टचतुस्त्रिद्व्येकाग्रविंशतिकानि पंच द्वयोर्भवंति ॥ ६६६ ॥

स० चं०—दशकानैं आदि दैकरि पंच उदयस्थान तिनविषैं पहिलाविषैं तौ बंधस्थान वाईसका है। जिस जीवकैं जिसकाल दश प्रकृतिनिका उदय है तिसकैं तिसकाल वाईसहीका बंध है। ऐसैं ही और भी जानि लेना। बहुरि दूसराविषैं बंधस्थान वाईसकानैं आदि दैकरि तीन हैं। तीसराविषैं वाईसकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं। चौथाविषैं वाईसकानैं आदि दैकरि पांच हैं। पांचवां विषैं सतरहकानैं आदि दैकरि तीन हैं। बहुरि सत्वस्थान पहिला उदयस्थानविषैं तौ अठाईसकानैं आदि दैकरि तीन हैं जिसकाल दशका उदय है तिसकाल कोईकैं सत्ताईसका कोईकैं छव्वीसका सत्व पाइए ऐसैं अन्यत्र भी जानना। दूसराविषैं अठाईसकानैं आदि दैकरि छह हैं। तीसराविषैं अठाईस-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कानैं आदि दैकरि सात हैं। चौथा पांचवा दोयविषैं अठाईस चौवीस तेवीस वावीस इकवीसके पंच पंच हैं॥६६६॥

तेरदु पुव्वं वंसा णवमडचउरेक्कवीससत्तमदो।
पणदुगमडचउरेक्कावीसं तेरसातियं सत्तं॥ ६६७॥

त्रयोदशाद्विकं पूर्वं वांशा नवममष्टचतुरेकाविंशसत्त्वमतः।
पंचद्विकमष्टचतुरेकविंशं त्रयोदशात्रिकं सत्त्वं॥ ६६७॥

जी० प्र०—पंचके बंधस्थानानि त्रयोदशकादिद्वयं सत्त्वस्थानानि पूर्वोक्तानि पंच। चतुष्के बंधस्थानं नवकं, सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि। अतःपरं द्विकबंधस्थानानि पंचकादिद्वयं सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रयोदशकादित्रयं च॥ ६६७॥

स० चं—पांचका उदयस्थानविषैं बंधस्थान तेरहकानैं आदि दैकरि दोय हैं सत्वस्थान पूर्वोक्त पांच हैं। बहुरि च्यारिका उदयस्थानविषैं बंधस्थान नवका ही है सत्वस्थान अठाईस चौईस इकईसके तीन हैं। बहुरि याके ऊपरि दोयका उदयस्थानविषैं बंधस्थान पांचकानैं आदि दैकरि दोय ही हैं। सत्वस्थान अठाईस चौईस इकवीस वा तेरहनै आदि दैकरि तीन ऐसै छह हैं॥ ६६७॥

चरिमे चदुतिदुगेक्कं अट्ठयचदुरेक्कसंजुदं वीसं।
एक्कारादीसव्वं कमेण ते मोहणीयस्स॥६६८॥

चरमे चतुस्त्रिद्विकैकमष्टकचतुरेकसंयुतं विंशं।
एकादशादिसर्वं क्रमेण तानि मोहनीयस्य॥ ६६८॥

जी० प्र०—एकके बंधस्थानानि चतुष्कत्रिकद्विकैककानि। सत्त्वस्थानान्यष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि एकादशकादीनि च। तानि मोहनीयस्य सर्वाणि॥ ६६८॥ एवमुदयाधिकरणबंधसत्त्वाधेयमुक्त्वा सत्त्वाधिकरणबंधोदयाधेयमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—एकका उदयस्थानविषैं बंध स्थान च्यारि तीन दोय एकके च्यारि हैं। सत्वस्थान अठाईस चौईस इकवीसके अर ग्यारहकानैं आदि देकरि सर्व छह ऐसैं नव ते सर्व मोहनीयके जानने ॥ ६६८ ॥ आगैं सत्व अधिकरण अर बंध उदय आधेयरूप भंग कहैं हैं—

सत्तपदे बंधुदया दसणव इगिति दुसु अडड तिपण दुसु।
अडसग दुगि दुसु बिबिगिगि दुगि तिसु इगिसुण्णमेक्कं च ॥६६९॥

सत्त्वपदे बंधोदया दशनव एकात्रिकं द्वयोरष्टाष्टात्रिपंचद्वयोः।
अष्टसप्त द्व्येकं द्वयोर्द्विद्विकमेकैकं द्व्येकं त्रिषु एकशून्यमेकं च ॥ ६६९ ॥

जी० प्र०—सत्त्वस्थानेष्वष्टाविंशतिकादिषु क्रमेण बंधोदयसत्त्वस्थानानि दशनव। द्वयोरेकत्रीणि, अष्टाष्टौ द्वयोस्त्रिपंच अष्टसप्त द्वयोर्द्व्येकं द्विद्वि एकैकं त्रिषु द्व्येकं एकशून्यैकं ॥ ६६९ ॥

स० चं०—अठाईसकानैं आदि देकरि सत्वस्थान तिनविषैं अनुक्रमतैं बंधस्थान अर उदयस्थान पहला सत्वस्थानविषैं दश नव अर पीछैं दोयविषैं एक तीन, एकविषैं आठ आठ, दोयविषैं तीन पांच, एकविषैं आठ सात, दोयविषैं दोय एक, एकविषैं दोय दोय, एकविषैं एक एक, तीनविषैं दोय एक, एकविषैं एक वा शून्य अर एक है ॥६६९॥ ते कौन? सो कहैं हैं—

सव्वं सयलं पढमं दसतिय डसु सत्तरादियं सव्वं।

स	२८	२७	२६	२४	२३	२२	२१	१३	१२	११	५	४	३	२	१
बं	१०	१	१	८	३	३	८	२	२	२	१	२	२	२	१ | ०
उ	९	३	३	८	५	५	७	१	१	२	१	१	१	१	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णवयप्पहुदीसयलं सत्तरति णवादिपण दुपदे ॥६७०॥

सर्वं सकलं प्रथमं दशत्रिकं द्वयोः सप्तदशादिकं सर्वं ।
नवकप्रभृति सकलं सप्तदशत्रिकं नवादिपंच द्विपदे ॥ ६७० ॥

जी० प्र०——तान्यष्टाविंशतिके बंधस्थानानि द्वाविंशतिकादीनि सर्वाणि, उदयस्थानानि दशकादीनि सकलानि । सप्तविंशतिकषड्विंशतिकयो- र्बंधस्थानं द्वाविंशतिक, उदयस्थानानि दशकादित्रयं च । चतुर्विंशतिके बंधस्थानानि सप्तदशकादीनि सर्वाणि । उदयस्थानानि नवकाधष्टकं । त्रयोविंशतिकद्वाविंशतिकयोर्बंधस्थानानि सप्तदशकादित्रयं, उदयस्थानानि नवकादिपंचकं ॥ ६७० ॥

स० चं०—अठावीसका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान वाईसकानैं आदि देकरि सर्व दश हैं जिसकैं जिसकाल अठाईसका सत्व है तिसकैं तिसकाल कोई जीवकैं वाईसका कोई जीवकैं इकईसका ऐसैंकरि सर्व स्थानरूप प्रकृतिनिका बंध पाइए ऐसैं अन्यत्र भी कथन जानना । उदयस्थान दशकानैं आदि देकरि सर्व नव हैं । इहां भी अठाईसका सत्व होतैं कोई जीवकैं दशका कोई जीवकैं नवका इत्यादि उदय जानना । ऐसैं ही अन्यत्र जानना । बहुरि सत्ताईस छव्वीसका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान वाईसहीका है । उदयस्थान दशकानैं आदि देकरि तीन हैं । बहुरि चौवीसका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान सतरहकानैं आदि देकरि सर्व आठ हैं । उदयस्थान नवकानैं आदि देकरि सर्व आठ है । बहुरि तेवीस वावीसका दोय सत्वस्थाननिविषैं बंधस्थान सतरहकानैं आदि देकरि तीन हैं । उदयस्थान नवकानैं आदि देकरि पंच हैं ॥ ६७० ॥

सत्तरसादि अडादीसव्वं पण चारि दोण्णि दुसु तत्तो ।
पंचचउक्क दुगेक्कं चदुरिगि चदुतिण्णि एक्कं च ॥६७१॥

सप्तदशादि अष्टादि सर्वं पंच चत्वारि द्वे द्वयोस्ततः ।
पंचचतुष्कं द्विकैकं चतुरेकं चतुस्त्रीणि एकं च ॥ ६७१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—एकविंशतिके बंधस्थानानि सप्तदशकादीनि सर्वाणि । उदयोऽष्टकादिः सर्वः । त्रयोदशकद्वादशकयोर्बंधः पंचकचतुष्के द्वे, उदयो द्विकं । ततः एकादशके बंधः पंचकचतुष्के द्वे उदयः द्विकैके द्वे । पंचके बंधश्चतुष्कं उदय एककं । चतुष्के बंधश्चतुष्कत्रिके द्वे उदय एककं ॥ ६७१ ॥

स० चं०—इकईसका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान सतरहकानैं आदि दैकरि सर्व आठ हैं। उदय स्थान आठकानैं आदि दैकरि सर्व सात हैं। बहुरि तेरह बारहके दोय सत्वस्थाननिविषैं बंधस्थान बंध च्यारि पांचके दोय हैं। उदय दोयहीका है। बहुरि ग्यारहका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान पांच च्यारिके दोय हैं। उदयस्थान दोय एकके दोय हैं। बहुरि पांचका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान च्यारिका एक ही है। उदयस्थान एकका एक ही है। बहुरि च्यारिका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान च्यारि तीनके दोय हैं। उदयस्थान एकका एक ही है ॥ ६७१ ॥

तत्तो तियदुगमेक्कं दुप्पयडीएक्कमेक्कठाणं च ।
इगिणभबंधो चरिमे एउदओ मोहणीयस्स ॥ ६७२ ॥

ततस्त्रिकद्विकमेकं द्विप्रकृत्येकमेकस्थानं च ।
एकनभोबंधश्चरमे एकोदयो मोहनीयस्य ॥ ६७२ ॥

जी० प्र०—ततस्त्रिके बंधः त्रिकद्विके द्वे उदय एककं, द्विके बंधः द्विकैकके द्वे उदय एककं, मोहनीयस्यैकैके बंध एककं शून्यं च, उदय एककं ॥ ६७२ ॥ अथ मोहनीयस्य बंधादित्रये द्वयमाधारमेकं वाधेयं कृत्वाह—

स० चं०—तहां पीछैं तीनका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान तीन दोयके दोय हैं। उदयस्थान एकका एक ही है। बहुरि दोयका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान दोय एकके दोय हैं। उदयस्थान एकका एक ही है। मोहनीयका एकका सत्वस्थानविषैं बंध एकका वा शून्य बंधका अभाव है। उदयस्थान एकका एक ही है ॥ ६७२ ॥ आगैं मोहनीयके बंध उदय सत्वनिविषैं दोय आधार एक आधेयकरि कहैं हैं—

बंधुदये सत्तपदं बंधंसे णेयमुदयठाणं च ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदयंसे बंधपदं दुट्ठाणाधारमेक्कमाधेज्जं ॥६७३॥

बंधोदये सत्त्वं बंधांशे ज्ञेयमुदयस्थानं च।
उदयांशे बंधपदं द्विस्थानाधारमेकमाधेयं ॥ ६७३ ॥

जी० प्र०—बंधोदये सत्त्वं बंधसत्त्वे उदय उदयसत्त्वे बंध इति त्रिधाद्विस्थानाधारैकस्थानाधेयो ज्ञातव्यः ॥ ६७३ ॥ तत्र प्रथमं प्रकारं गाथाषट्केनाह—

स० चं०—बंध उदयके स्थानविषैं सत्व बहुरि बंध सत्वस्थानविषैं उदय बहुरि उदय सत्वस्थानविषैं बंध ऐसैं दोय स्थान आधार एक स्थान आधेय सो तीनप्रकार जानना। तहां इतनेका बंध अर इतनेका उदय जिसकैं होइ तिस किसी जीवकैं इतनेका सत्व पाइए, किसीकैं इतनेका सत्व पाइए ऐसैं कहिए तहां बंध उदय तौ आधार अर सत्व आधेय जानना। बहुरि इतनेका बंध अर इतनेका सत्व जिस जीवकैं होइ तिस किसी जीवकैं इतनेका उदय किसीकैं इतनेका उदय पाइए ऐसा कहिए तहां बंध सत्व आधार उदय आधेय जानना। बहुरि इतनेका उदय इतनेका सत्व जिस जीवकैं पाइए तिस किसी जीवकैं इतनेका बंध किसीकैं इतनेका बंध पाइए ऐसा कहिए तहां उदय सत्व आधार बंध आधेय जानना ऐसैं तीन प्रकार कहे॥६७३॥ तहां पहिला प्रकार छह गाथानिकरि कहैं हैं—

बावीसेण णिरुद्धे दसचउरुदये दसादिठाणतिये।
अट्ठावीसति सत्तं सत्तुदये अट्ठवीसेव ॥ ६७४ ॥

द्वाविंशेन निरुद्धे दशचतुष्कोदये दशादिस्थानत्रये।
अष्टाविंशत्रिकं सत्त्वं सप्तोदयेऽष्टविंशमेव ॥ ६७४ ॥

१			
	बं। उ स	बं। स उ	उ। स बं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—द्वाविंशतिकबंधेन निरुद्धे जीवे संभविषु दशकादिचतुरुदयस्थानेषु मध्ये दशकादित्रये सत्त्वमष्टाविंशतिकादित्रयं । सप्तकेऽष्टाविंशतिकमेव ॥ ६७४ ॥

स० चं०—वाईसका बंध सहित जीवविषैं दशकानैं आदि दैकरि च्यारि उदयस्थान हैं तिनविषैं दशकानैं आदि दैकरि तीनविषैं तौ सत्व अठाईसकानैं आदि दैकरि तीन हैं। सातकाविषैं अठाईसका ही सत्व है ॥६७४॥

इगिवीसेण णिरुद्धे णवयातिये सत्तमट्ठवीसेव ।
सत्तरसे णवचदुरे अडचउतिदुगेक्कवीसंसा ॥ ६७५ ॥

एकविंशेन निरुद्धे नवकत्रये सत्त्वमष्टाविंशमेव ।
सप्तदशे नवचतुष्के अष्टचतुस्त्रिद्व्येकविंशांशाः ॥ ६७५ ॥

जी० प्र०—एकविंशतिकबंधेन निरुद्धे जीवे उदयन्नवकादित्रये सत्त्वमष्टाविंशतिकमेव। सप्तदशकबंधेनोदयन्नवकादिचतुर्षु सत्त्वमष्टचतुस्त्रिद्व्येकाग्रविंशतिकानि ॥ ६७५ ॥ किंतु

स० चं०—इकवीसका बंध सहित जीवविषैं नवकानैं आदि दैकरि तीनका उदय होतैं सत्व अठाईसहीका है। बहुरि सतरहका बंधसहित जीवविषैं नवकानैं आदि दैकरि च्यारिका उदय होतैं सत्व अठाईस चौइस तेईस वाईस इकईसके हैं ॥ ६७५ ॥ तहां इतना विशेष है—

इगिवीसं ण हि पढमे चरिमे तिदुवीसयं ण तेरणवे ।
अडचउसगचउरुदये सत्तं सत्तरसयं व हवे ॥ ६७६ ॥

एकविंशं नहि प्रथमे चरमे त्रिद्विविंशकं न त्रयोदशनवके ।
अष्टचतुःसप्तचतुरुदये सत्त्वं सप्तदशकं व भवेत् ॥ ६७६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—नवकोदये एकविंशतिकं नहि, षट्कोदये च न त्रयोविंशतिकद्वयं। त्रयोदशकबंधेऽष्टकादिषु नवकबंधे सप्तकादिषु च चतुर्षूदयस्थानेषु क्रमेण सत्त्वं सप्तदशबंधवद्भवति ॥ ६७६ ॥

स० चं०—नवका उदय होतैं इकईसका सत्व न हो है। वा छहका उदय होतैं तेवीस वावीसका सत्व न हो है। बहुरि तेरहका बंधसहित आठकानैं आदि देकरि च्यारि उदयस्थान होतैं वा नवका बंध सातकानैं आदि देकरि च्यारि उदयस्थान होतैं सत्व सतरहका बंध सहितविषैं जैसैं कह्या तैसैं जानना॥ ६७६ ॥ इतना विशेष है—

णवरि य अपुव्वणवगे छादितियुदयेवि णत्थि तिदुवीसा।
पणबंधे दोउदये अडचउरिगिवीसतेरसादितियं ॥ ६७७ ॥

नवरि चापूर्वनवके षडादित्रयोदयेऽपि नास्ति त्रिद्विविंशं।
पंचबंधे द्विकोदये अष्टचतुरेकविंशत्रयोदशादित्रयं ॥ ६७७ ॥

जी० प्र०—तत्रापूर्वकरणनवकबंधे षट्कादित्रयोदयेन त्रयोविंशतिकद्वयमस्तीति विशेषः पंचकबंधस्य द्विकोदये सत्त्वमष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि त्रयोदशकादित्रयं च ॥ ६७७ ॥

स० चं०—अपूर्व करणविषैं नवका बंध सहित छैकानैं आदि देकरि तीनका उदय होतैं तेवीस वावीसका सत्व नाहीं है इतना विशेष है। बहुरि पांचका बंध सहित दोयका उदय होतैं सत्व अठाईस चौवीस इकईसके वा तेरहकानैं आदि देकरि तीन हैं॥ ६७७ ॥

चदुबंधे दोउदये सत्तं पुव्वं व तेण एक्कुदये।
अडचउरेक्कावीसा एयारतिगं च सत्ताणि ॥ ६७८ ॥

चतुर्बंधे द्विकोदये सत्त्वं पूर्वं व तेन एकोदये।
अष्टचतुरेकविंशानि एकादशत्रिकं च सत्त्वानि ॥ ६७८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—चतुष्कबंधस्य द्विकोदये सत्त्वं पंचबंधवद्भवति । चतुष्कबंधस्यैककोदये त्वष्टचतुरेकाग्रविंशतिकान्येकादशकादित्रयं ॥ ६७८ ॥

स० चं०—च्यारिका बंध सहित दोयका उदय होतैं सत्व पांचका बंध सहितविषैं जैसैं कह्या तैसैं जानना । च्यारिका बंध सहित एकका उदय होतैं सत्व अठाईस चौईस इकवीसके ग्यारहकानैं आदि देकरि तीन जानने ॥ ६७८ ॥

तिदुइगिबंधेक्कुदये चदुतियठाणेण तिदुगठाणेण ।
दुगिठाणेण य सहिता अडचउरिगिवीसया सत्ता ॥ ६७९ ॥

त्रिद्विकैकबंधे एकोदये चतुस्त्रिस्थानेन त्रिद्विकस्थानेन ।
द्विकैकस्थानेन च सहितानि अष्टचतुरेकविंशकानि सत्त्वानि ॥ ६७९ ॥

जी० प्र०—त्रिकद्विकैकबंधिष्वेककोदये सत्त्वमष्टचतुरेकाग्रविंशतिकानि पुनः क्रमेण चतुष्कत्रिकाभ्यां त्रिकद्विकाभ्यां द्विकैकाभ्यां च युतानि । अत्रायमर्थः—

मोहस्य सर्वबंधप्रकृतिषु चतुर्गतिमिथ्यादृष्टौ द्वाविंशतिकबंधे मिथ्यात्वयुतानंतानुबंधियुतवियुताष्टकूटसंभूताऽपुनरुक्तदशकादिचतुरुदयस्थानेष्वेकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपत्संभवत्सु त्रिषु सत्त्वमेकजीवापेक्षयाष्टाविंशतिकादित्रयं क्रमेण, नानाजीवापेक्षया युगपत् । सप्तोदयस्थाने तु अष्टाविंशतिमेव न सप्तविंशतिकषट्विंशतिके । कुतः ? असंयतादिषु चतुर्ष्वेकत्रानंतानुबंधिनो विसंयोज्य मिथ्यात्वोदयान्मिथ्यादृष्टित्वं गतः तत्प्रथमसमये द्वाविंशतिकबंधे बद्धानंतानुबंध्येकसमयप्रबद्धस्य तदुदीरणाया अचलावलिकालमसंभवात्तदुदयरहितस्य तस्य सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिवेदककालत्वादुपशमकालाभावात्सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्यनुद्वेल्लनात् । चतुर्गतिसासादनैकविंशतिकबंधे एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपदुदयनवकादित्र्युदयस्थानेषु सत्त्वमष्टाविंशतिकमेव न सप्तविंशतिकषड्विंशतिके । कुतः ? उपशमसम्यक्त्वादेव सासादने गमनात्तत्स्थितेश्चैकसमयात्षडावलिपर्यंतसमयोत्तरकालविकल्पात्मकत्वात्सम्यक्त्वमिश्रप्रकृत्युद्वेल्लनावसरस्योपशमकालस्यानवतारात् । नापि चतुर्विंशतिकं, अनंतानुबंधिविसंयोजकानां नियमेन वेदकसम्यग्दृष्टित्वात्सासादने नागमनात् । चतुर्गतिमिश्रसप्तदशकबंधे एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपदुदयनवकादित्र्युदयस्थानेषु सत्त्वमष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिके नानाजीवापेक्षया युगपदेकजीवापेक्षया क्रमेण न त्रयोविंशतिकद्वाविंशतिके । कुतः ? मिश्रोदये दर्शनमोहस्य क्षपणाप्रारंभाभावात् । चतुर्गत्यसंयमसप्तदशकबंधे एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपदुदयचतुरुदयस्थानेषु नवकोदये सत्त्वं वेदकसम्यग्दृष्टित्वाद्दर्शनमोहक्षपणाप्रारंभादनंतानुबंधिमिथ्यात्वमिश्रसहितरहितस्थानसंभवात् । कर्मभूमिमनुष्ये एकजीवापेक्षयाष्टचतुस्त्रिद्व्यग्रविंशतिकानि क्रमेण, नानाजीवापेक्षया युगपत् नैकविंशतिकं क्षायिकसम्यग्दृष्टावेव तत्सत्त्वात् । अष्टकसप्तकोदये सत्त्वं प्रथमोपशमसम्यक्त्वेष्टाविंशतिकं द्वितीयोपशमसम्यक्त्वे तच्च-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तुर्विंशतिकं च, वेदकसम्यक्त्वे तद्द्वयं च त्रिद्व्यग्रविंशतिके एकजीवापेक्षया क्रमेण नानाजीवापेक्षया युगपत्, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव। षट्कोदये सम्यक्त्वप्रकृतिरहितत्वात् क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकं, उपशमसम्यक्त्वेऽष्टाविंशतिकचतुर्विंशतिके द्वे। त्रयोदशकबंधे देशसंयते तिर्यग्मनुष्योपशमवेदकसम्यक्त्वे मनुष्यक्षायिकसम्यक्त्वे चाष्टकोदये सत्त्वं वेदकसम्यक्त्वे तिरश्च्यष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, मनुष्ये तद्द्वयं च त्रिद्व्यग्रविंशतिके च। सप्तकषट्कोदये तिर्यग्मनुष्योपशमसम्यक्त्वोपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। वेदकसम्यक्त्वे तिरश्चि तद्द्वयं, मनुष्ये तद्द्वयं च त्रिद्व्यग्रविंशतिके च, क्षायिकसम्यक्त्वे देशसंयतस्य मनुष्यत्वादेकविंशतिकमेव तत्पंचकोदये उपशमसम्यग्दृष्टितिर्यग्मनुष्येऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यग्दृष्टिमनुष्ये एकविंशतिकमेव। नवकबंधे प्रमत्ताप्रमत्ते चतुर्षूदयस्थानेषु सप्तकोदये वेदकसम्यक्त्वे सत्त्वमष्टचतुस्त्रिद्व्यग्रविंशतिकानि। षट्कपंचकोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। वेदकसम्यक्त्वे तद्द्वयं च त्रिद्व्यग्रविंशतिके च। क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव। तच्चतुष्कोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव। नवकबंधेऽपूर्वकरणे षट्कपंचकचतुष्कोदये सत्त्वमुपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकमेव। पंचचतुष्कबंधद्विकोदयेऽनिवृत्तिकरणे सत्त्वमुपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकत्रिद्व्येकाग्रदशकानि। चतुष्कबंधैककोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकैकादशकपंचकचतुष्काणि। त्रिकबंधैककोदये उपशमसम्यक्त्वेष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे, क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकचतुष्कत्रिकाणि। द्विकबंधैककोदयानिवृत्तिकरणे उपशमसम्यक्त्वेष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे। क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकत्रिकद्विकानि। एकबंधकोदये उपशमसम्यक्त्वेऽष्टचतुरग्रविंशतिके द्वे क्षायिकसम्यक्त्वे एकविंशतिकद्विकैकानि। अत्र क्षपकानिवृत्तिकरणे चतुस्त्रिद्व्येकबंधे क्रमेण पंचचतुश्चतुस्त्रित्रिद्विद्व्येकसत्त्वेषु पूर्वपूर्वनवकबंधोच्छिष्टावलिसत्त्वे विवक्षिते ज्ञातव्ये॥ ६७९॥ अथ बंधसत्त्वद्विस्थानाधारोदयैकस्थानाधेयं गाथापंचकेनाह—

स० चं०—तीन दोय एकका बंध सहित एकका उदय होतैं सत्वस्थान अठाईस चौवीस इकईसके तिनिका बंध सहितविषैं तौ च्यारि तीनका संयुक्त दोयका बंध सहितविषैं तीन दोयका संयुक्त एकका बंध सहितविषैं दोय एकका संयुक्त पांच पांच पाइए। इहां यहु अर्थ है—

मोहनीयकी सर्व बंध प्रकृतिनिविषैं च्यारि गतिका मिथ्यादृष्टी जीव बाईसका बंध करै। तिनकैं मिथ्यात्व सहित अर अनंतानुबंधी सहित वा रहित आठ कूट कहे थे तिनतैं उत्पन्न भए ऐसैं अपुनरुक्त दशकानैं आदि देकरि च्यारि उदयस्थान एक जीव अपेक्षा तौ अनुक्रमतैं अर नानाजीव अपेक्षा युगपत् संभवै हैं तिनविषैं तीनविषैं तौ एक जीव अपेक्षा अनुक्रमतैं नानाजीव अपेक्षा युगपत् अठाईसकानैं आदि देकरि तीनका सत्व संभवै है। बहुरि सातका उदयस्थानविषैं अठाईसहीका सत्व है सत्ताईस छब्बीसका नाहीं। काहेतैं?—जातैं असंयतादिक च्या-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रिविषैं एक किसी गुणस्थानविषैं अनंतानुबंधीका विसंयोजनकरि मिथ्यात्वके उदयतैं मिथ्यादृष्टी भया तहां प्रथम समयविषैं वाईसका बंध कीया। तहां अनंतानुबंधीका एक समय प्रबद्ध बंध्या तिसकी उदीरणा अचलावली कालपर्यंत न संभवै है। अर अनंतानुबंधीका उदयरहित तिस जीवकैं सम्यक्त्व मोहनी मिश्रमोहनीका वेदक काल है उपशम काल नाहीं तातैं ताकैं सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीकी उद्वेलना न होइ । पूर्वै वेदककाल उपशम कालका लक्षण कहि आए हैं। वा वेदक कालविषैं इनकी उद्वेलनाका अभाव कहि आए हैं।

बहुरि च्यारि गतिका सासादनविषैं इकईसका बंध तहां एकजीव अपेक्षा क्रमतैं अर नानाजीव अपेक्षा युगपत् नवकानैं आदि देकरि तीन उदयस्थान हैं तिनविषैं अठाईसका ही सत्व है सत्ताईस छब्बीसका नाहीं जातैं उपशम सम्यक्त्वहीतैं भ्रष्ट होइ सासादन हो है ताकी स्थिति एक समयतैं लगाय छह आवली पर्यंत एक एक समय बंधता काल प्रमाण लीए हैं तातैं सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीकी उद्वेलनाका अवसर रूप जो उपशम काल सो इहां न संभवै है । बहुरि इहां चौबीसका भी सत्त्व नाहीं जातैं अनंतानुबंधीका विसंयोजन वेदक सम्यग्दृष्टी हीकैं होइ सो वेदक सम्यग्दृष्टी सासादनविषैं आवै नाहीं। बहुरि च्यारि गतिका मिश्रविषैं सतरहका बंध तहां एक जीव अपेक्षा क्रमतैं नाना जीव अपेक्षा युगपत् नवकानैं आदि देकरि तीन उदयस्थान हैं तहां अठाईस वा चौइसहीका सत्व है तेवीस वावीसका नाहीं जातैं मिश्र मोहनीका उदय होतैं दर्शन् मोहकी क्षपणाका प्रारंभ न हो है। बहुरि च्यारि गतिका असंयतविषैं सतरहका बंध तहां एक जीव अपेक्षा क्रमतैं नानाजीव अपेक्षा युगपत् च्यारि उदयस्थान हैं तिनविषैं नवका उदय होतैं वेदक सम्यग्दृष्टीपना है तातैं दर्शन मोहनीकी क्षपणाका प्रारंभ होनेतैं अनंतानुबंधी मिथ्यात्व मिश्रमोहनी इनकरि सहित वा रहित सत्वस्थान संभवै है तातैं कर्मभूमिया मनुष्यविषैं एक जीव अपेक्षा क्रमतैं नानाजीव अपेक्षा युगपत् अठाईस चौबीस तेवीस वावीसका सत्व संभवै है। इकईसका सत्व क्षायिक सम्यग्दृष्टीहीकैं होइ तातैं न संभवै है। बहुरि आठका वा सातका उदय होतैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वविषैं तौ अठाईस हीका सत्व द्वितीयोपशम सम्यक्त्वविषैं अठाईस वा चौईसका सत्व वेदक सम्यक्त्वविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अठाईस चौईस तेईसका सत्व एक जीव अपेक्षा क्रमतैं नाना जीव अपेक्षा युगपत् संभवै है। क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकईसहीका सत्व है। बहुरि छहका उदय होतैं सम्यक्त्व मोहनीय रहितपनेतैं क्षायिक सम्यक्त्वीविषैं तौ इकई-सहीका सत्व है। उपशम सम्यक्त्वविषैं अठाईस वा चौईसका सत्व है। बहुरि तेरहका बंध सहित देशसंयतविषैं तिर्यंच वा मनुष्यके उपशमक वा वेदक सम्यक्त्व हो है। क्षायिक मनुष्यहीकैं हो है। तहां आठका उदय होतैं सत्व वेदक सम्यक्त्वी तिर्यंचविषैं तौ अठाईस चौवीसके दोय अर मनुष्यविषैं अठाईस चौवीसके दोय अर तेवीस बावीसके दोय ऐसैं च्यारि हैं। बहुरि सात वा छहका उदय होतैं तिर्यंच मनुष्यके उपशम सम्यक्त्वविषैं तौ अठाईस चौवीसके दोय वेदक सम्यक्त्वी तिर्यंचविषैं तेई दोय वेदक सम्यक्त्वी मनुष्यविषैं ते दोय अर तेवीस बावीसके दोय ऐसैं च्यारि हैं। बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टी मनुष्यही हो हैं तातैं इकईसहीकी सत्व है। बहुरि पांचका उदय होतैं उपशम सम्यग्दृष्टी तिर्यंच मनुष्यविषैं अठाईस वा चौईसका सत्व है। क्षायिक सम्यग्दृष्टी तिर्यंच मनुष्यविषैं इकई-सहीका सत्व है। बहुरि नवका बंध सहित प्रमत्त अप्रमत्त तिनके च्यारि उदयस्थान तिनविषैं सातका उदय होतैं वेदक सम्यक्त्वी ही है तातैं अठाईस चौईस तेवीस बावीसके च्यारि सत्व हैं। बहुरि छह वा पांचका उदय होतैं उपशम सम्यक्त्वविषैं तो अठाईस चौवीसका सत्व है। वेदक सम्यक्त्वविषैं अठावीस चौवीस तेवीस बावीसका सत्व है। क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकवीसहीका सत्व है। बहुरि च्यारिका उदय होतैं उपशम सम्यक्त्वविषैं अठाईस चौवीसका सत्व है। क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकवीसहीका सत्व है बहुरि नवका बंध सहित अपूर्वकरणविषैं छह वा पांच वा च्यारिका उदय होतैं उपशम सम्यक्त्वविषैं अठाईस चौईसका सत्व है। क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकईसहीका सत्व है। बहुरि पांच च्यारिका बंध दोयका उदय सहित अनिवृत्ति करणविषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं तौ सत्तावीस वा अठावीस वा चौवीसका क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकवीस तेरह बारह ग्यारहका है। बहुरि च्यारिका बंध एकका उदयसहित-विषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं अठाईस चौईस क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकईस ग्यारह पांच च्यारिका है। बहुरि तीनका बंध एकका उदय सहितविषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं तौ अठावीस चौवीसका क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकईस च्यारि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तीनका सत्व है। बहुरि दोयका बंध एक का उदय सहित अनिवृत्ति करणविषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं तो अठावीस चौबीसका क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकवीस तीन दोयका सत्व है। बहुरि एकका बंध एकका उदयसहितविषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं तौ अठाबीस चौबीसका क्षायिक सम्यक्त्वविषैं इकवीस दोय एकका सत्व है। इहां क्षपक अनिवृत्ति करणविषैं च्यारि तीन दोय एकका बंध होतैं क्रमतैं पांच च्यारि च्यारि तीन तीन दोय दोय एकका सत्व है। तहां पहले पहल वेद वा कषायनिके नवक समय प्रबद्धके उच्छिष्टावली मात्र निषेक अवशेष रहै हैं तिनकी विवक्षाकरि जानने ॥ ६७९ ॥ आगैं बंध सत्व आधार उदय आधेयकौं पांच गाथानिकरि कहैं हैं—

बावीसे अडवीसे दसचउरुदओ अणे ण सगवीसे।
छव्वीसे दसयतियं इगिअडवीसे दु णवयतियं॥ ६८० ॥

द्वाविंशतौ अष्टाविंशतौ दशचतुष्कोदयः अने न सप्तविंशतौ।
षड्विंशतौ दशकत्रयमेकाष्टविंशतौ तु नवकत्रयं ॥ ६८० ॥

जी० प्र०—द्वाविंशतिकबंधके चतुर्गतिमिथ्यादृष्टौ अष्टाविंशतिकसत्त्वे उदयस्थानानि दशकादीनि चत्वारि अनंतानुबंधिरहितस्याप्यत्र संभवात्। द्वाविंशतिकबंधेन समं सप्तषडधिकविंशकसत्त्वे तु तदादीनि त्रीण्येव सम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिकृतोद्वेल्लनत्वेनानंतानुबंध्युदयरहितत्वाभावात्। एकविंशतिबंधकचतुर्गतिसासादनेऽष्टाविंशतिकसत्त्वे मिथ्यात्वानुदयान्नवकादीनि त्रीणि ॥ ६८० ॥

स० चं०—बाईसका बंध सहित च्यारिगतिका मिथ्यादृष्टी जीवविषैं अठाईसका सत्व होतैं उदय स्थान दशकानैं आदि दैकरि च्यारि हैं जातैं इहां अनंतानुबंधी रहित भी उदयस्थान संभवै हैं। बहुरि बावीसका बंध सहित सत्ताईस छवीसका सत्व होतैं दशकानैं आदि दैकरि तीन ही स्थाननिका उदय है जातै इहां सम्यक्त्वमोहनी मिश्रमोहनीयकी उद्वेलना युक्तपनैतैं अनंतानुबंधी रहितपनेका अभाव है। बहुरि इकईसका बंध सहित च्यारिगतिका सासादनविषैं अठाईसका सत्व हो है। मिथ्यात्वका उदयके अभावतैं नवकानैं आदि दैकरि तीन उदयस्थान हैं॥६८०॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्तरसे अडचदुवीसे णवयचदुरुदयमिगिवीसे ।
णो पढमुदओ एवं तिदुवीसे णंतिमस्सुदओ ॥ ६८१ ॥

सप्तदशाष्टचतुर्विंशे नवकचतुष्कोदय एकविंशे ।
नो प्रथमोदय एवं त्रिद्विविंशे नांतिमस्योदयः ॥ ६८१ ॥

जी० प्र०—सप्तदशकबंधे वा चतुर्गतिकेऽष्टचतुरग्रविंशतिकसत्त्वे उदयस्थानान्यपुनरुक्तानि नवकादीनि चत्वारि । मिश्रे मिश्रप्रकृतियुतचतुःकूटजानि त्रीणि । असंयते सम्यक्त्वप्रकृतियुतवियुतकूटाष्टकजानि चत्वारि । सप्तदशकबंधैकविंशतिकसत्त्वे चतुर्गत्यसंयते क्षायिकसम्यग्दृष्टित्वात्सम्यक्त्वप्रकृतियुतचतुष्कूटाभावान्न प्रथमं नवोदयस्थानं तेनाष्टकादीनि त्रीणि । सप्तदशकबंधत्रिद्व्यधिकविंशतिकसत्त्वे दर्शनमोहक्षपकमनुष्यवेदकसम्यग्दृष्टयसंयते सम्यक्त्वप्रकृत्युदययुतत्वादंतिमं षडुदयस्थानं नेति नवकादीनि त्रीणि ॥ ६८१ ॥

स० चं०—सतरहका बंधसहित च्यारिगतिका जीवविषैं अठाईस चौईसका सत्व होतैं नवकानैं आदि दैकरि च्यारि उदयस्थान हैं। तहां मिश्रविषैं मिश्रमोहनी संयुक्त च्यारि कूटनितैं उपजे तीन ही उदयस्थान हैं। असंयत विषै सम्यक्त्वमोहनी सहित वा रहित आठ कूटनितैं उपजे ऐसे च्यारि उदय स्थान हैं। बहुरि सतरहका बंधसहित इकईसका सत्व होतैं च्यारि गतिके असंयतविषैं क्षायिक सम्यक्त्वपनेतैं सम्यक्त्व मोहनीय सहित च्यारि कूटनिका अभावतैं पहिला नवका उदयस्थान नाहीं आठकानैं आदि दैकरि तीन हो हैं। बहुरि सतरहका बंधसहित तेवीस बावीसका सत्व होतैं दर्शनमोहनीयकी क्षपणासंयुक्त मनुष्य वेदक सम्यक्त्वी असंयतविषैं सम्यक्त्व मोहनीयका उदय सहित ही कूट हैं तातैं अंतका छहका उदयस्थान नाहीं नवकानैं आदि दैकरि तीन हो हैं॥ ६८१॥

तेरणवे पुव्वंसे अडादिचउ सगचउण्हमुदयाणं ।
सत्तरसं व वियारो पणगुवसंते सगेसु दो उदया॥ ६८२॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

त्रयोदशनवमे पूर्वांशे अष्टादिचतुष्कं सप्तचतुष्कमुदयानां।
सप्तदशं व विचारः पंचकोपशांते स्वकेषु द्वौ उदयौ ॥ ६८२ ॥

जी० प्र०—त्रयोदशकबंधे तिर्यग्मनुष्यदेशसंयते नवकबंधे प्रमत्ताप्रमत्तोभयापूर्वकरणे च सप्तदशकबंधोक्तमेव सत्त्वं, तत्राष्टकादीनि सप्तकादीन्युदयस्थानानि चत्वारि चत्वारि। किंतु एकविंशतिकसत्त्वे त्रयोदशकबंधे प्रथमं अष्टोदयस्थानं न। नवकबंधे सप्तकोदयस्थानं न। त्रिद्व्यधिकविंशतिकसत्त्वे त्रयोदशकबंधे अंतिमं पंचकोदयस्थानं न। नवकबंधे चतुष्कोदयस्थानं न तत्स्वकीयोदयस्थानानां चतुर्णां सप्तदशकबंधवद्विचार इति प्रतिपादनात्। पंचकबंधे उपशांतकषायोक्ताष्टचतुरेकाग्रविंशतिकसत्त्वेऽनिवृत्तिकरणे द्विकोदयः। पुनः तत्पंचकबंधे चतुष्कबंधे च द्विकोदयः स्यात् ॥६८२॥

स० चं०—तेरहका बंधसहित तिर्यंच मनुष्य देशसंयतविषैं बहुरि नवका बंध सहित प्रमत्त अप्रमत्त दोऊ श्रेणीका अपूर्वकरणविषैं सतरहका बंधसहितविषैं सत्व कह्या तिस सत्वकौं होतैं देशसंयतविषैं आठकानैं आदि देकरि च्यारि अवशेषनिविषैं सातकानैं आदि देकरि च्यारि च्यारि उदयस्थान हैं। इतना विशेष—इकईसका सत्व होतैं तेरहका बंधसहितविषैं तो पहला आठका उदयस्थान नाहीं। नवका बंध सहितविषैं सातका उदयस्थान नाहीं। बहुरि तेवीस वावीसका सत्व होतैं तेरहका बंध सहितविषैं अंतका पांचका उदयस्थान नाहीं। नवका बंध सहितविषैं च्यारिका उदयस्थान नाहीं सो यहु विशेष सतरहका बंधविषै जैसैं क्षायिक वा दर्शनमोहका क्षपक वेदक सम्यक्त्वीकी अपेक्षा कह्या तैसैं ही जानना। बहुरि उपशांत कषायविषैं कहे जे अठावीस चौवीस इकबीसका सत्व तिनकौं होतैं पंचका बंध सहित अनिवृत्ति करणविषैं दोयका उदय है। बहुरि पांचका वा च्यारि बंध सहितविषैं भी दोयका उदय है ॥ ६८२ ॥ सो कहिए हैं—

तेणवं तेरतिये चदुबंधे पुव्वसत्तगेसु तहा।
तेणुवसंतंसेयारातिए एक्को हवे उदओ ॥ ६८३ ॥

तेनैवं त्रयोदशत्रये चतुर्बंधे पूर्वसत्त्वकेषु तथा।
तेनोपशांतांशे एकादशत्रये एको भवेदुदयः ॥ ६८३ ॥

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तत्पंचकबंधेन सहितेऽनिवृत्तिक्षपके त्रिद्व्येकाग्रदशकसत्त्वे तथा चतुष्कबंधेऽष्टाविंशतिकाद्येकादशकांतपूर्वसत्त्वेऽप्येवं द्विकोदयः स्यात्। पुनः तच्चतुर्विधे उपशांतकषायाष्टाविंशतिकादित्रिसत्त्वे एकादशकादित्रिसत्त्वे च बादरे एककोदयः स्यात् ॥ ६८३ ॥

स० चं०—तीहिं पंचका बंध सहित क्षपक अनिवृत्ति करणविषैं तेरह बारह ग्यारहका सत्व होतैं तथा च्यारिका बंध सहित अठाईसकानैं आदि दैकरि तीन वा तेरहनैं आदि दैकरि तीनका सत्व होतैं दोयका उदय है । बहुरि च्यारिका बंध सहित उपशांतकषायविषैं कहे असे अठाईसकानै आदि दैकरि तीनका सत्व होतैं वा ग्यारहनै आदि दैकरि तीनका सत्व होतैं अनिवृत्ति करणविषैं एकका उदय है ॥ ६८३ ॥

तिदुइगिबंधे अडचउरिगिवीसे चदुतिएण ति दुगेण ।
दुगिसत्तेण य सहिदे कमेण एक्को हवे उदओ ॥ ६८४ ॥

त्रिद्व्येकबंधे अष्टचतुरेकविंशे चतुस्त्रिकेण त्रिद्विकेन ।
द्व्येकसत्त्वेन च सहिते क्रमेणैको भवेदुदयः ॥ ६८४ ॥

जी० प्र०—त्रिकद्विकैकबंधबादरेषु अष्टचतुरेकाग्रविंशतिकसत्त्वेषु चतुष्कत्रिकसत्त्वाभ्यां त्रिकद्विकसत्त्वाभ्यां द्विकैकसत्त्वाभ्यां च क्रमेण सहितेष्वेकोदयः स्यात् ॥ ६८४ ॥ अथोदयसत्त्वाधारबंधाधेयं गाथासप्तकेनाह—

स० चं०—तीन दोय एकका बंध सहित अनिवृत्ति करणविषैं अठावीस चौवीस इकबीसका सत्व होतैं वा च्यारि तीनका सत्व होतैं वा तीन दोयका सत्व होतैं वा दोय एकका क्रमतैं सत्व होतैं एक एकहीका उदय है । "इहां नवक समय प्रबद्धकी विवक्षा अविवक्षाकरि दोय दोय प्रकार सत्व कहे हैं" ॥६८४॥ आगैं उदय सत्व आधार बंध आधेयकौं सात गाथानिकरि कहैं हैं—

दसगुदये अडवीसतिसत्ते बावीसबंध णवअट्टे ।
अडवीसे बावीसतिचउबंधो सत्तवीसदुगे ॥ ६८५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दशकोदये अष्टविंशत्रिसत्त्वे द्वाविंशबंधो नवाष्टके ।
अष्टविंशतौ द्वाविंशतित्रिचतुर्बंधः सप्तविंशद्विके ॥ ६८५ ॥

जी० प्र०—दशकोदयेऽष्टाविंशतिकादित्रिसत्त्वे द्वाविंशतिकबंधः । अयं मिथ्यादृष्टिकः सर्वमोहनीयसत्त्वोपरो वोद्वेल्लितसम्यक्त्वमिश्रप्रकृतिको ज्ञातव्यः । नवकोदयेऽसंयतांतेषु अष्टकोदये देशसंयतांतेषु चाष्टाविंशतिकसत्त्वे क्रमेण बंधस्थानानि द्वाविंशतिकादीनि त्रीणि चत्वारि । पुनस्तयोरेव सप्तविंशतिकादिद्वयसत्त्वे तु—

स० चं०—दशका उदय सहित अठावीसकानै आदि देकरि तीनका सत्व होतैं बाईसकाही बंध है। यहु मिथ्यादृष्टी सर्व मोहनीयका सत्व सहित वा सम्यक्त्व मोहनीकी उद्वेलना सहित वा मिश्रमोहनीकी उद्वेलना सहित जानना। बहुरि नवका उदय सहित असंयतपर्यंत वा आठका उदय सहित देश संयत पर्यंतविषैं अठाईसका सत्व होतैं अनुक्रमतैं बाईसकानैं आदि देकरि तीन अर च्यारि बंधस्थान हैं ॥ ६८५ ॥ बहुरि तिनहीविषैं सताईस वा छबीसका सत्व होतैं कहैं हैं—

बावीसबंध चदुतिदुवीसंसे सत्तरसयदद्दुगबंधो ।
अट्ठुदये इगिवीसे सत्तरबंधं विसेसं तु ॥ ६८६ ॥

द्वाविंशबंधः चतुस्त्रिद्विविंशांशे सप्तदशायाताद्विकबंधः ।
अष्टोदये एकविंशे सप्तदशबंधो विशेषस्तु ॥ ६८६ ॥

जी० प्र०—द्वाविंशतिकबंधः स्यात् । पुनस्तयोरेवोदययोर्मिश्रस्य चतुर्विंशतिकसत्त्वे, असंयतस्य तदादित्रयसत्त्वे च सप्तदशकबंधः, अष्टकोदये तत्त्रयसत्त्वे देशसंयते त्रयोदशकबंधः, एकविंशतिकसत्त्वे क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यसंयते सप्तदशकबंधः, विशेषेण ॥ ६८६ ॥

स० चं०—तहां बाईसहीका बंध है। बहुरि तिन पूर्वोक्त उदयसहितविषैं मिश्रविषैं तो चौईसका सत्व होतैं असंयतविषैं चौईसकानैं आदि देकरि तीन सत्व होतैं सतरहका बंध है। आठका उदय सहित चौईसकानैं आदि देकरि तीन सत्व होतैं देश संयतविषैं तेरहका बंध है। इकईसका सत्व होतैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी असंयतविषैं सतरहका बंध है, विशेषकरि ॥ ६८६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्तुदये अडवीसे बन्धो बावीसपंचयंतेण ।
चउवीसतिगे अयदतिबंधो इगिवीसगयदुगबंधो ॥ ६८७ ॥

सप्तोदये अष्टविंशे बंधो द्वाविंशपंचकं तेन ।
चतुर्विंशत्रिके अयतत्रिबंध एकविंशे अयतद्विकबंधः ॥ ६८७ ॥

जी० प्र०—सप्तकोदयेऽष्टाविंशतिकसत्त्वे द्वाविंशतिकादिपंचबंधः । अनंतानुबंधिरहितमिथ्यादृष्टौ भयजुगुप्सारहितसासादने तदन्यतरयुतमिश्रे वेदकसम्यग्दृष्टयसंयते वेदकोपशमसम्यग्दृष्टिदेशसंयते वेदकसम्यग्दृष्टिप्रमत्ताप्रमत्तयोश्च तदुदयसत्त्वसद्भावात् । पुनः सप्तकोदये चतुर्विंशतिकादित्रिसत्त्वे सप्तदशकादित्रिबंधः । कुतः ? चतुर्विंशतिकसत्त्वभयजुगुप्सोनमिश्रासंयतयोस्त्रिद्व्यधिकविंशतिकसत्त्वदर्शनमोहक्षपणाप्रारंभकचतुर्विंशतिकसत्त्वानंतानुबंधिरहितमनुष्यासंयतादिचतुर्षु च सप्तकोदयसंभवात् । पुनः सप्तकोदयैकविंशतिकसत्त्वक्षायिकसम्यग्दृष्टौ चतुर्गत्यसंयते सप्तदशकबंधः, मनुष्यदेशसंयते च त्रयोदशकबंधः ॥ ६८७ ॥

स० चं०—सातका उदय सहित अठाईका सत्व होतैं बाईसकानैं आदि दैकरि पंच बंध स्थान हैं जातैं अनंतानुबंधी रहित मिथ्यादृष्टिविषैं भय जुगुप्सारहित, सासादनविषैं भय जुगुप्साविषैं एककरि सहित मिश्रविषैं वेदक सम्यग्दृष्टी असंयतविषैं वेदक उपशम सम्यक्त्वी देश संयतविषैं वेदक सम्यक्त्वी प्रमत्त अप्रमत्तविषैं सातका उदय अठाईसका सत्व संभवै है। बहुरि सातका उदय सहित चौईसकानैं आदि दैकरि तीन सत्व होतैं सतरहकानैं आदि दैकरि बंध स्थान हैं जातैं चौबीस का सत्व संयुक्त तौ भय जुगुप्सा रहित मिश्र असंयतविषैं तेईस बाईसका सत्व संयुक्त दर्शन मोहक्षपणा प्रारंभक अर चौबीसका सत्व संयुक्त अनंतानुबंधीका सत्व रहित मनुष्य असंयतादि च्यारि गुणस्थानवर्त्ती तिनविषैं सातका उदय संभवै है। बहुरि सातका उदय इकईसका सत्व होतैं क्षायिक सम्यग्दृष्टी च्यारि गतिका असंयतविषैं सतरहका बंध है। देशसंयत मनुष्यविषैं तेरहका बंध है ॥ ६८७ ॥

छप्पणउदये उवसंतंसे अयदातिगदेसदुगबंधो ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेण तिदोवीसंसे देसदुणवबंधयं होदि ॥ ६८८ ॥

षट्पंचोदये उपशांतांशे अयतात्रिकदेशाद्विकबंधः।
तेन त्रिद्विविंशांशे देशाद्विनवबंधकं भवति ॥ ६८८ ॥

जी० प्र०—षट्कोदयेऽष्टचतुरेकाग्रविंशतिकसत्त्वे सप्तदशकादित्रिबंधः। पंचकोदये तत्सत्त्वे त्रयोदशकादिद्विबंधः। असंयतादिपंचसु षट्कोदयस्य उपशमक्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतादिचतुर्षु पंचकोदयस्य च सद्भावात्। पुनः षट्कोदयवेदकसम्यग्दृष्टौ मिथ्यात्वं क्षपित्वा त्रयोविंशतिकसत्त्वे मिश्रं क्षपित्वा द्वाविंशतिकसत्त्वे च देशसंयते त्रयोदशकबंधः। पंचकोदयप्रमत्ताप्रमत्ते च नवकबंधः स्यात् ॥ ६८८ ॥

स० चं०—छहका उदय सहित अठाईस चौईस इकईसका सत्व होतैं सतरहनैं आदि दैकरि तीन बंधस्थान हैं। बहुरि पांचका उदयसहित तीन तीन सत्व होतैं तेरहनैं आदि दैकरि दोय बंधस्थान हैं। जातैं असंयतादिक पंचनिविषैं छहका अर उपशम क्षायिक सम्यक्त्वी देश संयतादिक च्यारिविषैं पांचका उदय पाइए है। बहुरि छहका उदय सहित वेदक सम्यग्दृष्टीविषै मिथ्यात्वकौं खिपाइ तेवीसका सत्व होतैं मिश्रमोहनीकौं खिपाइ बावीसका सत्व होतैं देशसंयतविषैं तेरहका बंध है। पांचका उदय सहित प्रमत्त अप्रमत्तविषैं नवका बंध है ॥ ६८८ ॥

चउरुदयुवसंतंसे णवबंधो दोण्णिउदयपुव्वंसे।
तेरसतियसत्तेवि य पण चउ ठाणाणि बंधस्स ॥ ६८९ ॥

चतुरुदयोपशांतांशे नवबंधो द्विकोदयपूर्वांशे।
त्रयोदशात्रिसत्त्वेऽपि च पंचचतुःस्थानानि बंधस्य ॥ ६८९ ॥

जी० प्र०—चतुष्कोदयोभयापूर्वकरणे उपशांतकषायसत्त्वे नवबंधः। द्विकोदये सवेदानिवृत्तिकरणे तत्सत्त्वे पुंवेदोदयचरमसमयपर्यंतं पंचकबंधः। षंढस्त्रीवेदोदयारूढे तु चतुष्कबंधः। क्षपकेऽष्टकषायषंढस्त्रीपुंक्षपणाभागेष्वेकविंशतिकत्रिद्व्येकाग्रदशकसत्त्वेषु पंचकबंधः। इतरवेदोदययुतत्रयोदशकादिद्विसत्त्वे तु चतुष्कबंधः ॥ ६८९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—च्यारिका उदय सहित दोऊ श्रेणीके अपूर्वकरणविषै उपशांत कषायविषैं पाइए ऐसे अठाईस चौबीस इकवीसके सत्त्व होतैं नवका बंध है। बहुरि दोयका उदय सहित सवेद अनिवृत्तिकरणविषै तिन तीन सत्व होतैं पुरुष वेदका उदयका चरमसमयपर्यंत पांचका बंध है। नपुंसक स्त्रीवेदका उदय सहित श्रेणी चढ्या ताके तहां च्यारिका बंध हैं। वहुरि क्षपक श्रेणी विषैं आठ कषाय नपुंसक स्त्रीवेद पुरुषवेदका क्षपणरूप भागनिविषै इकईस तेरह बारह ग्यारहका सत्व होतैं पांचका बंध है। अन्य वेदका उदय सहित तेरह बारहका सत्व होतैं च्यारिका बंध हैं॥ ६८९॥

एक्कुदयुवसंतंसे बंधो चदुरादिचारि तेणेव।
एयारड चदुबंधो चदुरंसे चदुतियं बंधे॥ ६९०॥

एकोदयोपशांतांशे बंधश्चतुरादिचत्वारस्तेनैव।
एकादशद्विके चतुर्बंधः चतुरंशे चतुस्त्रिको बंधः॥ ६९०॥

जी० प्र०—एककोदयानिवृत्तिकरणोपशमके उपशांतकषायसत्त्वे चतुष्कादिचतुःस्थानबंधः। पुनः तदैककोदयैकादशकपंचकसत्त्वे चतुष्कबंधः। पुनरेककोदयचतुष्कसत्त्वे चतुष्कत्रिकबंधः॥ ६९०॥

स० चं०—एकका उदयसहित अनिवृत्तिकरण उपशमकविषैं उपशांत कषायोक्त अठाईस चौबीस ईकइसके सत्व होते च्यारिकानैं आदि दैकरि च्यारि बंधस्थान हैं। बहुरि एकका उदय सहित ग्यारह पांचका सत्व होतैं च्यारिका बंध है। बहुरि एकका उदयसहित च्यारिका सत्व होतैं च्यारिका वा तीनका बंध है॥ ६९०॥

तेण तिये तिदुबंधो दुगसत्ते दोण्णि एक्कयं बंधो।
एक्कंसे इगिबंधो गयणं वा मोहणीयस्स॥ ६९१॥ ७७१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेन त्रये त्रिद्विबंधो द्विकसत्त्वे द्वौ एको बंधः।
एकांशे एकबंधो गगनं वा मोहनीयस्य ॥ ६९१ ॥

जी० प्र०—तदेककोदयानिवृत्तिकरणे त्रिकसत्त्वे त्रिकद्विकबंधः द्विकसत्त्वे द्विकैककबंधः। एककोदयसत्त्वैककबंधः शून्यं च। मोहनीयस्य त्रिकसंयोग उक्तः ॥ ६९१ ॥ अथ नामकर्मस्थानानां त्रिसंयोगमाह—

स० चं०—तीहिं एकका बंधसहित आनिवृत्ति करणविषै तीनका सत्व होतें तीनका वा दोयका बंध है। एकका उदय सहित दोयका सत्व होतें दोयका वा एकका बंध हैं एकहीका उदय वा सत्व होतें एकहीका बंध है वा गगन कहिए बंधका अभाव है। ऐसैं मोहनीयके त्रिसंयोग भंग कहे ॥ ६९१ ॥ आगैं नाम कर्मके स्थाननिका त्रिसंयोग कहैं हैं—

णामस्स य बंधोदयसत्तट्ठाणाण सव्वभंगा हु।
पत्तेउत्तं व हवे तियसंजोगेवि सव्वत्थ ॥ ६९२ ॥

नाम्नश्च बंधोदयसत्त्वस्थानानां सर्वभंगा हि।
प्रत्येकोक्तं व भवेयुस्त्रिकसंयोगेऽपि सर्वत्र ॥ ६९२ ॥

जी० प्र०—नाम्नः बंधोदयसत्त्वानां सर्वभंगाः प्रत्येकोक्तरीत्यैवास्मिंस्त्रिसंयोगेऽपि सर्वत्र स्युरिति स्फुटं ज्ञातव्यं ॥ ६९२ ॥

स० चं०—नामकर्मके बंध उदय सत्व स्थाननिके सर्व भंग जैसैं प्रत्येक जुदे जुदे कथनविषै पूर्वैं कहे थे तैसैं ही त्रिसंयोगविषैं भी सर्वत्र भंग हैं ऐसैं प्रगट जानना ॥ ६९२ ॥

छण्णवछत्तियसगइगि दुगतिगदुग तिण्णिअट्ठचत्तारि।
दुगदुगचदु दुगपणचदु चदुरेयचदू पणेयचदू ॥ ६९३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एगेगमट्ठ एगेगमट्ठ चदुमट्ठ केवलिजिणाणं।
एगचदुरेगचदुरो दोचदु दोछक्क बंधउदयंसा ॥६९४॥ जुम्मं।

षट्नवषट् त्रिकसप्तैकं द्विकत्रिकाद्विकं त्रिकाष्टचत्वारि।
द्विकद्विकचतुष्कं द्विकपंचचतुष्कं चतुरेकचतुष्कं पंचैकचतुष्कं ॥ ६९३॥
एकैकाष्ट एकैकाष्ट चतुरष्ट केवलिजिनानां।
एकचतुष्कमेकचतुष्कं द्विचतुष्कं द्विषट्कं बंधोदयांशाः ॥ ६९४॥

जी० प्र०—तद्बंधोदयसत्त्वस्थानानि गुणस्थानेषु क्रमेण मिथ्यादृष्टौ षट् नव षट्। सासादने त्रीणि सप्तैकं। मिश्रे द्वे त्रीणि द्वे। असंयते त्रीण्यष्टौ चत्वारि। देशसंयते द्वे द्वे चत्वारि। प्रमत्ते द्वे पंच चत्वारि। अप्रमत्ते चत्वार्येकं चत्वारि। अपूर्वकरणे पंचैकं चत्वारि। अनिवृत्तिकरणे एकमेकमष्टौ। सूक्ष्मसांपरायेप्येकमेकमष्टौ। उपरि बंधे शून्यं। उदयसत्त्वयोरेव उपशांतकषाये एकं चत्वारि। क्षीणकषायेप्येकं चत्वारि। सयोगे द्वे चत्वारि। अयोगे द्वे षट् ॥ ६९३ ॥ ६९४ ॥

स० चं०—तिस नामकर्मके बंधस्थान उदयस्थान सत्वस्थान अनुक्रमतैं गुणस्थाननिविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं तौ छह नव छह, सासादनविषैं तीन सात एक, मिश्रविषैं दोय तीन दोय, असंयतविषैं तीन आठ च्यारि, देशसंयतविषैं दोय दोय च्यारि, प्रमत्तविषैं दोय पांच च्यारि, अप्रमत्तविषैं च्यारि एक च्यारि, अपूर्वकरणविषैं पांच एक च्यारि, अनिवृत्ति करणविषैं एक एक आठ, सूक्ष्म सांपरायविषैं भी एक एक आठ हैं। ऊपरि बंधका तौ अभाव है उदय सत्व स्थान ही उपशांत कषायविषैं एक च्यारि, क्षीणकषायविषैं एक च्यारि, सयोगीविषैं दोय च्यारि, अयोगीविषैं दोय छह जाननें ॥ ६९३ ॥ ६९४ ॥

णामस्स य बंधोदयसत्ताणि गुणं पडुच्च उत्ताणि।
पत्तेयादो सव्वं भणिदव्वं अत्थजुत्तीए ॥ ६९५ ॥ ८७३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाम्नश्च बंधोदयसत्त्वानि गुणं प्रतीत्योक्तानि ।
प्रत्येकात्सर्वं भणितव्यमर्थयुक्त्या ॥ ६९५ ॥

जी० प्र०—नाम्नो बंधोदयसत्त्वस्थानानि गुणस्थानेषूक्तानि तान्येव प्रत्येकतोऽर्थयुक्त्या सर्वाण्युच्यंते ॥ ६९५ ॥

स० चं०—नामकर्मके बंध उदय सत्व स्थान गुणस्थाननिविषैं कहे तेई प्रत्येक जुदे जुदे अर्थकी युक्तिकरि सर्व कहिए हैं ॥ ६९५ ॥

तेवीसादी बंधा इगिवीसादीणि उदयठाणाणि ।
बाणउदादी सत्तं बंधा पुण अट्ठवीसतियं ॥ ६९६ ॥

त्रयोविंशादयो बंधा एकाविंशादीनि उदयस्थानानि ।
द्वानवत्यादि सत्त्वं बंधाः पुनः, अष्टविंशत्रयं ॥ ६९६ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट् । उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि नव । सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकादीनि षट् । सासादने बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ॥ ६९६ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं बंधस्थान तेवीसकानैं आदि देकरि छह हैं । उदयस्थान इकवीसका आदि नव हैं अर सत्वस्थान बाणबैका आदि छह हैं । बहुरि सासादनविषैं बंधस्थान अठाईसका आदि तीन हैं ॥ ६९६ ॥

इगिवीसादीएक्कत्तीसंता सत्तअट्ठवीसूणा ।
उदया सत्तं णउदी बंधा पुण अट्ठवीसदुगं ॥ ६९७ ॥

एकविंशाद्येकत्रिंशदंताः सप्ताष्टविंशोनाः ।
उदयाः सत्त्वं नवतिर्बंधाः पुनः, अष्टविंशद्विकं ॥ ६९७ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि सप्ताष्टाग्रविंशतिकोनान्येकत्रिंशत्कातानि सप्त, सत्त्वस्थानं नवतिकं, तु—पुनः मिश्रे बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादिद्वयं ॥ ६९७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—उदयस्थान इकवीसका आदि सत्ताईस अठाईसका बिना इकतीसका पर्यंत सात हैं। सत्वस्थान निवैका ही है। बहुरि मिश्रविषैं बंधस्थान अठाईसका आदि दोय हैं ॥ ६९७ ॥

एगुणतीसत्तिदयं उदयं बाणउदिणउदियं सत्तं।
अयदे बंधट्ठाणं अट्ठावीसत्तियं होदि ॥ ६९८ ॥

एकोनत्रिंशत्त्रितयमुदयो द्वानवतिनवतिकं सत्त्वं।
अयते बंधस्थानमष्टाविंशत्रयं भवति ॥ ६९८ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानान्येकोनत्रिंशत्कादीनि त्रीणि सत्त्वस्थाने द्वानवतिकादिद्वयं। असंयते बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ॥ ६९८ ॥

स० चं०—उदयस्थान गुणतीसका आदि तीन हैं। सत्वस्थान बांणवै निवैका दोय हैं। बहुरि असंयतविषैं बंध स्थान अठाईसका आदि तीन हैं ॥ ६९८ ॥

उदया चउवीसूणा इगिवीसप्पहुदिएक्कतीसंता।
सत्तं पढमचउक्कं अपुव्वकरणोत्ति णायव्वं ॥ ६९९ ॥

उदयाश्चतुर्विंशोना एकविंशप्रभृत्येकत्रिंशदंताः।
सत्त्वं प्रथमचतुष्कमपूर्वकरण इति ज्ञातव्यं ॥ ६९९ ॥

जी० प्र०—उदस्थानान्येकविंशतिकादीनि चतुर्विंशतिकोनान्येकत्रिंशत्कांतान्यष्टौ तस्यैकेंद्रियेष्वेवोदयात्। सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वारि। इमान्येवापूर्वकरणांतं ज्ञातव्यानि ॥ ६९९ ॥

स० चं०—उदयस्थान इकवीसका आदि चौबीसके बिना इकतीसपर्यंत आठ हैं जातैं चौबीसके स्थानका उदय एकेंद्रीहीकै हैं। सत्वस्थान तरेणवैका आदि च्यारि हैं। एई च्यारि च्यारि सत्वस्थान अपूर्वकरणपर्यंत जानने ॥ ६९९ ॥ ८७५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अडवीसदुगं बंधो देसे पमदे य तीसदुगमुदओ ।
पणवीससत्तावीसप्पहुदीचत्तारि ठाणाणि ॥ ७०० ॥

अष्टाविंशद्विकं बंधो देशे प्रमत्ते च त्रिंशद्विकमुदयः ।
पंचविंशसप्तविंशप्रभृतिचत्वारि स्थानानि ॥ ७०० ॥

जी० प्र०—देशसंयते बंधस्थानेऽष्टाविंशतिकादिद्वयं च उदयस्थाने त्रिंशत्कादिद्वयं । सत्त्वमसंयतोक्तं । प्रमत्ते बंधस्थाने देशसंयतोक्ते द्वे । उदयस्थानानि पंचविंशतिकं सप्तविंशतिकादीनि चत्वारि च । सत्त्वस्थानान्यसंयतोक्तानि ॥ ७०० ॥

स० चं०—देश संयतविषैं बंधस्थान अठाईसका आदि दोय हैं । उदयस्थान तीसका आदि दोय है । सत्त्वस्थान असंयतवत् च्यारि हैं । बहुरि प्रमत्तविषैं बंधस्थान देशसंयतवत् दोय हैं । उदयस्थान पचीसका अर सत्ताईसकानैं आदि देकरि च्यारि ऐसैं पांच हैं । सत्त्वस्थान च्यारि ही हैं ॥ ७०० ॥

अपमत्ते य अपुव्वे अडवीसादीण बंधमुदओ दु ।
तीसमणियट्टिसुहुमे जसकित्ती एक्कयं बंधो ॥ ७०१ ॥

अप्रमत्ते चापूर्वे अष्टाविंशादीनां बंध उदयस्तु ।
त्रिंशदनिवृत्तिसूक्ष्मयोर्यशस्कीर्तिरेका बंधः ॥ ७०१ ॥

जी० प्र०—अप्रमत्तापूर्वकरणयोर्बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि पंच । तु पुनः उदयस्थानं त्रिंशत्कं । सत्त्वमसंयतोक्तं । अनिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपराययोर्बंधस्थानं यशस्कीर्तिनाम ॥ ७०१ ॥

स० चं०—अप्रमत्त अपूर्व करणविषैं बंधस्थान अठाईसकानैं आदि देकरि च्यारि अर पांच क्रमतैं जानने । उदयस्थान तीसहीका जानना । सत्वस्थान असंयतवत् च्यारि जानने । बहुरि अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपरायविषैं बंधस्थान एक यशस्कीर्ति रूप ही है ॥ ७०१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदओ तीसं सत्तं पढमचउक्कं च सीदिचउ सत्तं।
खीणे उदओ तीसं पढमचऊ सीदिचउ सत्तं॥ ७०२॥

उदयस्त्रिंशत् सत्त्वं प्रथमचतुष्कं चाशीतिचतुष्कं शांते।
क्षीणे उदयस्त्रिंशत्प्रथमचतुष्कमशीतिचतुष्कं सत्त्वं॥ ७०२॥

जी० प्र०—उदयस्थानं त्रिंशत्कं, सत्त्वस्थानानि प्रत्येकं त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकादीनि चत्वारीत्यष्टौ। उपशांतक्षीणकषाययोरुदयस्थानं त्रिंशत्कं सत्त्वस्थानान्युपशांतकषाये त्रिनवतिकादीनि चत्वारि, क्षीणकषायेऽशीतिकादीनि चत्वारि॥ ७०२॥

स० चं०—उदयस्थान तीसहीका है। सत्त्वस्थान तिरेणवैकानैं आदि देकरि च्यारि अर असीकानैं आदि देकरि च्यारि ऐसैं आठ हैं। उपशांत कषाय क्षीणकषायविषैं उदयस्थान तीसहीका है। सत्वस्थान उपशांत कषायविषैं तरेणवैका आदि च्यारि अर क्षीणकषायविषैं असीका आदि च्यारि हैं॥ ७०२॥

जोगिम्मि अजोगिम्मि य तीसिगितीसं णवट्ठयं उदओ।
सीदादिचऊछक्कं कमसो सत्तं समुद्दिट्ठं॥ ७०३॥

योगिन्ययोगिनि च त्रिंशदेकत्रिंशन्नवाष्टकमुदयः।
अशीत्यादिचतुःषट्कं क्रमशः सत्त्वं समुद्दिष्टं॥ ७०३॥

जी० प्र०—सयोगायोगयोः क्रमेणोदयस्थाने त्रिंशत्कैकत्रिंशत्के द्वे, नवकाष्टके द्वे। सत्त्वस्थानान्यशीतिकादीनि चत्वारि षट्। सयोग बं०, उ ३० ३१। स ८० ७९ ७८ ७७। अयोगि बं०, उ ९। ८, स ८० ७९ ७८ ७७ १०। ९॥ ७०३॥ अथ चतुर्दशजीवसमासेष्वाह—

स० चं०—सयोगी अयोगीविषैं क्रमतैं उदयस्थान तीस इकतीसके दोय अर नव अष्टके दोय जानने। सत्वस्थान असीका आदि च्यारि छह जानने—सयोगीविषैं बंध०, उदय ३० ३१ सत्व ८० ७९ ७८ ७७। अयोगीविषैं बंध० उदय ९। ८। सत्व ८० ७९ ७८ ७७ १०। ९॥ ७०३॥ आगैं चउदह जीवसमासनिविषैं कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पणदोपणगं पणचदुपणगं बंधुदयसत्त पणगं च।
पणछक्कपणगछच्छक्कपणगमट्ठट्ठमेयारं ॥ ७०४ ॥
सत्तेव अपज्जत्ता सामी सुहुमो य बादरो चेव।
बियलिंदिया य तिविहा होन्ति असण्णी कमा सण्णी॥७०५॥जुम्मं

पंचद्विपंचकं पंचचतुःपंचकं बंधोदयसत्त्वं पंचकं च।
पंचषट्पंचकं षट्षट्पंचकमष्टाष्टैकादश ॥ ७०४ ॥
सप्तैवापर्याप्ताः स्वामिनः सूक्ष्मश्च बादरश्चैव।
विकलेंद्रियाश्च त्रिविधा भवंत्यसंज्ञिनः क्रमात्संज्ञिनः ॥ ७०५ ॥

जी० प्र०—अपर्याप्तसप्तके बंधोदयसत्त्वस्थानानि पंच द्वे पंच। सर्वसूक्ष्मेषु पंच चत्वारि पंच। सर्वबादरेषु पंच पंच पंच। विकलत्रये पंच षट् पंच असंज्ञिषु षट् षट् पंच। संज्ञिष्वष्टाष्टैकादश ॥ ७०४ ॥ ७०५ ॥ तानि कानीति चेदाह—

स० चं०—अपर्याप्त सात जीवसमासनिविषैं बंध उदय सत्व स्थान अनुक्रमतैं पांच दोय पांच अर सर्व सूक्ष्म-जीवनिविषैं पांच च्यारि पांच अर सर्व बादर जीवनिविषैं पांच पांच पांच अर विकलत्रयविषैं पांच छह पांच, असंज्ञीविषैं छह छह पांच, संज्ञीविषैं आठ आठ ग्यारह जानने ॥ ७०४–७०५ ॥ ते कौंन ? सो कहैं हैं—

बंधा तियपणछण्णववीसत्तीसं अपुण्णगे उदओ।
इगिचउवीसं इगिछव्वीसं थावरतसे कमसो ॥ ७०६ ॥

बंधास्त्रिकपंचषण्णवविंशत्रिंशदपूर्णके उदयः।
एकचतुर्विंशं एकषड्विंशं स्थावरत्रसे क्रमशः ॥ ७०६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—अपर्याप्तसप्तके बंधस्थानानि त्रिपंचषट्नवाग्रविंशतिकत्रिंशत्कानि पंच। उदयस्थानानि स्थावरलब्ध्यपर्याप्तेष्वेकचतुरग्रविंशतिके द्वे। त्रसलब्ध्यपर्याप्तेष्वेकषडग्रविंशतिके द्वे ॥ ७०६ ॥

स० चं०—अपर्याप्तक सात जीव समासनिविषैं बंध स्थान तेईस पचीस छब्बीस गुणतीस तीसके पंच हैं। उदय स्थान स्थावर लब्धि अपर्याप्तकानिविषैं तो इकईस चौबीसके दोय हैं। त्रस लब्धि अपर्याप्तकानिविषैं इकबीस छवीसके दोय हैं ॥ ७०६ ॥

बाणउदीणउदिचऊ सत्तं एमेव बंधयं अंसा।
सुहुमिदरे वियलतिये उदया इगिवीसयादिचउपणयं ॥ ७०७ ॥

द्वानवतिनवतिचतुष्कं सत्त्वमेवमेव बंधकोंऽशाः।
सूक्ष्मेतरयोर्विकलत्रये उदया एकविंशकादिचतुःपंचकं ॥ ७०७ ॥

जी० प्र०—सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च। एवमेव सूक्ष्मेषु वादरेषु विकलेंद्रियेषु च बंधांशौ स्यातां। उदयस्थानानि सूक्ष्मेष्वेकविंशतिकादीनि चत्वारि वादरेषु पंच। सर्वं प्रागुक्तमेव ॥ ७०७ ॥

स० चं०—सत्वस्थान बाणवैका अर निवैकानैं आदि देकरि च्यारि ऐसैं पांच हैं। बहुरि सूक्ष्म बादर अर विकलत्रय इनिविषैं बंधस्थान अर सत्वस्थान तो ऐसैं ही अपर्याप्तवत् जानने। उदयस्थान सूक्ष्मविषैं इकईसकानैं आदि देकरि च्यारि हैं। बादरविषैं पांच हैं ॥ ७०७ ॥

इगिछक्कडणववीसत्तीसिगितीसं च वियलठाणं वा।
बंधतियं सण्णिदरे भेदो बंधदि हु अडवीसं ॥ ७०८ ॥

एकषट्काष्टनवविंशत्रिंशदेकत्रिंशच्च विकलस्थानं वा।
बंधत्रयं संज्ञीतरस्मिन् भेदो बध्नाति हि अष्टाविंशं ॥ ७०८ ॥ ८७१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—विकलत्रये बंधांशौ सूक्ष्मोक्तावेव । उदयस्थानान्येकषडष्टनवदशैकादशाग्रविंशतिकानि । असंज्ञिषु बंधोदयसत्त्वस्थानानि विकलेंद्रियोक्तानि । किंतु अष्टाविंशतिकमपि बध्नाति ॥ ७०८ ॥

स० चं०—विकलत्रयविषैं उदयस्थान इकवीस छबीस अठाईस गुणतीस इकतीसके पांच हैं । बहुरि असंज्ञीविषै बंध उदय सत्वस्थान विकलत्रयवत् जानने । विशेष इतना जो असंज्ञी अठाईसकेकौं भी बांधैं तातैं बंधस्थान छह हैं ॥ ७०८ ॥

सण्णिम्मि सव्वबंधो इगिवीसप्पहुदिएक्कतीसंता ।
चउवीसूणा उदओ दसणवपरिहीणसव्वयं सत्तं ॥ ७०९ ॥

संज्ञिनि सर्वबंध एकविंशप्रभृत्येकात्रिंशदंताः ।
चतुर्विंशोना उदयो दशनवपरिहीनसर्वकं सत्त्वं ॥ ७०९ ॥

जी० प्र०—संज्ञिषु बंधस्थानानि सर्वाणि । उदयस्थानान्येकविंशतिकाद्येकत्रिंशत्कांतानि चतुर्विंशतिकोनान्यष्टौ । सत्त्वस्थानानि दशनवकपरिहीनसर्वाणि ॥ ७०९ ॥ अथ चतुर्दशमार्गणास्वाह—

स० चं०—संज्ञीविषैं बंधस्थान सर्व ही आठ हैं । उदयस्थान इकवीसकानैं आदि देकरि चौबीसके बिना इकतीसके पर्यंत आठ हैं । सत्वस्थान दशका नवका बिना सर्व ग्यारह हैं ॥ ७०९ ॥ आगैं चौदह मार्गणानिविषैं कहैं हैं—

दोछक्कट्ठचउक्कं णिरयादिसु णामबंधठाणाणि ।
पणणवएगारपणयं तिपंचबारसचउक्कं च ॥ ७१० ॥

द्विषट्काष्टचतुष्कं निरयादिषु नामबंधस्थानानि ।
पंचनवैकादशपंचकं त्रिपंचद्वादशचतुष्कं च ॥ ७१० ॥

जी० प्र०—नरकादिगतिषु क्रमेण नाम्नो बंधस्थानानि द्वे षडष्टौ चत्वारि । उदयस्थानानि पंचनवैकादशपंच । सत्त्वस्थानानि त्रीणि पंच द्वादश चत्वारि ॥ ७१० ॥ इंद्रियमार्गणायामाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—नारक आदि च्यार गतिनिविषैं क्रमतैं नामकर्मके बंधस्थान दोय छह आठ च्यारि उदयस्थान पांच नव ग्यारह पांच, सत्वस्थानके तीन पांच बारह च्यारि जानने ॥ ७१० ॥ इंद्रियमार्गणाविषैं कहैं हैं—

एगे वियले सयले पण पण अड पंच छक्केगार पणं ।
पणतेरं बंधादी सेसादेसेवि इदि णेयं ॥ ७११ ॥

एके विकले सकले पंच पंचाष्ट पंच षट्कैकादश पंच ।
पंचत्रयोदश बंधादीनि शेषादेशेऽपीति ज्ञेयं ॥ ७११ ॥

जी० प्र०—एकेंद्रिये विकलत्रये पचेंद्रिये च क्रमेण बंधस्थानानि पंचपंचाष्टौ । उदयस्थानानि पंचषडेकादश । सत्त्वस्थानानि पंच पंच त्रयोदश । एवं शेषकायादिमार्गणास्वपि ज्ञातव्यं ॥ ७११ ॥ तानि कानीतिचेदाह—

स० चं०—एकेंद्री विकलेंद्री पंचेंद्रीविषैं क्रमतैं बंधस्थान पंच पंच आठ हैं । उदयस्थान पांच छह ग्यारह हैं । सत्वस्थान पांच पांच तेरह हैं ऐसैं ही अवशेष कायादिक मार्गणानिविषैं जानने ॥ ७११ ॥ ते कौन ? सो कहैं हैं—

णिरयादिणामबंधा उगुतीसं तीसमादिमं छक्कं ।
सव्वं पणछक्कुत्तरवीसुगुतीसंदुगं होदि ॥ ७१२ ॥

निरयादिनामबंधा एकोनत्रिंशत् त्रिंशदादिमं षट्कं ।
सर्वं पंचषट्कोत्तरविंशैकोनत्रिंशाद्विकं भवति ॥ ७१२ ॥

जी० प्र०—नाम्नो बंधस्थानानि नरकगतावेकान्नत्रिंशत्कत्रिंशत्के द्वे । तिर्यग्गतावाद्यानि त्रयोविंशतिकादीनि षट् । मनुष्यगतौ सर्वाणि । देवगतौ पंचषण्णवाग्रविंशतिकानि त्रिंशत्कं च ॥ ७१२ ॥

स० चं०—नामकर्मके बंधस्थान नरकगतिविषैं गुणतीस वा तीसके दोय हैं । तिर्यंच गतिविषैं आदिके तेईसकानैं आदि देकरि छह हैं । मनुष्यगतिविषैं सर्व हैं । देवगतिविषैं पचीस छबीस गुणतीस तीसके च्यारि हैं ॥ ७१२ ॥ ८८१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदया इगिपणसगअडणववीसं एक्कवीसपहुदिणवं ।
चउवीसहीणसव्वं इगिपणसगअट्ठणववीसं ॥ ७१३ ॥

उदया एकपंचसप्ताष्टनवविंशमेकविंशप्रभृतिनव ।
चतुर्विंशहीनं सर्वमेकपंचसप्ताष्टनवविंशं ॥ ७१३ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानानि नरकगतावेकपंचसप्ताष्टनवाग्रविंशतिकानि पंच । तिर्यग्गतावेकविंशतिकादीनि नव । मनुष्यगतौ चतुर्विंशतिकं विना सर्वाणि । देवगतावेकपंचसप्ताष्टनवाग्रविंशतिकानि पंच ॥ ७१३ ॥

स० चं —उदयस्थान नरकगतिविषैं इकवीस पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीसके पांच हैं । तिर्यंचगतिविषैं इकईसकानैं आदि देकरि नव हैं । मनुष्यगतिविषैं चौवीसके बिना सर्व हैं । देवगतिविषैं इकईस पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीसके पंच हैं ॥ ७१३ ॥

सत्ता बाणउदितियं बाणउदीणउदिअडसीदितियं ।
बासीदिहीणसव्वं तेणउदिचउक्कयं होदि ॥ ७१४ ॥

सत्ता द्वानवतित्रयं द्वानवतिनवत्यष्टाशीतित्रयं ।
द्व्यशीतिहीनसर्वं त्रिनवतिचतुष्कं भवति ॥ ७१४ ॥

जी० प्र०—सत्त्वस्थानानि नरकगतौ द्व्येकखाधिकनवतिकानि । तिर्यग्गतौ द्वानवतिकनवतिके द्वे, अष्टाशीतिकादित्रयं च । मनुष्यगतौ द्व्यशीतिकोनसर्वाणि । देवगतौ त्रिनवतिकादिचतुष्कं ॥ ७१४ ॥

स० चं०—सत्वस्थान नरकगतिविषैं बाणवैकानैं आदि देकरि तीन हैं । तिर्यंचगतिविषैं बाणवै निव्वैके अर अठासीकानैं आदि देकरि तीन ऐसैं पांच हैं । मनुष्यगतिविषैं बियासीका बिना सर्व हैं । देवगतिविषैं तरेणवैका आदि च्यारि हैं ॥ ७१४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इगिविगल बंधठाणं अडवीसूणं तिवीसछक्कं तु।
सयलं सयले उदया एगे इगिवीसपंचयं वियले ॥ ७१५ ॥

एकविकले बंधस्थानमष्टाविंशोनं त्रयोविंशषट्कं तु।
सकलं सकले उदया एकस्मिन्नेकविंशपंचकं विकले ॥ ७१५ ॥

जी० प्र०——इंद्रियमार्गणायां बंधस्थानान्येकेंद्रिये विकलत्रये चाष्टाविंशतिकोनत्रयोविंशतिकादीनि षट्। पंचेंद्रियेषु सर्वाणि। उदयस्थानान्येकेंद्रिये एकविंशतिकादीनि पंच ॥ ७१५ ॥

स० चं०——इंद्रिय मार्गणाविषैं बंधस्थान एकेंद्री विकलेंद्रीविषैं अठाईसका विना तेवीसकानैं आदि देकरि छह हैं। पंचेंद्रीविषैं सर्व हैं। बहुरि उदयस्थान एकेंद्रीविषैं इकईसकानैं आदि देकरि पांच हैं ॥ ७१५ ॥

इगिछक्कडणववीसं तीसदु चउवीसहीणसव्वुदया।
णउदिचऊ बाणउदी एगे वियले य सव्वयं सयले ॥ ७१६ ॥

एकषट्काष्टनवविंशं त्रिंशद्विकं चतुर्विंशहीनं सर्वमुदयाः।
नवतिचतुष्कं द्वानवतिः एके विकले च सर्वं सकले ॥ ७१६ ॥

जी० प्र०——विकलेंद्रियेषु एकषडष्टनवाग्रविंशतिकादीनि त्रिंशन्नैकत्रिंशत्के च। सकलेंद्रियेषु चतुर्विंशतिकोनसर्वाणि। सत्त्वस्थानान्येकेंद्रिये विकलत्रये च द्वानवतिकनवतिकाष्टचतुर्द्व्यग्राशीतिकानि। पंचेंद्रियेषु सर्वाणि ॥ ७१६ ॥

स० चं०——विकलेंद्रीविषैं इकईस छब्बीस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसके छह हैं। पंचेंद्रीविषैं चौवीसके विना सर्व हैं। बहुरि सत्वस्थान एकेंद्री विकलत्रयविषैं बाणवै निब्बे अट्ठासी चौरासी वियासीके है। पंचेंद्रीविषैं सर्व हैं ॥ ७१६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुढवीयादीपंचसु तसे कमा बंधउदयसत्ताणि ।
एयं वा सयलं वा तेउदुगे णत्थि सगवीसं ॥ ७१७ ॥

पृथिव्यादिपंचसु त्रसे क्रमात् बंधोदयसत्त्वानि ।
एकं वा सकलं वा तेजोद्विके नास्ति सप्तविंशं ॥ ७१७ ॥

जी० प्र०——कायमार्गणायां पृथ्व्यादिपंचसु बंधोदयसत्त्वस्थानान्येकेंद्रियवत् । त्रसे पंचेंद्रियवत् । न तेजोद्विके सप्तविंशतिकं तस्यैकेंद्रियपर्याप्तयुतातपोद्योतान्यतरयुतत्वात् तत्रानुदयात् ॥ ७१७ ॥

स० चं०——कायमार्गणाविषैं पृथ्वी आदि पांच स्थावरनिविषैं बंध उदय सत्वस्थान एकेंद्रीवत् जानने । त्रसविषैं पंचेंद्रीवत् जानने । विशेष इतना तेज वातकायिकविषैं सत्ताईसकेका उदय नाहीं जातैं सत्ताईसका आतप वा उद्योत सहित है सो इनका इनकैं उदय नाहीं ॥ ७१७ ॥

मणिवचि बंधुदयंसा सव्वं णववीसतीसइगितीसं ।
दसणवदुसीदिवज्जिदसव्वं ओरालतम्मिस्से ॥ ७१८ ॥

मनोवचसोर्बंधोदयांशाः सर्वं नवविंशत्रिंशदेकत्रिंशत् ।
दशनवद्व्यशीतिवर्जितसर्वमौरालतन्मिश्रे ॥ ७१८ ॥

जी० प्र०——योगमार्गणायां मनोवाचु बंधस्थानानि प्रत्येकं सर्वाणि । उदयस्थानानि नवविंशतिकत्रिंशत्कैकत्रिंशत्कानि । सत्त्वस्थानानि दशकनवकद्व्यशीतिकोनसर्वाणि ॥ ७१८ ॥

स० चं०—योगमार्गणाविषैं मन वचन योगविषैं तौ प्रत्येक बंधस्थान सर्व हैं । उदयस्थान गुणतीस तीस इकतीसके तीन हैं । सत्वस्थान दशका नवका बियासीका बिना सर्व हैं ॥ ७१८ ॥ ९८५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सव्वं तिवीसछक्कं पणुवीसादेक्कतीसपेरंतं ।
चउछक्कसत्तवीसं दुसु सव्वं दसयणवहीणं ॥ ७१९ ॥

सर्वं त्रयोविंशषट्कं पंचविंशादेकत्रिंशत्पर्यंतं ।
चतुःषट्कसप्तविंशं द्वयोः सर्वं दशकनवहीनं ॥ ७१९ ॥

जी० प्र०——औदारिके बंधस्थानानि सर्वाणि। तन्मिश्रे त्रयोविंशतिकादीनि षट्। उदयस्थानान्यौदारिके पंचविंशतिकाद्येकत्रिंशत्कांतानि सप्त। तन्मिश्रे चतुःषट्सप्ताग्रविंशतिकानि । सत्त्वस्थानान्यौदारिके तन्मिश्रे च दशकनवकोनसर्वाणि ॥ ७१९ ॥

स० चं०—औदारिकविषैं बंधस्थान सर्व हैं। औदारिक मिश्रविषैं तेवीसकानैं आदि दैकरि बंधस्थान छह हैं। बहुरि उदयस्थान औदारिकविषैं पचीसकानैं आदि दैकरि इकतीसका पर्यंत सात हैं। औदारिक मिश्रविषैं चौबीस छबीस सत्ताईसके तीन उदयस्थान हैं। सत्वस्थान औदारिक औदारिक वा औदारिक मिश्रविषैं दशका नवका बिना सर्व हैं ॥ ७१९ ॥

वेगुव्वे तम्मिस्से बंधंसा सुरगदीव उदयो दु ।
सगवीसातियं पणजुदवीसं आहारतम्मिस्से ॥७२०॥

वैगूर्वे तन्मिश्रे बंधांशाः सुरगतिरिवोदयस्तु ।
सप्तविंशत्रयं पंचयुतविंशमाहारतान्मिश्रे ॥ ७२० ॥

जी० प्र०——वैक्रियिके तन्मिश्रे च बंधस्थानानि सत्त्वस्थानानि च देवगत्युक्तानि । तु–पुनः उदयस्थानानि सप्तविंशतिकादित्रिकं पंचविंशतिकं च ॥ ७२० ॥

स० चं०—वैक्रियिक वा वैक्रियिक मिश्रविषैं बंधस्थान सत्वस्थान तौ देवगतिवत् जानने। बहुरि उदयस्थान सत्ताईसका आदि तीन हैं। अर मिश्रविषैं पचीसहीका है ॥ ७२० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बंधतियं अडवीसदु वेगुव्वं वा तिणउदिबाणउदी ।
कम्मे वीसदुगुदओ ओरालियमिस्सयं व बंधंसा ॥७२१॥

बंधत्रयमष्टाविंशद्विकं वैगूर्वं वा त्रिनवतिद्वानवती ।
कर्मणि विंशाद्विकोदय औरालिकमिश्रकं च बंधांशाः ॥ ७२१ ॥

जी० प्र०—आहारके तन्मिश्रे च बंधस्थानान्यष्टनवाग्रविंशतिके द्वे द्वे । उदयस्थानानि वैक्रियिकवत् सप्तविंशतिकादीनि त्रीणि । मिश्रे पंचविंशतिकमेव । सत्त्वस्थानान्युभयत्र त्रिद्व्यग्रनवतिके द्वे । कार्मणे उदयस्थानानि विंशतिकैकविंशतिके द्वे । बंधांशौ औदारिकमिश्रोक्तावेव ॥ ७२१ ॥

स० चं०—आहारक आहारकमिश्रविषैं बंधस्थान अठाईस गुणतीसके दोय हैं। उदयस्थान वैक्रियिकवत् सत्ताईसका आदि तीन हैं अर मिश्रविषैं पचीसका ही है अर सत्वस्थान तरेणवै बाणवैके दोय हैं । बहुरि कार्माणविषै उदयस्थान बीस इकईसके दोय हैं । बंधस्थान सत्वस्थान औदारिक मिश्रवत् हैं ॥ ७२१ ॥

वेदकसाये सव्वं इगिवीसणवं तिणउदिएक्कारं ।
थीपुरिसे चउवीसं सीदडसदरी ण थीसंढे ॥७२२॥

वेदकषाये सर्वमेकविंशनवं त्रिनवत्येकादश ।
स्त्रीपुरुषे चतुर्विंशमशीत्यष्टसप्तती न स्त्रीषंढे ॥ ७२२ ॥

जी० प्र०—वेदकषायमार्गणयोर्बंधस्थानानि सर्वाणि । उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि नव । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीन्येकादश । अत्र स्त्रीपुंसोर्नवचतुर्विंशतिकं तस्यैकेंद्रियेष्वेवोदयात् । स्त्रीषंढयोर्नाशीतिकाष्टसप्ततिके । तीर्थसत्त्वस्य पुंवेदोदयेनैव क्षपकश्रेण्यारोहात् ॥ ७२२ ॥

स० चं०—वेद वा कषायमार्गणाविषैं बंधस्थान सर्व हैं । उदयस्थान इकवीसकानैं आदि दैकरि नव हैं । सत्वस्थान तरेणवैकानैं आदि दैकरि ग्यारह हैं । इतना विशेष स्त्री पुरुष वेदविषैं चौबीसकेका उदय नाहीं जातैं ताका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकेंद्रीविषैं ही उदय हैं। बहुरि स्त्री नपुंसकवेदविषैं अस्सी अठत्तरिके दोय सत्व नाहीं जातैं तीर्थंकर सत्वका धारी पुरुषवेद सहित ही क्षपकश्रेणी चढै है ॥ ७२२ ॥

अण्णाणदुगे बंधो आदीछ णउंसयं व उदयो दु।
सत्तं दुणउदिछक्कं विभंगबंधा हु कुमदिं व ॥७२३॥

अज्ञानद्विके बंध आदि षट् नपुंसकं व उदयस्तु।
सत्त्वं द्विनवातिषट्कं विभंगबंधा हि कुमतिर्व ॥ ७२३ ॥

जी० प्र०——ज्ञानामार्गणायां कुमतिकुश्रुतयोर्बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट्। तु—पुनः उदयस्थानानि पंढवन्नव। सत्त्वं द्वानवतिषट्कं। विभंगे बंधस्थानानि कुमतिवत्खलु ॥ ७२३ ॥

स० चं०—ज्ञानमार्गणाविषैं कुमति कुश्रुतिविषैं बंधस्थान तेईसकानैं आदि देकरि छह हैं। उदयस्थान नपुंसक वेदवत् नव हैं। सत्वस्थान बाणवैका आदि छह हैं। बहुरि विभंगविषैं बंधस्थान तौ कुमतिवत् हैं ॥ ७२३ ॥

उदया उणतीसतियं सत्ता णिरयं व मदिसुदोहीए।
अडवीसपंच बंधा उदयो पुरिसं व अट्ठेव ॥७२४॥

उदया एकोनत्रिंशत्त्रयं सत्ता निरयं व मतिश्रुतावधिषु।
अष्टाविंशपंचबंधा उदयाः पुरुषो व अष्टैव ॥ ७२४ ॥

जी० प्र०——उदयस्थानान्येकान्नत्रिंशत्कादीनि त्रीणि। सत्त्वस्थानानि नरकगत्युक्तानि। मतिश्रुतावधिषु बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि पंच। उदयस्थानानि पुंवेदवदष्टौ ॥ ७२४ ॥

स० चं०—उदयस्थान गुणतीसकानैं आदि देकरि तीन हैं। सत्त्वस्थान नरकगतिवत् हैं। बहुरि मति श्रुत अवधिविषैं बंध स्थान अठाईसकानैं आदि देकरि पांच हैं। उदयस्थान पुरुषवेदवत् आठ हैं ॥ ७२४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पढमचऊसीदिचऊ सत्तं मणपज्जवम्हि बंधंसा ।
ओहिं व तीसमुदयं ण हि बंधो केवले णाणे ॥७२५॥

प्रथमचतुष्कमशीतिचतुष्कं सत्त्वं मनःपर्यये बंधांशाः ।
अवधिरिव त्रिंशदुदयो नहि बंधः केवले ज्ञाने ॥ ७२५ ॥

जी० प्र०——सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादिचतुष्कमशीतिकादिचतुष्कं च । मनःपर्यये बंधसत्त्वस्थानान्यवधिवत् । उदयस्थानं त्रिंशत्कं । केवलज्ञाने नामबंधो नास्ति ॥ ७२५ ॥

स०चं०—सत्वस्थान तरेणवैका आदि च्यारि असीका आदि च्यारि ऐसैं आठ हैं । बहुरि मनःपर्ययविषैं बंधस्थान सत्वस्थान अवधिज्ञानवत् हैं । उदयस्थान तीसहीका है । बहुरि केवलज्ञानविषैं बंध नाहीं हैं ॥ ७२५ ॥

उदयो सव्वं चउपणवीसूणं सीदिछक्कयं सत्तं ।
सुदमिव सामयियदुगे उदओ पणुवीससत्तवीसचऊ ॥ ७२६ ॥

उदयः सर्वं चतुःपंचविंशोनमशीतिषट्कं सत्त्वं ।
श्रुतमिव सामायिकद्विके उदयः पंचविंशसप्तविंशचतुष्कं ॥ ७२६ ॥

जी० प्र०——उदयस्थानानि चतुःपंचाग्रविंशतिकोनसर्वाणि । सत्त्वस्थानान्यशीतिकादीनि षट् । संयममार्गणायां सामायिकछेदोपस्थापनयोर्बंधसत्त्वस्थानानि श्रुतज्ञानवत् । उदयस्थानानि पंचविंशतिकं, सप्तविंशतिकादिचतुष्कं च ॥ ७२६ ॥

स० चं०—उदयस्थान चौबीस पचीसके बिना सर्व हैं । सत्वस्थान असीका आदि छह हैं । बहुरि संयम मार्गणाविषैं सामायिक छेदोपस्थापनाविषैं बंधस्थान सत्वस्थान श्रुतज्ञानवत् है । उदयस्थान पचीसका अर सत्ताईसका आदि च्यारि ऐसैं पांच हैं ॥ ७२६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परिहारे बंधतियं अडवीसचऊ य तीसमादिचऊ।
सुहुमे एक्को बंधो मणं व उदयंसठाणाणि ॥ ७२७ ॥

परिहारे बंधत्रयमष्टाविंशचतुष्कं च त्रिंशमादिचतुष्कं।
सूक्ष्मे एको बंधो मनो व उदयांशस्थानानि ॥ ७२७ ॥

जी० प्र०—परिहारविशुद्धौ बंधादित्रयं क्रमेणाष्टाविंशतिकादिचतुष्कं त्रिंशत्कं त्रिनवतिकादिचतुष्कं, सूक्ष्मसांपराये बंध एककं। उदयांशौ मनःपर्ययवत् ॥ ७२७ ॥

स० चं०—परिहार विशुद्धीविषैं बंध उदय सत्व क्रमतैं अठाईसकानैं आदि दैकरि च्यारिका बंध अर उदय तीसहीका अर तरेणवैका आदि च्यारिका सत्व जानना। बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं बंध एकका ही है। उदय सत्व मनःपर्यय ज्ञानवत् हैं ॥ ७२७ ॥

जहखादे बंधतियं केवलयं वा तिणउदिचउ अत्थि।
देसे अडवीसदुगं तीसदु तेणउदिचारि बंधतियं ॥ ७२८ ॥

यथाख्याते बंधत्रयं केवलं वा त्रिनवतिचतुष्कमस्ति।
देशे अष्टाविंशद्विकं त्रिंशद्विकं त्रिनवतिचत्वारि बंधत्रयं ॥ ७२८ ॥

जी० प्र०—यथाख्याते बंधोदयसत्त्वानि केवलज्ञानवदपि सत्त्वं त्रिनवतिकादिचतुष्कमप्यस्ति। देशसंयते बंधादित्रयं अष्टाविंशतिकादिद्वयं त्रिंशत्कादिद्वयं त्रिनवतिकादिचतुष्कं ॥ ७२८ ॥

स० चं०—यथाख्यातविषैं बंध उदय सत्व केवलज्ञानवत् हैं, विशेष इतना सत्व तरेणवैका आदि च्यारिका भी पाइए है। बहुरि देशसंयतविषैं बंधादिक तीन क्रमतैं अठाईसका आदि दोयका बंध अर तीस आदि दोयका उदय अर तरेणवैका आदि च्यारिका सत्व है ॥ ७२८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आविरमणे बंधुदया कुमदिं व तिणउदिसत्तयं सत्तं ।
पुरिसं वा चक्खिदरे अत्थि अचक्खुम्मि चउवीसं ॥७२९॥

अविरमणे बंधोदयाः कुमतिर्वं त्रिनवतिमसकं सत्वं ।
पुरुषं वा चक्षुरितरयोरस्ति अचक्षुषि चतुर्विंशं ॥ ७२९ ॥

जी० प्र०---असंयमे बंधोदयस्थानानि कुमतिज्ञानवत् । सत्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि सप्त । दर्शनमार्गणायां चक्षुरचक्षुषोर्बंधोदयसत्वानि पुंवेदवदप्यचक्षुर्दर्शने चतुर्विंशतिकमप्युदयोऽस्ति ॥ ७२९ ॥

स० चं०--असंयतविषैं बंध उदयस्थान कुमति ज्ञानवत् है । सत्वस्थान तरेणवैका आदि सात हैं । बहुरि दर्शन मार्गणाविषैं चक्षु अचक्षुविषैं बंध उदय सत्व पुरुषबेदवत् हैं विशेष इतना अचक्षु दर्शनविषैं चौबीसकेका भी उदय है ॥

ओहिदुगे बंधतियं तण्णाणं वा किलिट्ठलेस्सतिये ।
अविरमणं वा सुहजुगलुदओ पुंवेदयं व हवे ॥७३०॥
अडवीसचऊ बंधा पणछव्वीसं च अत्थि तेउम्मि ।
पढमचउक्कं सत्तं सुक्के ओहिं व वीसयं चुदओ ॥७३१॥ जुम्मं ।

अवधिद्विके बंधत्रयं तज्ज्ञानं वा क्लिष्टलेश्यत्रये ।
अविरमणं वा शुभयुगलोदयः पुंवेदको व भवेत् ॥ ७३० ॥
अष्टाविंशचतुरो बंधाः पंचषड्विंशं चास्ति तेजसि ।
प्रथमचतुष्कं सत्त्वं शुक्लायामवधिर्वं विंशकं चोदयः ॥ ७३१ ॥ युग्मं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—अवधिकेवलदर्शनयोर्बंधोदयसत्त्वानि तज्ज्ञानवत् । लेश्यामार्गणायां कृष्णादित्रये बंधोदयसत्त्वस्थानान्यसंयमवत् । तेजःपद्मोदयस्थानानि पुंवेदवत्, बंधस्थानानि पद्मायामष्टाविंशतिकादीनि चत्वारि । तैजस्यां तानि च पंचविंशतिकषड्विंशतिके च । उभयत्र सत्त्वं प्रथमं चतुष्कं स्यात् । शुक्लायां बंधोदयसत्त्वान्यवधिवद्विंशतिकोदयश्च ॥ ७३० ॥ ७३१ ॥

स० चं०—अवधि वा केवल दर्शनविषैं बंध उदय सत्व अवधि केवलज्ञानवत् जानने । बहुरि लेश्या मार्गणाविषैं कृष्णादिक तीनविषैं तौ बंध उदय सत्वस्थान असंयतवत् हैं । तेज:पद्मविषैं उदयस्थान पुरुषवेदवत् हैं । बंधस्थान पद्मविषैं अठाईसकानैं आदि देकरि च्यारि हैं । तेजविषैं ते च्यारि अर पचीस छबीसके ऐसैं छह हैं । सत्वस्थान दोऊनिविषैं आदिके च्यारि हैं । बहुरि शुक्ललेश्याविषैं बंध उदय सत्व अवधिज्ञानवत् हैं विशेष इतना तहां बीसकेका भी उदय है ॥ ७३० ॥ ७३१ ॥

भव्वे सव्वमभव्वे बंधुदया अविरदव्व सत्तं तु ।
णउदिचउ हारबंधणदुगहीणं सुदमिवुवसमे बंधो ॥७३२॥

भव्ये सर्वमभव्ये बंधोदया अविरत इव सत्त्वं तु ।
नवतिचतुष्कमाहारबंधनद्विकहीनं श्रुतमिवोपशमे बंधः ॥ ७३२ ॥

जी० प्र०—भव्यमार्गणायां बंधोदयसत्त्वस्थानानि सर्वाणि । अभव्यमार्गणायां बंधोदयस्थानान्यविरत्युक्तानि । तु—पुनः सत्त्वस्थानानि नवतिकादीनि चत्वारि, बंधे नाहारद्वययुतं, त्रिंशत्कमुद्योतयुतमेव स्यादित्यर्थः । सम्यक्त्वमार्गणायां उपशमे बंधस्थानानि श्रुतज्ञानवत् ॥ ७३२ ॥

स० चं–भव्य मार्गणाविषैं बंध उदय सत्वस्थान सर्व ही हैं । अभव्य मार्गणाविषैं बंध उदय सत्वस्थान तौ असंयमवत् जानने । सत्वस्थान निवैकानैं आदि देकरि च्यारि जानने अर बंधविषैं उद्योतसहित तीसका है आहारकद्विकसहित तीसका बंध नाहीं है इतना विशेष है । बहुरि सम्यक्त्वमार्गणाविषैं उपशम सम्यक्त्वविषैं तौ बंधस्थान श्रुतज्ञानवत् हैं ॥ ७३२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदया इगिपणवीसं णववीसातियं च पढमचउ सत्तं ।
उवसम इव बंधंसा वेदगसम्मे ण इगिबंधो ॥ ७३३ ॥

उदया एकपंचविंशं नवविंशत्रयं च प्रथमचतुष्कं सत्त्वं ।
उपशम इव बंधांशा वेदकसम्ये नैकबंधः ॥ ७३३ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानान्येकपंचाग्रविंशतिके द्वे नवविंशतिकादित्रयं च । सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वारि, वेदके बंधांशावुपशमवेदक सम्यक्त्ववदप्येककबंधो नास्ति ॥ ७३३ ॥

स० चं०—उदयस्थान इकईस पचीसके अर गुणतीसकेनैं आदि दैकरि तीन ऐसैं पांच हैं । सत्वस्थान तरेणवैका आदि च्यारि हैं । बहुरि वेदक सम्यक्त्वविषैं बंध सत्व तौ उपशमवत् है विशेष इतना एकका बंधस्थान नाहीं है ॥ ७३३ ॥

उदया मदिं व खइये बंधादी सुदमिवत्थि चरिमदुगं ।
उदयंसे वीसं च य साणे अडवीसतियबंधो ॥ ७३४ ॥

उदया मतिर्व क्षायिके बंधादि श्रुतमिवास्ति चरमद्विकं ।
उदयांशे विंशं च च साने अष्टाविंशत्रिकबंधः ॥ ७३४ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानानि मतिज्ञानवदष्टौ । क्षायिके बंधोदयांशाः श्रुतज्ञानमिव पंचाष्टाष्टौ । पुनः उदयसत्त्वयोः स्वस्वचरमस्थानद्वयं उदये विंशतिकमप्यस्ति । सासादनरुचौ बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्रीणि ॥ ७३४ ॥

स० चं०—उदयस्थान मतिज्ञानवत् आठ हैं । बहुरि क्षायिकविषैं बंध उदय सत्व श्रुतज्ञानवत् पांच आठ आठ हैं । विशेष इतना उदय सत्वविषैं अंतके दोय दोय उदयस्थान भी पाइए हैं वा उदयविषैं बीसका भी स्थान पाइए हैं । बहुरि सासादनरुचिविषैं बंधस्थान अठाईसका आदि तीन है ॥ ७३४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उदया इगिवीसचऊ णववीसातियं च णउदियं सत्तं ।
मिस्से अडवीसदुगं णववीसातियं च बंधुदया ॥७३५॥

उदया एकविंशचत्वारः नवविंशत्रयश्च नवतिकं सत्त्वं ।
मिश्रेऽष्टाविंशद्विकं नवविंशत्रयं च बंधोदयाः ॥ ७३५ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानान्येकविंशतिकादिचतुष्कं नवविंशतिकादित्रयं च । अत्र सप्ताष्टाग्रविंशतिके तु अनयोरुदयकालगमनपर्यंतं सासादनत्वासंभवान्नोक्ते । सत्त्वं नवतिकमेव । मिश्ररुचौ बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादिद्वयं । उदयस्थानानि नवविंशतिकादित्रयं ॥ ७३५ ॥

स० चं०–उदयस्थान इकईसका आदि च्यारि गुणतीसका आदि तीन ऐसैं सात हैं । तहां सताईस अठाईसका उदय आवनेका कालपर्यंत सासादनपना एकेंद्रियादिककैं संभवै नाहीं तातैं न कहे । सत्वस्थाननिविषैं निवैहीका है । बहुरि मिश्ररुचिविषैं बंधस्थान अठाईसका आदि दोय हैं । उदयस्थान गुणतीसका आदि तीन हैं ॥७३५॥

बाणउदिणउदिसत्तं मिच्छे कुमदिं व होदि बंधतियं ।
पुरिसं वा सण्णीये इदरे कुमदिं व णत्थि इगिणउदी ॥७३६॥

द्वानवतिनवतिसत्त्वं मिथ्ये कुमतिर्व भवति बंधत्रयं ।
पुरषो वा संज्ञिनि इतरास्मिन् कुमतिर्व नास्त्येकनवतिः ॥ ७३६ ॥

जी० प्र०—सत्त्वं द्वानवतिकनवतिके द्वे । मिथ्यारुचौ बंधोदयसत्त्वस्थानानि कुमतिवत् । संज्ञिनि पुंवेदवत् । असंज्ञिनि कुमतिवत् किंतु नास्त्येकनवतिकसत्त्वं ॥ ७३६ ॥

स० चं०–सत्व बाणवै निवैके दोय हैं । बहुरि मिथ्यारुचिविषैं बंध उदय सत्वस्थान कुमतिज्ञानवत् जानना । बहुरि संज्ञीमार्गणाविषैं बंध उदय सत्व पुरुषवेदवत् हैं । असंज्ञीविषैं कुमतिज्ञानवत् है । विशेष इतना इक्याणवेका सत्व नाहीं है ॥ ७३६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आहारे बंधुदया संढं वा णवरि णत्थि इगिवीसं ।
पुरिसं वा कम्मंसा इदरे कम्मं व बंधतियं ॥७३७॥

आहारे बंधोदयाः षंढो वा नवरि नास्ति एकविंशं ।
पुरुषो वा कर्मांशाः इतरस्मिन् कर्म व बंधत्रयं ॥ ७३७ ॥

जी० प्र०—आहारमार्गणायां बंधोदयस्थानानि षंढवत् किंतु एकविंशतिकमुदयस्थानं नास्ति सत्त्वस्थानानि पुंवत्, अनाहारे कार्मणयोगवत् ॥ ७३७ ॥ पुनः—

स० चं०—आहारमार्गणाविषैं बंध उदयस्थान तौ नपुंसकवेदवत् है, विशेष इतना इकवीसका उदयस्थान नाहीं है। सत्वस्थान पुरुषवेदवत् है। बहुरि अनाहारविषैं बंध उदय सत्व कार्माणकाय योगवत् है, विशेष इतना है—॥७३७॥

अत्थि णवट्ठ य दुदओ दसणवसत्तं च विज्जदे एत्थ ।
इदि बंधुदयप्पहुदीसुदणामे सारमादेसे ॥ ७३८ ॥

अस्ति नवाष्ट च द्व्युदयो दशनवसत्त्वं च विद्यतेऽत्र ।
इति बंधोदयप्रभृतिश्रुतनाम्नि सारमादेशे ॥ ७३८ ॥

जी० प्र०—तत्रानाहारे अयोगिन उदयो नवाष्टके द्वे स्तः। सत्त्वं दशकनवके द्वे विद्येते । एवं बंधोदयसत्त्वत्रिसंयोगो विश्रुते नामकर्मणि मार्गणायां सार उक्तः ॥ ७३८ ॥

स० चं०—तहां अनाहारविषैं अयोगीका उदय नवका आठका है। सत्व दशका वा नवका है। ऐसैं बंध उदय सत्वका त्रिसंयोग प्रगट नामकर्मविषैं है सो चौदह मार्गणाविषैं सार समीचीन कह्या है ॥ ७३८ ॥

चारुसुदंसणधरणे कुवलयसंतोसणे समत्थेण ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माधवचंदेण महावीरेणत्थेण वित्थरिदो ॥७३९॥

चारुसुदर्शनधरणे कुवलयसंतोषणे समर्थेन ।
माधवचंद्रेण महावीरेणार्थेन विस्तरितः ॥ ७३९ ॥

जी० प्र०—चारुसम्यग्दर्शनधरणे कुवलयसंतोषणे च समर्थेन माधवचंद्रेण महावीरेण परमार्थतो विस्तरितः ॥ ७३९ ॥ अथोक्तत्रिसंयोगस्यैकाधिकरणे द्व्याधेयं ब्रुवंस्तावद्बंधाधारे उदयसत्त्वाधेयं गाथाद्वयेनाह—

स० चं०—चारु उत्कृष्ट सम्यग्दर्शनका धरनैंविषैं अर पृथ्वीसमूहका आनंद उपजावनेविषैं समर्थ ऐसा जु माधवचंद्र वा महावीरस्वामी तिनकरि ऐसा कथन परमार्थतैं ।बिस्ताररूप कीया है । इहां माधवचंद्र तौ नेमिनाथ तीर्थंकर अर महावीर वर्धमान तीर्थंकरका नाम जानना । अथवा माधवचंद्र अर वीरनंदी दोऊ आचार्यनिके नाम जानने ॥ ७३९ ॥ आगैं इस त्रिसंयोगका एक आधार दोय आधेयकौं कहैं हैं तहां प्रथम ही बंध आधार उदय सत्त्व आधेयकौं दोय गाथानिकरि कहैं हैं—

णवपंचोदयसत्ता तेवीसे पणुवीस छव्वीसे ।
अट्ठचदुरट्ठवीसे णवसत्तुगुतीसतीसम्मि ॥७४०॥
एगेगं इगितीसे एगे एगुदयमट्ठसत्ताणि ।
उवरदबंधे दस दस उदयंसा होंति णियमेण ॥७४१॥

नवपंचोदयसत्तास्त्रयोविंशे पंचविंशे षड्विंशे ।
अष्टचतुष्कमष्टाविंशे नवसप्तैकोनत्रिंशत्त्रिंशतोः ॥ ७४० ॥
एकैकमेकत्रिंशतौ एकस्मिन्नेकोदयोऽष्टसत्त्वानि ।
उपरतबंधे दश दश उदयांशा भवंति नियमेन ॥ ७४१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—त्रिपंचषडग्रविंशतिकेषूदयस्थानानि नव। सत्त्वस्थानानि पंच। अष्टाविंशतिके उदयस्थानान्यष्टौ। सत्त्वस्थानानि चत्वारि। एकान्नत्रिंशत्के त्रिंशत्के चोदयस्थानानि नव। सत्त्वस्थानानि सप्त। एकत्रिंशत्के उदयस्थानमेकं सत्त्वस्थानमेकं। एकके उदयस्थानमेकं सत्त्वस्थानान्यष्टौ। उपरतबंधे दशदशोदयसत्त्वस्थानानि नियमेन भवंति ॥ ७४० ॥ ७४१ ॥ तानि कानीत्याह—

स० चं०—तेवीस पचीस छवीसके बंधस्थाननिविषैं उदयस्थान नव अर सत्वस्थान पांच हैं। अठाईसका बंधस्थाननिविषैं उदयस्थान आठ सत्वस्थान च्यारि हैं। गुणतीस तीसके बंधस्थाननिविषैं उदयस्थान नव सत्वस्थान सात हैं। इकतीसका बंधस्थानविषैं उदयस्थान एक सत्वस्थान एक है। एकका बंधस्थानविषैं उदयस्थान एक सत्वस्थान आठ हैं। उपरतबंध कहिए बंधरहितस्थानविषैं उदयस्थान वा सत्वस्थान दश दश नियमकरि हैं। भावार्थ—जिस जीवकैं जिस काल इतनी इतनी प्रकृतिनिका बंध होइ तिसिकाल तिसि किसी जीवकैं कोई, किसीकैं कोई असैं नाना जीव अपेक्षा उदयस्थान वा सत्वस्थान पाइए ॥ ७४० ॥ ७४१ ॥ ते कौंन ? सो कहैं हैं—

उदयंसट्ठाणाणि य सामित्तादो दु जाणिदव्वाणि।
बंधुदयं च णिरुंभिय सत्तस्स य संभवगदीए ॥ १ ॥

तियपणछवीसबंधे इगिवीसादेक्कतीसचरिमुदया।
बाणउदी णउदिचऊ सत्तं अडवीसगे उदया ॥७४२॥

त्रिकपंचषड्विंशबंधे एकविंशादेकत्रिंशचरमोदयाः।
द्वानवतिर्नवतिचतुष्कं सत्त्वमष्टाविंशके उदयाः ॥ ७४२ ॥

जी० प्र०—त्रिपंचषडग्रविंशतिकबंधेषूदयस्थानान्येकविंशतिकादीन्येकत्रिंशत्कांतानि नव। सत्त्वस्थानं द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च ॥७४२॥

---

१ इयमपि काचिद्गाथा ७४१ तमाया गाथायाः पुरस्तात्समुपलभ्यते सा च प्रक्षेपात्मिकैवेति विभाव्यते टीककृद्भिस्तदुल्लेखस्याकृतत्वादिति।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

स० चं०—तेवीस पचीस छवीसके बंधस्थाननिविषैं इकईसनैं आदि देकरि इकतीसपर्यंत उदयस्थान नव हैं। सत्वस्थान बाणवैका अर निवैका आदि च्यारि असैं पांच हैं ॥ ७४२ ॥

पुव्वं व ण चउवीसं बाणउदिचउक्कसत्तमुगुतीसे।
तीसे पुव्वं बुदया पढमिल्लं सत्तयं सत्तं ॥७४३॥

पूर्वं व न चतुर्विंशं द्वानवतिचतुष्कसत्त्वमेकोनत्रिंशे।
त्रिंशे पूर्वं वोदयाः प्रथमाद्यं सप्तकं सत्त्वं ॥ ७४३ ॥

जी० प्र०—अष्टाविंशतिके उदयस्थानानि पूर्ववन्नव न चतुर्विंशतिकं। सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकचतुष्कं। एकान्नत्रिंशत्के त्रिंशत्के चोदयस्थानानि तान्येव नव। सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि सप्त ॥ ७४३ ॥

स० चं०—अठाईसका बंधस्थानविषैं उदयस्थान पूर्ववत् नवविषैं चौबीसका नाही तातैं आठ हैं। सत्वस्थान बाणवैका आदि च्यारि हैं। बहुरि गुणतीस तीसका बंधस्थानविषैं उदयस्थान पूर्वोक्त नव हैं अर सत्वस्थान तरेणवैका आदि सात हैं ॥ ७४३ ॥

इगितीसे तीसुदओ तेणउदी सत्तयं हवे एगे।
तीसुदओ पढमचऊ सीदादिचउक्कमवि सत्तं ॥७४४॥

एकत्रिंशे त्रिंशोदयस्त्रिनवतिः सत्त्वं भवति एकस्मिन्।
त्रिंशोदयः प्रथमचतुष्कमशीत्यादिचतुष्कमपि सत्त्वं ॥ ७४४ ॥

जी० प्र०—एकत्रिंशत्के उदयस्थानं त्रिंशत्कं। सत्त्वस्थानं त्रिनवतिकं। एकके उदयस्थानं त्रिंशत्कं। सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकादीनि चत्वारि च ॥ ७४४ ॥

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—इकतीसका बंधस्थानविषैं उदयस्थान तीसका एक है। सत्वस्थान तरेणवैका एक है। बहुरि एकका बंधस्थानविषैं उदयस्थान तीसका एक है। सत्वस्थान तरेणवैका आदि च्यारि अर असीका आदि च्यारि ऐसैं आठ है ॥ ७४४ ॥

उवरदबंधेसुदया चउपणवीसूण सव्वयं होदि।
सत्तं पढमचउक्कं सीदादीछक्कमवि होदि ॥ ७४५ ॥

उपरतबंधेषूदयाश्चतुःपंचविंशोनं सर्वं भवति।
सत्त्वं प्रथमचतुष्कमशीत्यादिषट्कमपि भवति ॥ ७२५ ॥

जी० प्र०—उपरतबंधे उदयस्थानानि चतुःपंचाग्रविंशतिकोनानि दश। सत्त्वस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकादीनि षट् च। अत्राद्यत्रिसंयोगे—

बं	२३
उ	९
स	५

त्रयोविंशतिक्रमेकेंद्रियापर्याप्तयुतत्वाद्देवनारकेभ्योऽन्ये त्रसस्थावरमनुष्यमिथ्यादृष्टय एव बध्नंति। तत्रैकेंद्रियादिसर्वतिरश्चां बं २३ ए अ। उ २१ २४ २५ २६ २७ २८ २९ ३० ३१ स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२। मनुष्येषु कर्मभूमिजानामेव। बं २३। ए अ। उ २१। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। पंचविंशतिकमेकेंद्रियपर्याप्तत्रसापर्याप्तयुतत्वात्तिर्यग्मनुष्यदेवमिथ्यादृष्टय एव बध्नंति। तत्र सर्वतिरश्चां बं २५ ए प त्र अ। उ २१ २४। २५। २६। २७। २८। २९। ३०। ३१। स ९२। ९०। ८८। ८४। ८२। मनुष्यगतौ बं २५ ए प।

---

७४५ तमाया गाथाया अधोलिखितपाठः अभयचंद्रनामांकितायां टीकायामधिकः समुपलब्धस्तद्यथा—उपरतबंधे चतुर्विंशतिकपंचविंशतिकोनदशोदयस्थानानि त्रिनवतिकादीनि चत्वार्यशीतिकानि षट् सत्त्वानि। अत्र चाद्ये त्रिसंयोगे बं २३ उ ९ स ५ त्रयोविंशतिकं बंधस्थानमेकेंद्रियापर्याप्तयुतं। तत्प्रकृतिद्वयं मिथ्यात्वहेतुकबंधं तेन मिथ्यादृष्टय एव बध्नंति तेऽपि न देवनारकाः। 'उवरिमवारससुरचउ सुराउ आहारयमबंधा, इति नारकाणां, आ ईसाणोत्तिसत्तवामछिदीति भवनत्रयसौधर्मद्वयजानां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्र अ । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । देवेषु भवनत्रयसौधर्मद्वयजानामेवैकेंद्रियपर्याप्तयुतमेवं बं २५ ए प । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । षड्विंशतिकमेकेंद्रियपर्याप्तोद्योतातपान्यतरयुतत्वात्तिर्यग्मनुष्यदेवमिथ्यादृष्टय एव बध्नंति । तत्रापि तेजोवायुसाधारणसूक्ष्मापर्याप्तेषु तदुदय एव न, बंधस्तु भवत्येव । तत्तिरश्चां--बं २६ । ए प उ आ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । तन्मनुष्याणां बं २६ । ए प आ उ । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । भवनत्रयसौधर्मद्वयजानां बं २६ ए प आ उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । अष्टाविंशतिकं नरकदेवगतियुतत्वादसंज्ञिसंज्ञितिर्यक्कर्मभूमिमनुष्या एव विग्रहगतिशरीरमिश्रकालावतीत्य पर्याप्तशरीरकाले एव बध्नंति । तत्तिरश्चां मिथ्यादृष्टेः बं २८ न । दे, उ २८ । २९ । ३० । ३१, स ९२ । ९० । ८८ । तत्सासादनस्य बं २८ दे, उ ३० । ३१ । स ९० । मिश्रस्य बं २८ दे । उ ३० । ३१ । स ९२ । ९० । असंयतस्य बं २८ दे, उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । देशसंयतस्य बं २८ दे, उ ३० । ३१ । स ९२ । ९० । द्व्यशीतिकं हि तत्सत्त्वयुततेजोवायुभ्यां पंचेंद्रियेषूत्पन्नस्य नानाविग्रहगतिशरीरमिश्रकालयोस्तिर्यग्गतियुतत्रिपंचषड्नवदशाग्रविंशतिकानि बध्नतां संभवति । मनुष्यद्विकयुतपंचनवाग्रविंशतिके बध्नतां न संभवति । चतुरशीतिकं चैकविकलेंद्रियभवे नारकचतुष्कमुद्वेल्य पंचेंद्रियपर्याप्तेषूत्पन्नस्य तस्मिन्नेव कालद्वये संभवति ततोऽस्मिन्नष्टाविंशतिकबंधकाले तयोः सत्त्वं नोक्तं ।

च निषेधात् । शेषत्रसस्थावरमनुष्या एव बध्नंतीत्यर्थः । त्रयोविंशतिकबंधकाले नानाजीवापेक्षया तानि नवोदयस्थानानि पंच सत्त्वस्थानानि च युगपत्संभवंत्येकजीवापेक्षयैकैकमेव । तत्रैकविंशतिकमुदयस्थानं क्षेत्रविपाकितिर्यग्मनुष्यानुपूर्व्ययुतत्वात् विग्रहगतावेवोदेति । तत्प्रथमसमयवर्त्यनाहारकत्रसस्थावरतिर्यग्मनुष्यपर्यायकार्यस्योपादानकारणभूतो नारकतिर्यग्मनुष्यदेवाहारकचरमसमयपर्यायो द्रव्यार्थिकनयेन तच्चरमसमये स्यात् । पर्यायार्थिकनयेनानंतरसमये स एवानाहारकत्रसस्थावरतिर्यग्मनुष्यपर्यायोत्पत्तिरूपेण क्षीणस्ततः कारणात् कारणस्य प्रध्वंसाभाव एव कार्यस्य प्रागभावः । तथैवोक्तं—

कार्योत्पादः क्षयो हेतोर्नियमाल्लक्षणात्पृथक् ।

न तौ जात्याद्यवस्थानादनपेक्षाः खपुष्पवत् ॥ ५८ ॥ आ० मी०

कार्योत्पत्तिः उपादानकारणक्षय एव स्यान्नियमेन । तर्हि तयोः पृथग्भावः कथं स्यात् ? लक्षणात्स्यात् । जातिद्रव्यगुणाद्यवस्थानेनैकत्वे कारणकार्ये न स्यातामिति कारणात्तदनपेक्षा गगनकुसुमोपमा स्यात् । नारकादिनोकर्माहारकचरमपर्यायक्षयेऽनाहारकत्रसस्थावरतिर्यग्मनुष्यपर्याये च द्रव्यगुणप्रच्युतिर्नेति जीवो ध्रौव्योत्पत्तिव्ययात्मक इत्यर्थः । तत्रैकजीवः एकसमये एकवृत्तिः तेनैकसमयवर्तित्रसस्थावरविवक्षिततिर्यग्मनुष्यानाहारकस्य तत्त्रयोविंशतिकबंधः, एकविंशतिकोदयः, पंचसत्त्वस्थानेषु योग्यैकसत्त्वं च स्यात् तथैवोक्तं—

एकस्यानेकवृत्तिर्न भागाभावाद्बहूनि वा ।

भागित्वाद्वास्य नैकत्वं दोषोवृत्तेरनार्हते ॥ ६२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनुष्येषु मिथ्यादृष्टेः बं २८ न दे, उ २८ । २६ । ३० । स ९२ । ९१ । ९० । ८८ । उद्वेल्लितानुद्वेल्लितमनुष्यद्विकतेजोवायूनां मनुष्यायुरबंधादत्रानुत्पत्तेर्न द्व्यशीतिकसत्त्वं, उद्वेल्लितनारकचतुष्कैकविकलेंद्रियाणामत्रोत्पन्नानां विग्रहगतिमिश्रशरीरकालयोरष्टाविंशतिकाबंधान्न चतुरशीतिकसत्त्वं । शरीरपर्याप्तौ तद्बंधे तु नारकचतुष्केण देवचतुष्केण वाष्टाशीतिकसत्त्वमेव न तत् एकनवतिकसत्त्वं प्राग्बद्धनरकायुरसंयतस्य द्वितीयतृतीयपृथ्व्युत्पत्त्यभिमुखस्य मिथ्यादृष्टित्वं गत्वा नरकगतियुताष्टाविंशतिं बध्नतस्त्रिंशत्कोदयेन सह संभवति । सासादनस्य बं २८ दे । उ ३० । स ९० । मिश्रस्य बं २८ दे । उ ३० । स ९२ । ९० । असंयतस्य बं २८ दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । नात्रैकनवतिकसत्त्वं प्रारब्धतीर्थबंधस्यान्यत्र बद्धनरकायुष्कात्सम्यक्त्वाप्रच्युतिर्नेति तीर्थबंधस्य नैरंतर्यादष्टाविंशतिकाबंधात् । देशसंयतस्य बं २८ दे । उ ३० । स ९२ । ९० । प्रमत्तस्य बं २८ दे । उ २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । अप्रमत्तस्य बं २८ दे । उ ३० । स ९२ । ९० । अपूर्वकरणस्य बं २८ दे । उ ३० । स ९२ । ९० । नवविंशतिकं द्वींद्रियादित्रसपर्याप्तेन तिर्यग्गत्या वा मनुष्यगत्या वा देवतीर्थेन वा युतत्वाच्चतुर्गतिजा बध्नंति ।

तत्र नारकमिथ्यादृशां बं २९ पं ति म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९१ । ९० । अत्रैकनवतिकं धर्मादित्रयापर्याप्तेष्वत्र संभवति । सासादनस्य बं २९ पं ति म । उ २९ । स ९० । मिश्रस्य बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९० । असंयतस्य धर्मायां बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ (९१) ९० । वंशामेघयोः बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९० अंजनादिषु बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९० । तिर्यग्गतौ

एकजीवस्यानेकवृत्तिर्न स्यात् भागाभावात् । वा पुनः एकनिगोदशरीरस्थितानंतानंतजीवानां सुखदुःखानुभवनस्वातंत्र्यलक्षणविभागित्वादेकत्वं न स्यात् तद्वृत्तेर्दोषः अनार्हते एव सर्वथैकांतमते एव नार्हन्मते । ननु जीवस्यास्तिकायत्वं परमागमप्रसिद्धं तेन प्रदेशप्रचयत्वं स्यात् ततश्चैकस्मिन्नपि भागित्वादनेकवृत्तिः स्यादिति तन्न धर्माधर्माकाशैकजीवानां तथात्वेऽप्यखंडद्रव्यत्वेनाणुवदविभागित्वादेकवृत्तित्वसिद्धेः । नच तत एवाणुमात्रः स्वोपात्तशरीरप्रमितत्वेऽपि लोकमात्रत्वात् । पूर्वभवचरमसमयवर्तिनामेकनिगोदशरीरस्थानंतानंतजीवानां नोकर्माहारस्य साधारण्येऽपि कर्माहारः पृथक् पृथगेव । तेषु जीवेषु विवक्षितैकजीवः स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया कथंचित्सन् । अयं कथंचिच्छब्दो विवक्षितस्यैवास्तित्वं तच्छरीरावगाहस्थशेषानंतानंतजीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालानामविवक्षितानां गौणं कथयति । स एव जीवः पुनस्तच्छेषानंतानंतजीवपुद्गलधर्माधर्माकाशकालानां पररूपादिचतुष्टयापेक्षया कथंचिदसन् अविवक्षितस्य गौणत्वात् । तथा चोक्तं—

कथंचित्ते सदेवेष्टं कथंचिदसदेव तत् ।
तथोभयमवाच्यं च नययोगान्न सर्वथा ॥ १४ ॥

इष्टं विवक्षितं वस्तु स्वद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया सत्त्वदेव परद्रव्यादिचतुष्टयापेक्षया असत्स्यात् । जिनमते एव । तथा सदसत् अवाच्यं चशब्दात्सदवक्तव्यं असदवक्तव्यं सदसदवक्तव्यं च स्यात् । नयविषयैकांतेऽपि कथंचित् स्यात् । अन्यथा तस्यानेकांतत्यागे तदेकांतोऽनन्य एव स्यात् । सर्वथैकांत एवेत्यर्थः । तस्य तद्धर्माभावे परिणामांतराभावः ततोऽवस्तु स्यात् । तत एवायं कथंचिच्छब्दोऽपि स्याच्छब्दार्थप्रतिपादकः । तथा चोक्तं—

कथंचित्केन चित्किंचित्कश्चित्कस्यचित्क्वचित् ।
कदाचिच्चेति पर्यायाः स्यादर्थप्रतिपादकाः ॥ १ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्यादृष्टेः बं २९ वि ति च पं ति म । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । सासादनस्य बं २९ पं ति म । उ २१ । २४ । २६ । ३० । स ९० । नात्र पंचसप्ताष्टनवाग्रविंशतिकोदयः मिश्रादित्रये नास्य बंधः । उवरिम छण्णं च छिदी सासण सम्मे हवे इति नियमात् तिर्यग्मनुष्यगत्योः सासादने छेदात् । देवगत्यष्टाविंशतिकमेव बध्नातीत्यर्थः । मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टौ बं २९ वि ति च पं ति म । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९१ । ९० । ८८ । ८४ । अत्र तेजोवायूनामनुत्पत्तेर्न द्व्यशीतिकसत्त्वं । प्राग्बद्धनरकायुः प्रारब्धतीर्थबंधासंयतस्य नरकगमनाभिमुखमिथ्यादृष्टित्वे मनुष्यगतियुतं तत्स्थानं बध्नतः, त्रिंशत्कोदयेनैकनवतिकसत्त्वं । सासादने बं २९ पं ति म । उ २१ । २६ । ३० । स ९० । मिश्रे नास्य बंधः । असंयते बं २९ दे ती । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९३ । ९१ । देशसंयते बं २९ । दे ती । उ ३० । स ९३ । ९१ । प्रमत्ते बं २९ दे । ती । उ २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९३ । ९१ । अप्रमत्ते बं २९ दे ती । उ ३० । स ९३ । ९१ । अपूर्वकरणे बं २९ । दे ती । उ ३० । स ९३ । ९१ । देवगतौ भवनत्रयादिसहस्रारांते मिथ्यादृष्टौ संज्ञिपंचेंद्रियपर्याप्ततिर्यग्गत्या मनुष्यगत्या वा युतमेव बं २९ पं ति । म उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । सासादने बं २९ । पं । ति । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९० । मिश्रे बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९० । असंयते बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । भवनत्रयासंयते बं २९ म । उ २९ । सत्त्वमुभयत्र । ९२ । ९० । आनतादुपरिमग्रैवेयकांते मिथ्यादृष्टौ बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । सासादने बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९० । मिश्रे बं २९ म । उ २९ । स ९२ । ९० । असंयते बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । अनुदिशानुत्तरासंयते बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । त्रिंशत्कं त्रसपर्याप्तोद्योतयुततिर्यग्गतियुतमनुष्यगतियुतमनुष्यगतितीर्थयुतदेवगत्याहारकद्वययुतत्वाच्चतुर्गतिजा बध्नंति ।

इति सदसद्रूपपूर्वभवचरमसमयवर्तित्रसस्थावरसंबंधिबद्धतिर्यग्मनुष्यायुष्कसाधारणैकशरीरस्थानंतानंतजीवाः मरणे उत्तरभवप्रथमसमये त्रसस्थावरसंबंधितिर्यग्मनुष्यायुस्तद्गत्यानुपूर्व्ययुतैकविंशतिकोदया विग्रहगतौ नोकर्मानाहारका भूत्वा साधारणत्वसमवायत्वकारणसाधारणनामनुदयात्तद्द्वयं त्यक्त्वा पृथक् पृथग्भूत्वा कार्मणशरीरोदयात्तत्काययोगेन जातकर्माहारा लब्ध्यपर्याप्तपर्यायसहकारिकारणत्रयोविंशतिकबंधकाले योग्यपंचसत्त्वस्थानेष्वेकतरसत्त्वाः स्युः । उच्यते—

सामान्यं समवायश्चाप्येकैकत्र समाप्तितः ।
अंतरेणाश्रयं न स्यान्नाशोत्पादिषु को विधिः ॥ ६५ ॥

सामान्यं समवायश्च एकैकस्मिन् समाप्तत्वात्तयोरंतरं स्यात् तेन साधारणरूपेण समवायरूपेण स्थितिनाशोत्पादिद्रव्येषु सामान्यसमवायप्रमाणाविषयकः । तयोरेकजीवद्रव्यं साधारणत्वस्य समवायत्वस्य च विषयो न स्यादित्यर्थः । कुतः ? तयोर्विशेषरूपेण पृथगवस्थानात् । विधिशब्दः कथं प्रमाणवाचक इति चेत् ।

सदेकनित्यवक्तव्यास्तद्विपक्षाश्च ये नयाः ।
सर्वथेति प्रदुष्यंति पुष्यंति स्यादितीह ते ॥ १ ॥

सदेकनित्यवक्तव्याः तद्विपक्षा असदनेकानित्यावक्तव्याश्च नयाः स्युः नयविषयत्वात् । इह नयविषये सर्वथेति प्रदुष्यंति दुर्णया भवंति । स्यादिति पुष्यंति सुनया भवंति तवागमे । तेषां सदसदादीनां प्रमाणनयविषयत्वं व्यनक्ति——

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्र सर्वनारकमिथ्यादृष्टौ बं ३० पं ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । सासादने । बं ३० पं ति । उ २९ । स ९० । मिश्रे नास्य बंधः । धर्मासंयते मनुष्यगतितीर्थयुतं । बं ३० म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९१ । वंशामेघयोः बं ३० । म ती । उ २९ । स ९१ । अंजनादिषु नास्ति ।

तिर्यग्गतौ सर्वनारकमिथ्यादृष्टौ बं ३० पं ति । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९२ । ९० । सासादने बं ३० ति उ । उ २९ । स ९० मिश्रे नास्य बंधः । धर्मासयंने मनुष्यगतितीर्थयुतं बं ३० म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९१ । वंशामेघयोः बं ३० म ती । उ २९ । स ९१ । अंजनादिषु नास्ति तिर्यग्गतौ सर्वमिथ्यादृष्टौ । बं ३० पं ति उ । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । सासादने बं ३० ति उ । उ २१ । २४ । २६ । ३० । ३१ । स ९० । मिश्रादित्रये नास्य बंधः । मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टौ बं ३० वि ति च पं ति । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । सासादने बं ३० ति उ । उ २१ । २६ । ३० । स ९० । मिश्रादिचतुष्के नास्य बंधः । अप्रमत्तादिद्वये बं ३० । दे आ २ । उ ३० । स ९२ । देवगतौ भवनत्रयादिमहस्रारांतेषूद्योततिर्यग्गतियुतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ बं ३० ति उ ।

विधिर्विषक्तः प्रतिषेधरूपः प्रमाणमत्रान्यतरत्प्रधानं ।
गुणोऽपरोमुख्यनियामहेतुर्नयः सदृष्टांतसमर्थनस्ते ॥ १ ॥

विषक्तं युक्तं प्रतिषेधरूपं येन स विधिः स्यात् । स एव प्रमाणविषयत्वात्प्रमाणं । अत्रानयोर्विधिप्रतिषेधयोरन्यतरत्प्रधानं, अपरोगुणः तथापि गुणो मुख्यनियामहेतुः मुख्यव्यवस्थाहेतुरित्यर्थः । न निरात्मकः न निःस्वभावः स्यात् । विधिप्रतिषेधयोरन्यतरत्प्रधान यत्तद्वस्तु नयविषयत्वान्नयः स्यात् । सदृष्टांतसमर्थनः प्रमाणविषयो नयविषयो वा दृष्टांते समर्थनेन सहितो वर्तते तव मते । तन्नयविषयविधिनिषेधयोः प्रधानाप्रधानत्वलक्षणमाहुः ।

विवक्षितो मुख्य इतीष्यतेऽन्यो गुणोऽविवक्षो न निरात्मकस्ते ।
तथारिमित्रानुभयादिशक्तिद्वयावधेः कार्यकरं हि वस्तु ॥ १ ॥

वक्तुमिष्टो विधिर्निषेधो वा विवक्षितः स मुख्य इत्युच्यते । अन्यो विधिर्निषेधो वा अविवक्षितो गौणः स्यान्न निरात्मको निःस्वभावो जिन ! तव मते । तथाहि—अरिमित्रानुभयादिशक्तिविशिष्टं वस्तु सदसदेकानेकनित्यानित्यवक्तव्यावक्तव्यद्वयस्यावधेः सीमातोऽर्वाक् कार्यकरं स्यात् इत्येतत्प्रमाणनयाविषयस्य विग्रहगतिप्रथमसमये नोकर्मानाहारकानंतानंततिर्यग्मनुष्यजीवसमूहस्य लब्ध्यपर्याप्तपर्यायसहकारिकारणत्रयोविंशतिकस्थानस्थितापर्याप्तनामोपार्जनं तदुदयकार्यलब्ध्यपर्याप्तकत्वं चैकदेशकाले न संभवतीति न विरुद्धं तथात्वाद्वस्तुवृत्तेः उच्यते—

देशकालविशेषेऽपि स्याद्वृत्तिर्युतसिद्धिवत् ।
समानदेशता न स्यान्मूर्तकारणकार्ययोः ॥ ६३ ॥

देशकालविशेषेऽपि कार्यकारणव्यक्तिः कथंचित्समानदेशता न स्यात् । कथं न स्यादिति चेत् स्याच्छब्दवृत्तिर्युतसिद्धिवत्स्यादिति ततः कारणात्सयोगकेवलिनींद्रि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । सासादने बं ३० ति उ । उ २१ । २५ । २९ । स ९० । मिश्रे भवनत्रयासंयते च न त्रिंशत्कं । किं तर्हि ? तन्मनुष्यगतियुतं च नवविंशतिकमेव संभवति । सौधर्मादिसहस्रारांतासंयते मनुष्यगतितीर्थयुतं । बं ३० म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९१ । आनताद्युपरिमग्रैवेयकांतमिथ्यादृष्ट्यादित्रये नास्य बंधः । आनतादिसर्वार्थसिद्धयंतासंयते तु मनुष्यगतितीर्थयुतं । बं ३० । म । ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । स ९३ । ९१ । एकत्रिंशत्कं देवगत्याहारद्वयतीर्थयुतत्वादप्रमत्तापूर्वकरणा एव बध्नंति । बं ३१ । दे आ २ ती । उ ३० । स ९३ । एककबंधोविंशतिरपूर्वकरणे बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अनिवृत्तिकरणे बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । सूक्ष्मसांपराये बं १ । उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । ८० । ७९ । ७८ । ७७ । उपशांतकषाये बं ० उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । क्षीणकषाये बं ० उ ३० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । सयोगे स्वस्थाने बं ० उ ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । समुद्घाते बं ० उ २० । २१ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । अयोगे बं ० उ ३० । ३१ । ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ ॥ ७४५ ॥ अथ द्वितीयभेदमाह—

स० चं०—उपरतबंध जो बंध रहित तीहिंविषैं उदयस्थान चौबीस पचीसके बिना सर्व दश है । सत्वस्थान तरेणबैका आदि च्यारि असीका आदि छह ऐसैं दश हैं । अब इनिका स्वरूप दिखाइए है—

तहां पहिला त्रिसंयोगविषैं बंधस्थान तेबीसकाविषैं उदयस्थान नव सत्वस्थान पंच कहे सो तेबीसका बंध एकेंद्री अपर्याप्त सहित है तातैं इस स्थानकौं देवनारकी बिना अन्य त्रस स्थावर तिर्यंच वा मनुष्य मिथ्यादृष्टी

यविषयसुखकारणसातवेदनीयबंध उदयात्मकः स्यादिति कारणकार्ययोः समानदेशता स्यात् । तर्हि तत्र विषयसुखसंवेदनं स्यादिति न वाच्यं तत्र मोहनीयकर्मनिर-
वशेषप्रक्षयात्स्वात्मोत्थानंतानंताक्षयसुखसंवेदनं निरंकुशवृत्त्या वर्तमाने सति कवलाहारादिविषयसुखसंवेदनं विरुध्यते । मोहनीयोदयबलाधानरहितसातवेदोदयस्य
वहिर्विषयसंनिधीकरणसामर्थ्यमेव स्यान्न तद्विषयसुखसंवेदनोत्पादकसामर्थ्यं । तथा चोक्तं—

घादिं व वेदणीयं मोहस्स बलेण घाददे जीवं । इति

अथवा मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानावरणानां क्षयः पृथगेव न दृश्यते क्षीणकषायचरमसमये एव णाणंतरायदसयं दंसणचत्तारीति चतुर्दशानां युगपत्प्रा-
णष्टत्वाज्जीवस्वभावगुणकेवलज्ञानदर्शनोपयोगोपयुक्तसयोगस्याक्षयानंतशक्तेः क्षायोपशमिकविभावगुणमत्यादिज्ञानोपयोगानामसंभवात् । अथवा सातवेदनीयोदय-
संजनितेंद्रियविषयकवलाहारादिभ्यो विषयसुखसंवेदनं केवलज्ञानेनेंद्रियज्ञानेन वा । इंद्रियज्ञानेन चेत् केवलज्ञानोपयोगस्याभावः प्रसज्यते एकस्यानेकवृत्तेरभा-
वात् । अन्यथा क्षायोपशमिकज्ञानं प्रसज्यते । अथ केवलज्ञानेन तदाऽनंताक्षयसुखतृप्तस्याशुचिवस्तुदर्शनांतरायपरिवर्जिताहारप्रवृत्तिगगनकुसुमोपमा स्यादिति ।
तथा तत्त्रयोविंशतिकमेकेंद्रियापर्याप्तयुतमिति तिर्यग्मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टय एव बध्नंति । तदा तेषामेकेंद्रियादिसर्वतिरश्चामिति ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही बांधै हैं। तहां एकेंद्रियादिक सर्व तिर्यंचनिकै बंध एकेंद्री अपर्याप्त सहित तेबीसका होइ तहां उदय इकईस चौईस पचीस छबीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। बहुरि मनुष्य कर्मभूमियानिकैं एकेंद्री अपर्याप्तयुत तेईसका बंध होइ तहां उदय इकवीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है।

बहुरि पचीसका बंध एकेंद्री पर्याप्त वा त्रस अपर्याप्त सहित है तातैं याकौं तिर्यंच मनुष्य देव मिथ्यादृष्टी ही बाधै है। तहां सर्व तिर्यंचनिकै एकेंद्री पर्याप्त त्रस अपर्याप्त युत पचीसका बंध होइ तहां उदय इकईस चौबीस पचीस छबीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। अर मनुष्यनिकैं तैसा ही बंध होइ तहां उदय इकवीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है। भवनत्रिक सौधर्मद्विक देवनिकैं एकेंद्री पर्याप्त युत ही पचीसका बंध हैं। तहां उदय इकईस पचीस सताइस अठाईस गुणतीस है सत्व बाणवै निवैका है।

बहुरि छबीसका बंध एकेंद्री पर्याप्त अर उद्योत आतपविषैं एककरि सहित है तातैं याकौं तिर्यंच मनुष्य देव विषैं मिथ्यादृष्टी ही बाधै हैं। तहां भी तेज बात साधारण सूक्ष्म अपर्याप्तनिकैं ताका उदय नाहीं है। तहां तिर्यंचनिकै एकेंद्री पर्याप्त उद्योत वा आतप सहित छबीसका बंध होइ तहां इकईस चौईस पचीस छबीस सताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। मनुष्यनिकै तैसा बंध होइ तहां उदय इकईस छबीस अठाईस गुणतीम तीसका है। सत्व बाणबै निवै अठ्यासी चौरासीका है। भवनत्रिक सौधर्म द्विक देवनिकैं तैसा ही बंध होइ तहां उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। बहुरि अठाईसका बंध नरक देवगति युत है तातै असंज्ञी संज्ञी तिर्यंच वा मनुष्य हैं ते विग्रहगति मिश्र शरीरकालकौं उलंघि पर्याप्तकालविषैं बाधैं हैं। तहां तिर्यंचनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं नरक देवयुत अठाईसका बंध होइ। तहां उदय अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। सत्व बाणवैं निबैं अठ्यासीका है। सासादनविषै देवयुत ९०४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही अठाईसका बंध है तहां सासादनविषैं उदय तीस इकतीसका सत्व निवैका है। मिश्रविषैं उदय तीस इकतीसका सत्व बाणबै निवैका है। असंयतविषैं उदय इकईस छब्बीस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका सत्व बाणवे निवैका है। देश संयतविषै उदय तीस इकतीसका सत्त्व बाणवै निवैका है। बियासीका सत्व सहित तेज बातकायवाले मरि तिर्यंचविषैं उपजैं तिनकैं विग्रहगति वा मिश्र शरीरकालविषैं तिर्यंचगतियुत तेवीस पचीस छबीस गुणतीसका बंध होतैं बियासीका सत्व संभवै है। मनुष्यद्विक सहित पचीस गुणतीसका बंध होतैं बियासीका सत्व न संभवै है। बहुरि चौरासीका सत्व एकेंद्री विकलेंद्रीकैं नारकचतुष्ककी उद्वेलना भएं होइ ते मरि पचेंद्री पर्याप्त तिर्यंचनिविषैं उपजैं तिनके भी पूर्वोक्त दोऊकालनिविषैं चौरासीका सत्व संभवै है तातैं अठाईसका बंधहोनेका कालविषै वियासी चौरासीका सत्व न कह्या।

बहुरि मनुष्यनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं नरक वा देव सहित अठाईसका बंध होइ तहां उदय अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै इक्याणवै निवै अठ्यासीका है। मनुष्यद्विककी उद्वलेना भएं वा न भएं तेज बातकायिकनिके मनुष्यायुके बंधका अभावतैं मनुष्यनिविषैं उपजना नाहीं हैं। तातैं वियासीका सत्व नाहीं। बहुरि नारक चतुष्ककी उद्वेलना सहित एकेंद्री विकलेंद्री मनुष्यविषैं उपजै तिनकैं विग्रहगति मिश्र शरीर कालविषैं अठाईसका बंध नाहीं तातैं चौरासीका भी सत्व नाहीं, शरीर पर्याप्ति भएं नारकचतुष्क वा देवचतुष्कका बंध होइ जाइ तहां अठ्यासीहीका सत्व है। बहुरि पूर्वैं नरकायुबंध सहित असंयत दूसरी तीसरी पृथ्वीका गमनकौं सन्मुख होइ तहां मिथ्यादृष्टी होइ नरकगति सहित अठाईसका बंध करै तहां तीसका उदय सहित इक्याणबैका सत्व संभवै है। बहुरि मनुष्यनिकैं सासादनादिकविषैं देवगतिसहितहीविषैं अठाईसका बंध है। तहां सासादनविषैं उदय तीसका सत्व निबैका है अर मिश्रविषैं उदय तीसका अर सत्व बाणवे निबैका है। असंयतविषैं उदय इकईस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व निवै बाणबैका है। इहां इक्याणवेका सत्व नाहीं जातैं तीर्थकर बंधका प्रारंभ भए पीछैं पूर्वैं नरकायु बंध बिना सम्यक्त्वतैं भ्रष्टता न होइ अर तीर्थंकरका बंध निरंतर है तातैं देवगति तीर्थ सहित गुणतीसका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही बंध होइ अठाईसका न होइ। देशसंयतविषैं उदय तीसका सत्व वाणवै निवैका है। प्रमत्तविषैं उदय पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीसका सत्व बाणवै निवैका है। अप्रमत्तविषैं उदय तीसका सत्व बाणवै निवैका है। अपूर्व करणविषैं उदय तीसका सत्व बाणवै निवैका है।

बहुरि गुणतीसका बंध वेंद्रियादिक त्रसपर्याप्त सहित वा तिर्यंचगति वा मनुष्य गति सहित वा देवगति तीर्थंकर सहित हो है। सो याकौ च्यार्यो गतिके जीव बांधै हैं। तहां नारकीनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीसका बंध होइ तहां उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सत्व बाणवै इक्याणवै निवैका है। इहां इक्याणवैका सत्व धर्मादि तीन नरकनिविषैं अपर्याप्त कालविषैं ही संभवै है। सासादनविषैं तैसा ही बंध होइ तहां उदय गुणतीसका सत्व वाणवै (वा निवैका) है। मिश्रविषैं मनुष्य सहित ही गुणतीसका बंध होइ तहां उदय गुणतीसका सत्व वाणवै वा निवैका है। असंयतविषैं भी मनुष्य सहित ही गुणतीसका बंध होइ तहां घर्मा नरकविषैं तौ उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सत्व बाणवै निवका है। वंशा मेघाविषैं उदय गुणतीसका सत्व वाणवै निवैका है अंजनादिकनिविषैं उदय गुणतीसका सत्व बाणवै निवैका है।

बहुरि तिर्यंचनिकै मिथ्यादृष्टिविषैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीसका बंध होइ तहां उदय इकईस चौईस पचीस छबीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी वियासीका है। सासादनविषैं पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीसका बंध होइ। तहां उदय इकईस चौबीस छबीस तीस (इकतीसका) है। सत्व निवैका है। इहां पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीसका उदय नाहीं है। बहुरि मिश्रादि तीनविषैं गुणतीसका बंध नाहीं जातैं तिर्यंचनिकैं तिर्यंच मनुष्यगतिकी सासादनविषैं ही व्युच्छित्ति भई है। तहां देवगतियुत अठाईसहीका बंध है। बहुरि मनुष्यनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्यसहित गुणतीसका बंध होइ तहां उदय इकईस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै इक्याणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है। इहां मनुष्यविषैं तेज वातकायिक न उपजै तातैं वियासीका सत्व न कह्या। बहुरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पूर्वे जाकैं नारकायुका बंध भया ऐसा जीव तीर्थंकरका बंधकरि नरककौं जाता मिथ्यादृष्टी भया तहां मनुष्यगति सहित गुणतीसका बंध करै ताहीकैं तीसका उदय सहित इक्याणवैका सत्व जानना । सासादनविषैं पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीसका बंध होइ तहां उदय इकईस छवीस तीसका सत्व निवैका है । मिश्रविषैं गुणतीसका बंध ही नाही। असंयतादिकविषैं देवगति तीर्थंकर सहित गुणतीसका बंध है। तहां असंयतविषैं उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका सत्व तरेणवै इक्याणवैका है। देशसंयतविषैं उदय तीसका सत्व तरेणवै इक्याणवैका है। प्रमत्तविषैं उदय पचीस सताईस अठाईस गुणतीस तीसका सत्व तरेणवै इक्याणवैका है। अप्रमत्तविषैं उदय तीसका सत्व तरेणवै इक्याणवैका है। अपूर्वकरणविषै उदय तीसका सत्व तरेणवै इक्याणवैका है बहुरि देवनिकैं भवनात्रिकादिक सहस्रार पर्यंत मिथ्यादृष्टिविषैं संज्ञी पंचेंद्री पर्याप्त तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीसका बंध होइ। तहां उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीस (तीस) का सत्व वाणवै निवैका है। सासादनविषैं तैसा ही बंध होइ तहां उदय इकईस पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीसका, सत्व निवैका है। मिश्रविषैं मनुष्ययुत गुणतीसका बंध होइ । तहां उदय गुणतीसका सत्व बाणवै निवैका है। असंयतविषैं मनुष्ययुत गुणतीसका बंध होइ । तहां उदय भवनत्रिककैं गुणतीसहीका औरनिकैं इकईस पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीसका है । सत्व सवनिकैं वाणवै निवैका है। बहुरि आनतादिक उपरिम ग्रैवेयक पर्यंतकैं मनुष्ययुत ही गुणतीसका बंध है। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं उदय इकईस पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीसका सत्व वाणवै निवैका है। सासादनविषैं उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका सत्त्व निवैका है मिश्रविषैं उदय गुणतीसका सत्व बाणवै निवैका है । असंयतविषैं उदय इकईस पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस (तीस) का, सत्व बाणवै निवैका है । बहुरि अनुदिश अनुत्तरकैं असंयतविषैं मनुष्ययुत गुणतीसका बंध होइ तहां उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका सत्व बाणवै निवैका है।

बहुरि तीसका बंध त्रस पर्याप्त उद्योत तिर्यंचगति सहित वा मनुष्यगति तीर्थंकर सहित वा देवगति आहारकद्विक सहित हो है। याकौं च्यारयां गतिके जीव बाधै हैं। तहां सर्व नारकीनिकैं मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं पंचेंद्री

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिर्यंच उद्योत सहित तीसका बंध होइ । तहां मिथ्यादृष्टिविषैं उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका सत्त्व बाणवै निवैका है। सासादनविषैं उदय गुणतीसका सत्व निवैका है। मिश्रविषैं तीसका बंध ही नाही। असंयत विषैं मनुष्य तीर्थंकर सहित तीसका बंध होइ। तहां धर्माविषै तौ उदय इक्कईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीस (तीस)का, सत्व इक्याणवैका है। वंशा मेघाविषैं उदय गुणतीसका सत्व इक्याणवैका है। अंजनादिकविषै ऐसा बंध नाहीं। बहुरि तिर्यंचनिकै मिथ्यादृष्टिविषै तिर्यंच उद्योत युत तीसका बंध होइ तहां उदय इकईस चौबीस पचीस छबीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है, सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। सासादन-विषैं पंचेंद्री तिर्यंच उद्योत सहित तीसका बंध होइ तहां उदय इककईस चौबीस छबीस तीस इकतीसका सत्व निवैका है। मिश्रादिकविषैं ऐसा बंधही नाहीं। बहुरि मनुष्यनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं वेंद्री तेंद्री चौंद्री पंचेंद्री तिर्यंच उद्योत युत तीसका बंध होइ तहां उदय इकईस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठयासी चौरा-सीका है। सासादनविषैं तिर्यंच उद्योत युत तीसका बंध होइ तहां उदय इकईस छबीस तीसका सत्व निवैका है। मिश्रादिक च्यारिविषैं तीसका बंध नाहीं। अप्रमत्त अपूर्वकरणविषैं देवगति आहारक सहित तीसका बंध होइ तहां उदय तीसका सत्व बाणवैका है। बहुरि देवनिकैं भवनत्रिकादिक सहस्रार पर्यंत तिर्यंच उद्योत सहित तीसका बंध होइ तहां मिथ्यादृष्टीविषैं उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीस तीसका सत्व बाणवै निवैका है। सासा-दनविषैं उदय इकईस पचीस गुणतीस (तीस) का सत्व निवैका है। मिश्रविषैं भवनत्रिकका असंयतविषैं तीसका बंध नाहीं। मनुष्यगति युत गुणतीसहीका बंध है। बहुरि सौधर्मादिक सहस्रार पर्यंत असंयतविषैं मनुष्य तीर्थंकर सहित तीसका बंध होइ तहां उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका सत्व तरेणवैं इक्याणवैका है। आन-तादि उपरिम ग्रैवेयक पर्यंत मिथ्यादृष्ट्यादि तीनविषैं तीसका बंध नाहीं। आनतादि सवार्थ सिद्धिपर्यंत असंयत-

१ यहांसे लेकर अंजनादिकविषैं ऐसा बंध नाही, यहां तकका संस्कृत टीकाका पाठ एक प्रतिके आधारसे दुहराकर छप गया है इसलिये विद्वान पाठक उसे संभालकर पढे। भाषा टीकामें जो पाठ हमने ब्रेकिटमें दिये हैं वे पाठ संस्कृत टीकामें नहिं मिले हैं इसलिये विद्वान पाठक शुद्धाशुद्धिका विचार करलें।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं मनुष्य तीर्थ युत तीसका बंध होइ तहां उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीस (तीस) का सत्व तरेणवै इक्याणवैका है। बहुरि इकतीसका बंध देवगति आहारकद्विक तीर्थंकर सहित हो है।

तातैं याकौं अप्रमत्त अपूर्वकरणवाले ही बांधै हैं तहां उदय तीसका सत्व तरेणवैका (आदि च्यारि) है। अनिवृत्तिकरणविषैं उदय तीसका सत्व तरेणवैका आदि च्यारि असीका आदि च्यारि है। सूक्ष्म सांपरायविषैं उदय तीसका सत्व तरेणवैका आदि च्यारि असीका आदि च्यारि है। बहुरि जहां बंध न पाइए। तहां उपशांतकषायविषैं उदय तीसका सत्व तरेणवैका आदि च्यारि है। क्षीणकषायविषैं उदय तीसका सत्व असीका आदि च्यारि है। सयोगीविषैं स्वस्थानकेवलीविषैं तो उदय तीस इकतीसका सत्व असी आदि च्यारिका है। समुद्घातकेवलीविषैं उदय बीस इकईस छबीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका सत्व असी आदि च्यारि है। अयोगीविषैं उदय तीस इकतीस नव आठका है। सत्व असी गुण्यासी अठहत्तरि सतहत्तरि दश नवका है॥७४५॥ आगे दूसरा भेद उदय आधार बंध सत्व आधेयरूप ताकौं कहैं हैं—

वीसादिसु बंधंसा णभदु छण्णव पणपणं च छसत्तं।
छण्णव छड दुसु छद्दस अट्ठदसं छक्कछक्क णभति दुसु॥७४६॥

विंशादिषु बंधाशा नभोद्विकं षण्णव पंच पंच च षट्सप्त।
षण्णव षडष्ट द्वयोः षड्दश अष्टदश षट्कषट्कं नभस्त्रिकं द्वयोः॥७४६॥

जी० प्र०—विंशतिकाद्युदयस्थानेषु बंधसत्त्वस्थानानि क्रमेण विंशतिके नभः द्विकं, एकविंशतिके षण्णव, चतुर्विंशतिके पंच पंच, पंचविंशतिके षट् सप्त, षड्विंशतिके षड्नव, सप्ताष्टाग्रविंशतिकयोः षडष्टौ। नवविंशतिके षड् दश, त्रिंशत्केऽष्टौ दश। एकत्रिंशत्के षट् षट् नवकाष्टकयोर्नभस्त्रीणि॥७४६॥ तानि कानीति चेदाह—

स० चं०—बीसकौं आदि देयकरि जे उदयस्थान तिनविषैं क्रमतैं बंधस्थान सत्वस्थान बीसकाविषैं शून्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दोय इकईसकाविषैं छह नव चौवीसकाविषैं पांच पांच पचीसकाविषैं छह सात छवीसकाविषैं छह नव सताईस अठाईसकाविषैं छह आठ गुणतीसकाविषैं छह दश तीसकाविषैं आठ दश इकतीसकाविषैं छह छह, नव आठकाविषैं शून्य तीन जानने। इतनी इतनी प्रकृतिनिका उदय होतैं किसी जीवकैं कोई किसी जीवकैं कोई ऐसैं बंधस्थान सत्वस्थान जानने ॥ ७४६ ॥ ते कौन ? सो कहिए है—

वीसुदये बंधो ण हि उणसीदीसत्तसत्तरी सत्तं।
इगिवीसे तेवीसप्पहुदीतीसंतया बंधा ॥ ७४७ ॥

विंशोदये बंधो नहि एकोनाशीतिसप्तसप्तती सत्त्वं।
एकविंशे त्रयोविंशप्रभृतित्रिंशांतका बंधाः ॥ ७४७ ॥

जी० प्र०—विंशतिके बंधो नहि। सत्त्वं नवसप्ताग्रसप्ततिके द्वे। एकविंशतिके बंधः त्रयोविंशतिकादीनि त्रिंशत्कांतानि षट् ॥ ७४७ ॥

स० चं०—वीसका उदयस्थानविषैं बंध नाहीं। सत्व गुण्यासी सतहत्तरिके दोय हैं। इकवीसका उदयविषैं बंध तेवीसका आदि तीसका पर्यंत छह हैं ॥ ७४७ ॥

सत्तं तिणउदिपहुदीसीदंता अट्ठसत्तरी य हवे।
चउवीसे पढमातियं णववीसं तीसयं बंधो ॥ ७४८ ॥

सत्त्वे त्रिनवतिप्रभृत्यशीत्यंतानि अष्टसप्ततिश्च भवेत्।
चतुर्विंशे प्रथमत्रयं नवविंशं त्रिंशत्कं बंधः ॥ ७४८ ॥

जी० प्र०—सत्त्वं त्रिनवतिकादीन्यशीतिकांतान्यष्टसप्ततिकं च स्यात्। चतुर्विंशतिके बंधः प्रथमत्रयं नवविंशतिकं त्रिंशत्कं च ॥ ७४८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—सत्व तरेणवैकानैं आदि देकरि असीका पर्यंत अर अठहत्तरिका है। बहुरि चौबीसका उदयविषैं बंध पहिले आदिके तीन स्थान अर गुणतीस तीस ऐसैं पांच हैं ॥ ७४८ ॥

बाणउदी णउदिचऊ सत्तं पणछस्सगट्ठणववीसे ।
बंधा आदिमछक्कं पढमिल्लं सत्तयं सत्तं ॥ ७४९ ॥

द्वानवतिर्नवतिचतुष्कं सत्त्वं पंचषट्सप्ताष्टनवविंशे ।
बंधा आदिमषट्कं प्रथमाद्यं सप्तकं सत्त्वं ॥ ७४९ ॥

जी० प्र०—सत्त्वं द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च। पंचषट्सप्ताष्टनवाग्रविंशतिकेषु बंधस्त्रयोविंशतिकादीनि षट्, सत्त्वं पंचविंशतिके आद्यसप्तकं ॥ ७४९ ॥

स० चं०—सत्व बाणवैका अर निवैकानैं आदि देकरि च्यारि ऐसैं पांच हैं। बहुरि पचीस छवीस सताईस अठाईस गुणतीस (तीस) का उदयविषैं बंध तेवीसकानैं आदि देकरि छह है। सत्व पचीसका उदयविषैं आदिके सात हैं ॥ ७४९ ॥

ते णवसगसदरिजुदा आदिमछस्सीदिअट्ठसदरीहिं ।
णवसत्तसत्तरीहिं सीदिचउक्केहिं सहिदाणि ॥ ७५० ॥

तानि नवसप्तसप्ततियुतानि आदिमषडशीत्यष्टसप्ततिभिः ।
नवसप्तसप्ततिभिरशीतिचतुष्कैः सहितानि ॥ ७५० ॥

जी० प्र०—षड्विंशतिके तानि नवसप्ताग्रसप्ततिकयुतानि । सप्तविंशतिके आद्यानि षडशीतिकाष्टसप्ततिकयुतानि । अष्टाविंशतिके तान्येव षट् नवसप्ताग्रसप्ततिकयुतानि । नवविंशतिके तान्येव षडशीतिकादीनि चत्वारि च ॥ ७५० ॥

स० चं०—छवीसका उदयविषैं सत्व ते आदिके सात अर गुण्यासी सतहत्तरिके दोय ऐसैं नव हैं। सताईसका उदयविषैं सत्व आदिके छह, असी अठहत्तरिके दोय ऐसैं आठ है। अठाईसका उदयविषैं सत्व आदिके

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

छह, गुण्यासी सतहत्तरिके दोय ऐसैं आठ हैं। गुणतीसका उदयविषैं सत्व आदिके छह, असीकानैं आदि देकरि च्यारि ऐसैं दश हैं॥ ७५० ॥

तीसे अट्ठवि बंधो ऊणत्तीसं व होदि सत्तं तु।
इगितीसे तेवीसप्पहुदीतीसंतयं बंधो ॥ ७५१ ॥

त्रिंशे अष्टापि बंध एकोनत्रिंशं न भवति सत्त्वं तु।
एकत्रिंशे त्रयोविंशप्रभृतित्रिंशांतको बंधः ॥ ७५१ ॥

जी० प्र०—त्रिंशत्के बंधस्थानान्यष्टौ। सत्त्वस्थानान्येकान्नत्रिंशत्कोदयोक्तानि दश। एकत्रिंशत्के बंधः त्रयोविंशतिकादीनि त्रिंशत्कांतानि षट् ॥

स० चं०——तीसका उदयविषैं बंधस्थान आठ सत्व गुणतीसका उदयवत् दश हैं। इकतीसका उदयविषैं बंध तेवीसका आदि तीसका पर्यंत छह हैं॥ ७५१ ॥

सत्तं दुणउदिणउदीतिय सीदडहत्तरी य णवगट्ठे।
बंधो ण सीदिपहुदीसुसमविसमं सत्तमुद्दिट्ठं ॥७५२॥

सत्त्वं द्विनवतिनवतित्रिकमष्टाशीत्यष्टसप्ततिश्च नवकाष्टसु।
बंधो नाशीतिप्रभृतिसुषमविषमं सत्त्वमुद्दिष्टं ॥ ७५२ ॥

जी० प्र०—सत्त्वं द्वानवतिकं नवतिकत्रयमशीतिकमष्टसप्ततिकं च। नवकेऽष्टके च बंधो नहि सत्त्वं क्रमेणाशीतिकादि षट्के समविषमाणि। विंशतिकं वितीर्थसमुद्‌घाते तत्र न नाम बंधः। सत्त्वं नवसप्ताग्रसप्ततिके द्वे। एकविंशतिकं सतीर्थप्रतरद्वयलोकपूरणे तत्रापि न नाम बंधः। सत्त्वं दशाष्टाग्रसप्ततिके द्वे, सानुपूर्व्यं चतुर्गतिविग्रहगतौ। तत्र नारकेषु घर्मादित्रये मिथ्यादृष्टौ—

उ २१ बं २९ पं। ति। म। ३० ति। उ। स। ९२। ९१। ९०। न सासादनमिश्रयोः। असंयते घर्मायामेव उ २१। बं २९। म ३० ती। स ९२। ९१। ९०। अंजनादौ मिथ्यादृष्टौ उ २१ बं २९ पं ति म ३० ति। उ। स। ९२। ९०। न सासादनादौ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । सासादने उ २१ बं २९ । पं । ति म । ३० ति । उ । स ९० । न मिश्रदेशसंयतयोः । असंयते उ २१ । बं २८ दे । स ९२ । ९० ।

मनुष्ये मिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । सासादने उ २१ । बं २९ पं ति म । ३० ति । उ । स ९० । न मिश्रे । असंयते उ २१ बं २८ दे । २९ दे । ती । स ९३ । ९२ । ९१ (९०) न देशसंयतादौ ।

भवनत्रयकल्पस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २५ । २६ (२८) २९ । ३० । स ९२ । ९० । सासादने । उ २१ । बं २९ । पं ति म । ३० ति उ । स ९० । न मिश्रासंयतयोः । सौधर्मद्वयमिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २५ । २६ (२८) २९ । ३० । स ९२ ९० । सासादने उ २१ बं २९ पं ति म । ३० ति उ । स ९० । न मिश्रे । असंयते उ २१ । बं २९ । म । ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २९ पं ति । म । ३० ति । उ । स ९२ । ९० । सासादने उ २१ । बं २९ पं ति म । ३० । ति । उ । स ९० । न मिश्रे । असंयते । उ २१ । बं २९ म । ३० म । ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । उपरिमग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ उ २१ । बं २९ । म । स ९२ । ९० । सासादने उ २१ । बं २९ म । स ९० । न मिश्रे । असंयते—उ २१ । बं २९ म । ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । उपरि चतुर्दशविभागेषु सम्यग्दृष्टौ—उ २१ । बं २९ । म ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । चतुर्विंशतिकमपर्याप्तैकेंद्रियमिथ्यादृष्टावेव तत्र लब्ध्यपर्याप्ते—

उ २४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । निर्वृत्त्यपर्याप्ते उ २४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । अत्र तेजोवायूनां मनुष्यगतियुतबंधस्थानभेदाः सर्वसूक्ष्मापर्याप्ततेजोवायुसाधारणैः सहातपोद्योतयुतबंधभेदाश्च त्याज्याः ।

पंचविंशतिकं चतुर्गत्यपर्याप्तेषु पर्याप्तैकेंद्रियेषु च । तत्र नारके मिथ्यादृष्टौ—उ । २५ । बं २९ पं । ति । म । ३० ति । उ । स ९२ । ९१ । ९० न सासादनेऽत्रमृतस्य नरकेऽनुत्पत्तेः । नापि मिश्रे, अत्रामरणात् । असंयते घर्मायां उ २५ । बं २९ म । ३० म ती । स ९२ । ९१ । ९० । न वंशामेघयोः शरीरपर्याप्तेरुपर्येतत्सम्यक्त्वोत्पत्तेः, नांजनादौ । एकेंद्रियेषु परघातयुतं उ २५ । ए प । बं २३ । २५ । २६, २९, ३०, स ९२, ९०, ८८, ८४, ८२, न त्रसेषु तत्रांगोपांगसंहननयुतषड्विंशतिकोदयसंभवात्, प्रमत्तस्याहारकशरीरे संहननोनांगोपांगयुतं उ २५, बं २८ दे, २९ दे ती । स ९३, ९२,

भवनत्रयकल्पजस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २५, बं २५, २६, २९, ३०, स ९२, ९०, सासादने उ २५, बं २९ पं ति म, ३० ति उ, स ९०, न मिश्रे नाप्यसंयते सम्यग्दृष्टेस्तत्रानुत्पत्तेः, सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २५, बं २५, २६, २९, ३० ति उ । स ९२, ९०, सासादने उ २५, बं २९ पं ति म, ३०, ति, उ, स ९०, न मिश्रे, असंयते उ २५, बं २९ म, ३० म ती । स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरिमदशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २५, बं २९ पं ति म । ३० ति उ । सासादने उ २५ । बं २९ पं ति म । ३० ११३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ति उ । स ९० । न मिश्रे । असंयते उ २५ । बं २९ म , ३० म ती । स ९३ , ९२ , ९१ , ९० , उपरिमग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ उ २५ , बं २९ म , स ९२ , ९० , सासादने उ २५ । बं २९ म । स ९० । न तन्मिश्रे । असंयते उ २५ बं २९ म । ३० म ती । स ९३ , ९२ , ९१ , ९० ।

षड्विंशतिकं त्रसलब्धिनिर्वृत्त्यपर्याप्ते संहननयुतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि त्रिंशत्कांतान्यष्टाविंशतिकं विना पंच । सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च । एकेंद्रिये मिथ्यादृष्टौ शरीरपर्याप्तावातपोद्योतयुतमुच्छ्वासनिश्वासयुतं च । उ २६ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । ८२ । न सासादने तदुदयात्प्रागेव सासादनत्यजनादत्र चतुर्विंशतिकमुदेतीत्यर्थः । तिर्यक्सासादने बंधो नवविंशतिकत्रिंशत्के । सत्त्वं नवतिकं । मिच्छदुगे देवचऊ णोति नाष्टाविंशतिकबंधः । न मिश्रे । असंयते बंधोऽष्टाविंशतिकं । सत्त्वं द्वानवतिकनवतिके द्वे । न देशसंयते । मनुष्येषु मिथ्यादृष्टौ उ २६ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । सासादने उ २६ । बं २९ ति । म । ३० ति उ । स ९० । न मिश्रे । असंयते उ २६ , बं २८ दे । २९ दे ती , स ९३ , ९२ , ९१ , ९० , न देशसंयतादौ । वितीर्थकवाटे उ २६ , बं० , स ७९ , ७७ ।

सप्तविंशतिकं चतुर्गतिशरीरपर्याप्त्येकेंद्रियोच्छ्वासपर्याप्तिकाले । तत्र घर्मादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २७ , बं २९ ति म , ३० ति उ , स ९२ , ९० , तीर्थयुतसत्त्वस्थानमत्र न संभवति शरीरपर्याप्तेरुपरि तत्सत्त्वमिथ्यादृष्टेः सम्यक्त्वोत्पत्तेः । न सासादनमिश्रयोः । असंयते घर्मायां—उ २७ । बं २९ म । ३० म ती । स ९२ । ९१ ९० । वंशामेघयोः उ २७ , बं ३० म ती , स ९१ , अंजनादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २७ , बं २९ ति म , ३० ति उ , स ९२ , ९० , माघव्यां उ २७ , बं २९ ति , ३० ति उ , स ९२ , ९० , न सासादनादौ । एकेंद्रियेषूच्छ्वासनिश्वासयुतातपोद्योतान्यतरयुतं । उ २७ , २३ , २५ , २६ , २९ , ३० , स ९२ , ९० , ८८ , ८४ , द्व्यशीतिकं तु विकल्प्यं तेजोवायुभ्यः शेषैकेंद्रियेषूच्छ्वासपर्याप्तिकाले मनुष्यद्विकस्य बंधात् । आहारकर्द्धौ उ २७ , बं २८ दे , २९ दे ती , स ९३ , ९२ , सतीर्थकवाटे उ २७ , बं० , स ८० , ७८ , भवनत्रयकल्पजस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २७ , बं २५ , २६ , २९ ति म , ३० ति उ , स ९२ , ९० , न सासादनादौ सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २७ बं २५ , २६ , २९ ति म , ३० ति उ , स ९२ , ९० , न सासादनमिश्रयोः , असंयते उ २७ , बं २९ ति , ३० म ती , स ९३ , ९२ , ९१ , ९० , उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २७ , बं २९ ति म , ३० ति उ , स ९२ , ९० , न सासादनमिश्रयोः , असंयते उ २७ , बं २९ म , ३० म ती , स ९३ , ९२ , ९१ । ९० । उपरि ग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ उ २७ , बं २९ म , स ९२ , ९० , न सासादनमिश्रयोः । असंयते । उ २७ । बं २९ । म ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अनुदिशानुत्तरासंयते उ २७ । बं २९ म । ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अष्टाविंशतिकं तिर्यग्मनुष्यशरीरपर्याप्तिदेवनारकोच्छ्वासपर्याप्त्योः । तत्र नारके घर्मायां मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २९ ति म । ३० ति उ । स ९२ । ९० । नात्रैकनवतिकसत्त्वं तत्र गंतुस्तत्सत्त्वस्य सम्यक्त्वात्यजनात् । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८ । बं २९ म । ३० म ती । स ९२ । ९१ । ९० । वंशामेघयोर्मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २९ ति म । ३० ति उ । स ९२ । ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते । उ २८ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३० म । ती । स ९१ । अंजनादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २९ । ति म । ३० ति उ । स ९२ । ९० । न सासादनादौ । माघव्यां मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ ति । ३० ति उ । स ९२ । ९० । न सासादनादौ । तिर्यग्गतौ मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८ । बं २८ दे । स ९२ । ९० । न देशसंयते । मनुष्यगतौ मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८ । बं २८ दे । ३० दे ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । न देशसंयते । आहारकर्द्ध्युच्छ्वासपर्याप्तौ उ २८ । बं २८ दे । २९ दे ती । स ९३ । ९२ । वितीर्थदंडसमुद्घातस्यौदारिकयोगे उ २८ । बं० । स ७९ । ७७ । भवनत्रयकल्पजस्त्रीषु मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २५ । २६ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । न सासादनादौ । सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २५ । २६ । ३० । स ९२ । ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८ । बं २९ म । ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २९ ति म । ३० ति उ । स ९२ । ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८ । बं २९ म । ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । आनताद्युपरिमग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ उ २८ । बं २९ म । स ९२ । ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २८ । बं २९ म । ३० म ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । अनुदिशानुत्तरासंयते उ २८ । बं २९ म । ३० म । ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० ।

नवविंशतिकं नारकेषु भाषापर्याप्तिकाले दुःस्वरयुतं । न घर्मायां मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २९ ति म । ३० ति । उ । स ९२ । ९० । सासादने उ २९ । बं २९ ति म । ३० ति । उ । स ९० । मिश्रे उ २९ । बं २९ म । स ९२ । ९० । असंयते उ २९ । बं २९ म । ३० म ती । स ९२ । ९१ । ९० । वंशामेघायोर्मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २९ ति म । ३० ति । उ । स ९२ । ९० । सासादने उ २९ । बं २९ म ति । ३० ति उ । स ९० । मिश्रे उ २९ । बं २९ म । स ९२ । ९० । असंयते । उ २९ म । ३० म ती । स ९२ । ९१ । ९० । अंजनादित्रये मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २९ ति म । ३० ति । उ । स ९२ । ९० । सासादने उ २९ । बं २९ ति म । ३० ति उ । स ९० । मिश्रे । उ २९ । बं २९ म । स ९२ । ९० । असंयते उ २९ । बं २९ म । स ९२ । ९० । माघव्यां मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २९ ति । ३० ति उ । स ९२ । ९० । सासादने उ २९ । ब २९ ति । ३० ति उ । स ९० । मिश्रे । २९ । बं २९ म । स ९२ । ९० । असंयते उ २९ । बं २९ म । स ९२ । ९० । तिर्यक्त्रसे शरीरपर्याप्तावुद्योतयुतं । तत्र मिथ्यादृष्टौ उ २९ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । ८८ । ८४ । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २९ । बं २८ दे । स ९२ । ९० । न देशसंयते । मनुष्येषूच्छ्वासपर्याप्तावुच्छ्वासयुते । तत्र मिथ्यादृष्टौ उ २९ बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । स ९२ । ९० । न सासादनमिश्रयोः । असंयते उ २९ । बं २८ दे । २९ दे ती । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । न देशसंयते । आहारकर्द्धिभाषापर्याप्तौ सुस्वरयुतं । उ २९ । बं २८ । दे २९ दे ती । स ९३ । ९२ । सतीर्थदंडसमुद्घाते । उ २९ । बं० । स ८० । ७८ । वितीर्थकेवलिनो मूलशरीरप्रविष्टोच्छ्वासपर्याप्तावुच्छ्वासयुतं । उ २९ । बं ० । स ७९ । ७७ । भवनत्रयकल्पस्त्रीषु भाषापर्याप्तौ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सुस्वरयुतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ उ २९। बं २५। २६। २९। ३०। स ९२। ९०। सासादने। उ २९ बं २९ ति म। ३० ति। उ। स
९०। मिश्रे उ २९। बं २९ म। स ९२। ९०। असंयते। उ २९। बं २९ म। स। ९२। ९०। सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ उ २९। बं २९।
ति म, ३० ति उ, स ९२, ९०, सासादने उ २९, बं २९ ति म, ३० ति उ, स ९०, मिश्रे २९, बं २९ म, स ९०,
असंयते। उ २९, बं २९ म, ३० म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरिदशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २९ ति म, ३० ति उ,
स ९३, ९२, ९०, सासादने उ २९, बं २९ ति म। ३० ति उ, स ९०, मिश्रे उ २९, बं २९ म, स ९२, ९०, असंयते उ
२९, बं २९ म ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, उपरिमग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ उ २९, बं २९ म, स ९२, ९०, सासादने उ २९ बं २९
म। स ९०। मिश्रे उ २९। बं २९। म। स ९२। ९०। असंयते उ २९। बं २९ म। ३० म ती। स ९३। ९२। ९१। ९०। अनुदि-
शानुत्तरासंयते उ २९। ब २९ म। ३० म ती। स ९३। ९२। ९१। ९०। त्रिंशत्कं तिर्यग्मनुष्ययोरेव संहननयुतत्वात्। तत्र तिर्यक्षूच्छ्वा-
सपर्याप्तावुद्योतयुतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ उ ३०। बं २३। २५। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। न सासादनमिश्रयोः।
असंयते उ ३०। बं २८ दे। स ९२। ९०। न देशसंयते। भाषापर्याप्तौ उद्योतवियुतसुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं। तत्र मिथ्यादृष्टौ उ ३०। बं २३।
२५। २६। २८। २९। ३०। स ९२। ९०। ८८। ८४। अत्राष्टाशीतिकचतुरशीतिकसत्त्वं विकलत्रयापेक्षं। एषामेव सुरद्विकनारकचतु-
ष्कोद्वेल्लने कृते पुनर्बंधस्याभावात्। सासादने उ ३०। बं २९ ति म। ३० ति। उ। स ९०। मिश्रे उ ३०। बं २८ दे। स ९२। ९०।
असंयते उ ३०। बं २८ दे। स ९२। ९०। देशसंयते उ ३०। बं २८ दे। स ९२। ९०। मनुष्येषु सतीर्थमूलशरीरप्रविष्टयोरुच्छ्वासयुतं।
उ ३०। बं०। स ८०। ७८। वितीर्थमूलशरीरप्रविष्टस्य भाषापर्याप्तौ सुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं। उ ३०। बं०। स ७९। ७७। मिथ्यादृष्टौ भा-
षापर्याप्तौ सुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं उ ३०। बं २३। २५। २६। २८। २९ (३०) स ९२। ९१। ९०। अत्र सतीर्थसत्त्वं नरकगमनाभिमु-
खापेक्षं। सासादने उ ३०। बं २९ ति म। ३० ति उ। स ९०। मिश्रे उ ३०। बं २८ दे। स ९२। ९०। असंयते उ ३०
बं २८ दे। २९ दे ती। स ९३। ९२। ९१। ९०। देशसंयते उ ३०। बं २८ दे। २९ दे ती। स ९३। ९२। ९१। ९०। प्रमत्ते उ ३०।
बं २८ दे, २९ दे ती, स ९३, ९२, ९१, ९०, अप्रमत्ते उ ३०, बं २८ दे, २९ दे ती, ३० दे आ, ३१ दे ती आ, स ९३,
९२, ९१, ९०, उभयापूर्वकरणषष्ठभागे उ ३०, बं २८ दे, २९ दे ती, ३० दे आ, ३१ दे ती आ, स ९३, ९२, ९१,
९०, सप्तमभागे उ ३०, बं १, स ९३, ९२, ९१, ९०, अनिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपराययोः उ ३०, बं १, स ९३, ९२, ९१,
९०, ८०, ७९, ७८, ७७, उपशांतकषाये उ ३०, बं०, स ९३, ९२, ९१, ९०, क्षीणकषाये उ ३०, बं०, स ८०, ७९, ७८,
७७, सयोगे उ ३०, बं०, ८०, ७९, ७८, ७७, नायोगे।

एकत्रिंशत्कं तिर्यक्त्रसमिथ्यादृष्टावुद्योतयुतं। भाषापर्याप्तौ सुस्वरदुःस्वरान्यतरयुतं। उ ३१, बं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, स ११६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

९२ , ९० , ८८ , ८४ , सासादने उ ३१ , बं २८ दे , २९ ति म , ३० ति उ , स ९० , मिश्रे उ ३१ , बं २८ दे , स ९२ , ९० , असंयते उ २१ , बं २८ दे , स ९२ , ९० , देशसंयते उ ३१ , बं २८ दे , स ९२ , ९० , मनुष्येषु न क्षीणकषायांतं सयोगे सतीर्थे । भाषापर्याप्तौ उ ३१ , बं० , स ८० , ७८ ।

नवकमयोगिचरमसमय एव । उ ९ , बं० , स ८० , ७८ , १० , अष्टकमपि तत्रैव तीर्थवियुते उ २८ , बं० , स २९ , ७७ , ९ ॥ ७५२ ॥

एवमुदयस्थानाधिकरणे बंधसत्त्वस्थानान्याधेयत्वेनागमाविरोधेन योजयित्वा सत्त्वस्थानाधिकरणे बंधोदयसत्त्वस्थानान्याधेयत्वेन गाथासप्तकेनाह—

स० चं०—सत्व बाणवैका अर निवैका आदि तीन अर असी सतहत्तरिके दोय ऐसैं छह हैं । नवका आठका उदयविषैं बंध नाहीं सत्व असीनैं आदि देकरि छहविषैं समरूप तो नवकाविषै तीन अर विषमरूप आठकाविषैं तीन जानने ॥ ७५२ ॥ अब इनिका विशेष कहिए हैं—

बीसका उदय तीर्थंकर रहित सामान्यकेवलीका समुद्घातविषैं होइ तहां बंधका अभाव सत्व गुण्यासी सतहत्तरिके दोय हैं ।

बहुरि इकईसका उदय तीर्थंकरका प्रतर करने समेटनेविषैं वा लोक पूरणविषैं होइ तहां बंध नाहीं सत्व असी अटहत्तरिके दोय हैं । बहुरि आनुपूर्वी सहित इकईसका उदय च्यारूं गतिका विग्रहगतिकालविषैं होइ तहां नारकीनिकै घर्मादि तीनका मिथ्यादृष्टिविषैं बंध पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है । सत्व बाणवै इक्याणवे निवैका है । सासादनविषैं मिश्रविषैं इकईसका उदय ही नाहीं । असंयतविषैं घर्मा नरकविषैंही इकईसका उदय है । तहां बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा तीर्थ सहित तीसका है । सत्व बाणवै इक्याणवै निवैका है । अंजनादि तीनका मिथ्यादृष्टिविषैं बंध पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है । सत्त्व बाणवै निवैका है । इहां सासादनादिविषैं इकईसका उदय नाहीं । बहुरि तिर्यंचनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेवीस पचीस छबीस गुणतीस तीसका है . सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है । सासादनविषै बंध पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य युत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है । सत्व निवैका है । मिश्र देशसंयतविषैं इकईसका उदय नाहीं, असंयतविषैं है, तहां बंध देवयुत अठाईसका सत्व बाणवे

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निवैका है। बहुरि मनुष्यनिकैं इकईसका उदय होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेवीस पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है। सासादनविषैं बंध पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योत युत तीसका है। सत्व निवैका है। मिश्रविषैं इकईसका उदय नाहीं। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईस देव तीर्थयुत गुणतीसका है। सत्व तरेणवै बाणवै इक्याणवैका है। देशसंयतादिकविषैं इकईसका उदय ही नाहीं। बहुरि देवनिका भवनत्रिक देव कल्पवासिनी स्त्रीनिकैं इकईसका उदय होइ, तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादनविषैं बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व निवैका है। मिश्र असंयतविषैं असा उदय नाहीं है। बहुरि सौधर्मविषै असा उदय होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादनविषैं तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत युत तीसका है। सत्व निवैका हैं। मिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है। ऊपरि दश स्वर्गनिविषै मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादन अविरतविषैं सौधर्मद्विकवत् जानना। उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मिथ्यादृष्टिविषैं बंधस्थान मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व बाणवै निवैका है। सासादनविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व निवैका है। मिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा तीर्थयुत तीसका है। सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है। ऊपरि चौदह बिमान संबंधी असंयतविषैं भी असैं ही दोय बंध च्यारि सत्त्व हैं।

बहुरि चौबीसका उदय अपर्याप्त एकेंद्री मिथ्यादृष्टिविषैं ही है। तहां लब्धि अपर्याप्तकविषैं बंध तेवीस पचीस छबीस गुणतीस तीसका सत्व बाणबै निबै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। असैं ही निर्वृत्ति अपर्याप्तकविषैं है। विशेष इतना—

जो तेज बातकायिक जीवनिकैं मनुष्यगति सहित बंध स्थानकनिके भेद बहुरि सर्व सूक्ष्म अपर्याप्त तेज बात साधारण सहित आतप उद्योत युत बंधके भेद छोडि देने। ९१८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि पचीसका उदय च्यारूं गतिके जीवनिकैं अपर्याप्त कालविषैं वा पर्याप्त एकेंद्रीविषैं संभवै है। तहां पचीसका उदय होतैं सर्व नारकीनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं वा धर्मा नरकका असंयतविषैं इकईसका उदयवत् बंध वा सत्व जानना। नारकीनिकैं अपर्याप्त कालविषैं अन्य गुणस्थान हैं नाहीं। बहुरि एकेंद्रीविषैं परघातयुत पचीसका उदय होय तहां बंध तेवीस पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। त्रसविषैं पचीसका उदय नाहीं जातैं तहां अंगोपांग संहनन सहित छबीसका ही उदय हो है। बहुरि मनुष्य प्रमत्त गुणस्थानवर्तीकैं आहारक शरीरविषैं संहनन रहित अंगोपांग सहित छबीसका ही उदय हो है। बहुरि मनुष्य प्रमत्त गुणस्थानवर्तीकैं आहारक शरीरविषैं संहनन रहित अंगोपांग सहित पचीसका उदय है। तहां बंध देवयुत अठाईस वा देव तीर्थसहित गुणतीसका है। सत्व तरेणवै बाणवैका है। बहुरि देवनिकैं पचीसका उदय होइ तहां जैसैं इकईसका उदयविषैं बंध सत्व कहे तैसैं ही बंध सत्व जानने।

बहुरि छबीसका उदय त्रस लब्धि अपर्याप्त निर्वृत्ति अपर्याप्तककैं संहनन सहित है। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंधस्थान तेबीसका आदि अठाईसका बिना तीसका पर्यंत पांच है। सत्वस्थान बाणवैका अर निवैका आदि च्यारि हैं। बहुरि एकेंद्री मिथ्यादृष्टिकैं शरीर पर्याप्तिविषैं उद्योत वा आतप उच्छ्वास सहित छब्बीसका उदय है। तहां बंध तेईस पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीका है। सासादनविषैं छबीसका उदय नाहीं जातैं इस उदयके होतैं पहिलैं ही सासादनकौं छाडै हैं। तहां चौबीसका ही उदय है। बहुरि तिर्यंच पंचेंद्रीकैं सासादनविषैं छबीसका उदय होइ तहां बंध गुणतीस तीसके दोय हैं। सत्व निवैहीका है। 'मिच्छदुगे देवचऊ ण' इस बचनतैं अठाईसका बंध नाहीं। मिश्रविषैं छब्बीसका उदय नाहीं। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका सत्व बाणवै निवैका है। देशसंयतविषैं छबीसका उदय नाहीं। बहुरि मनुष्यनिकैं छबीसका उदय होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेवीस पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है। सासादनविषैं बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका, सत्व निवैका है। मिश्रविषैं ऐसा उदय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नाहीं। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका, देव तीर्थसहित गुणतीसका है। सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है। देशसंयतादिकविषैं ऐसा उदय नाहीं। तीर्थंकर विना सामान्य केवलीकैं कपाटविषैं छवीसका उदय होइ तहां बंध नास्ति, उदय गुण्यासी वा सतहत्तरिका है।

बहुरि सत्ताईसका उदय च्यारूं गतिविषैं शरीरपर्याप्तिविषैं एकेंद्रीकैं उच्छ्वास पर्याप्ति कालविषैं हो है। सो जहां सताईसका उदय होइ तहां नारकीनिकैं धर्मादि तीन नरकनिविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। इहां तीर्थंकर सहित सत्वस्थान न संभवै है जातैं शरीर पर्याप्तिकैं ऊपरि तीर्थसत्व सहित नारकीनिकैं सम्यक्त्व ही होइ जाइ तब चौथा गुणस्थान होइ। बहुरि सासादन मिश्रविषैं ऐसा उदय ही नाहीं। असंयतविषैं धर्मादिविषैं तौ बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्व बाणवै इक्याणवै निवैका है। बंशा मेघाविषैं बंध मनुष्य तीर्थसहित तीसहीका है सत्व इक्याणवैका है। बहुरि अंजनादि तीनविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। माघवीविषैं बंध तिर्यंचयुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादनादिकविषैं ऐसा उदय नाहीं। बहुरि एकेंद्रियनिकैं उश्वास निश्वासयुत वा आतप उद्योतविषैं एककरियुत सताईसका बंध होइ। तहां बंध तेवीस पचीस छवीस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है। तेज बात विना अन्य एकेंद्रियनिकैं उस्वास पर्याप्तिकालविषैं मनुष्यद्विकका बंध संभवै है। तातैं वियासीका सत्व यथासंभव जानना। बहुरि आहारक शरीरवालेकैं सत्ताईसका उदय होइ तहां बंध देवयुत अठाईस वा देव तीर्थयुत गुणतीसका है। सत्व तरेणवै बाणवैका है। तीर्थंकरका कपाट समुद्घातविषैं सताईसका उदय होइ तहां बंधका अभाव, सत्व असी अठहत्तरिका है। बहुरि देवनिकैं भवनत्रिक देव कल्पवासिनी स्त्रीनिकैं तौ मिथ्यादृष्टिविषैं बंध पचीस छवीस, तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादनादिकविषैं ऐसा उदय ही नाहीं। इहां शरीरपर्याप्तिकालविषैं सासादन छोडि मिथ्यादृष्टि होइ जाइ तातैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सासादन भी न कह्या है। सौधर्मद्विकका मिथ्यादृष्टिविषैं बंध वा सत्व भवनत्रिकवत् है। सासादनमिश्रविषैं असा उदय नाहीं। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है। ऊपरि दश स्वर्गनिविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंचमनुष्ययुत गुणतीसका तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादनमिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं सौधर्मद्विकवत् बंध सत्व है। उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मिथ्यादृष्टिविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व बाणवै निवैका है। असंयतविषैं वा अनुदिश अनुत्तरका असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है।

बहुरि अठाईसका उदय तिर्यंच मनुष्यकैं शरीरपर्याप्तिकालविषैं वा देव नारकीकैं उश्वासपर्याप्तिकालविषैं है। सो जहां अठाईसका उदय होइ तहां नारकीनिकैं धर्माविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं तौ बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका, सत्व बाणवै निवैका है। इहां इक्याणवैका सत्व नाहीं जातैं तिस सत्ववाला धर्मा नरकविषैं जाइ सो सम्यक्त्वतैं भ्रष्ट न होइ। सासादनविषैं मिश्रविषैं असा उदय नाहीं। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्व बाणवै इक्याणवै निवैका है। वंशा मेघाविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध सत्व धर्मावत्। सासादनमिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं मनुष्य तीर्थयुत तीसका ही, सत्व इक्याणवैहीका है। अंजनादि तीनिविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध सत्व धर्मावत् है। सासादनादिकविषैं असा उदय ही नाहीं। माघवीविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंचयुत गुणतीसका तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। सत्व बाणवै निवैका है। सासादनादिकविषैं असा उदय नाहीं। बहुरि तिर्यंचनिकैं अठाईसका उदय होतैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेवीस पचीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका है। सासादनमिश्रविषैं असा उदय नाहीं। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका सत्व बाणवै निवैका है। देशसंयतविषैं नाहीं। बहुरि मनुष्यनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध सत्व तिर्यंचवत्। सासादनमिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईस वा देवतीर्थयुत गुणतीसका है। सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है। देशसंयतविषैं नाहीं। आहारकका उश्वास पर्याप्तिविषैं अठाईसका उदय होइ तहां बंध

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देवयुत अठाईस वा देव तीर्थयुत गुणतीसका सत्व तरेणवे बाणवैका है। तीर्थंकर रहितका दंड समुद्घातका औदारिक योगविषैं अठाईसका उदय होइ बंधका अभाव सत्व गुण्यासी सतहत्तरिका है। बहुरि देवनिकैं जैसैं सताईसका उदयविषैं बंध सत्व कहे तैसैं ही अठाईसका उदय होतैं भी जानने।

बहुरि गुणतीसका उदय नारकीनिकै भाषा पर्याप्तिकालविषैं दुःस्वर सहित हो है। तहां सर्व नारकीनिकैं मिथ्यादृष्टिविषै बंध मनुष्यतिर्यंचयुत गुणतीस वा तिर्यंचयुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। तहां माघवी विषैं मनुष्ययुतका बंध नाहीं है। सत्व बाणवे निवैका है। सासादनविषैं बंध मिथ्यादृष्टिवत्, सत्व निवैका है। मिश्रविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व बाणवे निवैका है। असंयतविषैं धर्मा वंशा मेघा नरकत्रिषैं तौ बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका है। सत्व बाणबे निवै इक्याणवैका है। अंजनादि च्यारिविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व बाणवे निवैका है। बहुरि त्रस तिर्यंचनिकै शरीर पर्याप्तिकालविषै उद्योतयुत गुणतीसका उदय होय। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेवीस पचीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणबे निवे अठ्यासी चौरासीका है। सासादन मिश्रविषैं नाही। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका सत्व बाणबे निवैका है। देशसंयतविषैं नाहीं। बहुरि मनुष्यनिकैं उश्वास पर्याप्तिकालविषै उश्वासयुत गुणतीसका उदय होय। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध सत्व तिर्यंचवत्। सासादन मिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईस वा देव तीर्थयुत गुणतीसका सत्व तरेणबे आदि च्यारिका है। देश संयतविषै नाहीं। आहार शरीरका भाषापर्याप्ति कालविषैं सुस्वर सहित गुणतीसका उदय होइ तहां बंध देवयुत अठाईस देव तीर्थयुत गुणतीसका सत्व तरेणवैं बाणवैका है। तीर्थंकरका दंड समुद्घातविषैं गुणतीसका उदय होइ तहां बंधका अभाव सत्व असी अठहत्तरिका है। तीर्थकर रहित केवलीकै मूल शरीरविषैं प्रवेशकरतां उश्वास पर्याप्तिकालविषैं उश्वासयुत गुणतीसका उदय होइ। तहां बंधका अभाव सत्व गुण्यासी सतहत्तरिका है। देवनिकैं भाषापर्याप्ति कालविषैं सुस्वर सहित गुणतीसका उदय होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं भवनत्रिक कल्पवासिनी स्त्रीकैं बंध पचीस छबीस गुणतीस तीसका है। बारह स्वर्गनिविषैं तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उद्योतयुत तीसका है। उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मनुष्य युत गुणतीसका ही है। सत्व सर्वत्र बाणवै निबैका है। अर सासादनबिषैं भवनत्रिकादि बारह्वां स्वर्गपर्यंत तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मनुष्ययुत गुणतीसहीका है। सत्व सर्वत्र निबैका है। मिश्रविषैं सर्वत्र उपरि ग्रैवेयक पर्यंत बंध मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व बाणवै निबैका है। असंयतविषैं भवनत्रिक कल्पबासिनी स्त्रीकैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका सत्व बाणवै निबैका है। सौधर्मादिक अनुत्तर बिमान पर्यंत बंध मनुष्ययुत गुणतीस वा मनुष्य तीर्थयुत तीसका सत्व तरेणबै बाणवै इक्याणबै निबैका है।

बहुरि तीसका उदय तिर्यंच मनुष्यनिहीकैं है जाते ए संहनन सहित है तहां तिर्यचनिकैं उश्वास पर्याप्तिविषैं उद्योतयुत तीसका उदय होइ। तहां मिथ्यादृष्टिविषै बंध तेबीस पचीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सत्व बाणबै निबै अठ्यासी चौरासीका है। सासादन मिश्रविषैं नाहीं। असंयतबिषैं बंध देवयुत अठाईसका सत्व बाणबै निबैका है। देश संयतविषैं नाहीं। बहुरि भाषापर्याप्तिविषैं उद्योत रहित अर सुस्वर दुःस्वर विषैं एककरि सहित भी तीसका उदय तिर्यंचकैं होइ। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेईस पचीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका सत्व बाणवै निबै अठ्यासी चौरासीका है। इहां अठ्यासी चौरासीका सत्व विकलत्रयकी अपेक्षा कह्या है। जातैं बिकलत्रय जीवनिकैं सुरद्विक नारक चतुष्ककी उद्वलना भएं पीछैं फेरि बंधका अभाव है। बहुरि सासादनविषैं बंध तिर्यंच मनुष्य सहित गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्व निबैका है। मिश्र असंयत देश संयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका सत्व बाणबै निबैका है। बहुरि मनुष्यनिकैं तीर्थंकरके मूल शरीरविषैं प्रवेश करता उश्वास सहित तीसका उदय होइ तहां बंधका अभाव सत्व असी अठहत्तरिका है। तीर्थंकर विना मूल शरीरबिषैं प्रवेश करता भाषापर्याप्ति कालविषैं सुस्वर वा दुःस्वर युत तीसका उदय होइ तहां बंधका अभाव सत्व गुण्यासी वा सतहत्तरिका है। बहुरि सामान्य मनुष्यानिकैं भाषापर्याप्तिविषैं सुस्वर वा दुःस्वर सहित तीसका उदय होइ तहां मिथ्यादृष्टिबिषैं बंध तेईस पचीस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका सत्व बाणबै इक्याणबै निबैका है। इहां इक्या-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णवैका सत्व नरक गमनकौं सन्मुख तीर्थंकर सत्ववालेकी अपेक्षा है। सासादनविषैं बंध तिर्यंच मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है। सत्व निवैका है। मिश्र विषै बंध देवयुत अठ ईसका सत्व बाणवै निबैका है। असंयतादि अपूर्वकरणका छठा भागपर्यंत बंध देवयुत अठाईस वा देव तीर्थयुत गुणतीसका है सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है। अपूर्वकरणका सातवां भागविषैं बंध एकका, सत्व तरेणबै आदि च्यारिका है। अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपरायविषैं बंध एकका, सत्व तरेणवैं आदि च्यारि अर असी आदि च्यारिका है। ऊपरि बंधका अभाव है। सत्व उपशांतकषायविषैं तरेणबै आदि च्यारिका है। क्षीणकषाय सयोगीविषैं असी आदि च्यारिका है। अयोगीविषैं तीसका उदय ही नाहीं। बहुरि इकतीसका उदय त्रस उद्योत सहित भाषापर्याप्तिविषैं सुस्वर वा दुःस्वर विषैं एक सहित तिर्यंचनिकैं हो है। तहां जैसैं उद्योत रहित भाषापर्याप्तिविषैं तीसका उदय होता तिर्यंचकैं बंध सत्व कहेथे तैसैं ही इहां जानना। मनुष्यविषैं क्षीणकषाय पर्यंत इकतीसका उदय नाहीं। तीर्थंकरके भाषापर्याप्तिविषै उदय है। तहां बंधका अभाव सत्व असी अठहत्तरिका है। बहुरि नवका उदय तीर्थंकरकैं अयोगीविषैं होइ तहां सत्व असी अठहत्तरि दशका है। बहुरि तहां ही सामान्य केवलीकैं आठका उदय होइ तहां सत्व गुण्यासी सतहत्तरि नवका है। बंधका दोऊनिविषैं अभाव है ॥ ७५२ ॥ ऐसैं उदय आधार बंध आधेयका आगम अनुसारि जोडि आगैं सत्वस्थान आधार बंध उदय आधेयका सात गाथानिकरि कहैं हैं—

सत्ते बंधुदया चदुसग सगणव चदुसगं च सगणवयं।
छण्णव पणणव पणचदु चदुसिगिछक्कं णभेक्क सुण्णेगं ॥७५३॥

सत्त्वे बंधोदया चतुःसप्त सप्तनव चतुःसप्त च सप्तनवकं।
षण्णव पंचनव पंचचतुष्कं चतुर्ष्वेकषट्कं नभएकं शून्यमेकं ॥ ७५३ ॥

जी॰ प्र॰—त्रिनवतिकादिसत्त्वस्थानेषु बंधोदयस्थानानि क्रमेण चतुःसप्त सप्तनव चतुःसप्त सप्तनव षण्णव पंचनव पंचचत्वारि चतुर्ष्वेकषट् नभ एकं, शून्यैकं ॥ ७५३ ॥ तानि कानीति चेदाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—तरेणवैकानैं आदि दैकरि जे सत्वस्थान तिनविषैं बंधस्थान वा उदयस्थान अनुक्रमतैं च्यारि सात अर सात नव अर च्यारि सात अर सात नव अर छह नव अर पांच नव अर पांच च्यारि सत्वस्थानानिविषैं एक छह शून्य एक अर शून्य एक जानने। इहां इतने इतनेका सत्व होतैं कोई जीवकैं कोई, कोई जीवकैं कोई ऐसैं बंध वा उदय पाइए है ऐसा कहिए है ॥ ७५३ ॥ ते कौन ? सो कहै हैं—

तेणउदीए बंधो उगुतीसादीचउक्कमुदओ दु ।
इगिपणछस्सगअड्डयणववीसं तीसयं णेयं ॥ ७५४ ॥

त्रिनवत्यां बंध एकोनत्रिंशादिचतुष्कमुदयस्तु ।
एकपंचषट्सप्ताष्टकनवविंशं त्रिंशत्को ज्ञेयः ॥ ७५४ ॥

जी० प्र०—त्रिनवतिके बंधस्थानानि नवविंशतिकादीनि चत्वारि। उदयस्थानान्येकपंचषट्सप्ताष्टनवाग्रविंशतिकानि त्रिंशत्कं च ज्ञेयानि॥७५४॥

स० चं०—तरेणवैका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान गुणतीसका आदि च्यारि हैं। उदयस्थान इकईस पचीस छब्बीस सताईस अठाईस गुणतीस तीसके हैं ॥ ७५४ ॥

वाणउदीए बंधा इगितीसूणाणि अट्ठाणाणि ।
इगिवीसादीएक्कत्तीसंता उदयठाणाणि ॥ ७५५ ॥

द्वानवत्यां बंधा एकात्रिंशोनान्यष्टस्थानानि ।
एकविंशाद्येकत्रिंशांतानि उदयस्थानानि ॥ ७५५ ॥

जी० प्र०—द्वानवतिके बंधस्थानान्येकत्रिंशत्कं विना शेषाणि सप्त। उदयस्थानान्येकविंशतिकादीन्येकत्रिंशत्कांतानि नव ॥ ७५५ ॥

स० चं०—बाणवैका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान इकतीसका विना अवशेष सात हैं। उदयस्थान इकईसका आदि इकतीसका पर्यंत नव हैं ॥ ७५५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इगिणवदीए बंधा अडवीसत्तिदयमेक्कयं चुदओ।
तेणउदिं वा णउदीबंधा बाणउदियं व हवे ॥ ७५६ ॥

एकनवत्यां बंधा अष्टविंशात्रितयमेकश्चोदयः।
त्रिनवतिर्वा नवतिबंधा द्वानवतिर्व भवेत् ॥ ७५६ ॥

जी० प्र०—एकनवतिके बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकादीनि त्र्यण्येककं च। उदयस्थानानि त्रिनवतिकोक्तानि सप्त। नवतिके बंधस्थानानि द्वानवतिकोक्तानि सप्त ॥ ७५६ ॥

स० चं०—इक्याणवैका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान अठाईसका आदि तीन अर एकका ऐसैं च्यारि हैं। उदयस्थान तरेणवैकावत् सात हैं। बहुरि निवैका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान बाणवैकावत् सात है ॥ ७५६ ॥

चरिमदुवीसूणुदयो तिसु दुसु बंधा छ तुरियहीणं च।
बासीदी बंधुदया पुव्वं विगिवीसचत्तारि ॥ ७५७ ॥

चरमद्विविंशोनोदयस्त्रिषु द्वयोर्बंधाः षट् तुरीयहीनं च।
द्व्यशीत्यां बंधोदयाः पूर्व इवैकविंशचत्वारः ॥ ७५७ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानानि चरमद्वयेन विंशतिकेन चोनसर्वाणि। त्रिषु शब्देनाष्टाशीतिकचतुरशीतिकयोरप्यमून्येव नव। बंधस्थानानि त्रयोविंशतिकादीनि षट्। अष्टाविंशतिकोनानि पंच। द्व्यशीतिके बंधोदयस्थानानि क्रमेण चतुरशीतिकोक्तानि पंच। एकविंशतिकादीनि चत्वारि ॥७५७॥

स० चं०—उदयस्थान अंतके दोय अर बीसका इन तीन विना नव हैं। त्रिषु कहिए अठ्यासी चौरासीका सत्वस्थानविषैं भी एई नव उदयस्थान हैं। अठ्यासी चौरासीकाविषैं बंधस्थान तेवीसकानैं आदि देकरि छह अर तिनिविषैं अठाईसका बिना पांच हैं। बियासीका सत्वस्थानविषैं बंधस्थान चौरासीकावत् पांच हैं। उदयस्थान इकईसकानैं आदि देकरि च्यारि हैं। सत्व ८२। बंध २३ २५ २६ २९ ३०। उदय २१ २४ २५ २६ ॥ ७५७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सीदादिचउसु बंधा जसकित्ती समपदे हवे उदओ।
इगिसगणवधियवीसं तीसेक्कत्तीसणवगं च ॥ ७५८ ॥

अशीत्यादिचतुर्षु बंधो यशस्कीर्तिः समपदे भवेदुदयः।
एकसप्तनवाधिकविंशं त्रिंशैकत्रिंशनवकं च ॥ ७५८ ॥

जी० प्र०—अशीतिकादिषु चतुर्षु बंधो यशस्कीर्तिः। उदयस्थानानि समपदयोरेकसप्तनवाधिकविंशतिकानि त्रिंशत्कैकत्रिंशत्कनवकानि च ॥

स० चं०—असीनैं आदि देकरि च्यारि सत्वस्थाननिविषैं बंधस्थान एक यशस्कीर्ति है। उदयस्थान असी अठहत्तरिके समगणनारूप स्थाननिविषैं इकईस सत्ताईस गुणतीस तीस इकतीस नवके हैं ॥ ७५८ ॥

वीसं छडणववीसं तीसं चट्ठं च विसमठाणुदया।
दसणवगे ण हि बंधो कमेण णवअट्ठयं उदओ ॥ ७५९ ॥

विंशः षडष्टनवविंशं त्रिंशचाष्ट च विषमस्थानोदयाः।
दशनवके न हि बंधः क्रमेण नवाष्टक उदयः ॥ ७५९ ॥

जी० प्र०—विषमयोर्विंशतिकषडष्टनवाग्रविंशतिकत्रिंशत्काष्टकानि षट्। दशकनवकयोर्नाम बंधः शून्यं, उदयः क्रमेण नवकमष्टकं। उक्ताधाराधेयं चतुर्गतिगुणस्थानं प्रति योजयति—

तत्र त्रिनवतिकं कर्मभूमिपर्याप्तनिर्वृत्त्यपर्याप्तमनुष्यवैमानिकयोरेव। तत्रापि तित्थाहारेत्यादिना न मिथ्यादृष्ट्यादित्रये। तत्र मनुष्येऽसंयते स ९३, बं २९ दे ती, उ २१, २६, २८, २९, ३०, देशसंयते स ९३, बं २९ दे ती, उ ३०, प्रमत्ते स ९३, बं २९ दे ती, उ २५, २७, २८, २९, ३०, अप्रमत्ते स ९३, बं २९ दे ती, ३१ दे ती आ, उ ३०, उपशमकेऽपूर्वकरणे स ९३, बं २९ दे ती, ३१ दे ती आ, उ ३०, अनिवृत्तिकरणे स ९३, बं १, उ ३०, सूक्ष्मसांपराये स ९३। बं १। उ ३० उपशांतकषाये। स ९३, बं ०, उ ३०, न क्षीणकषायादौ। वैमानिकासंयते स ९३, बं ३० म ती, उ २१, २५, २७, २८, २९, एतेष्वसंयतादिषु कुतोऽष्टाविंशतिकं न बध्नाति। नरकगमनाभिमुखं मुक्त्वा तीर्थं बध्नतां विश्रांत्यभावेन तद्घटनात्।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

द्वानवतिकं चतुर्गतिषु तत्र नरके धर्मायां मिथ्यादृष्टौ स ९२, वं २९ ति म, ३० ति उ, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २९ म, उ २९, असंयते स ९२, वं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, आमघर्वी मिथ्यादृष्टौ स ९२, वं २९ ति म, ३० ति उ। उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २९ म, उ २९, असंयते स ९२, वं २९ म, उ २१, माघव्यां मिथ्यादृष्टौ। स ९२, वं २९ ति उ, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २९ म, उ २९, असंयते स २९, वं २९ म, उ २९, तिर्यक्षु मिथ्यादृष्टौ। स ९२, वं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, उ २१, २४, २५, २६, २७, २८, २९, ३०, ३१, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २८ दे, उ ३०, ३१, असंयते स ९२। वं २८ दे, उ २१, २६, २८, २९, ३०, ३१, देशसंयते स ९२, वं २८ दे, उ ३०, ३१, मनुष्येषु मिथ्यादृष्टौ स ९२, वं २३, २५, २६, २८, २९, ३०, उ २१, २६, २८, २९, ३०, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २८ दे, उ ३०, असंयते स ९२, वं २८ दे, उ २१, २६, २८, २९, ३०, देशसंयते। स ९२, वं २८ दे, उ ३०, प्रमत्ते ९२, वं २८ दे, उ २५, २७, २८, २९, ३०, अप्रमत्ते स ९२, वं २८ दे, ३० दे आ, उ ३०। अपूर्वकरणे स ९२, वं २८ दे, ३० दे आ, उ ३०, अनिवृत्तिकरणे स ९२, वं १, उ ३०, सूक्ष्मसांपराये। स ९२, वं १, उ ३०, उपशांतकषाये स ९२, वं ०, उ ३०, न क्षीणकषायादौ।

देवगतौ भवनत्रये मिथ्यादृष्टौ स ९२, वं २५, २६, २९, ३०, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २९ म, उ २९ भाषा। असंयते स ९२, वं २९ म, उ २९ भाषा, सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ स ९२, वं २५, २६, २९, ३०, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २९ म, उ २९ भा, असंयते स ९२, वं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, उपरि दशकल्पेषु मिथ्यादृष्टौ स ९२, वं २९ ति म, ३० ति उ, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे स ९२, वं २९ म, उ २९ भा, असंयते स ९२, वं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, उपरि ग्रैवेयकांतेषु मिथ्यादृष्टौ, स ९२, वं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, न सासादने। मिश्रे, स ९२, वं २९ म, उ २९ भा, असंयते स ९२, वं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९, अनुदिशानुत्तरासंयते, स ९२, वं २९ म, उ २१, २५, २७, २८, २९,

एकनवतिकं तिरियेगा तित्थसत्तमिति देवनारकमनुष्येष्वेव। तत्र नारकेषु धर्मायां मिथ्यादृष्टौ स ९१, वं २९ म, उ २१, २५, नात्र सप्तविंशतिकाद्युदयः। शरीरपर्याप्तेरुपरि तीर्थसत्त्वमिथ्यादृष्टेः सम्यग्दृष्टित्वसंभवात्। न सासादनमिश्रयोः। असंयते। स ९१, वं ३० म ती, उ २१, २५, २७, २८, २९, वंशामेघयोर्मिथ्यादृष्टौ स ९१, वं २९ म, उ २१, २५, न सासादनमिश्रयोः। असंयते, स ९१, वं ३०, म ती, उ २७, २८, २९, नांजनादौ कुतः? तीर्थसत्त्वस्य तत्रानुत्पत्तेः।

मनुष्येषु मिथ्यादृष्टौ स ९१। वं २८ न। २९ म। उ ३०। न सासादनमिश्रयोः। असंयते स ९१। वं २९ दे ती। उ २१। २६।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२८ । २९ । ३० । देशसंयते । स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० । प्रमत्ते स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० । अप्रमत्ते स ९१ । बं २९ । दे । ती । उ ३० । अपूर्वकरणे स ९१ । बं २९ । दे ती । उ ३० । अनिवृत्तिकरणे स ९१ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसांपराये स ९१ । बं १ । उ ३० । उपशांतकषाये स ९१ । बं० । उ ३० । देवेषु तु भवनत्रयकल्पस्त्रीवर्जितेष्वेव । तत्रापि न मिथ्यादृष्ट्यादित्रये । असंयते स ९१ । बं ३० । म ती । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।

नवतिके धर्मामिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति उ । उ २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । असंयते । स ९० । बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । वंशादिमघव्यंतमिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ ति म । ३० ति । उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति । उ । उ २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २९ भा । माघव्यां मिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ ति । ३० ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ ति । ३० ति उ । उ २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ भा । असंयते । स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । सासादने स ९० । बं २८ । दे २९ ति म । ३० ति उ । उ २१ । २४ । २६ । ३० । ३१ । मिश्रे स ९० । बं २८ दे । उ ३० । ३१ । असंयते । स ९० । बं २८ दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । ३१ । देशसंयते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । ३१ । मनुष्यमिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । सासादने स ९० । बं २८ दे । २९ ति । म । ३० ति । उ । उ २१ । २६ । ३० । मिश्रे स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । असंयते स ९० । बं २८ । दे । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । देशसंयते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । प्रमत्ते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । अप्रमत्ते स ९० । बं २८ । दे । उ ३० । अपूर्वकरणे स ९० । बं २८ दे १ । उ ३० । अनिवृत्तिकरणे स ९० । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसांपराये स ९० । बं १ । उ ३० । उपशांतकषाये स ९० । बं० । उ ३० । भवनत्रयमिथ्यादृष्टौ स ९० बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं० २९ ति म । ३० ति उ । उ २१ । २५ । २९ । मिश्रे स ९० । बं २९ म । उ २९ भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । सौधर्मद्वये मिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ ति म । ३० ति । उ । उ २१ । २५ । २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ । भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । उपरि दशकल्पमिथ्यादृष्टौ । स ९० । बं २९ ति म । ३० ति उ । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ । ति म । ३० ति । उ । उ २१ । २५ । २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ । म । उ २९ भा । असंयते स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । उपरि ग्रैवेयकांतमिथ्यादृष्टौ स ९० । बं २९ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । सासादने स ९० । बं २९ म । उ २१ । २५ । २९ भा । मिश्रे स ९० । बं २९ म । उ २९ भा । असंयते स ९० । बं २९ म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ । अनुदिशानुत्तरासंयते स ९० । बं २९ । म । उ २१ । २५ । २७ । २८ । २९ ।

अष्टाशीतिकमुद्वेल्लितदेवद्विकैकविकलेंद्रियाणां स्वस्थानोत्पन्नस्थानयोः । तत्र तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ स ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । २७ । २८ । २९ । ३० । ३१ । न सासादनादौ । मनुष्यमिथ्यादृष्टौ स ८८ । बं २३ । २५ । २६ । २८ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । न सासादनादौ । इदमष्टाशीतिकं सत्त्वं तु पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्यौ मिथ्यादृष्टी शरीरपर्याप्तावष्टाविंशतिकं नरकगतियुतं तिर्यग्मनुष्यगतियुतं वा बध्नतस्तदा वा विकलेंद्रियो नारकचतुष्कमुद्वेल्ल्य पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्येषूत्पन्नः शरीरपर्याप्तौ सुरचतुष्कं बध्नाति तदा च संभवति ।

चतुरशीतिकमुद्वेल्लितनारकचतुष्कस्य स्वस्थानोत्पन्नस्थानयोः । तत्र तिर्यग्मिथ्यादृष्टौ स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । न सासादनादौ । मनुष्यमिथ्यादृष्टौ स ८४ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २६ । २८ । २९ । ३० । न सासादनादौ । इदं सत्त्वं शरीरपर्याप्त्यादौ तिर्यग्मनुष्यगतिबंधे स्यान्न पंचेंद्रियतिर्यग्मनुष्ययोर्देवनारकगतिबंधे ।

द्व्यशीतिकमुद्वेल्लितमनुष्यद्विकतेजोवाय्वोः स्वस्थानोत्पन्नस्थानयोर्मिथ्यादृष्टौ स ८२ । बं २३ । २५ । २६ । २९ । ३० । उ २१ । २४ । २५ । २६ । अत्र तेजोवाय्वोरातपोद्योतानुदयाच्छरीरपर्याप्तौ उच्छ्वासपर्याप्तौ च पंचविंशतिकमेव । षड्विंशतिके न द्व्यशीतिकं । मनुष्यद्विकबंधे तदन्यतिर्यक्षु ।

अशीतिकं क्षपकस्नातकयोरेव । तत्रानिवृत्तिकरणे स ८० । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसांपराये स ८० । बं १ । उ ३० । क्षीणकषाये स ८० । बं० । उ ३० । सयोगे स्वस्थाने स ८० । बं० । उ ३० । समुद्घाते स ८० । बं० । उ २१ । २७ । २९ । ३० । ३१ । अयोगे । स ८० । बं० । उ ९ । अतीर्थेऽनिवृत्तिकरणे स ७९ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसांपराये स ७९ । बं १ । उ ३० । क्षीणकषाये स ७९ बं० । उ ३० । सयोगे स्वस्थाने स ७९ । बं० । उ ३० । समुद्घाते स ७९ । बं० । उ २० । २६ । २८ । २९ । ३० । अयोगे स ७९ । बं० । उ ८ । आहारसत्त्वरहितेऽनिवृत्तिकरणे स ७८ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसांपराये स ७८ । बं १ । उ ३० । क्षीणकषाये स ७८ । बं० । उ ३० । सयोगे स्वस्थाने स ७८ । बं० । उ ३१ । समुद्घाते स ७८ । बं० । उ २१ । २७ । २९ । ३० । ३१ । अयोगे स ७८ । बं० । उ ९ । तीर्थाहारासत्त्वेऽनिवृत्तिकरणे स ७७ । बं १ । उ ३० । सूक्ष्मसांपराये स ७७ । बं १ । उ ३० । क्षीणकषाये स ७७ । बं० । उ ३० । सयोगे स्वस्थाने स ७७ । बं० । उ ३० । समुद्घाते स ७७ । बं० । उ २० । २६ । २८ । २९ । ३० । अयोगे स ७७ । बं० । उ ८ । चरमसमये सतीर्थे स १० । बं० । उ ९ । वितीर्थे स ९ । बं० । उ ८ ॥ ७५९ ॥ ते सत्त्वस्थानाधारे बंधोदयसत्त्वस्थानान्याधेयत्वेन संयोज्य बंधोदयद्वयाधारे सत्त्वस्थानान्याधेयतया गाथानवकेनाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—गुण्यासी सतहत्तरिका विषम गणनारूप सत्वस्थाननिविषैं वीस छवीस अठाईस गुणतीस तीस आठके उदयस्थान हैं। दशका नवका सत्वस्थाननिविषैं बंध का अभाव है। उदय क्रमतैं नवका अर आठका है। ऐसैं कह्या आधार आधेय ताकौं च्यार्‍यो गतिका गुणस्थाननिविषैं लगाइए है—

तहां तरेणवैका सत्व कर्मभूमिया पर्याप्त निर्वृत्ति अपर्याप्त मनुष्य अर वैमानिक देवनिकैं ही पाइए। तहां भी तित्थाहार इत्यादिक सूत्रकरि मिथ्यादृष्टि आदि तीन गुणस्थाननिविषैं तरेणवैका सत्व न पाइए है। तहां मनुष्यकैं जहां तरेणवैका सत्व पाइए तहां असंयतविषैं बंध देव तीर्थ सहित गुणतीसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। देश संयतविषैं बंध देव तीर्थयुत गुणतीसका उदय तीसका है। प्रमत्तविषै बंध देव तीर्थयुत गुणतीसका उदय पचीस सताईस अठाईस गुणतीस तीसका है। अप्रमत्तविषैं बंध देव तीर्थयुत गुणतीस वा आहारक तीर्थयुत इकतीसका उदय तीसका है। उपशमक अपूर्वकरणविषैं अप्रमत्तवत् बंध सत्व हैं। अर अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपरायविषैं बंध एकका उदय तीसका है। उपशांत कषायविषैं बंधका अभाव उदय तीसका है। क्षीणकषायादिकविषैं तरेणवैका सत्व नाहीं। बहुरि वैमानिक देवनिकै असंयतविषैं तरेणवैका सत्व होइ तहां बंध मनुष्य तीर्थ सहित तीसका उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। इहां असंयतादिकविषैं अठाईसकौं न बांधै जातैं नरक जानेकौं सन्मुख जीव विना अन्य जीव तीर्थंकर सत्ववाला ताकैं तीर्थंकर बंधका सर्वदा सद्भाव है। बहुरि बाणवैका सत्व च्यार्‍यो गतिविषैं पाइए तहां नारकीनिकैं जहां बाणवैका सत्व पाइए तहां घर्माविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सासादनविषैं बाणवैका सत्व ही नाहीं। मिश्रविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसका है। अर असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। वंशातैं मघवीपर्यंत मिथ्यादृष्टिविषैं धर्मावत् सासादनविषैं ऐसा सत्व नाहीं। मिश्रविषैं बंध गुणतीसका उदय गुणतीसका है। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसका है। माघवीविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिर्यंचयुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीस का, उदय घर्मावत् है सासादनविषैं नाहीं। मिश्र वा असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसका है।

बहुरि तिर्यंचनिकैं जहां बाणवेका सत्व पाइए तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेवीस पचीस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। उदय इकईस चौवीस पचीस छवीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। सासादनविषैं नाहीं। मिश्रविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीस इकतीसका है। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। देश संयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीस इकतीसका है।

बहुरि मनुष्यनिकैं जहां बाणवैका सत्व पाइए तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेईस पचीस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सासादनविषैं बाणवेका सत्व ही नाहीं। मिश्रविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीसका है। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। देशसंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीसका है। प्रमत्तविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय पचीस सत्ताईस अठाईस गुणतीस तीसका है। अप्रमत्त अपूर्व करणविषैं बंध देवयुत अठाईसका वा देव आहारक युत तीसका उदय तीसका है। अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपरायविषैं बंध एक का उदय तीसका है। उपशांतकषायविषैं बंधका अभाव उदय तीसका है। क्षीणकषायादिविषैं बाणवैका सत्व ही नाहीं।

बहुरि देवनिकैं जहां बाणवेका सत्व पाइए तहां भवनत्रिक सौधर्मद्विक मिथ्यादृष्टिविषैं बंध पचीस छवीस गुणतीस तीसका उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीस (तीस)का है। सासादनविषैं नाहीं। मिश्रविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसका है। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय भवनत्रिककैं तौ गुणतीसहीका सौधर्मद्विककैं इकईस पचीस सताईस अठाइस गुणतीसका है। बहुरि ऊपरि मिथ्यादृष्टिविषैं बंध सहस्रार पर्यंत तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मनुष्ययुत गुणती-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सहीका है उदय ग्रैवेयक पर्यंत इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सासादनविषैं नाहीं। मिश्रविषैं उपरि ग्रैवेयक पर्यंत बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसका है। असंयतविषैं अनुत्तर विमान पर्यंत बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। बहुरि इक्याणवैका सत्व तिरियेण तित्थसत्तं' इस वचनतैं तिर्यंच विना देव नारकी मनुष्यविषैं ही है सो जहां इक्याणवैका सत्व होइ तहां नारकीनिकैं घर्माविषैं मिथ्यादृष्टिविषैं तो बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय इकईस पचीसका है। सताईस आदिकका इहां उदय नाहीं जातैं शरीरपर्याप्तिके ऊपरि तीर्थसत्ववाला मनुष्य सम्यग्दृष्टी ही हो है। सासादन मिश्रविषैं इक्याणवैका सत्व ही नाहीं। असंयतविषैं बंध तीर्थ मनुष्ययुत तीसका उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। वंशा मेघाविषैं भी घर्मावत् है। विशेष इतना—असंयतविषैं उदय सताईस अठाईस गुणतीस हीका है। अंजनादिकविषैं इक्याणवैका सत्त्व ही नाहीं। मनुष्यनिकैं इक्याणवैका सत्त्व होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध नरकयुत अठाईसका वा मनुष्ययुत गुणतीसका उदय तीसका है। सासादनमिश्रविषैं नाहीं। असंयतविषैं बंध देव तीर्थसहित गुणतीसका उदय इकईस छबीस अठाईस गुणतीस तीसका है। देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्त अपूर्वकरणका छठा भाग पर्यंत बंध देव तीर्थ सहित गुणतीसका अपूर्वकरणका सातवां भाग अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपरायविषैं बंध एकका उपशांत कषायविषैं बंध नाहीं उदय देशसंयतादि उपशांत कषायपर्यंत तीसहीका है। बहुरि देवनिकैं इक्याणवैका सत्व भवनत्रिक कल्पवासिनीं विना वैमानिक देवनिकै असंयतविषैं ही होइ तहां बंध मनुष्य तीर्थयुत तीसका उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। बहुरि निवैका सत्व नारकीनिकैं होइ तहां सर्व नारकीनिकैं मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तिर्यंच वा मनुष्य सहित गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका है तहां माघवीविषैं मनुष्ययुतका बंध नाहीं है। उदय इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सासादनविषैं बंध मिथ्यादृष्टिवत् उदय गुणतीसका है। मिश्रविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसका है। असंयतविषैं बंध मनुष्ययुत गुणतीसका है उदय घर्माविषैं इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका वंशादिकविषैं गुणतीसहीका है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि तिर्यंचनिकैं निवैका सत्व होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेईस पचीस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। उदय इकईस चौईस पचीस छवीस सताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। सासादनविषैं बंध देवयुत अठाईस वा तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत युत तीसका है। उदय इकईस चौवीस छवीस तीस इकतीसका है। मिश्रविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीस इकतीसका है। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। देशसंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीस इकतीसका है।

बहुरि मनुष्यनिकैं निवैका सत्व होइ तहां मिथ्यादृष्टिविषैं बंध तेईस पचीस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। सासादनविषैं बंध देवयुत अठाईसका वा तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीसका वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका, उदय इकईस छवीस तीसका है। मिश्रविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय तीसका है। असंयतविषैं बंध देवयुत अठाईसका उदय इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। देशसंयत प्रमत्त अप्रमत्तविषैं बंध देवयुत अठाईसका अपूर्वकरणविषैं बंध देवयुत अठाईसका वा एकका अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपरायविषैं बंध एकका उपशांत कषायविषैं बंधका अभाव है। उदय देशसंयतादि उपशांतकषाय पर्यंत तीसहीका है।

बहुरि देवानिकैं निवैका सत्व होइ। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं भवनत्रिक सौधर्मद्विककैं तौ बंध पचीस छवीस गुणतीस तीसका है। सहस्रार पर्यंत तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मनुष्ययुत गुणतीसहीका है। उदय उपरि ग्रैवेयक पर्यंत इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। सासादनविषैं बंध सहस्रारपर्यंत तिर्यंच वा मनुष्ययुत गुणतीस वा तिर्यंच उद्योतयुत तीसका है। उपरि ग्रैवेयक पर्यंत मनुष्ययुत गुणतीसहीका है। उदय उपरि ग्रैवेयक पर्यंत इकईस पचीस गुणतीसका है। मिश्रविषैं उपरि ग्रैवेयक पर्यंत बंध मनुष्ययुत गुणतीसका उदय गुणतीसहीका है। असंयतविषैं भवनत्रिककैं उदय गुणतीसहीका सौधर्मादिक अनुत्तर विमान पर्यंत इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका है। बहुरि अठ्यासीका सत्व देव द्विककी उद्वेलना भएं एकेंद्री विकलत्रयकैं होइ वा ते मरि जहां उपजैं तहां भी होय सो तिर्यंच मनुष्य मिथ्यादृष्टीहीकैं होइ तहां बंध ते-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ईस पचीस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। उदय तिर्यंचनिकैं इकईस चौवीस पचीस छवीस सताईस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसका है। मनुष्यनिकैं इकईस छवीस अठाईस गुणतीस तीसका है। यहु अठयासीका सत्व पंचेंद्री तिर्यंच मनुष्य मिथ्यादृष्टी शरीर पर्याप्तिकालविषैं नरकगतियुत अठाईसका बंध करै वा तिर्यंच मनुष्य गति सहित गुणतीस वा तिर्यंच उद्योत सहित तीसका बंध करै तब पाइए। अथवा एकेंद्री विकलत्रय नारक चतुष्ककी उद्वेलनाकरि मरि पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्य होइ शरीरपर्याप्ति कालविषैं देव चतुष्ककौं बांधै तब पाइए है। बहुरि चौरासी का सत्व नारक चतुष्ककी उद्वेलना भएं एकेंद्री विकलेंद्रीकैं पाइए वा ते मरि मनुष्य तिर्यंचविषैं जहां उपजैं तहां मिथ्यादृष्टिविषैं ही पाइए सो तहां बंध वा उदय अठ्यासीका सत्वविषैं कह्या तैसैं ही जानना। विशेष इतना–इहां अठाईसका बंध नाहीं है। यहु चौरासीका सत्व शरीरपर्याप्ति कालादिकविषैं तिर्यंच मनुष्यगतिका बंध भए हो है। पंचेंद्री तिर्यंच वा मनुष्यकैं देवनरकका बंध भए ऐसा सत्व न हो है। बहुरि बियासीका सत्व मनुष्य द्विककी उद्वेलना भएं तेज वात कायिककैं होइ वा ते मरि तिर्यंचविषैं जहां उपजैं तहां होइ तहां बंध तेईस पचीस छवीस गुणतीस तीसका उदय इकईस चौवीस पचीस छवीसका। इहां तेज वातकायिकविषैं आतप वा उद्योतका उदय नाहीं तातैं पचीसहीका उदय है। छवीसका नाहीं। बहुरि असीका सत्व क्षपकश्रेणीवाला अनिवृत्ति करणादिककैं वा तीर्थंकर केवलीकैं हो है। तहां अनिवृत्ति करण सूक्ष्मसांपरायविषैं बंध एकका ऊपरि बंधका अभाव उदय क्षीणकषाय पर्यंत तीसका सयोगीविषैं स्वस्थान केवलीकैं तीसहीका समुद्घात केवली इकईस सत्ताईस गुणतीस तीस इकतीसका अयोगीविषैं नवका है। बहुरि गुण्यासीका सत्व तीर्थंकर रहित है। अठहत्तरिका तीर्थंकर सहित आहारक रहित है। सतहत्तरिका तीर्थंकर आहारकद्विक रहित है। सो इन तीनूंविषैं बंध उदय सत्व क्षपक अनिवृत्तिकरणतैं क्षीणकषाय पर्यंत तौ असीकाविषैं कह्या तैसैं ही जानना। सयोगविषैं गुण्यासी वा सतहत्तरिका सत्वविषैं तौ स्वस्थान केवलीकै तीसका समुद्घातकेवलीकै वीस छवीस अठाईस गुणतीसका उदय है। अठहत्तरिका सत्वविषैं असीका सत्वविषैं कह्या तैसैं जानना। अयोगीविषैं गुण्यासी सतहत्तरिका सत्वविषैं आठका उदय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अठहत्तरिका सत्वविषै नवका उदय जानना । बहुरि दशका नवका सत्व अयोगीकैं चरम समय तीर्थसहित वा रहित है । तहां बंधका अभाव है । उदय क्रमतैं नवका आठका जानना ॥ ७५९ ॥ ऐसैं सत्वस्थान आधारविषैं बंध उदय आधेयकरि व्याख्यान कीया आगैं बंध उदय दोय तौ आधार अर सत्वस्थान एक आधेय ताकौं नव गाथानिकरि कहै हैं । इहां इतनेका बंध इतनेका उदय होतैं सत्व कितने कितनेका पाइए ऐसा कथन कहिए है—

तेवीसबंधगे इगिवीसणवुदयेसु आदिमचउक्के ।
बाणउदिणउदिअडचउबासीदी सत्तठाणाणि ॥ ७६० ॥

त्रयोविंशबंधके एकविंशनवोदयेषु आदिमचतुष्के ।
द्वानवतिनवत्यष्टचतुर्द्व्यशीतिः सत्त्वस्थानानि ॥ ७६० ॥

जी० प्र—त्रयोविंशतिकबंधे एकविंशतिकादिनवोदयेष्वादिमचतुष्के सत्त्वस्थानानि द्वानवतिकनवतिकाष्टचतुर्द्व्यग्राशीतिकानि ॥ ७६० ॥

स० चं०—तेवीसका बंधविषैं इकवीसका आदि नव उदयस्थान हैं तिनविषै आदिके च्यारि उदयस्थाननिविषैं तौ बाणवै निवै अठ्यासी चौरासी बियासीके पंच सत्वस्थान हैं ॥ ७६० ॥

तेणुवरिमपंचुदये ते चेवंसा विवज्ज बासीदिं ।
एवं पणछव्वीसे अडवीसे एक्कवीसुदये ॥ ७६१ ॥

तेनोपरिमपंचोदये ते चैवांशा विवर्ज्य द्व्यशीतिं ।
एवं पंचषड्विंशे अष्टविंशेन एकविंशोदये ॥ ७६१ ॥

जी० प्र०—तेन त्रयोविंशतिकबंधेन सहोपरितनसप्तविंशतिकादिपंचोदयेषु सत्त्वस्थानानि तान्येव पंच द्व्यशीतिकोनानि । पंचषडग्रविंशतिकबंधयोरुदयसत्त्वानि त्रयोविंशतिकबंधोक्तप्रकारेण ज्ञातव्यानि ॥ ७६१ ॥ अष्टाविंशतिकबंधैकविंशतिकोदये तु—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—तीहिं तेवीसका बंध सहित ऊपरिकै सताईसकानैं आदि दैकरि पंच उदय स्थाननिविषैं तिन पंचनिमैंस्यों वियासीका विना च्यारि ही सत्वस्थान हैं। बहुरि पचीसका वा छवीसका बंध सहित उदयस्थान तेवीसका सहितवत् हैं। तिनविषैं सत्व भी तेवीसका सहितविषैं जैसैं कह्या तैसैंही है ॥ ७६१ ॥ बहुरि अठाईसका बंध सहित इकवीसका उदयविषैं कहै हैं—

बाणउदिणउदिसत्तं एवं पणुवीसयादिपंचुदये।
पणसगवीसे णउदी विगुव्वणे अत्थि णाहारे ॥ ७६२ ॥

द्वानवतिनवतिसत्त्वमेवं पंचविंशतिकादिपंचकोदये।
पंचसप्तविंशे नवतिर्विगूर्वणेऽस्ति नाहारे ॥ ७६२ ॥

जी० प्र०—द्वानवतिकनवतिकसत्त्वं स्यात्। एवं पंचविंशतिकादिपंचोदयेष्वपि। किंतु पंचसप्ताग्रविंशतिकयोर्नवतिकसत्त्वं सविक्रियर्द्धिषु नाहारकर्द्धिषु ॥ ७६२ ॥

स० चं०—बाणवै निवैका सत्व है असैं ही अठाईसका बंध सहित पचीसका आदि पांच उदयविषैं सत्व है। इतना विशेष—जो पचीस सताईसका उदयविषैं जो निवैका सत्व है सो वैक्रियिक अपेक्षा है आहारक अपेक्षा नाही है ॥ ७६२ ॥

तेण णभिगितीसुदये बाणउदिचउक्कमेक्कतीसुदये।
णवरि ण इगिणउदिपदं णववीसिगिवीसबंधुदये ॥ ७६३ ॥

तेन नभ एकत्रिंशोदये द्वानवतिचतुष्कमेकत्रिंशोदये।
नवरि न एकनवतिपदं नवविंशैकविंशबंधोदययोः ॥ ७६३ ॥

जी० प्र०—तेनाष्टाविंशतिकबंधनयुतशून्यैकाधिकत्रिंशत्कोदये सत्त्वं द्वानवतिकचतुष्कं किंत्वेकत्रिंशत्कोदये नैकनवतिकं ॥ ७६३ ॥ नवविंशतिकबंधैकविंशतिकोदये—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं—तीहिं अठाईसका बंध सहित तीस इकतीसका उदय होतैं बाणवै आदि च्यारिका सत्व है। इतना विशेष—जो इकतीसका उदय होतैं इक्याणवैका सत्व नाहीं है ॥७६३॥ बहुरि गुणतीसका बंध सहित इकईसका उदयविषैं कहै हैं—

तेणवदिसत्तसत्तं एवं पणछक्कवीसठाणुदये।
चउवीसे वाणउदी णउदिचउक्कं च सत्तपदं ॥ ६४ ॥

त्रिनवतिसप्तसत्त्वमेवं पंचषट्कविंशस्थानोदये।
चतुर्विंशे द्वानवतिर्नवतिचतुष्कं च सत्त्वपदं ॥ ७६४ ॥

जी० प्र०—सत्त्वं त्रिनवतिकादीनि सप्त। एवं पंचषड्ग्रविंशतिकयोरपि। चतुर्विंशतिकोदये द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च ॥ ७६४ ॥

स० चं०—तरेणवै आदि सातका सत्व है। ऐसैं गुणतीसका बंध सहित पचीस छबीसका उदय होतें भी सत्व है। गुणतीसका बंधसहित चौवीसका उदयविषैं बाणवै अर निवै आदि च्यारिका सत्व है।

सगवीसचउक्कुदये तेणउदीछक्कमेवमिगितीसे।
तिगिणउदी ण हि तीसे इगिपणसगअट्ठणवयवीसुदये ॥ ६५ ॥

सप्तविंशचतुष्कोदये त्रिनवतिषट्कमेवमेकत्रिंशे।
त्र्येकनवतिर्न हि त्रिंशे एकपंचसप्ताष्टनवकविंशोदये ॥ ७६५ ॥

जी० प्र०—नवविंशतिकबंधसप्तविंशतिकादिचतुर्षूदयेषु सत्त्वं त्रिनवतिकादिषट्कं। एवमेकत्रिंशत्कोदयेऽपि किंतु न त्रिनवतिकैकनवतिके द्वे। ॥ ७६५ ॥ त्रिंशत्कबंधेकपंचसप्ताष्टनवाधिकविंशतिकोदयेष्वेवमाह—

स० चं०—गुणतीसका बंध सहित सताईस आदि च्यारिका उदय होतैं तरेणवै आदि छहका सत्व है। ऐसैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ही इकतीसका उदयविषैं भी है। विशेष इतना—इहां तरेणवै इक्याणवैका सत्व नाहीं है ॥७६५॥ बहुरि तीसका बंध सहित इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसका उदय होतैं कहैं हैं—

तेणउदिछक्कसत्तं इगिपणवीसेसु अत्थि बासीदी ।
तेण छचउवीसुदये बाणउदी णउदिचउसत्तं॥ ६६ ॥

त्रिनवतिषट्कसत्त्वमेकपंचविंशयोरस्ति द्व्यशीतिः ।
तेन षट्चतुर्विंशोदये द्वानवतिः नवतिचतुष्कं सत्त्वं ॥ ७६६ ॥

जी० प्र०—सत्त्वं त्रिनवतिकादिषट्कं । तत्र द्व्यशीतिकं त्वेकपंचाधिकविंशतिकोदययोरेव नेतरोदयेषु। तेन त्रिंशत्कबंधेन सह चतुःषडग्रविंशतिकोदययोः सत्त्वं द्वानवतिकं नवतिकादिचतुष्कं च ॥ ७६६ ॥

स० चं०—तरेणवै आदि छहका सत्व है।इतना विशेष—बियासीका सत्व इकईस पचीसका उदय होतैं ही हो है और उदय होतैं न हो है। बहुरि तीहिं तीसका बंध सहित चौबीस छबीसका उदय होतैं बाणवै वा निवै आदि च्यारिका सत्व है ॥ ७६६ ॥

एवं खिगितीसे ण हि बासीदी एक्कतीसबंधेण ।
तीसुदये तेणउदी सत्तपदं एक्कमेव हवे ॥ ६७ ॥

एवं खेकत्रिंशे न हि द्व्यशीतिरेकात्रिंशबंधेन ।
त्रिंशोदये त्रिनवतिः सत्त्वपदमेकमेव भवेत् ॥ ७६७ ॥

जी० प्र०—त्रिंशत्कबंधत्रिंशत्कैकत्रिंशत्कोदये सत्त्वं प्राग्वन्न हि द्व्यशीतिकं ।एकत्रिंशत्कबंधेन समं त्रिंशत्कोदये सत्त्वं त्रिनवतिकमेवैकं स्यात् ॥

स० चं०—तीसका बंध सहित तीस इकतीसका उदय होतैं सत्व चौवीसका उदयविषैं कह्या तैसै ही है। १३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेष इतना—इहां बियासीका सत्व नाहीं है। बहुरि इकतीसका बंध सहित तीसका उदय होतैं सत्व तरेणवैका एक ही है ॥ ७६७ ॥

इगिबंधट्ठाणेण दु तीसट्ठाणोदये णिरुंधम्मि।
पढमचऊसीदिचऊ सत्तट्ठाणाणि णामस्स ॥ ६८ ॥

एकबंधस्थानेन तु त्रिंशस्थानोदये निरोधे।
प्रथमचतुष्काशीतिचतुष्कं सत्त्वस्थानानि नाम्नः ॥ ७६८ ॥

जी० प्र०—एकबंधेनावस्थिते तु त्रिंशत्कोदये नाम्नः सत्त्वं प्रथमचतुष्कमशीतिकादिचतुष्कं च ॥ ७६८ ॥ अथ बंधसत्त्वस्थानाधारे उदयस्थानान्याधेयत्वेन गाथाषट्केनाह—

स० चं०—एकका बंध सहित तीसहीका उदय है तहां सत्व पहिलैं तरेणवै आदि च्यारिका वा असी आदि च्यारिका सत्वस्थान नामकर्मके हैं ॥ ७६८ ॥ आगैं बंध सत्व आधारविषैं उदयस्थानकौं आधेयकरि छह गाथानिविषैं कहैं है तहां इतनेका बंध इतनेका सत्व होतैं उदय इतने इतनेका होइ ऐसा कथन कहिए है—

तेवीसबंधठाणे दुखणउदडचदुरसीदिसत्तपदे।
इगिवीसादिणउदओ बासीदे एक्कवीसचऊ ॥ ६९ ॥

त्रयोविंशबंधस्थाने द्विखनवत्यष्टचतुरशीतिसत्त्वपदे।
एकविंशादिनवोदयो द्व्यशीतौ एकविंशचतुष्कं ॥ ७६९ ॥

जी० प्र०—त्रयोविंशतिकबंधस्थाने द्विखाधिकनवतिकाष्टचतुरधिकाशीतिकसत्त्वे उदयस्थानान्येकविंशतिकादीनि नव। तद्बंधद्व्यशीतिसत्त्वे एकविंशतिकादीनि चत्वारि ॥ ७६९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—तेवीसका बंधस्थान सहित बाणवै निवै अठ्यासी चौरासीका सत्व होतैं इकईसका आदि नव उदय स्थान हैं। तेवीसका बंध सहित बियासीका सत्वविषैं इसईसका आदि च्यारि उदयस्थान है ॥ ७६९ ॥

एवं पणछव्वीसे अडवीसें बंधगे दुणउदंसे ।
इगिवीसादिणवुदया चउवीसट्ठाणपरिहीणा ॥ ७० ॥

एवं पंचषड्विंशे अष्टविंशे बंधके तु द्वानवत्यंशे ।
एकविंशादिनवोदयाश्चतुर्विंशस्थानपरिहीनाः ॥ ७७० ॥

जी० प्र०—पंचषडग्रविंशतिकबंधयोरपि सत्त्वोदयस्थानान्येवं त्रयोविंशतिकवद्भवंति। अष्टाविंशतिकबंधे द्विनवतिकसत्त्वे एकविंशतिकादीनि नव चतुर्विंशतिकोनानि ॥ ७७० ॥

स० चं०—पचीस छबीसका बंध सहित भी सत्वस्थान तेवीसका सहितवत् है। तहां उदयस्थान भी तेवीसका सहितविषैं जैसैं कहे तैसैं ही हैं। बहुरि अठाईसका बंधसहित बाणवैका सत्व होतैं इकईसकानैं आदि नव, चौवीसका विना उदय स्थान हैं ॥ ७७० ॥

इगिणउदीए तीसं उदओ णउदीए तिरियसण्णिं वा ।
अडसीदीए तीसदु णववीसे बंधगे तिणउदीए ॥ ७१ ॥

एकनवत्यां त्रिंश उदयो नवत्यां तिर्यक्संज्ञी वा ।
अष्टाशीतौ त्रिंशद्विकं नवविंशे बंधके त्रिनवत्यां ॥ ७७१ ॥

जी० प्र०—तद्बंधैकनवतिकसत्त्वे उदयस्त्रिंशत्कं। तद्बंधनवतिकसत्त्वे तिर्यक्संज्ञियुक्तैकपषडष्टनवदशैकादशाधिकविंशतिकानि । तद्बंधाष्टाशीतिकसत्त्वे त्रिंशत्कैकत्रिंशत्के द्वे ॥ ७७१ ॥ नवविंशतिकबंधे त्रिनवतिकसत्त्वे आह—

स० चं०—अठाईसका बंध सहित इक्याणवैका सत्व होतैं उदय तीसका है। अठाईसका बंध सहित निवैका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्व होतैं संज्ञी तिर्यंचविषैं कहे असे इकवीस छबीस अठाईस गुणतीस तीस इकतीसके उदयस्थान हैं। बहुरि अठाईसका बध अठ्यासीका सत्व होतैं तीस इकतीसका उदय है ॥ ७७१ ॥ बहुरि गुणतीसका बंध सहित तरेणवेका सत्व होतैं कहै हैं—

इगिवीसादट्ठुदओ चउवीसूणो दुणउदिणउदितिये ।
इगिवीसणविगिणउदे णिरयं व छवीसतीसधिया ॥ ७२ ॥

एकविंशादष्टोदयश्चतुर्विंशोनो द्विनवतिनवतित्रये ।
एकविंशनवैकनवत्यां निरयो व षड्विंशत्रिंशाधिकाः ॥ ७७२ ॥

जी० प्र०—उदयस्थानान्येकविंशतिकादीन्यष्टौ चतुर्विंशतिकोनानि । पुनस्तद्बंधद्विनवतिकनवतिकत्रयसत्त्वे एकविंशतिकादीनि नव । पुनः तद्बंधैकनवतिकसत्त्वे नरकगत्युक्तैकपंचसप्ताष्टनवाधिकविंशतिकानि षट्विंशतिकत्रिंशत्काधिकानि ॥ ७७२ ॥

स० चं०—इकवीसका आदि आठ चौबीसका विना उदयस्थान हैं। बहुरि गुणतीसका बंध बाणवैका वा निवै आदि तीनका सत्व होतैं इकईसका आदि नवका उदय है। बहुरि गुणतीसका बंध इक्याणवैका सत्व होतैं नरकगतिविषैं कहे असे इकईस पचीस सताईस अठाईस गुणतीसके अर छवीस तीसके उदय स्थान हैं॥ ७७२ ॥

बासीदे इगिचउपणछव्वीसा तीसबंधतिगिणउदी ।
सुरमिव दुणउदिणउदी चउसुदओ ऊणतीसं वा ॥ ७३ ॥

द्व्यशीत्यामेकचतुःपंचषड्विंशः त्रिंशबंधे त्र्येकनवतौ ।
सुर इव द्विनवतिनवतिचतुर्षूदय एकोनत्रिंशं वा ॥ ७७३ ॥

जी० प्र०—तद्बंधद्व्यशीतिकसत्त्वे उदयस्थानान्येकचतुष्पंचषडधिकविंशतिकानि, त्रिंशत्कबंधत्र्येकनवतिकसत्त्वे देवगत्युक्तानि पंच । तद्बंधद्विनवतिकनवतिकादिचतुष्कसत्त्वे नवविंशतिकबंधोक्तानि नव । तद्बंधद्व्यशीतिकसत्त्वे तु नवविंशतिकबंधवच्चत्वारि ॥ ७७३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—गुणतीसका बंध सहित बियासीका सत्वविषैं इकईस चौबीस पचीस छबीसके उदयस्थान हैं। बहुरि तीसका बंध सहित तरेणवै इक्याणवैका सत्व होतैं देवगतिविषैं कहे ऐसे पांच उदयस्थान हैं। बहुरि तीसका बंध सहित बाणवैका वा निवै आदि च्यारिका सत्व होतैं गुणतीसका बंध सहितविषै कहे तैसैं ही नव उदयस्थान हैं। तीसका बंध वियासीका सत्व होतैं गुणतीसका बंध सहितवत् च्यारि उदयस्थान हैं ॥ ७७३ ॥

इगितीसबंधठाणे तेणउदे तीसमेव उदयपदं ।

इगिबंध तिणउदिचऊ सीदिचउक्केवि तीसुदओ ॥ ७४ ॥

एकत्रिंशबंधस्थाने त्रिनवत्यां त्रिंशमेव उदयपदं ।

एकबंध त्रिनवतिचतुष्के अशीतिचतुष्केऽपि त्रिंशोदयः ॥ ७७४ ॥

जी० प्र०—एकत्रिंशत्कबंधस्थाने त्रिनवतिकसत्त्वे उदयस्थानं त्रिंशत्कं। एकबंधत्रिनवतिकादिचतुष्काशीतिकादिचतुष्कसत्त्वेऽपि तदेव। अग्रे बंधाभावे द्वयाधारैकाधेयत्वं न संभवति ॥ ७७४ ॥ अथोदयसत्त्वस्थानाधारे बंधस्थानान्याधेयत्वेन गाथादशकेनाह—

स० चं०—इकतीसका बंध स्थान सहित तरेणवैका सत्व होतैं तीसका ही एक उदय स्थान है। बहुरि एकका बंध सहित तरेणवै आदि च्यारिका वा असी आदि च्यारिका सत्वविषै भी उदयस्थान तीसहीका है। आगैं बंधका अभाव है तातैं दोयस्थान आधार एक स्थान आधेय संभवै नाहीं ॥ ७७४ ॥ आगैं उदय सत्व स्थान आधार बंधस्थान आधेय ऐसा दश गाथानिकरि कहैं हैं। तहां इतनेका उदय इतनेका सत्त्व होतैं किसीकैं इतनेका किसीकैं इतनेका बंध पाइए ऐसा कथन कहिए है—

इगिवीसट्ठाणुदये तिगिणउदे णवयवीसदुगबंधो ।

तेण दुखणउदिसत्ते आदिमछक्कं हवे बंधो ॥ ७५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकविंशस्थानोदये त्र्येकनवत्यां नवविंशद्विकबंधः ।
तेन द्विखनवतिसत्त्वे आदिमषट्कं भवेद् बंधः ॥ ७७५ ॥

जी० प्र०—एकविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वयोर्बंधस्थानानि नवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे पुनस्तदुदयेन द्विनवतिकनवतिकसत्त्वयोराद्यान्येव षट् ॥ ७७५ ॥

स० चं —इकईसका उदय सहित तरेणवै इक्याणवैका सत्वविषैं गुणतीस तीसके दोय बंधस्थान हैं। बहुरि इकईसका उदय बाणवे निवेका सत्व होतैं आदिके छह बंधस्थान हैं ॥ ७७५ ॥

एवमडसीदितिदए ण हि अडवीसं पुणोवि चउवीसे ।
दुखणउदडसीदितिए सत्ते पुव्वं व बंधपदं ॥ ७६ ॥

एवमष्टाशीतित्रितये न ह्यष्टविंशं पुनरपि चतुर्विंशे ।
द्विखनवत्यष्टाशीतित्रये सत्त्वे पूर्वं व बंधपदं ॥ ७७६ ॥

जी० प्र०—पुनः तदुदयाष्टाशीतिकादित्रयसत्त्वे बंधस्थानानि तान्येव षट् न ह्यष्टाविंशतिकं। चतुर्विंशतिकोदये द्वानवतिकनवतिकाष्टाशीतिकादित्रयसत्त्वे पूर्वोक्तान्येव पंच ॥ ७७६ ॥

स० चं०—बहुरि इकईसका उदय सहित अठ्यासी आदि तीनका सत्व होतैं बंधस्थान आदिके छह तिनविषैं अठाईसका बिना पांच है। बहुरि चौवीसका उदय सहित बाणवै निवैका अठ्यासी आदि तीनका सत्व होतैं तेईसादि पांच बंधस्थान हैं ॥ ७७६ ॥

पणवीसे तिगिणउदे एगुणतीसं दुगं दुणउदीए ।
अदिमछक्कं बंधो णउदिचउक्केवि अडवीसं ॥ ७७ ॥ १४५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पंचविंशे त्र्येकनवतौ एकोनत्रिंशद्द्विकं द्विनवत्यां ।
आदिमषट्कं नवतिचतुष्केऽपि नाष्टाविंशं ॥ ७७७ ॥

जी० प्र०—पंचविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे बंधस्थानान्येकान्नत्रिंशत्कत्रिंशत्के द्वे। पुनः तदुदये द्विनवतिकसत्त्वे आदिमषट्कं। पुनस्त-दुदयनवतिकादिचतुःसत्त्वेष्वपि तदेवादिमषट्कमष्टाविंशतिकोनं ॥ ७७७ ॥

स० चं०—पचीसका उदय सहित तरेणवै इक्याणवैका सत्वविषैं गुणतीस तीसके दोय बंधस्थान हैं। बहुरि पचीसका उदय बाणवैका सत्वविषै आदिके छह बंध स्थान हैं बहुरि पचीस का उदय निवै आदि च्यारिका सत्व होतैं आदिके छहविषैं अठाईसका बिना पंच बंधस्थान हैं ॥ ७७७ ॥

छव्वीसे तिगिणउदे उणतीसं बंध दुगखणउदीए।
आदिमछक्कं एवं अडसीदितिए ण अडवीसं ॥ ७८ ॥

षड्विंशे त्र्येकनवतौ एकोनत्रिंशं बंधो द्विकखनवत्यां ।
आदिमषट्कमेवमष्टाशीतित्रये नाष्टाविंशं ॥ ७७८ ॥

जी० प्र०—षड्विंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वयोर्बंधस्थानानि नवविंशतिकं। पुनस्तदुदये द्विनवतिकनवतिकसत्त्वे आद्यानि षट्। पुन-स्तदुदयेऽष्टाशीत्यादित्रयसत्त्वे तान्येव षट् नाष्टाविंशतिकं ॥ ७७८ ॥

स० चं०—बहुरि छवीसका उदय सहित तरेणवै इक्याणवैका सत्व होतैं गुणतीसहीका बंधस्थान है। बहुरि छवीसका उदय बाणवै निवैका सत्व होतैं आदिके छह बंधस्थान हैं बहुरि छवीसका उदय अठ्यासी आदि तीनका सत्व होतैं आदिके छह विषैं अठाईसका विना पंच बंधस्थान हैं ॥ ७७८ ॥

सगवीसे तिगिणउदे णवबीसदुबंधयं दुणउदीए।
आदिमछण्णउदितिए एयं अडवीसयं णत्थि ॥ ७९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सप्तविंशे त्र्येकनवतौ नवविंशद्विबंधको द्विनवत्यां ।
आदिमषण्णवतित्रये एवमष्टाविंशकं नास्ति ॥ ७७९ ॥

जी० प्र०—सप्तविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे बंधस्थानानि नवविंशतिकादिद्वयं । पुनस्तदुदये द्विनवतिकसत्त्वे आद्यानि षट् । पुनस्तदुदये नवतिकादित्रिसत्त्वे तान्येव षट् नाष्टाविंशतिकमस्ति ॥ ७७९ ॥

स० चं०—सताईसका उदय सहित तरेणवै इक्याणवैका सत्वविषैं गुणतीसका आदि दोय बंधस्थान हैं। बहुरि सताईसका उदय बाणवैका सत्व होतैं आदिके छह बंध स्थान हैं। बहुरि सताईसका उदय निवै आदि तीनका सत्व होतैं आदिके छह विषै अठाईसका विना पंच बंधस्थान हैं॥ ७७९ ॥

अडवीसे तिगिणउदे उणतीसदु दुजुदणउदिणउदितिये ।
बंधो सगवीसं वा णउदीए अत्थि णडवीसं ॥ ८० ॥

अष्टाविंशे त्र्येकनवत्यामेकोनत्रिंशद्विकं द्वियुतनवतिनवतित्रये ।
बंधः सप्तविंशं वा नवतौ अस्ति नाष्टाविंशं ॥ ७८० ॥

जी० प्र०—अष्टाविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे बंधस्थानानि नवविंशतिकत्रिंशत्के द्वे । तदुदये द्वानवतिकसत्त्वे नवतिकादित्रिसत्त्वे च सप्तविंशतिकोदयस्येव न नवतिकसत्त्वेऽष्टाविंशतिकबंधोऽस्ति ॥ ७८० ॥

स० चं०—अठाईसका उदयसहित तरेणवै इक्याणवैका सत्व होतैं गुणतीस तीसके दोय बंधस्थान हैं। बहुरि अठाईसका उदय बाणवैका सत्व होतैं वा निवै आदि तीनका सत्व होतैं सताईसका उदय सहितविषै जैसें कहे तैसें ही बंधस्थान हैं। विशेष इतना—निवैका सत्व होतैं अठाईसका बंध नाहीं है॥ ७८० ॥

अडवीसमिवुणतीसे तीसे तेणउदिसत्तगे बंधो ।
णववीसिक्कत्तीसं इगिणउदी अट्ठवीसदुगं ॥ ८१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अष्टाविंश इवैकोनत्रिंशे त्रिंशे त्रिनवतिसत्त्वके बंधः।
नवविंशैकत्रिंशमेकनवत्यामष्टविंशाद्विकं ॥ ७८१ ॥

जी० प्र०—नवविंशतिकोदये त्र्येकाधिकनवतिकसत्त्वे द्वानवतिकनवतिकसत्त्वे अष्टचतुरधिकाशीतिकसत्त्वे च बंधस्थानान्यष्टाविंशतिकोदयस्येव ज्ञातव्यानि । त्रिंशत्कोदये त्रिनवतिकसत्त्वे नवविंशतिकैकत्रिंशत्के द्वे । तदुदयैकनवतिकसत्त्वे नरकगमनाभिमुखतीर्थसत्त्वमनुष्यमिथ्यादृष्टेरष्टनवाग्रविंशतिके द्वे ॥ ७८१ ॥

स० चं०—गुणतीसका उदय सहित तरेणवै इक्याणवैका सत्वविषैं वा बाणवै निवैका सत्व विषै वा अठ्यासी चौरासीका सत्व विषै जैसें अठाईसका उदय सहितविषैं कहे तैसें ही बंधस्थान हैं। बहुरि तीसका उदय सहित तरेणवैका सत्वविषैं गुणतीस इकतीसके दोय बंध स्थान हैं। बहुरि तीसका उदय इक्याणवैका सत्वविषैं नरक गमनकौं सन्मुख तीर्थंकर सत्ववाला मिथ्यादृष्टी मनुष्यकैं अठाईस वा गुणतीसका बंध है ॥ ७८१ ॥

तेण दुणउदे णउदे अडसीदे बंधमादिमं छक्कं।
चुलसीदेवि य एवं णवरि ण अडवीसबंधपदं ॥ ८२ ॥

तेन द्विनवतौ नवतौ अष्टाशीतौ बंध आदिमषट्कं।
चतुरशीत्यामपि च एवं नवरि नाष्टाविंशबंधपदं ॥ ७८२ ॥

जी० प्र०—तदुदयेन सह द्विनवतिकनवतिकाष्टाशीतिकसत्त्वे बंधस्थानान्याद्यषट्कं । पुनस्तदुदये चतुरशीतिकसत्त्वेऽपि तदेव षट्कं । किंतु नाष्टाविंशतिकबंधस्थानं ॥ ७८२ ॥

स० चं०—तीसका उदय सहित बाणवै निवै अठ्यासीका सत्वविषैं आदिके छह बंधस्थान हैं। बहुरि तीसका उदय चौरासीका सत्वविषैं भी तेई छह तिनविषैं अठाईसका नाहीं। ऐसैं पंच बंधस्थान हैं ॥ ७८२ ॥

तीसुदयं विगितीसे सजोग्गबाणउदिणउदितियसत्ते।
उवसंतचउक्कुदये सत्ते बंधस्स ण वियारो ॥ ८३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

त्रिंशोदयं वैकत्रिंशे स्वयोग्यद्वानवतिनवतित्रयसत्त्वे ।
उपशांतचतुष्कोदये सत्त्वे बंधस्य न विचारः ॥ ७८३ ॥

जी० प्र०—एकत्रिंशत्कोदये स्वयोग्यद्वानवतिकनवतिकाष्टाशीतिकसत्त्वेषु चतुरशीतिकसत्त्वे च बंधस्थानानि त्रिंशत्कोदयवदाद्यानि षडष्टाविंशतिकं विना पंच । उपशांतकषायादिचतुर्गुणस्थानानामुदयसत्त्वस्थानेषु नामबंधस्थानविचारो नास्ति तेषु तदभावात् । तथाहि—

उपशांतकषाये उ ३० । स ९३ । ९२ । ९१ । ९० । बं० । क्षीणकषाये उ ३० । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । बं० । सयोगे उ ३० । ३१ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । बं० । अयोगे उ ९ । ८ । स ८० । ७९ । ७८ । ७७ । १० । ९ । बं० ॥ ७८३ ॥

सं० चं०—इकतीसका उदय सहित अपने योग्य बाणवै निवै अठ्यासीका सत्वविषैं वा चौरासीका सत्वविषैं तीसका उदयसहितविषैं जैसैं कहे तैसैं आदिके छह वा अठाईसके विना पच बंधस्थान हैं । बहुरि उपशांतकषायादिक च्यारि गुण स्थानकनिविषैं उदयस्थान हैं तिनविषैं बंधस्थानका विचार नाहीं जातैं तिनविषैं बंधका अभाव है उदय सत्व ही हैं । तहां उपशांत कषायविषैं उदय तीसका सत्व तरेणवै आदि च्यारिका है । क्षीणकषायविषैं उदय तीसका सत्व असी आदि च्यारिका है । सयोगीविषैं उदय तीसका वा इकतीसका सत्व असी आदि च्यारिका है अयोगीविषै उदय नवका वा आठका सत्त्व असी आदि च्यारिका वा दश नवका है ॥ ७८३ ॥

णामस्स य बंधादिसु दुतिसंजोगा परूविदा एवं ।
सुदवणवसंतगुणगणसायरचंदेण सम्मदिणा ॥ ८४ ॥

नाम्नश्च बंधादिषु द्वित्रिसंयोगाः प्ररूपिता एवं ।
श्रुतवनवसंतगुणगणसागरचंद्रेण सन्मतिना ॥ ७८४ ॥

जी० प्र०—नाम्नश्च बंधादिषु द्वित्रिसंयोगाः प्ररूपिताः एवं श्रुतवनवसंतगुणगणसागरचंद्रेण सन्मतिना ॥ ७८४ ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे बंधोदयसत्त्वस्थानप्ररूपणो नाम पंचमोऽधिकारः ॥ ५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—ऐसें नामकर्मके बंध उदय सत्व स्थाननिविषैं द्विसंयोग वा त्रिसंयोग प्ररूपण किए हैं। कौंन कीए हैं? श्रुत जो जैन सिद्धांत सोई भया वन ताके प्रफुल्लित करनेकौं वसंत ऋतु समान अर गुणांका गण समूह सोई भया सागर समुद्र ताके बधावनेकूं चंद्रमा समान ऐसा जु भलेज्ञानका धारक सन्मति वर्धमान स्वामी तीहिं प्ररूपणा कीए हैं। इहां द्विसंयोग त्रिसंयोगविषैं जे बंध उदय सत्वस्थान कहे हैं तिनका जुदा जुदा पहिलैं कथन गुणस्थानादिविषैं किया है ताकौं यादिकरि यथासंभव विचारने ॥ ७८४ ॥

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृतटीकाके अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीकाविषैं कर्मकांडविषै बंध उदय सत्त्वस्थान प्ररूपणा नाम पांचवा अधिकार संपूर्ण भया ॥ ५ ॥

आस्रवाधिकारः ॥ ६ ॥

आस्रव भाव अभावतैं भए स्वभाव स्वरूप।
नमौं सहज आनंदमय अचलित अमल अनूप ॥ ६ ॥

अथ प्रत्ययाधिकारमुपक्रममाणो निर्विघ्नतत्परिसमाप्त्यर्थं स्वेष्टगुरून्नमस्यति—

आगैं प्रत्यय जु है कर्म आवनेकौं कारण ऐसा आस्रव ताका अधिकारकौं प्रारंभैं हैं। तहां प्रथम ही निर्विघ्नपनैं समाप्त होनेके अर्थि अपने इष्ट गुरुकौं नमस्कार करैं हैं—

णमिऊण अभयणंदिं सुदसायरपारगिंदणंदिगुरुं।
वरवीरणंदिणाहं पयडीणं पच्चयं वोच्छं ॥ ७८५ ॥

नत्वाभयनंदिनं श्रुतसागरपारगेंद्रनंदिगुरुं।
वरवीरनंदिनाथं प्रकृतीनां प्रत्ययं वक्ष्ये ॥ ७८५ ॥

जी० प्र०—अभयनंदिमुनीश्वरं श्रुतसागरपारगेंद्रनंदिगुरुं वरवीरनंदिनाथं च नत्वा प्रकृतीनां प्रत्ययं वक्ष्यामि ॥ ७८५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—अभयनंदी नामा मुनीश्वर बहुशास्त्र समुद्रका पारगामी इंद्रनंदि नामा गुरु बहुरि उत्कृष्ट वीरनंदी नामा स्वामी इनि अपने गुरुनिकौं नमस्कार करि कर्म प्रकृतिनिका प्रत्यय कहिए कारण ऐसा आस्रव ताकौं कहौंगा ॥ ७८५ ॥

मिच्छत्तं अविरमणं कसायजोगा य आसवा होंति ।
पण बारस पणुवीसं पण्णरसा होंति तब्भेया ॥ ८६ ॥

मिथ्यात्वमविरमणं कषाययोगौ चास्रवा भवंति ।
पंच द्वादश पंचविंशं पंचदश भवंति तद्भेदाः ॥ ७८६ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वमविरमणं कषायो योगश्चेति चत्वारो मूलप्रत्यया आस्रवा भवंति, आस्रवंत्यागच्छंति कर्मरूपतां कार्मणस्कंधा एभिरिति कारणात् । तेषां भेदाः क्रमेण पंच द्वादश पंचविंशतिः पंचदश च भवंति । मिलित्वोत्तरप्रत्यया अमी सप्तपंचाशत् ॥ ७८६ ॥ अथ मूलप्रत्ययान् गुणस्थानेष्वाह—

स० चं०—मिथ्यात्व १ अविरत २ कषाय ३ योग ४ ए च्यारि मूल आस्रव हैं। आस्रवंति कहिए कार्माण स्कंध हैं ते कर्मरूपपनेकौं प्राप्त हो हैं इनकरि तातैं इनकौं आस्रव कहिए । तिनके भेद क्रमतैं पंच बारह पचीस पंद्रह जानने। तहां एकांत १ विनय २ संशय ३ विपरीत ४ अज्ञान ५ ए तो पांच मिथ्यात्व हैं। पांच इंद्री छठा मन का वशीभूतपना नाहीं पंच स्थावर छठे त्रसकी दया नाहीं ऐसैं बारह अविरत हैं । अनंतानुबंधी अप्रत्याख्यानावरण प्रत्याख्यानावरण संज्वलन क्रोध मान माया लोभ ए सोलह कषाय अर हास्य रति अराति शोक भय जुगुप्सा पुरुष स्त्री नपुंसक वेद ए नव नोकषाय ऐसैं पचीस कषाय हैं। सत्य असत्य उभय अनुभयरूप च्यारि मनोयोग ४ सत्य असत्य उभय अनुभयरूप च्यारि वचन योग ४ औदारिक १ औदारिकमिश्र २ वैक्रियिक ३ वैक्रियिकमिश्र ४ आहारक ५ आहारकमिश्र ६ कार्माण ७ रूप सात काययोग ऐसैं पंद्रह योग हैं। या प्रकार सत्तावन उत्तर प्रत्यय हैं ॥ ७८६ ॥ आगैं मूल प्रत्ययकौं गुणस्थाननिविषैं कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चदुपच्चइगो बंधो पढमे णंतरतिगे तिपच्चइगो ।
मिस्सगबिदियं उवरिमदुगं च देसेक्कदेसम्मि ॥ ८७ ॥

चतुःप्रत्ययिको बंधः प्रथमेऽनंतरत्रिके त्रिप्रत्ययकः ।
मिश्रकद्वितीय उपरिमद्विकं च देशैकदेशे ॥ ७८७ ॥

जी० प्र०—मूलप्रत्यया गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ बंधश्चतुष्प्रत्ययिकः । सासादनादित्रये मिथ्यात्वं विना त्रिप्रत्ययिकः । देशेन लेशेन एकमसंयमं दिशति परिहरतीति देशैकदेशः देशसंयतः । तत्रापि त्रिप्रत्ययिकः । ते प्रत्यया विरमणेन मिश्रमविरमणं कषायो योगश्चेति ॥ ७८७ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषैं बंध च्यार्‍यो प्रत्ययतैं हैं । सासादनादि तीनविषैं मिथ्यात्व विना तीन प्रत्ययतैं है । देश कहिए लेश किंचित् एक जु है असंयम ताकौं दिशति कहिए परिहरै त्यागै ऐसा देशैकदेश कहिए देश संयत तिसविषैं भी तीन प्रत्यय हीतैं बंध है । इतना विशेष—तहां अविरत है सो विरतिकरि मिश्ररूप है ॥ ७८७ ॥

उवरिल्लपंचये पुण दुपच्चया जोगपच्चओ तिण्हं ।
सामण्णपच्चया खलु अट्ठण्हं होंति कम्माणं ॥ ८८ ॥

उपरिमपंचके पुनर्द्विप्रत्ययौ योगप्रत्ययस्त्रयाणां ।
सामान्यप्रत्ययाः खलु अष्टानां भवंति कर्मणां ॥ ७८८ ॥

जी० प्र०—पुनः उपरितनेषु पंचसु द्वौ द्वौ प्रत्ययौ तौ योगकषायौ । उपशांतकषायादिषु त्रिषु एको योगप्रत्ययः । इत्येवं खलु सामान्यप्रत्यया अष्टकर्मणां भवंति ॥ ७८८ ॥ अथोत्तरप्रत्ययान् गुणस्थानेषु गाथाद्वयेनाह—

१

मि	सा	मि	अ	दे	प्र	अ	अ	अ	सू	उ	क्षी	स	अ
४	३	३	३	३	२	२	२	२	२	१	१	१	०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—बहुरि ऊपरिके पंच गुणस्थाननिविषैं दोय ही प्रत्यय हैं ते योग अर कषाय हैं। बहुरि उपशांत कषायादि तीनविषैं योग प्रत्यय एक ही है ऐसैं सामान्य प्रत्यय आठ कर्मनिके कारण ते गुणस्थाननिविषैं जानने ॥ ७८८ ॥ आगैं उत्तर प्रत्ययनिकौं गुणस्थाननिविषैं कहैं हैं—

पणवण्णा पण्णासा तिदाल छादाल सत्ततीसा य।
चदुवीसा बावीसा बावीसमपुव्वकरणोत्ति ॥ ८९ ॥
थूले सोलसपहुदी एगूणं जाव होदि दसठाणं।
सुहुमादिसु दस णवयं णवयं जोगिम्मि सत्तेव ॥ ९० ॥

पंचपंचाशत् पंचाशत् त्रिचत्वारिंशत् षट्चत्वारिंत्सप्तत्रिंशश्च।
चतुर्विंशतिर्द्वाविंशतिः द्वाविंशमपूर्वकरण इति ॥ ७८९ ॥
स्थूले षोडशप्रभृतय एकोना यावद्भवति दशस्थानं।
सूक्ष्मादिषु दश नवकं नवकं योगिनि सप्तैव ॥ ७९० ॥

जी० प्र०—उत्तरप्रत्ययाः गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टावाहारकद्वयं नेति पंचपंचाशत्। सासादने मिथ्यात्वपंचकं नेति पंचाशत्। मिश्रे औदारिकमिश्रवैक्रियिकमिश्रकार्मणयोगानंतानुबंधिनो नेति त्रिचत्वारिंशत्। असंयते मिश्रापनीतयोगत्रयमस्तीति षट्चत्वारिंशत्। देशसंयते तत्त्रयवैक्रियिकयोगत्रसासंयमाप्रत्याख्यानचतुष्कं नेति सप्तत्रिंशत्। प्रमत्ते शेषैकादशासंयमप्रत्याख्यानचतुष्कं नाहारकद्विकमस्तीति चतुर्विंशतिः। अप्रमत्तादिद्वये तद्द्विकं नेति द्वाविंशतिः। स्थूले षण्णोकषाया नेति षोडश। षंढवेदो नेति पंचदश। स्त्रीवेदो नेति चतुर्दश। पुंवेदो नेति त्रयोदश। क्रोधो नेति द्वादश। मानो नेत्येकादश। माया नेति दश। सूक्ष्मसांपराये बादरलोभो न सूक्ष्मलोभोऽस्तीति दश। उपशांतक्षीणकषाययोः सोऽपि नेति नव।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सयोगे सत्यानुभयमनोवागौदारिकद्विककार्मणयोगाः सप्त । अयोगे शून्यं ॥ ७८९ ॥ ७९० ॥ अत्र व्युच्छित्त्यनुदयोपयोगिगाथाषट्कं केशववर्णिभिरुच्यते—

स० चं०—उत्तर प्रत्यय गुणस्थाननिविषैं कहिए है। तहां मिथ्यादृष्टिविषैं आहारक आहारकमिश्र नाहीं तातैं पचावन प्रत्यय हैं। सासादनविषै पांच मिथ्यात्व नाहीं तातैं पचास हैं। मिश्रविषैं औदारिकमिश्र वैक्रियिकमिश्र कार्माण योग अनंतानुबंधी चतुष्क नाहीं तातैं तियालीस हैं। असंयतविषैं जे मिश्रविषैं तीन योग घटाए थे तिन के मिलनेतैं छियालीस हैं। देश संयतविषैं ते तीन योग अर वैक्रियिककाय योग अर त्रस हिंसारूप अविरति अर अप्रत्याख्यान च्यारि कषाय नाहीं तातैं सैंतीस हैं। प्रमत्तविषैं अवशेष ग्यारह अविरति अर प्रत्याख्यान चतुष्क ए पंद्रह नाहीं अर आहारकद्विक मिलैं तातैं चौबीस है। अप्रमत्त आदि दोयविषैं आहारकद्विक नाहीं तातैं बावीस हैं। स्थूल जो अनिवृत्तिकरण तीहिविषैं छह हास्यादिक नोकषाय नाहीं तब सोलह, नपुंसक वेद नाहीं तब पंद्रह, स्त्रीवेद नाहीं तब चौदह, पुरुषवेद नाहीं तब तेरह, संज्वलन क्रोध नाहीं तब बारह, मान नाहीं तब ग्यारह, माया नाहीं तब दश हैं। सूक्ष्मसांपरायविषैं बादर लोभ नाहीं सूक्ष्म लोभ है तातैं इहां भी दश ही हैं। उपशांतकषाय क्षीणकषायविषैं सो सूक्ष्मलोभ भी नाहीं तातैं नव नव हैं। सयोगीविषैं सत्य अनुभय मन सत्य अनुभय वचन औदारिक औदारिकमिश्र कार्माणयोग ए सात प्रत्यय हैं। अयोगीविषैं शून्य—प्रत्ययका अभाव है ॥ ७८९—७९० ॥

आगैं प्रत्ययनिकी व्युच्छित्ति वा अनुदयका वर्णन रूप छह गाथा केशव ब्रह्मचारीकरि कहिए है—

प्रत्ययव्युच्छित्ति	मि ५	स ४	मि०	अ ९	दे १५	प्र २	अ ०	अ ६	अ १	१	१	१	१	१	१	सू १	उ ०	क्षी ४	स ७	अ ०
प्रत्ययोदय	५५	५०	४३	४६	३७	२४	२२	२२	१६	१५	१४	१३	१२	११	१०	१०	९	९	७	०
प्रत्ययानुदय	२	७	१४	११	२०	३३	३५	३५	४१	४२	४३	४४	४५	४६	४७	४७	४८	४८	५०	५७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पण चदु सुण्णं णवयं पण्णारस दोण्णि सुण्ण छक्कं च।
एक्केक्कं दस जाव य एक्कं सुण्णं च चारि सग सुण्णं ॥ १ ॥
दोण्णि य सत्त य चोद्दसणुदयेवि एयार वीस तेत्तीसं।
पणतीस दुसिगिदालं सत्तेतालट्ठदाल दुसु पण्णं ॥ २ ॥

पंच चतुष्कं शून्यं नवकं पंचदश द्वे शून्यं षट्कं च।
एकैकं दश यावच्च एकं शून्यं च चत्वारि सप्त शून्यं ॥ १ ॥
द्वौ च सप्त च चतुर्दशानुदयेऽपि एकादश विंशं त्रयस्त्रिंशत्।
पंचत्रिंशत् द्वयोरेकचत्वारिंशत्सप्तचत्वारिंशदष्टचत्वारिंशद् द्वयोः पंचाशत् ॥ २ ॥

ते के ?—

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननिविषैं क्रमतैं पांच च्यारि शून्य नव पंद्रह दोय शून्य छह पीछैं दश आस्रव रहैं तहां पर्यंत एक एक बहुरि एक शून्य च्यारि सात शून्य रूप आस्रवनिकी व्युच्छित्ति है। बहुरि तिन गुणस्थाननिविषैं अनुदय जो आस्रवका अभाव सो क्रमतैं दोय सात चौदह ग्यारह वीस तेतीस पैंतीस पैंतीस इकतालीस सैंतालीस अठतालीस अठतालीस पचासका जानना ॥ १-२ ॥ ते व्युच्छित्ति कौन सो कहैं हैं—

मिच्छे पणमिच्छत्तं पढमकसायं तु सासणे मिस्से।
सुण्णं अविरदसम्मे बिदियकसायं विगुव्वदुग कम्मं ॥ ३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ओरालमिस्स तसवह णवयं देसम्मि अविरदेक्कारा ।
तदियकसायं पण्णर पमत्तविरदम्मि हारदुगछेदो ॥ ४ ॥
सुण्णं पमादरहिदेऽपुव्वे छण्णोकसायवोच्छेदो ।
अणियट्टिम्मि य कमसो एक्केक्कं वेदतियकसायतियं ॥५॥
सुहुमे सुहुमो लोहो सुण्णं उवसंतगेसु खीणेसु ।
अलीयुभयवयणमणचउ जोगिम्मि य सुणह वोच्छामि ॥६॥
सच्चाणुभयं वयणं मणं च ओरालकायजोगं च ।
ओरालमिस्स कम्मं उवयारेणेव सब्भाओ ॥ ७ ॥

मिथ्ये पंचमिथ्यात्वं प्रथमकषायस्तु सासादने मिश्रे ।
शून्यमविरतसम्ये द्वितीयकषायो वैगूर्वद्विकं कर्म ॥ ३ ॥
औरालमिश्रं त्रसवधो नवकं देशेऽविरता एकादश ।
तृतीयकषायः पंचदश प्रमत्तविरते आहारकाद्विकच्छेदः ॥ ४ ॥
शून्यं प्रमादरहिते अपूर्वे षण्णोकषायव्युच्छेदः ।
अनिवृत्तौ च क्रमश एकैकं वेदत्रयकषायत्रयं ॥ ५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूक्ष्मे सूक्ष्मो लोभः शून्यमुपशांतकेषु क्षीणेषु ।
अलीकोभयवचनमनश्चतुष्कं योगिनि च शृणुत वक्ष्यामि ॥ ६ ॥
सत्यानुभयं वचनं मनश्च औरालकाययोगश्च ।
औरालमिश्रं कार्मणमुपचारेणैव सद्भावः ॥ ७ ॥ कुलकं ।

अथ विशेषं वक्तुमधिकारान्निर्दिशति—

स० चं०—मिथ्यात्वविषैं पांच मिथ्यात्व व्युच्छित्ति भए। ऊपरिके गुणस्थाननिविषैं नाहीं । सासादनविषैं प्रथम च्यारि कषाय, मिश्रविषैं शून्य, अविरतविषैं दूसरा च्यारि कषाय, वैक्रियिकद्विक कार्माण औदारिक मिश्र त्रस-हिंसा ए नव, देशसंयतविषैं अविरत ग्यारह तीसरा च्यारि कषाय ऐसैं पंद्रह, प्रमत्तविरतविषैं आहारकद्विक, अप्र-मत्तविषैं शून्य, अपूर्वकरणविषैं छह नोकषाय, अनिवृत्तिकरणविषै क्रमतैं एक एक करि तीन वेद तीन कषाय, सू-क्ष्मसांपरायविषै सूक्ष्म लोभ, उपशांतकषायविषैं शून्य, क्षीणकषायविषैं असत्य उभय मन वा वचन ए च्यारि व्यु-च्छित्ति हैं । बहुरि सयोगीविषैं कहों हों तू सुनि—सत्य अनुभय वचन अर मन अर औदारिक औदारिकमिश्र कार्माण ए सात योग हैं। सो उपचार ही है ॥ ३-७ ॥ आगैं आस्रवनिके विशेष कहनेकौं अधिकार कहैं हैं—

अवरादीणं ठाणं ठाणपयारा पयारकूडा य ।
कूडुच्चारणभंगा पंचविहा होंति इगिसमये ॥७९१॥

अवरादीनां स्थानं स्थानप्रकाराः प्रकारकूटाश्च ।
कूटोच्चारणभंगाः पंचविधा भवंति एकसमये ॥ ७९१ ॥

जी० प्र०—जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानानि स्थानप्रकाराः कूटप्रकाराः कूटोच्चारणविधानभंगाश्चेति पंचप्रकाराः प्रत्ययानामेककाले भवंति ॥ ७९१ ॥ तान् प्रकारान् क्रमेण गाथाषट्केनाह—

१ कशवबर्णिभी राचितत्वादिमाः सप्त गाथाः क्षपकासिकाः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०–जघन्य मध्यम उत्कृष्ट स्थान बहुरि स्थानप्रकार बहुरि कूट प्रकार बहुरि कूटोच्चारणविधान बहुरि भंग ऐसैं प्रत्ययनिके पांच प्रकार हैं ते एक कालविषैं हो हैं ॥ ७९१ ॥ तिन प्रकारनिकों क्रमतैं छह गाथानिकरि कहैं हैं–

दस अट्ठारस दसयं सत्तर णव सोलसं च दोण्हंपि।
अट्ठ य चोद्दस पणयं सत्त तिये दुति दुगेगमेगमदो ॥७९२॥

दश अष्टादश दशकं सप्तदश नव षोडश च द्वयोरपि।
अष्ट च चतुर्दश पंचकं सप्त त्रिके द्वित्रिकं द्विकैकमेकमतः ॥ ७९२ ॥

जी० प्र०—एकजीवस्यैकस्मिन् समये संभवत्प्रत्ययसमूहः स्थानं। तच्च गुणस्थानेषु मिथ्यादृष्टौ जघन्यं दशकं मध्यमं एकैकाधिकं यावदुत्कृष्टमष्टादशकं। सासादने दशकं जघन्यं तथा मध्यममुत्कृष्टं सप्तदशकं। मिश्रे नवकं जघन्यं तथा मध्यममुत्कृष्टं षोडशकं। तथाऽसंयमेऽपि द्वयोरपीति वचनात्। देशसंयतेऽष्टकं जघन्यं तथा मध्यमं चतुर्दशकं उत्कृष्टं। प्रमत्तादित्रये प्रत्येकं पंचकसप्तकानि। अनिवृत्तिकरणे द्विकत्रिके। सूक्ष्मसांपराये द्विकं। उपशांतकषायादित्रये एककं। अयोगे शून्यं ॥ ७९२ ॥ अथ स्थानप्रकारानाह—

स० चं०–एक जीवकैं एक कालविषैं संभवै ऐसा प्रत्ययनिका समूह सो स्थान कहिए। सो गुणस्थाननिविषैं कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषैं जघन्य दशका मध्यम एक एक अधिक यावत् उत्कृष्ट अठारहका स्थान हो है। भावार्थ–मिथ्यादृष्टिविषैं एक जीवकैं एक कालि सत्तावन आस्रवनिविषैं जघन्य तौ दश होंय मध्यम ग्यारह वा बारह वा तेरह वा चौदह वा पंद्रह वा सोलह वा सतरह होंइ। उत्कृष्ट अठारह होइ। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। सासादनविषैं जघन्य दशका मध्यम तैसैं ही एक एक अधिक यावत् उत्कृष्ट सतरहका स्थान है। मिश्रविषैं जघन्य नवका मध्यम तैसैं ही एक एक अधिक यावत् उत्कृष्ट सोलहका स्थान है। 'द्वयोरपि च' इस वचनतैं अविरतविषैं भी मिश्रवत् स्थान है। देशसंयतविषैं जघन्य आठका मध्यम तैसैं ही एक एक अधिक यावत् उत्कृष्ट चौदहका स्थान है। ९५७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमत्त आदि तीनविषैं प्रत्येक जघन्य पांचका मध्यम छहका उत्कृष्ट सातका स्थान है । अनिवृत्तिकरणविषैं जघन्य दोयका मध्यम नाहीं । उत्कृष्ट तीनका स्थान है। सूक्ष्मसांपरायविषैं जघन्यादि भेद विना दोयका एक ही स्थान है। उपशांतकषायादिविषैं जघन्यादि भेद विना एकका एक ही है । अयोगीविषैं शून्य है ॥ ७९२ ॥ आगैं ए स्थान कहे ते केते केते प्रकारकरि पाइए हैं ऐसा स्थान प्रकारकरि कहैं हैं—

एक्कं च तिण्णि पंच य हेट्ठुवरीदो दु मज्झिमे छक्कं ।
मिच्छे ठाणपयारा इगिदुगमिदरेसु तिण्णि देसोत्ति ॥७९३॥

एकश्च त्रयः पंच च अधस्तनोपरितस्तु मध्यमे षट्कं ।
मिथ्ये स्थानप्रकाराः एकद्विकमितरेषु त्रयोदश इति ॥ ७९३ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टेः स्थानेष्वधस्तनानि दशकैकादशकद्वादशकानि त्रीणि उपरितनान्यष्टादशकसप्तदशकषोडशकानि त्रीणि च क्रमेण एकत्रिपंच भवंति । मध्यमानि त्रयोदशकचतुर्दशकपंचदशकानि षट् भवंति । सासादनादिदेशसंयतांतानां अधस्तनानि प्रथमद्वितीयानि उपरितनानि

१

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
१	३	५	६	६	६	५	३	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चरमद्विचरमाणि चैकद्विप्रकाराणि । मध्यमानि त्रित्रिप्रकाराणि । प्रमत्तादीनां सर्वस्थानान्येकैकप्रकाराणि ॥ ७९३ ॥ अथ कूटप्रकारानाह—

स० चं०—मिथ्यादृष्टिविषै आठ स्थान कहे तिनविषैं दश ग्यारह बारहके तीन नीचले स्थान अर अठारह सतरह सोलहके तीन ऊपरिके स्थान इनविषैं तौ क्रमतैं एक तीन पांच प्रकार हैं। भावार्थ—दश वा अठारह के स्थान तौ एक एक प्रकारकरि ही हैं । ग्यारह सतरहके स्थान तीन तीन प्रकार करि हैं । बारह सोलहके स्थान पांच पांच प्रकारकरि हैं। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि मध्यके तेरह चौदह पंद्रहके तीन स्थान छह छह प्रकार हैं। बहुरि सासादनादिक देशसंयत पर्यंतविषैं नीचला पहिला वा दूसरा स्थान अर ऊपरला अंतका वा अंततैं नीचला स्थान सो एक दोय प्रकार है। पहिला अर अंतका स्थान तौ एक एक प्रकार है। अर दूसरा अंतकेतैं लगताही

१

सासादन—	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
	१	२	३	३	३	३	२	१

मिश्र—	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
	१	२	३	३	३	३	२	१

असंयत	९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
	१	२	३	३	३	३	२	१

देशसंयत	८	९	१०	११	१२	१३	१४
	१	२	३	३	३	२	१

२

प्रमत्त	५	६	७
	१	१	१

अप्रमत्त	५	६	७
	१	१	१

अपूर्व	५	६	७
	१	१	१

अनिवृ०	२	३
	१	१

सू	२
	१

क्षी	१
	१

स	१
	१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नीचला स्थान दोय दोय प्रकार है। इनके मध्य जेते जेते स्थान रहे ते सर्व तीन प्रकार हैं। बहुरि प्रमत्तादिकके सर्व ही स्थान एक एक प्रकार हैं ॥ ७९३ ॥ आगैं ए कहे स्थान प्रकार तिनके जाननेके अर्थि कूट प्रकार कहैं हैं—

भयदुगरहियं पढमं एक्कदरजुदं दुसहियमिदि तिण्णं।
सामण्णा तियकूडा मिच्छा अणहीणतिण्णिवि य ॥ ७९४ ॥

भयद्विकरहितं प्रथममेकतरयुतं द्विसहितमिति त्रयः।
सामान्यानि त्रिकूटानि मिथ्या अनहीनत्रीण्यपि च ॥ ७९४ ॥

जी० प्र०—पंच मिथ्यात्वानि षडिंद्रियाण्येकद्वित्रिचतुष्पंचषट्कायवधान् चत्वारि क्रोधादिचतुष्काणि त्रीन्वेदान् हास्ययुग्मारतियुग्मे आहारकद्वयं विना त्रयोदशयोगांश्चोपर्युपरि तिर्यग्रचयित्वा इदं भयजुगुप्सारहितं प्रथमं तदन्यतरयुतं द्वितीयं तद्द्वययुतं तृतीयमिति सामान्यमूलकूटानि त्रीणि। अनंतानुबंध्यूनानि च त्रीणि मिलित्वा मिथ्यादृष्टौ षड् भवंति। सासादने तानि सामान्यकूटानि पंच मिथ्यात्वोनानि। मिश्रे एतानि चतुरनंतानुबंधित्रिमिश्रयोगोनानि। असंयते एतानि सत्रिमिश्रयोगानि। देशसंयते एतानि चतुरप्रत्याख्यानत्रसासंयमवैक्रियिककायत्रिमिश्रयोगोनानि। प्रमत्ते एतान्येकादश संयमचतुःप्रत्याख्यानोनं वाहारकद्वययुतानि। अप्रमत्तादिद्वये एतान्याहारकद्वयोनानि। अनिवृत्तिकरणे तत्संज्ञागादुपरि तत्तद्वेदकषायहास्यादिषट्कं विना कूटमेकैकमेव भयद्विकाभावात्। सूक्ष्मसांपराये तदेव वादरलोभोनं। उपशांतकषायादिद्वये एतदेव सूक्ष्मलोभोनं। सयोगे एतदेवासत्योभयमनोवचसी विना। अयोगे शून्यं।

(१)

योग १३ मि-	१३	१३	१३	१० अनंतानु	१०	१०	१०	सा १३
० थ्या दृष्टि	१	१	२	० बंधिरहित	१	१	२	साद ०
हा। अ। २। २	२। २	२। २	२। २	२। २ मिथ्यादृ	२। २	२। २	२। २	न २। २
वे १। १। १	१। १। १	१। १। १	१। १। १	१।१।१ त्रिकूटं	१। १। १	१। १। १	१। १। १	१। १। १
क ४। ४। ४। ४	४। ४। ४। ४	४। ४। ४। ४	४। ४। ४। ४	३।३।३।३	३। ३। ३। ३	३। ३। ३। ३	३। ३। ३। ३	४। ४। ४। ४
का १।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६।	१।२।३।४।५।६।	१।२।३।४।५।६।	१।२।३।४।५।६।	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६	१।२।३।४।५।६
इं १।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१।	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१	१।१।१।१।१।१
मि १।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	१।१।१।१।१	०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अत्रानंतानुबंध्यूनमिथ्यादृष्टिप्रथमकूटे मिथ्यात्वेऽप्येकं । इंद्रियेष्वेकं पृथ्वीवधः अनंतानुबंधिभावाच्चतुर्षु कषायत्रिकेष्वेकं वेदेष्वेकः । द्विकद्वये एकं

१३ १ २ । २ १ । १ । १ ४ । ४ । ४ । ४ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	१३ २ २ । २ १ । १ । १ ४ । ४ । ४ । ४ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	मि १० श्र ० २ । २ १ । १ । १ ३ । ३ । ३ । ३ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	१० १ २ । २ १ । १ । १ ३ । ३ । ३ । ३ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	१० २ २ । २ १ । १ । १ ३ । ३ । ३ । ३ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	असं यत १३ ० २ । २ १ । १ । १ ३ । ३ । ३ । ३ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	१३ १ २ । २ १ । १ । १ ३ । ३ । ३ । ३ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०
१३ २ २ । २ १ । १ । १ ३ । ३ । ३ । ३ १ । २ । ३ । ४ । ५ । ६ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	देश संयत ६ ० २ । २ १ । १ । १ २ । २ । २ । २ १ । २ । ३ । ४ । ५ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	६ १ २ । २ १ । १ । १ २ । २ । २ । २ १ । २ । ३ । ४ । ५ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	६ २ २ । २ १ । १ । १ २ । २ । २ । २ १ । २ । ३ । ४ । ५ १ । १ । १ । १ । १ । १ ०	प्र म ११ त्त ० २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १ ० ० ०	११ १ २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १ ० ० ०	११ २ २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १ ० ० ०
अप्रम ६ त्त ० २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १ ० ० ०	६ १ २ । २ १ । १ १ १ । १ । १ । १	६ २ २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १	अपूर्व ६ ० २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १	६ १ २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १	६ २ २ । २ १ । १ । १ १ । १ । १ । १	अनि वृत्ति ६ १ । १ । १ १ । १ । १ । १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पर्याप्तत्वादस्य दशपर्याप्तयोगेष्वेकः मिलित्वा दशकं स्यात् । अत्र पृथ्वीवधमपनीय पृथ्व्यादिचतुष्कवधे निक्षिप्ते एकादशकं । अत्र तमपनीय पृथ्व्यादित्रयवधे निक्षिप्ते द्वादशकं । अत्र तमपनीय पृथ्व्यादिचतुष्कवधे निक्षिप्ते त्रयोदशकं । अत्र तमपनीय पृथ्व्यादिपंचवधे निक्षिप्ते चतुर्दशकं । अत्र तमपनीय पृथ्व्यादिषट्कवधे निक्षिप्ते पंचदशकं । एतानि षट् । एवं तद्द्वितीयकूटे एकादशकादीनि षट् । तृतीयकूटे द्वादशकादीनि षट् । पुनः

६	६	६	६	६	६	सूक्ष्मसांपराय	उपशांत	क्षी	सयोग	अयोग के
१।१	१				१।	६	६	६	७ केवली	०
					बादर	० सूक्ष्मलो	०	०	०	यो
१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१।१	१।१।१	१।१	०	०	०	०	०	०
					०	०	०	०	०	०
					०	०	०	०	०	०

१ एषु गुणस्थानकूटप्रकारेषु मिथ्यादृष्टावनंतानुबंध्यूनत्रिकूटेषु भयद्विकोनकूटे दशकैकादशकद्वादशकत्रयोदशकचतुर्दशकपंचदशकस्थानानि भवंति । तद्यथा—एकं मिथ्यात्वं एक इंद्रियासंयमः एकः पृथ्वीकायिकबधासंयमः । अनंतानुबंध्यूनकषायचतुष्त्रिकेष्वेकं । त्रिवेदेष्वेकः । हास्यरतिद्विकयोरेकं । अस्य मिथ्यादृष्टेः पर्याप्तत्वा द्दशपर्याप्तयोगेष्वेकः इति दशकं स्यात् । पुनस्तस्मिन्नेव कूटे एकं मिथ्यात्वमेक इंद्रियासंयमः । पृथ्व्यप्कायिकबधासंयमौ । कषायचतुस्त्रयेष्वेकं । त्रिवेदेष्वेकः । द्विद्विकयोरेकं । दशयोगेष्वेकः इत्येकादशकं । पुनस्तत्रैव मिथ्यात्वेष्वेकं इंद्रियेष्वेकं पृथ्व्यादित्रिवधासंयमाः । कषायचतुस्त्रयेष्वेकं । त्रिवेदेष्वेकः । द्विद्विकयोरेकं । दशयोगेष्वकः, इति द्वादशकं । पुनः मिथ्यात्वेष्वेकं । इंद्रियेष्वेकं । पृथ्व्यादिचतुर्वधासंयमाः । चतुःकषायत्रयेष्वेकं । त्रिवेदेष्वेकः । द्विद्विकयोरेकं । दशयोगेष्वेकः इति त्रयोदशकं । पुनः मिथ्यात्वेष्वेकं । इंद्रियेष्वेकं । पृथ्व्यादिपंचबधासंयमाः । चतुःकषायत्रयेष्वेकं । त्रिवेदेष्वेकः । द्विद्विकयोरेकं । दशयोगेष्वेकः । इति चतुर्दशकं । पुनः मिथ्यात्वेष्वेकं । इंद्रियेष्वेकं । पृथ्व्यादिषट्कायबधासंयमाः । चतुःकषायत्रयेष्वेकं इति पंचदशकं । एवं द्वितीयकूटे एकादशकादिषोडशकांतानि षट् । तृतीयकूटे द्वादशकादिसप्तदशकांतानि षट् । संदृष्टिः—

१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७

अत्र दशकस्य प्रकार एकः १०/१ एकादशकस्य द्वौ ११/२ द्वादशकस्य त्रयः १२/३ त्रयोदशकस्य त्रयः १३/३ चतुर्दशकस्य त्रयः १४/३ पंचदशकस्य त्रयः १५/३ षोडशकस्य द्वौ १६/२ सप्तदशकस्यैकः १७/१ मिलित्वाऽष्टादश भवंति १८ । पुनः मिथ्या- ९६२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनंतानुबंधिसहिततत्प्रथमकूटे एकादशकादीनि षट् । द्वितीयकूटे द्वादशकादीनि षट् । तृतीयकूटे त्रयोदशकादीनि षट् । एतेषु दशकमष्टादशकं चैकैकं एकादशकसप्तदशकानि त्रीणि त्रीणि । द्वादशकषोडशकानि पंच पंच । त्रयोदशकचतुर्दशकपंचदशकानि षट् षट् । मिलित्वा षट्त्रिंशत् तथा

दृष्टावनंतानुबंधियुतत्रिकूटेषु प्रथमे एकादशकादीनि षट् । द्वितीये द्वादशकादीनि षट् । तृतीये त्रयोदशकादीनि षट् । संदृष्टिः—

११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७
१३	१४	१५	१६	१७	१८

अत्रैकादशकस्य प्रकार एकः ११/१ द्वादशकस्य द्वौ १२/२ त्रयोदशकस्य त्रयः १३/३ चतुर्दश-कस्य त्रयः १४/३ पंचदशकस्य त्रयः १५/३ षोडशकस्य त्रयः १६/३ सप्तदशकस्य द्वौ १७/२ अष्टादशकस्यैकः १८/१ एतेषु प्रागुक्ताष्टादशसु मिलितेषु षट्त्रिंशद्भवंति ।

तत्संदृष्टिः—

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७	१८
१	३	५	६	६	६	५	३	१

एवं सासादनस्य प्रथमकूटे दशकादीनि षट् । द्वितीये एकादशकादीनि षट् । तृतीये द्वादशकादीनि षट् ।

१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६
१२	१३	१४	१५	१६	१७

मिलित्वाष्टादश

१०	११	१२	१३	१४	१५	१६	१७
१	२	३	३	३	३	२	१

मिश्रस्य त्रिकूटेषु—

९	१०	११	१२	१३	१४
१०	११	१२	१३	१४	१५
११	१२	१३	१४	१५	१६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सासादनेष्वप्यनयैव दिशा तत्स्थानानि स्थानप्रकाराश्च ज्ञातव्याः। एतत्सर्वं मनसि धृत्वा प्राक्तनसूत्रद्वयमुक्तमाचार्यैः ॥७९४॥ अथ कूटोच्चारणप्रकारमाह—

मिलित्वा—

९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	३	३	३	२	१

असंयतस्य—

९	१०	११	१२	१३	१४	१५	१६
१	२	३	३	३	३	२	१

देशसंयतस्य—

८	९	१०	११	१२	१३
९	१०	११	१२	१३	१४
१०	११	१२	१३	१४	१५

प्रमत्तसंयतस्य—

८	९	१०	११	१२	१३	१४
१	२	३	३	३	२	१

प्रथमकूटे पंचकमेकं द्वितीये षट्कं। तृतीये सप्तकमेव स्यात्। संदृष्टिः ५/६/७ तथाऽप्रमत्तापूर्वकरणयोरपि ५/६/७ अनिवृत्तिकरणस्य सवेदभागे त्रिकूटेषु त्रिकमेकं। अवेदभागे चतुःकूटेषु द्विकमेकं स्यात् ३/१ । २/१ सूक्ष्मसांपरायस्यैककूटे द्विकमेकं २/१ उपशांतकषायक्षीणकषायसयोगेष्वेकैकं योगप्रत्ययकमेव १/१ अयोगे प्रत्ययशून्यं इत्येतन्मनासि कृत्वाचार्यो दस अट्ठारस दसयं सत्तारेत्यादिना जघन्यमध्यमोत्कृष्टस्थानानि, एक्कं च तिण्णि पंचयेत्यादिस्थानप्रकारान् अयदुगरहियमित्यादि कूटप्रकारांश्चोक्तवान्। एवंविधः पाठभेदः, अभयचंद्रनामांकितायां टीकायां।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—कूटके आकारि रचना करनी। तहां नीचैही नीचैं तौ पांच मिथ्यात्वविषैं एक जीवकैं एकै कालि एकही होइ तातैं पंच मिथ्यात्व बरोबरि स्थापने। तिनकी सहनानी पांच जायगा एका लिखने। बहुरि तिनके ऊपरि पांच इंद्रिय एक मन इन छहो इंद्रियनिविषैं एक जीवकैं एकै कालि एकहीका विषयकी प्रवृत्ति होइ सो इन कौं स्थापने सो इनकी सहनानी छह जायगा एक लिखने। बहुरि तिनके ऊपरि छह कायकी हिंसाविषैं एकै जीव कैं एकै कालि एक कायकी हिंसा होइ वा दोय कायकी हिंसा होइ वा तीनकी वा च्यारिकी वा पांचकी वा छह-की हिंसा होइ सो इनकौं स्थापने। इनकी सहनानी एक दोय तीन च्यारि पांच छहके अंक बरोबरि क्रमतैं लिख-ने। बहुरि तिनके ऊपरि सोलह कषायनिविषैं एक जीवकैं एकै कालि अनंतानुबंधी आदि च्यारि क्रोधका वा च्यारि मानका वा च्यारि मायाका वा च्यारि लोभका उदय पाइए सो इनकौं स्थापने। इनकी सहनानी च्यारि जायगा च्यारिके अंक लिखने। बहुरि तिनके ऊपरि तीनवेदनिविषैं एक जीवकैं एकै कालि एक वेदहीका उदय होय सो इनकौं स्थापने। इनकी सहनानी तीन जायगा एकका अंक लिखिए। बहुरि तिनके ऊपरि एकै जीवकैं एकै कालि हास्य रति होइ कै अरति शोक होइ सो इनकौं स्थापने। इनकी सहनानी दोय जायगा दोय का अंक लिखने। बहुरि तिनके ऊपरि पंद्रह योगनिमैं आहारकद्विक मिथ्यादृष्टिविषै नाहीं तातैं तेरह योगनिविषैं एक जीवकैं एकै कालि एक ही योग पाइए सो इनकौं स्थापने इनकी सहनानी तेरह जायगा एकका अंक लिखने सो ऐसैं ऐसैं तीन कूट करने। तिनविषैं पहिला कूट भय जुगुप्सा रहित है तातैं ऊपरि ही ऊपरि बिंदी लिखनी। दूसरा कूट भय जुगुप्साविषैं एक करि सहित है जातैं ऊपरि ही ऊपरि दोय जायगा एकका अंक लिखने। तीसरा कूट भय जुगुप्सा दोऊनिकरि सहित है तातैं ऊपरि ही ऊपरि दोयहीका अंक एक जायगा लिखना कोई जीवकैं कोई कालविषैं भय जुगुप्सा दोऊ न होंइ वा दोऊविषैं एक कोई होइ वा दोऊ ही होंइ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

अनंतानुबंधी सहित मिथ्यादृष्टिके कूट ३।

						०						
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
२												२
१						१						१
४				४				४				४
१			२		३		४		५			६
१			१		१		१		१			१
१			१		१		१		१			

					१	१						
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
२												२
१						१						१
४						४			४			४
१			२		३		४		५			६
१			१		१		१		१			१
१			१		१		१		१			

						२						
१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१	१
२												२
१						१						१
४				४				४				४
१			२		३		४		५			६
१			१		१		१		१			१
१			१		१		१		१			

तातैं ऐसैं तीन कूट कीए सो ए तीन तौ मूलकूट भए। बहुरि अनंतानुबंधी विसंयोजनवाला मिथ्यादृष्टी होइ ताकैं आवलीकाल पर्यंत अनंतानुबंधीका उदय नाहीं तातैं तीन कूट अनंतानुबंधी रहित करने। जहां च्यारि जायगा च्यारि कषाय लिखे हैं तहां तीन तीन लिखने। बहुरि यहु अनतानुबंधी विसंयोजनवाला पर्याप्त ही है। तातैं तेरह योगनिकी जायगा दश ही योग लिखने। ऐसैं मिलिकरि मिथ्यादृष्टिविषैं छह कूट भए। बहुरि सासादनविषैं तिन तीन सामान्य कूटनिविषैं नीचैं ही नीचैं पंच मिथ्यात्व लिखे थे तहां बिंदी लिखनी ऐसैं तीन कूट होंइ। बहुरि मिश्रविषैं अनंतानुबंधी नाहीं तातैं च्यारि च्यारि कषायनिकी जायगा तीन तीन ही लिखने। अर तीन मिश्रयोग नाहीं तातैं तेरह योग लिखे थे सो तहां दश ही लिखने ऐसैं तीन कूट ही करने। बहुरि असंयतविषैं तीन योग मिलि गए तातैं तेरह योग लिखने ऐसैं तीन कूट करने। बहुरि देश संयतविषैं च्यारि अप्रत्याख्यान भी नाहीं तातैं कषायनिकी जायगा दोय दोय ही च्यार्‍यो जायगा कषाय लिखने अर त्रसहिंसा नाहीं तातैं कायबधकी जायगा छहका अंक न लिखना अर तीन मिश्रयोग एक वैक्रियिक योग नाहीं तातैं तेरह योगनिकी जायगा नव ही लिखने ऐसैं तीन कूट करने। बहुरि प्रमत्तविषैं बारह अविरत नाहीं तातैं इंद्रिय वा कायबधकी जायगा सर्वत्र बिंदी लिखना। प्रत्याख्यान कषाय नाहीं तातैं कषाय एक ही लिखना। आहारकद्विकमिलैं

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तातैं योग ग्यारह लिखने ऐसैं तीन कूट करने । बहुरि अप्रमत्तविषै आहारकद्विक नाहीं तातैं नव ही योग लिखने ऐसैं तीन कूट करने । ऐसैं ही अपूर्वकरणविषैं तीन कूट करने । बहुरि अनिवृत्तिकरणविषैं जिस जिस भागविषैं वेद वा कषाय वा हास्यादिक छहका अभाव भया होइ तिस तिस भागविषैं तिस तिस जायगा बिंदी लिखि एक एक ही कूट करना । सब ही कूटनिविषैं भय जुगुप्साका अभाव है तातैं एक एकही कूट हो है । बहुरि सूक्ष्म सांपरायविषैं बादर लोभ नाहीं सूक्ष्म लोभ है तातैं सर्व कषायनिकी जायगा बिंदी तीन जायगा एक जायगा एका लिखना ऐसा एक कूट करना । उपशांतकषाय क्षीणकषायविषैं सूक्ष्म लोभ भी नाहीं तातैं सर्व कषायनिकी जायगा बिंदा लिखनी ऐसा एक एक कूट करना । सयोगीविषैं असत्य वा उभय मन वा वचन नाहीं तातैंयोग सात ही लिखने ऐसा एक कूट करना । अयोगीविषैं सर्वत्र शून्य ही है । ऐसैं ए कहे कूट तिनविषैं अनंतानुबंधीरहित मिथ्यादृष्टिका पहिला कूटकरि मिथ्यात्वनिविषैं एक अर इंद्रियनिविषैं एक अर षट्काय हिंसाविषैं एक पृथ्वीकी हिंसा अर अनंतानुबंधी बिना क्रोधादि च्यारि कषायनिका त्रिकविषैं एक त्रिक अर वेदनिविषैं एक अर दोऊ युगलनिविषैं एक युगल अर यह पर्याप्त ही है तातैं दशयोगनिविषैं एक योग ऐसैं मिलि दशका आस्रव हो है । बहुरि इनविषैं पृथ्वीकी हिंसा घटाइ पृथ्वी आदि दोयकी हिंसा मिलाए ग्यारहका आस्रव हो है । बहुरि पृथ्वी आदि दोयकी हिंसाकौं घटाइ पृथ्वी आदि तीनकी हिंसा मिलाए बारहका आस्रव हो है । बहुरि तीनकी हिंसाकौं घटाएं पृथ्वी आदि च्यारिकी हिंसा मिलाएं तेरहका हो है । बहुरि च्यारिकी हिंसाकौं घटाएं पृथ्वी आदि पांचकी हिंसा मिलाएं चौदहका हो है । बहुरि पांचकी हिंसाकौं घटाइ पृथ्वी आदि छहकी हिंसा मिलाएं पंद्रहका हो है । ऐसैं अनंतानुबंधी रहित प्रथम कूटविषैं दशकानैं आदि देकरि छह स्थान भए । याही प्रकार दूसरा कूटविषैं भय जुगुप्साविषैं एक एकके मिलनेतैं ग्यारहकानैं आदि देकरि छह स्थान हो हैं । तीसरा कूटविषै भय जुगुप्सा दोऊनिके मिलनेतैं बारहकानैं आदि देकरि छह स्थान हो हैं । बहुरि अनंतानुबंधी सहित तीन कूटनिविषैं एक अनंतानुबंधी कषाय बधता है तातैं प्रथम कूटविषैं ग्यारहकानैं आदि देकरि छह स्थान दूसरा कूटविषैं बारहकानैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आदि देकरि छह स्थान, तीसरा कूट विषैं तेरहकानैं आदि देकरि छह आस्रव स्थान हो हैं। ऐसैं इन कूटनिविषैं दशका अर अठारहका आस्रव तौ एक एक प्रकार ही है जातैं दशका आस्रव तौ अनंतानुबंधी रहित प्रथमकूट-विषैं ही है अर अठारहका आस्रव अनंतानुबंधी सहित अनका कूटविषैं ही है अन्यत्र नाहीं। बहुरि ऐसैं ही कूट-निविषैं विचारि ग्यारह सतरहके आस्रवके स्थान तीन तीन प्रकार हैं। बारह सोलहके पांच पांच प्रकार हैं। तेरह चौदह पंद्रहके छह छह प्रकार हैं। याही प्रकार सासादनादिकविषैं जे कूट कहे तिनका विचारकरि आस्रवनिके स्थान वा तिन स्थाननिके प्रकार जानने। ऐसैं मनमें धारि आचार्यनैं पहिलैं दोय गाथानिकरि स्थान वा स्थान प्रकारका प्रतिपादन कीया है ॥ ७९४ ॥ आगैं जे स्थान प्रकार कहे तिनकौं कैसे करि कहनेमें आवै ऐसा जानने के अर्थि कूटोच्चारण प्रकार कहैं हैं—

मिच्छत्ताणण्णदरं एक्केणक्खेण एक्ककायादी।
तत्तो कसायवेददुजुगलाणेक्कं च जोगाणं ॥ ७९५ ॥

मिथ्यात्वानामन्यतरमेकेनाक्षेण एकेकायादि।
ततः कषायवेदद्वियुगलानामेकं च योगानां ॥ ७९५ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वानामन्यतरत् षडिंद्रियाणामेकेन सहैककायादि ततः कषायेष्वेका जातिः। वेदेष्वेकः। युगलद्वये एकं। चशब्दात्संभवस्थाने भयजुगुप्सयोरेकं, अन्यत्रोभयं च। योगेष्वेकः। इति कूटोच्चारणप्रकारः। तद्यथा—

अनंतानुबंध्यूनप्रथमकूटे एकांतमिथ्यात्वे स्पर्शनेंद्रिये पृथ्वीकाये क्रोधत्रये षढवेदे हास्यद्विके सत्यमनोयोगे चात्ते धृते एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्श-

१ एकांतमिथ्यादृष्टा स्पर्शनेंद्रिये पृथ्वीकाय क्रोधत्रय षढवेदे हास्याद्विक सत्यमनोयोगेऽनंतानुबंधरहितमिथ्यादृष्टिप्रथमकूटे धृत्वोच्चरेत्। एकांतमिथ्या॰ दृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीकायबधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान्। पुनः एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतोप्कायबधकः त्रि-क्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान्। पुनः एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः तेजस्कायिकबधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनो-योगवान्। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतो वायुकायिकबधकस्त्रिक्रोधी षढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान्। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नेंद्रियवशगतः पृथ्वीकायवधकः त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगीत्येकः। अत्र पृथ्वीकायवधमुद्धृत्य पंचस्वप्कायादिवधेष्वेकैकस्मिन् मिलितेऽमी प्रत्येकभंगाः षट्। पंचदशसु पृथ्व्यादिद्विसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन् मिलितेऽमी द्विसंयोगभंगाः पंचदश। विंशतौ पृथ्व्यप्तेजस्कायत्रयादित्रिसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन्मिलितेऽमी त्रिसंयोगभंगा विंशतिः। पंचदशसु पृथ्व्यप्तेजोवायुचतुष्कादिचतुःसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन्मिलितेऽमी चतुःसंयोगभंगाः पंचदश। षट्सु पंचसंयोगवधेष्वेकैकस्मिन्मिलितेऽमी पंचसंयोगभंगाः षट्। एकस्मिन् षट्संयोगवधे मिलिते षट्संयोगभंग एकः, मिलित्वा त्रिषष्टिः।

पुनः तदेकांतमिथ्यात्वाक्षे द्वितीये विपरीतमिथ्यात्वगतेऽपि त्रिषष्टिः। एवं पंचसु मिथ्यात्वेषु गत्वादावागते स्पर्शनेंद्रियाक्षः रसनेंद्रिये गच्छति।

वनस्पतिकायिकवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान्। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतस्त्रसकायिकवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगवान्। एते पृथ्व्यादीनां प्रत्येकभेदाः षट् स्युः।

पृ	अ	ते	वा	व	त्र
१	१	१	१	१	१

पुनस्तत्रैव कूटे एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्व्यप्कायिकवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी १। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीतेजस्कायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी २। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीवायुकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ३। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीवनस्पतिकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ४। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतोऽप्तेजस्कायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ५। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतः पृथ्वीत्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ६। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतोऽब्वायुकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ७। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतोऽब्वनस्पतिकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ८। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतोऽप्त्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ९। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतस्तेजोवातकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी १०। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतस्तेजोवनस्पतिकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी ११। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतस्तेजस्त्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी १२। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतो वातवनस्पतिकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी १३। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतो वायुत्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी १४। एकांतमिथ्यादृष्टिः स्पर्शनेंद्रियवशगतो वनस्पतित्रसकायिकद्वयवधकस्त्रिक्रोधी षंढवेदी हास्यरतियुतः सत्यमनोयोगी १५। एतेषु षट्जीवनिकायद्विसंयोगाक्षसंचारविधानेन जीववधासंयमभंगैः सहोच्चारणभेदाः पंचदश। तद्विधानमिदं।

पृ	अ	ते	वा	व	त्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अयं च सर्वेंद्रियेषु गत्वा मिथ्यात्वात्तयुतः आदावागच्छति तदा क्रोधत्रयाक्षः मानत्रये गच्छति। अयं च प्राग्वच्चरमलोभत्रयपर्यंतं गत्वा इंद्रियाक्षमिथ्यात्वाक्षाभ्यां सहादावागच्छति तदा षंढवेदाक्षः स्त्रीवेदे गच्छति । अयं च प्राग्वच्चरमपुंवेदपर्यंतं गत्वा कषायाक्षेंद्रियाक्षमिथ्यात्वाक्षैः सहादावागच्छति तदा हास्यद्वयाक्षः अरतिद्वये गच्छति । अयं च वेदाक्षकषायाक्षेंद्रियाक्षमिथ्यात्वाक्षैस्सहादावागच्छति तदा भयद्वयोनकूटत्वात्सत्यमनोयोगाच्च असत्यमनोयोगे गच्छति । अयं च प्राग्वच्चरमवैक्रियिककयोगपर्यंतं गच्छति तदा तदधस्तनाक्षाः सर्वे स्वचरमे स्युरिति तत्कूटाच्चरणं समाप्तं एवं शेषमिथ्यादृष्टिकूटसासादनादिकूटेष्वपि ज्ञातव्यं ॥ ७९५ ॥ अथ भंगानयनप्रकारमाह—

तथा त्रिसंयोगवधासंयमेन सह विंशतिः। चतुःसंयोगवधासंयमेन पंचदश । पंचसंयोगवधासंयमेन षट् । षट्संयोगवधासंयमेनैकः । एवं मिथ्यादृष्टिप्रथमकूटप्रथमांकिताक्षसप्तके त्रिषष्टिर्भवंति । पुनरेषां प्रत्येकादीनां साधनोपायोऽयं—

प्रत्येकद्विसंयोगत्रिसंयोगचतुःसंयोगपंचसंयोगषट्संयोगवधान् क्रमेण संस्थाप्य तेषामधः एकद्वित्रिचतुःपंचषट्हारान् संस्थाप्य—

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

अत्रैकेन षण्णां भजने प्रत्येकभंगाः षट् ६ । पुनस्तत्षट्कं पंचसंयोगेन संगुण्य तदधःस्थितैकद्विहारौ गुणयित्वा भक्ते द्विसंयोगाः पंचदश

३०	४	३	२	१
२	३	४	५	६

पुनस्तात्रिंशत्कमग्रतनचतुष्केण संगुण्याधस्तनौ द्वित्रिहारौ संगुण्य भक्ते त्रिसंयोगाः विंशतिः ।

१२०	३	२	१
६	४	५	६

पुनस्तद्विंशत्यधिकशतेऽग्रतनत्रिसंयोगेन गुणिते षष्ट्यग्रत्रिशतं । तस्मिंश्चाधस्तनौ षट्चतुर्हारौ संगुण्य भक्ते चतुःसंयोगाः पंचदश ।

३६०	२	१
२४	५	६

पुनस्तत्षष्ट्यग्रत्रिशतेऽग्रतनाद्विसंयोगेन गुणिते विंशत्यधिकसप्तशतं । तस्मिंश्चाधस्तनौ चतुर्विंशतिपंचहारौ संगुण्य विंशत्यग्रशतेन भक्ते पंचसयोगाः षट् ।

७२०	१
१२०	६

पुनस्तद्विंशत्यग्रसप्तशतेऽग्रतनैकबंधेन गुणिते तावदेव । तस्मिंश्चाधस्तनौ विंशत्यग्रशतषट्हारौ गुणयित्वा भक्ते षट्संयोग एकः ।

७२०
७२०

इयान् पाठः अभयचंद्रनामांकितायां टीकायामधिकः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—मिथ्यात्वनिविषैं कोई एक अर छह इंद्रियनिविषैं एक इनकरि सहित एक दोय आदि कायकी हिंसा तहां पीछे कषायनिविषैं एक जाति अर वेदनिविषैं एक अर दोऊ युगलनिविषै एक अर चकारतैं संभवता स्थानविषैं भय जुगुप्साविषैं एक वा दोऊ अर योगनिविषैं एक कहिए ऐसैं कूटनिके उच्चारनेका विधान हो है। सोई कहिए है—

जीवकांडका गुणस्थान अधिकारविषैं विकथादिकका अक्ष संचारादिककरि जैसैं प्रमादनिके भंग कीए हैं तैसैं पंच मिथ्यात्वादिकनिका अक्ष संचारादिककरि आस्रवनिके भंग जानने। तहां अनंतानुबंधी रहित प्रथम कूटविषैं एकांत मिथ्यात्व स्पर्शनइंद्री पृथ्वीकायका बध तीन प्रकार क्रोध नपुंसकवेद हास्य रतिका युगल सत्य मनोयोग असत्य मनो योग इनविषैं अक्षकौं धारिए तब एकांत मिथ्यादृष्टी स्पर्शन इंद्रियके वशीभूत पृथ्वी कायका हिंसक तीन प्रकार क्रोधका धारक नपुंसक वेदी हास्य रतिसंयुक्त सत्यमनोयोगी ऐसा जीवकैं आस्रवका एक भंग भया। बहुरि जहां पृथ्वीका हिंसक कह्या तहां जलका कहिए वा तेजका वा वायुका वा वनस्पतीका वा त्रसका क्रमतैं कहिए ऐसैं प्रत्येक भंग छह भए। बहुरि पृथ्वी जलका वा पृथ्वी अग्निका इत्यादि दोयका संयोगरूप पंद्रह भेदनिविषैं एक एकका हिंसक कहैं द्विसंयोगी भंग पंद्रह होंइ। बहुरि पृथ्वी जल अग्निका वा पृथ्वी जल पवनका इत्यादि तीनका संयोगरूप बीस भेदनिविषै एक एकका हिंसक कहैं त्रिसंयोगी भंग बीस होंइ। बहुरि पृथ्वी जल अग्नि पवनका वा पृथ्वी जल अग्नि वनस्पतीका इत्यादि च्यारिका संयोगरूप पंद्रह भेदनिविषैं एक एकका हिंसक कहैं चतुःसंयोगी भंग पंद्रह होंइ। बहुरि पृथ्वी जल अग्नि पवन वनस्पतीका वा पृथ्वी जल अग्नि पवन त्रस वा जल अग्नि पवन वनस्पती त्रसका इत्यादि पांचका संयोगरूप छह भेदनिविषैं एक एकका हिंसक कहैं पंच संयोगी भंग छह होंइ। बहुरि पृथ्वी जल अग्नि पवन वनस्पती त्रस इन छहौंका संयोगरूप एक भेद ताका हिंसक कहैं छह संयोगी भंग एक होइ। ऐसैं मिलिकरि सर्व तरेसठि भंग भए। बहुरि जहां एकांत मिथ्यात्वी कह्या था तहां विपरीत मिथ्यात्वी कहि पूर्वोक्त प्रकार तरेसठि भंग करने। ऐसैं पांच मिथ्यात्वनिकरि तीनसै पंद्रह भंग भए। बहुरि इन सर्वनिविषैं स्पर्शन इंद्रीके वशीभूत जहां कह्या तहां रसना इंद्रीके वशीभूत कहना तब तितनेही भंग होंइ ऐसैं पांच इद्री छठा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मनकरि अठारहसे निवै भंग होंइ। बहुरि इन सवनिविषैं जहां तीन प्रकार क्रोध संयुक्त कह्या था तहां तीन प्रकार मान संयुक्त कहिए तब भी तितने ही भंग होंइ हैं। ऐसैं लोभपर्यंत च्यारि कषायनिकरि पिचहत्तरिसै साठि भंग होंइ। बहुरि इन सवनिविषैं जहां नपुंसक वेदी कह्या तहां स्त्रीवेदी कहिए तब तितनेही होंइ वा पुरुषवेदी कहिए तब तितनेही होंइ। ऐसैं तीन वेदनिकरि बाईस हजार छसै असी भंग भए। बहुरि इन सर्व भेदनिविषैं जहां हास्य रति संयुक्त कह्या तहां अरति शोक संयुक्त कहिए तब भी तितनेही भंग होंइ। ऐसैं पैंतालीस हजार तीनसै साठि भंग भए। अर इस कूटविषैं भय जुगुप्सा है ही नाहीं। बहुरि इन सवनिविषैं जहां सत्य मनोयोग कह्या तहां असत्य मनोयोग कहिए तब भी तितने ही भंग होंइ ऐसैं करि वैक्रियिक योगपर्यंत पर्याप्त दश योगनिकरि च्यारि लाख तरेपन हजार छसै भंग होंइ। मिथ्यात्वविषैं अनंतानुबंधीका अनुदय पर्याप्त दशाहीविषैं होइ तातैं औदारिक मिश्र वैक्रियिकमिश्र कार्माण ए तीन योग न ग्रहे। ऐसैं अनंतानुबंधी रहित मिथ्यादृष्टिका कूटविषैं इतने भंग भए। इहां अक्ष अपने अंतपर्यंत पहुंचे तब तिस सहित सर्व पहिलैं भए अक्ष ते आदि स्थानविषैं प्राप्त होंइ। उत्तर अक्ष अपने दूसरे स्थानककौं प्राप्त होंइ। जैसैं पांच मिथ्यात्वका अक्ष अज्ञानपर्यंत पहुंच्या तब पीछैं मिथ्यात्वका अक्ष तौ एकांतकौं प्राप्त भया अर उत्तर इंद्री अक्ष था सो रसनारूप द्वितीयस्थानकौं प्राप्त भया। बहुरि तैसैं ही होतैं होतैं सर्व अक्ष अंत स्थानककौं पहुंचैं तब तहां अक्ष संचार होइ निवरै सो अक्ष संचारका विधान प्रमाद कथनविषैं जैसैं पूर्वै कह्या था तैसैं इहां भी जानि लेना। ऐसैं अनंतानुबंधी रहित मिथ्यादृष्टिका प्रथमकूटका कूटोच्चारण विधान पूर्ण भया। याही प्रकार मिथ्यादृष्टिके अवशेष कूट वा सासादनादिकके कूट तिनका भी कूटोच्चारण विधान जितने अक्ष वा अक्षनिका प्रमाण होइ तिनकरि जानना॥ ७९५॥ आगैं इनि भंगनिका प्रमाण ल्यावनेके अर्थि भंगानयन प्रकार कहैं हैं—

अणरहिदसहिदकूडे बावत्तरिसय सयाण तेणउदी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सट्ठी धुवा हु मिच्छे भयदुगसंजोगजा अधुवा ॥ ७९६ ॥

अनरहितसहितकूटे द्वासप्ततिशतं शतानां त्रिनवतिः ।
षष्टिर्ध्रुवा हि मिथ्ये भयद्विकसंयोगजा अध्रुवाः ॥ ७९६ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्टौ ध्रुवभंगा अनंतानुबंध्यूनकूटे सप्तसहस्रद्विशती, तद्युतकूटे खलु षष्ट्यग्रनवसहस्रत्रिशती । कायभंगवर्जितमिथ्यात्वादिसंख्यांकेषु परस्परं गुणितेषु तत्प्रमाणस्य संभवात् । उभये मिलित्वा षष्ट्यग्रपंचशतषोडशसहस्रो गुणयं, एकैकं प्रतिभयद्विकजोभयकूटचतुष्कं कायभंगजत्रिषष्टिश्चास्तीत्यनेन ६३ । ४ । अध्रुवगुणाकारेण गुणितं सर्वप्रत्ययभंगा विंशत्यग्रैकशतत्रिसप्ततिसहस्रैकचत्वारिंशल्लक्षाणि भवंति ४१७३१२० । सासादने प्रथमकूटे षडिंद्रियचतुष्कषायजातित्रिवेदद्विकद्वादशयोगेषु परस्परं गुणितेऽष्टाविंशत्यग्रसप्तदशशती, वैक्रियिकमिश्रे च इं ६ । क ४ । वे २ षंढोनं । द्वि २ । यो १ गुणिते षण्णवतिः मिलित्वा चतुर्विंशत्यग्राष्टादशशती ध्रुवगुणयं प्राक्तनाध्रुवगुणाकारेण गुणितं सर्वभंगाश्चतुर्लक्षैकान्नषष्टिसहस्रषट्शताष्टचत्वारिंशतो भवंति । मिश्रे इं ६ । क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो १० गुणिते ध्रुवगुण्यं चत्वारिंशदग्रचतुर्दशशती तेनाध्रुवकारेण गुणिताखिलक्षद्वाषष्टिसहस्राष्टशताशीतयो भवंति । असंयते इं ६ । क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो १० गुणिते चत्वारिंशदग्रचतुर्दशशती । वैक्रियिकमिश्रकार्मणयोः स्त्री नेति इं ६ । क ४ । वे २ । द्वि २ । यो २ । गुणिते द्वानवत्यग्रशतं । औदारिकमिश्रे पुमानेवेति इं ६ । क ४ । वे १ । द्वि २ । यो १ । गुणितेऽष्टचत्वारिंशत् । मिलित्वा ध्रुवगुण्यमशीत्यग्रषोडशशती । अध्रुवगुणकारगुणितः सर्वभंगाश्चतुर्लक्षत्रयोविंशतिसहस्रत्रिशतषष्ठयो भवंति । देशसंयते वैक्रियिकयोगो नेति इं ६ । क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । गुणिते षण्णवत्यग्रद्वादशशती । अध्रुवगुणकारेण त्रसकायवधो नेत्येकत्रिंशच्चतुष्कात्मकेन गुणितैकलक्षषष्टिसहस्रसप्तशतचत्वारो भवंति । प्रमत्ते क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । गुणिते षोडशाग्रद्विशतं । आहारकशरीरे क ४ । वे १ । द्वि २ । यो २ । गुणिते षोडश, मिलित्वा द्वात्रिंशदग्रद्विशती । अध्रुवकूटचतुष्केण गुणिता सर्वभंगा अष्टाविंशत्यग्रनवशती । अप्रमत्ते क ४ । वे ३ । द्वि २ । यो ९ । संगुण्य ध्रुवचतुष्केण गुणिते चतुःषष्ट्यग्राष्टशती । अपूर्वकरणेऽपि तथा तावंतः । अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे क ४ । वे ३ । यो ९ । गुणितेऽष्टोत्तरशतं । पुनस्तत्रैव क ४ । वे २ । यो ९ । गुणिते द्वासप्ततिः । अवेदभागे क ४ । यो ९ । गुणिते षट्त्रिंशत् । अक्रोधभागे क ३ । यो ९ । गुणिते सप्तविंशतिः । अमानभागे क २ । यो ९ । गुणितेऽष्टादश । अमायभागे क १ । यो ९ । गुणिते नव । मिलित्वा सप्तत्यग्रद्विशती । सूक्ष्मसांपराये क १ । यो ९ । गुणिते नव । उपशांतकषाये योगभेदेन नव । क्षीणकषायेऽपि नव । सयोगे सप्त । अयोगे प्रत्ययशून्यं ॥ ७९६ ॥ उक्तभंगानाह—

स० चं०—मिथ्यात्वादिकनिकी संख्याकौं परस्पर गुणैं जो प्रमाण होइ सोई अक्ष संचारकरि भंगनिका प्रमाण हो है तातैं मिथ्यादृष्टिविषैं अनंतानुबंधी रहित कूटनिविषैं तौ मिथ्यात्व पांच इंद्री छह कषायत्रिक (चतुष्क) च्यारि,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेद तीन, हास्य अरति युगल दोय योग दश ५।६।४।३।२।१०। इनकौं परस्पर गुणें बहत्तरिसै होंइ। बहुरि अनंतानुबंधी सहित कूटविषैं मिथ्यात्व पांच इंद्री छह कषायचतुष्क च्यारि वेद तीन हास्य अरति युगल दोय योग तेरह ५।६।४।३।२।१३। इनकौं परस्पर गुणें तरेणवैसै साठि होंइ। दोऊनिकौं मिलाएं सोलह हजार पांचसै साठि तौ ध्रुवगुण्य होइ। बहुरि एक एक भय जुगुप्सा रहित अर भय सहित अर जुगुप्सा सहित अर भय जुगुप्सा सहित ए च्यारि भंग पाइए है। बहुरि कायहिंसाके तरेसठि भंग पाइए है तातैं च्यारि अर तरेसठि अध्रुव गुणकार हैं सो तिस ध्रुव गुण्यकौं च्यारि करि गुणिए बहुरि तरेसठिकरि गुणिये तब सर्व प्रत्ययभंग मिथ्यादृष्टिविषैं इकतालीस लाख तिहत्तरि हजार एकसौ बीस हो हैं। इहां मिथ्यात्वादिकविषैं तौ एक एक ही अवश्य निश्चल होइ तातैं ध्रुव संज्ञा कही। भयद्विक वा कायवधविषैं कदाचित् किछू कदाचित् किछू चलरूप पाइए तातैं ध्रुव संज्ञा न कही। बहुरि सासादनविषैं छह इंद्री, च्यारि कषाय जाति, तीन वेद, युगल दोय वैक्रियिक मिश्रविना बारह योग इनिकौं परस्पर गुणैं सतरहसै अठाईस अर वैक्रियिक मिश्रविषैं नपुंसक वेद नाही तातैं इंद्री छह कषाय च्यारि वेद दोय योग एककौं परस्पर गुणें छिनवै, मिलिकरि अठारहसै चौबीस ध्रुव गुण्य भए। इनिकौं च्यारि अर तरेसठि अध्रुव गुणकारकरि गुणिए तब सर्वभंग च्यारि लाख गुणसठि हजार छसै अठतालीस हो हैं। बहुरि मिश्रविषैं इंद्री छह कषाय च्यारि वेद तीन युगल दोय योग दश परस्पर गुणैं चौदहसै चालीस ध्रुव गुण्य हो हैं। याकौं च्यारि अर तरेसठि अध्रुव गुणकार करि गुणिए तब तीन लाख बासठि हजार आठसै असी भंग होंहि। बहुरि असंयतविषैं इंद्री छह कषाय च्यारि वेद तीन युगल दोय योग पर्याप्त संबंधी दश इनिकौं परस्पर गुणैं चौदहसै चालीस अर वैक्रियिक मिश्र कार्माणविषैं स्त्रीवेद नाहीं तातैं इंद्री छह वेद दोय युगल दोय योग दोय इनकौं गुणैं एकसौ वाणवै अर औदारिक मिश्रविषैं एक पुरुषवेद ही है तातैं इंद्री छह कषाय च्यारि वेद एक युगल दोय योग एक इनकौं गुणैं अठतालीस इन सबनिकौं मिलाए ध्रुवगुण्य सोलहसै असी भए। इनिकौं च्यारि अर तरेसठि अध्रुव गुणकारकरि गुणैं सर्व भंग च्यारि लाख तेवीस हजार तीनसै साठि हो हैं। बहुरि देशसंयतविषैं वैक्रियिक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

योग भी नाहीं तातैं इंद्री छह कषाय च्यारि वेद तीन युगल दोय योग नव इनकौं परस्पर गुणैं बारहसै छिनवै होंइ। इनिकौं च्यारि तौ भय जुगुप्सा संबंधी अर इहां त्रसबध नाहीं तातैं पांच स्थावर बधहीकी अपेक्षा इक संयोगीनैं आदि देकरि इकतीस कायबधसंबंधी अध्रुव गुणकार करि गुणें एक लाख साठि हजार सातसै च्यारि भंग हो हैं। बहुरि प्रमत्तविषैं कषाय च्यारि वेद तीन युगल दोय योग नव इनिकौं परस्पर गुणै दोयसै सोलइ अर आहारक योग विषैं कषाय च्यारि वेद एक पुरुष, युगल दोय योग दोय इनकों गुणै सोलह मिलिकरि दोयसै बतीस होंइ। इनकौं भय जुगुप्सा संबंधी ही च्यारि अध्रुव गुणकार करि गुणें सर्व भंग नवसै अठाईस हो हैं। बहुरि अप्रमत्तविषैं कषाय च्यारि वेद तीन युगल दोय योग नव इनकौ गुणें दोयसै सोलह इनकौं अध्रुव गुणकार च्यारिकरि गुणें आठसै चौसठि भंग हो हैं। बहुरि अपूर्व करणविषैं भी ऐसैं ही आठसै चौसठ भंग हो हैं। बहुरि अनिवृत्तिकरणका वेदसहित भागविषैं कषाय च्यारि वेद तीन योग नव इनिकौं परस्पर गुणें एकसौ आठ हो हैं। इहांतैं अध्रुव गुणकारका अभाव है। बहुरि तिस वेदसहित भागविषैं ही कषाय च्यारि वेद दोय योग नव गुणें बहत्तरि हो हैं। बहुरि वेद रहित भागविषैं कषाय च्यारि योग नव गुणै छत्तीस हो हैं। क्रोधरहित भागविषैं कषाय तीन योग नव गुणै सताईस हो हैं। मानरहित भागविषैं कषाय दोय योग नव गुणें अठारह हो हैं। मायारहित भागविषैं कषाय एक योग नव गुणें नव होइ। सर्व मिलि अनिवृत्ति करणविषैं दोयसै सत्तरि भंग हो हैं। बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं कषाय एक योग नव गुणें नव भंग हो हैं। बहुरि उपशांतकषायविषै नव योगही है तातैं नव भंग हो हैं। क्षीणकषायविषै भी नव ही भंग हो हैं। सयोगीविषै योगनिहीतैं सात भंग हो हैं। अयोगीविषैं प्रत्ययका अभाव है॥ ७९६॥ ऐसैं कहे भंग तिनकौं कहैं हैं—

चउवीसट्ठारसयं तालं चोद्दस असीदि सोलसयं।
छण्णउदी बारसयं बत्तीसं बिसद सोल विसदं च॥ ७९७॥ १७५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोलस बिसदं कमसो धुवगुणगारा अपुव्वकरणोत्ति ।
अद्धुवगुणिदे भंगा धुवभंगाणं ण भेदादो ॥ ७९८ ॥

चतुर्विंशाष्टदशशतं चत्वारिंशच्चतुर्दशाशीतिः षोडशशतं ।
षण्णवतिर्द्वादशशतं द्वात्रिंशद्द्वादशशतं षोडशद्विशतं च ॥ ७९७ ॥
षोडश द्विशतं क्रमशो ध्रुवगुणकारा अपूर्वकरण इति ।
अध्रुवगुणिते भंगा ध्रुवभंगानां न भेदात् ॥ ७९८ ॥ युग्मं

जी० प्र०—ध्रुवगुण्यमपूर्वकरणांतं क्रमशो मिथ्यादृष्टौ प्रागुक्तं । सासादने चतुर्विंशत्यग्राष्टादशशती । मिश्रे चत्वारिंशदग्रचतुर्दशशती । असंयतेऽशीत्यग्रषोडशशती । देशसंयते षण्णवत्यग्रद्वादशशती । प्रमत्ते द्वात्रिंशदग्रद्विशती । अप्रमत्ते षोडशाग्रद्विशती । अपूर्वकरणे षोडशाग्रद्विशती । अमीषु गुण्येषु स्वस्वाध्रुवगुणाकारेण गुणितेषु तत्र भंगाः स्युः । उपरि केवलध्रुवभंगानामेव भेदाभावाध्रुवगुणाकारः द्विसंयोगादिजनितत्वाभावात् । ॥ ७९७ ॥ ७९८ ॥ प्रागुक्तप्रत्येकादिभंगसाधनेऽक्षसंचारो ज्ञातार्थः, इत्युपायांतरमाह—

स० चं०—ध्रुवगुण्य अपूर्वकरणपर्यंत क्रमतैं मिथ्यादृष्टिविषैं तौ पूर्वोक्त, सासादनविषैं अठारहसै चौबीस, मिश्रविषैं चौदहसै चालीस, असंयतविषैं सोलहसै अस्सी, देशसंयतविषैं बारहसै छिनवै, प्रमत्तविषैं दोयसै बत्तीस, अप्रमत्तविषैं दोयसै सोला, अपूर्वकरणविषैं दोयसै सोला सो इन ध्रुव गुण्यनिकौं अपने अध्रुवगुणकार करि गुणें तहां तहां भंग हो हैं। ऊपरि केवल ध्रुव भंग हो हैं तहां भय जुगुप्सा अविरतिनिका अभाव है तातैं अध्रुवगुणकार नाहीं है ॥ ७९७ ॥ ७९८ ॥ पूर्वें प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी इत्यादि कायवधविषैं भंग कहि अक्ष संचार कह्या तिन भंगनिके साधनेके अर्थि अन्य उपाय कहें हैं—

छप्पंचादेयंतं रूवुत्तरभाजिदे कमेण हदे ।
लद्धं मिच्छचउक्के देसे संजोगगुणगारा ॥ ७९९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

षट्पंचादेकांतं रूपोत्तरभाजिते क्रमेण हते ।
लब्धं मिथ्याचतुष्के देशे संयोगगुणकाराः ॥ ७९९ ॥

जी० प्र०—षडादीनेकपर्यंतानंकान् संस्थाप्य तदधोहारानेकादीनेकोत्तरान् संस्थाप्य—

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

अत्र प्रथमहारेण स्वांशे भक्ते लब्धं प्रत्येकभंगाः षट् । पुनः परस्पराहतषट्पंचांशेऽन्योन्याहतैकद्विहारेण भक्ते लब्धं द्विसंयोगभंगाः पंचदश । पुनः परस्पराहततत्त्रिकचतुरंशे तथाकृतद्वित्रिहारेण भक्ते लब्धं त्रिसंयोगा विंशतिः । पुनः तथाकृतविंशत्यधिकशतत्र्यंशे तथाकृतषट्चतुर्हारेण भक्ते लब्धं चतुःसंयोगाः पंचदश । पुनः तथाकृतषष्ट्यधिकत्रिशतद्व्यंशे तथाकृतचतुर्विंशतिपंचहारेण भक्ते लब्धं पंचसंयोगाः षट् । पुनः तथाकृतविंशत्यधिकसप्तशतैकांशे तथाकृतविंशत्यधिकशतषड्वारेण भक्ते लब्धं षट्संयोग एकः, मिलित्वा त्रिषष्टिः । प्रत्येकं मिथ्यादृष्ट्यादिचतुष्के संयोगगुणकारा भवंति । तथा पंचादीनेकपर्यंतानंकान् संस्थाप्य तदधोहारानेकादीनेकोत्तरान् संस्थाप्य—

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

प्राग्वद् भक्त्वा लब्धं प्रत्येकभंगाः पंच । द्विसंयोगा दश । त्रिसंयोगा दश । चतुःसंयोगाः पंच । पंचसंयोग एकः, मिलित्वैकत्रिंशद्देशसंयते संयोगगुणकारः स्यात् ॥ ७९९ ॥ अथ प्रत्ययोदयकार्यजीवपरिणामानां ज्ञानावरणादिबंधकारणत्वे प्रतिपादितमाह—

स० चं०—जहां प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी इत्यादि भेद करने होंहि तहां विवक्षितका जो प्रमाण होहि तिस प्रमाणतैं लगाय एक एक घटता एक अंक पर्यंत अनुक्रमतैं लिखने सो ए तौ भाज्य भए अर तिनके नीचैं एक आदि एक एक बधता तिस प्रमाणका अंक पर्यंत अंक क्रमतैं लिखने ए भागहार भए। सो भाज्यनिकौं अंश कहिए भागहारनिकौं हार कहिए सो भिन्न गणितविषैं भग प्रभाग विधान है तिसकरि क्रमतैं पूर्व अंशनिकरि अगले अंशकौं अर पूर्वहारनिकरि अगले हारकौं गुणि जो जो अंशनिका प्रमाण होइ ताकौं हार प्रमाणका भाग दीएं जो जो प्रमाण आवै तितने तितने तहां भंग जानने सो इहां मिथ्यादृष्टि आदि च्यारि गुणस्थाननिविषैं काय बधका प्रमाण छह है तहां छह पांच च्यारि तीन दोय एक ए तो अंश क्रमतैं लिखने अर तिनके नीचैं एक दोय तीन च्यारि पांच छह ए हार क्रमतैं लिखने—

६	५	४	३	२	१
१	२	३	४	५	६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तहां प्रथम अपने अंश छह तिनकौं हार एकका भाग दीएं छह पाए सो प्रत्येक भंग तौ छह हैं । बहुरि पूर्व छह करि अगला पंच गुणें तीस अंश भए, तिनकौं पूर्व एक करि अगला दोय गुणें दोय हार भए, तिनका भाग दीए पंद्रह पाए सो इतने द्विसंयोगी भंग हैं । बहुरि पूर्व तीसकरि अगिला च्यारि गुणें एकसौ बीस अंशभए तिनकौं पूर्व दोय करि अगला तीन गुणें छह हार भए तिनकौं भागदीएं बीस पाए सो इतने त्रिसंयोगी भंग हैं । बहुरि पूर्व एकसो बीसकरि अगला तीन गुणें तीनसै साठि अंश भए तिनकौं पूर्व छह करि अगला च्यारि गुणें चौईस हार भए तिनिका भागदीए पंद्रह पाए सो इतने चतुःसंयोगी भंग हैं । बहुरि पूर्व तीनसै साठिकरि अगिले दोयकौं गुणें सातसै बीस अंश भए तिनकौं पूर्व चौईस करि आगिला पांच गुणें एकसौ वीस हार भए तिनका भाग दीए छह पाए सो इतने पंच संयोगी भंग हैं । बहुरि पूर्व सातसै बीसकरि अगिला एक गुणें सातसै बीस अंश भए ।तिनकौं पूर्व एकसो बीसकरि अगिला छह गुणें सातसै बीस हार भए तिनिका भागदीए एक पाया सो छह संयोगी भंग ए कहे । ऐसें सर्व मिलि तरेसठि भंग भए । बहुरि देशसंयतविषैं त्रस बध नाहीं तातैं पांचहोकी हिंसा है । सो पांच आदि एक पर्यंत अंश क्रमतैं लिखने । तिनके नीचे एक आदि पांच पर्यंत हार क्रमतैं लिखने ।

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

तहां पूर्वोक्त प्रकार पांचकौं एकका भाग दीएं पांच पाए सो पांच तौ प्रत्येक भंग है । बहुरि पांच गुणा च्यारि अंशकौं एक गुणा दोयहारका भाग दीएं दश पाए सो इतने द्विसंयोगी भंग हैं । बहुरि बीस गुणा तीन अंशकौं दोगुणा तीन हारका भागदीएं दश पाए सो इतने त्रिसंयोगी भंग हैं । बहुरि साठि गुणा दोय अंशकौं छह गुणा च्यारि हारका भाग दीए पांच पाए सो इतने चतुःसंयोगी भंग हैं । बहुरि एकसो बीस गुणा एक अंशकौं चौईस गुणा पांच हारका भागदीएं एक पाया सो पंच संयोगी भंग एक है । ऐसैं मिलिकरि देश संयतविषैं कायवधके इकतीस भेद भए । सो ऐसैं कायबधसंबंधी अध्रुव गुणकार है सो छह कायहिंसाविषैं पृथ्वी अप तेज वायु वनस्पती त्रसकी एक एककी हिंसातैं प्रत्येक भेद तौ छह भए । बहुरि पृथ्वी अपकी पृथ्वी तेजकी पृथ्वी वायुकी पृथ्वी वनस्पतीकी पृथ्वी त्रसकी अप् तेजकी अप् वा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

युकी अप् वनस्पतीकी अप् त्रसकी तेज वायुकी तेज वनस्पतीकी तेज त्रसकी वायु वनस्पतीकी वायु त्रसकी वनस्पती त्रसकी हिंसाके भेदतैं द्विसंयोगी पंद्रह भए ऐसैं ही अन्य जानिलेने ॥ ७९९ ॥ आगैं प्रत्ययनिके उदयके कार्यभूत ऐसे जु जीवके परिणाम तिनके ज्ञानावरणादिक कर्मके बंधका कारणभूतपना दिखावै हैं—

पडिणीगमंतराए उवघादो तप्पदोसणिण्हवणे ।
आवरणदुगं भूयो बंधदि अच्चासणाएवि ॥ ८०० ॥

प्रत्यनीकमंतराय उपघातस्तत्प्रदोषनिह्नवने ।
आवरणद्विकं भूयो बध्नाति अत्यासादनयापि ॥ ८०० ॥

जी० प्र०—श्रुततद्धरादिषु–अविनयवृत्तिः प्रत्यनीकं प्रतिकूलतेत्यर्थः । ज्ञानविच्छेदकरणमंतरायः । मनसा वाचा वा प्रशस्तज्ञानदूषणमध्येतृषु क्षुद्बाधाकरणं वा उपघातः । तत्प्रदोषः तत्त्वज्ञाने हर्षाभावः । तस्य मोक्षसाधनस्य कीर्तने कृते कस्यचिदनभिव्याहारतोऽतःपैशून्यं वा प्रद्वेषः । कुतश्चित्कारणात् जानन्नपि नास्ति न वेद्मीति व्यपलपनमप्रसिद्धगुरूनपलुप्य प्रसिद्धगुरुकथनं वा निह्नवः । कायवाग्भ्यामननुमननं कायेन वाचा वा परप्रकाश्यज्ञानस्य वर्जनं वेत्यासादना । एतेषु षट्सु सत्सु जीवो ज्ञानदर्शनावरणद्वयं भूयो बध्नाति–प्रचुरवृत्त्या स्थित्यनुभागौ बध्नातीत्यर्थः । ते च षडपि तद्द्वयस्य युगपद्बंधकारणानि तु तथा बंधात् । अथवा विषयभेदादास्रवभेदः ज्ञानविषयत्वेन ज्ञानावरणस्य दर्शनविषयत्वेन दर्शनावरणस्येति ॥ ८०० ॥

स० चं –शास्त्र वा शास्त्रके धारक इत्यादिविषैं अविनय रूप प्रवृत्तिनिस्यों प्रतिकूल होना सो प्रत्यनीक कहिए । बहुरि ज्ञानविषैं विच्छेद करना सो अंतराय कहिए । बहुरि मनकरि वा वचनकरि प्रशस्तज्ञानका दोषी होना वा अभ्यासक जीवनिकौं क्षुधादिक बाधाका करना सो उपघात कहिए । बहुरि तत्त्वज्ञानविषैं हर्षका अभाव अथवा मोक्षका साधन भूत तत्त्वज्ञानका उपदेश होतैं किसीको न सुहावै ताके अंतरंगविषैं दुष्टता सो प्रद्वेष कहिए । बहुरि किसी कारणतैं आप जानता हुवा भी ऐसैं नाहीं वा मैं न जानूं ऐसा कहै अथवा जिसतैं आपकौं ज्ञान प्राप्त भया अर वह जगतविषैं प्रसिद्ध नाहीं है तिस अप्रसिद्ध गुरुकौं छिपाइ जगतविषै प्रसिद्ध तीर्थकरादि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुरु कहना सो निह्नव कहिए। बहुरि काय वचनकरि अनुमोदना न करनी वा कायकरि वचनकरि और कार्यका प्रकाशकरि ज्ञानाभ्यासका वर्जन सो आसादन कहिए। इन छह कार्यनिकौं होत संतैं जीव है सो ज्ञानावरण-दर्शनावरणकौं भूयः कहिए स्थिति अनुभागकी प्रचुरता लीएं बांधै है। इहां संदेह होता कि बंध तौ समय समय-विषैं निरंतर है इहां इनके होतैं ही बंध कैसे कह्या? तातैं आचार्यने भूयः ऐसा विशेषण कह्या जो इनके होतैं स्थिति अनुभागकी बहुलता लीए बंध हो है। इनकौं न होतैं स्थिति अनुभागकी हीनता लीए बंध हो है। ऐसैं औरनिविषैं भी जानि लेना। बहुरि ए छहौ युगपत् ज्ञानावरण वा दर्शनावरण दोऊनिके बंधकौं कारण हैं। अथवा विषयभेदतैं आस्रवविषैं भेद है। जो ज्ञानविषैं ते छह होंइ तौ ज्ञानावरणका बंध प्रचुर होइ अर दर्शनविषैं ते छह होंइ तौ दर्शनावरणका बंध प्रचुर होइ॥ ८००॥

भूदाणुकंपवदजोगजुंजिदो खंतिदाणगुरुभत्तो।
बंधदि भूयो सादं विवरीयो बंधदे इदरं॥ ८०१॥

भूतानुकंपव्रतयोगयुजितः क्षांतिदानगुरुभक्तः।
बध्नाति भूयः सातं विपरीतो बध्नातीतरत्॥ ८०१॥

जी० प्र०—गतौ गतौ कर्मोदयवशाद्भवंतीति भूताः प्राणिनः तेष्वनुकंपा। व्रतानि हिंसादिविरतिः। योगः समाधिः सम्यक्प्रणिधानमित्यर्थः तैर्युक्तः। क्रोधादिनिवृत्तिलक्षणक्षांत्या चतुर्विधदानेन पंचगुरुभक्त्या च संपन्नः स जीवः सातं तीव्रानुभागं भूयो बध्नाति। तद्विपरीतस्तादृगसातं बध्नाति॥ ८०१॥

स० चं०–गति गतिविषै कर्मके उदयतैं भवंति कहिए उपजैं ऐसे भूत कहिए प्राणी तिनविषैं अनुकंपा दया अर हिंसादिकका त्याग रूप व्रत अर समाधि भला परिणाम सो योग इनकरि जो जीव संयुक्त होइ बहुरि क्रोधादिका त्यागरूप क्षमा अर च्यारि प्रकार दान अर पंच परमेष्ठीकी भक्ति इनकरि संयुक्त होइ सो जीव सातावेदनी-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यकौं तीव्र अनुभागलीए प्रचुर बांधै है। इहां तीव्र अनुभाग ही कह्या स्थिति न कही ताका हेतु यह है जो स्थिति-बंधकी अधिकता विशुद्ध परिणामनितैं न हो है । बहुरि पूर्वोक्त अदया आदिका धारक जो जीव होइ सो तीव्र स्थिति अनुभागलीएं असाता वेदनीयकौं प्रचुर बांधै है ॥ ८०१ ॥

अरहंतसिद्धचेदियतवसुदगुरुधम्मसंघपडिणीगो ।
बंधदि दंसणमोहं अणंतसंसारिओ जेण ॥ ८०२ ॥

अर्हत्सिद्धचैत्यतपःश्रुतगुरुधर्मसंघप्रत्यनीकः ।
बध्नाति दर्शनमोहमनंतसांसारिको येन ॥ ८०२ ॥

जी० प्र०—योऽर्हत्सिद्धचैत्यतपोगुरुश्रुतधर्मसंघप्रतिकूलः स तद्दर्शनमोहनीयं बध्नाति येनोदयागतेन जीवोऽनंतसंसारी स्यात् ॥ ८०२ ॥

स० चं०—जो जीव अरहंत अर सिद्ध अर चैत्य कहिए प्रतिमा अर तपश्चरण अर जैन शास्त्र अर निर्ग्रंथ गुरु अर जिन प्रणीत धर्म अर मुन्यादिकका समूह रूप संघ इनस्यों प्रतिकूली होइ इनके स्वरूपतैं विपरीतका ग्रहण करै सो जीव दर्शन मोहकौं बांधै है जाके उदयकरि जीव अनंत संसारी हो है ॥ ८०२ ॥

तिव्वकसाओ बहुमोहपरिणदो रागदोससंतत्तो ।
बंधदि चरित्तमोहं दुविहंपि चरित्तगुणघादी ॥ ८०३ ॥

तीव्रकषायो बहुमोहपरिणतो रागद्वेषसंतप्तः ।
बध्नाति चारित्रमोहं द्विविधमपि चारित्रगुणघाती ॥ ८०३ ॥

जी० प्र०—यः तीव्रकषायनोकषायोदययुतः बहुमोहपरिणतः रागद्वेषसंसक्तः चारित्रगुणविनाशनशीलः स जीवः कषायनोकषायभेदं द्विविधमपि चारित्रमोहनीयं बध्नाति ॥ ८०३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०–जो जीव तीव्रकषाय अर नोकषाय संयुक्त होइ बहुत मोहरूप परिणमै राग द्वेषविषैं आसक्त होइ चारित्रगुणके नाश करनेका जाका स्वभाव होइ सो जीव कषाय नोकषाय भेदकौं लीए दोय प्रकार चारित्र मोहकौं बांधै हैं ॥ ८०३ ॥

मिच्छो हु महारंभो णिस्सीलो तिव्वलोहसंजुत्तो ।
णिरयाउगं णिबंधइ पावमई रुद्दपरिणामी ॥ ८०४ ॥

मिथ्यो हि महारंभो निश्शीलः तीव्रलोभसंयुक्तः ।
निरयायुष्कं निबध्नाति पापमतिः रुद्रपरिणामी ॥ ८०४ ॥

जी० प्र०—यः खलु मिथ्यादृष्टिः बह्वारंभः निश्शीलः तीव्रलोभसंयुक्तः रौद्रपरिणामः पापकार्यबुद्धिः स जीवो नरकायुर्बध्नाति ॥ ८०४ ॥

स० चं०–जो जीव मिथ्यामतरूप मिथ्यादृष्टी होइ बहुत आरंभी होइ शीलरहित होइ तीव्र लोभ संयुक्त होइ रौद्र परिणामी होइ पाप कार्यविषैं जाकी बुद्धि होइ सो जीव नरकायुकौं बांधै है ॥ ८०४ ॥

उम्मग्गदेसगो मग्गणासगो गूढहियय माइल्लो ।
सठसीलो य ससल्लो तिरियाउं बंधदे जीवो ॥ ८०५ ॥

उन्मार्गदेशको मार्गनाशको गूढहृदयो मायावी ।
शठशीलश्च सशल्यः तिर्यगायुष्कं बध्नाति जीवः ॥ ८०५ ॥

जी० प्र—यः उन्मार्गोपदेशकः सन्मार्गनाशकः गूढहृदयो मायावी शठशीलः सशल्यः स जीवस्तिर्यगायुर्बध्नाति ॥ ८०५ ॥

स० चं०–जो जीव विपरीत मार्गका उपदेशक होइ, भला मार्गका नाशक होइ, गूढ औरके जाननेमें न आवै ऐसा जाका हृदय परिणाम होइ, मायावी कपटी होइ अर शठ मूर्खता संयुक्त जाका सहज होइ, शल्यकरि संयुक्त होइ सो जीव तिर्यंच आयुकौं बांधै है ॥ ८०५ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पयडीए तणुकसाओ दाणरदी सीलसंजमविहीणो ।
मज्झिमगुणेहिं जुत्तो मणुवाउं बंधदे जीवो ॥ ८०६ ॥

प्रकृत्या तनुकषायो दानरतिः शीलसंयमविहीनः ।
मध्यमगुणैर्युक्तो मानवायुष्कं बध्नाति जीवः ॥ ८०६ ॥

जी० प्र०—यः स्वभावेन मंदकषायोदयः दानप्रीतिः शीलैः संयमेन च विहीनः मध्यमगुणैर्युक्तः स जीवो मनुष्यायुर्बध्नाति ॥ ८०६ ॥

स० चं०—जो जीव विचार विना प्रकृति स्वभाव ही करि मंद कषायी होइ, दानविषैं प्रीतिसंयुक्त होइ, शील संयम कर रहित होइ, न उत्कृष्ट गुण न दोष ऐसे मध्यम गुणनिकरि संयुक्त होइ सो जीव मनुष्यायुकौं बांधै है ॥ ८०६ ॥

अणुवदमहव्वदेहिं य बालतवाकामणिज्जराए य ।
देवाउगं णिबंधइ सम्माइट्ठी य जो जीवो ॥ ८०७ ॥

अणुव्रतमहाव्रतैश्च बालतपोऽकामनिर्जरया च ।
देवायुष्कं निबध्नाति सम्यग्दृष्टिश्च यो जीवः ॥ ८०७ ॥

जी० प्र०—यः सम्यग्दृष्टिर्जीवः स केवलं सम्यक्त्वेन साक्षादणुव्रतैर्महाव्रतैर्वा देवायुर्बध्नाति ! यो मिथ्यादृष्टिर्जीवः स उपचाराणुव्रतमहाव्रतैर्बालतपसा अकामनिर्जरया च देवायुर्बध्नाति ॥ ८०७ ॥

स० चं०—जो जीव सम्यग्दृष्टी है सो केवल सम्यक्त्वकरि वा साक्षात् अणुव्रत महाव्रतनिकरि देवायुकौं बांधै है बहुरि जो मिथ्यादृष्टि जीव है सो उपचाररूप अणुव्रत महाव्रतनिकरि वा अज्ञानरूप बालतपश्चरण करि वा विना इच्छा बंधादिकतैं भई ऐसी अकाम निर्जराकरि देवायुकौं बांधै है ॥ ८०७ ॥ ९८४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मणवयणकायवक्को माइल्लो गारवेहिं पडिबद्धो ।
असुहं बंधदि णामं तप्पडिवक्खेहिं सुहणामं ॥ ८०८ ॥

मनोवचनकायवक्रो मायावी गारवैः प्रतिबद्धः ।
अशुभं बध्नाति नाम तत्प्रतिपक्षैः शुभनाम ॥ ८०८ ॥

जी० प्र०—यः मनोवचनकायैर्वक्रः मायावी गारवत्रयप्रतिबद्धः स जीवो नरकतिर्यग्गत्याद्यशुभं नामकर्म बध्नाति । तत्प्रतिपक्षपरिणामैर्हि शुभं नामकर्म बध्नाति ॥ ८०८ ॥

स० चं०—जो जीव मन वचन कायकरि वक्रहोइ सरल न होइ, मायावी कपटी होइ, तीन प्रकार गारव बढाई करि सहित होइ सो जीव नरक तिर्यंच गति आदि अशुभ अप्रशस्त नाम कर्म बांधै है। बहुरि पूर्वोक्ततैं विपरीत सरल निष्कपट गारव रहित जो जीव होइ सो शुभ प्रशस्त नाम कर्मकों बांधै है ॥ ८०८ ॥

अरहंतादिसु भत्तो सुत्तरुची पढणुमाणगुणपेही ।
बंधदि उच्चागोदं विवरीओ बंधदे इदरं ॥ ८०९ ॥

अर्हदादिषु भक्तः सूत्ररुचिः पठनानुमननगुणदर्शी ।
बध्नाति उच्चगोत्रं विपरीतो बध्नातीतरत् ॥ ८०९ ॥

जी० प्र०—यः अर्हदादिषु भक्तः गणधराद्युक्तागमेषु श्रद्धाध्ययनार्थविचारविनयादिगुणदर्शी स जीवः उच्चैर्गोत्रं बध्नाति । तद्विपरीतो नीचैर्गोत्रं बध्नाति ॥ ८०९ ॥

स० चं०—जो जीव अरहंतादिकविषैं भक्तिवंत होइ गणधरादिक कह्या शास्त्रविषैं जाकी रुचि होइ वा अध्ययनके अर्थि विचार विनयादिक गुणका प्रेक्षक दर्शक होइ सो जीव उच्चगोत्रकौं बांधै है। तिस पूर्वोक्ततैं विपरीत जीव नीचगोत्रकौं बांधै है ॥ ८०९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पाणवधादीसु रदो जिणपूजामोक्खमग्गविग्घयरो ।
अज्जेइ अंतरायं ण लहइ जं इच्छियं जेण ॥ ८१० ॥

प्राणवधादिषु रतो जिनपूजामोक्षमार्गविघ्नकरः ।
अर्जयति अंतरायं न लभते यदीप्सितं येन ॥ ८१० ॥

जी० प्र०—यः द्वित्रिचतुरिंद्रियवधेषु स्वपरकृतेषु प्रीतः । जिनपूजाया रत्नत्रयप्राप्तेश्च स्वान्ययोर्विघ्नकरः स जीवस्तदंतरायकर्मार्जयति येनोदयागतेन यदीप्सितं तन्न लभते ॥ ८१० ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ कर्मकांडे प्रत्ययप्ररूपणो नाम षष्ठोऽधिकारः ॥ ६ ॥

स० चं०—जो जीव आपकरि वा अन्यकरि करी एकेंद्री आदि प्राणीनिकी हिंसा तीहिंविषैं प्रीतिवंत होइ । जिनेश्वरकी पूजा अर रत्नत्रयकी प्राप्ति रूप मोक्षमार्ग तिसविषैं आपकैं वा अन्यजीवकैं विघ्न करै सो जीव अंतराय कर्म उपजावै है । जाके उदय आवनेकरि वांछित न पावै है ॥ ८१० ॥

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्र विरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीकाके अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीकाविषैं कर्मकांडविषैं प्रत्ययप्ररूपणा नामा छठा अधिकार संपूर्ण भया ॥ ६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भावचूलिकाधिकारः ॥ ७ ॥

करि अभाव भवभाव सब सहज भाव निज पाय।
जय अपुनर्भवभावमय भये परम शिवराय ॥ १ ॥

अथ भावचूलिकामुपक्रममाणो निर्विघ्नपरिसमाप्त्यर्थं स्वेष्टविशिष्टदेवतां नमस्यति—

अथ भाव चूलिकाका प्रारंभ करैं हैं। तहां प्रथम निर्विघ्न समाप्त होनके अर्थि अपने इष्ट देवकौं नमस्कार करैं हैं—

गोम्मटजिणिंदचंदं पणमिय गोम्मटपयत्थसंजुत्तं।
गोम्मटसंगहविसयं भावगयं चूलियं वोच्छं ॥ ८११ ॥

गोम्मटजिनेंद्रचंद्रं प्रणम्य गोम्मटपदार्थसंयुक्तां।
गोम्मटसंग्रहविषयां भावगतां चूलिकां वक्ष्ये ॥ ८११ ॥

जी० प्र९—गोम्मटजिनेंद्रचंद्रं नमस्कृत्य समीचीनपदार्थसंयुक्तां गोम्मटसंग्रहविषयां भावगतचूलिकां वक्ष्ये ॥ ८११ ॥

स० चं०—गोम्मट जिनेंद्र कहिए वर्धमान स्वामी वा नेमिनाथ स्वामीका प्रतिबिंब सो ही भया चंद्रमा ताहि नमस्कार करि समीचीन पद शब्द अर अर्थ करि संयुक्त वा भले पदार्थनिका वर्णनकरि संयुक्त ऐसी जो गोम्मटसार ग्रंथविषैं पाइए वा तीर्थंकरका शास्त्रके गोचर भावनिका कथनकौं प्राप्त भावगत चूलिका ताहि कहौ हौं ।८११।

जेहिं दु लक्खिज्जंते उवसमआदीसु जणिदभावेहिं।
जीवा ते गुणसण्णा णिद्दिट्ठा सव्वदरसीहिं ॥ ८१२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यैस्तु लक्ष्यंते उपशमादिषु जनितभावैः ।
जीवास्ते गुणसंज्ञा निर्दिष्टाः सर्वदर्शिभिः ॥ ८१२ ॥

जी० प्र०—यैः प्रतिपक्षकर्मोपशमादिषु सत्सु संजनितभावैर्जीवाः लक्ष्यंते ते भावाः गुणसंज्ञाः सर्वदर्शिभिर्निर्दिष्टाः ॥ ८१२ ॥

स० चं०—जिन अपने प्रतिपक्षी कर्मनिके उपशमादिकौं होत संते निपजैं ऐसे औपशमिकादि भावनिकरि जीव लखेजांहि पहिचानेजांहि ते भाव गुण ऐसी संज्ञाकरि सर्वदर्शीनिकरि कहे हैं ॥ ८१२ ॥

उवसम खइओ मिस्सो ओदयियो पारिणामियो भावो ।
भेदा दुग णव तत्तो दुगुणिगिवीसं तियं कमसो ॥ ८१३ ॥

औपशमिकः क्षायिको मिश्र औदायिकः पारिणामिको भावः ।
भेदा द्विकं नव ततो द्विगुणमेकविंशतिस्त्रयः क्रमशः ॥ ८१३ ॥

जी० प्र०—तत्र मूलभावा औपशमिकः क्षायिकः मिश्रः औदायिकः पारिणामिकश्चेति पंच । ततः पश्चात्तेषां भेदाः क्रमशो द्वौ नवाष्टादशैकविंतिस्त्रयो भवंति ॥ ८१३ ॥

स० चं०—ते मूल भाव औपशमिक क्षायिक मिश्र औदयिक पारणामिक ए पंच हैं। तहां पीछैं तिनके भेद अनुक्रमतैं दोय नव अठारह इकईस तीन जानने ॥ ८१३ ॥

कम्मुवसमम्मि उवसमभावो खीणम्मि खइयभावो दु ।
उदयो जीवस्स गुणो खओवसमिओ हवे भावो ॥ ८१४ ॥

कर्मोपशमे उपशमभावः क्षीणे क्षायिकभावस्तु ।
उदयो जीवस्य गुणः क्षायोपशमिको भवेत् भावः ॥ ८१४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—प्रतिपक्षकर्मोपशमे सत्यौपशमिकभावः स्यात् । तन्निरवशेषक्षये क्षायिकभावः स्यात् । तु-पुनः तदुदयो जीवगुणश्चेति द्वयं मिश्रं क्षायोपशमिकभावः स्यात् ॥ ८१४ ॥

स० चं०—प्रतिपक्षी कर्मके उपशम होतें औपशमिक भाव होवै। बहुरि तिस प्रतिपक्षी कर्मके समस्त क्षय होतें क्षायिक भाव हो हैं। बहुरि प्रतिपक्षी कर्मका उदय भी होय अर जीवका गुण भी जहां प्रगट होय तहां दोऊ मिश्ररूप क्षायोपशमिक भाव हो हैं ॥ ८१४ ॥

कम्मुदयजकम्मिगुणो ओदयियो तत्थ होदि भावो दु।
कारणणिरवेक्खभवो सभावियो होदि परिणामो ॥ ८१५ ॥

कर्मोदयजकर्मिगुण औदयिकस्तत्र भवति भावस्तु।
कारणनिरपेक्षभवः स्वाभाविको भवति परिणामः ॥ ८१५ ॥

जी० प्र०—कर्मोदयजनितसंसारिजीवगुण उदयः, तत्र भव औदयिकभावः स्यात् । उपशमक्षयक्षयोपशमोदयनिरपेक्षायां भवः पारिणामिकभावः स्यात् ॥ ८१५ ॥ उक्तोत्तरभेदसंख्याविषयभावान् व्यनक्ति—

स० चं०—कर्मका उदयतें निपज्या संसारी जीवकैं गुण सो उदय ताकौं होतें जो भया सो औदयिक भाव है। बहुरि उपशम क्षय क्षयोपशम उदयकी अपेक्षा करि रहित असा जो भाव सो पारिणामिक भाव है ॥ ८१५ ॥ आगैं उत्तर भावनिकौं कहैं हैं—

उवसमभावो उवसमसम्मं चरणं च तारिसं खइओ।
खाइय णाणं दंसण सम्म चरित्तं च दाणादी ॥ ८१६ ॥

उपशमभाव उपशमसम्यक्त्वं चरणं च तादृशः क्षायिकः।
क्षायिकं ज्ञानं दर्शनं सम्यक्त्वं चारित्रं च दानादयः ॥ ८१६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—उपशमभावाः—उपशमसम्यक्त्वं उपशमचारित्रं चेति द्वेधा, क्षायिकभावाः क्षायिकं ज्ञानं दर्शनं सम्यक्त्वं चारित्रं तादृक्दानादयश्चेति नवधा ॥ ८१६ ॥

स० च०—औपशमिक भाव है सो उपशम सम्यक्त्व उपशम चारित्र ऐसैं दोय प्रकार है। बहुरि क्षायिक भाव है सो क्षायिकज्ञान १ दर्शन १ सम्यक्त्व १ चारित्र १ दान १ लाभ १ भोग १ उपभोग १ वीर्य १ ऐसैं नवप्रकार है॥ ८१६ ॥

खाओवसमियभावो चउणाण तिदंसणं तिअण्णाणं।
दाणादिपंच वेदगसरागचारित्तदेसजमं ॥ ८१७ ॥

क्षायोपशमिकभावश्चतुर्ज्ञानं त्रिदर्शनं त्र्यज्ञानं।
दानादिपंच वेदकसरागचारित्रदेशयमं ॥ ८१७ ॥

जी० प्र०—क्षायोपशमिकभावाः—मतिश्रुतावधिमनःपर्ययज्ञानानि, चक्षुरचक्षुरवधिदर्शनानि, कुमतिकुश्रुतविभंगज्ञानानि, दानलाभभोगोपभोगवीर्याणि, वेदकसम्यक्त्वं, सरागचारित्रं देशसंयमश्चेत्यष्टादशधा ॥ ८१७ ॥

स० च०—क्षायोपशमिक भाव है सो मति श्रुति अवधि मनःपर्यय ए च्यारि ज्ञान अर चक्षु अचक्षु अवधि ए तीन दर्शन अर कुमति कुश्रुत विभंग ए तीन अज्ञान अर क्षयोपशमरूप दान लाभ भोग उपभोग वीर्य ए पंच अर वेदक सम्यक्त्व अर सरागचारित्र अर देशसंयम ऐसैं अठारह प्रकार है। मतिज्ञानावरणादिके उदय होतैं मतिज्ञानादिक होंय यातैं इनकौं क्षायोपशमिक भाव कहे॥ ८१७ ॥

ओदयिया पुण भावा गदिलिंगकसाय तह य मिच्छत्तं।
लेस्सासिद्धासंजमअण्णाणं होंति इगिवीसं ॥ ८१८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

औदयिकाः पुनर्भावा गतिलिंगकषायास्तथा च मिथ्यात्वं ।
लेश्यासिद्धासंयमाज्ञानं भवंति एकविंशतिः ॥ ८१८ ॥

जी० प्र०—औदयिकभावाः पुनः चतुर्गतित्रिलिंगचतुःकषायाः, तथा च मिथ्यात्वं षड्लेश्या असिद्धासंयमाज्ञानानि इत्येकविंशतिर्भवंति ॥८१८॥

स० चं०—बहुरि औदयिक भाव है सो च्यारि गति तीन वेद च्यारि कषाय एक मिथ्यात्व छह लेश्या बहुरि सामान्य कर्मके उदयरूप सिद्ध पदका अभाव सो असिद्धत्व अर चारित्र मोहका सर्व घातियाका उदयतैं चारित्र-का अभाव सो असंयम अर ज्ञानावरणके उदयतैं जो ज्ञान प्रगट नाही सो अज्ञान, छद्मस्थकैं जितना ज्ञान प्रगट भया है सो क्षयोपशम रूप है अर जितना ज्ञान प्रगट नाहीं सो औदयिक अज्ञानरूप है। ऐसैं इकईस प्रकार है॥ ८१८॥

जीवत्तं भव्वत्तमभव्वत्तादी हवंति परिणामा ।
इदि मूलुत्तरभावा भंगवियप्पे बहू जाणे ॥ ८१९ ॥

जीवत्वं भव्यत्वमभव्यत्वादयो भवंति परिणामाः ।
इति मूलोत्तरभावाः भंगविकल्पे बहवो जानीहि ॥ ८१९ ॥

जी० प्र०—जीवत्वं भव्यत्वं अभव्यत्वादयश्च पारिणामिकभावा भवंति । इत्येवं मूलभावाः पंच उत्तरभावास्त्रिपंचाशत् भंगविकल्पा बहव इति जानीहि ॥ ८१९ ॥

स० चं०—जीवत्व भव्यत्व अभव्यत्व ऐसैं पारिणामिक भाव तीन प्रकार हैं जीवत्व तौ द्रव्यस्वभाव है ही अर भव्यत्व अभव्यत्व भी कोई कर्मके निमित्ततैं नाहीं अनादितैं जैसैं हैं तैसैं ही हैं। तातैं इनकौं भी पारिणामिक कहे। ऐसैं मूलभाव पांच हैं। उत्तर भाव तरेपन हैं अर भंग विकल्पकरि बहुत हैं ऐसैं जानहु ॥ ८१९ ॥

ओघादेसे संभवभावं मूलुत्तरं ठवेदूण ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पत्तेये अविरुद्धे परसगजोगेवि भंगा हु ॥ ८२० ॥

ओघादेशे संभवभावं मूलोत्तरं स्थापयित्वा ।
प्रत्येके अविरुद्धे परस्वकयोगेऽपि भंगा हि ॥ ८२० ॥

जी० प्र०—गुणस्थाने मार्गणास्थाने च संभवतो मूलभावानुत्तरभावांश्च संस्थाप्याक्षसंचारक्रमेण प्रत्येके अविरुद्धपरसंयोगे स्वसंयोगे च भंगा भवंति स्फुटं। तत्र गुणस्थानेषु यथा मिथ्यादृष्ट्यादित्रये मूलभावाः क्षायोपशमिकौदयिकपारिणामिकास्त्रयस्त्रयः। तत्र परसंयोगे प्रत्येकभंगास्त्रयस्त्रयः। द्विसंयोगास्त्रयः । त्रिसंयोगे एकः । स्वसंयोगे मिश्रे मिश्रः । औदयिके औदयिकः । पारिणामिके पारिणामिकः इति त्रयः मिलित्वा दश। असंयतादिचतुष्के मूलभावाः पंच पंच । तत्र प्रत्येकभंगाः पंच । द्विसंयोगा नवैव औपशमिकक्षायिकयोरसंयोगात् त्रिसंयोगाः सप्त । चतुःसंयोगा औपशमिकक्षायिकाभ्यां द्वौ । पंचसंयोगो नास्ति । स्वसंयोगा मिश्रौदयिकपारिणामिकास्त्रयः । एवं परस्वसंयोगाः षड्विंशतिः। उपशमकचतुष्के मूलभावाः पंच पंच । तत्र परसंयोगे प्रत्येकभंगाः पंच । द्विसंयोगा दश । त्रिसंयोगा दश । चतुःसंयोगाः पंच । पंचसंयोग एकः । स्वसंयोगाः क्षायिके क्षायिकं विना चत्वारः । एवं परस्वसंयोगाः पंचत्रिंशत् । क्षपकचतुष्के क्षायिकमिश्रौदयिकपारिणामिका मूलभावाश्चत्वारश्चत्वारः । तत्र परसंयोगे प्रत्येकभंगाश्चत्वारः । द्विसंयोगाः षट् । त्रिसंयोगाश्चत्वारः । चतुःसंयोग एकः । स्वसंयोगाश्चत्वारः । मिलित्वैकान्नविंशतिः । सयोगायोगयोर्मूलभावास्त्रयस्त्रयः । तत्र प्रत्येकभंगास्त्रयः । द्विसंयोगास्त्रयः । त्रिसंयोग एकः । स्वसंयोगास्त्रयः मिलित्वा दश । सिद्धे मूलभावौ द्वौ । तत्र प्रत्येकभंगौ द्वौ । द्विसंयोग एकः । स्वसंयोगौ द्वौ । मिलित्वा पंच ॥ ८२० ॥ उक्तमूलभावसंख्यां स्वपरसंयोगसंख्यां चाह—

स० चं०—ओघ कहिए गुणस्थान आदेश कहिए मार्गणास्थान इनविषैं संभवते असे जु मूलभाव अर उत्तरभाव तिनकौं स्थापिकरि जैसैं गुणस्थानाधिकारविषैं प्रमादनिका कथन करतैं अक्षसंचार विधान कह्या तैसैं ही इहां अक्ष संचारका विधानकरि भावनिके बदलनेतैं प्रत्येक भंग अर विरुद्धरहित परसंयोगी अर स्वसंयोगीविषैं भंग हो हैं । जहां जुदे जुदे भाव कहिए तहां प्रत्येक भंग जानने । बहुरि जहां अन्य अन्य भावके संयोगरूप भंग होंइ तहां परसंयोगी कहिए । जैसैं औदयिकका कोई भेद जहां पाइए अर तहां ही औपशमादिकका कोई भेद पाइए तहां औदयिक औपशमादिकका संयोगरूप परसंयोगी होइ । असैंही अन्यत्र भी जानने। बहुरि जहां निज भावके भेदनिका संयोगरूप ही भंग होइ तहां स्वसंयोगी कहिए जैसैं औदयिकका कोइ भेद जहां पाइए अर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तहां ही औदयिकका अन्य भेद भी पाइए तहां औदयिकविषै औदयिक ऐसा स्वसंयोगी भंग होइ ऐसैं ही अन्यत्र भी जानने। सो गुणस्थाननिविषैं कहिए है—

नानाजीव नाना काल अपेक्षा भाव कहना सुगम है जातै पूर्वै सवनिका कथन होइ ही आया तथापि मंद बुद्धिनिके समझनेके निमित्त कहिए है—तहां मूलभाव मिथ्यादृष्ट्यादि तीनविषैं औदयिक क्षायोपशमिक पारिणामिक ऐसैं तीन तीन हैं। असंयतादि आठविषैं सर्व पांच पांच हैं। क्षीणकषायविषैं औपशमिक विना च्यारि हैं। सयोगी अयोगीविषैं औदयिक क्षायिक पारिणामिक ए तीन तीन हैं। सिद्धनिविषैं क्षायिक पारिणामिक ए दोय हैं। अब उत्तरभाव कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषैं औदयिकके इकईस अर तीन अज्ञान दोय दर्शन पांच लब्धि ए क्षायोपशमिकके दश अर तीन पारिणामिकके ऐसैं चौंतीस भाव हैं। बहुरि सासादनविषैं मिथ्यात्वविना औदयिकके बीस अर तीन अज्ञान दोय दर्शन पांच लब्धि ए क्षायोपशमिकके दश अर जीवत्व भव्यत्व ए पारिणामिकके दोय ऐसैं बत्तीस भाव हैं बहुरि मिश्रविषैं मिथ्यात्व विना औदयिकके बीस अर मिश्र रूप तीन ज्ञान तीन दर्शन पांच लब्धि ए क्षायोपशमिकके ग्यारह अर भव्यत्व जीवत्व ए पारिणामिकके दोय ऐसैं तेतीस भाव हैं। बहुरि असंयतविषैं मिथ्यात्व बिना औदयिकके बीस अर तीन ज्ञान तीन दर्शन पांच लब्धि एक सम्यक्त्व ए क्षायोपशमिकके बारह अर औपशमिक सम्यक्त्व अर क्षायिक सम्यक्त्व अर जीवत्व भव्यत्व ए पारिणामिक ऐसैं छत्तीस भाव हैं। बहुरि देशसंयतविषैं मनुष्य तिर्यंच गति दोय च्यारि कषाय तीन लिंग तीन शुभलेश्या असिद्धत्व अज्ञान ए औदयिकके चौदह अर तीन ज्ञान तीन दर्शन पांच लब्धि सम्यक्त्व देशचारित्र ए क्षायोपशमिकके तेरह अर औपशमिक सम्यक्त्व अर क्षायिक सम्यक्त्व अर जीवत्व भव्यत्व पारिणामिक ऐसैं इकतीस भाव हैं। बहुरि इनविषैं तिर्यंचगति देश चारित्र घटाइ मनःपर्ययज्ञान सरागचारित्र मिलाएं प्रमत्त अप्रमत्तविषैं इकतीस इकतीस भाव हैं। बहुरि इनविषैं पीत पद्मलेश्या अर क्षायोपशमिक सम्यक्त्व चारित्र घटाइ औपशमिक चारित्र क्षायिक चारित्र

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिलाएं अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणविषैं गुणतीस गुणतीस भाव हैं। इन विषै लोभ विना तीन कषाय अर तीन लिंग घटाएं सूक्ष्म सांपरायविषै तेवीस भाव हैं। बहुरि इनविषै लोभकषाय क्षायिक चारित्र घटाएं उपशांत कषाय विषै इकईस भाव हैं बहुरि इनविषैं औपशामिकके दोय घटाइ क्षायिक चारित्र मिलाएं क्षीणकषायविषैं वीसभाव हैं। बहुरि मनुष्यगाति शुक्लेलश्या असिद्धत्व ए औदयिकके तीन क्षायिकके सर्व नव जीवत्व भव्यत्व पारिणामिक असैं सयोगीविषैं चौदह भाव हैं। बहुरि इनविषैं शुक्ललेश्या घटाएं अयोगीविषैं तेरह भाव हैं। बहुरि सम्यक्त्व ज्ञान दर्शन वीर्य ए क्षायिकके च्यारि अर जीवत्व पारिणामिक असैं सिद्धविषैं पांच भाव हैं। असैं नानाजीव नाना काल अपेक्षा जानना। बहुरि इहां एक जीवके एकै कालि जितने जितने भाव संभवैं तिस अपेक्षा कथन करिए है–

सो मिथ्यादृष्ट्यादिक तीन गुणस्थाननिविषैं मूलभाव तीन पाइए है। तहां परसंयोगविषैं प्रत्येक भंग तीन औदयिक १ मिश्र १ पारिणामिक १ ए जुदे जुदे जानने। अर द्विसंयोगी भंग तीन–औदयिक मिश्र १ औदयिक पारिणामिक १ मिश्रपारिणामिक १ बहुरि औदयिक मिश्र पारिणामिक इन तीनोंका संयोग रूप त्रिसंयोगी भंग एक १ बहुरि स्वसंयोगीविषैं भंग तीन–औदयिकविषैं औदयिक १ मिश्रविषैं मिश्र १ पारिणामिकविषैं पारिणामिक १ असैं सर्व मिलि दश भंग भए। प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी आदि भंग ल्यावनेका विधान जैसैं आस्रवाधिकारविषैं कह्या था तैसैं जानना। विवक्षित संख्याका प्रमाणरूप अंकतैं लगाय एक एक घाटि संख्यारूप लिखने ते अंश जानने। तिनके नीचै एकतैं लगाय एक एक अधिक अंक लिखने ते हार जानने। तहां पहिले अंशनिकरि अगला अंशकौं अर पहिले हारनिकरि अगिले हारकौं गुणि अंश प्रमाणकौं हार प्रमाणका भाग दीएं क्रमतैं प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंगनिका प्रमाण आवै है। सो यहां मिथ्यादृष्टी आदि तीन विषै तीन मूलभाव हैं। सो तीनतैं एक एक घाटिकरि अंक लिखने सो तीन दोय एकके अंक लिखने। तिनके नीचैं एक दोय तीनके अंक लिखने–

३	२	१
१	२	३

तहां पहिले तीनकौं एकका भाग दीएं तीन पाए सो तीन तौ प्रत्येक भंग हैं। बहुरि तीनकरि दोयकौं गुणि ताकौं एक गुणा दोयका भाग दीएं तीन पाया सो तीन द्विसंयोगी भंग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हैं। बहुरि छहकरि एककौं गुणि ताकौं दोयगुणा तीनका भाग दीएं एक पाया सो एक त्रिसंयोगी भंग है। इस ही विधानतैं आगैं मूलभाव उत्तर भावनिका कथनविषैं भी प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी आदि भंगनिका विधान जानना। बहुरि असंयतादि च्यारि गुणस्थाननिविषैं मूलभाव पांच पांच पाइए तहां पूर्वोक्त विधानतैं परसंयोगी-विषैं प्रत्येक भंग तौ पांच पाइए

५	४	३	२	१
१	२	३	४	५

बहुरि द्विसंयोगी भंग दश होंइ तिनविषैं इहां औप-शमिक क्षायिकका संयोगरूप एक भंग नाहीं तातैं नव ही हैं जातैं इहां औपशमिकका अर क्षायिकका कोई भी भेद परस्पर मिलै नाहीं। बहुरि त्रिसंयोगी भंग दश होंइ तिनविषैं औपशमिक क्षायिक अर एक औदयिक वा क्षायोपशमिक वा पारिणामिकविषैं कोई इन तीनके संयोग रूप तीन भंग इहां नाहीं तातैं सात ही हैं। बहुरि चतुःसंयोगी पांच होंइ तिनविषैं औपशमिक क्षायिक अर दोय औदयिक क्षायोपशमिक वा क्षायोपशमिक पारिणामिक वा औदयिक पारिणामिकविषैं कोई इनके संयोगरूप तीन इहां नाहीं तातैं दोय ही हैं। बहुरि उपशम क्षायिकका मिलन नाहीं तातैं पंच संयोगी भंगका अभाव है। बहुरि स्वसं-योगी भंग मिश्रविषैं मिश्र, औदयिकविषैं औदायिक, पारिणामिकविषैं पारिणामिक ऐसैं तीन भंग हैं। इहां उपशम सम्यक्त्वविषैं उपशम चारित्र वा क्षायिक सम्यक्त्वविषैं क्षायिकचारित्रादिक संभवै नाहीं तातैं औपशमिकविषैं आप-शमिक अर क्षायिकविषैं क्षायिक ए दोय भंग न कहे ऐसैं मिलिकरि छब्बीस भंग भए। बहुरि उपशमश्रेणीके च्यारि गुणस्थाननिविषैं पांच पांच मूलभाव हैं। तहां परसंयोगविषैं प्रत्येक भंग पांच द्विसंयोगी दश त्रिसंयोगी दश चतुः संयोगी पांच पांचसंयोगी एक भंग है। इहां क्षायिक सम्यक्त्व होतैं उपशमचारित्र संभवै है तातैं उपशम क्षायि-कका भी संयोग जानना। बहुरि स्वसंयोगीविषैं क्षायिकविषैं क्षायिक नाहीं जातैं इहां क्षायिक सम्यक्त्वविषै और कोई क्षायिकका चारित्रादिक भेद संभवै नाहीं तातैं अवशेष च्यारि भाग संबंधी च्यारि भंग जानना। ऐसैं सर्व मिलि पैंतीस भंग भए। बहुरि क्षपकश्रेणीका च्यारि गुणस्थाननिविषैं क्षायिक मिश्र औदयिक पारिणामिक ए च्यारि च्यारि ही भाव हैं। तहां परसंयोगविषैं प्रत्येक भंग च्यारि द्विसंयोगी छह त्रिसंयोगी च्यारि चतुःसंयोगी एक भंग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। बहुरि स्वसंयोगीविषैं इहां क्षायिक सम्यक्त्वविषैं क्षायिक चारित्र भी संभवै है तातैं च्यारयो भावानिकी अपेक्षा च्यारि भंग हैं। ऐसैं मिलिकरि उगणीस भंग भए। बहुरि सयोगी अयोगीविषैं क्षायिक औदयिक पारिणामिक ए तीन तीन भाव हैं। तहां परसंयोगीविषैं प्रत्येक भंग तीन द्विसंयोगी तीन त्रिसंयोगी एक। बहुरि स्वसंयोगी तीनो भावनिकी अपेक्षा तीन ऐसैं मिलि दश भंग भए। बहुरि सिद्धनिविषैं क्षायिक पारिणामिक ए मूलभाव दोय हैं तहां प्रत्येक भंग दोय द्विसंयोगी एक स्वसंयोगी दोय ऐसैं मिलि पंच भंग भए ॥८२०॥ कही जो मूलभावनिकी संख्या अर स्वपरका संयोगरूप संख्या ताकौं कहैं हैं--

मिच्छातिये तिचउक्के दोसुवि सिद्धेवि मूलभावा हु।
तिग पण पणगं चउरो तिग दोण्णि य संभवा होंति ॥ ८२१ ॥

मिथ्यत्रये त्रिचतुष्के द्वयोरपि सिद्धेऽपि मूलभावा हि।
त्रिकं पंच पंचकं चत्वारः त्रिकं द्वौ च संभवा भवंति ॥ ८२१ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्यादित्रये असंयताद्युपशमकापूर्वकरणादिक्षपकापूर्वकरणादित्रिचतुष्केषु सयोगद्वये सिद्धे च क्रमेण मूलसंभवभावास्त्रयः पंच पंच चत्वारस्त्रयो द्वौ भवंति ॥ ८२१ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादि तीनविषै असंयतादि च्यारिविषैं उपशमश्रेणीके च्यारिविषैं क्षपक श्रेणीके च्यारि विषैं सयोगी आदि दोय विषै सिद्धविषैं अनुक्रमतैं संभवते मूलभाव तीन पांच पांच च्यारि तीन दोय हैं ॥८२१॥

तत्थेव मूलभंगा दस छव्वीसं कमेण पणतीसं।
उगुवीसं दस पणगं ठाणं पडि उत्तरं वोच्छं ॥ ८२२ ॥

तत्रैव मूलभंगा दश षड्विंशं क्रमेण पंचत्रिंशत्।
एकोनविंशं दश पंचकं स्थानं प्रति उत्तरं वक्ष्यामि ॥ ८२२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तथैवोक्तषट्स्थलेषु क्रमेण मूलभंगाः दश षड्विंशतिः पंचत्रिंशत् एकान्नविंशतिः दश पंच भवंति ॥ ८२२ ॥ अथ गुणस्थानं प्रति उत्तरभावान् वक्ष्ये—

स० चं०—तिनही पूर्वोक्त छहौंविषैं क्रमतैं मूलभंग दश छवीस पैंतीस उगणीस दश पांच है॥ ८२२ ॥ आगैं गुणस्थाननिप्रति उत्तर भावनिकौं कहौंगा—

उत्तरभंगा दुविहा ठाणगया पदगयात्ति पढमम्मि ।
सगजोगेण य भंगाणयणं णत्थित्ति णिद्दिट्ठं ॥ २३ ॥

उत्तरभंगा द्विविधाः स्थानगताः पदगता इति प्रथमे ।
स्वयोगेन च भंगानयनं नास्तीति निर्दिष्टं ॥ ८२३ ॥

जी० प्र०—उत्तरभंगा द्विविधाः स्थानगताः पदगताश्चेति । तत्र प्रथमे युगपत्संभविभावसमूहरूपे स्थाने स्थानांतरं नेति स्वसंयोगेन भंगानयनं नास्तीति निर्दिष्टं ॥ ८२३ ॥

स० चं०—उत्तर भावनिके भंग दोय प्रकार स्थानगत अर पदगत तहां एक जीवकैं एकै काल जितने जितने भाव पाइए तिनके समूहका नाम स्थान है ताकी अपेक्षा करि जे भंग करिए तिनकौं स्थानगत कहिए । बहुरि एक जीवके एक कालि जे भाव पाइए तिनकी एक जातिका वा जुदे जुदेका नाम पद कहिए ताकी अपेक्षा जे भंग करिए तिनकौं पदगत कहिए तहां एक जीवके एक कालि एकै स्थानविषैं अन्य कोई स्थान संभवै नाहीं तातैं स्थानगत भंगनिविषैं स्वसंयोगी भंग नाहीं प्राप्त हो है । ऐसा कह्या है ॥ ८२३ ॥

मिच्छदुगे मिस्सतिये पमत्तसत्ते य मिस्सठाणाणि ।
तिग दुग चउरो एक्कं ठाणं सव्वत्थ ओदयियं ॥ २४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्याद्विके मिश्रत्रये प्रमत्तसप्तके च मिश्रस्थानानि ।
त्रिकं द्विकं चत्वारि एकं स्थानं सर्वत्र औदयिकं ॥ ८२४ ॥

जी० प्र०—क्षायोपशमिकभावस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये त्रीणि । मिश्रादित्रये द्वे । प्रमत्तादिसप्तके चत्वारि । (अग्रे त्रिषु शून्यं ।) औदयिकभावस्थानं चतुर्दशगुणस्थानेष्वेकमेव ॥ ८२४ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादि दोय गुणस्थानविषैं अर मिश्रादि तीनविषैं अर प्रमत्तादि सातविषैं अनुक्रमतैं क्षायोपशमिकभावके स्थान तीन दोय च्यारि जानने बहुरि । औदयिक भावका स्थान सर्व चौदह गुणस्थाननिविषैं एक एक ही जानना ॥ ८२४ ॥

तत्थावरणजभावा पणछस्सत्तेव दाणपंचेव ।
अयदचउक्के वेदगसम्मं देसम्मि देसजमं ॥ २५ ॥

तत्रावरणजभावा पंचषट्सप्तैव दानपंचैव ।
अयतचतुष्के वेदकसम्यं देशे देशयमं ॥ ८२५ ॥

जी० प्र०—तत्र स्थानत्रये क्षायोपशमिकेष्वावरणजभावा मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये त्र्यज्ञानाद्यद्विदर्शनानि । मिश्रत्रये आद्यत्रिज्ञानत्रिदर्शनानि । प्रमत्तसप्तके तानि च मनःपर्ययश्च । क्षीणकषायांतं दानादयः पंच । असंयतादिचतुष्के वेदकसम्यक्त्वं । देशसंयते देशसंयमः ॥ ८२५ ॥

स० चं०—तहां पूर्वोक्त तीनविषैं क्षायोपशमिकके ज्ञानावरण दर्शनावरणके निमित्ततैं भए ऐसे भाव मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं तीन अज्ञान दोय दर्शन ऐसें पांच हैं । मिश्रादिक तीनविषैं आदिके तीनज्ञान तीन दर्शन हैं । प्रमत्तादिक सातविषैं मनःपर्यय सहित च्यारि ज्ञान तीन दर्शन हैं । बहुरि दानादिक पंच भाव मिथ्यादृष्टितैं क्षीण कषाय पर्यंत हैं । वेदक सम्यक्त्व असंयतादिक च्यारिविषैं है । देशसंयम देशसंयतविषैं है ॥ ८२५ ॥

रागजमं तु पमत्ते इदरे मिच्छादिजेट्ठठाणाणि ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वेभंगेण विहीणं चक्खुविहीणं च मिच्छदुगे ॥ २६ ॥

रागयमं तु प्रमत्ते इतरास्मिन् मिथ्यादिज्येष्ठस्थानानि ।
वैभंगेन विहीनं चक्षुर्विहीनं च मिथ्यद्विके ॥ ८२६ ॥

जी० प्र०—तु–पुनः प्रमत्ते अप्रमत्त च सरागचारित्र तेन क्षायोपशमिकभावज्येष्ठस्थानानि मिथ्यादृष्ट्यादिष्विमानि–मि १० । सा १० । मि ११ । अ १२ । दे १३ । प्र १४ । अ १४ । अ १२ । अ १२ । सू १२ । उ १२ । क्षी १२ । पुनरपि मिथ्यादृष्टिद्वये तज्ज्येष्ठं विभंगेन हीनं तदा नवकं स्यात् । पुनरपि चक्षुर्दर्शनेन हीनं तदाष्टकं स्यात् ॥ ८२६ ॥

स० चं०—बहुरि सराग चारित्र प्रमत्त अप्रमत्तविषैं ही है ऐसैं यथासंभव भाव मिलाए मिथ्यादृष्ट्यादि क्षीणकषाय पर्यंत अनुक्रमतैं क्षायोपशमिकके उत्कृष्टस्थान दश दश ग्यारह बारह तेरह चौदह चौदह बारह बारह बारह बारह बारह रूप जानने । तहां मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं तीन अज्ञान दोय दर्शन पांच दानादिक ऐसैं दश दशका उत्कृष्ट स्थान जानना । उत्कृष्ट इतने भाव होंइ । मिश्रविषैं तीन ज्ञान तीन दर्शन पंच दानादिक ऐसैं ग्यारहका है । असंयतविषै वेदक सम्यक्त्व सहित बारहका है । देश संयतविषैं देश संयम सहित तेरहका है । प्रमत्त अप्रमत्तविषैं देश संयमविना अर सराग संयम मनःपर्यय सहित चौदहका है । अपूर्वकरणादि क्षीणकषायपर्यंत च्यारि ज्ञान तीन दर्शन पंच दानादिक ऐसैं बारह बारहका उत्कृष्ट स्थान है । बहुरि मिथ्यादृष्ट्यादि दोयविषैं एक तो दशका उत्कृष्टस्थान अर एक विभंग रहित नवका स्थान एक चक्षुर्दर्शनकरि भी रहित आठका स्थान ऐसैं तीन तीन स्थान हैं ॥ ८२६ ॥

**अवधिदुगेण विहीणं मिस्सतिए होदि अण्णठाणं तु ।
मणणाणेणवधिदुगेणुभयेणूणं तदो अण्णे ॥ ८२७ ॥** ११९

अवधिद्विकेन विहीनं मिश्रत्रये भवत्यन्यत्स्थानं तु ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

मनोज्ञानेनावधिद्विकेनोभयेनोनं ततोऽन्यानि ॥ ८२७ ॥

जी० प्र०—मिश्रत्रये स्वस्वोत्कृष्टं अवधिद्विकेन विहीनं तदा मिश्रे नवकं । असंयते दशकं । देशसंयते एकादशकं स्यात् । प्रमत्ताद्युत्कृष्टं मनःपर्ययेनावधिद्विकेन तदुभयेन च पृथग्विहीनं तदा प्रमत्तद्वये त्रयोदशकद्वादशकैकादशकं, अपूर्वकरणादिपंचके एकादशकदशकनवकं स्यात् । औदयिकभावेष्वेकविंशतौ मिथ्यादृष्टौ एकजीवस्यैकसमये चतुर्गतित्रिवेदे चतुःकषायषड्लेश्यास्वेकैकः, मिथ्यात्वं असिद्धत्वं असंयमः अज्ञानं चेत्यष्टौ । सासादनादित्रये मिथ्यात्वं विना सप्त । देशसंयताद्यनिवृत्तिकरणसवेदभागे असंयमं विना षट् । अवेदभागे सूक्ष्मसांपराये च लिंगं विना पंच । उपशांतक्षीणकषाययोः कषायं विना चत्वारः । सयोगे अज्ञानं विना त्रयः । अयोगे लेश्यां विना द्वौ, तौ हि मनुष्यगत्यसिद्धत्वे ॥ ८२७ ॥ अथौदयिकस्थानभंगान् गुणस्थानेष्वाह—

स० चं०—मिश्रादिक तीनविषैं एक अपना अपना उत्कृष्ट स्थान बहुरि अवधिज्ञान दर्शनरहित मिश्रविषैं नवका, असंयतविषैं दशका, देशसंयतविषैं ग्यारहका स्थान ऐसैं दोय दोय स्थान हैं । बहुरि प्रमत्तादि सातविषैं एक एक अपना उत्कृष्टस्थान बहुरि एक एक मनःपर्यय रहित अर एक एक अवधिज्ञान अवधिदर्शन रहित अर एक एक अवधिज्ञान अवधिदर्शन मनःपर्यय रहित प्रमत्त अप्रमत्तविषैं तेरह बारह ग्यारहके, अपूर्वकरणादि पंचविषैं ग्यारह दश नवके तीन तीन स्थान ऐसैं च्यारि च्यारि स्थान जानने । बहुरि औदयिकके इकईसभाव तिनविषैं एक जीवकैं एकै कालि मिथ्यादृष्टिविषैं च्यारि गति तीन वेद च्यारिकषाय छह लेश्यानिविषैं एक एक अर मिथ्यात्व असिद्धत्व असंयम अज्ञान ऐसैं आठ भाग पाइए है । बहुरि सासादनादि तीनविषैं मिथ्यात्व विना सात सात पाइए । बहुरि देश संयतादि अनिवृत्तिकरणका सवेदभाग पर्यंत असंयमविना छह छह पाइए है । बहुरि अवेद भागविषैं अर सूक्ष्मसांपरायविषै वेदबिना पांच पाइए है । बहुरि उपशांत कषाय क्षीणकषायविषैं कषाय विना च्यारि च्यारि पाइए है । बहुरि सयोगीविषैं अज्ञान विना तीन पाइए है । बहुरि अयोगीविषैं लेश्याविना मनुष्यगति अर असिद्धत्व ए दोय पाइए है ॥ ८२७ ॥ आगैं कहे औदयिकके स्थान तिनविषैं भावनिके बदलनेतैं भए जे भंग तिनकौं गुणस्थाननिविषै कहिए है— ९९९

लिंगकसाया लेस्सा संगुणिदा चदुगदीसु अविरुद्धा ।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बारस बावत्तरियं तत्तियमेत्तं च अडदालं ॥ ८२८ ॥

लिंगकषाया लेश्याः संगुणिताश्चतुर्गतिष्वविरुद्धाः।
द्वादश द्वासप्ततिः तावन्मात्रं चाष्टचत्वारिंशत् ॥ ८२८ ॥

जी० प्र०—चतुर्गतिष्वविरुद्धाः लिंगकषायलेश्याः। तत्र नरकगतौ षंढवेदचतुःकषायत्र्यशुभलेश्याः, तिर्यग्मनुष्यगत्योस्त्रिलिंगचतुःकषायषड्लेश्याः, देवगतौ स्त्रीपुंलिंगचतुष्कषायत्रिशुभलेश्याः भवनत्रयापर्याप्ते त्र्यशुभलेश्या अपि सर्वत्र गुणिताः क्रमेण द्वादश द्वासप्ततिः द्वासप्ततिरष्टचत्वारिंशद्भवंति। मिलित्वा २०४, मिथ्यादृष्टौ सासादने च गुण्यं स्थाप्यं ॥ ८२८ ॥

स० चं०—च्यारि गतिनिविषैं अविरुद्ध यथासंभव लिंग कषाय लेश्यानिकौं परस्पर गुणिए। तहां नरकगतिविषै तौ नपुंसक वेद च्यारि कषाय तीन अशुभ लेश्याके परस्पर गुणनेतैं बारह होंइ। तिर्यंच वा मनुष्यगतिविषैं तीन वेद च्यारि कषाय छह लेश्यानिकौं परस्पर गुणें बहत्तरि बहत्तरि होंइ। देवगतिविषैं स्त्री पुरुष दोय लिंग च्यारि कषाय तीन शुभ लेश्या अर भवनत्रिककैं अपर्याप्त दशामैं तीन अशुभ लेश्या भी होंइ तातैं छह लेश्या इनकौं परस्पर गुणैं अठतालीस होंइ अैसैं सर्व मिलिकरि दोयसै च्यारि भए सो इतने तौ मिथ्यादृष्टि अर सासादनविषैं गुण्य जानने। जाकौं गुणकार करि गुणिए ताकौं गुण्य कहिए सो इनका आगै गुणकारकरि गुणन कीजिएगा तातैं इनकौं गुण्य कहे। इहां अक्ष संचारकरि भावानिके बदलनेतैं जितने भंग होंहिं तितने ही परस्पर गुणै भंग होंहि तातैं गुणन विधानकरि अक्ष भंग कहे हैं ॥ ८२८ ॥

णवरि विसेसं जाणे सुर मिस्से अविरदे य सुहलेस्सा।
चदुवीस तत्थ भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ॥ ८२९ ॥

नवरि विशेषं जानीहि सुरे मिश्रेऽविरते च शुभलेश्याः।
चतुर्विंशं तत्र भंगा असहायपराक्रमोद्दिष्टाः ॥ ८२९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—मिश्रे असंयते च प्राग्वन्नरकगतौ द्वादश । तिर्यग्मनुष्यगत्योर्द्वासप्ततिर्द्वासप्ततिः । देवगतौ शुभलेश्यात्रयमेवेति नवीनं विशेषं जानीहि, भवनत्रयापर्याप्तस्यात्रासंभवात्तेन भंगा स्त्रीपुंलिंगचतुष्कषायत्रिशुभलेश्याकृताश्चतुर्विंशतिः श्रीवर्धमानस्वामिना निर्दिष्टाः मिलित्वाशीत्यग्रशतं । देशसंयते लिं ३ क ४ ले ३ गुणिते ३६ । मिलित्वा तिर्यग्मनुष्यगत्योर्द्वासप्ततिः । प्रमत्तादिद्वये मनुष्यगतौ लिं ३ क ४ ले ३ गुणिते षट्त्रिंशत् । अपूर्वकरणे सवेदानिवृत्तिकरणे च लिं ३ क ४ ले १ गुणिते द्वादश । अवेदभागे मनुष्यगतौ चतुष्कषायशुक्ललेश्याकृताश्चत्वारः । मानभागे मनुष्यगतिकषायत्रयैकलेश्याकृतास्त्रयः । मायाभागे मनुष्यगति १ क २ शुभले १ गुणिते द्वौ। लोभभागे मनुष्य १ क १ लो शु ले १ गुणिते एकः। सूक्ष्मसांपराये मनुष्यगति १ क-सू, लो १ शु ले १ गुणिते १ उपशांतकषायादित्रये मनुष्यगतिः १ क शून्यं, शु ले १ गुणिते एकैकः । अयोगे मनुष्यगतिरिति १ ॥ ८२९ ॥

स० चं०—मिश्रविषै अर असंयतविषै पूर्ववत् नरकगतिविषै बारह, तिर्यंच मनुष्यविषै बहत्तरि बहत्तरि, देवगतिविषैं इहां तीन शुभलेश्या हैं इतना नवीन विशेष जानहु जातैं भवनत्रिकका अपर्याप्तपना इहां न संभवै है तातैं स्त्री पुरुषवेद च्यारि कषाय तीन शुभलेश्यानिकौं परस्पर गुणैं देवगतिविषैं चौईस ही भंग भए ऐसा असहाय पराक्रमी श्रीवर्धमानस्वामी तिननैं कह्या है सो ए सर्व मिलि एकसौ असी गुण्य भया । बहुरि देशसंयतविषैं तीन लिंग च्यारि कषाय तीन शुभलेश्याकौं परस्पर गुणैं तिर्यंच वा मनुष्यगतिविषैं छतीस छतीस होइ मिलिकरि बहत्तरि भए । बहुरि प्रमत्त वा अप्रमत्तविषैं मनुष्यगतिविषैं तीन लिंग च्यारि कषाय तीन शुभलेश्यानिके गुणनिकरि छत्तीस भए । बहुरि अपूर्वकरण वा सवेद अनिवृत्तिकरणविषैं मनुष्यगतिविषैं तीन लिंग च्यारि कषाय एक शुक्लेश्याकरि बारह भए । बहुरि अवेद अनिवृत्ति करणविषैं मनुष्यगतिविषैं च्यारि कषाय शुक्ललेश्याकरि च्यारि भए। बहुरि अनिवृत्तिकरणका मानभागविषैं मनुष्यगति तीन कषाय शुक्ललेश्याकरि तीन भए । मायाभागविषैं मनुष्यगति दोय कषाय शुक्ललेश्याकरि दोय भए । लोभ भागविषैं मनुष्यगति बादर लोभ शुक्ललेश्याकरि एक ही भया। बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं मनुष्यगति सूक्ष्म लोभ शुक्ललेश्याकरि एक ही भया । उपशांत कषायादि तीनविषैं मनुष्यगति कषायका अभाव शुक्ललेश्याकरि एक भया । अयोगीविषैं मनुष्यगतिरूप एक भया । ऐसैं ए भंग भए । तिनकौं गुण्य स्थापन करने ॥ ८२९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चक्खूण मिच्छसासणसम्मा तेरिच्छगा हवंति सदा।
चारिकसायतिलेस्साणब्भासे तत्थ भंगा हु ॥ ८३० ॥

चक्षुरूनं मिथ्यसासनसम्यंच: तैरश्चिका भवंति सदा।
चतुःकषायत्रिलेश्यानामभ्यासे तत्र भंगा हि ॥ ८३० ॥

जी० प्र०—चक्षुर्दर्शनरहितमिथ्यादृष्टिसासादनसम्यग्दृष्टयः सदा तिर्यंच एव स्युस्तेन तत्र भंगाः षंढवेदचतुःकषायत्र्यशुभलेश्यानां गुणने द्वादश द्वादश खलु ॥ ८३० ॥

स० चं०—बहुरि चक्षुदर्शन रहित मिथ्यादृष्टी वा सासादन सम्यग्दृष्टी सदा तिर्यंच ही हैं तातैं तहां तिर्यंच गतिहीविषैं नपुंसकवेद च्यारि कषाय तीन अशुभलेश्यानिका परस्पर गुणनतैं बारह भंग प्रगटपने जानने॥८३०॥

खाइयअविरदसम्मे चउ सोल बिहत्तरी य बारं च।
तद्देसो मणुसेव य छत्तीसा तब्भवा भंगा ॥ ८३१ ॥

क्षायिकाविरतसम्ये चत्वारः षोडश द्वासप्ततिश्च द्वादश च।
तद्देशो मनुष्य एव षट्त्रिंशत्तद्भवा भंगाः ॥ ८३१ ॥

जी० प्र०—क्षायिकसम्यग्दृष्ट्यसंयते नारके षंढलिंगं कषायचतुष्कं कपोतलेश्येति भंगाश्चत्वारः। तिरश्चि पुंलिंगं कषायचतुष्कं लेश्याचतुष्कमिति षोडश। मनुष्ये लिंगत्रयं कषायचतुष्कं लेश्याषट्कमिति द्वासप्ततिः। देवे पुंलिंगं कषायचतुष्कं शुभलेश्यात्रयमिति द्वादश मिलित्वा चतुरग्रशतं। क्षायिकसम्यग्दृष्टिदेशसंयतः मनुष्य एवेति तत्र लिं ३ क ४ शु ले ३ तद्भवभंगाः षट्त्रिंशत् ॥ ८३१ ॥

स० चं०—क्षायिक सम्यग्दृष्टी असंयतविषैं नारकीविषैं तौ नपुंसकवेद च्यारि कषाय कपोत लेश्याकरि च्यारि ही भंग हैं। तिर्यंचविषैं पुरुष वेद च्यारि कषाय च्यारि लेश्याकरि सोलह भंग हैं। मनुष्यविषैं तीन वेद च्यारि कषाय छह लेश्याकरि बहत्तरि भंग हैं। देवगतिविषै पुरुषवेद च्यारि कषाय तीन शुभलेश्याकरि बारह भंग हैं ऐसैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayū Trust/eGangotri

मिलिकरि एकसौ च्यारि भंग भए । बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टी देश संयत मनुष्य ही होइ तहां तीन वेद च्यारि कषाय तीन शुभलेश्याकरि छत्तीस भंग हैं ॥ ८३१ ॥

परिणामो दुट्ठाणो मिच्छे सेसेसु एक्कठाणो दु ।
सम्मे अण्णं सम्मं चारित्ते णत्थि चारित्तं ॥ ८३२ ॥

परिणामो द्विस्थानो मिथ्ये शेषेषु एकस्थानस्तु ।
सम्ये अन्यत्सम्यं चारित्रे नास्ति चारित्रं ॥ ८३२ ॥

जी० प्र०—पारिणामिकभावो मिथ्यादृष्टौ जीवत्वभव्यत्वं जीवत्वाभव्यत्वमिति द्विस्थानः । शेषगुणस्थानेषु सिद्धे च जीवत्वभव्यत्वमित्येकस्थान एव । अग्रे गुणस्थानेषु प्रत्येकद्विसंयोगादीन् वक्तुमाह—सम्यक्त्वयुतस्थाने सम्यक्त्वांतरं चारित्रयुतस्थाने चारित्रांतरं च नास्ति ॥ ८३२ ॥ पुनः—

स० चं०—पारिणामिक भावका मिथ्यादृष्टिविषैं दोय स्थान है—जीवत्व भव्यत्व अर जीवत्व अभव्यत्व । बहुरि अवशेष गुणस्थाननिविषैं वा सिद्धविषैं जीवत्व भव्यत्व ऐसा एक ही स्थान है । आगैं गुणस्थाननिविषैं प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भेद कहनेके अर्थि कहैं हैं—

सम्यक्त्वसहित स्थानविषैं अन्य सम्यक्त्व न होइ । चारित्र सहित स्थानविषैं अन्य चारित्र न होइ । जैसैं जहां उपशम सम्यक्त्व पाइए तहां वेदक वा क्षायिक सम्यक्त्व न पाइए । ऐसैं ही अन्यविषै भी जानना ॥ ८३२ ॥

मिच्छदुगयदचउक्के अट्ठाणेण खयियठाणेण ।
जुद परजोगजभंगा पुध आणिय मेलिदव्वा हु ॥ ८३३ ॥

मिथ्यद्विकायतचतुष्के अष्टस्थानेन क्षायिकस्थानेन ।
युतं परयोगजभंगाः पृथगानीय मेलयितव्या हि ॥ ८३३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये चक्षुरूनाष्टस्थानयुतान् असंयतादिचतुष्के क्षायिकसम्यक्त्वस्थानयुतांश्च परसंयोगजभंगान् पृथगानीय स्वस्वराशौ निक्षिपेत् ॥ ८३३ ॥ उक्तगुण्यानां गुणकारक्षेपावुद्भावयति—

स० चं०—मिथ्यादृष्टि सासादनविषै चक्षुर्दर्शन रहित क्षायोपशमिक आठका स्थान तींहिविषै औदयिकके भंग कहे तिनकरि संयुक्त अर असंयतादि च्यारिविषै क्षायिक सम्यक्त्वका स्थानविषैं औदयिकके भंग कहे तिनकरि संयुक्त परसंयोगकरि उपजे भंग तिनकों जुदे जुदे विचारि अपना अपना राशिविषैं मिलावने ॥ ८३३ ॥ पूर्वैं कहे थे गुण्य तिनके गुणकार अर क्षेप प्रगट करैं हैं—

उदयेणक्खे चडिदे गुणगारा एव होंति सव्वत्थ ।
अवसेसभावठाणेणक्खे संचारिदे खेवा ॥ ८३४ ॥

उदयेनाक्षे चटिते गुणकारा एव भवंति सर्वत्र ।
अवशेषभावस्थानेनाक्षे संचारिते क्षेपाः ॥ ८३४ ॥

जी० प्र०—गुणस्थानं प्रति प्रागुक्तमिश्रौदयिकपारिणामिकभावस्थानानि भंगोत्पादनक्रमेण संस्थाप्य तत्र औदयिकभावस्थानेनाक्षे चलिते सर्वत्र ये भंगास्ते गुणकारा एव स्युः । शेषभावस्थानैरक्षे संचारिते तु क्षेपाः स्युः । तद्यथा—

मिथ्यादृष्टौ तत्स्थानानीत्थं संस्थाप्य

मि	औ	पा
१०	८	भ
९	०	अ

अत्राष्टकस्य प्रत्येकभंगो गुणकारः शेषाश्चत्वारः क्षेपाः । द्विसंयोगेऽष्टकेन दशकनवकयोर्द्वौ भव्यत्वाभव्यत्वयोर्द्वौ च गुणकाराः नवकदशकाभ्यां भव्यत्वाभव्यत्वयोर्द्वौ द्वौ क्षेपाः त्रिसंयोगे दशकेनाष्टकेनाष्टके भव्यत्वाभव्यत्वाभ्यां द्वौ नवकेन च द्वौ गुणकाराः क्षेपो नास्ति मिलित्वा प्रागुक्तचतुरग्रद्विशत्याः गुणकारा नव क्षेपा अष्टौ । चक्षुरूने तु तत्स्थानानीमानि—

मि	औ	पा
८	८	भ
		अ

अत्र मिश्राष्टस्वेव प्रत्येकभंगो ग्राह्यः । शेषाणां पुनरुक्तत्वात् । स च क्षेपः । द्विसंयोगेऽपि तथात्वाद् गुणकारः एकः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिश्राष्टकस्य भव्यत्वाभव्यत्वाभ्यां द्वौ क्षेपौ । त्रिसंयोगे गुणाकारावेव द्वौ । मिलित्वा प्रागुक्तद्वादशानां गुणकारास्त्रयः । क्षेपास्त्रयः । भंगा एकान्नचत्वारिंशत् । उभये मिलित्वा मिथ्यादृष्टौ सर्वभंगा त्र्यशीत्यग्राष्टादशशतानि ।

सासादने—

मि	औ	पा
१०	७	भ
६		

अत्र प्र गु १ क्षे ३ द्वि गु ३ क्षे २ त्रि गु २ मिलित्वा गुण्यं २०४ । गु ६ क्षे ५ भंगाः १२२९ ।

पुनश्चक्षुरूने

मि	औ	पा
८	७	भ

अत्र प्र क्षे १ द्विगु १ क्षे १ त्रिगु १ मिलित्वा गुण्यं १२ । गु २ क्षे २ भंगा २६ उभये १२५५ ।

मिश्रे—

मि	औ	पा
११	७	भ
६		

प्रगु १ क्षे ३ द्विगु ३ क्षे २ त्रिगु २ मिलित्वा गुण्यं १८० गु ६ क्षे ५ भंगाः १०८५ ।

असंयते—

उ	मि	औ	पा
१	१२	७	भ
	१०		

प्र गु १ क्षे ४ द्विगु ४ क्षे ५ त्रिगु ५ क्षे २ च गु २ मिलित्वा गुण्यं १८० गु १२ क्षे ११ भंगाः २१७१ ।

क्षायिकसम्यग्दृष्टौ—

क्षा	मि	औ	पा
१	१२	७	भ
	१०		

अत्र प्रत्येकगुणकारः पुनरुक्तः । प्र क्षे १ द्विगु १ शेषाः पुनरुक्ताः । द्वि क्षे ३ त्रिगु ३ क्षे २ चगु २ मिलित्वा गुण्यं १०४ । गु ६ । क्षे ६ भंगाः ६३० । उभये भंगाः २८०१ । अत्रोपशमक्षायिकसम्यक्त्वाभ्यां मिश्रभावस्थानं वेदकं विना विवक्षितं ।

देशसंयते—

उ	मि	औ	पा
१	१३	६	भ
	११		

अत्र प्रगु १ क्षे ४ द्विगु ४ क्षे ५ त्रिगु ५ क्षे २ चगु २ मिलित्वा गुण्यं ७२ गु १२ क्षे ११ भंगाः ८७५ ।

क्षायिकसम्यक्त्वे—

क्षा	मि	औ	पा
१	१३	६	भ
	११		

अत्र प्रत्येकगुणकारः पुनरुक्तः । क्षे १ द्विगु १ शेषद्विसंयोगगुणकाराः पुनरुक्ताः । द्वि क्षे ३ त्रिगु ३ शेषगुणकाराः पुनरुक्ताः । त्रि क्षे २ चगु २ मिलित्वा गुण्यं ३६ गु ६ क्षे ६ भंगाः २२२ । उभयभंगाः १०९७ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमत्ते—

उ	क्षा	मि	औ	पा
१	१	१४	६	भ
		१३		
		१२		
		११		

अत्र प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १४ त्रिगु १४ क्षे ८ चगु ८ मिलित्वा गुण्यं ३६ गु ३० क्षे २९ भंगाः ११०९ ।

अप्रमत्ते—

उ	क्षा	मि	औ	पा
१	१	१४	६	भ
		१३		
		१२		
		११		

अत्र प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १४ त्रिगु १४ क्षे ८ चगु ८ । मिलित्वा गुण्यं ३६ । गु ३० क्षे २९ भंगाः ११०९ ।

क्षपकेऽपूर्वकरणे—

क्षा	मि	औ	पा
२	१२	६	भ
	११		
	१०		
	९		

अत्र प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ९ त्रिगु ९ क्षे ४ चगु ४ मिलित्वा गुण्यं १२ । गु २० क्षे १९ लब्धभंगाः २५९ ।

अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे गुण्यं १२ गु २० क्षे १९ भंगाः २५९ । अवेदभागे—

क्षा	मि	औ	पा
२	१२	५	भ
	११		
	१०		
	९		

अत्र गुण्यं ४ गु २० क्षे १९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भंगाः ६६ । अक्रोधभागे गुण्यं ३ गु २० क्षे १९ भंगा ७९ । अमानभागे गुणयं २ गु २० क्षे १६ भंगाः ५६ । अमायभागे गुण्यं १ गु २० क्षे १९ भंगाः ३९ ।

सूक्ष्मसांपराये गुणयं १ गु २० क्षे १६ भंगाः ३९ । क्षीणकषाये गुणयं १ गु २० क्षे १९ भंगाः ३९ ।

सयोगे—

क्षा	औ	पा
१	२	भ

अत्र प्रगु १ क्षे २ द्विगु २ क्षे १ त्रिगु १ मिलित्वा गुणयं १ गु ४ क्षे ३ भंगाः ७ ।

अयोगे—

क्षा	औ	पा
१	२	भ

अत्र प्रगु १ क्षे २ द्विगु २ क्षे १ त्रिगु १ मिलित्वा गुण्यं १ गु ४ क्षे ३ भंगाः ७ ।

सिद्धे—

क्षा	पा
१	जी

अत्र प्रक्षे २ द्विक्षे १ मिलित्वा भंगाः ३ ।

उपशमकेऽपूर्वकरणे—

उ	क्षा	मि	औ	पा
२	१	१२	६	भ
		११		
		१०		
		९		

अत्र प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १५ त्रिगु १५ क्षे १३ चगु १३ क्षे ४ पंगु ४ मिलित्वा गुणयं १२ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ५१९ ।

अनिवृत्तिकरणे सवेदभागे गुण्यं १२ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ५१९ । अवेदभागे गुणयं ४ गु ४० क्षे ३६ भंगाः १९६ । अक्रोधभागे गुणयं
३ गु ४० क्षे ३९ भंगाः १५९ । अमानभागे गुणयं २ गु ४० क्षे ३६ भंगाः ११९ । अमायभागे गुण्यं १ गु ४० क्षे ३६ भंगाः ७९ ।
सूक्ष्मसांपराये गुणयं १ गु ४० क्षे ३६ भंगाः ७६ । उपशांतकषाये गुणयं १ गु ४० क्षे ३९ भंगाः ७९ ॥८३४॥ उक्तगुण्यादीनुच्चरति—

स० चं०—गुणस्थानप्रति पूर्वे कहे जे मिश्र वा औदयिक वा पारिमाणिक भावके स्थान तिन स्थाननिके अक्ष संचार विधानकरि बदलनेतैं भंग उपजावनेके अर्थि अनुक्रमतैं स्थापनकरि तहां औदयिक भावका स्थानकरि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अक्षका संचारकरि सर्व जे भंग होंहि ते भंग गुणकार जानने। अवशेष भावनिका स्थानविषैं अक्षका संचारकरि जे भंग होंहि ते क्षेपक जानने। भावार्थ—भावनिके जे स्थान कहे तिनकौं यथा संभव जुदे जुदे कहिए ते प्रत्येक भंग जानने। तहां औदयिकका स्थानरूप जो प्रत्येक भंग सो तौ गुणकाररूप जानना। अवशेष भावका स्थानरूप जे प्रत्येक भंग ते क्षेपरूप जानने। बहुरि जहां दोय तीन आदि भावनिके स्थाननिका संयोग करिए तहां दोय संयोगी तीन संयोगी आदि भंग होंहि तिनविषैं जहां औदयिक भावका संयोग सहित दोइसंयोगी आदि भंग होंइ ते भंग तौ गुणकाररूप जानने। बहुरि जहां औदयिक भावका तौ संयोग न होइ अन्य भावनिका ही संयोगतैं दोय संयोगी आदि भंग होंइ ते भंग क्षेपरूप जानने। सो जिसकरि गुणिए ताकौं गुणकार कहिए अर जिनकौं मिलाइए तिनकौं क्षेप कहिए। सो पूर्वै जो जो गुण्य कहा था ताकौं इहां कहिए है—

गुणकार तींहि तींहिकरि गुणिए अर गुणन कीएं जो प्रमाण होइ तींहिविषैं जो क्षेपका प्रमाण होइ ताकौं मिलाइए यों करता जितने होंइ तितने तहां भंग जानने। ऐसा विधान करतैं जितने होंहि तितने ही यथासंभव भावनिके बदलनेतैं भंग हो हैं तातैं थोरेमें आवनेके अर्थि ऐसा विधान कह्या है। सोई कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रके तो दशका अर नवका ऐसे दोयस्थान औदयिकका आठका एक स्थान पारिणामिकके जीवत्व सहित भव्य वा अभव्यरूप दोय स्थान—

मि	औ	पा
१०	८	भ
९	०	अ

ऐसैं पांच स्थान हैं। तथा प्रत्येक भंग पांच तिनविषैं औदयिकका आठका स्थानरूप एक प्रत्येक भंग तो गुणकार जानना। अवशेष दोय मिश्रके दोय पारिणामिकके ऐसैं च्यारि भंग क्षेप जानने। बहुरि दोय संयोगी भंगविषैं औदयिकका आठका स्थानसहित मिश्रका दशका अर नवका स्थानकरि दोय भंग अर पारिणामिकका भव्यरूप वा अभव्यरूप स्थानकरि दोय भंग ऐसैं च्यारि भंग तौ गुणकाररूप जानने। बहुरि मिश्रका दशका स्थान सहित पारिणामिकका भव्य अभव्य रूप दोय स्थानकरि दोय भंग अर मिश्रका नवका स्थान सहित तिनही पारिणामिकके दोय स्थानका संयोगरूप दोय भंग ऐसैं च्यारि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भंग क्षेपरूप जानने। बहुरि तीन संयोगीविषैं औदयिकका आठका स्थान अर मिश्रका दशका स्थान सहित पारिणामिकके दोय स्थाननिकरि दोय भंग भए। बहुरि औदयिकका आठका स्थान अर मिश्रका नवस्थान सहित पारिणामिकके दोय स्थाननिकरि दोय भंग ऐसैं च्यारि भंग गुणकाररूप जानने। इहां औदयिकका संयोगविना त्रिसंयोगी नाहीं तातैं त्रिसंयोगीविषैं क्षेप नाहीं है। ऐसैं सर्व मिलि नव तौ गुणकार अर आठ क्षेप भए। तहां पूर्वैं औदयिक भावके भंगनिकरि मिथ्यादृष्टिविषैं दोयसै च्यारि गुण्य कह्या था तिनकौं गुणकार नवकरि गुणिये तब अठारहसै छत्तीस होंइ तिनविषैं आठ क्षेप मिलाइए तब अठारहसै चवालीस भंग होंहि। बहुरि चक्षुदर्शन रहित मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रका आठहीका एक स्थान औदयिकका आठका एकस्थान पारिणामिकका भव्य अभव्यरूप दोय स्थान—

मि	औ	पा
८	८	भ
		अ

ऐसैं च्यारि स्थान हैं। इहां प्रत्येक भंग च्यारि तिनविषैं एक मिश्रका आठका स्थान रूप ही प्रत्येक भंग ग्रहण करना जातैं अन्य तीन प्रत्येक भंग पुनरुक्त हैं, चक्षुदर्शन सहित मिथ्यादृष्टिविषैं पूर्वैं कहे तिनकी समान है तातैं एकही ग्रह्या सो क्षेपरूप है। बहुरि दोय संयोगीविषैं मिश्रका आठका स्थान अर औदयिकका आठका स्थान इन दोऊनिका संयोगरूप एक भंग गुणकार जानना। बहुरि औदयिकका स्थान अर भव्य अभव्यका स्थानके संयोगतैं जे द्विसंयोगी होंहि ते पुनरुक्त हैं तातैं न ग्रहे। बहुरि मिश्रका आठका स्थान अर भव्यत्व अभव्यत्वरूप पारिणामिकके दोयस्थान तिनके संयोगतैं जे दोय संयोगी भंग दोय होंहिं ते क्षेपरूप जानने। बहुरि तीन संयोगीविषैं मिश्रका आठका स्थान औदयिकका आठका स्थान तिनकै भव्य वा अभव्यरूप दोय स्थाननिके संयोगतैं दोय भंग भए ते गुणकाररूप हैं। ऐसैं चक्षुदर्शन रहित मिथ्यादृष्टीकैं पूर्वैं जे बारह गुण्य कहे थे तिनके मिलिकरि तीन गुणकार अर तीन क्षेप भए। तहां गुण्यकौं गुणकार करि गुणें क्षेपकौं मिलाए गुणतालीस भंग भए ऐसैं चक्षुदर्शन सहित वा रहित मिथ्यादृष्टीकैं सर्वभंग मिलाएं अठारहसै तियासी भंग भए।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि याही प्रकार सासादनादिविषैं भी जितने भावनिके स्थान पाइए तितने तौ प्रत्येक भंग जानने। बहुरि औदयिकका जो स्थान होइ सो गुणकार जानना। अन्यभावनिके जे स्थान होंहि ते क्षेपरूप जानने। बहुरि जे दोय तीन आदि भावनिके संयोगतैं भंग होंहिं ते दोय संयोगी तीन संयोगी आदि जानने। तहां औदयिक भाव अर अन्य कोई भावके संयोगतैं जे दोयसंयोगी आदि भंग होंहि ते गुणकाररूप जानने अर औदयिक भाव बिना अन्य ही भावनिके संयोगतैं जे दोय संयोगी आदि भंग होंहि ते क्षेपरूप जानने। तहां पहले जिन भंगनिकौं कहि आए अर तिनहीके समान पीछे जे भंग होंहि ते पुनरुक्त जानने। तिनका ग्रहण न करना। असैं करतैं जे गुणकार होंहिं तिनकौ मिलाएं जो प्रमाण होइ ताकरि पूर्वै जो गुण्य कहि आए थे ताकौं गुणिए जो प्रमाण होइ तिसविषैं क्षेपकौं जोडैं जो प्रमाण होइ ताकौं मिलाइए। यों करते जो प्रमाण होइ तितने भंग जानने। सो सासादनविषै मिश्रके दशका नवका दोय स्थान औदयिकका सातका एक स्थान पारिणामिकका भव्यरूप एक स्थान असैं च्यारि स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप तीन अर दोय संयोगीविषैं गुणकार तीन क्षेप दोय बहुरि तीन संयोगीविषैं गुणकार दोय मिलिकरि गुणकार छह क्षेप पांच तहां गुण्य दोयसै च्यारिकौं यथोक्त करतैं बारहसै गुणतीस भंग भए। बहुरि चक्षुर्दर्शन रहित सासादनविषैं मिश्रका आठका स्थान औदयिकका सातका स्थान पारिणामिकका भव्य स्थान असैं तीन स्थान तहां प्रत्येक भंगविषैं क्षेप एक अन्य पुनरुक्त हैं। दोय संयोगीविषै गुणकार एक क्षेप एक त्रिसंयोगीविषै गुणकार एक मिलिकरि गुणकार दोय क्षेप दोय तहां पूर्वोक्त गुण्य बारह यथोक्त करतैं सर्व भंग छब्बीस भए। दोऊ मिलाएं सासादनविषैं सर्व भंग बारहसै पचावन हो हैं।

बहुरि मिश्र गुणस्थानविषैं मिश्रके ग्यारह नवके दोय औदयिकका सातका पारिणामिकका भव्यरूप असैं च्यारि स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप तीन अर दोय संयोगीविषैं गुणकार तीन क्षेप दोय अर तीन संयोगीविषैं गुणकार दोय मिलिकरि गुणकार छह क्षेप पांच पूर्वोक्त गुण्य एकसौ असी यथोक्त करते सर्वभंग एक हजार पिच्यासी हो हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि असंयतविषैं औपशमिकका उपशम सम्यक्त्वरूप एक मिश्रके बारह दशके दोय औदयिकका सात का एक पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक अैसैं पांच स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप च्यारि दोय संयोगीविषैं गुणकार च्यारि क्षेप पांच तीन संयोगीविषैं गुणकार पांच क्षेप दोय च्यारि संयोगीविषैं गुणकार दोय मिलिकरि गुणकार बारह क्षेप ग्यारह पूर्वोक्त गुण्य एकसौ असी सर्व भंग इकईससै इकहत्तरि भंग हो हैं। बहुरि क्षायिक सम्यग्दृष्टीके क्षायिकका क्षायिक सम्यक्त्वरूप एक, मिश्रके बारह दशके दोय औदयिकका सातका एक पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक अैसैं पांच स्थान तहां प्रत्येक भंगविषैं क्षेप एक, दोय संयोगीविषैं गुणकार एक क्षेप तीन, तीन संयोगीविषैं गुणकार तीन क्षेप दोय, च्यारि संयोगी विषैं गुणकार दोय हैं। अवशेष गुणकार वा क्षेप पुनरुक्त जानने मिलिकरि गुणकार छह क्षेप छह पूर्वोक्त गुण्य एकसौ च्यारि सर्व भंग छसै तीस हो हैं। दोऊनिकौं मिलाएं असंयतविषैं सर्व भंग अठाईससै एक हो हैं।

बहुरि देशसंयतविषैं उपशमका उपशम सम्यक्त्व रूप एक, मिश्रके तेरह ग्यारहके दोय औदयिकका छहका एक पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक अैसैं पांच स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप च्यारि, दोय संयोगी विषै गुणकार च्यारि क्षेप पांच, तीन संयोगीविषैं विषै गुणकार पांच क्षेप दोय, च्यारि संयोगी विषैं गुणकार दोय मिलिकरि गुणकार बारह क्षेप ग्यारह पूर्वोक्त गुण्य बहत्तरि सर्व भंग आठसै पिचहत्तरि हो हैं। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वविषैं उपशमका स्थान जायगा क्षायिक सम्यक्त्वरूप क्षायिकका स्थान कहना अन्य पूर्ववत्। तहां प्रत्येक भंगविषैं क्षेप एक, दोय संयोगीविषैं गुणकार एक क्षेप तीन, तीन संयोगीविषैं गुणकार तीन क्षेप दोय, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार दोय अवशेष गुणकार वा क्षेप पुनरुक्त जानने। मिलिकरि गुणकार छह क्षेप छह पूर्वोक्त गुण्य छतीस सर्व भंग दोयसै वाईस हो हैं। दोऊ मिलि देशसंयतविषै सर्व भंग एक हजार सत्याणवै हो हैं।

बहुरि प्रमत्तविषैं उपशमका उपशम सम्यक्त्वरूप एक, क्षायिकका क्षायिक सम्यक्त्वरूप एक मिश्रके चौदह तेरह बारह ग्यारहके च्यारि, औदयिकका छहका एक, पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक अैसैं आठ स्थान हैं। तहां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप सात, दोय संयोगीविषैं गुणकार सात क्षेप चौदह, तीन संयोगीविषैं गुणकार चौदह क्षेप आठ, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार आठ मिलिकरि गुणकार तीस क्षेप गुणतीस पूर्वोक्त गुण्य छत्तीस सर्व भंग ग्यारहसै नव हो हैं।

बहुरि अप्रमत्तविषैं प्रमत्तवत् स्थान आठ गुणकार तीस क्षेप गुणतीस पूर्वोक्त गुण्य छतीस सर्व भंग ग्यारहसे नव हो हैं।

बहुरि क्षपक श्रेणीविषैं अपूर्वकरणविषैं क्षायिकका सम्यक्त्वचारित्ररूप एक स्थान, मिश्रके बारह ग्यारह दश नव च्यारि औदयिकका छहका एक पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक ऐसैं सात स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप छह, दोय संयोगीविषैं गुणकार छह क्षेप नव, तीन संयोगीविषैं गुणकार नव क्षेप च्यारि, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार च्यारि मिलिकरि गुणकार बीस क्षेप उगणीस पूर्वोक्त गुण्य बारह भंग दोयसै गुणसठि हो हैं।

बहुरि अनिवृत्तिकरणविषैं वेदसहित भागविषैं अपूर्वकरणवत् च्यारि भावके सात स्थान हैं। तहां गुणकार बीस क्षेप उगणीस पूर्वोक्त गुण्य बारह भंग दोयसै गुणसाठ जानने। वेदरहित भागविषैं भी तैसैं ही च्यारि भावके सात स्थान हैं। विशेष इतना–इहां औदयिकका पांचका स्थान जानना। तहां अपूर्वकरणवत् गुणकार बीस क्षेप उगणीस इहां पूर्वोक्त गुण्य च्यारि भंग निन्याणवै हैं। बहुरि क्रोधरहित भागविषैं भी तैसैं ही वेद रहित भागवत् जानना। तहां गुणकार बीस क्षेप उगणीस पूर्वोक्त गुण्य तीन भंग गुण्यासी जानने। मानरहित भागविषैं भी तैसैं ही हैं तहां गुणकार बीस क्षेप उगणीस पूर्वोक्त गुण्य दोय भंग गुणसठि जानने। मायारहित भागविषैं भी तैसैं ही जानना। तहां गुणकार बीस क्षेप उगणीस पूर्वोक्त गुण्य एक भंग गुणतालीस जानने।

बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषैं भी तैसैं ही गुणकार बीस क्षेप उगणीस गुण्य एक भंग गुणतालीस हैं।

बहुरि क्षीणकषायविषैं भी तैसैं ही गुणकार बीस क्षेप उगणीस गुण्य एक भंग गुणतालीस हैं। १०१२

बहुरि सयोगीविषैं क्षायिकका एक औदयिकका तीनका एक पारिणामिकका एक ऐसैं तीन स्थान हैं। तहां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप दोय, दोय संयोगीविषैं गुणकार दोय क्षेप एक, तीन संयोगीविषैं गुणकार एक मिलिकरि गुणकार च्यारि क्षेप तीन गुण्य एक भंग सात जानने।

बहुरि अयोगीविषैं क्षायिकका एक, औदयिकका दोयका एक पारिणामिकका एक असैं तीन स्थान हैं। तहां सयोगीवत् गुणकार च्यारि क्षेप तीन गुण्य एक भंग सात जानने। बहुरि सिद्धविषैं क्षायिकका एक पारिणामिकका जीवत्वरूप एक असैं दोय स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं क्षेप दोय, दोय संयोगीविषैं एक क्षेप मिलिकरि तीन भंग हैं।

बहुरि उपशम श्रेणीविषैं अपूर्वकरणादि उपशांत कषाय पर्यंत उपशमका सम्यक्त्व चारित्ररूप एक स्थान क्षायिकका सम्यक्त्वरूप एक स्थान मिश्रके बारह ग्यारह दश नवके च्यारि स्थान औदयिकका अपूर्वकरण वा वेदसहित अनिवृत्ति करणविषैं छहका अर ऊपरि उपशांतकषाय पर्यंत पांचका एक स्थान पारिणामिकका भव्यत्वरूप एक स्थान असैं आठ आठ स्थान हैं। तहां प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप सात दोय संयोगीविषैं गुणकार सात क्षेप पंद्रह तीन संयोगीविषैं गुणकार पंद्रह क्षेप तेरह च्यारि संयोगीविषैं गुणकार तेरह क्षेप च्यारि पंच संयोगी विषै गुणकार च्यारि मिलिकरि गुणकार चालीस क्षेप गुणतालीस भए। तहां अपूर्वकरणविषैं गुण्य बारह भंग पांचसै उगणीस, अनिवृत्तिकरणका वेदसहित भागविषैं गुण्य बारह भंग पांचसै उगणीस, वेदरहित भागविषैं गुण्य च्यारि भंग एकसै निन्याणवै क्रोधरहित भागविषैं गुण्य तीन भंग एकसौ गुणसठि, मानरहित भागविषैं गुण्य दोय भंग एकसौ उगणीस. मायारहित भागविषैं गुण्य एक भंग गुण्यासी सूक्ष्मसांपरायविषैं गुण्य एक भंग गुण्यासी, उपशांतकषायविषैं गुण्य एक भंग गुण्यासी जानने॥ ८३४॥ आगें कहे ते गुण्यादिक तिनकौं कहै हैं—

दुसु दुसु देसे दोसुवि चउरुत्तरदुसदगासिदिसहिदसदं।
बावत्तरि छत्तीसा बारमपुव्वे गुणिज्जपमा॥ ८३५॥ १०१[illegible]

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बारचउतिदुगमेक्कं थूले तो इगि हवे अजोगित्ति ।
पुण बार बार सुण्णं चउसद छत्तीस देसोत्ति ॥ ८३६ ॥

द्वयोर्द्वयोर्देशे द्वयोरपि चतुरुत्तरद्विशतकमशीतिसहितशतं ।
द्वासप्ततिः षट्त्रिंशद् द्वादश अपूर्वे गुणप्रमाः ॥ ८३५ ॥
द्वादशचतुस्त्रिद्व्येकैकं स्थूलेऽत एको भवेदयोगीति ।
पुनर्द्वादश द्वादश शून्यं चतुःशतं षट्त्रिंशद्देश इति ॥ ८३६ ॥ युग्मं

जी० प्र०—औदयिकस्य गुणयभंगा मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये चतुरग्रद्विशनी । मिश्रादिद्वयेऽशीत्यग्रशतं। देशसंयते द्वासप्ततिः । प्रमत्तादिद्वये षट्त्रिंशत् । अपूर्वकरणे द्वादश । अनिवृत्तिकरणभागभागेषु द्वादश चत्वारः त्रयः द्वौ एकः । तत उपर्या अयोगांतमेकैकः । पुनरा देशसंयतांतं द्वादश द्वादश शून्यं चतुरग्रशतं षट्त्रिंशत् ॥ ८३५–८३६ ॥

स० चं०—औदयिकके गुण्यरूप भंगे मिथ्यादृष्ट्यादिक दोयविषैं प्रत्येक च्यारि अधिक दोयसै हैं। मिश्रादिक दोयविषैं असी अधिक सौ हैं। देशसंयतविषैं बहत्तरि हैं। प्रमत्तादि दोयविषैं छत्तीस हैं। अपूर्वकरणविषैं बारह है। अनिवृत्तिकरणके भागविषैं क्रमतैं बारह च्यारि तीन दोय एक हैं। तातैं ऊपरि अयोगीपर्यंत एक एक हैं। बहुरि मिथ्यादृष्ट्यादि देशपर्यंत चक्षुदर्शन रहित वा क्षायिक सम्यक्त्वकी अपेक्षा क्रमतैं बारह बारह शून्य एकसौ च्यारि छत्तीस गुण्यरूप भंग हैं ॥ ८३५ ॥ ८३६ ॥

वामे दुसु दुसु दुसु तिसु खीणे दोसुवि कमेण गुणगारा ।
णव छब्बारस तीसं वीसं वीसं चउक्कं च ॥ ८३७ ॥

वामे द्वयोर्द्वयोर्द्वयोस्त्रिषु क्षीणे द्वयोरपि क्रमेण गुणकाराः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नव षट् द्वादश त्रिंशं विंशं विंशं चतुष्कं च ॥ ८३७ ॥

जी० प्र०—तद्गुणकाराः क्रमेण मिथ्यादृष्टौ नव । सासादनादिद्वये षट् । असंयतादिद्वये द्वादश । प्रमत्तादिद्वये त्रिंशत् । अपूर्वादित्रये क्षीणकषाये च विंशतिः । सयोगायोगयोश्चत्वारः ॥ ८३७ ॥

स० चं०—तिन गुण्यनिकौं जिनकरि गुणिए ऐसे गुणकार क्रमतैं मिथ्यादृष्टिविषैं नव सासादनादि दोयविषैं छह, असंयतादि दोयविषैं बारह प्रमत्तादि दोयविषैं तीस अपूर्वकरणादि तीन अर क्षीणकषायविषैं वीस सयोगी अयोगीविषैं च्यारि हैं ॥ ८३७ ॥

पुणरवि देसोत्ति गुणो तिदुणभछक्कयं पुणो खेवा ।
पुव्वपदे अड पंचयमेगारमुगुतीसमुगुवीसं ॥ ८३८ ॥

पुनरपि देश इति गुणास्त्रिद्विनभःषट्षट्कं पुनः क्षेपाः ।
पूर्वपदे अष्ट पंचकमेकादश एकोनत्रिंशमेकोनविंशं ॥ ८३८ ॥

जी० प्र०—पुनरप्यादेशसंयतांतं क्रमेण त्रयः द्वौ नभः षट् षट् । पुनः क्षेपाः पूर्वोक्तपदेषु मिथ्यादृष्टावष्टौ । सासादनमिश्रयोः पंच । असंयतादिद्वये एकादश । प्रमत्तादिद्वये एकान्नत्रिंशत् । अपूर्वकरणादित्रये एकान्नविंशतिः ॥ ८३८ ॥

स० चं०—बहुरि चक्षुर्दर्शन रहित वा क्षायिक सम्यक्त्व अपेक्षा मिथ्यादृष्ट्यादि देशसंयत पर्यंतविषैं क्रमतैं गुणकार तीन दो शून्य छह छह जानने । बहुरि गुण्यकौं गुणकार करि गुणें जो प्रमाण होइ तिसविषैं जिनकौं मिलाइए ऐसे क्षेप पूर्वोक्त ठिकानेविषैं प्रत्येक मिथ्यादृष्टिविषैं आठ सासादनादि दोयविषैं पांच असंयतादि दोयविषैं ग्यारह प्रमत्तादि दोयविषैं गुणतीस अपूर्वकरणादि तीनविषै उगणीस हैं ॥ ८३८ ॥

उगुवीस तियं तत्तो तिदुणभछक्कयं च देसोत्ति ।
चउसुवसमगेसु गुणा तालं रूऊणया खेवा ॥ ८३९ ॥

१०१५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकोनविंशं त्रयस्ततास्त्रिद्विनभःषट्षट्कं च देश इति ।
चतुर्षूपशामकेषु गुणाः चत्वारिंशत् रूपोनाः क्षेपाः ॥ ८३९ ॥

जी॰ प्र॰—क्षीणकषाये एकान्नविंशतिः । सयोगायोगयोः त्रयः । पुनः आ देशसंयतांतं पुनस्त्रयः द्वौ नभः षट् षट् । चतुर्षूपशामकेषु प्रत्येकं गुणकाराः चत्वारिंशत् । क्षेपा एकोनचत्वारिंशत् ॥ ८३९ ॥

स॰ चं॰—क्षीणकषायविषैं उगणीस सयोगी अयोगीविषै तीन हैं । बहुरि चक्षुदर्शन रहित वा क्षायिक सम्यग्दृष्टी अपेक्षा मिथ्यादृष्ट्यादि देशपर्यंत क्रमतैं तीन दोय शून्य छह छह क्षेप हैं । बहुरि च्यारि उपशम श्रेणीके गुणस्थाननिविषैं गुणकार चालीस क्षेप गुणतालीस हैं ॥ ८३९ ॥

मिच्छादिठाणभंगा अट्ठारसया हवंति तेसीदा ।
बारसया पणवण्णा सहस्ससहिया हु पणसीदा ॥ ८४० ॥

मिथ्यादिस्थानभंगा अष्टादशशतं भवंति त्र्यशीतिः ।
द्वादशशतं पंचपंचाशत् सहस्रसहिता हि पंचाशीतिः ॥ ८४० ॥

जी॰ प्र॰—प्रागुक्तगुण्यगुणकारान् गुणयित्वा क्षेपेषु निक्षिप्तेषु उत्तरभावस्थानभंगा मिथ्यादृष्टौ त्र्यशीत्यग्राष्टादशशतानि । सासादने पंचपंचाशदग्रद्वादशशतानि । मिश्रे पंचाशीत्यग्रदशशतानि ॥ ८४० ॥

स॰ चं॰—पूर्वोक्त गुण्यकौं गुणकार करि गुणें क्षेपकौं मिलाएं उत्तर भावनिके स्थाननिके भंग मिथ्यादृष्टिविषैं अठारहसै तियासी सासादनविषैं बारहसै पचावन मिश्रविषैं एक हजार पिच्यासी हो हैं ॥ ८४० ॥

रूवहियडवीससया सगणउदा दससया णवेणहिया ।
एक्कारसया दोण्हं खवगेसु जहाकमं वोच्छं ॥ ८४१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रूपाधिकाष्टविंशशतानि सप्तनवतिर्दशशतानि नवेनाधिकाः ।
एकादशशतानि द्वयोः क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥ ८४१ ॥

जी० प्र०—असंयते एकाग्राष्टाविंशतिशतानि । देशसंयते सप्तनवत्यग्रदशशतानि । प्रमत्तादिद्वये नवाग्रैकादशशतानि । क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्ये ॥

स० चं०—असंयतविषै अठाईससै एक, देश संयतविषैं सत्याणवै अधिक दशसै, प्रमत्तादि दोयविषैं नव अधिक ग्यारहसै भंग हो हैं । क्षपक श्रेणीवालोंविषैं यथाक्रम कहों हों ॥ ८४१ ॥

पुव्वे पंचाणियट्टीसुहुमे खीणे दहाण छव्वीसा ।
तत्तियमेत्ता दसअडछच्चदुचदुचदुय एगूणं ॥ ८४२ ॥

पूर्वे पंचानिवृत्तिसूक्ष्मे क्षीणे दशानां षड्विंशतिः ।
तावन्मात्रा दशाष्टषट्चतुश्चतुश्चतुष्कमेकोनं ॥ ८४२ ॥

जी० प्र०—अपूर्वकरणे अनिवृत्तिकरणपंचभागेषु सूक्ष्मसांपराये क्षीणकषाये चेत्यष्टसु क्षपकेषु भंगाः क्रमेण दशगुणा षड्विंशतिरेकोना २५९ । पुनश्च तावंतः २५९ । दशगुणा दशैकोनाः ९९ । दशगुणा अष्टावेकोनाः । ७९ । दशगुणा षडेकोनाः ५९ । दशगुणाश्चत्वार एकोनाः । ३९ । दशगुणाश्चत्वार एकोनाः ३९ दशगुणाश्चत्वार एकोनाः ३९ भवंति ॥ ८४२ ॥

स० चं०—अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरणके पंच भाग सूक्ष्मसांपराय क्षीण कषाय इन आठौ क्षपकनिविषैं क्रमतैं दश गुणे छव्बीस एक घाटि तिनके दोयसै गुणसाठि बहुरि तितने ही दोयसै गुणसाठि बहुरि दशगुणे दश एक घाटि तिनके निन्याणवै बहुरि दशगुणे आठ एक घाटि तिनके गुण्यासी बहुरि दशगुणे छह एक घाटि तिनके गुणसठि बहुरि दशगुणे च्यारि एक घाटि तिनके गुणतालीस, बहुरि दशगुणे च्यारि एक घाटि तिनके गुणतालीस बहुरि दशगुणे च्यारि एक घाटि तिनके गुणतालीस भंग हैं ॥ ८४२ ॥

उवसामगेसु दुगुणं रूवहियं होदि सत्त जोगिम्हि ।
सत्तेव अजोगिम्मि य सिद्धे तिण्णेव भंगा हु ॥ ८४३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu TrustеGangotri

उपशामकेषु द्विगुणं रूपाधिकं भवति सप्त योगिनि।
सप्तैवायोगिनि च सिद्धे त्रय एव भंगा हि॥ ८४३॥

जी० प्र०—उपशामकेषु चतुर्षु खलु तदेव क्षपकचतुष्कोक्तं भंगप्रमाणं द्विगुणं रूपाधिकं स्यात्। सयोगे सप्त। अयोगेऽपि सप्त। सिद्धे त्रय एव॥ ८४३॥

स० चं०—उपशमक च्यारि गुणस्थाननिविषैं क्षपक श्रेणीके च्यारि गुणस्थाननिविषैं जितने भंग कहे तितने दूणे एक अधिक जानने। सयोगीविषैं सात अयोगीविषै सात सिद्धनिविषैं तीन भंग जानने। कथन पूर्वे करि ही आए हैं। ऐसैं स्थान भंगका कथन कह्या॥ ८४३॥ आगैं पदभंग कहैं हैं—

दुविहा पुण पदभंगा जादिगपदसव्वपदभवात्ति हवे।
जातिपदखइगमिस्से पिंडेव य होदि सगजोगो॥ ८४४॥

द्विविधाः पुनः पदभंगा जातिगपदसर्वपदभवा इति भवेत्।
जातिपदक्षायिकमिश्रे पिंडे एव च भवति स्वकयोगः॥ ८४४॥

जी० प्र०—पुनः अनंतरं पदभंगा उच्यंते ते च जातिपदभंगाः सर्वपदभंगाश्चेति द्विविधाः। तत्र जातिपदरूपक्षायिकभावमिश्रभावपिंडपदभावेषु स्वसंयोगो भवति॥ ८४४॥

स० चं०—बहुरि पदभंग दोय प्रकार है। जाति पदभंग १ सर्वपद भंग २। सो जहां एक जातिका ग्रहण कीजिए जैसैं मिश्रभावविषैं ज्ञानके च्यारि भेद होतैं भी एक ज्ञान जातिका ग्रहण करना। ऐसैं जाति ग्रहणकरि जे भंग करिए ते जातिपद भंग जानने। बहुरि जे जुदे जुदे सर्व भावनिका ग्रहणकरि भंग कीजिए ते सर्वपद भंग जानने। तहां जातिपद रूप क्षायिक भाव अर मिश्रभाव इनके पिंड पदरूप जे भाव तिनविषैं स्वसंयोगी भंग भी पाइए हैं। क्षायिकविषैं लब्धिके पांच भेद हैं तातैं लब्धि पिंडपदरूप है। मिश्रविषैं ज्ञान अज्ञान दर्शन लब्धि ए पिंड

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पदरूप हैं सो इनविषैं एक भेद होतैं अन्य भेद जहां पाइए जैसैं दान होतैं लाभ पाइए तहां स्वसंयोगी भी भंग पाइए है ॥ ८४४ ॥

अयदुवसमगचउक्के एक्कं दो उवसमस्स जादिपदो ।
खइगपदं तत्थेक्कं खवगे जिणसिद्धगेसु दु पण चदू ॥८४५॥

अयतौपशमिकचतुष्के एकं द्वे उपशमस्य जातिपदं ।
क्षायिकपदं तत्रैकं क्षपके जिनसिद्धकेषु द्वे पंच चत्वारि ॥ ८४५ ॥

जी० प्र०—उपशमस्य जातिपदान्यसंयतादिचतुष्के उपशमसम्यक्त्वमित्येकं । उपशमचतुष्के उपशमसम्यक्त्वचारित्रे द्वे । क्षायिकजातिपदानि तदुभयचतुष्के क्षायिकसम्यक्त्वं । क्षपकचतुष्के द्वे । सयोगायोगयोः पंच । सिद्धे चत्वारि ॥ ८४५ ॥

स० चं०—औपशमिकभावके जाति पद असंयतादि च्यारिविषै सम्यक्त्वरूप एक ही हैं । उपशम श्रेणीके च्यारि गुणस्थाननिविषैं सम्यक्त्व अर चारित्र असैं दोय जातिपद हैं । बहुरि क्षायिकभावके जातिपद असंयतादि च्यारिविषै क्षायिक सम्यक्त्वरूप एक है । क्षपक श्रेणीके च्यारि गुणस्थाननिविषैं सम्यक्त्व अर चारित्र असैं दोय हैं । सयोगी अयोगीविषैं सम्यक्त्व १ ज्ञान १ दर्शन १ चारित्र १ लब्धि १ असैं पांच हैं । सिद्धविषैं चारित्र बिना च्यारि हैं ॥ ८४५ ॥

मिच्छातिये मिस्सपदा तिण्णि य अयदम्मि होंति चत्तारि ।
देसतिये पंचपदा तत्तो खीणोत्ति तिण्णिपदा ॥ ८४६ ॥

मिथ्यत्रये मिश्रपदानि त्रीणि चायते भवंति चत्वारि ।
देशत्रये पंचपदानि ततः क्षीण इति त्रिपदानि ॥ ८४६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—मिश्रपदानि मिथ्यादृष्ट्यादित्रये त्रीणि । असंयते चत्वारि । देशसंयतादित्रये पंच । तत उपरि क्षीणकषायांतं त्रीणि ॥ ८४६ ॥

स० चं०—मिश्रभावके जातिपद मिथ्यादृष्टि सासादनविषैं अज्ञान १ दर्शन १ लब्धि १ अर मिश्रविषै ज्ञान १ दर्शन १ लब्धि १ ऐसैं तीन हैं। असंयतविषैं ज्ञान १ दर्शन १ लब्धि १ सम्यक्त्व १ ऐसैं च्यारि हैं। देश संयतादि तीनविषैं ज्ञान १ दर्शन १ लब्धि १ सम्यक्त्व १ च्यारि तौ ए अर देशसंयतविषैं देशसंयम, प्रमत्त अप्रमत्तविषैं सरागसंयम ऐसैं पांच हैं। तहां ऊपरि क्षीणकषायपर्यंत ज्ञान १ दर्शन १ लब्धि १ ऐसैं तीन हैं॥ ८४६ ॥

मिच्छे अट्ठुदयपदा ते तिसु सत्तेव तो सवेदोत्ति ।
छस्सुहुमोत्ति य पणगं खीणोत्ति जिणेसु चदुतिदुगं ॥८४७॥

मिथ्येऽष्टोदयपदानि तानि त्रिषु सप्तैवातः सवेदे इति ।
षट् सूक्ष्म इति च पंचकं क्षीण इति जिनेषु चतुस्त्रिद्विकं ॥ ८४७ ॥

जी० प्र०—औदयिकपदानि मिथ्यादृष्टावष्टौ । सासादनादित्रये सप्त । उपरि सवेदानिवृत्त्यंतं षट् । सूक्ष्मसांपरायांतं पंच । क्षीणकषायांतं चत्वारि । सयोगे त्रीणि । अयोगे द्वे ॥ ८४७ ॥

स० चं०—औदयिक भावके जातिपद मिथ्यादृष्टिविषैं आठ–गति १ कषाय १ लिंग १ लेश्या १ मिथ्यात्व १ अज्ञान १ असंयम १ असिद्धत्व १। बहुरि सासादनादि तीनविषैं मिथ्यात्व विना सात, ऊपरि अनिवृत्तिके सवेद भागपर्यंत असंयम विना छह, ऊपरि सूक्ष्मसांपराय पर्यंत वेद विना पांच, ऊपरि क्षीणकषाय पर्यंत कषाय विना च्यारि, सयोगीविषैं अज्ञान विना तीन, अयोगीविषैं लेश्याविना दोय जानने ॥ ८४७ ॥

मिच्छे परिणामपदा दोण्णि य सेसेसु होदि एक्कं तु ।
जातिपदं पडि वोच्छं मिच्छादिसु भंगपिंडं तु ॥ ८४८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिथ्ये परिणामपदे द्वे च शेषेषु भवति एकं तु ।
जातिपदं प्रति वक्ष्यामि मिथ्यादिषु भंगपिंडं तु ॥ ८५८ ॥

जी० प्र०—परिणामपदानि मिथ्यादृष्टौ द्वे । तु—पुनः शेषगुणस्थानेषु सिद्धे चैकैकं स्यात् । तु पुनः—अनंतरं जातिपदं प्रति गुणस्थानेषु भंगपिंडं वक्ष्ये तद्यथा—

जातिपदेषु द्व्युपशमकपंचक्षायिकसप्तक्षायोपशमिकाष्टौदयिकत्रिपारिणामिकेषु मिथ्यादृष्टौ

मिश्र	औ	पारि
अ । दं । ल ।	८	भ । अ

औदयिकान्यष्टौ गुणयं ८ प्रगु १ क्षे ५ द्विगु ५ क्षे ६ त्रिगु ६ । स्वसंयोगक्षेपाः कुज्ञाने कुज्ञानांतरं दर्शने दर्शनांतरं लब्धौ लब्ध्यंतरमिति त्रयः ३ । मिलित्वा गुणयं ८ गु १२ क्षे १४ गुणयगुणकारान् संगुणय क्षेपेषु निक्षिप्तेषु लब्धभंगाः ११० ।

सासादने

मिश्र	औ	पारि
अ । दं । ल ।	७	भ

गुणयं ७ प्रगु १ क्षे ४ द्विगु ४ क्षे ३ त्रिगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ७ । गु ८ क्षेप १० भंगाः ६६ ।

मिश्रे

मिश्र	औ	पारि
णा । दं । ल	७	भ

गुण्यं ७ प्रगु १ क्षे ४ द्विगु ४ क्षे ३ त्रिगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ७ गु ८ । क्षे १० भंगाः ६६ ।

असंयते

उप	क्षा	मिश्र	औ	पा
सं १	सं १	णा । दं । ल ।	७	भ

गुणयं ७ प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १२ त्रिगु १२ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ७ गु २६ क्षे २८ भंगाः २१० ।

१

उपशमभाव	क्षायिकभाव	क्षायोपशमिकभाव
सं चा	सं । चा । णा । दं । ल ५	णा ४ । अ ३ । द ३ । ल ५ । वे १ । चा १ । दे १

औदयिकभाव	पारिणामिकभाव
ग ४ । क ४ । लिं ३ । मि १ । अ १ । अ १ । अ १ ले ६ ।	भ १ । अ १ । जी १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देशसंयतादित्रये प्रत्येकं

उप	क्षा	मिश्र	औ	पा
सं	सं	णा । दं । ल । वे चा ।	६	भ

गुणयं ६ प्रगु १ क्षे ८ द्विगु ८ क्षे १५ । त्रिगु १५ क्षे ८ चगु ८ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ६ गु ३२ क्षे ३४ भंगाः २२६ ।

उपशमकेष्वपूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोः

उपश	क्षा	मिश्र	औ	पा
सं । चा	सं १	णा । दं । ल	६	भ

गुणयं ६ प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १६ त्रिगु १६ क्षे १३ चगु १३ क्षे ३ पंगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुण्यं ६ गु ४० क्षे ४२ भंगाः २८२ ।

अवेदभागसूक्ष्मसांपराययोः

उपश	क्षा	मिश्र	औ	पा
सं । चा	सं १	णा । दं । ल	५	भ

गुणयं ५ प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १६ त्रिगु १६ क्षे १३ चगु १३ क्षे ३ पं गु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ५ गु ४० क्षे ४२ भंगाः २४२ । नात्राकषायभागः कषायजातिपदस्य विवक्षितत्वात् ।

उपशांतकषाये—

उपश	क्षा	मिश्र	औ	पा
सं । चा	सं १	णा । दं । ल	४	भ १

गुणयं ४ प्रगु १ क्षे ७ द्विगु ७ क्षे १६ त्रिगु १६ क्षे १३ चगु १३ क्षे ३ पंगु ३ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ४ गु ४० क्षे ४२ भंगाः २०२ ।

क्षपकेष्वपूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोः

क्षायि	मिश्रभाव	औ	पारि
सं । चा	णा । दं । ल	६	भ १

गुणयं ६ प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ११ त्रिगु ११ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ६ गु २४ क्षे २६ लब्धभंगाः १७० ।

अवेदभागसूक्ष्मसांपराययोः

क्षा	मिश्रभाव	औ	पा
स । चा	णा । दं । ल	५	भ १

गुण्यं ५ प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ११ त्रिगु ११ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ५ गु २४ क्षे २६ भंगाः १४६ । नात्राप्यकषायभागः ।

क्षीणकषाये कषायपदं नेति

क्षायि	मिश्रभाव	औ	पा
स । चा	णा । दं । ल	४	भ १

गुणयं ४ प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ११ त्रिगु ११ क्षे ६ चगु ६ स्वसंक्षे ३ मिलित्वा गुणयं ४ गु २४ क्षे २६ भंगाः १२२ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सयोगे

क्षायिकभाव					औ	पा
णा	दं	सं	चा	ल	३	भ

गुण्यं ३ प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ५ त्रिगु ५ । स्वसंयोगक्षेपो लब्धिष्वेकः मिलित्वा गुण्यं ३ गु १२ क्षे १२ भंगाः ४८ ।

अयोगे

क्षायिकभाव					औ	पा
णा	दं	स	चा	ल	२	भ

गुण्यं २ प्रगु १ क्षे ६ द्विगु ६ क्षे ५ त्रिगु ५ स्वसंक्षे १ मिलित्वा गुण्यं २ गु १२ क्षे १२ भंगाः ३६ ।

सिद्धे

क्षायिक				पा
सं	णा	दं	ल	जी

प्र क्षे ५ । द्वि क्षे ४ । मिलित्वा भंगाः ९ ॥ ८४८ ॥ उक्तगुण्यादिसंख्या आह—

स० चं०—पारिणामिक भावके जातिपद मिथ्यादृष्टिविषैं भव्य अभव्यरूप दोय अवशेष गुणस्थाननिविषैं वा सिद्धविषै भव्य वा जीवत्वरूप ही एक जानना। बहुरि जातिपद अपेक्षा गुणस्थाननिविषैं भंगनिका समुदाय कहौ हौं। सोई कहिए है—

जाति पद दोय औपशमिकके, पंच क्षायिकके, सात क्षायोपशमिकके, आठ औदयिकके, तीन पारिणामिक के हैं। तहां यथा संभव औदयिकके जितने जातिपद पाइए तितने तो गुण्य जानने। बहुरि ताके गुणकार अर क्षेप कहनेकें अर्थि प्रत्येक भंगादिक करनेविषैं मिश्रादिकके जो जितने जातिपद होंहि तिनने भेद ग्रहण करने अर औदयिकका जातिपदका समूहरूप एकही भेद ग्रहण करना ऐसैं करि प्रत्येक भंगविषैं औदयिकका भेद तौ गुणकार रूप जानना अन्य भावनिके भेद क्षेप रूप जानने। बहुरि दोय संयोगी आदि भंगनिविषैं औदायिकका भेद अर अन्यभावनिके भेद सहित जे भंग होंहि ते गुणकाररूप जानने। अर औदयिक विना अन्यभावनिकेही संयोगतैं जे द्विसंयोगी आदि भंग होंहि ते क्षेपरूप जानने। बहुरि क्षायिक वा मिश्रके एक जातिपदका भेदविषै ताहीका अन्यभेद जहां संभवै तहां स्वसंयोगी भंग होंहि ते क्षेपरूप जानने। सो गुण्यकौं गुणकारकरि गुणैं क्षेपकौं मिलाएं जितने होंहि तितने तहां भंग जानने। सो मिथ्यादृष्टिविषैं मिश्रके अज्ञान दर्शन लब्धि ए तीन,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

औदयिकके आठ पारिणामिकके भव्य अभव्यरूप दोय जाति पद हैं। तहां औदयिकके, आठ हैं ते गुण्य जानने। बहुरि प्रत्येक भंगविषै औदयिकका आठका समूहरूप एक तौ गुणकार जानना अर तीन मिश्रके दोय पारिणामिकके ए पांच क्षेप जानने। बहुरि दोय संयोगीविषै औदयिकका आठका समूहरूप एकका योग लिए तीन मिश्रके अर दोय पारिणामिकके ऐसैं पांच तौ गुणकार जानने। बहुरि तीन मिश्रके संयोग सहित दोय पारिणामिकके भेदरूप छह दोय संयोगी क्षेप जानने। बहुरि तीन संयोगीविषै औदयिकका आठका समूहरूप एक अर अभव्य पारिणामिक इनका संयोग सहित तीन मिश्रके अर औदायिकका आठका समूहरूप एक अर भव्य पारिणामिक इनका संयोग सहित तीन मिश्रके ऐसैं छह भंग गुणकाररूप जानने। बहुरि स्वसंयोगीविषै एक अज्ञान होतैं अन्य ज्ञान पाइए है। जैसैं कुमति होतैं कुश्रुतादि पाइए है। बहुरि एक दर्शन होतैं अन्य दर्शन पाइए जैसैं चक्षुदर्शन होतैं अन्य दर्शन पाइए। वा एक लब्धि होतैं अन्य लब्धि पाइए जैसैं दान होतैं लाभादि पाइए। ऐसैं ए तीन भंग क्षेप जानने। मिलिकरि गुण्य आठ गुणकार बारह क्षेप चौदह तहां गुण्यकौं गुणकार करि गुणैं क्षेपकौं मिलाएं एकसौ दश भंग हो हैं।

बहुरि याही प्रकार सासादनविषैं मिश्रके अज्ञान दर्शन लब्धिरूप तीन, औदयिकके सात, पारिणामिकका भव्यरूप एक जातिपद है। तहां गुण्य सात प्रत्येक भंगविषै गुणकार एक क्षेप च्यारि दोय संयोगी भंगविषै गुणकार च्यारि क्षेप तीन, तीनसंयोगीविषै गुणकार तीन स्वसंयोगीविषै क्षेप तीन मिलिकरि गुण्य सात गुणकार आठ क्षेप दश भंग छ्यासठि हैं।

बहुरि मिश्रविषैं मिश्रके ज्ञान दर्शन लब्धि ए तीन औदायिकके सात पारिणामिकका भव्यरूप एक जाति पद है। तहां गुण्य सात प्रत्येक भंगविषै गुणकार एक क्षेप च्यारि दोय संयोगी भंगविषैं गुणकार च्यारि क्षेप तीन, तीन संयोगीभंगविषैं गुणकार तीन स्वसंयोगी भंगविषैं क्षेप तीन मिलिकरि गुण्य सात गुणकार आठ क्षेप दश भंग छ्यासठि हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि असंयतविषैं उपशमकका एक सम्यक्त्व क्षायिकका एक सम्यक्त्व मिश्रके तीन ज्ञान दर्शन लब्धि औदायिकके सात पारिणामिकका एक भव्यरूप जाति पद है। तहां गुण्य सात प्रत्येकभंगविषै गुणकार एक क्षेप सात दोय संयोगीविषैं गुणकार सात क्षेप बारह, तीन संयोगीविषैं गुणकार बारह क्षेप छह, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार छह, पांच संयोगीका अभाव है जातैं क्षायिक सम्यक्त्व उपशम सम्यक्त्वका संयोग नाहीं। स्वसंयोगीविषै क्षेप तीन मिलिकरि गुण्य सात गुणकार छब्बीस क्षेप अठाईस भंग दोयसै दश हैं।

बहुरि देश संयतादि तीनविषैं उपशमकका एक सम्यक्त्व अर क्षायिकका एक सम्यक्त्व अर मिश्रके च्यारि ज्ञान दर्शन लब्धि वेदक चारित्र अर औदायिकके छह अर पारिणामिकका एक भव्यत्व ऐसैं जातिपद हैं। तहां गुण्य छह प्रत्येक भंगविषै गुणकार एक क्षेप आठ, दोय संयोगीविषैं गुणकार आठ क्षेप पंद्रह, तीन संयोगीविषैं गुणकार पंद्रह क्षेप आठ, च्यारि संयोगीविषै गुणकार आठ, स्वसंयोगीविषैं क्षेप तीन मिलकरि गुण्य छह गुणकार बत्तीस क्षेप चौंतीस भंग दोयसै छबीस हैं।

बहुरि उपशम श्रेणीविषै अपूर्वकरण अर वेद सहित अनिवृत्ति करणविषैं औपशमिकके दोय सम्यक्त्व चारित्र, अर क्षायिकका एक सम्यक्त्व अर मिश्रके तीन ज्ञान दर्शन लब्धि, अर औदयिकके छह अर पारिणामिकका एक भव्यत्व ऐसैं जातिपद हैं। तहां गुण्य छह प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप सात दोय संयोगीविषैं गुणकार सात क्षेप सोलह, तीन संयोगीविषैं गुणकार सोलह क्षेप तेरह, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार तेरह क्षेप तीन, पंच संयोगीविषैं गुणकार तीन इहां क्षायिक सम्यक्त्व होतैं उपशम चारित्र पाइए है तातैं पंच संयोगी भी है। स्वसंयोगीविषैं क्षेप तीन मिलिकर गुण्य छह गुणकार चालीस क्षेप बियालीस भंग दोयसै बियासी हैं।

बहुरि वेदरहित अनिवृत्तिकरण अर सूक्ष्म सांपरायविषैं उपशमक दोय सम्यक्त्व अर चारित्र, अर क्षायिकका एक सम्यक्त्व अर मिश्रके तीन ज्ञान दर्शन लब्धि अर औदायिकके पांच अर पारिणामिकका एक भव्यत्व ऐसैं जातिपद हैं। इहां गुण्य पांच प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप सात दोय संयोगीविषै गुणकार सात क्षेप १०२५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सोलह, तीन संयोगीविषैं गुणकार सोलह क्षेप तेरह, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार तेरह क्षेप तीन, पांच संयोगीविषैं गुणकार तीन स्वसंयोगीविषैं क्षेप तीन मिलिकरि गुण्य पांच गुणकार चालीस क्षेप बियालीस भंग दोयसै बियालीस हैं। इहां कषायका जातिपद एक ग्रह्या तातैं कषाय रहित भागनिके विशेष न कीए।

बहुरि उपशांत कषायविषैं भी सूक्ष्मसांपरायवत् जातिपद दोयसै दोय हैं विशेष इतना—औदयिकके च्यारि ही हैं। तहां गुण्य च्यारि गुणकार अर क्षेप पूर्वोक्त प्रकार चालीस बियालीस हैं भंग दोयसै दोय हैं।

बहुरि क्षपक श्रेणीविषैं अपूर्वकरण वा वेदसहित अनिवृत्तिकरण विषै क्षायिकके दोय सम्यक्त्व अर चारित्र अर मिश्रके तीन ज्ञान दर्शन लब्धि औदयिकके छह अर परिणामिकका एक भव्यत्व ऐसैं जातिपद हैं। तहां गुण्य छह प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप छह दोय संयोगीविषैं गुणकार छह क्षेप ग्यारह तीन संयोगीविषैं गुणकार ग्यारह क्षेप छह, च्यारि संयोगीविषैं गुणकार छह स्वसंयोगीविषैं क्षेप तीन मिलिकरि गुण्य छह गुणकार चौईस क्षेप छबीस भंग एकसौ सत्तरि हैं।

बहुरि वेद रहित अनिवृत्तिकरण वा सूक्ष्म सांपरायविषैं भी अपूर्वकरणवत् जातिपद हैं विशेष इतना इहां औदयिकके पांच ही हैं तातैं तहां गुण्य पांच गुणकार चौईस क्षेप छबीस भंग एकसौ छियालीस हैं।

बहुरि क्षीणकषायविषैं भी तैसैं ही जातिपद हैं। विशेष इतना इहां औदयिकके च्यारि ही हैं तातैं गुण्य च्यारि गुणकार चौईस क्षेप छब्बीस भंग एकसौ बाबीस हैं।

बहुरि सयोगीविषै क्षायिकके पांच ज्ञान दर्शन सम्यक्त्व चारित्र लब्धि औदयिकके तीन पारिणामिकका एक भव्यत्व ऐसैं जातिपद हैं। तहां गुण्य तीन प्रत्येक भंगविषैं गुणकार एक क्षेप छह, दोय संयोगीविषैं गुणकार छह क्षेप पांच तीन संयोगीविषैं गुणकार पांच स्वसंयोगीविषैं कोई एक क्षायिक लब्धिविषै अन्य क्षायिक लब्धि पाइए तातैं क्षेप एक मिलिकरि गुण्य तीन गुणकार बारह क्षेप बारह भंग अठतालीस हैं।

बहुरि अयोगीविषैं भी सयोगीवत् जातिपद हैं। विशेष इतना—इहां औदयिकके दोय ही हैं तातैं गुण्य दोय गुणकार बारह क्षेप बारह भंग छत्तीस हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि सिद्धिविषैं क्षायिकके च्यारि–सम्यक्त्व ज्ञान दर्शन तीर्थरूप–लब्धि अर पारिणामिकका एक जीवत्व जातिपद है इहां प्रत्येकभंगविषैं क्षेप पांच द्विसंयोगीविषैं क्षेप च्यारि मिलिकरि नव भंग भए ॥ ८४८ ॥ आगैं ए कहे जे गुण्यादिक तिनकी संख्या कहैं हैं—

अट्ठ गुणिज्जा वामे तिसु सग छच्चउसु छक्क पणगं च ।
थूले सुहुमे पणगं दुसु चउतियदुगमदो सुण्णं ॥ ८४९ ॥

अष्ट गुण्यानि वामे त्रिषु सप्त षट् चतुर्षु षट्कं पंचकं च ।
स्थूले सूक्ष्मे पंचकं द्वयोश्चतुस्त्रिकद्विकमतः शून्यं ॥ ८४९ ॥

जी० प्र०—गुण्यानि मिथ्यादृष्टावष्टौ । सासादनादित्रये सप्त । देशसंयतादित्रये क्षपकोपशमकापूर्वकरणयोश्च षट् । तदनिवृत्तिकरणयोः षट्पंच । सूक्ष्मसांपराययोः पंच । उपशांतक्षीणकषाययोश्चत्वारि । सयोगे त्रीणि । अयोगे द्वे । सिद्धे शून्यं ॥ ८४९ ॥

स चं०—जिनकौं गुणिए ऐसे गुण्य ते मिथ्यादृष्टिविषैं आठ सासादनादि तीनविषैं सात देशसंयतादि तीन वा क्षपक उपशमक अपूर्वकरणविषैं छह अनिवृत्तिकरणविषैं छह वा पांच सूक्ष्मसांपरायविषै पांच उपशांत कषाय क्षीणकषायविषै च्यारि सयोगीविषैं तीन अयोगीविषैं दोय सिद्धविषैं शून्य जानने ॥ ८४९ ॥

बारट्ठछव्वीसं तिसु तिसु बत्तीसयं च चउवीसं ।
तो तालं चउवीसं गुणगारा बार बार णभं ॥ ८५० ॥

द्वादशाष्टाष्ट षड्विंशं त्रिषु त्रिषु द्वात्रिंशत्कं च चतुर्विंशं ।
अतश्चत्वारिंशच्चतुर्विंशं गुणकारा द्वादश द्वादश नभः ॥ ८५० ॥

जी० प्र०—गुणकारा मिथ्यादृष्टौ द्वादश । सासादनादिद्वये अष्टावष्टौ । असंयते षड्विंशतिः । देशसंयतादित्रये द्वात्रिंशत् । क्षपकापूर्वकरणादित्रये चतुर्विंशतिः । तत उपशमकचतुष्के चत्वारिंशत् । क्षीणकषाये चतुर्विंशतिः । सयोगायोगयोर्द्वादश । सिद्धे शून्यं ॥ ८५० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—जिनकरि गुणिए ऐसे गुणकार मिथ्यादृष्टिविषैं बारह सासादनादि दोयविषै आठ आठ असंयतविषैं छवीस देशसंयतादि तीनविषै बत्तीस क्षपक अपूर्वकरणादि तीन विषै चौवीस उपशमक अपूर्व करणादि च्यारि विषैं चालीस क्षीणकषायविषैं चौईस सयोगी अयोगीविषैं बारह सिद्धविषैं शून्य जानने ॥ ८५० ॥

वामे चउद्दस दुसु दस अडवीसं तिसु हवंति चोत्तीसं।
तिसु छव्वीस दुदालं खेवा छव्वीस बार बार णवं ॥ ८५१ ॥

वामे चतुर्दश द्वयोः दश अष्टाविंशं त्रिषु भवंति चतुस्त्रिंशत्।
त्रिषु षड्विंशं द्विचत्वारिंशत्क्षेपाः षड्विंशं द्वादश द्वादश नव ॥ ८५१ ॥

जी० प्र०—क्षेपा मिथ्यादृष्टौ चतुर्दश। सासादनमिश्रयोर्दश। असंयतेऽष्टाविंशतिः। देशसंयतादित्रये चतुस्त्रिंशत्। क्षपकापूर्वकरणादित्रये षड्विंशतिः। उपशमकचतुष्के द्वाचत्वारिंशत्। क्षीणकषाये षड्विंशतिः। सयोगायोगयोर्द्वादश। सिद्धे नव भवंति ॥ ८५१ ॥

स० चं०—जिनकौं मिलाइए ऐसे क्षेप मिथ्यादृष्टिविषैं चौदह सासादन मिश्रविषैं दश असंयतविषैं अठाईस देशसंयतादि तीनविषैं चौंतीस क्षपक अपूर्वकरणादि तीनविषैं छबीस, उपशमक अपूर्वकरणादि च्यारिविषै बियालीस, क्षीणकषायविषैं छबीस, सयोगी अयोगीविषैं बारह बारह, सिद्धविषैं नव जानने ॥ ८५१ ॥

एक्कारं दसगुणियं दुसु छावट्ठी दसाहियं बिसयं।
तिसु छव्वीसं बिसयं वेदुवसामोत्ति दुसय बासीदी ॥ ८५२ ॥

एकादश दशगुणितं द्वयोः षट्षष्टिः दशाधिकं द्विशतं।
त्रिषु षड्विंशं द्विशतं वेदोपशम इति द्विशतं द्व्यशीतिः ॥ ८५२ ॥

जी० प्र०—भंगा मिथ्यादृष्टौ दशाग्रशतं। सासादनमिश्रयोः षट्षष्टिः। असंयते दशाग्रद्विशती। देशसंयतादित्रये षड्विंशत्यग्रद्विशती। उपशमकापूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोर्द्व्यशीत्यग्रद्विशती ॥ ८५२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—गुण्यकौं गुणकारकरि गुणैं क्षेपकौं मिलाएं भंग मिथ्यादृष्टिविषैं एकसौ दश, सासादन मिश्रविषैं छ्यासठि, असंयतविषैं दश अधिक दोयसै, देशसंयतादि तीनांवषैं छत्तीस अधिक दोयसै, उपशमक अपूर्वकरण सवेद अनिवृत्तिकरणविषैं दोयसै बियासी हैं ॥ ८५२ ॥

बादालं बेण्णिसया तत्तो सुहुमोत्ति दुसय दोसहियं ।
उवसंतम्मि य भंगा खवगेसु जहाकमं वोच्छं ॥ ८५३ ॥

द्वाचत्वारिंशद्द्विशतं ततः सूक्ष्म इति द्विशतं द्विसहितं ।
उपशांते च भंगाः क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि ॥ ८५३ ॥

जी० प्र०—तत उपर्युपशमकावेदानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपराययोः द्विचत्वारिंशदग्रद्विशती । उपशांतकषाये द्व्यग्रद्विशती । क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्ये ॥ ८५३ ॥

स० चं०—तातैं ऊपरि उपशमक वेदरहित अनिवृत्तिकरण सूक्ष्मसांपरायविषैं दोयसै बियालीस, उपशांतकषायविषैं दोयसै दोय भंग हैं ॥ ८५३ ॥ अब क्षपकविषैं यथाक्रम कहौंहौं—

सत्तरसं दसगुणिदं वेदित्ति सयाहियं तु छदालं ।
सुहुमोत्ति खीणमोहे बावीससयं हवे भंगा ॥ ८५४ ॥

सप्तदश दशगुणितं वेद इति शताधिकं तु षट्चत्वारिंशत् ।
सूक्ष्म इति क्षीणमोहे द्वाविंशशतं भवेयुर्भंगाः ॥ ८५४ ॥

जी० प्र०—अपूर्वसवेदानिवृत्तिकरणयोः सप्तत्यग्रशतं । अवेदानिवृत्तिसूक्ष्मसांपराययोः षट्चत्वारिंशदग्रशतं । क्षीणकषाये द्वाविंशत्यग्रशतं ८५४

स० चं०—अपूर्वकरण सवेद अनिवृत्ति करणविषैं दश गुणे सतरह तिनके एकसौ सत्तरि, वेदरहित अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपरायविषैं एकसौ छियालीस, क्षीणकषायविषैं एकसौ बाईस भंग हैं ॥ ८५४ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अडदालं छत्तीसं जिणेसु सिद्धेसु होंति णव भंगा।
एत्तो सव्वपदं पडि मिच्छादिसु सुणह वोच्छामि ॥ ८५५ ॥

अष्टचत्वारिंशत् षट्त्रिंशत् जिनेषु सिद्धेषु भवंति नव भंगाः।
एतस्मात्सर्वपदं प्रति मिथ्यादिषु शृणुत वक्ष्यामि ॥ ८५५ ॥

जी० प्र०—सयोगेऽष्टचत्वारिंशत्, अयोगे षट्त्रिंशत्, सिद्धे नव भवंति। इतः उपरि सर्वपदान्याश्रित्य मिथ्यादृष्ट्यादिषु वक्ष्ये शृणुत ८५५

स० चं०—सयोगीविषैं अठतालीस अयोगीविषैं छत्तीस सिद्धविषैं नव भंग हैं ॥ ८५५ ॥ इहातैं आगैं सर्व पदनिकौं आश्रयकरि मिथ्यादृष्ट्यादिविषैं भंग कहौं हौं तुम सुनहु—

भव्विदराणण्णदरं गदीण लिंगाण कोहपहुदीणं।
इगिसमये लेस्साणं सम्मत्ताणं च णियमेण ॥ ८५६ ॥

भव्येतरयोरन्यतरत् गतीनां लिंगानां क्रोधप्रभृतीनां।
एकसमये लेश्यानां सम्यक्त्वानां च नियमेन ॥ ८५६ ॥

जी० प्र०—तानि तु सर्वपदानि पिंडप्रत्येकभेदाद् द्विविधानि। तत्र पिंडपदेषु एकसमये भव्याभव्ययोः गतिषु लिंगेषु क्रोधादिषु लेश्यासु सम्यक्त्वेषु चैकैकमेव गुणस्थानेषु यथायोग्यं नियमेन युगपत् संभवति ॥ ८५६ ॥

स० चं०—ते सर्वपद दोयप्रकार हैं—पिंडपद १ प्रत्येकपद २। तहां जिस भाव समूह एकैं कालि एक जीवकैं एक एक ही संभवै सर्व न संभवैं जैसैं च्यारो गति विषैं एक जीवकैं एकै कालविषै एक गति ही संभवै च्यारो न संभवै तिस भाव समूहकौं पिंडपद कहिए। बहुरि जे भाव एक जीवकैं एक कालविषैं युगपत् भी संभवैं ऐसे भाव तिनकौं प्रत्येकपद कहिए। तहां भव्य अभव्य अर गति अर लिंग अर क्रोधादिक च्यारि अर लेश्या अर सम्य-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्त्व ए पिंडपद हैं सो इनविषैं एक कालि एक जीवकैं गुणस्थाननिविषैं यथायोग्य एक एक ही नियमकरि युगपत् संभवै है ॥ ८५६ ॥

पत्तेयपदा मिच्छे पण्णरसा पंच चेव उवजोगा ।
दाणादी ओदयिये चत्तारि य जीवभावो य ॥ ८५७ ॥

प्रत्येकपदानि मिथ्ये पंचदश पंच चैव उपयोगाः ।
दानादय औदयिके चत्वारि च जीवभावश्च ॥ ८५७ ॥

जी० प्र०—युगपत्संभवानि प्रत्येकपदानि मिथ्यादृष्टौ पंचदशैव । तानि कानि ? त्र्यज्ञानाद्यद्विदर्शनान्येवं पंचोपयोगा दानादयः पंच औदयिके मिथ्यात्वाज्ञानासंयमासिद्धत्वानि चत्वारि जीवत्वं चेति ॥ ८५७ ॥

स० चं०—युगपत् संभवैं ऐसे प्रत्येकपद मिथ्यादृष्टिविषैं पंद्रह ही हैं । ते कौन ? तीन अज्ञान दोय दर्शन ए पांच उपयोग अर दानादिक पांच क्षयोपशम लब्धि अर औदयिकविषैं मिथ्यात्व अज्ञान असंयम असिद्धत्व ए च्यारि अर जीवत्व पारिणामिक ऐसैं पंद्रह जानने ॥ ८५७ ॥

पिंडपदा पंचेव य भव्विदरदुगं गदी य लिंगं च ।
कोहादी लेस्सावि य इदि वीसपदा हु उड्ढेण ॥ ८५८ ॥

पिंडपदानि पंचैव च भव्येतरद्विकं गतिश्च लिंगं च ।
क्रोधादयः लेश्या अपि च इति विंशपदानि हि वृद्धया ॥ ८५८ ॥

जी० प्र०—तदुपरि पिंडपदानि पंचैव । तानि तु भव्येतरद्वयं गतिः लिंगं क्रोधादिः लेश्या चेति । इत्येतानि विंशतिपदानि खलु मिथ्यादृष्ट्यूर्ध्वरूपेण स्थाप्यानि ॥ ८५८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—तिन पंद्रह प्रत्येकपदनिके ऊपरि पिंडपद मिथ्यादृष्टिविषैं पांच हैं ते कौंन ? भव्य अभव्य युगल अर गति अर लिंग अर क्रोधादि अर लेश्या ऐसैं पांच हैं मिलिकरि बीस पद भए। ऊर्ध्वरूप ऊपरि ऊपरि स्थापन करने ॥ ८५८ ॥

पत्तेयाणं उवरिं भव्विदरदुगस्स होदि गदिलिंगे।
कोहादिलेस्ससम्मत्ताणं रयणा तिरिच्छेण ॥ ८५९ ॥

प्रत्येकानामुपरि भव्येतरद्विकस्य भवति गतिलिंगयोः।
क्रोधादिलेश्यासम्यक्त्वानां रचना तिरश्चा ॥ ८५९ ॥

जी० प्र०—सर्वत्र प्रत्येकपदानामुपरिस्थितानां भव्याभव्ययोः गतीनां लिंगानां क्रोधादिकषायाणां लेश्यानां सम्यक्त्वानां च रचना तिर्यग्रूपेण कार्या भवति ॥ ८५९ ॥

स० चं०—प्रत्येक पदनिके ऊपरि तिनका स्थापन पाइए ऐसे भव्य अभव्य अर गति अर लिंग अर क्रोधादिक अर लेश्या अर सम्यक्त्व तिनकी रचना तिर्यग् रूप बरोबरि करनी। भावार्थ ऐसा—जो नीचैं तो प्रत्येक

१ संदृष्टिः—कु । कु । वि । च । अ । दा । ला । भो । उ । वी । मि । अ । अ । अ । जी ।

भ	न	स्त्री	क्रो	कृ
अ	ति	पुं	मा	नी
	म	न	मा	क
	दे	०	लो	ते
				प
				शु

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पद ऊपरि लिखने । तिनके ऊपरि मूल पिंडपद ऊपरि ऊपरि लिखने । तहां अपने अपने पिंड पदके भेद आगें आगें बरोबरि लिखने सो रचना आगें लिखेंगें तहां देखिलेने ॥ ८५९ ॥

एक्कादी दुगुणकमा एक्केक्कं रुंधिऊण हेट्ठम्मि ।
पदसंजोगे भंगा गच्छं पडि होंति उवरुवरिं ॥ ८६० ॥

एकादि द्विगुणक्रमादेकैकं रुद्ध्वा अधस्तने ।
पदसंयोगे भंगा गच्छं प्रति भवंत्युपर्युपरि ॥ ८६० ॥

जी० प्र०—एकमादिं कृत्वा द्विगुणद्विगुणक्रमाः एकैकपदमवलंब्याधस्तनपदसंयोगे गच्छं प्रत्युपर्युपरि भंगा भवंति । तद्यथा—

कुमतौ प्रत्येकभंग एकः । कुश्रुते प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनेन संयोगे द्विसंयोगेप्येकः मिलित्वा द्वौ । विभंगे प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनकुश्रुतादिना द्विसंयोगौ द्वौ । त्रिसंयोग एकः, मिलित्वा चत्वारः । चक्षुर्दर्शने प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनविभंगादिना द्विसंयोगास्त्रयः । त्रिसंयोगास्त्रयः । चतुःसंयोग एकः । मिलित्वाष्टौ । अचक्षुर्दर्शने प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनचक्षुरादिना द्विसंयोगाश्चत्वारः । त्रिसंयोगाः षट् । चतुःसंयोगाश्चत्वारः । पंचसंयोग एकः । मिलित्वा षोडश । दानलब्धौ प्रत्येकभंग एकः । तदधस्तनाचक्षुरादिना द्विसंयोगाः पंच । त्रिसंयोगा दश । चतुःसंयोगा दश । पंचसंयोगाः पंच । षट्संयोग एकः । मिलित्वा द्वात्रिंशत् । एवं प्रतिपदं द्विगुणा द्विगुणा भूत्वा पंचदशे जीवपदे प्रत्येकभंगः पंचदशसंयोगश्चैकः । द्विसंयोगाश्चतुर्दशसंयोगाश्च चतुर्दश । त्रिसंयोगाः त्रयोदशसंयोगाश्च द्विरूपोनगच्छस्यैकवारसंकलनमात्राः १३ । १४ । लब्धं ९१ । ९१ । चतु-
२ १

ःसंयोगा द्वादशसंयोगाश्च त्रिरूपोनगच्छस्य द्विकवारसंकलनमात्राः। १२ । १३ । १४ । लब्धं ३६४ । ३६४ । पंचसंयोगा एकादशसंयोगाश्च
३ । २ । १

चतूरूपोनगच्छस्य त्रिकवारसंकलनमात्राः ११ । १२ । १३ । १४ लब्धं १००१ । १००१ । षट्संयोगा दशसंयोगाश्च पंचरूपोनगच्छस्य चतुर्वार-
४ । ३ । २ । १

संकलनमात्राः १० । ११ । १२ । १३ । १४ लब्धं २००२ । २००२ । सप्तसंयोगा नवसंयोगाश्च षड्रूपोनगच्छस्य पंचवारसंकलनमात्राः—
५ । ४ । ३ । २ । १

९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ लब्धं ३००३ । ३००३ । अष्टसंयोगाः सप्तरूपोनगच्छस्य षड्वारसंकलनमात्राः—
६ । ५ । ४ । ३ । २ । १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

८ । ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ लब्धं ३४३२ । मिलित्वा तत्र षोडशसहस्रत्रिशतचतुरशीतिभंगाः १६३८४ । इदं पंचषष्ठिचतुर्थांशः
७ । ६ । ५ । ४ । ३ । २ । १

६५ = १ ॥ ८६० ॥ अथोत्तरत्रयभंगसंकलनसूत्रमाह—
४

स० चं०—एकतैं लगाय दूणे दूणे अनुक्रमतैं एक एक पदका अवलंबनकरि नीचले नीचले पदनिके संयोगतैं गच्छ जो जेथवां पद होइ ताका प्रमाण तीहि प्रति ऊपरि ऊपरि भंग हो हैं। सोई कहिए है—

मिथ्यादृष्टिविषैं प्रत्यकपद नीचैं ही नीचैं कुमति स्थाप्या तिसविषैं प्रत्येक भंग एक ही है। बहुरि ताके ऊपरि कुश्रुत तिसविषैं प्रत्येक भंग एक अर याके नीचैं कुमति ताका संयोग कीएं दोय संयोगी भंग एक असैं दोय भंग भए। बहुरि ताके ऊपरि विभंग तिसविषैं प्रत्येक भंग एक अर याके नीचले कुश्रुत वा कुमतिका संयोगतैं दोय संयोगी भंग दोय बहुरि तीनूंका संयोगतैं तीन संयोगी भंग एक असैं च्यारि भंग भए। बहुरि ताके ऊपरि चक्षुदर्शन तिसविषैं प्रत्येक भंग एक अर याके नीचले विभंग कुश्रुत कुमति तिनका संयोगतैं चक्षुदर्शनतैं कीए दोय

(१) जी १ । १४ । ९१ । ३६४ । १००१ । २००२ । ३००३ । ३४३२ । ३००३ । २००२ । १००१ । ३६४ । ९१ । १४ । १ ।
०
० १५
०

दा १ । ५ । १० । १० । ५ । १ । ३२ ।
अ १ । ४ । ६ । ४ । १ । १६ ।
च १ । ३ । ३ । १ । ८ ।
वि १ । २ । १ । ४ ।
कु १ । १ । २ ।
कु १ । १ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संयोगी भंग तीन अर चक्षु कुमति कुश्रुत वा चक्षु कुमति विभंग वा चक्षु कुश्रुत विभंगका संयोगतैं तीन संयोगी भंग तीन बहुरि च्यार्‍योंके संयोगतैं च्यारि संयोगी भंग एक ऐसैं आठ भए। बहुरि ताके ऊपरि अचक्षुदर्शन तिसविषैं प्रत्येक भंग एक अर याके नीचले चक्षुदर्शन विभंग कुश्रुत कुमति तिनका संयोग क्रमतैं अचक्षु दर्शनतैं कीएं दोय संयोगी भंग च्यारि, बहुरि अचक्षु चक्षु कुमति वा अचक्षु चक्षु कुश्रुत वा अचक्षु चक्षु विभंग वा अचक्षु कुमति कुश्रुत वा अचक्षु कुमति विभंग वा अचक्षु कुश्रुत विभंगके संयोगतैं तीन संयोगी भंग छह, बहुरि अचक्षु चक्षु कुमति कुश्रुत वा अचक्षु चक्षु कुमति विभंग वा अचक्षु चक्षु कुश्रुत विभंग वा अचक्षु कुमति कुश्रुत विभंगके संयोगतैं च्यारि संयोगी भंग च्यारि बहुरि अचक्षु चक्षु विभंग कुश्रुत कुमति इनि पंचानिके संयोगतैं पंच संयोगी भंग एक मिलिकरि सोलह भए। याहीप्रकार ताके ऊपरि दान लब्धि तिसविषै प्रत्येक भंग एक अर बहुरि याके नीचले चक्षु आदि तिनके संयोगतैं दोय संयोगी भंग पांच, तीन संयोगी दश, च्यारि संयोगी दश, पांच संयोगी पांच, छह संयोगी एक मिलिकरि बत्तीस भंग भए ऐसैं ही उपरि उपरि एक एक पद प्रति दूणे दूणे भंग होंहिं तिनिविषै प्रत्येक भंग तौ एक अर दोय संयोगी आदि भंग नीचले भावनिके संयोगके बदलनेतैं जितने जितने होंहिं तितने तितने जानने सो लाभ लब्धिविषैं चौसठि भोगविषै एकसौ अठाईस उपभोगविषै दोयसै छप्पन वीर्यविषैं पांचसै बारह मिथ्यात्वविषैं एक हजार चौईस अज्ञानविषै दोय हजार अठतालीस असंयमविषै च्यारि हजार छिनवै असिद्धत्वविषै इक्यासीसै बाणवै जीवत्वविषै सोलह हजार तीनसै चौरासी भंग होंहि। तहां पंद्रह्रां जीव पदविषै इतने भंग कैसैं होंइ सो कहिए है—

प्रत्येक भंग तौ एक बहुरि दोय संयोगी अर चौदह संयोगी चौदह चौदह हैं। बहुरि तीन संयोगी अर तेरह संयोगी भंग दोय घाटि गच्छ प्रमाणका एकवार संकलनमात्र हैं सो इक्याणवै इक्याणवै हैं। बहुरि च्यारि संयोगी अर बारह संयोगी भंग तीन घाटि गच्छका दोयवार संकलनमात्र हैं ते तीनसै चौसठि तीनसै चौसठि हैं। बहुरि पांच संयोगी अर ग्यारह संयोगी भंग च्यारि घाटि गच्छका तीनवार संकलनमात्र हैं। ते एक हजार एक एक हजार १०३५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एक भंग हैं । बहुरि छह संयोगी अर दश संयोगी भंग पांच घाटि गच्छका च्यारिवार संकलनमात्र हैं ते दोय हजार दोय दोय हजार दोय भंग हैं। बहुरि सात संयोगी अर नव संयोगी भंग छह घाटि गच्छका पांच वार संकलन मात्र हैं ते तीन हजार तीन तीन हजार तीन भंग हैं। बहुरि आठ संयोगी भंग सात घाटि गच्छका छहवार संकलन मात्र हैं ते चौंतीससै बत्तीसभंग हैं। अैसें सर्व मिलि पंद्रह्वां जीवपदविषैं सोलह हजार तीनसै चौरासी भंग जानने सो पण्णट्ठीका चौथा भाग भया जातैं पैंसठि हजार पांचसै छत्तीस रूप प्रमाणकी पण्णट्ठी अैसी संज्ञा है। इहां एक बार दोय बार आदि संकलनका विधान वा भंग ल्यावनेका विधान जैसें जीवकांडका ज्ञानाधिकारविषैं पर्याय समास श्रुतज्ञानका वर्णन करते पत्तेयभंगमेगं, इत्यादि सूत्रकरि कह्या था तैसें इहां भी जानना। सो इहां जीव पद पद्रह्वां है तातैं गच्छका प्रमाण पद्रह जानना। तहां दोय घाटि गच्छका एकबार संकलन करनेकौं पूर्वोक्त सूत्र अनुसारि तेरह चौदहकौं परस्पर गुणि ताकौं दोय एककौं परस्पर गुणि ताका भाग दीए इक्याणवै हो हैं। बहुरि तीन घाटि गच्छका दोयबार संकलन करनेकौं बारह तेरह चौदहकौं परस्पर गुणि ताकौं तीन दोय एककौं परस्पर गुणि ताका भाग दीए तीनसै चौसठि हो हैं। बहुरि च्यारि घाटि गच्छका तीनबार संकलन करनेकौं ग्यारह बारह तेरह चौदहकौं परस्पर गुणि ताकौं च्यारि तीन दोय एककौं परस्पर गुणि ताका भाग दीएं एक हजार एक हो है। बहुरि पांचबार गच्छका च्यारिबार संकलन करनेकौं दश ग्यारह बारह तेरह चौदहकौं परस्पर गुणि ताकौं पांच च्यारि तीन दोय एककौं परस्पर गुणि ताका भाग दीए दोय हजार दोय हो हैं। बहुरि छह घाटि गच्छका पांचबार संकलन करनेकौं नव दश ग्यारह बारह तेरह चौदहकौं परस्पर गुणि ताकौं छह पांच च्यारि तीन दोय एककौं परस्पर गुणि ताका भाग दीए तीन हजार तीन हो हैं। बहुरि सात घाटि गच्छका छहबार संकलन ल्यावनेकौं आठ नव दश ग्यारह बारह तेरह चौदहकौं परस्पर गुणि ताकौं सात छह पांच च्यारि तीन दोय एककौं परस्पर गुणि ताका भाग दीए चौंतीससै बत्तीस हो हैं अैसें विधान जानना ॥ ८६० ॥ आगैं भंगनिके मिलावनेके अर्थि सूत्र कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इट्ठपदे रूऊणे दुगसंवग्गम्मि होदि इट्ठधणं।
असरित्थाणंतधणं दुगुणेगूणे सगीयसव्वधणं ॥ ८६१ ॥

इष्टपदे रूपोने द्विकसंवर्गे भवतीष्टधनं।
असदृशानामंतधनं द्विगुणे एकोने स्वकीयसर्वधनं ॥ ८६१ ॥

जी० प्र०—इष्टपदं विवक्षितभावः जीवत्वं तदा पंचदशसु रूपे ऊने १५। शे १४ मात्रद्विकसंवर्गे कृते इष्टधनं स्यात् १६३८४। इदमेव प्रत्येकपदानामंतधनं द्वाभ्यां संगुण्यैकरूपेऽपनीते स्वेष्टस्थाने सर्वधनं स्यात् ६५ = $\frac{१}{४}$। २। ऋण $\overset{०}{१}$ अपवर्तिते ६५ = $\frac{१}{२}$ ऋणं $\overset{०}{१}$ पुनस्तदेवेष्टधनं ६५ = $\frac{१}{४}$ द्विगुणितं उपरितनभव्यभावस्य भवति ६५ = $\frac{१}{२}$ तथा अभव्यभावस्य ६५ = $\frac{१}{२}$ मिलित्वेदं ६५ = १ इदं द्विगुणितमेकगतेर्भवति ६५ = १। २ पुनश्चतुर्गुणितं चतुर्गतीनां ६५ = १। ८ पुनस्तदेकगतिधनं ६५ = । १। २ द्विगुणितमेकलिंगस्य ६५ = १। २। २ पुनः नरकादिगतीनामेकत्रित्रिद्विलिंगैर्नवभिर्गुणितं लिंगानां ६५ = १। २। २। ९ लब्धं ६५ = १। ३६। पुनस्तदेकलिंगधनं ६५ = १। २। २ द्विगुणितमेककषायस्य ६५ = १। २। २। २। एकैकलिंगस्य चत्वारश्चत्वारः कषाया इति षट्त्रिंशता गुणितं कषायाणां ६५ = १। २। २। २। ३६ लब्धं ६५ = १। २८८ पुनस्तदेककषायधनं ६५ = १। २। २। २। द्विगुणितमेकलेश्यायाः ६५ = १। २। २। २। २। पुनः नरकादिगतिषु लिंगाश्रयत्वाच्चतुर्द्वादशद्वादशाष्टकषायैः सह त्रिषड्लेश्याकृतचतुरग्रद्विशत्या गुणितं लेश्यानां ६५ = १। २। २। २। २। २०४ लब्धं ६५ = ३२६४। सर्वे पिंडपदभंगाः—

६५ = १	३२६४	लेश्या
६५ = १	२८८	कषाय
६५ = १	३६	लिंग
६५ = १	८	गति
६५ = १	१	भव्याभव्य

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिलित्वामी ६५ = १ । ३५९७ । अत्राधस्तनप्रत्येकपदसर्वभंगेषु ६५ = १/२ मिलितेषु मिथ्यादृष्टौ सर्वपदभंगा भवंति ६५ = ७१९५/२ । सासादने मिथ्यात्वाभव्यत्वे नेति प्रत्येकपदानि पंचदश । पिंडपदानि चत्वारि, प्राग्वदानीतैषां भंगसंदृष्टिः—कु १ । कु २ । वि ४ । च ८ । अ १६ । दा ३२ । ला ६४ । भो १२८ । उ २५६ । वी ५१२ । अ १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । जो ८१९२ । भ १६३८४ । *

नरकगति ६५ = १/२	लिंगनरक १ । ६५ = १	कषाय । नरक १ लिं १ क ४ । ६५ = २	नरकलिंग १ क ४ । ले ३ । ६५=२ । २
तिर्यग्गति ६५ = १/२	लिंग । तिर्यं ३ । ६५ = १	कषाय । तिर्यं १ लिं ३ क ४ । ६५ = २	तिर्यं । लिंग ३ क ४ । ले ६ । ६५=२ । २
मनुष्यगति ६५ = १/२	लिंग । मनुष्य ३ । ६५ = १	कषाय । मनुष्य १ लिं ३ क ४ । ६५ = २	मनुष्य । लिंग ३ क ४ । ले ६ । ६५=२ । २
देवगति ६५ = १/२	लिंग । देवगति २ । ६५ = १	कषाय । देवगति १ लिं २ क ४ । ६५ = २	देवगति । लिंग २ क ४ । ले ६ । ६५=२ । २
मिलित्वा ६५ = १/२ । २	मिलित्वा ६५=१ । ९ लिंग	मिलित्वा कषाय ६५=२।३६ । लब्ध ६५=७२	मिलित्वा ६५=२।२।२०४।लब्ध ६५=८१६

* इतः पुरस्सरं-तद्भंगसकलनमिदं—इष्टे पंचदशे भव्यपदे १५ रूपेणोने १४ शेषमात्रद्विकसंवर्गे पण्णट्ठ्याश्चतुर्थांशः ६५ = १/४ इष्टधनं भवति । इदं प्रत्येकपदांत्यधनं ६५ = १/४ द्विगुणितं रूपोनं ६५ = १/४ । २ । ऋ । १ स्वेष्टधनं स्यात् ६५ = १/२ ऋ १ एषां राशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं	६५ = १/२
गतिधनं	६५ = २
लिंगधनं	६५ = ९
कषायधनं	६५ = ७२
लेश्याधनं	६५ = ८१६

श्रीमदभयचंद्रनामांकितामयं पाठोऽधिकः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = १७९९ ऋ° १ (२) । मिश्रे मिश्रमतिश्रुतावधिज्ञानदर्शनानि दानादयः पंचाज्ञानासंयमासिद्धत्वजीवत्वभव्यत्वानि प्रत्येक- पदानि गतिलिंगकषायलेश्याः पिंडपदानि । एषां भंगसंदृष्टिः म १ । श्रु २ । अ ४ । च ८ । अच १६ । अ ३२ । दा ६४ । ला १२८ । भो २५६ । उ ५१२ । वी १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । जी १६३८४ । भ ६५ = १ (२) । *

नरकगति । ६५=१	नरकलिंग १ । ६५=२	नरकलिंग १ । क ४ । ६५=२ । २	नरकलिंग १ । क ४ । ले ३ । ६५=२ । २ । २
तिर्यगति । ६५=१	तिर्य्यलिंग ३ । ६५=२	तिर्य्यलिंग ३ । क ४ । ६५=२ । २	तिर्य्यलिंग ३ । क ४ । ले ६ । ६५=२ । २ । २
मनुष्यगति । ६५=१	मनुष्यलिंग ३ । ६५=२	मनुष्यलिंग ३ । क ४ । ६५=२ । २	मनुष्यलिंग ३ । क ४ । ले ६ । ६५=२ । २ । २
देवगति । ६५=१	देवगलिंग २ । ६५=२	देवगलिंग २ । क ४ । ६५=२ । २	देवगलिंग २ । क ४ । ले ३ । ६५=२ । २ । २
मिलित्वा । ६५=४	मिलित्वा लिंग ६५=२ । ९	मिलित्वा ६५=२ । २ । ३६	मिलित्वा ६५ = ८ । १८०

मिलित्वा सर्वधनं ६५ = १६०७ ।

असंयते प्रत्येकपदान्युक्तान्येव षोडश पिंडपदानि सम्यक्त्वेन समं पंच । संदृष्टिः— म १ । श्रु २ । अ ४ । च ८ । अ १६ । अ ३२ । दा ६४ ।

* इतोऽग्रे अत्र प्रत्येकपदसंकलनधनमिदं ६५ = १° ऋ १ एषां राशीनां संकलनार्थं संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं ६५	= १
गतिधन ६५	= ४
लिंगधनं ६५	= १८
कषायधन ६५	= १४४
लेश्याधनं ६५	= १४४०

इयान् पाठोऽधिकः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ला १२८ । भो २५६ । उ ५१२ । वी १०२४ । अ २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । जी ६५ = १/४ भ ६५ = १/२ । *

नर=गति ६५=१	नर=लिंग १ । ६५ = २	नर=लि १।क४।६५=२।२	नर=लि१क४ले३।६५=८	सम्यक्त्व उपश ६५=१६ । १८०
तिरि=गति ६५=१	तिरि=लि ३ । ६५ = २	तिरि=लि३।क४।६५=२।२	तिर्यं=लि३क४।ले६।६५=८	वेदक ६५=१६ । १८०
मनुष्यगति ६५=१	मनु=लि ३ । ६५ = २	मनु=लि३।क४।६५=२।२	मनु=लि३क४।ले६।६५=८	क्षा नर=लि१क४ले।१।६५=१६
देवगति ६५=१	देव=लि २ । ६५ = २	देव=लि २।क४।६५=२।२	देव=लि२क४।ले३।६५=८	तिरि=लि१क४ले४।६५=१६
मिलित्वा ६५=४	मिलित्वा ६५ = २ । ९	मिलित्वा ६५ = ४ । ३६	मिलित्वा ६५=८ । १८०	मनु=लि३।क४।ले६।६५=१६
				देव=लि१।क४।ले३।६५ = १६
				मिलित्वाक्षायिक।६५=१६। १०४

मिलित्वा सर्वधनं ६५ = ७३६७ ऋं १ । क्षायिक ६५ = १६६४ ।

* संदृष्टेरमे अत्रासदृशपदसंकलनमिदं ६५ = १ ऋं १ । एषां राशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं	६५ = १
गतिधनं	६५ = ४
लिंगधनं	६५ = १८
कषायधनं	६५ = १४४
लेश्याधनं	६५ = १४४०
उप=वेदधनं	६५ = ५७६०
क्षायिकधनं	६५ = १६६४

इयान् पाठोऽधिकः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

देशसंयते पदानि तान्येवैकविंशतिः किंतु असंयमस्थाने देशसंयमः, न देवनरकगती। संदृष्टिः—म १। श्रु २। अ ४। च ८। अ १६। अ ३२। दा ६४। ला १२८। भो २५६। उ ५१२। वी १०२४। श्र २०४८। दे ४०९६। अ ८१९२। जी १६३८४। भ ६५=१/२ *

तिरिगति ६५=१	तिरि लिं३।६५=२	ति लिं३क४।६५=२।२	ति लिं३।क४।ले३।६५=२।२।२।	उ ६५=१६।७२
मनुगति ६५=१	म लिं ३। ६५=२	मनु लिं३क४।६५=२।२	म लिं ३।क४।ले३।६५=२।२।२	वे ६५=१६।७२
मिलित्वा ६५=२	मिलित्वा ६५=२।६	मिलित्वा ६५=२।२।२४	मिलित्वा। ६५=८।७२	क्षा मनुलिं३।क४।ले३।६५=१६।३६
				मिलित्वा।उ।वे।६५=१६।१४४
				क्षा ६५ = ५७६

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५=२९९१ ऋ १ । क्षा ६५=५७६।

प्रमत्ते प्रत्येकपदानि. मनुष्यगत्यंतान्यष्टादश षोडशपदानि लिंगकषायलेश्यासम्यक्त्वानि संदृष्टिः—म १। श्रु २। अ ४। म ८। च १६। अ ३२। अ ६४। दा १२८। ला २५६। भो ५१२। उ १०२४। वी २०४८। अ ४०९६। अ ८१९२। सकलसंयम १६३८४। जी—

६५=१/२ भ ६५ = १। म गति ६५ = २ ऋ १। +

* संदृष्टेरग्रे—प्रत्येकपिंडपदभगराशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं	६५ = १
गतिधनं	६५ = २
लिंगधनं	६५ = १२
कषायधनं	६५ = ९६
लेश्या	६५ = ५७६
सम्य	६५ = २३०४
क्षायि	६५ = ५७६

\+ इतः परं--एषां राशीनां संदृष्टिः—

प्रत्येकधनं	६५=४
लिंगधनं	६५=१२
कषायधनं	६५=९६
लेश्याधनं	६५=५७६
सम्यक्त्वधनं	६५=३४५६

इयान् पाठोऽधिकः

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

म लि ३ । ६५ = २ । २	म । लिं ३ । क ४ । ६५ = २।२।२	म । लिं ३ । क ४ । ले ३ । ६५ = २।२।२।२	सम्य ३ । ले ३६ । ६५ = ३२
मिलित्वालब्ध । ६५ = १२	मिलित्वा लब्ध ६५ = ९६	मिलित्वाल[illegible] लेश्याधनं ६५ = ५७६	गुणितलब्ध ६६ = ३४५६

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = ४१४४ ऋ १ । तथा अप्रमत्तेऽपि ६५ = ४१४४ ऋ १ ।
उपशमकेऽपूर्वकरणे अष्टदशपदानि शुक्ललेश्यांतान्येकान्नविंशतिः। सप्तदशपदानि लिंगकषायसम्यक्त्वानि । संदृष्टिः—म १ । श्रु २। अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वीं २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = १ म गति ६५ = २ । शु ले ६५ = २ । २ ।

मनुष्यगतिलिंग ३ । ६५ = ८ लब्ध ६५ = २४	मनुलिंग ३ । क ४ । ६५ = १६ लब्ध ६५ = १९२	उप = क्षायिक २-६५ – ३२।१२ लब्ध ६५ = ७६८

अत्र प्रत्येकसंकलनं ६५ = ८
लिंगधनं ६५ = २४
कषायधनं ६५ = १९२
सम्यक्त्वधनं ६५ = ७६८

मिलित्वा सर्वपदभंगाः—६५ = ९९२ ऋ १ । तथा सवेदानिवृत्तिकरणस्यापि ६५ = ९९२ ऋ १ । कषायानिवृत्तिकरणस्य म १ श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ । भ ६५ = १ । मनुष्यगति ६५ = २ । शुक्ललेश्या ६५ = २ । २ ।

म = लिंग० । क ४ । ६५ = ८ मिलित्वा लब्ध ६५ = ३२	उप = ६५ = १६ । ४ क्षा ६५ = १६ । ४ लब्ध ६५ = १२८	अत्र प्रत्येकपदसंकलनधनं ६५ = ८ । ऋ १ कषायधनं ६५ = ३२ सम्यक्त्वधनं ६५ = १२८

मिलित्वा सर्वपदभंगाः ६५ = १६८ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सूक्ष्मसांपरायस्य प्रत्येकपदानि विंशतिः सदृशपदं सम्यक्त्वं। संदृष्टिः—म१ श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८। ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = मनुष्यगति ६५ = २ । शुक्ललेश्या ६५ = २ । २ । सूक्ष्मलोभ ६५ = २ । २ । २ ।

सम्यक्त्व उपशम ६५ = १६	प्रत्येकधनं ६५ = १६
क्षायिक ६५ = १६	सम्यक्त्वधनं ६५ = ३२

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५=४८ ऋ १।

उपशांतकषाये प्रत्येकपदान्येकान्नविंशतिः । सम्यक्त्वमेव पिंडपदं । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ । भ ६५ = १ । म ग ६५ = २ शु ले ६५ = ४ । सम्यक्त्व २ । ६५ = ८ ।

प्रत्येकपदधनं ६५ = ८
सम्यक्त्वधनं ६५ = १६

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५ = २४ । ऋ १

क्षपकेष्वपूर्वकरणे प्रत्येकपदानि क्षायिकसम्यक्त्वांतानि विंशतिः । लिंगकषायौ पिंडपदे। संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = १ । म ग ६५ = २ । शुक्ल ले ६५ = ४ । क्षा—सम्य—६५ = ८ ।

लिंग ३ । ६५ = १६	लिंग ३ कषाय ४ । ६५=३२	प्रत्येकधनं ६५ = १६
लब्ध ६५ = ४८	लब्ध ६५ = ३८४	लिंगधनं ६५ = ४८
		कषायधनं ६५ = ३८४

मिलित्वा सर्वपदधनं ६५=४४८। ऋ १ । तथा सवेदानिवृत्तिकरणोऽपि—६५ = ४४८ । ऋ १ ।

कषायानिवृत्तिकरणे प्रत्येकपदानि क्षायिकसम्यक्त्वांतानि विंशतिः । कषायाः सदृशपदं । संदृष्टिः—म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अ ६४ । दा १२८ ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = १ म-ग ६५ = २ । शु-ले ६५ = ४ । क्षा-स ६५ = ८ ।

कषाय ४ । ६५ = १६	
लब्ध ६५ = ६४	

मिलित्वा सर्वपदघनं ६५ = ८० । ऋ १̊ ।

सूक्ष्मसांपराये असदृशपदान्येव सूक्ष्मलोभांतान्येकविंशतिः । संदृष्टिः म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । सू सं १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = १ म-ग ६५ = २ शु-ले ६५ = ४ । क्षा-स ६५ = ८ । सू लो ६५ = १६ । भंगाः ६५ = ३२ । ऋ १̊ ।

क्षीणकषाये प्रत्येकपदान्येवैकविंशतिः । संदृष्टिः म १ । श्रु २ । अ ४ । म ८ । च १६ । अ ३२ । अ ६४ । दा १२८ । ला २५६ । भो ५१२ । उ १०२४ । वी २०४८ । अ ४०९६ । अ ८१९२ । म १६३८४ । जी ६५ = १/२ भ ६५ = १ म-ग ६५ = २ । शु-ले ६५ = ४ । क्षा-स ६५ = ८ । अंतधणं गुणगुणियमित्याद्यानीतभंगाः ६५ = १६ ऋ १̊ ।

सयोगे असदृशपदान्येव चतुर्दश । संदृष्टिः—के-ज्ञा १ के-द २ । क्षा-स ४ । य-चा ८ । क्षा-दा १६ । क्षा-ला ३२ । क्षा भो ६४ । क्षा उ १२८ । अनंतवी २५६ । असिद्धत्व ५१२ । जी । १०२४ । भ २०४८ । म-ग ४०९६ । शु-ले ८१९२ । भंगाः २५६ । ६४ । ऋ १̊ गुणिते १६३८४ ।

अयोगे असदृशपदान्येव त्रयोदश । संदृष्टिः—के-ज्ञा १ । के-द २ । क्षा-स ४ । य- चा ८ । क्षा-दा १६ । क्षा ला ३२ । क्षा भो ६४ । क्षा-उ १२८ । क्षा-वी २५६ । असि २५६ । २ । जी २५६ । २ । २ । भ २५६ । २ । २ । २ । म-ग २५६ । १६ । भंगाः २५६ । ३२ । ऋ १̊ ।

सिद्धे के-ज्ञा १ । के-दा २ । क्षा--स ४ । क्षा--वी ८ । जी १६ । इत्यसदृशपदानि पंच, भंगा एकत्रिंशत् ॥ ८६१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—विवक्षित जेथवां पद होहि तामैं एक घटाएं जितने रहैं तितने दूवे माडि परस्पर गुणैं विवक्षित पदविषैं भंगनिका प्रमाणरूप इष्टधन होइ। जैसैं जीवपद पंद्रहका है तामैं एक घटाएं चौदह भए सो चौदह जायगा दूवे माडि परस्पर गुणैं सोलह हजार तीनसै चौरासी भए सो इतने ही जीवपदविषैं भंग हैं। बहुरि तिस इष्टधनकौं दूणाकरि तामैं एक घटाएं जो प्रमाण होइ तितना प्रथम पदतैं लगाय विवक्षित पद पर्यंत सर्व पदनिके भंगनिका जोडरूप सर्व धन हो है। जैसैं विवक्षित जीवपद पंद्रहवां ताका इष्ट धन पण्णट्ठीका चौथा भाग ताकौं दूणाकरि तामैं एक घटाएं प्रथमपदतैं पद्रहवां पद पर्यंत सर्वपदनिके भंगनिका जोडरूप प्रमाण हो है। बहुरि जो जीवपदविषैं इष्ट धन कह्या ताका दूणा आधा पण्णट्ठी प्रमाण भव्य भावके भंग हो हैं अर इतने ही अभव्य भावके भंग हो हैं। मिलिकरि दोऊनिके पण्णट्ठी प्रमाण भंग हो हैं। बहुरि इनकौं दूणे कीजिये तब एक गतिके भंग होंहि सो नरक तिर्यंच मनुष्य देवगतिके इतने इतने भंग जानने। च्यारूं गतिके भंग जोडें पण्णट्ठीतैं आठ गुणे भए। बहुरि एकगतिके, पण्णट्ठीतैं दूणे भंग कहे तिनकौं दूणे किएं एक लिंगके भंग होइ तिनकौं नरकगतिविषैं एक लिंग तिर्यंचविषैं तीनलिंग मनुष्यविषैं तीन लिंग, देवविषैं दोय लिंग मिलिकरि नव भए तिनिकरि गुणें पण्णट्ठीतैं छत्तीस गुणें भंग भए। बहुरि एक लिंगके पण्ट्ठीतैं चौगुणे भंग तिनकौं दूणे कीएं एक कषायके भंग होंहि तिनकौं नरकगतिविषैं एकलिंग सहित च्यारि कषाय तहां च्यारि करि गुणैं, तिर्यंचविषैं तीन लिंगसहित च्यारि कषाय तहां बारह करि गुणैं, मनुष्यविषैं तीन लिंगसहित च्यारि कषाय तहां बारह करि गुणे देवविषै दोय लिंग सहित च्यारि कषाय तहां आठकरि गुणे भंग होंहि सो मिलिकरि छत्तीसकरि पण्णट्ठीतैं आठगुणे भंगनिकौं गुणैं पण्णट्ठीतैं दोयसै अठ्यासी गुणे भंग भए। बहुरि एक कषायके पण्णट्ठीतैं आठ गुणे भंग तिनकौं दूणे कीएं एक लेश्याके भंग होंहिं तिनकौं नरकविषैं एकलिंग च्यारि कषाय सहित तीनलेश्या तहां बारह करि गुणैं तिर्यंचविषैं तीन लिंग च्यारि कषाय सहित छह लेश्या तहां बहत्तरिकरि गुणैं, मनुष्यविषै तीन लिंग च्यारि कषाय सहित छह लेश्या तहां बहत्तरि करि गुणै देवविषैं दोय लिंग च्यारि कषाय सहित छह लेश्या तहां अठतालीस- १०८५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

करि गुणें भंग होंहि मिलिकरि दोयसै च्यारि करि पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे भंगनिकौं गुणें पण्णट्ठीतै बत्तीससै चौसठि गुणे भंग हो हैं सर्व मिलि पिंडपदनिके भंग १।८।३६।२८८।३२६४। पण्णट्ठीतैं पैंतीससै सत्याणवे गुणे हो हैं। इनिविषैं नीचले प्रत्येक पदनिके भंग एक घाटि पण्णट्ठीतैं आधे कहे थे तिनकौं मिलाएं मिथ्यादृष्टिविषैं सर्व पदभंग पण्णट्ठीकौं सात हजार एकसो पिच्याणवैका आधा प्रमाण करि गुणि तामैं एक घटाएं जो प्रमाण होइ तितने भंग हो हैं।

मिथ्यादृष्टिविषैं प्रत्येकपद पिंडपदनिकी रचना इहां पण्णट्ठीकी संदृष्टि ऐसी ६५ =

नरकलिंग १ क ४ ले ३ भंग ६५ = १६	तिर्यंचलिं ३ क ४ ले ६ भंग ६५ = १६	मनुष्य लिं ३ क ४ ले ६ भंग ६५ = १६	देवलिं २ क० ४ ले ६ भंग ६५ = १६	भंग ६५ = ३२६४
नरकलिंग १ क ४ भंग ६५ = ८	तिर्यंच लिं ३ क ४ भंग ६५ = ८	मनुष्य लिं ३ क ४ भंग ६५ = ८	देवलिंग २ क ४ भंग ६५ = ८	भंग ६५ = २८८
नरकलिंग १ भंग ६५ = ४	तिर्यंच लिंग ३ भंग ६५ = ४	मनुष्य लिं ३ भंग ६५ = ४	देवलिंग २ भंग ६५ = ४	भंग ६५ = ३६
नरकगति भंग ६५ = २	तिर्यंच भंग ६५ = २	मनुष्य भंग ६५ = २	देव, भंग ६५ = २	भंग ६५ = ८
	भव्यत्व भंग ६५ = २	अभव्य ६५ = २	भंग ६५ = २	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीव १६३८४	अ ८१९२	अ ४०९६	अ २०४८	अज्ञा १०२४	वी ५१२	उ २५६	भो १२८	ला ६४	दा ३२	अ १६	च ८	वि ४	कुश्रु २	कुम १

इनकी ऊर्ध्व तिर्यक लिखनेकी रचना दिखाइए है—प्रत्येकपद तौ कुमति आदि नीचै लिखने। तिनके ऊपरि भव्य अभव्य बरोवरि लिखने तिनके ऊपरि च्यारिगति बरोवरि लिखनी। तिनके ऊपरि लिंग यथासंभव बरोवरि लिखने। तिनके ऊपरि च्यारि च्यारि कषाय बरोवरि लिखने। तिनके ऊपरि लेश्या यथासंभव बरोवरि लिखनी असैं इनकी रचना करनी। बहुरि जैसैं मिथ्यादृष्टिविषैं भंग वा रचनाका विधान कह्या तैसैं ही सासादनादिविषैं यथासंभव भंग वा रचनाका विधान जानना। तहां सासादनविषैं मिथ्यात्व प्रत्येक पदका तौ अभाव है अर भव्य अभव्य पिंडपद कह्या था सो इहां अभव्यत्वका अभाव है तातैं प्रतिपक्षीके अभावतैं भव्यत्वकौं भी प्रत्येक पद कहिए ऐसैं प्रत्येकपद पंद्रह पिंडपद च्यारि हैं। तहां पूर्वोक्त प्रकार कुमति १ कुश्रुत २ विभग ४ चक्षु ८ अचक्षु १६ दान ३२ लाभ ६४ भोग १२८ उपभोग २५६ वीर्य ५१२ अज्ञान १०२४ असंयम २०४८ असिद्धत्व ४०९६ जीवत्व ८१९२ भव्यत्व १६३८४ इनके दूणे दूणे भंग जानने। तहां भव्यत्वके पण्णट्ठीका चौथा भाग प्रमाण भंग भए तिनकौं दूणे दूणे कीएं पण्णट्ठीके आधे एक गतिके भंग होंहिं। तिनकौं चौगुणे कीएं च्यारिगतिके भंग मिलि पण्णट्ठीतैं दूणे होंहि। बहुरि एक गतिके भंग दूणे कीएं पण्णट्ठी प्रमाण एक लिंगके होंहि तिनकौं नरकविषैं एक, तिर्यंचविषैं तीन, मनुष्यविषैं तीन, देवविषैं दोय लिंगनिकरि गुणै मिलिकरि पण्णट्ठीतैं नोगुणे भंग भए। बहुरि एक लिंगके भंगनितैं दूणे एक कषायके भंग पण्णट्ठीतैं दूणे होहिं तिनकौं नरकविषैं एक वेदसहित च्यारि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कषाय तिर्यंचविषैं तीन वेदसहित च्यारि कषाय मनुष्यविषैं तीन वेदसहित च्यारिकषाय देवविषैं दोय वेदसहित च्यारिकषायकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्ठीकौं दूणेकरि छतीस गुणेकरि इतने भंग भए। बहुरि एक कषायके भंगानितैं दूणे एक लेश्याके पण्णट्ठीतैं चौगुणे भंग होंहि। तिनकौं नरकविषैं एक लिंग च्यारि कषाय सहित तीन लेश्या तिर्यंचविषैं तीन वेद च्यारि कषाय सहित छह लेश्या मनुष्यविषैं तीन वेद च्यारि कषाय सहित छह लेश्या देवविषैं दोय वेद च्यारि कषाय सहित छह लेश्यानिकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्ठीकौं चौगुणेकरि दोयसै च्यारि गुणे करिए इतने पण्णट्ठीतैं आठसै सोलह गुणे भंग भए ऐसैं प्रत्येकपद पिंडपदनिके मिलिकरि सासादनविषैं पण्णट्ठीकौं सतरहसै निन्याणवैका आधाकरि गुणिए तामैं एक घटाइए इतने सर्वपद भंग भए।

बहुरि मिश्रविषैं प्रत्येकपद मिश्ररूप मति १ श्रुत २ अवधिज्ञान ४ अर चक्षु ८ अचक्षु १६ अवधिदर्शन ३२ दान ६४ लाभ १२८ भोग २५६ उपभोग ५१२ वीर्य लब्धि १०२४ अज्ञान २०४८ असंयम ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ जीवत्व १६३८४ भव्यत्व ३२७६८ है तिनविषैं दूणे दूणे भंग जानने। बहुरि पिंडपद गति लिंग कषाय लेश्या हैं। तहां भव्यत्वके पण्णट्ठीतैं आधे भंग तिनकौं दूणे कीएं एक गतिके होंहि नरक तिर्यंच मनुष्य देव च्यारि गतिके मिलिकरि पण्णट्ठीतैं चौगुणे होंहि। बहुरि एक गतिके भंगानितैं दूणे एक लिंगके पण्णट्ठीतैं दूणे भंग होंहि तिनकौं नरकविषैं एक तिर्यंचविषैं तीन मनुष्यविषैं तीन देवविषैं दोय लिंगनिकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्ठीकौं दूणेकरि नव गुणे करिए इतने भंग होंहि। बहुरि एक लिंगके भंगानितैं दूणे दूणे एक कषायके भंग पण्णट्ठीतैं चौगुणे होंहि तिनकौं नरकविषैं एक वेदसहित च्यारि कषाय तिर्यंचविषैं तीन वेदसहित च्यारि कषाय मनुष्यविषैं तीन वेद सहित च्यारिकषाय देवविषैं दोय वेदसहित च्यारिकषायनिकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्ठीकौं चौगुणेकरि छतीस गुणेकरिए इतने भंग भए। बहुरि एक कषायके भंगानितैं दूणे एक लेश्याके भंग पण्णट्ठीतैं आठगुणे होंहि तिनकौं नरकविषैं एक वेद च्यारि कषाय सहित तीन लेश्या तिर्यंचविषैं तीन वेद च्यारि कषाय सहित छह लेश्या मनुष्यविषैं तीन वेद च्यारि कषाय सहित छह लेश्या देवविषैं दोय वेद च्यारि कषाय सहित छह लेश्यानिकरि गुणें

मिलिकरि पण्णट्टीकौं आठगुणाकरि एकसौ असी गुणा करिए इतनें भंग भए ऐसें प्रत्येकपद पिंडपदनिके मिलिकरि मिश्रविषें पण्णट्टीकौं सोलहसै सातकरि गुणि तामैं एक घटाएं जो प्रमाण होइ तितने सर्वपद भंग हो हैं।

बहुरि असंयतविषें प्रत्येकपद सोहल मति १ श्रुति २ अवधि ४ चक्षु ८ अचक्षु १६ अवधि ३२ दान ६४ लाभ १२८ भोग २५६ उपभोग ५१२ वीर्य १०२४ अज्ञान २०४८ असंयम ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ जीवत्व १६३८४ भव्यत्व ३२७६८ है तिनविषें दूणे दूण भंग जानने। बहुरि पिंडपद च्यारि पूर्वोक्त अर एक सम्यक्त्व ऐसें पांच हैं। तिनविषें भव्यत्वविषें पण्णट्टीतें आधे भंग भए तिनकौं दूणे कीएं पण्णट्टी प्रमाण एक गतिके भंग होंहि ते प्रत्येक नरक तिर्यंच मनुष्य देवगतिके मिलाएं पण्णट्टीतें चौगुणे भए। बहुरि एकगतिके भंगनिके दूणे एक लिंगके भंग पण्णट्टीतें दूणे होंहि तिनकौं नरकविषें एक लिंग तिर्यंचविषे तीन लिंग मनुष्यविषै तीन लिंग देवविषें दोय लिंगकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्टीकौं दूणा करि नव गुणा करिए इतने भंग भए। बहुरि एक लिंगके भंगनितें दूणे एक कषायके भंग पण्णट्टीतें चौगुणे भए तिनकौं नरकविषें एक लिंगसहित च्यारि कषाय, तिर्यंचविषें तीन लिंग सहित च्यारि कषाय, मनुष्यविषें तीन लिंगसहित च्यारि कषाय, देवविषें दोय लिंग सहित च्यारि कषायनिकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्टीकौं चौगुणाकरि छत्तीस गुणाकरिए इतने भंग भए। बहुरि कषायके भंगनितें दूणे एक लेश्याके भंग पण्णट्टीतें आठगुणे हैं। तिनकौं नरकविषें एक लिंग च्यारि कषाय सहित तीन अशुभ लेश्या, तिर्यंच विषे तीन लिंग च्यारि कषाय सहित छह लेश्या, मनुष्यविषे तीन लिंग च्यारि कषाय सहित छह लेश्या, देवविषें दोयलिंग च्यारि कषाय सहित तीन शुभलेश्यानिकरि मिलिकरि पण्णट्टीकौं आठ गुणाकरि एकसो असी गुणा करिए इतने भंग भए। बहुरि एक लेश्याके भंगनितें दूणे एक सम्यक्त्वके भंग पण्णट्टीतें सोलह गुणे हैं। तिनकौं नरकविषे एक लिंग च्यारि कषाय तीन लेश्या, तिर्यंचविषे तीन लिंग च्यारि कषाय छह लेश्या, मनुष्यविषे तीन लिंग च्यारि कषाय छह लेश्या, देवविषे दोय लिंग च्यारि कषाय तीन लेश्यानिकरि गुणे मिलाएंतें पण्णट्टीकौं सोलह गुणाकरि एकसो असी गुणाकरिए इतने भंग उपशम सम्यक्त्वके अर इतने ही

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भंग वेदकसम्यक्त्वके हैं। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वका जुदा कथन है सो एक लेश्याके भंगनितैं दूणे क्षायिक सम्यक्त्वके भंग पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे हैं। तिनकौं नरकविषै एकलिंग च्यारि कषाय एक लेश्या, तिर्यंचविषैं एक लिंग च्यारि कषाय च्यारि लेश्या, मनुष्यविषै तीन लिंग च्यारि कषाय छह लेश्या, देवविषै एकलिंग च्यारि कषाय तीन लेश्यानिकरि गुणे मिलिकरि पण्णट्ठीकौं सोलह गुणेकरि एकसो च्यारि गुणे करिए इतने भंग भए। ऐसैं असंयतविषै प्रत्येकपद पिंडपदनिके भंग जोडैं पण्णट्ठीतै तिहत्तरिसै सडसठि गुणे एक घाटि सर्वपद भंग हो हैं। क्षायिकसम्यक्त्वके पण्णट्ठीतैं सोलहसै चौसठि गुणे भंग हो हैं।

बहुरि देशसंयतविषै असंयमकी जायगा देशसंयम भया देव नरकगतिका अभाव भया तहां प्रत्येकपद सोलह मति १ श्रुत २ अवधि ४ चक्षु ८ अचक्षु १६ अवधि ३२ दान ६४ लाभ १२८ भोग २५६ उपभोग ५१२ वीर्य १०२४ अज्ञान २०४८ देशसंयम ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ जीवत्व १६३८४ भव्यत्व ३२७६८ है तिनके दूणे दूणे भंग जानने। बहुरि भव्यत्वविषैं पण्णट्ठीतैं आधे भंग तिनके दूणे पण्णट्ठी प्रमाण एक गतिके भंग हैं तिनकौं तिर्यंच मनुष्य दोय गतिकरि गुणें पण्णट्ठीतैं दूणे भंग भए। बहुरि एक गतिके भंगनितैं दूणे एक लिंगके भंग पण्णट्ठीतैं दूणे हैं तिनकौं तिर्यंचविषै तीन लिंग, मनुष्यविषै तीन लिंगकरि गुणे मिलिकरि पण्णट्ठीकौं दूणाकरि छह गुणाकरिए इतने भंग भए। बहुरि एकलिंगके भंगनितैं दूणे एक कषायके भंग पण्णट्ठीतैं चौगुणे हैं तिनकौ तिर्यंचविषै तीन लिंग सहित च्यारि कषाय, मनुष्यविषैं तीन लिंग सहित च्यारि कषायनिकरि गुणें मिलिकरि पण्णट्ठीकौं चौगुणाकरि चौवीस गुणाकरिए इतने भंग भए। बहुरि एक कषायके भंगनितैं दूणे एक लेश्याके भंग पण्णट्ठीतैं अठगुणे हैं। तिनकौं तिर्यंचविषैं तीन लिंग च्यारि कषाय सहित तीन लेश्या मनुष्यविषैं तीन वेद च्यारि कषाय सहित तीन लेश्यानिकरि गुणे मिलिकरि पण्णट्ठीकौं अठगुणाकरि बहत्तरिगुणा करिए इतने भंग हो हैं। बहुरि एक लेश्याके भंगनितैं दूणे एक सम्यक्त्वके पण्णट्ठीतै सोलह गुणे भंग हैं तिनकौं तिर्यंचविषै तीन लिंग च्यारि कषाय छह लेश्या, मनुष्यविषै तीन लिंग च्यारि कषाय छह लेश्यानिकरि गुणैं पण्णट्ठीकौं सोलह गुणाकरि बहत्तरिगुणा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कीजिए इतने भंग भए सो इतने उपशम सम्यक्त्वके इतने ही वेदक सम्यक्त्वके जानने। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व विषैं एक लेश्याके भंगनितैं दूणे पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे भंग तिनकौं मनुष्यगतिविषैं तीन लिंग च्यारि कषाय तीन लेश्यानिकरि गुणैं पण्णट्ठीकौं सोलह गुणाकरि छत्तीस गुणा करिए इतने भंग भए। ऐसैं देशसंयतविषैं मिलिकरि पण्णट्ठीतै गुणतीससै इक्याणवै गुणैं एक घाटि अर क्षायिक सम्यक्त्व अपेक्षा पण्णट्ठीतैं पांचसै छिहंतरि गुणे सर्वपद भंग हो हैं।

बहुरि प्रमत्तविषैं मनःपर्ययज्ञान प्रत्येकपद भया। देश संयमकी जायगा सराग संयम भया। और गतिके अभावतैं मनुष्यगति भी प्रत्येकपद ही भया ऐसैं प्रत्येकपद अठारह मति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ सकलसंयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्य ६५ = २ हैं। तिनके दूणे दूणे भंग जानने। बहुरि पिंडपद लिंग कषाय लेश्या सम्यक्त्व तिनविषैं मनुष्यगतिके भंग पण्णट्ठीतैं दूणे भए तिनके दूणे एक लिंगके भंग पण्णट्ठीतैं चौगुणे हैं तिनकौं तीन वेदकरि गुणैं पण्णट्ठीतैं बारह भए। बहुरि एक लिंगके भंगनितैं दूणे पण्णट्ठीतैं अठगुणे एक कषायके भंग हैं। तिनकौं तीन वेदसहित च्यारि कषायकरि गुणै पण्णट्ठीतैं छिनवैगुणे भंग हो हैं। बहुरि एक कषायके भंगनितैं दूणे एक लेश्याके भंग पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे हैं तिनकौं तीन लिंग च्यारि कषाय सहित तीन लेश्यानिकरि गुणैं पण्णट्ठीतैं पांचसै छिहंतरि गुणे भंग हो हैं। बहुरि एक लेश्याके भंगानितैं दूणे एक सम्यक्त्वके भंग पण्णट्ठीतैं बत्तीस गुणे हैं तिनकौं तीन वेद च्यारि कषाय तीन लेश्या सहित तीन सम्यक्त्वकरि गुणैं पण्णट्ठीतैं चौतीससै छप्पन गुणे भंग हो हैं। मिलिकरि प्रमत्तविषैं पण्णट्ठीतैं इकतालीससै चवालीस गुणे एक घाटि सर्वपद भंग हो हैं।

बहुरि अप्रमत्तविषैं भी प्रमत्तवत् पण्णट्ठीतैं इकतालीससै चवालीस गुणे एक घाटि भंग हैं।

बहुरि उपशमश्रेणीविषैं अपूर्वकरणविषैं और लेश्याके अभावतैं शुक्ललेश्या भी प्रत्येकपद है। तहां मति १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ उपशमचारित्र १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्यगति ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ प्रत्येकपद हैं तिनके दूणे दूणे भंग हैं। बहुरि पिंडपद लिंग कषाय सम्यक्त्व तिनविषैं शुक्ललेश्याके भंग पण्णट्ठीतैं चौगुणे तिनतैं दूणे एक लिंगके भंग पण्णट्ठीतैं अठगुणे हैं। तिनकौं तीन लिंगकरि गुणे पण्णट्ठीतैं चौबीस गुणे भए। बहुरि एक लिंगके भंगनितैं दूणे एक कषायके भंग पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे हैं। तिनकौं तीन वेदसहित च्यारि कषायनिकरि गुणें पण्णट्ठीतैं एकसौ बाणवै गुणे भंग हो हैं। बहुरि एक कषायके भंगनितैं दूणे एक सम्यक्त्वके भंग पण्णट्ठीतैं बत्तीसगुणे हैं। तिनकौं तीन वेद च्यारि कषायसहित दोय सम्यक्त्वकरि गुणें पण्णट्ठीतैं सातसै अडसठि गुणे भंग हो हैं मिलिकरि अपूर्वकरणविषैं पण्णट्ठीतैं नवसै बाणवै गुणे एक घाटि सर्वपद भंग हो हैं।

बहुरि वेदसहित अनिवृत्तिकरणविषैं भी अपूर्वकरणवत् पण्णट्ठीतैं नवसै बाणवै गुणे एक घाटि भंग हैं।

बहुरि वेदरहित अनिवृत्तिकरणविषैं प्रत्येकपद मति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ उपशम संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्यगति ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ है तिनके दूणे दूणे भंग हैं। बहुरि पिंडपदविषैं शुक्ललेश्याके पण्णट्ठीतैं चौगुणे भंग तिनतैं दूणे एक कषायके पण्णट्ठीतैं अठगुणे भंग है तिनकौं च्यारि कषायनिकरि गुणे पण्णट्ठीतै बत्तीस गुणे भंग हो हैं। बहुरि एक कषायके भंगनितैं दूणे पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे एक सम्यक्त्वके भंग हैं तिनकौं च्यारि कषाय सहित दोय सम्यक्त्वनिकरि गुणै पण्णट्ठीतैं एकसौ अठाईस गुणे भंग हो हैं। प्रत्येकपद पिंडपदके भंग मिलिकरि पण्णट्ठीतैं एकसौ अडसठिगुणे एक घाटि भंग भए।

बहुरि सूक्ष्मसांपरायविषै प्रत्येकपद मति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ उपशम संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्य ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ सूक्ष्मलोभ ६५ = ८ हैं तिनके दूणे दूणे भंग जानने। बहुरि पिंडपदविषैं सूक्ष्मलोभके पण्णट्ठीतैं अठगुणे भंगनितै दूणे एक सम्यक्त्वके भंग हैं तिनकौं उपशम क्षायिक सम्यक्त्वकरि गुणें पण्णट्ठीतैं बत्तीस गुणे भंग भए। प्रत्येकपद पिंडपदके मिलि पण्णट्ठीतै अठतालीसगुणे एक घाटि सर्वपद भंग भए।

बहुरि उपशांतकषायविषैं प्रत्येकपद मति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ उपशम संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्य ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ हैं तिनके दूणे दूणे भंग हैं। बहुरि पिंडपदविषैं शुक्ललेश्याके पण्णट्ठीतैं चौगुणे भंगनितैं दूणे एक सम्यक्त्वके भंग सो इतने ही उपशमसम्यक्त्वके इतने ही क्षायिक सम्यक्त्वके मिलिकरि पण्णट्ठीतैं सोलह गुणे भए। प्रत्येकपद पिंडपदके मिलि पण्णट्ठीतैं चौबीस गुणे एक घाटि सर्वपद भंग भए।

बहुरि क्षपकश्रेणीविषैं अपूर्वकरणविषै मति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ क्षायिक संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्यगति ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ क्षायिक सम्यक्त्व ६५ = ८ हैं तिनके दूणे दूणे भंग हैं। बहुरि क्षायिकसम्यक्त्वके पण्णट्ठीतैं अठगुणे भंगनितैं दूणे एकलिंगके भंग हैं। तिनकौं तीन वेदकरि गुणें पण्णट्ठीतैं अठतालीस गुणे भए। बहुरि एक लिंगके भंगनितैं दूणे एक कषायके भंग पण्णट्ठीतैं बत्तीस गुणे हैं तिनकौं तीन वेदसहित च्यारि कषायनिकरि गुणैं पण्णट्ठीतैं तीनसै चौरासी गुणे भए। सर्व प्रत्येकपद पिंडपदके मिलिकरि पण्णट्ठीतैं च्यारिसै अठतालीसगुणे एक घाटि सर्वपद भंग हैं।

बहुरि तैसैं ही अपूर्वकरणवत् वेदसहित अनिवृत्तिकरण विषैं भी पण्णट्ठीतैं च्यारिसै अडतालीस गुणे एकघाटि सर्वपद भंग हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

बहुरि वेदरहित अनिवृत्तिकरणविषैं माति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ क्षायिक संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्यगाति ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ क्षायिक सम्यक्त्व ६५ = ८ हे तिनतैं दूणे दूणे भंग हैं। बहुरि पिंडपदविषैं क्षायिकसम्यक्त्वके पण्णट्ठीतैं अठगुणे भंगनितैं दूण एक कषायके भंग हैं। तिनकौं च्यारि कषायनिकरि गुणें पण्णट्ठीतैं चौसठि गुणे भए। प्रत्येकपद पिंडपदके मिलिकरि सर्वपद भंग पण्णट्ठीतैं असीगुणे एक घाटि भए।

बहुरि सूक्ष्मसांपरायादिकविषैं प्रत्येकपद ही है, पिंडपद नाहीं। तहां सूक्ष्मसांपरायविषै माति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्यगति ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ क्षायिकसम्यक्त्व ६५ = ८ सूक्ष्मलोभ ६५ = १६ हैं। तिनके दूणे दूणे भंग मिलिकरि सर्वपद भंग पण्णट्ठीतैं बत्तीसगुणे एक घाटि भए।

बहुरि क्षीणकषायविषैं माति १ श्रुत २ अवधि ४ मनःपर्यय ८ चक्षु १६ अचक्षु ३२ अवधि ६४ दान १२८ लाभ २५६ भोग ५१२ उपभोग १०२४ वीर्य २०४८ अज्ञान ४०९६ असिद्धत्व ८१९२ संयम १६३८४ जीवत्व ३२७६८ भव्यत्व ६५ = मनुष्यगति ६५ = २ शुक्ललेश्या ६५ = ४ क्षायिकसम्यक्त्व ६५ = ८ प्रत्येकपद वीस हैं। तिनके दूणे दूणे भंग मिलिकरि 'अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादि करण सूत्रकरि पण्णट्ठीतैं सोलहगुणे एक घाटि सर्वपद भंग हो हैं।

बहुरि सयोगीविषै केवलज्ञान १ केवल दर्शन २ क्षायिकसम्यक्त्व ४ यथाख्यात चारित्र ८ क्षायिकदान १६ लाभ ३२ भोग ६४ उपभोग १२८ वीर्य २५६ असिद्धत्व ५१२ जीवत्व १०२४ भव्यत्व २०४८ मनुष्यगति ४०९६ शुक्ललेश्या ८१९२ प्रत्येकपद हैं तिनके दूणे दूणे भंग मिलिकरि दोयसै छप्पनतैं चौसठिगुणे एक घाटि भंग हो हैं।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि अयोगीविषै केवलज्ञान १ केवल दर्शन २ क्षायिकसम्यक्त्व ४ यथाख्यात चारित्र ८ दान १६ लाभ ३२ भोग ६४ उपभोग १२८ वीर्य २५६ असिद्धत्व ५१२ जीवत्व १०२४ भव्यत्व २०४८ मनुष्यगति ४०९६ प्रत्येकपद हैं। तिनके दूणे दूणे भंग मिलिकरि दोयसै छप्पनतैं बत्तीसगुणे एकघाटि सर्वपद भंग हो हैं। बहुरि सिद्धविषै केवल ज्ञान १ केवल दर्शन २ क्षायिक सम्यक्त्व ४ अनंतवीर्य ८ जीवत्व १६ प्रत्येक पद हैं। तिनके दूणे दूणे भंग मिलिकरि इकतीस भंग हो हैं। ऐसैं प्रत्येकपद पिंडपदनिकरि भंग कहे। प्रत्येकपदका नाम असदृशपद भी है जातैं इनके प्रतिपक्षीकरि समानता नाहीं है अर पिंडपदका नाम सदृशपद भी है जातैं इनके प्रतिपक्षीकरि समानता पाइए है ॥ ८६१ ॥ आगैं इस ही कथनकौं गाथानिकरि कहैं हैं—

तेरिच्छा हु सरित्था अविरददेसाण खयियसम्मत्तं।
मोत्तूण संभवं पडि खयिगस्सवि आणए भंगे ॥ ८६२ ॥

तिर्यंचि हि सदृशानि अविरतदेशयोः क्षायिकसम्यक्त्वं।
मुक्त्वा संभवं प्रति क्षायिकस्यापि आनयेद्भंगान् ॥ ८६२ ॥

जी० प्र०—गुणस्थानोक्तपिंडभावान् खलु तिर्यग्रूपेण रचयित्वा तत्रासंयतदेशसंयतयोः क्षायिकसम्यक्त्वं पृथक्कथनात्त्यक्त्वा तत्संभवद्गुणस्थानान्याश्रित्य क्षायिकसम्यक्त्वस्यापि भंगानानयेत् ॥ ८६२ ॥

स० चं०—गुणस्थाननिविषैं कहे जे पिंडपदरूप भाव तिनकौं तिर्यक् कहिए बराबरि रचनारूपकरि तहां असंयत अर देशसंयतविषैं क्षायिकसम्यक्त्वका जुदा ही कथन है तातैं तहां क्षायिकसम्यक्त्वकौं छोडि औरनिविषैं गुणस्थाननिका आश्रयकरि यथासंभव भंग जानने। बहुरि तहां क्षायिकसम्यक्त्वके भी यथा संभव जुदे भंग जानने ॥ ८६२ ॥ १०५५

उड्ढतिरिच्छपदाणं दव्वसमासेण होदि सव्वधणं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सव्वपदाणं भंगे मिच्छादिगुणेसु णियमेण ॥ ८६३ ॥

ऊर्ध्वतिर्यक्पदानां द्रव्यसमासेन भवति सर्वधनं ।
सर्वपदानां भंगे मिथ्यादिगुणेषु नियमेन ॥ ८६३ ॥

जी० प्र०—सर्वपदभंगानयने मिथ्यादृष्ट्यादिगुणस्थानेषु ऊर्ध्वपदधनं तिर्यक्पदधनं चानीय तयोः समासेन तत्तद्गुणस्थानस्य सर्वधनं भवति नियमेन ॥ ८६३ ॥

स० चं०—सर्वपदभंगनिके जाननेके अर्थि मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननिविषैं ऊर्ध्वरूप जिनकी रचना कही असे प्रत्येकपद तिनका भंग रूप धन अर तिर्यगरूप जिनकी रचना कही ऐसे पिंडपद तिनका भंगरूप धन तिन दोऊनिकौं जुदे जुदे जानि तिन दोऊनिका समास कहिए मिलावना तिसकरि तिस गुणस्थानका सर्वपदनिके भंग रूप सर्व धन हो है नियमकरि ॥ ८६३ ॥

मिच्छादीणं दुति दुसु अपुव्वअणियट्टिखवगसमगेसु ।
सुहुमुवसमगे संते सेसे पत्तेयपदसंखा ॥ ८६४ ॥
पण्णर सोलट्ठारस वीसुगुवीसं च वीसमुगुवीसं ।
इगिवीस वीसचउद्दसतेरसपणगं जहाकमसो ॥ ८६५ ॥

मिथ्यादीनां द्वित्रिषु द्वयोरपूर्वानिवृत्तिक्षपकोपशमकेषु ।
सूक्ष्मोपशमके शांते शेषे प्रत्येकपदसंख्या ॥ ८६४ ॥
पंचदश षोडशाष्टादश विंशैकोनविंशं च विंशमेकोनविंशं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकविंशं विंशचतुर्दशत्रयोदशपंचकं यथाक्रमशः ॥ ८६५ ॥ युग्मं ।

जी० प्र०—तानि प्रत्येकपदानि क्रमेण मिथ्यादृष्ट्यादिद्वये प्रत्येकं पंचदश । मिश्रादित्रये षोडश । प्रमत्तादिद्वयेऽष्टादश । उभयश्रेण्यपूर्वकरणादिद्वये विंशतिरेकान्नविंशतिः । उपशमकसूक्ष्मसांपराये विंशतिः । उपशांतकषाये एकान्नविंशतिः । क्षपकसूक्ष्मसांपराये एकविंशतिः । क्षीणकषाये विंशतिः । सयोगे चतुर्दश । अयोगे त्रयोदश । सिद्धे पंच ॥ ८६४–८६५ ॥

स० चं०—ते प्रत्येकपद क्रमकरि मिथ्यादृष्टि आदि दोयविषैं पंद्रह मिश्रादि तीनविषैं सोलह प्रमत्तादि दोयविषैं अठारह दोऊ श्रेणीके अपूर्वकरणादिक दोयविषैं वीस अर उगणीस अर उपशमक सूक्ष्मसांपरायविषैं बीस उपशांतकषायविषैं उगणीस क्षपक सूक्ष्मसांपरायविषैं इकईस क्षीणकषायविषैं बीस सयोगीविषैं चौदह अयोगीविषैं तेरह सिद्धविषैं पांच जानने ॥ ८६४–८६५ ॥

मिच्छाइट्ठिप्पहुदिं खीणकसाओत्ति सव्वपदभंगा ।
पण्णट्ठिं च सहस्सा पंचसया होंति छत्तीसा ॥ ८६६ ॥

मिथ्यादृष्टिप्रभृति क्षीणकषाय इति सर्वपदभंगाः ।
पंचषष्टिश्च सहस्राणि पंचशतानि भवंति षट्त्रिंशत् ॥ ८६६ ॥

जी० प्र०—मिथ्यादृष्ट्यादिक्षीणकषायांत सर्वपदभंगा उच्यंते । तत्र पंचषष्टिसहस्राणि पंचशतानि षट्त्रिंशच्च गुण्यं भवति ॥ ८६६ ॥

स० चं०—मिथ्यादृष्ट्यादि क्षीणकषायपर्यंत सर्व पद भंग कहिए है तहां पैंसठि हजार पांचसै छत्तीस गुण्य जानना इस प्रमाणहीका नाम पण्णट्ठी है । सो इस गुण्यकौं आगैं कहिए है गुणाकार तिसकरि गुणिए ॥ ८६६ ॥

तग्गुणगारा कमसो पण णउदेयत्तरीसयाण दलं ।
ऊणट्ठारसयाणं दलं तु सत्ताहियसोलसयं ॥ ८६७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तद्गुणकाराः क्रमशः पंच नवत्येकसप्ततिशतानां दलं।
एकोनमष्टादशशतानां दलं तु सप्ताधिकषोडशशतं ॥ ८६७ ॥

जी० प्र०—तस्य गुण्यस्य गुणकाराः क्रमेण मिथ्यादृष्टौ सप्तसहस्रैकशतपंचनवत्यर्द्धं, तु—पुनः सासादने रूपोनाष्टादशशतार्धं। मिश्रे सप्ताग्रषोडशशतानि ॥ ८६७ ॥

स० चं०—तिस गुण्यके गुणकार क्रम मिथ्यादृष्टिविषैं इकहत्तरिसै पिच्याणवैका आधा प्रमाण है। सासादनविषैं एक घाटि अठारहसैका आधा प्रमाण है। मिश्रविषै सात अधिक सोलहसै है ॥ ८६७ ॥

तेवत्तरिं सयाइं सत्तावट्ठी य अविरदे सम्मे।
सोलस चेव सयाइं चउसट्ठी खयियसम्मस्स ॥ ८६८ ॥

त्रिसप्ततिशतानि सप्तषष्टिश्च अविरते सम्ये।
षोडश चैव शतानि चतुःषष्टिः क्षायिकसम्यस्य ॥ ८६८ ॥

जी० प्र०—असंयतसम्यग्दृष्टौ सप्तषष्ट्यधिकत्रिशताग्रसप्तसहस्री। तत्क्षायिकसम्यक्त्वे चतुःषष्ट्यग्रषोडशशतानि ॥ ८६८ ॥

स० चं०—असंयत सम्यग्दृष्टीविषै तेहत्तरिसै सडसठि है तहां ही क्षायिकसम्यक्त्वविषैं सोलहसै चौसठि है ८६८

ऊणत्तीससयाइं एक्काणउदी य देसविरदम्मि।
छावत्तरि पंचसया खइयणरे णत्थि तिरियम्मि ॥ ८६९ ॥

एकोनत्रिंशच्छतानि एकनवतिश्च देशविरते।
षट्सप्ततिः पंचशतानि क्षायिकनरे नास्ति तिरश्चि ॥ ८६९ ॥

जी० प्र०—देशसंयते एकनवत्यग्रनवशताद्विसहस्री। तत्क्षायिकसम्यग्दृष्टिमनुष्ये षट्सप्तत्यग्रपंचशतानि। तिरश्चि क्षायिकसम्यग्दृष्टिर्देशसंयतो नेति गुण्यगुणकारौ न स्तः ॥ ८६९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—देशसंयतविषैं गुणतीससै इक्याणवै है। तहां ही क्षायिक सम्यग्दृष्टी मनुष्यविषैं पांचसै छिहंतरि है। तहां तिर्यंचविषैं गुण्य गुणकार नाही हैं। जातैं क्षायिकसम्यक्त्वी तिर्यंच देशव्रती न होइ॥ ८६९॥

इगिदालं च सयाइं चउदालं च य पमत्त इदरे य।
पुव्वुवसमगे वेदाणियट्टिभागे सहस्समट्ठूणं॥ ८७०॥

एकचत्वारिंशच्च शतानि चतुश्चत्वारिंशच्च च प्रमत्ते इतरस्मिंश्च।
अपूर्वोपशमके वेदानिवृत्तिभागे सहस्रमष्टोनं॥ ८७०॥

जी० प्र०—प्रमत्ते अप्रमत्ते च चतुश्चत्वारिंशदग्रैकशतचतुःसहस्री। उपशमकेष्वपूर्वकरणे सवेदानिवृत्तिकरणे च द्वानवत्यग्रनवशती॥ ८७०॥

स० चं०—प्रमत्त वा अप्रमत्तविषैं इकतालीससै चवालीस है। उपशमश्रेणीविषै अपूर्वकरण वा सवेद अनिवृत्तिकरणविषै आठ घाटि एक हजार है॥ ८७०॥

अडसट्ठी एक्कसयं कसायभागम्मि सुहुमगे संते।
अडदालं चउवीसं खवगेसु जहाकमं वोच्छं॥ ८७१॥

अष्टषष्टिः एकशतं कषायभागे सूक्ष्मके शांते।
अष्टचत्वारिंशच्चतुर्विंशं क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि॥ ८७१॥

जी० प्र०—कषायानिवृत्तिभागेष्वष्टषष्ट्यग्रशतं। सूक्ष्मसांपरायेऽष्टचत्वारिंशत्। उपशांतकषाये चतुर्विंशतिः। क्षपकेषु यथाक्रमं वक्ष्यामि॥ ८७१॥

स० चं०—बहुरि कषाय सहित वेदरहित अनिवृत्ति करणके भागविषैं एकसौ अडसठि हैं। सूक्ष्मसांपरायविषैं अडतालीस हैं। उपशांत कषायविषैं चौबीस हैं। अब क्षपक श्रेणीविषैं यथाक्रम कहै हैं॥ ८७१॥

अडदालं चारिसयापुव्वे अणियट्टिवेदभागे य।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सीदी कसायभागे तत्तो बत्तीस सोलं तु ॥ ८७२ ॥

अष्टचत्वारिंशत् चतुःशतान्यपूर्वे अनिवृत्तिवेदभागे च ।
अशीतिः कषायभागे ततो द्वात्रिंशत् षोडश तु ॥ ८७२ ॥

जी० प्र०—अपूर्वकरणेऽनिवृत्तिसवेदभागे चाष्टाचत्वारिंशदग्रचतुःशती । कषायभागेऽशीतिः । तत उपरि सूक्ष्मसांपराये द्वात्रिंशत् । क्षीणकषाये तु षोडश ॥ ८७२ ॥

स० चं०—अपूर्वकरण वा अनिवृत्तिकरणका सवेद भागविषैं च्यारिसै अडतालीस है । अनिवृत्ति करणका कषाय भागविषैं असी हैं । तहाँतैं ऊपरि सूक्ष्मसांपरायविषैं बत्तीस हैं । क्षीणकषायविषै सोलह है । ऐसैं ये पण्णट्ठीके गुणकार कहे ॥ ८७२ ॥

जोगिम्मि अजोग्गिम्मि य बेसदछप्पण्णयाण गुणगारा ।
चउसट्ठी बत्तीसा गुणगुणिदेक्कूणया सव्वे ॥ ८७३ ॥

योगिन्ययोगिनि च द्विशतषट्पंचाशतां गुणकाराः ।
चतुःषष्टिः द्वात्रिंशत् गुण्यगुणिते एकोनकाः सर्वे ॥ ८७३ ॥

जी० प्र०—सयोगे वेसदछप्पण्णयास्स गुणकाराः चतुःषष्टिः । अयोगे द्वात्रिंशत् । तत्तद्गुणकारेण गुण्ये गुणिते समुत्पन्नराशयः सर्वे एकोनाः कर्तव्याः ॥ ८७३ ॥

स० चं०—सयोगी अयोगीविषैं वेसदछप्पण्ण कहिए दोयसै छप्पन गुण्य जानना । तिसके गुणकार सयोगीविषै चौसठि अयोगीविषैं बत्तीस हैं । ऐसैं गुणकारकरि गुण्यकौं गुणै जो जो प्रमाण आवै तिस तिसविषै सर्वत्र एक एक घटाय देना ऐसैं करतैं सर्वपद भंगनिका प्रमाण आवै है ॥ ८७३ ॥

सिद्धेसु सुद्धभंगा एक्कत्तीसा हवंति णियमेण ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सव्वपदं पडि भंगा असहायपरक्कमुद्दिट्ठा ॥ ८७४ ॥

सिद्धेषु शुद्धभंगा एकत्रिंशत् भवंति नियमेन ।
सर्वपद प्रति भगा असहायपराक्रमोद्दिष्टाः ॥ ८७४ ॥

जी० प्र०—सिद्धेषु शुद्धाः गुण्यगुणाकारभेदरहिता भंगा नियमेनैकत्रिंशद्भवंति इत्यसहायपराक्रमेण सर्वपदं प्रति भंगा उद्दिष्टाः ॥ ८७४ ॥

---

१ एवं सर्वपदं प्रति ऊर्ध्वतिर्यक्पदगुण्यगुणकाराणां गुणस्थाने संदृष्टिः—मिथ्या-ऊर्ध्व १५ । तिर्य ५ । गुण्य ६५ = । गुण ७१९५ । ऋ १ । सासा ऊ १५ । ति ४ । गुण्य ६५ = । गु १७९९ । ऋ १ । मिश्र ऊ १६ । ति ४ । गुण्य ६५ = । गुण १६०७ ऋ १ । असं ऊ १६ । ति ५ । गु ६५ = । गुण ७३६७ । ऋ १ । क्षा–असं–गुण्य ६५ = । गुण १६६४ । ऋ १ । देश ऊ १६ । ति ५ । गुण्य ६५ = गुण २६११ । ऋ १ । क्षा गुण्य ६५ = । गुण ५७६ । ऋ १ । प्रमत्त ऊ १८ । ति ४ गुण्य ६५ = गुण ४१४४ । ऋ १ । अप्र ऊ–पद १८ । ति–पद ४। गुण्य ६५ = । गुण ४१४४ । ऋ १ । अपूर्व उप–ऊ १९ । ति ३ । गुण्य ६५ = । गुण ९९२ । ऋ १ । अनिवृत्तिकरणोपशम ऊ १९। ति ३। गुण्य ६५ = । गु ९९२ । ऋ १ । कषायानिवृत्त्युपशम ऊ १९। ति २। गुण्य ६५ = । गुण १६८। ऋ १। सूक्ष्मसांपरायोपशमकस्य ऊ २० । ति १ । गु ६५ = । गुण ४८ । ऋ १ । उपशांत ऊ १९ । ति १ । गुण्य ६५ = । गुण २४ । ऋ १ । अपूर्व–क्षा ऊ २० । ति २। गु ६५ = । गु ४४८ । ऋ १ । सवेदानिवृत्तिक्षपक ऊ २० । ति २ । गुण्य ६५ = । गु ४४८ । ऋ १ । कषायानिवृत्तिक्षपक ऊ २० । ति १ । गुण्य ६५ = । गु ८० । सूक्ष्मसांपरायक्षप–ऊ २१ । गुण्य ६५ = । गुण ३२ । ऋ १ । क्षीण ऊ २० । गुण्य ६५ । गु १६ । ऋ १ । सयोग ऊ १४ । गुण्य २५६ । गुण ६४ । ऋ १ । अयोगि स १३ । गुण्य २५६ गुण ३२ । ऋ १ । सिद्धपरमेष्ठि ऊ ५ । शुद्धभंग ३१ । अधिकः पाठ ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०——सिद्धनिविषै शुद्ध गुण्य गुणकारके भेदरहित नियमकरि इकतीस ही सर्वपद भंग हैं ऐसैं सहाय-रहित पराक्रम शक्तिका धारक वर्धमानस्वामीकरि सर्व प्रति भंग कहे हैं ॥ ८७४ ॥

आदेसेवि य एवं संभवभावेहिं ठाणभंगाणि ।
पदभंगाणि य कमसो अव्वामोहेण आणेज्जो ॥ ८७५ ॥

आदेशेऽपि च एवं संभवभावैः स्थानभंगाः ।
पदभंगाश्च क्रमशः अव्यामोहेन आनेयाः ॥ ८७५ ॥

जी० प्र०——मार्गणास्थानेऽप्येवं संभवद्भिर्भावैरव्यामोहेन स्थानभंगाः पदभंगाश्च क्रमश आनेतव्याः ॥ ८७५ ॥ अथैकांतमतभेदानाह——

स० चं०——जैसे गुणस्थाननिविषैं कहे ऐसैं ही यथासंभव भावनिकरि आदेश जो मार्गणा स्थान तिसविषै स्थानभंग अर पदभंग क्रमतैं मोहरहित सावधान होइ यथासंभव जानने ॥ ८७५ ॥ आगे जिनविषै सर्वथा एक नयका ग्रहण पाइए ऐसै एकांतमत तिनके भेद कहै हैं——

असिदिसदं किरियाणं अक्किरियाणं च आहु चुलसीदी ।
सत्तट्ठण्णाणीणं वेणयियाणं तु बत्तीसं ॥ ७६ ॥

अशीतिशतं क्रियाणामक्रियाणां चाहुः चतुरशीतिः ।
सप्तषष्टिरज्ञानिनां वैनयिकानां तु द्वात्रिंशत् ॥ ८७६ ॥

जी० प्र०——क्रियावादानामशीतिशतमाहुः, अक्रियावादानां चतुरशीतिं, अज्ञानवादानां सप्तषष्टिं, वैनयिकवादानां तु द्वात्रिंशं ॥ ८७६ ॥ तत्र क्रियावादानां मूलभंगानाह——

स० चं०——क्रियावादीनिके एकसो असी अक्रियावादीनिके चौरासी अज्ञानवादीनिके सडसठि वैनायिकवादीनिके वत्तीस भेद हैं ॥ ८७६ ॥ तहां क्रियावादीनिके मूल भंग कहैं हैं——

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अत्थि सदो परदोवि य णिच्चाणिच्चत्तणेण य णवत्था ।
कालीसरप्पणियदिसहावेहि य ते हि भंगा हु ॥ ७७ ॥

अस्ति स्वतः परतोऽपि च नित्यानित्यत्वेन च नवार्थाः ।
कालेश्वरात्मनियतिस्वभावैश्च ते हि भंगा हि ॥ ७७ ॥

जी० प्र०—प्रथमतः अस्तिपदं लिखेत् । तस्योपरि स्वतः परतः नित्यत्वेन अनित्यत्वेन इति चत्वारि पदानि लिखेत् । तेषामुपरि जीवः अजीवः पुण्यं पापं आस्रवः संवरः निर्जरा बंधः मोक्षः इति नव पदानि लिखेत् । तदुपरि काल ईश्वर आत्मा नियतिः स्वभाव इति पंच पदानि लिखेत् । तैः खल्वक्षसंचारक्रमेण भंगा उच्यंते तद्यथा—

स्वतः सन् जीवः कालेनास्ति क्रियते । परतो जीवः कालेनास्ति क्रियते । नित्यत्वेन जीवः कालेनास्ति क्रियते । अनित्यत्वेन जीवः कालेनास्ति क्रियते । तथा अजीवादिपदार्थं प्रति चत्वारश्चत्वारो भूत्वा कालेनैकेन सह षट्त्रिंशत् । एवमीश्वरादिपदैरपि षट्त्रिंशत् षट्त्रिंशद् भूत्वाऽशीत्यग्रशतं क्रियावादभंगाः स्युः ॥ ८७७ ॥

स० चं०—प्रथम तौ अस्ति ऐसैं एकपद लिखना । ताके ऊपरि आपतैं परतैं नित्यपनेकरि अनित्यपनेकरि ऐसे च्यारिपद लिखने । तिनके ऊपरि जीव अजीव पुण्य पाप आस्रव संवर निर्जरा बंध मोक्ष ऐसे नव पद लिखने । तिनके ऊपरि काल ईश्वर आत्मा नियति स्वभाव ऐसे पंचपद लिखने । तिनिविषै जैसैं जीवकांडका गुणस्थानाधिकारविषैं प्रमादनिका भंग करतैं अक्षसंचार विधान कह्या था तैसैं इन पदनिके बदलनेतैं अक्षसंचारकरि एक च्यारि नव पांचके परस्पर गुणनरूप एकसो अस्सी भंग हो हैं सोई कहिए है—

१

काल । ईश्वर । आत्म । निय । स्वभा ५
जी अ पु पा आ सं नि बं मो ९
स्वतः परतः नित्यत्वेन अनित्यत्वेन ४
अस्ति १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आपतैं जीव कालकरि अस्ति करिए है परतैं जीव कालकरि अस्ति करिए है नित्यपनेकरि जीव कालकरि अस्ति करिए है अनित्यपनैं करि जीव कालकरि अस्ति करिए है ऐसैं च्यारि भंग भए। बहुरि जीवकी जायगी क्रमतैं अजीवादिक कहैं च्यारि च्यारि भंग होंइ तहां नव पदार्थके बदलनेतैं एक कालसहित छत्तीस भंग भए। बहुरि कालकी जायगा क्रमतैं ईश्वरादिक कहैं छत्तीस छत्तीस भंग होंइ। तहां पंचपदके बदलनेतैं एकसो असी क्रियावादनिके भंग हो हैं॥ ८७७॥

अत्थि सदो परदोवि य णिच्चाणिच्चत्तणेण य णवत्था।
एसिं अत्था सुगमा कालादीणं तु वोच्छामि॥ ८७८॥

अस्ति स्वतः परतोऽपि च नित्यानित्यत्वेन च नवार्थाः।
एषामर्थाः सुगमाः कालादीनां तु वक्ष्यामि॥ ८७८॥

जी० प्र०—अस्ति स्वतः परतः नित्यत्वेनानित्यत्वेन नव पदार्थाश्चेत्येषां चतुर्दशानामर्थाः सुगमाः। तु–पुनः कालवादादीनामर्थं क्रमेण वक्ष्यामि॥ ८७८॥

स० चं०—अस्ति आपतैं परतैं नित्यपनेकरि अनित्यपनेकरि नव पदार्थ इनका अर्थ तो सुगम है। अस्तिका तो है ऐसा अर्थ है सो क्रियावादी वस्तुकूं अस्तिरूप ही मानिकरि क्रियाका स्थापन करे है। तहां आपतैं कहिए अपने स्वरूप चतुष्टय थकी अस्ति मानै है। अर परतैं कहिए परचतुष्टयतैं भी अस्तिरूप ही मानै है। नित्यपनेकरि कहिए शाश्वता अस्तिरूप मानै है। अनित्यपनै कहिए क्षणिक अस्तिरूप मानै है। ऐसैं जीव अजीव पुण्य पाप आस्रव बंध संवर निर्जरा मोक्षरूप नव पदार्थनिकौं मानै हैं सो इन चौदहका तौ अर्थ सुगम है तातैं इनका विशेष न कह्या। बहुरि कालवादादिकनिका अर्थ क्रमकरि कहों हौं—

कालो सव्वं जणयदि कालो सव्वं विणस्सदे भूदं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जागत्ति हि सुत्तेसु वि ण सक्कदे वंचिदुं कालो ॥ ८७९ ॥

कालः सर्वं जनयति कालः सर्वं विनाशयाति भूतं ।
जागर्ति हि सुप्तेष्वपि न शक्यते वंचितुं कालः ॥ ८७१ ॥

जी० प्र०—काल एव सर्वं जनयति । काल एव सर्वं विनाशयति । निद्रितेष्वपि काल एव स्फुटं जागर्ति । कालो वंचितुं न शक्यत एवेति कालवादार्थः ॥ ८७९ ॥

स० चं०—काल ही सर्वको उपजावै है काल ही सर्वको विनाशै है । सूता प्राणीनिविषैं भी काल ही प्रगट जागै है कालके ठिगनेकौं वंचनेकौं समर्थ न होइए है । ऐसैं कालहीकरि सवकौं मानना सो कालवादका अर्थ जानना ॥ ८७९ ॥

अण्णाणी हु अणीसो अप्पा तस्स य सुहं च दुक्खं च ।
सग्गं णिरयं गमणं सव्वं ईसरकयं होदि ॥ ८० ॥

अज्ञानी ह्यनीश आत्मा तस्य च सुखं च दुःखं च ।
स्वर्गं निरयं गमनं सर्वमीश्वरकृतं भवति ॥ ८८० ॥

जी० प्र०—आत्मा अज्ञानी अनाथश्च स्फुटं । तस्यात्मनः सुखदुःखस्वर्गनरकगमनागमनादि सर्वमीश्वरकृतमिति ईश्वरवादार्थः ॥ ८८० ॥

स० चं०—आत्मा अज्ञानी ज्ञानरहित है बहुरि अनीश कहिए अनाथ कछू करनेकौं समर्थ नाहीं ऐसा है । तिस आत्माके सुख दुःख स्वर्ग नरकादिकविषैं गमनागमनादिक सर्व ईश्वरका कीया हो है । ऐसैं ईश्वरकरि कीया सवकौं मानना सोई ईश्वरवादका अर्थ है ॥ ८८० ॥

एक्को चेव महप्पा पुरिसो देवो य सव्ववावी य । १०६५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सव्वंगणिगूढोवि य सचेयणो णिग्गुणो परमो ॥ ८१ ॥

एकश्चैव महात्मा पुरुषो देवश्च सर्वव्यापी च।
सर्वांगनिगूढोऽपि च सचेतनो निर्गुणः परमः ॥ ८८१ ॥

जी० प्र०—एक एव महात्मा पुरुषो देवः सर्वव्यापी सर्वांगनिगूढः सचेतनो निर्गुणः परमश्चेत्यात्मवादार्थः ॥ ८८१ ॥

स० चं०—एक ही महात्मा है। सोई पुरुष है। देव है। सर्वविषै व्यापक है। सर्वांगपनै निगूढ कहिए अगम्य है। चेतना सहित है। निर्गुण है। परम उत्कृष्ट है। ऐसैं एक आत्माहीकरि सबकौं मानना सो आत्मवादका अर्थ है ॥ ८८१ ॥

जत्तु जदा जेण जहा जस्स य णियमेण होदि तत्तु तदा।
तेण तहा तस्स हवे इदि वादो णियदिवादो दु ॥ ८२ ॥

यत्तु यदा येन यथा यस्य च नियमेन भवति तत्तु तदा।
तेन तथा तस्य भवेदिति वादो नियतिवादस्तु ॥ ८८२ ॥

जी० प्र०—यत्तु यदा येन यथा यस्य नियमेन भवति तत्तु तदा तेन तथा तस्यैव भवेदिति नियतिवादार्थः ॥ ८८२ ॥

स० चं०—जो जिसकाल जिहिकरि जैसैं जिसकैं नियमकरि है सो तिसकाल तीहिकरि तैसैं तिसहीकैं हो है ऐसा नियमकरि ही सबकौं मानना सो नियतिवादका अर्थ है ॥ ८८२ ॥

को करइ कंटयाणं तिक्खत्तं मियविहंगमादीणं।
विविहत्तं तु सहाओ इदि सव्वंपि य सहाओत्ति ॥ ८३ ॥ १०६६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कः करोति कंटकानां तीक्ष्णत्वं मृगविहंगमादीनां ।
विविधत्वं तु स्वभाव इति सर्वमपि च स्वभाव इति ॥ ८८३ ॥

जी० प्र०—को नाम कंटकादीनां तीक्ष्णत्वं मृगविहंगमादीनां च विविधत्वं करोतीति प्रश्ने स्वभाव एवेति सर्वं स्वभाववादार्थः ॥ ८८३ ॥ इति क्रियावादा उक्ताः। अथाक्रियावादानां मूलभंगानाह—

स० चं०—कांटानैं आदि देकरि जे तीखे वस्तु हैं तिनकैं कौंन तीक्ष्णपना करै है ? बहुरि मृग अर विहंगी पक्षी इत्यादिकनिकैं नानाप्रकारपना पाइए है सो कौंन करै है ? ऐसा प्रश्न होतैं ऐसा ही उत्तर कहै कि—स्वभाव ही है ऐसैं सबकौं कारण विना स्वभावहीकरि मानना सो स्वभाववादका अर्थ है । ऐसैं कालादिकरि पूर्वोक्तप्रकार एकांतग्रहणतैं क्रियावाद हो है ॥ ८८३ ॥ आगैं अक्रियावादनिके भंग कहिए है—

णत्थि सदो परदोवि य सत्तपयत्था य पुण्णपाऊणा ।
कालादियादिभंगा सत्तरि चदुपंतिसंजादा ॥ ८८४ ॥

नास्ति स्वतः परतोऽपि च सप्तपदार्थाश्च पुण्यपापोनाः ।
कालादिकादिभंगाः सप्ततिश्चतुःपंक्तिसंजाताः ॥ ८८४ ॥

जी० प्र०—नास्ति । तस्योपरि स्वतः परतश्च । तदुपरि पुण्यपापोनपदार्थाः सप्त । तदुपरि कालादिकाः पंचेति चतसृषु पंक्तिषु प्राग्वत्संजाता भंगाः स्वतो जीवः कालेन नास्ति क्रियते इत्यादयः सप्ततिः ॥ ८८४ ॥

स० चं०—प्रथम नास्ति ऐसा पद लिखना ताके ऊपरि आपतैं परतैं ऐसैं दोय पद लिखने । तिनके ऊपरि

१

का । ई । आ । नि । स्व । ५ ।
जी । अ । आ । सं । नि । बं । मो । ७ ।
स्वतः परतः २
नास्ति १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पुण्य पाप विना सात पदार्थ लिखने। तिनके ऊपरि कालनैं आदि देकरि पंच पद लिखने। ऐसैं च्यारि पंक्ति करनी तिनविषैं पूर्वोक्त अक्षसंचार विधानकरि भंग हो हैं। आपतैं जीव कालकरि नास्ति करिए है परतैं जीव कालकरि नास्ति करिए है। ऐसैं ही जीवकी जायगा अजीवादिक कहैं चौदह भंग एक कालकरि भए। बहुरि कालकी जायगा ईश्वर आदि कहैं सत्तरि भंग हो हैं। भावार्थ ऐसा कि—अक्रियावादी वस्तुकौं नास्तिरूप मानि क्रियाका स्थापन नाहीं करै हैं॥ ८८४॥

णत्थि य सत्तपदत्था णियदीदो कालदो तिपंतिभवा।
चोद्दस इदि णत्थित्ते अक्किरियाणं च चुलसीदी॥ ८५॥

नास्ति च सप्तपदार्था नियतितः कालतस्त्रिपंक्तिभवाः।
चतुर्दश इति नास्तित्वे अक्रियाणां च चतुरशीतिः॥ ८८५॥

जी० प्र०—नास्तित्वं सप्तपदार्थान् नियतिकालौ चोपर्युपरिपंक्तीः कृत्वा जीवो नियतितो नास्ति क्रियते इत्यादयश्चतुर्दश स्युः। इत्येवमक्रियावादाश्चतुरशीतिः॥ ८८५॥ अज्ञानवादस्य भेदानाह—

स० चं०—प्रथम नास्तित्व ऐसा पद लिखना। ताके ऊपरि सात पदार्थ लिखने। तिनके ऊपरि नियति काल ऐसैं दोय पद लिखने। तहां अक्षसंचारकरि जीव नियतितैं नास्ति करिए है। जीव कालतैं नास्ति करिए है। बहुरि जीवकी जायगा अजीवादिक कहैं चौदह भेद हो हैं इहां अक्रियावादका जैसैं प्रकार है तैसैं सत्तरि भेद जुदे जुदे कहे मिलिकरि अक्रियावादनिके चौरासी भेद भए॥ ८८५॥ आगैं अज्ञानवादके भेद कहैं हैं—

१

नियति १ काल २
जी। अ। आ। सं। नि। बं। मो। ७।
नास्ति १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

को जाणइ णवभावे सत्तमसत्तं दयं अवच्चामिदि ।
अवयणजुद सत्ततयं इदि भंगा होंति तेसट्ठी ॥ ८६ ॥

को जानाति नवभावेषु सत्त्वमसत्त्वं द्वयमवाच्यमिति ।
अवचनयुतं सप्ततयमिति भंगा भवंति त्रिषष्टिः ॥८८६ ॥

जी० प्र०—जीवादिनवपदार्थेष्वेकैकस्य अस्त्यादिसप्तभंगेष्वेकैकेन जीवोऽस्तीति को जानाति ? जीवो नास्तीति को जानाति ? इत्याद्यालापे कृते त्रिषष्टिर्भवंति ॥ ८८६ ॥ पुनः—

स० चं०—जीवादिक नवपदार्थनिविषैं एक एकका सप्तभंग अपेक्षा जानना । जीव अस्ति ऐसा कौन जानैं है ? जीव नास्ति ऐसा कौंन जानैं है । जीव अस्ति नास्ति ऐसा कौन जानै है । जीव अवक्तव्य ऐसा कौन जानै है । जीव अस्ति अवक्तव्य ऐसा कौन जानै है । जीव नास्ति अवक्तव्य ऐसा कौन जानै है । जीव अस्ति नास्ति अवक्तव्य ऐसा कौंन जानैं है । ऐसैं ही जीवकी जायगा अजीवादिक कहैं तरेसठि भेद हो हैं ॥ ८८६ ॥

को जाणइ सत्तचऊ भावं सुद्धं खु दोण्णिपंतिभवा ।
चत्तारि होंति एवं अण्णाणीणं तु सत्तट्ठी ॥ ८७ ॥

को जानाति सत्त्वचतुष्कं भावं शुद्धं खलु द्विपंक्तिभवाः ।
चत्वारो भवंति एवमज्ञानिनां तु सप्तषष्टिः ॥ ८८७ ॥

जी० प्र०—शुद्धपदार्था इति लिखित्वा तदुपरि अस्ति, नास्ति, अस्तिनास्ति, अवक्तव्यः इति चतुष्कं लिखित्वा एतत्पंक्तिद्वयसंभवाः

१

अस्ति । नास्ति । अस्तिनास्ति । अवक्तव्य ४
शुद्धपदार्थः १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

खलु भंगाः शुद्धपदार्थोऽस्तीति को जानीते ? इत्यादयश्चत्वारो भवंति। एवं मिलित्वा अज्ञानवादाः सप्तषष्टिः ॥ ८८७ ॥ वैनयिकवादानां मूलभंगानाह—

स॰ चं॰—प्रथम शुद्धपदार्थ ऐसा लिखिए ताके ऊपरि अस्ति आदि च्यारि लिखिए। इन दोऊ पंक्तिनिकरि उपजे च्यारि भंग हो हैं। शुद्ध पदार्थ अस्ति ऐसा कौंन जानै है। शुद्धपदार्थ नास्ति ऐसा कौंन जानै है। शुद्ध पदार्थ अस्ति नास्ति ऐसा कौन जानै है। शुद्धपदार्थ अवक्तव्य ऐसा कौंन जानै है। ऐसें च्यारि तौ ए अर पूर्वोक्त तरेसठि मिलिकरि अज्ञानवाद सडसठि हो हैं। भावार्थ—अज्ञानवादवाले वस्तुका न जानना ही मानै हैं ॥ ८८७ ॥ आगैं वैनयिकवादनिके मूलभंग कहैं हैं—

मणवयणकायदाणगविणवो सुरणिवइणाणिजादिवुड्ढे।
बाले मादुपिदुम्मि च कायव्वो चेदि अट्ठचऊ ॥ ८८ ॥

मनोवचनकायदानविनयः सुरनृपतिज्ञानियतिवृद्धे।
बाले मातृपित्रोश्च कर्तव्यश्चेत्यष्टचतुष्कं ॥ ८८८ ॥

जी॰ प्र॰—देव-नृपति-ज्ञानि-यति-वृद्ध-बाल-मातृ-पितृष्वष्टसु मनोवचनकायदानविनयाश्चत्वारः कर्तव्याश्चेति द्वात्रिंशद्वैनयिकवादाः स्युः ॥ ८८८ ॥

स॰ चं॰—देव राजा ज्ञानी जती बूढा बालक माता पिता इन आठनिका मनकरि वचनकरि कायकरि दान देनेकरि च्यारिप्रकार विनय करना ऐसैं वैनयिकवाद बत्तीस हैं। भावार्थ—विनयवादी गुण अगुणकी परीक्षारहित विनयहीतैं सिद्धि मानै है ॥ ८८८ ॥

सच्छंददिट्ठीहिं वियप्पियाणि तेसट्ठिजुत्ताणि सयाणि तिण्णि।
पाखंडिणं वाउलकारणाणि अण्णाणिचित्ताणि हरंति ताणि ॥८९॥ १०७०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्वच्छंददृष्टिभिर्विकल्पितानि त्रिषष्टियुक्तानि शतानि त्रीणि।
पाखंडिनां व्याकुलकारणानि अज्ञानिचित्तानि हरंति तानि ॥ ८८९ ॥

जी० प्र०—स्वच्छंददृष्टिभिर्विकल्पितानि त्रिषष्टियुतत्रिशतानि पाखंडिनां व्याकुलकारणवचनानि तान्यज्ञानिचित्तानि हरंति मिथ्यात्वोदयात् ॥८८९॥ पुनः—

स० चं०—स्वच्छंद मनकल्पित है दृष्टि श्रद्धान जिनिका तिनकरि विकल्पनारूप कीए ऐसे तरेसठि सहित तीनसै पाखंडीनिके जीवनिकूं व्याकुलताके कारणभूत वचन ते मिथ्यात्वके उदयतैं अज्ञानी जीवनिके चित्तकूं हरैं हैं ॥ ८८९ ॥ आगैं और भी एकांतवाद कहै हैं—

आलसड्ढो णिरुच्छाहो फलं किंचिं ण भुंजदे।
थणक्खीरादिपाणं वा पउरुसेण विणा ण हि ॥ ९० ॥

आलस्याढ्यो निरुत्साहः फलं किंचिन्न भुंक्ते।
स्तनक्षीरादिपानं वा पौरुषेण विना नहि ॥ ८९० ॥

जी० प्र०—आलस्याढ्यो निरुत्साहः फलं किंचिन्न भुंक्ते स्तनक्षीरादिपानवत् पौरुषेण विना न हीति पौरुषवादः ॥ ८९० ॥

स० चं०—आलस्यकरि संयुक्त होय उत्साह उद्यमरहित होइ सो किछू भी फलकूं भोगवै नाही जैसैं स्तनका दूध उद्यमहीतैं पीवनेमें आवै है पौरुष विना पीवनेमें न आवै है तैसैं सर्व पौरुषकरि सिद्धि है ऐसा पौरुषवाद है। भावार्थ—पौरुषवादी पुरुषार्थहीतैं सर्वसिद्धि मानै हैं ॥ ८९० ॥

दइवमेव परं मण्णे धिप्पउरुसमणत्थयं।
एसो सालसमुत्तुंगो कण्णो हण्णइ संगरे ॥ ९१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दैवमेव परं मन्ये धिक् पौरुषमनर्थकं ।
एष सालसमुत्तुंगः कर्णो हन्यते संगरे ॥ ८९१ ॥

जी० प्र०—दैवमेव परं मन्ये धिक् पौरुषमनर्थकं एष सालसमुत्तुंगः कर्णो हन्यते संगरे इति दैववादः ॥ ८९१ ॥

स० चं०—देवहीकौं केवल मानो हौं निरर्थक पौरुषकौं धिक्कार होहु । देखहु यहु कोटिसारिखा ऊंचा करण-नामा राजा सो संग्रामविषैं मारिये है । असा दैववाद है । भावार्थ—दैववादी दैवहीतैं सर्वसिद्धि मानै है ॥ ८९१ ॥

संजोगमेवेति वदंति तण्णा णेवेक्कचक्केण रहो पयादि ।
अंधो य पंगू य वणं पविट्ठा ते संपजुत्ता णयरं पविट्ठा ॥ ९२ ॥

संयोगमेवेति वदंति तज्ज्ञा नैवैकचक्रेण रथः प्रयाति ।
अंधश्च पंगुश्च वनं प्रविष्टौ तौ संप्रयुक्तौ नगरं प्रविष्टौ ॥ ८९२ ॥

जी० प्र०—संयोगमेवेति वदंति तज्ज्ञा नैवैकचक्रेण रथः प्रयाति । अंधश्च पंगुश्च वनं प्रविष्टौ तौ संप्रयुक्तौ नगरं प्रविष्टाविति संयोगवादः ॥ ८९२ ॥

स० चं०—तज्ज्ञ यथार्थ ज्ञानी हैं ते संयोगहीकौं कहैं है एक पहेकरि रथ चालै नाहीं । आंधा अर पागला वनविषैं तिष्ठते थे ते संयोगकरि आंधा कांधा ऊपरि पागला चढि दोऊ नगरविषैं प्रवेश करैं हैं असा संयोगवाद है। भावार्थ—संयोगवादवाले वस्तुनिके मिलापतैं ही सर्वसिद्धि मानै हैं ॥ ८९२ ॥

सइउट्ठिया पसिद्धी दुव्वारा मेलिदेहिंवि सुरेहिं ।
मज्झिमपंडवखित्ता माला पंचसुवि खित्तेव ॥ ९३ ॥

सकृदुत्थिता प्रसिद्धिर्दुर्वारा मिलितैरपि सुरैः ।
मध्यमपांडवाक्षिप्ता माला पंचस्वपि क्षिप्तेव ॥ ८९३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—सकृदुत्थिता प्रसिद्धिर्दुर्वारा मिलितैरपि सुरैः, मध्यमपांडवक्षिप्ता माला पंचस्वपि क्षिप्तेवेति लोकवादः किं बहुना ॥ ८९३ ॥

स० चं०—सकृत एकवार ही उठी मिले हुए देवनिकरि भी प्रसिद्धपनैं निवारी न जाय ऐसी द्रौपदीकरि मध्यम पांडव अर्जुन तिसविषैं क्षेपी हुई माला सो पांचू ही पांडवनिविषैं क्षेपी ऐसा लोकवाद है। भावार्थ-लोकवादी लोकविषै जो प्रवृत्तिरूप होइ तिसहीकौं मानै है बहुत कहनेकरि कहा ॥ ८९३ ॥

जावदिया वयणवहा तावदिया चेव होंति णयवादा ।
जावदिया णयवादा तावदिया चेव होंति परसमया ॥८९४॥

यावंतो वचनपथाः तावंतश्चैव भवंति नयवादाः ।
यावंतो नयवादास्तावंतश्चैव भवंति परसमयाः ॥ ८९४ ॥

जी० प्र०—यावंतो वचनमार्गास्तावंत एव भवंति नयवादाः यावंतो नयवादास्तावंत एव भवंति परसमयाः ॥ ८९४ ॥ अथ परसमयवचनानामसत्यत्वे कारणमाह—

स० चं०—जितने वचनके मार्ग हैं तितने ही नयवाद हैं। जितने नयवाद हैं तितने ही परसमय हैं। भावार्थ जो किछू वचन बोलिए है सो किछू अपेक्षाकौं लिएं बोलिए है तहां तिस अपेक्षारूप सोई नय जानना। बहुरि जहां तिसहीकौं अन्य अपेक्षारहित ग्रहण करिए तहां ही मिथ्यामत हो है तातैं जितने वचनके प्रकार तितने नय जितने नय तितने मिथ्यामत हैं ॥ ८९४ ॥ तहां परसमयी मिथ्यामती तिनके वचन असत्य कैसैं कहिए है? सो कारण कहे हैं—

परसमयाणं वयणं मिच्छं खलु होइ सव्वहा वयणा ।
जेणाणं पुण वयणं सम्मं खु कहंचिवयणादो ॥ ८९५ ॥ १०७३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

परसमयानां वचनं मिथ्या खलु भवंति सर्वथा वचनात् ।
जैनानां पुनर्वचनं सम्यक् खलु कथंचिद्वचनात् ॥ ८९५ ॥

जी० प्र०—परसमयानां वचनं मिथ्या खलु भवति सर्वथा वचनात् । जैनानां पुनर्वचनं सम्यक् खलु कथंचिद्वचनात् ॥ ८९५ ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडेभावचूलिका नाम सप्तमोऽधिकारः ।

स० चं०—परसमयी मिथ्यामती तिनके वचन मिथ्या हैं असत्य हैं जातैं इनके सर्वथा वचन हैं। भावार्थ—परसमयी जिस वचनकौं कहैं हैं तिसहीकौं सर्वथा एकांतपनेकरि कहैं हैं तिसके प्रतिपक्षीकौं नाहीं कहै हैं अर वस्तु है सो तिसरूप भी है अर तिसके प्रतिपक्षी स्वरूप भी है तातैं तिनका वचन असत्य है जैसैं वस्तु तौ नित्य अनित्य दोऊरूप है कोऊ नित्य ही कहै वा कोऊ अनित्य ही कहै है तिनके वचन कैसें प्रमाण होंइ ? बहुरि जिनदेवके उपासक जैनी हैं तिनके वचन सम्यक् हैं सत्य हैं जातैं इनके कथंचित् वचन हैं। भावार्थ—जैनमत स्याद्वादरूप है। स्यात् इस शब्दका अर्थ कथंचित् है। जिस वचनकौं जैनी कहैं हैं तिसकौं कोई एकप्रकारकरि कहै हैं। सर्वथा नियम नाहीं कहैं हैं वस्तु भी तिसरूप कोई एकप्रकारकरि हो है । जैसैं वस्तु द्रव्य अपेक्षा नित्य है पर्याय अपेक्षा अनित्य है तातैं जैनिनिके वचन सत्य हैं। भावार्थ—जितने वचनके मार्ग तितने नय हैं तिनकौं प्रतिपक्षीकी अपेक्षारहित एकांतपनैं ग्रहण कीएं मिथ्यारूप हो हैं। बहुरि प्रतिपक्षीकी सापेक्षा लीएं स्याद्वादपने ग्रहण कीएं सम्यक्रूप हो हैं ॥ ८९५ ॥

इति आचार्य श्रीनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्तिविरचित गोम्मटसार द्वितीय पंचसंग्रह नामा ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृतटीकाके अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीकाविषैं कर्मकांडविषैं भावचूलिका नामा सातवां अधिकार संपूर्ण भया ॥ ७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ त्रिकरणचूलिकाधिकारः ।

करि निज कारज करणकरि कर्मसमूह खिपाय ।
भए शुद्ध परमातमा नमौं नमौं शिवराय ॥ ८ ॥

णमह गुणरयणभूसण सिद्धंतामियमहद्धिभवभावं ।
वरवीरणंदिचंदं णिम्मलगुणमिंदणंदिगुरुं ॥ ८९६ ॥

नमत गुणरत्नभूषण ! सिद्धांतामृतमहाब्धिभवभावं ।
वरवीरनंदिचंद्रं निर्मलगुणमिंद्रनंदिगुरुं ॥ ८९६ ॥

जी० प्र०—नमत गुणरत्नभूषण सिद्धांतामृतमहाब्धिभवभावं वरवीरनंदिचंद्रं निर्मलगुणमिंद्रनंदिगुरुं ॥ ८९६ ॥

स० चं०—गुणरूपी रत्नका है आभूषण जाकैं ऐसा चामुंडराजा ताका संबोधन है गुणरत्नभूषण ! तुम उत्कृष्ट वीरनंदी नामा आचार्य सोई भया चंद्रमा ताहि नमस्कार करहु । सो लोकविषै चंद्रमाकौं समुद्रतैं उपज्या कहिए है। वीरनंदिरूप चंद्रमा सिद्धांतरूपी अमृतमयी महासमुद्र तीहिंकरि भया है सद्भाव जाका ऐसा है। बहुरि निर्मलगुण जिसविषैं पाइए ऐसा इंद्रनंदि नामा गुरु ताहि तुम नमस्कार करहु। ऐसैं श्रोतृजनकौं सावधान करि तीन करणानिका व्याख्यान करैं हैं सो प्रसंग पाइ जीवकांडका गुणस्थानाधिकारविषैं तीन करणानिका स्वरूप कह्या । इहां आचार्य जुदा अधिकार करि कहैं हैं । सो इहां कोई अर्थ नीकैं जान्या न जाय सो तहां देख लेना ॥ ८९६ ॥

इगिवीसमोहखवणुवसमणणिमित्ताणि तिकरणाणि तहिं ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पढमं अधापवत्तं करणं तु करेदि अपमत्तो ॥ ८९७ ॥

एकविंशतिमोहक्षपणोपशमननिमित्तानि त्रिकरणानि तस्मिन् ।
प्रथममधःप्रवृत्तं करणं तु करोत्यप्रमत्तः ॥ ८९७ ॥

जी० प्र०—अनंतानुबंधिभ्योऽन्यैकविंशतिचारित्रमोहनीयानां क्षपणाया उपशमस्य च कारणानि त्रीण्यधःप्रवृत्तापूर्वानिवृत्तिकरणानि तेषु प्रथममधःप्रवृत्तकरणं तु सातिशयाप्रमत्त एव करोति ॥ ८९७ ॥

स० चं०—अनंतानुबंधीका चतुष्क विना अवशेष इकवीस चारित्रमोहनीकी प्रकृति तिनकी क्षपणा वा उपशमकौं कारणभूत ऐसे तीन अधःप्रवृत्त अपूर्व अनिवृत्ति करण हैं। तिनविषैं पहिला अधःप्रवृत्तकरणकौं सातिशय अप्रमत्त गुणस्थानवर्ती ही करै है ॥ ८९७ ॥

जम्हा उवरिमभावा हेट्ठिमभावेहिं सरिसगा होंति ।
तम्हा पढमं करणं अधापवत्तोत्ति णिद्दिट्ठं ॥ ८९८ ॥

यस्मादुपरितनभावा अधस्तनभावैः सदृशका भवंति ।
तस्मात्प्रथमं करणमधःप्रवृत्तमिति निर्दिष्टं ॥ ८९८ ॥

जी० प्र०—यस्मात्कारणादुपरितनसमयभावा अधस्तनसमयभावैः सह समाना भवंति तस्मात्कारणात्तत्प्रथमं अधःप्रवृत्तमिति निर्दिष्टं ॥८९८॥

स० चं०—जातैं इस करणविषैं ऊपरिके समयसंबंधी भाव नीचैके समयसंबंधी भावनिकरि समान हो हैं। जैसैं कोई जीवका दूसरा तीसरा आदि समयविषैं जैसा भाव होइ तैसा ही भाव कोई जीवका पहिले ही समय होइ तातैं पहिला करण अधःप्रवृत्त है ऐसा कह्या है ॥ ८९८ ॥

अंतोमुहुत्तमेत्तो तक्कालो होदि तत्थ परिणामा । १०७६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

लोगाणमसंखपमा उवरुवरिं सरिसवड्ढिगया ॥ ८९९ ॥

अंतर्मुहूर्तमात्रस्तत्कालो भवति तत्र परिणामाः ।
लोकानामसंख्यप्रमा उपर्युपरि सदृशवृद्धिगताः ॥ ८९९ ॥

जी० प्र०—तस्याधःप्रवृत्तकरणस्य कालोंऽतर्मुहूर्तमात्रो भवति । तत्र काले संभवंतो विशुद्धिकषायपरिणामाः असंख्यातलोकमात्राः संति । ते च तत्प्रथमसमयमादिं कृत्वा उपर्युपरि सर्वत्र सदृशप्रचयवृद्ध्या वर्धंते ॥ ८९९ ॥

स० चं०—तिस अधःप्रवृत्त करणका काल अंतर्मुहूर्तमात्र है। तिस कालविषैं संभवैं ऐसे विशुद्धतारूप कषायनिके परिणाम ते असंख्यात लोकप्रमाण हैं। ते परिणाम पहले समयतैं लगाय ऊपरि ऊपरि समान चयवृद्धिकरि बधे हैं। पहिले समयके परिणामनितैं दूसरे समयके परिणाम जितने बधती हैं तितने ही दूसरे समयके परिणामनितैं तीसरे समयके परिणाम बधती हैं ऐसैं अंतसमयपर्यंत समान वृद्धि जाननी ॥ ८९९ ॥

बावत्तरितिसहस्सा सोलस चउ चारि एक्कयं चेव ।
धणअद्धाणविसेसे तियसंखा होइ संखेज्जे ॥ ९०० ॥

द्वासप्ततित्रिसहस्राणि षोडश चतुष्कं चत्वारि एकं चैव ।
धनाध्वानविशेषाः त्रयसंख्या भवति संख्येये ॥ ९०० ॥

जी० प्र०—तत्र तावदंकसंदृष्ट्या धनं द्वासप्तत्यग्रत्रिसहस्री ३०७२ । ऊर्ध्वाध्वानः षोडशांकः १६ । तिर्यगध्वानश्चतुरंकः ४ । ऊर्ध्वविशेषोऽपि चतुरंकः ४ । तिर्यग्विशेषो रूपं १ । प्रचयसाधनसंख्यातस्त्र्यंकः ३ ॥ ९०० ॥

स० चं०—तहां प्रथम अंकनिकी सहनानीकरि कथन दिखावै हैं। तहां सर्वधन तीनहजार बहत्तरि अर ऊर्ध्वरूप अध्वान जो गच्छ सो सोलह अर तिर्यग्रूप गच्छ च्यारि अर ऊर्ध्वरूप विशेष च्यारि तिर्यग्रूप विशेष एक अर चयका साधनके अर्थि संख्यातकी सहनानी तीन है। तहां करणके सर्वसमयसंबंधी परिणामनिका समूह सो १०७७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सवधन है। बहुरि करणकालके जितने समय होंहि तिनकी ऊपरि ऊपरि रचना करनी तातैं तिसकालका समयनिका प्रमाण सो ऊर्ध्व गच्छ वा पद जानना। बहुरि एक समयविषैं कोऊ जीवकैं कितने परिणाम पाइए कोईकैं कितने परिणाम पाइए ऐसैं जितने एक समयविषैं खंड होंहि तिनकी विवक्षित समयकी रचनाके बरोबरि रचना करनी तातैं तिन खंडनिका जो प्रमाण सो अनुकृष्टिका तिर्यग् गच्छ वा पद कहिए है। बहुरि समय समयविषैं जितने जितने परिणाम क्रमतैं बधती होंइ ताकौं ऊर्ध्व रूप अनुकृष्टिका विशेष वा चय वा प्रचय वा उत्तर कहिये। बहुरि खंड २ विषै जितने जितने परिणाम क्रमतैं बधती होंइ ताकौं तिर्यगरूप अनुकृष्टिका विशेष वा चय वा प्रचय वा उत्तर कहिए। बहुरि आगैं चयका प्रमाण जाननेके अर्थि संख्यातका भाग दीजिएगा तहां अंकसंदृष्टिविषै संख्यातकी जायगा तीनका अंक जानना ॥ ९०० ॥

आदिधणादो सव्वं पचयधणं संखभागपरिमाणं।
करणे अधापवत्ते होदित्ति जिणेहिं णिद्दिट्ठं ॥ ९०१ ॥

आदिधनात्सर्वं प्रचयधनं संख्यभागपरिमाणं।
करणेऽधःप्रवृत्ते भवतीति जिनैर्निर्दिष्टं ॥ ९०१ ॥

जी० प्र०—अधःप्रवृत्तकरणे सर्वं प्रचयधनं आदिधनतः संख्यातैकभागमात्रं स्यात् २५९२ / (२७/५) तद्यथा—पद १६। कृत्वा १६। १६। संख्यातेन च ३ सर्वधने ३०७२। भक्ते ३०७२ / (१६। १६। ३) ऊर्ध्वप्रचयप्रमाणं स्यात् ४। व्येकपद १६–१। अर्धे १५/२ प्रचय १५/२। ४ गुणो गच्छ १५/२। ४। १६ उत्तरधनं ४८०। एतस्मिन् सर्वधनादपनीते शेषमादिधनं स्यात् २५९२। प्र ४८०। फ श १। इ २५९२। लब्धशलाकाः २७/५ पुनः प्र श २७/५ फ २५९२। इ १ लब्धं ४८०। इति प्रचयधनमादिधनस्य संख्यातैकभागः इति जिनैर्निर्दिष्टं, आदिधनस्य सप्तविंशतिपंचभागमात्रत्वात् ॥९०१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—अधःप्रवृत्तकरणविषैं सर्व प्रचयधन आदि धनतैं संख्यातवे भाग प्रमाण है। सर्व समयसंबंधी जे चय तिनका जोड दीएं जो प्रमाण होइ सो प्रचयधन कहिए है। जे जे चय बंधे तिन विना सर्व समयसंबंधी आदि धनका जोड दीएं जो प्रमाण होइ सो आदिधन कहिए है। सो 'पदकृत्या संख्यातेन सर्वधने भक्ते ऊर्ध्वचयप्रमाणं स्यात्' पदकी कृति अर संख्यातका भाग सर्वधनकौं दीएं ऊर्ध्वचयका प्रमाण हो है। सो पद कहिए गच्छ सोलह ताकी कृति कहिए वर्ग दोयसै छप्पन अर संख्यातकी सहनानी तीन इनका भाग सर्वधन तीन हजार बहत्तरिकौं दीएं च्यारि पाए सोई ऊर्ध्वचयका प्रमाण जानना। बहुरि "व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं" एक घाटि पदका आधाकौं चयकरि अर गच्छकरि गुणैं प्रचयधन हो है सो एक घाटि गच्छ पंद्रहका आधा साढा सात ताकौं चय-करि गुणैं तीस ताकौं गच्छकरि गुणैं च्यारिसै असी सो ही उत्तरधन जानना। इसकौं तीन हजार बहत्तरिमै घ-टाएं पचीससै बाणवै रहे सो आदिधन जानना। बहुरि प्रमाणराशि च्यारिसै असी अर फलराशि शलाका एक अर इच्छा पचीससै बाणवै तहां फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीएं सत्ताईसका पांचवां भाग मात्र श-लाका भई। बहुरि प्रमाण शलाका सत्ताईसका पांचवां भाग अर फल पचीससै बाणवै अर इच्छा एक शलाका तहां फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीएं च्यारिसै असी पाए ऐसैं त्रैराशिककरि सर्वधन तीन हजार ब-हत्तरिकौं सत्ताईसका पांचवा भागका भाग दीजिए तब उत्तरधन च्यारिसै असी होइ तातैं आदि धनके संख्यातवे भागि उत्तर धन कह्या है ॥ ९०१ ॥

उभयधणे संमिलिदे पदकदिगुणसंखरूवहदपचयं।
सव्वधणं तं तम्हा पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ॥ ९०२ ॥

उभयधने संमिलिते पदकृतिगुणसंख्यरूपहतप्रचयः।
सर्वधनं तत्तस्मात् पदकृतिसंख्येन भाजिते प्रचयं ॥ ९०२ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—आद्युत्तरधने संमिलिते पदकृतिगुणितसंख्यरूपं १६ । १६ । ३ । हतप्रचयप्रमाणं ४ । २५६ । ३ । भवति तत्सर्वधनं तस्मात्कारणात् पदकृति २५६ । संख्येन ३ भाजिते ३०७२/२५६।३ प्रचयः स्यादित्युक्तं ॥ ९०२ ॥

स० चं०—आदि धन अर प्रचय धन दोऊ मिलाएं सर्वधन होइ सो गच्छका वर्गकौं संख्यातकरि गुणि अर चयकरि गुणै जो प्रमाण होइ तितना होइ सो गच्छ सोलह ताका वर्ग दोयसै छप्पन संख्यातकी सहनानी तीन ताकरि गुणै सातसै अडसठि चय च्यारिकरि गुणै तीन हजार बहत्तरि होंइ सोई आदिधन उत्तरधन मिलाएं होइ तातै पदका वर्ग अर संख्यात ताका भाग सर्वधनकौं दीएं जो प्रमाण होइ सोई चयका प्रमाण कह्या है ॥ १०२ ॥

चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं ।
आदिम्मि चये उड्ढे पडिसमयधणं तु भावाणं ॥ ९०३ ॥

चयधनहीनं द्रव्यं पदभक्तं भवति आदिपरिमाणं ।
आदौ चये वृद्धे प्रतिसमयधनं तु भावानां ॥ १०३ ॥

जी० प्र०—तत्सर्वधनं ३०७२ चयधनेन ४८० हीनं कृत्वा २५९२ पदेन भक्तं सत् २५९२/१६ आदेः प्रथमसमयधनस्य परिमाणं स्यात् १६२ । तस्योपर्येकैकस्मिन् चये ४ वृद्धे सति तु-पुनः अधःप्रवृत्तकरणस्य विशुद्धपरिणामानां प्रतिसमयधनं समागच्छति । १६२ । १६६ । १७० । १७४ । १७८ । १८२ । १८६ । १९० । १९४ । १९८ । २०२ । २०६ । २१० । २१४ । २१८ । २२२ ॥ ९०३ ॥

स० चं०—तीहिं सर्वधन तीन हजार बहत्तरिकौं चयधन च्यारिसै असीकरि हीन करिए तब पचीससै बाणवै होंइ ताकौं पद जो गच्छ सोलह ताका भाग दीजिए तब एकसो बासठि पाया सोई प्रथम समयसंबंधी विशुद्ध परिणामनिका प्रमाण जानना । तामैं एक चय च्यारि मिलाएं एकसो छ्यासठि दूसरा समय संबंधी जानना । तामैं एक चय मिलाएं एकसो सत्तरि तीसरा समयसंबंधी जानना । ऐसैं ऊपरि ऊपरि रचनाकरि एक एक चय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बधाएं समय समय प्रति अधःप्रवृत्त करणके विशुद्ध परिणामनिका प्रमाण आवै है। १६२ १६६ १७० १७४ १७८ १८२ १८६ १९० १९४ १९८ २०२ २०६ २१० २१४ २१८ २२२॥ ९०३॥

पचयधणस्साणयणे पचयं पभवं तु पचयमेव हवे।
रूऊणपदं तु पदं सव्वत्थवि होदि णियमेण ॥ ९०४॥

प्रचयधनस्यानयने प्रचयः प्रभवस्तु प्रचय एव भवेत्।
रूपोनपदं तु पदं सर्वत्रापि भवति नियमेन॥ ९०४॥

जी० प्र०—प्रचयधनस्यानयने सर्वत्रापि प्रचयप्रभवौ तु प्रचय एव स्यात्। गच्छस्तु प्रथमे प्रचयाभावाद्रूपोनतत्पदमेव स्यान्नियमेन। आ ४। उ ४। ग १५। पद १५। मेगेणविहीणं १४ दुभाजिदं १४/२ उत्तरेण संगुणिदं १४/२।४। पभवजुदं ३२ पदगुणिदं ३२। १५ पदगुणिदं होदि सव्वत्थेति लब्धमशीत्यग्रचतुःशतानि ४८०॥ ९०४॥ अथानुकृष्टिप्रथमखंडप्रमाणमाह—

स० चं०—प्रचय धनके ल्यावनेके अर्थि आदि उत्तर गच्छ स्थापि श्रेणी व्यवहार विधान कहिए है–तहां प्रचय कहिए जितना जितना बधै सो उत्तर अर प्रभव कहिए आदिविषै होइ सो आदि ए दोऊ तौ इहां प्रचयका जोड प्रमाण है तीहिं प्रमाण जानने। बहुरि पहिला स्थानविषैं चयका अभाव है तातैं इहां गच्छका प्रमाण विवक्षित गच्छका प्रमाणतैं एक घाटि जानना। सो इहां ऊर्ध्व रचनाविषैं चयका प्रमाण च्यारि है तातैं आदि च्यारि अर उत्तर च्यारि अर गच्छका प्रमाण सोलह है तातैं तामैं एक घटाएं गच्छ पंद्रह तहां—

पदमेगेण विहीणं दुभाजिदं उत्तरेण संगुणिदं।
पभवजुदं पदगुणिदं पदगुणिदं होदि सव्वत्थ॥

इस करण सूत्रकरि जोडिए है। एक घाटि पदकौं दोयका भाग देइ चयकरि गुणि आदिकौं मिलाय गच्छकरि गुणिए तब गच्छका जोड होइ सो इहां गच्छ पंद्रहमैं एक घटाएं एक घाटि पद चौदह ताकौं दोयका १०८१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाग दीएं सात ताकौं चय च्यारिकरि गुणै अठाईस तामैं आदि च्यारि मिलाएं बतीस ताकौं गच्छ पंद्रह करि गुणैं च्यारिसै असी होंइ सोई प्रचय धनका प्रमाण जानना ॥ ९०४ ॥ आगैं अनुकृष्टि कहिए नीचले ऊपरले समयनिविषैं समानताका खंड कहै हैं तहां प्रथम खंडका प्रमाण कहै हैं—

पडिसमयधणेवि पदं पचयं पभवं च होइ तेरिच्छे।

अणुकट्ठिपदं सव्वद्धाणस्स य संखभागो हु ॥ ९०५ ॥

प्रतिसमयधनेऽपि पदं प्रचयः प्रभवश्च भवति तिरश्चि।

अनुकृष्टिपदं सर्वाध्वानस्य च संख्यभागो हि ॥ ९०५ ॥

जी० प्र०—अपि पुनः अनुकृष्टेः प्रतिसमयधनानयने तद्गच्छचयादयः तिर्यगेव स्युः। तत्र गच्छः सर्वाध्वानस्य संख्यातैकभागोंकसंदृष्ट्या १६/४ चतुरंकः ४ ॥ ९०५ ॥

स० चं०—अनुकृष्टिका समय समय प्रति धन ल्यावनेके अर्थि अनुकृष्टिका गच्छ चयादिक सर्व तिर्यग्रूप ही है। जहां पहिले समय संबंधी परिणाम लिखे थे तिसहीके आगैं बरोबरि पहिले समय संबंधी अनुकृष्टिके खंडनिके परिणाम लिखने। ऐसैं ही सर्व समयप्रति तिर्यग् रचना जाननी। तहां अनुकृष्टिका गच्छ ऊर्ध्वगच्छके संख्यातवे भाग प्रमाण है। अंकनिकी सहनानीकरि ऊर्ध्व गच्छ सोलह ताकौं संख्यातकी सहनानी च्यारिका भाग दीएं अनुकृष्टिका गच्छ च्यारि जानना ॥ ९०५ ॥

अणुकट्ठिपदेण हदे पचये पचयो दु होइ तेरिच्छे।

पचयधणूणं दव्वं सगपदभजिदं हवे आदी ॥ ९०६ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अनुकृष्टिपदेन हृते प्रचये प्रचयस्तु भवति तिरश्चि ।
प्रचयधनोनं द्रव्यं स्वकपदभाजितं भवेदादि ॥ ९०६ ॥

जी० प्र०—अनुकृष्टिपदेनोर्ध्वचये भक्ते तत्प्रचयः स्यात् ४/४ ततः व्येकपदा ४ (१) द्धं ४/२ (१) प्रचयः ३/२ । १ गुणो गच्छ ३/२ । १ । ४ इति चयधनेन ६ द्रव्यं १६२ हीनं कृत्वा १५६ । पदेन भक्ते १५६/४ तदादि भवति ३९ ॥ ९०६ ॥

स० चं०—अनुकृष्टिका गच्छका भाग ऊर्ध्वचयकौं दीएं जो प्रमाण होइ सो अनुकृष्टिका चयका प्रमाण जानना । सो अनुकृष्टिका गच्छ च्यारि ताकौं ऊर्ध्वचय च्यारिका भाग दीएं एक पाया सोई अनुकृष्टिका चय जानना । बहुरि 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्रकरि एक घाटि गच्छ तीन ताका आधा ड्योढ ताकौं चय एककरि गुणे भी ड्योढ अर गच्छकरि गुणें छह भए सो अनुकृष्टिविषै प्रचयधन जानना । सो प्रथम समय संबंधी जो परिणाम एकसौ बासठि सो ही प्रथम समय संबंधी अनुकृष्टिका सर्व धन तामैं प्रचय धन छह घटाएं एकसौ छप्पन रहे ताकौं अनुकृष्टि गच्छका भाग दीएं गुणतालीस पाया सोई प्रथम समय संबंधी अनुकृष्टिका प्रथम खंडका प्रमाण जानना ॥ ९०६ ॥

आदिम्मि कमे वड्ढदि अणुकट्टिस्स य चयं तु तेरिच्छे ।
इदि उड्ढतिरियरयणा अधापवत्तम्मि करणम्मि ॥ ९०७ ॥

आदौ क्रमेण वर्धते अनुकृष्टेश्च चयस्तु तिरश्चि ।
इति ऊर्ध्वतिर्यग्रचना अधःप्रवृत्ते करणे ॥ ९०७ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—तदादेरुपरि द्वितीयादिखंडेषु क्रमेण तिर्यगनुकृष्टिचयो वर्धते इत्येवमूर्ध्वतिर्यग्रचनाद्वयमधःप्रवृत्तपरिणामे स्यात् ।

२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

अंकसंदृष्टिद्रव्य ३०७२	अर्थसंदृष्टिद्रव्य $\equiv$ a
परिणामाध्वान १६	अध्वान २ ७ ७ ८
अनुकृष्टयध्वान ४	अनुकृष्टि २ ७ ७
परिणामविशेष ४	परिणामविशेष $\equiv$ a २७७७ । २७७७ । ७
अनुकृष्टिविशेष १	अनुकृष्टिविशेष $\equiv$ a २७७७ । २७७७ । ७ । २७७ ।
संख्यातरूप ३	संख्यात ७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर्थसंदृष्टौ तु सर्वद्रव्यमिदं ≡ a । पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ≡ a । १ व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं
२ गृगृ । २ गृगृगृ । गृ

१
१ ⌒

≡ a । २ गृगृगृ-१ । २ गृगृगृ अपवर्तितं ≡ a । २ गृगृगृ-१ अनेन हीणं दव्वं- ≡ a । २ गृगृगृ । गृ । २ पदभजिदे होदि
२ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २ २ गृगृगृ । गृ । २ २ गृगृगृ । गृ । २

१
१ ⌒

आदिपरिमाणं ≡ a । २ गृगृगृ । गृ । २ अत्रैकचये ≡ a । १ निक्षिप्ते द्वितीयसमयधनं—
२ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २ २ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ

३
१ ⌒

= a । २ गृगृगृ । गृ । २ द्विरूपोनगच्छमात्रचये ≡ a । २ गृगृगृ—२ निक्षिप्ते द्वाभ्यां समच्छेदेन द्वितीयचरम-
२ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २ २ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ

१ ० १ ०

समयधनं ≡ a । २ गृगृगृ । गृ । २ । ऋ ३ पुनरेकचये ≡ a । १ वृद्धे चरमसमयधनं स्यात् ≡ a २ गृगृगृ । गृ । २ ऋ १
२ गृगृगृ । गृ । २ गृगृगृ । २ २ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ २ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २

व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ

अनुकृष्टिरचना तु अनुकृष्टिपदेनोर्ध्वचये भक्तेऽनुकृष्टिप्रचयः स्यात् ≡ a । १
२ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २ गृगृ

१ ⌒

अपवर्त्ये ≡ a । २ गृगृ

इत्यनुकृष्टिचयधनमानीय ≡ a । २ गृगृ-१ । २ गृगृ २ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २
२ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २ गृगृ २

२
१ ⌒
१ ⌒

१
१ ⌒

आदिधने ≡ a । २ गृगृगृ । गृ । २ अपनीते शेषं = a । २ गृगृगृ । गृ । २ अनुकृष्टिपदेन भक्तमनुकृष्ट्यादिधनं स्यात्—
२ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २ २ गृगृगृ । २ गृगृगृ । गृ । २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२
१ ^
१ ^
≡ a । २णृणृ । णृ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ a । २ णृणृ–१ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

१
१ ^
ऋणरूपद्वयं धनरूपद्वयेन समानमिति दत्त्वा वृद्धे प्रथमानुकृष्टिचरमखंडधनं स्यात् । ≡ a । २णृणृ । णृ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २
पुनः तत्प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडधने एकानुकृष्टिचये द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ a । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २
वृद्धे द्वितीयसमयानुकृष्टिप्रथमखंड-

४
१ ^
१ ^
धनं स्यात् ≡ a । २णृणृ । णृ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ a । २णृणृ—१ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

ऋणरूपं सगुणाकारं गृहीत्वा धनचतुष्कस्य रूपद्वयं समानमिति दत्त्वा शेषे द्विगुणपदमात्रे निक्षिप्ते रूपद्वयसहितं भूत्वा तच्चरमानुकृष्टिखंडधनं स्यात्

१
२ १ ^
≡ a । २णृणृ । णृ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

पुनस्तत्प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडधने द्विरूपोनोर्ध्वपदमात्रानुकृष्टिचये समच्छेदेन—

≡ a । २णृणृ–२ । २
२णृणृ । २णृणृ । २णृ । २

२ ^
१ ^
१
वृद्धे द्विचरमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडधनं स्यात् ≡ a । २णृणृ । णृ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

अत्ररूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये समच्छेदेन ≡ a । २णृ–१ । २
२णृणृ । २णृणृ । णृ । २णृ । २

वृद्धे द्विचरमसमयानुकृष्टिचरमखंडधनं स्यात्—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

१
१
≡ ३ । २७११ । ७ । २ ऋ ४
२७११ । २७११ । ७ । २७१ । २

पुनस्तद्द्विचरमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडे एकानुकृष्टिचये समच्छेदेन ≡ ३–१ । २
२७११ । २७११ । ७ । २७१ । २

१
१
वृद्धे चरमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडधनं स्यात् ≡ ३ । २७११ । ७ । २
२७११ । २७११ । ७ । २७१ । २

अत्र रूपोनानुकृष्टिपदमात्रानुकृष्टिचये समच्छेदेन—
२
३
१
≡ ३ । २७१—१ । २
२७११ । २७११ । ७ । २७१ । २

वृद्धे चरमसमयानुकृष्टिचरमखंडधनं स्यात् ≡ ३ । २७११ । ७ । २
२७११ । २७११ । ७ । २७१ । २

अत्रायमर्थः—अप्रमत्तसंयतः उपशमश्रेणिं क्षपकश्रेणिं वारूढमधःप्रवृत्तकरणं करोति । तस्य कालोऽन्तर्मुहूर्तोऽप्यनिवृत्तिकरणकालात्संख्यातगु-

---

१ अत्रोपकारिणी रचना जीवकांडे ४९ तमगाथायां द्रष्टव्या ।

२ अप्रमत्तसंयतः उपशमश्रेण्यारोहणनिमित्तं वा क्षपकश्रेण्यारोहणनिमित्तमधःप्रवृत्तकरणं करोति । तस्य कालोंतर्मुहूर्तोऽप्यनिवृत्तिकरणकालतः २७ संख्यातगुणापूर्वकरणकालात् २ ७१ संख्यातगुणः २७११ तत्र संभविसंज्वलनदेशघातिस्पर्धकक्रोधादिकषायविशुद्धिपरिणामस्थानान्यसंख्यातलोकमात्राणि । तानि च संज्वलनक्रोधादिकषायसर्वघातिस्पर्धककषायसंक्लेशस्थानेभ्योऽसंख्यातैकभागमात्राणि । तत्संज्वलनसर्वघातिस्पर्धकोदयस्थानानामनंतानुबंध्यप्रत्याख्यानप्रत्याख्यानक्रोधादिकषायैरेवोदयादत्राप्रमत्ते उदयो नास्ति । अधःप्रवृत्तकरणप्रथमसमयप्रथमानुकृष्टिखंडस्य जघन्यविशुद्धिपरिणामस्थानं जिनदृष्टोऽष्टांकः । ततस्तदुत्कृष्टमनंतगुणं । कुतः ? तस्योपर्यनंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यतीत्य सकृदसंख्यातभागवृद्धिस्थानं । तस्योपरि पूर्ववदनंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा पुनरेकवारमसंख्यातभागवृद्धिस्थानं । एवमसंख्यातभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि स्युः तदा पुनरनंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वैकवारं संख्यातभागवृद्धिस्थानं स्यात् तस्योपरि पूर्ववदनंतभागवृद्धिसहचरितासंख्यातभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि । तदग्रेऽनंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा पुनरेकवारं संख्यातभागवृद्धिस्थानं । एवं संख्यातभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि नीत्वाग्रे पुनरनंतभागादिवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यतीत्यैकवारं संख्यातगुणवृद्धिस्थानं । एवं पूर्ववदनंतभागवृद्धिस्थानानि असंख्यातैकभागवृद्धिस्थानानि संख्यातैकभागवृद्धिस्थानानि चापवर्त्यापवर्त्यैकैकवारं संख्यातगुणवृद्धिस्थानं भूत्वा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णापूर्वकरणकालासंख्यातगुणः २७७७ तत्र संज्वलनदेशघातिस्पर्धकविशुद्धिपरिणामस्थानानि शेषकषायसहचरिततत्सर्वघातिस्पर्धकसंक्लेशस्थाने-

भूत्वा संख्यातगुणवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि स्युः । अग्रे तथैवानंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा एकवारमसंख्यातगुणवृद्धिस्थानं स्यात् । एतानि पूर्ववदनंतभागवृद्ध्यसंख्यातभागवृद्धिसंख्यातभागवृद्धिसंख्यातगुणवृद्धिस्थानानि क्रमेण सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यपवर्त्यापवर्त्यैकैकवारमसंख्यातगुणवृद्धिस्थानं इतीमान्यपि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि नीत्वा अग्रे पुनरनंतभागादिवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राणि गत्वा एकवारमनंतगुणवृद्धिस्थानं । एवमेकषड्वृद्धिस्थानानि रूपाधिकसूच्यंगुलासंख्यातैकभागस्य घनवर्गगुणितमात्राणि भवंति ।

१_ १_ १_ १_ १_
२ २ २ २ २
a a a a a

८	१
७	२
	१_
६	२ २
	१_ १_
५	२ २ २
	१_ १_ १_
४	२ २ २ २
	१_ १_ १_ १_
३	२ २ २ २ २

सर्वसम्मेलने एवं

१_ १_ १_ १_ १_
२ २ २ २ २

इतीदृशषट्स्थानानि तत्प्रथमसमयानुकृष्टिखंडे असंख्यातलोकमात्राणि संतीत्यनंतगुणत्वं सिद्धं । ततस्तत्प्रथमसमयद्वितीयानुकृष्टिखंडजघन्यवृद्धिस्थानं अष्टांकत्वादनंतगुणं । कुतः ? छट्ठाणाणं आदी अट्ठंकं होदि चरममुव्वंकमिति स्वजघन्यात्स्वोत्कृष्टस्थानमनंतगुणं पूर्वखंडोत्कृष्टादुत्तरखंडजघन्यस्थानमनंतगुणमिति व्याप्तिसद्भावात् । अत्र प्रथमसमयानुकृष्टिप्रथमखंडसर्वस्थानानि द्वितीयसमयप्रथमखंडमादिं कृत्वा द्विचरमखंडपर्यंतसर्वस्थानानि प्रथमसमयद्वितीयखंडमादिं कृत्वा चरमखंडपर्यंतसमस्तस्थानैः सहसमानि एवं निर्वर्गणकांडकपर्यंतमुपरितनोपरितनखंडविशुद्धिस्थानानि अधस्तनाधस्तनस्थानैर्यथासंभवसमानानीत्यधःप्रवृत्तत्वादस्याधःप्रवृत्तकरणमित्यन्वर्थनाम । पाठोयं कथंचिद्विशेषमादधानः अभयचंद्रीयटीकायां । १०८८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भ्योऽसंख्यातैकभागमात्राण्यप्यसंख्यातलोकमात्राणि । तत्राप्यनुकृष्टिजघन्यखंडस्य जघन्यविशुद्धिपरिणामस्थानं जिनदृष्टोऽष्टांकः । ततस्तदुत्कृष्टमनंतगुणं । कुतः ? तस्योपर्यनंतभागवृद्धिस्थानानि सूच्यंगुलासंख्यातैकभागमात्राण्यतीत्य सकृदसंख्यातभागवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमेऽसंख्यातभागवृद्धिस्थाने संख्यातभागवृद्धिस्थानं। इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमे संख्यातभागवृद्धिस्थाने संख्यातगुणितवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमे संख्यातगुणवृद्धिस्थाने असंख्यातगुणवृद्धिस्थानं । इमान्यपि तथा तावंत्यतीत्य पुनरेकवारमावर्तितस्य चरमेऽसंख्यातगुणवृद्धिस्थानेऽनंतगुणवृद्धिस्थानानि । मिलित्वेमानि रूपाधिकसूच्यंगुलासंख्यातस्य घनगुणितवर्गमात्राण्येकं षड्वृद्धिस्थानं । एतानि तत्रासंख्यातलोकाः संतीति कारणात् । ततस्तद्द्वितीयखंडस्य जघन्यविशुद्धिस्थानमनंतगुणं अष्टांकत्वात् । एवं सर्वखंडेषु स्वस्वजघन्यस्थानात्स्वस्वोत्कृष्टस्थानं ततोऽनंतरखंडस्य जघन्यस्थानं चानंतगुणमनंतगुणं ज्ञातव्यं । तत्प्रथमखंडस्य प्रथमखंडं चरमखंडस्य चरमखंडं च विनोपरितनखंडपरिणामाः अधस्तनखंडपरिणामैः सह यथासंभवं सदृशा इत्ययं करणोऽधःप्रवृत्तसंज्ञः स्यात् ॥९०७॥

स० चं०—तिस आदि खंडतैं दूसरा आदि खंडनिविषैं क्रमकरि तिर्यगरूप एक एक अनुकृष्टिका चय बधाइए सो अनुकृष्टिका चय एक एक बधै गुणतालीस चालीस इकतालीस वियालीस प्रमाण हो है ३९ ४० ४१ ४२। बहुरि याही प्रकार दूसरा समय संबंधी अनुकृष्टिके खंडविषैं चालीस इकतालीस वियालीस तियालीस प्रमाण हो है। ४० ४१ ४२ ४३ । सो दूसरा समय संबंधी अर पहला समय संबंधी चालीस इकतालीस वियालीसका प्रमाणकी समानता भई। ऐसैं तृतीयादिक समयनिविषैं अनुकृष्टि रचनाकरि खंडनिविषैं परिणामनिका प्रमाण वा नीचले समयसंबंधी परिणामनितैं समानता जाननी। ऐसैं ऊर्ध्वरूप वा तिर्यगरूप दोऊ रचना अधःप्रवृत्त करणविषैं है सो जाननी।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंक संदृष्टि अपेक्षा अधःकरण रचना।

सोलह समयनिकी ऊर्ध्व रचना।	अनुकृष्टिरूप एक एक समयसंबंधी च्यारि खंडनिकी तिर्यक् रचना।			
	प्रथमखंड	द्वितीयखंड	तृतीयखंड	चतुर्थखंड
२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

जैसें अंकनिकी सहनानीकरि दृष्टांतरूप कथन दिखाया तैसें ही अर्थसंदृष्टिकरि कथन जानना तहां अर्थसंदृष्टि तो आगें संदृष्टि अधिकारविषै लिखैंगे तहां जानना। अर अर्थ इहां लिखिए है—

अधःप्रवृत्तकरणका सर्व परिणाम असंख्यातलोकप्रमाण सो सर्वधन जानना। अधःप्रवृत्तकरणका कालका समयनिका प्रमाण सो गच्छ जानना। गच्छका वर्गकौं संख्यातगुणाकरि ताका भाग सर्वधनकौं दीएं जो प्रमाण होइ सो ऊर्ध्वचय जानना। एक घाटि गच्छका आधाकौं चयकरि गुणि गच्छकरि गुणिए सो प्रचयधन जानना। इनकौं सर्वधनमें घटाएं जो रहै ताकौं गच्छका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सो प्रथम समयसंबंधी परिणामनिका प्रमाण है। यामैं एक चय मिलाएं दूसरा समय संबधी होइ ऐसैं एक एक चय मिलाएतैं दोय घाटि गच्छ प्रमाण चय मिलैं द्विचरम समयसंबंधी होइ। यामैं एक चय मिलाएं अंतके समयसंबंधी होइ। अब अनुकृष्टि रचना कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिस समयसंबंधी अनुकृष्टि होइ तिस समयके परिणामनिका समूह सो तिस अनुकृष्टिका सर्वधन है। बहुरि अधःप्रवृत्तकरणका कालके जितने समय हैं तिसकौं संख्यातका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सो अनुकृष्टिका गच्छ जानना। अनुकृष्टिका गच्छका ऊर्ध्वचयकौं भाग दीएं अनुकृष्टिविषैं चयका प्रमाण होइ। एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छका अर्धप्रमाणकौं अनुकृष्टिका चयकरि गुणि गच्छकरि गुणें अनुकृष्टिका प्रचयधनका प्रमाण होइ। ताकौं प्रथम समयसंबंधी परिणामनिमैंस्यौं घटाइ अवशेष रहैं तिनकौं अनुकृष्टिके गच्छका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सोई प्रथम समयसंबंधी अनुकृष्टिका प्रथमखंडविषैं प्रमाण होइ। यामैं एक चय मिलाएं दूसरा खंडविषैं प्रमाण होइ। ऐसैं एक एक चय मिलाएं तौ एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छ प्रमाण चय मिलैं प्रथम अनुकृष्टिका अंत खंडविषैं प्रमाण हो है। बहुरि तिस प्रथम समयसंबंधी अनुकृष्टिका प्रथम खंडका प्रमाणविषैं एक अनुकृष्टिका चय मिलैं दूसरा समयसंबंधी अनुकृष्टिका प्रथमखंडविषैं प्रमाण हो है। बहुरि द्वितीयादि खंडनिविषैं एक एक चय मिलाइ एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छ प्रमाण चय मिलैं दूसरा समयसंबंधी अनुकृष्टिका अंतका खंडविषैं प्रमाण हो है बहुरि प्रथम समय संबंधी अनुकृष्टिका प्रथमखंडका प्रमाणविषैं दोय घाटि ऊर्ध्वगच्छ प्रमाण अनुकृष्टिके चय मिलैं द्विचरम संबंधी अनुकृष्टिका प्रथमखंडविषैं प्रमाण हो है। बहुरि द्वितीयादि खंडनिविषैं एक एक चय मिलाएं एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छ प्रमाण चय मिलैं तिसहीका अंत खंडविषैं प्रमाण हो है। बहुरि द्विचरम समयसंबंधी अनुकृष्टिका प्रथमखंडका प्रमाणविषैं एक अनुकृष्टि चय मिलैं अंत समयसंबंधी अनुकृष्टिका प्रथमखंडविषैं प्रमाण हो है। बहुरि द्वितीयादि खंडनिविषैं एक एक चय मिलाइ एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छ प्रमाण चय मिलैं अधःप्रवृत्तकरणका अंत समयसंबंधी अनुकृष्टिका अंत खंडविषैं प्रमाण हो है। इहां ऐसा अर्थ जानना।

अप्रमत्तसंयमी उपशमश्रेणी वा क्षपकश्रेणी चढनेकौं अधःप्रवृत्तकरण करै है तिसका काल अंतर्मुहूर्तमात्र है तथापि अनिवृत्ति करणके कालतैं संख्यातगुणा ऐसा जो अपूर्वकरणका काल तिसतैं भी संख्यातगुणा है। तहां संज्वलन कषायके देशघातिया स्पर्धकनिके उदयरूप विशुद्धि परिणामनिके स्थान ते अन्य प्रत्याख्यानादि कषाय-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निके सहित जिनका उदय होइ ऐसे संज्वलनके सर्वघातिया स्पर्धकनिके उदयरूप संक्लेश स्थान तिनके असंख्यातवे भाग हैं तथापि ते असंख्यात लोकप्रमाण हैं। तहां भी अनुकृष्टिका जघन्य पहिला खंडका जघन्य विशुद्धि परिणामरूप स्थान सो सर्वज्ञकरि जैसा देख्या तैसा अष्टांक कहिए अनंतगुणवृद्धि लिए है। पूर्व परिणामके अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाणतैं अनंत गुणा अविभाग प्रतिच्छेदका समूहरूप स्थान है। कषायनिके उदयरूपके स्थान असंख्यात हैं। तहां अविभाग प्रतिच्छेदनिकरि परिणामनिका प्रमाण अनंत है सो जैसैं जैसैं निर्मलता हो है तैसैं तैसैं विशुद्धताके अविभाग प्रतिच्छेद बधते हो हैं। तातैं इहां अनंतगुणपना संभवै है। बहुरि तिस पहिला खंडका जघन्यतैं तिसहीका उत्कृष्ट अनंतगुणा है। काहेतैं? तिस जघन्यके ऊपरि सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागप्रमाण अनंतभागवृद्धिरूप स्थान भए एकवार असंख्यातभागवृद्धि स्थान हो है। याप्रकार तितने ही तैसैं असंख्यातभागवृद्धि स्थान भए। बहुरि एकवार पूर्ववत् भएं अंतविषैं असंख्यातभागवृद्धिके ठिकानैं संख्यातभागवृद्धि हो है। बहुरि याप्रकार तितने ही तैसैं संख्यात भागवृद्धिरूप स्थान भए। बहुरि एकवार पूर्ववत् भएं अंतविषैं संख्यात भागवृद्धिके ठिकाने संख्यातगुणवृद्धि हो है। याप्रकार तितने ही तैसैं संख्यातगुणवृद्धिरूप स्थान भए। बहुरि एकवार पूर्ववत् भएं अंतविषैं संख्यातगुणवृद्धिके ठिकानैं असंख्यातगुणवृद्धि हो है। बहुरि याप्रकार तितने ही तैसैं असंख्यातगुणवृद्धिरूप स्थान भए। बहुरि एकवार तैसैं ही भएं अंतविषैं असंख्यातगुणवृद्धिके ठिकानैं अनंतगुणवृद्धि हो है। ऐसैं एक अधिक सूच्यंगुलका असंख्यातवां भागका घनकरि तिसहीके वर्गकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तीहि प्रमाण वृद्धिकी पलटनि भएं एक षट् स्थानपतित वृद्धिरूप स्थान हो है सो जीवकांडका ज्ञानमार्गणा अधिकारविषैं पर्याय समास श्रुतज्ञानका वर्णनाविषैं षट्स्थान वृद्धिका जैसैं विशेषकरि कथन कीया है तैसैं इहां भी जानना। सो ए षट् वृद्धिस्थान तिस कषायस्थानाविषैं असंख्यातलोकप्रमाण पाइए है जातैं जघन्यतैं उत्कृष्टकौं असंख्यात गुणा कह्या। बहुरि प्रथम खंडके उत्कृष्टतैं दूसरे खंडका जघन्य अनंत गुणा है जातैं षट्वृद्धिस्थानविषैं आठका अंककी सहनानीरूप अनंत गुणवृद्धि पीछैं ही पीछैं होइ तहां दूसरा खंडका जघन्यपणा हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है बहुरि इसतैं याका उत्कृष्ट अनंतगुणा है ऐसैं सर्व खंडनिविषैं अपने अपने जघन्यतैं अपना अपना उत्कृष्ट अनंतगुणा अर तिस उत्कृष्टतैं अनंतर स्थानका जघन्य अनंतगुणा जानना । बहुरि तिस प्रथम समयका पहिला खंड अर अंत समयका अंत खंड विना सर्व ऊपरिके खंडसंबंधी परिणामनिके नीचले खंडसंबंधी परिणामनिस्यौं यथा संभव समानता है । ऐसैं इस करणका नाम अधःप्रवृत्त है ॥ ९०७ ॥

अंतोमुहुत्तकालं गमिऊण अधापवत्तकरणं तु ।
पडिसमयं सुज्झंता अपुव्वकरणं समल्लियइ ॥ ९०८ ॥

अंतर्मुहूर्तकालं गमयित्वा अधःप्रवृत्तकरणं तु ।
प्रतिसमयं शुद्ध्यन्नपूर्वकरणं समाश्रयति ॥ ९०८ ॥

जी० प्र०–तमधःप्रवृत्तकरणमंतर्मुहूर्तकालं प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धिवृद्धया वर्धमानः सातिशयाप्रमत्तो नीत्वाऽपूर्वकरणं समाश्रयति ॥ ९०८ ॥

स० चं०—अंतर्मुहूर्त काल ताईं समय समय अंनतगुणी विशुद्धताकरि बधता सातिशय अप्रमत्त संयमी तिस अधःप्रवृत्तकरणकौं समाप्तकरि अपूर्वकरणकौं प्राप्त हो है ॥ ९०८ ॥

छण्णउदिचउसहस्सा अट्ठ य सोलस धणं तदद्धाणं ।
परिणामविसेसोवि य चउ संखापुव्वकरणसंदिट्ठी ॥ ९०९ ॥

षण्णवतिचतुःसहस्री अष्टौ च षोडश धनं तदध्वानः ।
परिणामविशेषोऽपि च चत्वारि संख्यातान्यपूर्वकरणसंदृष्टिः ॥ ९०९ ॥

जी० प्र०—तत्रापूर्वकरणेऽकसंदृष्टिधनं षण्णवत्यग्रचतुःसहस्री । अध्वानोऽष्टौ । परिणामविशेषः षोडश । संख्यातरूपाणि चत्वारि ॥ ९०९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—तिस अपूर्वकरणविषैं अंकनिकी सहनानी सर्वधन च्यारि हजार छिनवै अर अध्धान कहिए गच्छ सो आठ अर परिणाम विशेष सोलह अर संख्यातका प्रमाण च्यारि जानना। इहां अपूर्वकरणके सर्वस्थानानिका प्रमाण सो सर्वधन जानना। अपूर्वकरणके कालका समयनिका प्रमाण सो गच्छ जानना। समय समय प्रति जितने बधती होंइ सो परिणाम विशेष जानना इसहीका नाम चय है। चयका साधनके अर्थि संख्यातका प्रमाण जानना ॥ ९०९ ॥

अंतोमुहुत्तमेत्ते पडिसमयमसंखलोगपरिणामा।
कमउड्ढापुव्वगुणे अणुकट्टी णत्थि णियमेण ॥ ९१० ॥

अंतर्मुहूर्तमात्रे प्रतिसमयमसंख्यलोकपरिणामाः।
क्रमवृद्धाः अपूर्वगुणे अनुकृष्टिर्नास्ति नियमेन ॥ ९१० ॥

जी० प्र०—तस्यापूर्वकरणस्य कालेंऽतर्मुहूर्ते २१ मात्रे प्रतिसमयं परिणामा असंख्यातलोकमात्रा अत्र प्रथमसमयाच्चरमसमयपर्यंतं सदृशचयवृद्धाः संति। तेषु चानुकृष्टिरचना नास्ति। उपरितनपरिणामानामधस्तनपरिणामैरसादृश्यात्।

५६८
५५२
५३६
५२०
५०४
४८८
४७२
४५६

तद्धनं ४०९६। पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ४०९६ / ८।८।४ । लब्धं १६। व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं (१ – / २) ८। १६। ८ लब्धं ४४८। चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं ३६४८ / ८। लब्धं ४५६ आदिम्मि चये उड्ढे पडिसमयधणं तु भावाणमिति।

अर्थसंदृष्टौ धनं ≡ ə ≡ ə पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं ≡ ə ≡ ə / २१।२१।१ व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं

(१ –) २१ ≡ ə ≡ ə। २१ / २१। २१। १। २ अपवर्तितं ≡ ə ≡ ə २१—१ / २१। १। २ चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिपरिमाणं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

≡ ə ≡ ə २७१७ । ७ । २ / २७१७ । २७१७ । ७ । २ अत्र रूपोनगच्छमात्रचयेषु ≡ ə ≡ ə २७१७ / २७१७ । ७ । २७१७ द्वाभ्यां समच्छेदेन ≡ə≡ə २७१७–१ । २ / २७१७ । ७ । २७१७ । २

वृद्धेषु चरमसमयधनं स्यात् ≡ ə ≡ ə २७१७१७ । २ ऋ १ / २७१७ । ७ । २७१७ । २ । अत्रायमर्थः—अपूर्वकरणधनमधःप्रवृत्तकरणधनादसंख्यातलोकगुणं ≡ə≡ə तत्र प्रथमसमयपरिणामाः असंख्यातलोकमात्राः । तेभ्यो द्वितीयादिसमयेषु तदालापा अपि प्रतिसमयं चयाधिकाः संति । तत्प्रथमसमयजघन्यविशुद्धिपरिणामोऽधःप्रवृत्तकरणचरमसमयचरमखंडोत्कृष्टविशुद्धिपरिणामादनंतगुणः । ततस्तदुत्कृष्टोऽनंतगुणः । कुतः? तत्राप्यसंख्यातलोकमात्रषट्स्थानसंभवात् । ततो द्वितीयसमयजघन्यविशुद्धिपरिणामोऽनंतगुणः । ततस्तदुत्कृष्टोऽनंतगुणः । एवमाचरमसमयं ज्ञातव्यं । यत उपरितनसमयपरिणामा अधस्तनसमयपरिणामैः सदृशा न ततोयमपूर्वकरण इत्याख्यायते ॥ ९१० ॥ अथानिवृत्तिकरणस्वरूपमाह—

स० चं०— तिस अपूर्वकरणका काल अंतर्मुहूर्त मात्र है । तिसविषै समय समय प्रति असंख्यात लोकप्रमाण परिणाम पाइए है ते प्रथम समयतैं लगाय अंत समय पर्यंत समान चयकरि बधते बधते हैं । तिनविषैं अनु-

---

१

≡ə≡ə २७१७१७ / २७१७।७।२ । २७१७ ऋणं १

०

०

०

≡ə≡ə २७१७१७ २ / २७१७।७।२। २७१७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कृष्टि रचना नाहीं है जातैं उपरि समय संबन्धी परिणामनिकैं नीचले समय संबन्धी परिणामनितैं समानता न पाइए है। कोई जीवका प्रथम समय विषैं उत्कृष्ट परिणाम होइ कोई जीवका दूसरे समय जघन्य परिणाम होइ तो भी तिसतैं ताकैं अधिकताही पाइए है सो इहां जिनकौं अपूर्वकरण माडे पहला समय है तिन अनेक जीवनिकैं परिणामनिकी समानता भी होइ वा असमानता भी होइ परन्तु जिनकौं करण माडें द्वितीयादिक समय भए तिनकैं परिणामनितैं कदाचित् समानता न होइ असैंही जिनकौं अपूर्व करण माडें द्वितीयादिक समय भए हैं तिनके परस्पर समानता वा असमानता अर ऊपरिके वा नीचले समयवालोंतैं असमानताही परिणामनिकी जाननी। याहीतैं अपूर्वकरण असा नाम है। तहां सर्वधन च्यारि हजार छिनवै 'पदकदिसंखेण भाजिदे पचयं' इस सूत्र करि गच्छ आठ ताका वर्ग चौंसठ, संख्यातकी सहनानी च्यारि इनका भाग सर्व धनकौं दीएं चयका प्रमाण सोलह आवै है। बहुरि 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्र करि एक घाटि गच्छका आधा साढा तीनकौं चय सोलह करि गुणि गच्छ आठकरि गुणिए तब च्यारिसै अठतालीस होइ सो प्रचय धन जानना। बहुरि 'चयधणहीणं दव्वं पदभजिदे होदि आदिधणं' इस सूत्रकरि चयधन च्यारिसै अठतालिसकौं सर्वधन च्यारिहजार छिनवैमैंस्यौं घटाएं छत्तीससै अठतालीस रहे तिनकौं गच्छ आठका भाग दीएं च्यारिसै छप्पन पाए सोई प्रथम समय संबन्धी भावनिका प्रमाण जानना। बहुरि 'आदिम्मि चये उड्ढे पडिसमयधणं तु भावाणं' इस सूत्रकरि आदिके प्रमाण विषै एक एक चयका प्रमाण सोलह सोलह क्रमतैं मिलाएं समय समयसंबन्धी भावनिका प्रमाण होय। प्रथम समय च्यारिसै छप्पनमैं एक चय मिलैं दूसरे समय च्यारिसै बहत्तरि यामैं एक चय मिलैं तीसरे समय च्यारिसै अठ्यासी असैं ही अंत समय पर्यन्त जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंकसंदृष्टि अपेक्षा अपूर्वकरणका यंत्र
५६८
५५२
५३६
५२०
५०४
४८८
४७२
४५६
जोड
४०९६

इस दृष्टांतकरि अर्थ ऐसा जानना अधःप्रवृत्तकरणके परिणाम असंख्यातलोक प्रमाण तिनकौं असंख्यातलोक गुणांकीएं अपूर्वकरणका सर्वधन हो है। अपूर्वकरणके कालका समयनिका प्रमाण सो गच्छ है। गच्छका वर्गकौं संख्यात गुणाकरि ताका भाग सर्व धनकौं दीएं चयका प्रमाण हो है। एक घाटि गच्छका आधाकौं चयकरि गुणि गच्छकरि गुणैं प्रचय धनका प्रमाण हो है। प्रचय धनकौं सर्व धनमैंस्यों घटाएं अवशेषकौं गच्छका भाग दीएं प्रथम समयके भावनिका प्रमाण हो है। द्वितीयादि समयनिविषैं प्रमाणके अर्थि एक एक चय मिलावतैं एक घाटि गच्छ प्रमाण चय मिलैं अंत समयविषैं प्रमाण हो है। इनकी संदृष्टि आगैं संदृष्टि अधिकारविषैं लिखैंगे तहां जाननी। बहुरि इहां यहु अर्थ है—

अपूर्वकरणका सर्वधन अधःप्रवृत्तकरणका सर्वधनस्यों असंख्यातलोक गुणा है। तहां प्रथम समय संबंधी परिणाम असंख्यात लोक प्रमाण हैं। तिहिस्यों द्वितीयादिक समयनिविषैं भी असंख्यात लोकप्रमाण ही हैं तथापि चयप्रमाणकरि बधते बधते हैं। तहां प्रथम समय संबन्धी जघन्य विशुद्धि परिणाम अधःप्रवृत्तकरणका अंतका समयका अंतका अनुकृष्टि खंडके विशुद्धि परिणामतैं अनन्त गुणा है। तिसतैं प्रथम समय संबन्धी उत्कृष्ट अनन्त गुणा है जातैं इहां भी असंख्यात लोक प्रमाण षट्स्थान संभवै हैं। तीहिस्यों दूसरा समय संबन्धी जघन्य परिणाम अनन्त गुणा है। ऐसैं अंतसमय पर्यन्त जानना बहुरि इहां ऊपरिके समय संबन्धी परिणाम नीचले समय संबन्धी पारणामनिके समान कदाचित् न हो हैं तातैं अपूर्व करण ऐसा नाम कहिए है॥ ९१० ॥ आगैं अनिवृत्तिकरणका स्वरूप कहैं हैं— १०९७

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एकम्हि कालसमये संठाणादीहिं जहा णिवट्टंति ।
ण णिवट्टंति तहंवि य परिणामेहिं मिहो जे हु ॥ ९११ ॥

एकस्मिन् कालसमये संस्थानादिभिर्यथा निवर्तंते ।
न निवर्तंते तथापि च परिणामैर्मिथो ये हि ॥ ९११ ॥

जी० प्र०—ये जीवा अनिवृत्तिकरणकालस्य विवक्षितैकसमये संस्थानवर्णवयोवेषभाषादिभिर्मिथो यथा निवर्तंते भिद्यंते तथा परिणामैः स्वधःप्रवृत्तापूर्वकरणवन्न निवर्तंते ॥ ९११ ॥ अमुमेवार्थं स्फुटीकरोति—

स० चं०—जे जीव अनिवृत्तिकरण कालका विवक्षित एक समयविषै शरीरका संस्थान वर्ण वय आदिकरि जैसे निवर्तंते कहिए भेदरूप हैं कोई जीवकैं कैसाही संस्थान वर्णादिक पाइए कोई जीवकैं कैसाही पाइए है तैसैं परिणामनिकरि अधःकरण अपूर्वकरणवत् नाहीं भेदरूप हो हैं। जिनकौं अनिवृत्तकरण माडें पहिला समय हो है ऐसे त्रिकाल संबन्धी अनंते जीवनिके समान परिणामही होंइ, अन्य अन्य रूप सर्वथा न होंइ। ऐसैं ही द्वितीयादिक समयवर्ती जीवनिकैं परस्पर समानता जाननी ॥ ९११ ॥ इसही अर्थकौं प्रगट करैं हैं—

होंति अणियट्टिणो ते पडिसमयं जस्सिमेक्कपरिणामो ।
विमलयरझाणहुदवहसिहाहि णिद्दड्ढकम्मवणा ॥ ९१२ ॥

भवंति अनिवर्तिनस्ते प्रतिसमयं येषामेकपरिणामः ।
विमलतरध्यानहुतवहशिखाभिर्निर्दग्धकर्मवनाः ॥ ९१२ ॥

जी० प्र०—यस्मिन्करणे प्रतिसमयमेकैकपरिणामास्ते विमलतरध्यानहुतवहशिखाभिर्निर्दग्धकर्मवना अनिवृत्तयो भवंति। तद्यथाध्वानोऽकसंदृष्ट्या चतुरंकः। अर्थसंदृष्ट्यांतर्मुहूर्तः ॥ ९१२ ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्तिविरचितायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ जीवतत्त्वप्रदीपिकाख्यायां कर्मकांडे त्रिकरणचूलिकानाम अष्टमोऽधिकारः ॥ ८ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—जिस करणविषैं समय समय प्रति अनेक जीवनिकैं एक रूप एक रूपही परिणाम हैं ते परिणाम अतिशयकरि निर्मल ध्यान सोई भया अग्नि तिसकी शिखाकरि दग्ध किए हैं कर्मरूप वन जिनकरि ऐसे अनिवृत्ति रूप कहिए है। तिसका काल प्रमाणरूप गच्छ सो अंक सहनानी करि च्यारि है। अर्थकरि अंतर्मुहूर्त प्रमाण है ॥ ९१२ ॥

इत्याचार्य श्रीनेमिचंद्रसिद्धांतचक्रवर्तिविरचित गोम्मटसार द्वितीयनाम पंचसंग्रहग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा संस्कृतटीकाके अनुसार सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीकाविषैं कर्मकांडविषैं त्रिकरणचूलिका नामा आठवां अधिकार संपूर्ण भया ॥ ८ ॥

करि विनष्ट सबकर्मकी थिति रचना सद्भाव।
परमेष्ठी परमातमा भए भजौं शिवराव ॥ १ ॥

सिद्धे विसुद्धणिलये पणट्ठकम्मे विणट्ठसंसारे।
पणमिय सिरसा वोच्छं कम्मट्ठिदिरयणसब्भावं ॥ ९१३ ॥

सिद्धान् विशुद्धनिलयान् प्रणष्टकर्मणः विनष्टसंसारान्।
प्रणम्य शिरसा वक्ष्यामि कर्मस्थितिरचनासद्भावं ॥ ९१३ ॥

जी० प्र०—प्रणष्टघात्यघातिकर्मणः विनष्टसंसारान् शुद्धात्मप्रदेशान् सिद्धपरमेष्ठिनः शिरसा प्रणम्य कर्मस्थितिरचनासद्भावं वक्ष्ये ॥ ९१३ ॥

स० चं०—प्रकर्षपनैं नष्ट भए हैं घाति अघाति कर्म जिनके बहुरि विशेषपनैं नष्ट किया है संसार जिनिकरि बहुरि शुद्ध आत्मप्रदेशनिविषैं हैं निलय स्थान जिनिका ऐसे जु सिद्ध परमेष्ठी तिनहिं मस्तक नमाय प्रकर्षपनै नमस्कारकरि कर्म स्थिति रचना सद्भावकौं कहौं हौं। कर्मनिकी जो स्थिति तिसविषै समय समय प्रति निषेकनिविषैं केता केता कार्माण द्रव्य पाइए ऐसी रचनाका जो अस्तित्व सत्तारूप कथन ताहि कहौं हों। सो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यहु कथन पूर्वं भी प्रसंग पाइ जीवकांडका योग अधिकारविषैं वा कर्मकांडका बंध उदय सत्त्व अधिकारविषैं कह्या है ॥ ९१३ ॥ इहां गाथानिकरि आचार्य कहैं हैं—

कम्मसरूवेणागयदव्वं ण य एदि उदयरूवेण ।
रूवेणुदीरणस्स य आवाहा जाव ताव हवे ॥ ९१४ ॥

कर्मरूपेणागतद्रव्यं न चैति उदयरूपेण ।
रूपेणोदीरणाया वा आबाधा यावत्तावद्भवेत् ॥ ९१४ ॥

जी० प्र०—कर्मस्वरूपेण परिणतकार्मणद्रव्यं यावदुदयरूपेण उदीरणारूपेण वा नैति न परिणमति तावदाबाधेत्युच्यते ॥ ९१४ ॥

स० चं०—कर्मस्वरूप होइ करि परिणम्या ऐसा जो कार्माण द्रव्य सो यावत् काल उदयरूप होइ करि वा उदीर्णारूप होइ करि नाही परिणमैं तावत् काल आबाधा ऐसा नाम कहिए है । भावार्थ—कर्म बंधे पीछैं यावत् काल उदय वा उदीरणा रूप न होइ सकै तिस कालका नाम आबाधा काल है ॥ ९१४ ॥

उदयं पडि सत्तण्हं आबाहा कोडिकोडि उवहीणं ।
वाससयं तप्पडिभागेण य सेसट्ठिदीणं च ॥ ९१५ ॥

उदयं प्रति सप्तानामाबाधा कोटीकोटिरुदधीनां ।
वर्षशतं तत्प्रतिभागेन च शेषस्थितीनां च ॥ ९१५ ॥

जी० प्र०—आयुषः पृथग्वक्ष्यतीति सप्तमूलप्रकृतीनामुदयं प्रत्याबाधा कोटीकोट्यब्धिस्थितेर्वर्षशतं स्यात् । शेषस्थितीनामपि तत्प्रतिभागेन ज्ञातव्या । तद्यथा—एककोटीकोटयब्धीनां वर्षशतमाबाधा तदा द्व्यावरणवेदनीयांतरायाणां त्रिंशत्कोटीकोटयब्धीनां कियतीति लब्धा त्रिसहस्रवर्षाणि व ३००० । एवं मोहनीयस्य सप्ततिकोटीकोटयब्धीनां सप्तसहस्रवर्षाणि व ७००० । नामगोत्रयोर्विंशतिकोटीकोटयब्धीनां द्विसहस्रवर्षाणि व २००० ॥ ९१५ ॥ पुनर्विशेषमाह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं०च०—आयुका जुदा कथन कहैंगे तातैं सात मूल प्रकृतिनिकी आबाधा उदयकी अपेक्षा एक कोडाकोडि सागरकी स्थितिकी सौ वर्ष है । शेष स्थितिनिकी भी आबाधा इसही प्रतिभाग करि जाननी । सोई कहिए है—

एक कोडाकोडी सागर स्थितिकी आबाधा सौ वर्ष है तो ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इनिकी तीस कोडाकोडी सागर स्थितिकी कितनी आबाधा होइ ? ऐसैं प्रमाणराशि एक कोडाकोडी सागर फलराशि सौ वर्ष इच्छाराशि तीस कोडाकोडी सागर फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीएं तीन हजार वर्षकी आबाधा हो है । ऐसैंही मोहनीयकी सत्तरि कोडाकोडी सागरकी सात हजार वर्ष आबाधा हो है । नाम गोत्रकी वीस कोडाकोडी सागरकी दोय हजार वर्ष आबाधा भई ॥ ९१५ ॥ बहुरि विशेष कहै हैं—

अंतोकोडाकोडिट्ठिदिस्स अंतोमुहुत्तमाबाहा ।
संखेज्जगुणविहीणं सव्वजहण्णट्ठिदिस्स हवे ॥ ९१६ ॥

अंतःकोटीकोटिस्थितेरंतर्मुहूर्त आबाधा ।
संख्यातगुणविहीनः सर्वजघन्यस्थितेर्भवेत् ॥ ९१६ ॥

जी० प्र०—सागरोपमानां कोटेरधिकायाः कोटाकोटेर्हीनायाः स्थितेरंतःकोटाकोटित्वादेककांडकायाम ७४०७४०७ भा $\frac{११}{२७}$ न्यूनदशकोटेः सा ९२५९२५९२ $\frac{१६}{२७}$ आबाधा उत्कृष्टांतर्मुहूर्तः २ $\overset{१\frown}{७}$ ततः संख्यातगुणहीनायाः सर्वजघन्यस्थितेः असंख्यातेन सा ९२५९२५९२ $\frac{१६}{२७}$ गुणहीना स्यात् $\frac{\overset{१\frown}{२\ ७}}{४}$ ॥ ९१६ ॥ आयुष आह—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

~~२००२~~ ११०२

स०चं०—कोडितैं ऊपरि कोडाकोडीके नीचे होइ सो अंतःकोटाकोटि कहिए सो इतने सागरनिकी स्थिति की आबाधा अंतर्मुहूर्तमात्र है। एक कांडकका प्रमाण चौहत्तरि लाख सात हजार च्यारिसै सात अर ग्यारहका सत्ताईसमां भाग ताकौं दश कोडि सागरमैंस्यों घटाएं नव कोडि पचीस लाख वाणवै हजार पांचसैं वाणवै अर सोलहका सताईसमा भाग रहै सो इतनी स्थितिकी आबाधा उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्त प्रमाण है तीहिस्यों संख्यातगुणी घाटि ऐसी जु जघन्य स्थिति ताकी आबाधा तिसस्यों संख्यातगुणी घाटि है। उत्कृष्ट अंतर्मुहूर्तके संख्यातवे भाग है ॥ ९१६॥ आयुकी आबाधा कहैं हैं—

पुव्वाणं कोडितिभागादासंखेपअद्ध वोत्ति हवे।
आउस्स य आबाहा ण ट्ठिदिपडिभागमाउस्स ॥ ९१७ ॥

पूर्वाणां कोटित्रिभागादासंक्षेपाद्धा वा इति भवेत्।
आयुषश्चाबाधा न स्थितिप्रतिभाग आयुषः ॥ ९१७ ॥

जी० प्र०—आयुष्कर्मणः आबाधा पूर्वकोटिवर्षत्रिभागादा असंक्षेपाद्धांताः एकैकसमयोनाः सर्वे विकल्पा भवंति, न खलु स्थितिप्रतिभागमाश्रित्यायुषः साध्याः, पूर्वकोटिवर्षस्य तत्त्रिभाग आबाधा तदा त्रिपल्यस्य कियतीत्यादिना तदसिद्धेः। न विद्यतेऽस्मात्पर आयुराबाधायां संक्षेपः असंक्षेपः स चासावद्धा चासंक्षेपाद्धा ॥ ९१७ ॥ अथोदीरणां मत्वाह—

स० चं०—आयुकर्मकी आबाधा कोडि पूर्ववर्षका तीसरा भाग प्रमाणतैं लगाय असंक्षेपाद्धा पर्यंत एक एक समय घाटि सर्व भेद लीएं हैं बहुरि कोडि पूर्ववर्षकी आबाधा तिसका त्रिभाग है तौ तीन पल्यकी स्थितिकी आबाधा कितनी हो है ऐसैं स्थितिका प्रतिभाग करि आयुकी आबाधाका प्रमाण सिद्ध न हो है जातैं भुज्यमान आयु अवशेष जितनी रहैं परभवका आयु बंधै तितनाही तहां बध्यमान आयुकी आबाधाका प्रमाण है सो कर्म भूमिविषैं आयुका त्रिभाग अवशेष रहैं अर भोगभूमिया वा देव नारकीकैं नव मास वा छमास अवशेष रहैं

~~१००२~~ ११०२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२००३ ११०३

आयु बंधकी योग्यता हो है तातैं उत्कृष्ट आबाधा पूर्वकोडिवर्षका तीसरा भाग है सो जानना। बहुरि नहीं पाइए है आयुकी आबाधाका संक्षेप घाटिपना जातैं ऐसा जो अद्धा काल सो असंक्षेपाद्धा कहिए है सो जघन्य आबाधा असंक्षेपाद्धा प्रमाण जाननी ऐसैं उदय अपेक्षा आबाधा कही। बंधे पीछैं उदय होइ तौ इतने काल पीछै हो है ॥ ९१७ ॥ आगै उदीरणा अपेक्षा कहै हैं—

आवलियं आबाहा उदिरणमासिज्ज सत्तकम्माणं।
परभवियआउगस्स य उदीरणा णत्थि णियमेण ॥ ९१८ ॥

आवलिकमाबाधा उदीरणामाश्रित्य सप्तकर्मणां।
परभवीयायुष्कस्य च उदीरणा नास्ति नियमेन ॥ ९१८ ॥

जी० प्र०—उदीरणामाश्रित्यायुर्वर्जितसप्तकर्मणामाबाधा आवलिमात्री स्यात्। परभवायुषो नियमेनोदीरणा नास्ति उदयागतस्यैवौपपादिकचरमोत्तमदेहासंख्येयवर्षायुर्भ्योऽन्यत्र तत्संभवात् ॥ ९१८ ॥

स० च०—उदीरणाका आश्रयकरि आयु विना सात कर्मकी आबाधा आवलीमात्र है बंधे पीछैं उदीरणा होइ तौ आवलीकाल भए ही होजाइ। बहुरि परभवका बध्यमान आयु ताकी नियमकरि उदीरणा नाहीं है जातैं उदय आया भुज्यमान आयु हीकी उदीरणा देवनारकी चरम अर उत्कृष्ट शरीरी अर असंख्यात वर्ष आयुके धारक मनुष्य तिर्यंच इन विना औरनिकैं संभवै है ॥ ९१८ ॥

आवाहूणियकम्मट्ठिदी णिसेगो दु सत्तकम्माणं।
आउस्स णिसेगो पुण सगट्ठिदी होदि णियमेण ॥ ९१९ ॥

आबाधोनितकर्मस्थितिर्निषेकस्तु सप्तकर्मणां।

२००३ ११०३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

~~२०८४~~ ११०४

आयुषो निषेकः पुनः स्वकस्थितिर्भवति नियमेन ॥ ९१९ ॥

जी० प्र०—आयुर्वर्जितसप्तकर्मणामुत्कृष्टादिस्थितौ तत्तदाबाधायामपनीतायां शेषस्थितिर्निषेकः स्यात्

△ नि
आ

आयुःकर्मणो निषेकः पुनः यावती स्वकीया सर्वस्थितिस्तावानेव स्यान्नियमेन तदाबाधायाः पूर्वभवायुष्येव गतत्वात् ॥ ९१९ ॥

स० चं—आयु विना सात कर्मनिकी जेती उत्कृष्टादि स्थिति है तामैं आबाधा काल घटाएं जो रहै तिस कालके समयनिका प्रमाण सोई निषेकनिका प्रमाण जानना। बहुरि आयुकर्मकी जेती स्थिति होइ तिसके समयनिका जो प्रमाण सोई निषेकनिका प्रमाण जानना। जातैं आयुकी आबाधा पूर्वभवकी आयुविषैं व्यतीत हो है ॥ ९१९ ॥

आबाहं वोलाविय पढमणिसेगम्मि देय बहुगं तु।
तत्तो विसेसहीणं बिदियस्सादिमणिसेओत्ति ॥ ९२० ॥

आबाधां वा अपलाप्य प्रथमनिषेके देयं बहुकं तु।
ततो विशेषहीनं द्वितीयस्यादिमनिषेक इति ॥ ९२० ॥

जी० प्र०—ज्ञानावरणादिकर्मणामाबाधामतीत्य प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके द्रव्यं बहुकं ददाति तत उपरि द्वितीयगुणहानिप्रथमनिषेकपर्यंतमेकैकचयहीनं ददाति ॥ ९२० ॥

स० चं—ज्ञानावरणादि कर्मनिकी स्थितिविषैं आबाधाकाल भए पीछैं पहिले समय प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक है। तिसविषैं बहुत द्रव्य दीजिए है। ताके ऊपरि दूसरी गुणहानिका प्रथम निषेक पर्यंत एक एक चयकरि घाटि घाटि द्रव्य दीजिए है ॥ ९२० ॥

बिदिये बिदियणिसेगे हाणी पुव्विल्लहाणिअद्धं तु। ११०४

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं गुणहाणिं पडि हाणी अद्धद्धयं होदि ॥ ९२१ ॥

द्वितीये द्वितीयनिषेके हानिः पूर्वहान्यर्धं तु ।
एवं गुणहानिं प्रति हानिरर्धार्धं भवति ॥ ९२१ ॥

जी० प्र०—ततो द्वितीयगुणहानिद्वितीयनिषेके हानिः पूर्वहानेरर्धं स्यात् । एवमुपर्यपि गुणहानिं गुणहानिं प्रति हानिरर्धार्धं स्यात् ॥ ९२१ ॥

स० चं०—बहुरि दूसरी गुणहानिका दूसरा निषेकविषैं तिसहीका पहला निषेकतैं एक चय घाटि द्रव्य जानना सो पाहिली गुणहानिविषैं जो निषेक निषेक प्रति हानिरूप चयका प्रमाण था तिसतैं दूसरी गुणहानिविषैं हानिरूप चयका प्रमाण आधा जानना । ऐसैं ऊपरि गुणहानि गुणहानि प्रति हानिरूप चयका प्रमाण आधा आधा जानना ॥ ९२१ ॥

दव्वं ठिदिगुणहाणीणद्धाणं दलसला णिसेयछिदी ।
अण्णोण्णगुणसलावि य जाणेज्जो सव्वठिदिरयणे ॥ ९२२ ॥

द्रव्यं स्थितिः गुणहानीनामध्वानं दलशला निषेकच्छितिः ।
अन्योन्यगुणशला अपि च ज्ञातव्यं सर्वस्थितिरचनायां ॥ ९२२ ॥

जी० प्र०—सर्वकर्मस्थितिरचनायां द्रव्यं स्थित्यायामः गुणहान्यायामः दलशलाकाः—नानागुणहानिः निषेकच्छेदः—दोगुणहानिः अन्योन्याभ्यस्तश्चेति षड्राशयो ज्ञातव्याः ॥ ९२२ ॥

स० चं०—सर्व कर्मनिकी स्थिति रचनाविषैं द्रव्य एक १ स्थिति आयाम १ गुणहानि आयाम १ दलशलाका कहिए नाना गुणहानि १ निषेकच्छेद कहिए दो गुणहानि १ अन्योन्याभ्यस्त १ ए छहराशी जानने । तहां कर्म रूप परिणए पुद्गल परमाणूं तिनका प्रमाण सो द्रव्य राशी जानना बहुरि पूर्वोक्त प्रकार कर्मनिकी स्थितिके समयनिका प्रमाण सो स्थिति राशी जनना । बहुरि जहां दूणा दूणा घाटि द्रव्य दीजिए ऐसी गुणहानि तिस एक गुण ११०५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हानि विषै समयनिका प्रमाण सो गुण हानि आयाम राशि जानना । बहुरि सर्वस्थितिविषैं जितनी गुणहानि पाइए तिनका प्रमाण सो नाना गुणहानि राशि जानना । बहुरि गुणहानिके आयामके प्रमाणकौं दूणा कीए जो प्रमाण होइ सो दो गुणहानि राशि जानना । बहुरि नानागुणहानिका जितना प्रमाण होइ तितने दोइके अंक मांडि परस्पर गुणें जो प्रमाण होइ सो अन्योन्याभ्यस्तराशि जानना ॥ ९२२ ॥

तेवट्ठिं च सयाइं अडदाला अट्ठ छक्क सोलसयं ।
चउसट्ठिं च विजाणे दव्वादीणं च संदिट्ठी ॥ ९२३ ॥

त्रिषष्टिश्च शतानि अष्टचत्वारिंशदष्ट षट्कं षोडशकं ।
चतुःषष्टिं च विजानीहि द्रव्यादीनां च संदृष्टिः ॥ ९२३ ॥

जी० प्र०—तत्रांकसंदृष्टौ द्रव्यं त्रिषष्टिशतानि जानीहि स्थितिमष्टचत्वारिंशतं गुणहानिमष्टौ नानागुणहानिं षट् दोगुणहानिं षोडश अन्योन्याभ्यस्तं चतुःषष्टिं ॥ ९२३ ॥

स० चं०—तहां अंकनिकी सहनानीविषैं दृष्टांतरूप द्रव्य तरेसठिसैं स्थिति अडतालीस गुणहानि आयाम आठ नानागुणहानि छह दो गुणहानि सोलह अन्योन्याभ्यस्त चौंसठि जानने ॥ ९२३ ॥

दव्वं समयपबद्धं उत्तपमाणं तु होदि तस्सेव ।

(१) अंकसंदृष्टिः	द्रव्य ६३००	स्थिति ४८	गुणहानि ८	नानागुणहा ६	दो गुणहा १६	अन्योन्याभ्यस्त ६४ ॥
अर्थसंदृष्टिः	द्रव्य । स ३ ७	स्थिति । प ०	गुण=प ० छे व छे	नानागुणहा=छे व छे	दोगुण । प ० । २ छे व छे	अन्योन्याभ्यस्त । प व

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जीवसहत्थणकालो ठिदिअद्धा संखपल्लमिदा ॥ ९२४ ॥

द्रव्यं समयप्रबद्धं उक्तप्रमाणं तु भवति तस्यैव ।
जीवेन सह स्थानकालः स्थित्यद्धा संख्यपल्यमिता ॥ ९२४ ॥

जी० प्र०—अर्थसंदृष्टौ तु द्रव्यं प्रागुक्तप्रमाणः समयप्रबद्धः स्यात् । स्थित्यद्धा संख्यातपल्यानि सा च जीवेन सह समयप्रबद्धस्यावस्थानकालः ॥ ९२४ ॥

स० चं०—अर्थ संदृष्टिविषैं दृष्टांतरूप यथार्थ कथन करि द्रव्य तौ पूर्वोक्त प्रमाण समय प्रबद्ध जानना एक समयविषैं जितने परमाणू बंधै तिनका कथन पूर्वं प्रदेश बंधाधिकारमैं करि आए हैं सो तिनका प्रमाणरूप तौ द्रव्यराशि है बहुरि जो बंध्या समयप्रबद्ध सो यावतकाल जीवका साथि अवस्थानरूप रहै सो स्थितिका अद्धा कहिए आयाम है सो स्थिति संख्यात पल्यप्रमाण है सो तिसके समयनिका प्रमाण सोई स्थितिराशि है ॥ ९२४ ॥

मिच्छे वग्गसलायप्पहुदिं पल्लस्स पढममूलोत्ति ।
वग्गहदी चरिमो तच्छिदिसंकलिदं चउत्थो य ॥ ९२५ ॥

मिथ्ये वर्गशलाकप्रभृति पल्यस्य प्रथममूलमिति ।
वर्गहतिश्चरमः तच्छित्ति संकलितं चतुर्थश्च ॥ ९२५ ॥

जी० प्र०—द्रव्यस्थितिगुणहानिदोगुणहानिसंदृष्टयः सप्तकर्मणां साधारणाः नानागुणहान्यन्योन्याभ्यस्तराशी चासाधारणौ तेन तयोर्विशेषं वक्तुं

२	४	१६	२५६	६५=	४२=	१८=	०००	व	व व	०००	छे	छे छे	०००	मू ३	मू २	मू १	प
१	२	४	८	१६	३२	६४	०००	छे	छे २	०३०	व	व २	०००	छे २।२।२	छे २२	छे २	छे
०	१	२	३	४	५	६	०००	व	१/व —	०००	छे	१/छे —	०००	व—३	व—२	व—१	व

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मिच्छे इत्युक्तवान् । तत्र द्विरूपवर्गधारायाः पल्यवर्गशलाकादिपल्यपर्यंतराशीन् तदर्धच्छेदान् तद्वर्गशलाकाश्च संस्थाप्य पंक्तित्रयं कृत्वा, तत्र वर्गशलाकादिपल्यप्रथममूलपर्यंतराशीनां संवर्गः पल्यवर्गशलाकाभक्तपल्यमात्रः चरमः अन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् । तदर्धच्छेदराशावंतधणं छे २ गुणगुणियं छे २ आदिविहीणं छे–व–छे इति संकलनं चतुर्थो नानागुणहानिशलाकाराशिः स्यात् ॥ ९२५ ॥

स० चं०—द्रव्य १ स्थिति १ गुणहानि आयाम १ दो गुणहानि १ इनिकी संदृष्टि तौ सातौं कर्मनिकी समान है । इहां द्रव्यस्थिति यद्यपि हीनाधिक है तथापि सामान्यपनैं द्रव्य समय प्रबद्ध प्रमाण स्थिति संख्यात पल्य प्रमाण कहनेकरि समानता जाननी । बहुरि नानागुणहानि अर अन्योन्याभ्यस्तराशि समान नाहीं है तातैं इनिका विशेष कह्या चाहैं हैं । तहां ही सत्तरि कोडाकोडि सागरकी जाकी स्थिति ऐसा मिथ्यात्व नामा कर्मविषैं प्रथम ही कहै हैं । तहां पल्यकी वर्गशलाका आदि पल्यका प्रथम मूलपर्यंत जे द्विरूप वर्गधाराके स्थान तिनकौं अर तिनहीके अर्धच्छेदनिकौं अर तिनहीकी वर्गशलाकानिकौं स्थापनकरि तीन पंक्ति करिए। प्रथम पंक्तिविषैं तौ पल्यकी वर्गशलाकाका प्रमाण नीचैं लिखिए याका वर्ग याके ऊपरि लिखिए ऐसैं क्रमतैं प्रथम मूलपर्यंत वर्गस्थान लिखिए । दूसरी पंक्तिविषैं पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदनितैं लगाय दूणे दूणे पल्यका प्रथम वर्गमूलके अर्धच्छेद पर्यंत लिखिए । तीसरी पंक्तिविषैं पल्यकी वर्गशलाकाकी शलाकातैं लगाय एक एक अधिक प्रमाण लीएं पल्यका प्रथम मूलकी वर्गशलाकापर्यंत लिखिए । तहां प्रथम पंक्तिके राशि तिनकौं परस्पर गुणैं पल्यकी वर्गशलाकाका भाग पल्यकौं दीएं जो प्रमाण आवै तितना भया सोई चरम कहिए अंतका छठा अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण जानना । बहुरि दूसरी पंक्तिका जोड दीएं पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेदनिका प्रमाणकौं पल्यका अर्धच्छेदनिका प्रमाणमैंस्यौं घटाएं जो प्रमाण रहै तितना भया । कैसैं ? सो कहिए है—

द्विरूप वर्गधाराविषैं अर्धच्छेद स्थान स्थान प्रति दूणे कहे थे सो 'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तर पदभजियं' इस करण सूत्रकरि जोड दीजिए । गुणकार करतां अंतविषैं जो प्रमाण होइ ताकौं जितनेका गुण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कार होइ ताकरि गुणिए । तिसविषैं पहिलैं जितना प्रमाण होइ सो घटाइए । जो प्रमाण होइ ताकौं एक घाटि गुणकारका भाग दीजिए यों करता जो प्रमाण होइ सो ही गुणकार रूप सर्व स्थाननिका जोड जानना । सो इहां अंतविषैं पल्यके अर्धच्छेदनितैं आधे पल्यके प्रथम मूलके अर्धच्छेद हैं । तिनकौं गुणकार इहां दोय तिनकरि गुणिए तब पल्यका अर्धच्छेद प्रमाण भया तिसविषैं पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेदनिका प्रमाण घटाइए तब पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेद राशिकरि हीन पल्यका अर्धच्छेद राशिका जो प्रमाण तितना भया । गुणकार दोयमें एक घटाएं एक रह्या ताका भाग दीएं तितने ही रहे सो इहां चौथाराशि नानागुणहानि ताका प्रमाण जानना । इस कथनकौं अंकसंदृष्टिकरि दिखाइए है—

पल्यका प्रमाण पण्णट्ठी ६५५३६ तिसकी वर्गशलाका च्यारि ताका वर्ग सोलह ताका वर्ग पण्णट्ठीका प्रथम वर्गमूल दोयसै छप्पन ए तीनौं प्रथम पंक्तिविषैं लिखने । बहुरि इन तीनोंके अर्धच्छेद च्यारिके तौ दोय सोलहके च्यारि दोयसै छप्पनके आठ ए तीनों दूसरी पंक्तिविषैं लिखने । बहुरि तिनही तीनोंकी वर्गशलाका च्यारिकी तौ एक सोलहकी दोय दोयसै छप्पनकी तीन ए तीनौं तीसरी पंक्तिविषै लिखने । तहां प्रथम पंक्तिविषै च्यारि सोलह दोयसौ छप्पनकौं परस्पर गुणें सोलह हजार तीनसै चौरासी होइ । बहुरि पण्णट्ठीकौं अपनी वर्गशलाका च्यारिका भाग दीए भी इतने ही हो हैं । बहुरि दूसरी पंक्तिविषैं दोय च्यारि आठ तहां अंतधणं गुणगुणियं इत्यादि सूत्रकरि जोडिए तब अंतधन आठ ताकौं गुणकार दोयकरि गुणें सोलह तामैं आदि दोय घटाएं चौदह एक घाटि गुणकार एकका भाग दीएं भी चौदह तिन तीनोंका जोड जानना । सोई पण्णट्ठीके अर्धच्छेद सोलह तामैं तिस पण्णट्ठीका वर्गशलाका च्यारि ताके अर्धच्छेद दोय घटाएं भी चौदह ही होइ । तीसरी पंक्तिका इहां प्रयोजन नाहीं । इस दृष्टांतकरि पूर्वोक्त कथनकौं नीकैं समझना । ऐसैं सत्तर कोडाकोडि सागर स्थितिका धारी मिथ्यात्व नामा कर्मकी अन्योन्याभ्यस्तराशि वा नानागुणहानिराशि कह्या । औरनिकी आगैं कहेंगे ॥ ९२५ ॥

वग्गसलायेणवहिदपल्लं अण्णोण्णगुणिदरासी हु ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णाणागुणहाणिसला वग्गसलच्छेदणूणपल्लछिदी ॥ १२६ ॥

वर्गशलाकयावहितपल्यमन्योन्यगुणितराशिर्हि ।
नानागुणहानिशला वर्गशलच्छेदन्यूनपल्यच्छित्तिः ॥ १२६ ॥

जी॰ प्र॰—पल्यवर्गशलाकाभक्तपल्यमन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात्। नानागुणहानिशलाकाराशिः खलु पल्यवर्गशलाकानामर्धच्छेदैर्न्यूनपल्यच्छेदमात्रः ॥ १२६ ॥ अथ गुणहान्यायामप्रमाणमाह—

स॰ चं॰—ऐसें पल्यकी वर्गशलाकाका भाग पल्यकौं दीएं जो प्रमाण होइ तितना तौ अन्योन्याभ्यस्तराशी जानना। बहुरि पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदनिकौं पल्यके अर्धच्छेदनिमैं घटाएं जो प्रमाण होइ तितना नाना गुणहानि राशी जानना ॥ १२६ ॥ आगै गुणहानि आयामका प्रमाण कहैं हैं—

सव्वसलायाणं जदि पयदणिसेये लहेज्ज एक्कस्स ।
किं होदित्ति णिसेये सलाहिदे होदि गुणहाणी ॥ १२७ ॥

सर्वशलाकानां यदि प्रकृतनिषेके लभ्यते एकस्य ।
किं भवतीति निषेके शलाहिते भवति गुणहानिः ॥ १२७ ॥

जी॰ प्र॰—सर्वनानागुणहानिशलाकानां यदि प्रकृतसर्वस्थितिनिषेका लभ्यंते तदा एकगुणहानिशलाकायाः किं स्यादिति त्रैराशिकेन निषेके नानागुणहानिशलाकाभक्ते प छे—व—छे। फ—प १। इ प १ लब्धं गुणहान्यायामः स्यात् प / छे व छे ॥ १२७ ॥ अथ दोगुणहानिप्रमाणं तत्प्रयोजनं चाह—

स॰ चं॰—सर्व नानागुणहानि शलाकानिका जो स्थितिके सर्व निषेक होंइ तौ एक गुणहानि शलाकाके केते निषेक होंइ ऐसैं त्रैराशिक करना। तहां प्रमाणराशि नानागुणहानिका प्रमाण सो इहां पल्यकी वर्गशला- ११९०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

काका अर्धच्छेदनिकरि हीन पल्यका अर्धच्छेद प्रमाण है। अर फलराशि सर्व स्थितिके निषेक सो इहां संख्यात पल्य प्रमाण हैं । अर इच्छाराशि शलाका एक तहां फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सोई गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। जैसें अंकसंदृष्टिकरि प्रमाणराशि नानागुणहानि छह फलराशि स्थिति अड़तालीस इच्छाराशि एक गुणहानि। फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीएं गुणहानि आयामका प्रमाण आठ हो है। एक गुणहानिविषैं एते निषेक पाइए है ॥ ९२७ ॥ आगैं दो गुणहानिका प्रमाण वा ताका प्रयोजन कहैं हैं—

दोगुणहाणिपमाणं णिसेयहारो दु होइ तेण हिदे।
इट्ठे पढमणिसेये विसेसमागच्छदे तत्थ ॥ ९२८ ॥

द्विगुणहानिप्रमाणं निषेकहारस्तु भवति तेन हिते।
इष्टे प्रथमनिषेके विशेष आगच्छति तत्र ॥ ९२८ ॥

जी॰ प्र॰—तु पुनः द्विगुणितं तद्गुणहानिप्रमाणं निषेकहारः स्यात् । तेन हारेण इष्टगुणहानिप्रथमनिषेके भक्ते तद्गुणहानौ विशेषप्रमाणं स्यात् ॥ ९२८ ॥ एवं द्रव्यादीनां प्रमाणं ज्ञापयित्वोत्तरकृत्यमाह—

स॰ चं॰—गुणहानि आयामके प्रमाणकौं दूणा कीएं दो गुणहानि हो है । इसहीका निषेकहार ऐसा नाम है। इस दो गुणहानि प्रमाण भागहारका भाग विवक्षित गुणहानिके पहिले निषेककौं दीएं जो प्रमाण आवै सोई तिस गुणहानिविषैं विशेष जानना । निषेक निषेक प्रति जितने जितने आदि निषेकतैं अंत निषेक पर्यंत घटते जांहि वा अंत निषेकतैं आदि निषेकपर्यंत बधते जाहि तितने प्रमाणका नाम विशेष है वा इसहीका नाम चय है ॥ ९२८ ॥ ऐसें द्रव्यादिका प्रमाणका ज्ञान करवाय अन्य कार्य कहैं हैं—

रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं च चरिमगुणदव्वं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होदि तदो दुगुणकमो आदिमगुणहाणिदव्वोत्ति ॥ ९२९ ॥

रूपोनान्योन्याभ्यस्तावहितद्रव्यं च चरमगुणद्रव्यं ।
भवति ततो द्विगुणक्रममादिमगुणहानिद्रव्यमिति ॥ ९२९ ॥

जी० प्र०—विवक्षितमिथ्यात्वकर्मसमयप्रबद्धद्रव्यं ६३०० रूपोनान्योन्याभ्यस्तराशिना भक्तं $\frac{६३००}{६३}$ नानागुणहानिषु चरमगुणहानिद्रव्यप्रमाणं स्यात् १०० । ततः पश्चात् अधोधः प्रथमगुणहानिपर्यंतं द्विगुणक्रमं स्यात्

१००	१
१००	२
१००	४
१००	८
१००	१६
१००	३२

॥ ९२९ ॥ एवं नानागुणहानिद्रव्येषु ज्ञातेषु किंकर्तव्यमित्यत आह—

स० चं०—एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग सर्व द्रव्यकौं दीएं जो प्रमाण आवै सोई अंत गुणहानिका द्रव्य जानना। यातैं दूणा दूणा आदि गुणहानिपर्यंत द्रव्य जानना। अंकसंदृष्टिकरि मिथ्यात्वका सर्वद्रव्य तरेसठिसै याकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्तराशि तरेसठिका भाग दीएं सौ पाए सो अंतकी छठी गुणहानिका द्रव्य जानना। यातैं पंचमी आदि गुणहानिविषैं दूणा दूणा द्रव्य पहिली गुणहानि पर्यंत जानना—

१००
२००
४००
८००
१६००
३२००

॥ ९२९ ॥ ऐसैं नाना गुणहानिविषैं द्रव्य जानि कहा करना ? सो कहैं हैं—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रूऊणद्धाणद्धेणूणेण णिसेयभागहारेण ।
हदगुणहाणिविभाजिदे सगसगदव्वे विसेसा हु ॥ १३० ॥

रूपोनाध्वानार्धेनोनेन निषेकभागहारेण ।
हतगुणहानिविभाजिते स्वकस्वकद्रव्ये विशेषा हि ॥ १३० ॥

जी० प्र०—तत्तद्गुणहानिद्रव्ये ३२०० । १६०० । ८०० । ४०० । २०० । १०० । रूपोनगुणहान्यर्धेनोननिषेकभागहारेण गुणितगुण-हान्या भक्ते सति तत्तद्गुणहानिचयाः स्युः—

३२००	१६००	८००	४००	२००	१००
१ ⌒ ८ । १६–८ २	१ ⌒ ८ । १६–८ २	१ ⌒ ८ । १६–८ २	१ ⌒ ८ । १६ । ८ २	१ ⌒ ८ । १६ । ८ २	१ ⌒ ८ । १६ । ८ २

३२ । १६ । ८ । ४ । २ । १ ॥ १३० ॥

स० चं०—विवक्षित गुणहानिके द्रव्यकौं एक घाटि गुणहानि आयाम प्रमाण जो गच्छ ताका आधा प्रमाणकौं निषेक भागहार जो दो गुणहानि तामैं घटाएं जो प्रमाण रहै ताकरि गुणहानि आयामकौं गुणें जो प्रमाण होइ ताका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सोई तिस गुणहानिविषैं विशेष जानना । अंक संदृष्टिकरि गुणहानि आयामका प्रमाण आठ एक घटाएं सात ताके आधे साढा तीन याकौं निषेक भागहार सोलहमैं घटाएं साढा बारा ताकरि गुणहानि आयाम आठकौं गुणें सौ होइ ताका भाग प्रथम गुणहानिका द्रव्य बत्तीससैकौं दीएं बत्तीस पाया सोई प्रथम गुणहानिविषैं चयका प्रमाण हो है । दूसरी गुणहानिका द्रव्य सोलहसैकौं ताका भाग दीएं सोलह पाया सोई द्वितीय गुणहानिविषैं चय है । ऐसैं ही तृतीयादि गुणहानिका द्रव्य आठसै च्यारिसै दोयसै सौकौं ताका भाग दीएं आठ च्यारि दोय एक पाए सोई तिन गुणहानिविषैं चय जानना । चयकौं जाननेकौं पूर्वै विधान कह्या था परंतु पहिले ही आदि निषेकका ज्ञान कैसैं होइ ? तातैं इहां अन्य विधान कह्या ॥ १३० ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

पचयस्स य संकलणं सगसगगुणहाणिदव्वमज्झम्हि।
अवणिय गुणहाणिहिदे आदिपमाणं तु सव्वत्थ ॥ ९३१ ॥

प्रचयस्य च संकलनं स्वकस्वकगुणहानिद्रव्यमध्ये।
अपनीय गुणहानिहिते आदिप्रमाणं तु सर्वत्र ॥ ९३१ ॥

टी॰ प्र॰—तत्प्रचयस्य संकलितधनमानीय स्वस्वगुणहानिद्रव्यमध्येऽपनीय शेषे गुणहान्या भक्ते स्वस्वगुणहानिप्रथमनिषेकप्रमाणमधिकसंकलनरूपेण स्यात्। तत्र प्रथमगुणहानौ चयधनमिदं $\frac{८}{२}$ । ३२ । ८ । लब्धं ८९६ । तत्सर्वद्रव्ये ३२०० । अपनीय शेषं २३०४ गुणहान्या भक्तमादिनिषेकप्रमाणं स्यात् २८८ अस्योपर्येकैकस्वविशेषवृद्धौ संदृष्टिः—२८८ । ३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० । ५१२ । तथा द्वितीयगुणहानि १४४ । १६० । १७६ । १९२ । २०८ । २२४ । २४० । २५६ । तृतीयगुणहानि ७२ । ८० । ८८ । ९६ । १०४ । ११२ । १२० । १२८ । चतुर्थगुणहानि ३६ । ४० । ४४ । ४८ । ५२ । ५६ । ६० । ६४ । पंचमगुणहानि १८ । २० । २२ । २४ । २८ । ३० । ३२ । षष्ठगुणहानि ९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । उक्तस्थितिरचनांकसंदृष्टिः—

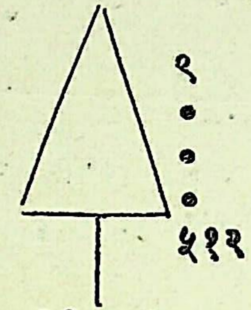

अत्रायमर्थः—कश्चिद्विवक्षिते समये मिथ्यात्वाविरमणं कषाययोगैरायुर्विना सप्तकर्मणामुत्कृष्टसमयप्रबद्धं सर्वात्मप्रदेशैराहरति तदिदं स छे अ/a अपवर्त्य सप्तभिर्भक्तं मोहनीयस्य स a/७ पुनरनंतेन भक्तं सर्वघातिनः स a १/७ ख पुनः मिथ्यात्वषोडशकषायैर्भक्तं मिथ्यात्वस्य स a १/७ ख १७ पुनः सप्ततिको-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टीकोटिसागरोपमस्वस्थितेः पल्यवर्गशलाकार्धच्छेदोनपल्यार्धच्छेदमात्रनानागुणहानिमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नेनान्योन्याभ्यस्तेन पल्यवर्गशलाकाभक्तपल्य-मात्रेण रूपोनेन भक्तं चरमगुणहानिः स a १ / ७ ख १७ अ   १ ⌢ तदधोधः प्रतिगुणहानि द्विगुणं द्विगुणं। संदृष्टिः—

चरम स a १   १ ⌢   ७ ख १७ अ
स a २   १ ⌢   ७ ख १७ अ
०   ०   ०
स a अ   १ ⌢   ७ ख १७। २। २। अ
प्रथम स a अ   १ ⌢   ७ ख १७ अ २

ततः रूऊण- १ ⌢ / द्धाण गु अद्धेण १ ⌢ / गु ऊणेण खिसे- २ १ / यभागहारेण गु ३ / २ १ / हदगुणहाणि गु गु ३ / २ विभजिदे सगसगगुण-हाणिदव्वे विसेसा हु ततः प्रथमादिगुण-हानीनामानीतप्रच-यधनानि संदृष्टिः—

चरम स a १   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ गु गु ३ / २
द्विचरम स a २   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ गु गु ३ / २
०   ०   ०
द्वितीय स a अ   १ ⌢   १   ७ ख १७। अ २। २। गु गु ३ / २
प्रथम स a अ   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ २ गु गु ३ / २

१ ⌢   स a। १ गु गु   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ गु। गु ३ / २
१ ⌢   स a। २ गु गु   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ गु गु ३ / २
०   ०   ०
१ ⌢   स a अ गु गु   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ २। २। गु ३ / २। २
१ ⌢   स a अ गु गु   १ ⌢   १   ७ ख १७ अ २। गु गु ३ / २। २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एतानि स्वस्वगुणहानिद्रव्येभ्यो गृहीत्वा शेषेषु गुणहान्या भक्तेषु स्वस्वगुणहानीनामादिनिषेका अधिकसंकलनक्रमेण स्युः। ते चाधोधः स्वस्वप्रथमनिषेकपर्यंतं स्वस्वैकैकचयाधिकाः स्युः। तद्यथा—

प्रथमगुणहानिद्रव्यं स ∂ । अ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ उपर्यधो रूपाधिकत्रिगुणहान्या संगुणय स ∂ । अ गु ३ १̄ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ अंशस्थिताधिकरूपं पृथक्कृत्य—

स ∂ अ १ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ चयधन स ∂ अ गु गु १ ̂ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु गु ३ १̄ । २ / २ स्थांशहारगुणहानी अपवर्त्य स ∂ अ गु १ ̂ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ । २ / २ हाररूपाधिकत्रि-

गुणगुणहानेर्हारद्विकं गुणहारद्विकेनापवर्त्य स ∂ अ गु १ ̂ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ गुणहान्युपरिस्थितं ऋणरूपं ऋणस्य ऋणं राशेर्धनमिति पृथग्धृतरूपे निक्षिप्य

स ∂ अ २ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ गुणकारद्विकं हाररूपाधिकत्रिगुणगुणहानेर्हारं कृत्वा पृथग्धृत्वा स ∂ अ १ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ / २ तच्चयधनशेषेण

स ∂ अ गु १ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ ऊनयित्वा स ∂ अ गु २ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ गुणहानेर्गुणकारद्विकं हाररूपाधिकत्रिगुणगुणहानेर्हारं कृत्वा

स ∂ अ गु / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ / २ पृथग्धृतं धनं स ∂ अ १ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ / २ निक्षिप्य गुणहान्या स ∂ अ गु १̄ / ७ ख १७ अ १ ̂ २ गु ३ १̄ / २ भक्तं अधिकसंकलन-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्रमेण प्रथम २८८ निषेकः स ə अ गु (१/७ ख १७ अ ^ २ गु ३/२ गु) अथः चयाधिकक्रमेण चरमो ५१२ रूपोनगुणहानिमात्र—

चया—स ə अ गु (१/७ ख १७ अ ^ २ गु ३/२ गु) धिको भूत्वा दोगुणहानिमात्रचयो भवति स ə अ गु २ (१/७ ख १७ अ ^ २ गु ३ गु) हीनक्रमेण तु त्रिकोणरचनावज्ज्ञातव्यं।

तद्यथा— प्रथमगुणहानिधने गुणहान्या भक्ते मध्यधनं स ə अ (१/अ ^ २ गु) तच्च रूपोनाध्वाना गु (१) हीनेन गु/२ (१) निषेक-

हारेण गु ३/२ (१) अपहृतं प्रचयः स ə अ स ख दोगुणहान्या गुणित आदिनिषेकः स ə अ गु २ (१/अ ^ २ गु गु ३/२) उपर्येकैकचयहीनो भूत्वा चरमो रूपाधिकगुण- (१/अ ^ २ गु गु ३/२)

हानिमात्रचयो भवति स ə। अ गु (१/अ ^ २ गु गु ३/२) एवं शेषगुणहानिष्वपि कृते तदंकार्थसंदृष्टी—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

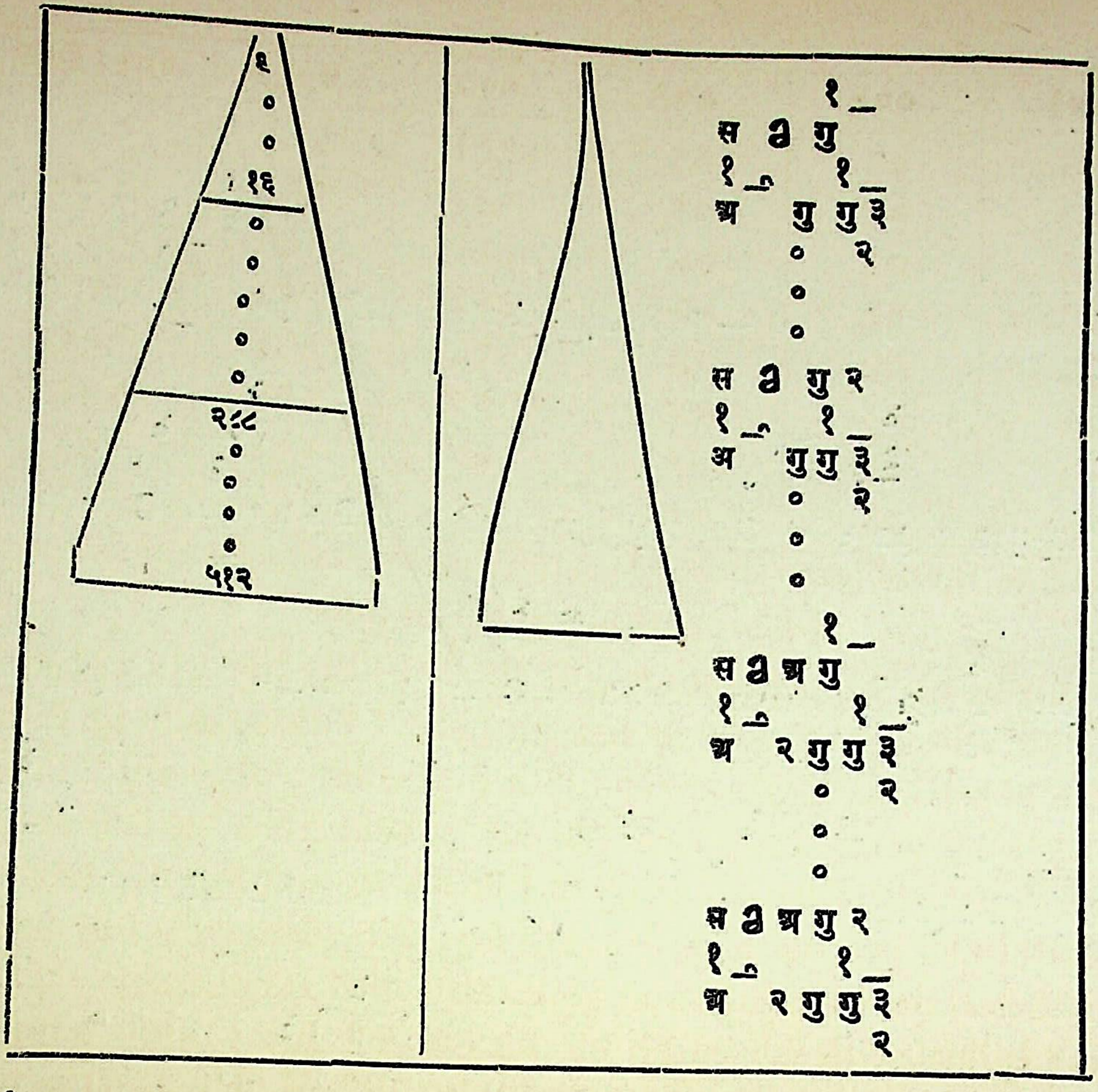

एवमायुर्विना सप्तकर्मणां स्थितिनिषेकरचना प्रतिसमयं स्यात् । किंतु—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—विवक्षित गुणहानिकौं मिलाएं सर्व चयधनका जो प्रमाण होइ ताकौं अपना अपना गुणहानिका सर्व द्रव्यमैंस्यों घटाएं जो प्रमाण रहै ताकौं गुणहानि आयामका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सोई आदि कहिए चयरहित अंतका निषेकविषैं प्रमाण जानना। यामैं क्रमतैं एक एक चय बधावतैं एक घाटि गुणहानि प्रमाण चय मिलैं प्रथम निषेकविषैं प्रमाण हो है। अंकसंदृष्टिकरि प्रथम गुणहानिविषैं 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस करण सूत्रकरि एक घाटि गच्छ सात ताकौं आधा साढा तीन ताका चय बत्तीसकरि गुणें एकसौ बारह ताकौं गच्छ आठकरि गुणें आठसै छिनवै होइ सोई प्रचयधन जानना। याकौं सर्व द्रव्य बत्तीससैमैं घटाएं तेईससै च्यारि रहे। तिनकौं गुणहानि आठका भाग दीएं दोयसै अठ्यासी भए सोई अंत निषेकका प्रमाण है। यामैं एक एक चय बत्तीस बत्तीस बधाएं द्वितीयादि निषेकनिविषैं प्रमाण हो है याही प्रकार द्वितीयादि गुणहानिविषैं चयका प्रमाण आधा आधा है तातैं प्रचयधन भी आधा आधा है। ताकौं सर्व द्रव्य भी आधा आधा है तामैं घटाएं जो जो प्रमाण रहै ताकौं गुणहानि आयामका भाग दीएं अंत निषेक होइ यामैं अपना अपना एक चय मिलाएं अन्य निषेक हो है।

अंक संदृष्टिकरि निषेकनिका यंत्र।

प्रथम गुणहानि	द्वितीय गुणहानि	तृतीय गुणहानि	चतुर्थ गुणहानि	पंचम गुणहानि	षष्ठ गुणहानि
२८८	१४४	७२	३६	१८	९
३२०	१६०	८०	४०	२०	१०
३५२	१७६	८८	४४	२२	११
३८४	१९२	९६	४८	२४	१२
४१६	२०८	१०४	५२	२६	१३
४४८	२२४	११२	५६	२८	१४
४८०	२४०	१२०	६०	३०	१५
५१२	२५६	१२८	६४	३२	१६
जोड ३२००	१६००	८००	४००	२००	१००

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

याप्रकार जैसें अंकसंदृष्टिकरि कथन कीया तैसें ही यथार्थ कथन जानना। विशेष इतना इहां प्रमाण जैसा कहिए तैसें जानना। सो अर्थ दिखाइए है—

कोई जीव विवक्षित एक समयविषैं मिथ्यात्व अविरत कषाय योगनिकरि आयु विना सात कर्मनिके उत्कृष्ट समय प्रबद्धकौं सर्व आत्माके प्रदेशनिकरि ग्रहण करै है। सो उत्कृष्ट समय प्रबद्ध जघन्य समय प्रबद्धतैं पल्यके अर्धच्छेदांके असंख्यातवे भाग गुणा है। अपवर्तन कीएं जघन्य समय प्रबद्धतैं असंख्यात गुणा है। इस उत्कृष्ट समय प्रबद्धके परमाणूनिका प्रमाणरूप द्रव्यकौं सातका भाग दीएं मोहनीयका द्रव्य होइ। बहुरि याकौं अनंतका भाग दीएं मोहनीयका सर्वघाती द्रव्य होइ याकौं एक मिथ्यात्व सोलह कषाय इनि सतरहनिका भाग दीएं मिथ्यात्वका द्रव्य होइ सो यहु तौ सर्वद्रव्यका प्रमाण जानना। बहुरि इस मिथ्यात्वकी सत्तर कोडाकोडी सागरके जेते समय होंहि तीहि प्रमाण स्थिति जाननी। बहुरि पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेदनिकरि हीन ऐसे पल्यके अर्धच्छेदनिका जेता प्रमाण तितनी नानागुणहानि है। बहुरि नानागुणहानि प्रमाण दोयका अंक माडि परस्पर गुणें पल्यकी वर्गशलाकाकरि हीन पल्यप्रमाण अन्योन्याभ्यस्तराशी जाननी। इस अन्योन्याभ्यस्तराशिमैंस्यौं एक घटाय याका भाग सर्वद्रव्यकौं दीएं जो प्रमाण होइ सो अंतका गुणहानिका द्रव्य जानना। तीसूं नीचैं आदिकी गुणहानिपर्यंत द्रव्य दूणा दूणा जानना। बहुरि—

रूऊणद्धाणद्धेणूणेण णिसेयभागहारेण।
हदगुणहाणिविभजिदे सगसग (गुणहाणि) दव्वे विसेसा हु॥

इस सूत्रकरि एक घाटि गुणहानि आयाम प्रमाण गच्छ ताका आधा प्रमाणकौं दो गुणहानिमैंस्यौं घटाएं जो प्रमाण अर्ध अधिक ड्योढ गुणहानि प्रमाण भया ताकौं गुणहानि आयामकरि गुणें जो प्रमाण होइ ताका भाग विवक्षित गुणहानिके द्रव्यकौं दीएं जो प्रमाण आवै तितना तितना अपनी अपनी गुणहानिविषैं विशेष जानना। बहुरि—'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' इस सूत्रकरि एक घाटि गुणहानि आयाम प्रमाण गच्छका आधाकौं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपना अपना चयकरि गुणि तिस गच्छकरि गुणें जो जो प्रमाण होइ तितना तितना अपनी अपनी गुणहानिविषें प्रचयधन जानना। बहुरि प्रचयधनकौं अपनी अपनी गुणहानिका द्रव्यमैंस्यों घटाएं अवशेष रहै ताकौं गुणहानि आयामका भाग दीएं जो जो प्रमाण होइ सो सो अपनी अपनी गुणहानिका अंतनिषेकविषैं द्रव्य हो है। यामैं एक एक अपना अपना चय प्रथम निषेक पर्यंत मिलाएं अन्य निषेकनिविषैं प्रमाण हो है। एक घाटि गुणहानि प्रमाण चय अंत निषेक विषैं मिलैं आदि निषेकविषैं चयकौं दो गुणहानिकरि गुणें जो प्रमाण होइ तितना प्रमाण हो है। अैसैं अंत निषेककौं आदि स्थापि क्रमतैं चयकरि बधता बंधता अनुक्रमकरि कथन कीया। बहुरि प्रथम निषेकतैं अंत निषेकपर्यंत घटता घटता अनुक्रमकरि त्रिकोणरचनावत् जानना। सो कहिए है—

प्रथम गुणहानिके द्रव्यकौं गुणहानि आयामका भाग दीएं वीचिविषैं प्रमाणरूप मध्यम धन होइ जैसैं प्रथम गुणहानिका द्रव्य बत्तीससैकौं गुणहानि आठका भाग दीएं मध्य धन च्यारिसै होइ। इहां चौथा पांचवां निषेकका प्रमाण मिलाय आधा कीजिए सोई मध्य धन जानना। याकौं एक घाटि गुणहानि आयामका आधा करि हीन निषेक भागहारका भाग दीएं चयका प्रमाण हो है। जैसैं एक घाटि गुणहानि सात ताका आधा साढा तीन सो निषेक भागहार सोलामैं घटाएं साढा बारा है ताका भाग मध्यधन च्यारिसैकौं दीए चयका प्रमाण बत्तीस हो है। इस चयकौं दोगुण हानिकारि गुणें प्रथम निषेक हो है जैसैं चय प्रमाण बत्तीसकौं दोगुणहानि सोलाकरि गुणे पांचसै बारह प्रमाण रूप प्रथम निषेक हो है। यामैं एक २ चय घटाएं अंत निषेक एक अधिक गुणहानि प्रमाण चय रूप होइ जैसैं गुणहानि आठ एक अधिक कीए नव अर चय प्रमाण बत्तीस सो नव बत्तीसके दोयसै अठ्यासी भए सोई अंतनिषेकविषै प्रमाण जानना। अैसैं ही और गुणहानिविषै भी जानना। संदृष्टि—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

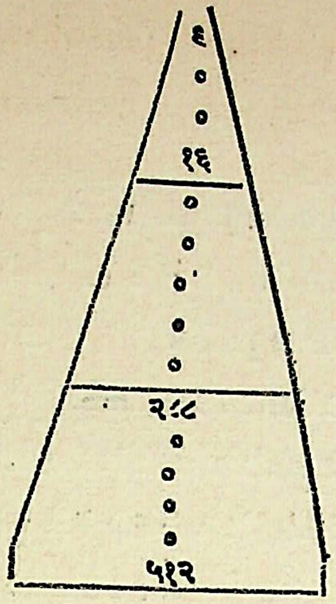

इस रचनाविषै प्रथम गुणहानिका आदि निषेकविषै पांचसै बारह, मध्यनिषेकके ग्रहणनिमित्त वीचि विंदी लिखीं अंतनिषेकविषै दोयसै अठ्यासी। बहुरि मध्यगुणहानिके निषेक ग्रहणनिमित्त वीचि विंदी लिखीं। बहुरि अंत गुणहानिविषैं प्रथम निषेक सोलह वीचिके ग्रहण निमित्त विंदी अंतनिषेकविषैं नव ऐसी अंक संदृष्टि है। अर्थ संदृष्टि सवही आगें संदृष्टि अधिकारविषै लिखेंगे तहां जाननी। जैसैं यहु मिथ्यात्वका कथन उत्कृष्ट स्थिति वा उत्कृष्ट समय प्रबद्धकी अपेक्षा कह्या है तैसैं याहीका मध्य जघन्य स्थिति वा समय प्रबद्धकी अपेक्षा वा अन्य प्रकृतिनिकी यथासंभव विवक्षित स्थिति वा समय प्रबद्धकी अपेक्षा कथन जानना। जैसी जहां स्थिति होइ तैसा तहां स्थितिका प्रमाण जानना। बहुरि जैसा जहां समयप्रबद्ध होइ तैसा तहां द्रव्यका प्रमाण जानना। दो गुण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हानि अर गुणहानि आयामका प्रमाण सर्वविषै समान जानना। नाना गुणहानि अन्योन्याभ्यस्त राशि स्थितिके अनुसारि जानना। ऐसैं आयु विना सात कर्मनिकी स्थितिविषैं निषेक रचना समय समय प्रति हो है ॥ ९३१ ॥

सव्वासिं पयडीणं णिसेयहारो य एयगुणहाणी।
सारिसा हवंति णाणागुणहाणिसलाउ वोच्छामि ॥ ९३२ ॥

सर्वासां प्रकृतीनां निषेकहारश्च एकगुणहानिः।
सदृशे भवतः नानागुणहानिशला वक्ष्यामि ॥ ९३२ ॥

जी० प्र०—सर्वमूलोत्तरप्रकृतीनां निषेकहारः एकगुणहान्यायामश्च द्वौ सदृशौ। नानागुणहानिशलाकाः स्थित्यनुसारित्वाद्विसदृशाः स्युः। ता वक्ष्यामि ॥ ९३२ ॥

स० चं०—सर्व मूल प्रकृतिनिका निषेकहार जो दोगुणहानि अर एक गुणहानि आयाम ए दोऊ तौ समान हैं बहुरि नाना गुणहानि शलाका स्थितिके अनुसारि हैं तातैं समान नाहीं सो तिन नाना गुणहानि शलाकानिकौं कहैं हैं ॥ ९३२ ॥

मिच्छत्तस्स य उत्ता उवरीदो तिण्णि तिण्णि संमिलिदा।
अट्ठगुणेणूणकमा सत्तसु रइदा तिरिच्छेण ॥ ९३३ ॥

मिथ्यात्वस्य च उक्ता उपरितः त्रयस्त्रयः संमिलिताः।
अष्टगुणेनोनक्रमाः सप्तसु रचिता तिरश्चा ॥ ९३३ ॥

जी० प्र०—मिथ्यात्वस्य ये पल्यवर्गशलाकादितत्प्रथममूलांतानां द्विगुणद्विगुणार्धच्छेदा उक्तास्ते संस्थाप्य उपरितस्त्रयस्त्रयो राशयो मिलिता

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

अष्टाष्टगुणोनहीनक्रमाः स्युः। तद्यथा—पल्यस्य प्रथमद्वितीयतृतीयमूलार्धच्छेदाः छे / २, छे / २।२, छे / २।२।२ अंतधणं छे / २ गुणगुणियं छे / २ आदि छे / ८ विहीणं छे ७ / ८ रूऊ-

णुत्तरभजियमिति मिलिताः छे ७ / ८।१ तथा चतुर्थपंचमषष्ठमूलार्धच्छेदाः छे / ८।२, छे / ८।२।२, छे / ८।२।२।२ ।मिलिताः सप्तमाष्टमनवममूलार्धच्छेदा छे / ८।८।२, छे / ८।८।४, छे / ८।८।८

।मिलिताः छे।७ / ८।८।८ एवमवतीर्यावतीर्य पल्यवर्गशलाकानामष्टमसप्तमषष्ठवर्गार्धच्छेदाः व छे ८।८।४, व छे ८।८।२, व छे ८।८।१ ।मिलिताः व छे ८।८।७ / १ पंचमचतुर्थतृ-

(१)	छेद	मूल
छे ७ / ८।१	छेद २।१	मू १
	छेद २।२	मू २
	छेद २।३	मू ३
छे ७ / ८।८।१	छेद २।४	मू ४
	छेद २।५	मू ५
	छेद २।६	मू ६
छे ७ / ८।८।८।१	छेद २।७	मू ७
	छेद २।८	मू ८
	छेद २।९	मू ९
०००	० ० ०	० ० ०
व छे ७ / ८।८।१	व छे २५६	व ८
	व छे १२८	व ७
	व छे ६४	व ६
व छे ७ / ८।१	व छे ३२	व ५
	व छे १६	व ४
	व छे ८	व ३
व छे ७	व छे ४	व २
	व छे २	व १
	व छे	व
	०	०
	०	०
	०	०
	६४	१८=
	३२	४२=
	१६	६५=
	८	२५६
	४	१६
	२	४
	१	२

तीयवर्गार्धच्छेदाः व छे ८ । ४ मिलिताः व छे ८ । ७ द्वितीयप्रथमवर्गयोर्वर्गशलाकानां चार्धछेदाः व छे ४ मिलिताः व छे ७ अमी मिलित-
व छे ८ । २   १   व छे २   १
व छे ८ । १   व छे १
राशयः सर्वे सप्तसु स्थानेष्वग्रेऽग्रे रचयितव्याः ॥ ९३३ ॥

स० चं०--मिथ्यात्व प्रकृतिके जे पल्य वर्गशलाकाके अर्धच्छेदनिकौं आदि देकरि पल्यके प्रथम मूलके अर्धच्छेदनि पर्यंत दूणे दूणे अर्धच्छेद एक एक वर्गस्थानविषैं कहे तिनिकौं स्थापन करि ऊपरितैं पल्यका प्रथम मूलतैं लगाय तीन तीन वर्ग स्थाननिके अर्धच्छेदराशि मिलाइए ते आठ आठ गुणा घाटि अनुक्रमतैं हो हैं। सोही कहिए है--

पल्यके प्रथम वर्गमूलके अर्धच्छेद पल्यके अर्धच्छेदनितैं आधे इनतैं आधे पल्यके दूसरा वर्गमूलके अर्धच्छेद इनतैं आधे पल्यके तीसरा वर्गमूलके अर्धच्छेद इनि तीनूका जोड दीजिए 'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं' इस सूत्रकरि अंतविषैं धन पल्यके अर्धच्छेदनितैं आधे प्रथम मूलके अर्धच्छेद इनकौं गुणकार दोय-करि गुणैं पल्यके अर्धच्छेद प्रमाण होहि इनिविषैं आदिके पल्यके तीसरा मूलके अर्धच्छेद पल्यके अर्धच्छेदनिके

(१)

छे ७ ८	छे ७ ८	छ ७ ८	छे ७ ८	छे ७ ८	छे ७ ८
छे ७ ८ । ८	छे ७ ८ । ८	छे ७ ८ । ८	छे ७ ८ । ८	छे ७ ८ । ८	छे ७ ८ । ८
छे ७ ८ । ८ । ८	छे ७ ८ । ८ । ८	छे ७ ८ । ८ । ८	छे ७ ८ । ८ । ८	छे ७ ८ । ८ । ८	छे ७ ८ । ८ । ८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
व छे ७ । ८ । ८	व छे ७ । ८ । ८	व छे ७ । ८ । ८	व छे ७ । ८ । ८	व छे ७ । ८ । ८	व छे ७ । ८ । ८
व छे ७ । ८	व छे ७ । ८	व छे ७ । ८	व छे ७ । ८	व छे ७ । ८	व छे ७ । ८
व छे ७	व छे ७	व छे ७	व छे ७	व छे ७	छे ७

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आठवे भागतैं घटाइए तब सात गुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका आठवां भाग आया एक घाटि गुणकार एक ताका भाग दीएं भी तितने ही रहे सोई तिन तीनू राशीनिका जोड जानना। ऐसैं ही करि पल्यके चौथा पांचवां छठा वर्गमूलके अर्धच्छेद पल्यके अर्धच्छेदानितैं सोलहे बतीसवें चौसठिवे भाग हैं तिन तीनौं राशिका जोड पूर्ववत् दीएं सात गुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका चौसाठिवां भाग भया सो पूर्वले जोडतैं आठ गुणा घाटि हूवा ऐसैं ही पहले पहलैंतैं आधे आधे सातवां आठवां नवां पल्यका वर्गमूलके अर्धच्छेदानिकौं जोडैं सातगुणा पल्यके अर्धच्छेदानिका पांचसै बारहवां भाग भया सो पूर्वले जोडतैं आठ गुणा घाटि हूवा। याही प्रकार उतरि उतरि करि तिन तीन वर्ग स्थानानिके अर्धच्छेद जोडैं आठ आठ गुणे घाटि होते जांय बहुरि उतरते उतरते पल्यकी वर्ग शलाकाका आठवां सातवां छठा वर्गके अर्धच्छेद पल्यकी वर्ग शलाकाके अर्धच्छेदानितैं दोयसै छप्पन गुणे एकसौ अट्ठाईसगुणे चौंसठ गुणे हैं। तीन तीन राशिकौ जोडें पल्य वर्गशलाकाका अर्धच्छेदानितैं च्यारिसै अठतालीस गुणा हूवा। बहुरि पल्यकी वर्ग शलाकाका पांचवां चौथा तीसरा वर्गके अर्धच्छेद पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेदानितैं बत्तीस सोलह आठ गुणे हो हैं। तिन तीन राशिके जोडैं पल्य वर्ग शलाका अर्धच्छेदानितैं छप्पन्न गुणे हो हैं ते पूर्वराशितैं आठगुणे घाटि भए। बहुरि पल्यकी वर्गशलाकाका दूसरा वर्ग पहला वर्ग अर वर्गशलाका इन तीनोके अर्धच्छेद पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेदानितैं चौगुणे दूणे इकगुणे हैं तिन तीनौंके जोडैं पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदनितैं सात गुणे हो हैं। सो पूर्वराशितैं आठगुणा घाटि भए। ऐसैं आठ आठ गुणा घाटि जानना। इहां पल्यका वर्गमूल करिए सो प्रथम मूल जानना। प्रथम मूलका वर्गमूल करिए सो दूसरा मूल जानना। दूसरा मूलका वर्गमूल करिए सो तीसरा मूल जानना। ऐसैं ही चौथा आदि मूल जानना। बहुरि पल्यकी वर्गशलाकाका वर्ग करिए सो प्रथम वर्ग जानना। प्रथम वर्गका वर्ग करिए सो दूसरा वर्ग जानना। ताका वर्ग करिए सो तीसरा वर्ग जानना ऐसैं ही चौथा आदि वर्ग जानना सो पल्यका पहला दूसरा तीसरा मूलके अर्धच्छेद जोडैं जो राशि भई तींहिस्यो लगाय तीन तीन स्थानानिके अर्धच्छेद जोडैं जो जो राशि पल्यकी वर्ग शलाकाका दूसरा पहला वर्ग

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर पल्यकी वर्ग शलाका इन तीनोंके अर्धच्छेद जोडैं जो जो राशि होइ तहां पर्यंत सर्व जोडे हूए असंख्यात राशि जुदे जुदे सात स्थाननिविषै आगै आगै रचना रूप करने ॥ १३३ ॥

तत्थंतिमच्छिदिस्स य अट्ठमभागो सलायछेदा हु ।
आदिमरासिपमाणं दसकोडाकोडिपडिबद्धे ॥ १३४ ॥

तत्रांतिमच्छित्तेश्चाष्टमभागः शलाकच्छेदा हि ।
आदिमराशिप्रमाणं दशकोटीकोटिप्रतिबद्धे ॥ १३४ ॥

जी० प्र०—तासु सप्तपंक्तिषु मध्ये प्रथमपंक्तिगतराशीन् प्रत्येकं फलं कृत्वा दशकोटीकोटिसागरोपमाणीच्छां कृत्वा संगुण्य सप्ततिकोटीको-

(१)

प्र=सा=७० को २	फ= छे ७ ८	इ=सा=१० को २	लब्ध छे १ ८
प्र=सा=७० को २	फ= छे ७ ८।८	इ=सा=१० को २	लब्ध छे १ ८।८
प्र=सा=७० को २	फ= छे ७ ८।८।८	इ=सा=१० को २	लब्ध छे १ ८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र=सा=७० को २	फ= व छे ८।८।७	इ=सा=१० को २	लब्ध व छे ८।८।१
प्र=सा=७० को २	फ= व छे ८।७	इ=सा=१० को २	लब्ध व छे ८।१
प्र=सा=७० को २	फ= व छे ७	इ=सा=१० को २	लब्ध व छे १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

टिसागरोपमप्रमाणेन भक्ते लब्धं चरिमं छे १/८ गुणगुणितं छे ८/८ आदि व छे विहीणं छे— [illegible] रूऊणुत्तरभजियं छे—व—छे/७ इति दशकोटीकोटि-सागरोपमस्थितिप्रतिबद्धनानागुणहानिशलाका भवंति । तथा नानागुणहानिस्थमृण पृथग्धृत्य व छे/७ शेषं छे/७ संख्यातर्थमुपर्यधोऽष्टभिर्हत्वा छे ८/७।८ एकरूपं पृथग्धृत्य छे १/७ ८ शेषं छे ७/७ ८ अपवर्त्य छे/८ तन्मात्रद्विकसंवर्गे हाराधंच्छेदमात्रवर्गस्थानानां यथोऽत्र वीर्योत्पन्नराशित्वात्पल्यतृतीयमूलं मू ३ इदं पृथग्धृतवर्गशलाकार्धच्छेदसप्तमभागमात्रऋणन्यूनापनोनैकरूप छे १/७।८—मात्रद्विकसंवर्गेणासंख्यातपल्यप्रथममूलमात्रेण मू ५ ७ असंख्यातीकृतेन ७ विरलितराश्यधिकरूपोत्पन्नत्वाद् गुणितं तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् मू ३ ७ ॥ ९३४ ॥ अथ विंशतिकोटीकोटिसागरोपमादिस्थितिकानां नानागुणहानिशलाकान्योन्याभ्यस्तराशी आह—

स० चं०—तिनि पूर्वोक्त सात पंक्तिनिविषै पहली पंक्तिविषै जो जो तीन तीनका जोड दीएं राशि भया तिन सवनिकौं जुदा जुदा फलराशि करिए अर सवनिविषै दश कोडाकोडी सागर प्रमाण इच्छा राशि करिए, अर सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाणराशि करिए ऐसैं त्रैराशिक करि फलराशिकौं इच्छाराशि करि गुणें प्रमाणका भाग दीए जो जो प्रमाण होइ सो सो मांडि तिन सवनिका जोड दीए जो प्रमाण होइ तितनी दश कोडाकोडी सागर प्रमाण स्थिति संबंधी नानागुणहानि शलाका जाननी । तिनिके जोड देनेका विधान कहिए है—

'अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभाजियं' इस सूत्रकरि पल्यका पहिला दूसरा तीसरा वर्गमूलके अर्धच्छेद मिले सातगुणा पल्यके अर्धच्छेदनिके आठवें भागि भए तिनकौं दस कोडाकोडी सागरकरि गुणिए सत्तर कोडाकोडी सागरका भाग दीएं पल्यका अर्धच्छेदनिके आठवें भाग प्रमाण भया सो इहां अंत धन जानना । याकौं जोड जोड प्रति गुणकार आठ सो आठ करि गुणें पल्यके अर्धच्छेद प्रमाण भया यामैंस्यों आदि घटावना सो पल्यकी वर्ग शलाकाका दूसरा पहिला वर्ग अर पल्यकी वर्ग शलाका इन तीनौंके अर्धच्छेद मिले सातगुणें पल्यकी वर्ग शलाकाके अर्धच्छेद भए तिनकौं दश कोडाकोडी सागर करि गुणें सत्तर कोडा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोडी सागरका भाग दीएं पल्यकी वर्ग शलाकाके अर्धच्छेद प्रमाण भया सोई आदि जानना । इतने घटाएं अवशेष जे रहे तिनकौं गुणकार आठमैं एक घटाएं सात ताका भाग दीएं जो पल्यकी वर्ग शलाकाका अर्धच्छेदनिकरि हीन पल्य के अर्धच्छेदनिका सातवां भाग प्रमाण भया सो दस कोडाकोडी सागर स्थिति संबंधी नानागुणहानि शलाकाका प्रमाण जानना। बहुरि इतने दूवे मांडि परस्पर गुणें अन्योन्याभ्यस्त राशि होइ ताका प्रमाण ल्यावनेकौं तीहि नाना गुण हानि विषैं ऋणरूप पल्यकी वर्ग शलाकाके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग कह्या सो ताकौं तौ जुदा राखिए अर अवशेष पल्यके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग रह्या ताकी सहनानीके अर्थि आठ ही का गुणकार करिए अर आठ ही का भागहार करिए तहां गुणकारमैंस्यों एक घटाइ जुदा राखिए अवशेष सातका गुणकार रह्या अर पहलैं सातका भागहार था सो दोऊनिकौं समान जानि अपवर्तन कीजिए दोऊनिकौं दूरि कीजिए ऐसैं करतैं पल्यका अर्धच्छेदनिका आठवां भाग भया सो इतने दोयके अंक मांडि परस्पर गुणें पल्यका तीसरा वर्गमूल भया जातैं भागहारके जेते अर्धच्छेद होंहि तितने वर्ग स्थान भाज्यराशितैं नीचैंकौं गएं उत्पन्नराशिका प्रमाण हो है। सो इहां भागहार आठ है सो ताके अर्धच्छेद तीन सो पल्यतैं नीचैं तीसरा वर्गस्थान पल्यका तृतीय मूल है बहुरि जो गुणकारमैंस्यों एक जुदा राख्या था सो पल्यका छप्पनवां भाग गुणकार था तिसतैं पल्यका छप्पनवां भाग प्रमाण रह्या तामैं ऋणरूप पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग घटाएं जो अवशेष रहै तितने दोयके अंक माडि परस्पर गुणें असंख्यात गुणा पल्यका पांचवां वर्गमूल मात्र असंख्यात प्रमाण भया सो—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि अहियरूवाणि ।
तेसिं अण्णोण्णहदी गुणगारो लद्धरासिस्स ॥ १ ॥

इस सूत्रके अनुसारितैं अधिक राशिका परस्पर गुणनतैं राशि होइ सो गुणकार रूप हो है तातैं तिस असंख्यातकरि पल्यके तीसरे वर्गमूलकौं गुणें जो प्रमाण होइ तितना दश कोडाकोडी सागर संबंधी अन्योन्याभ्यस्त १२२९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

राशि जानना ॥१३४॥ आगैं वीसि कोडाकोडी आदि स्थितिसंबंधी नानागुणहानि वा अन्योन्याभ्यस्तराशि कहिए है-

इगिपंतिगदं पुध पुध अप्पिट्ठेण य हदे हवे णियमा।
अप्पिट्ठस्स य पंती णाणागुणहाणिपडिबद्धा ॥ ९३५ ॥

एकपंक्तिगतं पृथक् पृथगात्मेष्टेन च हते भवेन्नियमात्।
आत्मेष्टस्य च पंक्तयो नानागुणहानिप्रतिबद्धाः ॥ ९३५ ॥

जी० प्र०—तासु शेषषट्पंक्तिष्वेकैकपंक्तिगतं सर्वं पृथक् पृथक् फलराशिं कृत्वा तत्र प्रथमपंक्तिगतं आत्मेष्टेन विंशतिकोटीकोटिसागरोपमैः, द्वितीयपंक्तिगतं त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमैः, तृतीयपंक्तिगतं चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमैः चतुर्थपंक्तिगतं पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमैः, पंचमपंक्तिगतं षष्टिकोटाकोटिसागरोपमैः, षष्ठपंक्तिगतं सप्ततिकोटाकोटिसागरोपमैश्चेच्छाराशीनां गुणयित्वा सर्वत्र सप्ततिकोटाकोटिसागरोपमैः प्रमाणराशिना भक्त्वा लब्धानि आत्मेष्टस्य विंशतिकोटाकोटिसागरोपमादेः प्रतिबद्धा नानागुणहानिशलाकापंक्तयो भवंति ॥ ९३५ ॥

प्र। सा ७०। को २	फ। छे ७/८	इ। सा २० को २	ल। छे २/८	प्र। सा ७० को २	फ। छे ७/८	इ। सा ३० को २	ल। छे ३/८
प्र। सा ७०। को २	फ। छे ७/८।८	इ। सा २० को २	ल। छे २/८।८	प्र। सा ७० को २	फ। छे ७/८।८	इ। सा ३० को २	ल। छे ३/८।८
प्र। सा ७०। को २	फ। छे ७/८।८।८	इ। सा २० को २	ल। छे २/८।८।८	प्र। सा ७० को २	फ। छे ७/८।८।८	इ। सा ३० को २	ल। छे ३/८।८।८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र। सा ७०। को २	फ। व छे ७।८।८	इ। सा २० को २	ल। व छे ८।८।२	प्र। सा ७० को २	फ। व छे ७।८।८	इ। सा ३० को २	ल। व छे ८।८।३
प्र। सा ७०। को २	फ। व छे ७।८	इ। सा २० को २	ल। व छे ८। २	प्र। सा ७० को २	फ। व छे ७।८	इ। सा ३० को २	ल। व छे ८।३
प्र। सा ७०। को २	फ व छे ७	इ। सा २० को २	ल। व छे २	प्र। सा ७० को २	फ। व छे ७	इ। सा ३० को २	ल। व छे ३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	द्वि । सा ४० को २	ल । छे ४ ८	प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	द्वि । सा ५० को २	ल । छे ५ ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८	द्वि । सा ४० को २	ल । छे ४ ८ । ८	प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८	द्वि । सा ५० को २	ल । छे ५ ८ । ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८ । ८	द्वि । सा ४० को २	ल । छे ४ ८ । ८ । ८	प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८ । ८	द्वि । सा ५० को २	ल । छे ५ ८ । ८ । ८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८ । ८	द्वि । सा ४० को २	ल । व छे ८ । ८ । ४	प्र । सा ७० को २	फ । व छे । ७ । ८ । ८	द्वि । सा ५० को २	ल । व छे ८ । ८ । ५
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८	द्वि । सा ४० को २	ल । व छे ८ । ४	प्र । सा ७० को २	फ । व छे । ७ । ८	द्वि । सा ५० को २	ल । व छे ८ । ५
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	द्वि । सा ४० को २	ल । व छे ४	प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	द्वि । सा ५० को २	ल । व छे ५
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	द्वि । सा ६० को २	ल । छे ६ ८	प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८	द्वि । सा ७० को २	ल । छे ७ ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८	द्वि । सा ६० को २	ल । छे ६ ८ । ८	प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८	द्वि । सा ७० को २	ल । छे ७ ८ । ८
प्र । सा ७० को २	फ । छे ७ ८ । ८ । ८	द्वि । सा ६० को २	ल । छे ६ ८ । ८ । ८	प्र । सा ९० को २	फ । छे ७ ८ । ८ । ८	द्वि । सा ७० को २	ल । छे ७ ८ । ८ । ८
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८ । ८	द्वि । सा ६० को २	ल । व छे ८ । ८ । ६	प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८ । ८	द्वि । सा ७० को २	ल । व छे ८ । ८ । ७
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८	द्वि । सा ६० को २	ल । व छे ८ । ६	प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७ । ८	द्वि । सा ७० को २	ल । व छे ८ । ७
प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	द्वि । सा ६० को २	ल । व छे ६	प्र । सा ७० को २	फ । व छे ७	द्वि । सा ७० को २	ल । व छे ७

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं० च०—अवशेष छह पंक्तिनिविषैं एक एक पंक्तिविषैं जैसैं दश कोडाकोडी सागर संबंधी प्रथम पंक्तिविषैं सर्व तीन तीन स्थानका जोड रूप राशि जुदा जुदा फल राशि कीया था तैसैं ही सव छहौ पंक्तिनिविषैं फलराशि करना बहुरि प्रथम पंक्ति विषै इच्छाराशी दश कोडाकोडी सागर कह्या तिस इच्छाराशिकरि फलराशिका गुणन कीया इहां छह पंक्तिनिविषैं अपने अपने इष्टरूप प्रथम पंक्तिविषैं वीस कोडाकोडी सागर दूसरी पंक्तिविषैं तीस कोडाकोडी सागर प्रमाण तीसरी पंक्तिविषैं चालीस कोडाकोडी सागर चौथी पंक्तिविषैं पचास कोडाकोडी सागर पांचवी पंक्तिविषैं साठि कोडाकोडी सागर छठी पंक्तिविषैं सत्तर कोडाकोडी सागर प्रमाण इच्छराशि करि गुणन करना। बहुरि जैसैं प्रथम पंक्तिविषैं प्रमाणराशी सत्तरि कोडाकोडी सागरका भाग दीया था तैसैं इहां भी सर्वत्र प्रमाणराशि सत्तरि कोडाकोडी सागरका भाग देना। यों करता जो जो प्रमाण आवै सो सो अपने इष्टरूप वीस कोडाकोडी सागर आदि स्थिति संबंधी नाना गुणहानि शलाकाकी पंक्ति हो है ॥ ९३५॥

अप्पिट्ठपंतिचरिमो जेत्तियमेत्ताण वग्गमूलाणं।
छिदिणिवहोत्ति णिहाणिय सेसं च य मेलिदे इट्ठा ॥ ९३६ ॥

आत्मेष्टपंक्तिचरमः यावन्मात्राणां वर्गमूलानां।
छित्तिनिवह इति निर्धार्य शेषं च च मेलिते इष्टा ॥ ९३६ ॥

जी० प्र०—निजेष्टपंक्तेश्चरमलब्धं यावत् तावतां वर्गमूलानां छेदनिवह इति निर्धार्य संकलिते इष्टस्य नानागुणहानिः स्यात्। तद्यथा—विंशतिकोटीकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ अंतधनं छे २ गुणगुणियं छे २। ८ आदि व छे २ विहीणं छे–२ रूवूणुत्तरभजियमिति संक-
८ ८
लितायां नानागुणहानिराशिः स्यात् छे–२ तं च संदृष्टयर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य छे–२। ८ एकरूपं पृथग्धृत्वा छे–२। १ पदस्थं छे– तन्मात्रद्वि-
७ ७।८ ७।८ ४
कसंवर्गोत्पन्नपल्यद्वितीयमूलं मू–२ पृथग्धृतैकरूप छे–२। १ मात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नतद्योग्यासंख्यातेन गुणितं मू–२। ४ तदन्योन्याभ्यस्तराशिः
७।८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्यात् । त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे । ३ नानागुणहानिराशिः स्यात् । तं च संदृष्ट्यर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य
७
१ ०
छे-- । ३ । ८ एकरूपं पृथग्धृत्य छे- । ३ । १ शेष छे- । ३ । ८ मपवर्त्य छे--३ अत्रत्यगुणकारस्यैकरूपमात्रद्विकाहत्युत्पन्नपल्यतृतीयमूलह-
७ । ८ ७ । ८ ७ । ८ ८
तद्विरूपमात्रद्विकाहत्युत्पन्नद्वितीयमूलं मू । २ मू । ३ । पृथक्कृतैकरूप छे- । ३ । १ मात्रद्विकाहत्युत्पन्नतद्योग्यासंख्यातेन गुणितं मू । २ । मू ।
७ । ८
३ । ② तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।

चत्वारिंशत्कोटाकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे--४ नानागुणहानिराशिः स्यात् । तं च संदृष्ट्यर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य
७
छे--४ । ८ एकरूपं पृथग्धृत्वा छे- । ४ । १ शेष छे--४ । ७ मपवर्त्य छे-- तन्मात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नपल्यप्रथममूलं मू--१ पृथग्धृतैकरूपमात्रद्विकसंव-
७ । ८ ७ । ८ ७ । ८ २
वर्गोत्पन्नतद्योग्यासंख्यातेन गुणितं मू--१ । ② तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।

पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमाणां लब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे--५ नानागुणहानिराशिः स्यात् । तं च संदृष्ट्यर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य
७
छे--५ । ८ एकरूपं पृथग्धृत्वा छे--५ । १ शेष छे--५ । ७ मपवर्त्य छे--५ अत्रत्यगुणकारस्यैकरूपमात्रद्विकाहत्युत्पन्नपल्यतृतीयमूलहतशेषरूपमात्रद्वि-
८ । ८ ७ । ८ ७ । ८ ८
काहत्युत्पन्नप्रथममूलं पृथक्कृतैकरूपो छे--५ । १ त्पन्नासंख्यातेन गुणितं मू १ । मू ३ । ② तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।
७ । ८

---

१ चत्वारिंशत्कोटीकोटिसागरोपमाणामपि तत्पंक्तौ अंतधणं गुणगुणियं छे ४ । ८ अपवर्त्य छे ४ आदि व छे ४ विहीणं छे--४ रूऊणुत्तरभजियमिति
८
छे--४ नानागुणहानिप्रमाणं स्यात् । इत्यनधिकः पाठः ।
७

२ पंचाशत्कोटीकोटिसागरोपमाणां तत्पंक्तौ अंतधणं छे ५ गुणगुणियं छे । ५ । ८ आदि व छे ५ विहीणं छे--५ रूऊणुत्तरभजियमिति छे-५ । पाठोऽधिकः ।
८ ८ ८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

[1]षष्टिकोटाकोटीसागरोपमलब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे--६/७ नानागुणहानिराशिः स्यात् तं च संदृष्ट्यर्थमुपर्यधोऽष्टभिः संगुण्य छे---६/७।८ । ८ एकरूपं पृथग्धृत्य छे—६/७।८ । १ शेषमपवर्त्य छे--३/४ तन्मात्रद्विकाहत्युत्पन्नपल्यद्वितीयमूलमात्रप्रथममूलं मू १ । मू २ पृथग्धृतैकरूपमात्र छे—६/७।८ । १ द्विकाहत्युत्पन्नासंख्यातेन @ । गुणितं मू १ । मू २ । @ तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ।

[2]सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमलब्धपंक्तौ प्राग्वत्संकलितायां छे--व--छे नानागुणहानिशलाकाराशिः स्यात् अत्रस्य-छेदमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नपल्यं तद्वर्गमात्रद्विकसंवर्गोत्पन्नतद्वर्गं शलाकाराशिना हीनरूपजत्वाद्भक्तं प/व तदन्योन्याभ्यस्तराशिः स्यात् ॥ ९३६ ॥ उक्तान्योन्याभ्यस्तराशीनाह—

स० चं०—अपनी अपनी इष्ट पंक्तिविषैं यावत अंत स्थान होइ तितने वर्ग मूलानिका अर्धच्छेदनिका समूह ऐसैं निर्धारिकरि सबनिकौं मिलाएं अपने अपने इष्ट विवक्षितकी नाना गुणहानि हो है। तहां मिलावनेका विधान दश कोडाकोडी सागर संबंधी पंक्तिविषैं जैसैं कह्या तैसैं ही अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं रूऊणुत्तरभजियं इस सूत्रकरि जानना। विशेष इतना—अंतधन अर आदि इनिका जो प्रमाण दश कोडाकोडी सागर संबंधी पंक्तिविषैं कह्या तिसतैं इनि छहौ पंक्तिनिविषैं क्रमतैं दूणा तिगुणा चौगुणा पंचगुणा छहगुणा सातगुणा जानना जातैं इच्छाराशिके दुगुणा तिगुणा आदि होतैं पंक्तिविषैं सर्व ही दूणे तिगुणे आदि होगये। तहां बीस कोडाकोडी सागर संबंधी पंक्तिविषैं अंतधन पल्यका अर्धच्छेदनिके चौथे भाग तिसकौं गुणकार आठ करि गुणें पल्यके अर्धच्छेदनितैं दूणा प्रमाण भया

---

१ पुनः षष्टिकोटाकोटिसागरोपमाणां तत्पंक्तौ अंतधणं छे—६/८ गुणगुणियं छे—६/८ । ८ आदि व छे—६ विहीणं छे—६ रूऊणुत्तरभजियमिति छे—६/७ नानागुणहानिप्रमाणं । इत्यधिकः पाठः ।

२ पुनः सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणां तत्पंक्तौ छे ७/८ गुणगुणियं छे ७/८ । ८ अपवर्त्य छे ७ आदि व छे ७ विहीणं छे ७– । व छे ७ रूऊणुत्तरभजियं छे ७/७—व छे ७/७ अपवर्त्य छे-व-छे । अधिकः पाठः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिसविषैं आदिका प्रमाण पल्यकी वर्गशलाकाके अर्धच्छेदनितैं चौदह गुणे सो घाटइए सो इस प्रमाणकौं स्तोक- जानि तामैं किंचित ऊन करणा। बहुरि ताकौं एक घाटि गुणकार सात ताका भाग देना ऐसैं करतैं किंचित ऊन दूणा पल्यके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग प्रमाण जोड भया सो इतना नाना गुणहानि राशि जानना। बहुरि इस प्रमाणकौं पूर्वोक्तप्रकार सहनानीके अर्थि आठकरि गुणिए आठहीका भाग दीजिए तहां गुणकारमैं एक जुदा राखि अवशेष सातका गुणकार रह्या अर पहलैं सातका भागहार था तिनकौं समान जानि अपवर्तन कीया। अवशेष किंचित ऊन पल्यके अर्धच्छेदनिकैं दोयका गुणकार आठका भागहार रह्या तिनिके अपवर्तन कीएं किं- चित ऊन पल्यके अर्धच्छेदनिका चौथा भाग रह्या सो इतने दूवे मांडि परस्पर गुणन कीएं किंचित् ऊन पल्यका द्वितीय मूल भया। बहुरि जो जुदा एक गुणकार राख्या था सो गुणकार किंचित् ऊन दूणा पल्यके अर्धच्छेदनिकैं छप्पनवां भाग प्रमाण था तातैं तितने दूवे मांडि परस्पर गुणें यथायोग्य असंख्यात भया तिस करि गुणें असं- ख्यातगुणा किंचित् ऊन पल्यका द्वितीय वर्गमूल प्रमाण ताका अन्योन्याभ्यस्त राशि भया बहुरि तीस कोडा- कोडी सागर संबंधी पंक्तिविषैं पूर्वोक्त प्रकार जोड दीएं किंचित् ऊन तिगुणे पल्यके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग प्रमाण भया सो इतना नानागुणहानि राशि है। बहुरि याकौं सहनानीके अर्थि आठ करि गुणिए आठका भाग दीजिए गुणकारमैंस्यों एक जुदा राखिए अवशेष सातका गुणकार अर पहला सातका भागहार दोऊनिका अप- वर्तन करिए ऐसैं करतैं किंचित् ऊन तिगुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका आठवां भाग भया सो इहां तिगुणा पल्यका अर्धच्छेदनिका आठवां भाग कह्या तामैं एक गुणा प्रमाण दूवे माडि परस्पर गुणें पल्यका तृतीय मूल भया। अर अवशेष दोयगुणा प्रमाण दूवे माडि परस्पर गुणैं पल्यका द्वितीय मूल होइ इनिकौं परस्पर गुणें पल्यके तीसरे मू- लतैं गुण्या हूवा पल्यका दूसरा वर्ग मूल प्रमाण होइ तामैं किंचित् ऊन करना। बहुरि एक गुणकार जुदा राख्या था सो गुणकार किंचित् ऊन तिगुणा पल्यके अर्धच्छेदानिके छप्पनवां भागका भाग था तातैं तितने दूवे माडि परस्पर गुणें यथायोग्य असंख्यात भया। ताकरि गुणें असंख्यातगुणा किंचित् ऊन पल्यका तीसरा मूल करि गुण्या हुवा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पल्यका दूसरा वर्गमूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि हो है। बहुरि चालीस कोडाकोडी सागर संबंधी पंक्ति विषै पूर्वोक्त प्रकार जोड दीएं किंचित ऊन चौगुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग भया सो इतना नाना गुणहानि राशि जानना। बहुरि याकौं सहनानीके अर्थि आठकरि गुणिए आठका भाग दीजिये तहां गुणकारमैं एक जुदा राखि अवशेष सातका गुणकार अर पूर्वै सातका भागहार था सो दोऊनिका अपवर्तन कीएं किंचित् ऊन पल्यके अर्धच्छेदनितैं आधे रहे सो इतने दूवे माडि परस्पर गुणें किंचित् ऊन पल्यका प्रथम मूल भया बहुरि जुदा एक गुणकार राख्या था सो गुणकार किंचित् ऊन चौगुणा पल्यके अर्धच्छेदनिके छप्पनवां भागका था तातैं तितने दूवे माडि परस्पर गुणें यथायोग्य असंख्यात भया। ताकरि गुणैं असंख्यात गुणा किंचित् ऊन पल्यका प्रथम मूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि हो है। बहुरि पचास कोडाकोडी सागर संबंधी पंक्तिविषैं पूर्वोक्त प्रकार जोड दीएं किंचित् ऊन पांच गुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका सातवां भाग प्रमाण हो है सो इतना तौ नानागुणहानि राशि जानना। बहुरि ताकौं सहनानीके अर्थि आठकरि गुणिये आठका भाग दीजिए तहां गुणकारविषैं एक जुदा राखि अवशेष सातका गुणकार अर पहलैं सातका भागहार था सो दोऊनिका अपवर्तन कीएं किंचित् ऊन पांचगुणा पल्यका अर्धच्छेदनिका आठवां भाग प्रमाण होइ सो इहां पांचगुणा कह्या था तामैं एक गुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका आठवां भाग प्रमाण दूवा माडि परस्पर गुणें पल्यका तृतीय मूल होइ। अर अवशेष च्यारि गुणा तीहि प्रमाण दूवे मांडि परस्पर गुणें पल्यका प्रथम मूल होइ इनिकौं परस्पर गुणिए जो राशि होइ ताकौं एक गुणकार जुदा राख्या था सो वह किंचित् ऊन पांच गुणे पल्यके अर्धच्छेदनिका छप्पनवां भागका गुणकार था तातैं तितने दूवे माडि परस्पर गुणें असंख्यात होइ ताकरि गुणैं असंख्यातकरि गुण्या हूवा किंचित् ऊन पल्यका तीसरा वर्ग मूलकरि गुण्या पल्यका प्रथम मूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि हो है। बहुरि साठ कोडाकोडी सागर प्रमाण स्थिति संबंधी पंक्तिविषैं पूर्ववत् जोड दीएं किंचित् ऊन छह गुणां पल्यका अर्धच्छेदनिका सातवां भाग हो है। सो इतना नानागुणहानि राशि है। बहुरि याकौं सहनानीके अर्थि आठकरि गुणिए आठका भाग दीजिए तहां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणकारविषैं एक जुदा राखि अवशेष सातका गुणकार अर अगिला सातका भागहार दोऊनिका अपवर्तन करना ऐसैं करतैं किंचित् ऊन तिगुणा पल्यके अर्धच्छेदनिका चौथा भाग भया सो इतने दूवे माडि परस्पर गुणें किंचित् ऊन पल्यका द्वितीय मूलतैं गुण्या पल्यका प्रथम मूल प्रमाण हो है। बहुरि एक गुणकार जुदा राख्या था सो वह किंचित् छह गुणा ऊन पल्यके अर्धच्छेदानिका छप्पनवां भागका गुणकार था तातैं तितने दूवे माडि परस्पर गुणैं असंख्यात भया ताकरि गुणें असंख्यातगुणा किंचित् ऊन पल्यका द्वितीय मूलतैं गुण्या हूवा पल्यका प्रथम मूल प्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि हो है। बहुरि सत्तर कोडाकोडी सागर संबंधी पंक्तिविषैं पूर्ववत् जोड दीएं पल्यकी वर्गशलाकाका अर्धच्छेदनिकरि हीन पल्यके अर्धच्छेद प्रमाण हो है सो इतना नानागुणहानि राशि जानना। बहुरि पल्यके अर्धच्छेद प्रमाण दूवे माडि परस्पर गुणैं पल्य होइ। बहुरि—

विरलिदरासीदो पुण जेत्तियमेत्ताणि हीणरूवाणि।
तेसिं अण्णोण्णहदी हारो उप्पण्णरासिस्स ॥ १ ॥

इस सूत्रका अनुसारतैं जेते हीन रूप थे तिन प्रमाण परस्पर गुणनतैं जो राशि होइ सो उत्पन्नराशिका भागहार होइ तातैं पल्यकी वर्गशलाका अर्धच्छेद प्रमाण दूवे माडि परस्पर गुणैं पल्यकी वर्गशलाका होइ सो घटाइए ऐसैं पल्यकी वर्गशलाकाकरि हीन पल्यप्रमाण अन्योन्याभ्यस्त राशि हो है। ऐसैं स्थिति अपेक्षा नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्त राशी कह्या सो जिस कर्म प्रकृतिकी जितनी स्थिति होइ ताकी तीहि स्थितिसंबंधी यथायोग्य जानना ॥ ९३६ ॥ कहे जे अन्योन्याभ्यस्त राशि तिनकौं गाथानिकरि कहैं है—

इट्ठसलायपमाणे दुगसंवग्गे कदे दु इट्ठस्स।
पयडिस्स य अण्णोण्णाभत्थपमाणं हवे णियमा ॥ ९३७ ॥ ११३७

इष्टशलाकाप्रमाणे द्विकसंवर्गे कृते तु इष्टस्य।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रकृतेश्चान्योन्याभ्यस्तप्रमाणं भवेन्नियमात् ॥ १३७ ॥

जी० प्र०—स्वेष्टशलाकाप्रमाणद्विकसंवर्गे कृते स्वेष्टप्रकृतेरन्योन्याभ्यस्तराशिप्रमाणं नियमात्स्यात् ॥ १३७ ॥ तत्किं कस्य कर्मणः स्यादिति प्रश्ने आह—

स० चं०–अपनी अपनी इष्ट शलाका जो नाना गुणहानि शलाका तीहिं प्रमाण दोयके अंक माडि संवर्ग जो परस्पर गुणन ताकौं कीएं परस्पर गुणैं अपनी इष्ट प्रकृतिका अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण हो है नियमकरि ॥ १३७ ॥ सो कहा किस कर्मका हो है, ऐसा प्रश्न होतैं कहैं हैं—

आवरणवेदणीये विग्घे पल्लस्स बिदियतदियपदं ।
णामागोदे बिदियं संखातीदं हवंतित्ति ॥१३८

आवरणवेदनीये विघ्ने पल्यस्य द्वितीयतृतीयपदं
नामगोत्रे द्वितीयं संख्यातीतं भवंतीति ॥ १३८ ॥

जी०प्र०–ज्ञानदर्शनावरणयोर्वेदनीयेऽतराये चोत्कृष्टेन त्रिंशत्कोटीकोटिसागरोपमस्थितित्वादन्योन्याभ्यस्तराशिः प्रत्येकं पल्यद्वितीयमूलमसंख्यातत‍ृतीयमूलगुणं स्यात् । नामगोत्रयोर्विंशतिकोटीकोटिसागरोपमस्थितित्वादसंख्यातानि पल्यद्वितीयमूलानि भवंति ॥ १३८ ॥

स०चं०–ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इनिविषै उत्कृष्टस्थिति तीस कोडाकोडी सागर है तातैं इनिका अन्योन्याभ्यस्त राशि है सो पल्यका द्वितीय मूलकौं असंख्यात तृतीय मूलनिकरि गुणैं जो प्रमाण होइ तितना है। बहुरि नाम गोत्रविषै उत्कृष्ट स्थिति वीस कोडाकोडी सागर है तातैं इनिका अन्योन्याभ्यस्त राशि असंख्यातगुणा पल्यका द्वितीय वर्गमूल प्रमाण है ॥ १३८ ॥

आउस्स य संखेज्जा तप्पडिभागा हवंति णियमेण ।
इदि अत्थपदं जाणिय इट्ठट्ठिदिस्साणए मदिमं ॥ १३९ ॥ ११३९

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

आयुषश्च संख्येयास्तत्प्रतिभागा भवंति नियमेन ।
इति अर्थपदं ज्ञात्वा इष्टस्थितेरानयेत् मतिमान् ॥ १३९ ॥

जी० प्र०—आयुषो विलक्षणः स्थितिभेदोऽस्तीति तन्नानागुणहानिशलाकास्तु प्रतिभागाः संख्येयाः स्युरिति नियमात् सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमाणामेतावत्यः छे–व–छे तदा त्रयस्त्रिंशत्सागरोपमाणां कतीति लब्धाः संख्यातैकभागः छे-व-छे ३३ इत्यमेवेष्टस्थानं ज्ञात्वा मतिमान् ७० को २ स्वेष्टस्थितेर्नानागुणहानिशलाका आनयेत् । एवं गुणहान्यध्याननानागुणहानिशलाकानिषेकभागहारान्योन्याभ्यस्तराशिषु ज्ञातेषु गु ८ । नाना ६ । दोगु १६ । अन्योन्या ६४ ॥ १३९ ॥

स०चं०—आयुकर्मका जुदा ही स्थिति भेद है सो ताकी नानागुणहानि शलाका स्थितिका वटवाराके अनुसारि नियमतैं है सो सत्तर कोडाकोडी सागर स्थितिका पल्यकी वर्गशलाकाका छेदनिकरि हीन पल्यके अर्धच्छेद प्रमाण नानागुणहानि शलाका होंइ तो तेतीस सागर स्थितिकी कितनी नानागुणहानि शलाका होंइ ऐसैं त्रैराशिककरि जो लब्धराशी आवै तितनी नानागुणहानिशलाका जाननी । ऐसैं ही विवाक्षित स्थान जान बुद्धिमान जीव है सो विवाक्षित स्थितिकी नानागुणहानिशलाकाका प्रमाण अनावै ऐसैं एक गुणहानि आयाम वा नानागुणहानि शलाका वा निषेक भागहार वा अन्योन्याभ्यस्तराशि जानैं कहा सो कहैं हैं—

उक्कस्सट्ठिदिबंधे सयलावाहा हु सव्वठिदिरयणा ।
तक्काले दीसदि तोधोधो बंधट्ठिदीणं च ॥ १४० ॥

उत्कृष्टस्थितिबंधे सकलाबाधा हि सर्वस्थितिरचना ।
तत्काले दृश्यते अतोऽधोधो बंधस्थितीनां च ॥ १४० ॥

जी० प्र०—विवक्षितप्रकृतेरुत्कृष्टस्थितिबन्धे ज्ञाते तद्बंधसमये एव उत्कृष्टाबाधा सर्वस्थितिरचना च दृश्यते । तत्स्थितिचरमनिषेकादधो-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

घः स्थितिबन्धस्थितीनां समयोत्तरहीनता द्रष्टव्या ॥ ९४० ॥ आधिक्यं च कथं दृश्यते इत आह—

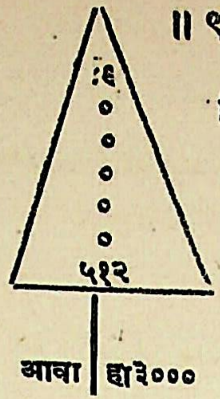

स्थिति सा ३० को २

स०चं०—विवाक्षित प्रकृतिका उत्कृष्टस्थितिबंध होतें तीहिका बंधसमयविषैं ही उत्कृष्ट आबाधा अर सर्वस्थितिकी रचना देखिए है। तिस स्थितिके अंतके निषेकतें नीचें नीचें प्रथम निषेकपर्यंत स्थितिबंधरूप जे स्थिति तिनकी एक एक समय हीनता देखनी। अंतका निषेककी विवाक्षित समय प्रबद्धकी स्थिति प्रमाण स्थिति है ताके नाचें द्विचरम निषेककी तातें एक समय घाटि स्थिति है। ऐसैं ही आदि निषेक पर्यंत जानि लेनी ॥९४०॥ऐसैं स्थितिकी अधिकता कैसैं देखिये सो कहिए है—

आबाधाणं बिदियो तदियो कमसो हि चरमसमयो दु।
पढमो बिदियो तिदियो कमसो चरिमो णिसेओ दु॥ ९४१॥

आबाधानां द्वितीयः तृतीयः क्रमशो हि चरमसमयस्तु।
प्रथमो द्वितीयः तृतीयः क्रमशश्चरमो निषेकस्तु ॥ ९४१ ॥

जी० प्र०—सर्वप्रकृतीनां बंधसमये सर्वाबाधासर्वस्थितिनिषेकरचनारूपस्थितायाः स्थितेरनंतरसमयेषु आबाधासमयानां द्वितीयः तृतीयः ११४०

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

एवं गत्वा चरमः समयः स्यात् । तु-पुनः तदग्रे प्रथमः द्वितीयः तृतीयः एवं गत्वा चरमो निषेकः स्यात् । तत्समये उदेत्यनंतरसमये कर्मस्वभावं त्यजेदित्यर्थः ॥ ९४१ ॥ अथ समयप्रबद्धप्रमाणद्रव्यं वर्तमानसमये बध्नात्युदेति चेत्याह——

स० चं०—सर्व प्रकृतिनिका बंध समयविषै सर्व आबाधा सर्वनिषेक रूप जो स्थिति ताका बंध होनेके अनंतरि समयनिविषै आबाधा कालका दूसरा समय तीसरा समय ऐसैं एक एक बंधता आबाधा कालका अंतविषै अंतसमय होइ । तहां पीछैं पहले समय प्रथम निषेक दूसरे समय दूसरा निषेक तीसरे समय तीसरा निषेक ऐसैं ही क्रमतैं स्थितिका अंत समयविषैं अंतनिषेक हो है सो जिस जिस समय जितनी परमाणूनिका समूहरूप निषेक है तिस तिस समय तितनी परमाणू उदयरूप हो हैं तिस उदयरूप समयके अनंतरि ते परमाणू कर्मस्वभावकौं छांडे हैं ऐसा अर्थ जानना । ऐसैं करि प्रथम निषेकतैं द्वितीय निषेककी एक समय अधिक स्थिति दूसरे तैं तीसरेकी अधिक है । ऐसैं करि एक एक समय अधिक स्थिति देखिए है ॥९४१॥ आगैं समयप्रबद्धप्रमाण द्रव्य सो वर्तमान एक समय विषै बंधै है वा उदय रूप हो है ऐसा कहैं है—

समयपबद्धपमाणं होदि तिरिच्छेण वट्टमाणम्मि ।
पडिसमयं बंधुदओ एक्को समयप्पबद्धो दु ॥ ९४२ ॥

समयप्रबद्धप्रमाणं भवति तिरश्चा वर्तमाने ।
प्रातिसमयं बंधोदय एकःसमयप्रबद्धस्तु ॥ ९४२ ॥

जी०प्र०—त्रिकोणरचनायां विवक्षितवर्तमानसमये विवक्षितमोहनीयकर्मणः आबाधारहितोत्कृष्टस्थितिमात्रगलितावशेषसमयप्रबद्धेषु प्रथमसमयप्रबद्धचरमनिषेकमादिं कृत्वा चरमसमयप्रबद्धप्रथमनिषेकपर्यंतं तिर्यगेकैकनिषेको भूत्वा संपूर्णैकसमयप्रबद्धद्रव्यं स्यात् इति प्रतिसमयमेकैकसमय-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रबद्ध उदेति। एकैकश्च बध्नाति। संदृष्टिः—

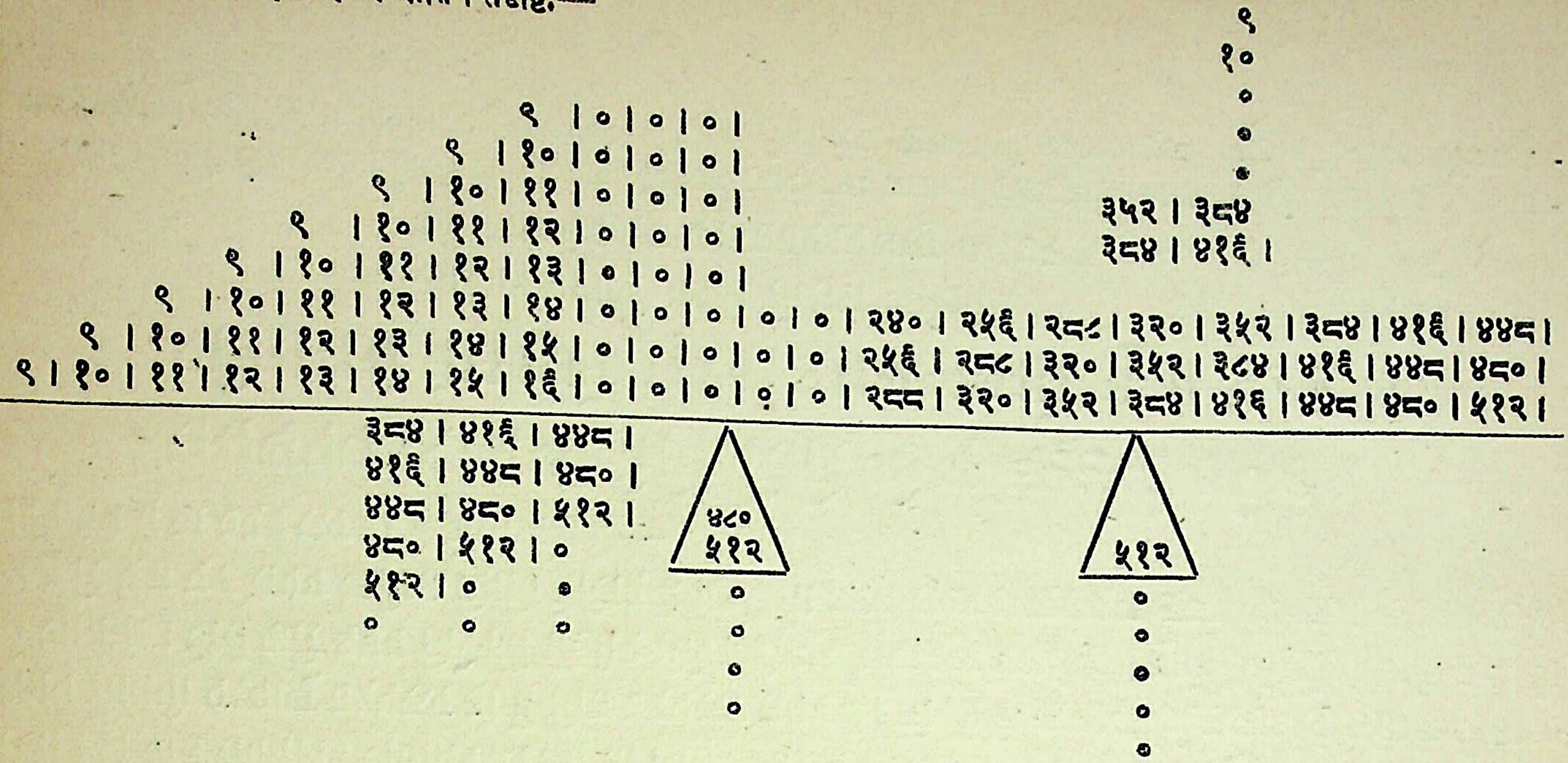

॥ ९४२ ॥ अथ बंधोदययोः प्रतिसमयमेकैकः समयप्रबद्धोऽस्तीति तदुभयात्मकं सत्त्वमपि च वर्तमानसमये तावदेव भविष्यतीति शंकां परिहर्तुं सोपपत्तिं तत्प्रमाणमाह—

स० चं०—त्रिकोण रचनाविषै विवक्षित जो कोई वर्तमान समय तीहिंविषै विवक्षित मोहनीय कर्मका आबाधारहित उत्कृष्ट स्थितिमात्र जो कालका प्रमाण तीहिविषैं जे समय समय बंधे समयप्रबद्ध तिनविषैं जिनि निषेकनिकी निर्जरा भई सो तौ भई अवशेष रहे तिन निषेकनिविषैं प्रथम समय प्रबद्धका अंत निषेकतैं लगाइ अंत

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समय प्रबद्धका आदि निषेक पर्यंत तिर्यग् बरोबरि रचना रूप एक एक निषेक मिलि करि संपूर्ण एक समय प्रबद्ध प्रमाण द्रव्य हो है। तिसका वर्तमान समयविषै उदय हो है तातैं समय समय प्रति एक एक समयप्रबद्ध उदय रूप हो है। बहुरि समय समय प्रति एक एक समय प्रबद्धका ही बंध हो है ॥९४२॥ आगैं समय समय प्रति बंध उदय एक एक समय प्रबद्ध है सो यातैं बंध उदयका समुदाय रूप सत्त्व भी तितना ही होगा ऐसा संदेह दूरि करनेकौं कहैं हैं—

सत्तं समयपबद्धं दिवड्ढगुणहाणिताडियं ऊणं।
तियकोणसरूवट्ठिददव्वे मिलिदे हवे णियमा ॥९४३॥

सत्त्वं समयप्रबद्धं द्व्यर्धगुणहानिताडितमूनं।
त्रिककोणस्वरूपस्थितद्रव्यं मिलिते भवेन्नियमात् ॥ ९४३ ॥

जी० प्र०—सत्त्वद्रव्यं तु प्रतिसमयं त्रिकोणस्वरूपस्थितद्रव्ये मिलिते किंचिदूनद्व्यर्धगुणहानिगुणितसमयप्रबद्धमात्रं नियमात् स्यात् स ० १२– ॥ ९४३ ॥ तद्यथा—

स० चं०—सत्तारूप परमाणूनिका समूहरूप सत्त्व द्रव्य सो किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानिकरि गुण्या हूवा समय प्रबद्ध प्रमाण है सो त्रिकोणरचनाके सर्वद्रव्यका जोड दीएं इतना ही हो है नियम करि सो पूर्वैं जीवकांडका योगाधिकार विषै अर कर्मकांडका बंध उदय सत्त्व अधिकारविषै प्रसंग पाइ त्रिकोण यंत्र लिख्या है वा तहांही कैसे समय समय प्रति एक समय प्रबद्ध प्रमाणका उदय हो है? कैसे किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानिकरि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण सत्त्व है? सो कह्या है। बंध समय समय प्रबद्ध प्रमाण प्रदेश बंधका कथन विषै है। सो सर्व कथन तहांतैं जानि लेना। वारंवार न लिखनेके अर्थि इहां न लिख्या है। इहां संदृष्टि मात्र अंकसंदृष्टिरूप त्रिकोण यंत्र लिखिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो इसका ऐसा अर्थ अंक संदृष्टि करि जानना जिस समय प्रबद्धके सर्व निषेक सत्ता रूप पाइए तिसके अठतालीसौ निषेक नीचे ही नीचे लिखे। बहुरि ताके उपरि जिस समय प्रबद्धका प्रथम निषेक गलि गया अवशेष सैंतालीस निषेक रहे ते लिखे। बहुरि ताके ऊपरि जिसका पहला दूसरा निषेक गलिगया तिसके छियालीस निषेक लिखे ऐसैं एक एक निषेक घाटि लिखतैं अंतविषै जिस समय प्रबद्धके सैंतालीस निषेक गलिगये ताका अंतका एक निषेक लिख्या ऐसैं तौ सत्ता अपेक्षा यहु रचना जाननी। बहुरि वर्तमान विवक्षित समयतैं आगैं जैसैं एक समय प्रबद्धका बंध होइ तैसा ही एक समय प्रबद्धकी निर्जरा होइ तातैं सत्ताकी रचना जैसैं कही तैसैं रहै। इहां दोय यंत्र लिखे हैं तिनविषै सत्ताविषै पहला यंत्रहीकी रचनाका ग्रहण जानना। सो इस सर्व त्रिकोण यंत्रका जोड दीएं किंचित् ऊन ब्योढ गुणहानि आयामकरि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण हो है। सोई सत्त्व द्रव्यका प्रमाण जानना। बहुरि विवक्षित वर्तमान समयविषै जिस समयप्रबद्धके सैतालीस निषेक पूर्वें गलि गए ताका एक अंतका निषेक उदय रूप है। जाके छियालीस निषेक गलि गए ताका द्विचरम निषेक उदय रूप है अंतका निषेक अगिले समयविषै उदय होगा इसही क्रमतैं जाका एक भी निषेक पूर्वें गल्या नहीं ताका प्रथम निषेक उदयरूप है अन्य निषेक अगले समयनिविषै उदय होंहिगे ऐसैं अंतका निषेकतैं लगाय आदिका निषेक पर्यंत सर्व निषेकनिका जोड दीएं एक समय प्रबद्धका उदय हो है। बहुरि ताके ऊपरि तिस विवाक्षित समयके अनंतरि जो समय वर्तमान होइ तहां जिस समय प्रबद्धका पूर्व समयविषै अंतनिषेकका उदय भया था ताके तौ सर्व निषेक गलिगये। बहुरि जिसका द्विचरम निषेक उदय रूप था ताका तहां अंतका निषेक उदय रूप हो है। बहुरि पूर्वोक्त प्रकार एक एक निषेकका उदय होतैं जाका प्रथमनिषेकका उदय भया था ताका इहां दूसरा निषेकका उदय होइ अर तिस समय प्रबद्धके पीछै समयप्रबद्ध बंध्या था ताका प्रथम निषेक इहां उदयरूप होइ। ऐसैं इस भी समयविषै एक एक समयप्रबद्धहीका उदय भया। ऐसै समय समय प्राति एक एक समय प्रबद्धका उदय जानना। तिस अपेक्षा त्रिकोण रचनाविषै जो दोय रचना करी हैं तिनकौं मिलाये वरोवरि एक पंक्तिका जोड दीएं समय

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

समय प्रति समयप्रबद्ध प्रमाणका जोड आवै है। इस संदृष्टि रूप त्रिकोण यंत्रविषैं तिर्यक् रचना वा ऊर्ध्वरचना-विषै कितनेक आदि निषेके वा कितनेक अंत निषेक लिखे अर वीचि विंदी लिखी सो विंदी लिखनेकी इहां ऐसी समस्या है जो आदिके वा अंतके निषेक लिखे तिनके वीचि मध्यके जेते निषेक रहे ते सर्व जानि लेने सो संपूर्ण त्रिकोण यंत्र पूर्वैं लिख्या है सो जानना ॥१४३॥ आगैं इस सत्तारूप त्रिकोण यंत्रके जोड देनेका विधान कहैं हैं—

उवरिमगुणहाणीणं धणमंतिमहीणपढमदलमेत्तं ।
पढमे समयपबद्धं ऊणकमेणट्ठिया तिरिया ॥ ९४४ ॥

उपरितनगुणहानीनां धनमंतिमहीनप्रथमदलमात्रं ।
प्रथमे समयप्रबद्धमूनक्रमेण स्थितं तिरश्चा ॥ ९४४ ॥

जी०प्र०—त्रिकोणरचनायां विवक्षितवर्तमानसमये प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके तिर्यक्संपूर्णं समयप्रबद्धद्रव्यं स्यात्। द्वितीयनिषेकमादिं कृत्वा चरमगुणहानिचरमनिषेकपर्यंतं चयहीनक्रमेण गत्वा तिर्यक्स्थितद्वितीयादिगुणहानिधनं अंत्यगुणहानिद्रव्यहीनस्वस्वप्रथमगुणहानिद्रव्यार्धमात्रं स्यात् प्रथमगुणहानिधनं तु गुणहानिमात्रसमयप्रबद्धप्रमितं। तद्यथा—

त्रिकोणरचनायामनादिबंधनबद्धगलितावशेषसमयप्रबद्धाः विवक्षितमोहनीयमूलप्रकृतेराबाधारहितोत्कृष्टस्थितिमात्राः स्युः। तत्प्रथमसमयप्रबद्ध-चरमनिषेकमादिं कृत्वा चरमसमयप्रबद्धप्रथमनिषेकपर्यंतं तिर्यग्विशेषाधिकक्रमेण स्थितेरेकैकनिषेका मिलित्वा विवक्षितवर्तमानसमये एकः समयप्रबद्ध उदेति। तस्मिन्नेव समये एकः समयप्रबद्धो बध्नाति। सत्त्वद्रव्यं किंचिदूनद्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं तिष्ठति। तत्र प्रथमगुणहानिप्रथमनिषेके नानासमयप्रबद्धसंबंध्येकैको निषेको मिलित्वा संपूर्णसमयप्रबद्धः स्यात्। द्वितीयादिनिषेकेषु प्रथमादिनिषेकैः क्रमेणैकैकाधिकैरूनोऽस्तीति तावति ऋणे निक्षिप्ते प्रथमगुणहानिधनं ऋणसहितगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धं भवति। ६३००। ८ तदृणं त्वेकोत्तररूपोनगुणहानिगच्छक्रमेण प्रथमनिषेकान्—

५१२ । ७
५१२ । ६
५१२ । ५
५१२ । ४
५१२ । ३
५१२ । २
५१२ । १

संकलय्य ५१२ ८ $\frac{1}{2}$ ।$\frac{⌒}{1}$ ८ अत्रस्थप्रथमनिषेकं दोगुणहान्या संभेद्य ३२ । ८ । २ । ८ $\frac{1}{2}$ ।$\frac{⌒}{1}$ ८। उपर्यधस्त्रिभिः संगुण्य

३२ । ८ । ६ $\frac{}{3}$ । ८ $\frac{1}{2}$ ।$\frac{⌒}{1}$ ८ षड्गुणहानितः एकरूपं पृथग्धृत्वा ३२ । ८ $\frac{}{3}$ । १ । ८ $\frac{1}{2}$ ।$\frac{⌒}{1}$ ८ तत्र तृतीयादिनिषेकेषु द्विकवारसं-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कलनक्रमेणाधिकप्रतितप्रथमगुणहानिचयान् संकलय्य द्विरूपोनगच्छस्य

३२	२१
३२	१५
३२	१०
३२	६
३२	३
३२	१

द्विकवारसंकलनमात्रान् ३२ । $\frac{८^{२}}{३}$ । $\frac{८^{१}}{२}$ । $\frac{८}{१}$ ऋणस्य ऋणं राशेर्धनमिति संशोध्य शेषे ३२ । २ । $\frac{८^{१}}{२}$ । $\frac{८}{१}$

रूपद्वये पुनः प्राक्तनपंचगुणहानीनामुपरि दत्ते एतावत् ३२ । ८^{२} । ५ $\frac{८^{१}}{६}$ ८ प्रथमगुणहानिऋणसहितधनं च चरमगुणहानिऋणसहितध-नेन १०० । ८ । ऊनयित्वा ६२०० । ८ अर्धितं ३१०० । ८ द्वितीयगुणहानिधनं स्यात् । एवमुपर्यपि सर्वगुणहानिधनानि साध्यानि । संदृष्टिः

१०० । ८ । अत्र सर्वत्र चरमगुणहानिमात्रं १०० । ८ ऋणं निक्षिप्य द्वाभ्यां भित्त्वा— १०० । ८ । २

१०० । ८ ।	१०० । ८ । २
३०० । ८ ।	२०० । ८ । २
७०० । ८ ।	४०० । ८ । २
१५०० । ८ ।	८०० । ८ । २
३१०० । ८ ।	१६०० । ८ । २
६३०० । ८ ।	३२०० । ८ । २

अंतधणं ३२०० । ८ । २ । गुणगुणियं ६४०० । ८ । २ । आदि १०० । ८ । २ विहीणं ६३०० । ८ । २ रूऊणुत्तरभजियमिति तावदेव स्यात् । द्वितीयादिगुणहानिधनाद्यर्धं संदृष्टिः—

१ । $\frac{८^{२}}{६४}$ । ५ । ८^{१} । ८
२ । $\frac{८^{२}}{६४}$ । ५ । ८^{१} । ८
४ । $\frac{८^{२}}{६४}$ । ५ । ८^{१} । ८
८ । $\frac{८^{२}}{६४}$ । ५ । ८^{१} । ८
१६ । $\frac{८^{२}}{६४}$ । ५ । ८^{१} । ८
३२ । $\frac{८^{२}}{६४}$ । ५ । ८^{१} । ८

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

२ १ ॒ २ १ ॒ २ १ ॒
तदध्यंतधनं ३२ । द । ५ । द । द गुणगुणितं ६४ । ८ । ५ । द । द आदि १ । द । ५ । ८ । द विहीनं-
६ ६ ६

२ १ ॒
६३ । ८ । ५ । द । द रूऊणुत्तरभजियमिति तावदेव स्यात् । द्वितीयऋणानि १०० । द संकलितानि नानागुणहानि—
६
१०० । द
१०० । द
१०० । द
१०० । द
१०० । द

गुणितगुणहानिमात्रचरमगुणहानिधनमात्राणि स्युः १०० । द । ६ । एवमुक्तधनप्रथमर्णद्वितीयऋणानि च क्रमेण संस्थाप्य समयप्रबद्धशलाकाः

२ १ ॒ २ १ ॒
कृत्वा ६३०० । ८ । २ ६३ । द । ५ । द । द १०० । ८ । ६ अपवर्त्यैवं स्युः स । a । द । २ ऋ स a । द । ५ । द । ८
६३०० ६३०० । ६ ६३०० १०० ६

स a । द । ६ तत्र प्रथमर्णस्य हारं शतषट्करूपाधिकत्रिगुणगुणहानिं कृत्वा चतुष्कं द्वाभ्यां संगुण्य गुणहानिमुत्पाद्यापवर्त्य—
६३ ।

२ १ ॒ २ २
स । a । द । ५ । द । अत्रस्थमृणरूपं धनमित्यपनीय पार्श्वे संस्थाप्य स a । द । ५ । द स । a । ८ । ५ उभयत्र स्थितरूपद्वयं
१ १ १
द । ३ । ३ द । ३ । ३ द । ३ । ३

स्वस्वाधः संस्थाप्य स a । द । ५ । द स a । द । ५ प्रथमद्विकमुपर्यधस्त्रिभिः संगुण्य स । a । ६ । ८ पंचरूपाण्यपनीय—
१ १ १
द । ३ । ३ द । ३ । ३ द । ३ । ३ । ३
स a । २ । द स । a । २
१ १
८ । ३ । ३ द । ३ । ३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उपरितनर्णमध्ये निक्षिप्य स । a । ८ । ३ । ५ । ८ (१ / ८ । ३ । ३ । ३) अपवर्तितमेतावत्स्यात् स । a । ८/६ । ५ शेषैकर्णरूपं स । a । ८ । १ (१ / ८ । ३ । ३ । ३) उपरितनपार्श्व-
धने समच्छेदेनापनीय स । a । ८ । १५–१ (१ / ८ । ३ । ३ । ३) अस्मिन्नुपर्यधस्त्रिभिर्गुणिते स । a । ८ । ३ । १४ (१ / ८ । ३ । ३ । ३ । ३) द्वितीयधनद्विकादुपर्यधो नवभिर्गुणितात्

स । a । १८ (१ / ८ । ३ । ३ । ९) चतुर्दशरूपाणि गृहीत्वा प्रक्षिप्तेष्वेवं स । a । ८ । ३ । १४ (१ / ८ । ३ । ३ । ३ । ३) अस्य भागहारे एकरूपहीनत्वमवगणय्यापवर्तने समयप्रबद्धार्धं स्यात्

स । a । १/२ (१ / ८ । ३ । ३ । ९) अत्र तच्छेषधनरूपचतुष्कं स । a । ४ समयप्रबद्धासंख्यातैकभागमात्रं स a । १/a साधिकं कृत्वा स । a । १/a इदं धनं द्वितीयर्ण-
मध्येऽपनीयापवर्त्य किंचिदूनसंख्यातवर्गशलाकामात्रं स्यात् । स a । व १–पुनस्तत्प्रथमर्णं स a । ८/६ । ५ संदृष्टिनिमित्तमुपर्यधो द्वाभ्यां संगुण्य–
स । a । ८/६ । १०/२ तत्रैकरूपं पृथग्धृत्वा स । a । ८/१८ । १ शेषं स । a । ८/१८ । ९ अपवर्तितं गुणहान्यर्धमात्रसमयप्रबद्धं भवति स a ८ १/२ तस्मिंश्च
प्रथमधनराशौ दोगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धेऽपनीते द्व्यर्धगुणहानिमात्रसमयप्रबद्धा भवंति स । a । ८ । ३/२ तत्र प्राक्पृथग्धृतगुणहान्यष्टादशभागर्णे–
स । a । ८/१८ । १ द्वितीयर्णं किंचिदूनसंख्यातवर्गशलाकामात्रसमयप्रबद्धं साधिकं कृत्वा स । a । ८/१८ । १ द्व्यर्धगुणहानौ किंचिदूनितं त्रिकोणरचना-
संकलितसर्वधनमुक्तप्रमाणं स्यात् । स । a । १२– ॥ ६४४ ॥ अथ सोपपत्तिस्थितिविकल्पानाह—

स० चं०—त्रिकोणरचनाविषै विवक्षित वर्तमान समयविषै प्रथम गुणहानिके प्रथम निषेकविषै तौ तिर्यग्रूप

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बरोबरि लिखे निषेक तिनिका समुदायरूप संपूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण हो है। बहुरि ताके ऊपरि द्वितीय निषेकतैं लगाय अंतकी गुणहानिका अंतनिषेकपर्यंत अनुक्रमतैं चय घाटिका अनुक्रमकरि तिर्यग् बरोबरि रचनारूप तिष्ठती द्वितीयादिक गुणहानिनिके जोडतैं अंतकी गुणहानिके जोडकौं अपनी अपनी पहली गुणहानिका जोड-मैंस्यों घटाएं जो जो प्रमाण होइ ताका आधा आधा हो है बहुरि प्रथम गुणहानिका जोड गुणहानिका प्रमाण-करि समय प्रबद्धकौं गुणैं जो प्रमाण होइ तितना हो है। भावार्थ—

इहां त्रिकोणरचनाविषै जो नीचै ही नीचै प्रथमपंक्ति विषैं बरोबरि रूप लिख्या ताकौं प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक कहिए। ताके ऊपरि पंक्तिनिविषैं जे लिखे तिनकौं प्रथम गुणहानिका द्वितीयादि निषेक कहिए। बहुरि गुणहानि आयाम प्रमाण पंक्ति पूर्ण भए पीछे ताके ऊपरि जो पंक्ति है ताकौं द्वितीय गुणहानिका प्रथम निषेक कहिए। ताके ऊपरि पंक्तिकौं द्वितीय निषेक कहिए। ऐसैं गुणहानि प्रमाण पंक्ति पूर्ण भएं ताके ऊपर पंक्तिकौं तृतीय गुणहानिका प्रथम निषेक कहिए ऐसैं ही अंतकी गुणहानि पर्यंत जानना। सो याका अर्थ अंकसंदृष्टिरूप त्रिकोणयंत्रविषै दिखाइए है—

नीचै ही नीचै बरोबरि पंक्तिविषै नवका निषेकस्यौं लगाय पांचसै बाराका निषेक पर्यंत सर्व निषेक लिखे ताकौं प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेक कहिए। सो इस पंक्तिका जोड़ दीएं संपूर्ण समयप्रबद्धप्रमाण तरेसठिसै हो है। बहुरि ताके ऊपरि दूजी पंक्तिविषै नवका निषेकस्यौं लगाय च्यारिसै असीका निषेक पर्यंत निषेक लिखे ताकौं प्रथम गुणहानिका द्वितीय निषेक कहिए। इस पंक्तिका जोड़ इहां निषेककौं चय संज्ञा है तातैं पांचसै बाराका चय घाटि समय प्रबद्ध प्रमाण हो है। बहुरि ताके ऊपरि तीसरी पंक्तिविषै नवका निषेकस्यौं लगाय च्यारिसै अठता-लीसका निषेकपर्यंत लिखे ताकौं प्रथम गुणहानिका तृतीय निषेक कहिए। इस पंक्तिका जोड च्यारिसै असीका एक चय और पूर्व पंक्तिका जोडमैं घटाइए तीहि प्रमाण जोड हो है। ऐसैं एक एक निषेक रूप चय अनुक्रमतैं अंत की गुणहानिका अंतका निषेक पर्यंत घाटि घाटि जानना। ऐसैं ऊपरि ऊपरि अठतालीस पंक्ति भई तिनविषै नी-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

चैस्यों लगाय आठ पंक्तिपर्यंतका प्रथम गुणहानिका प्रथमादि निषेक कहिए ताके ऊपरि नवमी पंक्तितैं लगाय सोलमी पंक्ति पर्यंत द्वितीय गुणहानिका प्रथमादि निषेक कहिए ऐसैं आठ आठ पंक्ति कीएं एक एक गुणहानि जाननी। तहां जे चय घटाए थे तिनकौ मिलाएं प्रथम गुणहानिका जोड समय प्रबद्ध तरेसठिसेकौं गुणहानि आठ करि गुणैं जो प्रमाण होइ तितने हो हैं। बहुरि इनविषै अंतकी गुणहानिका जोड आठ गुणा सौ घटाएं आठ गुणा बासाठिसै होइ। ताका आधा आठ गुणा इकतीससै होइ सो दूसरी गुणहानिका जोड जानना। यामैं अंतका गुण हानिका जोड आठ गुणा सौ घटाए आठ गुणा तीससै होइ. ताका आधा आठ गुणा पंद्रहसै होइ सो तीसरी गुण हानिका जोड जानना ऐसैं अंतकी गुणहानि पर्यंत जानना इनि सबनिका जोड देना बहुरि जो प्रथम गुणहानि विषै जे चय घटे थे तिनिका जोड़ दीएं प्रथम गुण हानिविषै ऋण होइ। बहुरि ताका आधा द्वितीय गुणहानिविषै होइ। ऐसैं आधा आधा अंतकी गुणहानि पर्यंत होइ। तिन सबनिका जोड देइ पूर्व प्रमाणमैंस्यों घटाएं जो अवशेष रहैं सोई सर्व त्रिकोणयंत्रका जोड जानना। सोई दिखाइए है—

त्रिकोण रचना विषै अनादि बंधन करि बंधे तिनविषै निर्जरा रूप गलि गए पीछे अवशेष रहे ऐसे विवक्षित मोहनीय मूल प्रकृतिके समय प्रबद्ध ते आबाधा रहित उत्कृष्ट स्थिति प्रमाण हैं। तहां प्रथम समय प्रबद्धका अंतका निषेकस्यों लगाय अंत समय प्रबद्धका प्रथम निषेक पर्यंत बरोबरि रचना रूप चयका आधिक्य लीएं क्रमतैं तिष्ठै एक एक निषेक ते मिलि करि विवक्षित वर्तमान समय विषै एक समय प्रबद्ध उदय रूप हो है। बहुरि तिस ही समय विषै एक समय प्रबद्ध बंधै है। बहुरि सत्तारूप द्रव्य किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानि करि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण तिष्ठै है। तहां सत्ता अपेक्षा त्रिकोण रचनाविषै प्रथम गुणहानिका प्रथम निषेकविषै अनेक समयप्रबद्ध संबंधी एक एक निषेक मिलि करि संपूर्ण समयप्रबद्ध प्रमाण हो है। बहुरि द्वितीयादि निषेकनि-विषै प्रथमादि निषेकनिकरि एक एक अधिक घाटि है सो इस घाटि प्रमाणकौं ज्योंका त्यों मिलाएं गुणहानि करि गुण्या समयप्रबद्ध प्रमाण हो है। इहां अंकसंदृष्टिकरि कथन दिखावते जाइए है। तातैं आठगुणा तरेसठिसै

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

हुआ बहुरि इसविषैं जितना घटावना सो ऋण ताका प्रमाण कहैं हैं। एक घाटि गुणहानिका प्रमाणरूप गच्छविषै क्रमकरि एकनैं आदि देकरि एक एक अधिककरि गुण्या हूवा प्रथम निषेकका जोड दीजिये सो पांचसै बाराकौं क्रमतैं एक दोय तीन च्यारि पांच छह सातकरि गुणैं जोड दीजिए तब पांचसै बाराकौं एक घाटि आठ अर आठकरि गुणिए अर दोयकौं एक गुणाकरि ताका भाग दीजिए इतने भए

१ ͡
५१२ । ८ । ८ ।
२ । १ ।

इहां प्रथम निषेककौं दो गुणहानिकरि भेदिए तब पांचसै बाराकी जायगा बत्तीसनै आठ गुणाकरि दो गुणा करिए ऐसैं भए

१ ͡
३२ । ८ । २ । ८ । ८ ।
२ । १

याकौं गुणकार वा भागहारविषै तिगुणा कीजिए तब दोयकी जायगा गुणकारविषै वा भागहारविषै छह भया तहां छह गुणकार

१ ͡
३२ । ८ । ६ । ८ । ८
६

छह विषै एक जुदा राखिए सो याका

१ ͡
३२ । ८ । १ । ८ । ८
६

प्रमाण तेईससै निवासी अर दोयका छठा भाग भया।

बहुरि तीसरानै आदि देकरि निषेक तिन विषै पूर्वै संकलन विधान कह्या था तिस विधान करि दोयबार संकलन क्रमकरि प्रथम गुणहानिके चयका जोड दीजिए सो दोय घाटि गच्छका दोयबार संकलनमात्र प्रथम गुणहानिका चयका जोड दीजिए तहां बत्तीसनैं एक तीन छह दश पंद्रह इकईस करि क्रमतैं गुणि जोड दीए बत्तीसनैं दोय घाटि आठकरि अर एक घाटि आठकरि अर आठ करि गुणि छहका भाग दीजिए इतना भया सो सतरहसै बानवै भए इनिकौं एक जुदा राख्या था गुणकार ताका प्रमाणमैस्यौं घटाएं पांचसै सत्ताणवै दोयका छठा भाग रह्या सो अवशेष पांच गुणकार रहे थे तिनिका प्रमाण ग्यारह हजार नवसै छियालीस अर च्यारिका छठा भाग भया

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तिन विषै मिलाएं बारह हजार पांचसै चवालीस भया सो प्रथम गुणहानि विषै ऋण जानना। सो घटावने योग्य राशि होइ ताकौं ऋण कहिए। जो विवक्षितका प्रमाण होइ ताकौं धन कहिये सो प्रथम गुण हानिका ऋण सहित धनकौं अंतकी गुण हानिका ऋण सहित धन कर रहित करि ताका आधा द्वितिय गुणहानिका धन हो है। ऐसैं ही ऊपरि भी सर्व गुणहानिके धन जानने सो प्रथमादि गुण हानिके धन तरेसठिसै इकतीससै पंद्रहसै सातसौ तीनसौ एकसौ आठ आठ गुणा हूवा। इन सबनिविषैं अंतकी गुणहानिका प्रमाण मिलाएं अर दोयकरि भेदें क्रमतैं प्रथमादि गुणहानिविषैं वत्तीससौ सोलहसौ आठसौ च्यारिसौ दोयसौ सौका आठ गुणा अर दोय गुणाकरिए इतना प्रमाण भया। सबनिका जोड अंतधणं गुणगुणियं आदिविहीणं, इस सूत्रकरि अंतका धन प्रथम गुणहानिविषैं प्रमाण ताकौं गुणकार दोयकरि गुणि तामैं आदि जो अंत गुणहानिका धन ताकौं घटाएं तरेसठसैनैं आठ गुणा करि दोय गुणा करिए इतने भए। सो इहां तरेसाठिसै तौ समय प्रबद्धका प्रमाण अर आठ गुणहानिका प्रमाण दोय गुणा कीएं दो गुणहानिका प्रमाण ऐसैं करि दोय गुणहानिकरि गुण्या हूवा समय प्रबद्ध प्रमाण जोड भया। अब इनिविषैं ऋण कितना घटावना सो कहे हैं—

प्रथम गुणहानिविषैं ऋण वत्तीसनैं आठ पांच एक घाटि आठ आठ गुणाकरि तिनविषैं एक गुणकार जुदा राख्या था अर तिसविषैं दोयवार संकलनमात्र चय घटाएं जो प्रमाण भया था तिसकौं मिलाएं छहका भाग दीएं बारह हजार पांचसै चवालीस भया। काहेतैं ? पांचसै बाराका निषेक सात पंक्तिविषैं घट्या च्यारिसै असीका छह विषैं च्यारिसै अठतालीसका पांचविषैं च्यारिसै सोलहका च्यारिविषैं तीनसै चौरासीका तीनविषैं तीनसै बावनका दोय विषैं तीनसै वीसका एक विषै घटैं अर दोयसै अठ्यासीका आठौ ही पंक्तिविषै पाइए तातैं घट्या नाहीं ऐसैं इन सबनिका ३५८४ २८८० २२४० १६६४ ११५२ ७०४ ३२० २८८ जोड दीएं बारह हजार पांचसै चवालीस हो है। बहुरि प्रथम गुणहानिके ऋणतैं द्वितीयादिक गुणहानिविषै आधा आधा ऋण जानना। सब गुणहानिका जोड 'अंतधणं गुणगुणियं आदि विहीणं,इस सूत्रकरि अंत धन जो प्रथम गुणहानिका ऋण

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ताकौं गुणकार दोय करि गुणिए तामैं आदि जो अंत गुणहानिका ऋण सो घटाइए सो अंत धन बारह हजार पांचसै चवालीसकौं दोय करि गुणें पचीस हजार अठ्यासी तामैं आदि तीनसै बाणवै घटाएं चौईस हजार छसै छिनवै सर्व गुणहानिका ऋण हूवा। बहुरि अंतकी गुणहानिका धन प्रमाण सर्व गुणहानिविषै ऋण मिलाया था तिसका जोड दीएं नाना गुणहानिकरि गुणित्त अंतकी गुणहानिका धन प्रमाण दूसरा ऋण भया सो अंतका धन आठ गुणा सौ ताकौं नाना गुणहानि छहकरि गुणे अठतालीससै हूवा ऐसैं दोऊ ऋणका जोड दीएं किछू अधिक आधा गुणहानिका प्रमाणकरि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण भया। सो गुणतीस हजार च्यारिसै छिनवै हूवा तहां गुणहानि आठका आधा च्यारिकरि समय प्रबद्धकौं गुणें पचीस हजार दोयसै होइ। अवशेष च्यारि हजार दोय सै छिनवै रहे सो अधिकका प्रमाण जानना। ऐसैं इनि दोऊ ऋणकं जोड देनेतैं जो प्रमाण भया ताकौं पूर्वोक्त दोगुण हानिकरि गुण्या हुवा समय प्रबद्धमैंस्यों घटाएं किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानिकरि गुणित समय प्रबद्ध प्रमाण भया सो दोगुणहानिगुणित समय प्रबद्धका प्रमाण एक लाख आठसै तामैं दोऊ ऋणके गुणतीस हजार च्यारिसै छिनवै घटाएं इकहत्तरि हजार तीनसै च्यारि रहे। सोई सर्व त्रिकोण रचनाका जोड जानना। यथार्थ करि दोय गुणहानिविषै आधा गुणहानि अर एक गुणहानिका अठारहवां भाग अर संख्यात वर्गशलाका घटाएं जो किंचित् ऊन ड्योढ गुणहानिमात्र प्रमाण रह्या ताकरि समय प्रबद्धकौं गुणें जो प्रमाण होइ तितना सर्व त्रिकोण रचनाका जोड प्रमित किंचित् ऊन द्व्यर्ध गुणहानि गुणित समय प्रबद्धप्रमाण सत्व द्रव्य जानना। इहां जोडविषैं गुणकार दोय गुणहानि विषैं आधा गुणहानि एक अर गुणहानिका अठारह्वां भाग अर संख्यात वर्गशलाका कैसैं घटी सो विशेष संस्कृत टीकातैं जानना। इहां काठन जानि नाहीं लिख्या है। प्रयोजनमात्र लिख्या हो है॥ ९४४॥

आगें स्थितिके भेद कहै हैं—

अंतोकोडाकोडिट्ठिदित्ति सव्वे णिरंतरट्ठाणा।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

उक्कस्सट्ठाणादो सण्णिस्स य होंति णियमेण ॥ १४५ ॥

अंतःकोटाकोटिस्थितिरिति सर्वाणि निरंतरस्थानानि ।
उत्कृष्टस्थानात्संज्ञिनश्च भवंति नियमेन ॥ १४५ ॥

जी० प्र०—सप्तकर्मणामुत्कृष्टस्थितेरा अंतःकोटाकोटिसमयोनक्रमेण सर्वे निरंतरस्थितिविकल्पाः संख्यातपल्यमात्रा नियमेन संज्ञिजीवानां भवंति । संदृष्टिः—

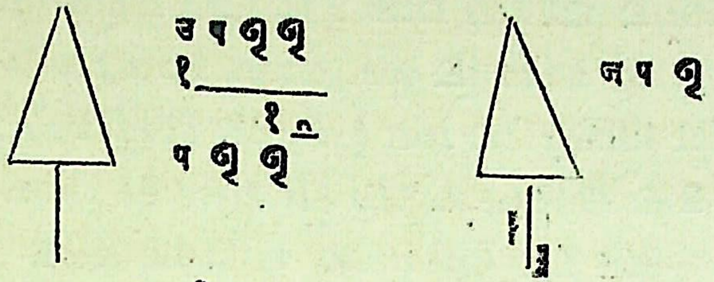

अत्र प्र-सा ३० को २ फ-सा अंतः को २ । इ-सा २० को २ लब्धमंतः को २ । २/२ । इति ज्ञानावरणादीनामंतःकोटीकोटिं साधयेत् ॥ १४५ ॥ अथ सांतरस्थितिविकल्पानाह----

स०चं०—आयुविना सातकर्मनिके उत्कृष्ट स्थितितैं लगाय अंतः कोटाकोटी सागर प्रमाण जघन्य स्थिति पर्यंत एक एक समय घाटिका अनुक्रम लीएं जे निरंतर स्थितिके भेद ते संख्यात पल्य प्रमाण नियम करि संज्ञी पंचेंद्री जीवनिकै हो हैं । इहां वीस सागरके उत्कृष्ट स्थिति धारक कर्मनिकी अंतः कोटाकोटी होइ तौ तीस सागर वालोंकी कहा होइ ? ऐसैं त्रैराशिक करतां ड्योढी अंतः कोटाकोटी होइ ऐसैं ज्ञानावरणादि कर्मनिकी अंतः कोटाकोटीका प्रमाण साधना ॥ १४५ ॥ आगे सांतरस्थितिके भेद कहै हैं—

संखेज्जसहस्साणिवि सेढीरूढम्मि सांतरा होंति । ११५५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सगसगअवरोत्ति हवे उक्कसादो दु सेसाणं ॥ ९४६ ॥

संख्येयसहस्राण्यपि श्रेणीरूढे सांतरा भवंति ।
स्वकस्वकावर इति भवेदुत्कृष्टात्तु शेषाणां ॥ ९४६ ॥

जी० प्र०—सम्यक्त्वदेशसकलसंयमश्रेण्यभिमुखाः क्रमशो मिथ्यादृष्ट्यसंयतदेशसंयताप्रमत्ताः, अपूर्वकरणादित्रयश्च श्रेण्यारूढाः तेषु सांतरस्थितिविकल्पस्थानानि संख्यातसहस्राणि स्युः १००० तद्यथा—

अधःप्रवृत्तकरणे प्रथमसमयादंतर्मुहूर्तं ज्ञानावरणादीनां स्वयोग्यांतःकोटाकोटिस्थितिं बध्नाति । तदग्रेऽन्तर्मुहूर्तं पल्यासंख्यातैकभागोनां पुनस्तदग्रेऽन्तर्मुहूर्तं तावतोनामिति संख्यातसहस्रवारं नीत्वा तं करणं समाप्यापूर्वानिवृत्तिकरणसूक्ष्मसांपरायेष्वपि स्व-स्वबंधं तदालापवारमपसृत्य वेदनीयस्य द्वादशमुहूर्तांतं नामगोत्रयोरष्टांतर्मुहूर्तांतं शेषाणामंतर्मुहूर्तांतं च बध्नातीति तानि तावंत्युक्तानि। शेषद्वादशजीवसमासानां एवं पणकदीत्यादि वासूपेत्यादिसूत्रोक्तानि तु तानि निरंतराणि ॥ ९४६ ॥ अथ स्थितिविकल्पकारणकषायाध्यवसायान्मूलप्रकृतीनाह—

स०चं०—सम्यक्त्वके देशसंयम सकल सयंम उपशमक वा क्षपक श्रेणीके सन्मुख भए ऐसे क्रमतैं मिथ्यादृष्टि असंयत देशसंयत अप्रमत्त अपूर्वकरणादिक तीन गुणस्थानवर्ती जीव बहुरि उपशमक क्षपक श्रेणी चढे ऐसे जीव तिन विषै सांतर कहिए एक एक समय घाटिका नियम करि रहित ऐसे स्थितिके भेद संख्यात हजार हैं। सोई कहिए है

---

१ अधःप्रवृत्तकरणपरिणामे तत्प्रथमसमयाच्चरमसमयपर्यंतं प्रतिसमयमनंतगुणविशुद्धिवृद्धिं साताविप्रशस्तप्रकृतीनां प्रति समयमनंतगुणवृद्धया चतुःस्थानानुभागबंधं असाताद्यप्रशस्तप्रकृतीनां प्रति समयमनंतगुणहान्या द्विस्थानानुभागबंधं बंधापसरणं च करोति । किंनाम बंधापसरणं ? ज्ञानावरणादीनां स्वयोग्यांतःकोटीकोटिस्थितिं तद्योग्यांतर्मुहूर्तपर्यंतं बध्नन् ततस्तदनंतरसमये पल्यसंख्यातैकभागोनामंतर्मुहूर्तपर्यंतं बध्नातीति । अमी स्थितिविकल्पा अधःप्रवृत्तकरणकाले संख्याताः त्रैराशिकेनानेन—

प्र २ १ फ श १ इ का २ १ १ १
बंधापसरण अधःप्र = काल

भवंति १ १ । अपूर्वकरणे तानि आवश्यकानि च स्थितिकांडकघातानुभागकांडकघातगुणश्रेणिगुणसंक्रमणानि चेत्यष्टौ संतीति कारणात् । अनिवृत्तिकरणे सूक्ष्मसांपरायेऽप्यंतःकोटाकोटितः वेदनीयस्य द्वादशमुहूर्तपर्यंतं नामगोत्रयोरष्टांतर्मुहूर्त्तपर्यंतं शेषाणामंतर्मुहूर्त्तपर्यंतं च बंधापसरणानि स्युरिति संख्यातसहस्राणीत्युक्तं । पाठोयं श्रीमदभयचंद्रनामांकितायां टीकायां ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अधः प्रवृत्त करणविषै पहले समयतैं लगाय अंतर्मुहूर्त्त पर्यंत, ज्ञानावरणादिक प्रकृतिनिकी अपने योग्य अंतःकोटाकोटी प्रमाण स्थिति बांधै है। तहां पीछै अंतर्मुहूर्त्तपर्यंत पल्यका असंख्यातवां भाग प्रमाण घाटि बांधैं है तहां पीछै अंतर्मुहूर्त्त पर्यंत तिसतैं भी तितनीही घाटि स्थिति बांधै है ऐसैं संख्यात हजार वार करि तिस करणकौं पूर्णकरि अपूर्वकरण अनिवृत्तिकरण सूक्ष्म सांपराय विषै भी अपने अपने स्थिति बंधकौं आलापकरि तितनी तितनीही वार करि घटाय वेदनीयकी बारह मुहूर्त पर्यंत नाम गोत्रकी आठ मुहूर्त पर्यंत अवशेषनिकी एक मुहूर्त पर्यंत स्थितिकौं बांधै है। ऐसैं सांतर स्थितिके भेद संख्यात हजार जानने बहुरि संज्ञी पर्याप्त अपर्याप्त विना अवशेष रहे बारह जीवसमास तिनकैं एयं पण कदि पण्णं इत्यादि सूत्रकरि वासूप इत्यादि पूर्वै स्थिति बंधका कथन विषै जघन्य स्थिति वा उत्कृष्ट स्थिति कही है सो उत्कृष्ट स्थितितैं जघन्य स्थिति पर्यंत एक एक समय घाटि क्रम लाए निरंतर स्थितिके भेद जानने ॥ ९४६ ॥ आगैं स्थितिके भेदनिकौं कारणभूत ऐसे कषायाध्यवसाय कहिए स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान ते मूल प्रकृतिनिके कितने हैं सो कहै हैं—

आउट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा असंखलोगमिदा।
णामागोदे सरिसं आवरणदु तदियविग्घे य ॥ ९४७ ॥

आयुःस्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्यलोकमितानि।
नामगोत्रे सदृशमावरणद्विके तृतीयविघ्ने च ॥ ९४७ ॥

जी० प्र०—आयुःस्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि सर्वतः स्तोकान्यपि तद्योग्यासंख्यातलोकमात्राणि। नामगोत्रयोस्ततः पल्यासंख्यातैकभागगुणत्वेन समानानि। ततः ज्ञानदर्शनावरणवेदनीयांतरायाणामपि तथा समानानि ॥ ९४७ ॥

सं० च०—आयुके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान सबनितैं थोरे हैं तथापि ते भी यथायोग्य असंख्यात लोक प्रमाण हैं बहुरि तिनतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा नाम अर गोत्र दोऊनिके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान परस्पर स- ११५६

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

मान जानने। बहुरि तिनतैं पल्यका असंख्यातवां भाग गुणा ज्ञानावरण दर्शनावरण वेदनीय अंतराय इनि च्यारिके स्थिति बंधाध्यवसायस्थान परस्पर समान जानने ॥९५७॥

सव्वुवरि मोहणीये असंखगुणिदक्कमा हु गुणगारो ।
पल्लासंखेज्जदिमो पयडिसमाहारमासेज्ज ॥ ९४८ ॥

सर्वोपरि मोहनीये असंख्यगुणितक्रमाणि हि गुणकारः ।
पल्यासंख्येयिमः प्रकृतिसमाहारमासाद्य ॥ ९४८ ॥

जी० प्र०—सर्वोपरि मोहनीये प्रकृतीनां स्थितिविकल्पसमूहमाश्रित्य कषायाध्यवसायस्थानानि त्रिषु स्थानेष्वसंख्यातगुणितक्रमाः। अत्र प्रस्तुतसिद्धांतवाक्यानि—

ण य सव्वमूलपयडीणं समाणाणं कसायोदयट्ठाणाणमेत्थ गहणं कसायोदयट्ठाणेण विणा मूलपयडिबंधाभावेण सव्वपयडिट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं समाणप्पसंगदो तह्मा सव्वमूलपयडीणं सगसगउदयादो समुप्पण्णपरिणामाणं सगसगट्ठिदिबंधकारणत्तेण ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणसण्णिदाणमुत्तरपच्चयाणमेत्थ गहणं पयडिसमाहारमासेज्ज णाणावरणादीणं पयडीणं सगसगठिदिबंधकारणज्झवसाणट्ठाणाणि सव्वाणि एगत्त काऊण पमाणं परूविदं। ण ट्ठिदिं पडि एसा परूवणा होदि। उवरिमसुत्तेहि ट्ठिदिं पडि अज्झवसाणपमाणस्स परूविज्जमाणत्तादो हेट्ठिमेहिंतो उवरिमाणि किमट्ठमसंखेज्जगुणाणि। साहावियादो मिच्छत्तासंजमकसायपच्चयेहिं सव्वाणि कम्माणि सरिसाणि तेण एदेसिं कम्माणमज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणहाणित्ति ण वड्ढदे हेट्ठिमाणं ठिदिबंधट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं ठिदिबंधट्ठाणाणि अहियाणित्ति असंखेज्जगुणत्तं ण जुज्जदे। हेट्ठिमहेट्ठमकम्माणं ठिदिबंधट्ठाणपाउग्गकसायेहिंतो उवरिमउवरिमाणं कम्माणमहिं ट्ठिदिबंधट्ठाण पाओग्गकसायउदयट्ठाणाणं असमाणाणमणुवलंभेण असंखेज्जगुणत्ताणुववत्तीदो ण एस दोसो। हेट्ठिमाणं उदयट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं उदयट्ठाणबहुत्तेण असंखेज्जगुणत्ताविरोहादो।

न च सर्वमूलप्रकृतीनां समानानां कषायोदयस्थानानामत्र ग्रहणं कषायोदयस्थानेन विना मूलप्रकृतिबंधाभावेन सर्वप्रकृतिस्थितिबंधाध्यवसायस्थानानां समानत्वप्रसंगात्। तस्मात् सर्वमूलप्रकृतीनां स्वस्वोदयतः समुत्पन्नात्मपरिणामानां स्वस्वस्थितिबंधकारणत्वेन स्थितिबंधाध्यवसायस्थानसंज्ञितानामुत्तरप्रत्ययानामत्र ग्रहणं प्रकृतिसमाहारमाश्रित्य ज्ञानावरणादीनां प्रकृतीनां स्वस्वस्थितिबंधकारणाध्यवसायस्थानानि सर्वाण्ये-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कीकृत्य प्रमाणं प्ररूपितं। न स्थितिं प्रत्येषा प्ररूपणा भवेत्। उपरितनसूत्रैः स्थितिं प्रत्यध्यवसायप्रमाणस्य प्ररूप्यमाणत्वादधस्तनेभ्य उपरिमाणि किमर्थमसंख्येयगुणानि स्वाभाव्यात्। मिथ्यात्वासंयमकषायप्रत्ययैः सर्वाणि कर्माणि सदृशानि तेनैतेषां कर्मणामध्यवसायस्थानान्यसंख्येयगुणानि इति न घटते। अधस्तनानां स्थितिबंधस्थानेभ्य उपरितनानां कर्मणां स्थितिबंधस्थानान्यधिकानि इत्यसंख्येयगुणत्वेन युज्यते अधस्तनाधस्तनकर्मणां स्थितिबन्धस्थानप्रायोग्यकषायेभ्यः, उपरितनोपरितनानां कर्मणामधिकस्थितिबन्धस्थानप्रायोग्यकषायोदयस्थानानामसमानानामनुपलंभेनासंख्येयगुणत्वानुपपत्तितः। नैष दोषः। अधस्तनानामुदयस्थानेभ्य उपरितनानां कर्मणां उदयस्थानबहुत्वेनासंख्येयगुणत्वाविरोधात् ॥ ९४८ ॥

अथ जघन्यादिस्थितिविकल्पं प्रत्याह—

स० चं०—सर्वके ऊपरि मोहनीयके स्थिति बंधाध्यवसायस्थान तिनतैं पल्यका असंख्यातवां भागगुणां जाननें ऐसैं प्रकृतिनिका स्थिति भेदनिकी अपेक्षा कषायाध्यवसायस्थान तीनो जायगा क्रमतैं असंख्यात गुणे जानने इहां गुणकारका प्रमाण पल्यका असंख्यातवां भाग जानना। इहां प्रासंगिकसिद्धांतके वचन कहिये है—

ण य सव्वमूलपयडीणं समाणाणं कसायोदयट्ठाणाणमेत्थ गहणं, कसायोदयट्ठाणेण विणा मूलपयडिबंधाभावेण सव्वपयडिट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं समाणप्पसंगादो तम्हा सव्वमूलपयडीणं सगसगउदयादो समुप्पण्णपरिणामाणं सगसगट्ठिदिबंधकारणत्तेण ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणसण्णिदाणमुत्तरपच्चयाणमेत्थ गहणं। पयडिसमाहारमासेज्ज णाणावरणादीणं पयडीणं सगसगडिदिबंधकारणज्झवसाणट्ठाणाणि सव्वाणि एगत्त काऊण पमाणं परूविदं। ण ट्ठिदिं पडि एसा परूवणा होदि उवरिमसुत्तेहि ट्ठिदिं पडि अज्झवसाणपमाणस्स परूविज्जमाणत्तादो हेट्ठिमेहिंतो उपरिमाणि किमट्ठमसंखेज्जगुणाणि साहावियादो मिच्छत्तासंजमकसायपच्चयेहिं सव्वाणि कम्माणि सरसाणि तेण एदेसिं कम्माणमज्झवसाणट्ठाणाणि असंखेज्जगुणहाणित्ति ण घडदे हेट्ठिमाणं ठिदिबंधट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं ठिदिबंधट्ठाणाणि अहियाणित्ति असंखेज्जगुणत्तं ण जुज्जदे हेट्ठिमहेट्ठिमकम्माणं ठिदिबंधट्ठाणपाओग्गकसायेहिंतो उवरिमउवरिमाणं कम्माणमाहियट्ठिदिबंधट्ठाणपाउग्गकसाय उदयट्ठाणाणं असमाणाणमणुवलंभेण असंखेज्जगुणत्ताणुववत्तीदो। ण एस दोसो हेट्ठिमाणं उदयट्ठाणेहिंतो उवरिमाणं कम्माणं उदयट्ठाणबहुत्तेण असंखेज्जगुणत्ताविरोहादो। याका अर्थ—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि नाहीं सर्व मूल प्रकृतिनिके समान पाइए ऐसे जु कषायनिके उदय स्थान तिनिका यहां ग्रहण है जातैं कषायनिके उदयस्थान विना मूलप्रकृतिनिके बंधका अभाव है तीहिं करि सर्व प्रकृतिनिके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननिकी समानताका प्रसंग होय जाय, सो है नाहीं तातैं सर्व मूल प्रकृतिनिका अपने अपने उदयतैं निपजे ऐसे जु आत्माके परिणाम ते अपना अपना स्थिति बंधकौं कारण तीहि करि स्थितिबंधाध्यवसाय है नाम जिनिका ऐसे जु उत्तर प्रत्यय कहिए आस्रव भेद तिनिका इहां ग्रहण है। प्रकृतिनिका स्थिति भेदरूप समाहार जो समुदाय ताकौं आश्रयकरि ज्ञानावरणादिक प्रकृतिनिका अपने अपने स्थितिबंधकौं कारण भूत ऐसे जु अध्यवसाय स्थान तिन सर्वनिकौं एकठे करि प्रमाण कह्या है नाहीं स्थितिकी अपेक्षा ऐसी प्ररूपणा है। तातैं ऊपरले सूत्रनिकरि स्थितिकी अपेक्षा अध्यवसायके प्रमाणका प्ररूपण कीया है। इहां तर्क—

जो अधस्तनेभ्य कहिए पहले कहे आयुनै आदि देकरि कर्म तिनके स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान तिनतैं उपरिमाण कहिए पीछे कहे कर्म तिनके स्थितिबंधाध्यवसाय स्थान ते किसै अर्थ असंख्यात गुणे हैं जातैं स्वभाव पणेहीतैं मिथ्यात्व असंयम कषाय रूप प्रत्ययनिकरि सर्व कर्म समान हैं। तीहिंकरि हीन कर्मनिके अध्यवसाय स्थान असंख्यात गुणे नाही शोभै हैं। अधस्तन जे पहिली कहे आयु आदिक कर्म तिनके स्थितिबंधके स्थान तिनतैं उपरितन जे पीछे कहे कर्म तिनके स्थितिबंधके स्थान अधिक हैं। ऐसैं भी असंख्यात गुणापणेकरि युक्त नाही हो है। भावार्थ—

नीचले कर्मनितैं ऊपरले कर्मनिके स्थिति स्थान अपेक्षा भी अधिकपणो संभवै है। असंख्यात गुणापणों न संभवै है तहां उत्तर कहिए है, नाहीं यहु दोष है जातैं अधस्तन जे पहिली कहे आयु आदि कर्म तिनके उदय स्थाननितैं उपरिम जे पीछें कहे कर्म तिनके उदयस्थान बहुत हैं। तीहिंकरि असंख्यात गुणापनेकौं विरोध नाहीं। भावार्थ—अपने अपने उदयतैं निपजे आत्माके परिणाम तिनका स्थितिबंधाध्यवसायस्थान है सो आयु आदि कर्मनिकैं उदयस्थानकानितैं नाम आदि कर्मनिकैं उदयस्थान बहुत हैं तातैं असंख्यात गुणे कहे ॥ ९४८ ॥ आगैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

जघन्यादिक स्थितिकी अपेक्षा स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननिका प्रमाण कहै हैं--

अवरट्ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणा असंखलोगमिदा ।
अहियकमा उक्कस्सट्ठिदिपरिणामोत्ति णियमेण ॥ ९४९ ॥

अवरस्थितिबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्यलोकमितानि ।
अधिकक्रमाणि उत्कृष्टस्थितिपरिणाम इति नियमेन ॥ ९४९ ॥

जी० प्र०—मोहनीयस्य स्थितिः जघन्यांतःकोटीकोटिसागरोपमासंख्यातपल्यमात्री प १ उत्कृष्टा सप्ततिकोटीकोटिसागरोपमा । ततः संख्यातगुणा प १ १ तद्विकल्पा एतावंतः प १ १ एतेषु सर्वजघन्यस्य स्थितिबंधाध्यवसायस्थानान्यसंख्यातलोकमात्राणि तत उपरि उत्कृष्टपर्यंतं चयाधिकानि भवंति ॥ ९४९ ॥

१—१ ८

स० चं०—विवक्षित मोहनीय कर्मकी स्थिति सो जघन्य तौ अंतः कोटाकोटी सागर प्रमाण है सो संख्यात पल्य प्रमाण है । बहुरि उत्कृष्ट स्थिति सत्तर कोडा कोडी सागर प्रमाण है सो जघन्य स्थितितैं संख्यात गुणी है। तहां जघन्य स्थितिकौं उत्कृष्ट स्थितिमैस्यौं घटाय तामैं एक और मिलाइए जो प्रमाण होइ तितने स्थितिके भेद हैं। इनि भेदनिविषै सब जघन्य स्थितिबंधकौं कारणभूत असे अध्यवसाय स्थान ते असंख्यात लोक प्रमाण हैं। ताके उपरि उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत चयकरि अधिक अधिक हैं नियमकरि । जो जघन्य स्थितिकौं कारण अध्यवसाय स्थाननिका प्रमाण है तामैं एक चयका प्रमाण मिलाइए तब जघन्य स्थितितैं एक समय अधिक स्थितिकौं कारण अध्यवसाय स्थाननिका प्रमाण हो है। असैं ही उत्कृष्ट स्थितिपर्यंत जानने ॥ ९४९ ॥

अहियागमणणिमित्तं गुणहाणी होदि भागहारो दु । ११६०

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

दुगुणं दुगुणं वड्ढी गुणहाणिं पडि कमेण हवे ॥

अधिकागमननिमित्तं गुणहानिर्भवति भागहारस्तु ।
द्विगुणा द्विगुणा वृद्धिः गुणहानिं प्रति क्रमेण भवेत् ॥ १५० ॥

जी०प्र०--अधिकः चयः तमानेतुं विवक्षितगुणहानौ चरमनिषेके दोगुणहानिः, तुशब्दात् प्रथमनिषेके रूपाधिकगुणहानिश्च भागहारो भवति । तत एव स गुणहानिं प्रति द्विगुणद्विगुणक्रमेण स्यात् । तत्संदृष्टिः—

१६ ८।२	३२ ८।२	६४ ८।२	१२८ ८।२	२५६ ८।२	५१२ ८।२
९ १— ८	१८ १— ८	३६ १— ८	७२ १— ८	१४४ १— ८	२८८ १— ८
१	२	४	८	१६	३२

स० चं०—अधिक रूप जो चय ताका प्रमाण ल्यावनेकौं विवाक्षित गुणहानिविषै अंतके निषेककौं दोगुणहानि का भाग दीजिए अर तुशब्दकरि अथवा प्रथम निषेककौं एक अधिक गुणहानिका भाग दीजिये तब चयका प्रमाण आवै है । जैसैं अंक संदृष्टिकरि अंत गुणहानि विषैं अंतका निषेकका प्रमाण सोलह ताकौं दूणी गुणहानि का प्रमाण सोलह ताका भाग दीएं एक पाया । अथवा आदिका निषेकका प्रमाण नव ताकौं एक अधिक गुणहानि प्रमाण नवका भाग दीए भी एक पाया सोई तिस गुण हानि विषै चयका प्रमाण जानना । बहुरि तिसतैं गुणहानि गुणहानि प्रति दूणा दूणा चयका प्रमाण जानना जातैं गुणहानि गुणहानिविषैं आदि निषेक वा अंत निषेक का प्रमाण दूणा दूणा पाइए है ॥ १५० ॥

ठिदिगुणहाणिपमाणं अज्झवसाणम्मि होदि गुणहाणी । १०११

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णाणागुणहाणिसला असंखभागो ठिदिस्स हवे ॥९५१॥

स्थितिगुणहानिप्रमाणमध्यवसाने भवति गुणहानिः ।
नानागुणहानिशला असंख्यभागः स्थितेर्भवेत् ॥ ९५१ ॥

जी॰ प्र॰—गुणहानिप्रमाणं तु प्राग्बंधावसरे कर्मस्थित्युक्तगुणहानिप्रमाणवदत्र कषायाध्यवसायेऽपि भवति १— १ तदेव द्विगुणं दोगु-
प छृ छृ
छे··व··छे
a

णहानिः १-- १ २
प छृ छृ
छे··व··छे
a

नानागुणहानिशलाकाप्रमाणं स्थितिनानागुणहानिशलाकानामसंख्यातैकभागः नाना छे—व—छे ॥ ९५१ ॥
a

तज्जघन्यचयस्य महत्त्वं दर्शयति—

स॰ चं॰—इहां गुणहानिका प्रमाण पूर्वै बंधका अवसरविषैं कर्म स्थितिकी रचना करी है तहां जैसे गुणहानिका प्रमाण कह्या है तैसैं इहां कषायाध्यवसाय स्थानका कथन विषै भी जानना। भावार्थ—जैसैं पूर्वै कह्या था जो स्थितिके प्रमाणकौं नाना गुण हानि शलाका प्रमाणका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सो गुणहानिका प्रमाण है। तैसैं ही इहां जानना सो इहां जघन्य स्थितितैं लगाय उत्कृष्ट स्थितिपर्यंत जेते स्थितिके भेद तिनिका जो प्रमाण सोई स्थितिका प्रमाण जानना। याकौं नाना गुणहानि शलाकाका जो प्रमाण कहिए है ताका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सोई एक गुण हानि आयामका प्रमाण जानना। याकौं दूणा कीए जो प्रमाण होइ सोई दो गुण हानिका प्रमाण जानना। बहुरि नाना गुण हानिका प्रमाण स्थिति रचना विषै जो नाना गुण हानिका प्रमाण कह्या था ताके असंख्यातवे भाग जानना। सो विवक्षित मोहनीयकी स्थिति रचनाविषै नाना गुणहानि शलाकाका प्रमाण पल्यके अर्द्धच्छेदनिमैस्यौं पल्यकी वर्ग शलाकाका अर्द्धच्छेद घटाएं जो प्रमाण होइ तितना कह्या

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

था ताकौं असंख्यातका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सो इहां कषायाध्यवसाय रचना विषैं नाना गुणहानिका प्रमाण जानना। भावार्थ—

जैसें स्थितिरचनाविषैं कथन अंक संदृष्ट्यादिककरि कीया था तैसें इहां भी जानना। इहां जो स्थितिके भेदनिका प्रमाण सो तौ स्थितिका प्रमाण जानना। तहां जेता गुणहानि आयामका प्रमाण है तितने जघन्यस्यों लगाय जे स्थितिके भेद तिनविषैं प्रथम गुणहानि कहिए। तहां जघन्य स्थितिकौं कारण जो अध्यवसायनिका प्रमाण सो प्रथम निषेकका प्रमाण जानना। यामैं एक चय मिलाएं एक समय अधिक जघन्य स्थितिकौं कारण अध्यवसायनिका प्रमाण रूप दूसरा निषेक हो है सो प्रथम निषेककौं एक अधिक गुणहानि आयामका भाग दीएं जो प्रमाण होइ सोई चयका प्रमाण है। ऐसैं एक एक चय अधिक प्रथम गुणहानिका अंत निषेक पर्यंत जानना। बहुरि ताके ऊपरि तितने ही स्थितिके भेदनिविषैं दूसरी गुणहानि कहिए तहां निषेक चयादिकका प्रमाण प्रथम गुणहानितैं दूना जानना ऐसैं ही अंतकी गुणहानिपर्यंत कथन जानना ॥ ९५१ ॥ तहां जघन्य चयका महत्त्वपनाकौं दिखावैं हैं—

लोगाणमसंखपमा जहण्णउड्ढिम्मि तम्हि छट्ठाणा।
ठिदिबंधज्झवसाणट्ठाणाणं होंति सत्तण्हं ॥ ९५२ ॥

लोकानामसंख्यप्रमाणि जघन्यवृद्धौ तस्मिन् षट्स्थानानि।
स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानां भवंति सप्तानां ॥ ९५२ ॥

जी०प्र०--विनायुः सप्तमूलप्रकृतीनां स्थितिबंधाध्यवसायस्थानानां सर्वगुणहानिप्रचयेषु प्रथमो जघन्यवृद्धिः तत्रासंख्यातलोकमात्रषट्स्थानवारा भवंति ॥ ९५२ ॥ आयुःस्थितिबंधाध्यवसायेषु विशेषमाह—

स० चं०—आयु विना सात मूल प्रकृतिनिके जे स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान तिनिका सर्व गुणहानि संबंधी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जे चय तिनविषैं प्रथम जघन्य वृद्धि जो प्रथम गुणहानि संबंधी चयका प्रमाण तिसविषैं परिणामनिका अविभाग प्रतिच्छेदनिकी अपेक्षा असंख्यात लोकका जो प्रमाण तितनी वार अनंतभाग वृद्धि आदि षट् स्थान पतित वृद्धि पाइए है। ॥९५२॥ आयु कर्मके स्थिति बंधाध्यवसायनिविषैं विशेष है सो कहै हैं—

आउस्स जहण्णट्ठिदिबंधणजोग्गा असंखलोगमिदा।
आवलिअसंखभागेणुवरुवरिं हौंति गुणिदकमा ॥ ५३॥

आयुषः जघन्यस्थितिबंधनयोग्यानि असंख्यलोकामितानि।
आवल्यसंख्यभागेनोपर्युपरि भवंति गुणितक्रमाणि ॥ ९५३ ॥

जी० प्र०-आयुःकर्मणः सर्वजघन्यस्थितिबंधयोग्याध्यवसायस्थानान्यसंख्या तलोका भवंति। द्वितीयादिस्थितिविकल्पेष्वावल्यसंख्यातैकभागेन गुणितक्रमाणि भवंति। तत्रांकसंदृष्ट्या स्थितिः षोडश १६। असंख्यातलोको द्वाविंशतिः २२। आवल्यसंख्यातश्चतुष्कं ४। अनुकृष्टिपदमपि चतुष्कं। ४। संदृष्टिः—

△ ज। २२	२२। ४। १	२२। ४। २	२२। ४। ३	२२। ४। ४	२२। ४। ५	२२। ४। ६	२२। ४। ७
अनु ४	५	६	७	४ २२। ४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१
अनु ५	६	७	४ २२। ४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१
अनु ६	७	४ २२। ४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२।४-१ २२।४।५-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१
अनु ७	४ २२। ४-१	५ २२।४।२-१	६ २२।४।३-१	७ २२।४।४-१	४ २२। ४-१ २२।४।५-१	५ २२।४।२-१ २२।४।६-१	६ २२।४।३-१ २२।४।७-१

२२। ४। ८	२२। ४। ९	२२। ४। १०
२२। ४। ११	२२। ४। १२	२२। ४। १३
२२। ४। १४	२२। ४। १५ उ	

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्र चय ६ हीनद्रव्यं २२–६ । पदभक्ते १६ जघन्यस्थितिजघन्यानुकृष्टिखंडं स्यात् ४ । तत उत्कृष्टखंडपर्यंतमेकैकचयाधिकक्रमेण
४

दत्ते ५ । ६ । ७ । द्वाविंशतिरूपाणि परिसमाप्नुवंति । द्वितीयविकल्पे तत्प्रायोग्याणीमानि २२ । ४ । अत्रैकभागं गृहीत्वा २२ । १ । विभज्य पंचादितो दत्वा ५ । ६ । ७ । अवशिष्टे चतुष्कं बहुभागस्य २२ । ४–१ । उपरि दत्ते उत्कृष्टखंडं स्यात् । ४
२२ । ४–१

तृतीयविकल्पे २२ । ४ । ४ । एकभागं गृहीत्वा २२ । ४ । १ । शेषं २२ । ४ । ४--१ । अंते दत्त्वापनीतभागे २२ । ४ । १ अप्येकभागमुद्धृत्य २२ । १ । शेष २२ । ४--१ । मुपांते दत्त्वोद्धृतैकभागं २२ । १ । भागद्विभज्य ४ । ५ । ६ । ७ । षट्सप्तांकौ क्रमेणादितो दत्वा चतुष्पंचांकौ ४ । ५ । उपांत्यांत्ययोरुपरि दद्यात् । ४
२२ । ४--१   ५
२२ । ४ । ४--१

चतुर्थविकल्पे २२ । ४ । ४ । ४ । एकभागमुद्धृत्य २२ । ४ । ४ । १ । शेष २२ । ४ । ४ । ४--१ । मंते दत्त्वोद्धृतैकभागे २२ । ४ । ४ । १ प्येकभागमुद्धृत्य २२ । ४ । १ शेषं २२ । ४ । ४ --१ । उपांते दत्त्वोद्धृतैकभागे २२ । ४ । १ । प्येकभागं गृहीत्वा २२ । १ शेषं २२ । ४--१ द्वितीयखंडे दत्त्वैकभागं पूर्ववद्विभज्य ४ । ५ । ६ । ७ । सप्तांक ७ मादौ दत्वा चतुष्पंचषडंकान् द्वितीयतृतीयचरमाणामुपरि दद्यात्

७   ४ / २२।४-१ । ५ / २२।४।४--१ । ६ / २२।४ । ४ । ४-१ एवं पंचमविकल्पे ४ / २२ । ४-१ । ५ / २२ । ४ । ४-१ । ६ / २२ । ४ । ४ । ४-१ । ७ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४–१

षष्ठविकल्पे ५ / २२ । ४ । ४-१   ६ / २२ । ४ । ४ । ४-१   ७ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४-१   ४ / २२ । ४-१ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४-१

सप्तमविकल्पे ६ / २२ । ४ । ४ । ४-१   ७ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४-१ । ४ / २२ । ४-१ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४-१   ५ / २२–४ । ४-१ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४-१

अष्टमविकल्पे ७ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४-१ । ४ / २२ । ४-१ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४-१ । ५ / २२ । ४ । ४-१ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४-१ । ६ / २२ । ४ । ४ । ४-१ / २२ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४ । ४-१

एवं गत्वा द्विचरमचरमविकल्पयोः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

	७	४	५	६
अंतानुकृष्टिः	२२ । ४ । ४-१	२२ । ४--१	२२ । ४ । ४-१	२२ । ४ । ४ । ४-१
	२२ । ४ । ८-१	२२ । ४ । ५-१	२२ । ४ । ६-१	२२ । ४ । ७-१
	२२ । ४ । १२-१	२२ । ४ । ९-१	२२ । ४ । १०-१	२२ । ४ । ११-१
		२२ । ४ । १३-१	२२ । ४ । १४-१	२२ । ४ । १५-१

	६	७	४	५
उपांतानुकृष्टिः	२२ । ४ । ३-१	२२ । ४ । ४-१	२२ । ४-१	२२ । ४ । ४-१
	२२ । ४ । ७-१	२२ । ४ । ८-१	२२ । ४ । ५-१	२२ । ४ । ६-१
	२२ । ४ । ११-१	२२ । ४ । १२-१	२२ । ४ । ९-१	२२ । ४ । १०-१
			२२ । ४ । १३-१	२२ । ४ । १४-१

आयुषः स्थितिबंधाध्यवसाया उक्ताः शेषकर्मणामुच्यंते--तत्र मोहनीयस्य निरन्तरस्थितिविकल्परचनेयं——

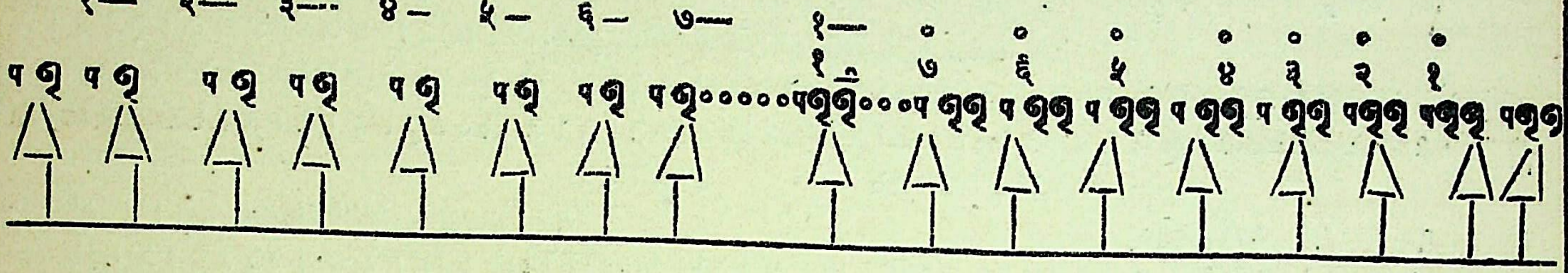

अस्यां नानागुणहानिशलाकाभिर्भक्तायां गुणहान्यायामः प gृ gृ छे व छे ३ अयं च द्विगुणितो दोगुणहानिः प gृ gृ । २ । नानागुणहानि-छे-व छे ४

अत्र आदौ प gृ अंते प gृ gृ सुद्धे प gृ gृ वड्ढिहिदे--- प gृ । gृ gृ रूवसंजुदे ठाणा प gृ । gृ gृ अधिकोयं पाठः ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

शलाकामात्रद्विकसंवर्गेऽन्योन्याभ्यस्तः प / a स्थितिबन्धाध्यवसायस्थानानि द्रव्यं ≡ a प प प / a a a रूपोनान्योन्याभ्यस्तेन द्रव्ये भक्तेऽधिकसंकल-

नविवक्षया प्रथमगुणहानिद्रव्यं ≡ a प प प / १ _ / अ a a a द्वितीयादिगुणहानिषु द्विगुणद्विगुणं भूत्वा चरमायामेतावत् ≡ a प प प अ / १ _ / अ a a a २ तत्र प्रथम-

गुणहानिद्रव्ये ≡ a प प प / १ _ / अ a a a अद्धाखेण खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि ≡ a प प प / १ _ / अ a a a गु तं रूऊणद्धाण १ _ / ८ अद्धेण १ _ / ८ / २ ऊणेण

णिसेयभागहारेण १ — / गु ३ / २ अवहरिदे पचयो ≡ a प प प / १ _ / अ a a a १ — / गु गु ३ / २ अयमधिक ≡ a प प प / १ _ / अ a a a संकलनविवक्षया रूपाधिकगुण-

हान्या गुणितः प्रथमनिषेकः ≡ a प प प / १ _ / अ a a a गु गु १ — / गु / ३ / २ द्वितीयादिनिषेका एकैकचयाधिका भूत्वा चरमनिषेको रूपोनगुणहानिमात्रचयाधि-

को भवति— ≡ a प प प गु २ / १ _ a a a १ — / अ गु गु गु ३ / २ एवं गुणहानिं गुणहानिं प्रति द्विगुणद्विगुणचयाभ्यां रचनां कृत्वा चरमगुणहानौ द्रव्ये

≡ a प प प अ / १ _ a a a २ / अ अद्धाखेण खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि ≡ a प प प अ / १ _ a a a २ गु / अ तं रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयहारेणवहरिदे पचयो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

≡ a प प प अ / १ ̲ a a a १— / अ गु गु ३ २ / २ अयं रूपाधिकगुणहान्या गुणितः प्रथमनिषेकः ≡ a प प प अ गु १— / १ ̲ a a a २ १— / अ गु गु ३ / २ द्वितीया-

दिनिषेका एकैकचयाधिका भूत्वा चरमनिषेको रूपोनगुणहानिमात्रचया ≡ a प प प अ गु १ ̲ / १ ̲ a a a १— / अ गु गु ३ २ / २ धिको भवति ≡ a प प प अ गु २ / १ ̲ a a a १— / अ गु गु ३ २ / २

समुच्चयरचना।

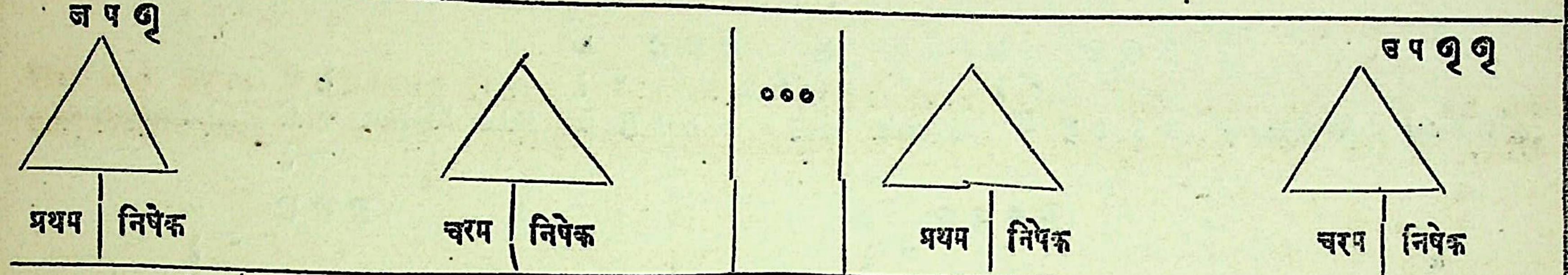

≡ a प प प गु १— / १ ̲ १— / अ a a a गु गु ३ / २	प्रथम=गुण ० ० ० ०	≡ a प प प गु २ / १ ̲ १— / अ a a a गु गु ३ / २	० ० ०	≡ a प प प अ गु १— / १ ̲ १— / अ a a a २ गु गु ३ / २	चरमगु= ० ० ०	≡ a प प प अ गु २ / १ ̲ १— / अ a a a २ गु गु ३ / २

अंकसंदृष्टौ रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं, अधिकसंकलनविवक्षया प्रथमगुणहानिद्रव्यं ६३०० उपरि द्विगुणं द्विगुणं भूत्वा चरमगु- / ६३

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

गुणहानावन्योन्याभ्यस्तार्धगुणितं स्यात् १०० । १ अत्र प्रथमगुणहानिद्रव्यं १०० अद्धाणेण खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि १००/८ तं
१०० । २
१०० । ४
१०० । ८
१०० । १६
१०० । ३२

रूऊणद्धाणद्धेण ऊणेण णिसेयहारेण अवहरिदे पचयं १०० / ८ । ८ । ३/२ (१—) तं रूवाहियगुणहाणिणा गुणिदे आदिणिसेयो १०० । ८ / ८ । ८ । ३/२ (१—) अपवर्तितो

रूपाधिकगुणहानिमात्रचयः स्यात् ८ (१—) द्वितीयादिनिषेकः एकैकचयाधिको भूत्वा चरमो दोगुणहानिमात्रचयो भवति ८ । ४ चरमगुणहानौ द्रव्यं ३२०० गुणहान्या भक्तं मध्यमधनं ३२००/८ तदेव रूपोनगुणहान्यर्धोनदोगुणहान्या भक्तं प्रचयः ३२०० / ८ । ८ । ३/२ (१—) स एव रूपाधिकगुणहानिना गुणितः प्रथमनिषेकः— ३२०० । ८ / ८ । ८ । ३/२ (१—) अपवर्तितः ३२ । ८ । (१—) ततो द्वितीयादिनिषेकः एकैकचयाधिको भूत्वा चरमो दोगुणहानिमात्रचयो भवति ३२ । ८ । २ संदृष्टिः—

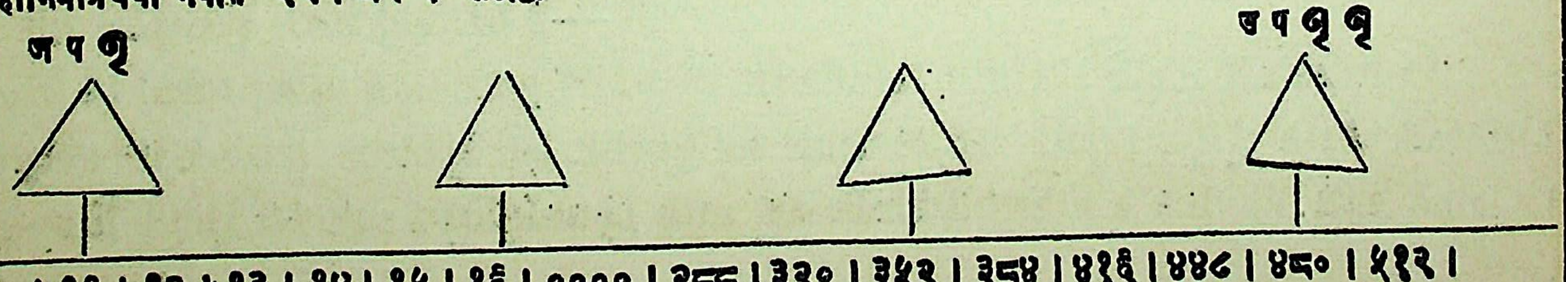

९ । १० । ११ । १२ । १३ । १४ । १५ । १६ । ०००० । २८८ । ३२० । ३५२ । ३८४ । ४१६ । ४४८ । ४८० । ५१२ ।

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri
Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तेषामनुकृष्टिविधानमाह—

स०चं—आयु कर्मकी सर्व जघन्य स्थितिबंधकौं योग्य ऐसे अध्यवसाय स्थान ते असंख्यात लोक प्रमाण हैं। याकौं आवलीका असंख्यातवां भागकरि गुणैं जघन्यतैं एक समय अधिक दूसरी स्थितिके योग्य अध्यवसाय स्थान हैं। ऐसैं ही उत्कृष्ट स्थिति पर्यंत क्रमतैं आवलीका असंख्यातवां भाग करि गुणित अध्यवसाय स्थान जानने। तहां अंक संदृष्टिकरि कथन दिखाइए हैं—

आयु कर्मकी स्थितिके जेते भेद संख्यात पल्य प्रमाण हैं ताकी सहनानी सोलह १६। बहुरि जघन्य स्थितिकौं योग्य अध्यवसाय स्थान असंख्यात लोक प्रमाण ताकी सहनानी बाईस २२। द्वितीयादि स्थितिविषै गुणकार आवलीका असंख्यातवां भाग ताकी सहनानी च्यारि। बहुरि नाना जीव अपेक्षा नीचली स्थितिके बंधकौं कारण अध्यवसाय स्थान अर ऊपरली स्थितिके बंधकौं कारण अध्यवसाय स्थान तिनविषै समानता भी पाइए है तातैं इहां अनुकृष्टिका विधान संभवै है। जातैं ऊपरि नीचेविषै समानताका नाम ही अनुकृष्टि है सो अनुकृष्टिके गच्छका प्रमाण अंकसंदृष्टि करि च्यारि जानना सो स्थितिकी रचना तो ऊपरि ऊपरि जाननी अर एक एक स्थिति रचनाके बरोबरि अनुकृष्टि रचना जाननी तहां जघन्य स्थितिकी अनुकृष्टि विषैं चयका प्रमाण एक सर्व चयका जोड रूप चयधन छह सो प्रथम स्थिति विषै द्रव्य बाईस तामैं घटाएं सोलह रहे ताकौं अनुकृष्टि गच्छ च्यारिका भाग दीए च्यारि पाए सो जघन्य स्थिति विषैं जघन्य अनुकृष्टिका खंड जानना। तातैं उत्कृष्ट खंड पर्यंत एक एक चय अधिक जानना। सो दूसरा तीसरा चौथा खंडका प्रमाण पांच छह सात जानना ऐसैं चारों खंड जोड़ैं बाईस हो है। बहुरि दूसरा स्थिति भेदविषै द्रव्य बाईस सो चौगुणा अध्यवसाय है सो अठ्यासी हूवा तिनविषैं एक भाग एक गुणा बाईसकौं ग्रहिकरि प्रथमादि अनुकृष्टिका खंडविषैं क्रमतैं पांच छह सात देने अवशेष च्यारि रहे सो अर बहुभागका तिगुणा बाईस रहे सो अंतका चौथा उत्कृष्ट खंडविषैं देनेसे अंतका खंडविषैं सत्तरि हूवा सर्वमिलि अठ्यासी हूवा। बहुरि तीसरा स्थिति भेदविषैं बाईसका दोयवार चौगुणा अध्यवसाय है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सो तीनसै बावन हूवा तहां एकभागका चौगुणा बाईस जुदा ग्रहि अवशेष चौगुणा बाईसतैं तिगुणा जो दोयसै चौसठि सो अंतका चौथा खंडविषैं देना। बहुरि जुदा ग्रह्या जो चौगुणा बाईस तीहि विषैं एक भागका एकगुणा बाईस जुदा ग्रहि अवशेष तिगुणा बाईसका छ्यासठि रह्या सो उपांत जो तीसरा खंड तीहिं विषैं जानना। बहुरि एक गुणा बाईस रह्या तिस विषैं पहला दूसरा खंड विषैं तो छह अर सात देना अर तीसरा चौथा खंडविषै पूर्वैं कह्या था तिनविषै च्यारि अर पांच मिल्यावने ऐसैं करि प्रथम खंड विषै छह दूसरा खंड विषै सात तीसरा खंड विषैं सत्तरि चौथा खंडविषैं दोयसै गुणहत्तरि ६। ७। ७०। २६९। सबका जोड दीए तीनसै बावन हुवा। बहुरि चौथा स्थिति भेदविषैं बाईसकौं तीनबार चौगुणा करिए इतने अध्यवसाय हैं। सो चौदहसै आठ हुवा। तहां एक भागका बाईसका दोयबार चौगुणा जुदा ग्रहिकरि अवशेष बाईसका दोयबार चौगुणाकौं तिगुणा करिए ताके एक हजार छप्पन भए सो अन्तका चौथा खंड विषैं देने। बहुरि बाईसका दोयबार चौगुणा जुदा ग्रह्या था तिनविषैं एक भागका बाईसतैं चौगुणा राखि अवशेष चौगुणा बाईसका तिगुणा ताका दोयसै चौसठि हुवा सो उपांत तीसरा खंडविषैं देना। बहुरि बाईसतैं चौगुणा जुदा राख्या था तामैं एक भागका इकगुणा बाईस जुदा राखि अवशेष तिगुणा बाईसका छ्यासठि हुवा सो दूसरा खंड विषैं देना। बहुरि इकगुणा बाईस जुदा राख्या तिनविषैं सात तौ प्रथम खंडविषैं देने अर च्यारि पांच छह दूसरा तीसरा चौथा खंडका प्रमाण विषैं मिलावने ऐसैं करि प्रथम खंड विषैं सात दूसरा विषैं सत्तरि तीसराविषैं दोयसै गुणहत्तरि चौथा विषैं एक हजार बासठि ७। ७०। २६९। १०६२। सबका जोड दीएं चौदहसै आठ हुवा ऐसैं ही क्रमतैं पांचवां छठवां सातवां आठवां इत्यादि उपांतका वा अन्तका स्थितिभेदविषैं अनुकृष्टि रचना जाननी। सर्वत्र जो नीचला स्थिति भेदका दूसरा तीसरा चौथा अनुकृष्टि खंडविषैं होइ सो ऊपरला स्थिति भेदका पहिला दूसरा तीसरा अनुकृष्टि खंडविषै लिखने बहुरि तिस ऊपरला स्थिति भेदका सर्व द्रव्यमैस्यौं तीनों खंडनिका प्रमाण जोडि घटाएं अवशेष रहे सो चौथा खंड विषैं प्रमाण लिखना। ऐसैं नीचली स्थितिके ऊपरली स्थितिके अध्यवसायनिकी समानता पाइए है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कोई जीवके जितने अध्यवसायनिकरि नीचली स्थिति बंधै है तितने ही परिणामनिकरि कोई जीवके ऊपरली भी स्थिति बंधै है। ऐसैं समानता जानि अनुकृष्टि रचना कही।

नीचली स्थितिका जघन्य खंड ऊपरली स्थितिका खंडनिस्यों समान नाहीं। ऊपरली स्थितिका उत्कृष्ट खंड नीचली स्थितिका खंडनिस्यों समान नाहीं ऐसैं जानना ऐसैं करि आयुके स्थिति बंधाध्यवसाय कहे। अवशेष कर्मनिके काहिए हैं—

तहां मोहनीयके जघन्यस्थिति संख्यात पल्यप्रमाण तीहिंस्यों लगाय एक एक समय बंध्या तीहिं जघन्य स्थितिस्यों संख्यातगुणा उत्कृष्ट स्थितिपर्यंत जे स्थितिके भेद होंहि तहां स्थिति रचना विषैं ऐसा 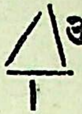 आकार जानना।

नीचैं जो ऊभी लीक करी ते तौ आबाधा कालके समय जानने। तहां ऊपरि आदिके समयतैं लगाय अन्त पर्यंत घटता २ निषेक है। तातैं नीचैंस्यों चौरा ऊपरिसे संकोचरूप आकार जानना। सो ते स्थितिके भेद जितने होइ हैं सो इहां मोहनीयका स्थिति बंधाध्यवसाय रचना विषै स्थितिका प्रमाण जानना। याकौं पल्यकी वर्गशलाका अर्द्धच्छेद प्रमाण करि हीन ऐसा पल्यका अर्द्धच्छेद प्रमाणका असंख्यातवां भाग प्रमाण जो नाना गुणहानि शलाका ताका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सो गुणहानि आयाम जानना। याकौं दूणा कीए दो गुणहानिका प्रमाण होइ। बहुरि नाना गुणहानि शलाका प्रमाण दोयका अंक माडि परस्पर गुणें जो प्रमाण होइ सो अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण जानना सो पल्यका असंख्यातवां भाग प्रमाण हो है। बहुरि स्थिति बंधाध्यवसायस्थान असंख्यात लोककौं तीनबार पल्यका असंख्यातवां भाग करि गुणें जो प्रमाण होइ तितने हैं सो इहां द्रव्यका प्रमाण जानना। इस द्रव्यकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सो प्रथम गुण हानिका प्रमाण है। पूर्वैं स्थिति रचना विषैं अनुक्रमतैं निषेक घाटि प्रमाण लीएं थे तातैं थोरा प्रमाण अंतकी गुण हानिके द्रव्यका कह्या था इहां अनुक्रमतैं अधिक है तातैं थोरा प्रमाण प्रथम गुण हानि द्रव्यका कह्या। इस प्रथम गुणहानितैं द्वितीयादि गुणहानि विषै द्रव्य दूणा दूणा अंतकी गुणहानि पर्यंत जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तहां प्रथम गुणहानिका द्रव्यका जो प्रमाण ताकौं अद्धाणेण खंडिदे मज्झिमधणमागच्छदि अद्धाण जो गुणहानि आयामका प्रमाण रूप गच्छ ताका भाग दीए मध्यम धनका प्रमाण आवै है। गच्छके वीचिके निषेकका जो प्रमाण ताकौं मध्यम धन कहिए। जो गच्छ का प्रमाण सम संख्या होइ तहां वीचिके दोय निषेकनिका आधा प्रमाण सो मध्यम धन जानना। बहुरि 'तं रूऊणद्धाण अद्धेण ऊणेण णिसेयभागहारेण अवहरिदे पचओ तिस मध्यम धनकौं एक घाटि गुणहानि आयामका प्रमाणका आधा निषेक भागहार जो दोगुणहानि सो घटाए जो प्रमाण रहै ताका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सोई चयका प्रमाण जानना। बहुरि इहां निषेकनिका प्रमाण अधिक अधिक है तातैं तिस चय प्रमाणकौं एक अधिक गुणहानि आयामका प्रमाण करि गुणें जो प्रमाण होइ सोई प्रथम निषेक जानना। यामैं एक एक चय क्रमतैं मिलाएं द्वितीयादि निषेकनिका प्रमाण होइ करि एक घाटि गुणहानि प्रमाण चय मिलें अंतका निषेक हो है। बहुरि प्रथम गुणहानि गुणहानि प्रति द्रव्य चय निषेकनिका प्रमाण दूणा दूणा जानना असैं रचना करि अंतकी गुणहानिविषैं प्रथम गुणहानिके द्रव्यकौं अन्योन्याभ्यस्तराशिका आधा प्रमाणकरि गुणें द्रव्यका प्रमाण होइ। याकौं गुणहानि आयाम रूप गच्छ का भाग दीएं मध्यम धन होइ तिस मध्यम धनकौं एक घाटि गच्छ का आधाकरि हीन दो गुणहानिका भाग दीएं चयका प्रमाण होइ। याकौं एक अधिक गुणहानि आयामकरि गुणें प्रथम निषेक होइ। द्वितीयादि निषेकनिविषै यातैं क्रमतैं एक एक चय अधिक होइ अंत निषेक एक घाटि गुण हानि प्रमाण चय मिलैं हो है असैं स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान का बटवारा-स्थिति के भेदनिविषैं कह्या। अब इस ही कथनकौं अंक सहनानी करि दिखाइए है—

सर्व स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान तरेसठिसै याकौं 'रूऊणण्णोण्णब्भत्थवहिददव्वं, एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशि तरेसठि का भाग दीएं सौ पाया सौ प्रथम गुणहानि का द्रव्य जानना। याकौं गच्छ का भाग दीएं चौथा पांचवां मिल्या हुवा निषेकनिका आधा प्रमाण साढा बारा मध्य धन जानना। याकौं एक घाटि गच्छ सात ताका आधा साढा तीन सौ दो गुणहानि सोलामें घटाएं रहे साढा बारा ताका भाग दीएं एक पाया सो चयका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रमाण जानना। याकौं एक अधिक गुणहानिका प्रमाण नव ताकरि गुणैं नव पाया सो प्रथम निषेक जानना। द्वितीयादि निषेकनिविषैं एक एक चय अधिक होइ। एक घाटि गुणहानिका प्रमाण सात सो इतने चय मिलें सोला भए सो अंत निषेक जानना। ऐसैं द्वितीयादि गुण हानि विषैं द्रव्य चय निषेक दूणा दूणा होइ। अंत गुण हानि विषैं प्रथम गुण हानिका द्रव्य सौकौं अन्योन्याभ्यस्त राशिका आधा बत्तीस करि गुणें बत्तीससै तौ द्रव्य जानना। याकौं गच्छ आठका भाग दीएं मध्य धन च्यारि सै। याकौं एक घाटि गुण हानिका आधा करि हीन दो गुण हानि का प्रमाण साडा बारा ताका भाग दीएं बत्तीस पाया सो चय जानना। याकौं एक अधिक गुण हानिका प्रमाण नव करि गुणें दोय सै अठ्यासी हुवा सो प्रथम निषेक जानना। द्वितीयादि निषेकनिविषैं एक एक चय मिलि एक घाटि गुण हानि प्रमाण सात चय मिलें पांचसै बारा हुवा सो अंतका निषेक जानना। ऐसैं अंक सहनानी करि कथन दिखाया। इहां भी प्रथम गुण हानिके प्रथम निषेक अध्यवसाय स्थान जघन्य स्थितिकौं कारण जानने। द्वितीय निषेक प्रमाण ते एक समय अधिक स्थितिकौं कारण जानने। ऐसैं ही अंत गुण हानिका अंत निषेक प्रमाण स्थिति बंधाध्यवसाय स्थान उत्कृष्ट स्थितिकौं कारण जानने॥ ९५३॥

बहुरि इहां एक एक स्थिति भेद संबंधी अध्यवसायनिविषैं नाना जीवनिकी अपेक्षा खंड पाइए है। वा कोई जीवके जितने अध्यवसायनितैं नीचली स्थिति बंधै है कोई कैं तितिनेहीतैं अधिक ऊपरली स्थिति बंधै है सो ऐसैं उपरि नीचैं समानता जानि अनुकृष्टि विधान कहिए है —

पल्लासंखेज्जदिमा अनुकट्ठी तत्तियाणि खंडाणि।
अहियकमाणि तिरिच्छे चरिमं खंडं च अहियं तु॥९५४॥

पल्यासंख्येयिमा अनुकृष्टिः तावंति खंडानि।
अधिकक्रमाणि तिरश्चि चरमं खंडं च अधिकं तु॥ ९५४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—अनुकृष्टिपदं पल्यासंख्यातैकभागः प/a स्थितिबंधाध्यवसायगुणहान्यायामस्य प १— ७ १ / छे—व—छे a । ७ १ संख्यातैकभागे प । ७ १— । ७ १ / छे--व--छे७ a अपवर्तिते तत्सिद्धेः । अनुकृष्टिखंडानि तावंति तिर्यक् चयाधिकक्रमाणि । तथापि तज्जघन्यात्तदुत्कृष्टविशेषाधिकमेव न द्विगुणादि ॥ ९५४ ॥ तद्विशेषप्रमाणं ज्ञापयति—

स० चं०—स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननिविषैं जो गुणहानि आयामका प्रमाण कह्या ताकौं संख्यातका भाग दीएं सिद्ध भया जो पल्यका असंख्यातवां भाग तीहि प्रमाण अनुकृष्टि रचना विषैं गच्छका प्रमाण जानना। तितने ही अनुकृष्टिके खंड हैं। ते खंड विवक्षित भेद रचनाके आगे तिर्यक् बरोबरी रचने ते प्रथम खंडतैं लगाय क्रमतैं एक एक अनुकृष्टिका चयकरि अधिक जानने। तथापि जघन्य प्रथम खंडतैं उत्कृष्ट अंतका खंड अधिक प्रमाण लिए है दूणा तिगुणा इत्यादि नही है॥ ९५४॥ तिस विशेष प्रमाणकौं जनावे हैं—

लोगाणमसंखमिदा अहियपमाणा हवंति पत्तेयं ।
समुदायेणवि तच्चिय ण हि अणुकिट्ठिम्मि गुणहाणी ॥९५५॥

लोकानामसंख्यमितानि अधिकप्रमाणानि भवंति प्रत्येकं ।
समुदायेनापि तावन्नहि अनुकृष्टौ गुणहानिः ॥ ९५५ ॥

जी० प्र०—अनुकृष्टिप्रचयस्य गुणहानिं गुणहानिं प्रति द्विगुणत्वेऽपि तत्प्रमाणान्यालापसामान्येन प्रत्येकमसंख्यातलोका एव भवंति । तत्तद्गुणहान्यूर्ध्वप्रचये तदालापेऽनुकृष्टिपदेन भक्ते तत्तत्प्रमाणत्वप्रसिद्धेः । तेन तेनाधिकखंडान्यपि तदालापानि । असंख्यातलोकानामसंख्यातलोकविकल्पत्वात् । न चानुकृष्टिपदे गुणहानिरस्ति सर्वेषामुत्कृष्टखंडानां रूपोनपदमात्रचयैरेवाधिक्यात् । एवमनुकृष्टेः पदचयौ ज्ञापयित्वा तत्खंडेषु स्थितिबंधाध्यवसाया उच्यंते । तद्रचितसंदृष्टिरियं— ११७५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ख गुणहानिचरम १६ △ |	≡ a प प प गु २ १ _ १— अ a a a गु गु ३ २	१ _ ≡ a प प प गु २—१ १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	१— १ _ ≡ a प प प गु २—प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	२ — १ _ ≡ a प प प गु २—प १ _ _ a २ अ a a a गु गु ३ प २ a
गुणहानिद्विचरम १५ △ |	१ _ ≡ a प प प गु २ १ _ १— अ a a a गु गु ३ २	१ _ १ _ ≡ a प प प गु २— प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	१ _ ≡ a प प प गु २-प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	१ — १ _ ≡ a प प प गु २—प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a
० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०	० ० ०
गुणहानिद्वितीय स्थिति १० △ |	२— ≡ a प प प गु १ _ १— अ a a a गु गु ३ २	२— १ _ ≡ a प प प गु प १— १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	३— १ _ ≡ a प प प गु प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	४— १ _ ≡ a प प प गु प १— १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a
गुणहानि प्रथम जघन्यस्थिति ९ △ |	१— ≡ a प प प गु १ _ १— अ a a a गु गु ३ २	१— १ _ ≡ a प प प गु प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	२— १ _ ≡ a प प प गु प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a	३— १ _ ≡ a प प प गु प १ _ १— a २ अ a a a गु गु ३ प २ a
	मूलधनं			

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

३— १ ⌒ ≡ a प प प गु २-प १ ⌒ १— a २ अ aaa गु गु ३ २	००००	१ ⌒ १ ⌒ ≡ a प प प गु २-पचपप १ ⌒ १—a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१ ⌒ ≡ a प प प गु २- प प १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१ ⌒ ≡ a प प प प प १ ⌒ १—a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a
२— १ ⌒ ≡ a प प प गु २-प १ ⌒ १— a २ अ aaa गु गु ३ प २ a	००००	१ ⌒ १ ⌒ १ ⌒ ≡ a प प प गु २- पचपप १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१ ⌒ १ ⌒ ≡ a प प प गु २-प प १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१ ⌒ ≡ a प प प प प १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a
० ० ०	००००	० ० ०	० ० ०	० ० ०
५— १ ⌒ ≡ a प प प गु— प १ ⌒ १— a २ अ aaa गु गु ३ प २ a	००००	२— १ ⌒ १ ⌒ ≡ a प प प गु पचपप १— १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	२— १ ⌒ ≡ a प प प गु— प प १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१ ⌒ ≡ a प प प प प १— १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a
४— १ ⌒ ≡ a प प प गु— प १ ⌒ १— a २ अ aaa गु गु ३ प २ a	००००	१— १ ⌒ १ ⌒ ≡ a प प प गु पचपप १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१— १ ⌒ ≡ a प प प गु— प प १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a	१ ⌒ ≡ a प प प गु प प १ ⌒ १— a २ a अ aaa गु गु ३ प २ a
		चरमखंडानि	आदिधनानि	उत्तरधनानि

१५१

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यकषायपरिणामाः ≡ ३ प प प गु द्रव्यं प्रथमगुणहानिचयः ≡ ३ प प प अनुकृष्टिचयः
१— १⌒ १— १⌒ १—
अ ३ ३ ३ गु गु ३ अ ३ ३ ३ गु गु ३
२ २

≡ ३ प प प व्येकपदा प ५ प प्रचयः ≡ ३ प प प प गुणो गच्छ उत्तरधनं
१⌒ १— १⌒ १⌒ १⌒ १— ३ २
अ ३ ३ ३ गु गु ३ प ३ ३ २ अ ३ ३ ३ गु गु ३ प
२ ३ २ ३

≡ ३ प प प प प पल्यासंख्यातभाज्यभागहारापवर्तिते एवम् ≡ ३ प प प प
१⌒ १— ३ २ ३ १⌒ १⌒ १— ३ २
अ ३ ३ ३ गु गु ३ प अ ३ ३ ३ गु गु ३
२ ३ २

प्रथमगुणहानिजघन्यस्थितिप्रतिबद्धस्थितिबंधाध्यवसायेषु ≡ ३ प प प गु रूपोनानुकृष्टिपदार्धगुणितानुकृष्टिपदप्रमित-
१— १⌒ १—
अ ३ ३ ३ गु गु ३
२

विशेषानुद्धृत्य शेषे ≡ ३ प प प गु— प ऽनुकृष्टिपदेन भक्ते प्रथमगुणहानिजघन्यस्थितिप्रतिबद्धानुकृष्टिप्रथमखंडं स्यात्।
१— १⌒ १⌒ १— ३ २
अ ३ ३ ३ गु गु ३
२

≡ ३ प प प गु— प द्वितीयादिखंडमेकैकचयाधिकं भूत्वा चरमं रूपोनानुकृष्टिपदमात्रचयाधिकं भवति ≡ ३ प प प चय प
१— १⌒ १⌒ १— ३ २ १⌒ १— १⌒ ३
अ ३ ३ ३ गु गु ३ प अ ३ ३ ३ गु— प
२ ३ १— ३ २
गु गु ३ प
२ ३

एतेषु पुनः संकलितेषु पूर्वोक्तमेव जघन्यस्थितिबंधाध्यवसायप्रमाणमायाति। तद्यथा---

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पदहतमुखमादिधनं ≡ a प प प गु— प प ध्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं ≡ a प प प प प
१— १—
१ १— a २ a १ १— a २ a
अ a a a गु गु ३ प अ a a a गु गु ३ प
२ a १— २ a

तयोर्योगो मूलधनमपवर्तितमेतावत् ≡ a प प प गु एवं द्वितीयादिनिषेकाणामप्यनुकृष्टिखंडानि रचयित्वा प्रथमगुणहानिचरम-
१ १—
अ a a a गु गु ३
२

निषेके ≡ a प प प गु २ प्राग्वदानीतापवर्तितचयधनमिदं ≡ a प प प प उद्धृत्यानुकृष्टिपदेन भक्ते प्रथम खंडं स्यात्
१ १— १ १—a २
अ a a a गु गु ३ अ a a a गु गु ३
२ २

≡ a प प प गु २—प द्वितीयादिखंडमेकैकचया- ≡ a प प प प १—प पुनरिदं ≡ a प प प गु २—प प
१ १— a २ धिकंभूत्वा चरमं रूपोना- १ १— a गु a २ संकलितं १ १— a २ a
अ a a a गु गु ३ प नुकृष्टिपदमात्रचयाधिकं अ a a a गु गु ३ प पदहतमु- अ a a a गु गु ३ प
२ a भवति १ २ a खमादिधनं २ a

मुखमे ≡ a प प प रूपोन ≡ a प प प प योगः ≡ a प प प दलं
कचयः १ १— पदमा १ १— a १ १—
अ a a a गु गु ३ प त्रचयो अ a a a गु गु ३ प अ a a a गु गु ३ प प
२ a भूमिः २ a १ २ a a

≡ a प प प पदगु ≡ a प प प १— प तयोराद्युत्तरधनयोः भाज्यभागहारौ ≡ a प प प गु २
१ १— णितं १ a a a गु गु ३ प प a पल्यासंख्यातावपवर्त्य रूपोनानुकृष्टि- १ १—
अ a a a गु गु ३ प प चय अ। २ a २ a पदार्धे आदिधने प्रक्षिप्ते मूलधनं स्यात् अ a a a गु गु ३
२ a २ a धनं १— १— २

अंकसंदृष्टौ प्रथमगुणहानौ प्रथमनिषेके ८ चयधनेना १ । ३ । ४ पवर्तितेनो ३ ने ८—३ पदेन ४
४ । २ २ २

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भक्ते प्रथमखंडं भवेत् १— / ८।३ / ४।२ द्वितियादिखंडमेकैकचयाधिकं भवति। समुच्चयसंदृष्टिः—

१६	७ ९—३ ४।२	१— ७ ९—३ ४।२	२— ७ ९—३ ४।२	३— ७ ९—३ ४।२
०	०	०	०	०
०	०	०	०	०
११	२ ९—३ ४।२	३ ९—३ ४।२	४ ९—३ ४।२	५ ९—३ ४।२
१०	१ ९—३ ४।२	२ ९—३ ४—२	३ ९—३ ४।२	४ ९—३ ४।२
९	९—३ ४।२	१ ९—३ ४।२	२ ९—३ ४।२	३ ९—३ ४।२

२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथवा स्वेच्छासंदृष्टिकरणेऽधःप्रवृत्तकरणरचनामवतार्यानुकृष्टिरचना व्याख्यातव्या। तदंत्यतपरोक्षार्थप्रतिपत्तावस्था अप्युपायत्वप्रसिद्धेः। एवं द्वितीयादिगुणहानावप्यर्थाकसंदृष्टिभ्यामनुकृष्टिविधानं विधेयं ॥ ९५५ ॥

स०चं—अनुकृष्टिका चय गुणहानि गुणहानि प्रति दूणा दूणा है तथापि सामान्यपनै असंख्यात लोकमात्र ही कहिए है जातैं विवक्षित गुणहानिका ऊर्ध्व रचनाविषैं जो चयका प्रमाण ताकौं अनुकृष्टि गच्छका भाग दीएं अनुकृष्टिके चयका प्रमाण आवै है सो स्थूलताकरि असंख्यात लोक प्रमाण ही है। तहां प्रथम खंडतैं एक एक चयकरि अधिक द्वितीयादिक खंड हैं तथापि तिन सबनिका प्रमाण असंख्यात लोक प्रमाण ही कहिए जातैं असंख्यात लोकका भेद असंख्यात लोक प्रमाण पाइए है बहुरि अनुकृष्टिका गच्छविषैं गुणहानिकी रचना नाहीं है जातैं सर्व उत्कृष्ट खंडनिकैं जघन्य खंडतैं एक घाटि गुणहानिका गच्छ प्रमाण चयनिकी अधिकता पाइए है ऐसैं अनुकृष्टिका गच्छ अर चयका प्रमाण जनाय तिस अनुकृष्टिके खंडनिविषैं स्थिति बंधाध्यवसायनिका प्रमाण कहिए है—

जघन्य स्थितिबंधकौं योग्य कषाय परिणाम सो द्रव्य जानना बहुरि प्रथम गुणहानि विषैं जो चयका प्रमाण ताकौं अनुकृष्टि गच्छ पल्यका असंख्यातवां भाग प्रमाण ताका भाग दीएं अनुकृष्टि चयका प्रमाण भया। बहुरि व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं, एक घाटि अनुकृष्टि गच्छका आधाकौं अनुकृष्टि चयकरि गुणि अनुकृष्टि गच्छकरि गुणें जो प्रमाण होइ सो इहां चय धन जानना।

बहुरि प्रथम गुणहानि विषैं जघन्य स्थिति संबंधी स्थितिबंधाध्यवसायनिका जो प्रमाण तिन विषैं प्रथम धनका प्रमाण घटाएं अवशेष रहे ताकौं अनुकृष्टि गच्छका भाग दीएं जो प्रमाण आवै सो प्रथम गुणहानि विषैं जघन्य स्थिति संबंधी अनुकृष्टिका प्रथम खंड जानना। बहुरि द्वितीयादि खंड एक एक अनुकृष्टिका चयकरि अधिक होइ एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छप्रमाण चय जघन्य खंड विषैं अधिक भएं उत्कृष्ट अंत खंड हो है। तहां—पद-हतमुखमादिधनं पद जो अनुकृष्टिका गच्छ ताकरि मुख जो प्रथम खंड ताकौं गुणें आदि धन होइ। बहुरि 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तरधनं' एक घाटि गच्छका आधाकरि चयकौं गुणें चय धन होइ सो आदि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धन अर चय धन मिलाएं जघन्य स्थिति संबंधी अध्यवसायनिका प्रमाण रूप सर्वधन हो है। ऐसैं ही द्वितीयादि निषेकनिविषैं अनुकृष्टि रचना अनुक्रमतैं करि प्रथम गुणहानिका अंतका निषेकविषैं जो द्रव्य तीहि विषैं पूर्वोक्त चयधन घटाएं अवशेषकौं अनुकृष्टि गच्छका भाग दीएं प्रथम खंड होइ। बहुरि द्वितीयादिक खंड एक एक अनुकृष्टि चयकरि अधिक होइ अंतका खंड एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छ प्रमाण चयकरि अधिक हो है। बहुरि गच्छ करि प्रथम खंड गुणैं आदि धन होइ। बहुरि चयधनका प्रमाणके अर्थि 'मुहभूमी जोगदले पदगुणिदे पदधणं होदि, मुख तौ एक चय अर भूमि एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छप्रमाण चय इनकौं जोड़िये पीछे आधा करिये पीछैं एक घाटि अनुकृष्टिका गच्छप्रमाण गच्छकरि गुणिएं तब चयधनका प्रमाण होइ सो आदिधन अर चयधन मिलाएं प्रथम गुणहानिका अंतका निषेकविषैं प्रमाण होइ। ऐसैं प्रथम गुणहानि विषैं अनुकृष्टि रचना कही। अब इस अनुकृष्टिके कथनकौं अंक संदृष्टि करि दिखाइए है—

प्रथम गुणहानिविषैं प्रथम निषेक नव सो द्रव्य तामैं अनुकृष्टिका गच्छ च्यारि ताका भाग ऊर्ध्व चय एककौं दीएं अनुकृष्टि चतुर्थांश तहां 'व्येकपदार्धघ्नचयगुणो गच्छ उत्तर धनं, इस सूत्र करि चय धन ड्योढ ताकौं सर्व धन नवमैंस्यों घटाएं साढा सात याकौं अनुकृष्टि गच्छ च्यारिका भाग दीयें प्रथम खंड अष्टमांश घाटि दोय प्रमाण हुवा यामैं चतुर्थांश प्रमाण अनुकृष्टिका एक एक चय मिलाएं द्वितीयादि खंड होइ चार्‍यो खंडनिका जोड दीएं नव हो है। ऐसैं ही अंतका निषेक विषैं द्रव्य सोलह तामैं चय धन ड्योढ घटाएं साढा चौदह याकौं अनुकृष्टि गच्छ च्यारि का भाग दीएं अष्टमांश अधिक साढा तीन पाए सो प्रथम खंड अर यामैं चतुर्थांश मात्र एक एक चय अधिक भएं द्वितीयादि खंड चार्‍यो खंड जोडें सोलह होइ। इहां आधा चौथाई कह्या है सो अंक संदृष्टिकरि समझमें आनेवास्ते कह्या है। बहुरि महत्प्रमाण रूप अर्थ संदृष्टि विषै अध्यवसायनिविषैं आधा चौथाई है नाहीं। अथवा स्वेच्छा अंक संदृष्टि करिए तौ त्रिकरण चूलिका अधिकार विषैं अधः प्रवृत्तकरणकी रचना विषैं जैसे अंक संदृष्टि करी तैसैं करनी। तहां प्रथम गुणहानि विषैं सर्व अध्यवसाय तीन हजार बहत्तरि गुण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

हानि आयाम सोलह तहां जघन्य स्थिति संबंधी प्रथम निषेक एकसौ बासठि, निषेक निषेक प्रति चयप्रमाण च्यारि तहां प्रथम निषेक विषैं द्रव्य एकसौ बासठि तामैं चय धन छह घटाएं एकसौ छप्पन याकौं अनुकृष्टि गच्छ च्यारिका भाग दीएं गुणतालिस सो प्रथम खंड बहुरि द्वितीयादि खंडविषैं अनुकृष्टि चयका प्रमाण एक सो एक चय अधिक जानना। च्यारू खंडनिका जोड दिएं एकसौ बासठि होइ। ऐसैं ही द्वितीयादि निषेकनिकी रचना करि अंत निषेकविषैं द्रव्य दोयसै बाईस तामैं चय धन छह घटाएं दोयसै सोलह याकौं अनुकृष्टि गच्छ च्यारिका भाग दीएं चौवन सो प्रथमखंड वहुरि द्वितीयादि खंडविषैं एक एक चय अधिक जानना। चार्‌यो खंडनिका जोड दीएं दोयसै वाईस होइ। ऐसैं ही अंक संदृष्टिकरि पूर्वोक्त अर्थ जानना। अत्यंत परोक्ष अर्थ जाननेकौं यह भी उपाय है। बहुरि याहीप्रकार द्वितीयादिक गुणहानि विषैं भी अनुकृष्टिका विधान करना। प्रथम गुणहानिका अनुकृष्टि चय वा द्रव्य वा खंडनितैं द्वितीयादि गुणहानिविषैं अनुकृष्टि चयादिकका प्रमाण दूणा दूणा जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अंक संदृष्टि अपेक्षा स्थितिबंधाध्यवसाय रचना ।

जघन्यादि स्थिति बंधकी ऊर्ध्व रचना	प्रथमखंड	द्वितीय खंड	तृतीय खंड	चतुर्थ खंड
२२२	५४	५५	५६	५७
२१८	५३	५४	५५	५६
२१४	५२	५३	५४	५५
२१०	५१	५२	५३	५४
२०६	५०	५१	५२	५३
२०२	४९	५०	५१	५२
१९८	४८	४९	५०	५१
१९४	४७	४८	४९	५०
१९०	४६	४७	४८	४९
१८६	४५	४६	४७	४८
१८२	४४	४५	४६	४७
१७८	४३	४४	४५	४६
१७४	४२	४३	४४	४५
१७०	४१	४२	४३	४४
१६६	४०	४१	४२	४३
१६२	३९	४०	४१	४२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पढमं पढमं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरित्थं ।
हेट्ठिल्लुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ॥९५६ ॥

प्रथमं प्रथमं खंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं ।
अधस्तनोत्कृष्टादनंतगुणादुपरिमजघन्यं ॥ ९५६ ॥

जी० प्र०—एवंरचितप्रथमादिगुणहानिष्वनुकृष्टेः प्रथमं प्रथमं खंडमन्योन्यमपेक्ष्य संख्यया विसदृशं भवति । तिर्यगुपरि च तच्चरमखंडपर्यंतं तेषामेकैकचयाधिक्यात् । तथा शक्त्याऽपि स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टस्थानादुपरितनजघन्यस्थानास्याप्यनंतगुणत्वात् ॥ ९५६ ॥

स० चं०—याप्रकार अनुकृष्टि रचना रूप कीएं प्रथमादि गुणहानिविषैं अनुकृष्टि का पहला पहला खंड परस्पर अपेक्षाकरि विसदृश है संख्याकरि समान नाहीं है जातैं तिर्यग् रूप रचनाविषैं उपरि उपरि रचनारूप पहिला पहिला जो खंड सो अंत निषेकका पहला खंड पर्यंत एक एक चयकरि अधिक है तैसैंही शक्तिकरि भी अपने नीचले प्रथम खंडका उत्कृष्ट स्थानतैं भी ऊपरला प्रथम खंडका जघन्य स्थान भी अनंत गुणा है तातैं पहला पहला खंड परस्पर समान नाहीं है ॥ ९५६ ॥

विदियं विदियं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिऊण विसरित्थं ।
हेट्ठिल्लुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ॥९५७ ॥

द्वितीयं द्वितीयं खंडमन्योऽन्यमपेक्ष्य विसदृशं ।
अधस्तनोत्कृष्टादनंतगुणादुपरिमजघन्यं ॥ ९५७ ॥

जी० प्र०—गुणहानिप्रथमादिनिषेकाणां द्वितीयं द्वितीयं खंडं गुणहानिचरमनिषेकद्वितीयखंडपर्यंतं परस्परं निरंतरं चयाधिकमिति विसदृशं स्थानविकल्पैः शक्तिविशेषैश्चासदृशं स्वस्वाधस्तनोत्कृष्टादुपरितनजघन्यस्थानस्याप्यनंतगुणत्वात् ॥ ९५७ ॥ एवं रूपोनानुकृष्टिपदमात्राणि नीत्वा— ११८५

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०—गुणहानिनिविषैं प्रथमादि निषेकनिका दूसरा दूसरा खंड सो गुणहानिका अंतके निषेकका दूसरा खंड पर्यंत निरंतर एक एक चयकरि अधिक है तातैं समान नाही है। नीचले दूसरे खंडके उत्कृष्टतैं ऊपरला दूसरा खंडका जघन्य भी अनंत गुणा है। ऐसैं ही तीसरा तीसरा इत्यादि खंडनिकी असमानता जाननी ॥९५७॥ ऐसैं एक घाटि अनुकृष्टि प्रमाण खंडनिकी असमानता होइ कहा ? सो कहै हैं—

चरिमं चरिमं खंडं अण्णोण्णं पेक्खिउण विसरित्थं।
हेठ्ठिल्लुक्कस्सादोणंतगुणादुवरिमजहण्णं ॥९५८॥

चरमं चरमं खंडमन्योन्यमपेक्ष्य विसदृशं।
अधस्तनोत्कृष्टादनंतगुणादुपरिमजघन्यं ॥ ९५८ ॥

जी० प्र०—चरमं चरमं खंडं गुणहानिचरमनिषेकस्य चरमखंडपर्यंतं निरंतरं विशेषाधिकत्वात् संख्यया विसदृशं । शक्त्याप्यधस्तनोत्कृष्टस्थानादुपरितनजघन्यस्थानमप्यनंतगुणं ॥ ९५८ ॥ तत्र किं कारणमिति चेदाह—

स० चं०—गुणहानिका प्रथमादि निषेकनिका अंतका खंड अंतके निषेकनिका अंत खंड पर्यंत निरंतर एक एक चय अधिक है तातैं संख्याकरि समान नाहीं। बहुरि शक्ति करिकैं भी नीचला अंत खंडका उत्कृष्ट स्थानतैं भीं ऊपरला अंत खंडका जघन्य स्थान भी अनंत गुणा है॥ ९५८ ॥ तहां कारण कहा? सो कहै हैं—

हेट्ठिमखंडुक्कस्सं उव्वंकं होदि उवरिमजहण्णं।
अट्ठंकं होदि तदोणंतगुणं उवरिमजहण्णं ॥ ९५९ ॥

अधस्तनखंडोत्कृष्टमुर्वंको भवति उपरिमजघन्यं।
अष्टांको भवति ततोऽनंतगुणमुपरिमजघन्यम् ॥ ९५९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०—यतः कारणात्तिर्यगुपरि चाधस्तनाधस्तनखंडोत्कृष्टाध्यवसायस्थानमुर्वंकः अनंतभागवृद्ध्यात्मकं भवति । उपरितनोपरितन-खंडजघन्याध्यवसायस्थानमष्टांकः अनंतगुणवृद्ध्यात्मकं भवति ततः कारणात्तदधस्तनोत्कृष्टात्तदुपरितनजघन्यमनंतगुणं ॥९५९॥

स०चं०—जा कारणतैं तिर्यग् रूप रचना विषैं उपरि उपरि लिखे जे खंड तिनके अपने अपने नीचैं लिखे खंड तिनका उत्कृष्ट अध्यवसाय स्थान सो ऊर्वंक कहिए पूर्वस्थानतैं अनंत भाग वृद्धिकौं लीए है। बहुरि ऊपरि ऊपरिका खंडका जघन्य अध्यवसाय स्थान सो अष्टांक कहिए अनंत गुण वृद्धिकौं लीए है। ताकारणतैं नीचले खंडका उत्कृष्टतैं ऊपरले खंडका जघन्य अनंत गुणा कह्या ॥ ९५९ ॥

अवरुक्कस्सठिदीणं जहण्णमुक्कस्सयं च णिव्वग्गं ।
सेसा सव्वे खंडा सरिसा खलु होंति उड्ढेण ॥ ९६० ॥

अवरोत्कृष्टस्थितीनां जघन्यमुत्कृष्टकं च निर्वर्गं ।
शेषाः सर्वे खंडाः सदृशाः खलु भवंति ऊर्ध्वेन ॥ ९६० ॥

जी० प्र०— जघन्यस्थितेर्जघन्यखंडमुत्कृष्टस्थितेरुत्कृष्टखंडं च निर्वर्गं सर्वथा असदृशं । शेषसर्वखंडानि खलूर्ध्वरूपेण सदृशानि भवंति ।

स०चं०—जघन्य स्थितिकौं कारणभूत प्रथम निषेकका जघन्य पहिला खंड अर उत्कृष्ट स्थितिकौं कारण भूत अंतके निषेकका उत्कृष्ट अंतका खंड ए दोऊ तौ निर्वर्ग कहिए कोऊ खंडनिकरि सर्वथा समान नाहीं है बहुरि अवशेष सर्व खंड ऊर्ध्व रचना करि अन्य खंडनि के समान हैं ॥ ९६० ॥

अट्ठण्हंपि य एवं आउजहण्णाट्ठिदिस्स वरखंडं ।
जावय तावय खंडा अणुकट्टिपदे विसेसहिया ॥९६१॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तत्तो उवरिमखंडा सगसगउक्कस्सगोत्ति सेसाणं।
सव्वे ठिदियणखंडाऽसंखेज्जगुणक्कमा तिरिये ॥९६२॥ जुम्मं।

अष्टानामपि च एवमायुर्जघन्यस्थितेः वरखंडं।
यावत् तावत्खंडा अनुकृष्टिपदे विशेषाधिकाः ॥ ९६१ ॥
तत उपरिमखंडाः स्वकस्वकोत्कृष्टक इति शेषाणां।
सर्वे स्थितितनखंडा असंख्येयगुणक्रमास्तिरश्चि ॥ ९६२ ॥

जी० प्र०— अष्टानामपि कर्मणामेवमुक्तरचनाविशेषः सर्वोऽपि समानः । किन्त्वायुषोऽनुकृष्टिपदे खंडानि यावज्जघन्यस्थितिचरमखंडं तावदेव विशेषाधिकानि । ततस्तद्वरखंडादुपरितनस्थितिखंडानि स्वस्वोत्कृष्टखंडपर्यंतानि तथा शेषस्थितीनां स्वस्वजघन्यखंडात् स्वस्वोत्कृष्टखंड-पर्यंतानि च सर्वाणि तिर्यगसंख्यातगुणितक्रमाणि भवंति ॥ ९६१—९६२ ॥ अथानुभागबंधाध्यवसायान् जघन्यस्थितिप्रतिबद्धाध्यवसायेषु सर्वजघन्यस्याह—

स० चं०—आठौ ही कर्मनिका जैसैं कह्या तैसैं ही रचनाविशेष समान है। जैसैं मोहनीयका कह्या तैसैं ज्ञानावरणादिकका भी जानना। स्थित्यादिकका प्रमाण यथासंभव जानि लेना। बहुरि विशेष इतना जो आयुकर्मका अनुकृष्टि गच्छविषैं खंड हैं ते जघन्य स्थितिका अंतका खंड पर्यंत ही तौ चयकरि अधिक हैं। बहुरि ताके उत्कृष्ट खंडतैं उपरिस्थितिके खंड ते अपने अपने उत्कृष्ट खंड पर्यंत तथा अवशेष स्थितिनिका अपना अपना जघन्य खंडतैं अपना अपना उत्कृष्ट खंड पर्यंत सर्व बरोबरि रचना रूप असंख्यात गुणे हैं सो वर्णन करि आये हैं तिस करि इस कथनका अर्थ जानि लेना ॥ ९६१— ६२ ॥ आगैं अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थाननिका कथन करै हैं तहां जघन्य स्थितिसंबंधी अध्यवसायनिविषैं जघन्य संबंधी अनुभागाध्यवसाय स्थाननिकौं कहै हैं—

रसबंधज्झवसाणट्ठाणाणि असंखलोगमेत्ताणि।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवरट्ठिदिस्स अवरट्ठिदिपरिणामम्हि थोवाणि ॥ ९६३ ॥

रसबंधाध्यवसायस्थानानि असंख्यलोकमात्राणि ।
अवरस्थितेरवरास्थितिपरिणामे स्तोकानि ॥ ९६३ ॥

जी० प्र०– रसबंधाध्यवसायस्थानान्यसंख्यातलोकमात्राणि ≡ a ≡ a तत्र जघन्यस्थितिबंधप्रायोग्यपरिणामेषु जघन्यपरिणामे तेभ्योऽसंख्यातलोकगुणा ९ ≡ a न्यपि स्तोकानि । तद्यथा -द्र ≡ a ≡ a स्थि ९ । गु १/२ दो १/२ । २ । नाना २/aa अन्यो २/a (a a a । a)

द्रव्यं जघन्यस्थितिसंबंध्यनुभागबंधाध्यवसायमात्रेऽन्योन्याभ्यस्तेनावल्यसंख्येयभागेन रूपोनेन भक्ते प्रथमगुणहानिद्रव्यं द्वितीयादिगुणहानीनां द्विगुणं भवति ≡ a ≡ a अ (१ᴖ/अ ० ० ० २) तत्र प्रथमगुणहानिद्रव्ये गुणहान्यायामेनावल्यसंख्येयभागभक्तजघन्यस्थितिकारणकषायाध्यवसा- (≡ a ≡ a । १ / १ᴖ अ) यसंख्येन भक्ते मध्यमधनं ≡ a ≡ a १ (१ᴖ / अ । गु) इदं रूपोनगुणहान्यायामार्धोन गु (१ᴖ / २) निषेकहारेण गु (१— / ३ / २) भक्तं प्रचयः ≡ a ≡ a (१ᴖ १— / अ गु गु ३ / २)

अयं रूपाधिकगुणहान्या गुणित आदिनिषेकः स्यात् ≡ a ≡ a गु (१— / १ᴖ १— / अ गु गु ३ / २) इति ॥ ९६३ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स०चं०—अनुभागाध्यवसाय स्थान असंख्यात लोककौं असंख्यात लोक करि गुणिए ऐसे असंख्यात लोकप्रमाण हैं। तहां जघन्य स्थिति संबंधी स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननिविषैं जघन्य स्थिति बंध योग्य अध्यवसायनिके प्रमाणतैं असंख्यात लोक गुणे अनुभाग बंधाध्यवसाय स्थान हैं तथापि ते और स्थिति बंधाध्यवसाय संबंधी अनुभागाध्यवसायनितैं थोरे हैं सोई कहिए है—

जघन्य स्थितिसंबंधी स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननिकी रचना दिखाइए है– तहां जघन्य स्थिति संबंधी स्थिति बंधाध्यवसाय स्थानकनिका प्रमाणतैं असंख्यात लोक गुणे अनुभाग बंधाध्यवसायनिका प्रमाण है सो तौ इहां द्रव्यका प्रमाण जानना। बहुरि जघन्य स्थिति संबंधी स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननिका जो प्रमाण सो इहां स्थितिका प्रमाण जानना। बहुरि आवलीकौं दोय बार असंख्यातका भाग दीएं जो प्रमाण आवे सो नाना गुण हानि शलाकाका प्रमाण जानना। बहुरि स्थितिके प्रमाणकौं नाना गुणहानिका भाग दीएं जो प्रमाण आवे सो गुणहानि आयामका प्रमाण जानना। याकौं दूणा कीएं जो प्रमाण होइ सो दो गुणहानिका प्रमाण जानना। बहुरि आवलीके असंख्यातवे भाग अन्योन्याभ्यस्त राशिका प्रमाण जानना। तहां द्रव्यकौं एक घाटि अन्योन्याभ्यस्त राशिका भाग दीएं जो प्रमाण आवे सो प्रथम गुणहानि विषैं द्रव्यका प्रमाण है। यातैं दूणा दूणा द्वितीयादि गुणहानिविषैं द्रव्य जानना। तहां प्रथम गुणहानिका द्रव्यकौं गुणहानि आयामका भाग दीएं मध्यम धनका प्रमाण होइ याकौं एक घाटि गुणहानि आयामका आधाकरि हीन ऐसा दोगुणहानिके प्रमाणका भाग दीएं चय होइ। इस चयकौं एक अधिक गुणहानि आयाम करि गुणें प्रथम निषेक होइ ॥ ९६३ ॥

तत्तो कमेण वड्ढदि पडिभागेण य असंखलोगेण।
अवरट्ठिदिस्स जेट्ठट्ठिदिपरिणामोत्ति णियमेण ॥ ९६४॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ततः क्रमेण वर्धते प्रतिभागेन च असंख्यलोकेन।
अवरस्थितेः ज्येष्ठस्थितिपरिणाम इति नियमेन ॥ ९३४ ॥

जी० प्र०—ततो जघन्यस्थितिजघन्यपरिणामप्रतिबद्धानुभागबंधाध्यवसायेभ्यस्तद्द्वितीयादिपरिणामप्रतिबद्धानुभागबंधाध्यवसायाः प्रथमगुणहानिचरमपरिणामपर्यंता असंख्यातलोकमात्रप्रतिभागोत्पन्नविशेषेण निरन्तरं बर्द्धमाना गच्छंति । ततोऽग्रे गुणहानिं गुणहानिं प्रति आदित आदिर्विशेषतो विशेषश्च द्विगुणो द्विगुणः । एवं द्वितीयादिस्थितानुत्कृष्टस्थितिपर्यंतायामपि ज्ञातव्यं । अनुभागबंधाध्यवसायानां नानागुणहानिशलाकाः संति न संतीत्युपदेशद्वयमस्ति ॥ संदृष्टिः—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सं०च०—तहां पीछें जघन्य स्थितिका जघन्य परिणाम संबंधी प्रथम निषेक रूप अनुभागाध्यवसाय स्थान तिनतैं तिस जघन्य स्थितिका द्वितीयादिक परिणाम संबंधी द्वितीयादि निषेक रूप अनुभागाध्यवसाय स्थान प्रथम गुण हानिका अंत निषेक रूप अंतका परिणाम पर्यंत असंख्यात लोकमात्र प्रमाण प्रतिभाग सर्व द्रव्यको दीये उपज्या जो चयका प्रमाण तिस एक एक चयका प्रमाण करि निरन्तर बधते बधते जानने । तहां आगें गुणहानि गुणहानि प्रति प्रथम निषेकतैं प्रथम निषेक चयके प्रमाणतैं चयका परमाण दूणा दूणा जानना । ऐसैं द्वितीयादिक स्थिति योग्य द्वितीयादि निषेकनिविषैं भी उत्कृष्ट स्थिति रूप अंत निषेक पर्यंत रचना जाननी । स्थित्यादि प्रमाण यथासंभव जानना । इहां जघन्य स्थिति संबंधी जघन्य स्थिति बंधाध्यवसाय स्थाननिविषैं प्रथमनिषेक प्रमाण अनुभागाध्यवसाय स्थान जानने । बहुरि तिसही के दूसरे स्थानविषैं द्वितीय निषेक प्रमाण जानने ऐसैं अनुक्रम है बहुरि अनुभाग बंधाध्यवसायनिकैं नाना गुणहानि शलाका हैं वा नाही हैं ऐसा आचार्यनिके मतकरि दोऊ उपदेश हैं ॥ ९६४ ॥ आगे मूलग्रंथकर्ता जो नेमिचन्द्र आचार्य सो अपना ग्रंथ करनेकी प्रतिज्ञा पूर्ण करि समाचार कहे हैं ——

गोम्मटसंगहसुत्तं गोम्मटदेवेण गोम्मटं रइयं ।
कम्माण णिज्जरट्ठं तच्चट्ठवधारणट्ठं च ॥ ९६५ ॥

गोम्मटसंग्रहसूत्रं गोम्मटदेवेन गोम्मटं रचितं ।
कर्मणां निर्जरार्थं तत्त्वावधारणार्थं च ॥ ९६५ ॥

जी० प्र०— इदं गोम्मटसारसंग्रहसूत्रं गोम्मटदेवेन श्रीवर्धमानदेवेन गोम्मटं नयप्रमाणविषयं रचितं । किमर्थं ? ज्ञानावरणादिकर्मनिर्जरार्थं च ॥९६५॥

स० चं०—यहु गोम्मटसार ग्रंथका संग्रह रूप सूत्र सो गोम्मट देव जो श्री वीरवर्धमान नामा तीर्थंकर दव तींहि करि गोम्मट कहिए नय प्रमाणके गोचर ऐसा ज्ञानावरणादिक कर्मनिकी निर्जराके अर्थि बहुरि तत्त्वार्थका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निश्चय होनेके अर्थि रच्या है। भावार्थ ऐसा—जो यहु ग्रंथ सो वर्धमान स्वामीकी वाणीके अनुसारि बना है मेरा कर्तव्य नाही है॥ ९६५॥

जम्हि गुणा विस्संता गणहरदेवादिइड्ढिपत्ताणं।
सो अजियसेणणाहो जस्स गुरू जयउ सो राओ॥ ९६६॥

यस्मिन् गुणा विश्रांता गणधरदेवादिऋद्धिप्राप्तानां।
सोऽजितसेननाथो यस्य गुरुर्जयतु स रायः॥ ९६६॥

जी० प्र०—गणधरदेवादीनां ऋद्धिप्राप्तानां गुणा यस्मिन् विश्रांताः सोऽजितसेननाथो यस्य गुरुः स राजा सर्वोत्कर्षेण वर्ततां॥ ९६६॥

स० चं०—गणधर देवादिक मुनि जे बुद्धिआदिक ऋद्धिकौं प्राप्त भये तिनके गुण जाविषैं विश्राम करि तिष्ठैं हैं गणधरादिककेसे गुण जाविषैं पाइये हैं ऐसा अजितसेन नामा मुनिनाथ जिस राजाका व्रत देनेवाला गुरु है सो राजा सर्वोत्कृष्टपणाकरि वर्तों॥ ९६६॥

सिद्धंतुदयतडुग्गयणिम्मलवरणेमिचंदकरकलिया।
गुणरयणभुसणंबुहिमइवेला भरउ भुवणयलं॥ ९६७॥

सिद्धांतोदयतटोद्गतनिर्मलवरनेमिचंद्रवरकालिता।
गुणरत्नभूषणांबुधिमतिवेला भरतु भुवनतलं॥ ९६[illegible]॥

जी० प्र०— सिद्धांतोदयाचले उदितनिर्मलवरनेमिचंद्रकिरणैर्वर्धिता गुणरत्नभूषणाम्बुधेश्चामुण्डारायसमुद्रस्य मतिवेला भुवनतलं पूरयतु, अथवा भुवनेऽतिशयेन प्रसरतु॥ ९६७॥ १११२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स० चं०— सिद्धांतरूपी उदयाचलपर्वत तिसविषैं ज्ञानादिक करि उदयमान भया ऐसा निर्मल अर उत्कृष्ट नेमिनाथ रूपी चंद्रमा अथवा नेमिचंद्र आचार्य रूपी चंद्रमा ताके जु वचन रूप किरण तिनकरि बधी हुई ऐसी जो गुणरत्नभूषणांबुधि कहिये गुणरूपी रत्नकरि शोभित ऐसा चामुंडराय नामा राजा सोई भया समुद्र ताकी मतिवेला कहिए बुद्धिरूपी बेला सो 'भुवनतलं भरतु' कहिए जगत विषैं विस्तरिकरि भुवनतलकौं पूरो वा समस्त जगत विषैं अतिशय करि फैलो ऐसा आशीर्वाद है ॥ ९६७ ॥

गोम्मटसंगहसुत्तं गोम्मटसिहरुवरि गोम्मटजिणो य ।
गोम्मटरायविणिम्मियदक्खिणकुक्कुडजिणो जयउ ॥९६८॥

गोम्मटसंग्रहसूत्रं गोम्मटशिखरोपरि गोम्मटजिनश्च ।
गोम्मटराजविनिर्मितदाक्षिणकुक्कुटजिनो जयतु ॥ ९६८ ॥

जी० प्र०—गोम्मटसंग्रहसूत्रं च चामुंडरायविनिर्मितप्रासादस्थितैकहस्तप्रमेंद्रनीलरत्नमयनेमीश्वरप्रतिबिंबं च चामुंडरायविनिर्मितदक्षिणकुक्कुट-जिनश्च सर्वोत्कर्षेण वर्ततां ॥ ९६८ ॥

स० चं०—गोम्मटसार संग्रह रूप सूत्र सो जयवंत प्रवर्तो । बहुरि गोम्मट शिखरिके ऊपरि गोम्मट जिन कहिए चामुंडराय नामा राजा करि निर्मापित जिनमंदिर विषैं विराजमान एक हस्त प्रमाण इंद्र नील मणिमय नेमिनाथ नामा तीर्थंकर देवका प्रतिबिंब सो जयवंत प्रवर्तो । बहुरि चामुंडराय नामा राजा ही करि निर्मापित जगतविषैं रूढि करि दक्षिण कुक्कुट जिन है नाम जाका ऐसा जिन प्रतिबिंब सो जयवंत प्रवर्तो ॥ ९६८ ॥

जेण विणिम्मियपडिमावयणं सव्वट्ठसिद्धिदेवेहिं ।
सव्वपरमोहिजोगिहिं दिट्ठं सो गोम्मटो जयउ ॥ ९६९ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

येन विनिर्मितप्रतिमावदनं सर्वार्थसिद्धिदेवैः ।
सर्वपरमावधियोगिभिः दृष्टं स गोम्मटो जयतु ॥ ९६९ ॥

जी० प्र०-- येन विनिर्मितप्रतिमावदनं सर्वार्थसिद्धिदेवैः सर्वपरमावधियोगिभिः दृष्टं स गोम्मटः सर्वेत्कर्षेण वर्ततां ॥ ९६९ ॥

सं०चं०—जाकरि निर्मापित जिन प्रतिमाका मुख सो सर्वार्थसिद्धिके वासी देवनिकरि अवधि करि देख्या वा सर्वावधि परमावधिके धारक योगीश्वरनिकरि देख्या सो चामुंडराय राजा सर्वोत्कृष्टपनैं वर्तौ ॥ ९६९ ॥

वज्जयणं जिणभवणं ईसिपभारं सुवण्णकलसं तु ।
तिहुवणपडिमाणिक्कं जेण कयं जयउ सो राओ ॥९७० ॥

वज्रतलं जिनभवनमीषत्प्रभारं सुवर्णकलशं तु ।
त्रिभुवनप्रतिमानमेकं येन कृतं जयतु स रायः ॥ ९७० ॥

जी० प्र०— वज्रावनितलं ईषत्प्राग्भारं सुवर्णकलशमिति त्रिभुवनप्रतिमानं अद्वितीयं जिनभवनं येन कृतं स राजा विराजतां ॥ ९७० ॥

सं० चं०—वज्र सारिखा जाका अवनितल कहिए पीठबंध बहुरि ईषत् है प्राग्भार जाका बहुरि सुवर्णमयी है कलश जाकैं बहुरि तीन भुवनविषैं प्रतिमा कहिए उपमा देने योग्य ऐसा एक कहिए दूसरा नाही ऐसा जिन भवन जाकरि निर्मापण कीया सो राजा विराजमान रहो ॥ ९७० ॥

जेणुब्भियथंभुवरिमजक्खतिरीटग्गाकिरणजलधोया ।
सिद्धाण सुद्धपाया सो राओ गोम्मटो जयउ ॥ ९७१ ॥

येनोद्भितस्तंभोपरिमयक्षतिरीटाग्रकिरणजलधौतौ ।
सिद्धानां शुद्धपादौ स रायो गोम्मटो जयतु ॥ ९७१ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जी० प्र०– येनोन्नीकृतस्तंभस्योपरिस्थितयक्षमुकुटाग्रकिरणजलेन धौतौ सिद्धपरमेष्ठिनां शुद्धपादौ स राजा चामुंडरायो जयतु ॥ ९७१ ॥

स० चं०–जाकरि चैत्यालय विषैं ऊभा कीया स्तंभ ताके ऊपर तिष्ठता जो यक्षका आकार ताका मुकुटका अग्रभागकी किरण रूपी जल करि सिद्ध परमेष्ठीके आत्मप्रदेशनिके आकार रूप शुद्ध दोय चरण ते धोय गए सो राजा चामुंडराय जीतिवंत होहु। यद्यपि सिद्धि स्थान पर्यंत यक्षके मुकुट किरण कैसैं प्राप्त होंइ परंतु उपमालंकार करि कहनेका दोष नाहीं। इहां इतना अर्थ जानना–

चैत्यालय विषैं स्तंभ बहुत ऊंचा बन्या है ऊपरि यक्षका आकार है ताके मुकुट विषैं ज्योतिवंत पदार्थ लगे हैं ॥ ९७१ ॥

गोम्मटसुत्तल्लिहणे गोम्मटरायेण जा कया देसी।
सो राओ चिरं कालं णामेण य वीरमत्तंडी ॥ ९७२ ॥

गोम्मटसूत्रलेखने गोम्मटरायेन या कृता देशी।
स रायश्चिरं कालं नाम्ना च वीरमार्तंडी ॥ ९७२ ॥

जी० प्र०– गोम्मटसारसूत्रलेखने गोम्मटराजेन या देशी भाषा कृता स राजा नाम्ना वीरमार्तंडश्चिरकालं जयतु ॥ ९७२ ॥

स० चं०–गोम्मटसार ग्रंथके सूत्र लिखनेविषैं गोम्मट राजा करि जो देशी भाषा करी सो राजा नामकरि वीरमार्तंड चिरकाल पर्यंत जीतिवंत प्रवृत्तौ। ऐसैं मूल ग्रंथकर्त्ता श्री नेमिचद्र नामा आचार्य तीहिं इस ग्रंथ होने विषैं अपने समाचार कहे। अब इस गोम्मटसार ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा संस्कृत टीकाका कर्त्ता केशवनामा ब्रह्मचारी सो टीका होने विषैं अपने समाचार श्लोकनिकरि कहे, ते कहिए है–

श्रीवृषभोऽजितो भक्त्या शंभवोऽत्राभिनंदनः। सुमतिः पद्मभास्सः श्रीसुपार्श्वश्चंद्रभः स्तुतः ॥ १ ॥
सुविधिः शीतलः श्रेयान् सुपुज्यो विमलेश्वरः। अनंतो धर्मनाथो नः शांतिः कुंथुररप्रभुः ॥ २ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

श्रीमल्लिः सुव्रतस्वामी नमिनेमी श्रीपार्श्वकः । वीरस्त्रिकालज्ञोऽप्यर्हन् सिद्धः साधुः शिवं क्रियात् ॥ ३ ॥
यत्र रत्नैस्त्रिभिर्लब्ध्वार्हत्यं पूज्यं नरामरैः । निर्वांति मूलसंघोऽयं नंद्यादाचंद्रतारकं ॥ ४ ॥
तत्र श्रीशारदागच्छे बलात्कारगणोऽन्वयः । कुंदकुंदमुनींद्रस्य नंद्याम्नायोऽपि नंदतु ॥ ५ ॥
यो गुणैर्गणभृद्गीतो भट्टारकशिरोमणिः । भक्त्या नमामि तं भूयो गुरुं श्रीज्ञानभूषणं ॥ ६ ॥
कर्णाटप्रायदेशेशमल्लिभूपालभक्तितः । सिद्धांतःपाठितो येन मुनिचंद्रं नमामि तं ॥ ७ ॥
योऽभ्यर्थ्यधर्मवृद्ध्यर्थं मह्यं सूरिपदं ददौ । भट्टारकशिरोरत्नं प्रभेंदुः स नमस्यते ॥ ८ ॥
त्रिविद्यविद्याविख्यातविशालकीर्तिसूरिणा । सहायोऽस्यां कृतौ चक्रेऽधीता च प्रथमं मुदा ॥ ९ ॥
सूरेः श्रीधर्मचंद्रस्याभयचंद्रगणेशिनः । वर्णिलालादिभव्यानां कृते कर्णाटवृत्तितः ॥ १० ॥
रचिता चित्रकूटे श्रीपार्श्वनाथालयेऽमुना । साधुसांगासहेसाभ्यां प्रार्थितेन मुमुक्षणा ॥ ११ ॥
गोम्मटसारवृत्तिर्हि नंद्याद्भव्यैः प्रवर्तिता । शोधयंत्वागमात्किंचित् विरुद्धं चेद् बहुश्रुताः ॥ १२ ॥

---

१ नाभेयमजितं देवं शंभवं भवतारकं । घातिकर्मप्रणाशाय प्रणमाम्यहमादरात् ॥ १ ॥
अभिनंदनमानंदरूपं सुमतिमच्युतं । पद्मप्रभं प्रभुं वंदे रत्नत्रयविशुद्धये ॥ २ ॥
सुपार्श्वमनघं चंद्रप्रभं त्रिभुवनाधिपं । पुष्पदंतं जगत्सारं वंदे तद्गुणसिद्धये ॥ ३ ॥
शीतलं सुखसाद्भूतपुण्यमूर्तिं नमाम्यहं । श्रेयांसं वासुपूज्यं च केवलज्ञानसिद्धये ॥ ४ ॥
विमलं निर्जितानंगं प्राप्तानंतचतुष्टयं । अनंतं धर्मनाथं च वंदे स्वात्मोपलब्धये ॥ ५ ॥
शांतिनाथं च कुंथुं च अरं चेशान्नमाम्यहं । षट्खंडवसुधाचक्रधर्मचक्रप्रणायकान ॥ ६ ॥
मल्लिं सुव्रततीर्थेशं नमिं भक्त्या नमाम्यहं । यथाख्यातगुणोपेतान् यथाख्यातप्रसिद्धये ॥ ७ ॥
नेमिनाथं च पार्श्वं च वर्धमानं जिनेश्वरं । त्रिकालमभिवंदेऽहं नवक्षायिकलब्धये ॥ ८ ॥
त्रिकालगोचराः सर्वेऽनंतार्हत्सिद्धसाधवः । निःश्रेयसपदं दद्युः शरणोत्तममंगलं ॥ ९ ॥
यमाराध्यैव भव्यौघाः प्राप्ताः कैवल्यसंपदः । शाश्वतं पदमापुस्तं मूलसंघमुपाश्रये ॥ १० ॥
तत्र श्रीशारदागच्छे बलात्कारगणोऽन्वयः । कुंदकुंदमुनींद्रस्य नंद्यादाचंद्रतारकं ॥ ११ ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

निर्ग्रंथाचार्यवर्येण त्रैविद्यचक्रवर्तिना । संशोध्याभयचंद्रेणालेखि प्रथमपुस्तकः ॥ १२ ॥

इत्याचार्यश्रीनेमिचंद्रकृतायां गोम्मटसारापरनामपंचसंग्रहवृत्तौ
कर्मरचनास्वभावो नाम नवमोऽध्यायः
समाप्तः ।

कवित्त ।

वृषभ अजित संभव अभिनंदन सुमति पद्म प्रभु देव जिनेश,
श्री सुपार्श्व चंद्रप्रभ सुविधि जु शीतल श्रेय वासु पूज्येश ।
विमल अनंत धर्म सुरपतिनुत शांति कुंथु अर मल्लि महेश
मुनिसुव्रत नमि नेमि पार्श्व पाति वर्धमान वंदौं परमेश ॥ १ ॥

दोहा ।

तीन काल संबंधि सब तीर्थंकर अरहंत।
सिद्ध साधु शिव करहु मम करत भक्ति भगवंत ॥ २ ॥

तत्र श्रीमज्जिनधर्मांबुधिवर्धनपूर्णचंद्रायमानश्रीज्ञानभूषणभट्टारकशिष्येण सौगतसांख्यकणादभिद्विक्षुपादप्रभाकरादिपरवादिगजगंडभेरुंडप्रभाचंद्रभट्टारकदत्ताचार्यपदेन त्रैविद्यविद्यापरमेश्वरमुनिचंद्राचार्यमुखात्कर्णाटदेशाधिनाथप्राज्यसाम्राज्यलक्ष्मीनिवासजैनोत्तममल्लिभूपालप्रयत्नाद्-धीतसिद्धांतेन वर्णिलालाविहिताग्रहाद् गौर्जरदेशाच्चित्रकूटजिनदाससाहनिर्मापितपार्श्वप्रभुप्रासादाधिष्ठितेनामुना नेमिचंद्रेणाल्पमेधसाऽपि भव्यपुंडरीकोपकृतीहानुरोधेन सकलज्ञातिशिरःशेखरायमाणखंडेलवालकुलतिलकसाधुवंशावतंसजिनधर्मोद्धरणधुरीणसाहसांगसाहसहसाविहितमार्थनाधीनेन विशदत्रैविद्यविद्यास्पदविशालकीर्तिसहायादियं यथाकर्णाटवृत्ति व्यरचि ।

यावच्छ्रीजिनधर्मश्चंद्रादित्यौ च विष्टपं सिद्धाः । तावन्नंदतु भव्यैः प्रपठ्यमाना त्वियं वृत्तिः ॥
निर्ग्रंथाचार्यवर्येण त्रैविद्यचक्रवर्तिना । संशोध्याभयचंद्रेणालेखि प्रथमपुस्तकः ॥

इत्यभयनंदिनामांकितायां ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अडिल्ल।

यावत तारे चंद्र दिपें परकाशतें, नंदो तावत् मूल संघ इह जासतें।
रत्न त्रय करि पद अरहंत सु पाइकें, सुरनर सेवित सिद्ध होंइ शिव जाइकें॥ ३॥

दोहा।

तहां शारदा गच्छवर बलात्कार गण भाय। कुंद कुंद अन्वय सदा नंदौ नंद्याम्नाय॥ ४॥

सवैया।

जाकौं गण समुदाय मानैं गण भरता जाकौं ज्ञानभूषण सो नाम गुणवान है।
ताहि भट्टारक शिरोमणिकौ मैं नमौं बारंबार भक्तिभाव लीएं एक ध्यान है।
कर्णाटक देश स्वामी मल्लि महीपाल ताकौं भक्तितैं दयो है जिहि श्रुत ज्ञान दान है।
ऐसे मुनि चंद्र मुनि फुनि नमौं बारबार जाकी वानी मुनिनिके अमृत समान है॥

सोरठा।

प्रभा चंद्र गुणसेत नमिए भट्टारक रतन। धर्म वृद्धिके हेत मोहि सूरिपद जिहि दयो॥६॥

सवैया ३१।

जो त्रैविद्य विद्यातैं प्रगट ऐसो सूरि जाको नाम है विशालकीर्ति कीर्ति जाकी घनी है।
इस टीका करनेमें कीनौं है सहाय तिहि सोई फुनि प्रथम हीऽधीता बुद्धि घनी है॥
धर्मचंद्र अभयेंदु गणी वर्णी लालादिक, भव्यनिके हेत ऐसें वानी भनी है।
कर्णाटक टीकातैं बनाई चित्र कूट नाम पार्श्वनाथ आलयमें टीका यह बनी है॥ ७॥

दोहा।

साधू संगा सहकरी करी प्रार्थना एह। रची मुमुक्षु तबै भली टीका अर्थ अछेह। ८।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यहु गोम्मटसारकी टीक। भव्यनिकरि विस्तारित ठीक॥
नंदो, जो कुछ होइ विरुद्ध। श्रुततैं श्रुतधर कारियो शुद्ध॥
मुनि निर्ग्रंथ महंत वर त्रैविद्य सुचक्रधर। अभय चंद्र मुनि संत सोधि लिख्यो पुस्तक प्रथम॥ १०॥
जीवतत्त्व प्रदीपिका टीका संस्कृतसार। ताके कर्ताने कहे अैसैं स्व समाचार॥ ११॥

आचार्य श्रीनेमिचंद्रविरचित गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृत टीकाके अनुसारि सम्यग्ज्ञान चंद्रिका नामा भाषाटीकाविषैं कर्मकांडविषैं कर्म रचनाका स्वभाव नामा अधिकार संपूर्ण भया। याकौं होतैं गोम्मटसार ग्रंथ पूर्ण भया सो सर्व जीवोंकौं ज्ञानानंदका कर्त्ता होहु॥

अब इहां भाषाटीकाकार करि कहिए है—

कर्म कांडकौं जानिकैं ज्ञान कांड मय होइ। परस्वरूपकौं परिहरै शिवपद पावै सोय॥ १॥
मंगल श्री अरहंत सिद्ध साधु जिन धर्म फुनि। मंगल चारि महंत एई हैं उत्तम सरण॥ २॥
अर्थके लोभी ह्वैकैं करिकैं सहास अति अगम अपार ग्रंथ पारावारमें परे।
थाह तो न आयो तहां फेर कौन पायो पार तातैं सूधे सार गहे सारे वार उतरे॥
इस आधे माहि कर्मकांडकी है मरजाद याके अर्थ जानें निज काज सब सुधरे।
निज मति अनुसारि अर्थ गहि टोडर हू भाषा बनवाई यानें अर्थ गहौ सगरे॥ ३॥
गोम्मट सार शास्त्र यहु ताके कहे दोय अधिकार महान। जीव कांड अर कर्म कांड अब ते तो पूरण भए प्रमाण
इहां अर्थ संदृष्टि आदि किछु जाने चाहिए ते अमलान। कहिए है जानहु सुज्ञानी जानि साधिए पद निर्वान॥४॥

इति श्रीगोम्मटसार सूत्रानुसार भाषा संपूर्ण।

कर्मकांड समाप्त।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गोम्मटसार कर्मकांड

समाप्त ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाषाटीकाकार–स्वर्गीय पंडित टोडरमलजीकृत

गोम्मटसार–पीठिका ।

बंदौं ज्ञानानंदकर, नेमिचंद गुणकंद ।
माधववंदितविमलपद, पुण्यपयोनिधिनंद ॥ १ ॥

दोषदहन गुनगहनघन, अरिकरिहरि अरहंत ।
स्वानुभूतिरमनीरमन, जगनायक जयवंत ॥ २ ॥

सिद्ध सुद्ध साधितसहज, स्वरससुधारसधार ।
समयसार शिव सर्वगत, नमत होहु सुखकार ॥ ३ ॥

जैनी वानी विविधविधि, वरनत विश्वप्रमान ।
स्यात्पदमुद्रित अहितहर, करहु सकल कल्यान ॥ ४ ॥

मैं नमो नगन जैन जन, ज्ञानध्यानधनलीन ।
मैनमानविन दानघन, एनहीन तनछीन ॥ ५ ॥ यहु चित्रालंकारयुक्त है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इहविधि मंगल करन तैं, सवविधि मंगल होत।
होत उदंगल दूरि सब, तम ज्यौं भानु उदोत॥ ६॥

अथ मंगलाचरणकरि श्रीमद्गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह ग्रंथ ताकी देशभाषामयी टीकाकरनेका उद्यम करौं हौं। सो यहु ग्रंथसमुद्र तौ ऐसा है जो सातिशयबुद्धिबलसंयुक्त जीवनिकरि भी जाका अवगाह होना दुर्लभ है अर मैं मंदबुद्धि अर्थप्रकाशनेरूप याकी टीका करने विचारौं हौं। सो यहु विचार ऐसा भया जैसैं कोऊ अपने मुखतैं जिनेंद्र देवका सर्वगुण वर्णन कीया चाहै, सो कैसैं बनै? इहां कोऊ कहै-नाहीं बनै है तो उद्यम काहेकौं करौ हौ? ताकौं कहिये है—जैसैं जिनेंद्रदेवके सर्व गुण कहनेकी सामर्थ्य नाहीं तथापि भक्त पुरुष भक्तिके वशतैं अपनी बुद्धि अनुसार गुण वर्णन करै तैसैं इस ग्रंथके संपूर्ण अर्थ प्रकाशनेकी सामर्थ्य नाहीं तथापि अनुरागके वशतैं मैं अपनी बुद्धि अनुसार अर्थ प्रकाशौंगा। बहुरि कोऊ कहै कि-अनुराग है तो अपनी बुद्धि अनुसार ग्रंथाभ्यास करो, मंदबुद्धिनिकौं टीका करनेका अधिकारी होना युक्त नाहीं। ताकौं कहिये है—जैसैं किसी शिष्यशालाविषैं बहुत बालक पढै हैं तिनिविषैं कोऊ बालक विशेषज्ञानरहित है तथापि अन्य बालकनितैं अधिक पढ्या है सो आपतैं थोरे पढनेवाले बालकनिकौं अपने समान ज्ञान होनेके अर्थि किछू लिखि देना आदि कार्यका अधिकारी हो है तैसैं मेरैं विशेषज्ञान नाहीं, तथापि कालदोषतैं मोतैं भी मंदबुद्धि हैं अर होंहिगे तिनिकैं मेरे समान इस ग्रंथका ज्ञान होनेके अर्थि टीका करनेका अधिकारी भया हौं। बहुरि कोऊ कहै कि—यहु कार्य करना तो विचार्या परंतु जैसैं छोटा मनुष्य बडा कार्य करना विचारै तहां उस कार्यविषैं चूक होइ ही, तहां वह हास्यकौं पावै है तैसैं तुम भी मंदबुद्धि होय इस ग्रंथकी टीका करनी विचारो हौ सो चूक होइगी तहां हास्यकौं पावोगे। ताकौं कहिये है--यहु तौ सत्य है कि-मैं मंदबुद्धि होइ ऐसै महान् ग्रंथकी टीका करनी विचारौं हौं सो चूक तौ होइ परंतु सज्जन हास्य नाहीं करैंगे। जैसैं औरनितैं अधिक पढ्या बालक कहीं भूलै तब बडे ऐसा विचार करै हैं कि बालक है भूलै ही भूलै परंतु और बालकनितैं भला है ऐसैं विचारि हास्य नाहीं करै हैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तैसें मैं इहां कहीं भूलोंगा तहां सज्जन पुरुष ऐसा विचारैंगे कि--मंदबुद्धि था सो भूलै ही भूलै परंतु केतेइक अतिमंदबुद्धीनितैं भला है ऐसैं विचारि हास्य न करैंगे । बहुरि कोऊ कहै कि-सज्जन तो हास्य न करैंगे परंतु दुर्जन तौ हास्य करैंगे ? ताकौं कहिये है कि--दुष्ट तौ ऐसै ही हैं, जिनके हृदयविषैं औरनिके निर्दोष भलेगुण भी विपरीतरूप ही भासैं। सो उनका भयकरि जामैं अपना हित होय ऐसे कार्यकौं कौन न करैगा। बहुरि कोऊ कहै कि पूर्व ग्रंथ थे ही, तिनिका अभ्यास करने करावनेतैं ही हित हो है, मंदबुद्धीनिकरि ग्रंथकी टीका करनेकी महंतता काहेकौं प्रगट कीजिये ? ताकौं कहिये है कि-ग्रंथ अभ्यास करनेतैं ग्रंथकी टीका रचना करनेविषैं उपयोग विशेष लागै है, अर्थ भी विशेष प्रतिभासै है बहुरि अन्य जीवनिकौं ग्रंथका अभ्यास करावनेका संयोग होना दुर्लभ अर संयोग होइ तौ कोई ही जीवकै अभ्यास होइ । अर ग्रंथकी टीका बनै तौ परंपरा अनेक जीवनिकैं अर्थका ज्ञान होइ। तातैं अपना अर अन्य जीवनिका विशेष हित होनेके अर्थि टीका करिये है, महंतताका तौ किछू प्रयोजन नाहीं । बहुरि कोऊ कहै कि-इस कार्यविषैं विशेष हित हो है सो सत्य, परंतु मंदबुद्धितैं कहीं भूलिकरि अन्यथा अर्थ लिखिए, तहां महत्पाप उपजनेतैं अहित भी तौ होइ ? ताकौं कहिये है-- यथार्थ सर्व पदार्थनिका ज्ञाता तौ केवली भगवान है औरनिकैं ज्ञानावरणका क्षयोपशमके अनुसारी ज्ञान है तिनिकौं कोई अर्थ अन्यथा भी प्रतिभासै परंतु जिनदेवका ऐसा उपदेश है-कुदेव, कुगुरु, कुशास्त्रनिके वचनकी प्रतीतिकरि वा हठकरि वा क्रोध मान माया लोभकरि वा हास्य भयादिक करि जो अन्यथा श्रद्धान करै वा उपदेश देइ सो महापापी है अर विशेष ज्ञानवान गुरुकै निमित्त विना, वा अपने विशेष क्षयोपशम विना कोई सूक्ष्म अर्थ अन्यथा प्रतिभासै अर यहु ऐसा जानै कि जिनदेवका उपदेश ऐसैं ही है ऐसा जानि कोई सूक्ष्म अर्थकौं अन्यथा श्रद्धहै वा उपदेश देइ तौ याकौं महत् पाप न होइ सोई इस ग्रंथविषैं भी आचार्य कहा है--

"सम्माइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं तु सद्दहदि ।
सद्दहदि असब्भावं अजाणमाणो गुरुणियोगा ॥" २७ ॥ जीवकांड ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि कोऊ कहै कि-तुम विशेष ज्ञानीतैं ग्रंथका यथार्थ सर्व अर्थका निर्णयकरि टीका करनेका प्रारंभ क्यों न कीया ? ताकौं कहिये है-काल दोषतैं केवली श्रुतकेवलीका तौ इहां अभाव ही भया बहुरि विशेषज्ञानी भी विरले पाइए। जो कोई है तौ दूर क्षेत्रविषैं है, तिनिका संयोग दुर्लभ। अर आयु बुद्धि बल पराक्रम आदि तुच्छ रहि गए। तातैं जो बन्या सो अर्थका निर्णय कीया, अवशेष जैसैं है तैसैं प्रमाण है। बहुरि कोऊ कहै कि--तुम कही सो सत्य, परंतु इस ग्रंथविषैं जो चूक होइगी ताके शुद्ध होनेका किछू उपाय भी है ? ताकौं कहिये है-एक उपाय यहु कीजिये है-जो विशेष ज्ञानवान पुरुषनिका प्रत्यक्ष संयोग नाहीं, तातैं परोक्ष ही तिनिस्यों ऐसी बीनती करौ हौं कि-मैं मंदबुद्धि हौं विशेषज्ञानरहित हौं, अविवेकी हौं, शब्द न्याय गणित धार्मिक आदि ग्रंथनिका विशेष अभ्यास मेरे नाहीं है तातैं शक्तिहीन हौं, तथापि धर्मानुरागके वशतैं टीका करनेका विचार कीया सो याविषैं जहां जहां चूक होइ, अन्यथा अर्थ होइ, तहां तहां मेरे ऊपरि क्षमाकरि तिस अन्यथा अर्थकौं दूरिकरि यथार्थ अर्थ लिखना ऐसैं विनतीकरि जो चूक होइगी ताके शुद्ध होनेका उपाय कीया है। बहुरि कोऊ कहै कि--तुम टीका करनी विचारी सो तौ भला कीया परंतु ऐसे महान ग्रंथनिकी टीका संस्कृत ही चाहिये, भाषाविषैं याकी गंभीरता भासै नाहीं। ताकौं कहिये है-इस ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा संस्कृतटीका तौ पूर्वैं ही है। परंतु तहां संस्कृत गणित आम्नाय आदिका ज्ञानरहित जे मंदबुद्धि हैं तिनिका प्रवेश न हो है। बहुरि इहां कालदोषतैं बुद्ध्यादिकके तुच्छ होनेकरि संस्कृतादि ज्ञानरहित घने जीव हैं। तिनिके इस ग्रंथके अर्थका ज्ञान होनेके अर्थि भाषा टीका करिए है। सो जे जीव संस्कृतादि विशेषज्ञानयुक्त हैं ते मूलग्रंथ वा संस्कृतटीकातैं अर्थ धारौ। बहुरि जे जीव संस्कृतादि विशेष ज्ञानरहित हैं ते इस भाषाटीकातैं अर्थ धारौ। बहुरि जे जीव संस्कृतादि ज्ञानसहित हैं परंतु गणित आम्नायादिकके ज्ञानका अभावतैं मूलग्रंथ वा संस्कृतटीकाविषैं प्रवेश न पावै हैं ते इस भाषा टीकातैं अर्थकौं धारि मूलग्रंथ वा संस्कृतटीकाविषैं प्रवेश करहु। बहुरि जो भाषाटीकातैं मूलग्रंथ वा संस्कृतटीकाविषैं अधिक अर्थ होइ ताके जाननेका अन्य उपाय बनै सो करहु। इहां कोऊ कहै-संस्कृतज्ञानवालोंकैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भाषा अभ्यासविषैं अधिकार नाहीं। ताकौं कहिये है-संस्कृतज्ञानवालोंकौं भाषा वांचनेतैं कोई दोषतो नाही उपजै है अपना प्रयोजन जैसैं सिद्ध होइ तैसैं ही करना। पूर्वैं अर्द्धमागधी आदि भाषामय महान ग्रंथ थे बहुरि बुद्धिकी मंदता जीवनिकै भई तब संस्कृतादि भाषामय ग्रंथ बने। अब विशेष बुद्धिकी मंदता जीवनिकैं भई तातैं देश भाषामय ग्रंथ करनेका विचार भया। बहुरि संस्कृतादिकका अर्थ भी अब भाषाद्वारकरि जीवनिकौं समझाइये है। इहां भाषाद्वारकरि ही अर्थ लिख्या तो किछू दोष नाहीं है। ऐसैं विचारि श्रीमद्गोम्मटसार द्वितीयनामा पंचसंग्रह ग्रंथकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नामा संस्कृतटीका ताकै अनुसारि सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा यहु देशभाषामयी टीका करनेका निश्चय कीया है सो श्रीअरहंतदेव वा जिनवानी, वा निर्ग्रंथ गुरुनिकै प्रसादतैं वा मूलग्रंथकर्ता नेमिचंद्र आदि आचार्यनिके प्रसादतैं यहु कार्य सिद्ध होहु॥

अब इस शास्त्रके अभ्यासविषैं जीवनिकौं सन्मुख करिए है। हे भव्यजीव हौ! तुम अपने हितकौं वांछौ हौ तौ तुमकौं जैसैं बनै तैसैं या शास्त्रका अभ्यास करना। जातैं आत्माका हित मोक्ष है। मोक्ष विना अन्य जो है सो परसंयोगजनित है, विनाशीक है, दुःखमय है। अर मोक्ष है सोई निज स्वभाव है, अविनाशी है, अनंत सुखमय है। तातैं मोक्ष पद पावनेका उपाय तुमकौं करना सो मोक्षके उपाय सम्यग्दर्शन, सम्यग्ज्ञान, सम्यक्चारित्र हैं। सो इनकी प्राप्ति जीवादिकके स्वरूप जाननेहीतैं हो है। सो कहिए है—जीवादि तत्त्वनिका श्रद्धान सम्यग्दर्शन, सो विना जानैं श्रद्धानका होना आकाशका फूल समान है। पहिलैं जानै तब पीछैं तैसैं ही प्रतीति करि श्रद्धानकौं प्राप्त हो है। तातैं जीवादिकका जानना श्रद्धान होनेतैं पहिलैं जो होइ सोई तिनकै श्रद्धानरूप सम्यग्दर्शनका कारण जानना। बहुरि श्रद्धान भए जो जीवादिकका जानना होइ ताहीका नाम सम्यग्ज्ञान है। बहुरि श्रद्धानपूर्वक जीवादि जानै स्वयमेव उदासीन होइ हेयकौं त्यागै उपादेयकौं ग्रहै तब सम्यक्चारित्र हो है। अज्ञानपूर्वक क्रियाकांडतैं सम्यक्चारित्र होइ नाहीं। ऐसैं जीवादिककौं जानने हीतैं सम्यग्दर्शनादि मोक्षके उपायनिकी प्राप्ति निश्चय करनी। सो इस शास्त्रके अभ्यासतैं जीवादिकका जानना नीकैं हो

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। जातैं संसार है सोई जीव अर कर्मका संबंध रूप है। बहुरि विशेष जानें इनका संबंधका जो अभाव होइ सोई मोक्ष है। सो इस शास्त्रविषैं जीव अर कर्मका ही विशेष निरूपण है। अथवा जीवादिकका षट् द्रव्य सप्त-तत्त्वादिकनिका भी या विषैं नीकैं निरूपण है तातैं इस शास्त्रका अभ्यास अवश्य करना।

अब इहां केई जीव इस शास्त्रका अभ्यासविषैं अरुचिहोनेकौं कारण विपरीत विचार प्रकट करे हैं तिनि-कौं समझाइए है। तहां केई जीव प्रथमानुयोग वा चरणानुयोग वा द्रव्यानुयोगकी केवल पक्ष करि इस करणा-नुयोगरूप शास्त्रविषैं अभ्यासकौं निषेधे हैं। तिनिविषैं प्रथमानुयोगका पक्षपाती कहे है कि–इदानीं जीव-निकी बुद्धि मंद बहुत है तिनिकैं ऐसे सूक्ष्म व्याख्यानरूप शास्त्रविषैं किछू समझना होइ नाही तातैं तीर्थंकरा-दिककी कथाका उपदेश दीजिए तौ नीकैं समझैं अर समझिकरि पापतैं डरैं, धर्मानुरागरूप होंइ, तातैं प्रथमा-नुयोगका उपदेश कार्यकारी है ताकौं कहिये है–

अब भी सर्व जीव तौ एकसे न भए हैं, हीनाधिक बुद्धि देखिए है तातैं जैसा जीव होइ, तैसा उपदेश देना। अथवा मंदबुद्धीभी सिखाए हुए अभ्यासतैं बुद्धिमान होते देखिए है। तातैं जे बुद्धिमान हैं तिनिकौं तौ यहु ग्रंथ कार्यकारी है ही, अर जे मंदबुद्धी हैं ते विशेषबुद्धिनितैं सामान्य विशेष रूप गुणस्थानादिकका स्वरूप सीखि इस शास्त्रका अभ्यास विषैं प्रवर्त्तौ। इहां मंदबुद्धी कहै हैं कि इस गोम्मटसार शास्त्रविषैं तौ गणित समस्या अनेक अपूर्व कथनकरि बहुत कठिनता सुनिए है हम कैसैं याविषैं प्रवेश पावैं। तिनिकौं कहिये है–भय मति करौ। इस भाषा टीकाविषै गणित आदिका अर्थ सुगमरूप करि कह्या है। तातैं प्रवेश पावना कठिन रह्या नाहीं। बहुरि या शास्त्रविषैं कथन कहीं सामान्य है, कहीं विशेष है, कहीं सुगम है, कहीं कठिन है तहां जो सर्व अभ्यास बनैं तौ नीकै ही है। अर जो न बनै तौ अपनी बुद्धिके अनुसार जैसा बनै तैसा ही अभ्यास करौ, अपने उपायमें आलस्य करना नाहीं। बहुरि तैं कह्या–प्रथमानुयोगसंबंधी कथादिक सुनैं पापतैं डरै हैं अर धर्मानुरागरूप हो हैं। सो तहां तौ दोऊ कार्य शिथिलता लीए हो हैं। इहां पाप पुण्यके कारण कार्यादिक

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विशेष जाननेतैं ते दोऊ कार्य दृढता लिए हो हैं। तातैं याका अभ्यास करना। ऐसैं प्रथमानुयोगके पक्षपातीकौं इस शास्त्रका अभ्यास विषैं सन्मुख कीया।

अब चरणानुयोगका पक्षपाती कहै है कि—इस शास्त्रविषैं कह्या जीवकर्मका स्वरूप, सो जैसैं है तैसैं है ही तिनिकौं जानैं कहा सिद्धि हो है, जो हिंसादिकका त्यागकरि व्रत पालिए, वा उपवासादि तप करिए, वा अरहंतादिककी पूजा, नामस्मरण आदि भक्ति करिए, वा दान दीजिए, वा विषयादिकस्यौं उदासीन हूजे इत्यादि शुभ कार्य करिए तो आत्महित होइ, तातैं इनका प्ररूपक चरणानुयोगका उपदेशादिक करना। ताकौं कहिए है—हे स्थूलबुद्धि ! तैं व्रतादिक शुभ कार्य कहे ते करने योग्य ही हैं, परंतु ते सर्व सम्यक्त्व विना ऐसैं हैं जैसैं अंक विना विंदी। अर जीवादिकका स्वरूप जानैं विना सम्यक्त्वका होना ऐसा, जैसा बांझका पुत्र। तातैं जीवादिक जाननेके अर्थि इस शास्त्रका अभ्यास अवश्य करना। बहुरि तैं जैसैं व्रतादिक शुभ कार्य कहे अर तिनितैं पुण्यबंध होहै तैसैं जीवादिकका स्वरूप जाननेरूप ज्ञानाभ्यास है सो प्रधान शुभ कार्य है। यातैं सातिशय पुण्यका बंध हो है। बहुरि तिन व्रतादिकनिविषैं भी ज्ञानाभ्यासकी ही प्रधानता है सो कहिए है—

जो जीव प्रथम जीवसमासादि जीवादिकके विशेष जानै, पीछैं यथार्थ ज्ञानकरि हिंसादिककौं त्यागि व्रत धारै सोई व्रती है। बहुरि जीवादिकके विशेष जानै विना कथंचित् हिंसादिकका त्यागतैं आपकौं व्रती मानै सो व्रती नाहीं। तातैं व्रत पालनेविषैं ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। बहुरि तप दोय प्रकार है-एक वहिरंग, एक अंतरंग। तहां जाकरि शरीरका दमन होइ सो वहिरंग तप है, अर जातैं मनका दमन होइ सो अंतरंग तप है। इनि विषैं वहिरंग तपतैं अंतरंग तप उत्कृष्ट है। सो उपवासादिक तौ वहिरंग तप है, ज्ञानाभ्यास अंतरंग तप है। सिद्धांतविषैं भी छह प्रकार अंतरंग तपनिविषैं चौथा स्वाध्यायनामा तप कह्या है, तिसतैं उत्कृष्ट व्युत्सर्ग अर ध्यान ही है। तातैं तप करनेविषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। बहुरि जीवादिकके विशेषरूप गुणस्थानादिकनिका स्वरूप जानैं ही अरहंतादिकनिका स्वरूप नीकै पहिचानिए है, वा अपनी अवस्था पहिचानिए है। ऐसी पहिचानि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भए जो तीव्र अंतरंग भक्ति प्रकट हो है सोई बहुत कार्यकारी है। बहुरि जो कुलक्रमादिकतैं भक्ति हो है सो किंचिन्मात्र ही फलकी दाता है। तातैं भक्तिविषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। बहुरि दान चार प्रकार है। तिनिविषैं आहारदान, औषधदान, अभयदान तौ तात्कालिक क्षुधाके दुःखकौं वा रोगके दुःखकौं, वा मरणादिके दुःखहीकौं दूर करै हैं। अर ज्ञानदान है सो अनंतभव संतानसंबंधी है दुःख दूर करनेकौं कारण है। तीर्थंकर, केवली, आचार्यादिकनिकैं भी ज्ञानदानकी प्रवृत्ति है। तातैं ज्ञानदान उत्कृष्ट है सो अपनैं ज्ञानाभ्यास होइ तो अपना भला करै, अर अन्य जीवनिकौं ज्ञानदान देवै। ज्ञानाभ्यास विना ज्ञानदान देना कैसैं होइ ? तातैं दानविषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। बहुरि जैसैं जन्मतैं ही केई पुरुष ठिगनके घर गए। तहां तिन ठिगनिकौं अपना मानै हैं बहुरि कदाचित् कोऊ पुरुष किसी निमित्तस्यौं अपने कुलका वा ठिगनिका यथार्थ ज्ञान होनैतैं ठिगनिस्यौं अंतरगविषैं उदासीन भया तिनिकौं परजानि संबंध छुडाया चाहै है, बाह्य जैसा निमित्त है तैसैं प्रवर्त्तै है। बहुरि कोऊ पुरुष तिन ठिगनिकौं अपना ही जानै है अर किसी कारणतैं कोऊ ठिगस्यौं अनुरागरूप प्रवर्त्तै है, कोई ठिगस्यौं लडिकरि उदासीन भया आहारादिकका त्यागी होइ है। तैसैं अनादितैं सर्व जीव संसार विषैं प्राप्त हैं, तहां कर्मनिकौं अपने मानै हैं। बहुरि कोई जीव किसी निमित्तस्यौं जीवका अर कर्मका यथार्थ ज्ञान होनैतैं कर्मनिस्यौं उदासीन भया तिनिकौं परजाननें लगा, तिनस्यौं संबंध छुडाया चाहै है बाह्य जैसा निमित्त है तैसैं वर्त्तै है। ऐसैं जो ज्ञानाभ्यासतैं उदासीनता होइ सोई कार्यकारी है। बहुरि कोई जीव तिन कर्मनिकौं अपने जानै हैं, अर किसी कारणतैं कोई कर्मस्यौं अनुराग रूप प्रवर्तै हैं, कोई अशुभ कर्मस्यौं दुःखका कारण जानि उदासीन भया विषयादिकका त्यागी हो है। ऐसैं ज्ञानविना जो उदासीनता होइ सो पुण्यफलकी दाता है, मोक्ष कार्यकौं न साधै है। तातैं उदासीनताविषैं भी ज्ञानाभ्यास ही प्रधान है। याही प्रकार अन्य भी शुभकार्यनिविषैं ज्ञानाभ्यास ही प्रधान जानना। देखो ! महामुनीनिकैं भी ध्यान अध्ययन दोय ही कार्य मुख्य हैं। तातैं शास्त्र अध्ययनतैं जीव कर्मका स्वरूप जानि स्वरूपध्यान करना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria; Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि इहां कोऊ तर्क करै कि--कोई जीव शास्त्र अध्ययन तौ बहुत करै है अर विषयादिकका त्यागी न हो है ताकैं शास्त्र अध्ययन कार्यकारी है कि नाहीं ? जो है ! तौ महंत पुरुष काहेकौं विषयादिक तजैं, अर नाहीं ! तौ ज्ञानाभ्यासका महिमा कहा रह्या ? ताका समाधान--शास्त्राभ्यासी दोय प्रकार हैं एक लोभार्थी एक धर्मार्थी। तहां जो अंतरंग अनुराग विना ख्याति पूजा लाभादिकके अर्थि शास्त्राभ्यास करै सो लोभार्थी है, सो विषयादिकका त्याग नाही करै है। अथवा ख्याति पूजा लाभादिकके अर्थि विषयादिकका त्याग भी करै है तौ भी ताका शास्त्राभ्यास कार्यकारी नाहीं । बहुरि जो अंतरंग अनुरागतैं आत्महितके अर्थि शास्त्राभ्यास करै है सो धर्मार्थी है। सो प्रथम तौ जैन शास्त्र ऐसे हैं जिनका धर्मार्थी होइ अभ्यास करै सो विषयादिकका त्याग करै ही करै। ताकैं तौ ज्ञानाभ्यास कार्यकारी है ही । बहुरि कदाचित् पूर्वकर्मका उदयकी प्रबलतातैं न्यायरूप विषयादिकका त्याग न बनै है तौ भी ताकैं सम्यग्दर्शन ज्ञानके होनेतैं ज्ञानाभ्यास कार्यकारी हो है। जैसैं असंयत गुणस्थानविषैं विषयादिकका त्यागविना भी मोक्षमार्गपना संभवै है । इहां प्रश्न जो धर्मार्थी होइ, जैन शास्त्र अभ्यासै, ताकैं विषयादिकका त्याग न होइ सो यहु तौ बनै नाहीं। जातैं विषयादिकका सेवन परिणामनितैं हो है, परिणाम स्वाधीन हैं। तहां समाधान--परिणाम ही दोय प्रकार है । एक बुद्धिपूर्वक, एक अबुद्धिपूर्वक । तहां अपने अभिप्रायके अनुसारि होइ सो बुद्धिपूर्वक । अर दैवनिमित्ततैं अपने अभिप्रायतैं अन्यथा होइ सो अबुद्धिपूर्वक। जैसैं सामायिक करनेतैं धर्मात्माका अभिप्राय ऐसा है कि--मैं मेरे परिणाम शुभरूप राखौं। तहां जो शुभपरिणाम ही होइ सो तौ बुद्धिपूर्वक। कर्मोदयतैं स्वयमेव अशुभ परिणाम होइ सो अबुद्धिपूर्वक जानने । तैसैं धर्मार्थी होइ जो जैन शास्त्र अभ्यासै है ताका अभिप्राय तौ विषयादिकका त्यागरूप वीतराग भावका ही होइ, इहां वीतराग भाव होइ तौ बुद्धिपूर्वक है। अर चारित्रमोहके उदयतैं सराग भाव होइ तौ अबुद्धिपूर्वक है । तातैं विनावश जे सरागभाव हो हैं तिन करि ताकैं विषयादिककी प्रवृत्ति देखिये है जातैं वाह्य प्रवृत्तिका कारण परिणाम है । इहां तर्क--जो ऐसैं हैं तो हम भी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषयादिक सेवेंगे अर कहेंगे--हमारे उदयाधीन कार्य हो है। ताकौं कहिये है-रे मूर्ख ! किछू कहनेतैं तौ होता नाहीं ! सिद्धि तौ अभिप्रायके अनुसार है तातैं जैनशास्त्रके अभ्यासतैं अपना अभिप्रायकौं सम्यक् रूप करना। अर अंतरंगविषैं विषयादिक सेवनका अभिप्राय होतैं तौ धर्मार्थी नाम पावै है नाहीं। ऐसैं चरणानुयोगके पक्षपातीकौं इस शास्त्रका अभ्यासविषैं सन्मुख कीया।

अब द्रव्यानुयोगका पक्षपाती कहै है कि इस शास्त्रविषैं जीवके गुणस्थानादिक रूप विशेष अर कर्मके विशेष वर्णन कीए, तिनकौं जानैं अनेक विकल्प तरंग उठैं अर किछू सिद्धि नाहीं। तातैं अपने शुद्धस्वरूपकौं अनुभवना ! वा अपना अर परका भेदविज्ञान करना। इतना ही कार्यकारी है अथवा इनके उपदेशक जे अध्यात्मशास्त्र, तिनकाही अभ्यास करना योग्य है। ताकौं कहिए है–

हे सूक्ष्माभासबुद्धी ! तैं कह्या सो सत्य, परंतु अपनी अवस्था देखनी। जो स्वरूपानुभवविषैं वा भेदविज्ञानविषैं उपयोग निरंतर रहै है तौ काहेकौं अन्य विकल्प करने। तहां ही स्वरूपानंदसुधारसका स्वादी होइ संतुष्ट होना। परंतु नीचली अवस्थाविषैं तहां निरंतर उपयोग रहै नाहीं, उपयोग अनेक अवलंबनिकौं चाहै है। तातैं जिसकाल तहां उपयोग न लागै तब गुणस्थानादि विशेष जाननेका अभ्यास करना। बहुरि तैं कह्या कि-अध्यात्मशास्त्रनिकाही अभ्यास करना सो युक्त ही है। परंतु तहां भेदविज्ञान करनेके अर्थि स्वपरका सामान्यपनैं स्वरूपनिरूपण है। अर विशेष ज्ञान विना सामान्यका जानना स्पष्ट होइ नाहीं। तातैं जीवके अर कर्मके विशेष नीकैं जानैं ही स्वपरका जानना स्पष्ट होहै। तिस विशेष जाननेकौं इस शास्त्रका अभ्यास करना। जातैं सामान्य शास्त्रतैं विशेष शास्त्र बलवान है। सो ही कह्या है–"सामान्यशास्त्रतो नूनं विशेषो बलवान् भवेत्।" इहां कहै हैं कि-अध्यात्मशास्त्रनिविषैं तौ गुणस्थानादि विशेषनिकरि रहित शुद्धस्वरूपका अनुभवना उपादेय कह्या है। इहां गुणस्थानादिसहित जीवका वर्णन है। तातैं अध्यात्मशास्त्र अर इस शास्त्रविषैं तौ विरुद्ध भासै है सो कैसैं हैं ? ताकौं कहिये है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नय दोय प्रकार है-एक निश्चय, एक व्यवहार। तहां निश्चयनयकरि जीवका स्वरूप गुणस्थानादि विशेष रहित अभेदवस्तु मात्र ही है। अर व्यवहारनयकरि गुणस्थानादि विशेषसंयुक्त अनेक प्रकार है। तहां जे जीव सर्वोत्कृष्ट अभेद एक स्वभावकौं अनुभवै हैं तिनकौं तौ तहां शुद्ध उपदेशरूप जो शुद्धनिश्चय सो ही कार्यकारी है। बहुरि जे स्वानुभव दशाकौं न प्राप्त भए, वा स्वानुभवदशातैं छूटि सविकल्पदशाकौं प्राप्त भए ऐसे अनुत्कृष्ट जो अशुद्ध स्वभाव, तिहिविषैं तिष्ठते जीव तिनकौं व्यवहारनय प्रयोजनवान है। सोई आत्मख्याति अध्यात्म-शास्त्र विषैं कह्या है—

सुद्धो सुद्धाएसो णादव्वो परमभावदरसीहिं।
ववहारदेसिदो पुण जे दु अपरमे ट्ठिदा भावे॥ १४ समयसार

इस सूत्रका व्याख्यानका अर्थ विचार देखना। बहुरि सुनि! तेरे परिणाम स्वरूपानुभव दशाविषैं तौ प्रवर्त्तैं नाहीं। अर विकल्प जानि गुणस्थानादि भेदनिका विचार न करैगा तौ तू इतो भ्रष्ट ततो भ्रष्ट होय अशुभोपयोग ही विषैं प्रवर्त्तैगा तहां तेरा बुरा होयगा। बहुरि सुनि! सामान्यपनैं तौ वेदांत आदि शास्त्राभासनिविषैं भी जीवका स्वरूप शुद्ध कहे हैं, तहां विशेष जानैं विना यथार्थ अयथार्थका निश्चय कैसैं होय? तातैं गुणस्थानादि विशेष जानैं जीवकी शुद्ध अशुद्ध मिश्र अवस्थाका ज्ञान होइ, तब निर्णयकरि यथार्थका अंगीकार करै। बहुरि सुनि! जीवका गुण ज्ञान है, सो विशेष जानैं आत्मगुण प्रकट होइ, अपना श्रद्धान भी दृढ होय। जैसैं सम्यक्त्व है, सो केवल ज्ञान भए परमावगाढ नाम पावै है तातैं विशेष जानना।

बहुरि वह कहै है-तुम कह्या सो सत्य, परंतु करणानुयोगतैं विशेष जानैं भी द्रव्यलिंगी मुनि अध्यात्मश्रद्धान विना संसारी ही रहै। अर अध्यात्म अनुसारि तिर्यंचादिककैं स्तोक श्रद्धानतैं भी सम्यक्त्व हो है। वा तुषमाष भिन्न इतनाही श्रद्धानतैं शिवभूति मुनि मुक्त भया। तातैं हमारी तौ बुद्धितैं विशेष विकल्पनिका साधन होता नाहीं। प्रयोजनमात्र अध्यात्म अभ्यास करैंगे। याकौं कहिये है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो द्रव्यलिंगी जैसैं करणानुयोगतैं विशेष जानै है तैसैं अध्यात्मशास्त्रनिका भी ज्ञान वाकैं होय। परंतु मिथ्यात्वके उदयतैं अयथार्थ साधन करै तौ शास्त्र कहा करै? शास्त्रनिविषैं तौ परस्पर विरुद्ध है नाहीं। कैसैं? सो कहिये है-करणानुयोग शास्त्रनिविषैं भी अर अध्यात्मशास्त्रनिविषैं भी रागादिक भाव आत्माकै कर्मनिमित्ततैं उपजे कहे। द्रव्यलिंगी तिनका आप कर्त्ता हूवा प्रवर्त्तै है। बहुरि शरीराश्रित सर्व शुभाशुभ क्रिया पुद्गलमय कहीं। द्रव्यलिंगी अपनी जानि तिनविषैं त्यजन ग्रहण बुद्धि करै है। बहुरि सर्व ही शुभाशुभ भाव आस्रव बंधके कारण कहे। द्रव्यलिंगी शुभ क्रियाकौं संवर निर्जरा मोक्षका कारण मानै है। बहुरि शुद्धभाव संवर निर्जरा मोक्षका कारण कह्या ताकौं द्रव्यलिंगी पहिचानै ही नाहीं। बहुरि शुद्धात्मस्वरूप मोक्ष कह्या, ताका द्रव्यलिंगीकै यथार्थ ज्ञान नाहीं, ऐसैं अन्यथा साधन करै तौ ताकौं शास्त्रनिका कहा दोष है? बहुरि तैं तिर्यंचादिककैं सामान्य श्रद्धानतैं कार्यसिद्धि कही, सो उनकैं भी अपना क्षयोपशम अनुसारि विशेषका जानना हो है। अथवा पूर्व पर्यायनिविषैं विशेषका अभ्यास कीया था तिस संस्कारके बलतैं हो है। बहुरि जैसैं काहूने कहीं गड्या धन पाया, सो 'हम भी ऐसैं ही पावैंगे' ऐसा मानि सबहीकौं व्यापारादिकका त्यजन न करना। तैसैं काहूनैं स्तोक श्रद्धानतैं ही कार्यसिद्धि कीया तो हम भी ऐसैं ही कार्यकी सिद्धि करैंगे' ऐसैं मानि सर्वहीकौं विशेष अभ्यासका त्यजन करना योग्य नाहीं जातैं यहु राजमार्ग नाहीं। राजमार्ग तौ यहु ही है-'नानाप्रकार विशेष जानि तत्त्वनिका निर्णय भए ही कार्यसिद्धि हो है॥ बहुरि तैं कह्या-मेरी बुद्धितैं विकल्पसाधन होता नाहीं, सो जेता बनैं तेता ही अभ्यास करि। बहुरि तू पापकार्यविषैं तौ प्रवीण, अर इस अभ्यासविषैं कहै-मेरी बुद्धि नाही।' सो यहु तौ पापीका लक्षण है। ऐसैं द्रव्यानुयोगका पक्षपातीकौं इस शास्त्रका अभ्यासविषैं सन्मुख कीया॥

अब अन्य विपरीत विचारवालोंकौं समझाइए है। तहां शब्दशास्त्रादिकका पक्षपाती बोलै है कि-व्याकरण न्याय कोश छंद अलंकार काव्यादिक ग्रंथनिका अभ्यास करिए तो अनेक ग्रंथनिका स्वयमेव ज्ञान होय, वा पंडितपना प्रगट होय। अर इस शास्त्रके अभ्यासतैं तो एक याहीका ज्ञान होय वा पंडितपना विशेष प्रकट न होय तातैं शब्द शास्त्रादिकका अभ्यास करना। ताकौं कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जो तू लोकविषैं ही पंडित कहाया चाहै है तौ तू तिनहींका अभ्यास कीया करि। अर जो अपना कार्य कीया चाहै है तो ऐसें ग्रंथनिका अभ्यास करना ही योग्य है। बहुरि जैनी तौ जीवादिक तत्त्वनिके निरूपक जे जैनग्रंथ तिनहीका अभ्यास भए पंडित मानैंगे। बहुरि वह कहै है कि-मैं जैन ग्रंथनिका विशेष ज्ञान होनेंहीके अर्थि व्याकरणादिकनिका अभ्यास करौं हौं ताकौं कहिए है,ऐसें है तो भलैं ही है। परंतु इतना है जैसें स्याना खितहर अपनी शक्ति अनुसारि हलादिकतैं थोडा बहुत खेतकौं संवारि समयविषैं बीज बोवै तौ ताकौं फलकी प्राप्ति होइ। तैसें तू भी जो अपनी शक्ति अनुसारि व्याकरणादिकका अभ्यासतैं थारी बहुत बुद्धिकौं संवारि यावत् मनुष्य पर्याय वा इंद्रियनिकी प्रबलता इत्यादिक प्रवर्त्तै हैं तावत् समयविषैं तत्त्वज्ञानकौं कारण जे शास्त्र, तिनिका अभ्याम करेगा तौ तुझकौं सम्यक्त्वादिकी प्राप्ति होयगी। बहुरि जैसें अयाना खितहड हलादिकतैं खेतकौं संवारता संवारता ही समयकौं खोवै, तौ ताकौं फलप्राप्ति होनेकी नाहीं, वृथा ही खेदखिन्न भया। तैसें तू भी जो व्याकरणादिकतैं बुद्धिकौं संवारता संवारता ही समय खोवेगा तौ सम्यक्त्वादिककी प्राप्ति होनेकी नाहीं। वृथा ही खेदखिन्न भया। बहुरि इस कालविषैं आयु बुद्धि आदि स्तोक हैं तातैं प्रयोजनमात्र अभ्यास करना, शास्त्रनिका तौ पार है नाहीं। बहुरि सुनि-केई जीव व्याकरणादिकका ज्ञानविना भी तत्त्वोपदेशरूप भाषा शास्त्रनिकरि, वा उपदेश सुननेकरि, वा सीखनेकरि तत्त्वज्ञानी होते देखिये है। अर केई जीव केवल व्याकरणादिकका ही अभ्यासविषैं जन्म गमावै हैं अर तत्त्वज्ञानी न होते देखिये है। बहुरि सुनि—व्याकरणादिकका अभ्यास करतैं पुण्य न उपजै है। धर्मार्थी होइ तिनका अभ्यास करै तौ किंचित् पुण्य उपजै। बहुरि तत्त्वोपदेशक शास्त्रनिका अभ्यासतैं सातिशय महत् पुण्य उपजै है। तातैं भला यह है-ऐसे तत्त्वोपदेशक शास्त्रनिका अभ्यास करना। ऐसैं शब्दशास्त्रादिकका पक्षपातीकौं सन्मुख कीया।

बहुरि अर्थका पक्षपाती कहै है कि-इस शास्त्रका अभ्यास कीए कहा है? सर्व कार्य धनतैं बनै हैं। धन करि ही प्रभावना आदि धर्म निपजै हैं। धनवानके निकट अनेक पंडित आय प्राप्त हो हैं। अन्य भी सर्वकार्यसिद्धि होइ। तातैं धन उपजावनेका उद्यम करना। ताकौं कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

रे पापी ! धन किछू अपना उपजाया तौ न हो है। भाग्यतैं हो है सो ग्रंथाभ्यास आदि धर्म साधनतैं जो पुण्य निपजै, ताहीका नाम भाग्य है। बहुरि धन होना है तौ शास्त्राभ्यास कीए कैसैं न होगा। अर न होना है तौ शास्त्राभ्यास न कीए कैसैं होगा ? तातैं धनका होना, न होना तौ उदयाधीन है। शास्त्राभ्यासविषैं काहेकौं शिथिल हूजै। बहुरि सुनि-धन है सो तौ विनाशीक है, भयसंयुक्त है, पापतैं निपजै है, नरकादिकका कारण है। अर यहु शास्त्राभ्यास रूप ज्ञानधन है सो अविनाशी है, भयरहित है, धर्मरूप है, स्वर्गमोक्षका कारण है। सो महंत पुरुष तौ धनादिककौं छोडि शास्त्राभ्यासविषैं लगै हैं सो तू पापी शास्त्राभ्यासकौं छुडाय धन उपजावनेकी बडाई करै है सो तू अनंतसंसारी है। बहुरि तैं कह्या-प्रभावना आदि धर्म भी धनहीतैं हो हैं ! सो प्रभावना आदि धर्म हैं सो किंचित् सावद्यक्रियासंयुक्त हैं। तिसतैं समस्त सावद्यरहित शास्त्राभ्यासरूप धर्म है सो प्रधान है। ऐसैं न होइ तौ गृहस्थ अवस्थामैं प्रभावना आदि धर्म साधने थे तिनिकौं छांडि संजमी होइ शास्त्राभ्यासविषैं काहेको लागै हैं। बहुरि शास्त्राभ्यासतैं प्रभावनादिक भी विशेष हो है। बहुरि तैं कह्या-धनवानके निकट पंडित भी आनि प्राप्त होंइ ! सो लोभी पंडित होंइ, अर अविवेकी धनवान होंइ तहां ऐसैं हो है। अर शास्त्राभ्यासवालौंकी तौ इंद्रादिक सेवा करै हैं। इहां भी बडे बडे महंत पुरुष दास होते देखिए है। तातैं शास्त्राभ्यास वालौंतैं धनवानकौं महंत मति जानै। बहुरि तैं कह्या-धनतैं सर्वकार्यसिद्धि हो है। सो धनतैं तौ इस लोकसंबंधी किछू विषयादिक कार्य ऐसा सिद्ध होइ जातैं बहुत कालपर्यंत नरकादि दुःख सहने होंइ। अर शास्त्राभ्यासतैं ऐसा कार्य सिद्ध हो है जातैं इहलोकविषैं अर परलोकविषैं अनेक सुखनिकी परंपरा पाइए। तातैं धन उपजावनेका विकल्प छोडि शास्त्राभ्यास करना। अर जो सर्वथा ऐसैं न बनैं तौ संतोष लिए धन उपजावनेका साधन करि शास्त्राभ्यासविषैं तत्पर रहना। ऐसैं अर्थ उपजावनेका पक्षपातीकौं सन्मुख कीया।

बहुरि कामभोगादिकका पक्षपाती बोलै है कि-शास्त्राभ्यास करनेविषैं सुख नाहीं, बडाई नाहीं। तातैं जिनकरि इहां ही सुख उपजै ऐसे जे स्त्रीसेवना, खाना, पहिरना, इत्यादि विषयसुख तिनका सेवन करिए अथवा जिनकरि इहां ही बडाई होइ ऐसे विवाहादिक कार्य करिए। ताकौं कहिए है—

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषयजनितैं जो सुख है सो दुःख ही है। जातैं विषय सुख है सो परनिमित्ततैं हो है। पहिले पीछैं तत्काल आकुलता लिए है, जाके नाश होनेके अनेक कारण पाइए है, आगामी नरकादि दुर्गतिकौं प्राप्त करण हारा है, ऐसा है तौ भी तेरा चाह्या मिलै नाहीं, पूर्व पुण्यतैं हो है तातैं विषम है। जैसैं खाजि करि पीडित पुरुष अपना अंगकौं कठोर वस्तुतैं खुजावै, तैसैं इंद्रियनिकरि पीडित जीव, तिनकी पीडा सही न जाय तब किंचिन्मात्र तिस पीडाके प्रतीकारसे भासैं ऐसे जे विषयसुख तिन विषैं झंपापात लेवै है, परमार्थरूप सुख है नाहीं। बहुरि शास्त्राभ्यास करतैं भया जो सम्यग्ज्ञान. ताकरि निपज्या आनंद, सो सांचा सुख है। जातैं सो सुख स्वाधीन है, आकुलतारहित है, काहूकरि नष्ट न हो है, मोक्षका कारण है विषम नाहीं। जैसैं खाजि न पीडै तब सहज ही सुखी होइ, तैसैं तहां इंद्रिय पीडनेकौं समर्थ न होइ तब सहज ही सुखकौं प्राप्त हो है। तातैं विषयसुख छोडि शास्त्राभ्यास करना। जो सर्वथा न छूटै तौ जेता बनै तेता छोडि शास्त्राभ्यासविषैं तत्पर रहना। बहुरि तैं विवाहादिक कार्यविषैं बडाई होनेकी कही सो केतेक दिन बडाई रहेगी। जाकै अर्थि महापापारंभ करि नरकादिविषैं बहुतकाल दुःख भोगना होइगा। अथवा तुझतैं भी तिनकार्यनिविषैं धन लगावनेवाले बहुत हैं तातैं विशेष बडाई भी होनेकी नाहीं। बहुरि शास्त्राभ्यासतैं ऐसी बडाई हो है, जाकी सर्वजन महिमा करैं, इंद्रादिक भी प्रशंसा करैं अर परंपरा स्वर्गमुक्तिका कारण। तातैं विवाहादिक कार्यनिका विकल्प छोडि शास्त्राभ्यासका उद्यम राखना। सर्वथा न छूटै तो बहुत विकल्प न करना। ऐसैं काम भोगादिकका पक्षपातीकौं शास्त्राभ्यास विषैं सन्मुख कीया।

या प्रकार अन्य जीव भी जे विपरीत विचारतैं इस ग्रंथ अभ्यासविषैं अरुचि प्रगट करैं तिनकौं यथार्थ विचारतैं इस शास्त्रके अभ्यासविषैं सन्मुख होना योग्य है।

इहां अन्यमती कहै हैं कि तुम अपने ही शास्त्र अभ्यास करनेकौं दृढ कीया हमारे मतविषैं नाना युक्ति आदि करि संयुक्त शास्त्र हैं तिनका भी अभ्यास क्यों न कराइए? ताकौं कहिए है—

तुमारे मतके शास्त्रनिविषैं आत्महितका उपदेश नाहीं। जातैं कहीं शृंगारका, कहीं युद्धका, कहीं कामसे-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वनादिका, कहीं हिंसादिका कथन है। सो ए तौ विनाही उपदेश सहज ही बनि रहे हैं, इनकौं तजैं हित होइ, ते तहां उलटे पोषे हैं तातैं तिनतैं हित कैसैं होइ ? तहां वह कहै है-ईश्वरनैं अैसैं लीलाकरी है, ताकौं गावै हैं, तिसतैं भला हो है। तहां कहिये हैं-जो ईश्वरकैं सहज सुख न होगा तब संसारीवत् लीलाकरि सुखी भया, जो वह सहज सुखी होता तौ काहेकौं विषयादि सेवन वा युद्धादिक करता ? जातैं मंदबुद्धि हू विना प्रयोजन किंचिन्मात्र भी कार्य न करै। तातैं जानिए है-वह ईश्वर हम सारिखा ही है। ताका जस गाएं कहा सिद्धि होइ ? बहुरि वह कहै है कि—हमारे शास्त्रनिविषैं वैराग्य त्याग अहिंसादिकका भी तौ उपदेश है। तहां कहिए है-सो उपदेश पूर्वापर विरोध लिए है। कहीं विषय पोषे हैं, कहीं निषेधे हैं, कहीं वैराग्य दिखाय पीछैं हिंसादिका करना पोष्या है तहां वातुलवचनवत् प्रमाण कहा ? बहुरि वह कहै है कि-वेदांत आदि शास्त्रनिविषैं तो तत्त्वहीका निरूपण है। तहां कहिए है-सो निरूपण प्रमाणकरि बाधित अयथार्थ है, ताका निराकरण जैनके न्यायशास्त्रनिविषैं कीया है, सो जानना। तातैं अन्यमतके शास्त्रनिका अभ्यास न करना। ऐसैं जीवनिकौं इस शास्त्रके अभ्यासविषैं सन्मुख कीया तिनकौं कहिए है—

सो हे भव्य हो ! शास्त्राभ्यासके अनेक अंग हैं। शब्द वा अर्थका वांचना, या सीखना, सिखावना, उपदेश देना, विचारना, सुनना, प्रश्नकरना, समाधान जानना, वारंवार चरचा करना, इत्यादि अनेक अंग हैं। तहां जैसे बनै तैसैं अभ्यास करना। जो सर्वशास्त्रका अभ्यास न बनै तौ इस शास्त्रविषैं सुगम वा दुर्गम अनेक अर्थनिका निरूपण है तहां जिसका बनै तिसहीका अभ्यास करना। परंतु अभ्यासविषैं आलसी न होना। देखो ! शास्त्राभ्यासका महिमा जाकौं होतैं परंपरा आत्मानुभव दशाकौं प्राप्त होइ। सो मोक्षमार्गरूप फल निपजै है सो तौ दूर ही तिष्ठौ, तत्काल ही इतने गुण हो हैं क्रोधादि कषायनिकी तौ मंदता हो है, पचइंद्रियनिकी विषयनिविषैं प्रवृत्ति रुकै है, अति चंचल मन भी एकाग्र हो है, हिंसादि पंच पाप न प्रवर्तैं हैं, स्तोक ज्ञान होतैं भी त्रिलोकके त्रिकाल संबंधी चराचर पदार्थनिका जानना हो है, हेयोपादेयकी पहिचान हो है, आत्मज्ञान सन्मुख हो है, अधिक अधिक ज्ञान

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

होतैं आनंद निपजै है, लोकविषैं महिमा यश विशेष हो है, अतिशय पुण्यका बंध हो है, इत्यादिक गुण शास्त्राभ्यास करतैं तत्काल ही प्रगट होइ हैं तातैं शास्त्राभ्यास अवश्य करना ॥ बहुरि हे भव्य हो ! शास्त्राभ्यास करनेका समय पावना महादुर्लभ है। काहे तैं ? सो कहिए है--

एकेंद्रियादि असंज्ञीपर्यंत जीवनिकैं तौ मन ही नाहीं, अर नारकी वेदनापीडित, तिर्यंच विवेकरहित, देव विषयासक्त, तातैं मनुष्यनिकैं अनेक सामिग्री मिल शास्त्राभ्यास होइ। सो मनुष्य पर्यायका पावनाही द्रव्य क्षेत्र काल भाव करि महादुर्लभ है। तहां द्रव्यकरि लोकविषैं मनुष्य जीव बहुत थोरे हैं, तुच्छ संख्यात मात्र ही हैं। अर अन्य जीवनिविषैं निगोदिया अनंत हैं, और जीव असंख्याते हैं। बहुरि क्षेत्रकरि मनुष्यनिका क्षेत्र बहुत स्तोक है, अढाई द्वीप मात्र ही है। अर अन्य जीवनिविषैं एकेंद्रियनिका सर्व लोक है, औरनिका केते इक राजू प्रमाण है। बहुरि कालकरि मनुष्य पर्यायविषैं उत्कृष्ट रहनेका काल स्तोक है, कर्मभूमि अपेक्षा पृथक्त्व कोटि पूर्व मात्र ही है। अर अन्य पर्यायनिविषैं उत्कृष्ट रहनेका काल एकेंद्रियविषैं तो असंख्यात पुद्गल परिवर्तन मात्र, अर औरनिविषैं संख्यातपल्य मात्र है। बहुरि भावकरि तीव्र शुभाशुभपना करि रहित ऐसे मनुष्य पर्यायकौं कारण परिणाम होने अति दुर्लभ हैं, अन्य पर्यायकौं कारण अशुभरूप वा शुभरूप परिणाम होने सुलभ हैं। ऐसैं शास्त्राभ्यासका कारण जो पर्याय कर्मभूमि या मनुष्यपर्याय ताका दुर्लभपना जानना। तहां सुवास उच्चकुल, पूर्ण आयु, इंद्रियनिकी सामर्थ्य, नीरोगपना, सुसंगति, धर्मरूप अभिप्राय, बुद्धिकी प्रबलता इत्यादिक पावना उत्तरोत्तर महादुर्लभ है। सो प्रत्यक्ष देखिए है। अर इतना सामिग्री मिले विना ग्रंथाभ्यास बनै नाहीं। सो तुम यहु भाग्यकरि अवसर पाया है तातैं तुमकौं हठकरि भी तुमारे हित होनेके अर्थि प्रेरै हैं। जैसैं बनै तैसैं इस शास्त्रका अभ्यास करौ, बहुरि अन्य जीवनिकौं जैसैं बनै तैसैं शास्त्राभ्यास करावौ, बहुरि जे जीव शास्त्राभ्यास करते होंइ तिनकी अनुमोदना करहु, बहुरि पुस्तक लिखावना, वा पढने, पढावनेवालोंकी स्थिरता करनी, इत्यादिक शास्त्राभ्यासकौं बाह्य कारण तिनका साधन करना। जातैं इनकरि भी परंपरा कार्यसिद्धि हो है वा महत्पुण्य उपजै है। ऐसैं इस शास्त्रके अभ्यासादिविषैं जीवनिकौं रुचिवान कीया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि जो यहु सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीका करिए है तिहिंविषैं संस्कृत टीकातैं कहीं अर्थ प्रगट करनेके अर्थि, वा कहीं प्रसंगरूप, वा कहीं अन्य ग्रंथ अनुसारि लेइ अधिक भी कथन करियेगा । अर कहीं अर्थ स्पष्ट न प्रतिभासैगा, तहां न्यून कथन होइगा ऐसा जानना । सो इस भाषा टीकाविषैं मुख्यपनैं जो जो व्याख्यान है, ताकौं अनुक्रमतैं संक्षेपताकरि कहिए है । जातैं याके जानैं अभ्यास करनेवालौंकैं सामान्यपनैं इतना तौ जानना होइ जो या विषैं ऐसा कथन है । अर क्रम जानैं जिस व्याख्यानकौं जानना होइ, ताकौं तहां शीघ्र अवलोकि अभ्यास करैं, वा जिननैं अभ्यास कीया होइ ते याकौं देखि अर्थका स्मरण करैं, सो सर्व अर्थकी सूचनिका कीए तौ विस्तार होई, कथन आगैं है ही, तातैं मुख्य कथनकी सूचनिका क्रमतैं करिए है—

तहां इस भाषा टीकाविषैं सूचनिका कर्माष्टक आदि गणितका स्वरूप दिखाय संस्कृत टीकाके अनुसरि मंगलाचरणादिकका स्वरूप कहि मूल गाथानिकी टीका कीजिएगा । तहां इस शास्त्रविषैं दोय महा अधिकार हैं-एक जीवकांड, एक कर्मकांड । तहां जीवकांडविषैं वाईस अधिकार हैं । तिनिविषैं प्रथम गुणस्थानाधिकार है । तिसविषैं गुणस्थाननिका नाम, वा सामान्य लक्षण कहि, तिनविषैं सम्यक्त्व चारित्र अपेक्षा औदयिकादि संभवते भावनिका निरूपण करि क्रमतैं मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननिका वर्णन है । तहां मिथ्यादृष्टिविषैं पंच मिथ्यात्वादिका, सासादनविषैं ताके काल वा स्वरूपका, मिश्रविषैं ताके स्वरूपका वा मरण न होनेका, असंयतविषैं वेदकादि सम्यक्त्वनिका वा ताके स्वरूपादिकका, देशसंयतविषैं ताके स्वरूपका वर्णन है । बहुरि प्रमत्तका कथन विषैं पंद्रह वा असी वा साढासैंतीस हजार प्रमाद भेदनिका अर तहां प्रसंग पाइ संख्या, प्रस्तार, परिवर्त्तन, नष्ट, समुद्दिष्ट करि; वा गूढ यंत्र करि अक्षसंचारका विधानका कथन है । जहां भेदनिकौं पलटि पलटि परस्पर लगाइए तहां अक्षसंचार विधान हो है । बहुरि अप्रमत्तका कथनविषैं स्वस्थान अर सातिशय दोय भेद कहि सातिशय अप्रमत्तकैं अधःकरण हो है । ताके स्वरूपका वा काल वा परिणाम वा समयसमयसंबंधी परिणाम वा एक एक समयविषैं अनुकृष्टि विधान, वा तहां संभवते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

च्यारि आवश्यक इत्यादिका विशेष वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ श्रेणी व्यवहार रूप गणितका कथन है। तिसविषैं सर्वधन, उत्तरधन, मुख, भूमि, चय, गच्छ इत्यादि संज्ञानिका स्वरूप वा प्रमाण लावनेकौं कारण सूत्रनिका वर्णन है। बहुरि अपूर्वकरणका कथनविषैं ताके काल, स्वरूप, परिणाम, समयसंबंधी परिणामादिकका कथन है। बहुरि अनिवृत्तिकरणका कथनविषैं ताके स्वरूपादिकका कथन है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायका कथन विषैं प्रसंग पाइ कर्मप्रकृतिनिके अनुभाग अपेक्षा अविभागप्रतिच्छेद, वर्ग, वर्गणा, स्पर्द्धक, गुणहानि नानागुणहानिनिका अर पूर्वस्पर्द्धक, अपूर्वस्पर्धक वादरकृष्टि, सूक्ष्मकृष्टिका वर्णन है। इत्यादि विशेष कथन है सो जानना। बहुरि उपशांतकषाय, क्षीणकषायका कथनविषैं तिनके दृष्टांतपूर्वक स्वरूपका, सयोगी जिनका कथनविषैं नवकेवललब्धि आदिकका, अयोगीविषैं अलेश्यपना आदिकका कथन है। बहुरि बारह गुणस्थाननिविषैं गुणश्रेणी निर्जराका कथन है। तहां द्रव्यकौं अपकर्षणकरि उपरितन स्थिति, अर गुणश्रेणी, आयाम अर उदयावलीविषैं जैसैं दीजिए है ताका वा गुणश्रेणी आयामके प्रमाणका निरूपण है तहां प्रसंग पाइ अंतर्मुहूर्त्तके भेदनिका वर्णन है। बहुरि सिद्धनिका वर्णन है॥

बहुरि दूसरा जीवसमास अधिकारविषैं जीवसमासका अर्थ वा होनेका विधान कहि चौदह, गुणतीस, वा सत्तावन, वा च्यारिसै छह जीवसमासनिका वर्णन है। बहुरि च्यारि प्रकारि जीवसमास कहि तहां स्थानभेदविषैं एक आदि उगणीस पर्यंत जीवस्थाननिका, वा इनहीके पर्याप्तादि भेदकरि स्थाननिका वा अठ्याणवे वा च्यारिसै छह जीवसमासनिका कथन है। बहुरि योनिभेदविषैं शंखावर्तादि तीन प्रकार योनिका, अर सन्मूर्च्छनादि जन्मभेद पूर्वक नवप्रकार योनिनिके स्वरूप वा स्वामित्वका अर चौरासी लाख योनिनिका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ च्यारि गतिनिविषैं सन्मूर्छनादि जन्म वा पुरुषादि वेद संभवैं तिनका निरूपण है। बहुरि अवगाहना भेदविषैं सूक्ष्मनिगोद अपर्याप्त आदि जीवनिकी जघन्य उत्कृष्ट शरीरकी अवगाहनाका विशेष वर्णन है। तहां एकेंद्रियादिककी उत्कृष्ट अवगाहना कहनेका प्रसंग पाइ गोलक्षेत्र संखक्षेत्र आयत चतुरस्रक्षेत्रका क्षेत्रफल करनेका, अर

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अवगाहनाविषैं प्रदेशनिकी वृद्धि जाननेके अर्थि अनंतभाग आदि चतुःस्थानपतित वृद्धिका, अर इस प्रसंगतैं दृष्टांतपूर्वक षट्स्थानपतित आदि वृद्धि हानिका, वा सर्वअवगाहनाभेद जाननेके अर्थि मत्स्यरचनाका वर्णन है॥ बहुरि कुलभेदविषैं एकसौ साढा सित्याणवै लाख कोडि कुलनिका वर्णन है।

बहुरि तीसरा पर्याप्त नामा अधिकारविषैं पहलैं मानका वर्णन है। तहां लौकिक अलौकिक मानके भेद कहि, बहुरि द्रव्यमानके दोय भेदनिविषैं, संख्यामानविषैं संख्यात असंख्यात अनंतके इकईस भेदनिका वर्णन है। बहुरि संख्याके विशेष रूप चौदह धारानिका कथन है। तिनिविषैं द्विरूपवर्गधारा, द्विरूपघनधारा, द्विरूपघनाघनधारानिके स्थाननिविषैं जे पाइए हैं तिनका विशेष वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ पणट्ठी बादाल एकट्ठीका प्रमाण, अर वर्गशलाका अर्धच्छेदनिका स्वरूप, वा अविभागप्रतिच्छेदका स्वरूप, वा उक्तंच गाथानिकरि अर्धछेदादिकके प्रमाण होनेका नियम, वा अग्निकायिक जीवनिका प्रमाण ल्यावनेका विधान इत्यादिकनिका वर्णन है। बहुरि दूसरा उपमामानके पल्य आदि आठभेदनिका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ व्यवहारपल्यके रोमनिकी संख्या ल्यावनेकौं परमाणूतैं लगाय अंगुलपर्यंत अनुक्रमका, अर तीनप्रकार अंगुलका, अर जिस जिस अंगुलकरि जाका प्रमाण वर्णिए है ताका, अर गोलगर्तके क्षेत्रफल ल्यावनेका वर्णन है। अर उद्धारपल्यकरि द्वीपसमुद्रनिकी संख्या ल्याइए है, अद्धापल्यकरि आयु आदि वर्णिए है ताका वर्णन है। अर सागरकी सार्थक संज्ञा जाननेकौं लवण समुद्रका क्षेत्रफलकौं आदि देकर वर्णन है। अर सूच्यंगुल, प्रतरांगुल, घनांगुल, जगत्श्रेणी, जगत्प्रतर, जगत् घन तिनका प्रमाण ल्यावनेकौं विरलन आदि विधानका वर्णन है। बहुरि पीछैं पल्यादिककी वर्गशलाका अरु अर्धच्छेदनिका प्रमाणवर्णन है। तिनिके प्रमाण जाननेकौं उक्तं च गाथा रूप करण सूत्रनिका कथन है। बहुरि पीछैं पर्याप्ति प्ररूपणा है। तहां पर्याप्त अपर्याप्तके लक्षणका, अर छह पर्याप्तिनिके नामका स्वरूपका, प्रारंभसंपूर्ण होनेके कालका, स्वामित्वका वर्णन है। बहुरि लब्धिअपर्याप्तका लक्षण, वा ताके निरंतर क्षुद्रभवनिके प्रमाणादिकका वर्णन है। तहां ही प्रसंग पाइ प्रमाणफल इच्छारूप त्रैराशिक गणितका कथन है। बहुरि सयोगी जि-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नकैं अपर्याप्तपना संभवनेका, अर लब्धि अपर्याप्त, निर्वृति अपर्याप्त, पर्याप्तके संभवते गुणस्थाननिका वर्णन है ॥

बहुरि चौथा प्राणाधिकारविषैं प्राणनिका लक्षण, अर भेद, अर कारण अर स्वामित्वका कथन है ।

बहुरि पांचमा संज्ञा अधिकारविषैं च्यारि संज्ञानिका स्वरूप, अर भेद, अर कारण, अर स्वामित्वका वर्णन है ।

बहुरि छट्ठा मार्गणा महाअधिकारविषैं मार्गणाका निरुक्तिका, अर चौदह भेदनिका, अर सांतरमार्गणाके अंतरालका, अर प्रसंग पाइ तत्त्वार्थसूत्रटीकाके अनुसारि नानाजीव एकजीव अपेक्षा गुणस्थाननिविषैं, अरगुणस्थान अपेक्षालिऐं मार्गणानिविषैं कालका, अर अंतरका कथनकरि छट्ठा गति मार्गणा अधिकार है । तहां गतिके लक्षणका, अर भेदनिका अर च्यारि भेदनिके निरुक्तिलिए लक्षणनिका, अर पांच प्रकार तिर्यंच, च्यारि प्रकार मनुष्यनिका अर सिद्धनिका वर्णन है । बहुरि सामान्य नारकी, जुदे जुदे सात पृथ्वीनिके नारकी, अर पांचप्रकार तिर्यंच, च्यारि प्रकार मनुष्य, अर व्यंतर ज्योतिषी भवनवासी सौधर्मादिकके देव, सामान्य देवराशि इन जीवनिकी संख्याका वर्णन है । तहां पर्याप्त मनुष्यनिकी संख्या कहनेका प्रसंगपाइ "कटपयपुरस्थवर्णै" इत्यादि सूत्रकरि ककारादि अक्षररूप अंक वा बिंदीकी संख्याका वर्णन है ।

बहुरि सातमा इंद्रियमार्गणा अधिकारविषैं इंद्रियनिका निरुक्तिलिए लक्षणका, अर लब्धि उपयोगरूप भावेंद्रियका, अर वाह्य अभ्यंतर भेद लिए निवृत्ति उपकरणरूप द्रव्येंद्रियका, अर इंद्रियनिके स्वामीका, अर तिनके विषयभूत क्षेत्रका, अर तहां प्रसंग पाइ सूर्यके चारक्षेत्रादिकका, अर इंद्रियनिके आकारका, वा अवगाहनाका, अर अतींद्रिय जीवनिका वर्णन है । बहुरि एकेंद्रियादिकनिका उदाहरणरूप नाम कहि, तिनकी सामान्य संख्याका वर्णनकरि, विशेषपने सामान्य एकेंद्री, अर सूक्ष्म वादर एकेंद्री, बहुरि सामान्य त्रस, अर वेइंद्रिय तेइंद्रिय, चोइंद्रिय, पंचेंद्रिय इन जीवनिका प्रमाण, अर इनविषैं पर्याप्त अपर्याप्त जीवनिका प्रमाण वर्णन है ॥

बहुरि आठमा कायमार्गणा अधिकारविषैं कायके लक्षणका वा भेदनिका वर्णन है । बहुरि पंचस्थावरनिके नाम, अर काय, कायिक जीवरूप भेद, अर वादर सूक्ष्मपनेका लक्षणादि, अर शरीरकी अवगाहनाका वर्णन है ।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि वनस्पतीके साधारण प्रत्येक भेदनिका, प्रत्येकके सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित भेदनिका, अर तिनकी अवगाहनाका अर एक स्कंधविषैं तिनके शरीरनिके प्रमाणका, अर योनीभूत जीवनिविषैं जीव उपजनेका, वा तहां सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित होनेके कालका, अर प्रत्येक वनस्पतीविषैं सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित जाननेकौं तिनके लक्षणका, बहुरि साधारण वनस्पती निगोदरूप तहां जीवनिके उपजने, पर्याप्ति धरने, मरनेके विधानका, अर निगोद शरीरकी उत्कृष्ट स्थितिका, अर स्कंध, अंडर पुलवी आवास देह जीव इनके लक्षण प्रमाणादिका, अर नित्यनिगोदादिके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि त्रसजीवनिका अर तिनके क्षेत्रका वर्णन है। बहुरि वनस्पतीवत् औरनिके शरीरविषैं सप्रतिष्ठित अप्रतिष्ठितपनेका, अर स्थावर त्रस जीवनिके आकारका, अर कायसहित कायरहित जीवनिका वर्णन है। बहुरि अग्नि, पृथ्वी, अप्, वात, प्रतिष्ठित अप्रतिष्ठित प्रत्येक साधारण वनस्पती जीवनिकी, अर तिनविषैं सूक्ष्म वादर जीवनिकी, अर तिनविषैं भी पर्याप्त अपर्याप्त जीवनिकी संख्याका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ पृथ्वी आदि जीवनिकी उत्कृष्ट आयुका वर्णन है। बहुरि त्रस जीवनिकी, अर तिनविषैं पर्याप्त अपर्याप्त जीवनिकी संख्याका वर्णन है। बहुरि वादर अग्निकायिक आदिकी संख्याका विशेष निर्णय करनेके अर्थि तिनके अर्धच्छेदादिकका, अर प्रसंग पाइ " दिण्णछेदेणवहिद " इत्यादिक करणसूत्रका वर्णन है।

बहुरि नवमां योगमार्गणा अधिकारविषैं योगके सामान्य लक्षणका अर सत्य आदि च्यारि च्यारि प्रकार मन वचन योगका वर्णन है। तहां सत्यवचनका विशेष जाननेकौं दश प्रकार सत्यका, अर अनुभय वचनका विशेष जाननेकौं आमंत्रणा आदि भाषानिका, अर सत्यादिक भेद होनेके कारणका, अर केवलीके मन वचन योग संभवनेका, अर द्रव्यमनके आकारका इत्यादि विशेष वर्णन है। बहुरि काययोगके सातभेदनिका वर्णन है। तहां औदारिकादिकनिके निरुक्तिपूर्वक लक्षणका, अर मिश्रयोग होनेके विधानका, अर आहारक शरीर होनेके विशेषका, अर कार्माणयोगके कालका वर्णन है। बहुरि युगपत् योगनिकी प्रवृत्ति होनेका विधान वर्णन है। अर योगरहित आत्माका वर्णन है। बहुरि पंच शरीरनिविषैं कर्म नोकर्म भेदनिका, अर पंच शरीरनिकी

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्गणा वाँ समय प्रबद्धविषैं परमाणूनिका प्रमाण वा क्रमतैं सूक्ष्मपना वा तिनकी अवगाहनाका वर्णन है। बहुरि विश्रसोपचयका स्वरूप वा तिनकी परमाणूनिके प्रमाणका वर्णन है। बहुरि कर्म नोकर्मका उत्कृष्ट संचय होनेका काल वा सामग्रीका वर्णन है। बहुरि औदारिक आदि पंच शरीरनिका द्रव्य तौ समय समय प्रबद्धमात्र कहि तिनकी उत्कृष्ट स्थिति, अर तहां संभवती गुणहानि, नाना गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तराशि, दो गुणहानिका स्वरूप प्रमाण कहि करण सूत्रादिकतैं तहां चयादिकका प्रमाण ल्याय समय समयसंबंधी निषेकनिका प्रमाण कहि एक समयविषैं केते परमाणू उदयरूप होइ निर्जरैं, केते सत्ताविषैं अवशेष रहैं ताके जाननेकौं अंकसंदृष्टिकी अपेक्षा-लिये त्रिकोण यंत्रका कथन है। बहुरि वैक्रियिकादिकनिका उत्कृष्ट संचय कौनकैं कैसैं होइ सो वर्णन है। बहुरि योगमार्गणाविषैं जीवनिकी संख्याका वर्णनविषैं वैक्रियिक शक्तिकर संयुक्त वादर पर्याप्त अग्निकायिक वातकायिक, अर पर्याप्त पंचेंद्रिय तिर्यंच मनुष्यनिके प्रमाणका, अर भोगभूमियां आदि जीवनिकैं पृथक् विक्रिया, अर औरनिकैं अपृथक् विक्रिया हो है ताका कथन है। बहुरि त्रियोगी, द्वियोगी, एकयोगी जीवनिका प्रमाण कहि त्रियोगीनिविषैं आठप्रकार मनवचनयोगी अर काययोगी जीवनिका, अर द्वियोगीनिविषैं वचनकाययोगीनिका प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ सत्यमनोयोगादि वा सामान्य मनवचनकाय योगनिके कालका वर्णन है। बहुरि काययोगीनिविषैं सातप्रकार काययोगीनिका जुदा जुदा प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंगपाइ औदारिक औदारिकमिश्र, कार्माणके कालका, वा व्यंतरनिविषैं सोपक्रम अनुपक्रम कालका वर्णन है। बहुरि यहु कथन है जो जीवनिकी संख्या उत्कृष्टपनै युगपत् होनेकी अपेक्षा कही है।

बहुरि दशवां वेदमार्गणा अधिकारविषैं भावद्रव्यवेद होनेके विधानका, अर तिनके लक्षणका, अर भावद्रव्यवेद समान वा असमान हो है ताका, अर वेदनिका कारण दिखाइ ब्रह्मचर्य अंगीकार करनेका अर तीनों वेदनिका निरुक्तिलिये लक्षणका, अर अवेदी जीवनिका वर्णन है। बहुरि तहां संख्याका वर्णनविषैं देवराशि कहि तहां स्त्रीपुरुषवेदीनिका, अर तिर्यंचनिविषैं द्रव्य स्त्री आदिका प्रमाण कहि समस्त पुरुष स्त्री नपुंसकवेदीनिका प्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

माण वर्णन है। बहुरि सैनी पंचेंद्री गर्भज नपुंसकवेदी इत्यादिक ग्यारह स्थाननिविषैं जीवनिका प्रमाण वर्णन है।

बहुरि ग्यारहवां कषायमार्गणा अधिकारविषैं कषायनिका निरुक्तीलीये लक्षणका, वा सम्यक्त्वादिक घातने रूप दूसरे अर्थविषैं अनंतानुबंधी आदिका निरुक्तीलीए लक्षणका वर्णन है। बहुरि कषायनिके एक च्यारि सोलह असंख्यात लोकमात्र भेद कहि क्रोधादिककी उत्कृष्टादि च्यारि प्रकार शक्तिनिका दृष्टांत वा फलकी मुख्यता करि वर्णन है। बहुरि पर्याय धरनेके पहिलै समय कषाय होनेका नियम है वा नाहीं है सो वर्णन है। बहुरि अकषायजीवनिका वर्णन है। बहुरि क्रोधादिकके शक्ति अपेक्षा च्यार, लेश्या अपेक्षा चौदह, आयुबंध अर अबंध अपेक्षा वीस भेद हैं। तिनका अर सर्व कषायस्थाननिका प्रमाण कहि तिन भेदनिविषैं जेते जेते स्थानसंभवैं तिनका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनिकी संख्याका वर्णनविषैं नारकी देव तिर्यंच मनुष्यगतिविषैं जुदा जुदा क्रोधी आदि जीवनिका प्रमाण वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ तिनगतिनिविषैं क्रोधादिकका काल वर्णन है।

बहुरि बारहवां ज्ञानमार्गणा अधिकारविषैं ज्ञानका निरुक्तिपूर्वक लक्षण कहि ताके पंचभेदनिका अर क्षयोपशमके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि तीन मिथ्याज्ञाननिका, अर मिश्रज्ञाननिका अर तीन कुज्ञाननिके परिणामनिके उदाहरणका वर्णन है। बहुरि मतिज्ञानका वर्णनविषैं याके नामांतरका, अर इंद्रियमनतैं उपजनेका अर तहां अवग्रहादि होनेका, अर व्यंजन अर्थके स्वरूपका, अर व्यंजनविषैं नेत्र मन वा ईहादिक न पाइए ताका, अर पहिले दर्शन होइ पीछे अवग्रहादि होनेके क्रमका अर अवग्रहादिकनिके स्वरूपका, अर अर्थ व्यंजनके विषयभूत बहु बहुविध आदि बारह भेदनिका, तहां अनिवृतिविषैं च्यारि प्रकार परोक्ष प्रमाणगर्भितपना आदिका, अर मतिज्ञानके एक, च्यारि, चौबीस, अट्टाईस अर इनतैं बारह गुणे भेदनिका वर्णन है। बहुरि श्रुतज्ञानका वर्णनविषैं श्रुतज्ञानका लक्षण निरुक्ति आदिका, अर अक्षररूप श्रुतज्ञानके उदाहरण वा भेद वा प्रमाणका वर्णन है। बहुरि भाव श्रुतज्ञान अपेक्षा वीस भेदनिका वर्णन है। तहां पहिला जघन्यरूप पर्याय ज्ञानका वर्णनविषैं ताके स्वरूप का, अर तिसका आवरण जैसैं उदय हो है ताका, अर यहु जाकैं हो है ताका, अर याका दूसरा नाम लब्धि

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अक्षर है ताका वर्णन है । अर पर्यायसमास ज्ञानका वर्णनविषैं षट्स्थानपतित वृद्धिका वर्णन है । तहां जघन्य ज्ञानके अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण कहि अर अनंतादिकका प्रमाण अर अनंत भागादिककी सहनानी कहि जैसें अनंतभागादिक षट्स्थानपतितवृद्धि हो है ताके क्रमका यंत्र द्वारतैं वर्णन करि अनंत भागादि वृद्धिरूप स्थाननिविषैं अविभाग प्रतिच्छेदनिका प्रमाण ल्यावनेकौं प्रक्षेपक आदिका विधान, अर तहां प्रसंग पाइ एकबार, दोयबार, आदि संकलन धन ल्यावनेका विधान, अर साधिक जघन्य जहां दूणा हो है ताका विधान, अर पर्याय समासविषैं अनंतभाग आदि वृद्धि होनेका प्रमाण इत्यादि विशेष वर्णन है । बहुरि अक्षर आदि अठारह भेदनिका क्रमतैं वर्णन है । तहां अर्थाक्षरके स्वरूपका, अर तीन प्रकार अक्षरनिका, अर शास्त्रके विषयभूत भावानिके प्रमाणका, अर तीनप्रकार पदनिका, अर चौदह पूर्वनिविषैं वस्तु वा प्राभृतनामा अधिकारनिके प्रमाणका इत्यादि वर्णन है । बहुरि वीस भेदनिविषैं अक्षर अनक्षर श्रुतज्ञानके अठारहैं दोय भेदनिका अर पर्यायज्ञानादिकी निरुक्तिलीए स्वरूपका वर्णन है । बहुरि द्रव्यश्रुतका वर्णनविषैं द्वादशांगके पदनिकी अर प्रकीर्णकके अक्षरनिकी संख्यानिका, बहुरि चौसठि मूल अक्षरनिकी प्रक्रियाका, अर अपुनरुक्त सर्व अक्षरनिका प्रमाण वा अक्षरनिविषैं प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंगनिकरि तिस प्रमाण ल्यावनेका विधान अर सर्वश्रुतके अक्षरनिविषैं अंगनिके पद अर प्रकीर्णकनिके अक्षरनिके प्रमाण ल्यावनेका विधान इत्यादि वर्णन है । बहुरि आचारांग आदि ग्यारह अंग, अर दृष्टिवाद अंगके पांचभेद, तिनमैं परिकर्मके पांचभेद, तहां सूत्र अर प्रथमानुयोगका एक एक भेद, अर पूर्वगतके चौदह भेद, चूलिकाके पांच भेद, इन सबनिके जुदा जुदा पदनिका प्रमाण अर इनविषैं जो जो व्याख्यान पाइए ताकी सूचनिकाका कथन है । तहां प्रसंग पाइ तीर्थंकरकी दिव्यध्वनि होनेका विधान, अर वर्द्धमानस्वामीके समय दश दश जीव अंतकृत केवली अर अनुत्तरगामी भए तिनका नाम, अर तीनसै तरेसठि कुवादनिके धारकनिविषैं केई कुवादीनिके नाम, अर सप्तभंगका विधान, अर अक्षरनिके स्थान प्रयत्नादिक, अर बारह भाषा, अर आत्माके जीवादि विशेषण इत्यादि घने कथन हैं । बहुरि सामा-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

यिक आदि चौदह प्रकीर्णकनिका स्वरूप वर्णन है। बहुरि श्रुतज्ञानका महिमा वर्णन है। बहुरि अवधिज्ञानका वर्णन-विषैं निरुक्तिपूर्वक स्वरूप कहि ताके भवप्रत्यय गुणप्रत्यय भेदनिका, अर ते भेद कौंन कौंनकैं होंय, कौन आत्मप्रदेशनितैं उपजैं ताका, अर तहां गुण प्रत्ययके छह भेदनिका, तिनविषैं अनुगामी अननुगामीके तीन तीन भेदनिका वर्णन है। बहुरि सामान्यपनैं अवधिके देशावधि, परमावधि, सर्वावधि भेदनिका, अर तिनविषैं भवप्रत्यय गुणप्रत्ययके संभवपनेका, अर ए कौंन कौंनकैं होंइ ताका, अर तहां प्रतिपाती अप्रतिपाती विशेषका, अर इनके भेदनिके प्रमाणका वर्णन है। बहुरि जघन्य देशावधिका विषयभूत द्रव्य क्षेत्र काल भावका वर्णनकरि द्रव्य क्षेत्र-काल भाव अपेक्षा द्वितीयादि उत्कृष्ट पर्यंत क्रमतैं भेद होनेका विधान, अर तहां द्रव्यादिकके प्रमाणका अर सर्व भेदनिके प्रमाणका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ ध्रुवहार वर्ग वर्गणा गुणकार इत्यादिकका अनेक वर्णन है। अर तहां ही क्षेत्र काल अपेक्षा तिस देशावधिके उगणीस कांडकनिका वर्णन है। बहुरि परमावधिके विषयभूत द्रव्य क्षेत्र काल भाव अपेक्षा जघन्यतैं उत्कृष्टपर्यंत क्रमतैं भेद होनेका विधान, वा तहां द्रव्यादिकका प्रमाण वा सर्व भेदनिके प्रमाणका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ संकलित धन ल्यावनेका अर 'इच्छिदरासिच्छेदं' इत्यादि दोय करण सूत्रनिका आदि अनेक वर्णन है। बहुरि सर्वावधि अभेद है। ताके विषभूत द्रव्य क्षेत्र काल भावका वर्णन है। बहुरि जघन्य देशावधितैं सर्वावधिपर्यंत द्रव्य अर भाव अपेक्षा भेदनिकी समानताका वर्णन है। बहुरि नरकविषैं अवधिका वा ताके विषयभूत क्षेत्रका, अर मनुष्य तिर्यंचविषैं जघन्य उत्कृष्ट अवधि होनेका अर देवनिविषैं भवनवासी व्यंतर ज्योतिषीनिके अवधिगोचर क्षेत्र कालका, सौधर्मादि द्विकनिविषै क्षेत्रादिकका वा द्रव्यका भी वर्णन है। बहुरि मनःपर्ययज्ञानका वर्णनविषैं ताके स्वरूपका, अर दोय भेदनिका, अर तहां ऋजुमति तीन प्रकार, विपुलमति छहप्रकार ताका, अर मनःपर्यय जातैं उपजै है अर जिनकैं होहै ताका, अर दोय भेदनिविषैं विशेष है ताका, अर जीवकरि चिंतया हुवा द्रव्यादिककौं जानै ताका, अर ऋजुमतिका विषयभूत द्रव्यका अर मनःपर्यय संबंधी ध्रुवहारका, अर विपुलमतिके जघन्यतैं उत्कृष्टपर्यंत द्रव्य अपेक्षा भेद होनेका विधान, वा भेदनिका प्रमाण, वा द्र-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

न्यका प्रमाण कहि जघन्य उत्कृष्ट क्षेत्र काल भावका वर्णन है। बहुरि केवलज्ञान सर्वज्ञ है ताका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनिकी संख्याका वर्णनविषैं मति श्रुति मनःपर्यय केवल अवधिज्ञानीका अर च्यारो गतिसंबंधी विभंगज्ञानीनिका, अर कुमति कुश्रुत ज्ञानीनिका प्रमाण वर्णन है।

बहुरि तेरहवां संयममार्गणा अधिकारविषैं ताके स्वरूपका, अर संयमके भेदके निमित्तका वर्णन है। बहुरि संयमके भेदनिका स्वरूप वर्णन है। तहां परिहारविशुद्धिका विशेष, अर ग्यारह प्रतिमा अट्ठाईस विषय इत्यादिकका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनिकी संख्याका वर्णनविषैं सामायिक छेदोपस्थापन, परिहारविशुद्धि, सूक्ष्मसांपराय, यथाख्यात संयमधारी, अर संयतासंयत, अर असंयत जीवनिका प्रमाण वर्णन है।

बहुरि चौदहवां दर्शनमार्गणा अधिकारविषैं ताके स्वरूपका, अर दर्शनभेदनिके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनिकी संख्याका वर्णनविषैं शक्तिचक्षुर्दर्शनी व्यक्तचक्षुर्दर्शनीनिका अर अवधि केवल अचक्षुर्दर्शनीनिका प्रमाण वर्णन है।

बहुरि पंद्रहवां लेश्यामार्गणा अधिकारविषैं द्रव्य भावकरि दोय प्रकार लेश्या कहि भावलेश्याका निरुक्ति लीए लक्षण अर ताकरि बंध होनेका वर्णन है। बहुरि सोलह अधिकारनिके नाम हैं। बहुरि निर्देशाधिकारविषैं छह लेश्यानिके नाम हैं। अर वर्णाधिकारविषैं द्रव्यलेश्यानिकौं कारणका, अर लक्षणका, अर छहो द्रव्य लेश्यानिके वर्णका दृष्टांतका, अर जिनकैं जो जो द्रव्यलेश्या पाइए ताका व्याख्यान है। बहुरि प्रमाणाधिकारविषैं कषायनिके उदयस्थाननिविषैं संक्लेशविशुद्धि स्थाननिके प्रमाणका, अर तिनविषैं भी कृष्णादि लेश्यानिके स्थाननिके प्रमाणका, अर संक्लेश विशुद्धिकी हानि वृद्धितैं अशुभ शुभलेश्या होनेके अनुक्रमका वर्णन है। बहुरि संक्रमणाधिकारविषैं स्वस्थान परस्थानसंक्रमण संक्लेश विशुद्धिका वृद्धि हानितैं जैसैं संक्रमण होहै ताका, अर संक्लेशविशुद्धिविषैं जैसैं लेश्याके स्थान होंइ, अर तहां जैसैं षट्स्थानपतित वृद्धि हानि संभवै ताका वर्णन है। बहुरि कर्माधिकारविषैं छहो लेश्यावाले कार्यविषैं जैसैं प्रवर्तैं ताके उदाहरणका वर्णन है। बहुरि लक्षणाधिकार-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं छहोलेश्यावालेनिका लक्षणवर्णन है। बहुरि गति अधिकारविषैं लेश्यानिके छब्बीस अंश, तिनविषैं आठ मध्यम अंश आयुबंधकौं कारण, ते आठ अपकर्षकालनिविषैं होंइ, तिन अपकर्षनिका उदाहरणपूर्वक स्वरूपका, अर तिनविषैं आयु न बंधे तौ जहां बंधै ताका, अर सोपक्रमायुष्क, निरुपक्रमायुष्क जीवनिकै अपकर्षण रूप कालका, वा तहां आयुबंधनेका, विधान वा गति आदि विशेषका, अर अपकर्षनिविषैं आयुबंधनेवाले जीवनिके प्रमाणका वर्णन करि पीछैं लेश्यानिके अठारह अंशनिविषैं जिस जिस अंशविषैं मरण भए जिस जिस स्थानविषैं उपजै ताका वर्णन है। बहुरि स्वामी अधिकारविषैं भावलेश्याकी अपेक्षा सातनरकनिके नारकीनिविषैं, अर मनुष्य तिर्यंचविषैं, तहां भी एकेंद्रिय विकलत्रयविषैं असैनी पचेंद्रीविषैं, लब्धि अपर्याप्तक तिर्यंच मनुष्यविषैं, अपर्याप्त तिर्यंच मनुष्य भवनत्रिकदेव सासादनवालोंविषैं, पर्याप्त अपर्याप्त भोगभूमियाविषैं, मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थानिनिविषैं, पर्याप्त भवनत्रिक सौधर्मादिक आदि देवनिविषैं जो जो लेश्या पाइए ताका वर्णन है। तहां असैनीके लेश्यानिमित्ततैं गतिविषैं उपजनेका आदि विशेष कथन है। बहुरि साधन अधिकारविषैं द्रव्यलेश्या अर भावलेश्यानिके कारणका वर्णन है। बहुरि संख्याधिकारविषैं द्रव्य क्षेत्र काल भाव मान करि कृष्णादि लेश्यावाले जीवनिका प्रमाण वर्णन है। बहुरि क्षेत्राधिकारविषैं सामान्यपनैं स्वस्थान समुद्धात उपपाद अपेक्षा, विशेषपनैं दोय प्रकार स्वस्थान, सात प्रकार समुद्धात, एक उपपाद इन दश स्थाननिविषैं संभवते स्थाननिकी अपेक्षा कृष्णादि लेश्यानिका स्थानवर्णन कहिए क्षेत्रका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ विवक्षित लेश्याविषैं संभवते स्थान, तिनविषैं जीवनिके प्रमाणका, तिन स्थाननिविषैं क्षेत्रके प्रमाणका, समुद्घातादिकके विधानका, क्षेत्र फलादिकका, मरनेवाले आदि देवनिके प्रमाणका, केवल समुद्घातविषैं दंडकपाटादिकका, तहां लोकके क्षेत्रफलका इत्यादिकका वर्णन है। बहुरि स्पर्शाधिकारविषैं पूर्वोक्त सामान्य विशेषपनैंकरि लेश्यानिका, तीनकालसंबंधी क्षेत्रका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ मेरुतैं सहस्रारपर्यंत सर्वत्र पवनके सद्भावका, अर जंबूद्वीपसमान लवणसमुद्रके खंड, लवणसमुद्रके समान अन्य समुद्रके खंड करनेके विधानका, अर जलचररहित समुद्रनिका मिलाया हुआ

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क्षेत्रफलके प्रमाणका, अर देवादिककें उपजने गमनकरनेका इत्यादि वर्णन है। बहुरि काल अधिकारविषैं कृष्णादि लेश्या जितने काल रहै ताका वर्णन है। बहुरि अंतराधिकारविषैं कृष्णादिलेश्यानिका जघन्य उत्कृष्ट जितने काल अभाव रहै ताका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ एकेंद्री विकलेंद्रीविषैं उत्कृष्ट रहनेके कालका वर्णन है। बहुरि भावाधिकारविषैं छहौ लेश्यानिविषैं औदयिक भावके सद्भावका वर्णन है। बहुरि अल्पबहुत्व अधिकारविषैं संख्याके अनुसारि लेश्यानिविषैं परस्पर अल्प बहुत्वका व्याख्यान है। ऐसैं सोलह अधिकार कहि लेश्यारहित जीवनिका व्याख्यान है ॥

बहुरि सोलहवां भव्य मार्गणा अधिकारविषैं दोय प्रकार भव्य अर अभव्य अर भव्य अभव्यपनाकरि रहित जीवनिका स्वरूप वर्णन है। बहुरि इहां संख्याका कथनविषैं भव्य अर अभव्य जीवनिका प्रमाण वर्णन है। बहुरि इहां प्रसंग पाइ द्रव्य क्षेत्र काल भव भावरूप पंचपरिवर्तननिके स्वरूपका, वा जैसे क्रमतैं परिवर्तन हो है ताका, अर परिवर्तननिके कालका, अनादितैं जैसैं परिवर्तन भए तिनके प्रमाणका वर्णन है। तहां गृहीतादि पुद्गलनिके स्वरूप संदृष्टिका, वा योग स्थान आदिकनिका वर्णन पाइए है ॥

बहुरि सतरहवां सम्यक्त्व मार्गणा अधिकारविषैं सम्यक्त्वके स्वरूपका, अर सराग वीतरागके भेदनिका अर षट् द्रव्य नव पदार्थनिके श्रद्धानरूप लक्षणका, वर्णन है। बहुरि षट् द्रव्यका वर्णनविषैं सात अधिकारनिका कथन है। बहुरि तहां नाम अधिकारविषैं द्रव्यके एक वा दोय भेदका, अर जीव अजीवके दोय दोय भेदनिका, अर तहां पुद्गलका निरुक्ति लीएं लक्षणका, पुद्गल परमाणुके आकारका वर्णनपूर्वक रूपी अरूपी अजीव द्रव्यका कथन है। बहुरि उपलक्षणानुवादाधिकारविषैं छहो द्रव्यनिके लक्षणनिका वर्णन है, तहां गति आदि क्रिया जीव पुद्गलकैं है ताका कारण धर्मादिक हैं ताका दृष्टांतपूर्वक वर्णन है। अर वर्तनाहेतुत्व कालके लक्षणका दृष्टांतपूर्वक वर्णन है। अर मुख्य कालके निश्चय होनेका, कालकैं धर्मादिककौं कारणपनेका, समय आवली आदि व्यवहारकालके भेदनिका, तहां प्रसंग पाइ प्रदेशके प्रमाणका, वा अंतर्मुहूर्तके भेदनिका, वा

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

व्यवहारकाल जाननेकौं निमित्तका, व्यवहारकालके अतीत अनागत वर्तमान भेदनिके प्रमाणका, वा व्यवहार निश्चय कालके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि स्थिति अधिकारविषैं सर्व अपने पर्यायनिका समुदायरूप अवस्थानका वर्णन है। बहुरि क्षेत्राधिकारविषैं जीवादिक जितना क्षेत्र रोकैं ताका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ तीन प्रकार आधार वा जीवके समुद्घातादि क्षेत्रका वा संकोच विस्तार शक्तिका वा पुद्गलादिकनिकी अवगाहन शक्तिका वा लोकालोकके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि संख्याधिकारविषैं जीव द्रव्यादिकका वा तिनके प्रदेशनिका, वा व्यवहार कालके प्रमाणका, द्रव्य क्षेत्र काल भावमान करि वर्णन है। बहुरि स्थान स्वरूपाधिकारविषैं द्रव्यनिका वा द्रव्यके प्रदेशनिका चल अचलपनेका वर्णन है। बहुरि अणुवर्गणा आदि तेईस पुद्गल वर्गणानिका वर्णन हैं। तहां तिन वर्गणानिविषैं जेती जेती परमाणू पाइए ताका आहारादिक वर्गणातैं जो जो कार्य निपजै है ताका जघन्य उत्कृष्ट प्रत्येकादि वर्गणा जहां पाईए ताका, महास्कंध वर्गणाके स्वरूपका, अणुवर्गणा आदि वर्गणा लोकविषैं जितनी जितनी पाइए ताका इत्यादि वर्णन है। बहुरि पुद्गलके स्थूल आदि छह भेदनिका, वा स्कंध, प्रदेश, देश इनतीन भेदनिका वर्णन है बहुरि फल अधिकारविषैं धर्मादिकका गति आदि साधनरूप उपकार, जीवनिके परस्पर उपकार, पुद्गलनिका कर्मादिक वा सुखादिक उपकार, तिनका प्रश्नोत्तरादिक लीएं वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ कर्मादिक पुद्गल ही हैं ताका, अर कर्मादिक जिस जिस पुद्गल वर्गणातैं निपजैं हैं ताका, अर स्निग्धरूपके गुणनिके अंशनिकरि जैसैं पुद्गलका संबंध हो है ताका वर्णन है। ऐसैं षट् द्रव्यका वर्णन करि तहां कालविना पंचास्तिकाय हैं ताका वर्णन है। बहुरि नव पदार्थनिका वर्णनविषैं जीव अजीवका तौ षट् द्रव्यनिविषैं वर्णन भया। बहुरि पाप जीवनिका वर्णन है तहां प्रसंग पाइ चौदह गुणस्थाननिविषैं जीवनिका प्रमाण वर्णन है। तहां उपशम क्षपक श्रेणीवाले निरंतर अष्ट समयनिविषैं जेते जेते होंइ ताका, वा युगपत् बोधितबुद्धि आदि जीव जेते जेते होंइ ताका, अर सकल संयमीनिके प्रमाणका वर्णन है। बहुरि सात नरकके नारकी भवनत्रिक सौधर्मद्धिकादिक देव, तिर्यंच, मनुष्य ए जेते जेते मिथ्यादृष्टि आदि ३०

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थाननिविषैं पाइए तिनका वर्णन है। बहुरि गुणस्थाननिविषैं पुण्यजीव पापजीवनिका भेद वर्णन है। बहुरि पुद्गलीक द्रव्य पुण्य पापका वर्णन है । बहुरि आस्रव बंध संवर निर्जरा मोक्षरूप पुद्गलनिका प्रमाण वर्णन है। ऐसैं षट्द्रव्यादिकका स्वरूप कहि तिनके श्रद्धानरूप सम्यक्त्वके भेदनिका वर्णन है । तहां क्षायिक सम्यक्त्वके भेदनिका वर्णन है। तहां क्षायिक सम्यक्त्व होनेके कारणका ताके स्वरूपका, ताकौं पाऐं जेते भवनिविषैं मुक्ति होइ ताका, तिसके महिमाका अर तिसका प्रारंभ निष्ठापन जहां होइ ताका वर्णन है। बहुरि वेदकसम्यक्त्वके कारणका वा स्वरूपका वर्णन है बहुरि उपशम सम्यक्त्वके स्वरूपका, कारणका, पंचलब्धि आदि सामग्रीका, वा जाके उपशम सम्यक्त्व होइ ताका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ आयुबंध भए पीछैं सम्यक्त्व व्रत होने न होनेका वर्णन है। बहुरि सासादन मिश्र मिथ्यारुचिका वर्णन है। बहुरि इहां जीवनिकी संख्याका वर्णनविषैं क्षायिक, उपशम, वेदक सम्यग्दृष्टिनिका अर मिथ्यादृष्टि, सासादन, मिश्र जीवानिका प्रमाण वर्णन है। बहुरि नव पदार्थनिका प्रमाण वर्णन है। तहां जीव अर अजीवविषैं पुद्गल, धर्म। अधर्म, आकाश, काल, अर पुण्य पाप रूप जीव, अर आस्रव संवर निर्जरा बंध मोक्ष इनके प्रमाणका निरूपण है॥

बहुरि अठारहवां संज्ञा मार्गणा अधिकारविषैं संज्ञाके स्वरूपका, संज्ञी असंज्ञी जीवनिके लक्षणका वर्णन है अर इहां संख्याका वर्णनविषैं संज्ञी असंज्ञी जीवनिका प्रमाण वर्णन है।

बहुरि उगणीसवां आहार मार्गणा अधिकारविषैं आहारकके स्वरूप वा निरुक्तिका अर आहारक जिनके हो है ताका तहां प्रसंग पाइ सात समुद्घातनिके नाम वा समुद्घातके स्वरूपका, अर आहारक अनाहारकके कालका वर्णन है । बहुरि तहां आहारक अनाहारक जीवनिका प्रमाण वर्णन है तहां प्रसंग पाइ प्रक्षेपयोगोद्धृति मिश्रपिंड इत्यादि सूत्रकरि मिश्रके व्यवहारका कथन है।

बहुरि बीसवां उपयोग अधिकारविषैं उपयोगके लक्षणका, साकार अनाकार भेदनिका, उपयोग है सो व्याप्ति अव्याप्ति असंभवी दोषरहित जीवका लक्षण है ताका, अर केवलज्ञान केवलदर्शनविना साकार अना-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

कार उपयोगनिका काल अंतर्मुहूर्त मात्र है ताका वर्णन है । बहुरि इहां जीवनिकी संख्या साकारोपयोगविषैं ज्ञानमार्गणावत् अर अनाकारोपयोगविषैं दर्शनमार्गणावत् है ताका वर्णन है ।

बहुरि इकीसवां ओघादेश योगप्ररूपणा प्ररूपण अधिकारविषैं गति आदि मार्गणानिकें भेदनिविषैं यथासंभव गुणस्थान अर जीवसमासनिका वर्णन है । तहां द्वितीयोपशम सम्यक्त्वविषैं पर्याप्त अपर्याप्त अपेक्षा गुणस्थाननिका विशेष कह्या है । बहुरि गुणस्थाननिविषैं संभवते जे जीवसमास पर्याप्ति प्राण संज्ञा चौदह मार्गणानिके भेद उपयोग तिनका वर्णन है । तहां मार्गणा वा उपयोगके स्वरूपका भी किछू वर्णन है । तहां योग भव्यमार्गणानिकें भेदनिका, वा सम्यक्त्वमार्गणाविषैं प्रथम द्वितीयोपशम सम्यक्त्वका इत्यादि विशेष वर्णन है । अर गति आदि केई मार्गणानिविषैं पर्याप्त अपर्याप्त अपेक्षा कथन है ।

बहुरि वावीसवां आलाप अधिकारविषैं मंगलाचरणकरि समान्य पर्याप्त अपर्याप्तकरि तीन आलाप,अर अनिवृति करणविषैं पंच भागनिकी अपेक्षा पंच आलाप तिनका गुणस्थाननिविषैं वा गुणस्थान अपेक्षा चौदहमार्गणाके भेदनिविषैं यथासंभव कथन है । तहां गति मार्गणाविषैं किछू विशेष कथन है । बहुरि गुणस्थान मार्गणास्थाननिविषैं गुणस्थानादि वीस प्ररूपणा यथासंभव आलापनिकी अपेक्षा निरूपण करनी । तहां पर्याप्त अपर्याप्त एकेंद्रियादि जीवनिकैं संभवते पर्याप्ति प्राण जीव समासादिकका किछू वर्णनकरि यथायोग्य सर्व प्ररूपणा जाननेका उपदेश है । बहुरि तिनके जाननेकौं यंत्रनिकारि कथन है । तहां पहिलैं यंत्रनिविषैं जैसैं अनुक्रम है, वा समस्या है वा विशेष है सो कथन है । पीछे एक एक रचनाविषैं वीस वीस प्ररूपणाका कथनस्वरूप छहसै चउदह यंत्रनिकी रचना है । तहां कोई रचना समान जानि बहुत रचनानिकी एक रचना है । बहुरि मनःपर्यय ज्ञानादिकविषैं एकहोतैं अन्य न होय ताका, उपशम श्रेणीतैं उतरि मरणभए उपजनेका, सिद्धनिविषैं संभवती प्ररूपणानिका निक्षेपादिककरि प्ररूपणा जाननेके उपदेशका वर्णन है । बहुरि आशीर्वाद है । बहुरि टीकाकारकें वचन हैं ।

ऐसैं जीवकांडनामा महा अधिकारके बावीस अधिकारनिविषैं क्रमतैं व्याख्यानकी सूचनिका जाननी ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अथ कर्म(अजीव)कांड नामा महाअधिकारके नव अधिकार हैं तिनके व्याख्यानकी सूचना क्रमतैं कहिए है—

तहां पहिला प्रकृतिसमुत्कीर्तन अधिकारविषैं मंगलाचरणपूर्वक प्रतिज्ञाकरि प्रतिज्ञाके स्वरूपका, जीवकर्मके संबंधका, तिनके अस्तित्वका, दृष्टांतपूर्वक कर्मपरमाणूनिके ग्रहणका, बंध उदय सत्त्वरूप कर्मपरमाणूनिके प्रमाणका वर्णन है। बहुरि ज्ञानावरणादिक आठ मूल प्रकृतिनिके नामका, इनविषैं घाती अघाती भेदका, इनकरि कार्य होहै ताका, इनके क्रम संभवनेका, दृष्टांत निरुक्तिलीए इनके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि इनकी उत्तर प्रकृतिनिका कथन है। तहां पंच निद्राका, तीन दर्शनमोह होनेके विधानका, पंचशरीरनिके पंद्रह भंगनिका, विवक्षित संहननवाले देव नरक गतिविषैं जहां उपजैं ताका, कर्मभूमिकी स्त्रीनिकैं तीन संहनन हैं ताका, आताप प्रकृतिके स्वरूप वा स्वामित्वका विशेष व्याख्यान है। बहुरि मतिज्ञानावरणादि उत्तर प्रकृतिनिके निरुक्तिलीएं स्वरूपका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ अभव्यके केवलज्ञानके सद्भावविषैं प्रश्नोत्तरका, बहुरि सात धातु सात उपधातुका इत्यादि वर्णन है। बहुरि अभेद विवक्षाकरि जे प्रकृति गर्भित हो हैं तिनका वर्णनकरि बंध उदय सत्तारूप जेती जेती प्रकृति हैं तिनका वर्णन है बहुरि घातियानिविषैं सर्वघाती देशघाती प्रकृतिनिका, अर सर्व प्रकृतिनिविषैं प्रशस्त अप्रशस्त प्रकृतिनिका वर्णन है। बहुरि अनंतानुबंधी आदि कषायनिका कार्य वा वासनाकालका वर्णन है। बहुरि कर्म प्रकृतिनिविषैं पुद्गलविपाकी भवविपाकी क्षेत्रविपाकी जीवविपाकी प्रकृतिनिका वर्णन है। बहुरि प्रसंग पाइ संशय विपर्यय अनध्यवसायका वर्णनपूर्वक तीनप्रकार श्रोतानिका वर्णनकरि प्रकृतिनिके चार निक्षेपनिका वर्णन है। तहां नामादि निक्षेपनिका स्वरूप कहि नाम निक्षेपका, अर तदाकार अतदाकाररूप दोय प्रकार स्थापना निक्षेपका अर आगम नोआगम रूप दोय प्रकार द्रव्य निक्षेपका, तहां नो आगमके ज्ञायक भावी तद्व्यतिरिक्तरूप तीनप्रकारका, तहां भी भूत भावी वर्तमानरूप ज्ञायकशरीरके तीन भेदनिका, तहां भी च्युत च्यावित त्यक्तरूप भूत शरीरके तीन भेदनिका, तहां भी त्यक्तके भक्त प्रतिज्ञा इंगिनी प्रायोपगमनरूप भेदनिका, तहां भी भक्त प्रतिज्ञाके उत्कृष्ट मध्य जघन्यरूप तीनप्रकारनिका अर तद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्यके कर्म नोकर्म

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भेदनिका, बहुरि भावनिक्षेपके आगम नोआगम भेदनिका वर्णन है। तहां मूल प्रकृतिनिविषैं इनकौं कहि उत्तर प्रकृतिनिविषैं वर्णन है। तहां औरनिका सामान्यपनैं संभवपना कहि नोकर्मरूप तद्व्यतिरिक्त नो आगम द्रव्य-की जुदी जुदी प्रकृतिनिविषैं वर्णन है। अर नोआगमभावका समुच्चयरूप वर्णन है।

बहुरि दूसरा बंध उदय सत्त्वयुक्तस्तवनामा अधिकार है। तहां नमस्कार पूर्वक प्रतिज्ञाकरि स्तवनादिकका लक्षण वर्णन है। बहुरि बंध व्याख्यानविषैं बंधके प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशरूप भेदनिका, अर तिनविषैं उत्कृष्ट अनुत्कृष्ट जघन्य अजघन्यपनेका, अर इनविषैं भी सादि अनादि ध्रुव अध्रुव संभवनेका वर्णन है। बहुरि प्रकृति-बंधका कथनविषैं गुणस्थाननिविषैं प्रकृतिबंधके नियमका, तहां भी तीर्थंकरप्रकृति बंधनेके विशेषका, अर गुण-स्थाननिविषैं व्युच्छित्ति बंध अबंध प्रकृतिनिका, तहां भी व्युच्छित्तिके स्वरूप दिखावनेकौं द्रव्यार्थिक पर्याया-र्थिकनयकी अपेक्षाका, अर गति आदि मार्गणाके भेदनिविषैं सामान्यपनैं वा संभवते गुणस्थान अपेक्षा व्युच्छि-त्ति बंध अबंध प्रकृतिनिके विशेषका, अर मूल उत्तर प्रकृतिनिविषैं संभवते सादिनैं आदि देकर बंधका, तहां अ-ध्रुव प्रकृतिनिविषैं सप्रतिपक्ष निःप्रतिपक्ष प्रकृतिनिका, अर निरंतर बंध होनेके कालका वर्णन है। बहुरि स्थिति-बंधका वर्णनविषैं मूल उत्तर प्रकृतिनिके उत्कृष्ट स्थितिबंधका, अर उत्कृष्टस्थितिबंध संज्ञीपंचेंद्रियकैं ही होय ताका, अर जिस परिणामतैं वा जिसजीवकैं जिस प्रकृतिका उत्कृष्ट स्थितिबंध होय ताका, तहां प्रसंग पाय उत्कृष्ट ईषत् मध्यम संक्लेश परिणामनिके स्वरूप दिखावनेकौं अनुकृष्टि आदि विधानका, अर मूल उत्तर प्रकृतिनिके जघन्य स्थितिबंधके प्रमाणका, अर जघन्य स्थितिबंध जाकैं होय ताका वर्णन है। अर एकेंद्री वेइंद्री तेइंद्री चौइंद्री अ-संज्ञी संज्ञी पंचेंद्री जीवनिकैं मोहादिककी उत्कृष्ट जघन्यस्थितिके प्रमाणका, तहां प्रसंग पाइ तिनके आबाधाके कालभेदकांडकनिके प्रमाणकौं कहि भेदप्रमाणकरि गुणितकांडकप्रमाणकौं उत्कृष्टस्थितिविषैं घटाएं जघन्यस्थिति का प्रमाण होनेका वर्णन है। बहुरि एकेंद्रियादिजीवनिके स्थितिभेदनिकौं स्थापनकरि तहां चौदह जीवसमा-सनिविषैं जघन्य उत्कृष्ट स्थितिबंध अर अबाधा अर भेदनिके प्रमाणका, अर तिनके जाननेका विधानवर्णन

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

है। तहां प्रकृतिनिका जघन्य स्थितिबंध जिनकैं होइ ताका, अर जघन्य आदि स्थितिबंधविषैं सादिनैं आदि देकरि संभवपनेका, अर विशुद्धसंक्लेशपरिणामनितैं जैसैं जघन्य उत्कृष्ट स्थितिबंध होय ताका, अर आबाधाके लक्षणका, मोहादिककी आबाधाके कालका, आयुकी आबाधाके विशेषका तहां प्रसंग पाइ देव नारकी भोगभूमियां कर्मभूमियांनिके आयुबंध होनेके समयका, उदीर्णा अपेक्षा आबाधाकालके प्रमाणका, प्रसंग पाइ अचलावली, उदयावली उपरितन स्थितिविषैं कर्मपरमाणु खिरनेका, उदीर्णाके स्वरूपका, आयु वा अन्य कर्मनिके निषेकनिके स्वरूपका, अंकसंदृष्टिपूर्वक निषेकनिविषैं द्रव्यप्रमाणका, तहां गुणहानि आदिका वर्णन है। बहुरि अनुभागबंधका व्याख्यानविषैं प्रकृतिनिका अनुभाग जैसैं संक्लेशविशुद्धिपरिणामनिकरि बंधै है ताका, अर जिस प्रकृतिका जाकैं तीव्र वा जघन्य अनुभाग बंधै है ताका, तहां प्रसंग पाइ अपरिवर्तमान, परिवर्तमान मध्य परिणामनिके स्वरूपादिकका अर उत्कृष्टादि अनुभाग बंधविषैं सादिनैं आदि देकरि भेदनिके संभवपनेका वर्णन है। बहुरि घातियानिविषैं लता दारु अस्थि शैलभागरूप अनुभागका तहां देशघातियास्पर्द्धकनिका मिथ्यात्वविषैं विशेष है ताका, अर जिन प्रकृतिनिविषैं जेतेप्रकार अनुभाग प्रवर्त्तै ताका, अर अघातियानिविषैं प्रशस्त प्रकृतिनिका गुड खंड शर्करा अमृत रूप, अप्रशस्त प्रकृतिनिका, निंब कांजीर विष हलाहलरूप अनुभागका अर इन प्रकृतिनिकैं तीन तीनप्रकार अनुभागप्रवर्त्तै ताका वर्णन है। बहुरि प्रदेश बंधका कथनविषैं एकक्षेत्र अनेकक्षेत्रसंबंधी वा तहां कर्मरूप होनैकौं योग्य अयोग्यरूप, तिनविषैं भी जीवके ग्रहणकी अपेक्षा सादि अनादिरूप पुद्गलनिका प्रमाणादिक कहि, तहां जिन पुद्गलनिकौं समयप्रबद्धविषैं ग्रहै है ताका, अर ग्रहे जे परमाणु तिनके प्रमाणकौं कहि तिनका आठ वा सात मूल प्रकृतिनिविषैं जैसैं विभाग होहै ताका, तहां हीनाधिक विभाग होनेके कारणका वर्णन है। अर उत्तर प्रकृतिनिविषैं विभागकें अनुक्रमका अर ज्ञानावरण दर्शनावरण अंतरायविषैं सर्वघाती देशघाती द्रव्यके विभागका, तहां प्रसंग पाइ मतिज्ञानावरणादि प्रकृतिनिविषैं सर्वघाती देशघाती स्पर्द्धकनिका, तहां अनुभागसंबंधी नानागुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तद्रव्यस्थितिगुणहानिका प्रमाण कहि,तहां वर्गणानिका प्रमाण ल्याय तिनविषैं

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जहां देशघाती सर्वघातीपना पाइए ताका वर्णनकरि च्यारि घातिया कर्मनिकी उत्तर प्रकृतिनिविषैं कर्मपरमाणुनिके विभागका वर्णन हैं। तहां संज्वलन अर नोकषायविषैं विशेष है ताका, अर नोकषायनिविषैं जिनका युगपत् बंध होइ तिनका, अर तिनके निरंतरबंधनेके कालका, अर अंतरायकी प्रकृतिनिविषैं सर्वघातीपना नाहीं ताका वर्णन है। बहुरि युगपत् नामकर्मकी तेईस आदि प्रकृति बंधैं तिनविषैं विभागका, अर वेदनीयादिककी एक एक ही प्रकृति बंधै तातैं तहां विभाग न करनेका वर्णन है।

बहुरि मूल उत्तर प्रकृतिनिका उत्कृष्टादि प्रदेशबंधविषैं सादि इत्यादि भेद संभवनेका, अर जिस प्रकृतिका उत्कृष्ट जघन्य प्रदेशबंध जाकैं होय ताका, अर तहां प्रसंग पाइ स्तोकसा एकजीवके युगपत् जेती जेती प्रकृति बंधैं ताका वर्णन है। बहुरि इहां प्रसंग पाइ योगनिका कथन है। तहां उपपाद एकांतवृद्धि परिणामरूप योगनिके स्वरूपादिकका वर्णन है। अर योगनिके अविभागप्रतिच्छेद वर्ग वर्गणा स्पर्द्धक गुणहानि नानागुणहानि स्थाननिके स्वरूप प्रमाण विधानका योगशक्ति वा प्रदेश अपेक्षा विशेष वर्णन है। अर योगनिका जघन्य स्थानतैं लगाय स्थाननिविषैं वृद्धिके अनुक्रमकौं आदिदेकरि वर्णन है। अर सूक्ष्मनिगोदिया लब्धि अपर्याप्तकका जघन्य उपपाद योगस्थानकौं आदि देकरि चौरासी स्थाननिका, अर वीचि वीचि जिनका स्थानी (स्वामी) न पाइए तिनका, अर तिनविषैं गुणकारके अनुक्रमका, अर जघन्यस्थानतैं उत्कृष्ट स्थानके गुणकारका वर्णन है। अर तीन प्रकार योग निरंतर जेते काल प्रवर्त्तैं ताका, अर पर्याप्त त्रस संबंधी परिणाम योगस्थाननिविषैं जेते जेते योगस्थान दोय आदि आठ समयपर्यंत निरंतर प्रवर्त्तैं तिनके प्रमाण ल्यावनेकौं कालयवमध्य रचनाका, अर पर्याप्त त्रससंबंधी परिणाम योगस्थाननिविषैं जेते जेते जीव पाइए तिनके प्रमाण जाननेकौं गुणहानि आदिं विशेषलिएं जीवयवमध्यरचनाका अर योगस्थाननितैं जेता जेता प्रदेशबंध होय ताका, अर जघन्यतैं उत्कृष्टस्थानपर्यंत बंधनेके क्रमका वीचि वीचि जेते अविभाग प्रतिच्छेद होंइ तिनका वर्णन है। बहुरि च्यारि प्रकार बंधके कारणनिका वर्णन है। बहुरि योगस्थानादिकके अल्पबहुत्वका वर्णन है। तहां योगस्थानश्रेणीके असंख्यातवां भागमात्र तिनिका वर्ण-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नकरि तिनतैं असंख्यातलोकगुणे कर्मप्रकृतिनिके भेदनिका वर्णनविषैं मतिज्ञानादिकनिके भेदनिका, अर क्षेत्र अपेक्षा आनुपूर्वीके भेदनिका कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यातगुणे कर्मस्थितिके भेदनिका वर्णनविषैं तिन एक एक प्रकृतिकी जघन्यादि उत्कृष्ट पर्यंत स्थिति भेदनिका कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यातगुणे स्थिति बंधाध्यवसायनिका वर्णनविषैं द्रव्यस्थिति गुणहानि निषेक चयादिककरि स्थिति बंधकौं कारण परिणामनिका स्तोकसा कथन है। बहुरि तिनतैं असंख्यातलोकगुणे अनुभागबंधाध्यवसायस्थाननिका वर्णनविषैं द्रव्यस्थिति गुणहान्यादिककरि अनुभागकौं कारण परिणामनिका स्तोकसा कथन है। बहुरि तिनतैं अनंतगुणे कर्मप्रदेशनिका वर्णनविषैं द्रव्यस्थिति गुणहानि नानागुणहानि चय निषेकनिका अंकसंदृष्टि वा अर्थकरि कथन है। तहां एकसमयविषैं समयप्रबद्धमात्र पुद्गल बंधैं, एक एक निषेक मिलि समयप्रबद्धमात्र ही निर्जरैं ऐसैं होतैं द्व्यर्द्धगुणहानिगुणित समयप्रबद्धमात्र सत्त्व रहै ताका विधान जाननेके अर्थि त्रिकोणयंत्रकी रचना करी है। बहुरि ऐसैं बंध वर्णनकरि उदयका वर्णनविषैं उदय प्रकृतिनिका नियम कहि गुणस्थाननिविषैं व्युच्छित्ति उदय अनुदय प्रकृतिनिका वर्णन है। बहुरि इहां ही उदीरणाविषैं विशेष कहि गुणस्थाननिविषैं व्युच्छित्ति उदीरणा अनुदीर्णारूप प्रकृतिनिका वर्णन है। बहुरि मार्गणाविषैं उदय प्रकृतिनिका नियम कहि गति आदि मार्गणानिके भेदनिविषैं संभवते गुणस्थाननिकी अपेक्षा लीए व्युच्छित्ति उदय अनुदयप्रकृतिनिका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ अनेक कथन है। बहुरि सत्त्वका कथनविषैं तीर्थंकर आहारककी सत्ताका, मिथ्यादृष्ट्यादिविषैं विशेष अर आयुबंध भए पीछैं सम्यक्त्व व्रत होनेका विशेष, क्षायिक सम्यक्त्व होनेका विशेष कहि मिथ्यादृष्टि आदि सात गुणस्थाननिविषैं सत्त्व प्रकृतिनिका वर्णनकरि, ऊपरि क्षपकश्रेणी अपेक्षा व्युच्छित्ति सत्त्व असत्त्व प्रकृतिनिका वर्णन है। बहुरि मिथ्यादृष्टि आदि गुणस्थाननिविषैं सत्त्व असत्त्व प्रकृतिनिका वर्णनकरि उपशम श्रेणीविषैं इकईस मोह प्रकृति उपशमावनेका क्रमका, अर तहां सत्त्व प्रकृतिनिका कथन है। बहुरि मार्गणानिविषैं सत्ता असत्ता प्रकृतिनिका नियम कहि गति आदि मार्गणानिके भेदनिविषैं संभवते गुणस्थाननिकी अपेक्षा लीए व्युच्छित्ति सत्त्व असत्त्व प्रकृतिनिका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ इंद्रिय काय मार्गणाविषैं प्रकृतिनिकी उद्वेलनाका इत्यादि अनेक वर्णन है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि विशेष सत्तारूप तीसरा सत्त्वस्थान अधिकारविषैं एक जीवकैं एक काल प्रकृति पाइए तिनके प्रमाणकी अपेक्षा स्थान, अर स्थानविषैं प्रकृति बदलनेकी अपेक्षा भंग तिनका वर्णन है। तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि स्थानभंगनिका स्वरूप कहि गुणस्थाननिविषैं सामान्यवत् प्रकृतिनिका वर्णनकरि विशेष वर्णनविषैं मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननिविषैं जेते जेते स्थान वा भंग पाइए तिनकौं कहि जुदा जुदा कथनविषैं तिनका विधान वा प्रकृति घटने वधने बदलनेके विशेषका बद्धायु अबद्धायु अपेक्षा वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ मिथ्यादृष्टिविषैं तीर्थंकर सत्तावालेकैं नरकायुहीका सत्त्व होइ ताका, वा एकेंद्रियादिककैं उद्वेलनाका अर सासादनविषैं आहार सत्ताके विशेषका, मिश्रविषैं आनंतानुबंधीरहित सत्त्वस्थान जैसें संभवै ताका, असंयतविषैं मनुष्यायु तीर्थंकर सहित एकसौ अडतीस प्रकृतिकी सत्तावालेकैं एक वा दोय वा तीन ही कल्याणक होंइ ताका, अपूर्वकरणादिविषैं उपशमक क्षपक श्रेणी अपेक्षाका इत्यादि अनेक वर्णन है। बहुरि आचार्यनिके मतकरि जो विशेष है ताकौं कहि तिस अपेक्षा कथन है।

बहुरि चौथा त्रिचूलिका नामा अधिकार है। तहां प्रथम नव प्रश्नकरि चूलिकाका व्याख्यान है। तिसविषैं पहिलैं तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तरविषैं जिन प्रकृतिनिकी उदय व्युच्छित्तितैं पहिले बंध व्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदय व्युच्छित्तितैं पीछैं बंधव्युच्छित्ति भई तिनका, अर जिनकी उदयव्युच्छित्ति बंधव्युच्छित्ति युगपत् भई तिनका वर्णन है। बहुरि दूसरा तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तरविषैं जिनका अपना उदय होतैं ही बंध होइ तिनका, अर जिनका अन्य प्रकृतिनिका उदय होतैं ही बंध होइ तिनका, अर जिनका अपना वा अन्य प्रकृतिनिका उदय होतैं बंध होय तिनि प्रकृतिनिका वर्णन है। बहुरि तीसरा तीन प्रश्नकरि तिनका उत्तरविषैं जिनका निरंतर बंध होइ तिनका, अर जिनका सांतर बंध होइ तिनका, अर जिनका सांतर निरंतर बंध होइ तिनिका कथन है। इहां तीर्थंकरादि प्रकृति निरंतर बंधी जैसैं हैं ताका, अर सप्रतिपक्ष निःप्रतिपक्ष अवस्थाविषैं सांतर निरंतर बंध जैसैं संभवै है ताका वर्णन है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि दूसरी पंचभागहारचूलिकाका व्याख्यानविषैं मंगलाचरणकरि उद्वेलन विध्यात अधःप्रवृत्त गुणसंक्रम सर्वसंक्रम इन पंच भागहारनिके नामका, अर स्वरूपका, अर ते भागहार जिनि जिनि प्रकृतिनिविषैं वा गुणस्थाननिविषैं संभवैं ताका वर्णन है। अर सर्व संक्रमभागहार, गुणसंक्रमभागहार, उत्कर्षण वा अपकर्षणभागहार, अधःप्रवृत्तभागहार, योगनिविषैं गुणकार, स्थितिविषैं नानागुणहानि, पल्यके अर्धच्छेद, पल्यका वर्गमूल, स्थितिविषैं गुणहानि आयाम, स्थितिविषैं अन्योन्याभ्यस्तराशि, पल्य, कर्मकी उत्कृष्टास्थिति, विध्यातसंक्रमभागहार, उद्वेलनभागहार, अनुभागविषैं नाना गुणहानि, गुणहानि, द्व्यर्द्धगुणहानि, दोगुणहानि, अन्योन्याभ्यस्त इनका प्रमाणपूर्वक अल्प बहुत्वका कथन है।

बहुरि तीसरी दशकरण चूलिकाका व्याख्यानविषैं बंध १ उत्कर्षण २ संक्रम ३ अपकर्षण ४ उदीर्णा ५ सत्त्व ६ उदय ७ उपशम ८ निधत्ति ९ निःकांचना १० इन दश करणानिके नामका, स्वरूपका, जिनि जिनि प्रकृतिनिविषैं वा गुणस्थाननिविषैं जैसैं जैसैं संभवैं तिनिका वर्णन है॥

बहुरि पांचवां बंध उदय सत्त्वसहित स्थानसमुत्कीर्त्तन नामा अधिकारविषैं मंगलाचरण करि एक जीवकैं युगपत् संभवतीं बंधादिक प्रकृतिनिका प्रमाण रूप स्थान वा तहां प्रकृति बदलनेकरि भये भंगनिका वर्णन है। तहां मूलप्रकृतिनिके बंधस्थाननिका, अर तहां संभवते भुजाकारादि बंध विशेषका, अर भुजाकार अल्पतर अवस्थित अवक्तव्यरूप बंध विशेषनिके स्वरूपका, अर मूलप्रकृतिनिके उदयस्थान उदीर्णास्थान सत्त्वस्थाननिका वर्णन है। बहुरि उत्तरप्रकृतिनिका कथनविषैं दर्शनावरण मोहनीयनामकी प्रकृतिनिविषैं विशेष है तहां दर्शनावरणके बंधस्थाननिका, अर तहां गुणस्थान अपेक्षा भुजाकारादि विशेष संभवनेका, अर दर्शनावरणके गुणस्थाननिविषैं संभवते बंधस्थान, उदयस्थान, सत्त्वस्थाननिका वर्णन है। बहुरि मोहनीयके बंधस्थाननिका, अर ते गुणस्थाननिविषैं जैसैं संभवैं ताका, अर तहां प्रकृतिनिके नाम जाननेकौं ध्रुवबंधी प्रकृतिका, वा कूट रचना आदिकका, अर तहां प्रकृति बदलनेतैं भए भंगनिका, अर तिन बंधस्थाननिविषैं संभवते भुजाकारादि विशेषनिका,

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वा भुजाकारादिकके लक्षणका, वा सामान्य अवक्तव्य भंगनिकी संख्याका, अर भुजाकारादि संभवनेके विधानका, अर इहां प्रसंग पाइ गुणस्थाननिविषैं चढना उतरना इत्यादि विशेषनिका वर्णन है। बहुरि मोहके उदयस्थाननिका, अर गुणस्थाननिविषैं संभवता दर्शनमोहका उदय कहि तहां संभवते मोहके उदयस्थाननिका, अर तहां प्रकृत्यादिके जाननेकूं कूटरचना आदिका, अर तहां प्रकृति बदलनेतैं भए भंगनिका, अर अनिवृत्तिकरणविषैं वेदादिकके उदयकालादिकका, अर सर्वमोहके उदयस्थान, अर तिनकी प्रकृतिनिका विधान, वा संख्या वा मिलाई हुई संख्याका, अर गुणस्थाननिविषैं संभवते उपयोग, योग, संयम, लेश्या, सम्यक्त्व तिनकी अपेक्षा मोहके उदयस्थाननिका, वा तिनकी प्रकृतिनिका विधान संख्या आदिकका, तहां अनंतानुबंधीरहित उदयस्थान मिथ्यादृष्टिकी अपर्याप्त अवस्थामैं न पाइए इत्यादि विशेषका वर्णन है। बहुरि मोहके सत्त्वस्थाननिका वा तहां प्रकृति घटनेका, अर ते स्थान गुणस्थाननिविषैं जैसैं संभवैं ताका, अर अनिवृत्तिकरणविषैं विशेष है ताका वर्णन है। बहुरि नाम कर्मका कथनविषैं आधारभूत इकतालीस जीवपद चौंतीस कर्मपदनिका व्याख्यान करि नामके बंधस्थानका अर ते गुणस्थाननिविषैं जैसैं संभवै ताका, अर ते जिस जिस कर्मपदसहित बंधै हैं ताका, अर तिनिविषैं क्रमतैं नवध्रुवबंधी आदि प्रकृतिनिके नामका, अर तेईसकेनैं आदि दे करि नामके बंधस्थाननिविषैं जे जे प्रकृति जैसैं जैसैं पाइए ताका, अर तहां प्रकृति बदलनेतैं भए भंगनिका वर्णन है। अर इहां प्रसंग पाइ जीव मरि जहां उपजै ताका वर्णनविषैं प्रथमादि पृथ्वीके नारकी मरि जहां उपजैं वा न उपजैं ताका, तहां प्रसंग पाइ स्वयंभूरमण समुद्रपरैं कूणानिविषैं कर्मभूमियां तिर्यंच हैं इत्यादि विशेषका, अर बादर सूक्ष्म पर्याप्त अपर्याप्त अग्निकायिक आदि जीव जहां उपजैं ताका, तहां सूक्ष्मनिगोदतैं आए मनुष्य सकल संयम न ग्रहै इत्यादि विशेषका, अर अपर्याप्त मनुष्य जहां उपजैं ताका, अर भोगभूमि कुभोगभूमिके तिर्यंच मनुष्य, अर कर्मभूमिके मनुष्य जहां उपजैं ताका, अर सर्वार्थसिद्धितैं लगाय भवनत्रिक पर्यंत देव जहां उपजैं ताका वर्णन है। बहुरि ऐसैं च्यवन उत्पाद कहि चौदह मार्गणानिविषैं गुणस्थाननिकी अपेक्षा लीएं जैसैं जे जे नामकर्मके बंधस्थान संभवैं तिनका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्णन है। तहां गति इंद्रिय काय योग वेद मार्गणानिविषैं तौ लेश्या अपेक्षा बंधस्थाननिका कथन है, कषाय मार्गणाविषैं अनंतानुबंधी आदि जैसें उदय हो हैं ताका, वा इनके देशघाती सर्वघाती स्पर्द्धकनिका, वा सम्यक्त्व संयमघातनेका वा लेश्या अपेक्षा बंधस्थाननिका कथन है। अर ज्ञानमार्गणाविषैं गति आदिककी अपेक्षा करि बंधस्थाननिका कथन है। अर संयममार्गणाविषैं सामायिकादिकके स्वरूपका, अर संयतासंयतविषैं दोयगति अपेक्षा, अर असंयमविषैं च्यारिगति अपेक्षा बंधस्थाननिका कथन है। तहां निर्वृत्यपर्याप्तदेवकैं बंधस्थान कहनेकौं देवगतिविषैं जे जे जीव जहां पर्यंत उपजैं ताका, अर सासादनविषैं बंधस्थान कहनेकौं जे जे जीव जैसें उपशमसम्यक्त्वकौं छांडि सासादन होंइ ताका इत्यादि कथन है। अर दर्शनमार्गणाविषैं गति अपेक्षा बंधस्थाननिका कथन है। अर लेश्या मार्गणाविषैं प्रथमादि नरक पृथ्वीनिविषैं लेश्या संभवनेका, जिस जिस संहननके धारी जे जे जीव जहां जहां पर्यंत नरकविषैं उपजैं ताका, नरकनिविषैं पर्याप्त निर्वृत्यपर्याप्त अवस्था अपेक्षा बंधस्थाननिका अर तिर्यंचविषैं एकेंद्रियादिककैं वा भोगभूमियां तिर्यंचकैं जो जो लेश्या पाइए ताका, अर जे जे जीव जिस जिस लेश्याकरि तिर्यंचविषैं उपजैं ताका, अर तिनकैं निर्वृत्यपर्याप्त अवस्थाविषैं बंधस्थाननिका, अर जहांतैं आए सासादन वा असंयत होंइ अर तिनके जे बंधस्थान होंइ ताका, अर शुभाशुभलेश्यानिविषैं परिणामनिका, तहां प्रसंग पाइ कषायनिके स्थान वा तहां संक्लेश विशुद्धिस्थान, वा कषायनिके च्यारि शक्तिस्थान, चौदह लेश्यास्थान वीस आयु बंधाबंधस्थान तिनका, अर लेश्यानिके छब्बीस अंश, तहां आठ मध्यम अंश आयुबंधकौं कारण ते आठ अपकर्षकालनिविषैं होंइ, अन्य अठारह अंश च्यारि गतिनिविषैं गमनकौं कारण तिनके विशेषका, अर लेश्यानिके पलटनेके क्रमका वर्णन करि, तिर्यंचकैं मिथ्यादृष्टि आदिविषैं जैसें मिथ्यात्वकषायनिका उदय पाइए है ताकौं कहि, तहां जे बंधस्थान पाइए ताका, अर भोगभूमियां तिर्यंचकैं, वा प्रसंग पाइ औरनिकैं, जैसें निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त मिथ्यादृष्टि आदिविषैं जैसें लेश्याकरि बंधस्थान पाइए, वा भोगभूमिविषैं जैसें उपजना होइ ताका वर्णन है। बहुरि मनुष्यगतिविषैं लब्धिअपर्याप्त, निर्वृत्यपर्याप्त पर्याप्त दशाविषैं जो जो लेश्या पाइए वा तहां संभवते

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0. In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थाननिविषैं बंधस्थान पाइए ताका वर्णन है। बहुरि देवगतिविषैं भवन त्रिकादिककैं निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त दशाविषैं जो जो लेश्या पाइए, वा देवनिके जहां जन्मस्थान हैं वा जे जीव जिस जिस लेश्याकरि जहां जहां देवगतिविषैं उपजैं, वा निर्वृत्यपर्याप्त वा पर्याप्त दशाविषैं मिथ्यादृष्टि आदि जीवनिकैं जे जे बंधस्थान पाइए तिनका, अर तहां प्रासंगिक गाथानिकरि जे जीव जहां जहां पर्यंत देवगतिविषैं उपजैं, वा अनुदिशादिक विमाननितैं चयकरि जे पद न पावैं, वा जे जीव देवगतितैं चयकरि मनुष्य होइ निर्वाण ही जांय, वा जहांके आये तरेसठि शलाका पुरुष न होंइ, वा देवपर्याय पाइ जैसैं जिनपूजादिक कार्य करैं तिनका वर्णन है । बहुरि भव्य मार्गणाविषैं बंधस्थाननिका वर्णन है। बहुरि सम्यक्त्वमार्गणाविषैं सम्यक्त्वके लक्षणका, भेदनिका, जहां मरण न होय ताका, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व जाकैं होइ ताका, वा वाकैं जिन प्रकृतिनिका उपशम होइ ताका, तहां लब्धि आदि होनेका, अर प्रथमोपशम सम्यक्त्व भए मिथ्यात्वके तीन खंड होहैं ताका, तहां नारकादिककैं जे बंधस्थान पाइए तिनका, तहां नरकविषैं तीर्थंकरके बंध होनेके विधानका, वा साकार उपयोग होनेका, वा निसर्गज अधिगमके स्वरूपका, अर द्वितीयोपशम सम्यक्त्व जाकैं होइ ताका, तहां अपूर्वकरणादिविषैं जो जो क्रिया करता चढै वा उतरै ताका, तहां जे बंधस्थान संभवैं ताका, वा तहां मरि देव होय ताकैं बंधस्थान संभवै ताका वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वका प्रारंभ निष्ठापन जाकैं होइ ताका, वा तहां तीन करण होहैं तिनका, तहां गुण श्रेणी आदि होनेका अर अनंतानुबंधीका विसंयोजनकरि पीछैं केई क्रियाकरि करणादि विधानतैं दर्शनमोह क्षपावनेका, अर तहां प्रारंभ निष्ठापनके कालका, वा तिनके स्वामीनिका, वा तहां तीर्थंकर सत्तावालेकैं तद्भव अन्यभवविषैं मुक्त होनेका वर्णनकरि क्षायिक सम्यक्त्वविषैं संभवते बंधस्थाननिका वर्णन है। बहुरि वेदक सम्यक्त्व जिनकैं होइ, अर प्रथमोपशम, द्वितीयोपशम सम्यक्त्वतैं वा मिथ्यात्वतैं जैसैं वेदक सम्यक्त्व होइ, अर तिनकैं जे बंधस्थान पाईए तिनका वर्णन है।

बहुरि सासादन मिश्र मिथ्यात्व जहां जहां जिस जिस दशाविषैं संभवै अर तहां जे बंधस्थान पाइए तिनका ४२

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ विवक्षित गुणस्थानतैं जिस जिस गुणस्थानकौं प्राप्त होइ ताका वर्णन है। बहुरि संज्ञी अर आहार मार्गणाविषैं बंधस्थाननिका वर्णन है। बहुरि नामके बंधस्थाननिविषैं भुजाकारादिकहनेकौं पुनरुक्त, अपुनरुक्त भंगनिका, अर स्वस्थानादि तीन भेदनिका, प्रसंग पाइ गुणस्थाननितैं चढने उतरनेका, जहां मरण न होइ ताका, कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि मरि जहां उपजै ताका, भुजाकारादिकके लक्षणका, अर इकतालीस जीव पदनिविषैं भंगसहित बंधस्थाननिका वर्णनकरि मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननिविषैं संभवते भुजाकार अल्पतर अवस्थित अवक्तव्यभंगनिका वर्णन है।

बहुरि नामके उदयस्थाननिका वर्णनविषैं कार्मांण, मिश्रशरीर, शरीरपर्याप्ति, उच्छ्वासपर्याप्ति, भाषापर्याप्ति इन पंचकालनिका स्वरूप प्रमाणादिक कहि, वा केवलीके समुद्घात अपेक्षा इनका संभवपना कहि, नामके उदयस्थान होनिका विधानविषैं ध्रुवोदयी आदि प्रकृतिनिका वर्णनकरि, तिन पंचकालनिकी अपेक्षा लीएं जिस जिस प्रकार वीस प्रकृति रूप स्थानतै लगाय संभवते नामके उदयस्थाननिका, अर तहां प्रकृति बदलनेकरि संभवते भंगनिका वर्णन है। बहुरि नामके सत्त्वस्थाननिका वर्णनविषैं तिराणवे प्रकृतिरूप स्थान आदि जैसैं जे सत्त्वस्थान हैं तिनका, अर तहां जिन प्रकृतिनिकी उद्वेलना हो है तिनके स्वामी वा क्रम वा कालादिक विशेषका, अर सम्यक्त्व, देशसंयम, अनंतानुबंधीका विसंयोजन, उपशमश्रेणी चढना, सकल संयम धरना, ए उत्कृष्टपनें केतीवार होंइ तिनका, अर च्यारि गतिकी अपेक्षा लीएं गुणस्थाननिविषैं जे सत्त्वस्थान संभवैं तिनका, अर इकतालीस जीव पदनिविषैं सत्त्वस्थान संभवैं तिनका वर्णन है।

बहुरि त्रिसंयोगीविषैं स्थान वा भंगनिका वर्णन है। तहां मूलप्रकृतिनिविषैं जिस जिस बंधस्थान होतैं जो जो उदय वा सत्त्वस्थान होइ ताका, अर ते गुणस्थाननिविषैं जैसैं संभवैं ताका वर्णन है। बहुरि उत्तर प्रकृतिनिविषैं ज्ञानावरण, अंतरायका तौ पांच पांच ही का बंध उदय सत्त्व होइ तातैं तहां विशेष वर्णन नाहीं। अर दर्शना-

१ 'होनेका' ऐसा ख पुस्तकमें पाठ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वरणविषैं जिस जिस बंधस्थान होतैं जो जो उदय वा सत्त्वस्थान गुणस्थान अपेक्षा संभवै ताका वर्णन है। अर वेदनीयविषैं एक एक प्रकृतिका उदयबंध होतैं भी प्रकृति बदलनेंकी अपेक्षा, वा सत्त्व दोयका, वा एकका भी हो है ताकी अपेक्षा गुणस्थानविषैं संभवते भंगनिका वर्णन है। बहुरि गोत्रविषैं भी नीच उच्च गोत्रके बंध उदयसत्त्वके बदलनेकी अपेक्षा गुणस्थाननिविषैं संभवते भंगनिका वर्णन है। बहुरि आयुविषैं भोगभूमियां आदि जिस कालविषैं आयुबंध करैं ताका, एकेंद्रियादि जिस आयुकौं बांधै ताका, नारकादिकनिकैं आयुका उदय सत्त्व संभवै ताका, अर आठ अपकर्षविषैं बंधै ताका, तहां दूसरी तीसरी वार आयुबंध होनेविषैं घटने बधनेका, अर बध्यमान भुज्यमान आयुके घटनेरूप अपवर्त्तन घात, कदलीघातका वर्णनकरि बंध अबंध उपरितनबंधकी अपेक्षा गुणस्थाननिविषैं संभवते भंगनिका वर्णन है। बहुरि वेदनीय गोत्र आयु इनके भंग मिथ्यादृष्ट्यादिविषैं जेते जेते संभवैं, वा सर्व भंग जेते जेते हैं तिनका वर्णन है। बहुरि मोहके स्थाननिकी अपेक्षा भंगनिकरि गुणस्थाननिविषैं बंध उदय सत्त्वस्थान जैसैं पाइए ताका वर्णन करि मोहके त्रिसंयोगविषैं एक आधार दोय आधेय तीनप्रकार, तहां जिस जिस बंधस्थानविषैं जो जो उदयस्थान, वा सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस जिस उदयस्थानविषैं जो जो बंधस्थान वा सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस जिस सत्त्वस्थानविषैं जो जो बंधस्थान वा उदयस्थान संभवै तिनका वर्णन है। बहुरि मोहके बंध उदय सत्त्वनिविषैं दोय आधार एक आधेय तीनप्रकार, तहां जिस जिस बंधस्थानसहित उदयस्थानविषैं जो जो सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै, अर जिस जिस बंधस्थानसहित सत्त्वस्थानविषैं जो जो उदयस्थान संभवै अर जिस जिस उदयस्थान सहित सत्त्वस्थानविषैं जो जो बंधस्थान पाइए ताका वर्णन है। बहुरि नामकर्मके स्थानोक्त भंग कहि गुणस्थाननिविषैं अर चौदह जीवसमासनिविषैं अर गति आदि मार्गणानिके भेदनिविषैं संभवते बंध उदय सत्त्व स्थाननिका वर्णनकरि एक आधार दोय आधेयका वर्णनविषैं जिस जिस बंधस्थानविषैं जो जो उदयस्थान वा सत्त्वस्थान जिसप्रकार संभवै अर जिस जिस उदयस्थानविषैं जो जो बंधस्थान वा सत्त्वस्थान जिस जिसप्रकार संभवै, अर जिस जिस सत्त्वस्थानविषैं जो जो बंधस्थान उदयस्थान जिस ४४

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

जिसप्रकार संभवै तिनिका वर्णन है बहुरि दोय आधार एक आधेयविषैं जिस जिस बंधस्थानसहित उदयस्थानविषैं जो जो सत्त्वस्थान संभवै, अर जिस जिस बंधस्थानसहित सत्त्वस्थानविषैं जो जो उदयस्थान संभवै अर जिस जिस उदयस्थानसहित सत्त्वस्थानविषै जो जो बंधस्थान पाइए तिनका वर्णन है ॥ ५ ॥

बहुरि छठा प्रत्यय अधिकार है। तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि च्यारि मूल आस्रव अर सत्तावन उत्तर आस्रवनिका अर ते जैसे गुणस्थाननिविषै संभवै ताका, तहां व्युच्छित्ति वा आस्रवनिके प्रमाण नामादिकका वर्णन करि, तहां विशेष जाननेकौं पंचप्रकारनिका वर्णन है। तहां प्रथम प्रकारविषैं एक जीवकैं एकैकाल संभवैं ऐसे जघन्य मध्यम उत्कृष्टरूप आस्रवस्थान जेते जेते गुणस्थाननिविषैं पाइए तिनका वर्णन है। बहुरि दूसरा प्रकारविषैं एक एक स्थानविषै आस्रवभेद बदलनेतें जेते जेते प्रकार होंहि तिनका वर्णन है। बहुरि तीसरा प्रकारविषैं तिनस्थाननिके प्रकारनिविषै संभवते आस्रवनिकी अपेक्षा कूटरचनाके विधानका वर्णन है। बहुरि चौथा प्रकारविषैं तिनहू कूटनिके अनुसारि अक्षसंचारि विधानतें जैसें जैसें आस्रवस्थाननिकौं कहनेका विधानरूप कूटोच्चारण विधानका वर्णन है। तहां अविरतविषैं युगपत् संभवते हिंसाके प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भेदनिका, अर ते भेद जेते होंइ ताका वर्णन है। बहुरि पांचवां प्रकारविषैं तिनस्थाननिविषैं भंग ल्यावनेके विधानका, वा गुणस्थाननिविषैं संभवते भंगनिका, तहां अविरतविषैं हिंसाके प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंग ल्यावनेकौं गणितशास्त्र अनुसार प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी आदि भंगनिके ल्यावनेके विधानका वर्णन है। बहुरि आस्रवनिके विशेषभूत जिनि जिनि भावतें स्थिति अनुभागकी विशेषतालीयें ज्ञानावरणादि जुदी जुदी प्रकृतिनिका बंध होइ तिनका क्रमतैं वर्णन है ॥

बहुरि सातवां भाव चूलिका नामा अधिकार है। तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि भावनितैं गुणस्थानसंज्ञा होहै ऐसैं कहि पंचमूल भावनिका, अर इनके स्वरूपका, अर तरेपन उत्तर भावनिका, अर मूल उत्तर भावनिविषैं अक्षसंचार विधानतैं प्रत्येक परसंयोगी द्विसंयोगी आदि भंग जैसे होंइ ताका, अर नाना जीव नाना काल अपेक्षा गुणस्थाननिविषैं संभवते भावनिका वर्णन है। बहुरि एक जीवकैं युगपत् संभवते भावनिका वर्णन है। तहां

१ ख पुस्तक यह पाठ नहीं हैं।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणस्थाननिविषैं मूलभावनिके प्रत्येक परसंयोगी द्विसंयोगी आदि संभवते भंगनिका वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ प्रत्येक द्विसंयोगी त्रिसंयोगी आदि भंग ल्यावनेका गणितशास्त्र अनुसार विधान वर्णन है। बहुरि गुणस्थाननिविषैं मूलभावनिकी वा तिनके भंगनिकी संख्याका वर्णन है। बहुरि उत्तर भावनिके भंग स्थानगत पदगत भेदतैं दोयप्रकार कहे हैं तहां एक जीवकैं एककाल संभवते भावनिका समूह सो स्थान तिस अपेक्षा जे स्थानगतभंग तिनविषैं स्वसंयोगी भंगके अभावका अर गुणस्थाननिविषैं संभवते औपशमिकादिक भावनिका अर औदयिकके स्थाननिके भंगनिका वर्णनकरि तहां संभवते स्थाननिके परस्पर संयोगकी अपेक्षा गुण्य गुणकार क्षेपादि विधानतैं जैसैं जेते प्रत्येक भंग अर परसंयोगीविषैं द्विसंयोगी आदि भंग होंहि तिनका, अर तहां गुण्य गुणकार क्षेपका प्रमाण कहि सर्वभंगनिके प्रमाणका वर्णन है। बहुरि जातिपद सर्वपद भेदकरि पदगत भंग दोयप्रकार तिनिका स्वरूप कहि गुणस्थाननिविषैं जैसैं जेते जेते जातिपद संभवैं तिनका, अर तिनकौं परस्पर लगावनेकी अपेक्षा गुण्य गुणकार क्षेप आदि विधानतैं जेते जेते प्रत्येक स्वसंयोगी परसंयोगी द्विसंयोगी आदि भंग संभवैं तिनका, अर तहां गुण्य गुणकार क्षेपका प्रमाण कहि सर्व भंगनिके प्रमाणका वर्णन है। बहुरि पिंडपद, प्रत्येकपद भेदकरि सर्वपद भंग दोयप्रकार है तिनके स्वरूपका, अर गुणस्थाननिविषैं ए जेते जैसैं संभवैं ताका, अर तहां परस्पर लगावनेतैं प्रत्येक द्विसंयोगी आदि भंग कीए जे भंग होंहि तिनका, तहां मिथ्यादृष्टिका पंद्रहवां प्रत्येकपदविषैं भंग ल्यावनेका प्रसंग पाइ गणित शास्त्रके अनुसार एकवार दोयवार आदि संकलन धनके विधानका, अर गुणस्थाननिविषैं प्रत्येकपद पिंडपदनिकी रचनाके विधानका, अर प्रत्येकपदनिके प्रमाणका, अर तहां जेते सर्वपद भंग भए तिनका वर्णन है। बहुरि इहां तीनसै तरेसठि कुवादके भेदनिका अर तिनविषैं जैसैं प्ररूपण है ताका, अर एकांतरूप मिथ्यावचन स्याद्वादरूप सम्यग्वचनका वर्णन है।

बहुरि आठवां त्रिकरणचूलिकानामा अधिकार है। तहां मंगलाचरणकरि करणनिका प्रयोजन कहि अधःकरणका वर्णनविषैं ताके कालका अर तहां संभवते सर्व परिणाम, प्रथमसमयसंबंधी परिणाम, अर समय समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम, वा द्वितीयादि समयसंबंधी परिणाम, वा समय समय संबंधी परिणामनिविषैं खंड रचनाकरि अ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नुकृष्टि विधान, तहां खंडनिविषैं प्रथमखंडविषैं वा खंड खंड प्रतिवृद्धिरूप वा द्वितीयादि खंडनिविषैं परिणाम तिनका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। तहां श्रेणीव्यवहार नामा गणितके सूत्रनिके अनुसार ऊर्ध्वरूप गच्छ चय उत्तरधन आदिधन सर्वधनादिकका, अर अनुकृष्टिविषैं तिर्यग्रूप गच्छादिकके प्रमाण ल्यावनेका, विधान वर्णन है। अर तिन खंडनिविषैं विशुद्धि ताका अल्प बहुत्वका वर्णन है। बहुरि अपूर्वकरणका वर्णनविषैं अनुकृष्टि विधान नाहीं, ऊर्ध्वरूप गच्छादिकका प्रमाण ल्यावनेका विधानपूर्वक ताके कालका वा सर्व परिणाम प्रथमसमयसंबंधीपरिणाम समय समय प्रति वृद्धिरूप परिणाम द्वितीयादि समयसंबंधी परिणाम तिनका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। बहुरि अनिवृत्तिकरणविषैं भेद नाहीं तातैं तहां कालादिकका वर्णन है॥

बहुरि नवमा कर्मस्थिति अधिकार है। तहां नमस्कारपूर्वक प्रतिज्ञाकरि आबाधाके लक्षणका वा स्थिति अनुसार ताके कालका, वा उदीरणा अपेक्षा आबाधा कालका वर्णन है। बहुरि कर्मस्थितिविषैं निषेकनिका वर्णन है। बहुरि प्रथमादि गुणहानिनिके प्रथमादि निषेकनिका वर्णन है। बहुरि स्थितिरचनाविषैं द्रव्य १, स्थिति २, गुणहानि ३, नानागुणहानि ४, दोगुणहानि ५, अन्योन्याभ्यस्त ६, इनके स्वरूपका, अर अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा तिनके प्रमाणका वर्णन है। तहां नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्तराशि सर्व कर्मनिका समान नाहीं तातैं इनका विशेष वर्णन है। तहां मिथ्यात्वकर्मकी नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्त जाननेका विधान वर्णन है। इहां प्रसंग पाइ 'अंतधणं गुणगुणियं' इत्यादि करणसूत्रकरि गुणकाररूप पंक्तिके जोडदेनेका विधान आदि वर्णन है। बहुरि गुणहानि दोगुणहानिके प्रमाणका वर्णन है। तहां ही विशेष जो चय ताका प्रमाणका वर्णन है। ऐसैं प्रमाण कहि प्रथमादि गुणहानिनिका वा तिनविषैं प्रथमादि निषेकनिका द्रव्य जाननेका विधान वा ताका प्रमाण अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। बहुरि मिथ्यात्ववत् अन्यकर्मनिकी रचना है। तहां गुणहानि दो गुणहानि तौ समान हैं। अर नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्तराशि समान नाहीं तिनके जाननेकौं सातिपंक्तिकरि विधान कहि तिनके प्रमाणका, अर जिस जिसका जेता जेता नानागुणहानि अन्योन्याभ्यस्तका प्रमाण आया ताका वर्णन है। बहुरि ऐसैं कहि अंकसंदृष्टि अपेक्षा त्रिकोणयंत्र, अर त्रिकोणयंत्रका प्रयोजन, अर तहां एक एक निषे-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

क मिलि एक एक समय प्रबद्धका उदय होहै अर सर्व त्रिकोणयंत्रके निषेक जोडैं किंचिदून द्व्यर्द्ध गुणहानि गुणित समयप्रबद्ध प्रमाण सत्त्व होहै तिनका वर्णन है। बहुरि निरंतर सांतररूप स्थितिके भेद स्वरूप स्वामीनिका वर्णन है। बहुरि स्थितिबंधकौं कारण जे स्थितिबंधाध्यवसायस्थान तिनका वर्णनविषैं आयु आदि कर्मके स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननिके प्रमाणका अर स्थितिबंधाध्यवसायके स्वरूप जाननेकौं सिद्धांत वचननिका वर्णनकरि स्थितिके भेदनिकौं कहि तिनविषैं जेते जेते स्थितिबंधाध्यवसायस्थान संभवैं तिनके जाननेकौं द्रव्य, स्थिति, गुणहानि, नानागुणहानि, दो गुणहानि, अन्योन्याभ्यस्तका वा चयका, वा प्रथमादि गुणहानिनिका, वा तिनके निषेकनिका, वा आदिधनादिकका द्रव्यप्रमाण अर ताके जाननेकौं विधान ताका वर्णन है। बहुरि इहां एक एक स्थितिभेदसंबंधी स्थितिबंधाध्यवसायस्थाननिविषैं नानाजीव अपेक्षा खंड हो है। तहां ऊपरली नीचली स्थितिसंबंधी खंड समान भी हो हैं तातैं तहां अनुकृष्टि रचनाका वर्णन है। तहां आयुकर्मका जुदा ही विधान है तातैं पहिलैं आयुकी कहि पीछैं मोहादिककी अनुकृष्टि रचनाका अंकसंदृष्टि वा अर्थ अपेक्षा वर्णन है। तहां खंडनिकी समानता असमानता इत्यादि अनेक कथन है। बहुरि अनुभाग बंधकौं कारण जे अनुभागाध्यवसायस्थान तिनका वर्णनविषैं तिन सर्वनिका प्रमाण कहि तहां एक एक स्थिति भेदसंबंधी स्थिति बंधाध्यवसायस्थाननिविषैं द्रव्य स्थिति गुणहानि आदिका प्रमाणादिक कहि एक एक स्थिति बंधाध्यवसायस्थानरूप जे निषेक तिनविषैं जेते जेते अनुभागाध्यवसायस्थान पाइए तिनका वर्णन है। बहुरि मूलग्रंथकर्त्ताकरि कीया हुवा ग्रंथकी संपूर्णता होनेविषैं ग्रंथके हेतुका चामुंडराय राजाका आशीर्वादका, ताकरि बनाया चैत्यालय वा जिनबिंबका वीरमार्तंड राजाकौं आशीर्वादका वर्णन है। बहुरि संस्कृत टीकाकार अपने गुरुनिका वा ग्रंथ होनेके समाचार कहे हैं तिनका वर्णन है।

ऐसैं श्रीमद्गोम्मटसार द्वितीय नाम पंचसंग्रह मूलशास्त्र ताकी जीवतत्त्वप्रदीपिका नाम संस्कृतटीकाके अनुसार इस भाषाटीकाविषैं अर्थका वर्णन होसी ताकी सूचनिका कही ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि तहां जे संदृष्टि हैं तिनका अर्थ, वा कहे अर्थनिकी संदृष्टि जाननेकौं इस भाषाटीकाविषैं जुदा ही संदृष्टि अधिकार वर्णन होगी।

इहां कोऊ कहै-अर्थका स्वरूप जान्या चाहिये संदृष्टिनिके जानैं कहा सिद्धि होहै ? ताका समाधान— संदृष्टि जानैं पूर्वाचार्यनिकी परंपरातैं चल्या आया जो संकेतरूप अभिप्राय ताकौं जानिए है। अर थोरेमैं बहुत अर्थकौं नीकै पहिचानिए है। अर मूलशास्त्र वा संस्कृतटीकाविषैं, अर अन्य ग्रंथनिविषैं जहां संदृष्टिरूप व्याख्यान है तहां प्रवेश पाइए है। अर अलौकिक गणितके लिखनेका विधान आदि चमत्कार भासै है। अर संदृष्टि देखते ही ग्रंथकी गंभीरता प्रगट हो है इत्यादि प्रयोजन जानि संदृष्टि अधिकार करनेका विचार कीया है। तहां केई संदृष्टि आकाररूप हैं, केई अंकरूप हैं, केई अक्षर रूप हैं, केई लिखनेहीका विशेषरूप हैं सो तिस अधिकारविषैं पहिलै तौ सामान्यपनैं संदृष्टिनिका वर्णन है। तहां पदार्थनिके नामतैं, संख्यातैं अर अक्षरनितैं अंकनिकी अर प्रभृति आदिकी संदृष्टिनिका वर्णन है। बहुरि सामान्य संख्यात असंख्यात अनंतकी अर इनके इकईस भेदनिकी, अर पल्य आदि आठ उपमा प्रमाणकी, अर इनके अर्धच्छेद वा वर्गशलाकानिकी संदृष्टिनिका वर्णन है। बहुरि परिकर्माष्टकविषैं संकलनादि होतैं जैसैं सहनानी हो है, अर बहुतप्रकार संकलनादि होतैं वा संकलनादि आठविषैं एकत्र दोय तीन आदि होतैं जो सहनानी हो है, वा संकलनादिविषैं अनेक सहनानीका एक अर्थ हो है इत्यादिकनिका वर्णन है। अर स्थिति अनुभागादिकविषैं आकाररूप सहनानी हैं, वा केई इच्छितसहनानी हैं इत्यादिकनिका वर्णन है। ऐसैं सामान्य वर्णनकरि पीछैं श्रीमद्गोम्मटसारनामा मूलशास्त्र वा ताकी जीवतत्त्वप्रदीपकानामा-टीका ताविषैं जिस जिस अधिकारविषैं कथनका अनुक्रमलीए संख्यातादिक अर्थकी जैसैं जैसैं संदृष्टि है तिनका अनुक्रमतैं वर्णन है। तहां केई करण वा त्रिकोणयंत्रका जोड इत्यादिकनिका संदृष्टिनिकी संस्कृतटीकाविषैं वर्णन था अर भाषा करतैं अर्थ न लिख्या था तिनका इस संदृष्टि अधिकारविषैं अर्थ लिखिएगा अर मूलशास्त्रके यंत्ररचनाविषैं वा संस्कृतटीकाविषैं केई संदृष्टिरूप रचना ही लिखी थी तिनकौं अर्थपूर्वक इस संदृष्टि अधिकारविषैं लिखिएगा सो तिनकी इहां सूचनिका लिखैं विस्तार होइ तातैं तहां ही वर्णन होगा सो जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

इहां कोऊ कहै-मूलशास्त्र वा टीकाविषैं जहां संदृष्टि वा अर्थ लिख्या था तहां ही तुम भी तिनके अर्थनिका निरूपणकरि क्यों न लिखन कीया ? तहां छोडि तिनकौं एकत्रकरि संदृष्टि अधिकारविषैं वर्णन कीया सो कौंन कारण ? तहां समाधान—

जो यहु टीका मंदबुद्धीनिकैं ज्ञान होनेके अर्थि करिए है सो याविषैं वीचि वीचि संदृष्टि लिखनेतैं कठिनता तिनकौं भासै तब अभ्यासतैं विमुख होंइ तातैं जिनकौं अर्थमात्र ही प्रयोजन होहि सो अर्थहीका अभ्यास करौ अर जिनकौं संदृष्टिकौं भी जाननी होइ ते संदृष्टि अधिकारविषैं तिनका भी अभ्यास करौ।

बहुरि इहां कोई कहै-तुम ऐसा विचार कीया परंतु कोई इस टीकाका अवलंबनतैं संस्कृतटीकाका अभ्यास कीया चाहै तौ कैसैं अभ्यास करै ताकौं कहिए है—

अर्थका तौ अनुक्रम जैसे संस्कृतटीकाविषैं है तैसैं याविषै है ही। अर जहां जो संदृष्टि आदिका कथन वीचिमैं आवै ताकौं संदृष्टि अधिकारविषैं तिस स्थलविषैं वाकी कथन है ताकौं जानि तहां अभ्यास करौ। ऐसैं विचारि संदृष्टि अधिकार करनेका विचार कीया है।

बहुरि ऐसा विचार भया जो लब्धिसार अर क्षपणासार नामा शास्त्र है तिनविषैं सम्यक्त्वका अर चारित्रका विशेषतालीएं बहुत नीकै वर्णन है। अर तिस वर्णनकौं जानै मिथ्यादृष्ट्यादि गुणस्थाननिका भी स्वरूप नीकै जानिए है सो इनका जानना बहुत कार्यकारी जानि तिन ग्रंथनिके अनुसारि किछू कथन करना तातैं लब्धिसार शास्त्रके गाथा सूत्रनिकी भाषाकरि इस ही टीकाविषैं मिलाइएगा। तिसहीके क्षपक श्रेणीका कथनरूप गाथा सूत्रनिका अर्थविषैं क्षपणासारका अर्थ गर्भित होयगा ऐसा जानना।

इहां कोऊ कहै--तिन ग्रंथनिकी जुदी ही टीका क्यों न करिए ? याहीविषैं कथन करनेका कहा प्रयोजन ? ताका समाधान—

गोम्मटसारविषैं कह्या हूवा केते इक अर्थनिकौं जानैं विना तिन ग्रंथनिविषैं कह्या हूवा केते इक अर्थनिका

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ज्ञान न होय, वा तिनग्रंथनिविषैं कह्या हूवा अर्थकौं जानैं इस शास्त्रविषैं कहे हूए गुणस्थानादिक केतेइक अर्थनिका स्पष्ट ज्ञान होइ सो ऐसा संबंध जान्या अर तिन ग्रंथनिविषैं कहे अर्थ कठिन हैं सो जुदा रहे प्रवृत्ति विशेष न होइ तातैं इसही विषैं तिन ग्रंथनिका अर्थलिखनेका विचार कीया है। सो तिसविषैं प्रथमोपशम सम्यक्त्वादि होनेका विधान धाराप्रवाहरूप वर्णन है। तातैं ताकी सूचनिका लिखैं विस्तार होइ, कथन आगैं होयहीगा। तातैं इहां अधिकारमात्र ताकी सूचनिका लिखिए है।

प्रथम मंगलाचरण करि दशप्रकार कारणका वा प्रकृतिबंधापसरण, स्थितिबंधापसरण, स्थितिकांडक, अनुभागकांडक गुणश्रेणीफालि इत्यादि,केती इक संज्ञानिका स्वरूप वर्णन करि प्रथमोपशमसम्यक्त्व होनेका विधान वर्णन है। तहां प्रथमोपशम सम्यक्त्व होने योग्य जीवका, अर पंचलब्धिनिके नामादिक कहि तिनके स्वरूपका वर्णन है। तहां प्रायोग्यता लब्धिका कथनविषैं जैसैं स्थिति घटै है अर तहां च्यारि गति अपेक्षा प्रकृतिबंधापसरण हो है ताका, अर स्थिति अनुभाग प्रदेशबंधका वर्णन है। बहुरि च्यारि गति अपेक्षा एक जीवकैं युगपत् संभवता भंगसहित प्रकृतिनिके उदयका, अर स्थिति अनुभाग प्रदेशके उदयका वर्णन है। बहुरि एकजीवकैं युगपत् संभवती प्रकृतिनिके सत्त्वका अर स्थिति अनुभाग प्रदेशके सत्त्वका वर्णन है। बहुरि करणलब्धिका कथनविषैं तीन करणनिका नाम कालादिक कहि तिनके स्वरूपादिकका वर्णन है। तहां अधःकरणविषैं स्थितिबंधापसरणादिक आवश्यक हो है तिनका वर्णन है। अर अपूर्वकरण विषैं च्यारि आवश्यक तिनिविषैं गुणश्रेणी निर्जराका कथन है तहां अपकर्षण किया हुवा द्रव्यकौं जैसैं उपरितन स्थिति गुणश्रेणी आयाम उदयावली विषैं दीजिए है सो वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ उत्कर्षण वा अपकर्षण किया हूवा द्रव्यका निक्षेप अर अतिस्थापनका विशेष वर्णन है। बहुरि गुणसंक्रमण इहां न संभवै है सो जहां संभवै है ताका वर्णन है। बहुरि स्थितिकांडक अनुभाग कांडकके स्वरूप प्रमाणादिकका अर स्थिति अनुभागकांडकोत्करण कालका वर्णनपूर्वक स्थिति अनुभाग

१—"स्पष्ट रूप सबही न प्रतिभासैं" ऐसा ग पुस्तकमें पाठ है। २—"का अनुसारि किछू कथन" ऐसा ग प्रतिमें पाठ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

सत्त्व घटावनेका वर्णन है। बहुरि अनिवृत्ति करणविषैं स्थिति कांडकादि विधान कहि ताके काल संख्यातवां भाग रहें अंतरकरण हो है ताके स्वरूपका, अर आयाम प्रमाणका अर ताके निषेकनिका अभावकरि जहां निक्षेपण कीजिए है ताका इत्यादि वर्णन है। बहुरि अंतर करण करनेका अर प्रथम स्थितिका, अर अंतरायामका काल-वर्णन है। बहुरि अंतरकरणका काल पूर्ण भए पीछैं प्रथमस्थितिका काल विषैं दर्शनमोहके उपशमावनेका विधान काल अनुक्रमादिकका, तहां आगाल प्रत्यागाल जहां पाइए है वा न पाइए है ताका, दर्शनमोहकी गुणश्रेणी जहां न होइ है ताका इत्यादि अनेक वर्णन है। बहुरि पीछैं अंतरायामका काल प्राप्त भए उपशम सम्यक्त्व होनेका, तहां एक मिथ्यात्व प्रकृतिकौं तीन रूप परिणमावनेके विधानका वर्णन है। बहुरि उपशम-सम्यक्त्वका विधानविषैं जैसैं कालका अल्प बहुत्व पाइए है तैसैं वर्णन है। बहुरि प्रथमोपसम्यक्त्वविषैं मरणके अभावका, अर तहांतैं सासादन होनेके कारणका, अर उपशम सम्यक्त्वका प्रारंभ वा निष्ठापनविषैं जो जो उपयोग योग लेश्या पाइए ताका अर उपशम सम्यक्त्वके काल स्वरूपादिकका, अर तिस कालकौं पूर्ण भए पीछैं एक कोई दर्शनमोहकी प्रकृति उदय आवनेका, तहां जैसैं द्रव्यकौं अपकर्षण करि अंतरायामादि विषैं दीजिए है ताका, अर दर्शनमोहका उदय भए वेदक सम्यक्त्व वा मिश्र गुणस्थान वा मिथ्यादृष्टि गुणस्थान हो है तिनके स्वरूपका वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वका विधान वर्णन है। तहां क्षायिक सम्यक्त्वका प्रारंभ जहां होइ ताका, अर प्रारंभनिष्ठापन अवस्थाका वर्णन है। बहुरि अनंतानुबंधीके विसंयोजनका वर्णन है। तहां तीन करणनिका अर अनिवृत्तिकरणविषैं स्थिति घटनेका अर अन्यकषायरूप परिणमनेके विधान प्रमाणादिकका कथन है। बहुरि विश्राम लेइ दर्शनमोहकी क्षपणा हो है ताका विधान वर्णन है। तहां संभवता स्थिति कांडादिकका वर्णन है। अर मिथ्यात्व मिश्रमोहनी सम्यक्त्वमोहनीविषैं स्थिति घटावनेका, वा संक्रमण होनेका विधान वर्णनकरि सम्यक्त्व मोहनीकी आठ वर्ष प्रमाण स्थिति रहें अनेक क्रिया विशेष हो हैं, वा

१-"अंतरायकरनेका" ग प्रतिमें ऐसा पाठ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

तहां गुणश्रेणी स्थितिकांडकादिकविषैं विशेष हो है तिनका वर्णन है। बहुरि कृतकृत्य वेदक सम्यग्दृष्टि होने का वा तहां मरण होतें लेश्या वा उपजनेका, वा कृतकृत्य वेदक भए पीछें जे क्रिया विशेष हो हैं अर तहां अंतकांडक वा अंतफालिविषैं विशेष हो है तिनिका वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्व होनेका वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वके विधानविषैं संभवते कालका तेतीस जायगां अल्प बहुत्व वर्णन है। बहुरि क्षायिक सम्यक्त्वके स्वरूपका वा मुक्त होनेका इत्यादि वर्णन है।

बहुरि चारित्र दोय प्रकार—देशचारित्र सकलचारित्र। सो ए जाकैं होंइ वा सन्मुख होतैं जो क्रिया होइ सो कहि देशचारित्रका वर्णन है। तहां वेदक सम्यक्त्वसहित देशचारित्र जो ग्रहै ताके दोइ ही कारण होंइ, गुणश्रेणी न होइ देश संयतकौं प्राप्त भए गुणश्रेणी होइ इत्यादि वर्णन है बहुरि एकांतवृद्धि देशसंयतके स्वरूपादिकका वर्णन है। बहुरि अधःप्रवृत्त देशसंयतका वर्णन है। तहां ताके स्वरूप कालादिकका, अर तहां स्थिति अनुभाग खंडन न होइ, अर तहां देशसंयततैं भ्रष्ट होइ देशसंयतकौं प्राप्त होइ ताकैं कारण होने न होनेका, अर देशसंयतविषैं संभवते गुणश्रेण्यादि विशेषका वर्णन है। बहुरि देशसंयमके विधानविषैं संभवते कालका अल्पबहुत्वताका वर्णन है। बहुरि जघन्य उत्कृष्ट देशसंयम जाकैं होइ ताका, अर देशसंयमविषैं स्पर्द्धक वा अविभागप्रतिच्छेद पाइए ताका वर्णन है। बहुरि देशसंयमके स्थाननिका, अर तिनके प्रतिपात प्रतिपाद्यमान अनुभयरूप तीनप्रकारानिका, अर ते क्रमतैं जैसैं जिनकैं जेते पाइए, अर वीचिमें स्वामीरहित स्थान पाइए तिनिका, अर तहां विशुद्धताका वर्णन है। बहुरि सकलचारित्र तीनप्रकार, क्षायोपशमिक, औपशमिक, क्षायिक तहां क्षायोपशमिक चारित्रका वर्णन है। तिसविषैं यहु जाकैं होइ ताका, वा सन्मुख होतैं जो क्रिया होइ ताका वर्णन करि वेदक सम्यक्त्वसहित चारित्र ग्रहण करनेवालेकैं दोय ही करण होंइ इत्यादि अल्प बहुत्व पर्यंत सर्वकथन देशसंयतवत् है ताका वर्णन है। बहुरि सकलसंयत स्पर्द्धक वा अविभाग प्रतिच्छेदनिका कथन करि प्रतिपात

१ 'होनेका' ऐसा ख पुस्तकमें पाठ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

प्रतिपाद्यमान अनुभयरूप स्थान कहि ते जैसें जेते जिस जीवके पाइए तिनिका क्रमतें वर्णन है। तहां विशुद्धता वा म्लेछके सकलसंयम संभवनेका वा सामायिकादिसंबंधी स्थाननिका इत्यादि विशेष वर्णन है। बहुरि औपशमिक चारित्रका वर्णन है। तहां वेदकसम्यक्त्वी जिस विधानपूर्वक क्षायिकसम्यक्त्वी वा द्वितीयोपशमसम्यक्त्वी होइ उपशमश्रेणी चढै है ताका वर्णन है। तहां द्वितीयोपशम सम्यक्त्व होनेका विधानविषैं तीन करण गुणश्रेणी स्थितिकांडकादिक वा अंतरकरणादिकका विशेष वर्णन है।

बहुरि उपशमश्रेणीविषैं आठ अधिकार हैं तिनिका वर्णन है। तहां प्रथम अधःकरणका वर्णन है। बहुरि दूसरा अपूर्वकरणका वर्णन है। इहां संभवते आवश्यकनिका वर्णन है। तहांतैं लगाय उपशम श्रेणीका चढना उतरणाविषैं स्थितिबंधापसरण अर स्थितिकांडक वा अनुभागकांडकके आयामादिकके प्रमाणका, अर इनकौं होतैं जैसा जैसा स्थितिबंध अर स्थितिसत्त्व अर अनुभागसत्त्व अवशेष रहै ताका यथा ठिकाणैं वीचि वीचि वर्णन है सो कथन आगैं होइगा तहां जानना। बहुरि अपूर्वकरणका वर्णनविषैं प्रसंग पाइ अनुभागके स्वरूपका वा वर्ग वर्गणा स्पर्द्धकगुणहानि नानागुणहानिका वर्णन है। अर इहां गुणश्रेणी संक्रम हो है अर प्रकृतिबंधका व्युच्छेद हो है ताका वर्णन है। बहुरि अनिवृत्तिकरणका कथनविषैं दश करणनिविषैं तीन करणनिका अभाव हो है ताका अनुक्रमलीऐं कर्मनिका स्थितिबंध करनेरूप क्रम करण हो है ताका, तहां असंख्यातसमयप्रबद्धनिकी उदीरणादिकका, अर कर्मप्रकृतिनिके स्पर्द्धक देशघाती करनेरूप देशघाती करणका, अर कर्मप्रकृतिनिकैं केतेइक निषेकनिका अभावकरि अन्य निषेकनिविषैं निक्षेपण करनेरूप अंतर करणका, अर अंतरकरणकी समाप्तता भए युगपत् सातकरणनिका प्रारंभ हो है ताका, तहां ही आनुपूर्वी संक्रमणका इत्यादि वर्णनकरि नपुंसकवेद अर स्त्रीवेद अर छह हास्यादिक पुरुष वेद तीन क्रोध अर तीन मान अर तीन माया अर दोय लोभ इनके उपशमावनेके विधानका अनुक्रमतैं वर्णन है। गुणश्रेणीका वा स्थिति अनुभागकांडक घात होने न होनेका अर नपुंसकवेदादिकविषैं नरकबंधके स्वरूप परिणमनादि विशेषका, वा प्रथम स्थितिके स्वरूपका आदि विशे-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

षका, वा तहां आगाल प्रत्यागाल गुणश्रेणी न हो है इत्यादि विशेषनिका, अर संक्रमणादि विशेष पाइए हैं तिनका इत्यादि अनेक वर्णन पाइए है। बहुरि संज्वलनलोभका उपशम विधानविषैं लोभ वेदकालके तीन भागनिका, अर तहां प्रथम स्थिति आदिकका वर्णनकरि सूक्ष्मकृष्टि करनेका विधान वर्णन है। तहां प्रसंग पाइ वर्ग वर्गणा स्पर्द्धकानिका कथनकरि अर कृष्टि करनेका वर्णन है। इहां वादरकृष्टि तो है ही नाही,सूक्ष्मकृष्टि हो है तिनविषैं जैसैं कर्मपरमाणु परिणमै हैं वा तहां ही जैसैं अनुभागादिक पाइए है, वा तहां अनुसमयापवर्त्तनरूप अनुभागका घात हो है इत्यादिकनिका, अर उपशमावने आदि क्रियानिका वर्णन है। बहुरि सूक्ष्मसांपरायगुणस्थानकौं प्राप्त होइ सूक्ष्मकृष्टिकौं प्राप्त जो लोभ ताके उदयकौं भोगवनेका, तहां संभवती गुणश्रेणी प्रथमस्थिति आदिका इहां उदय अनुदयरूप जैसैं कृष्टि पाइए तिनका, वा संक्रमण उपशमनादि क्रियानिका वर्णन है। बहुरि सर्वकषाय उपशमाय उपशांत कषाय हो है ताका, अर इहां संभवती गुणश्रेणी आदि क्रियानिका, अर इहां जे प्रकृति उदय हैं तिनिविषैं परिणामप्रत्यय अर भवप्रत्ययरूप विशेषका वर्णन है। ऐसैं इकईस चारित्र मोहकी प्रकृति उमशमावनेका विधानकरि उपशांत कषायतैं पडनेरूप दोयप्रकार प्रतिपातका, तहां भवक्षयनिमित्त प्रतिपाततैं देवसंबंधी असंयत गुणस्थानकौं प्राप्त हो है, तहां गुणश्रेणी वा अनुपशमन वा अंतरका पूरण करना इत्यादि जे क्रिया हो हैं तिनका वर्णन है। अद्धा क्षयनिमित्ततैं क्रमतैं पडि स्वस्थान अप्रमत्तपर्यंत आवै तहां गुणश्रेणी आदिकका, वा चढतैं जे क्रिया भई थी तिनका अनुक्रमतैं नष्ट होनेका वर्णन है। बहुरि अप्रमत्ततैं पडनेका तहां संभवती क्रियानिका अर अप्रमत्ततैं चढै तौ बहुरि श्रेणी मांडै ताका वर्णन है। ऐसैं पुरुषवेद संज्वलन क्रोधका उदयसहित जो श्रेणी मांडै ताकी अपेक्षा वर्णन है। बहुरि पुरुषवेद संज्वलन मानसहित आदि ग्यारह प्रकार उपशम श्रेणी चढनेवालौंकैं जो जो विशेष पाइए हैं तिनका वर्णन है। बहुरि इस उपशमचारित्र विधानविषैं संभवते कालका अल्पबहुत्व वर्णन है।

बहुरि क्षपणासारके अनुसारिलीएं क्षायिकचारित्रके विधानका वर्णन है। तहां अधःकरणादि सोलह अ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धिकारानिका अर क्षपकश्रेणीकौं सन्मुख जीवका वर्णन है। बहुरि अधःकरणका वर्णन है। तहां विशुद्धिता-की वृद्धि आदि च्यारि आवश्यकनिका, अर तहां संभवते परिणाम योग कषाय उपयोग लेश्या वेद अर प्रकृति स्थिति अनुभाग प्रदेशरूप कर्मनिका सत्त्व बंध उदय तिनका वर्णन है। बहुरि अपूर्वकरणका वर्णन है। तहां संभवते स्थितिकांडकघात, अनुभागकांडकघात, गुणश्रेणि गुणसंक्रम, इनका विशेष वर्णन है। अर इहां प्रकृति बंधकी व्युच्छित्ति हो है तिनका वर्णन है। इहांतैं लगाय क्षपकश्रेणीविषैं जहां जैसा जैसा स्थितिबंधापसरण, अर स्थितिकांडकघात, अर अनुभागकांडकघात पाइए अर इनकौं होतैं जैसा स्थितिबंध, अर स्थितिसत्त्व अर अनुभागसत्त्व रहै तिनका वीच वीच वर्णन है। सो कथन होगा तहां जानना। बहुरि अनिवृत्तिकरणका कथन है। तहां स्वरूप गुणश्रेणी स्थितिकांडकादि वर्णनकरि कर्मनिका क्रम लीएं स्थितिबंध, स्थितिसत्त्व करनेरूप क्रमकरणका वर्णन है। बहुरि गुणश्रेणीविषैं असंख्यातसमयप्रबद्धनिकी उदीरणा होनेलगी ताका वर्णन है बहुरि प्रत्याख्यान अप्रत्याख्यानरूप आठ कषायनिके खिपावनेका विधानवर्णन है। बहुरि निद्रा निद्रा आदि सोलह प्रकृति खिपावनेका विधान वर्णन है। बहुरि प्रकृतिनिकी देशघातिस्पर्द्धकनिका बंध करनेरूप देशघाती करणका वर्णन है। बहुरि च्यारि संज्वलन नवनोकषायनिके केते इक निषेकनिका अभावकरि अन्यत्र निक्षेपण करनेरूप अंतरकरणका वर्णन है। बहुरि नपुंसकवेद क्षपावनेका विधान वर्णन है। तहां संयमका वा युगपत सातक्रियानिका प्रारंभ होहै तिनका इत्यादि वर्णन है। बहुरि स्त्रीवेद क्षपावणेका वर्णन है। बहुरि छह नोकषाय अर पुरुषवेद इनकी क्षपणाका विधान वर्णन है। बहुरि अश्वकरणसहित अपूर्वस्पर्द्धक करणेका वर्णन है। तहां पूर्वस्पर्द्धक जाननेकौं वर्ग वर्गणा स्पर्द्धकनिका, अर तिनविषैं देशघाती सर्वघातीनिके विभागका, वा वर्गणाकी समानता असमानता आदिकका कथनकरि अश्वकरणके स्वरूप विधान क्रोधादिकनिके अनुभागका प्रमाणादिकका अर अपूर्वस्पर्द्धकनिके स्वरूप प्रमाणका तिनविषैं द्रव्य अनुभागादिकका प्रमाणका, तहां समय समयसंबंधी क्रियानिका वा उदयादिकका बहुत वर्णन है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि कृष्टिकरणका वर्णन है। तहां क्रोधवेदक कालके विभागका, अर वादरकृष्टिके विधानविषैं कृष्टिनिके स्वरूपका, तहां बारह संग्रहकृष्टि, एक एक संग्रहकृष्टिविषैं अनंती अंतरकृष्टि तिनका, अर तिनविषैं प्रदेश अनुभागादिकके प्रमाणका तहां समय समय संबंधी क्रियानिका वा उदयादिकका अनेक वर्णन है। बहुरि कृष्टि वेदनाका विधान वर्णन है। तहां कृष्टिनिके उदयादिकका, वा संक्रमका, वा घात करनेका, वा समयसमयसंबंधी क्रियानिका विशेष वर्णन करि क्रमतैं दश संग्रहकृष्टिनिके भोगवनेका वा तहां संक्रम होनेका विधान प्रमाणादिकका बहुत कथनकरि तिनकी क्षपणाका विधान वर्णन है। बहुरि अन्य प्रकृति संक्रमणकरि इनरूप परिणमी तिनके द्रव्यसहित लोभकी द्वितीय तृतीय संग्रह कृष्टिके द्रव्यकौं सूक्ष्म कृष्टिरूप परिणमावै है ताके विधानका स्वरूप प्रमाणादिकका वर्णन है। ऐसैं अनिवृत्तिकरणका बहुत वर्णन है। याविषैं गुणश्रेणी अनुभागघातके विशेष आदि वीचि वीचि अनेक कथन पाइए है सो आगे कथन होइगा तहां जानना। बहुरि सूक्ष्मसांपरायका वर्णन है। तहां स्थिति अनुभागका घातका वा गुणश्रेणी आदिका कथन करि वादर कृष्टिसंबंधी अर्थका निरूपणपूर्वक सूक्ष्मसांपराय संबंधी कृष्टिनिके अर्थका निरूपण, अर तहां सूक्ष्मकृष्टिनिका उदय अनुदय प्रमाण अर संक्रमण क्षयादिकका विधान इत्यादि अनेक वर्णन है। बहुरि यहु तौ पुरुषवेद संज्वलन क्रोधका उदयसहित श्रेणी चढ्या ताकी अपेक्षा कथन है। बहुरि पुरुषवेद संज्वलन मान आदिका उदयसहित ग्यारह प्रकार श्रेणी चढनेवालेंकैं जो जो विशेष पाइए ताका वर्णन है। ऐसैं कृष्टिवेदना पूर्ण भएं बहुरि क्षीणकषायका वर्णन है। तहां ईर्यापथबंधका, अर स्थिति अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदिकका, वा तहां संभवते ध्यानादिकका अर ज्ञानावरणादिकके क्षयहोनेके विधानका, अर इहां शरीरसंबंधी निगोदजीवनिके अभाव होनेके क्रमका इत्यादि वर्णन है। बहुरि सयोगकेवलीका वर्णन है। तहां ताके महिमाका अर गुणश्रेणीका अर विहार आहारादिक होने न होनेका वर्णन करि अंतर्मुहूर्त्त मात्र आयु रहै आवर्जित करण हो है ताका, तहां गुणश्रेणी आदि विशेषका, अर केवल समुद्घातका, तहां दंड

१ 'क्षपणादिकका' ऐसा क पुस्तकमें पाठ है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust eGangotri

कपाटादिकके विधान वा क्षेत्र प्रमाणादिकका, वा तहां संभवती स्थिति अनुभागघटने आदि क्रियानिका वा योगनिका इत्यादि वर्णन है। बहुरि वादर मनवचनकाय योगकौं निरोधि सूक्ष्मकरनेका, तहां जैसैं योग हो है ताका अर सूक्ष्म मनयोग वचनयोग उच्छ्वास निश्वास काययोगके निरोध करनेका तहां काययोगके पूर्वस्पर्द्धकनिके अपूर्वस्पर्द्धक अर तिनकी सूक्ष्मकृष्टि करिए है तिनका स्वरूपविधान प्रमाण समय समयसंबंधी क्रियाविशेष इत्यादिकका अर करी सूक्ष्मकृष्टि ताकौं भोगवता सूक्ष्मक्रियाप्रतिपातीध्यान युक्त हो है ताका वा तहां संभवते स्थिति अनुभागघात वा गुणश्रेणी आदि विशेषका वर्णन है। बहुरि अयोगकेवलीका वर्णन है। तहां ताकी स्थितिका शैलेश्यपनाका, ध्यानका, तहां अवशेष सर्वप्रकृति खिपावनेका वर्णन है। बहुरि सिद्धभगवानका वर्णन है तहां सुखादिकका महिमाका, स्थानकका, अन्यमतोक्त स्वरूपके निराकरणका इत्यादि वर्णन है। ऐसैं लब्धिसार वा क्षपणासारके कथनकी सूचनिका जाननी। बहुरि अंतविषैं अपने किछू समाचार प्रगटकरि इस सम्यग्ज्ञान चंद्रिकाकी समाप्तता होतैं कृतकृत्य होइ आनंददशाकौं प्राप्त होना होइगा। ऐसैं सूचनिका करि ग्रंथसमुद्रके अर्थ संक्षेपपनैं प्रकट कीए हैं।

इति सूचनिका।

बहुरि इस करणानुयोगरूप शास्त्रके अभ्यास करनेके अर्थि गणितका ज्ञान अवश्य चाहिये जातैं अलंकारादिक जानैं प्रथमानुयोगका, गणितादिक जानैं करणानुयोगका, सुभाषितादिक जानैं चरणानुयोगका, न्यायादिक जानैं द्रव्यानुयोगका विशिष्टज्ञान हो है तातैं गणित ग्रंथनिका अभ्यास करना। अर न बनैं तौ परिकर्माष्टक तौ अवश्य जान्या चाहिये। जातैं याकौं जाणैं अन्यगणित कर्मनिका भी विधान जानि तिनकौं जानैं अर इस शास्त्रविषैं प्रवेश पावै। तातैं इस शास्त्रका अभ्यास करनेका प्रयोजनमात्र परिकर्माष्टक वर्णन इहां करिए है—

तहां संकलन[1] व्यवकलन[2] गुणकार[3] भागहार[4] वर्ग[5] वर्गमूल[6] घन[7] घनमूल[8] ए आठ नाम जानने। ए लौकिक ग-

१ 'लब्धिसार' यह पाठ क और ग पुस्तकमें नहीं है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

णितविषैं भी संभवै हैं, अर अलौकिक गणितविषैं भी संभवै हैं। सो लौकिक गणित तौ प्रवृत्तिविषैं प्रसिद्ध ही है। अर अलौकिक गणित जघन्य संख्याताादिक वा पल्यादिकका व्याख्यान आगें जीव समासाधिकार पूर्णभए पीछें होइगा तहां जानना। अब संकलनादिकका स्वरूप कहिए है—

किसी प्रमाणकौं किसी प्रमाणविषैं जोडिये तहां संकलन कहिए जैसैं सातविषैं पांच जोडैं बारह होइ, वा पुद्गलराशिविषैं जीवादिकका प्रमाण जोडैं सर्वद्रव्यनिका प्रमाण होइहै। बहुरि किसीप्रमाणविषैं किसीप्रमाणकौं घटाइए तहां व्यवकलन कहिए। जैसैं बारहविषैं पांच घटाऐं सात होय,वा संसारी राशिविषैं त्रसराशिघटाऐं स्थावरनिका प्रमाण होइ। बहुरि किसीप्रमाणकौं किसीप्रमाणकरि गुणिए तहां गुणकार कहिए। जैसैं पाचकौं च्यारिकरि गुणिए वीस होइ, वा जीवराशिकौं अनंतकरि गुणैं पुद्गलराशि होइ। बहुरि किसीप्रमाणकौं किसीप्रमाणका जहां भाग दीजिऐ तहां भागहार कहिए। जैसैं वीसकौं च्यारिकरि भाग दीऐ पांच होइ, वा जगत् श्रेणीकौं सातका भाग दीए राजू होइ। बहुरि किसी प्रमाणकौं दोय जायगां मांडि परस्पर गुणिए तहां तिस प्रमाणका वर्ग कहिए जैसैं पांचकौं दोय जायगा मांडि परस्पर गुणैं पांचका वर्ग पचीस होइ। वा सूच्यंगुलकौं दोय जायगां मांडि परस्पर गुणैं सूच्यंगुलका वर्ग प्रतरांगुल होइ। बहुरि जो प्रमाण जाका वर्गकीयें होइ तिस प्रमाणका सो वर्गमूल कहिए जैसैं पचीस पांचका वर्गकीए होइ तातैं पचीसका वर्गमूल पांच है। वा प्रतरांगुल है सो सूच्यंगुलका वर्ग कीए होहै तातैं प्रतरांगुलका मूल वर्ग सूच्यंगुल है। बहुरि किसीप्रमाणकौं तीन जायगां मांडि परस्पर गुणैं तिस प्रमाणका घन कहिए। जैसैं पांचकौं तीन जायगां मांडि परस्पर गुणैं पांचका घन एकसौ पचीस होइ। वा जगत् श्रेणीकौं तीन जायगां मांडि परस्पर गुणैं लोक होइ। बहुरि जो प्रमाण जाका घन कीए होइ तिस प्रमाणका सो घनमूल कहिए। जैसैं एकसौ पचीस पांचका घन कीए होइ तातैं एकसौ पचीसका घनमूल पांच है। वा लोक है सो जगत् श्रेणीका घन कीए हो है तातैं लोकका घनमूल जगत्श्रेणी है।

अब इहां केते इक संज्ञाविशेष कहिए है-संकलनविषैं जोडनेयोग्य राशिका नाम धन है। मूलराशिकौं तिस

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धनकरि अधिक कहिए। जैसें पांच अधिक कोडि वा जीवराश्यादिककरि अधिक पुद्गल इत्यादिक जानने। बहुरि व्यवकलनविषैं घटावनेयोग्य राशिका नाम ऋण है। मूलराशिकौं तिस ऋणकरि हीन वा न्यून वा शोधित वा स्फोटित कहिए। जैसें पांचकरि हीन कोटि वा त्रसराशिहीन संसारी इत्यादि जानने। कहीं मूलराशिका नाम धन भी कहिए है। बहुरि गुणकारविषैं जाकौं गुणिए ताका नाम गुण्य कहिये। जाकरि गुणिए ताका नाम गुणकार वा गुणक कहिए। गुण्यराशिकौं गुणकारकरि गुणित वा हत वा अभ्यस्त वा घ्नत इत्यादि कहिए। जैसें पंचगुणित लक्ष वा असंख्यातकरि गुणित लोक कहिए। कहीं गुणकारका प्रमाण गुण्य कहिए है। जैसें पांचगुणां वीसकौं पांचवीसी कहिए असंख्यातगुणां लोककूं असंख्यात लोक कहिए इत्यादिक जानने। गुणनेका नाम गुणन वा हनन वा घात इत्यादि कहिए है। बहुरि भागहारका जाविषैं भाग दीजिए ताका नाम भाज्य वा हार्य इत्यादि है। अर जाका भाग दीजिए ताका नाम भागहार वा हार वा भाजक इत्यादि है। भाज्यराशिकूं भागहारकरि भाजित भक्त वा हत वा खंडित इत्यादि कहिए। जैसें पांचकरि भाजित कोटि वा असंख्यातकरि भाजित पल्य इत्यादिक जानने। भागहारका भाग देइ एक भागग्रहण करना होइ तहां तेथवां भाग वा एक भाग कहिये। जैसें वीसका चौथा भाग, वा पल्यका असंख्यातवां भाग इत्यादि जानने। बहुरि एक भागविना अवशेष भागग्रहण करने होंइ तहां बहुभाग कहिए। जैसें वीसके च्यारि बहुभाग वा पल्यका असंख्यात बहुभाग इत्यादि जानने। बहुरि वर्गका नाम कृति भी है। बहुरि वर्गमूलका नाम कृतिमूल वा मूल वा पद वा प्रथम मूल भी है। बहुरि प्रथममूलके मूलकौं द्वितीयमूल कहिए। द्वितीयमूलके मूलकौं तृतीयमूल कहिए। ऐसैं चतुर्थादिमूल जानने। जैसें पैंसठहजार पांचसौ छत्तीसका प्रथममूल दोयसै छप्पन, द्वितीयमूल सोलह, तृतीयमूल च्यारि, चतुर्थमूल दोय होइ। ऐसैं ही पल्य वा केवलज्ञानादिके प्रथमादिमूल जानने। ऐसैं अन्य भी अनेक संज्ञाविशेष यथासंभव जानने।

अब इहां विधान कहिए है। सो प्रथम लौकिकगणित अपेक्षा कहिए है। तहां ऐसा जानना "अंकानां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

वामतो गतिः।" अंकनिका अनुक्रम बाईंतरफ सेती है। जैसें दोयसै छप्पनके तीन अंकनिविषैं छका आदि अंक पांचा दूसरा अंक दूवा अंत अंक कहिये। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि प्रथम द्वितीय तृतीय चतुर्थ आदि अंकनिकौं क्रमतैं एकस्थानीय दशस्थानीय शतस्थानीय सहस्रस्थानीय आदि कहिए। प्रवृत्तिविषैं इनहीकौं इकवाई दाहकी सैकडा हजार आदि कहिए है। बहुरि संकलनादि होतैं प्रमाणल्यावनेकौं गणित कर्मकौं कारण जे करणसूत्र तिनकरि गणितशास्त्रनिविषै अनेकप्रकार विधान कह्या है सो तहातैं जानना वा त्रिलोकसारकी भाषाटीका बनी है तहां लौकिक गणितका प्रयोजन जानि पीठबंधविषैं किछू वर्णन किया है सो तहांतैं जानना। इस शास्त्रविषैं गणितका कथनकी मुख्यता नाहीं वा लौकिक गणितका बहुत विशेष प्रयोजन नाहीं तातैं इहां बहुत वर्णन न करिए है। विधानका स्वरूप मात्र दिखावनेकौं एकप्रकार करि किंचित् वर्णन करिए है। तहां संकलनविषैं जिनका संकलन करना होइ तिनके एकस्थानीय आदि अंकनिकौं क्रमतैं यथास्थान जोडैं जो अंक आवै सो सो अंक जोडविषैं क्रमतैं यथास्थान लिखना। सो प्रवृत्तिविषैं जैसैं जोड देनेका विधान है तैसैं ही यहु जानना। बहुरि जो एकस्थानीय आदि अंक जोडैं दोय तीन आदि अंक आवैं तौ प्रथम अंककौं जोडविषैं पहिले लिखिए। द्वितीय आदि अंकनिकौं दशस्थानीय आदि अंकनिविषैं जोडिए। याकौं प्रवृत्तिविषैं हाथ लागा कहिए है। ऐसैं करतैं जो आंक होइ सो जोड्या हुवा प्रमाण जानना। इहां उदाहरण—जैसैं दोयसै छप्पन अर चौरासी (२५६+८४) जोडिए। तहां एकस्थानीय छह अर च्यारि जोडैं दश भए। तहां जोडविषैं एकस्थानीय विंदी लिखी। अर रह्या एक, ताकौं अर दशस्थानीय पांचा आठा इनकौं जोडैं चौदह भए। तहां जोडविषैं दशस्थानीय चौका लिख्या अर रह्या एका, ताकौं अर शतस्थानीय दूवाकौं जोडैं तीन भया सो जोडविषैं शतस्थानीय लिख्या। ऐसैं जोडैं तीनसै चालीस भये। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि व्यवकलनविषैं मूलराशिके एकस्थानीय आदि अंकनिविषैं ऋणराशिके एकस्थानीय आदि अंकनिकौं यथाक्रम घटाइए। जो मूलराशिके एकस्थानीय आदि अंकतैं ऋणराशिके एकस्थानीय आदि अंक अ-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

धिक प्रमाणलीए होंइ तौ धनराशिके दशस्थानीय आदि अंकविषैं एक घटाइ धनराशिके एकस्थानीय आदि अंकविषैं दश जोडि तामैं ऋणराशिका अंक घटावना। सो प्रवृत्तिविषैं जैसैं वाकी काटनेका विधान है तैसैं ही यहु जानना। ऐसैं करतैं जो होइ सो अवशेष प्रमाण जानना। इहां उदाहरण-जैसैं छहसै पिचहत्तरि मूलराशिविषैं वाणवै (६७५-९२) ऋण घटावना होइ, तहां एकस्थानीय पांचामैं दूवा घटाए तीन रहे अर दशस्थानीय सातविषैं नव घटै नाहीं तातैं शतस्थानीय छक्कामैं एकघटाइ ताके दश सातविषैं जोडैं सतरह भए तामैं नौ घटाइ आठ रहे शतस्थानीय छक्कामै एक घटायें पांच रहे तामैं ऋण अंक कोऊ घटावनेकौं है नाहीं तातैं पांच ही रहे। ऐसैं अवशेष पांचसै तियासी प्रमाण आया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि गुणकारविषैं गुण्यके अंत अंकतै लगाय आदि अंकपर्यंत एक एक अंककौं क्रमतैं गुणकारके अंकनिकरि गुणि यथास्थान लिखिए वा जोडिए तब गुणितराशिका प्रमाण आवै। इहां उदाहरण-जैसैं गुण्य दोयसै छप्पन अर गुणकार सोलह २५६×१६। तहां गुण्यका अंत अंक दूवाकौं सोलहकरि गुणना। तहां छक्का तौ दूवा ऊपरि अर एका ताके पीछे १६ २५६ ऐसैं स्थापनकरि एककरि दूवाकौ गुणैं दोय पाये सो तो एकाके नीचै लिखना। बहुरि छहकरि दूवाकौ गुणै बारह पाए तिसविषै दूवा तौ गुण्यकी जायगां लिखना एका पहिले दोय लिख्या था तामै जोडना तब ऐसा भया {३२ ५६} बहुरि ऐसैं ही गुण्यका उपांत अंक पांचा ताकौ सोलहकरि गुणना तहां ऐसैं १६ ३२,५६ स्थापनकरि एकाकरि पांचाकौं गुणै पांच भए सो तौ एकाके नीचै दूवा तामैं जोडिए अर छक्काकरि पांचाकौ गुणै तीस भए तहां विंदी पांचाकी जायगां मांडि तीन पीछले अंकनिविषै जोडिए ऐसैं कीए ऐसा ४००६ भया। बहुरि गुण्यका आदि अंक छक्काकौं सोलहकरि गुणना तहां ऐसैं १६ ४००६ स्थापि एककरि छहकों गुणैं छह भए सो तौ एकाके नीचै विंदी तामैं जोड दीया अर छकौं छक्करि गुणै छत्तीस भया तहां छकातौ गुण्यका छकाकी जायगां स्थापना तीया पीछला अंक छका तामै जोडना ऐसैं कीए ४०९६ ऐसा भया। या प्रकार गुणितराशि च्यारि हजार छिनवै आया। ऐसैं ही अन्यत्र विधान जानना।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

बहुरि भागहारविषै भाज्यके जेते अंकनिविषै भागहारका भागदेना संभवै तितने अंकनिकौं ताका भागदेइ पाया अंककौं जुदा लिखि तिस पाया अंककरि भागहारकौं गुणै जो प्रमाण होइ तितना, जाका भागदीया था तामैं घटाय अवशेष तहां लिखना बहुरि तैसैं ही भागदीएं जो अंक पावै ताकौं पूर्वै लिख्या था अंक, ताके आगै लिखि ताकरि भागहारकौं गुणि तैसैं ही घटावना। ऐसैं यावत् भाज्यराशि निःशेष न होइ तावत् कीए जुदे लिखे अंकप्रमाण एकभाग आवै है। इहां उदाहरण-जैसैं भाज्य च्यारि हजार छिनवै भागहार सोलह। तहां भाज्यका अंत अंक च्यारिकौं तौ सोलहका भाग संभवै नाही तातैं दोय अंक चालीस तिनकौं भागदेना तहां ऐसैं ४०९६/१६ लिखिए। इहां तीन आदि अंकनिकरि सोलहकौं गुणै तौ चालीसतैं अधिक होइ जाय तातैं दोइ पाये सो दूवा जुदा लिखि ताकरि सोलहकौं गुणि चालीसमै घटाएं ८९६ ऐसा भया।

बहुरि इहां निवासीकौं सोलहका भाग दीए ८९६/१६ पांच पाए सो दूवाके आगैं पांच लिखि ताकरि सोलहकौं गुनि निवासीमें घटाए ९६ ऐसा रह्या। बहुरि याकौं सोलहका भागदीएं छह पाए सो पांचाके आगैं लिखि ताकरि सोलहकौं गुणि छिनवे भए सो घटाए भाज्यराशि निःशेष भया। ऐसैं जुदे लिखे अंक तिनकरि एक भागका प्रमाण दोयसै छप्पन आवै है। बहुरि 'भागो नास्ति लब्धं शून्यं' इस वचनतैं जहां भाग टूटि जाय तहां विंदी पावै। जैसैं भाज्य तीन हजार छत्तीस (३०३६) भागहार छह (६) तहां तीसकौं छहका भाग दीए पांच पाए तिनकरि छहकौं गुणि घटाए तीस निःशेष होयगया सो इहां भाग टूट्या तातैं पांचके आगैं विंदी लिखिए। बहुरि अवशेष छत्तीसकौं छहका भागदीए छह पाए सो विंदीके आगैं लिखि ताकरि छहकौं गुणि घटाएं सर्व भाज्य निःशेष भया। ऐसैं लब्ध प्रमाण पांचसै छै पाया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि वर्गविषैं गुणकारवत् विधान जानना। जातैं दोय जायगा समान राशि लिखि एककौं गुण्य एककौं गुणकार स्थापि परस्पर गुणैं वर्ग हो है। जैसैं सोलहकौं सोलहकरि गुणैं सोलहका वर्ग दोयसै छप्पन हो है। बहुरि घनविषैं भी गुणकारवत् विधान है। जातैं तीन जायगा समान राशि मांडि परस्पर गुणन करना। तहां

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

पहिला राशिरूप गुण्यकौं दूसरा राशिरूप गुणकार करि गुणैं जो प्रमाण होइ ताकौं गुण्य स्थापि ताकौं तीसरा राशिरूप गुणकार करि गुणैं जो प्रमाण आवै सोइ तिस राशिका घन जानना जैसैं सोलहकौं सोलहकरि गुणैं दोयसै छप्पन, बहुरि ताकौं सोलहकरि गुणैं च्यार हजार छिनवे होइ सोई सोलहका घन है। ऐसैं ही अन्यत्र जानना। बहुरि वर्गमूलविषैं वर्गरूप राशिके प्रथम अंक उपरि विषमकी दूसरे अंक उपरि समकी तीसरे अंक उपरि विषमकी चौथे अंक उपरि समकी ऐसैं क्रमतैं अंत अंक पर्यंत ऊभी आडी लीक करि सहनानी करनी। जो अंतका अंक सम होय तौ तहां उपांतका अर अंतका दोऊ अंकनिकी विषम संज्ञा जाननी । तहां अंतका एक वा दोय जो विषम अंक ताका प्रमाणविषैं जिस अंकका वर्ग संभवै ताका वर्गकरि अंतका विषम प्रमाणतैं घटावना। अवशेष रहै सो तहां लिखना। बहुरि जाका वर्ग कीया था तिस मूल अंककौं जुदा लिखना । बहुरि अवशेष रहें अंकनिकरि सहित जो तिस विषमके आगैं सम अंक ताके प्रमाणकौं जुदा स्थाप्या जो अंक तातैं दूणा प्रमाण रूप भागहारका भाग दीए जो अंक पावैं ताकौं तिस जुदा स्थाप्या अंकके आगैं लिखना। अर तिस अंक करि गुण्या हुवा भागहारका प्रमाणकौं तिस भाज्यमैं घटाइ अवशेष तहां लिखि देना । बहुरि इस अवशेष सहित जो तिस समके आगैं विषम अंक तामैं जो अंक पाया था ताका वर्ग कीए जो प्रमाण होइ सो घटावना अवशेष तहां लिखना। बहुरि इस अवशेषसहित जो तिस विषमके आगैं सम अंक ताकौं तिन जुदे लिखे हुए सर्व अंक रूप प्रमाणतैं दूणा प्रमाणरूप भागहारका भाग देइ पाया अंककौं तिन जुदे लिखे हुए अंकनिके आगैं लिखना। अर इस पाया अंककरि भागहारकौं गुणि भाज्यमैं घटाइ अवशेष तहां लिखना। बहुरि इस अवशेष सहित जो सम अंकके आगैं विषम अंक ताविषैं पाया अंकका वर्ग घटावना । ऐसैं ही क्रमतैं यावत् वर्गराशि निःशेष होय तावत् कीए वर्गमूलका प्रमाण आवै है । इहां उदाहरण—जैसैं वर्गित राशि पैंसठ हजार पांच सौ छत्तीस (६५५३६) इहां विषम समकी सहनानी ऐसी ।–।–। ६५५३६ करि अंतका विषम छका तामैं तीनका वर्ग तौ बहुत होइ तातैं संभवता दोयका वर्ग च्यारि घटाइ अवशेष दोइ तहां लिखना। अर मूल अंक दूवा जुदा पंक्ति

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

विषैं लिखना। बहुरि तिस अवशेषसहित आगिला सब अंक ऐसा २५। ताकौं जुदा लिख्या हुवा दूवातैं दूणा च्यारिका भाग दीए छह पावैं परंतु आगैं वर्ग घटावनेका निर्वाह नाहीं तातैं पांच पाया सो जुदा लिख्या दूवाके आगैं लिखना। अर पाया अंक पांचकरि भागहार च्यारिकौं गुणि भाज्यमैं घटाएं पचीसकी जायगां पांच रह्या तिस सहित आगिला विषम ऐसा (५५) तामैं पाया अंक पांचका वर्ग पचीस घटाए अवशेष ऐसा ३०, तिस सहित आगिला सम ऐसा ३०३, ताकौं जुदे लिखे अंकनितैं दूणा प्रमाण पचास, ताका भाग दीए छह पाया सो जुदे लिखे अंकनिके आगैं लिखना। अर छह करि भाग हार पचासकौं गुणि भाज्यमैं घटाए अवशेष ऐसा ३ रह्या तिस सहित आगिला विषम ऐसा ३६, यामैं पाया अंक छहका वर्ग घटाए राशि निःशेष भया। ऐसैं जुदे लिखे हूवे अंकनिकरि पैंसठ हजार पांचसै छत्तीसका वर्गमूल दोयसै छप्पन भया ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि घनमूलविषै घनरूपराशिके अंकनि उपरि पहिला घन, दूजा तीजा अघन, चौथा घन, पाचवां छठा अघन ऐसैं क्रमतैं ऊभी आडी लीक रूप सहनानी करनी। जो अंतका घन अंक न होइ तो अंत उपांत दोय अंकनिकी घनसंज्ञा जाननी। अर ते दोऊ घन न होंइ तौ अंततैं तीन अंकनिकी घन संज्ञा जाननी। तहां एक वा दोय वा तीन अंकरूप अंत घन तामैं जाका घन संभवै ताका घनकरि ताकौं अंतका घन अंकरूप प्रमाणमैं घटाइ अवशेष तहां लिखना। अर जाका घन कीया था तिस मूल अंककौ जुदा पंक्तिविषै स्थापना। बहरि तिस अवशेषसहित आगिला अंककौं तिस मूल अंकके वर्गतैं तिगुणा भागहारका भागदेना जो अंकपावैं ताकौं जुदा लिख्या हुवा अंकके आगै लिखना। अर पाया अंककरि भागहारकौं गुणि भाज्यमें घटाइ अवशेष तहां लिखिदेना। बहुरि इस अवशेषसहित आगिला अंक ताविषै पाया अंकके वर्गकौं पूर्वै पंक्तिविषै तिष्ठते अंकनिकरि गुणें जो प्रमाण होइ ताकौ तिगुणाकरि घटाइ देना। अवशेष तहां लिखना। बहुरि इस अवशेषसहित आगिला अंकविषै तिसही पाया अंकका घन घटावना। बहुरि अवशेषसहित आगिला अंककौं जुदा लिखि अंकनिके प्रमाणका व-

१ ख पुस्तकमें 'अंक ताविषै पाया' इतना नहीं है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गकौं तिगुणाकरि जैसें निर्वाह होइ तैसें भागदेना। पाया अंक पंक्तिविषै आगै लिखना। ऐसें ही अनुक्रमतैं यावत् घनराशि निःशेष होइ तावत् कीए घनमूलका प्रमाण आवै है। इहां उदाहरण-जैसें घनराशि पंद्रह हजार छहसै पचीस (१५६२५) इहां घनअघनकी सहनानी कीए ऐसा (१५६२५ ऊपर ।--। चिह्न) इहां अंत अंक घन नाहीं तातैं दोय अंकरूप अंतघन १५। इहां तीनका घनकीए बहुत होय तातै दोयका घन आठ घटाइ तहां अवशेष सात लिखना। अर घनमूल दूवा जुदी पंक्तिविषै लिखना। बहुरि तिस अवशेषसहित आगिला अंक ऐसा (७६) ताकौं मूल अंकका वर्ग च्यारि, ताका तिगुणा बारह, ताका भाग दीए छह पावैं परंतु आगै निर्वाह नाहीं तातैं पांच पाया सो दूवाके आगैं पंक्तिविषै लिखना अर इस पांचकरि भागहार बारहकौं गुणि भाज्यमें घटाएं अवशेष सोलह ऐसा (१६) तिस सहित आगिला अंक ऐसा (१६२) तामैं पाया अंक पांच ताका वर्ग पचीस, ताकौं पूर्वै पंक्तिविषै तिष्ठै था दूवा, ताकरि गुणे पचास, तिनके तिगुणे ड्योढसै घटाएं अवशेष बारह तिससहित आगिला अंक ऐसा (१२५) यामैं पांचका घन घटाएं राशि निःशेष भया ऐसें पंद्रह हजार छसै पचीसका घनमूल पचीस प्रमाण आया। ऐसैंही अन्यत्र जानना।

ऐसें वर्णनकरि अब भिन्न परिकर्माष्टक कहिए है तहां अंश अर हारनिका संकलनादिक जानना। अंश[1] अर हार कहा कहिए। जैसैं जहां छह पांच कहे। तहां एकके पांच[2] अंश कीए तिह समान छह अंश जानने। वा छहका पांचवां भाग जानना। तहां छहकौं अंश वा लव इत्यादि कहिए। अर पांचकौं हार वा हर वा छेद इत्यादिक कहिए। तहां अंशकौं ऊपरि लिखिए, हारकौं नीचै लिखिए। जैसें छह पांचकौं ऐसा $\frac{6}{5}$ लिखिए। ऐसें ही अन्यत्र जानना। तहां भिन्न संकलन व्यवकलनके अर्थि भागजाति, प्रभागजाति, भागानुबंध, भागापवाह ए च्यारि जाति हैं। तिनविषै इहां विशेष प्रयोजनभूत समच्छेद विधान लीए भागजाति कहिए है। जुदे जुदे अंश अर तिनके हार लिखि एक एक अंशकौं अन्य अंशनिके हारनिकरि गुणिए सर्व अंश अर सर्वहारनिकौं परस्पर

१ इस रीतिमें 'अंश' की जगह सर्वत्र 'हार' और 'हार' की जगह अंश (ख) पुस्तकमें लिखा है।

२ यद्यपि तीनो प्रतियों में ऐसाही पाठ है पर हमारी समझ से "एकके छह अंश तिह समान पांच अंश" ऐसा पाठ होना चाहिये।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गुणिए। ऐसैंकरि जो संकलन करना होइ तौ परस्पर अंशनिकौं जोड दीजिए अर व्यवकलन करना होइ तो मूलराशिके अंशनिविषै ऋणराशिके अंश घटाइ दीजिए। अर हार सवनिके समान भए। तातैं हार परस्पर गुणे जेते भए तेते ही राखिए। ऐसैं समान हार होनेतैं याका नाम समच्छेद विधान है। इहां उदाहरण-तहां संकलनविषैं पांच छट्ठा दोय तिहाइ तीन चौथाई इनकौं जोडना होइ तहां ५/६ २/३ ३/४ ऐसा लिखि तहां पांच अंशकौं अन्यके तीन च्यारि हारनिकरि अर दोय अंशकौं अन्यके छह च्यारि हारनिकरि अर तीन अंशकौं अन्यके छह तीन हारनिकरि गुणे साठि अडतालीस चौवन अंश भए। अर हारनिकौं परस्पर गुणे सर्वत्र बहत्तर हार ६०/७२ ४८/७२ ५४/७२ ऐसैं भए। इहां अंशनिकौं जोडे एकसो वासठ अंश अर बहत्तर हार भए तहां अंशकौं हारका भागदीए दोय पाये अर अवशेष अठारहका बहत्तरिवां भाग रह्या ताका अठारहकरि अपवर्त्तनकीए एकका चौथा भाग भया। ऐसैं तिनका जोड सवा दोय आया। कोई संभवता प्रमाणका भाग देइ भाज्य वा भाजक राशिका महत् प्रमाणकौं थोरा कीजिए वा निःशेष कीजिए तहां अपवर्त्तनसंज्ञा जाननी सो इहां अठारहका भागदीए भाज्य अठारह था तहां एक भया अर भागहार बहत्तर था तहां च्यारि भया तातैं अठारहकरि अपवर्त्तन भया कह्या ऐसैं ही अन्यत्र अपवर्त्तनका स्वरूप जानना।

बहुरि व्यवकलनविषैं जैसैं तीनविषैं पांच चौथा अंश घटावना। तहां 'कल्प्यो हरो रूपमहारराशेः।' इस वचनतैं जाकैं हार न होइ तहां एक हार कल्पना। सो इहां तीनका हार नाहीं, तातैं एकहार कल्पि ऐसैं लिखना (३/१ ५/४) इहां तीन अंशनिकौं अन्यके च्यारि हारनि करि, अर पांच अंशनिकौं अन्यके एक हारकरि गुणे अर हारनिकौं परस्पर गुणे १२/४ ५/४ ऐसा भया। इहां बारह अंशनिविषै पांच घटाएं सात अंश भए। अर हार च्यारि भए। तहां अंशकौं हारका भाग दीए एक, अर तीनका चौथा भाग पौण इतना फल आया।

बहुरि भिन्न गुणकारविषै गुण्य अर गुणकारके अंशकौं अंशकरि, हारकौं हारकरि गुणन करना। जैसैं दशकी चौथाइकौं च्यारिकी तिहाई करि गुणना होइ तहां ऐसा १०/४ ४/३ लिखि परस्पर गुण्य गुणकारके अंश

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अर हारनिकौं गुणें चालीस अंश वारह हार $\frac{४०}{१२}$ भए तहां अंशकौं हारका भाग दीए तीन पाया। अवशेष च्यारि का बारहवां भाग ताकौं च्यारि करि अपवर्त्तन कीए एकका तीसरा भाग भया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि भिन्नभागहारविषै भाजकके अंशनिकौं हार कीजिए अर हारनिकौं अंश कीजिए। ऐसैं पलटि भाज्य भाजकका गुण्य गुणकारवत् विधान करना। जैसैं सैंतीसके आधाकौं तेरहकी चौथाईका भाग देना होइ तहां ऐसैं $\frac{३७}{२}$ $\frac{३}{४}$ लिखिए। बहुरि भाजकके अंश अर हार पलटै ऐसैं $\frac{३७}{२}$ $\frac{४}{१३}$ लिखिना। बहुरि गुणनविधि कीए एकसौ अडतालीस अंश अर छव्वीस हार $\frac{१४८}{२६}$ भए। तहां हारका अंशकौं भाग दीए पांच पाए। अर अवशेष अठारह छव्वीसवां भाग, ताका दोयकरि अपवर्त्तन कीए नव तेरहवां भागमात्र भया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि भिन्नवर्ग अर घनका विधान गुणकारवत् ही जानना। जातैं समान राशि दोयकौं परस्पर गुणें वर्ग हो है। तीनकौं परस्पर गुणें घन हो है। जैसैं तेरहका चौथा भागकौं दोय जायगा मांडि $\frac{१३}{४}$ $\frac{१३}{४}$ परस्पर गुणें ताका वर्ग एक सौ गुडहत्तरका सोलहवां भागमात्र $\frac{१६९}{१६}$ हो है। अर तीन जायगा मांडि $\frac{१३}{४}$ $\frac{१३}{४}$ $\frac{१३}{४}$ परस्पर गुणें इकईससै सत्याणवैका चौसठवां भाग मात्र $\frac{२१९७}{६४}$ घन हो है। बहुरि भिन्नवर्गमूल घनमूल विषैं अंश अर हारनिका पूर्वोक्त विधान करि जुदा जुदा मूलग्रहण करिए। जैसैं वर्गित राशि एक सौ गुणहत्तरिका सोलहवां भाग $\frac{१६९}{१६}$। तहां पूर्वोक्त विधानतैं एकसौ गुणहत्तरिका वर्गमूल तेरह, अर सोलहका च्यारि ऐसैं तेरहका चौथा भागमात्र $\frac{१३}{४}$ वर्गमूल आया। बहुरि घनराशि इकईससै सत्याणवैका चौसठवां भाग $\frac{२१९७}{६४}$। तहां पूर्वोक्त विधानकरि इकईससै सत्याणवैका घनमूल तेरह अर चौसठिका च्यारि ऐसैं तेरहका चौथा भाग मात्र $\frac{१३}{४}$ घनमूल आया। ऐसैं ही अन्यत्र जानना।

बहुरि अब शून्यपरिकर्माष्टक लिखिए है-शून्य नाम बिंदीका है ताके संकलनादिक कहिए है। तहां बिंदीविषैं अंक जोडैं अंकही होय। जैसै पचासविषै पांच जोडिए तहां एकस्थानीय बिंदीविषैं पांच जोडैं पांचभए। दशस्थानीय पांच है ही ऐसैं पचावन भए। बहुरि अंकविषै बिंदीघटाए अंक ही रहै। जैसै पचावनमें दश घटाए एक-

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

स्थानीय पांचमें विंदीघटाए पांचही रहे दशस्थानीय पांचमें एकघटाए च्यारि रहे ऐसैं पैंतालीस भए। बहुरि गुणकारविषै विंदीकौं गुणे विंदी होय। जैसैं वीसकौं गुणिए। तहां गुण्यके दूवाकौं पांचकरि गुणे दश भए। बहुरि विंदीकौं पांचकरि गुणे विंदी ही भई ऐसैं सौ भए। बहुरि अंककौं विंदीका भागदीए खहर कहिए। जातैं जैसैं जैसैं भागहार घटता होइ तैसैं तैसैं लब्धराशि बधती होइ। जैसैं दशकौं एकका छठा भागका भागदीए साठि होंइ, एकका वीसवां भागका भागदीए दोयसै होंय सो विंदी शून्यरूप ताका भागदीए फलका प्रमाण अवक्तव्य है। याका हारविंदी है इतना ही कह्या जाय। बहुरि विंदीका वर्गघन वर्गमूल घनमूलविषैं गुणकारादिवत् विंदी ही हो है। ऐसैं लौकिकगणित अपेक्षा परिकर्माष्टकका विधान कह्या।

बहुरि अलौकिकगणित अपेक्षा विधान है सो सातिशयज्ञानगम्य है। जातैं तहां अंकादिकका अनुक्रम व्यक्तरूप नाहीं है। तहां कहीं तौ संकलनादि होतैं जो प्रमाण भया ताका नाम कहिए है। जैसैं उत्कृष्ट असंख्याता संख्यातविषै एक जोडे जघन्यपरीतानंत होइ, जघन्यपरीतानंतमें[1] एक घटाएं उत्कृष्ट असंख्यातासंख्यात होइ। और[2] जघन्य परीतासंख्यातविषै एक घटाए उत्कृष्ट संख्यात होइ। पल्यकौं दशकोडाकोडिकरि गुणे सागर होइ, जगत् श्रेणीकूं सातका भागदीए राजू होइ, जघन्ययुक्तासंख्यातका वर्गकीए जघन्य असंख्यातासंख्यात होइ सूच्यंगुलका घनकीए घनांगुल होइ, प्रतरांगुलका वर्गमूल ग्रहे सूच्यंगुल होइ, लोकका घनमूल ग्रहे जगत्श्रेणी होइ इत्यादि जानना। बहुरि कहीं संकलनादि होतैं जो प्रमाण भया ताका नाम न कहिए है। संकलनादिरूप ही कथन कहिए है। जातैं सर्व संख्यात असंख्यात अनंतनिके भेदनिका नाम वक्तव्यरूप नाहीं है। जैसैं जीवराशि करि अधिक पुद्गलराशि कहिए वा सिद्धराशिकरि हीन जीवराशि कहिए वा असंख्यात गुणा लोक कहिए वा संख्यात प्रतरांगुलकरि भाजित जगत्प्रतर कहिए। वा पल्यका वर्ग कहिए वा पल्यका घन कहिए, वा केवलज्ञानका वर्गमूल कहिए वा आकाश प्रदेशराशिका घनमूल कहिए इत्यादि जानना। बहुरि अलौकिक मानकी सह-

१ यह पाठ क और ग पुस्तकमें नहीं है। २ यह पाठ ख पुस्तकमें नहीं है।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

नानी स्थापि तिनके लिखनेका वा तहां संकलनादि होतैं लिखनेका जो विधान है सो आगै संदृष्टि अधिकार-विषै वर्णन करैगें तहां तैं जानना। बहुरि तहां ही लौकिक मानका भी लिखनेका वा तहां संकलनादि होतैं लिखनेका जो विधान है सो वर्णन करेंगे। इहां लिखें ग्रंथविषैं प्रवेश करते ही शिष्यनिकौं कठिनता भासती, तहां अरुचि होती तातैं इहां न लिखिए है। उदाहरण मात्र इतना ही इहां भी जानना जो संकलनविषै तौ अधिक राशिकौं ऊपरि लिखना जैसैं पंच अधिक सहस्र ($\overset{५}{१०००}$) ऐसैं लिखने। व्यवकलनविषै हीन राशिकौं ऊपरि लिखि तहां पूंछडीकासा आकार करि बिंदी दीजिए जैसैं पंच हीन सहस्र $\overset{५^{\circ}}{१०००}$ ऐसैं लिखिए। गुणकारविषैं गुण्यके आगै गुणककौं लिखिए जैसैं पंचगुणा सहस्र १०००×५ ऐसैं लिखिए। भागहारविषै भाज्यके नीचै भाजककौं लिखिए। जैसै पांचकरि भाजित सहस्र $\frac{१०००}{५}$ ऐसैं लिखिये। वर्गविषै राशिकौं दोयवार बरावर मांडिए जैसै पांचका वर्गकौं ५×५ ऐसैं लिखिए। घनविषै राशिकौं तीनवार बराबरि मांडिए। जैसै पांचका घनकौं ५×५×५ ऐसै लिखिए। वर्गमूल घनमूलविषै वर्गरूप घनरूपराशिके आगै मूलकी सहनानी करनी। जैसैं पचीसका वर्गमूलकौं (२५ व० मू०) ऐसैं लिखिए। एकसौ पचीसका घनमूलकौ (१२५ घ० मू०) ऐसैं लिखिए। ऐसैं ही अनेक प्रकार लिखनेका विधान है। ऐसैं परिकर्माष्टकका व्याख्यान कीया सो जानना।

बहुरि त्रैराशिकका जहां तहां प्रयोजन जानि स्वरूप मात्र कहिए है। तहां तीन राशि हो हैं—प्रमाण १ फल २ इच्छा ३। तहां तिस विवक्षित प्रमाणकरि जो फल प्राप्त होइ सो प्रमाणराशि अर फलराशि जाननी। बहुरि अपना इच्छित प्रमाण होइ सो इच्छा राशि जाननी। तहां फलकौं इच्छाकरि गुणि प्रमाणका भागदीए

१ यद्यपि पं० टोडरमलजीने संकलन आदिमें संख्या लिखनेकी ऊपर लिखी रीति लिखी हैं परंतु आजकल प्रवृत्ति इसप्रकार है संकलन व्यवकलनमें अधिक प्रमाण ऊपर और हीन नीचे जैसैं $\overset{१०००}{५}$ या अधिक प्रमाणके आगै संकलनमें (+) ऐसा और व्यकलनमें (—) ऐसा चिन्ह कर भी हीन संख्या लिख दीया करते हैं जैसैं १०००+५। १०००—५। गुणकारमें गुण्यके नीचे भी गुणक लिखते हैं। भागहारमें पहिले भाजक फिर भाज्य और फिर फलको लिखते हैं जैसैं ५) $\overset{१०००}{१०००}$ (२००

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

अपना इच्छित प्रमाणकरि प्राप्त जो फल ताका प्रमाण आवै है इसका नाम लब्ध है इहां प्रमाण अर इच्छाकी एकजाति जाननी । बहुरि फल अर लब्धकी एकजाति जाननी । इहां उदाहरण--जैसैं पांच रुपैयाका सात मण अन्न आवै तौ सात रुपैया का केता अन्न आवै ऐसैं त्रैराशिक कीया । इहां प्रमाण राशि पांच, फल राशि सात, तहां फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीए गुणचासका पांचवां भाग प्रमाण आया ताका नव मण अर च्यारि मणका पांचवां भाग मात्र लब्धराशि भया । ऐसैं ही छहसै आठ (६०८) सिद्ध छह महीना आठ समय विषैं होंइ तौ सर्व सिद्ध केते कालमें होंइ ऐसैं त्रैराशिक करिए तहां प्रमाण राशि छहसै आठ, अर फलराशि छह मास आठ समयनिकी संख्यात आवली, इच्छा राशि सिद्धराशि । तहां फलकरि इच्छाकौं गुणि प्रमाणका भाग दीए लब्धराशि संख्यात आवलीकरि गुणित सिद्ध राशि मात्र अतीत कालका प्रमाण आवै है । ऐसैं ही अन्यत्र जानना ।

बहुरि केते इक गणितनिका कथन आगैं इस शास्त्रविषैं जहां प्रयोजन आवैगा तहां कहिएगा । जैसैं श्रेढी व्यवहारका कथन गुणस्थानाधिकारविषैं करणनिका कथन करते कहिएगा । बहुरि एकवार दोयवार आदि संकलनका कथन ज्ञानाधिकारविषैं पर्यायसमासज्ञानका कथन करते कहिएगा । बहुरि गोल आदि क्षेत्र व्यवहारका कथन जीवसमासादिक अधिकारनिविषैं कहिएगा । ऐसैं ही और भी गणितनिका जहां प्रयोजन होइगा तहां ही कथन करिएगा सो जानना । बहुरि अज्ञातराशि ल्यावनेका विधान वा सुवर्णगणित आदि गणितनिका इहां प्रयोजन नाहीं तातैं तिनका इहां कथन न करिए है । ऐसैं गणितका कथनकीया । ताकौं यादि राखि जहां प्रयोजन होइ तहां यथार्थरूप जानना । बहुरि ऐसैं ही इस शास्त्रविषैं करणसूत्रनिका, वा केई संज्ञानिका वा केई अर्थनिका स्वरूप एकबार जहां कह्या होइ तहांतैं यादि राखि तिनका जहां प्रयोजन आवै तहां तैसा ही स्वरूप जानना ।

या प्रकार श्रीगोम्मटसारशास्त्रकी सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामा भाषाटीकाविषैं पीठिका समाप्त भई ॥

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

गोम्मटसार । १

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्थाके

परमसंस्थापक और संरक्षक—

दानवीर स्वर्गीय शेठ बालचंद रामचंदजी गांधी, सोलापुर।

जन्म संवत् १९२१ फाल्गुन शुद्ध ८। मृत्यु संवत् १९७४ आश्विन वदी ८ रविवार।

दानवीर स्वर्गीय शेठ फूलचंद रामचंदजी गांधी, सोलापुर।

जन्म संवत् १९२७ चैत्र वदी ६। मृत्यु संवत् १९७४ आश्विन वदी २ सोमवार।

दानवीर श्रीयुत शेठ हीराचंदरामचंदजी गांधी, सोलापुर।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

ॐ

गांधी–हरीभाईदेवकरण जैनग्रंथमाला।

४

आचार्यप्रवर श्रीमन्नेमिचंद्र सैद्धांतिक चक्रवर्तिविरचित

गोम्मटसार।

(जीवकांड–पूर्वार्द्ध)

श्रीमत्केशववर्णीकृत जीवतत्त्वप्रदीपिका और अभयचंद्राचार्यकृत मंदप्रबोधिका

नामकी दो संस्कृत टीका

तथा पंडित टोडरमलजी कृत सम्यग्ज्ञानचंद्रिका नामकी हिंदीटीकासहित।

जिसको

भारतीय जैनसिद्धांतप्रकाशिनी संस्थाके महामंत्री पन्नालाल बाकलीवालने

संस्थाके जैनसिद्धांतप्रकाशक (पवित्र) प्रेसमें छपाकर

प्रकाशित किया।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi

CC0.In Public Domain. Digitized by Sarayu Trust/eGangotri

संपादक—

पं० गजाधरलाल जैन, न्यायतीर्थ

और

श्रीलालजैन काव्यतीर्थ

मुद्रक—

श्रीलालजैन काव्यतीर्थ

जैनसिद्धांतप्रकाशक (पवित्र) प्रेस,

नं० ८ महेंद्रबोसलेन श्यामबाजार कलकत्ता।

Ganesh Varni Digambar Jain Institute, Naria, Varanasi